NAVNEET

1960

1960
Jul.-Dec.

G. K. V.
Hardwar

111279

ुलाई १९९०

य : रु. ६.००

भवन की पत्रिका 'भारती' से समन्वित

# नवनीत

हिन्दी डाइजेस्ट

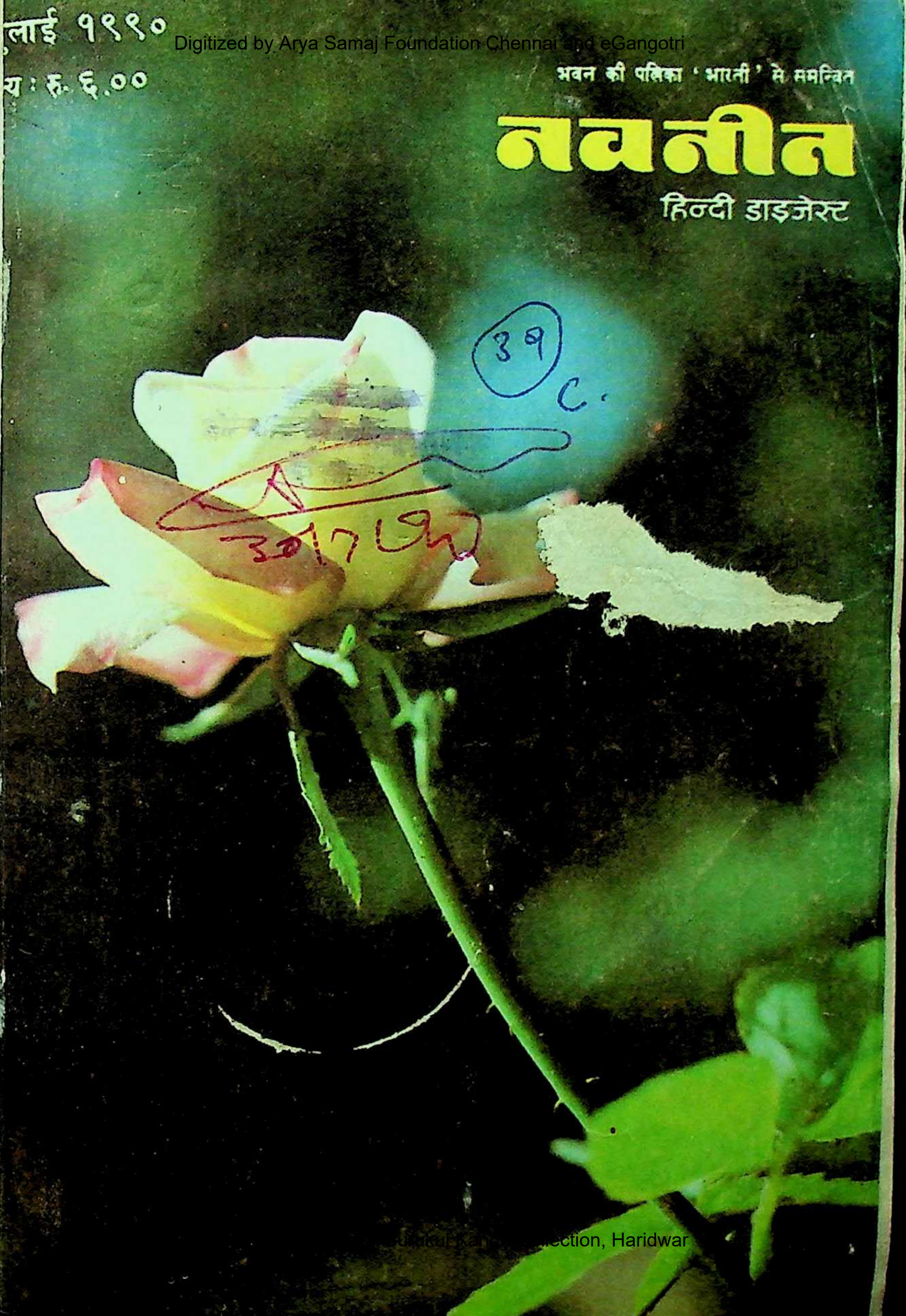

39

C.

30175

**The Great and Graceful Fragrance**

SEVEN IN ONE

MYSORE SUGANDHI
DHOOP FACTORY PVT. LTD.
13, Commercial Chambers, Yusuf Meharali Rd.,
P.O. Box 3178, Bombay 400 003.

111279

111279

# पत्र-दृष्टि

मई १९९० की पत्रिका मिली। रोचक तथा सूचनापूर्ण है। श्री रामेश्वर शुक्ल अंचल तथा ऊर्जा संरक्षण पर श्रीमती मालती प्रकाश का लेख, डॉ. (कु.) जयवंती डिमरी की 'एक और अमरवेल' कहानी आदि मननीय तथा पठनीय रचनाएं हैं। अश्वगंधा से बुढ़ापा रुक सकता होगा, पर आ गया तो जायेगा नहीं - यह मेरा अनुभव है। **-परिपूर्णानंद वर्मा, लखनऊ**

* * *

**नवनीत** (हिन्दी डाइजेस्ट) का मई अंक प्राप्त हुआ। श्रद्धेय महामहिम डा. राजेन्द्र प्रसाद के व्यक्तित्व पर लिखा लेख बड़ा ही रोचक लगा। वास्तव में लेखक कैलाशनाथ तिवारी ने इस लेख के माध्यम से उन अनछुये प्रसंगों को उठाया है, जिनसे आम पाठक परिचित नहीं था। **नवनीत** का हर अंक संग्रह योग्य होता है। **—विजय प्रकाश त्रिपाठी, कानपुर, उ.प्र.**

* * *

लंबी प्रतीक्षा के बाद **नवनीत** का मई-९० अंक प्राप्त हुआ। यह अंक बहुआयामी सामग्रियों से परिपूर्ण था। कहानी 'सहारा' और 'अहसास' जहां रोचक और यथार्थपरक लगीं, वहीं लेख 'वंदनीय आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी' और 'योगिराज स्वामी राम' प्रेरणादेय प्रतीत हुए। कविता 'श्रद्धांजलि' मेरी हृतंत्री को झंकृत कर गयी। **—प्रणय मिश्र, जमालपुर**

* * *

मई १९९० का अंक काफी प्रतीक्षा के उपरांत मिला। आवरण-पृष्ठ की साज-सज्जा बेजोड़ है।

**नवनीत** एक साहित्यिक सांस्कृतिक पत्रिका के रूप में अपना अनुपम स्थान रखती है। द्विवेदी युग जैसे युग का निर्माण करने वाले अमर लेखक महावीर प्रसाद द्विवेदी पर लेख ज्ञानवर्धक है। 'भारतीय मंदिर कला का स्वरूप' ऐतिहासिक - सांस्कृतिक - पुरातात्विक दृष्टि से उल्लेखनीय है।

**—राकेश पांडेय, पिथौरागढ़, उ.प्र.**

* * *

**नवनीत** मई १९९० के स्तंभ 'विविधा' में प्रकाशित ज्योतिर्लिंग की जानकारी के अनुसार औंढया नागनाथ ज्योतिर्लिंग नहीं है। ज्योतिर्लिंग इस प्रकार है।

१ (सोमनाथ (गुज.); २ मल्लिकार्जुन (आंध्र.); ३ महाकालेश्वर (म.प्र.); ४

यमलेश्वर (म.प्र.); ५ केदारनाथ (उ.प्र); ६ भीमाशंकर (महा.); ७ काशी विश्वनाथ (उ.प्र); ८ त्र्यंबकेश्वर (महा.); ९ परली वैद्यनाथ (महा.); १० नागेश्वर (गुजरात); ११ रामेश्वर (तमिलनाडु); १२ घृष्णेश्वर (महाराष्ट्र)। **–प्रेमलता शर्मा, इंदौर, म.प्र.**

* * *

उत्तम उपयोगी एवं मनोरंजक रचनाओं से भरपूर **नवनीत** का मई १९९० का अंक बहुत ही अच्छा लगा। आद्योपांत पढ़कर मन प्रसन्न हो उठा। 'स्कॉट स्वप्न से अमीर बना', 'मण्डेला रिहाई के बाद परीक्षा', 'प्याज गर्मी के लिए अमृत है', 'योगिराज स्वामी राम', 'सदाकत के संत की हिन्दी सेवा', 'वंदनीय आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी' तथां 'हिन्दी कवियों की दृष्टि में महात्मा बुद्ध,' आदि लेख विशेष रुचिकर लगे।

'सदाकत के संत की हिन्दी सेवा,' लेख में भारत के प्रथम राष्ट्रपति डॉ. राजेन्द्र प्रसाद की हिन्दी सेवा का प्रस्तुत वृत्तांत तथ्यपूर्ण एवं प्रेरणादायक है। उन्होंने कांग्रेस के अध्यक्ष, भारतीय संविधान सभा के सभापति तथा भारत के राष्ट्रपति के रूप में हिन्दी के सम्मान की वृद्धि तथा उसके उत्थान के लिए जो कुछ किया वह कभी भुलाने योग्य नहीं है।

**– डॉ. शकुनचन्द गुप्त,**
**रायबरेली, उ.प्र.**

* * *

मई ९० के **नवनीत** की कहानियां उत्कृष्ट व वेजोड़ हैं। 'अहसास' कहानी अगर आज की भटकी बहुओं को अहसास करा सके व उन्हें सही मार्ग पर ला सके तो श्री धनेश्वरप्रसाद का प्रयास सफल होगा। 'सहारा' कहानी पढ़कर लगा कि हम अपनी ही आत्मकथा पढ़ रहे हैं। 'अपनी देहरी' एक और सत्य है। पैसा, गहने, स्वार्थ सब हैं, पर मां के लिए सेवा-भावना नहीं। ऐसी कहानियों के लिए बधाई। **—दिलीप भाटिया, कोटा, राजस्थान**

* * *

**नवनीत** का मई -९० अंक एक ही दिन में पूरा पढ़ डाला। कमलापति मिश्र लिखित 'अयोध्या का कण-कण रामचरित से सुरभित' सार्थक लगा। **नवनीत** सांस्कृतिक मंच के माध्यम से देशभर के कार्यक्रमों की जानकारी देकर पाठकों को संस्कृति से अवगत कराता है। लघु कथा 'त्याग' तथा कहानी 'एकाकी' दोंनों ने मन मोह लिया।

**—नंदकिशोर परीक 'नंद',**
**जयपुर, राजस्थान**

* * *

**नवनीत** का मई-९० अंक पढ़ा। डॉ. श्रीरंजन सूरिदेव की इतिहास कथा 'अम्बपाली' तथा श्री अयोध्याप्रसाद गुप्त 'कुमुद' का 'कालप्रियनाथ का विलुप्त सूर्यमंदिर' लेख अति रोचक लगे। उज्जैन के प्रख्यात विद्वान पं. सूर्यनारायण व्यास के अनुसार कालप्रियनाथ उज्जयिनी में स्थित

महाकाल ज्योतिर्लिंग है। उत्तर रामचरित के अनुसार शेषराज शर्मा ने भवभूति के कालप्रियनाथ को महाकालेश्वर ज्योतिर्लिंग माना है। 'हिस्ट्री ऑफ कन्नौज' में आर.एस.त्रिपाठी के अनुसार कालप्रियनाथ - भगवान महाकालेश्वर हैं। जिनका उल्लेख बाण ने कादंबरी में व कालिदास ने रघुवंश में किया है। इसके साथ ही श्री त्रिपाठी के अनुसार कई विद्वान कालप्रियनाथ के मंदिर को कालपी (उत्तर-प्रदेश) में मानते हैं। 'कुमुदजी' ने अपने अकाट्य तर्कों से कालप्रियनाथ के मंदिर का कालपी में होने की पुष्टि की है, जो युक्तिसंगत है। इसकी प्रामाणिकता में कोई संदेह नहीं।

**– संजीवकुमार तिवारी, उज्जैन, म.प्र.**

* * *

**नवनीत** के अप्रैल-९० अंक में शारदा त्रिवेदी की कहानी 'घर' अत्यंत रोचक है। पति द्वारा दहेज के नाम पर दी गयी यातनाओं से पीड़ित, संसार से विमुख, एक नारी का मिलन एक संवेदनशील पुरुष से होने पर आस्थायें बदलती हैं, विश्वास पुनः जागता है। पर बड़े होकर बच्चे ही पिता को उसे घर से निकालने के लिए सहमत कर लेते हैं। वह दुनिया में तिल-तिल टूटने हेतु फिर अकेली रह जाती है। घर का सपना ढह जाता है। **–जनार्दन दुबे, इलाहाबाद, उ.प्र.**

* * *

**मैं नियमित रूप से नवनीत** का पाठक रहा हूं। परंतु यह मेरा पहला पत्र है। सचमुच साहित्य प्रेमियों के लिए यह पत्रिका बेहद अनूठी और बेजोड़ है। अप्रैल ९० अंक में प्रकाशित कविताएं 'अभिराम राम' तथा 'बढ़ने का अर्थ ब्रह्म' मुझे बहुत अच्छी लगीं।

**–अरविंदकुमार गया, बिहार**

❑

## मनमौजी व्यक्ति

**टोकियो में एक निर्धन व्यक्ति अपनी आत्महत्या करने की सोच ही रहा था कि एक मनमौजी व्यक्ति उसके कंधे पर हाथ रखते हुए बोला, 'क्या जीवन का मूल्य नहीं जानते हो? यों निराश होने से क्या मिलेगा? हंसो और आगे आनेवाली व्यथाओं को पीछे ढकेल दो।' उसने पीछे मुड़कर देखा आग्नेय नेत्रों से उसकी ओर देख सिसकियां-भर सारी कथा एक ही सांस में कह सुनायी कि कैसे तीन दिनों से उसका परिवार भूखां छटपटा रहा है। यह सुनकर मनमौजी व्यक्ति की आंखों में आंसू भर आये। उसी समय उसने प्रण किया, 'अपनी कमायी का अधिक से अधिक अंश दान में दिया करुंगा।' यह संकल्प कर एक गुप्तदान की पेटी सड़क के बीचोबीच लगवाकर उसपर लिख दिया, 'जिस व्यक्ति को सचमुच पैसों की आवश्यकता हो वह इससे निकालकर अपना काम निःसंकोचभाव से चला सकता है, मुझे प्रसन्नता होगी।' यही मनमौजी फक्कड़ मिजाजी व्यक्ति थे, जापान के विश्वविख्यात कवि ईगुची।**

**– कांतिलाल मोदी**

✸

# नवनीत

संपादक गिरिजाशंकर त्रिवेदी
उप-संपादक रामलाल शुक्ल
अतिरिक्त सहयोग किशोरीरमण टंडन
प्रकाशक सु. रामकृष्णन्
वर्ष ३९, अंक ७

संस्थापक : कन्हैयालाल मुंशी
भारती : स्थापना १९५६
श्रीगोपाल नेवटिया
नवनीत : स्थापना १९५२

जुलाई १९९०

पत्र-वृष्टि .... १
मिस्र के पिरामिड डॉ. शैलेन्द्र शेखर ६
नदी सूख कांटा हुई (कविता) सतीश आर्य ८
अध्यक्ष के पत्र .... ९
पृथ्वी का गुरुत्वाकर्षण मनमोहनदयाल चतुर्वेदी १४
मासिक भविष्यफल: जुलाई१९९० पं.वी.के.तिवारी १७
ग्रंथलोक .... २०
मंत्री का न्याय श्याम मनोहर व्यास २४
बालों के सफेद होने की चिन्ता डॉ. इरफान अलीमी २६
विचित्र पेड़-पौधों की दुनिया अरुणकुमार पांडेय २८
सूर्य देवता (कविता) प्रकाश दुबे ३१
ज्योत्स्ना के द्वारा खोलो (कविता) माधवीलता शुक्ल ३२
प्रार्थना .... ३३
प्राणों की बाजी सुनंदा चौधरी ३४
बच्चों के चित्र (कविता) डॉ. प्रभाकर माचवे ३५
महान चिंतक जे. कृष्णमूर्ति डा. राजेन्द्र वाजपेयी ३६
अनिल बरन शाहा गीताश्री ४०
खाई के पान बनारस वाला... कैलाश जैन ४५
क्रांतिकारी कान्होंजी आंग्रे हरि ४८

| | | |
|---|---|---|
| छत्तीसगढ़ की संस्कारधानी रतनपुर | अश्विनी केशरवानी | ५२ |
| रिश्ता (कविता) | डॉ. सुशीला गुप्ता | ५२ |
| दोहे | हस्तीमल हस्ती | ५६ |
| निःस्वार्थ प्रेम (कहानी) | डा. सोम प्रकाश | ५७ |
| विविधा | संकलनः दिगंबर स्वादिया | ६२ |
| अब मिलोगे तुम कहां | डा. राजशेखर शर्मा | ६५ |
| विश्व का अकेला ऐतिहासिक मुकदमा | रंदी सत्यनारायण राव | ६८ |
| आचार्य कृपलानी | पी. डी. टंडन | ७१ |
| यहां सिर्फ माताओं का बाजार है | कमल टावरी | ७६ |
| पुणें के ये संस्कृत सेवाव्रती | डा. ओमप्रकाश पांडेय | ८० |
| लेखक/कलाकारों का गृहस्थ जीवन अभिशप्त क्यों? (परिचर्चा) | संयो. ज्योति खरे | ८४ |
| पंछी को पद पढ़ात गणिका सी तारी | दुर्गाप्रसाद मंडेलिया | ८९ |
| महापुरुषों का जीवन-दर्शन | डा. सत्येन्द्र चतुर्वेदी | ९२ |
| ऐसे पत्र मिलते थे बापू को | कमल सौगानी | ९५ |
| मां (तमिल कहानी) | लक्ष्मी रमणन<br>अनुः जयलक्ष्मी सुब्रमण्यन् | ९७ |
| गधो की खातिर (अमेरिकी हास्य-व्यंग्य) | आर्क ओबोलर | १०५ |
| नींद क्यों रात भर नहीं आती (हास्य) | डा. बरसानेलाल चतुर्वेदी | ११८ |
| महान वैज्ञानिक वाराहमिहिर | श्यामनारायण कपूर | १२१ |
| एक यात्रा रघुराजपुर की | डा. शीला टावरी | १२८ |
| सांस्कृतिक मंच | .... | १३१ |
| कुछ इधर-उधर की | | १३६ |

आवरण-चित्रः निहालचंद जैन

चित्र-सज्जाः वी. एन. ओके, के. एम. शेणै

**कार्यालय :** भारतीय विद्या भवन, क. मा. मुंशी मार्ग, बंबई-७ फोन : ८११४६२

# मिस्र के पिरामिड

❑ डॉ. शैलेन्द्र शेखर

जैसे-जैसे आधुनिक विज्ञान की समझ बढ़ती जा रही है, पिरामिडों के संबंध में नए-नए राज खुलते जा रहे हैं। पहले सोचा जाता था कि ये सिर्फ मिस्र के सम्राटों द्वारा बनवाए गए मकबरे हैं, किंतु नवीनतम अन्वेषणों से पता चला है कि ये अद्भुत रहस्यों के भंडार हैं। सहस्रों लोगों ने सैकड़ों मील दूर से विशाल चट्टानों को ढोकर, रेगिस्तान में लाकर, सदियों-सदियों तक परिश्रम करके क्या केवल कब्रों का निर्माण किया था? नहीं, अब ऐसा प्रतीत होने लगा है कि मानवीय चेतना के रूपांतरण हेतु आत्मसाधना में सहयोगी इन गुह्य आध्यात्मिक प्रयोगशालाओं को बनाया गया था।

## खगोल संबंधी ज्ञान का उद्घाटन

श्री पेट्रिक फ्लेनागन ने अपनी किताब 'पिरामिड पावर' में सिद्ध किया है कि पिरामिडों के निर्माता हमारी पृथ्वी, सौरमंडल एवं ब्रह्मांड के विषय में वह सब भी जानते थे जो भूगोल शास्त्रियों तथा खगोलविदों ने अभी-अभी पता लगाया है। उदाहरणार्थ सबसे बड़े पिरामिड के आधार की परिधि ३६५२४ इंच है, जो एक वर्ष में होने वाले ३६५.२४ दिनों की ठीक सौ गुनी है। इसी प्रकार आधार के कर्णों का योग २५८२७ इंच है, और हर २५८२७ वर्षों में हमारी भूमध्यरेखा के उसी बिंदु पर से सूर्य उत्तरायण से दक्षिणायण की ओर प्रस्थान करता है। इसे मात्र संयोग तो नहीं कहा जा सकता न!

## ज्योतिष और मनोविज्ञान भी

'पिरामिड प्रोफेसीस' के लेखक मैक्स टाथ के अनुसार पिरामिडों की दीवालों पर बनी मकड़ी के जाल जैसी दिखने वाली कलाकृतियां सिर्फ सजावटी नहीं हैं, वरन उनमें गुप्त सांकेतिक भाषा में अनेकों भविष्यवाणियां अंकित हैं, जिनका विश्लेषण करने वाले शोधकर्ता उनकी सचाइयां जानकर हतप्रभ रह गए हैं। इन विश्लेषकों का मानना है कि बीसवीं सदी के अंत में मनुष्यता लगभग समाप्त हो जाएगी, और सन २००१ में एक बिलकुल ही नए प्रकार के मनुष्य की सभ्यता व संस्कृति जन्मेगी। बीसवीं सदी के विवादास्पद जर्मन मनोवैज्ञानिक विलियम रेक ने 'ऑरगॉन बॉक्सेस' (जीवन ऊर्जा

युक्त कक्ष) बनाए थे, जिनमें लिटाकर वे मरीजों की मानसिक चिकित्सा करते थे। विलियम रेक के अनुयायी पिरामिडों को भी विशाल ऑरगॉन बॉक्सेस की भांति देखते हैं, जिनका उपयोग दस हजार वर्ष पूर्व सामूहिक चिकित्सा के लिए किया जाता था।

### लाशों के संरक्षण का चमत्कार

पिरामिड के शिखर से वर्तुलाकार विद्युत-चुंबकीय तरंगें विकीर्णित होती रहती हैं, जिनसे सौरमंडल में पृथ्वी का संतुलन सधा रहता है-ऐसी धारणा प्रस्तुत की है डीन हार्डी ने अपनी किताब 'पिरामिड इनर्जी: ए फिलासफी ऑफ गॉड, ए साइंस ऑफ मैन' में। संभवतः इन्हीं तरंगों की वजह से पिरामिड में रखी ममियां (सम्राटों की लाशें) हजारों साल में भी सड़ी नहीं हैं। १९३० में शोधकार्यरत वैज्ञानिकों के दल ने एक दिन देखा कि संयोगवशात पिरामिड के अंदर रह गई एक बिल्ली भूख से मर गई, किंतु उसकी लाश सड़ी नहीं। फिर तो उन्होंने छोटे-छोटे पिरामिड के आकार के डिब्बे बनाकर प्रयोग किए और पाया कि उनमें रखे मृत जीव-जंतु अथवा सब्जी -फल आदि दीर्घकाल तक सड़ते- गलते नहीं हैं।

### धातुओं पर भी पिरामिडों का प्रभाव

पिछले दशक में रेडियो इंजीनियर श्री करेल ड्रबल ने उत्सुकतावश, छह इंच ऊंचे गत्ते के पिरामिड के नीचे, उपयोग की हुई दाढ़ी बनाने वाली रेजर ब्लेड रात को रख दी। सुबह उठकर उनके आश्चर्य का ठिकाना न रहा जब उन्होंने देखा कि ब्लेड की धार पुनः तेज हो गई है। इस प्रयोग की व्यावसायिक सफलता का विचार आते ही उन्होंने फ़ौरन 'पिरामिड रेजर ब्लेड शार्पनर' का पेटेंट करा लिया तथा खूब धनोपर्जन किया।

प्रयोगों से एक और महान अचरज की बात का पता चला कि पिरामिड के अंदर कुछ दिनों तक रहने वाले कुत्ते, बिल्ली व अन्य मांसाहारी पशु, मांस खाना छोड़ कर शाकाहारी हो जाते हैं। पिरामिड के भीतर पेड़-पौधे सामान्य से दो-तीन गुनी अधिक गति से वृद्धि करते हैं, अधिक स्वस्थ रहते हैं तथा बेहतर फसल देते हैं। बायो-फीडबेक एवं ई.ई.जी. मशीन द्वारा मनुष्यों पर प्रयोग करने से ज्ञात हुआ है कि पिरामिड के भीतर लोग शीघ्र ही तनावमुक्त होकर शिथिल व शांत हो जाते हैं, और उनके मस्तिष्क में ठीक वैसी ही अल्फा वेव्स उत्पन्न होने लगती हैं, जैसी कि गहन निद्रा या ध्यान की अवस्था में होती हैं। पिरामिड आकृति की टोपी पहनने से माइग्रेन सिरदर्द की तकलीफ दूर हो जाती है। एक्युपंक्चर वालों की मान्यता है कि पिरामिड-शक्ति से शरीर की एक्युपंक्चर-मेरीडियंस में ऊर्जा प्रवाह संतुलित हो जाने से स्वास्थ्य लाभ मिलता है। किर्लियन फोटोग्राफी ने यह भलीभांति सिद्ध कर दिया है कि पिरामिड के भीतर व्यक्ति का आभामंडल (आरा) विस्तीर्ण हो जाता है, जो कि स्वास्थ्यवर्धक है।

—ओशो कम्यून, १७
कोरेगांव पार्क, पुणे-४११००१

# नदी सूख कांटा हुई

लो आया अब जेठ भी, पछुआ भेजे तार ।
चिनगी-चिनगी सिर चढ़ी, धूल हुई अंगार ।

सूरज चढ़ा मुंडेर पे, अलसायी अब छांव ।
नदी सूख कांटा हुई, मुई-मुई - सी नाव ।।

चल नहिं पाये एक पग, ले नहिं सके हिलोर ।
जेठ निगोड़ा कर गया, नदिया को कमजोर ।।

चढ़ी दुपहरी जेठ की, बिच्छू मारे डंक ।
ऐसे में निमिया लगे, महतारी का अंक ।।

नरम-नरम कल धूप थी, अब तो करती घाव ।
बहुत चिड़चिड़ी हो गयी, कर्कश हुआ स्वभाव ।।

खाई में सूरज गिरा, चंदा चढ़ा मुंडेर ।
थिरक रही बंजारिनी, मनो पी गई ढेर ।।

फटी बिवाई पांव में हरे हो गये घाव।
नेह रहे बिक हाट में, गगन छू रहे भाव।।

श्रम से जब थक कर हुआ चूर सलोना गात।
पगडंडी पर सो गयी मनो चांदनी रात।।

कोस-कोस मंजिल हुई, बहुत पिराये पांव।
पंथ-पंथ में गोखरू, दूर पिया का गांव।।

**— सतीश आर्य**

**मनकापुर, गोण्डा, उ.प्र.**

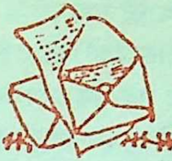

# अध्यक्ष के पत्र

राज भवन,
मलबार हिल,
बम्बई।

प्रिय सुहृद

२२ अप्रैल १९९० को दुनिया भर में 'भू दिवस' मनाया गया। उसका उद्देश्य पृथ्वी के क्रूर शोषण एवं नोच खसोट से उत्पन्न व्यापक विनाश की ओर ध्यान आकर्षित करना था, ताकि मानव समय रहते चेत जाये और ठीक समय पर विनाश लीला के इस प्रवाह को रोक सके और मानवता को पर्यावरण के अधःपतन के कारण विनष्ट कदाचित् पूर्णरूप से विनष्ट होने से बचा सके।

प्रसन्नता की बात है कि 'भू दिवस' के संबंध में हुए आयोजनों से प्रकट हो गया है कि पर्यावरण की सुरक्षा के प्रति लोगों की सहानुभूति क्रमशः बढ़ रही है। भारत में भी अनुकूल प्रतिक्रिया हुई है। बम्बई प्राकृतिक इतिहास संघ ने श्री एस.पी.गोदरेज के नेतृत्व में कुछ उत्साही व्यक्तियों का एक दल संगठित किया जिसने राजभवन परिसर में कुछ घण्टे पक्षियों को देखने में बिताया। प्रसन्नता की बात है कि उस दल में कुछ बच्चे भी थे। मैंने उन्हें बताया कि पर्यावरण को बचाने तथा उसे सुरक्षित रखने में नयी पीढ़ी को आगे बढ़ना चाहिये, क्योंकि उन्हें ही अधिक समय तक इस धरती पर रहकर प्रकृति के सुखों का उपयोग करना है।

बताने पर मालूम हुआ कि राजभवन के सम्पूर्ण क्षेत्र में बहुत घना जंगल था और सरकारी भवन के निर्माण के पूर्व अंग्रेज वहां पर जंगली सुअरों का शिकार करने आते थे। सरकारी भवन में क्रमशः निवास करने वाले अधिकारियों के अनुकूल रुख के कारण ही वृक्षों का वन, कुछ खास किस्म के पेड़ और झाड़ियां सुरक्षित हैं। यद्यपि अब जंगली सुअर नहीं हैं फिर भी पक्षियों की संख्या अधिक है। एक पक्षी विज्ञानवेत्ता के सर्वेक्षण के अनुसार करीब ५० किस्म के पक्षी अब भी हैं। इस संबंध में सहज ही एक बात याद आती है। मि. एडवर्ड थामसन अंग्रेजी के लेखक तथा भारत के मित्र थे। मि. थामसन ने कुछ वनों को देखने के बाद कहा कि 'वन्य जीवन बहुत ही तेजी से घटता जा रहा है।' इस पर गांधीजीने विनोद में कहा था कि 'हां, वनों में तो घटता जा रहा है किंतु नगरों में बढ़ रहा है।'

बताने की आवश्यकता नहीं है कि मानवता पर्यावरण से समन्वय स्थापित

करके ही सुरक्षित है। यदि इस संतुलन को ब्रिगाड़ा गया तो हर प्रकार का संकट आ सकता है। प्राचीन काल में जब जनसंख्या अल्प थी और उनकी आवश्यकतायें सीमित थीं तो संतुलन में कोई कठिनाई नहीं थी। आज की दुनिया का चित्र ही दूसरा है। हमें एक विशाल जनसमूह को भोजन वस्त्र और निवास मुहैया करना पड़ता है। साथ ही समाज की निरंतर बढ़ने वाली आवश्यक्ताएं जो भोगप्रधान अधिक हैं, अपरिमित प्राकृतिक संसाधनों के दोहन के लिए विवश कर देती हैं। यह विचार कि 'मनुष्य प्रकृति का बालक है और उसे पर्यावरण चाहिए' मूलरूप से भारतीय है। हमारे समय में गांधीजी ने उसे अपने शब्दों में इस प्रकार कहा कि 'बर्बाद मत करो, कमी न महसूस करो'।

साप्ताहिक हरिजन में देश के सामने आयी राजनीतिक समस्याओं के साथ-साथ केले के छिलके में प्रोटीन की मात्रा तथा आम की गुठली के पोषक तत्त्वों पर भी अपने विचार उन्होंने प्रकट किये थे। हर स्तर पर आवश्यकताओं को कम करना, बर्बादी रोकना तथा संसाधनों की सुरक्षा गांधीजी के सिद्धांत के मुख्य अंग थे। उनका हमें फिर से पालन करना चाहिए। जिसकी आवश्यकतायें सीमित हैं वही, सचमुच धनी व्यक्ति है। आधुनिक सभ्यता की आवश्यकताओं की वृद्धि पर उन्होंने दुःख प्रकट किया है।

## प्रदूषण की समस्या

अन्य विकासशील देशों की तरह भारत में भी विकास को सर्वोत्तम प्राथमिकता दी जाती है। उसके बिना हम अपनी समस्यायें नहीं हल कर पायेंगे तथा लोगों का जीवन स्तर भी नहीं उठा सकेंगे। तेजी से होने वाली जनसंख्या वृद्धि और औद्योगीकरण के कारण प्रदूषण की समस्या ने विश्वरूप धारण कर लिया है। हमें प्रदूषण अनेक क्षेत्रों में रोकना है। स्थल, जल, विशेषकर वायु में। कारखानों से वायुमण्डल में जहरीली गैसों का मिलना, उनसे निकले अनावश्यक तरल एवं ठोस पदार्थ मुख्य रूप से वायुमण्डल, जल एवं थल को प्रदूषित करते हैं। विकासशील देशों में, अपने देश की तरह, उत्पादन बढ़ाने तथा बेकारी दूर करने के लिए नये उद्योगों की स्थापना अपरिहार्य हो जाती है। फिर भी हम प्रदूषण को न्यूनतम स्तर पर लाने के लिए कठोर कदम उठा सकते हैं। नये उद्योगों का लाइसेंस देते समय ही हमें बेकार वस्तुओं और जहरीली गैसों के संबंध में प्रक्रिया के खतरों से भी सावधान रहना चाहिए। इसलिए जान बूझकर हमें नये उद्योगों का निर्माण पिछड़े इलाकों में जिनका औद्योगीकरण कम हुआ हो, करना चाहिए। इससे उद्योग व्यापक क्षेत्र में फैलकर पर्यावरण पर होने वाले दुष्परिणाम को कम कर देंगे।

प्रदूषण को समाप्त करने अथवा उचित स्तर तक लाने के लिए हमें जनसंख्या,

उद्योंग और तकनीकी को अच्छी तरह समझकर प्रयोग करना चाहिए। ऐसे कई क्रिया कलाप जिन्हें हम चला रहे हैं केवल लाभ की दृष्टि से ही नहीं परीक्षा करनी चाहिए, बल्कि यह भी देखना आवश्यक है कि वे पर्यावरण को कितना नुकसान पहुंचा रहे हैं। जब महात्मा गांधी ने विज्ञान और तकनीकी के अंधाधुंध प्रयोग के प्रति मानवता को सावधान किया था तो लोगों ने उन्हें विज्ञान विरोधी घोषित कर दिया । गांधीजी विज्ञान और तकनीकी के विरोधी नहीं थे। लेकिन वे नहीं चाहते थे कि हम विज्ञान और तकनीकी के दास हो जायें। वे चाहते थे कि विज्ञान और तकनीकी हमारी सेवा में लगी है और इसके द्वारा मानव कल्याण का कोई कार्य नहीं करना चाहिए जिससे प्रकृति को आघात पहुंचे।

स्पष्ट है कि विश्व के समक्ष जो पर्यावरण की समस्या है वह पूरी पृथ्वी को प्रभावित करेगी। हममें से कोई भी व्यक्ति किसी भी स्थिति में हो बिना प्रभावित हुए नहीं बचेगा। पृथ्वी के एक सिरे में जो कुछ होगा दूसरे सिरे पर उसका असर अवश्य होगा। इसलिए हमें पर्यावरण की समस्या का हल पूरे विश्व के स्तर पर निकालना है।

वायुमण्डल में वनों के विनाश के कारण सीधे दूषित गैसों के प्रवेश, पत्थर के कोयले जलने से तथा व्यापक पैमाने पर हेलान्स के प्रयोग से समूची पृथ्वी का वायुमण्डल दोहरे गहरे संकट में पड़ गया है। प्रथम तापक्रम नियमन की क्षमता नष्ट होने से वायुमण्डल का तापक्रम बढ़कर ध्रुवों पर जमी बर्फ को पिघलाकर मालद्वीप जैसे द्वीपों को डुबोकर तथा बंगलादेश जैसे देशों के तटीय भाग कों जल के नीचे कर सकता है। और दूसरा ओजोन में छिद्र बन जाने के कारण सीधे अल्ट्रा वायलेट विकिरण के प्रवेश से मानव जीवन की प्राकृतिक अवस्था पर दुष्परिणाम प्रस्तुत कर सकती है। दक्षिणी गोलार्ध में खास कर अर्जेन्टीना और चिली पर इसका प्रभाव पड़ सकता है।

हवा जिसमें हम साँस लेते हैं, पानी जो हम पीते हैं, भोजन जो हम लेते हैं तथा हमारी नित्यप्रति की क्रियायें, हमारे स्वास्थ्य का स्तर, जीवन की सुरक्षा आदि पर्यावरण पर घनिष्ठ रूप से निर्भर है। यदि हम पर्यावरण के प्रदूषित होने को रोकने के लिए संगठित होकर वैज्ञानिक परिणाम–स्वरूप हमारे स्वास्थ्य में गिरावट, प्राकृतिक संपदा का विनाश, वनस्पतियों, पशु जीवन, नदी-झील-बन के स्तर में ह्रास-एक प्रकार से जीवन स्तर की किस्म ही बदल जायेगी।

पर्यावरण की सुरक्षा से संबंधित दूसरा क्षेत्र है वन संपदा। भूमि के कटाव को रोकनें के अतिरिक्त प्रदूषण रोंकने तथा वायु को शुद्ध करने में वनों का बड़ा महत्त्व है। किंतु दुर्भाग्यवश जनसंख्या के निरंतर दबाव, अत्यधिक पशुचारण, खेती के लिए वनों का विनाश, लकड़ी (ईंधन तथा इमारती दोनों) के लिए काटते रहना आदि

कारणों से वनों का अस्तित्त्व खतरे में पड़ गया है। इसलिए वनों को सुरक्षित रखना हमारे हित में है। जहां कहीं पेड़ लगाये जा सकते हैं अवश्य लगाना चाहिए।

भारत में कुल भौगोलिक क्षेत्रफल के केवल १७% पर ही वन हैं। अच्छे वन तो केवल ११% ही हैं। अच्छे वनों के अभाव में प्रतिवर्ष देश की करीब छः अरब टन मिट्टी कटकर बह जाती है। भारत में प्राचीन काल से ही वृक्षों का आदर होता था। हमारे ऋषि तपस्या के लिए वन ही जाते थे। हमारे पूर्वजों ने पीपल और बरगद की पूजा की थी। लेखों से पता चलता है कि सम्राट अशोक ने पशुओं एवं मनुष्यों के हितों को ध्यान में रखकर जगह-जगह बगीचे लगवाये थे। छत्रपति शिवाजी को पेड़ों से बड़ा प्यार था। एक लेख में उन्होंने लिखा है- 'वृक्ष कुछ ही वर्षो में नहीं उगते। जो व्यक्ति वृक्षों की बच्चों की तरह सेवा करते हैं और बड़े होने तक उनकी देखभाल करते हैं उनके कटने पर उन्हें कितना दुख् होता होगा। राज्य में कठिनाई उत्पन्न होती है तो राजा को दोष दिया जाता है। जहां वृक्ष नहीं होते वहां बर्बादी होती है। इसलिए वृक्षों को नहीं काटना चाहिए। यदि पेड़ सूख गया है तो उसके मालिक की सहमति से ही उसे काटना चाहिए।'

आदि कवि वाल्मीकि और कालिदास ने वृक्षों की बड़ी प्रशंसा की है। लाल फूल वाले अशोक के बिना कोई भी बगीचा अधूरा रहता है। रामायण में हम पढ़ते हैं कि सीता अशोक वाटिका में बंदी थीं। कालिदास के ऋतुसंहार में देश के वृक्षों एवं पुष्पों का बड़ा विशद वर्णन है। वाल्मीकि रामायण में वन के वृक्षों के संबंध में वर्णन है। आज भी ग्रामीण समाज में तथा भक्त समाज में वृक्षों की पूजा चलती है। ग्राम्य गीतों में भी वृक्षों की महत्ता गायी गयी है, वृक्षों को लगाना बड़े पुण्य का कार्य समझा जाता था। इस प्रकार की पृष्ठभूमि में भी वनों का विनाश जारी है, कदाचित तेजी से। इस मनमाने विनाश को हमें रोकना है। हमें प्रकृति के प्रति लोगों में प्यार जगाना है।

## वनमहोत्सव की महत्ता

डा. क. मा. मुंशी वृक्षारोपण के प्रबल समर्थक थे। धरती माता के शान्ति प्रहरी के रूप में वृक्षों की पूजा के प्रति लोगों में जनभावना पैदा करने के लिए उन्होंने वन महोत्सव प्रारंभ किया। इसका उद्घाटन मुंशीजी ने सन १९५० में देहोत्सर्ग में एक वृक्षारोपण करके किया था। देहोत्सर्ग में कृष्ण भगवान ने अंतिम साँस ली थी। वनों की हरियाली वापस लाने के लिए मुंशीजी राष्ट्रीय स्तर पर कार्य करना चाहते थे।

वृक्षारोपण में वे जनता को सहभागी बनाना चाहते थे। वे खाद्य समस्या और उजड़ते वन और उसकी कटती भूमि के संबंधों के प्रति पूर्णरूप से जागरूक थे। आज वन महोत्सव को पुनर्जीवित करने तथा उसे जन मानस का कार्यक्रम बनाने की नितांत आवश्यकता है।

वृक्षारोपण के संबंध में एक राजा की कहानी याद आती है। एक दिन राजा सामान्य वस्त्रों में भेष बदलकर अपनी प्रजा का कुशल क्षेम जानने के लिए घूम रहा था। उसने देखा कि एक अत्यंत बूढ़ा व्यक्ति जिसकी कमर झुकी हुई थी एक फल का पेड़ लगा रहा था। राजा ने उसे रोककर कहा, 'आप बड़े मूर्ख मालूम पड़ते हैं। आप अपना समय क्यों बर्बाद कर रहे हैं? क्या आप सोचते हैं कि जब तक वृक्ष में फल आयेगा आप जिन्दा रहेंगे?' बूढ़े ने प्रत्युत्तर दिया, 'अजनबी, मुझे मालूम नहीं कि आप कौन हैं पर इतना अवश्य जानता हूं कि आप बहुत ही स्वार्थी व्यक्ति हैं। सामने फल से लदे पेड़ों को देखिए उन्हें मेरे पूर्वजों ने लगवाया था। मैं आज अपने पूर्वजों के श्रम का फल पा रहा हूँ तो इन वृक्षों को क्यों न लगाऊं, ताकि उनका फल मेरे बच्चों तथा उनके बच्चों को मिले?' इस कहानी में एक शिक्षा दी गयी है। क्यों न हम सब बूढ़े व्यक्ति की तरह जहां संभव हो वृक्ष लगायें और उनकी सेवा करें ताकि आने वाली पीढ़ी को हम अच्छा उत्तराधिकार दे सकें।

हमारे बच्चे खासकर जो नगरों में रहते हैं प्रकृति से दूर तथा उसके सुखों से भी दूर रहते हैं। हमें उनके हृदय में प्रकृति से प्यार पशुओं, पक्षियों पौधों वृक्षों एवं फूलों से पैदा करना चाहिए। प्रकृति-प्रेम मनुष्य का प्रारंभिक गुण होना चाहिए। हर बच्चे में उसे जगाना और बढ़ाना चाहिए। सौन्दर्य वर्णन से उनके हृदय में सौन्दर्य बोध उत्पन्न होगा। सौन्दर्य बोध ही हमारी संस्कृति की नींव है और सांस्कृतिक चेतना पर्यावरण की समस्या समझने के लिए अपरिहार्य है। हमें अपने बच्चों में प्रकृति के संतुलन, प्रकृति के नियमों से अवगत करा देना चाहिए, क्योंकि संतुलन को बिगाड़ना मानव कष्टों को बढ़ावा देना है। उनके अंदर निष्ठा जगानी है कि ज्ञान का उपयोग बुद्धिमत्ता से करना चाहिए। यदि ज्ञान की परि-समाप्ति बुद्धिमत्ता में नही होती तो वह मानव के लिए कष्ट पैदा करती है।

स्वतंत्रता प्राप्ति के प्रारंभिक वर्षो में आधुनिक भारतीय वैज्ञानिक नवजागरण के निर्माता एवं प्रधानमंत्री पं. जवाहरलाल नेहरू ने दामोदर घाटी परियोजना का उद्घाटन किया। उस समय लोगों का हृदय प्रसन्नता और गर्व से भर गया कि 'प्रकृति पर स्वतंत्र भारत की पहली उपलब्धि है' दूरदर्शी राजाजी ने उसी समय चेतावनी दी थी कि 'यदि हम प्रकृति को मां की तरह पूजेंगे तो वह हमें बहुत सारा आशीर्वाद तथा यदि नौकरानी बनायेंगे तो निर्दयतापूर्वक ठोकर मारेगी।'

यदि भावी पीढ़ी के लिए पृथ्वी, उसकी प्राकृतिक शान तथा सौन्दर्य को बचाने के लिए कुछ व्यक्तियों द्वारा संगठित प्रयास के लिए उन्मुख कर सके तो हम समझेंगे कि हम सफल हैं।

**आपका,**

**सी. सुब्रमण्यम**

वेदों में विज्ञान

# पृथ्वी का गुरुत्वाकर्षण

❑ मनमोहन दयाल चतुर्वेदी

आधुनिक विज्ञान के अनुसार न्यूटन ने 1665 ई. में पृथ्वी के गुरुत्वाकर्षण के विषय में भ्रमण के तीन सिद्धांत प्रतिपादित किये। इसी प्रकार कैपलर ने (Three Laws of Planetary Motion) जिनसे ग्रहों का स्वाभाविक भ्रमंण उनके भार के अनुसार सिद्ध होता है प्रतिपादित किये। यह कितने खेद का विषय है कि आज के भारतीय वैज्ञानिक वेदों से अनभिज्ञ होने के कारण गुरुत्वाकर्षण के सिद्धांत को न्यूटन की ही देन मानते रहे। न्यूटन से हजारों वर्ष पहले ऋग्वेद के ऋषियो नें सृष्टि की रचना का भली प्रकार अध्ययन किया था।

वेद शब्द की व्युत्पत्ति विद धातु से होने के कारण ज्ञान अर्थ में स्वतः प्रमाणित है। अतः जिसके द्वारा मनुष्य समग्र सत्य विद्याओं को जानते हैं, व प्राप्त करते हैं वह वेद है। वास्तव में वेद ही विज्ञान है। उपनिषदों में वेद की जो परिभाषा दी हुई है 'सत्य ज्ञान अन्नतं ब्रह्म' (तैत्रिय - 2/1)

विज्ञानमानन्दं ब्रह्म वृहद (९/२८) से सिद्ध होता है कि मुख्य वेद वैज्ञानिक है। वैज्ञानिक वेदों के संबंध में विचार वेद ग्रन्थों में ही पर्याप्त रूप से मिलते हैं वैदिक महाऋषियों ने समस्त ज्ञान को सूत्रबद्ध करके अपने शिष्यों को कंठस्थ कराया और उनकी व्याख्या आधिभौतिक, आधिदैविक और आध्यात्मिक तीन रूपों में विस्तार से की। इस प्रकार वैज्ञानिक वेदों के संबंध में विचार, वेद ग्रन्थों में ही पर्याप्त रूप से मिलता है जब तक वैज्ञानिक अर्थ का आश्रय न लिया जाये तब तक वेद वाक्यों की संगति नहीं हो सकती। वेद-मंत्रों के अनेकार्थ होने के संबंध में निरुक्तकार यास्क ने पथ प्रदर्शन किया है।

यास्क कहते हैं ज्ञान के तीन विषय हैं, और इसीलिए वेदों के अर्थ भी तीन प्रकार के हैं। हमें यास्क के बताये संकेतों का दृढ़ता से सहारा लेना चाहिए। और यह स्वीकार करना चाहिये कि वेद के मन्त्र ऋषियों के ज्ञान, ऋषियों के शब्द थे।

## वेदों में गुरुत्वाकर्षण का सिद्धान्त

आकर्षण विद्या का श्रुतियों में इतना स्पष्ट

विवरण है कि उसे देखकर यह आश्चर्य होता है कि भारतीय विज्ञान का कितना ह्रास हुआ।

तैत्तिरीय आरण्यक में मिलता है :-

**अनवर्णे इमे भूमी इय चासो च रोदसी।**
**किंस्विदत्रान्तरा भूतं येनेमे विधृते उभे।।**
**विष्णुना विद्धृते भूमी इति वत्सस्य वेदना ।।**
**इरावती धेनुमती हि भूतं सूर्यवसिनी मनुष्ये दशस्या।**
**व्यस्तभ्नाद रोदसी विष्णवेते दाधर्त पृथ्वीमभितो मूयखैः।।**

(1/8/5/6)

यहां यह प्रश्न उठाया गया है कि पृथ्वी मण्डल और सूर्य - मण्डल का किस प्रकार समानांतर धारण होता है और फिर उत्तर में विष्णु कर्तृक धारण स्पष्ट शब्दों में कहा गया है। यहीं पर ऋक् संहिता का मन्त्र (7/88/3) इरावती आदि प्रमाण रूप में उद्धृत किया गया है। इसमें यह बताया गया है कि पृथ्वी विष्णु के आकर्षण से स्थित है, विष्णु ने इसे धारण कर रखा है। विष्णु शब्द निघंटु में आदित्य के बारह नामों में से एक है। ब्राह्मण आदि श्रुतियों में भी विष्णु शब्द आदित्य के लिए प्रयुक्त हुआ है। अतः दोनों मण्डल (सूर्य और पृथ्वी) सूर्य मण्डलान्तर्गत आदित्यप्राण से विधृत हैं इससे सूर्याकर्षण विज्ञान यहां प्रत्यक्ष हैं।

### पृथ्वी की आकर्षण शक्ति

अश्वमेघ यज्ञ में मध्य के दिन एक ब्रह्मेध का प्रकरण है जिसमें एक स्थान पर यजमान होता, अध्वर्यु आदि का प्रश्नोत्तर होता है। इसके मन्त्र ऋग्वेद औरं यजुर्वेद में एक ही रूप में प्राप्त होते हैं। यजमान अध्वर्यु से कहता है कि मैं तुमसे पृथ्वी का सबसे अन्त का भाग पूछता हूं। और यह पूछता हूं कि भुवन अर्थात उत्पन्न होने वाले पदार्थों की नाभि कहां है?

**पृच्छामि त्वा परमन्त पृथिव्याः**
**पृच्छामि यत्र भुवनस्य नाभिः ।**

(ऋ.वे:१/१६४/३४: यजु.२३/६१)

यहां दो प्रश्न हैं। प्रथमं-पृथ्वी की जहां समाप्ति होती है वह अवधि कहां है। दूसरा यह है कि सब पदार्थो की नाभि कहां है। इन दोनों के उत्तर में अध्वर्यु कहता है--

**इयं वेदिः परो अन्तः पृथिव्याः ।**
**अयं यज्ञो भुवनस्य नाभिः।।** (पूर्व मन्त्र से आगे)

यहां प्रथम प्रश्न के उत्तर में कहा गया है कि यह यज्ञ वेदी ही पृथ्वी का अंत है। इससे यह स्पष्ट हो गया कि पृथ्वी गोल है चौकोर या त्रिकोण नहीं। गोलाकार में जिस बिन्दु से एक ही दिशा में कोई यात्रा प्रारंभ की जाये तो अंत में आकर उसी बिन्दु पर समाप्त होगी। इस प्रकार प्रत्येक बिन्दु को अंत कहा जा सकता है। यहां वेदी को ही पृथ्वी का अंत कहकर पृथ्वी का गोल होना सिद्ध किया गया है।

दूसरा प्रश्न भुवन की नाभि (केन्द्र) कहां है?

इसके उत्तर में यह सिद्ध किया गया है कि पृथ्वी में गुरुत्वाकर्षण शक्ति है और वैदिक परिभाषा में केन्द्र को नाभि कहते हैं। नाभि

मध्य में रहती है और वह बंधन करने वाली है। इस प्रकार नाभि शब्द मध्य में स्थित होकर अपने चारों ओर स्थित समीपस्थ पदार्थों का बंधन करता है। सौर जगत्त के मध्य में स्थित सूर्य अपनी रश्मियों से आकर्षण करने के कारण सब ग्रह और उपग्रहों का बंधक है। इसलिए सूर्य को भी नाभि कहा गया है। जैसा

**विश्वस्य नाभि चरतो ध्रुवस्य**

(ऋ.१०/१/५)

ब्राह्मण ग्रंथों में और उपनिषदों में तो वेदज्ञों के परस्पर प्रश्नोत्तर के द्वारा अनेक वैज्ञानिक विषयों का निरूपण हुआ है। इस सबको देखने से स्पष्ट प्रतीत होता है कि श्रुतिकाल में विज्ञान की चर्चा वैज्ञानिकों के वार्तालाप में प्रश्नोत्तर का बहुत प्रचार था।

ऋग्वेद दशम्मण्डल के १२१ सूत्रों में इसी प्रकरण के अनेक मन्त्र मिलते हैं हमारे दैनिक यंज्ञ के मन्त्रों में इसी आशय का प्रतिपादन मिलता है।

**'हिरण्यगर्भः समवर्तताग्रे भतस्य जाताः पतिरेक आसीत्।**
**स दाधार पृथ्वीं धामुतेमां कस्मै देवाय हविषा विधेम'।।**

इस मन्त्र में हिरण्य गर्भ शब्द अत्यंत सारगर्भित है। जिसका सीधा अर्थ है प्रकृति को अपने गर्भ में धारण करने वाला। वैज्ञानिक अर्थो में यह भी सूर्य को ही परिलक्षित करता है। सूर्य को कृष्णवर्ण माना गया है और उसके चारों ओर जो प्रकाश पुंज परिस्तृत है वह हिरण्यवर्ण होने से हिरण्य है और उसी हिरण्य के गर्भ में सूर्य स्थित है।

अंत में यह बता देना आवश्यक है कि जिस प्रकार सूर्य में आकर्षण शक्ति है उसी प्रकार अन्य पिण्डों में भी उनके पिण्ड के परिमाण के अनुसार आकर्षण शक्ति रहती है।

पृथ्वी में भी आकर्षण शक्ति है। उसी के द्वारा चंद्र पृथ्वी से बद्ध होकर उसकी परिक्रमा करता है। अर्वाचीन विज्ञान से यह सिद्ध हो गया है कि प्रत्येक परमाणु में केंद्रस्थ प्राण के आकर्षण से (NUCLEUS) से बद्ध होकर (ELECTRONS) निरंतर परिक्रमा करते रहे हैं। यह संक्षिप्त में गुरुत्वाकर्षण विज्ञान का निरूपण है।

**-१०३, फ्रेंडस कालनी,**
**मथुरा रोड, नयी दिल्ली-११००६५**

◆

# मासिक भविष्यफल — जुलाई ९०

□ पंडित वी० के० तिवारी

**मेष (१४ अप्रैल–१४ मई)**

माह का द्वितीय सप्ताह विशेष उत्तम व्यतीत होगा। सुसम्वाद एवं प्रियकर स्थितियों में वृद्धि होगी। २५ तारीख के बाद आपको ऐसा अनुभव होगा कि स्थितियों पर आपकी पकड़ ढीली होती जा रही है। प्रतिगामी स्थितियों में वृद्धि होती जायेगी। आशा के अनुरूप कार्य संपादित नहीं हो सकेंगे। रोग एवं शारीरिक कष्ट में वृद्धि होगी। आर्थिक एवं पारिवारिक सुख-संतोष में कमी होगी। संतान पक्ष की ओर विशेष ध्यान देना हितकर होगा। आकस्मिक यात्रा संभावित है।

**वृष (१५ मई-१५ जून)**

यह माह मिश्रित फल से युक्त होगा। प्रयासों के प्रतिफल आकस्मिक रूप से मिलेंगे। व्यथा, क्रोध एँव शारीरिक सुख में बाधा पहुंचेगी अतः इस दृष्टि से मन को तैयार रखना हितकर होगा। अपयश व आरोपों की झड़ी भी लग सकती है। स्थानांतरण या लंबी यात्रा के योग हैं। २५ के पश्चात् मासांत तक सुख-सुविधा, सफलता प्रिय व उच्चवर्ग के साहचर्य सुख आदि के क्षणों में वृद्धि होगी।

**मिथुन (१६ जून-१६जुलाई)**

यह माह २ से २५ तारीख तक आपके विचारों, प्रयासों, महत्वाकांक्षा एवं सुखद क्षणिकाओं का पोषक रहेगा। आपकी व्यक्तिगत पहचान बनेगी। राजनीति में पद, प्रतिष्ठा का पुनर्मूल्यांकन होगा। रोजगार में तेज हवा की आंधी रुकेगी। मनोबल व प्रबलता बढ़ेगी, पारिवारिक सुख–शांति, स्वास्थ्य-सुख, धार्मिक आस्था, धनलाभ, दांपत्य सुख आदि के क्षेत्र में इस माह में प्रतिकूलता प्रभावी रहेगी। विशेषतः प्रथम एवं चतुर्थ सप्ताह में।

**कर्क (१६ जुलाई-१६ अगस्त)**

माह का पूर्वार्ध विशेषतः मानसिक तनाव एवं चिंता से पूर्ण रहेगा। यश व मान प्रभावित हो सकते हैं। सफलता अनायास परंतु धीरे-धीरे चरणों में मिलेगी। स्थायी संपत्ति या लाभ में कमी के अवसर उत्पन्न होंगे। संतान पक्ष पर व्यय होगा। आर्थिक स्थिति कमजोर प्रतीत होगी। राजनीति एवं

व्यवसायी वर्ग अपने-अपने क्षेत्र में परेशानी अनुभव करेंगे। संस्थानों के प्रमुख विशेष कठिनाई महसूस करेंगे। धैर्य, संयम, शांति एवं आत्मीय वर्ग के सहयोग से कार्य में प्रगति हो सकेगी।

**सिंह : (१६ अगस्त-१६ सितंबर)**

माह का पूर्वार्ध पूर्णतः आपके विचारों की सही दिशा व सफलता प्रदान करेगा। माह का तृतीय सप्ताह प्रत्येक दष्टि से पूर्व के प्रयासों के परिणाम आपके पक्ष में करने का प्रयत्न करेगा। स्थायी लाभ एव नवचिंतन के सुयोग बनेंगे। विद्वान वर्ग की सहमति, सुझाव या मार्गदर्शन विशेष उपयोगी सिद्ध हो सकते हैं। परिवार सुख में कमी रहेगी। आकस्मिक व्यय बढ़ेगा। शेष विभिन्न स्तर पर माह में आपको ग्रह-जन्य अनुकूलता एवं सफलता के दर्शन होंगे।

**कन्या (१६ सितंबर-१६ अक्तुबर)**

इस माह शारीरिक एवं मानसिक कष्ट निश्चय ही रहेंगे। किसी भी कार्य में शीघ्रता के परिणाम अच्छे नहीं रहेंगे। परंतु रोजगार, व्यवसाय एवं पत्रकारिता के क्षेत्र में एवं स्थायी लाभ की दिशा में प्रयास सफल होंगे। अधिकार यश, विजय एवं श्री आदि में इस माह में वृद्धि होगी।

कतिपय प्रतिकूलताओं को छोड़कर माह आपके लिए विशेष उपयोगी एव भविष्य की दिशा निर्धारण करने वाला सिद्ध होगा। जोखिम से बचें। आर्थिक दृष्टि से उत्तम योग बनेंगे।

**तुला (१६ अक्टूबर-१५ नवंबर)**

माह का पूर्वार्ध जीवन के विभिन्न पक्षों को दृष्टिगत रखते हुए कहा जाये तो आश्वस्त करने वाला नहीं कहा जा सकेगा। लंबित प्रकरण यथावत् रहेंगे। आर्थिक लाभ अपेक्षा के अनुरूप नहीं होगा। विवाद के कार्यों से पृथकता का विचार उत्तम रहेगा। माह के द्वितीयार्ध में भौतिक सुख में वृद्धि होगी। कार्य विशेष में सफलता सहज ही उपलब्ध होगी। निराशा के निविड़ अंधकार से निकलेंगे। व्यय की वृद्धि या धन का विनियोजन किसी कार्य में बढ़ेगा।

**वृश्चिक (१६ नवंबर-१५ दिसंबर)**

राजनीति, विवाद या मुकदमेबाजी में निर्णय पक्ष में रहेंगे। यश व गौरव बढ़ेगा। माह का पूर्वार्ध विभिन्न कठिनाइयां उत्पन्न करेगा। परिवार में शांति का वातावरण नहीं रह सकेगा या तनाव परिवार के सदस्य से उत्पन्न होगा। आर्थिक पक्ष उत्तम रहेगा। प्रतियोगिता या विद्या के क्षेत्र में सफलता के सुयोग हैं। राजनीति में विरोधी परास्त होंगे। माह का तृतीय सप्ताह विशेषरूप से सुखद संयोगों का रहेगा। शुभसमाचार या प्रतीक्षित व्यक्ति से मिलन होगा।

**धनु (१६ दिसंबर-१५ जनवरी)**

४ से २० तारीख तक की अवधि में सामान्यतः आपके पक्ष में स्थिति रहेगी। सामान्यतः शेष अवधि विभिन्न स्तर पर प्रतिकूलता के क्षणों से भरी रहेगी। इस माह दुर्घटना, रोग, अग्नि, हानि आदि से संबंधित

स्थितियों से सामना हो सकता है। सूझबूझ, व सतर्कता आवश्यक है। यदि संभव हो तो यात्रा स्थगित रखें। आकांक्षाओं की पूर्ति की आशा न करें। परिवार के सदस्य रोगाक्रांत हो सकते हैं। मासांत के अंतिम सप्ताह का मध्य विशेष श्रेष्ठ सिद्ध होगा।

**मकर (१४जनवरी-१२फरवरी)**

इस माह परिवार के सदस्यों की ओर से परेशानी या चिंता हो सकती है। आकस्मिक रोग या चोट की संभावना है। आकांक्षाओं की पूर्ति होगी। शत्रु अपना सिर नीचा करेंगे। योजनाबद्ध प्रयास आशानुरूप परिणाम देंगे। अधिकार व दायित्व में वृद्धि होगी। प्रभाव, पराक्रम एवं यशस्वी क्षणों में वृद्धि के अवसर हैं। धनलाभ आवश्यकता कें अनुरूप होगा विद्यार्थी एवं पत्रकार के लिए विशेष अच्छे अवसर उत्पन्न होंगे। संघर्ष एवं परिश्रम की अधिकता रहेगी। माह का प्रथम व अंतिम सप्ताह सुसमाचार का रहेगा।

**कुंभ (१३ फरवरी-१४ मार्च)**

यह माह संघर्ष एवं श्रम का होने के बाद भी उच्च यश, प्रतिष्ठा, लाभ अधिकार एवं आर्थिक लाभ से संबंधित रहेगा। लंबित प्रकरण आपके पक्ष में निपटेंगे। राजनीति में विरोधी परास्त होंगे। परिवार सुख यथेष्ट रहेगा। पद का उपभोग होगा। योजना व्यवधान के पश्चात् भी आपको यश एवं उच्च सफलता देगी। प्रथम सप्ताह में संतान पक्ष से चिंता बन सकती है। २५ तारीख तक आपकी स्थिति सुदृढ़ एवं यशवर्धक रहेगी।

**मीन (१५ मार्च-१३ अप्रैल)**

१२ से २५ तारीख तक की अवधि में आपके कार्यों की प्रगति रुक जायेगी। अधिकारियों का रुख अस्पष्ट रहेगा। नयी योजना या नये कार्य का श्रीगणेश करने से स्थिति आपके लिए कठिनाई पूर्ण हो जायेगी। मनोबल, शांति एवं धर्म अभीष्ट मूलमंत्र सिद्ध होंगे। प्रथम व अंतिम सप्ताह में परिवार सुख-शांति में यथेष्ठता रहेगी।

आर्थिक एवं राजनीतिक गतिविधि का परिणाम सामान्य रहेगा।

**व्रत एवं त्यौहार (जुलाई)**

भड़ली नवमी १, एकादशी देवशयनी एवं कामिका क्रमशः ३ एवं १८, वासुदेव द्वादशी ४, मंगला त्रयोदशी, पार्वती व्रत, प्रदोष व्रत ५, चतुर्दशी व्रत ६, गुरु पूर्णिमा कोकिला व्रत एवं वायु परीक्षा ७, सोमवार व्रत, गणेश चतुर्थी व्रत ११, मैनापंचमी भ्रातृ १३, प्रदोष व्रत १९; मास शिवरात्रिव्रत २०; हरियाली अमावस्या २२; हरियाली तीज २४; विनायक चतुर्थीव्रत २५; नागपंचमी २६ जुलाई।

**-देवलोक कालोनी (बेरागढ़),**
**सी.टी.ओ, भोपाल**

* * *

प्रसिद्ध हास्य लेखक रेबलेस का अंतिम समय जब नजदीक आया तो अपने को घेरे डाक्टरों से उन्होंने मुस्कराकर कहा, 'ईश्वर के वास्ते अब मुझे छोड़ दीजिये तथा स्वाभाविक मौत मरने दीजिये !'

* * *

# ग्रंथलोक

*** हिन्दी पत्रकारिता के युग-निर्माता * लेखक: डॉ. लक्ष्मीशंकर व्यास; प्रकाशक: व्यास प्रकाशन, कें–३१/५१, काल भैरव, वाराणसी; मूल्य: ६५ रुपये।**

हिन्दी पत्रकारों के संबंध में बड़े ग्रंथ तो कई निकल गये हैं लिकिन प्रमुख पत्रकारों के बारे में जो छोटे-छोटे लेख या अध्याय डॉ. लक्ष्मीशंकर व्यास ने इस पुस्तक के लिए लिखे हैं, उसके दो लाभ हैं एक तो यह कि बहुत थोड़े से पन्नों में हिन्दी पत्रकारिता के समग्र स्वरूप के दर्शन हो जाते हैं और साथ ही साथ जिन पत्रकारों ने इस विधा को गौरव प्रदान किया, उनका परिचय भी प्राप्त हो जाता है। साधारणतया पत्रकारिता के इतिहास संबंधी जो पुस्तकें निकलती हैं या निकली हैं, उनमें पत्रों पर अधिक महत्व दिया गया है, पत्रकारों पर कम। उसका कारण यह रहा है कि या तो वे ग्रंथ शोध प्रबंध के रूप में रहे हैं या फिर उन्होंने प्रत्रकारिता के इतिहास के लिए पत्रों को अधिक महत्व दिया है। ऐसा करने में अंग्रेजी पत्रकारिता की परम्पराओं का अनुसरण किया गया हैं। क्योंकि उनमें संपादक और पत्रकार को महत्व न देकर पत्र को महत्व दिया जाता था। लेकिन भारतीय पत्रकारिता मात्र पत्रकारिता नहीं थी, वह राष्ट्रीय पुनरोत्थान का एक अस्त्र भी थी, इसलिए व्यक्ति का उल्लेख और उसके महत्व का निरूपण भारतीय पत्रकारिता के अध्ययन के लिए आवश्यक हो जाता है। श्री लक्ष्मीशंकर व्यास ने जो काशी विश्वविद्यालय और काशी विद्यापीठ में पत्रकारिता के छात्रों को पढ़ाते भी हैं, इस कमी को दूर करने का प्रयास किया है।

व्यासजी ने सभी श्रेष्ठ पत्रकारों के बारे में बहुत ज्ञानवर्धक सामग्री दी है।

फिर भी कतिपय यशस्वी पत्रकार इसमें छूट गये हैं, इनका ज़िक्र होना चाहिए था। यदि गांधीजी का ज़िक्र हो सकता है तो उससे पहले लोकमान्य तिलक का ज़िक्र होना चाहिए था, जिनके 'कैसरी' के हिन्दी संस्करण ही नहीं छपे, उससे संबंध्द युग निर्माता, पत्रकार श्री माधवराव सप्रे जैसे जन थे। इसी तरह 'अर्जुन' संपादक पं. इन्द्र विद्यावाचसपति का उल्लेख आवश्यक था। उन्होंने हिन्दी के यशस्वी पत्रकारों की जैसे

एक सेना ही संगठित कर दी। आज की आधुनिक पत्रकारिता में अगर हम श्री सत्यदेव विद्यालंकार, श्री रामगोपाल विद्यालंकार, श्री अवनीन्द्र विद्यालंकार, श्री कृष्णचंद्र विद्यालंकार और श्री सत्यकाम विद्यालंकार जैसे पत्रकारों को अनदेखा कर देंगे तो हिन्दी पत्रकारिता के साथ न्याय नहीं होगा। आशा है अगले संस्करण में यह त्रुटि ठीक कर दी जायेगी।

**—जगदीश प्रसाद चतुर्वेदी**

* * *

*** भारतीय चित्रकला * लेखक: डॉ. एस. एन. सक्सेना; प्रकाशक: मनोरमा प्रकाशन, मीरपुर छावनी, कानपुर; मूल्य: ६५ रुपये।**

भारतीय कला, धर्म, दर्शन एवं संस्कृति की महिमा का गुणगान सर्वत्र किया गया है। साहित्यकारों, कला-मर्मज्ञों, इतिहासकारों एवं पुरातत्ववेत्ताओं ने प्राप्त अवशेषों एवं उपलब्ध प्रमाणों के आधार पर भारतीय कला-गौरव की प्रामाणिकता पुष्टि की है।

प्रागैतिहासिक काल से लेकर आज तक की कला में आये उतार - चढ़ावों की शोध-परक प्रस्तुति की है डॉ. एस. एन. सक्सेना ने 'भारतीय चित्रकला' के दस अध्यायों में, जिसमें समाहित किया है उन्होंने 'चित्रकला के आधुनिक परिवेश में विश्वविद्यालयों की भूमिका' जो बिल्कुल ही नया तथा अन्य ग्रन्थों से हटकर है।

प्रस्तुत ग्रंथ में उन्होंने अनेक शोध - विशेषज्ञों, कला - मर्मज्ञों एवं कला-साधकों का विस्तार-पूर्वक वर्णन किया है जिन्होंने विश्वविद्यालयी शिक्षा ग्रहण की हैं तथा समकालीन कला-जगत में नये आयाम स्थापित किये हैं।

डॉ. सक्सेना ने ग्रंथ के अंत में उदाहरणस्वरूप अनेक चित्रों को समाहित किया है, जिससे पाठक की रुचि निश्चय ही बढ़ेगी। यह ग्रंथ शोध-छात्रों, कला-शिक्षकों, व कला-प्रेमियों के लिए ज्ञानवर्द्धक एवं उपयोगी साबित होगा।

**—डॉ. रामेश्वर वर्मा**

* * *

*** भारतीय कला * ले. डॉ. ए. एल. श्रीवास्तव; प्रकाशक: किताब महल, इलाहाबाद; मूल्य सजिल्द: १२५ रुपये व अजिल्द: ४० रुपये**

***भारतीय कला-प्रतीक* लेखक: डॉ. ए.एल. श्रीवास्तव; प्रकाशक: अनुराग प्रकाशन, इलाहाबाद; मूल्य: सजिल्द १०५ रुपये।**

'भारतीय कला' की रचना जिस दृष्टि से हुई है उसमें 'मनसा-वाचा-कर्मणा' के अतिरिक्त चौथी वृत्ति 'चक्षुषा' भी समाहित है जिसे 'विदुरनीति' ने स्पष्टतः उल्लिखित किया है। 'चक्षुषा मनसा वाचा कर्मणा च चतुर्विधम्। यही नहीं विदुर ने 'चक्षुषानुपिवन्निव' कहकर आंख से पीने का भाव भी व्यक्त किया है। वे मानते हैं कि 'किसी भी कलाकृति का चाक्षुष-दर्शन

तकालय 211279

ही उसके ज्ञान के लिएँ आवश्यक होता है।

भारतीय कला मेरी दृष्टि से ऐसी ही प्रवृत्ति से पहचानी जा सकती है। कदाचित् अनजाने ही डॉ. ए.एल. श्रीवास्तव ने स्वतः ऐसी धारणा अपनाकर इस रचना का प्रणयन किया है। भारतीय कला ज्ञान से 'प्रज्ञा' और 'प्रत्यभिज्ञा' तक जाती है इसीलिए कहा गया हैं कि 'विश्रान्ति' से उसे परितोष नहीं होता। वह आनन्द की पराकोटि तक जाने में जीवन की सार्थकता समझती है। निश्चय ही डॉ. श्रीवास्तव इस मर्म को जानते हैं इसीलिए उन्होंने पूरी तन्मयता और प्रज्ञात्मक बोध का परिचय देते हुए भारतीय कला-कृतियों का मार्मिक निरूपण किया है। मुझे तो वह त्रिवेणी-स्नान का सुख दे गया जिसमें चित्रकला, मूर्तिकला और वास्तुकला तीनों का समावेश होता दिखायी दिया।

उनकी प्रस्तुति में निजी रेखानुकृतियों का कितना बड़ा हाथ रहा है वह इस पुस्तक के अनुशीलन और मनन से ही जाना जा सकता है। उनकी अन्वेषण-प्रक्रिया निरंतर जागरूक रही है अतः हर विद्या-व्यसनी इससे लाभ उठायेगा, मुझे इसमें कोई संदेह नहीं। भारतीय संस्कारों को उनकी जाग्रत प्रतीकात्मकता के साथ कला-क्षेत्र में अनुभव करा देना एक कठिन कार्य था जिसे इस पुस्तक में विश्वासपूर्वक साधा गया है। नव-प्रकाशित 'भारतीय कला-प्रतीक' में उसे और वैशिष्ट्य मिला है। एकादश प्रतीकों का सम्यक अनुशीलन हिन्दी में किसी अन्य कला-मर्मज्ञ ने इतनी सजगता से किया हो ऐसा मैं नहीं जानता। इसमे भी डॉ. श्रीवास्तव की सबको चाक्षुष-दर्शन कराने की प्रवृत्ति संबध्द भारतीय कला-कृतियों के निरूपण में प्रधान रही है। मैं उनकी दोनों कृतियों के लिए उन्हें साधुवाद देता हूँ। —**जगदीश गुप्त**

* * *

*** कस्बे की लड़की (कथा संग्रह) * लेखिका: क्षमा शर्मा; प्रकाशक : राजधानी प्रकाशन, बी-७/७४, एक्सटेंशन, सफदरजंग एन्क्लेव, नई दिल्ली; मूल्य: पैंतीस रुपये।**

'कस्बे की लड़की' की महानगरीय त्रासदी तो सब नारियों की है। वे चाहे कहीं भी रहें, पुरुष प्रधान समाज द्वारा रची गई वर्जनाओं में सिसकने पर विवश हैं। लेखिका ने स्वयं कभी न कभी इन वर्जनाओं को गहराई से देखा और समझा है। स्त्री पीड़ा का यह सहभाव अगर उन पर हावी है तो बेवजह नहीं।

क्षमाजी का रचना संसार उनकी अपनी बनायी सीमाओं में कैद होने को तैयार नहीं, उनकी कथाओं के सूत्रों की पहुंच बहुत दूर तक और कहीं अधिक गहरी है, यह तथ्य उन्हें मान लेना चाहिए। पर इसके साथ ही यह भी मानना पड़ेगा कि संग्रह की सर्वाधिक प्रभावशाली कहानियां मुखर नारी पीड़ा की ही हैं, जैसे 'जिंदा है प्रतिमा बर्मन', 'किसको बताऊं ओर छोर', 'कस्बे

की लड़की' और 'बिखरी हुई जिंदगी'।

—देवेन्द्र कुमार

* * *

*** दर्द के दरख्त * संकलन कर्ता एवं प्रकाशक : अन्जुमन फरोगे अदब, उरई (जालौन); मूल्य: बीस रुपये।**

'दर्द के दरख्त' में खानुल हक मशरिकी, मुहम्मद फारुक वफा, सैय्यद यूसुफ़ इश्तियाक क़ैसर, मुहम्मद शमीम 'अज़ीमी', मुहम्मंद शरीफ 'शरीफ', अब्दुल मलिक अब्बासी साकी, मुहम्मद मुबीन मुकीन, तथा ओ.पी.श्रीवास्तव की ग़ज़लों को पढ़ या महेन्द्र कुमार, योगेश्वरी प्रसाद अलि, संत कवि हरिश्याम पारथ, आदर्श प्रहरी और रविशंकर मिश्र के समायोजित गीत और कविताओं पर दृष्टि डालें सभी से स्पष्ट होता है कि इन रचनाकारों के शिल्प और जुबान में भले ही अंतर हो लेकिन इनकी भावनायें और कल्पनाएं एक हैं। सभी का लक्ष्य मानव कल्याण की बात सोचना है।

कुल मिलाकर इस संकलन के माध्यम से कवियों और शायरों का भाषाई संकीर्णता तथा साम्प्रदायिकता को हतोत्साहित करने का प्रयास कुछ रंग अवश्य लायेगा।

—राजेन्द्र परदेसी

*** भागवतैकादश (श्लोकसार संग्रह) * लेखक: डॉ. सी. आर. स्वामिनाथन; नाग प्रकाशक: ११ ए/यू.ए. जवाहर नगर, देहली; मूल्य: ४७ रुपये।**

भागवतैकादश श्लोक सार संग्रह नामक ग्रंथ में डा.सी.आर. स्वामीनाथन ने कथ्य को तथ्य के रूप में प्रस्तुत करके श्लाघनीय कार्य किया है। लेखक ग्रंथ के आधे भाग में गुरुवचन सुधानाम देकर ५६ सुधाबिन्दुओं में जो विवेचनात्मक स्पष्टीकरण प्रस्तुत किये हैं वे सभी पठनीय एवं संग्रहणीय हैं। लेखक का विवेचन आज के युग में शास्त्रीय पद्धति को परखने की प्रेरणा प्रदान करता है।

न्यूटन के गुरुत्वाकर्षण का सिध्दांत ज्योतिषशास्त्र के सूर्य सिध्दांत में पहले से ही विद्यमान है यह हवाला देकर लेखक ने भारत की अस्मिता का परिचय दिया है।

यदि इन सुधाबिन्दुओं का अनुवाद भारतीय भाषाओं में हो सके तो अधिक जनकल्याण हो सकेगा। लेखक ने सुधाबिन्दुओं में कन्नड़, तमिल, तेलुगु एवं मलयालम भाषा के कवियों के पद्यों का उदाहरण देकर भारत की विविधता में एकता दर्शाने का स्तुत्य कार्य किया है।

—डा. रमाशंकर त्रिपाठी

*

गांव का सरपंच चुनाव जीतकर एम. पी. बन गया। उन्हें एक स्कूल का उद्घाटन करने बुलाया गया। अपने उद्घाटन भाषण में उन्होंने कहा – 'गांव के स्कूलों का स्तर ऊंचा उठाना चाहिए – और यह तभी संभव है जब गांव में स्कूल ऊंचे टीलों पर बनाये जायें।'

बालकथा

# मंत्री का न्याय

❑ श्याम मनोहर व्यास

यह घटना उन दिनों की है जब मेवाड़ में महाराणा सज्जनसिंहजी राज्य करते थे। वे प्रजापालक व न्यायप्रिय शासक थे। एक दिन उनके दरबार में एक अनोखा मामला पेश हुआ। मोहनलाल व किशनलाल नाम के दो व्यक्ति वहां आये वे दोनों एक सोने की बांसुरी के लिए झगड़ रहे थे। एक कह रहा था कि यह बांसुरी मेरी है, तो दूसरा कह रहा था कि यह बांसुरी मेरी है। यह सुनकर महाराणा असमंजस में पड़ गये। दोनों को अपनी बात साफ-साफ शब्दों में कहने को कहा।

मोहनलाल के हाथ में बांसुरी थी, वह बोला, 'महाराज मैं अपनी सोने की बांसुरी चबूतरे पर रख कर किसी कार्य के लिए गया तो पीछे से किशनलाल ने मेरी बांसुरी उठायी और भागा। अतः अब मेरी बांसुरी मुझे दिलायी जाय'।

किशनलाल का कहना था 'मोहनलाल झूठ बोलता है। बांसुरी मेरी है। सोने की चीज देख कर इसकी नीयत खराब हो गयी है'।

महाराणा ने दरबारियों से राय मांगी, कुछ ने कहा 'बांसुरी कीमती लगती है। निर्णय होना कठिन है। इसलिये बांसुरी के दो टुकड़े कर दिये जायें और एक-एक हिस्सा दोनों को दे दिया जाए। तभी फैसला हो सकेगा।

यह बात दोनों को पसंद आ गयी। तभी महाराणा के कुशाग्र बुद्धिवाले मंत्री हरिहरराय उठ खड़े हुए। वे किशन के हाथ से बांसुरी लेकर उसे बजाने लगे। हरिहरराय को पहली बार वांसुरी बजाते देख महाराणा के साथ-साथ दरबारी भी दंग रह गए।

तदनंतर मंत्री ने बांसुरी बंद कर उसे हाथ में उछाल कर तौलते हुए किशन से पूछा : 'यह असली सोने की है या तांबे पर सोने का पानी चढ़ा है?'

किशन ने कहा - 'महाराज' यह तो ठोस सोने की बनी हैं'। 'वजन कितना होगा इसका?' 'दस तोला तो होगा ही'। किशन का उत्तर था। फिर हरिहरराय ने मोहन से पूछा 'तुम्हारा क्या कहना है?'

मोहन ने कहा 'महाराज, बांसुरी असली सोने की है। बजन आठ तोले के आसपास ही होगा शायद।'

दोनों की बातें सुनकर मंत्री हरिहरराय ने थोड़ा सोचकर कहा-'महाराज, सच बात तो यह है कि यह बांसुरी किसी तीसरे आदमी की है। यदि नहीं है तो दोनों इसे

बजाकर दिखायें क्योंकि जिसको बजानी आती होगी बांसुरी उसी की होनी चाहिए।'

महाराणा ने दोनों से बासुंरी बजाने को कहा। बजाने की बात सुन कर दोनों घबरा उठे। ऐसा प्रतीत होता था शायद उन्होंने इससे पहले कभी बांसुरी छुई भी नहीं हो।

जब वे बजाने को तैयार नहीं हुए तो हरिहरराय ने कहा-'बांसुरी का तौल पंद्रह तोले से कम नहीं होगा और यह तांबे की है जिस पर सोने का पानी चढ़ा है। अब बताओ यह बांसुरी है किसकी?' मंत्री के प्रश्न पर दोनों भय के मारे कांपने लगे।

हरिहरराय ने महाराणा से निवेदन किया 'महाराज, ये दोनों चोर हैं। इन्हें गिरफ्तार कर लिया जाय ओर इनसे ही पूछताछ कर बांसुरी के असली मालिक का पता लगाया जाये।

गिरफ्तार होने की बात सुन कर दोनों के होश उड़ गये। किशन ने कहा 'हमें माफ करें अन्नदाता! यह बांसुरी मेरी नहीं है।'

इस पर महाराणा ने पूछा 'तो किसकी है?'

किशन ने उत्तर दिया-'अन्नदाता, माफ करें। यह बांसुरी तो बांसुरी वादक कन्हैया महाराज की है। मैं इसे कन्हैया महाराज के घर से चुरा कर भाग रहा था तभी तो मोहन मुझे बांसुरी चुराते देख मेरे पीछे लग गया'। महाराणा ने मोहन से पूछा 'किशन जो कह रहा है क्या वह सच है?'

मोहन ने कहा - हां महाराज! बांसुरी को असली सोने की समझ मेरे मन में लोभ उत्पन्न हो गया था। इसीलिये आधी बांसुरी लेने के लिए मैं राजी हो गया था।'

तब महाराणा ने हरिहरराय से पूछा - 'मंत्रीजी, तुमने कैसे जाना कि बांसुरी इनकी नहीं है, किसी और की है?'

मंत्री हरिहरराय ने कहा - 'महाराज! यदि इन दोनों में से कोई इस बांसुरी का मालिक होता, तो वह इसे आधी काटने को राजी ही नहीं होता, क्योंकि तब यह बजाने योग्य ही नहीं रहती और फिर अपनी चीज आधी ही क्यों लेता? दूसरी बात यह है कि इन्होंने इसे असली सोने की बताया, तीसरी गलती यह कि इसका वजन गलत बताया जबकि यह १५ तोले से कम नहीं है। कहने का अभिप्राय यह है कि इन्हें बांसुरी के विषय में कुछ भी ज्ञान नही है।'

महाराणा ने बांसुरी वादक कन्हैया महाराज को बुलाया। कन्हैया महाराज ने आते ही अपनी बांसुरी पहचान ली। बांसुरी उन्हें लौटा दी गयी। चोरी तथा राजा व दरबारियों के सामने जूठ बोल कर दरबार की मानहानि करने और व्यर्थ समय नष्ट करने के अपराध में मोहनलाल व किशनलाल को एक-एक साल के कठोर कारावास का दंड सुनाया गया।

महाराणा ने मंत्री हरिहरराय की बुद्धिमत्ता की भूरि-भूरि प्रशंसा की।

सच है न्यायोचित तरीके एवं बुद्धिचातुर्य से भी कई जटिल समस्याएं क्षणभर में सुलझ सकती हैं। -१५, पंचवटी, उदयपुर,राजस्थान

# बालों के सफेद होने की चिन्ता

❑ डॉ. इरफान अलीमी

काले एवं घने बाल जहाँ सुंदरता के प्रतीक हैं वहीं शारीरिक रूप से आपके स्वस्थ होने का प्रमाण भी। यदि आपके बाल काले, चमकदार एवं घने हैं तो अवश्य ही आपका व्यक्तित्व सुंदर एवं प्रभावशाली होगा। और यदि समय से पूर्व आपके बालों में सफेदी चमकने लगी तो न ही केवल आपका व्यक्तित्व प्रभावित होगा, बल्कि आप अपनी आयु से अधिक लगने लगेंगे और हीन भावना का शिकार हो जायेंगे।

आज के इस आधुनिक युग में बहुत से लोग समय से पूर्व बालों को सफेद होने से चिंतित एवं परेशान रहते हैं। यदि युवतियों को यह रोग लग गया तो वह और भी कुंठित एवं हीन भावना का शिकार हो जाती हैं और अपने बालों को काले, चमकीले एवं घने बनाने के लिए पत्र-पत्रिकाओं में छपे विज्ञापन देखकर बाजार में बिकने वाले साधारण खिजाबों का प्रयोग करने लग जाती हैं जो न केवल उनके सिर की त्वचा के लिए हानिकारक होता है बल्कि स्वास्थ्य के लिए भी घातक होता है।

यदि बुढ़ापा आने पर बालों में सफेदी आ जाये तो निश्चय ही कोई चिंता का विषय नहीं है लेकिन यदि किशोर अवस्था में ही बाल सफेद होने लग जायें तो अवश्य परेशानी का कारण बन जाता है।

समय से पूर्व बालों के सफेद होने को चिकित्सक 'केनिशीज' कहते हैं। इस रोग में सबसे पहले सिर के बाल सफेद होने लगते हैं। फिर धीरे-धीरे वह सफेदी दाढ़ी और मूंछ तक पहुंच जाती है। बुढ़ापे में बालों के सफेद होने का कारण बालों को प्राकृतिक रंग प्रदान करने वाली कोशिकाओं की संख्या में कमी का होना और उनकी कार्यशक्ति का समाप्त हो जाना है, जिसके कारण बालों को रंग प्रदान करने वाले पदार्थ 'मेलानिन' के उत्पादन में कमी आ जाती है और बाल सफेद होने लग जाते हैं। वृद्धावस्था में बालों के सफेद होने का एक कारण यौन ग्रंथियों में एक विशेष प्रकार के हारमौन के उत्पादन का बन्द हो जाना भी है। युवावस्था में बालों का सफेद होना एक प्रकार का रोग है। इसमें पहले

तो सिर में एक दो बाल सफेद होते हैं फिर यह सफेदी बढ़ती ही जाती है। इस सफेदी का मात्र कारण बालों को रंग देने वाले तत्व का अभाव है। और इस तत्व के अभाव के अनेक कारण है जैसे कुपोषण, मानसिक कमजोरी, नाड़ी संस्थान में किसी प्रकार का विकार आदि। इसके अतिरिक्त अनुवांशिक कारणों से भी रंजक की मात्रा कम हो जाती है। कुछ चिक़ित्सकों का यह भी मत है कि शरीर में रक्त की कमी का प्रभाव भी बालों पर पड़ता है। चूंकि मस्तिष्क और सिर में रक्त उचित मात्रा में नहीं पहुंच पाता अतः बाल सफेद होने एवं झड़ने लगते हैं। वैसे बालों का समय से पूर्व सफेद होने का मुख्य कारण अनुवांशिक ही है। क्योंकि प्रायः यही देखने को मिलता है कि जिनके माता-पिता के बाल समय से पहले ही सफेद होने लगे थे उनके बच्चों के बाल भी युवावस्था में ही सफेद होने लग जाते है। इसके अलावा बालों के सफेद होने के अनेक कारण हैं जैसे अधिक चिंता करना, बारबार नजला का होना, कब्ज का रहना, बालों में डेन्ड्रफ का होना, सिर का गंदा होना, सिर की त्वचा में किसी रोग का होना आदि,

बच्चों में बालों के सफेद होने के भी विभिन्न कारण हैं जैसे बच्चों को पेट भर भोजन न मिलना, भोजन में लोहा का न होना, एवं विटामिन ए बी एवं डी का अभाव। अतः बच्चों के बालों को सफेदी से बचाने के लिए उन्हें पौष्टिक आहार दें ताकि उनके बाल सफेद होने से सुरक्षित रह सकें।

बालों का समय से पूर्व सफेद होने के जहां अन्य कारण हैं वहीं साबुन एवं शैंपू का अनावश्यक प्रयोग भी है। कुछ लोग बालों की सफाई की ओर बिल्कुल ही ध्यान नहीं देते तो कुछ बालों को साफ रखने के लिए साबुन एवं शैंपू का अत्यधिक प्रयोग करते हैं और यह दोनों ही आदतें बुरी हैं। इसके अलावा कुछ लोगों के बालों में चिकनाई का अभाव होता है उनके बाल भी जल्दी ही सफेद हो जाते हैं।

बालों को लंबी आयु तक काला बनाये रखने के लिए भोजन में प्रोटीन, आयोडीन, कार्बोहाइड्रेट, रासायनिक लवण, लोहा, विटामिन ए, बी, डी, फासफोरस और तांबा अधिक मात्रा में लें। विटामिन बी काम्पलैक्स, फोलिक एसिड, पैराएमीनो-बेजोइक एसिड और पेटोनेनिक एसिड बालों को काला बनाये रखने में सहायक होते हैं। यदि इन एसिडों का सेवन किया जाये तो बालों के काला होने की पूरी संभावना रहती है। इन एसिडों को गेहूं, दही, एवं यीस्ट से प्राप्त किया जा सकता है।

**–पोस्ट बेगम सराय, इलाहाबाद-१५**

अनोखा वनस्पति-जगत

# विचित्र पेड़ पौधों की दुनिया

**☐ अरुणकुमार पांडेय**

पृथ्वी पर अनेक प्रकार के पेड़-पौधे उत्पन्न होते हैं, परंतु साधारण समझकर हम उन पर विशेष ध्यान नहीं देते। ये विचित्र पेड़-पौधे बहुत कम संख्या में उत्पन्न होते हैं और उनमें से भी अधिकांश गर्म जलवायु वाले देशों तथा द्वीपों में ही पाये जाते हैं।

### जल बरसाने वाला वृक्ष

इण्डोनेशिया के सुमात्रा द्वीप में एक ऐसा वृक्ष होता है जो जल बरसाता है। अतः वहां के निवासी इसे जल - वर्षक वृक्ष कहते हैं। दोपहर के समय, जब सूर्य की किरणें काफी तेजी से चमकती है, तब यह पेड़ हवा के द्वारा भाप ग्रहण करता है। कुछ देर के बाद यह भाप एकत्र होकर जल के रूप में बरसने लगती है। पेड़ के नीचे थोड़ी देर में अच्छा - खासा घड़ा भर जाता है। इसी प्रकार अफ्रीका के जंगलों में उत्पन्न होने वाले एक वृक्ष के तने में छेद कर देने से ठंडा पानी निकलने लगता है।

### मानव के आकार का वृक्ष

संयुक्त राज्य अमेरिका के मिशिगन प्रदेश के निवासी हालों क्लार्क नामक एक व्यक्ति के बगीचे में एक विचित्र प्रकार के वृक्ष का ठूंठ खड़ा है, जिसे देखकर मानव की आकृति का बोध होता है। मनुष्य के समान इस वृक्ष के भी हाथ, पैर और सिर हैं, यहां तक कि उसके सिर पर एक टोपी है और दाहिने हाथ में एक छड़ी है। प्रकृति द्वारा पालित-पोषित इस वृक्ष ने अपने आप ही मानव जैसा रूप ग्रहण कर लिया है।

### दूध देने वाला वृक्ष

दक्षिणी अमेरिका के ब्राजील देश के घने जंगलों में एक विशेष प्रकार का एक वृक्ष पाया जाता है, जिसके तने में छेद कर देने से दूध के समान सफेद तरल पदार्थ निकलने लगता है। पीने में यह तरल पदार्थ गाय के दूध के समान मीठा और पौष्टिक होता है। इसलिए वहां के जंगली लोग इसे बड़े चाव से पीते हैं। बड़े तड़के उठकर लोग अपने-अपने बर्तन लेकर पेड़ के पास पहुंच जाते हैं और तने में छेद करके पात्र को तरल पदार्थ से भर लेते हैं।

### दिशा-सूचक वृक्ष

आस्ट्रेलिया और दक्षिणी गोलार्ध के

अन्य देशों में पाये जाने वाले एक विचित्र प्रकार के वृक्ष की पत्तियां हमेशा उत्तर और दक्षिण की ओर रहती हैं। इन पत्तियों की पीठ के एक ओर पूर्व और दूसरी ओर पश्चिम दिशा रहती है। रात्रि के गहन अंधकार में भी पत्तियों को हाथ से छूकर देखने से अनायास ही दिशाओं का ज्ञान हो जाता है।

### ५०० वर्ष पुराना बौना वृक्ष

बेर, चीड़, देवदार और फर जैसे विशाल वृक्षों को अत्यंत छोटे रूप में उगाने की कला में जापान के लोग विश्वविख्यात हैं। वहां के कितने ही उद्यानों में छोटे-छोटे गमलों में इन जातियों के वृक्ष देखे जा सकते हैं, जो सैकड़ों वर्ष पुराने होने पर भी २-३ फुट से अधिक बढ़ नहीं पाये। जापान के एक उद्यान में एक विशेष प्रकार के बेर का पेड़ लगा है, जो पांच शताब्दियों पुराना होने पर भी केवल ३ फुट ऊंचा है। यह वृक्ष एक बड़े गमले में उगाया गया है।

### मानव - भक्षी वृक्ष

अफ्रीका महाद्वीप तथा मैडागास्कर द्वीप के सघन जंगलों में कहीं-कहीं मानव - भक्षी वृक्ष मिलते हैं, जो मनुष्यों और जंगली जानवरों को अपना शिकार बनाते हैं। कहा जाता है कि एक मनुष्य - भक्षी वृक्ष की ऊंचाई २५ फुट तक होती है। इस विशाल और भयानक लगने वाले वृक्ष की अनेक शाखाओं के आगे के भाग में थाली के आकार के बड़े फूल लगे रहते हैं। ये शाखाएं १-२ फुट लम्बे कांटों से भरी रहती हैं।

जब भी अंधेरे में कोई जानवर या मनुष्य असावधान होकर उस वृक्ष के पास से गुजरता है तब वृक्ष की कांटेदार शाखाएं अपने शिकार को चारों ओर से घेर लेती हैं, कांटे शरीर में घुस कर खून चूस लेते हैं और बाहर निकल आते हैं। तब वृक्ष की शाखाएं निर्जीव शरीर को छोड़ देती हैं। शिकार का खून चूस लेने पर फूलों का आकार बढ़ जाता है, किन्तु कई दिनों बाद वे फिर असली हालत में आ जाते हैं। इस प्रकार वृक्ष के नीचे कंकालों का ढेर लग जाता है। कुछ वर्ष पूर्व साइकिल के द्वारा विश्व भ्रमण करने वाले श्री मिश्रीलाल जायसवाल ने युगाण्डा के भयानक जंगल में मनुष्य-भक्षी वृक्ष की शाखाओं में फंसे हुए एक बारहसिंघे को स्वयं अपनी आंखों से देखा था।

### कीड़े मकोड़े - भक्षी वृक्ष

आस्ट्रेलिया, श्रीलंका, अफ्रीकी देशों तथा भारतवर्ष के असम और बंगाल के दलदली भागों में कुछ विशेष जाति के पौधे उत्पन्न होते हैं जो कीड़े खाते हैं। ये पौधे प्रायः ४ फुट ऊंचे होते हैं और इनके अग्रभाग में गोल तुम्बी या घड़े के समान एक बड़ा सा फल लटकता रहता है, इसी लिए इस पौधे को 'घटपर्णी'

(पिचर प्लांट) कहते हैं। यह फल अन्दर से खोखला रहता है। फल के ऊपर लगे ढक्कन पर कुछ मोठा तरल पदार्थ लगा रहता है जिसे खाने के लालच में कीड़े या मक्खियां आकर तरल पदार्थ में फंसकर मर जाती हैं।

### विश्व का सबसे बड़ा फूल

इण्डोनेशिया के जावा और सुमात्रा द्वीपों के कुछ तालाबों में 'विक्टोरिया' नामक कमल उत्पन्न होता है। आपको सुनकर आश्चर्य होगा कि इसके पौधे की थालीनुमा पत्तियों का व्यास ६ फुट होता है। और एक - एक कमल के फूल का व्यास चार फुट होता है। कहा जाता है कि कमल के इतने विशाल आकार के फूल विश्व में कहीं उत्पन्न नहीं होते।

**—नवरतनपुर, पोस्टल पार्क,**
**—चिरैयाटांड, पटना-८००००१**

## उदारता

अमेरिका के तत्कालीन राष्ट्रपति 'अब्राहम लिंकन से एक बार उनके एक मित्र ने पूछा– 'आप अपने शत्रुओं के साथ बहुत ही उदारता का बर्ताव करके उन्हें दुश्मनी के लिए प्रोत्साहित करते हैं। आप अपने सभी दुश्मनों को जड़मूल से उखाड़ फेंकिए और फिर देखिए कौन आपसे दुश्मनी रखता है।'

लिंकन ने मधुर मुस्कान के साथ उत्तर दिया –'मित्र, मैं अपने दुश्मनों को यों ही नहीं छोड़ देता। उन्हें जान से मारने से क्या शत्रुता और हिंसा-भावना समाप्त हो पायेगी? नहीं कदापि नही! इसीलिए मैं उन्हें अपने उदार, प्रेमपूर्वक व्यवहार से उनके दिल को जीतकर उन्हें अपना मित्र बना लेता हैं। ऐसा करके क्या मैं अपने शत्रुओं का नाश नहीं करता।' लिंकन का यह स्पष्टीकरण सुनकर उनका मित्र श्रद्धा से नतमस्तक हो गया।

* * *

## सज्जनता

इंग्लैंड का बादशाह जेम्स अपना खजाना भरने के लिए राज्य के अमीरों को धन के बदले में उपाधियां दिया करता था। जेम्स यह जानते हुए भी कि उपाधि से कोई महान नहीं बन सकता वह मूर्ख और यशलोलुप लोगों को उनकी तुच्छ अहंकार वृत्ति का पोषण करते हुए उन लोगों से खूब धन एकत्रित करता रहता था।

एक बार नगर का सबसे धनी व्यक्ति उनके दरबार में आया। बादशाह ने उससे पूछा - 'आपको कौन सी उपाधि चाहिए!' बादशाह कुछ क्षण तो चुप रहा फिर गंभीर स्वर में बोला देखिए, मैं आपको धन के बदले में लार्ड, ड्युक, सर, आदि सब कुछ तो बना सकता हूं लेकिन आपको सज्जन बना पाना मेरी शक्ति से बाहर है। सज्जन बनने के लिए तो सद्गुण चाहिए।

और वह व्यक्ति चुपचाप लौट गया।

**अशोक श्रीश्रीमाल**

# सूर्य देवता

हे ज्योति पुरुष! हे प्रकाश पुरुष!
तुम्हारे आगमन के विराट पद्-चिन्हों के दर्शन कर
नाचने लगता है, मेरा मन मयूर
तुम्हारी कोमल स्नेहिल चपल स्वर्णिम रश्मियां
मेरे चंचल मन को, हृदयाकाश को, चैत्याकाश को
भर देती हैं अनन्त आह्लाद से।
मेरी बाहर की यात्राओं में तुम सदैव साथ रहते हो,
प्रति पल प्रति क्षण।
मेरी भीतर की यात्राओं के समय तुम्हारे सन्निध्य से
मेरी सत्ताएं दमकने लगती हैं स्वर्णिय आभा से, ज्योत्स्ना से।
तुम्हारे प्रति मेरी आस्था अटूट है, अटल है।
हे ऊर्जा पुरुष!
तुम सदैव साथ रहो मेरे
ताकि मैं कर सकूं दर्शन तुम्हारे अनंत काल तक।
मेरे भीतर का चैत्य-पक्षी उड़ता है, ऊंचाई तक,
चैत्याकाश में, पंख फड़फड़ाता है आनन्द से
तुम्हारे दर्शन कर।
और छोड़ता है मधुर लहरियां।
मेरे भीतर का मन-मयूर सुंदर पंख फैलाकर
नर्तन करने लगता है तुम्हारे दर्शन कर हे ज्योति पुरुष!
तुम्हारी उपस्थिति अनुभव कर सकूं प्रत्येक श्वास में, यही मेरी अभीप्सा है।

**— प्रकाश दुबे**
**८/७, शास्त्री नगर, रतलाम, म.प्र.**

# ज्योत्स्ना के द्वार खोलो

**— माधवी लता शुक्ल**

ज्योत्स्ना के द्वार खोलो
मूंद लीं पलकें।।
अब नहीं अनुराग संसृति में
रहा है शेष।
अब नहीं इस देह में
विश्वास का लवलेश।
सिद्धि का संसार तोलो
मूंद लीं पलकें।।
प्रार्थना के बोल मेरे
प्राण का अवशेष,
नींद त्यागो जाग जाओ
है जगाता शेष,
चेतना के दंश हो लो,
मूंद लीं पलकें।।
तुम चिरंतन साध उर की
मुक्ति के परिवेश,
हम समर्पित भावना हैं
छद्‌ममय गणवेश,
चक्र चक्र सुचक्र डोलो,
मूंद लीं पलकें।।
एक सात्विक वृत्ति के
तुम हो सहज परिवेश,
उर्मियों से खेलते तुम
लग रहे रत्नेश,
हे समादृत, अमृत घोलो,
मूंद लीं पलकें।।

—१५/६१, सिविल लाइन्स,
कानपुर, उ.प्र.

आ नो भद्राः क्रतवो यन्तु विश्वतः

भवन की पत्रिका 'भारती' से समन्वित

# नवनीत

मनुष्य के नवोत्थान का सूचक
जीवन, साहित्य और संस्कृति का मासिक

## प्रार्थना

विशं विशं मघवा पर्यशायत, जनानां धेना अवचाकषद् वृषा।
यस्या ह शक्रः सवनेषु रण्यति, स तीव्रैः सोमैः सहते पृतन्यतः।।

ऋ.क् १०.४३.६

जन-जन के मन ईश्वर है। सब जग उसका ही घर है।
रमणशील सब में रमता है, सब पर ही उसकी ममता है।
वही प्रेम का सागर है, तन-मन उसका ही घर है।
अटल रहेगी श्रद्धा जिनकी, बिपदा मिट जायेगी मन की।
उन्हें न कुछ भी दूभर है, उनका विश्वास अमर है।
जो दुःख में सुख से रह लेते, कांटों को हंसकर सह लेते।
जिनका खेवट ईश्वर है, उनको फिर किसका डर है।

[ भावानुवाद : **सत्यकाम विद्यालंकार** ]

अपूर्व बलिदान

# प्राणों की बाजी

□ सुनंदा ज्ञानदेव चौधरी

डॉ. स्मिथ जानते थे कि वह एक बहुत ही खतरनाक कदम उठाने जा रहे हैं। क्युरेर से उनकी मृत्यु हो सकती है और यदि मृत्यु न हुई तो उन्हें बहुत बड़े दुर्भाग्य का सामना करना पड़ेगा। वह दुर्भाग्य होगा लकवा, जिससे उनके सभी अंग चेतनाहीन और मृतप्राय हो जायेंगे। फिर भी उन्होंने 'मैं तैयार हूं' यह कहते हुए तीव्र विष, क्युरेर का इंजेक्शन लगवाने के लिए अपनी भुजा आगे बढ़ा दी उन्हें प्रसन्नता थी कि वे विज्ञान की कुछ सेवा कर सकेंगे। चाहे इस सेवा में उनके प्राण ही क्यों न चले जायें।

कुछ देर बाद डॉ. स्मिथ बेहोश हो गये। उनका चेहरा मुरझा गया। अंगप्रत्यंग सख्त हो गये। फेफड़ों तक ने काम करना बंद कर दिया। केवल दिल धीमी गति से धड़क रहा था और उनके आसपास खड़े वैज्ञानिक ऑक्सिजन पंप करके उन्हें बचाने का प्रयत्न कर रहे थे।

सौभाग्य से आशा के विरुद्ध विष का प्रभाव धीरे-धीरे कम पड़ता गया और डॉ. स्मिथ खतरे से बाहर हो गये।

इस परीक्षण का उद्देश्य था क्युरेर की नियंत्रित मात्राओं का मनुष्य के शरीर पर प्रभाव देखना और इस परीक्षण को कई बार दुहराने का परिणाम है कि आज पोलियो तथा एपिलैप्सी के रोगों को दूर करने के लिए क्युरेर दवा का प्रयोग किया जाता है।

कुछ दशक पूर्व इलिनॉइस विश्वविद्यालय तथा माईकल रीज रिसर्च फाउंडेशन के १२ वैज्ञानिकों ने मिलकर एक वैक्सीन (टीका) बनाया था-बैस्सिलिअरी डिसेंट्री (पेचिश) की रोक थाम के लिए।

परंतु यह टीका इतना विषैला था कि इसके प्रयोग से चूहे कुछ ही मिनटों में मर जाते थे।

वैज्ञानिक सोचने लगे कि साधारण नियम तो यही है कि जिस वस्तु का प्रयोगीय पशुओं पर हानिकारक प्रभाव होता है, उसका मनुष्यों पर भी बुरा प्रभाव पड़ता है।

परंतु इस विचार की यथार्थता जांचने के लिए मनुष्य पर इस टीके का प्रयोग आवश्यक था।

इस संभावना को देखते हुए कि चूहों की भांति मनुष्यों की भी इस वैक्सीन से मृत्यु हो सकती है, कौन अपनी जान खतरे में डालना चाहता?

# बच्चों के चित्र

बनाते हैं चित्र
बना लेते हैं मित्र
क्षण में अपने सादेपन में
वे हैं विचित्र

चूहे और बिल्ली और बाघ की मूंछें
वे तोते को लगाते
मोर के पंखा की आंख क्या पूछें
उसे नाक और ओठ भी चिपकाते

वह दुनिया सोच की नहीं तर्क की
वह दुनिया नहीं होमवर्क की
वहां सबकुछ है पवित्र

सब स्त्रियां मां हैं
सब पुरुष भीम, हनुमान, ले कर के अग्निबाण
हवाई जहाज में बैठे कन्हैया हैं
गा रहे गधे, ऊंट लेते हें पलट तान

हाथी झूला झूलते हैं, महल बने रेत के
चांद खाता जलेबी और पेड़ करें स्नान,
कोइ नहीं दुष्ट सिवा भूत और प्रेत के
सब धर्म, सब जात सच्चरित्र
बच्चों के ऐसे चित्र!- **डॉ. प्रभाकर माचवे**

**७३ वल्लभनगर, इंदौर, म.प्र.**

---

अंत में इन वैज्ञानिकों के ग्रुप में से दो प्रमुख सदस्यों डॉ. हावर्ड शॉनेसी और डॉ. सिडनी लैविन्सन ने निश्चय किया कि वे स्वयं पर ही इस टीके का प्रभाव देखेंगे।

और एक दिन इस निश्चय के अनुसार वे अन्य वैज्ञानिक प्रयोगशाला में एक रोमांचकारी परीक्षण के लिए इकट्ठे हुए। संकटकालीन उपकरणों से सुसज्जित सहायकों का एक दल भी तैयार हो गया।

शॉनेसी तथा लैविन्सन ने एक दूसरे को टीका लगाया और प्रतीक्षा करने लगे, उस दुर्दशा की, जब उनका खून जमने लगेगा और सांस बंद होने लगेगी। सहायकों के हर प्रयत्न के बाद भी शायद यम के दूत उन्हें ले जायेंगे यह उन दोनों को विश्वास था। प्राणों की बाजी लग चुकी थी। चारों और सन्नाटा छाया हुआ था, और इस सन्नाटे में एक तरफ दीवार घड़ी टिकटिक कर रही थी और दूसरी ओर सबके दिल धड़क रहे थे।

इस क्रम में आधा घंटा बीता, एक घंटा बीता, फिर ढाई घंटे बीत गये। आखिर शॉनेसी ने इन शब्दों में नीरवता भंग की 'मित्रो, मेरे विचार से, यदि इस वैक्सीन में हमें मारने की शक्ति होती तो अब तक हम मर चुके होते।'

इस प्रकार चिकित्सा के इस क्षेत्र में एक नये वैक्सीन (पेचिश का टीका) का जन्म हुआ। **— मुलांची शाळा, सावदा,**

**४२५५०२ जि. जळगांव (महाराष्ट्र)**

# महान चिन्तक जे. कृष्णमूर्ति

**☐ डॉ. राजेंद्र वाजपेयी**

*भारत के समकालीन चिंतकों में जिद्दू कृष्णमूर्ति का नाम विशेषरूप से उल्लेखनीय है जिन्होंने आडंबर, रीति-रिवाजों, धार्मिक संकीर्णताओं आदि सें ऊपर उठकर सत्य की स्वावलम्बी रूप से अनुभूति करने की बात बार-बार जोर देकर कही है।*

*कबीर ने भी यही कहा था। 'कस्तूरी कुण्डल बसहि, मृग ढूंढ़हि बन माहिं'। नानक की वाणी भी यही थी 'काहे को बन खोजन जायीं'। सभी सत्य पुजारियों ने अंतर्मुखी होकर स्वयं अनुभूति करने पर सदा जोर दिया है, सारे बाहरी दिखावटीपन से दूर हट कर। उधर पश्चिम में भी सोक्रेटीज जैसी महान् विभूति ने इसी सत्य के लिए हँसते-हँसते विष पान कर अपने शरीर का बलिदान कर दिया था। साक्रेटीज का ही शिष्य था प्लेटो, जिसने अर [illegible] के इसी जटिल प्रश्न के उत्तर में कहा था, 'जिसमें परिवर्तन न हो वही सत्य है'। सच्चे संत, प्रबुद्ध, जिज्ञासु, ज्ञानी इसी शाश्वत सत्य की खोज में अंतर्मुखी हो जाते हैं और अंततोगत्वा' सत् चित आनंन्द' की अनुभूति करने में सफल होते हैं। योगेश्वर भगवान* श्रीकृष्ण ने गीता में इसी परमपवित्र ज्ञान की मुक्त - कंठ से प्रशंसा की हैः

**'नहि ज्ञानेन सदृष्यं पवित्रं मिह विद्यते।**
**तत् स्वयं योग संसिद्धिः कालेबातमनि विदंति।।**

हर चीज, हर व्यक्ति, क्षण-क्षण बदलता जा रहा है निरंतर! इसीलिए आदि शंकराचार्य की उक्ति है 'ब्रह्म सत्यं, जगत मिथ्याम' ! जिसने भी इस सत्य की खोज की उसे ये मिला जरूर! सत्य एक ही है, दो नहीं, न कभी हो सकते हैं।नाम अनेक जरूर हैं और उन्ही नामों के चक्कर में पड़ विभिन्न मतावलंबी निरर्थक झंझटों में पड़ते हैं, शास्त्रार्थ कहते हैं और अंततोगत्वा किसी निष्कर्ष पर नहीं पहुंच पाते! सच्चा जिज्ञासु एवं ज्ञानी अंतर्निहित परम सत्य की खोज में समाधिस्थ हो जाता है, अपने आप में मस्त हो जाता है, इन बाहरी दिखावटी बेकार के प्रपंचों में नही पड़ता। सूरदास की उपमा बड़ी सटीक है ' 'ज्यों गूंगे मीठे रस को अंतरगत ही भावे' या कबीरदास की उक्ति 'मन मस्त हुआ तब क्यों बोले' वाले भाव में। इस दृष्टिकोण से यदि देखा जाये तो ऊपर सतह पर दिखने वाले जिद्दू

कृष्णमूर्ति की विचारधारा के विरोधाभास वस्तुतः विरोधाभास हैं ही नहीं! उनमें अंतर्निहित साम्य दिखेगा, ढकोसलों, आडंबरों, अनुष्ठानों आदि पर उन्होंने गहरा प्रहार किया है कि ये सब निरर्थक हैं, सत्य से साक्षात्कार के लिए। यहां तक कि उन्होंने 'गुरु' की भी जरूरत को नकारा है प्रकाश पाने के लिए। स्वयं तुलसी ने कलियुग में गुरू शिष्य के बीच वधिर-अंध का लेखा देखा और लिखा है - 'हरहि वित्त, अज्ञान न हरहीं'

उनकी ऐसी क्रान्तिकारी विचारधारा से बहुत से लोग क्षुब्ध भी होते हैं। सत्य कटु होता ही है। गुरु मात्र रास्ता दिखा सकता है दरिया तक, लेकिन उसके बाद गोता साधक को ही खुद लगाना पड़ेगा, गहरे पानी में पैठ कर, खोज कर कुछ पाने के लिए! यह काम कोई भी 'प्रॉक्सी' से नहीं करा सकता! खुद ही करना पड़ेगा, जूझना पड़ेगा, तभी कुछ हासिल होगा। इस तथ्य का अहसास करते ही कृष्णमूर्ति की विचारधारा में प्रतीत होने वाले विरोधाभास अपने-आप समाप्त हो जाता है, आगे फिर किसी तर्क की जरूरत नहीं पड़ती।

हमारे समय के इस महान् विचारक की कुछ मूलभूत चिरस्मरणीय धारणाएं इस प्रकार हैं जिनका कोई भी खंडन नहीं कर सकता –

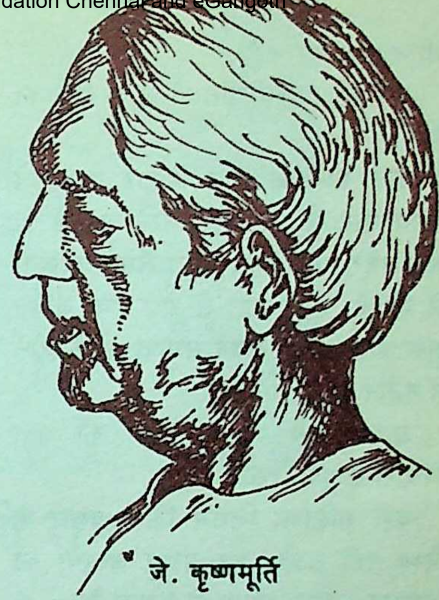

जे. कृष्णमूर्ति

आपको निश्चय ही तब तक शांति हरगिज नहीं मिलती, जब तक मन में विचार उठते रहेंगे, विचार-शून्य हो कर अनुभव करो सच्ची शांति को अंदर ही अंदर तब देखो !

जब तक मन में विचार-प्रवाह जारी रहेगा, व्यक्ति कष्ट के अतिरिक्त अन्य कुछ अनुभव न करेगा।

जब मन अतीत एवं भविष्य की चिंता से एकदम मुक्त हो जाता है, तभी उसे अनुभूति होती है अविनाशी तत्व की!

जिसके मन में कभी किसी प्रकार के कोई विचार उठते ही नहीं, केवल उसी की दृष्टि खुल पाती है, स्थान और काल से परे केवल वही भविष्य के गर्भ में दृष्टा की भांति देख पाता है

यही नहीं, विचार-शून्य होते ही व्यक्ति अपने अंदर ही एक प्रबल शक्ति - संचार का

भी अनुभव करता है।

मन का एक़दम शांत हो जाना ही ध्यान है।

रोज सोने के लिए बिस्तर पर जाते समय ऐसा समझो, जैसे मरने जा रहे हो और सबेरे उठते समय, ऐसा जैसे नया जन्म ले रहे हो, ऐसा करने से रोज नया जीवन शुरू और पुराना जीवन समाप्त करके जीने में नवीन स्फूर्ति आयेगी।

सज़ग रहने के लिए मन को सदा विचारों से मुक्त रखो।

वही मस्तिष्क जिसमें किसी प्रकार के बिम्ब नहीं उठते, इस सजग अवस्था का अनुमान करने में सज़ग हो सकता है।

जिसे सचमुच बोध हो गया है वह लोगों के बीच जाकर अपनी जागृति का हरगिज ढिंढोरा न पीटेगा।

जो वस्तुतः जग चुके हैं वे मृत्यु को महान यंत्रणा न समझकर शरीररूपी पिंजड़े से मुक्ति मात्र मानते हैं।

आपके शरीर का उपचार कोई भी कर सकता है। लेकिन अपने मन का केवल आप अन्य कोई नहीं, आपकी मानसिक स्थिति आपके स्वास्थ्य को प्रभावित करती है। इसलिए अपने अंतर्मानस में जमे हुए कूड़े-कर्कट को साफ कर मन को स्वच्छ रखना ज्यादा जरूरी है।

अपने विचारों को बड़े ध्यान से स्वयं सुनो। अपने आपको देखो ठीक वैसा ही जैसे हो, बिना किसी छिपाव - दुराव के आप देखेंगे कि आप विचारों, स्मृतियों, शंकाओं, आपघातों,तृष्णाओं के एक पुंज के अतिरिक्त अन्य कुछ नहीं हैं।

यदि आप इन सारे विचारों से अपने को मुक्त करके देखें, क्या शेष रहता है? बिलकुल कुछ नहीं! तब पता चलेगा आप केवल शून्य हैं।

क्या आपने कभी ऐसा करने की कोशिश की है? करके देखो जरा!

सच्ची भक्ति निष्काम होती है, यह कुछ भी न मांगने की स्थिति है, लेकिन मंदिर में अपने इष्टदेव के सामने खड़े होकर कुछ चढ़ाना या पूजा करना और बदले में उससे कुछ माँगना भक्ति नहीं मानसिक रिश्वत देना है।

जिसमें भी लेशमात्र महत्वाकांक्षा है, सत्ता पाने की लालसा है, वह अच्छा नहीं हो सकता। ऐसे ही लोग दुनिया में फैली बुराइयों के लिए जिम्मेदार हैं, इसलिए ए भले आदमी को सदा राजनीतिज्ञों और उनकी गतिविधियों से अपने को दूर रखना चाहिए। मैं स्वयं को भी उनसे दूर रखता हूँ

चाहे आप अमीर हों या गरीब पूर्व रहते हों या पश्चिम में, क्या आपके मनोवृत्तियों अलग-अलग हैं चाहे जहां को रहता हो, चाहे जो कुछ करता हो, हम स समानरूप से रगड़ते-पिसते हैं और मर क चले जाते हैं।

—सी-१/२१ जीवनशांति,
सांताक्रुज (प), बंबई-५४

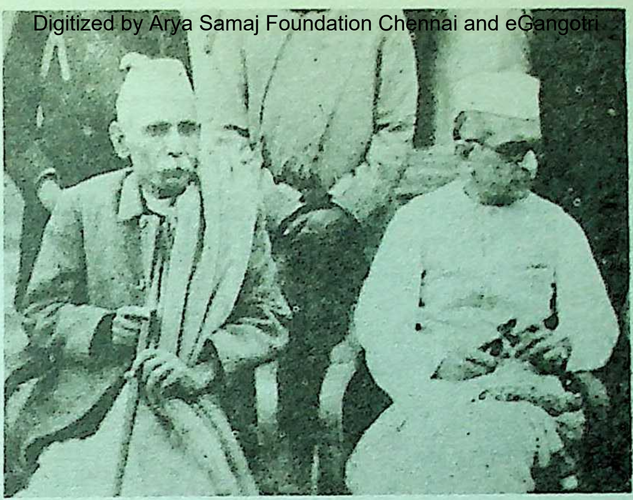

# दादा के राम

कम ही लोग जानते हैं कि राजनीति के दुर्वह - झंझावात में उलझते - सुलझंते पूज्य दादा पं. माखनलाल चतुर्वेदी के वैष्णव-मन में श्रद्धा और विश्वास का असीम सागर लहराता रहता था।

दैनिक संघर्षों से परे वे अनंत के अस्तित्व से सदैव अभिभूत रहते थें। उनके सामान्य कार्यों में भी इसकी झलक दिखायी देती थी।

दादा के अनुज श्री ब्रजभूषण चतुर्वेदी का नन्हा-सा पुत्र लीव्हर की खराबी से ग्रस्त था। खंडवा में उसका इलाज कराया गया, पर रोग ने घटने का नाम न लिया। लाचार होकर ब्रजभूषणजी और उनकी पत्नी बच्चे को लेकर इलाज़ कराने इन्दौर ले गये। वहां के डॉक्टरों ने भी हाथ टेक दिये। तब निराश पति-पत्नी बच्चे को खंडवा वापिस ले आये। जब वे तांगे से उतरे तब दादा बरामदे में खड़े थे। दम्पति के मुखों पर निराशा और वेदना की गहरी छाया देखकर दादा सबकुछ समझ गये। वे जोर से बोले – 'डॉक्टर कोई भगवान थोड़े ही होता है। बच्चा अच्छा होगा। जाओ, रामायण का पाठ शुरू करो।'

स्नान करके रामचरित-मानस का पाठ आरंभ किया गया। कुछ ही दिनों में बच्चे पर दवाओं का प्रभाव स्पष्ट दिखायी देने लगा और क्रमशः वह रोग - मुक्त होता गया। अब बच्चा बड़ा होकर एक कुशल डॉक्टर बन गया है। ब्रजभूषणजी अभी भी गहरी आस्था के साथ रामायण का पाठ करते हैं।

**–रामरतनलाल द्विवेदी**
सरस्वती नगर,
होशंगाबाद,म.प्र.

## देश की मिट्टी से जुड़ा कलाकार

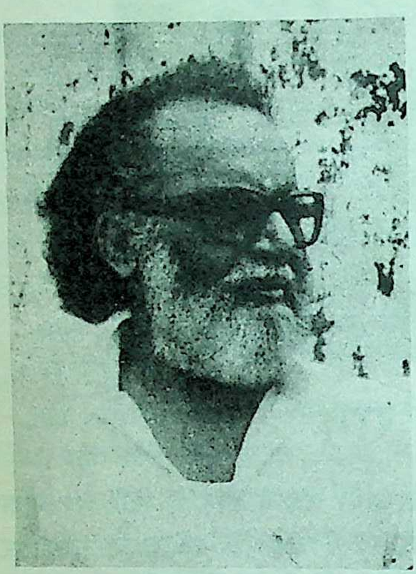

# अनिल बरन शाह

### गीताश्री

भारतीय आधुनिक कलाकारों की कई श्रेणियां हैं। कुछ चित्रकार केवल अपने ग्राहकों को खुश करने के लिए ही चित्र बनाते हैं। उनके लिए ग्राहक की पसंद ही सर्वोपरि होती है। ऐसे कलाकार केवल चित्रकला के तकनीकी पक्ष में ही दक्ष होते हैं। संवेदना के स्तर पर शून्य होने के साथ-साथ अपनी सुविधा के अनुसार वे अपना एक जीवन दर्शन भी बना लेते हैं। जिसमें वे अपने इस कला-कर्म को उचित भी ठहराते हैं।

इसीं तरह कुछ कलाकार आर्ट स्कूलों से निकलकर कोई नौकरी कर लेते हैं और खाली समय में केवल कलाप्रदर्शनियों में पुरस्कार पाने के लिए ही चित्र बनाते हैं। ये बात अलग है कि उन्हें कोई पुरस्कार नहीं मिलता। हां, कभी-कभी अंधे के हाथ बटेर की कहावत चरितार्थ भी हो जाती है।

तीसरी श्रेणी में वे कलाकार आते हैं, जो पश्चिमी महान आधुनिक कलाकारों के नाम और शोहरत से आतंकित होकर स्वयं को भी उसी तरह से स्थापित करने की अदम्य इच्छा से शासित होकर उन महान आधुनिक कलाकारों की शैलियों में चित्र करने लगते हैं और सोच लेते हैं कि विश्वस्तर पर न सही, कम से कम हम

---

हिंदुस्ता
मोन्ड्रिय
कि सत
कलाका
लिए ि
प्रतिभा
दसवां
बुद्धिजीव
नहीं मिल
उपरो
भी कुछ
देश की
देश की
से आत्म
भ्रमित यु
कलाकार
काल
संवेदनशी
सामाजिक
प्रति भी
और यह
और कृति
ये चि
को आक
संवेदनाओ
रूपायित
इनके इस
या किसी
राष्ट्रीय,
कला-जगत

हिंदुस्तान के ब्राक, पिकासो और मोन्ड्रियन तो बन ही जायेंगे। जब कि सत्य यह है कि इन आधुनिक कलाकारों के स्तर पर पहुंचने, के लिए जिस मौलिकता और सृजन प्रतिभा की जरूरत होती है उसका दसवां हिस्सा भी इन छद्म बुद्धिजीवी कलाकारों में देखने को नहीं मिलता।

उपरोक्त कलाकारों के अलावा भी कुछ कलाकार ऐसे हैं, जो अपने देश की मिट्टी से जुड़े हुए हैं तथा देश की कला, संस्कृति और सभ्यता से आत्मीय संबंध आज के उस भ्रमित युग में भी बनाये हुए हैं। ये कलाकार अपने देश, समाज और काल के प्रति जागरूक और संवेदनशील ही नहीं, बल्कि अपने सामाजिक उत्तरदायित्व बोध के प्रति भी जागरूक और सजग हैं। और यही इन कलाकारों के व्यक्तित्व और कृतित्व की आधारशिला भी है।

ये चित्रकार अपने मन के अमूर्त अंतर्द्वंद्व को आकार देने के लिए, या अपनी संवेदनाओं, भावनाओं और विचारों को रूपायित करने के लिए चित्रांकन करते हैं। इनके इस चित्रांकन कर्म में, लोभ, लालच या किसी प्रकार का प्रलोभन नहीं होता है। राष्ट्रीय, अंतर्राष्ट्रीय ख्याति, पुरस्कार या कला-जगत में स्थापित होने की आकांक्षा, लाख, चार लाख में चित्र बिकने की लालसा से दूर विशुद्ध अभिव्यक्ति से प्रेरित ये कलाकार कुछ कहना चाहते हैं। यही इनके चित्रांकन का मुख्य उद्देश्य होता है।

इसी श्रेणी के एक कलाकार हैं अनिल बरन शाहा। अनिल बरन के चित्रों में बीते हुए युग का दुःख-दर्द, यातना, मानवीय मजबूरियां समय की रफ्तार को न पकड़पाने की हताश स्थितियों के साथ-साथ बीते हुए कल का दर्पणी दस्तावेज प्रस्तुत

करने की पुरजोर कोशिश देखने को मिलती है। उनके चित्र कलाकार की ईमानदारी और उनकी समर्पित भावना को उजागर करते हैं।

अनिल वरन शाहा के चित्रों में किसी प्रकार का प्रलोभन तत्व देखने को नहीं मिलता। उनके चित्र कलाकार के निजी संसार का परिचय देतें हैं। हर चित्रकार जन्म से वृद्धा अवस्था तक अपने जीवन काल में ज्ञान, सूचनाओं और प्रत्यक्ष अप्रत्यक्ष अनुभवों के आधार पर अपना एक निजी संसार बनाता है और यही निजी संसार उसकी कलाकृतियों में किसी न किसी रूप में सदैव मौजूद रहता है।

अनिल वरन शाहा का भी अपना एक निजी संसार है, जो उनके प्रत्येक चित्र में परछाईं की तरह पीछा करता नजर आता है।

अवनीद्रनाथ टैगोर से लेकर अनिल बरन शाहा तक के सभी बंगाली चित्रकारों में एक विशेषता प्रायः समान रूप से पायी जाती है कि ये कलाकार किसी भी स्थिति में अपने देश की मिट्टी से नाता नहीं तोड़ते। इनके चित्रों में देश की सभ्यता, संस्कृति किसी न किसी रूप में अवश्य विद्यमान रहती है। कलाकार अनिल बरन शाहा भी इसी परम्परा के कलाकार हैं। इनके चित्रों में भी बंगाल का बीता हुआ कल दर्शक के साथ अपनी कहानी सुनाता सा जान पड़ता है।

अनिल बरन शाहा के शब्दों में 'मैं अपनी अनुभूतियों और अनुभवों के आधार पर चित्र बनाता हूं। मेरी तूलिका तभी चलती है जब मेरे मन की गहराइयों में कुछ भाव उमड़ते-घूमते हैं। ऐसी मानसिक स्थितियों में मेरी सृजनात्मक ऊर्जा मुझे चित्रांकन के लिए वाध्य करती है। यह वाध्यता मेरे लिए एक इस्टिंक्ट के समान होती है। यह एक विशुद्ध सृजन कामना होती है। ऐसी स्थिति में कला बाजार ट्रेंड का ख्याल विलुप्त सा हो जाता है। यह मेरे स्वभाव का एक अंग बन चुका है और यह स्वभाव मेरे चित्रों में स्पष्ट रूप से देखा ज सकता है।'

कलाकार अनिल वरन शाहा का जन् २८ जून १९३४ में ढाका के एक जमींदा परिवार में हुआ था। अनिल बरन जि स्थान पर जन्मे और बड़े हुए वह स्था प्राकृतिक दृष्टिकोण से इतना समृद्ध था सबसे पहिले अनिल को सम्मोहित करने क काम उनके आसपास फैली प्रकृति ने किया। प्रकृति के इस सम्मोहन ने उ प्रकृति चित्रण को प्रेरित किया और इ प्रेरणा ने उन्हें बहुत सुंदर भू-दृश् (लैंडस्केपों) को रचने की प्रेरणा दी। अनि वरन शाहा की कला यात्रा का दूसरा चर था अमूर्त कला की ओर झुकाव। दूसरे चर में अनिल वरन ने पश्चिमी कला आंदोल से प्रभावित होकर अब्स्ट्रैक्ट कला शैली भी अपनाया और इस शैली में काफी

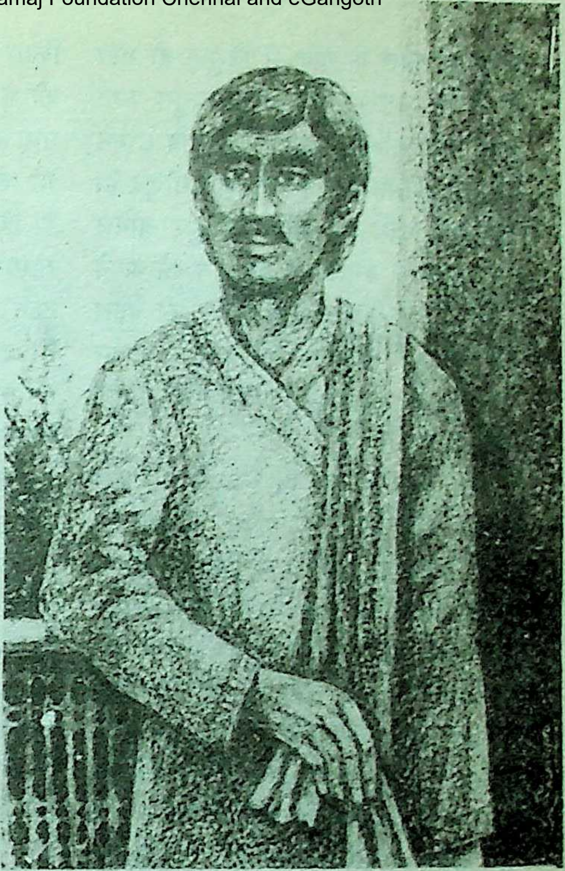

बनाये, लेकिन कुछ समय के बाद उन्हें ऐसा महसूस होने लगा कि वे जो कुछ भी पेंट करते है उसमें उनकी अंतरात्मा को संतोष नहीं मिल रहा है। यह कला शैली उनके व्यक्तित्व के साथ मेल नहीं खाती है, इसीलिए उन्होंने इस शैली को तिलांजलि दे दी। इसके बाद उनका झुकाव लोक कलाओं और आदिम कलाओं की ओर होने लगा। अनिल वरन ने लोक कलाओं की आत्मा को समझने के लिए अनेक स्थानों की यात्रायें कीं। लोक कलाकारों से साक्षात्कार किया। और जब वे इस कला की 'एनाटामी' से सम्पूर्णरूप से परिचित हो गये तो उन्होंने इस शैली के कला तत्वों को लेकर अपनी शैली में कला सृजन करने लगे। इस शैली के अंतर्गत अनेकों सार्थक और अर्थपूर्ण कलाकृतियों का सृजन किया।

कालचक्र अपनी चाल से चल रहा था। समय किस गति से बीत रहा था कलाकार के पास उसको सोचने-समझने का समय ही नहीं था। वह अपने कलाधर्म में व्यस्त था। लेकिन एक दिन उसे लगा कि वह अब अपने जीवन के ४० वें वर्ष में प्रवेश कर रहा है। यकायक कलाकार अनिल वरन शाहा को ऐसा महसूस हुआ कि अभी तक बहुत कुछ ऐसा रह गया है जिसे उसने अफ्ने चित्र फलक पर नहीं उतारा और उसका मन भावुक हो उठा। इस भावुकता ने उसे बीते हुए कल की ओर मुड़ने तथा उसका मूल्यांकन करने के साथ-साथ सामाजिक उत्तरदायित्वों को निभाने को बाध्य किया। वह जानता था कि सब कुछ नष्ट हो जाता है। बचती है केवल कला। कला अजर-अमर है।

ईसा से ३ हजार वर्ष पूर्व की सभ्यता संस्कृति का केंद्र मोहन जो-दड़ो, हड़प्पा का

सब कुछ काल के गाल में विलुप्त हो गया है। लेकिन उस युग की झांकी प्रस्तुत करने वाली कलाकृतियां आज भी हमारे सामने उस युग की गाथा कहने के लिए मौजूद है। इसी ध्रुव सत्य को स्वीकारते हुए अनिल वरन शाहा ने बंगाल के उस युग को अपने चित्रों में दर्पणी दस्तावेज बनाने की पहल शुरू की, जो कालचक्र की लपेट में आकर भूतकाल की काली चादर ओढ़ने की तैयारी कर रहा था।

इस काल में जो भी चित्र बनाये उन्हें अनिल बरन शाहा ने 'टाइम' श्रृंखला का नाम दिया। इस श्रृंखला के चित्रों में बंगाल के जनजीवन को बड़ी गहराई और सूक्ष्मता से चित्रित किया गया है। ये चित्र उस काल के दस्तावेज बन चुके हैं जो आनेवाली पीढ़ियों को अपने इतिहास को जानने में मददगार हो सकेंगे। इन चित्रों में प्रतीकों के माध्यम से चित्रकार ने जो कुछ भी कहा है वह बड़ा ही हृदयस्पर्शी और प्रभावशाली है। अजंता और वाश शैली के मिश्रण ने उनके चित्रों को एक स्वतंत्र व्यक्तित्व प्रदान किया है। चित्रों में रंगों का चुनाव भी चित्र की भावभूमि के अनुसार ही किया गया है, साथ ही साथ चित्रों की टेकस्चर क्वालिटी भी काल का बोध कराती सी जान पड़ती है। चित्रों में बनी मुखाकृतियां एक अजीब रहस्यमयता लिये अपने अंदर दुख, दर्द, टूटन की कहानियां छिपाये सी जान पड़ती हैं। बड़ी-बड़ी शानदार टूटी-फूटी हवेलियां दीवारों से टूटता हुआ पलस्तर और अंदर से झांकती लाल ईंटें ऐसी लगती हैं मानो वे मनुष्य के अहम्, ऐश्यर्य का उपहास कर रही हों।

उनके चित्रों में एक दार्शनिक जैसा स्वर सदैव विद्यमान रहता है, जो करुणा जगाने के साथ सत्य से साक्षात्कार करने का साहस भी प्रदान करता है। इन सब पक्षों को उजागर करने वाले अनिल बरन शाहा के चित्र दर्शक के मन पर एक स्थायी प्रभाव डालने मे सक्षम होते हैं।

—१०९ अशोक नगर  
अचोले रोड, नालासोपार  
थाने (महाराष्ट्र)

☐

## हिन्दी—प्रेम

विख्यात बंगला संपादकाचार्य श्री अमृतलाल चक्रवर्ती जिनकी मातृभाषा बंगला थी किंतु जिन्होंने जीवन पर्यंत हिन्दी भाषा की सेवा करने के लिए व्रत ले रखा था, एक बार हिन्दी साहित्य सम्मेलन के सभापति चुने गये। माधवराव सप्रेन जो मराठी भाषा के विद्वान थे, उनसे पूछा, हिन्दी भाषा में ऐसा कौन सा आकर्षण है जो आप बंगला की सेवा न कर इसकी सेवा कर रहे हैं।'

उन्होंने सहजभाव से उत्तर दिया, 'हिन्दी से आकर्षण और प्रेम भला क्यों न हो? अपने देश का नाम है हिन्दुस्तान। इसलिये यहां की भाषा का नाम भी तो उसी के अक्षर पर होना चाहिये। इसी अधिक मोह है।'

—कांतिलाल मोदी

**रोचक वर्णन**

# खई के पान बनारस वाला

**❑ कैलाश जैन**

प्राचीन भारत का इतिहास शाही परंपराओं और रईसाना शान शौकत से भरे रस्मों-रिवाजों का इतिहास रहा है। हमारे देश के राजाओं, महाराजाओं और बादशाहों के निराले शाही अंदाज सारी दुनिया में कौतूहल का विषय रहे हैं। इनकी रंगीन मिजाजी की झलक दरबारी कवियों, शाही शिकारों, नर्तकियों और पान के शौक से मिलती है। मुगल सल्तनत के बादशाहों को पान का बेहद शौक था।

वक्त के साथ-साथ सुल्तानों की सल्तनतें, राजाओं के रजवाड़े चले गये किंतु उस जमाने का पान का शाही शौक आज आम बनकर पूरे हिन्दुस्तान में जारी है। हमारे मुल्क का शायद ही कोई ऐसा गांव हो, जिसमें हर गली-मौहल्ले में पान की न दुकान हो। तो आइये, आज हम इस 'सर्वव्यापी पान' के कुंछ अनजाने किंतु दिलचस्प पहलुओं पर गौर करें।

पान को वानस्पतिक भाषा में 'बीटल लीक्यिस' के नाम से जाना जाता है। पान के अन्य नाम है- ताम्बूल, नागवल्ली, नागलता इत्यादि। शुरूआत में पान का उत्पादन मलयेशिया में हुआ करता था। अब इसकी खेती भारत, पाकिस्तान, बांगलादेश के अतिरिक्त फिलीपाइंस और अन्य कई यूरोपीय राष्ट्रों में भी होने लगी है। पान की सैकड़ों किस्में होती हैं। भारत में पान की मोटे तौर पर पचास प्रजातियां पायी जाती हैं, जिनमें मुख्यतया देशी, मालवा, बंगला, मीठा पत्ता, बनारसी, आदि प्रमुख हैं। पान की तासीर गर्म होती है, अतएव इनका उत्पादन भी मुख्यतया गर्म जलवायु के क्षेत्रों में ही होता है। पान की खेती काफी श्रम-साध्य कार्य है। पान बेलों पर उगते हैं। इन बेलों को सुरक्षा की दृष्टि से घास-फूस आदि से ढंक दिया जाता है। बीच-बीच में लंबे बांस आदि लगा दिये जाते हैं, जिससे बेलों को ऊपर ही से पानी देकर सिंचित किया जा सके।

पान के पत्ते में एक प्रकार का तीव्र चरपरा स्वाद होता है और एक विशेष गंध होती है। पान का तेल भी निकाला जाता है और यह तेल टांसिल्स, डिप्थीरिया आदि रोगों की दवाई बनाने में प्रयुक्त होता है।

पान के पत्ते का वैज्ञानिक विश्लेषण करने से ज्ञात हुआ है कि पान के सौ पत्तों में विभिन्न पदार्थ निम्न मात्रा में पाए जाते

हैं: नमी ८४.४ प्रतिशत, चर्बी ०.०८ प्रतिशत, प्रोटीन ३.१० प्रतिशत, कार्बोहाइड्रेट ६.१० प्रतिशत, रेशा २.३० प्रतिशत, खनिज २.३ प्रतिशत, कैल्शियम २३० मिलीग्राम, फास्फोरस ४० मिलीग्राम, लोह खनिज ७ मिलीग्राम, थायमीन ७० माइक्रोग्राम, राइबोवसेबिन ०.७ मिलीग्राम तथा विटामिन ''सी'' ५मिली ग्राम। इनके अलावा पान के पत्ते में स्टार्च, वाष्पशील तेल, टेनिन और विटामिन 'ए' भी कुछ मात्रा में उपलब्ध होते हैं।

पान में आमतौर पर कत्था, चूना, सुपारी आदि वस्तुएं जरूरी तौर पर उपयोग में लायी जाती हैं। वैज्ञानिक अध्ययनों से यह निष्कर्ष निकला है कि इन वस्तुओं को एक साथ चबाने से लार-ग्रंथियों में उत्तेजना पैदा होती है तथा मुंह व शरीर को भी यह उत्तेजित करता है, जिसका सीधा असर कैंद्रीय तंत्रिका तंत्र पर पड़ता है।

पान में चूने, कत्थे, सुपारी के अलावा सौंफ, इलायची, लौंग, गुलकंद, पुदीना और अन्य मसाले भी डाले जाते हैं। चूने में कैल्शियम की प्रचुर मात्रा होती है, जो हड्डियों को मजबूती प्रदान करता है। लेकिन यहां यह भी उल्लेखनीय है कि चूने का अत्यधिक मात्रा में सेवन हृदय रोगों को बुलावा दे सकता है। कत्था पाचन शक्ति को बढ़ाता है तथा रक्त वर्द्धक होने से यह लाभदायक है, किंतु सुपारी पाचक होने के बावजूद नुकसानदायक है, क्योंकि वह रक्त को सोखती है। पुदीना आवाज को सुरीली बनाता है, लेकिन इसके अधिक सेवन से खुश्की पैदा होती है, जबकि गुलकंद और इलायची खुश्की को दूर करते हैं। अन्य मसाले केवल पान के स्वाद में वृद्धि के लिए होते हैं और सेहत की दृष्टि से उनकी कोई उपयोगिता नहीं होती।

वैसे आयुर्वेदिक ग्रंथों, चरक-संहिता आदि में पान के गुणों पर प्रकाश डाला गया है। पान के सेवन से कफ और वायु-विकार दूर होते हैं। शीतकाल में नजला, खांसी, दमा, जुकाम आदि रोगों में भी पान उपयोगी सिद्ध होता है। खांसी के उपचार के वास्ते पान के रस को शहद अथवा अदरक के रस में मिलाकर सेवन करने से भी लाभ होता है।

पान के साथ तम्बाकू अथवा जर्दे का सेवन सर्वाधिक हानिकारक है। चूंकि तम्बाकू में 'निकौटिन' नामक नशीलापदार्थ होता है, जो शरीर तथा मस्तिष्क पर अत्यंत प्रतिकूल प्रभाव डालता है। तम्बाकू के सेवन से कैंसर की संभावनाओं की खोज तो वैज्ञानिकों ने काफी समय पूर्व ही कर ली है। तम्बाकू युक्त पान के सेवन से दिल की बीमारियां स्नोफिलिया, अल्सर जैसे भयंकर रोगों की आशंका सदैव बनी रहती है। पान में प्रयुक्त किये जाने वाले कई प्रकार के सुगंधित तम्बाकू तो और भी अधिक खतरनाक व घातक हैं, क्योंकि इन्हें तेजाब के द्वारा परिशोधित किया जाता है।

हमारे देश में पान सिर्फ खाया ही नहीं जाता, बल्कि कई धार्मिक अनुष्ठानों में भी पान का अत्यंत महत्वपूर्ण स्थान है। धूप, दीप नैवेद्य, के साथ पूजा के समय पान और सुपारी की आवश्यकता पड़ती है। रीतिकालीन कवियों ने स्त्री के सोलह श्रृंगारों में 'ताम्बूलसेवन' को भी श्रृंगार का एक अंग माना था।

प्राचीन काल में पान का उपयोग कई कार्यों के लिए प्रतीकात्मक रूप में भी किया जाता था। राजा किसी से प्रसन्न होता या कला की प्रशंसा करना चाहता तो उसे पान का बीड़ा भेंट करता था। युद्धकाल में पान संदेशवाहक का कार्य करता था। यदि कोई राजा अपने प्रतिद्वंद्वी राजा से संधि करने का इच्छुक होता तो उसे पान का बीड़ा भिजवाता। यदि दूसरा राजा उसे स्वीकार कर लेता तो समझा जाता कि उसे संधि स्वीकार है। यदि उसके द्वारा पान का बीड़ा लौटा दिया जाता तो उसका अर्थ संधि अथवा समझौते से इंकार माना जाता।

राजाओं-बादशाहों के अलावा उनके हरमों में बेगमें भी पान का शौक फरमाती थीं। बड़े-बड़े सुन्दर और आकर्षक नक्काशीदार कीमती पानदान हरमों में रखे जाते थे, जो चांदी-सोना आदि कीमती धातुओं से बने होते।

यह है, होठों की रंगत बदल देने वाले पान की कहानी। दरअसल पान का शौक सीमित मात्रा में किया जाये तो यह लाभप्रद सिद्ध हो सकता है अन्यथा पान के अधिक सेवन से स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ सकता है। टी.बी., पैचिश, दांत की बीमारियों वालों और गर्भवती महिलाओं को तो पान से परहेज ही रखना चाहिए।

—३४/बन्दा रोड,
भवानीमण्डी-३२६५०२
जिला-झालावाड (राज.)

## लेखकों से निवेदन

* जो भी रचना प्रकाशनार्थ भेजी जाय वह अब टाइप कराके ही भेजी जाय। हस्तलिखित रचना स्वीकृत नहीं की जायेगी।

* प्रतिदिन नवनीत में प्रकाशनार्थ बहुत सी डाक आती है। कई बार अनुरोध करने पर भी कुछ लेखक वापसी के लिए रचना के साथ पर्याप्त टिकट लगा लिफाफा नहीं भेजते। भविष्य में ऐसी रचनाओं को न लोटाया जायेगा और न उन पर प्रकाशनार्थ विचार ही किया जायेगा।

* जब तक आपकी पूर्व स्वीकृत रचना प्रकाशित न हो जाये दूसरी रचना न भेजें।

* कुछ लेखक अभी भी वापसी के लिए बिना पर्याप्त टिकट लगे लिफाफे के रचनाएं विचारार्थ भेजते रहते हैं। ऐसी अस्वीकृत रचनाओं को आप पत्र लिखकर वापस मंगा सकेंगे, यह अपेक्षा न रखें, क्योंकि उन्हें संभालकर रखना हमारे लिए संभव न होगा।

**संपादक**

अंग्रेजों से लोहा लेने वाले पहले मराठा

# क्रांतिकारी कान्होंजी आंग्रे

□ हरि

महाराष्ट्र के जिन क्रांतिकारियों ने शक्तिशाली अंग्रेजों से लोहा लेकर अपनी देशभक्ति और वीरता का प्रदर्शन किया था, उनमें अठारहवीं सदी के प्रथम पच्चीस वर्षों में बंबई के आसपास के सागरीय क्षेत्र पर अंग्रेजों के अधिकार को सशक्त चुनौती देने वाले कान्होंजी आंग्रे प्रमुख थे। उन्होंने तीन वर्षों में बार-बार अंग्रेजों को पराजित कर दिखा दिया था कि वे सचमुच उन्हें दी गयी 'सरखेल' (नौसेनाध्यक्ष) उपाधि के सच्चे अधिकारी हैं।

बंबई से दक्षिण में १५० मील दूर धेरिया विजयदुर्ग देश के उस महान नौसेनाध्यक्ष का नौ-मुख्यालय था। २५ वर्षों तक इस विजयदुर्ग पर विजय पाने के सर्वसाधन संपन्न अंग्रेजों के सारे प्रयास व्यर्थ गये। इसीलिए वे कान्होंजी आंग्रे और विजयदुर्ग दोनों को अपने लिये अभिशाप मानने लगे थे और इन दोनों का नाम सुनते ही चिढ़ जाते थे।

कान्होंजी की आयु जब मात्र दो वर्ष थी, तब उनके मातापिता ने एक दिन पाँच फुट लंबे एक कोबरा को उसके ऊपर अपना फन फैलाये, उसकी रक्षा करते देखा था, तभी उन्हें पता चल गया था कि उनका पुत्र बड़ा होकर शासक का दर्जा प्राप्त करेगा।

कान्होंजी का जन्म पुणे के निकट आंग्रेवाड़ी में हुआ था। जब उसकी आयु शिक्षा-योग्य हुई तो उसे हरणाई नामक स्थान में भेजा गया, जहां एक ब्राह्मण-गुरु ने उसे अनेक विषयों में पारंगत किया। इसी गुरु के विद्यालय में उसकी भेंट एक चित्तपावन ब्राह्मण तरुण बालाजी विश्वनाथ से हुई, जो उस समय उसके सहपाठी थे, लेकिन जिसने आगे चलकर पेशवा वंश की नींव डाली।

छात्रावस्था से ही कान्होंजी को युद्ध-विद्या से अत्यधिक लगाव था। विद्यालय में होने वाली अनेक युद्ध-प्रतियोगिताओं में उसने पुरस्कार में अनेक तलवारें जीती थीं। नौ-सेना से उसका लगाव अपने पिता तुकोजी के, जो छत्रपति शिवाजी की नौसेना में एक अधिकारी थे कारण हुआ था। तुकोजी सागर-तट स्थित सुवर्णदुर्ग की नौसेना टुकड़ी के उप-नायक थे। अपनी शिक्षा समाप्त कर, कान्होंजी भी शिवाजी की नौसेना में भर्ती हो गये।

सिद्धी नामक एक मुस्लिम शासक से शिवाजी की नौसेना और सेना की भिड़ंत प्रायः होती रहती थी। कान्होंजी ने सिद्धी के प्रदेशों पर हमला बोला, मगर यह हमला असफल रहा और युवक कान्होंजी को सिद्दी के सैनिकों ने गिरफ्तार कर लिया। मगर वह किसी तरह बंदीगृह से भाग निकलने में सफल हो गया। भागकर, उसने एक मुस्लिम व्यापारी के घर में शरण ली। इस व्यापारी ने कान्होंजी को सिद्दी के सैनिकों के हाथों में पड़ने से बचाकर हिंदू मुस्लिम एकता के आदर्श की रक्षा की।

कान्होंजी के साहस और पराक्रम से प्रभावित होकर मराठा शासकों ने १६९८ में केवल २८ वर्ष की अल्प आयु में उसे उत्तरी कोंकण क्षेत्र का नायक नियुक्त कर दिया। उसका नौ-मुख्यालय चेरिया बना। नौ वर्ष बाद, उसे मराठा नौसेना का महानायक बनाया गया। अब सूरत से गोआ तक फैला ५०० वर्ग मील का समुद्रतटीय क्षेत्र उसके अधिकार में आ गया।

उन दिनों अंग्रेजों के जहाज इसी क्षेत्र से आया-जाया करते थे। कान्होंजी को उनके जहाजों का आवागमन पसंद नहीं था। इसलिए अब अंग्रेजों और कान्होंजी के जहाजों में अक्सर टक्कर होने लगीं।

### अंग्रेजों की धोखेबाज़ी

इस क्षेत्र में पिछले सौ वर्षों से ईस्ट इंडिया कंपनी के जहाज बिना किसी बाधा-अवरोध के आते-जाते थे। अब कान्होंजी ने यह फर्मान जारी किया कि भविष्य में अंग्रेजों के उन्हीं जहाजों को आने-जाने दिया जायेगा, जो आवश्यक शुल्क देकर मराठा नौसेना से 'दस्तक' (आज्ञापत्र) प्राप्त कर लेंगे। अब तक ऐसे आज्ञापत्रों को जारी करने का अधिकार सिर्फ पुर्त्तगालियों को था, लेकिन वे भी अंग्रेजी जहाजों से कोई छेड़खानी नहीं करते थे। कान्होंजी ने भी आरंभ में पुर्त्तगालियों की ही नीति अपनायी थी, और अंग्रेजों के जहाजों को शुल्क देने से मुक्त रखा था, मगर जब अंग्रेजों को कान्होंजी की 'गुस्ताखी' बहुत अखरी और उन्होंने कान्होंजी से अपना फरमान वापस लेने को कहा लेकिन कान्होंजी ने उन्हें उपकृत नहीं किया। दोनों पक्षों में ठन गयी।

धोखेबाज़ अंग्रेज अब कान्होंजी को चकमा देने के लिए अन्य जहाजों को भी अंग्रेजी झंडा लगाकर यात्रा करने की सलाह देने लगे, मगर मन ही मन वे कान्होंजी की बढ़ती हुई नौशक्ति से काफी भयभीत और सशंकित थे। मगर उनमें इतनी शक्ति न थी की वे कान्होंजी की नौसेना से सीधी टक्कर ले सकते। इसलिए, उन्होंने फिल्हाल कान्होंजी से समझौता कर, शांति बनाये रखने में ही अपनी खैर समझी।

सन १७१५ में बंबई में नये गवर्नर चार्ल्स बून का आगमन हुआ। उन्होंने आते ही बंबई बंदरगाह को सुरक्षा की दृष्टि से सुदढ़ बनाने की ओर ध्यान देना आरंभ कर

दिया। तोपों से लैस कई युद्धपोतों का निर्माण करवाया, और अपनी नौसेना को हर प्रकार से सुदृढ़ करके उन्होंने एक दिन, मानसून से पहले घेरिया के कान्होंजी के नौ-मुख्यालय पर हमला बोल दिया।

महानायक कान्होंजी पहले से ही इस हमले के लिए तैयार बैठे थे। वस्तुतः जब से बून बंबई आये थे, तभी से कान्होंजी अपने जासूसों की मदद से उनकी गतिविधियों पर नज़र रखते हुए चले आ रहे थे। उन्हें अंग्रेजों की चाल का पहले से ही पता था। उन्हें यह भी पता था कि अंग्रेज अब भारतीय जहाजों से भी शुल्क वसूल करने लगे थे। उन्हें अंग्रेजों का डर न था, क्योंकि वे भलीभाँति जानते थे कि अंग्रेजों की नौसेना शक्ति बंबई बंदर के आसपास ही सीमित है, जबकि उनकी नौसेना के अधिकार में बंबई से सूरत और गोआ तक का समुद्र तट आता था।

सन १७१६ में कान्होंजी ने ईस्ट इंडिया कंपनी के एक दलाल का 'सक्सेस' नाम का एक जहाज अपने अधिकार में ले लिया था। दलाल कान्होंजी को शुल्क और जुर्माने की पूरी राशि देकर अपना जहाज वापस लेने को तैयार था, मगर अंग्रेजों के शत्रुतापूर्ण रुख के कारण, इस जहाज को उसे नहीं लौटाया गया।

सन १७१७ में कान्होंजी ने लकड़ी से लदी एक नाव बंबई के निकट अपने कब्जे में की, और उसमें से थोड़ी सी लकड़ी निकाल कर नाव को छोड़ दिया। बून को कान्होंजी द्वारा भेजे एक पत्र में लिखा था, "मैंने बंबई के एक व्यापारी से कुछ लकड़ी लेने की बात की थी, लेकिन अंग्रेजों की शरारत की वजह से मुझे यह लकड़ी नहीं मिल पायी। इसलिए मुझे इस नाव में लदी कुछ लकड़ी को लेने को मजबूर होना पड़ा।"

बून ने तभी निश्चय किया कि वह कान्होंजी को सबक सिखाकर रहेगा। उसके आदेश से अंग्रेजी नौसेना ने 'जून १७१८ को घेरिया पहुंच गयी, पर उसे कान्होंजी पर हमला करने के लिए एक सप्ताह तक प्रतीक्षा करनी पड़ी। उनके सामने समस्या यह थी कि वे चट्टानी दुर्ग की दीवारों में प्रवेश नहीं कर सकते थे, और उधर मराठा नौसेना के जहाज़ तीनों ओर से घिरी एक छोटी खाड़ी में सुरक्षित खड़े थे।

अंग्रेज़ दो दिनों तक किले पर गोलीबारी करते रहे। उत्तर में दुर्ग की ओर से कोई गोलीबारी नहीं हुई। लेकिन, जब अंग्रेज थककर चुप बैठ गये, तो ऊपर से गोलाबारी शुरू हुई, जिसकी वजह से अंग्रेजों को अपने जहाजों में आने को बाध्य होना पड़ा। नौ दिन बाद, अंग्रेजों की नौसेना उध्वस्त जहाजों और घायल नौसेनिकों के साथ अपना सा मुँह लेकर वापस लौटी।

## चार बार विदेशियों की हार

बून ने निराशांध होकर तीन महीने बाद फिर कान्होंजी पर आक्रमण किया। इस बार

# रिश्ता

दूसरे के मन की पीड़ा समझकर
उसे धीरे से सहलाकर हलका करने का
क्षणिक प्रयास
अटूट रिश्ता है, भले ही वह अनाम हो।
अपनी ही दृष्टि सें नहीं
दूसरों की दृष्टि से
स्थिति को आंकने का अंदाज
अटूट रिश्ता है, भले ही वह अनाम हो।

दूसरों के आंसुओं को
अपने हाथों से सुखा देने की व्यग्रता
उन्हें पोंछ देने की आकुलता
अटूट रिश्ता है, भले ही वह अनाम हो।

**— डॉ. सुशीला गुप्ता**
**बी. एम. रूइया महिला महाविद्यालय,**
**गामदेवी, बम्बई ४००००७**

---

स्वयं उसने कान्होंजी के खंडेरी दुर्ग पर आक्रमण किया, लेकिन इस बार भी मराठा वीरों ने उसे हार की धूल चटाकर वापस लौटने को मजबूर कर दिया। निराशांध बूंन ने इस बार राम कपाली नामक एक व्यापारी को जिम्मेवार ठहराया जिससे बंदीगृह में कपाली की मृत्यु हो गयी। बून की इस कार्यवाही से अंग्रेजों के भारतीय समर्थकों को बड़ा दुख हुआ।

दो वर्ष बाद, बून ने पुनः घेरिया दुर्ग पर आक्रमण करने की योजना बनायी लेकिन यह आक्रमण भी असफल रहा और अंग्रेज कान्होंजी की अनुशासित और पराक्रमी सेना के आगे फिर टिक नहीं पाये।

चौथी बार कान्होंजी से टक्कर लेने के लिये, अंग्रेजों को पुर्तगालियों से सहायता लेनी पड़ी। बून और पुर्तगाली मैथ्युज में कतई नहीं बनती थी, लेकिन अंग्रेजों के इस आश्वासन पर कि कान्होंजी को हराकर वे सारा पश्चिमी समुद्र तट पुर्तगालियों को दे देंगे, वह अंग्रेजों के साथ कान्होंजी के साथ जूझने के लिए तैयार हो गया।

दिसंबर १७१९ में कान्होंजी के नौ-मुख्यालय पर तीन ओर से आक्रमण किया गया। लेकिन इस बार भी कान्होंजी ने बून और उनके पुर्तगाली साथियों को मात दी।

जून १७२२ में हर्षोत्फुल्ल कान्होंजी ने अपने अपराजित दुर्ग से हतोत्साहित बून को बंबई से वापस इंग्लैंड जाते देखा। वह उनके जीवन का सर्वाधिक सुखदायक क्षण था।

भूमिं रही है। इसलिये यह क्षेत्र पुरातात्विक सामग्री से अत्यधिक समृद्ध है और नित नयी जानकारी यहां से मिल रही है। मोरध्वज के पश्चात् यहां हैहयवंशीय राजाओं का राज्य था। ऐसी मान्यता है कि हैहयवंशी ही छत्तीसगढ़ के प्राचीन राजा थे और रतनपुर (रत्नपुर) उनकी राजधानी थी। रतनपुर के इतिहास के संदर्भ में बाबू रेवाराम पंडित कृत तवारीख हैहयवंशीय राजाओं की वंशावली एवं राजश्री जमीदार लाफा वाले प्रांत छत्तीसगढ़ तथा पं. शिवदत्त शास्त्री कृत रतनपुर आख्यान प्रमुख हैं। जिससे रतनपुर राज्य के राजाओं की वंशावली एवं महत्वपूर्ण जानकारियां मिलती हैं। इतिहासकारों के अनुसार यहां हैहयवशीय राजाओं का शासनकाल सन् १००० से १७५८ तक था। ये कलचुरि कें नामसे प्रसिद्ध थे। ये पहले चेदि देश में राज्य करते थे, अतः इन्हें 'चेदिश' कहा जाता था। चेदि राज्य का विस्तार पहले चंबल नदी से लेकर करबी (चित्रकूट के नैऋत्य) तक था। धीरे-धीरे इनका राज्य हसदीक नदी तक बढ़ा। बाद में छत्तीसगढ़ अंचल में इनके राज्य का विस्तार होता गया। इस वंश के एक राजा कमलराज के पुत्र रत्नदेव ने १०५० के लगभगं रतनपुर की नींव डाली।

रतनपुर के संबंध मे एक कहानी प्रचलित है। इसके अनुसार एक बार राजा रत्नदेव अपनी राजधानी तुम्माण से रत्नपुर के घनघोर जंगल में शिकार करने आये। शिकार की तलाश में वे बहुत दूर निकल गये। सहयोगी सब पीछे छूट गये। वापसी में राजा रास्ता भूल गये और घनघोर जंगल में भटकने लगे। रात गहराने लगी। रात गुजारने के ध्येय से राजा एक पेड़ पर चढ़ गये। आधी राते के करीब वहां पर महामाया देवी की सभा होने लगी। राजा रत्नदेव यह सब देखकर चकित हो गये। सुबह सब जैसे का तैसा हो गया। फिर राजा को स्वप्न में देवी महामाया ने निर्देश दिया कि इस क्षेत्र में अपने राज्यका विस्तार करो तथा एक मंदिर बनवाकर उसमें महामाया की मूर्ति स्थापित करो, राजा रत्नदेव ने ऐसा ही किया और अपने नाम पर 'रत्नपुर' राज स्थापित किया।

रत्नपुर राज का विस्तार दुर्ग, सिहावा, कांकेर और डोंगरगढ़ तक था। राजधानी रतनपुर थी। उस समय रायगढ़; प्रतापगढ़ अम्बागढ़, बस्तर, खरियार, फूलझेंर, सारंगढ़, करीद, कालाहांडी, सम्बलपुर, पटना, सिंहभूमि, चंद्रपुर, सक्ती, रायगढ़, कौड़िया और सरगुजा रियासत से रत्नपुर को कर मिलता था।

मध्य युगीन छत्तीसगढ़ का रत्नपुर एक महत्वपूर्ण केंद्र था और रतनपुर राज के रूप में इसकी ख्याति थी। पहाड़ियों से घिरा प्रकृति की गोद में बसा रतनपुर एक सुंदर, दर्शनीय ऐतिहासिक स्थल है। १०वीं शताब्दी से १७४१ तक यहां पर कलचुरि नरेशों का शासन था। इसके बाद मराठा सेनापति

ऐतिहासिक स्थल

# छत्तीसगढ़ की संस्कारधानी रतनपुर

❑ अश्विनी केशरवानी

भारत के मध्य में बसा मध्य प्रदेश का दक्षिण पूर्वी अंचल 'छत्तीसगढ़' अनेक सांस्कृतिक, धार्मिक, ऐतिहासिक और पौराणिक धरोहर को अपने में समेटे हुआ है। छत्तीसगढ़ के इतिहास का अपना अलग अस्तित्व है। गढ़ों का गढ़ छत्तीसगढ़ का गौरव 'रतनपुर' सदियों तक यहां की राजधानी रहा है। चारों युग में रतनपुर की अपनी एक महत्ता रही है। सतयुग में यह मणिपुर, त्रेता में मणिकपुर, द्वापर में हीरापुर और कलयुग में रत्नपुर के नाम से प्रसिद्ध हुआ, महाभारत काल में रत्नपुर का नाम रत्नावली था। महाभारत काल के मोरध्वज और ताम्रध्वज से जुड़ी घटना यहीं घटी थी। यह राजा मोरध्वज की राजधानी थी। पांडवों के अश्व को ताम्रध्वज ने यहीं रोका था, जिसके फलस्वरूप अर्जुन और ताम्रध्वज के बीच युद्ध हुआ, जिसमें अर्जुन बुरी तरह घायल हुआ था और तब भगवान श्रीकृष्ण ने अपने दोनों प्रिय भक्तों में मेल कराने के लिए मोरध्वज की परीक्षा ली। भगवान श्रीकृष्ण और अर्जुन ब्राह्मण वेष में राजा मोरध्वज के दरबार में जाकर एक शेर से ब्राह्मण बच्चे की रक्षा के लिए युवराज ताम्रध्वज के आधे शरीर की मांग की। राजा ने ब्राह्मण रूपी श्रीकृष्ण की शर्त के अनुसार अपने बच्चे और युवराज ताम्रध्वज के शरीर को आरे से चीरकर दे दिया। भगवान श्रीकृष्ण ने राजा की श्रद्धा-भक्ति से प्रसन्न होकर युवराज को जीवनदान दिया और परीक्षा का भेद बताया। इस प्रकार अर्जुन से मेल कराके वरदान आदि देकर लौट गये थे। बाद में इस क्षेत्र में 'आरे' का प्रचलन बंद हो गया था। स्व. पुत्तीलाल शुक्ल की कविता में भी उल्लेख है :-

**रतनपुर अति रम्य प्रांत में रहा प्रथम सुखखानी**
**जाकी विमल कथा भारत में-मुनिवर व्यास बखानी।**
**पांडव विजै हेतु राजन के, राज सूर्य भरन साजी।**
**वीर कुमार तामरध्वज ने पकरि लीन्ह सो बाजी।**
**मोरध्वज वर धूप रतनपुर दयाधर्मधुर दानी**
**तिनकी सुदृढ़ भक्ति जांचन को कृष्ण युकूमन ढानी।**
**देहू अर्धतन चीरि मोद मन, अतिथि धर्म पतियानी**
**अपने तनय तामरध्वज को आरा गति नृप रानी।।**

पौराणिक तथ्यों के अतिरिक्त ऐतिहासिक तथ्यों से भी रतनपुर परिपूर्ण है यह धरती पौराणिक राजा मोरध्वज से लेकर उत्तरकालीन कलचुरि गोंड़, हैहयवंश और मराठा राजाओं के इतिहास की रचना

भास्कर पंत ने बंगाल अभियान के समय यहां के राजा रघुनाथसिंह को हराकर उसके रिश्तेदार मोहनसिंह को रतनपुर का शासन सौंप दिया। सन १७५७ में नागपुर के राजकुमार बिंबाजी भोंसले ने रतनपुर के प्रशासन की जिम्मेदारी अपने ऊपर ली और उसने रायपुर शाखा के शिवराज सिंह के पुरखों के हर गांव के पीछे एक रुपया परवरिश कर लगाकर रायपुर राज को भी अपने अधिकार में कर लिया। बिंबाजी भोंसले के शासन काल में अनेक मराठी घराने यहां आ बसे। यहां की भाषा हिन्दी होने के बाद भी राजभाषा मराठी और मोड़ी लिपि का चलन था। रतनपुर और रायपुर राजवंश माफीदार बना दिये गये थे। बिंबाजी भोंसले और आनंदी बाई का शासनकाल रतनपुर के लोंगों के लिए यादगार रहा, किंतु कालांतर में जब छत्तीसगढ़ का प्रशासन नागपुर से संचालित हुआ तब यहां पर अव्यवस्था फैल गयी, छत्तीसगढ़ में अंग्रेज शासन स्थापित होने पर मुख्यालय रतनपुर से हटाकर रायपुर बना दिया गया। तब से रतनपुर का वैभव लुप्त होने लगा।

रतनपुर का प्राचीन नाम मणिपुर था। मणिपुर में पांच खंड थे - तुम्मान खोल, नल खोल, देवी खोल, भैरव खोल, बराह खोल और बीच में लाफागढ़ स्थित है। यहां जयशंकर महादेव स्थित हैं। कलचुरि नरेश ज़ाजल्वदेव के शासन काल में जांजगीर, पाली, शिवरीनारायण, खरौद और रतनपुर का विकास हुआ। रतनपुर में तथा किले में स्थित मंदिर प्रसिद्ध है। राजा रत्नदेव ने रत्नेश्वर तालाब तथा उनकी स्त्री बेदमती ने वेद तालाब का निर्माण कराया था। जाजल्वदेव ने बेलपान में महादेव के मंदिर की स्थापना की तथा पाली में तालाब बनवाया, जाजल्वदेव ने ही शिवरीनारायण के मंदिर को नया आकार दिया तथा अपने नाम पर जांजगीर नगर बसाया।। अकबर और जहांगीर के शासनकाल में वीर गोपालराय के प्रयास से रत्नपुर का टकोरी माफ हुआ था। दिल्ली से वापस होने पर राजा कल्याणसाय ने लालपुर बसाया और तख्तसिंह ने तख्तपुर बसाया था।

हैहयवंशी राजाओं के नाम के सामने 'स्वस्ति श्री महाराजाधिराज श्री राजा' बिरुद लगता था। राजा बिंबाजी भोंसले के समय में चोर-हरी में ज़िसको राम पहाड़ी कहते हैं, रामचन्द्रजी की मूर्ति और मंदिर बिंबाजी ने बनवाये। उनकी बड़ी रानी आनंदी बाई ने राम पहाड़ी में बिंबाजी की मूर्ति स्थापित कर मंदिर बनवाया था और पहाड़ी पर चढ़ने के लिए सीढ़ी का निर्माण कराया था। इन्हीं के शासनकाल में रानी तालाब, खारंग नदी के संगम में संगमेश्वर महादेव का मंदिर तथा रतनपुर किला के भीतर नया महल तथा लक्ष्मीनारायण का मंदिर बनाया गया था। रतनपुर के बेजाकार किले के सिंह दरवाजा भैरव दरवाजा, सेमर

दरवाजा थे। धमधा के राजा बिजाईक गोंड़ की मूर्ति किले में है। जिसको गोपालराय की मूर्ति कहते हैं। जगन्नाथ स्वामी का मंदिर कल्याणसाय राजा का है। रतनपुर में पंडरीनाथजी का मंदिर भी प्रसिद्ध है। गिरिजा बंद तालाब में स्थित मंदिर को कोदनशाह ने बनवाया था। यहां हनुमान की मूर्ति है। विक्रम तालाब विक्रमसिंह राजा ने बनवाया था। वृद्धेश्वरनाथजी के मंदिर का जगमोहन कुंड मधुसूदनदानी ने बनवाया था। कर्णापाल राजा ने कर्णाजुनी बनाया जहां भुवनेश्वर नाथ महादेव का मंदिर है। मानदेव गौराहा ने मनिका देवी तालाब बनवाया। गोपालराय ने गोपाल बंद तालाब बनवाया और अनुपसिंह ने अनुपबंद तालाब बनवाया। कृष्णदेव गुर्दमान ने कृष्णांनंदे तालाब, भाई रामदेव ने रामसागर, पुरूषोत्तम राय कदमहा बाबू ने जोरा तालाब, गंगा बाबू ने तुकी तालाब और युगदास बाबा ने नया तालाब बनवाया था। बहरसाय राजा के समय महामाया मंदिर के पास तालाब बनाया गया। कपिलेश्वर नाथ स्वयंभू हैं। इनका मंदिर पुराना है, जिसे मोहनकृष्ण गिरि बाबा ने बनवाया था।

पहले महामाया मंदिर में नरबलि देते थे किंतु राजा बहरसाय के समय में बंद कर दिया गया और क्वार की नवरात्रि में ८ रोज लड़ाई होती थी। इसमें जो मारे जाते थे वे देवलोक में स्थान पाते हैं ऐसी मान्यता थी। बैराग तालाब के पूर्व में करहैया पारा और जरहापारा वालों के मध्य लड़ाई होती थी। वहीं पर लड़ाई देखते समय राजा की मृत्यु पत्थर लगने से हो गयी। तब उनकी रानी देवला देवी वहां पर सती हुई थी। १८८८ में राजाज्ञा से लड़ाई बंद कर दी गयी।

राजा रतनसिंह ने राज किला बनवाया था जिसे राजपुर कहते हैं। दुलहरा बांधा के दुल्हादेव ने राजबहन को राजसिंह ने और लक्ष्मी पर्वत में लक्ष्मीदेव की मूर्ति एक स्वर्णकार ने बनवायी थी। बिसदेहरिया मंदिर राजसिंह का चितास्थल है जिसको सरदारसिंह ने बनवाया। राजपुर के उजड़ने के बाद उसे जूना रतनपुर कहा जाने लगा। रतनपुर के दक्षिण दरवाजे में 'कालभैरव' की मूर्ति है। वहां का मंदिर ज्ञानगिरि बाबा ने बनवाया था। पास में स्थित कुंड भी उन्होंने ही बनवाया था, राजा पृथ्वीदेव के समय कालभैरव के प्राचीन मंदिर का निर्माण हुआ था। बिंबाजी के समय में वहां पर भवानी गिरि गोसाई ने कुंड का पचरी बनवाया। लक्ष्मीदेव पहाड़ी पर प्राचीन मंदिर लक्ष्मीचंद क्षत्रिय सुदृदेवल भैष्मा ने बनवाया और मंडप राजा राजसिंह ने बनवाया था।

उपरोक्त जानकारियों से रतनपुर में स्थित पुरावशेषों की महत्ता प्रतिपादित होती है। किसी समय मीलों तक फैला हुआ रतनपुर सैकड़ों तालाबों से घिरा हुआ था। वैभव और समृद्धि की दृष्टि से यहां पर

# दोहे

*समय डाकिया बांटता, सुख-दुख की नित डाक*
*कुछ के आंगन गुलमुहर, कुछ के आंगन आक।।*

*हर सूरत यूं आजकल, देने लगी फरेब।*
*ज्यों सुंदर पोशाक के भीतर खाली जेब।।*

*कैसी खेली वक्त ने, साथ हमारे चाल।*
*दिल तो दरिया सा दिया, हाथ मगर कंगाल।।*

*क्या निर्धन की जिंदगी, दोनो ओर अलाव*
*ताने मारे जग उधर कौंचे इधर अभाव।।*

*या तो अपनी प्रेयसी, या फिर बस अल्लाह*
*ऐरे-गैरे के लिए, नही बनी है 'वाह'।।*

*किस रेशम से है बनी, प्रेम नाग की डोर।*
*सह जाती है बावरी दुनिया भर का जोर।।*

*— हस्तीमल हस्ती*

*ज्वेलरी इम्पोरियम, नेहरू रोड,*
*सांताक्रुज (पूर्व) बंबई-५६*

---

रत्नों का भंडार था। सही अर्थो में रत्नपुर का गौरव प्राचीन काल से लेकर बिंबाजी भोंसले के शासन काल तक विद्यमान रहा। किंतु कालांतर में यहां का वैभव नष्ट होने लगा और आज भी यह जिला मुख्यालय के लायक भी नहीं बन सका है। कहा जाता है कि मध्ययुग में कभी यहां पर विश्वविद्यालय था। मगर आज एक महाविद्यालय भी नहीं है। समय के चक्र ने रतनपुर को उपेक्षित कर रखा है।

**प्रकाश चाल, ऊपरी मंजिल**
**मिशन अस्पताल रोड,**
**बरपाली, चांपा-४९५६७१**
**जिलाः बिलासपुर (म.प्र.)**

कहानी

# निःस्वार्थ प्रेम

**☐ डॉ. सोम प्रकाश**

आज तक कोई यह नहीं समझ पाया था कि ठाकुर बलवीर सिंह एक वैश्य परिवार में किस हैसियत से रहते हैं। सेठ जुगलकिशोर के परिवार में ठाकुर साहब बिल्कुल घर के सदस्य की भांति रहते आये हैं। कहते हैं कि ठाकुर साहब के भाई - भतीजे, कुटुम्ब वाले भी उनकी इस बात से नाराज हैं। ठाकुर साहब ने अपने हिस्से की सारी सम्पत्ति बेचकर धन बैंक मे रख छोड़ा है। शादी इन्होंने की ही नहीं, अतः अकेली जान न कोई चिन्ता न कोई शान। सेठ जुगलकिशोर की हवेली में नीचे का एक बड़ा कमरा ठाकुर साहब को मिला हुआ है। कमरे में एक पलंग, दो कुर्सी, एक मेज तथा बिजली का पंखा भी सेठजी का ही है। बस ठाकुर साहब की तो एक अटैची है जिसमें उनके दो-तीन जोड़ी कपड़े रहते हैं। प्रातः की चाय से लेकर रात के दूध तक ठाकुर साहब खाने-पीने की हर चीज सेठजी के परिवार में ही लेतें रहे हैं। कभी-कभी किसी परिचित व्यक्ति ने सुझाव भी दे डाला है, उन्हें चाय का प्रबन्ध अपने कमरे में रखने का। ऐसे अवसर पर ठाकुर साहब एक छोटा-मोटा भाषण-सा दे देते, 'देखो भाई, मैं तो चाय पीता ही नहीं हूं, फिर मैं औरों को चाय जैसा हानिकारक पेय पिलाकर उनका अहित क्यों करूं? वैसे भी चाय बनाकर कमरा गन्दा हो जाता है और अन्य काम बढ़ जाते हैं।' आदि-आदि।

ठाकुर साहब की आयु लगभग पिछत्तर वर्ष थी और उनके आगे की पीढ़ी अर्थात् पचास साठ वर्ष के सभी लोग अनुमान से ही कहते हैं कि ठाकुर साहब मुनीम अथवा मैनेजर रहे होंगे। सेठ जुगलकिशोर के कारोबार के अथवा अपनी ठाकुर वाली हैकड़ी के कारण अंगरक्षक रहे होंगे, सेठजी के। परन्तु इन्हीं लोगों को जब यह पता लगता कि ठाकुर साहब ने स्वयं अपनी ही लाखों रुपये की सम्पत्ति बेची है तो इन सबके लिए यह एक रहस्य ही बनकर रह जाता। जो थोड़े बहुत लोग बचें हुए थे ठाकुर साहब की अपनी पीढ़ी के, वे भांति-भांति की बातें करते थे इस विषय में। कोई कहता कि ठाकुर साहब के पिताजी सेठजी के पिता के कर्जदार थे और अपने बाप का कर्ज उतारने के लिए ही इन्होंने अपने हिस्से की सम्पत्ति बेचकर सब कुछ सेठ के कारोबार में लगा दिया और

अपना स्वयं का जीवन भी। यह सत्य है कि ठाकुर साहब अपने पिता के इकलौते पुत्र थे और उनके पिता स्वभाव से ऐयाश भी थे। यह भी सही है कि सेठ जुगल किशोर के पिता ठाकुर बलवीर सिंह के पिता के मित्र थे। परन्तु न तो जुगल किशोर और न उनके पिता ही इतने कठोर थे कि सम्पत्ति के लाखों रुपए लेकर भी ठाकुर साहब को अपना कार्य देखने को मजबूर करते । और सुना यह भी जाता था कि सम्पत्ति का सारा धन तो ठाकुर साहब के खाते में जमा है। कुछ लोगों ने यह भी उड़ा रखा था कि ठाकुर साहब के अवैध सम्बन्ध सेठजी की पत्नी निरुपमा देवी से हैं और सेठानी के लिए ही ठाकुर साहब आजीवन अविवाहित रहे। ऐसी अफवाह को हवा देने वाले सेठजी के एक पुत्र अनिल की शक्ल सूरत एवं स्वभाव की समानता ठाकुर साहब से बताते। परन्तु वास्तविकता शायद यह भी नहीं है। क्योंकि सेठजी के घर में रहने वाले नौकर भी यह कहते हैं कि उन्होंने कभी ठाकुर साहब को सेठानी से सामने मुस्कराते भी नहीं देखा है और बहुधा ठाकुर साहब सेठानी के सामने तभी जाते हैं, जब वहां सेठजी भी हों। जैसे दोपहर तथा शाम के भोजन के समय अथवा कभी-कभी टी.वी. के किसी अच्छे प्रोग्राम में।

ठाकुर साहब आयु में कुछ बड़े थे सेठ जुगलकिशोर से और इसलिए सेठजी भाई साहब कहते थे ठाकुर साहब को। देखा-देखी सेठजी के बच्चे भी उन्हें भाई साहब कहने लगे और आस-पास के लोग भी। इस प्रकार जगत भाई साहब बन गये थे बलवीर सिंह। सेठानी को कभी पुकारते, आवाज लगाते नहीं सुना, अतः वे क्या कहती थीं ठाकुर साहब को, यह किसी को नहीं पता। ठाकुर साहब पान, सिगरेट, शराब तो क्या चाय भी न पीते थे, लोग इसीलिए कहते थे कि ठाकुर साहब अपने पिता का प्रायश्चित कर रहे हैं।

लगभग बीस वर्ष पूर्व सेठजी ने अपने सबसे छोटे पुत्र अनुज को टी.वी. की दुकान खुलवा दी थी, तभी से ठाकुर साहब को मानों काम मिल गया था और वे दिन भर दुकान पर ही रहते थे। कुछ लोगों को तो कभी-कभी यह गलतफहमी भी हो जाती थी कि टी.वी. की दुकान ठाकुर साहब की ही है। अनुज भी ठाकुर साहब के ऊपर निश्चित रहता था और बाहर से माल लाना, लोगों के यहां सैट लगाना तथा पैसे की उगाही के अतिरिक्त दुकान पर बैठकर ग्राहकों को टी.वी. के बारे में सभी सूचनाएं देना, नये सैट के आर्डर लेना तथा खराब सैटों की शिकायतें नोट करना जैसे सभी कार्य ठाकुर साहब कर लेते थे।

यहां तक कि आज मृत्यु से लगभग दो घंटे पूर्व भी वे अनुज से यह कहकर दुकान से अपने कमरे पर आये थे कि पता नहीं क्यों उनके सीने में जलन सी है। अनुज ने वहीं डाक्टर को बुलाने का आग्रह भी किया

था, परंतु उन्होंने हंस कर टाल दिया था, 'नहीं-नहीं ऐसी कोई बात नहीं, प्रातः नाश्ते में तली हुई मूंगफली ले ली थी, शायद उससे ही ऐसा हो गया होगा। दोपहर को खाना नहीं खाऊंगा तो शाम तक ठीक हो जाएगा।' परंतु यह दर्द ही दौरा बना और जब दोपहर के खाने के लिए सेठजी की पौती गुंजन ठाकुर साहब को बुलाने उनके कमरे में गयी, वे अपने पलंग पर मृत पड़े थे। कोई उपचार भी न हो सका था। पता लगते ही सेठजी नीचे आये और डाक्टर को बुलाकर चैक कराया। डाक्टर ने भी ठाकुर साहब को मृत घोषित कर दिया। पिछत्तर वर्ष की अवस्था में यह उनकी प्रथम और अंतिम बीमारी थी।

अपनी स्थिति स्पष्ट करने के लिए सेठ जुगलकिशोर ने ठाकुर साहब के कुटुम्बियों को बुलवा लिया था और क्रिया-कर्म का सारा व्यय स्वयं करते हुए भी चिता में अग्नि उनके एक भतीजे से लगवाई थी। उनके सभी कुटुंबी लोग यह जानने को उत्सुक थे कि ठाकुर साहब ने क्या छोड़ा है। इसीलिए शव उठाने से पूर्व सेठजी ने कमरे का ताला एवं चाबी ठाकुर साहब के एक कुटुंबी भाई को सौंप दिया था। सभी कुटुंबी ठाकुर साहब के सगे होने का एहसास एकत्रित लोगों को कराने का प्रयास कर रहे थे। कुछ ने घड़ियाली आंसू बहाने का भी नाटक किया था और एक भतीजे ने सेठजी से जोश में आकर यह भी कह दिया था कि ठाकुर साहब के दाह-संस्कार का सारा खर्च वह उठाएगा।

ठाकुर साहब सेठजी के परिवार में आजीवन रहे थे। लगभग पच्चीस वर्ष की आयु से लेकर मृत्यु पर्यन्त। इस परिवार के बच्चे - बड़े सभी दुखी होकर भी दिखावा नहीं कर रहे थे। और सबसे अधिक दुखी थी निरुपमा देवी जो हवेली के एक कोने के कमरे में जाकर लेट गयी थीं। पथराई सी आंखों से वे खिड़की में से आकाश को देखे जा रही थीं। आज सेठानी सबको बता देना चाहती थीं कि ठाकुर साहब क्यों जीवन भर इस हवेली में रहे ताकि लोग यह जान सकें कि कितना विशाल हृदय था ठाकुर साहब के सीने में। परन्तु निरुपमा देवी यह भी जानती थीं कि मृत्यु के पश्चात् तो लोगों ने गांधी और नेहरू जैसे महान् व्यक्तित्वों पर भी छींटाकशी करने में संकोच नहीं किया। अतः वे चाहकर भी कुछ बताने की स्थिति में नहीं थीं। जाने-अनजाने निरुपमा देवी अपने पचास वर्ष पूर्व के अतीत में खो गयीं थीं।

वह इलाहाबाद विश्वविद्यालय में बी.ए. की छात्रा थीं और बलवीर सिंह एम.ए. में पढ़ते थे। अन्तर्विश्वविद्यालय सांस्कृतिक प्रतियोगिता में भाग लेने के लिए निरुपमा गायन के लिए चुनी गयी थीं और बलवीर भाषण के लिए। यह प्रतियोगिता आगरा में हुई थी और प्रथम भेंट उन दोनों की हुई थी ताजमहल के प्रांगण में। भाषण प्रतियोगिता

हो चुकी थी और निरुपमा ने बलवीर की प्रशंसा करते हुए कहा था, 'आपका भाषण बड़ा प्रभावशाली था, कोई न कोई पुरस्कार आपको अवश्य मिलेगा।' बलवीर अगले दिन वापस जाने वाले थे परंतु निरुपमा के आग्रह पर उसकी गायन प्रतियोगिता तक रुक गये थे। गायन प्रतियोगिता के दिन बलवीर को अचानक उसके पिता के मित्र का बेटा जुगलकिशोर भी श्रोताओं में मिला जो उस समय आगरा कालिज में एल.एल.बी. का विद्यार्थी था। प्रतियोगिता की समाप्ति पर बलवीर ने निरुपमा का परिचय जुगलकिशोर से भी कराया था। तभी से जुगलकिशोर तो निरुपमा का भक्त बन गया था।

बलवीर बहुधा निरुपमा से मिलता रहता था और निरुपमा सचमुच बलवीर को पसन्द करती थी। एक दिन बलवीर ने उसके मन को पढ़कर उसे टोका भी था, 'देखो निरुपमा, मेरे लिए इससे अधिक सौभाग्य की बात और क्या हो सक्ती है कि मुझे तुम जैसा जीवन साथी मिल जाय। परंतु जाति-धर्म पर आधारित हमारा समाज क्या हमें एक होने देगा। पहले तो तुम्हारे पिता-माता ही अड़चन बन सकते है और यदि वे तैयार हो भी जायें तो मेरे पिता तो रघुवंशी ठाकुर हैं, उनको समझाना भी टेढी खीर है।' और निरुपमा को अब तक याद हैं कि वह इस बात पर रो पड़ी थी। बलवीर ने उसे समझाते हुए कहा था, 'अच्छा बाबा, मैं आऊंगा एक दिन तुम्हारे पिताजी से बात करने।'

उन्हीं दिनों जुगलकिशोर भी मिलने आये थे बलवीर से, बल्कि सच तो यह है कि वह निरुपमा से मिलना चाहते थे बलवीर के साथ। बलवीर जुगलकिशोर को साथ लेकर निरुपमा के घर गया था। निरुपमा के पिताजी ने दोनों का स्वागत करते हुए कहा था। 'निरुपमा ने बहुधा जिक्र किया है तुम्हारा घर में। बहुत प्रशंसा करती है वह तुम्हारी।' जुगलकिशोर को भ्रम हुआ था कि यह बात उसके लिए कही गयी है और बलवीर ने अवसर का लाभ उठाकर कहा था, 'मैं आपसे निरुपमा का हाथ मांगने आया हूँ।' जुगलकिशोर को शत्रु सा लगा था बलवीर उस समय और निरुपमा के पिता बौखला उठे थे, 'जब वैश्य परिवारों में लड़के मिलने बन्द हो जायेंगे तब सोचूंगा मैं इस बारे में।' आशा के अनुकूल ही बलवीर को उत्तर मिला था और वह मन ही मन तिलमिलाकर रह गया था। परंतु धैर्यशील बलवीर ने बात को मोड़ देते हुए कहा था, 'अंकल, आप गलत समझे। मैं अपनी नहीं, जुगलकिशोर की बात कर रहा हूँ।' और इस प्रकार निरुपमा का संबंध जुगलकिशोर से करा दिया था बलवीर ने।

जुगलकिशोर वास्तविकता को समझ पाये अथवा नहीं, परंतु बलवीर की सहृदयता के कायल हो गये थे वे। शादी के

पूर्व अकेले में बलवीर ने निरुपमा को समझाया था, 'मैं अगले जन्म तक प्रतीक्षा करूंगा तुम्हारी, परंतु इस जन्म में हमारा प्रेम अनजाना ही रहना चाहिए - एक निस्वार्थ प्रेम। जुगलकिशोर मन ही मन बलवीर के आराधक बन गये और उन्हें कभी अलग नहीं होने दिया। बलवीर ने शादी नहीं की और उसके पिता इसी दर्द को लिए स्वर्ग सिधार गये। जुगलकिशोर ने भी उन दिनों बलवीर पर बहुत दबाव डाला परन्तु बलवीर का एक ही उत्तर था, 'मेरे हाथ में तो विवाह की लकीर ही नहीं है।'

* * *

निरुपमा की विचार तन्द्रा अनुज ने तोड़ी थी जो अपनी मां को खोजता हुआ वहां आया था। अनुज ने बताया था, 'मां, भाई साहब की अटैची में से वसीयत के कागजात निकले हैं।' निरुपमा एक क्षण को सोच मे पड़ गयी थी कि कहीं वसीयत उसके अथवा उसके किसी बेटे के नाम तो नहीं लिख छोड़ी है? परंतु अगले ही वाक्य से अनुज ने उसकी आशंका समाप्त कर दी और उसने चैन की सांस ली। आगे अनुज ने कहा था, 'उन्होंने बैंक में जमा अपना सारा धन देश की सुरक्षा सेनाओं को अर्पित कर दिया है।' निरुपमा सोच रही थी कि ठाकुर साहब ने अपने निस्वार्थ प्रेम का वायदा मर कर भी निभाया है और अनुज उसकी ओर ऐसे देख रहा था जैसे वह जानने का प्रयास कर रहा हो कि ऐसी वसीयत से उसकी मां

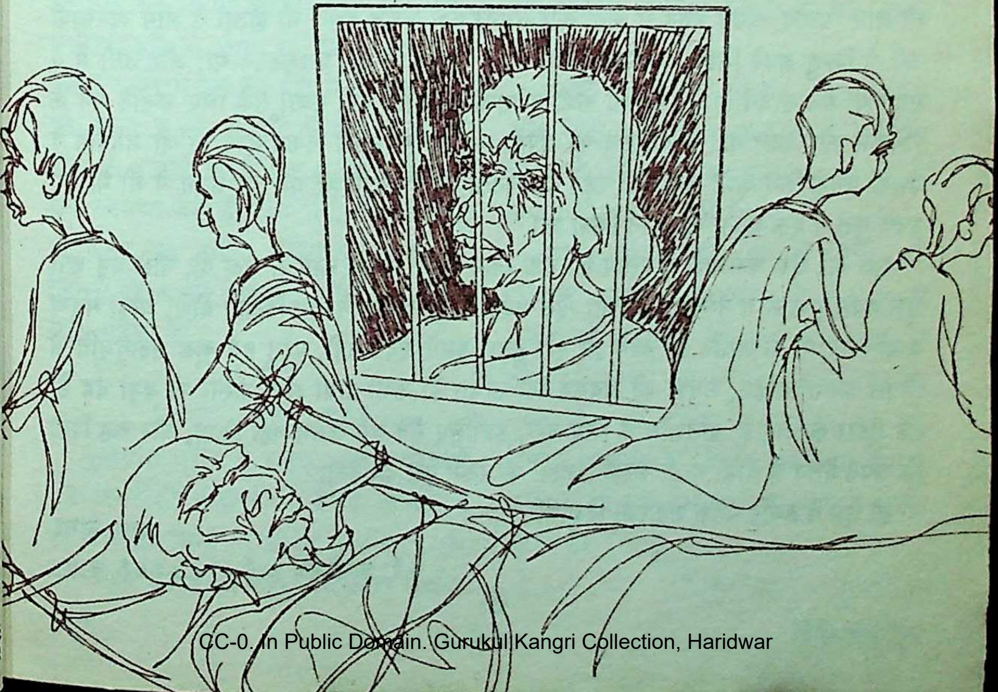

को कैसा अनुभव हुआ है। अपनी बात पूरी करते हुए अनुज ने कहा था, 'ठाकुर साहब के सगे होने का दावा करने वाले सभी कुटुंबी, भाई, भतीजे, वसीयत पढ़े जाने के बाद एक-एक करके खिसकते चले गये।

अनुज को सन्तुष्ट करने के लिए निरुपमा ने भी प्रतिक्रिया की थी, 'बैटा, इस स्वार्थी संसार में निस्वार्थ प्रेम तो कोई विरला ही कर सकता है।' और वह मन ही मन सोच रही थी कि एक ऐसा ही विरला आज कम हो गया है, दुनिया में।

—एन.आर.ई.सी. कालिज, खुर्जा,उ.प्र.

## प्रखर पत्रकारिता के प्रतीक

नंगे सिर, धोती और कमीज पहने; दुबले-पतले परंतु सतेज और सुदर्शन व्यक्तित्व के स्वामी गणेश शंकर विद्यार्थी अत्यंत सौम्य थे। कानपुर से उन दिनों अपनी पूरी आन-बान के साथ निकलता था 'प्रताप'। स्वर्गीय विद्यार्थीजी इस पत्र के संपादक थे।

देश की आन-बान पर मर मिटनेवाला यह कर्मवीर भारतीय जीवन दर्शन का साकार रूप था।ल

उनके विषय में राष्ट्रकवि मैथिली शरण गुप्त के ये उद्‌गार थे — यद्यपि उनके पास धन नहीं था परंतु मन ऐसा था जैसा होना चाहिए । प्रताप पुस्तकालय से यदि कुछ आय होती तो वह उसी की उद्देश्य की सिद्धि में व्यय हो जाती थी। मेरा विश्वास है कि यदि व्यवसाय बुद्धि से काम क़िया जाता तो आज 'प्रताप' अपने भवन में होता और उसका एक विशेष वैभव भी होता। वे लोग व्यवसायी नहीं थे किन्तु अपने मिशन के मिशनरी थे। उनके स्वभाव में एक फक्कड़पन था, और उसी में वे मगन थे। धन साधन न होने पर भी कभी गणेशजी का साध्य नहीं हुआ। इसके लिए उन्होंने मन के प्रतिकूल कोई काम नहीं किया। धन की अपेक्षा जन का ही उनके निकट मूल्य था जो भगवान ने उसकी उनके लिए कभी कमी नहीं पड़ने दी। जनता उन पर रीझी हुई थी। इस संबंध में भी मैथिली शरण गुप्त ने एक घटना का वर्णन किया था।

एक बार एक कर्मचारी ने प्रताप की एक रकम अपने आपके काम में उठा दी, पीछे यह बात खुल गयी। गुप्तजी ने गणेशजी से कहा -इस संबंध में तुमने क्या निश्चय किया? बोले, भाई। मनुष्य आवश्यकताओं के अधीन है। काम तो बुरा हुआ, इसमें संदेह नहीं, परंतु हमें कुछ सहानुभूति से विचार करना चाहिए, मनुष्य को अवसर देना उचित है। कभी कभी क्षमा करना भी बड़ा दंड है। दंड सुधार के लिए है, प्रतिशोध के लिए नहीं, इसीलिए मैंने उसे अलग नहीं किया, और कह दिया कि अपने वेतन से थोड़ी थोड़ी करके 'प्रताप' की रकम पूरी कर देना।

तो ऐसे थे हमारे गणेश शंकरजी विद्यार्थी

— अरुण नागर

५३, कालीकुंज उरई—२८५००१, उ.प्र.

# विविधा

❑. संकलन: दिगंबर स्वादिया

## दिल की बातें

कमजोर दिल को ताकत देने के लिए अब तक नये कृत्रिम हृदय का प्रत्यारोपण किया जाता था। किंतु अब अमरीका के पेनसिलवानिया के पिट्सबर्ग के अलेघेजी जनरल अस्पताल के डॉक्टर रोगी के ही स्नायु से दिल में रक्ताभिसरण करने की कोशिश कर रहे हैं। इस पद्धति को कार्डीयो मायोप्लास्टी के नाम से जाना जाता है। इसमें सर्जन मरीज की पीठ में से एक स्नायु को अलग करके, पसली के बीच में से उसे दिल के दाहिने हिस्से तक धकेल कर उधर उसे चिपका देते हैं। अब तक तीस मरीजों के ऊपर यह प्रयोग किया जा चुका है, जिसमें से अस्सी प्रतिशत लोगों को इससे लाभ पहुंचा है।

* * *

## 'केयर' माने क्या?

युद्धग्रस्त यूरोप में राहत कार्य करनेवाले २२ अमरीकी संगठनों ने अपने कामकाज का आकलन करने के उद्देश्य से सन् १९४५ में 'द-को आपरेटिव फार अमरीकन रिलीफ टू एवरीव्हेयर' के नाम से एक संस्था की स्थापना की। अंग्रेजी प्रथमाक्षरों को जोड़कर उसका संक्षिप्त नाम 'केयर' दिया गया। आज यह संस्था विश्व की सबसे बड़ी बिना राजकीय, सेवाभावी संस्था के रूप मे उभरकर आयी है तथा ३५ देशों में उसके द्वारा राहत कार्य चल रहे हैं। हमारे देश में भी पिछले चालीस सालों से वह संस्था कार्यरत है।

हमारे यहां यह संस्था कृषि-विषयक और मातृ तथा बाल कल्याण से संबंधित सहकारी और गैर-सहकारी कार्यक्रमों में अपना योगदान दे रही है।

भारत में संगठन के प्रतिनिधि श्री रोनाल्ड बरकर्ड का कहना है कि हमारी संस्था को सहायता की आवश्यकता ही न हो, ऐसे विश्व का निर्माण करना हमारा सपना है। अब तो अन्य दस देश भी उसे अपना समर्थन दे रहे हैं। इसलिए संगठन अब 'केयर इंटरनेशनल' के नाम से जाना जाता है।

* * *

## मूलजी जेठा मार्केट

बंबई निवासियों के लिए यह कोई नया नाम नहीं। यह एशिया की सबसे बड़ी कपड़े की थोक मंडी है। यह १०९ साल पुरानी है। उन्नीसवीं सदी में मूलजी जेठा नाम के एक व्यापारी के परिवार ने इसे बनवाया था। लगभग पंद्रह हजार वर्ग मीटर क्षेत्र में फैले हुए इस बाजार में चार हजार व्यापारी अपना कारोबार करते रहते हैं। उनकी वार्षिक आय तीन हजार से साढ़े तीन हजार करोड़ मानी जाती है। बाजार में माल के स्थानांतरण के लिए सात हजार परिवहन ठेकेदार, कमीशन एजेंट एवं मजदूरों आदि का सहयोग प्राप्त है। आजकल इस स्थान में प्रति वर्ग फुट का दाम पांच हजार से कम नहीं है।

* * *

## सच है क्या यह?

आजकल हम अपने नाम, पते, टेलिफोन नंबर आदि छपे हुए कार्ड का इस्तेमाल करके लेन-देन करते हैं। किंतु अब जापान में तो इस्पात, रबर और सोने के कार्ड भी बनने लगे हैं। इस्पात के बने हुए २०० पतले कार्ड २४० डालर में बिक जाते हैं। जबकि रबर के कार्ड का मूल्य घटता-बढ़ता रहता है। सोने के एक कार्ड का मूल्य ४२ डॉलर है।

आप जापान जायेंगे तो आप के दोस्त शायद इसी कार्ड को सौगात के रूप में आपको देंगे।

* * *

## खतरनाक पान मसाला

अहमदाबाद, दिल्ली, हैदराबाद और चंडीगढ़ के अनुसंधान संस्थाओं ने सर्वेक्षण करके यह बताया है कि पान मसाले में जिन पदार्थों का उपयोग होता है, इससे मुंह का कैंसर होने का खतरा बढ़ जाता है।

* * *

## चूईंग गम का इतिहास

चूईंग गम का असली नाम है पोलिचिनाइल एकटेट। मैस्किको के जंगल में पाये जाने वाले सैपोडिला नाम के वृक्ष में से उसका जन्म होता है। उसका रस एंतोनियो लोपेज नाम का एक व्यापारी न्यूयॉर्क ले गया। वह उसका प्रयोग रबर के विकल्प के रूप में करना चाहता था। पर आज हम उसे अपने मुंह में चबाकर चूसा करते हैं।

कविवर नरेंद्र शर्मा की स्मृति में

# अब मिलोगे तुम कहाँ

❑ डॉ. राजशेखर शर्मा

प्रणय, प्रकृति और मानवता के चारु चितेरे स्व. कविवर पं. नरेन्द्र शर्मा से मेरा बहुत नज़दीकी नाता था। उन्होंने अपनी भतीजी श्रीमती गायत्री शर्मा का विवाह सन १९६४ में पिताश्री डॉ. शिवशंकर शर्मा 'राकेश' के साथ सम्पन्न किया। अतः वह मेरे नानाजी थे।

एक ममतामयी द्वितीया माता के आगमन के समय, मैं छोटी क्लास का विद्यार्थी था। आये दिन माताश्री गायत्री से उनके कुछ-न-कुछ संस्मरण सुनता रहता, क्योंकि वे नरेन्द्रजी की स्नेहल छाया में लगभग १५ वर्ष तक बम्बई में रहीं। वासवी, लावण्या और बान्धवी नरेन्द्रजी की तीन सुपुत्रियां व परितोष एक सुपुत्र है। लेकिन जिस तरह से उन्होंने अपनी भतीजी का लालन पालन और विवाह किया, शायद ही कोई दूसरा कर सकता है।

शर्माजी पंडित जवाहरलाल नेहरू के प्रिय विश्वासपात्र थे। अतः कुछ वर्षों तक वे नेहरूजी के निजी सचिव रहे। तत्कालीन केंद्रीय सूचना एवं प्रसारण मंत्री बी.बी.केसकर ने नरेंद्रजी को 'आकाशवाणी' में सम्मानित पद पर नियुक्त किया। नरेंद्रजी ही 'विविध भारती' के लोकप्रिय कार्यक्रम के सूत्रधार थे। इस रूप में अनेक वर्षों तक वे आकाशवाणी के माध्यम से हिन्दी भाषा और साहित्य की अनवरत प्रशंसनीय सेवा करते रहे।

वैसे तो उनके प्रायः सभी से सामान्यतः मधुर संबंध रहे। लेकिन उनका विशेष आत्मीय संबंध महाकवि श्री सुमित्रानंदन पंत से रहा। सर्व श्री अमृतलाल नागर, भगवतीचरण वर्मा और हरिवंशराय बच्चन से भी उनके अंतरंग संबंध रहे। किन्तु पंतजी नरेंद्रजी के पितृतुल्य समादरणीय थे। कवयित्री महादेवी वर्मा उन्हें अनुज रूप में सदा अजस्र स्नेह देती रहीं।

नरेंद्रजी से वियुक्त होकर हिन्दी-प्रेमियों को उनकी 'आज के बिछुड़े न जाने कब मिलेंगे?' गीत पंक्ति की सार्थकता आज अधिक टीसती है।

पंडितजी की काव्य-प्रतिभा से प्रभावित होकर बॉम्बे टाकीज़ और अपने युग की सुप्रसिद्ध चलचित्र-तारिका देविका रानी ने श्री भगवतीचरण वर्मा से इन्हें बंबई बुलाने

के लिए आग्रह किया तथा अपनी फिल्मों में गीत लिखने का भी प्रस्ताव किया। तब से उन्होंने अनेक फिल्मों में अनेक लोकप्रिय गीत लिखे। 'तुम आशा, विश्वास हमारे राम' (सुबह) 'भँवरे ने खिलाया फूल' (प्रेमरोग) जैसे मधुर गीत लोक-कण्ठ में बस गये। जनमानस पर उनकी छाप अमिट है। 'भाभी की चूड़ियाँ' फिल्म का 'ज्योति कलश छलके' गीत राष्ट्रपति द्वारा पुरस्कृत भी हुआ। फ़िल्मी दुनिया की महान हस्ती स्व. राज कपूर ने 'यशोमति मैया से बोले नंदलाला' तथा 'सत्यं शिवं सुन्दरं' गीतों की लोकप्रियता पर उन्हें 'गोल्डन डिस्क' प्रदान करके सम्मानित किया।

सन १९७१ में पाकिस्तान और बंगला देश के युद्ध के समय लिखा हुआ गीत- 'जो समर में हो गये अमर, मैं उनकी याद में ...' उनके राष्ट्रप्रेम का द्योतक है।

१९८२ में दिल्ली में आयोजित एशियाई खेलों का उद्घाटन गीत 'अथ स्वागतम् शुभ मंगलम्' लिखकर शर्माजी ने भारत की गौरवमयी झाँकी को प्रस्तुत किया।

स्वर-साम्राज्ञी लता मंगेशकर ने पूज्य पंडितजी को पितृतुल्य ही माना। उनके 'ज्योति कलश' अभिनंदन ग्रंथ में प्रकाशित लताजी का लेख इसका साक्षी है। श्रेष्ठ अभिनेता दिलीपकुमार ने सदैव उन्हें 'भैया' कहकर ही संबोधित किया।

पंडितजी की सोलह काव्य-कृतियाँ हैं। उन पर लगभग डेढ़ दर्जन शोध प्रबंध लिखे जा चुके हैं। उनकी ज्योतिष और आयुर्वेद भी विशेष रुचि रही।

सन १९७४ में अलीगढ़ मुस्लि विश्वविद्यालय से एक एज्यूकेशनल टूअ बंबई गया था। तब कुछ घंटों के लिए मु उनके दर्शन करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ पंडित बहुत सादगी पसंद थे। बंबइ चमक-दमक उन्हें कभी रुचिकर न थी खार कॉलोनी के १९ वें रास्ते पर स्थि उनका साधारण-सा मकान उनकी साद का ही द्योतक है। वे धोती कुर्ता और प्रा जाकेट ही पहना करते थे। पान का ही उन् शौक था, वह उनके बहुत मुंह लगा था। जिस दिन गया था, उस दिन भी वे पान लेने गये थे। लौटने पर सबसे पहले उन्हों मेरे पितामह, पिता और माताश्री के विष में पूछा। तदुपरांत मेरे बंबई आने का मंतव जाना। कुछ देर मौन रहने के बाद मैं उन के साथ ड्राइंगरूम में चला गया। जो उनव कृतियों के अलावा अनेक महान कवि विचारकों, आयुर्वेद और ज्योतिष आदि ग्रथों की गौवरगंध में बसा था। वहीं बैठकर बहुत नपी-तुली भाषा और पै आवाज़ में उन्होंने अन्य सभी का कुश क्षेम पूछा।

थोड़ी देर बाद हम सभी खाने के लि बैठ गये। खाना शुरू ही किया था कि पी से श्रीमती देविका रानी की मधुर आवा सुनायी दी, 'खाना मैं भी खाऊँगी।' खाने की मेज पर उन्होंने मेरा उनसे परि

कराया। भोजन करने पर मैंने नरेंद्रजी के चरण-स्पर्श करके उनसे आशीर्वाद लिया और अपनी राह ली।

उनका वह परम सात्त्विक, मधुर और सौम्य स्वरूप अभी तक भुलाये नहीं भूलता। वह आज की इस मुल्लमेबाज़ दुनिया से कोसों दूर थे। उन्होंने कभी भी, किसी भी, मान-सम्मान और यश-लिप्सा के लिए दौड़-धूप नहीं की। सदैव स्वांतः सुखाय ही कवि-कर्म का धर्म अंत तक निभाया।

पंडितजी के अनेक गीत और ऐसी कविताएं हैं, जिनमें उनके देशप्रेम का भाव उजागर हुआ है। जब कभी कोई उनके सामने विदेश की विशेष प्रशंसा स्वदेश की तुलना में करता, तो वे कहते कि फिर यहां क्यों पड़े हो, वहां क्यों नहीं चले जाते?

वर्षों से अपने अंतर्मन में छिपाये हुए भाव को अचानक ११ फरवरी १९८९ को उन्होंने सत्य में परिणत कर दिखाया- 'ढल गया दिन, शेष होगा, एक दिन जीवन।'

टी.वी. के 'महाभारत' सीरियल के कारण भी नरेंद्रजी अविस्मरणीय रहेंगे। उन्होंने 'महाभारत' के जटिल कथानक को अपने सत्परामर्श से बोधगम्य और आकर्षक बनाकर उसे गीति-मधुर भी बना दिया। उनके शब्दों की उद्घोषणा और शीर्षक गीत तथा दोहे (३६ एपीसोड तक) फ़िल्म-जगत की स्थायी निधि बन गये। काश! वे इस सीरियल का समापन कर पाते। ऐसे रससिद्ध कवि-गीतकार तो यशःकाय में ही सजीव रहते हैं। भारतीय दर्शन उनके व्यावहारिक जीवन में चरितार्थ हुआ और काव्यसाधना अक्षर हो गयी है महाकाल के पृष्ठ पर।

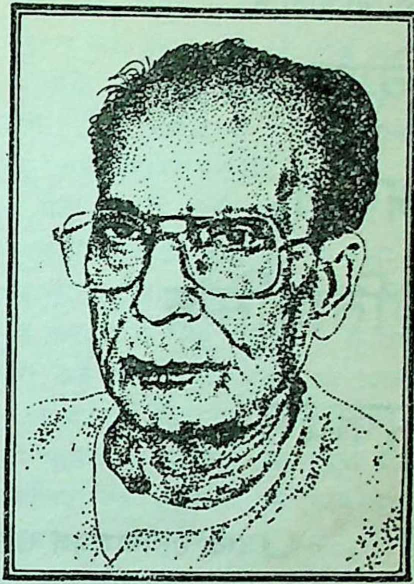

स्व. पंडित नरेंद्र शर्मा

**– राजकीय महाविद्यालय,**
**नगीना-१२२१०८,**
**गुड़गाँव (हरीयाणा)**

खेत खलिहान में रेडियो पर चुनाव परिणाम सुनते हुए एक देहाती महिला ने दूसरी से पूछा, 'लीडर क्या होता है?' जवाब मिला – 'दूसरों के खेत में अपने बीज डालकर फसल उगाने वाला।'

**कमल सौगानी**

**ऐसा भी होता है**

# विश्व का अकेला ऐतिहासिक मुकदमा

**☐ रन्दी सत्यनारायण राव**

औन्टरियो स्थित प्रीवी कौंसिल (न्यायालय) द्वारा आज १८ दिसंबर १९३२ को कोई फैसला सुनाया जाना था। विश्व के समस्त बुद्धिजीवी सांस रोके इस दिन की प्रतीक्षा में पलक पांवड़े बिछाये हुए थे। इसका महत्व इसलिए भी अधिक था कि उपरोक़्त मुकदमे में (जो १३ साल से चल रहा था) दो महान इतिहासकारों के बीच प्रतिष्ठा की लड़ाई लड़ी जा रही थी। कदाचित यही कारण था कि विश्व के समस्त बुद्धिजीवी चिंतित थे।

वे मन ही मन ईश्वर से प्रार्थना कर रहे थे कि हे ईश्वर ऐसा कोई चमत्कार दिखा, जिससे सांप भी मर जाये और लाठी भी न टूटे वाली बात चरितार्थ हो जाये... अंततः वह क्षण आ ही गया जब प्रीवी कौंसिल ने बहुमत से यह निर्णय दिया...।

'चूंकि शोध-ग्रंथ (विश्व इतिहास में नारी की भूमिका) की चोरी के इस ऐतिहासिक मुकदमे में प्रयुक्त गवाहों व तथ्यों के आधार पर न्यायालय कनाडा जो उस समय ब्रिटेन के अधीन था, की सुप्रसिद्ध उपन्यास व शोध-ग्रंथ लेखिका फ्लारेंस डीक्स के इस दावे को अस्वीकारती है कि उनकी रचना 'दी वेच' को ब्रिटिश उपन्यासकार श्री एच.जी. वेल्स ने चुराया है... यद्यपि इसके पूर्व दो न्यायालयों ने उपरोक्त दावे को अमान्य कर दिया था... बजाय इसके कि 'प्रीवी कौंसिल' उक्त तथ्य को अपने जेहन में रखता ... किन्तु..., ऐसा कर वह प्रत्येक स्थिति में न्याय के विरुद्ध कार्य करता। अतः यह आवश्यक समझा गया कि इस ऐतिहासिक विवाद के मुकदमे में दावेदार को उचित न्याय प्राप्त हो, इसी हेतु दावेदार की अर्जी पर सहानुभूतिपूर्वक विचार किया गया, किन्तु... अपने दावे की पुष्टि हेतु डीक्स यथेष्ट प्रमाण प्रस्तुत करने में असमर्थ रहीं। अतः न्यायालय उनके दावे को खारिज करती है और उन्हें आदेश देती है कि वे हर्जाने के रूप में इस मुकदमे के दौरान हुए खर्च का भुगतान करें। श्री वेल्स को हर्जाना लेने का अधिकार है।'

न्यायालय ने अपने फैसले में आगे कहा— 'यद्यपि फ्लारेंस डीक्स के शोध-ग्रंथ की भांति उसी समय एच.जी.वेल्स ने भी एक ग्रंथ की रचना कर उसे प्रकाशित किया था, जिसे मैकमिलन प्रकाशन संस्था ने प्रकाशित किया तथापि वेल्स की रचना 'विश्व का इतिहास' में कई बातें ज्यों की त्यों डीक्स की रचना में से उठायी गयी लगती हैं, किंतु इसे मात्र संयोग ही कहा जा सकता है। यह कार्य ग्रंथ की चोरी में शुमार नहीं किया जा सकता... इसके अतिरिक्त चूंकि दोनों के ग्रंथ मूलतः एक ही विषय से संबंधित हैं, अंतः ऐसा प्रतीत होता है कि इन दोनों ने तथ्य व आंकड़े विभिन्न स्रोतों से प्राप्त किये, बहुत संभव है कि दोनों ने एक ही स्रोत से आंकड़े प्राप्त किये हों ... जो आगे चल कर विवाद का कारण बना। उस स्थिति में डीक्स का उपरोक्त दावा निराधार सिद्ध हो जाता है।'

### विवाद क्यों और कैसे?

यद्यपि उपरोक्त निर्णय से विश्व के बुद्धिजीवी वर्ग को प्रसन्नता हुई, किंतु फ्लारेंस डीक्स बिचारी मन मसोस कर रह गयी। कहने वाले यहां तक कहते हैं कि दुःख व क्लेश से उसने आत्महत्या करने की सोची थी। बहरहाल जो हो, डीक्स के लिए यह ऐतिहासिक मुकदमा न केवल भारी पड़ा, बल्कि इसके लिए उसने अपने यौवन के तेरह वर्ष जी तोड़ मेहनत कर, अपने दावे को सिद्ध करने के पीछे खर्च कर दिये। आप सोचते होंगे... कैसी बावरी थी वह..? जनाब, वह पागल (बावरी) न थी।

यदि बावरी होती तो वह अपना मुक़दमा आप ही कैसे लड़ती भला... यह जानकर आप चौंक गये न.. जी हां.. वह कनाडा के श्रेष्ठ वकीलों में से एक थी। उसे अपनी भावनाओं को व्यक्त करने व उन्हें लिखकर प्रकाशित करने का पागलपन की हद तक शौक था। इसलिए वह वकालत के साथ-साथ लिखने भी लगी। जब-जब उसकी कोई रचना छपती, वह प्रत्येक परिचित को उसे दिखाती फिरती और फूली नहीं समाती थी। कनाडा में वह बहुत शीघ्र लोकप्रिय हो गयी। आप जानते ही हैं कि लोकप्रियता का नशा सर चढ़कर बोलता है। परिणाम स्वरुप फ्लारेंस डीक्स वकील से लेखिक़ा बन गयी। वह अपने शोध-ग्रंथ व उपन्यास की पाण्डुलिपियां कनाडा स्थित मैकमिलन की शाखा को सौंप देती.. और एक-दो माह के पश्चात उसकी रचना प्रकाशित होकर बाजार में आ जाती। इसी भांति डीक्स की कई पुस्तकें इसी संस्था ने प्रकाशित कीं।

सन १९१८ के अगस्त माह के किसी दिन डीक्स ने 'दी वेच' नामक शोध-ग्रंथ को लिखकर पूरा किया। 'दी वेच' को

उसने पूर्व की भांति कनाडा स्थित मैकमिलन की शाखा को प्रकाशनार्थ सुपुर्द किया। शाखा–संचालक की ओर से जब नौ माह के पश्चात् भी उसकी स्वीकृति अथवा अस्वीकृति की सूचना प्राप्त नहीं हुई तो डीक्स का माथा ठनका...। वह इसकी पूछताछ हेतु जब शाखा पहुंची, तो यह देखकर दंग रह गयी जब उसने देखा, ब्रिटिश लेखक एच.जी.वेल्स की पुस्तक छपकर बाजार में बिक रही है और उसमें उद्धृत सारी की सारी बातें उसके ग्रंथ से ली गयी हैं.... तात्पर्य यह कि ग्रंथ उसी का, भाषा वेल्स की... उसके सारे तथ्य व आंकड़े वेल्स लिखित इस पुस्तक में देखे जा सकते थे। डीक्स को सर्वप्रथम यह सब स्वप्न सा प्रतीत हुआ... किंतु उस पर शीघ्र ही वास्तविकता प्रकट हो गयी, उसे लगा जैसे उसके साथ धोखा किया गया है। बस फिर क्या था उसके वकालती दिमाग ने जोर मारा, जिसका परिणाम स्वयं उसके लिए खतरनाक प्रमाणित हुआ।

फ्लारेंस डीक्स ने अपने दावे के समर्थन में कई प्रमाण प्रस्तुत किये जिसके आधार पर आगे की कार्यवाही बदस्तूर जारी रही। इसी मध्य विश्व के कई समाचार-पत्रों ने उसके दावे को नमक मिर्च लगाकर प्रकाशित किया, जिससे उसे अंतर्राष्ट्रीय महत्व प्राप्त कर गया। प्रत्येक की जुबान पर डीक्स के लिए शुभ कामनाएं थीं। किंतु होनी को कौन टाल सकता था... डीक्स अपने इस अंतिम प्रयास में भी असफल रही।

१३ वर्ष तक चलने वाला यह मुकदमा वेल्स के पक्ष में जाकर दम तोड़ गया। किंतु इसकी विशेषतः यह रही कि यह अंतिम क्षणों तक जिज्ञासापूर्ण व रोमांचपूर्ण रहा।

अब जब उपरोक्त ऐतिहासिक मुकदमे के पात्र नहीं रहे, इस कारण वस्तुस्थिति से परिचित होना संभव नहीं। किन्तु इसके स्मरण मात्र से मुझे उस महान डीक्स के प्रति नतमस्तक होने को विवश हो जाना पड़ता है, जिसने साहस का अभूतपूर्व प्रदर्शन किया। सबकी सहानुभूति अर्जित कर ली। उसके साथ ही ऐसा लगता रहा है कि फ्लारेंस डीक्स के साथ वास्तव में ही अन्याय हुआ। कदाचित यही कारण था कि विवश होकर उसने न्यायालयों के दरवाजे खटखटाये, पर यहां से भी वह न्याय न पा सकी। जो हो, विश्व इतिहास में ऐसे उदाहरण शायद ही कभी मिलें कि न्याय पाने के लिए एक महान लेखिका ने अपने जीवन के बहुमूल्य १३ वर्षों को होम कर दिया हो और बदले में पुरस्कार स्वरूप उसे मिला दुःख, क्लेश व मौत।

**– एल–३/९, तिरना रोड,**
**साकची, जमशेदपुर–८३१००१**

❑

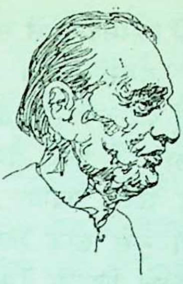

एक निराली हस्ती

# आचार्य कृपलानी

❑ पी. डी. टण्डन

गांधी युग में दो बड़ी जबर्दस्त हस्तियां हुई एक़ आचार्य जे.बी.कृपलानी और दूसरी राजगोपालाचार्य। दोनों अत्यंत बुद्धिमान और मौलिक व्यक्ति थे। क़ृपलानी कटाक्ष करने में कभी चूकते नहीं थे। राजाजी बाल की ख़ाल निकालने में बड़े उस्ताद थे। कृपलानी कांग्रेस के महामंत्री १२ वर्ष तक रहे और स्वराज्य भवन, इलाहाबाद में उनका घर था। वह गांधीजी के नजदीकी साथी थे। हम तो जब उनसे पहली बार ही मिले तभी उनकी प्रखर बुद्धि का जादू हमारे उपर हावी हो गया। उनकी क़ड़वी जुबान, तानाकसी और कटाक्ष न जाने क्यों हमें बेहद पसंद आये।

१९३७ में एक शाम को हम स्व. प्रोफेसर भवानी शंकर के घर गये। वह हमारे स्थानीय अभिभावक थे, जब हम प्रयाग विश्वविद्यालय में पढ़ते थे। वह बड़े तहजीब वाले लंबे तड़ंगे, हसीन और शानदार इंसान थे। जो उनसे मिलता वह उनसे प्रभावित होता था।

उस दिन शाम को हम जब वहां पहुंचे तो एक दुबला पतला असाधारण व्यक्ति सोफे में लेटा धड़ाधड़ सिगरेट पी रहा था। बाद में पता चला कि वह महान गांधीवादी कृपलानी थे। उनके पास उनकी पत्नी सुचेता भी बैठी थीं जो कोई खास सुंदर तो नहीं थीं लेकिन उनमें एक़ विचित्र आकर्षण था। हम लोग उन्हें बाद में अक्सर ग्रामसुंदरी कहते थे। कृपलानी खूब मज़ाक कर रहे थे और हंस रहे थे। बातचीत के दौरान किसी ने गांधीजी की निंदा कर दी और वामपंथियों की प्रशंसा की। इतना कहना था कि वह तमक उठे। ऐसा मालूम हुआ कि किसी सांप ने अपना फन उठा लिया। उन्होंने गांधीजी की बड़ी योग्यता से वकालत की और सब लोग सुनकर दंग रह गये। उन्होंने आवाज़ उठाकर कहा, 'जो लोग गांधी से भिड़ते हैं वह हवा से लड़ाई करते हैं, जहां गांधी हैं ही नहीं। ये वामपंथी लोग सदैव आपस में लड़ते रहेंगे और अपने आपको तबाह कर लेंगे।' उनकी बात बाद में सही ही

निकली।

कुछ दिनों बाद हम कृपलानी के अनन्य भक्त हो गये और उन्होंने हमें अपनाया। मैंने ही पहली बार उन पर एक किताब निकाली और दर्जनों अखबारों में वर्षों तक उनके बारे में लिखा। उनके प्रशंसक, रिश्तेदार और दोस्त उन्हें दादा कहकर संबोधित करते थे। हम स्वराज्य भवन अक्सर जाते और घंटों उनके साथ रहते थे। उस जमाने में हमारा घर स्वराज्य भवन के बिलकुल सामने था। वह भी हमारे घर अक्सर आ जाते और हमारे साथ रूखा–सूखा खा लेते थे। जब वह हमारे मकान में आते तब हम बहुत खुश होते और अपने आप को गौरवांवित समझते थे। हमारी दोस्ती बढ़ती गयी। एक बार उन्होंने मुझे अपना बहुत नज़दीकी साथी बताया। उन्होंने २५ सितम्बर १९५१ को मुझे एक पत्र में लिखा 'मेरे संपर्क से किसी का फायदा नहीं हुआ। कुछ स्वार्थी लोगों ने मेरे नाम से कुछ लाभ जरूर उठाया। तुम्हें तो मेरे संपर्क से कोई फायदा नहीं हुआ। इसलिए तुम जहां थे वहीं रह गये। मैं सोचता हूं कि तुम इस बात से चिंतित नहीं हो। मनुष्य की किस्मत सबसे बड़ी होती है और जो होना होता वही होता है। जहां तक मेरा संबंध है मैंने इस देश को बनाया नहीं, न मैं इसकी खुशहाली के लिए जिम्मेदार हूं। मैं केवल अपने आचरण कीं जिम्मेदारी ले सकता हूं और वह सदैव सम्मानजनक रहेगा। मुझे किसी वस्तु की जरूरत नहीं। मैं दुनिया से चले जाने के लिए तैयार बैठा हूं। जिन्हें मैंने सबसे ज़्यादा प्यार किया, उन्होंने भी मुझे छोड़ दिया। कुछ ही दोस्त रह गये जिनके प्रेम के लिए मैं बड़ा आभारी हूं। उनमें से तुम एक हो।'

सुचेता और दादा दोनों हमें बहुत चाहते थे और हर तरह से हमारी मदद करने को तैयार रहते थे। भगवान की कृपा से मुझे कभी भी उनसे आर्थिक सहायता लेने की जरूरत नहीं पड़ी। हमारे उनके संबंधों का यह सबसे सुंदर पहलू था। और हम इससे बहुत खुश थे। ये दोनों हमारे पारिवारिक मामलों के बारे में भी चिंतित रहते थे। जब हमारे अकेले बेटे राजेंद्रकुमार की शादी होने वाली थी, दादा ने हमें इस सिलसिले में कई खत लिखे और मुफीद सलाह भी दी। एक पत्र में उन्होंने लिखा, 'मैं सोचता हूं कि तुम्हारी पत्नी लड़के की शादी की तैयारी में जुटी होंगी। उनके हाथों में न खेलना और ज़्यादा रस्म-रिवाज़ के फन्दे में न पड़ना। निहायत सादगी से शादी करना, पर सबसे अच्छी तो सिविल मैरेज होगी। चाहे कैसे भी शादी करो बहुत खर्चा मत करना। अपनी पत्नी से कह देना कि शादी के पहले बहू के कपड़े न खरीदें।

जब बहू आ जायेगी तो खुद चुनकर खरीद लेगी। बिला जरूरत जेवर भी न बनवाना... तुम सबको दादा का प्यार।'

कृपलानी ने फिर एक दूसरे पत्र में मुझसे पूछा, 'तुम्हारे लड़के की शादी कब होगी? तुम उसकी तैयारी में लगे होगे। अगर तुम नहीं तो तुम्हारी पत्नी इस काम में जुटी होंगी। बिना किसी धूम-धड़क्के के शादी करना। अपनी पत्नी से तुम कह देना कि यह मेरी सलाह है। आजकल के जमाने में मामूली तरीक़े से शादी करना अच्छा समझा जाता है। अगर तुम्हें इलाहाबाद के बाहर कहीं बारात ले जाना हो तो थोड़े ही आदमी ले जाना। अपने बड़े परिवार के सब लोगों को न बुलाना। मुझे यकीन है कि दहेज वगैरह का कोई सवाल नहीं होगा। तुम यह कह सकते हो यह शादी आजकल के विचारों के अनुकूल हो रही है। ज्यादा दावतों वगैरह का सिलसिला न लगाना।'

जब शादी हो गयी तो कृपलानी ने जो मेरे लड़के और बहू को सलाह दी वह बहुत दिलचस्प और फ़ायदेमंद है। उन्होंने मुझे लिखा, 'तुम्हें और तुम्हारी पत्नी को इस शुभ अवसर पर बधाई। नव-दंपति को मेरी शुभकामनाएं। भगवान करे वह सुखी रहें और खुशी से जिंदगी गुजारें और एक दूसरे को प्यार करें। नवयुवक को मेरी तरफ से बता देना कि शादी के बाद घर में शांति रखने का तरीका यह है कि जो पत्नी कहे उसे एकदम मान ले। जब लड़की कोई नयी साड़ी पहने या अपना शृंगार करे तो उसकी तारीफ करनी चाहिए। जब वह खाना बनाये तो उसके बनाये हुए खाने की प्रशंसा करनी चाहिए। जब जब मौका हो तो उसे भेंट देना चाहिए। शादी का जीवन इस तरीके से अच्छी तरह गुजर सकता है। मैं आदमी हूं इसलिए बहू को तो कुछ सलाह दे नहीं सकता। उसे तो सलाह सुचेता दे सकती थी, मगर वह आजकल यहां नहीं है। मैं एक दो शब्द फिर भी कहना चाहता हूं। यदि लड़की को कभी यह महसूस हो कि उसके पति किसी दूसरी लड़की से भी प्रेमपूर्वक बात करते हैं तो उसे यह नहीं सोचना चाहिए कि उसे वह प्यार नहीं करता। उसे इन बातों की ओर ध्यान नहीं देना चाहिए। यदि वह ऐसा करती है तो वह अपने आपको अत्यंत दुखी करेगी और ऐसी परिस्थिति ले आयेगी जिसे वह नहीं चाहती। तुम सबको दादा का प्यार।'

कृपलानी के साथ मैंने काफी साल खुशी से गुजारे और उनकी बुद्धिमत्ता और विनोदप्रियता मुझे बहुत पसंद थी। वह अंगरेज़ी के एक बड़े ज़ोरदार वक्ता थे। उन्होंने १९४० का एक बड़ा दिलचस्प किस्सा सुनाया जब सरदार

पटेल और उन्होंने विद्यार्थियों की एक बड़ी सभा को कराची में संबोधित किया था। सरदार ने हिन्दी में तकरीर की और कुछ मामलों में विद्यार्थियों को उनकी राय पसंद नहीं थी। उन्होंने शोर-शराबा किया। सरदार का बोलना मुश्किल हो गया। कृपलानी को इस बात पर दुःख हुआ। सरदार के भाषण खतम होने के बाद उन्होंने अपना भाषण अंगरेजी में दिया और वही बातें कहीं जो सरदार ने कहीं थीं। उन्होंने लड़कों को उनके रवैये पर बड़ी लताड़ लगाई, मगर वह चुपचाप ध्यान से उन्हें सुनते रहे। हमने कृपलानी से पूछा, 'विद्यार्थियों ने आपके भाषण में बाधा क्यों नहीं डाली?' उन्होंने उत्तर दिया, 'अंगरेजी भाषा का विद्यार्थियों पर इतना रोब गालिब है कि जब उन्हें जोरदार अंगरेज़ी में डाटा फटकारा भी जाय तब भी वे पसंद करते हैं और ध्यान से सुनते हैं।'

एक बार कृपलानी इलाहाबाद युनिवर्सिटी के लार्जलेक्चर थियेटर में एक बड़ी सभा को संबोधित कर रहे थे और लोग बड़े ध्यान से उन्हें सुन रहे थे। उस दिन कृपलानी बड़े जोरों में थे। कुछ समझाते समय उन्होंने कहा कि मां अपने बच्चे को आठ महीने तक अपने पेट में रखती है और उसके बाद वह पैदा होता है। पीछे बैठा एक उद्दण्ड विद्यार्थी बीच में बोल उठा- 'आठ महीने नहीं नौ महीने।' यह सुनते ही लोग कहकहा मार कर हंस पड़े और ऐसा प्रतीत हुआ कि कृपलानी की विचारधारा टूट गयी। वह चुपचाप खड़े रहे। जब लोगों ने हंसना बंद किया तब उन्होंने धीरे से कहा, 'इस छोटी उमर में यह लड़का इन बातों के बारे में मुझसे कहीं ज़्यादा जानता है।' इस जुमले को सुनकर लोग धाड़ मार कर हंसने लगे। वह लड़का इतना सटपटा गया कि फौरन मीटिंग छोड़कर चला गया और लोगों ने खूब तालियां बजायीं।

एक बात उन्होंने इलाहाबाद युनिवर्सिटी के म्योर हास्टल में जो सन १९३६ में कही थी, वह मुझे अभी तक याद है। वह अपने भाषण में कांग्रेस कार्यकारिणी के कुछ प्रस्तावों की चर्चा कर रहे थे। उनके भाषण के बीच एक तेज तर्रार लड़का खड़ा हो गया और उसने कहा, 'आचार्यजी, कांग्रेस कार्यकारिणी के सदस्यों ने अपना दिमाग महात्मा गांधी के पास गिरो रख दिया है। जो कुछ गांधीजी कहते उस पर कार्यकारिणी के सदस्य सदैव 'हां' कहकर अपनी मोहर लगाते।' कृपलानी ने जब यह सुना तो वह बिलकुल नाराज़ नहीं हुए। बड़ी नम्रता से उन्होंने बताया, 'यदि कभी कोई सच बात कही गयी है तो आज इस समय यहां कही गयी। यह सत्य है कि हम लोगों ने अपना दिमाग

महात्माजी को गिरो रख दिया हैं लेकिन हम करें क्या, जब वह महान मेधावी हैं और हम लोग हैं नहीं। हम क्या करें जब वह हमेशा सही ही निकलते और हम लोग सदैव ग़लत साबित होते। मेधावी न होना एक दुर्भाग्य है और उससे बड़ा दुर्भाग्य यह है कि मेधावी को पहचान न सकें और उसकी बात न मानें? हम इस विद्यार्थी की तरह इतने अभागे नहीं होना चाहते कि न तो मेधावी हों, और न मेधावी को समझ सकें।' सुनने वाले इस उत्तर से बहुत खुश हुए और बड़े प्रसन्न थे कि इस भाषण में बाधा डालने वाले विद्यार्थी को कृपलानी ने मुंहतोड़ जवाब दिया।

१९७७ में ६० साल की उमर होते हुए भी उन्होंने कांग्रेस के खिलाफ जेहाद बोल दी। कांग्रेस के नेताओं और सरकारों की अपने भाषणों और वक्तव्यों में कटु निंदा की। जब जनता पार्टी की विजय हुई तो कृपलानी बहुत खुश हुए होंगे क्योंकि इनमें उनका काफी बड़ा हाथ था।

मार्च १७, १९७८ को कृपलानी ने राजनैतिक जीवन से अलग होने की घोषणा की। उन्होंने कहा, 'मैंने सदा अपने देश की सेवा करने की कोशिश की है। जो कुछ भी मुझसे बन पड़ा अपनी योग्यतानुसार अपने देश के लिए किया।

इस सेवा में बड़ा आनंद मिला। राजनीति से हटने का मेरा मतलब यह नहीं कि मैंने संन्यास ले लिया है। जब कभी भी व्यक्ति की स्वतंत्रता और देश की इज्ज़त खतरे में होगी तो मैं जी तोड़कर उसकी रक्षा करने का प्रयास करूंगा। मैं आशा करता हूं, और भगवान से प्रार्थना करता हूं, कि ऐसा समय कभी न आये।'

वे सन ८१ तक राजनीति में उलझते रहे और स्पष्ट रूप से पहिले की तरह ही अपने विचारों को प्रकट करते रहे। एक बार जो राजनीति के मज़े को चख लेता है उसे फिर और किसी काम में पूर्ण संतोष नहीं मिलता। एक महान नेता होने के कारण कृपलानी को कौम को सलाह देने का अधिकार था। वह समय समय पर अपने देशवासियों को सचेत करते थे। उन्होंने देश के लिए बड़ी कुर्बानियां कीं और सच्चाई से अपनी मातृभूमि की सेवा की।

**—४, एलगिन रोड, इलाहाबाद, उ.प्र.**

*

एक सज्जन ट्रेन में सफर कर रहे थे। वह हर स्टेशन पर उतरकर टिकट लेते थे। यह देखकर उनके सहयात्री से रहा न गया और वह पूछ बैठा – 'आप पूरे सफर का टिकट एक साथ क्यों नहीं ले लेते?'

उन सज्जन ने जवाब दिया – 'जनाब, मेरे डाक्टर ने मुझे लम्बा सफर करने से मना किया है।'

सुदूर पूर्ववर्ती प्रदेश

# यहां सिर्फ माताओं का बाजार है

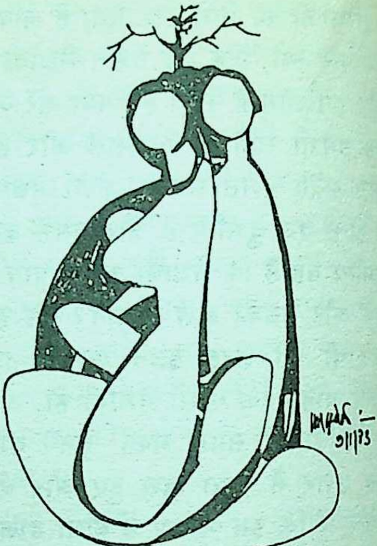

❑

**कमल टावरी**

मथुरा के वृंदावन से हजारों किलोमीटर दूर एक और वृंदावन है। यहा शुभ्र चंदन का वैष्णवी तिलकधारी तथा हल्के केसरिये परिधान वाले सैकड़ों वैष्णवियों के दर्शन होते हैं। स्वर्णमंडित शिखरों वाले गोविंदजी के मंदिर में राधा-माधव की रासलीला देखी जा सकती है और 'कान्हा मारे पिचकारी, भीजे राधा गोरी' को सार्थ करनेवाली होली का अनुभव भी किया जा सकता है।

यह है भारत का सुदूर पूर्ववर्ती प्रदेश मणिपुर, जिसे धरातल का छोटासा स्वर्ग भी कहा जाता है। इसे लार्ड इर्विन ने 'भारत का स्विट्जरलैंड' कहा था तो पंडित नेहरू इसे 'भारत का रत्न (ज्वेल आफ इण्डिया)' कहा करते थे। 'मणिपुर' का अर्थ ही है रत्नों की नगरी। पहाड़ियों से घिरा, भारत का यह पूर्वी कोना मुख्य भूमि से कुछ कटासा है। लेकिन प्रकृति ने इस भूमि को बहुत अच्छी आबोहवा का वरदान ही मानों दिया हुआ है। न तो यहां कभी बर्फीली सर्दी पड़ती है और नहीं तापमान कभी ३३-३४ सेल्सियस के उपर चढ़ता है। चारों तरफ हरे-भरे बांझ (ओक) के पेड़ों से आच्छादित पहाड़ियों के बीच में स्थित इस प्रदेश की अपनी अलग पहचान है।

भौगोलिक दृष्टि से मणिपुर के दो भाग हैं—पहाड़ी तथा मैदानी। मैदानों में मुख्यतः मैथी (मीतेई) लोग रहते हैं और 'मणिपुरी' भाषा बोलते हैं। पहाड़ों में रहने वाली जातियां हैं 'कुकी' तथा 'नागा'। उनकी बोली तिब्बती तथा बर्मी से मिलती-जुलती है। मैदानी लोग ज्यादातर हिन्दू हैं जबकि पहाड़ों में ईसाई धर्म अधिक प्रचलित है। नाटा कद एवं छरहरा बदन। इसका श्रेय

यहा की आबोहवा के अतिरिक्त इनके खान-पान को भी जाता है। उबला खाना (तेल नहीं के बराबर खाते हैं। खाने में सिर्फ मछली, मांस तथा चावल। चाय-बाय कुछ नहीं। अब बाहरी लोगों की वजह से चाय-काफी बाजारों में दिख रही है। इनका अपना पेय है 'सिकमाई' जो कि चावल से बनाई हुई, रशियन वोडका से मिलती-जुलती शराब है। बहुत ही खुशमिजाज, कुछ अक्खड़ किस्म के, अपने में ही मस्त रहनेवाले लोग। युवतियां अपनी चपटी नाक के बावजूद बेहद खूबसूरत। गोरी-चिट्टी!! नयी पीढ़ी बहुत फैशनेबुल भी है। वैसे भी रंग-रंगीली मणिपुरी रहन-सहन में ये नये-नये फैशन, शृंगार-प्रसाधन चार चांद लगा देते हैं। युवतियां सभी लेटेस्ट माडल की स्कूटर/मोपेड पर घूमती हुई नजर आती हैं।

वैसे भी मणिपुरी अत्यंत समाजवादी लोग हैं। छोटे-बड़े का कोई भेद नहीं। न ही शादी-ब्याह में कोई दान-दहेज या अन्य खर्चे हैं। सुप्रसिद्ध मणिपुरी नृत्य के अलावा नर्तनप्रिय मणिपुरियों का एक नृत्य है –धांगलचौंवा। इसमें युवक-युवतियां साथ में नाचते हैं तथा उसी में अपने जीवन साथी को चुन लेते हैं। फिर अत्यंत सादे तरीके से विवाह हो जाता है। लड़कों ने भी बिल्कुल 'काउ-बाय स्टाइल' की रहन-सहन अपना ली है। इस पर प्रकृति ने मानों इन्हें चिरयुवा रहने का वरदान ही दे रखा है।

चालीस-पैतालीस वर्ष का अधेड़ व्यक्ति सहज ही पच्चीस-तीस वर्ष का युवा लगता है और आयु का अंदाजा हमेशा गलत हो जाता है।

जितने सुंदर ये लोग हैं इतने ही सुंदर हैं इनके घर। साफ-सफाई देखने लायक, मकान बनाने का इनका अपना तरीका है। आवश्यकता के अनुसार घर जमीन से कुछ ऊंचाई पर बांस या लकड़ी गाड़कर बनाये जाते हैं। पहले बांस का पूरा फ्रेम तैयार कर लिया जाता है तथा फिर उस पर मिट्टी का पलस्तर खूब घोंट-घोंटकर चढ़ाया जाता है। तदुपरांत उसे आकर्षक रंगों से रंग दिया जाता है। इनमें अंदर से बांस की चटाई की फाल्स सीलिंग बनाकर ऊपर से टीन चढ़ा देते हैं। लेकिन इस साधारण-सी लगने वाली वास्तुकला में कहीं भी टेढ़ी-मेढ़ी

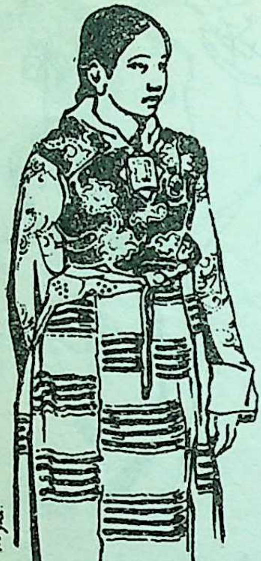

अनगढ लकड़ियों का इस्तेमाल नहीं करते। सब कुछ कैसा तराशा हुआ, साफ और सुंदर। फूलों का शौक भी बहुत है इन्हें। हर घर के सामने एकाध छोटी-सी फुलवारी अवश्य है। पुरानी पीढ़ी धार्मिक भी बहुत है। गोविन्दजी के मंदिर में हर त्यौहार महोत्सव का रूप धारण कर लेता है। छोटे-छोटे बच्चे भी धोती- कुर्ता पहनकर मंदिर जाते हैं। भगवान की रासलीला भी इस मंदिर में कई बार खेली जाती है।

इम्फाल शहर मणिपुर की सांस्कृतिक, आर्थिक, तथा राजनैतिक गतिविधियों का केंद्र है। यहां एक बात विशेष रुप से ध्यान में आयी। तीन दिन तक हर कहीं घूमने के बावजूद एक भी भिखारी नजर नहीं आया। गरीबी का कहीं नामोनिशान भी नहीं है। इसका कारण है घर-घर में उद्योग तथा सीमित जरूरतें। मणिपुर के वस्त्र जगप्रसिद्ध हैं। मोइरांगफी डिजाइन की मणिपुर चादरें तथा विशिष्ट डिजाइनों वाले मणिपुरी शाल अपनी अलग पहचान रखते हैं। खिलौने जैसे लगने वाले छोटे से 'लाइन लूम' को कमर में बांधकर बड़े शौक से शाल तथा 'फनेक' (कमर में बांधा जाने वाला लुंगीनुमा वस्त्र) की बुनाई करने वाली मणिपुरी लड़कियां कहीं भी देखी जा सकती हैं। बांस की अनगिनत प्रकार की टोकरियां यहां का दूसरा आकर्षण हैं। इनमें विशेष हैं 'कापोल' जिसमें कीमती वस्त्र आदि रखे जाते हैं। 'लीफान' जिसे आदिवासी खाने की मेज जैसा प्रयोग में लाते हैं, छम जो पीठ पर सामान ढोने के लिए होती है तथा 'फिरुक' जिसमें लड़के वाले शादी के समय दुल्हन के लिए फल तथा मिठाई ले जाते हैं।

महिलाओं को यहां महत्वपूर्ण स्थान दिया जाता है। जैसा कि पहले भी बताया जा चुका है दहेज कतई नहीं लिया-दिया जाता। स्त्री यहां बोझ नहीं बल्कि गृहस्थी का आधार स्तंभ ही मानी जाती है। यहां की महिलाएं बहुत स्वावलंबी भी हैं। न केवल वे उत्पादन का कार्य करती हैं बल्कि बिक्री का कार्य भी महिलाएं ही करती हैं। इम्फाल का खैरामबंद बाजार, जो कि 'हिमा मार्केट' याने 'माताओं का बाजार' नाम से अधिक प्रसिद्ध है, पूरी तरह से

चित्र: आर. डी. पुरोहित

महिलाओं द्वारा संचालित है। दुनिया का शायद यह एकमेव बाजार होगा जहां लगभग ३००० महिलाएं एक जगह बैठकर साग-सब्जी से लेकर कपड़े, हैण्डलूम वस्त्र इत्यादि की बिक्री करती हों तथा पुरुष सिर्फ खरीदार की हैसियत से ही जाता हो। लगभग डेढ़ सौ वर्ष की यह परंपरा इन महिलाओं ने बिना किसी बदलाव के अक्षुण्ण तरीके से चलायी है। सरकार ने इन्हें बेहतर मार्केट बनाकर देने की पेशकश की जो इन्होंने ठुकरा दी। जब जगह बदलने तथा बिजली के रोशनी की बात आयी तो इन सभी हिमाओं (अर्थात् माताओं) ने सड़क पर लेटकर आंदोलन छेड़ दिया कि हमारी परंपराओं को न तोड़ा जाय तथा हमें उसी तरह किरासीन के टिमटिमाते दिये की रोशनी में ही अपना कारोबार (जो कि रोजाना लाखों रुपये का होता है) करने दिया जाय।

लेकिन फिर भी आज मणिपुर अशांत है। वैसे भी नयी पीढ़ी अब राजनीति से अधिक प्रेरित हो गयी है। वे अपनी प्राचीन मैथी लिपि, मैथी संस्कृति को ऊपर लाना चाहते हैं। इस वक्त प्रचलित लिपि बांग्ला है। मैथी लिपि नष्टप्राय हो गयी थी जिसे पुनरुज्जीवित तो किया गया है, लेकिन प्रचलित नहीं कर पाये हैं। अभी तक पुरुष लोग अपने नाम के आगे 'सिंह' लिखते आये हैं लेकिन युवा पीढ़ी अब 'सिंह' की जगह 'मैथी' लिख रही है। यहां तक तो ठीक है। लेकिन अनेकविध घुसपैठियों ने अब यहां के लोगों का जीना दूभर कर दिया है। दिन-दहाड़े, सरेशाम लूटना आम बात है। दिन को ५ बजे तक सूर्यास्त हो जाता है और शाम ६ बजे तक सारे रास्ते सुनसान हो जाते हैं। केंद्रीय सुरक्षा बल तथा असम राईफल्स की पच्चीसों टुकड़ियां यहां पर सुरक्षा के लिए तैनात हैं। लाइट मशीनगनों से सुसज्जित सैनिकी वाहन गश्ती पर लगे रहते हैं। ग्राम प्रमुख या मुखिया का अपने-अपने इलाके पर पूरा कब्जा है। वे गांव के लोगों को अपनी इजाजत के बगैर कहीं भी काम करने नहीं जाने देते। अन्यथा कभी भी हमला बोल सकते हैं। इस खूबसूरत प्रदेश को मानो असुरक्षा का ग्रहण लग गया है। इस सीमावर्ती प्रदेश की ओर हमें और अधिक ध्यान देना जरूरी है।

-- B-1, दिलकुशा,
लखनऊ, उ.प्र.

◆

निष्ठावान विद्वानों का केंद्र

# पुणे के ये संस्कृत-सेवाव्रती

☐

**डॉ. ओमप्रकाश पाण्डेय**

काशी के सदृश पुण्यपत्तन (आज का पुणे या पूना) भी संस्कृत-विद्या के प्रगाढ़ अनुशीलन का प्राचीन केंद्र रहा है। दिसंबर '८९ में प्रायः एक मास के पुणे-प्रवास का अवसर मिला। इस अवधि में पुणे विद्यापीठ, भण्डारकर प्राच्यविद्या-संशोधन-मंदिर, डेक्कन कॉलेज, वैदिक संशोधन मण्डल प्रभृति शोध-संस्थानों और उनमें कार्यरत मनीषियों की शोध-साधना के बहुमुखी आयाम दिखलायी पड़े। संस्कृत-वाङ्मय के विभिन्न क्षेत्रों में आज भी वहां मानक शोध-कार्य किया जा रहा है।

काशी में जहां संस्कृत - मनीषा अब अधिकाशंतया व्यक्तिगत रह गयी है और काशीनरेश के प्रयत्न से हो रहे पुराण - संपादन को छोड़कर कोई बड़ी सामूहिक शोध-योजना नहीं चल रही है, वहीं पुणे में ऐसी अनेक योजनाए पूरी टीम-भावना से निष्ठावान् विद्वानों की देखरेख में अनवरत गतिशील हैं।

संस्कृत, भाषाशास्त्र और पुरातत्त्व के क्षेत्र में पुणे का डेकन कॉलेज अत्यंत प्राचीन ही नहीं, देश-विदेश में बहुमान्य संस्थान भी है। यहां जो सर्वाधिक महत्त्वाकांक्षी योजना चल रही है, वह है संस्कृत के ऐतिहासिक सिद्धांतों पर आधारित विश्वकोशात्मक महाकोश का निर्माण। इस महाकोश का संपूर्ण प्रणयन सन २०५० अर्थात् अब से साठ वर्ष के अनंतर संपन्न होगा। इसमें प्रत्येक संस्कृत शब्द के प्राथमिक अर्थ और उसके विकास के विभिन्न चरणों की पूरी-पूरी रूपरेखा संजोयी गयी है। इसके आद्य संपादक थे प्रो. (स्व.) सुमित्र मंगेश कत्रे और वर्तमान संपादक हैं प्रो. एस.डी.जोशी, जिनके नेतृत्व में प्रायः २५ से भी अधिक विद्वान इस कार्य में तत्परता से संलग्न हैं। अब तक इसके तीन खण्ड (वाल्यूम) प्रकाशित हुए हैं, जिनमें से प्रत्येक तीन-तीन भागों में विभक्त हैं। प्रो. जोशीजी ने बड़े उत्साह से हमें इसकी कार्यप्रविधि को ही नहीं बतलाया, अपितु विशाल 'स्क्रिप्टोरियम'

भी दिखलाया, जहां कोश से संबध्द लाखों सूचना - कार्ड या पूर्तियां संकलित हैं।

डेकन कॉलेज की वीथियों में ही भ्रमण करते हुए एक कमरे में हमारी भेंट हुई प्रो. चिन्तामणि गणेश काशीकर से। ८२ वर्ष की अवस्था में भी युवकोचित उत्साह से आवर्धक लेंस लिये हुए वे कृष्णयजुर्वेदीय श्रौतसूत्रों के संपादन में तत्पर दिखे। मैक्समूलर के अनंतर ऋग्वेद-संहिता के सायणभाष्यसहित सर्वांगशुद्ध संस्करण के संपादन का श्रेय श्री काशीकर को ही है जिसका प्रकाशन वैदिक संशोधन मण्डल से हुआ है। वे वैदिक यज्ञ-तत्त्व के अधिकारी विद्वान् हैं, जिनकी श्रौत-साहित्य में अत्यंत गहरी पैठ मानी जाती है।

संस्कृत के अतिरिक्त डेकन कॉलेज में पुरातत्त्व और भाषाविज्ञान के क्षेत्रों में भी महत्त्वपूर्ण शोध कार्य चल रहे हैं, जिनका विवरण पृथक से ही प्रदेय है।

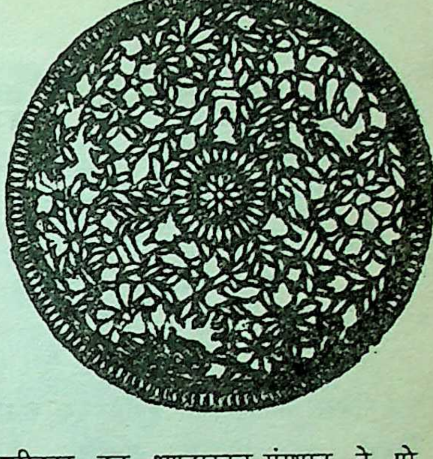

भण्डारकर प्राच्यविद्या-संशोधन - मंदिर संभवतः विश्व में प्राच्यविद्या का सबसे बड़ा संस्थान है। यहां आये बिना संस्कृत की कोई भी शोध पूरी नहीं मानी जाती। स्व.प्रो. भण्डारकर के प्रयत्नों से संस्थापित इस संस्थान को ही महाभारत के प्रामाणिक संस्करण के संपादन का श्रेय प्राप्त है। विश्व भर के बड़े-बड़े प्राच्यविद्याविदों ने जब महाभारत के विपुल पाठ-पाठांतरों को देखकर इसके संपादन को असंभव समझकर छोड़ दिया था, तब उस चुनौती को स्वीकार कर भण्डारकर-संस्थान ने प्रो. सुक्थङ्कर के नेतृत्व में प्रायः आधी शती के अहर्निश श्रम से महाभारत का प्रामाणिक संस्करण तैयार किया है। पतंजलि के व्याकरण-महाभाष्य के प्रामाणिक पाठ को भी इसी संस्थान ने प्रस्तुत किया है। आजकल यह संस्थान प्रो. महेन्डले के सुदक्ष संपादकीय नेतृत्व में 'प्राकृत - महाकोश' के निर्माण में संलग्न है। संस्थान में बहुसंख्यक मनीषी केवल सेवा-भाव से ही कार्यरत हैं। वे वेतन या मानदेय के रूप में कुछ भी नहीं लेते। इन्हीं में हैं यहां के निदेशक प्रो. रामचन्द्र नारायण दाण्डेकर, जो ८० वर्ष की वृध्दावस्था में भी किसी नौजवान से अधिक कार्य करते देखे जा सकते हैं। अभी-अभी उनकी 'वैदिक बिब्लियोग्राफी' (वैदिक ग्रन्थ - सूची) का चतुर्थ खण्ड प्रकाशित हुआ है, जिसमें विश्वभर की किसी भी भाषा या

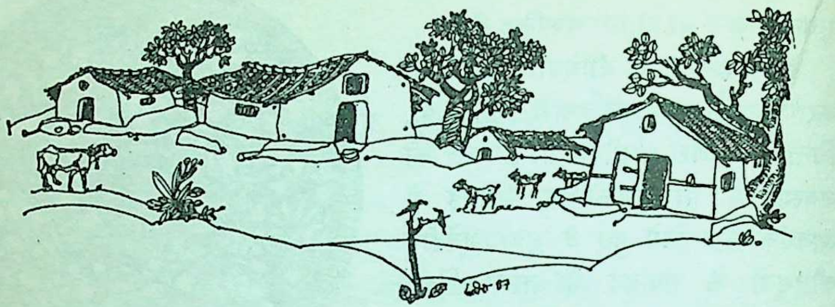

चित्रः सतीश चव्हाण

पत्र-पत्रिका में प्रकाशित वेदविषयक शोध निबंधों का विवरण संकलित है। छोटे-से-छोटा और अत्यंत स्वल्पचर्चित पत्रिका में भी प्रकाशित लेख उनकी दृष्टि से नहीं बच सका है। ग्रंथ-सूची में प्रत्येक लेख और पुस्तक का न केवल उल्लेख है, अपितु उसमें प्रतिपादित विषय-वस्तु, विचार-प्रक्रिया और विमर्श-दृष्टि का भी सङ्केत हैं। हड़प्पा-संस्कृति पर भी उनकी इसी प्रकार की ग्रंथ-सूची इसी वर्ष प्रकाशित हुई है। संस्थान की अन्य शोध-उपलब्धियां भी हैं। प्रो. पी.डी. नवाथे, प्रो. लाडू और प्रो. लाल्ये प्रभृति संस्थान में कार्यरत विद्वज्जन विश्व भर से आये दिन आते रहते शोधार्थियों की सहायता के लिए सदैव तत्पर रहते हैं। प्राच्य-परंपरा के प्रतिनिधि के रूप में यहां एक मूर्द्धन्य वैयाकरण हैं पं. भागवत शास्त्री, जो आजकल व्याकरण-महाभाष्य की भर्तृहरि - कृत टीका 'दीपिका' के उद्धार में संलग्न हैं।

लोकमान्य तिलक की स्मृति में, १ अगस्त १९२८ को संस्थापित वैदिक संशोधन मण्डल वेद वाङ्मय के संपादन और संरक्षण की दिशा में सतत सक्रिय है। पहले यह तिलक महाराष्ट्र विद्यापीठ का अंगभूत था और अब यह आदर्श शोध-संस्था के रूप में केंद्रीय सरकार से संबद्ध हैं। मण्डल से संपादित-प्रकाशित ऋग्वेद-संहिता का पहले उल्लेख हो चुका है। इसके अतिरिक्त तैत्तिरीय संहिता, श्रौतकोश, भारद्वाज श्रौतसूत्र, ऋक्सूक्त वैजयंती, काण्वसंहिता (अनेक भाष्योंसहित) के संस्करण भी उल्लेखनीय हैं। मण्डल ने पारसियों के प्राचीन धर्मग्रंथ 'अवेस्ता', जिसका ऋग्वेद से बहुत साम्य है और जो भारोपीय काल के महत्वपूर्ण अवशेषों का प्रस्तावक है, के अनुशीलन की दिशा में विशेष प्रयत्न किया है। देवनागरी लिपि में अवेस्ता के प्रामाणिक पाठ की प्रस्तुति महत्वपूर्ण उपलब्धि है। संप्रति

मण्डल अवेस्ता के व्यावहारिक शब्दकोश के निर्माण की दिशा में सक्रिय है।

मण्डल का पुस्तकालय भी अत्यंत विशाल है। वैदिक यज्ञों के मूल स्वरूप का बोध कराने के लिए मण्डल ने यज्ञ-सामग्री और पात्रों का एक महत्वपूर्ण संग्रहालय तैयार किया है। इसमें विभिन्न यज्ञवेदियों की स्वरूप संरचना के निमित्त चित्राङ्कन भी प्रस्तुत किये गये हैं। उदाहरण के लिए पंख फैलाये हुए बाज के आकार की यज्ञवेदी का आकल्पन अत्यंत आकर्षक है। इस प्रकार की वेदी का निर्माण 'श्येनचिति' संज्ञक याग में होता था। मण्डल ने विभिन्न प्रकार के वेद-मंत्रपाठों (जिन्हें पारिभाषिक शब्दावली में 'विकृति' कहा जाता है) की सुरक्षा के लिए ध्वन्यङ्कन एवं फिल्म-निर्माण के क्षेत्र में भी बहुत कार्य किया है। मण्डल की एक अधिकारी श्रीमती घडफड़ेजी की कृपा से ऐसी ही एक फिल्म, जिसका शीर्षक संभवतः 'स्मृति' था, देखने का अवसर हमें मिला। पुणे विद्यापीठ (पूना विश्वविद्यालय) के अंतर्गत संस्कृत विभाग के अतिरिक्त 'संस्कृत प्रगत अध्ययन केंद्र' भी है, किंतु इनमे छात्रों की न्यून संख्या खटकती है। इसका कारण महाराष्ट्र-शासन के द्वारा माध्यमिक स्तर की शिक्षा में संस्कृत को समुचित स्थान न देना है। पुणे विश्वविद्यालय का संस्कृत-विभाग सम्प्रति उड़ीसा से आये छात्रों के संहारे ही चल रहा है। इस संदर्भ में माध्यमिक शिक्षा-नीति ही वस्तुतः दोषी है।

पुणे स्थित संस्कृत विद्वान्मण्डली की उल्लेखनीय विशेषता है व्यक्तिगत राग-द्वेष और मनोमालिन्य से परे रहकर टीम भावना।

संस्कृत पण्डितों में पारस्परिक छिद्रान्वेषण की जो दुष्प्रवृत्ति अन्यत्र सर्व सुलभ है, वह यहां खोजने से भी नहीं मिलती। संस्कृत के हस्तलिखित ग्रंथों के संरक्षण, उनके माईक्रोफिल्मीकरण, प्रामाणिक पाठ-संपादन, कोश और संदर्भ ग्रंथों के निर्माण, व्याख्यान और विवेचन में ये सेवाव्रती प्राणपण से सचेष्ट हैं। इनकी कार्य-प्रणाली में दोष केवल एक ही दिखलायी देता है और वह है पाश्चात्य विद्वानों की गतानुगतिकता और माध्यम के रूप में मात्र अंग्रेजी को स्वीकार करना।

**— ३४६, कानूनगोयान,**
**बाराबंकी (उ.प्र.)**

⁂

# लेखक/कलाकारों का गृहस्थ जीवन अभिशप्त?

**❑ संयोजक : ज्योति खरे**

---

**आखिर ऐसा क्यों होता है जो सबसे ज्यादा विद्वान हैं, वे सुखी गृहस्थ जीवन नही भोग पाते? अधिकाँश लेखक/कलाकारों का गृहस्थ जीवन तनाव और विग्रह के वातावरण में रहता है। कइयों का गृहस्थ जीवन तो टूट ही जाता है, यही नहीं कुछ तो गृहस्थ जीवन शुरू ही नहीं कर पाते, कुँवारे रह जाते हैं. या फिर जीवन के तीसरे पहर में यानी अधेड़ावस्था में जाकर शुरू कर पाते हैं। ऐसे कौन से तत्व हैं जो कलाकारों/ साहित्यकारों के गृहस्थ-जीवन में बाधक हैं?**

**आइये ! इसी संदर्भ में कुछ लेखकों एवम् कलाकारों के नजरियें को भी जान लें।**

---

## स्वार्थ पर टिकी संबंधों की बैसाखियां

– दिनेश शुक्ल (खण्डवा)

ऐसी तो कोई बात नहीं कि लेखक/कलाकारों का दाम्पत्य जीवन उनकी अपनी कला के कारण अभिशप्त हो। वरन लेखन एवं कला के क्षेत्र में जो लेखक / कलाकार / कवि अपनी कला के शीर्ष बिंदुओं पर पहुंचे हैं, वह महज अपने सुखी दाम्पत्य जीवन के कारण ही, चाहे वह फिल्मकार हों शिल्पकार हों, चित्रकार हों या साहित्यकार । हालांकि अपवाद जरूर हुए हैं। उसका मूलकारण भौतिक एवम् आर्थिक़ बंधन ही रहा है। दो व्यक्ति जिस जीवन के स्नेह के बंधन में बंधे थे वह सांस्कारिक न होकर मात्र उन बंधनों की नींव आर्थिक एवम् अपने-अपने स्वार्थ के धरातल पर खड़ी थी यह स्वार्थ का धरातल जब अपने-अपने सोच के अहमों से टकराता है, तो व्यक्ति दूध की तरह फट सकता है। कल तक जो उसका अपना जीवन था, उसके लिए अमृत था अब वही उसे सबसे बड़ा विषैला फल लगने लगता है।

कल तक जिसे अपने प्रिय का हर अवगुण भी उसे प्रिय था, अब गुण में भी उसे

अवगुण दिखायी देने लगते हैं। ये संबंधों की ऊब नहीं अपने-अपने स्वार्थो की जमीन पर उपजी वह सीमारेखा है जहां मनुष्य की दृष्टि अपने व्यक्तित्व की इकाई में घिरकर रह जाती है। थोड़े बहुत अन्य दूसरे की नासमझ के कारण होते हैं। अधिकांश कवि/लेखक/कलाकार अपने जीवन की व्यस्तता के कारण अपने परिवार को अधिक समय नहीं दे पाते हैं, वे एक ऐसी चमक-दमक की दुनिया में खोये रहते हैं, और यहीं से शुरू होती हैं बिखराव की अनंत यात्रा, जिनकी चर्चाएं पत्र/पत्रिकाओं की सुर्खियां बनती हैं।

* * *

## लेखक का धर्म रचनात्मकता है

—हनुमंतराय नीरव (दार्जिलिंग)

लेखक / कलाकार की मानसिकता रचनात्मक होती है। वह सदैव कुछ रचने की सोचता रहता है; उसके समस्त प्रयास रचना की ओर उन्मुख रहते हैं। लेखक की पत्नी की मानसिकता ऐसी नहीं होती, दोनों की चेतना का स्तर नहीं मिलता, पत्नी लेखक-पति की आवश्यकताओं का पूर्णतः सर्वेक्षण करने में असमर्थ रहती है! उसके मान सम्मान के दायरे से सामंजस्य स्थापित नहीं कर पाती! उसे अकेला भी नहीं छोड़ती। घर के एकांत कोने में चिंतामग्न लेखक को देख कई पत्नियां त्रस्त हो उठती हैं कि न जाने किस मुंहजली के सपने देख रहा है।

लेखकों-कलाकारों की अधिक संख्या मध्य वर्ग से आती है, जहां विवाह माँ-बाप की मर्जी से होते हैं, और शीघ्र विवाह हो जाने की संभावना नब्बे प्रतिशत। परिणामस्वरूप पत्नी पहले भोग्या बनती है, फिर चूल्हे-चौके और संतति के चक्कर में पड़ जाती हैं। उसे दाम्पत्य संबंधों की उपयोगिता / अनुपयोगिता तो समझ में आती हे, पर प्रेम-नाटक उसकी समझ में नहीं आता, न वह करना चाहती है, न उसे फुर्सत होती है। बच्चे उत्पन्न होते ही वह परिवार की स्थायी सदस्य बन जाती है, यह सुरक्षा की भावना उसे सदैव अपने व्यक्तित्व को नूतन बनाए रखने से रोकती रहती । इन घरेलू नारियों की तुलना में शिक्षित और कमाऊ पत्नी में समर्पण की मात्रा कम होती है, इनका अहं तो झुकना जानता ही नहीं। गृहस्थी समताल पर चले तो कैसे चले।

पत्नी को लेखक की पत्नी के कर्तव्य निभाने का प्रशिक्षण स्वयं लेखक भी नहीं देते। उन्हें अवकाश नहीं मिलता। मिले भी कैसे वह स्वयं अपने आपको सतत परीक्षा

में डालता रहता है। नया लेखक अपने लेखन के प्रति शंकित रहता है कि रचना कैसी है, छपेगी कि नहीं, लोग सराहेंगे कि नहीं? लिखना अपने हाथ में है, पर वाहवाही दूसरों के हाथ में है। न मिले तो लेखक कुंठित हो जाता है, कुढ़ता है। आयु के साथ लेखक की महत्वाकांक्षाएँ भी बढ़ती जाती हैं। अपनी रचनात्मकता की सीमा और शक्ति को न माप कर वह दूसरों के विवेक को दोष देने लगता है। सदैव इस आकांक्षा की पूर्ति में लगा रहता है कि उसका लेखन प्रशंसित हो, पुरस्कृत हो।

लेखक की मानसिक दुनियां अलग रहती है। वह सदैव नया रचने में लगा रहता है। जबकि अन्य लोग अपने आपको दोहराते भर हैं। लेखक की सफलता तो मूर्त हो प्रकट हो जाती है, परंन्तु असफलता और इसके कारण अमूर्त रहते हैं। पत्नी सफलता की भागीदार बन जाती है परंतु असफलता, और इससे उत्पन्न कुंठा लेखक पत्नी की समझ में नहीं आती, न उसकी साझीदार बनना चाहती है। लेखक का धर्म रचनात्मकता है, इस धर्म के कारण वह कई तरह के तनावों में सतत जीने के लिए अभिशप्त है, जैसे रचने का तनाव, न रचने का तनाव, न रच सकने का तनाव और रचे हुए पर सम्मान एवं स्वीकृति पाने की आकाँक्षा का तनाव। ये तनाव ऐसा एकांतवासी या दोमुंहा व्यक्तित्व प्रदान कर देते हैं कि वह घर में अजनबी हो जाता है और उसका गृहस्थ जीवन दो समानांतर राहों पर चलने को मजबूर हो जाता है, जो कभी मिल नहीं पातीं।

* * *

## मानवीय रिश्तों के साथ तादात्म्य नहीं

—शिवप्रसाद 'कमल' (मिर्जापुर)

क्या पूंछा आपने? भई, इस टेढ़े प्रश्न के उत्तर में तो पूरा पोथा लिखा जा सकता है, वैसे दो शब्दों में कहा जाये तो यह कि लेखक/कवि/कलाकार होते हैं मूडी और झक्की, इसलिये इनकी गृहस्थी होती रहती है अभिशप्त। फिर दूसरी बात यह भी है कि ये एक खूंटे से बंधकर (श्रीमतियों/श्रीमानों से क्षमायाचना सहित) रहना नहीं चाहते। ये हमेशा लीक से हटकर चलते हैं और दूसरे की नांद या दड़बे पर 'मुंह' मारने लगते हैं। बस यहीं से घरेलू महाभारत सीरियल शुरू हो जाता है। मजे की बात यह है कि इस सीरियल के हीरो—हीरोइन तो अंतिम एपीसोड तक वही होते हैं, केवल अन्य पात्र बदलते रहते हैं। यही पात्र पारिवारिक जीवन में धूमकेतु की तरह प्रवेश करके आशंकाओं और संदेहों के बीज बो जाते हैं। कवि/लेखक समाज का

विशिष्ट प्राणी माना जाता हैं। इनके जीवन का जहाँ जितना अधिक समाजीकरण होता है, वहीं व्यक्तिगत जीवन भी प्रभावित होने लगता है। अधिकतर मामलों मे प्रशंसकों/प्रशंसिकाओं को लेकर (पत्रों द्वारा या घर आने-जाने के कारण) विसंगतियों का कैक्टस गृहस्थ जीवन कों दंशित करने लगता है। परिणाम स्वरूप ज्यों-ज्यों संदेहों का घेरा कसता जाता है त्यों-त्यों दाल में कुछ काला है कि उक्ति चरितार्थ होने लगती है।

कभी-कभी ऐसा भी होता है कि कवि/लेखक अपनी कला के प्रति इतना अधिक समर्पित होता है कि वह अपने जीवन साथी के प्रति उन मानवीय रिश्तों के साथ तादात्म्य स्थापित नहीं कर पाता, जिसकी अपेक्षा होती है। उसे रचना सृजन के समय जिस एकाग्रता और वातावरण की अपेक्षा होती है, प्रायः सभी परिवारों में उसका कुछ न कुछ अभाव रहता है। सृजन के समय वह गृह-जंजालों से मुक्त रहना चाहता है। जबकि परिस्थितियाँ ठीक इसके विपरीत होती हैं। नमक, तेल, लकड़ी के चक्कर में पड़कर वह सृजन के क्षणों को खोना नहीं चाहता है किंतु उससे बचना भी कठिन होता है। और फिर आज के भागमभाग वाले युग में तो इससे दो-चार होना ही पड़ता है। यहां से टकराव की स्थिति हो जाती है प्रारंभ। फलस्वरूप गृहस्थ जीवन का रस बिषैला होने लगता है।

इसके साथ ही आर्थिक अभाव भी इसकी जड़ों में पानी देता रहता है। अधिकांश मामलों में लेखकों/कवियों को आर्थिक अभाव से ग्रस्त देखा गया है। कुछ एक अपवादों को छोड़ दिया जाये तो शेष सभी मामलों में आर्थिक तंगी मूल कारणों में एक है। अपने देश में इनकी आर्थिक सुरक्षा का कोई प्रबंध नहीं है। इन्हें सम्मान तो मिल जाता है, लेकिन जीविकोपार्जन का ठोस धरातल नहीं मिल पाता जबकि गृहस्थी चलाने के लिए रुपया बहुत जरूरी है। तब इसके अभाव में सुखी जीवन की कल्पना ही व्यर्थ है, अपवादों को छोड़कर।

* * *

## बाहरी परिस्थितियां दबाव डालती हैं

—पवन शर्मा (छिंदवाड़ा)

गृहस्थ जीवन उन्हीं का अभिशप्त रहता है, जहां कि किसी भी (सिर्फ लेखक/कलाकार के लिए ही नहीं) का सामाजिक मान और अपना निजी मान जो उसके संघर्ष से जन्म लेता है। उस संघर्ष से लड़ते-लड़ते और किसी निश्चित निर्णय

पर पहुंचने के पूर्व गृहस्थ जीवन कुछ हद तक डगमगा जाता है। यही स्थिति है कि आगे का जीवन कलहपूर्ण हो जाता है। पुरुष हो या स्त्री, उनकी मूलभूत आवश्यकताओं अथवा प्रवृत्तियों में कोई मौलिक अंतर नहीं मिलता।

सबसे अहम बात यह है कि आज किसी भी व्यक्ति के लिए (लेखक/कलाकार के लिए भी) भौतिक सुख ही मुख्य रह गये हैं। यदि भौतिक सुख ही अभावग्रस्त हो जायें, तो यह कोई बड़ा अभाव नहीं कहलाता। यदि ये अभाव लगते हैं तो इनसे कष्ट भी होता है। यदि व्यक्ति के पास संस्कार हैं तो वह आत्मसम्मानपूर्वक उन अभावों को सह लेता है। इसके अतिरिक्त बाहरी परिस्थितियां भी अपना-अपना दबाव डालती हैं। पारिवारिक जिम्मेदारियां या आर्थिक समस्यायें जैसी बाधाएं भी अवरोध का कारण हो सकतीं हैं, जिनसे कि परिवार टूटता जाता है। असल बात यह भी हो सकती है कि शुरू में उत्साह अधिक होता हैं। बाद में स्थापित होने के बाद का अंतराल बढ़ी हुई इमेज के प्रति सज़गता के कारण भी लेखक या कलाकार का गृहस्थ जीवन अभिशप्त हो सकता है।

* * *

## अभिशप्त जीवन वरदान होता

—प्रो. सीतारामसिंह 'पंकज' (सरायरंजन)

यह तो कहना कठिन है कि लेखकों/कलाकारों का गृहस्थ जीवन अभिशप्त क्यों होता है, किंतु यह सच है कि अधिकाँश लेखकों/कलाकारों का पारिवारिक जीवन कलहपूर्ण या अभिशप्त रहा है। इतिहास साक्षी है टाल्सटाय को अंतिम सांसों तक सुखमय, शांतिपूर्ण जीवन नसीब न हुआ। शायद इसीलिये महाकवि 'निराला' ने लिखा है:—

> **'दुःख ही जीवन की कथा रही। क्या कहूँ आज जो नहीं कहीं ।।'**

कौन नहीं जानता 'निराला' आजीवन संघर्ष करते रहे। कहते हैं, कभी-कभी अभिशाप ही वरदान बन जाता है। रचनाकारों के लिए यही सच है। जीवन के तमाम संघर्ष, कटुताएं और समाज की विषमताएं रचनाकार कों ऊर्जान्वित करते हैं, अनुप्राणित और प्रेरित करते हैं। प्रतिकूल परिस्थितियों से जूझने वाला कवि/लेखक/कलाकार जीवन के सत्य को अपनी रचना के माध्यम से उद्घाटित करता है।

*

नाम-जप की महिमा

# 'पंछी को पद पढ़ात गणिका सी तारी'

❑ दुर्गाप्रसाद मंडेलिया

एक कथा इस प्रकार है कि एक गणिका थी और वह अपना जन्मजात व्यवसाय किया करती थी। उसने एक सुवा पाला था और उसको रामनाम बोलना सिखाती थी। मरने पर उसे मोक्ष प्राप्त हुआ।

एक गणिका को केवल एक पक्षी को राम-राम पढ़ाने से मोक्ष मिली यह गले से उतरने वाली बात नहीं है। सुवा राम नाम बोलने से मोक्ष नहीं प्राप्त कर सकता तो फिर गणिका ने मोक्ष कैसे पाया, यह एक ध्यान देने लायक विषय बन जाता है।

गाने बजाने आदि का काम गणिका के लिए एक अपना व्यवसाय है इसी से उसका जीवन निर्वाह होता है। जीवन निर्वाह के लिए कोई भी समाज द्वारा स्वीकृत कार्य करना मनुष्य का कर्तव्य है।

गीता में भगवान श्रीकृष्ण ने कहा है कि-

**स्वे स्वे कर्मण्यभिरतः संसिद्धिं लभते नरः।**
**(गीता १८-४५)**

श्रेयान्स्वधर्मो विगुणः परधर्मात्स्वनुष्ठितात्।
(गीता १८-४७)

अपने-अपने कर्म में लगा हुआ मनुष्य भगवत् प्राप्तिरूप परमसिद्धि को प्राप्त होता है।

अच्छी प्रकार आचरण किये हुए दूसरे के धर्म से गुणरहित भी अपना धर्म श्रेष्ठ है।

गीता में अर्जुन को यह भी शिक्षा दी है कि अपना कर्तव्य सुचारुरूप से पालन करना धर्म है।

परंतु यह सब होते भी क्या उस गणिका को केवल पक्षी को रामनाम पढ़ाने से ही मोक्ष मिली? क्या केवल खांड कहने से मुंह मीठा हो जाता है? नहीं। इसके पीछे एक दूसरा रहस्य था और वह था उस गणिका का भगवान से असीम प्रेम। रामनाम जपना और सुनना, जो नवधा भक्ति के दो मुख्य अंग हैं उसको बहुत प्रिय था। पक्षी को रामनाम सिखाने से यह दोनों ही बातें उसको साध्य हो जाती थीं। अतः गणिका के मोक्ष का कारण उसकी ईश्वर भक्ति

थी। हरि में उसका प्रेम था। 'हरि को भजे सो हरि का होई'।

काकभुशुंडिजी ने गरुड़जी को अपना इतिहास बताते हुए कहा किः

**जप तप मख सम दम ब्रत दाना।**
**विरति विवेक जोग बिग्याना।**
**सब कर फल रघुपति पद प्रेमा।**
**तेहि बिनु कोउ न पावइ छेमा।**

जप तप दान व्रत यश ग्यान विग्यान भगवान में प्रेम प्राप्त होने के सब साधन हैं। परंतु कल्याण तो केवल भगवान में प्रेम से ही होता है।

काकभुशुंडिजी ने और भी कहा -

**सोइ सर्बग्य, तग्य सोइ पंडित**
**सोइ गुन गृह विग्यान अखंडित**
**दछ सकल कछ न जुत सोई**
**जाके पद सरोज रति होई**

इसीसे तुलसीदासजी ने अपने एक पद में कहा है -

'सबसे ऊंची प्रेम सगाई।'

भगवान सबसे अधिक प्रेम के संबंध को ही मानते हैं।

प्रेम के वश होकर भगवान क्या नहीं करते इसके कुछ उदाहरण भी इस पद में दिये हैं- जैसेः

**दुर्योधन को मेवा त्यागो।**
**शाक विदुर घर खाई।।**
**जूठे फल भिलनी के खाये**
**बहु विधि प्रेम लगाई।**
**प्रेम के वश नृप सेवा कीनी**
**आप बने हरि नाई ।।**
**राजसूयग्न युधिष्ठिर कीनी,**
**तामे जूठ उठाई**
**प्रेम के वश अर्जुन रथ हांक्यो**
**भूल गये ठकुराई।**
**ऐसी प्रीति बढ़ी वृन्दावन,**
**गोपिन नाच नचाई।**

प्रेम के वश होकर भगवान ने भिलनी के जूठे बेर खाये, प्रेम के वश होकर अर्जुन के सारथी बने और अपनी ठकुराई भूल गये। और प्रेम के वश गोपियों के साथ नाचे भी। धन्य है भक्त और उनके भगवान।

रामायण में कर्तव्य पालन की गरिमा बतायी है। परंतु कर्तव्य से भी ऊंचा भगवान का प्रेम है यह हमें श्रीमद्भागवत में मिलता है।

श्रीराम ने कर्तव्य पालन में बहुत कष्ट सहे। जहां श्रीराम ने राजधर्म पालन अपना सर्वोच्च कर्तव्य समझकर पति परायणा सीताजी का भी त्याग कर दिया, वहां श्रीकृष्ण ने प्रेम के वशीभूत होकर, युद्ध में नहीं लड़ने की अपनी प्रतिज्ञा तक तोड़ दी; और रथ के पहिये को चक्र बनाकर भीष्म को मारने के लिए दौड़ पड़े।

**जब पांडव दल में शोर मचा**
**भीषण के बांके बाणों से**
**जब रक्षा दल की हो न सकी**
**अर्जुन की कड़ी कमानों से**

तब चक्र सुदर्शन लेके बढ़े
भगवान श्रीकृष्ण मुकुट-धारी
एक तेज सा रण में फैल गया
बलवान हुई सेना सारी।

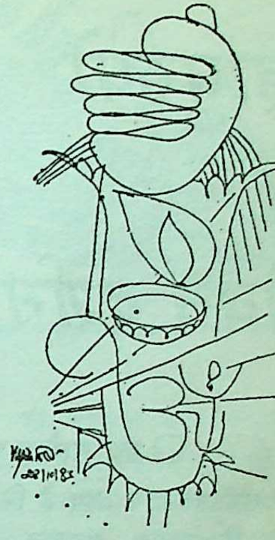

विश्व में सबसे बड़ी दो शक्तियां मानी जाती हैं: एक 'गुरुत्वाकर्षण' (Gravity) और दूसरी 'बिजली-चुम्बक आकर्षण (Electro Magnetism)इन्हीं दो शक्तियों के अधार पर सारे विश्व की सब क्रियायें निर्वाधरूप से अरबों वर्षों से चलती आ रही हैं। सूर्य-चन्द्र-तारे गुरुत्वाकर्षण से ही अपने-अपने स्थानों पर स्थित अपने सही मार्ग पर नियत समयानुसार परिक्रमा करते रहते हैं। इसी से समुद्र में ज्वार-भाटा आता है। बिजली-चुम्बक की शक्ति से एक सूक्ष्मतम अणु कितना शक्तिशाली होता है। परंतु यह दोनों ही शक्तियां प्रेम जनित शक्ति से बहुत हल्की पड़ती हैं। क्योंकि प्रेम की शक्ति इतनी बलवती है कि उससे तो इन शक्तियों के विधाता परमेश्वर भी वशीभूत हो जाते है। इसलिये भगवत प्रेम की शक्ति अगाध और असीम है। इससे एक गणिका की मोक्ष होना तो स्वाभाविक ही है। इसमें न तो कोई अनहोनी हुई न कोई आश्चर्य का बात ही।

प्रेम से प्रकट होत भगवाना' प्रेम से तो भगवान भी निर्गुण से सगुण हो जाते हैं।

नवजात शिशु का एकमात्र माता से असीम प्रेम होता है और अपनी रक्षा एवम् भरण पोषण का पूरा भार माता पर छोड़कर सुख की नींद सोता है। यदि यही प्रेम और अटूट विश्वास बड़े होने पर जगत्माता (परमेश्वर) में भी रहे तो फिर तो उसका कल्याण निश्चित है। परंतु जैसे उसकी बुद्धि का विकास होता है वह तर्क-कुतर्क के जाल में फंसकर अविद्या का शिकार हो जाता है और शारीरिक सुखों की खोज में मृगमरीचिका में फंस जाता है।

**— शुभम्, ३२ ए, शेरगिल मार्ग,**
**नयी दिल्ली-११०००३**

⁂

चिंतन-मनन

# महापुरुषों का जीवन दर्शन

**☐ डा. सत्येन्द्र चतुर्वेदी**

यह एक सर्वमान्य तथ्य है कि जीवन व्यवहार के सम्यक् संचालन में हमें देश-विदेश के महर्षियों, मनीषियों उनके द्वारा रचित ग्रंथों, शास्त्रों और महापुरुषों की वाणियों से बड़ी प्रेरणा मिलती है। संसार में जन्मे प्रत्येक जन के जीवन में संघर्ष दुर्निवार है। पग-पग पर अनेक कठिनाइयां व्यवधान बनकर उसके मार्ग को अवरुद्ध करती रहती हैं। ऐसे में उसे कोई ऐसा अवलंब, ऐसा संबल जरूर चाहिये जिसके बल पर वह सब तरह के विरोधों, प्रतिकूल परिस्थितियों के झंझावातों को नकारता हुआ अदम्य साहस और सूझबूझ के साथ सफलता गंतव्य को प्राप्त कर सके। जीवन के इन कठिन क्षणों में ही महान् संतों, महापुरुषों और श्रेष्ठ साहित्यकारों के उदात्त विचार, उनके प्रेरक स्फूर्तिदायक वचन और आदर्श वाक्य हमें निरंतर आगे बढ़ते रहने की शक्ति प्रदान करते हैं।

'कृतं में दक्षिणे हस्ते जयो में सव्य आहितः' मेरे दायें हाथ में कर्म पुरुषार्थ है और मेरे बायें हाथ में विजय रखी हुई है। वेद प्रणेता महर्षि की ये ओजपूर्ण उक्ति एक निष्क्रिय निर्जीवजन में भी प्राण फूंक सकती है। यह थोथी धारणा मन में बसा लेना कितना निर्मूल और निस्सार है कि दुःख स्थायी रूप से हमारे जीवन में बसेरा डालकर पड़ा है और इसका कभी अवसान नहीं होगा। ऐसे दिग्भ्रांत जन को ही लक्ष्य में रखकर महाकवि कालिदास ने कितना सुंदर और सटीक कहा है - धरती पर ऐसा नहीं होता कि किसी को सुख ही सुख मिले तो किसी को दुःख ही दुःख। दुःख और सुख तो, सच में रथ के पहिये की तरह ऊपर और नीचे ही हुआ करते हैं। अपने परिवेश में ही हमें ऐसे कितने दृष्टांत और प्रमाण नहीं मिल जाते जब अंधकार से बिना घबराये धीरज और शांति से प्रतीक्षा करने पर हमारे अनेक समकालीनों को सफलता-सूर्य के दर्शन हुए। किन्तु यहां यह भी उल्लेख है कि मनोयोग पूर्व निरंतर उद्योग किसी भी कार्य व्यवसाय में सफलता की प्राप्त करने की पहली शर्त है- 'न ऋते श्रांतस्य सख्याय देवाः' अर्थात् बिना स्वयं परिश्रम किये, बिना थके देवों की मैत्री एवं सहायता नहीं मिलती। आर्य महर्षि का यह उद्बोधन प्रत्येक महत्वाकांक्षी जन के

जीवन में अविलंब ग्रहण करने योग्य सूत्र है। यह इस सत्य को रेखांकित करता है कि कोरे देवाधार से ही मार्ग की बाधाओं का शमन नहीं होता देव भी उद्यमी व्यक्ति पर ही अनुकूल होता है -'और यह क्या तुम सुनते नहीं विधाता का मंगल वरदान/शक्तिशाली हो, विजयी बनो, विश्व में गूंज रहा जय गान।' कामायनीकार महाकवि प्रसाद के शब्दों में हम विधाता की इस मंगलकामना से आखिर सम्प्रक्त क्यों और कब तक?

इतिहास साक्षी है कि चतुर्दिक आज हम जो नाम और चेहरे जगमगाते देख रहे हैं, उन सभी ने अपने जीवन में कठोर श्रम साधना की थी; वे चाहे वैज्ञानिक, व्यवसायी, समाज सुधारक अथवा क्रांतिकारी कोई भी क्यों न हों। भारत या विश्व के मानचित्र में आज तो शीर्षस्थ विभूतियां अंकित हैं। निकट से उनके जीवन का अध्ययन करने पर हम इसी निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि कोई भी विशिष्ट उपलब्धि कठोर आत्मानुशासन और अविराम परिश्रम का सुफल होती है। एक अकर्मण्य व्यक्ति उन्नति के सोपानों पर कभी नहीं चढ़ सकता। संत विनोबा के मतानुसार तो आलसी व्यक्ति का चिंतन तक भी बासी हो जाता है। महाकवि तुलसी ने ऐसे काहिलों को लक्ष्य कर ही कहा था -'दैव दैव आलसी पुकारा।' स्मरण रहे तुलसी परम हरिभक्त थे, ईश्वर की अवज्ञा उनको कदापि अभीष्ट न थी, किन्तु उन्हें इस तथ्य की ओर जनता का ध्यान आकृष्ट करना था कि अपनी दीन-हीन अकर्मण्यवृत्तियों को परमेश्वर के नाम की आड़ में छिपाना अनुचित और निंदनीय कर्म हैं। God helps those who help themselves हे प्रभो विपत्तियों से रक्षा करो यह प्रार्थना लेकर मैं तेरे द्वार पर नहीं

आया, विपत्तियों से भयभीत न होऊं यही वरदान दें। अपने दुःख से व्यथित चित्त को सांत्वना देने की भिक्षा नहीं मांगता, दुःखों पर विजय पाऊं, यही आशीर्वाद दें। यही प्रार्थना है। तेरी सहायता मुझे न मिल सके, तो भी वह वर दें कि मैं दीनता स्वीकार करके अवश न बनूं।' गीतांजलि के इस उद्धरण में साधक की अजेय और अदीन मुद्रा का कैसा प्रखर, चित्रण है। किंतु कुछ घोर निराश और आत्म केंद्रित जन जब जीवन से कट जाते हैं श्रम से कतराने लगते हैं, उन्हें ऐसा लगता है मानों संसार भर का संचित दुःख उनके हिस्से में आ गया है, शेष समस्त जन परम सुखी हैं, स्पृहणीय जीवन जी रहे हैं। ऐसे ही व्यक्तियों के विकृत जीवन दर्शन की तुलना जीवन मर्मी कवि रवि बाबू ने नदी के दो किनारों से की है - 'नदी का यह किनारा निःश्वास ले कर कहता है: मुझे विश्वास है सारा सुख उधर के किनारे पर पड़ा है, और नदी का उधर का किनारा हाथ मल-मल कर सोचता है कि सारे सुख तो इधर के किनारे हो गये।'

हमारा ऐसा निराशावादी दृष्टिकोण कदाचित् जीवन में निरन्तर मिलने वाली असफलताओं, भर्त्सनाओं, प्रतिकूल परिस्थितियों से जन्म लेता है। कुण्ठा, हताशा, अनास्था, पलायनवादिता की प्रवृत्तियों का मानव प्रकृति में सन्निवेश और प्रसार तभी होता है जब संतुलन और समरसता के अभाव में हम संसार की कठोर वास्तविकताओं से सामंजस्य नहीं कर पाते। यह जीवन भीषण चुनौतियों से पूर्ण प्रभु का मंगल वरदान है। वास्तव में हमारे सामर्थ्य की सच्ची परीक्षा तभी होती है जब कठिनाइयां सम्मुख हों पर हम आगे बढ़कर अपना लक्ष्य प्राप्त कर लेते हैं, सचमुच हमारा जन्म भी तभी सार्थक होता है। यहां हठात् हमें कर्मठता और गत्यात्मकता के जीवंत प्रतीक भारत के महान जननायक पं. जवाहरलाल नेहरू की अंतिम सांस तक अक्षय प्रेरणा स्रोत अमेरिकन कवि राबर्ट फास्ट की ये प्रसिद्ध पंक्तियां याद आ जाती हैं।

वनपथ हैं प्रियतर धोर अंधेरे और घनेरे
लेकिन वादें हैं जो करने पूरे और दूर जाना
है मीलों सोने से पहले, सोने से पहले।

**—ई २०१ कमल अपार्टमेन्ट, बनीपार्क**
**जयपुर-६**

◆

बजट शब्द वैसे आर्थिक लेख के संबंध में प्रयुक्त होता है, परंतु शब्दकोश में इसका अर्थ दूसरा ही होता है। 'चमड़े का थैला।' ठीक उसी तरह जिस तरह पोर्टफोलियो का अर्थ है –'बस्ता।' इंग्लैंड में सर्व प्रथम राबर्ट पाल्पोल ने इसे आर्थिक रूप दिया था। वे सदा कर – प्रस्ताव अपने चमड़े के थैले में बंद करके लाते थे और पार्लियामेंट भवन में खोला करते थे। **–डॉ. गोपाळ प्रसाद 'वंशी'**

# ऐसे पत्र मिलते थे बापू को

❑ कमल सौगानी

एक ताजा सर्वे के मुताबिक दुनिया में अब तक जितने भी महापुरुष हुए है उनमें से सिर्फ महात्मा गांधी ही एक ऐसे थे जो प्रत्येक पत्र का जवाब अपने चाहने वालों को बड़ी मुस्तैदी से दिया करते थे।

बापू के पास प्रतिदिन देशविदेश से सैकड़ों पत्र आया करते और वे यथा समय उनका जवाब भी दे देते। बापू ने अपने जीवनकाल में पांच लाख चालीस हजार चार सौ सताईस पत्र लिखे थे। सच पूछा जाय तो बापू के पत्रों की दुनिया ही अलग थी।

बापू को कुछ पत्र ऐसे भी मिलते जिन पर पता बड़ा विचित्र ढंग से किया गया होता, फिर भी पत्र दुनिया के दूर देशों से चलते उनके पास सुरक्षित पहुंच ही जाते। यहां प्रस्तुत हैं बापू के पत्रों पर लिखे कुछ रोचक और विचित्र पतों की बानगियां।

मिस मरीना १७ बरस की छात्रा थी। वह १९२६ में न्यूयार्क के एक कालेज में पढ़ती थी। एक दिन उसने बापू को भावभीना खत लिखा। जिसको पढ़कर खुद बापू को बहुत खुशी हुई। उन्हें इससे भी अधिक सुखद आश्चर्य तब हुआ जब उन्होंने पत्र के पते पर नजर डाली। उन्होंने देखा कि पते के स्थान पर सिर्फ उनकी फोटो चिपकी हुई थी।

ऐसे ही एक पत्र के लिफाफे पर ठिकाना लिखा था 'महात्मा गांधी जहां हैं वहां।' पोस्ट आफिस वालों ने यह खत जब पूज्य महात्मा गांधी को दिया तो वह इसके पते को पढ़कर बहुत जोर से खिलखिला कर हंस पड़े थे।

उन दिनों बापू आगा खां महल में नजरबंद थे। तब उन्हें किसी विदेशी का पत्र मिला जिस पर लिखा था 'टू ग्रेट अहिंसा नोबल इण्डिया' उन दिनों के भोलेभाले डाक कर्मचारियों ने यह पत्र बापू तक पहुंचा दिया।

दक्षिण अफ्रीका के एक किशोर ने बापू को खत लिखा और लिफाफे पर यह ठिकाना लिखा था – 'महात्मा गांधी, फारमर एण्ड वीवर कैम्प जुहू, भारत।' और हर पत्रों की तरह यह भी बापू तक पहुंच गया।

सन १९४० में एक अंग्रेज महिला ने लंदन से प्रेषित किये गये एक पत्र पर लिखा था – 'हिज हाईनेस महात्मा गांधी मारफत गवर्मेन्ट रूलिंग इण्डिया।'

❑

**Sayings of Bhagwan Mahaveer**

Accumulation of wealth and other material objects leads to sorrow and grief in the life here and hereafter.

Voilence, untruthfulness, theft, non-celibacy and possessions certainly constitute lack of restraint.

**From "WISDOM OF MAHAVIRA"**

*With Best Compliments From:*

**SUGAL AGENCY**

MADRAS ★ BANGALORE ★ DELHI

170, Triplicane High Road,
Triplicane, Madras-600 005.

तमिल कहानी

# माँ

मूलः **लक्ष्मी रमणन**
अनु.: **जयलक्ष्मी सुब्रमण्यन्**

जानी, जिसका पूरा नाम जाह्नवी है, सीढ़ियों से बहुत जल्दी जल्दी नीचे उतरी। उसकी नजर कमरे के मध्य खड़ी मां पर पड़ी तो 'हलो मम्मी' कहती हुई वह ज़रा झेंपी। अपने ही से, मन ही मन, वह प्रश्न करने लगी कि 'क्या यह विषय उन्हें बताऊं?' 'नहीं' मां के रूप-ढंग को देखते ही पल भर में यह विचार कहीं गायब हो गया।

साड़ी जो रूढ़िगत कछोटा मार कसी गयी है, माथे पर रुपया आकार की बिंदी, अनायास बांधा गया जूड़ा, आभरणों से लदी देह - यह है मां की वेशभूषा। वे शारीरिक गठन से न दुबली थीं और न ही मोटी। जानी उन्हें देखकर कल्पना में डूब गयी - 'और मां सादगी और सभ्यता के मेल से कपड़े पहनतीं तो कितनी सुंदर लगतीं।'

यों पूर्णतः रूढ़ि - रस्मों में निमग्न मां से वह कैसे अपने प्रेम की बात बता सकती है? 'क्या वे इसको समझ पायेंगी? क्या इसका स्वागत करेंगी?'

पूजागृह से अगरबत्ती की सुगंध हवा को महका रही थी। 'मां दीपक जलाकर विधिवत् पूजा पाठ करने बैठी होंगी। कम से कम आधे घंटे तक कोई उनसे बात नहीं कर सकेगा।' जानी अपनी मां के आचार-व्यवहार का स्मरण कर रही थी। कुछ क्षणों के बाद वह घर से बाहर निकल गयी और कार में बैठकर कहीं घूमने निकल पड़ी। लेकिन उसका मन मां के इर्द-गिर्द ही मंडरा रहा था।

मां के मन में पूजा के लिए इतना आग्रह क्यों? क्यों वे इसके लिए अधिक समय देती हैं? शायद हो सकता है कि पिताजी की उपेक्षा से टूटे मन को सांत्वना देने के लिए, वे भगवान की शरण में जाना चाहती हैं। ... पिताजी के व्यवहार से तो मुझे ऐसा नहीं लगता कि उन्होंने मां को यों पुराने संस्कारों में आबद्ध रहने के लिए विवाह किया हो।... तो आखिर बात क्या है?

जानी अपनी सहेलियों की माताओं से जब मिलती थी तो उनसे अपनी मां की तुलना करते समय उसे लगता था कि अमेरिका के 'डालरों' के बीच समुद्रगुप्त का कोई सिक्का रखा गया हो। 'यह विषमता कैसी और क्यों?'

मां लगातार क्या चार अंग्रेजी के शब्द

बोल सकती हैं? ·'सौन्दर्यलहरी' और 'सुन्दरकाण्ड' के पारायण में जितना समय वे व्यर्थ करती हैं, उसमें सही ढंग से अंग्रेजी में बोलना यदि वे सीख गयी होतीं तो ... ।'

जानी के पिता ठीक विपरीत आचरण के हैं। उन्हें शायद ही याद हो कि घर में पूजाघर कहां है। वे तो 'व्हिसकी' और 'जिन' के आदी हैं। सिगरेट के धुंए को ही वे सांस में लेते हैं।

सचमुच उन्हें वेदना होती होगी कि उन्हें मनोनुकूल पत्नी नहीं मिली। बार-बार जानी ने अपने पिता को उनकी मित्रमंडली में, यह कहते सुना है कि 'मेरी पत्नी बड़ी दकियानूसी है।'

मां क्यों पिताजी के मन के भार को समझकर अनुकूल व्यवहार न कर सकीं? कहीं मां की वजह से.. पिताजी अपने दफ्तर की एक-दो नारियों की संगति में... जाने पर विवश तो नहीं हो गये। जो ऐसी अफवाहें सुनने को मिलती हैं, कहीं मां ही उनका मूल कारण तो नहीं है?

'वे क्यों अपने पति की निराशा और संताप को जानने में असमर्थ हैं?'

इन्हीं विचारों में खोयी-सी वह गाड़ी चला रही थी कि अचानक उसे 'जानी' के नाम से पुकारे जाने का अनुभव होने लगा। वह तुरंत गाड़ी रोककर मुड़कर देखने लगी।

विनोद हांफता हुआ उसकी ओर दौड़ा आ रहा था।

जानी ने कार का दरवाज़ा खोलकर बड़े ही स्नेह-भाव से मुस्कराने का प्रयत्न कि
विनोद को अंदर बैठते ही जानी
मुखमुद्रा से उसके मन की परेशानी
अनुमान हो गया। उसका मुरझायापन छि
न रह सका। विनोद ने उसके कुम्हल
चेहरे को लक्षित कर प्रश्न किया 'ह
जानी। ऐनी थिग रांग विध यू?' जरा
सरककर वह उसके चेहरे को अपने नज
खींचने लगा।

जानी ने अपने को संभालते हुए क
'बहुत थकान का अनुभव हो रहा है। क्
हम किसी रेस्तरां में काफी पीने चलें?'

'श्योर! .... अगर तुम्हें एतराज नहीं
तो अपने घर चलेंगे। मैं तुम्हे अपनी मां
मिलवाना चाहता हूं।' विनोद ने बड़े
से उसे देखते हुए कहा। जानी अनमने
से मान गयी।

मन ही मन जानी सोच रही
'उसकी मां कैसी होंगी? क्या निसं
मुझे अपनी बहू के रूप में स्वीकार करें
अचानक आज उनसे मुलाकात होने व
है। इसकी अब तक कल्पना या विचार
था। अतः इस आकस्मिक घटना के सो
जानी के मन में संकोच और भय था।

विनोद कह रहा था, 'डिफेंस कालो
मेरा घर है।' वहां पहुंचने पर बाहर
घर का सुचारु ढंग और सुंदर बाग
देखकर जानी ने उससे प्रश्न कि
'विनोद! क्या यह आपका अपना घर है

'हम जानी के पिता के जैसे

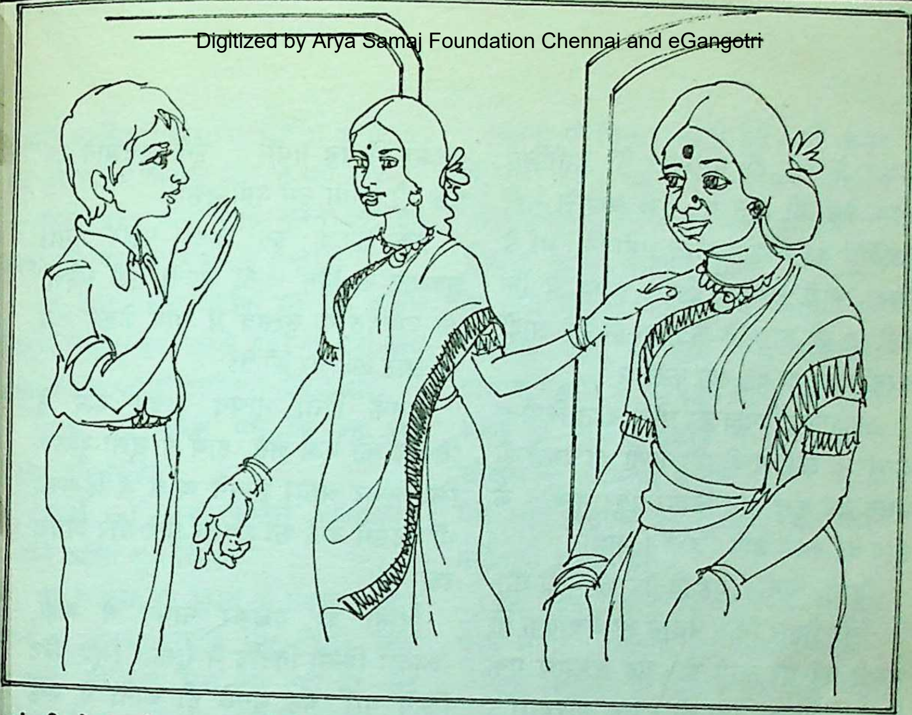

कंपनी के डाइरेक्टर नहीं हैं जिनका अपना बड़ा मकान हो।'

'ओह! विनोद... तुम पहले अपने मन के हीनभाव की हीनग्रंथि को दूर करो। मैं हरगिज़ नहीं चाहती कि कोई अपनी हैसियत की ओर इंगित करके कुछ भी कहे।'

'आइ एम सॉरी, जानी ... यों ही मजाक कर रहा था।'

अंदर घुंसते ही विनोद की मां ने उनका स्वागत किया। जानी ने उत्तर भारत के रिवाज़ के अनुसार उनका चरण स्पर्श किया। विनोद के प्रफुल्ल चेहरे से ही उन्होंने जानी के बारे में सब कुछ समझ लिया। वे पुत्र से कहने लगीं, अरे बेवकूफ! घर की बहू को क्या ऐसे ही बिना पूर्व सूचना के पहली बार कोई घर लाता है! खिलाने के लिए कुछ मिठाई भी नहीं।' यह थी उनकी परेशानी। फिर वे बहुत उत्सुकता के साथ जानी के नजदीक चली आयीं और प्यार से उसके केश पर हाथ फेरती हुई मधुर बोली में कहने लगीं, 'तुम दोनों बातें करो। मैं अभी एक मिनट में आती हूं।' वे रसोई के अंदर गयीं कुछ बनाने के लिए।

जानी अब अंतर्मुखी हो गयी। कल्पना करने लगी कि इसी तरह उसके बदले अगर विनोद उसकी मां को नमस्कार करता तो क्या होता? ... उसके मन में लंबा मुंह एवं तनाव के भाव के साथ मां का वह चेहरा घूम आया जो विनोद को नफरत से घूरता रहा हो। तुरंत ही वह चेहरा गायब भी हो गया। ... यह थी उसकी मां 'अंमुजम'।

साथ ही उसे पिताजी का भी स्मरण

आया। वे बड़े ही सुसंस्कृत हैं। इसीलिए उसके प्रेम की बात पर कुछ आपत्ति नहीं उठायेंगे। वह महसूस करने लगी कि 'मां से पूछना भारी समस्या होगी। संभव है कि कहीं मां की अनुमति के बिना ही उसे शादी करनी पड़े। तो वह क्या करेगी?'

उस समय विनोद की छोटी बहन विनीता दफ्तर से लौट आयी थी। जानी को देखते ही उसने सब कुछ ताड़ लिया। मधुर मुस्कान के साथ वह कहने लगी, 'हलो ! भाभी!'

'हलो, विनी!' यह विनोद की बारी थी।

'अरे भैया! बिना बताये ही अचानक यों भाभी को घर लाये हो! यह सचमुच एक आश्चर्य है। हां बड़ा ही सुखद आश्चर्य!... गुड चायस! कांग्रेट्स ।

'थैंक्यू, विनी।'

विनोद जानी की ओर बड़ी प्रीति से दृष्टि फेरते हुए मुस्कुराने लगा। उसकी नजर का नटखटपन देखते ही जानी का मुख लाज के मारे लाल हो गया।

यह कितना प्रेमभरा -स्नेहमय वातावरण है। मेरे घर में क्यों इस तरह के आत्मीय प्रेम और सौजन्य भाव नहीं दीखते? जब प्रतिष्ठा और हैसियत बढ़ती है, तो शायद प्रेम और ममता लुप्त हो जाती हैं।... शायद मानव के संबंधों में एक तरह से कृत्रिमता आ जाती है...।'

उस दिन घर वापस आने के बाद भी इसी तरह के विचार उसे उद्वेलित करते रहे। इन्हीं चिंताओं में खोयी वह बड़ी उलझन में पड़ गयी। ... इन्हें सुलझाने का कुछ भी उपाय उसे नहीं सूझा।

एक हफ्ता इसी तरह गुज़र गया। शुक्रवार के दिन जानी अपनी एक सहेली की वर्षगांठ के उत्सव में भाग लेकर रात को आठ बजे घर लौटी।

उसके पिता नाथन ड्राइंग रूम में सिगरेट का कश लेते, हाथ में खुली पुस्तक लिए नजर आये। सामने प्याले में ह्विस्की थी जिसमें बर्फ का टुकड़ा धीरे-धीरे पिघल रहा था।

जानी को देखकर नाथन ने कहा, 'जानी! किसी विनोद ने तुम्हारे लिए फोन किया था।' यह सुनते ही जानी ने उन् घूरकर देखा मानो वह उनका भाव पढ़न चाहती हो। 'इसी अवसर को उचि समझकर क्यों न विनोद के बारे में इन् कहा जाये?'

वह पिताजी से बोलने लगी, 'डैडी विनोद एम.ए. अंतिम वर्ष का छात्र है अगले साल आई.ए.एस. की परीक्षा में बैठने वाला है। वह आपसे मिलना चाह है। मैंने उसे कहा है कि आपकी सुवि जानकर मैं उसे बताऊंगी।' जानी ए साहसी लड़की थी। लेकिन फिर भी उ समय पता नहीं क्यों उसकी आवाज अधिक जोर नहीं था।

पुस्तक के पन्ने पलटते हुए अना नाथन ने प्रश्न किया, 'क्यों? किसलिए मुझसे मिलना चाहता है? ... शायद कि

नौकरी के लिए सिफारिश चाहता होगा, ... नहीं तो शायद नौकरी ही चाह रहा हो?'

उनके प्रश्न और प्रश्न करने का ढंग जानी को बिल्कुल अच्छा न लगा।

'नो डेडी। जस्ट लाईक दट वह आपसे मिलना चाहता है।' उसके चेहरे पर एक साथ क्रोध और लज्जा की लालिमा दौड़ गयी।

नाथन अब समझ गये कि वह क्या कहना चाहती है।

'जानी ...।' बड़ी कर्कश आवाज में उन्होंने कहना शुरू किया।

'तुमसे कुछ भी सुनने के पहले .. आइ वान्ट यू टू अण्डरस्टेंड वन थिंग! जिस विद्यार्थी की बात तुम कर रही हो, वह परीक्षा में पास होकर सरकारी नौकरी कर लेगा इस एक विश्वास पर उसे तुम अपना जीवनसाथी नहीं बना सकतीं। उसकी अपनी संपत्ति या जायदाद कुछ नहीं। मैं यही चाहता हूं कि इस मामलें में तुम्हारा ऐसा आचरण हो जिससे मेरे सम्मान को कोई आंच नहीं आये।'

'वे क्या समझाना चाहते हैं? अगर सामाजिक स्तर की बात ही उनका अभिप्राय है तो विनोद का सोशल स्टेटस उतना नहीं है।'

लेकिन ...

'विनोद के घर में प्रेम, खुशी, संतोष, कौतूहल आदि सबकी अक्षय निधि है। उनके घर की वह प्रसन्नता और केलि-कौतुक यहां पर नहीं!'

जानी यों विचार करती हुई अपने कमरे में चली गयी। उसके मन में अब उलझन थी। वह अपनी स्थिति समझकर आंसुओं को रोक न पायी। बाह्याडंबरप्रिय, सभ्य और वेशधारी पिताजी सिगरेट पीने, मद्यपान कर काक्टैल पार्टी मे भाग लेने, चटकीली पोशाक पहनने में पाश्चात्य लोगों की नकल करते हैं। लेकिन वास्तव में हृदय से वे खोखले हैं। हृदयगत भावना से अब भी वे पैसे और हैसियत का हिसाब रखने वाले रूढ़िवादी आदमी हैं।'

यह अहसास होने पर जानी को निराशा घेरने लगी। ... कितना बड़ा धक्का था वह!

जब पिताजी ही विनोद को पसंद नहीं करते तो मां कहीं इस शादी के लिए राजी हो सकेंगी ... नहीं, कदापि नहीं। वह सोचने लगी, 'नहीं! विनोद को यहां आना नहीं चाहिए। आयेगा तो अनावश्यक रूप से उसे अपमानित होना पड़ेगा। कैसे भी हो, फोन करके उसे आने से रोकना है। शादी के बारे में बाद में सोच-विचार कर तय किया जा सकता है।'

वह शादी करेगी तो उसी से! बस! यही निश्चय करना है कि शादी कब होगी?

अगले दिन सुबह से ही फोन खराब था।

अब क्या किया जाये... ।

कालेज जाने का मूड नहीं था। खाना भी पसंद नहीं आया। बिस्तर से उठकर स्नान करने का भी मन नहीं था। मां ने आकर बीच में दरवाजा खटखटाया। उत्तर न

मिलने पर वे लौट गयीं।

शाम को लगभग साढ़े चार बजे नौकरानी ने उससे कहा कि विनोद उससे मिलने आया है।

'विनोद!... ओह! गॉड!' वह सोचने लगी, 'वह क्यों यहां आया है? इसके अपमानित होने के पहले जल्द ही उसे वापस भिजवा देना है। और मैं इस वेश में उसके सामने जाऊंगी तो वह घबरा जायेगा।' नौकरानी से उसने कहा, 'उस आदमी को बैठने को कहो।' फिर वह जल्दी जल्दी तैयार होकर आयी। जैसे ही वह अपने कमरे से बाहर आयी पिताजी को उनके कमरे से बाहर आते देखा। ठीक उस समय विनोद भी वहां आ पहुंचा। विनोद को देखकर वे स्तंभित रह गये।

जिस घटना को वह टालना चाहती थी.... अब वही होने वाली है ... । जानी को महसूस हुआ कि मानो वह निष्प्राण हो रही है।

विनोद ने उनको देखते ही सम्मानपूर्वक उनका अभिनंदन किया ।

'कौन हो तुम?'

'सर! आइ एम विनोद।' उसने नम्रता के साथ जवाब दिया।

"कोई मेहमान बनकर आये तो उन्हें चाहिए कि वे बरामदे में इंतजार करें। मैंने यह निश्चित कर रखा है कि इस 'ड्राइंग रूम' में अपने खास मित्र, बड़े-बड़े व्यापारी और उच्च अधिकारियों से ही भेंट करूंगा?'

'सारी सर।' विनोद बाहर चला गया। अधिक व्यग्रता से उसे पार कर आगे चल और कार में बैठकर कहीं बाहर निकल पड़े।

जानी अब तक वहीं खड़ी यह घटना देख रही थी।

'विनोद' पुकारती हुई वह पीछे दौड़ती आयी। क्षमायाचना के भाव में विनोद को संबोधित कर कहने लगी, ' बुरा मत समझना। इधर दो दिनों से उन मूड खराब है।'

'हलो जानी! मैं तुम्हीं से मिलने था। कालेज जाने पर जब मालूम हुआ तुम नहीं आयी हो, तो चिंता होने लगी कहीं बीमार तो नहीं पड़ गयी।' विनोद हंसने का प्रयत्न करते हुए अचानक कहा

'ओह! विनोद! तुम यहां क्यों जल्दी चले जाओ यहां से! इस तरह बड़े-बड़े मकान में रहनेवालों के हृदय होते हैं। दूसरों की आंखों में खून बहे तब वे उन पर तरस नहीं खाते।' जानी भाव में लगातार बोलती गयी और अपनी हथे में मुंह छिपाकर बिलखने लगी।

'जानी!... यह सब क्या है? क्यों इस की अटपटी बातें करती हो।' विनोद अपने सीने से लगाते हुए अंदर ले अपने रूमाल से उसके आंसू पोंछने लगा।

'आइ लव यू डार्लिंग।'

'बैठो विनोद!' अचानक मां की सुनकर दोनों चौक पड़े।

'आज सवेरे से जानी ने कुछ भी

---

खाया
है। तु
हिन्दी
हंस रह
जल
संभाल
करवाय
विनोद
मां
के पह
करो।
हूं।' जा
विन
'जलपा
'को
हो। सो
हो न...
जल
तब अंध
तक उसे
बड़े प्या
बहुत पस
उस
विश्वास
आयी,
चिट्ठी
खोलकर
'प्यारी
शायद
ड़ गयी

खाया है। अभी अभी कमरे से बाहर आयी है। तुम्हारे साथ वह भी कुछ खायेगी।' टूटी हिन्दी में बोलती हुई मां निष्कलंक भाव से हंस रही थीं।

जल्दी से मुंह पोंछती हुई अपने को संभालकर जानी ने उन दोनों का परिचय करवाया। 'मां! यह हैं विनोद मेहता! विनोद ये हैं मेरी मां।'

मां अंदर जाना चाहती थीं। उन्होंने जाने के पहले कहा, 'जानी! तुम लोग बातें करो। मैं काफी और कुछ जलपान भेजती हूं।' जानी पुनः आश्चर्यचकित रह गयी।

विनोद ने शिष्टाचार की दृष्टि से कहा, 'जलपान की क्या आवश्यकता है?'

'कोई बात नहीं! तुम पहली बार आये हो। सो भी तुम तो जानी के विशेष मेहमान हो न...।' मां मुस्कुराती हुई चली गयीं।

जलपान करके विनोद जब जाने लगा तब अंधकार छा गया था। जानी बस स्टाप तक उसे छोड़ने आयी। तब विनोद ने उससे बड़े प्यार से कहा, 'मुझे तुम्हारी अम्माजी बहुत पसंद आयीं।'

उस पूरे दिन की किसी घटना पर जानी विश्वास न कर सकी। जब वह वापस घर आयी, अपनी मेज पर उसे अपने नाम एक चिट्ठी मिली। बड़े कौतूहल से वह उसे खोलकर पढ़ने लगी। ...

'प्यारी जानी!

शायद यह चिट्ठी पाकर तुम अचंभे में पड़ गयी होंगी। तुम्हें आश्चर्य होगा कि मैं, जिसे तुम अब तक महा रूढ़िवादी मानती रही हो, कैसे इस तरह की चिट्ठी लिख सकूंगी? वास्तव में अंतर्मन और बाह्य साज-सज्जा में कोई तारतम्य या मेल हो – इसकी कोई अनिवार्यता नहीं है। अपने मन की सभी इच्छाओं की हत्या करके मैं जी रही हूं। आज तक तुम कुछ नहीं जानती हो। मैं इन सारी बातों को शायद तुमसे प्रत्यक्ष रूप में कह न पाऊंगी। मन में छिपा सारा दुख कंठ को अवरुद्ध कर देगा। गले में बातें अटक जायेंगी। मन में विस्फोट के बावजूद भी मैं अवाक् रह जाऊंगी। इसीलिए यह चिट्ठी लिख रही हूं।

छोटी उम्र में मेरा विवाह संपन्न हुआ; मैं उसी समय ससुराल चली आयी। पति के कारण उनके मां-बाप को, और उनके वास्ते पति की उपेक्षा को सहती हुई इनसे समझौता करने की अभ्यस्त हो गयी। लेकिन मन में पता नहीं कितनी आशाएं-आकांक्षाएं थीं। मैं चाहती थी कि अन्य नारियों के समान मैं भी 'नायलान' और वाईल की साड़ी पहनूं; पति के साथ सिनेमा देखने जाऊं; सातवें वर्ग तक की पढ़ाई को जारी रखूं। ... अंग्रेजी में बोलने-पढ़ने की भी बड़ी लालसा थी। आभूषणों को दूर फेंककर सादगी अपनाना चाहती थी।

परंतु पुराने रीति-रिवाजों के तुम्हारे दादा-दादी ने मेरी इन इच्छाओं को पनपने नहीं दिया; उन्हें आमूल उखाड़ने का,

आशाओं को कुचल डालने का पुण्य कमा लिया। उन्हें डर था कि मैं उनके इकलौते बेटे को अपनी ओर आकृष्ट कर लूंगी; अपने कब्जे में कर लूंगी। .. उनकी अनुमति के बिना मैं तुम्हारे पिता के कमरे में भी नहीं जा सकती थी। उनसे बात नहीं कर सकती थी। कितनी शर्म की बात है कि एक पत्नी के लिए यह स्वतंत्रता भी नहीं। ... कैसे भी हो ... सौभाग्यवश तुम्हारा जन्म हुआ। तुम्हारे पिताजी हमेशा मेरी हंसी उड़ाते रहते हैं कि मैं रूढ़िवादी हूं। लेकिन कभी उन्होंने अपने मां-बाप को समझाया नहीं। और न ही उनके बंधनों से मुझे मुक्त कराने का प्रयत्न किया। उन्होंने अपनी पत्नी की इच्छाओं को समझने का भी कमी प्रयास तक नहीं किया। उलटा अपने को ठगा हुआ मानकर शराब में डूबते गये। रोज मद्यपान करने लगे। पत्नी के अधिकार से मुझे वंचित रखा ही... और साथ ही एक स्त्री सुलभ मान भी मुझे नसीब नहीं हुआ।

ऐसी दशा में ... मन में जब आत्मीयता या मैत्री नहीं, दांपत्य जीवन यांत्रिक बनता गया। जीवन रस उसमें कैसे संभव है?... रोज भगवान से मेरी प्रार्थना यही थी कि तुम्हें अच्छा जीवन मिले। आज पता चला कि मेरी प्रार्थना व्यर्थ नहीं हुई।

विनोद एक अच्छा सुसंस्कृत लड़का है। वह सदा तुम्हारा मन रखने का प्रयत्न करेगा। एक विवाह के लिए पहली आवश्यकता दो दिलों का मिलना है; अनन्य भाव है। बाकी सारी लौकिक बातें गौण हैं। तुम्हें तृप्त जीवन मिले।

आज तक मैंने तुम्हारे दादा-दादी बारे में तुम्हारे पिताजी से शिकायत न की। कभी अपने अधिकारों के लिए आवा नहीं उठायी। उनकी मृत्यु के बाद भी उ राह में दो पटरियों पर चलने वाली रेलगा के समान मेरा जीवन चलता आ रहा उसे मैं बदल नहीं सकती।

लेकिन तुम्हारे लिए मैं अवश्य आवा उठाऊंगी। मेरी पूर्ण सहमति और आशीर्वाद तुम दोनों के लिए है। पिताजी अनुमति लेने की जिम्मेदारी मैं अपने लेती हूं। कल तुम मुझे तुम्हारे लि वाद-विवाद करने वाले एक वकील के में देखोगी। मैं तुम्हारे पक्ष में हूं।'

'मम्मी! यू आर रियली ग्रेट।'

'मां, तुम कितनी सहनशील तुम्हारा कितना विशाल हृदय है। पित की तरह, मेरी कैसी मूर्खता थी कि मैं तुम्हें पुराणपंथी और रूढ़िवादी मान रही सचमुच पिताजी ही बाह्य समाज के दिखावाकर रहे हैं। सभ्यता का वेश धा किए हुए हैं। वे ही सच्चे अर्थ मे रूढ़ि हैं। यह कितने सौभाग्य की बात है कि मेरी मां हो।'

जानी उसी क्षण दौड़कर अपनी म गले लगकर उनसे आलिंगन करना चा थी।

I/१२, गांधी
जयपुर–३०

अमेरिकी हास्य-व्यंग्य

# गधों की खातिर

❑ आर्क ओबोलर

उस समय मेरी उम्र तीस के लगभग थी, और मैं शादी हो जाने के बावजूद हंसी-खुशी जीवन बिता रहा था। शहरी वातावरण से बेज़ार हो जाने के बाद मैंने ग्रामीण माहौल में आवास ग्रहण करने और ज़मींदारी करने का निश्चय कर लिया था। कैलीफोर्निया के अर्ध-मरुस्थली क्षेत्र में चार सौ एकड़ ज़मीन खरीदकर मैं उसे हरी-भरी बनाने के प्रयत्नों में जुट गया था। एक दिन अपनी ज़मीन का निरीक्षण करते समय मुझे न जाने क्या सूझी कि मैंने छोटे-मोटे कामों के लिए एक गधा खरीदने का निश्चय कर लिया।

शायद यह किस्मत के खेल थे कि उसी शाम मैंने दो पन्नों वाले स्थानीय साप्ताहिक में संक्षिप्त विज्ञापनों के कालम में एक नहीं, बल्कि इकट्ठे दो गधों की बिक्री का विज्ञापन पढ़ लिया। मैंने सोचा, कि यदि सस्ते मिल रहे हों, तो दो गधे एक साथ खरीद लेने में भी कोई हर्ज नहीं है। विज्ञापन में एक फार्म का फोन नंबर दिया गया था।

मैंने फोन किया, 'वह... इन गधों के बारे में बात करनी थी। ठीक-ठाक और स्वस्थ हैं न?'

'बिलकुल ..' उत्तर मिला।

'उनकी नस्ल, जो आपने लिखी है, उस नस्ल के गधे तो खुले में रहना पसंद करते हैं न? उनके लिए अस्तबल या साईस आदि की ज़रूरत नहीं होती। मैं ठीक कह रहा हूं न?'

'बिलकुल।'

'आप पचास डालर में जोड़ी देंगे?' मैंने अंधेरे में तीर चलाया।

'बिलकुल नहीं।'

'साठ डालर में।'

'बिलकुल नहीं।'

मैं नब्बे डालर पर पहुंचा, तो वह महाशय एक बार फिर केवल 'बिलकुल' पर आ गये और सौदा तय पा गया। दूसरे दिन एक ट्रेलर खड़खड़ाता हुआ मेरी ज़मीन पर आकर रुका और मैं फटी-फटी नज़रों से गधों की जोड़ी को देखता रह गया।

मैं सामान्य-से आकार के गधों की अपेक्षा कर रहा था, किंतु उनमें से एक गधा, जिस का रंग सुरमई था, किसी हृष्ट-पुष्ट खच्चर से कम न था। वह बैठी हुई हालत में एक आम गधे के बराबर था।

उसके कान लगभग डेढ़ फुट लंबे थे। दूसरा भूरे रंग का था और अभी बच्चा ही लगता था, लेकिन उसका बचपन आम गधों की जवानी को शरमा रहा था। वह बैठी हुई हालत में एक भीमकाय कुत्ते के बराबर दिखाई दे रहा था।

इनके स्वामी मिस्टर रिक्की ने मेरा दिया हुआ नब्बे डालर का चेक जेब में रखते हुए मुझे सूचित किया कि बड़े यानी सुरमई गधे का नाम पीटर था और उसकी आयु आठ और दस वर्ष के बीच थी, जब कि दूसरे उनके पहले साहबज़ादे थे, उनका नाम टोनी था और उनकी आयु केवल दो माह थी। मिस्टर रिक्की ने मुझे यह आश्वासन भी दिया कि मुझे उनके बारे में ज़रा भी चिंता करने की ज़रूरत नहीं थी। दोनों बाप–बेटा बहुत भद्र और शांति प्रिय थे। विशेष रूप में उस समय से दोनों के स्वभाव में बेहद गंभीरता आ गयी थी, जब से मिस्टर पीटर की अर्धांगिनी यानी टोनी की मां ने उन्हें वियोग–पीड़ा दे दी थी। अब उन्हें जहां रखा जाता था, उस घर को छोड़कर स्वयं कहीं नहीं जाते थे। मुझे मिस्टर रिक्की की बातों का विश्वास करना पड़ा क्योंकि जीवन साथिन या मां के देहांत के बाद बहुत से दो-पायों में बड़ी गंभीरता आ जाती है। कोई संदेह नहीं था कि चौपाये भी इस दुखांत से प्रभावित होते हों।

मिस्टर रिक्की का बयान इस हद तक तो सही साबित हुआ कि वे घर छोड़कर कहीं नहीं जाते थे। सब से पहले तो मान्यवर पिता यानी पीटर ने इस प्रकार मकान के गिर्द घूम-फिरकर मकान का निरीक्षण किया, मानो मैंने ऋण के लिए मकान को गिरवी रखने का प्रार्थना-पत्र दिया हो और बैंक-मैनेजर मुआयना कर रहे हों कि इस मकान पर इतना ऋण दिया भी जा सकता है या नहीं?

कुछ घंटों के बाद साहबज़ादे टोनी अपने पापा की संगति से बोर हो गया और उसने हमारी छोटी-सी कुतिया जेनी का पीछा करना शुरू कर दिया। वह उस समय तक उसे दौड़ाता रहा, जब तक वह घर में आकर एक अलमारी में नहीं छुप गयी। उसके बाद टोनी की नज़र अचानक स्विमिंग-पूल में अपने प्रतिबिंब पर पड़ गयी और वह तीन घंटे तक अपनी शक्ल देख-देखकर प्रसन्न होता रहा। उसकी प्रसन्नता उस समय काफ़ूर हुई, जब वह बेख़याली में स्विमिंग-पूल में गिर पड़ा।

पापा पीटर इस बीच बार-बार रसोईघर में प्रवेश करने का प्रयत्न कर रहे थे। दसवीं बार उन्हें रसोईघर से निकाला गया, तो उन्होंने बाहर ड्राइंग रूम की खिड़की के सामने डेरा डाल दिया और बड़े धैर्य और दृढ़ता से रात गये तक वहां खड़े हमारी सारी व्यस्तता का निरीक्षण करते रहे, यहां तक हम लाइटें बुझाकर सोने के लिए लेट गये।

दूसरी सुबह रहस्योद्घाटन हुआ कि

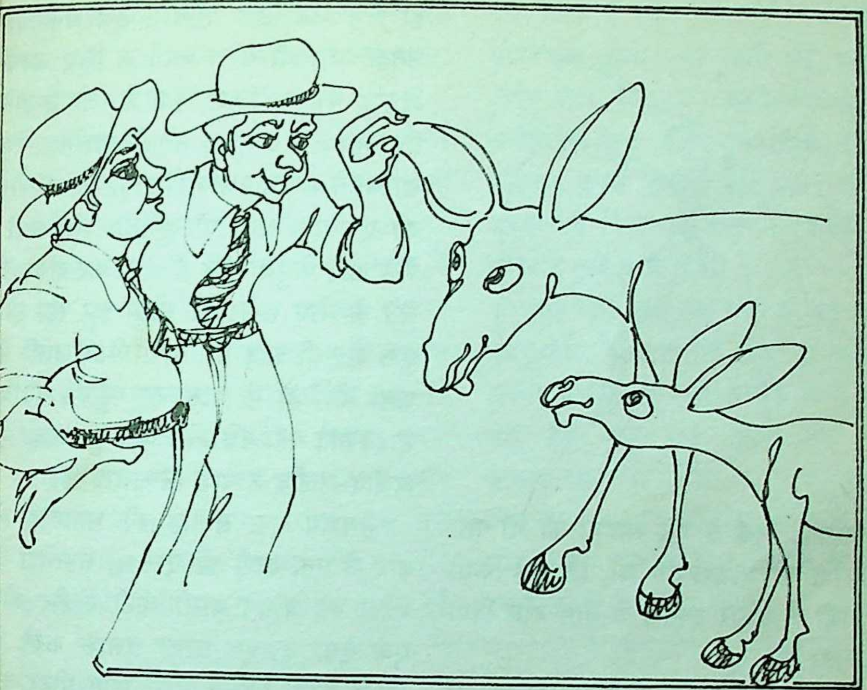

उसके बाद वे मालटों के पेड़ों की ओर निकल गये थे और लगभग तीन सौ डालर के मूल्य के फल और पौधे हज़म कर गये थे। उसकी घोषणा उन्होंने प्रातःकाल ढीचूं-ढीचूं के ऊंचे तराने के साथ की। इससे पहले भी मैंने जानवरों की बड़ी बड़ी ऊंची आवाज़ें सुनी थीं, लेकिन शयनकक्ष की खिड़की से प्रातःकाल इन बाप-बेटे की आवाज़ें सुनना एक कंपा देने वाला अनुभव था। हर उभरते हुए सुर के साथ मकान की बुनियादें तक कांपती हुई महसूस हो रही थीं। बेटे की आवाज़ में निश्चय ही अभी बाप वाली गहराई और परिपक्वता नहीं थी; लेकिन गले का उतार-चढ़ाव उसके उज्ज्वल भविष्य का पता दे रहा था।

गायकों की यह जोड़ी बहुत ही अच्छा खाना खाने वाली थी। ज़मीनों पर नज़र आने वाली हर चीज उनके मीनो में शामिल थी और यह पता चलाना बहुत मुश्किल था कि कौन-सी चीज़ उन्हें अधिक प्रिय है और कौन-सी कम। हर चीज़ को बहुत लगन से खाना और खाते ही चले जाना वह मानों अपना नैतिक कर्त्तव्य समझते थे।'

मैंने इस संबंध में परामर्श के लिए मिस्टर रिक्की से फोन पर संपर्क कायम किया। उन्होंने लगभग डांटते हुए मुझे

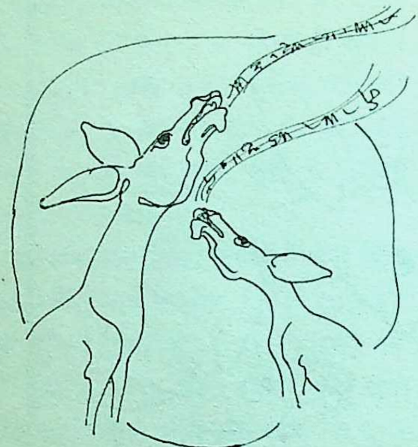

बताया, 'मूर्ख से मूर्ख आदमी को भी पता है कि गधे अधिक तंग करें, तो उन्हें किसी गाड़ी के बेकार एक्सल के साथ बांध दिया जाता है।'

मैं उसी दिन जीप में बैठकर निकटवर्ती कबाड़खाने पहुंचा और दो गाड़ियों के बेकार एक्सल और दो ज़ंजीरें खरीद लाया। जितने पैसों में यह चीज़ें आयीं, उतने पैसों में और दो गधे खरीदे जा सकते थे, लेकिन खैर ... यह उदाहरण तो मैंने यूंही दिया है। वास्तविकता यह है कि गधे खरीदने के मामले में एक बार गधा साबित हो जाने के बाद मैं भविष्य के लिए सावधान होने के बारे में सोच रहा था।

पहले मैंने टोनी को ज़ंजीर के द्वारा एक्सल से बांधा। फिर पापा पीटर की बारी आयी। पापा पीटर किसी गलतफहमी के अधीन बंध तो आराम से गये, लेकिन दूसरे ही क्षण जब उन्हें एहसास हुआ कि उनकी आज़ादी खत्म करने के लिए उ विरूद्ध षड्यंत्र किया गया है, तो उन् तत्काल ज़ोर लगाया। उनकी स्वतंत्रता आत्मा ने अपना प्रभाव दिखाया और ज़ं की एक-एक कड़ी यों खुलती चली ग जैसे कोई केंचुआ नींद से जाग कर अंग लेने के लिए शरीर को सीधा कर रहा एक दोलत्ती झाड़ कर पापा पीटर जल्दी फलों के पेड़ों के पास जा पहुंचें, ज साहबज़ादे वहीं बंधे क्रोध और झुंझलाह अजीब-अजीब आवाज़ें बिकालते रहे।

लगभग एक सप्ताह की भागदौड़ बाद मैं एक लारी का एक्सल, शहतीरों गट्ठों को बांधने वाली मोटी ज़ंजीर एक ऐसा मज़बूत ताला तलाश करने सफल हुआ, जिसके द्वारा पापा पीटर बांधा जा सकता था लेकिन जब तक उन्हें कुशलतापूर्वक बांधने में सफल तब तक हमारी ज़मीन लगभग अ असल अवस्था को पहुंच चुकी थी, चटियल मैदान का रूप धारण कर थी। हमारे सभी कीमती पौधे पीटर उनके साहबज़ादे के उदर में पहुंच चुके

अभी इन बाप-बेटे को बंधे हुए एक भी नहीं बीता था कि स्वयं मेरी पत्नी ही उन पर तरस आने लगा। उसने तत् प्रतिरोध किया, 'तुम्हें इन बेचारे बेजु को हर समय तो बांध कर नहीं चाहिए।'

'मेरा इरादा इन गधों को उस समय तक बांध कर रखने का है, जब तक यह घास-फूंस और कीमती पौधों में भेद करना न सीख जायें।' मैंने कहा।

'भेद करना तुम उन्हें किस प्रकार सिखाओगे? बाटनी पर लेक्चर दोगे?' मेरी पत्नी ने मासूमियत से पूछा।

अंत में पत्नी के प्रतिरोध को दृष्टि में रखते हुए मुझे एक ऐसा तरीका सोचना पड़ा, जिसमें गधों की आजादी भी कायम रहे और मैं नुकसान से भी सुरक्षित रहूं। मैंने एक फर्म से संपर्क कायम करके उनके कर्मचारियों को बुलाया और चारों ओर कांटेदार जंगला तैयार कराना शुरू कर दिया। उस समय पापा पीटर और साहबज़ादे टोनी हमारे नाश्ते से बची हुई पेस्टरियां और डबलरोटी आदि अपनी दाढ़ गर्म करने के लिए धीरे-धीरे चबा रहे थे और एक अजीब बेपरवाही की शान से कर्मचारियों को काम करते देख रहे थे। ज़मीन के एक खासे बड़े हिस्से पर गढ़े खोदकर उनमें कंक्रीट भरा गया। लोहे के पाइप खड़े किये गये और फिर उनके गिर्द कांटेदार तारें बांधी गयीं।

दूसरे दिन शाम तक गधों की यह ओपन एयर जेल तैयार हो गई जिस पर गधों की अपनी कीमत से कहीं अधिक खर्च आया था। मैंने जब उन्हें उनके इस महंगे आवास-स्थान में ढकेला, तो पापा पीटर ने दोलत्तियां चलाते हुए विद्युतगति से चारों ओर दौड़ना शुरू कर दिया। उनके जिगर के टुकड़े उनके पीछे दौड़ रहे थे।

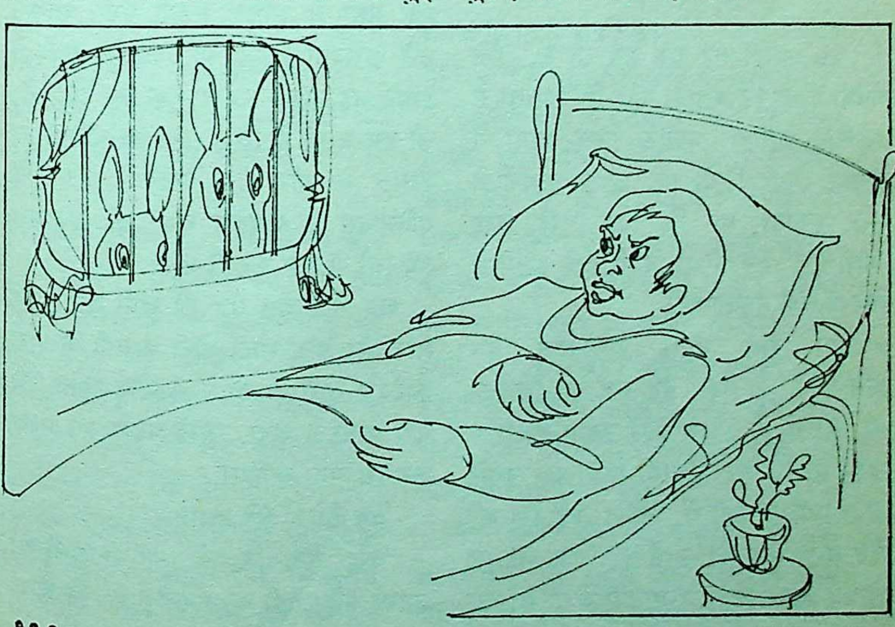

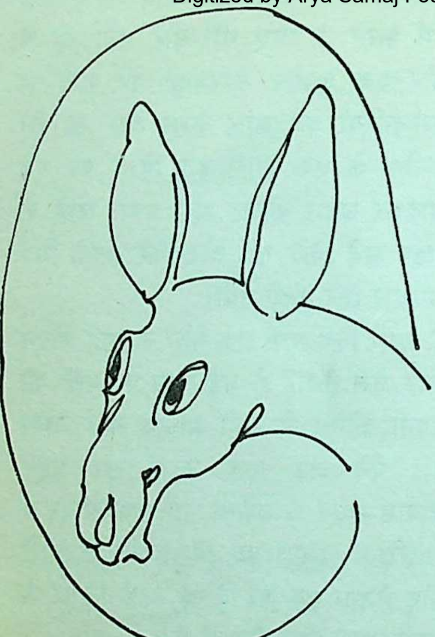

वह भागने की राह ढूंढ रहे हैं,’ मैंने अपनी पत्नी को बताया और निश्चिंतता से कहकहा लगाया, क्योंकि जिन लोगों ने जंगला तैयार किया था, उनके इंचार्ज ने मुझे बताया था कि यह पूरी तरह ‘गधा-प्रूफ’ जंगला था, यानी गधा इसमें से निकल नहीं सकता था।

रात बीत गयी। प्रातःकाल हम पति-पत्नी क़ी नज़र बैड-रूम की खिड़की पर पड़ी तो दो उदास चेहरे उदास नज़रों से अंदर झांकते हुए दिखायी दिये। यह हमारे दोनों गधों क़े चेहरे थे, लेकिन उन्हें देख कर मैंने अपने आप को उनसे बड़ा गधा महसूस किया। बाहर जाकर मुआयना करने से पता चला कि उन दोनों ने किसी तरह दो तारें ढीली कर ली थीं और उनके बीच से निकल आये थे।

उसके बाद मैंने डाक से प्राप्त होने वाली पुस्तकों में से एक का अध्ययन किया, जिसमें मानवता के कल्याण के लिए अनेक अनोखे प्रकार के वैज्ञानिक आविष्कारों से परिचय कराया गया था। इनमें से एक आविष्कार मुझे अपने मतलब का भी मिल गया। यह एक इलेक्ट्रिक चार्जर था, जिस के द्वारा सुरक्षा-जंगलों में इतनी विद्युत-शक्ति का करंट दौड़ाया जा सकता था कि एक ताकतवर भैंसा भी अंदर ही रहने पर मजबूर हो सकता था।

यह विद्युत यंत्र और उसकी सामग्री भी मुझे गधों से अधिक महंगी पड़ी, लेकिन उसे खरीदना ज़रूरी था, क्योंकि टोनी ने हमारे वह कपड़े चबाने शुरू कर दिये थे, जो हम सूखने के लिए बाहर अलगनियों पर डालते थे और पापा पीटर ने बचे-खुचे युक्लिप्टस के फूलदार पौधों की हजामत नये सिरे से शुरू कर दी थी।

जब मैं विद्युत यंत्र को लंबी वाटर प्रूफ तार और अन्य छोटी-मोटी सामग्री के द्वारा कांटेदार तारों के जंगले से जोड़ चुका, तो मेरी पत्नी ने कहा, ‘तुम्हें पहले इसे परख कर देख लेना चाहिए।’

‘वह कैसे?’ मैंने पूछा।

‘क्या तुम बिजली का मामूली-सा झटका सहन नहीं कर सकते? डर रहे हो?’

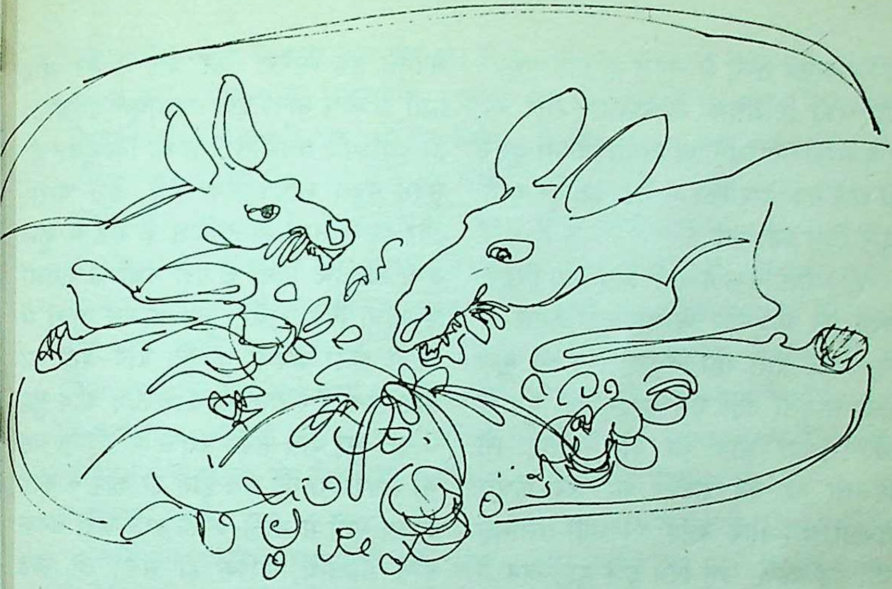

री पत्नी ने विस्मय से पूछा। उसने मानों ुझसे कायरता प्रकट करने की कभी अपेक्षा हीं की थी। इस बीच टोनी हिनहिनाया ौर तरंग में आकर नींबू के पौधों की ओर पका।

मैंने अलविदाई अंदाज़ में पत्नी की ओर खते हुए कहा, 'वैसे तो इस यंत्र की स्तिका में लिखा है कि इसके करंट का टका इंसान या जानवर के लिए निकारक नहीं है, लेकिन मैं सावधानी के प में बता रहा हूं कि मेरा वसीयतनामा स्कुटों के डिब्बे में रखा है।'

फिर मैंने अपनी सारी हिम्मत को इकट्ठा किया और धीरे से कांटेदार तार को छुआ। सरे क्षण मैंने अपने आपको छह फुट दूर मीन पर चारों खाने चित पड़े पाया। यह झटका मैं हंसी-खुशी सह गया, क्योंकि अब गधों के सीधे होने की आशा हो चली थी।

विद्युत यंत्र अड़तालीस घंटे के लिए सफल रहा। तीसरे दिन प्रातःकाल हमने अपने बैड-रूम की खिड़की से गधों का वही जाना-पहचाना राग सुनकर आंख खोली। बेटे और बाप को खिड़की से झांकते देखकर हमें अपनी आंखों पर यकीन न आया और हमने कई बार आंखें मलकर उनकी ओर देखा। तब मुझे यों महसूस हुआ, जैसे पापा पीटर हमारे विस्मय से आनंदित होते हुए व्यंग्यपूर्वक मुस्कराये हों।

मैंने अपने आपको सांत्वना दी कि शायद यंत्र का फ़्यूज़ उड़ गया था और बिजली की सप्लाई बंद हो गई थी। इसलिए वह दोनों जंगले से निकल आये थे। मैं घर

से निकलकर तेजी से जंगले के पास पहुंचा और बड़ी निश्चिंतता से कांटेदार तार को हाथ लगा कर देखने का प्रयास किया। दूसरे ही क्षण एक बार फिर मैं छह फुट दूर चारों खाने चित पड़ा था।

तीन रातों तक वे दोनों बाप-बेटा विद्युत तरंग की मौजूदगी के बावजूद जंगले से निकलकर आते रहे। विद्युत तरंग भी कुछ ऐसी मामूली नहीं थी। आदमी के मुंह में यदि एकाध सोने का दांत होता, तो बिजली का वह झटका खा कर पिघल सकता था। तारें आदि भी सही-सलामत थीं। यह पहेली उस दिन हल हुई, जब मैं प्रातःकाल चार बजे सहसा सुरमई अंधेरे में घर से निकल आया। मैंने देखा कि पापा पीटर अगली पिछली चारों टांगें इस प्रकार फैला कर बैठे हुए थे कि उनका पेट जमीन से लगा हुआ था। इसी प्रकार ज़मीन से चिपके हुए वह धीरे धीरे खिसककर जंगले की सबसे निचली तार के नीचे से इस प्रकार निकल रहे थे कि तार का कोई हिस्सा उन्हें छूने न पाये। साहबज़ादे टोनी बहुत सफलतापूर्वक उनका अनुकरण कर रहे थे। इस दृश्य ने मुझे यह महान शिक्षा दी कि गधा इतना भी गधा नहीं होता, जितना हम इसे समझते हैं।

इन सभी बातों को पंद्रह वर्ष बीत चुके हैं। इस बीच न जाने कितनी कांटेदार तारें जंग भरी और बेकार हुई और न जाने कौन–कौन–सी सुरक्षा–विधियां असफल साबित हुई लेकिन फिर अंत में मेरे गधों के बीच मानों एक भद्रतापूर्ण समझौ हो गया था। समझौता यह था कि सुबह सुबह बहुत शक्तिवर्धक पौधे, ढेरों चा और इसके साथ स्वीट डिश के रूप में अन्य स्वादिष्ट पौधों के पत्ते गधों के जंग में पहुंचा दिये जायेंगे। यह भोजन मात्रा इतना होना ज़रूरी था कि बाप–बेटा सारा दिन और रात का अधिकांश भाग चलाते हुए बीत सके। इसके अतिरिक्त भी ज़रूरी था कि रात होते ही कोई न जाकर गधों से मीठी–मीठी बातें करें। कान सहलाये, बल्कि हो सके, तो लोरी भी सुनाये। इस अवस्था में वे आ से जंगले के अंदर कैद रहते थे, लेकिन एक दिन भी उनके भोजन में कमी जाती या हम रात को उनका दिल बहल भूल जाते, तो दूसरे दिन वे रस्सी पर ल हुए कपड़े चबाते हुए नज़र आते।

जब हमारे यहां बच्चे हुए और वे बड़े भी हो गये, तो इन गधों की स्थिति कुछ और हो गयी। अब वह मानों ह बच्चों के लिए कारें, जिमनास्टिक साधन और रेस के घोड़े-मतलब यह सभी कुछ थे। कभी मैं देखता कि बच्चा पीटर की चौड़ी चकली पीठ फिसल कर उसके भयानक खुरों से कुछ इंच की दूरी पर गिर रहा है और मैं देखता कि उससे भी छोटा दूसरा टोनी के मुंह में हाथ डालकर

चौड़े–चौड़े दांतों का मुआयना कर रहा हैं। बच्चों की देखभाल के विषय पर पुस्तकें लिखने वाले लेखक यदि यह दृश्य देख लेते, तो निश्चय ही उनके रोंगटे खड़े हो जाते और वह हम जैसे माता–पिता की बेपरवाही के विषय पर भी पुस्तकें लिखने के बारे में अवश्य सोचते, लेकिन बहरहाल, हम पति–पत्नी ने शांतिपूर्ण रहना सीख लिया था। हमें पता चल गया था कि अपने दिल–दिमाग मज़बूत रखना भी गधों के साथ गुज़ारा करने के सिलसिले का एक महत्वपूर्ण गुर है।

गधों को सबसे अधिक घृणा मेरी जीप से है। उस जीप का हर हिस्सा उनकी घृणा का निशाना बन चुका है। मैंने उस पर बहुत विचार किया है कि आखिर वे दोनों जीप से इतनी खार क्यों खाते हैं? अंत में मैं इसी निष्कर्ष पर पहुंचा हूं कि यह जीप उन्हें मशीनी ज़िंदगी का चिन्ह नज़र आती है। वही मशीनी ज़िंदगी, जिसमें आपके पास फुरसत नहीं रहती कि बागों में खिलते हुए रंगा–रंग फूलों को देख सकें। सिर उठा कर घनघोर घटाओं का नज़ारा कर सकें या घर से निकल कर वर्षा का आनंद ले सकें.. और.. और... और हर रात गधों से मीठी–मीठी बातें कर सकें।

मशीनी ज़िंदगी को वह अपने लिए तबाही का संदेश समझते हैं। इसी लिए जीप को दोलत्तियां मारते हैं। उसकी केनवस की छत चबाते हैं और उसकी सीटें उधेड़ने का प्रयत्न करते हैं। कभी–कभी हम उन पर सख्ती करते हैं।

तो भी वह अपनी जगह पर पत्थर की मूर्ति बनकर जम जाते हैं। हर मुसीबत को वह इसी धैर्य और दृढ़ता से सहन कर जाते हैं।

कभी–कभी तो ऐसे अवसरों पर मुझे यों महसूस होता है, जैसे वे होंठों में कह रहे हों, 'मुसीबत की यह घड़ियां भी बीत ही जायेंगी .. जिस प्रकार इससे पहली बड़ी–बड़ी मुसीबतें बीत गयीं।'

(प्रस्तुतिः सुरजीत)

## अपनेपन का त्याग

कृष्ण की बांसुरी ही वहां धरी थी। वे स्वयं कहीं गये थे। सूने घर में अर्जुन ने प्रवेश किया। एकाकीपन खला तो बांसुरी से पूछने लगे - 'सुभगे, तुम्हें कृष्ण हर समय होठें से लगाये रहते हैं, जबकि हम सब उनकी कृपा पाने के लिए प्रयत्न करने पर भी सफल नहीं हो पाते, इसका क्या रहस्य है?'

बासुरी हंसकर बोली - 'मेरे अंतर को देखो न, बिल्कुल खाली है। उसमें बजाने वाले के स्वर ही गूंजते हैं। अपनेपन का अवरोध उसमे कहीं कुछ है ही नहीं। अपनेपन को गंवाकर किया गया सच्चा समर्पण सदा होठों से लगाये जाने योग्य ही तो होता है।' —रणवीर सिंह सेठी

हास्य

# नींद क्यों रात भर नहीं आती ?

❑ डॉ. बरसानेलाल चतुर्वेदी

साहित्य विरह-वर्णन से भरा हुआ है। कालिदास का मेघदूत ले लें, सूरदास का भ्रमरगीत ले लें या गालिब को ले लें, सभी ने प्रेयसि की याद में तड़पने की कविता लिखी है। सुखिया सोता है विरही रोता है। प्रेमी को नींद नहीं आती। वो रात रात भर करवटें बदलता है। सूरदास कहते हैं – 'निस दिन बरसत नैन हमारे।' ग़ालिब भी यही कहते हैं– 'मौत का एक दिन मुअय्यन है, नींद क्यों रात भर नहीं आती।' उन्हें पहले अपने दिल के दर्द पर हंसी आती थी, अब किसी बात पर नहीं आती। प्रेम कर काहू सुख न लह्यो।' पहले जमाने में नींद लाने की गोलियां नहीं चली थीं, प्रेमी नर-नारी नींद की गोलियां खाकर सो सकते थे किंतु अनुभव से ये बात मालूम हुई कि मुहब्बत में नींद उड़ जाने पर ये गोलियां ज़्यादा असर नहीं करतीं। प्रेमी तो रात-रात भर जागकर तारे गिनता ही है। गीतकार रमानाथ अवस्थी के शब्दों में:

'सो ना सका कल याद तुम्हारी

आज प्रेम करना वास्तव में 'तलवार की धार पे धावना' है। व्यक्ति इतना व्यस्त हो गया है कि उसे प्रेम करने की फुरसत ही नहीं है। वे बड़े भाग्यवान हैं और ईर्ष्या के पात्र हैं जो आधुनिक समय में भी सच्चे प्रेम में सुधबुध खो सकते हैं। फिल्मों में तथा मसालेदार उपन्यासों में प्रेम वर्णन अवश्य मिल जाता है लेकिन इनमें वर्णित तो प्रेम चौदह कैरटी होता है, बाईस कैरटी नहीं।

प्यार का स्थान पैसे ने ले लिया है। जिसे देखो, करोड़पति होने के चक्कर में भागा जा रहा है। कहीं कहीं इतना धन जमा हो गया है कि उसको छिपा कर रक्खा जाता है ताकि किसी की नज़र न लग जाय। यही कालाधन या 'ब्लैकमनी' कहा जाता है जिसकी तलाश में सब परेशान रहते हैं। जैसे प्रेमियों को नींद नहीं आती वैसे ही 'श्यामधन' के स्वामियों को भी 'रेड' के डर से रात-रात भर नींद नहीं आती। एक कवित्त है :

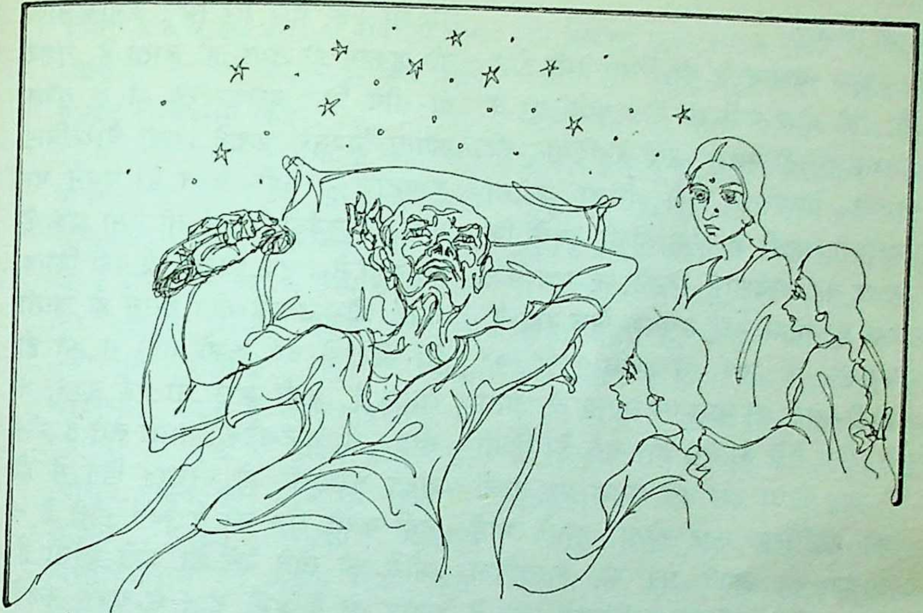

नहीं आती। एक कवित्त है :

'ब्लैकमनी' मनु हीरा की कनी,
बेर बेर गिनबे में मन हरषावे है।
घूंघट करे बैठी नवेली दुल्हन जैसी,
चुपचाप घर में बैठी शरमावे हैं।
परे जब छापा तब याद आवे 'पापा',
लिस्ट जब बने तब मन घबरावे है।
जान को बवाल दो नम्बर को धन भयो,
चिंता रहे दिन में न नींद रात आवे है।

आपका मनचाहा कार्यक्रम आकाशवाणी अथवा दूरदर्शन पर आने को है और आपका रेडियो अथवा टेलीविजन का सेट अस्वस्थ हो जाता है तब आप अनुभव करेंगे कि घर में मातम सा छा जाता है। कभी कभी 'मैकेनिक' दूज का चाँद हो जाता है—'नगरी नगरी द्वारे द्वारे ढूंढ रे सांवरिया।' वे दुकान पर नहीं मिलते आप उनके घर जाते हैं और पता चलता है वे ससुराल गये हैं और चार दिन बाद आयेंगे, रात हो गयी है, कल के कार्यक्रम आपको देखने हैं, बच्चे घर में अलग मुँह फुलाये बैठे हैं, मैडमजी का टेम्परेचर वैसे ही चढ़ जाता है। आप घर के मुखिया हैं, सेट ठीक कराने की ज़िम्मेदारी आपकी है, अर्धरात्रि हो चली है सब चैन की नींद ले रहे हैं किंतु आप हैं कि बारबार कोशिश करने पर भी नींद

नहीं आती।

कुछ स्वभाव से ही चिंता-प्रेमी होते हैं। 'जो बीत गयी सो बीत गयी' पर वे विश्वास नहीं करते। उन्हें बेबुनियाद की भावी विपत्तियों की चिंता हमेशा सताती रहती है। 'काजीजी दुबले कि शहर का अन्देशा।' किसी का यश फैल रहा है, किसी का अपयश फैल रहा है, पड़ोसी के घर में पति-पत्नी का छोटी-छोटी सी बात पर तनाव हो जाता है, फिर वैसे के वैसे हो जाते हैं। किसी ने कह दिया इस वर्ष मंगल ग्रह वालों को शारीरिक कष्ट होगा, हमारे भाई साहब को अपने घर की वास्तविक चिंताओं के अतिरिक्त चिंतायें और हैं कि इतने परेशान रहते हैं कि उन्हें रात भर नींद नहीं आती। चिंता करने का इतना शौक है कि मरने के बाद की चिन्तायें भी उन्हें सताती रहती हैं। उनका पुनर्जन्म हुआ तो कहां होगा? मृत्योपरांत जीवन सुख से कटे, किसी करोड़पति परिवार में जन्म मिले, विदेशों में शिक्षा मिले, अफसर बनें आदि आदि। पहले तो गोलियों के सहारे थोड़ा बहुत सो भी लेते थे लेकिन जब से नये जीवन के बारे में सोचने लगे हैं तब से तो निंदिया रानी यह कर उन्हें 'गुडबाई' कर गई है कि आप दिन रात चिंता देवी की 'कम्पनी' में ही रहो।

शंक करने की दवा लुकमान हकीम पर भी नहीं थी। मेरे मित्र अनोखेलाल को ज़ुक़ाम हो गया, हो जाता है, मगर दो तीन दिन चलता रहे तो वे तुरंत अपना 'एक्सरे' कराने किसी चैरिटेबिल अस्पताल में पहुंच जाते हैं। पूछने पर बोले 'चतुर्वेदीजी मुझे तो ऐसा शक है कि कहीं मेरा एक फेफड़ा तो नहीं बिगड़ गया' और उनकी नींद हराम हो जाती है। सीने में दर्द कभी सर्दी से भी हो जाता है, कहीं जरा भी दर्द हुआ, वे सीधे उसे 'हार्टअटैक' समझ लेते हैं और तुरंत घरवालों को परेशान दिन में ही नहीं करते रात को न स्वयं सोते हैं न औरों को सोने देते हैं। कहीं खाँसी हो जाय तो वे बड़ी शान से सबसे कहते फिरेंगे 'कुछ कुछ 'अस्थमा' का शक हो गया है जांच चल रही है यार। क्या बताऊं चिंता के कारण नींद ही नहीं आती।' कहिये, है उनका इलाज आपके पास?

जिन सौभाग्यशालियों के घर दूरभाष लगा हुआ है उनकी निदि रानी को भगाने के लिए वह काफी है रात के दो बजे घंटी बजती है। आ 'हनीमून टायर फैक्टरी' से बोल रहे है और आप गहरी नींद से ये कहने उठते हैं कि आपका नंबर ये नहीं आप थोड़ी देर ही सो पाते हैं कि पड़ो को उनकी सास की असामयिक मृ का समाचार देने को फोन की

बजती है और इस सेवा के बाद जो नींद उखड़ती है तो उषाकाल तक आप करवट ही बदलते रहेंगे।

सौभाग्य से या दुर्भाग्य से आप चार पुत्रियों के पिता हैं और वे सभी. अविवाहित हैं तो भी आपकी नीद गयी। दहेज प्रेमियों के बारे में आप सोच सोच कर रातभर जागेंगे। दहेज लेने की नयी-नयी शैलियों का ये लोग आविष्कार करते हैं और लड़कियों के पापाओं की नींद में खलल डालते हैं। 'देखिए साहब, हम दहेज तो नहीं लेंगे लेकिन हमारा लड़का विदेशी विश्वविद्यालय की अमुक डिग्री लेना चाहता है, हम पर तो जो कुछ था लगाकर उसे इतना पढ़ा दिया अब आपकी जिम्मेदारी है। बड़ा अफसर बनेगा आपकी लड़की ही ठाठ से जीवन बितायेगी, हमारा क्या है, आज मरे कल दूसरा दिन।' करिये इंतज़ाम दो लाख का और भेजिये अपने होने वाले दामाद को विदेश। दूसरे साहब कहते हैं, 'भाई साहब, हमें दहेज नहीं लेना, मकान की किस्त देनी है, रात-रात भर नींद नहीं आती। इन्हें चुका दीजिये ताकि आप भी सुख की नींद सो सकें और हम भी।' तीसरे साहब कहते हैं, 'लड़का हाल ही में नौकरी में लगा है, पुराने स्कूटर पर ही जाता आता है, इसके 'स्टेटस' में भी फर्क आता है और हीनताभाव से भी दुःखी रहता है इसके लिए एक मारुति ही उपहार में दे दें, हमें नकद कुछ नहीं चाहिये।'

कहिये साहब, आप कैसे सो पायेंगे? आई.ए.एस. का भाव तो करोड़ का चल रहा है। दूल्हे बिकते हैं, जरा मंडी में जाइये, भाव सुन-सुनकर ही आपकी नींद गायब हो जायेगी।

बड़े भाग्यवान हैं वे लोग जो आज की दुनिया में गहरी नींद सो पाते हैं।

— १३/७, शक्तिनगर,
दिल्ली—११०००७

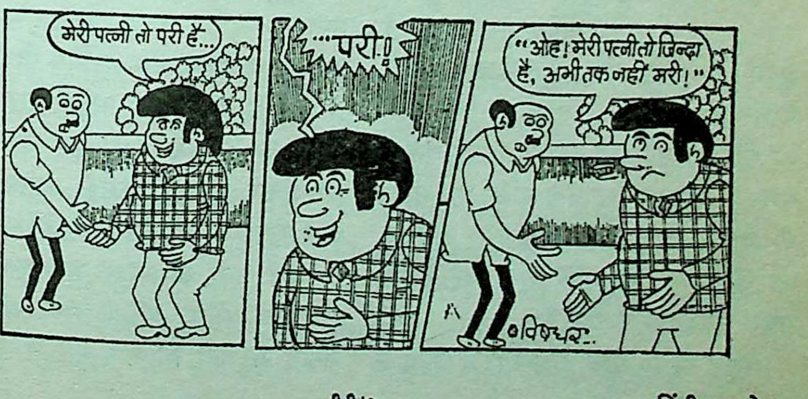
मेरी पत्नी तो परी है...
...परी!
"ओह! मेरी पत्नी तो जिन्दा है, अभी तक नहीं मरी!"
विषधर

नागपंचमी पर विशेष

# नागमूर्तियां एवं नागपूजा

❑ प्रभात कुमार सिंघल

भारतवर्ष में नागपूजा का प्रचलन अत्यंत प्राचीन काल से रहा है। संस्कृति एवं कला के अनेक प्रसंगों में नाग पूजा का विवरण मिलता है। नाग भगवान शिव के गले के हार हैं। शेषनाग के फन पर कृष्ण खड़े नजर आते हैं। मथुरा में नागपूजा के अनेक प्रमाण मिले हैं। अनेक नाग मूर्तियां और नाग मंदिर वहां पाये गये हैं। शेषायी विष्णु और चरण दबाती लक्ष्मी की मूर्ति तथा नागराज की खंब मूर्ति राजस्थान के बाडौली मंदिर से मिली है। मध्यप्रदेश में भी नाग मंदिर है। आदिवासियों में नाग पूजा की विशेष परंपरा है।

प्राचीन समय में शक और कुषाण युग में मथुरा में कई नाग मंदिर थे। मथुरा में खुदाई से प्राप्त एक शिलालेख से पता चलता है। आज जिस जगह पर जिलाधीश का कोर्ट है वहां कभी कृषाण युग के शुरू में नागराज दधिकर्ण का एक मंदिर था। मंदिर के ध्वंसावशेष तो नहीं मिले परंतु नागराज की बिना सर की मूर्ति प्राप्त हुई है जो मथुरा संग्रहालय में रखी है।

मथुरा के १० मील दक्षिण में छड़गांव से सन १९०८ में विशाल नाग मूर्ति मिली है। मूर्ति के पिछले भाग में ब्राह्मी में एक लेख है, जिसका मतलब है महाराज हुविष्क के राज्य वि.सं. १७५ में पिण्डप्य के पुत्र सेनहस्ति और वीर वृद्धि के पुत्र भोनुक नाम के दो मित्रों ने इस नागमूर्ति को उसी के तालाब पर प्रतिष्ठित किया था। यह नागमूर्ति मथुरा संग्रहालय में है।

प्रोफेसर हर्टल के नेतृत्व में जर्मन पुरातत्वज्ञों के दल ने मथुरा के पास सोंख नामक स्थान पर खुदाई कराई जिसमें मंदिर में नाग समुदाय की १९ मूर्तियां मिलीं। इनके मध्य में सप्त फनधारी नागराज को सिंहासन पर बैठे दिखाया गया है। दायीं ओर सप्तफन युक्त प्रमुख नाग हैं। उनके इधर-उधर अनेक नाग नागिन विनीत भाव में खड़े हैं। उनमें से दो नागिनें राजसी चंवर और छत्र लिए खड़ी हैं। इस नागमूर्ति का शिल्पांकन भव्य है। इसके समीप ही एक और नागराज की मूर्ति मिली है।

शुंग काल की अपेक्षा शक-कुषाण काल में नाग मूर्तियां अधिक सुंदर और काफी संख्या में बनी हैं। नाग-नागिन की अनेक

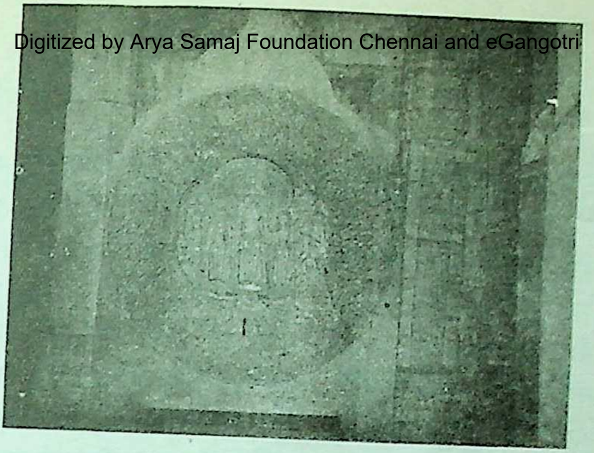

*राणकपुर मंदिर में नागमूर्ति*

मूर्तियां मथुरा संग्रहालय में संग्रहित हैं। छड़गांव से प्राप्त मूर्ति ७ फीट ९ इंच ऊंची है। यह पुरुषाकार रूप में है इसमें सप्त फनधारी नागदेव का अपना दायां हाथ अभय मुद्रा में उठाये और बांयें हाथ में चषक लिए तराशा गया है। मूर्ति में कुंडलियां स्पष्ट नजर आती हैं। संग्रहालय में दूसरी महत्त्वपूर्ण मूर्ति कुषाण की भूमि नाग की है। बांयें हाथ में अमृत कलश एवं दायां हाथ अभय मुद्रा में है। यह मूर्ति शक्ल नामक गांव से प्राप्त हुई हैं।

राजस्थान में बाड़ौली मंदिर से शेषायी विष्णु की अत्यंत कलात्मक मूर्ति मिली है। इस प्रदेश में नागपूजा संबंधी लोक मान्यताएं, कथाएं एवं विश्वास सभी वर्गो विशेषकर आदिवासी समाज में व्यापक रूप से पाये जाते हैं। यहां के मीणा समाज में विश्वास है कि मरने के बाद यदि देव योनि प्राप्त होती है तो मनुष्य सर्प रूप धारण करता है। मीणों के साथ साथ गरासियों में भी नागपूजा प्रचलित है। नाग मूर्ति खुले आसमान के नीचे किसी देवरे पर स्थापित कर दी जाती है। अनेक वीर पुरुष गोगाजी, तेजाजी एवं कल्लाजी नाग संदर्भो में राजस्थान में पूजे जाते हैं। राजस्थान के आदिवासी समुदाय में नागपूजा प्रमुख धर्म है।

मध्य प्रदेश के नागपाठा नामक स्थान पर नागों की विविध प्रतिमाएं मिली हैं। खजुराहो के कंदरियां महादेव मंदिर में नाग कन्या की मूर्ति पायी जाती है। अनेक प्रकार के आभूषणों से सजी कन्या के सर पर नाग फन का छत्र है। उरविला मंदिर में कालियानाग और बुद्ध दोनों की प्रतिमाएं हैं। बुद्ध शिष्य कश्यप को विषधर नाग दे रहे हैं। इस तरह की मूर्तियां पेशावर संग्रहालय में भी सुरक्षित हैं।

भारतीय कला एवं शिल्प मे नाग

मूर्तियां विविध रूपों में मिलती हैं। पुरुष विग्रह और सर्प विग्रह विशेष रूप से प्रचलित है। बलराम को शेष का अवतार कहा गया है। बौद्ध अनुश्रुतियां भी नाग के मानवीय और दैवीय स्वरूप से इंकार नहीं करतीं। शिल्परत्नम नामक ग्रंथ में नाग मूर्तियों के निर्माण की सम्पूर्ण प्रक्रिया, नियम आदि का विवरण मिलता है। उसमें वर्णित विवरण के अनुसार नाग मूर्ति का उपर का भाग मनुष्य समान तथा निचला भाग सर्प समान होना चाहिए।

ऐतिहासिक साक्ष्यों से पता चलता है कि पांचाल देश की राजधानी अहिच्छत्रा के आदि देव नाग थे। अग्निमित्र आदि शासकों ने अपने सिक्कों पर नाग अथवा सर्प की मूर्तियां अंकित करायी थीं। पुराणों में भी नागों को अनेक रूपों में उल्लेखित किया गया है। मोहन जोदड़ो और हड़प्पा से मिली मुद्रा पर नागों का अंकन बताता है कि प्राचीन समय से ही नाग पूजा का प्रचलन रहा जो आगे चल कर मूर्तिकला और मंदिरों के रूप में और विकसित होता गया।

**— के. आर. ५६, सिविल लाइन्स,**
**कोटा, राजस्थान**

◆

## 'नवनीत हिंदी डाइजेस्ट' की चंदे की दरें

* एक प्रति (भारत में) रु. ६.०

**भारत में (साधारण डाक से)**

* एक वर्ष : ६५ रु.; दो वर्ष : १२० रु.; तीन वर्ष : १७० रु.

**विदेशों में समुद्री मार्ग से (एक वर्ष के लिए)**

* पाकिस्तान, श्रीलंका, रु.१२०; अन्य देश रू.१८५

**विदेशों में हवाई डाक से (एक वर्ष के लिए)**

* प्रत्येक देश के लिए रु.३१०

* बम्बई से बाहर के चेक भेजने वाले रु. ७ अधिक भेजें।

**—व्यवस्थापक, नवनीत हिंदी डाइजेस्ट, भारतीय विद्या भवन, बम्बई–४०००**

अतीत के प्रांगण में

# महान वैज्ञानिक वराहमिहिर

❑ श्यामनारायण कपूर

वराहमिहिर अपने समय के असाधारण प्रतिभा संपन्न ज्योतिषी थे। गणित और फलित ज्योतिष की दोनों शाखाओं के लिए उनके योगदान अत्यंत महत्वपूर्ण माने जाते हैं। फलित ज्योतिष के क्षेत्र में तो उनका सा दूसरा विद्वान अभी तक नहीं हुआ। उनकी इस विद्वता से उनकी गणना संवत् प्रवर्तक उज्जयिनी के सम्राट विक्रमादित्य के सुप्रसिद्ध नवरत्नों में की जाती है।

सम्राट विक्रमादित्य की राजसभा में उस युग के श्रेष्ठ कवि, लेखक ज्योतिषाचार्य एवं विविध विषयों में पारंगत विद्वानों में नौ को विशिष्ट सम्मान प्राप्त था और उनको 'नवरत्न' के नाम से जाना जाता था :

धन्वन्तरि (उस समय के श्रेष्ठतम चिकित्सक), क्षपणक, अमर सिंह (अमर कोष के रचयिता), शंकु, बेताल भट्ट, घटखर्पर, कालिदास, वराहमिहिर और वररुचि।

वराहमिहिर के समय के विषय में विद्वानों में मतभेद है। कुछ विद्वान उनको विक्रम का समकालीन न मानकर छठी शताब्दि का स्वीकार करते है। संवत् प्रवर्तक 'विक्रमादित्य' के लेखक सुप्रसिद्ध विद्वान डॉ. राजबली पाण्डेय के अनुसार – वराहमिहिर की 'बृहत् संहिता' में उपलब्ध अन्तःसाक्ष्यों के आधार पर उन्हें पांचवीं या छठीं शताब्दी में नहीं रखा जा सकता। इस ग्रंथ में मध्य प्रदेश के उल्लेख के संबंध में भारत का प्रादेशिक विभाजन विस्तार से वर्णित है जो गुप्त युग के अभिलेखों से ज्ञात प्रादेशिक विभागों से मेल नहीं खाता। बृहत् संहिता के १३ वें अध्याय के दूसरे और तीसरे श्लोक के विषय में उनका कहना है कि इसमें जिस शक संवत् का उल्लेख है वह युधिष्ठिर संवत् २५२६ के आधार पर वराहमिहिर की ज्योतिष शास्त्रीय परंपरा में प्रचलित विक्रम संवत् से ५१५ वर्ष पूर्व का है। वराहमिहिर विक्रम के समकालीन थे या बाद में हुए इससे उनकी विद्वता और महान् पाण्डित्य पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता। प्रस्तुत लेख में विज्ञान की विविध विद्याओं के क्षेत्र में उनके योगदान की चर्चा की जा रही है।

**ज्योतिष :**

वराहमिहिर ने अपने पूर्ववर्ती आचार्यों

की गवेषणाओं और उनके द्वारा प्रतिपादित सिद्धान्तों को सुव्यवस्थित एवं संकलित कर 'पंच सिद्धांतिका' ग्रंथ की रचना की। इसमें पूर्व प्रचलित ज्योतिष के पांच सिद्धांतों - पितामह, वशिष्ठ, रोमक, पौलिश और सूर्य सिद्धांत के विवरण प्रस्तुत किये। इनका दूसरा प्रसिद्ध ग्रंथ 'वृहत संहिता' है। इनके वृहज्जातक और 'बृहद विवाहपटल' की गणना भी प्रामाणिक ज्योतिष ग्रंथों में की जाती है। ''बृहज्जातक'' का अलबरूनी ने अरबी में अनुवाद किया था। 'पंचसिद्धांतिका' का भी विदेशी भाषाओं में अनुवाद हो चुका है।

ज्योतिष विज्ञान की चर्चा करते हुए उन्होंने बतलाया है कि इसके तीन स्कंध हैं-संहिता, तंत्र, और होरा। जिस ग्रंथ में संपूर्ण ज्योतिषशास्त्र का वर्णन हो उसे संहिता, जिसमें गणित द्वारा ग्रहगति का निर्णय किया गया हो उसे तंत्र, और होरा में जातक, फल, मुहूर्त आदि की विवेचना की जाती है। आगे उन्होंने लिखा है- मैंने करण ग्रंथ-पंचसिद्धान्तिका- में तारा ग्रहों के वक्र-मार्ग, उदय आदि का वर्णन तथा होरा-बृहज्जातक, बृहद विवाहपटल आदि ग्रंथों में जन्म, यात्रा विवाह आदि का विस्तार पूर्वक वर्णन किया है।

'बृहत् संहिता' के सांवत्सर सूत्र अध्याय में उन्होंने दैवज्ञों ज्योतिषियों के जो लक्षण बतलाये हैं उनके अनुसार नम्र, सत्यवादी, राग–द्वेष से रहित, सर्वांग पूर्ण, बोलने में गंभीर, पवित्र, चतुर, प्रतिभाशाली, देश और काल को जानने वाला, निर्मल चित्त, व्यसनों से रहित, देव पूजन व्रत उपवासों में निरत, ग्रहों के गणित, संहिता और होरा के ग्रंथों के अर्थ को जानने वाला व्यक्ति दैवज्ञ होना चाहिए। पूर्ववर्ती आचार्यों के सिद्धांतों और ग्रंथों के सार और विवरण प्रस्तुत करने के साथ ही उन्होंने इस बात पर भी बल दिया है कि आकाश में ग्रहों और नक्षत्रों की स्थिति को खोज कर पंचाग में निरंतर संशोधन करते रहना चाहिए। इस प्रकार के संशोधनों के अभाव में आजकल जिन तिथियों में विभिन्न संक्रांतियां मनायी जाती हैं उनमें और वास्तविक संक्रांतियों से बहुत अंतर आ गया है।

### ज्ञान कोष

'बृहत संहिता' ग्रंथ अपने नाम के अनुकूल चार हज़ार श्लोकों का बृहत ग्रंथ है। इसमें ज्योतिष ही नहीं विज्ञान की अनेक लोकोपयोगी विद्याओं का व्यावहारिक पक्ष प्रस्तुत किया गया है। इस ग्रंथ में छोटे बड़े १०० अध्याय हैं। शुरू के ५० अध्यायों में ज्योतिष एवं तत्संबंध विषय श्लोकबद्ध हैं। उत्तरार्ध के शेष अध्यायों में वास्तुविद्या, प्रासाद लक्षण, प्रतिमा लक्षण, भूमिगत जल विज्ञान, कृषि विज्ञान, धातु विज्ञान, स्त्री-पुरुष, गो, अश्व, हस्ति आदि-आदि के लक्षण, वृक्षायुर्वेद, सुगंध निर्माण बज्रलेप, रत्नपरीक्षण प्रभूति अनेक विषय समाविष्ट हैं। आधुनिक चलन के अनुसार इस ग्रंथ को

''ज्ञान कोश'' कहा जा सकता है। इस ग्रंथ में बतलाई गई व्यावहारिक विधियों की उपयोगिता लगभग दो हजार वर्ष बीत जाने पर आज भी कम नहीं है। परंतु ज्योतिष के अतिरिक्त उन्होंने जिन अन्य विद्याओं की जानकारी दी है उसका समुचित लाभ नहीं उठाया जा सका है। इनमें से कुछ विषय तो बहुत ही महत्वपूर्ण हैं। वास्तव में 'बृहत संहिता' के रचनाकार के रूप में हमें एक ऐसे असाधारण प्रतिभा सम्पन्न महान वैज्ञानिक के दर्शन होते हैं, जिसने अपने समय में प्रचलित प्रायः सभी वैज्ञानिक विद्याओं के लोकोपयोगी व्यावहारिक पक्ष प्रस्तुत करने में उल्लेखनीय सफलता प्राप्त की है।

## मौसम और बागबानी

भारत सदैव कृषि प्रधान देश रहा है और आज भी है। कृषि कार्य बहुत कुछ वर्षाऋतु पर निर्भर है। उन्होंने अपने ग्रंथ के अध्याय २१ से २६ तक मौसम का हाल जानने के लिए बड़े विस्तार से बतलाया है कि किस प्रकार के बादल किस दिशा में जाने वाली हवाओं के साथ वर्षा लाते हैं। मौसम और वर्षा की जानकारी की आवश्यकता और महत्व को बतलाते हुए उनका कथन है:

संसार का प्राण अन्न है। अन्न वर्षा ऋतु के अधीन है। अतः यत्नपूर्वक वर्षा ऋतु की परीक्षा करना चाहिए।

इसके अगले श्लोक में उन्होंने कहा है कि गर्ग, पराशर, काश्यप, बज्र आदि मुनियों ने वर्षा के संबंध में जो लक्षण प्रतिपादित किए हैं मैं उन्हीं के आधार पर इन लक्षणों को बतला रहा हूं। आगामी वर्षा ऋतु में होने वाली वृष्टि की जानकारी प्राप्त करने के लिए वे कार्तिक मास से ही मौसम का अध्ययन आवश्यक बतलाते हैं। जिससे कृषि के लिए पहिले से ही तदनुकूल व्यवस्था की जा सके। पूरे पांच अध्यायों में उन्होंने मौसम की सही सही जानकारी प्राप्त करने के लक्षण और उपायों को प्रस्तुत किया है।

वृक्षायुर्वेद अध्याय से उनकी वनस्पति विज्ञान संबंधी उपलब्धियों का पता चलता है। उनका कथन है कि अधिक शीत वायु और धूप लगने से वृक्षों को रोग हो जाता है। रोगी वृक्षों के पत्ते पीले पड़ जाते हैं, अंकुर नहीं बढ़ते, डालियाँ सूख जाती हैं और रस टपकने लगता है। उनकी चिकित्सा के लिए पहले वृक्ष का जो अंग विकार युक्त हो उसे काट डालें फिर बायविडंग, घृत और पंकजकीचड़ या गीली मिट्टी मिलाकर लेप करें। वृक्षों मे फल न आने पर उनकी चिकित्सा के भी उपाय बतलाये गये हैं। बाग-बगीचा लगाने के लिए कैसी जमीन उपयुक्त होगी, वृक्ष लगाने के पहले जमीन को कैसे तैयार किया जाय, किस वृक्ष के लगाने के लिए कैसी जमीन और कौन सी ऋतु अनुकूल होगी, कलमी वृक्ष कैसे लगाये जायें, बीजारोपण कैसे किया जाय, सिंचाई कैसे की जाय इन सभी बातों पर

समुचित प्रकाश डाला है।

**भू-तल-जल की जानकारी**

भू-तल-जल जमीन खोदने पर कहां पर कितनी गहराई पर और कैसा जल निकलेगा आजकल इस संबंध की समुचित जानकारी प्राप्त करने के लिए प्रशासन की ओर से विशेष विभाग कार्यरत हैं । वराहमिहिर ने अपने ग्रंथ के 'दकार्गलाध्याय' में इस संबंध में महत्त्वपूर्ण तथ्य दिये हैं। उन्होंने लिखा है कि जिस प्रकार मनुष्य के शरीर में नाड़िया हैं उसी तरह भू-तल में ऊँची नीची शिरायें हैं। आठ शिरायें दिशाओं के क्रम से हैं। इनके मध्य में महाशिरा नाम की नवीं शिरा है। इनके अतिरिक्त सैकड़ों और भी शिरायें हैं। इन शिराओं के लक्षणों से भूतल स्थित जल का पता लगाया जा सकता है। १२५ श्लोंकों के इस अध्याय में इन लक्षणों की विस्तार से चर्चा की गई है। कूप आदि खोदने के समय निकलने वाली मजबूत पथरीली शिलाओं के तोड़ने के भी व्यावहारिक उपाय बतलाये गये हैं।

**वज्रलेप**

वास्तु विद्या, प्रासाद लक्षणाध्याय एवं प्रतिसा लक्षणाध्याय में भवन निर्माण, मंदिर बनाने के लिए समुचित निर्देश दिये गये हैं। विभिन्न देवी-देवताओं की प्रतिमाओं के लक्षण और लकड़ी की प्रतिमा बनाने के लिए कैसे काष्ठ का प्रयोग किया जाय यह तथ्य बतलाये गये हैं। इस संबंध मे 'वज्रलेप' अध्याय विशेष महत्वपूर्ण है। उनके द्वारा बतलाई गई विधि से तैयार किये जाने वाले वज्रलेप को लगाने से देव प्रासाद, देव प्रतिमा, शिवलिंग, हवेली, कूप, भीत्ति 'वर्ष सहस्रायुत' हजारों वर्ष स्थायी हो जाते हैं।

मौर्यकालीन तथा बाद में सम्राट अशोक द्वारा देश के विभिन्न भागों में स्थापित स्तंभों पर लगी पालिश या लेप की चमक-दमक दो हज़ार वर्ष से अधिक समय बीत जाने पर भी पूर्ववत् बनी है और आश्चर्य में डाल देती है। उन पर कैसे पालिश की गई, लेप तैयार करने में किन द्रव्यों का उपयोग किया गया और कौन सी रासायनिक प्रक्रिया काम में लाई गई, यह तथ्य आज भी अज्ञात हैं। संभव है वराहमिहिर ने वज्रलेप तैयार करने के लिए जो विधि बताई है उनसे तैयार लेप ही स्तंभों पर प्रयुक्त लेप हों।

वराहमिहिर ने चार प्रकार के वज्रलेप तैयार करने की विधि बतलाई हैं। तीन लेप तो वनस्पतियों और चौथा खनिज धातुओं से तैयार होता है। वनस्पति जड़ी—बूटियों से बनने वाले एक लेप के लिए तेंदू के कच्चे फल, सेमल के फूल, शल्लकी (साल) वृक्ष के बीज, धन्वन वृक्ष की छाल और बच, इन सबको जल में डाल कर काढ़ा बनावे, जब जल का आठ्वां भाग रह जाय तो उसे उतार कर उसमें ग्रीवासक वृक्ष का गोंद, बोल, गुग्गल, भिलावां, देवदार वृक्ष का

गोंद, सर्ज (सखुगा) का गोंद, अलसी, बेल का गूदा इन सब को पीस कर डालें तो यह 'वज्रलेप' नामक क़ाढ़ा तैयार हो जायेगा। कैथ, नागबाला, महुए के फल, मंजीठ, राल, बोल, आंवला, लाख आदि के संयोग से दूसरे लेप बनाने की विधि बतलाई है।

खनिज धातुओं से लेप तैयार करने के लिए आठ भाग सीसा दो भाग कांसा, एक भाग पीतल, इन सब को मिलाकर गलाने से 'वज्र संघ्रात' नामक लेप बनता है। मय द्वारा बतलाई गई विधि के आधार पर यह नुसखा दिया गया है। मय अपनी वास्तु कला, स्थापत्य कौशल एवं निपुणता के लिए पुराणों तथा महाभारत में विशेषरूप से चर्चित हैं। वराहमिहिर द्वारा बतलाई गई विधियों द्वारा तैयार होने वाले लेपों का आज की वैज्ञानिक विधियों से निरीक्षण एवं परीक्षण सम्भव है। स्थापत्य कला विशारदों के काम का सिद्ध हो।

### जड़ी—बूटियों से सुगंध

वज्रलेप के समान ही उन्होंने सामान्य जड़ी बूटियों के मिश्रण से सैकड़ों प्रकार की सुगंध बनाने की विधियाँ 'गंधयुक्ति'' अध्याय में बतलायी हैं। मोथा, नेत्रबाला, शैलेय, खस, कचूर, व्याघ्रनख, नाग केसर के फूल, नख, स्पृक्का, अगरु, मदनक, तगर, धनिया, क़पूर, चौरक और श्वेत चन्दन-इन सोलह द्रव्यों में से किन्हीं चार के क्रम से एक भाग, दो भाग, तीन भाग और चार भाग अदल-बदल कर चूर्ण बनाने से गंधार्णव नामक छियानवे तरह के सुगंध द्रव्य तैयार होते हैं। धनिया और कपूर में बहुत तेज गंध होने के कारण सदा धनियां का एक भाग और कपूर का एक भाग से भी कम डालना चाहिए। इन सोलह द्रव्यों के चार-चार विकल्प से १८२० प्रकार की सुगन्ध बनेंगी।

मंजीठ, समुद्र फेन, श्रूक्ति (सीपी)। दालचीनी, कूट और बोल इन सब को बराबर लेकर चूर्ण करे तथा उस चूर्ण को तिल के तेल में डालकर धूप में तपायें। इस तेल में चम्पे के फूलों जैसी गंध आ जाती है। इसी तरह मौलश्री, नील कमल, अतिमुक्त पुष्पों के गंध बनाने के भी नुसखे दिये हैं। सफेद बाल काला करने, कई प्रकार के धूप बनाने, वस्त्रों को सुगन्धित करने के लिए पुटवास, अनेक प्रकार के मुखवास, स्नान के लिए सुगन्धित चूर्ण, और चौरासी प्रकार के केसर-गंध बनाने के नुसखे देने के साथ ही रात और दिन में पान खाने के भी नियम बतलाये हैं। रात में पान खाना हो तो पत्ता और दिन में सुपाड़ी अधिक डालकर खाना अच्छा होता है। कंकोल, सुपारी, लवंग और जातीफल डालकर खाने से पान विशेष स्वादिष्ट और सुखकर हो जाता है।

### धातु और रत्नविज्ञान

उपरोक्त विद्याओं के साथ ही वे धातु विज्ञान और रत्न विज्ञान के भी अच्छे जानकार थे। खड्ग लक्षणाध्याय में तलवारों के गुणदोष की विवेचना के साथ ही उन्हें

तेज करने की भी ऐसी विधियाँ बतलायी हैं जिनके द्वारा तेज किये गये खड्ग पत्थर पर या अन्य लोहे पर भी मारने से नहीं टूटेंगे।

रत्न परीक्षाध्याय, मुक्ता लक्षणाध्याय, पद्मराग लक्षणाध्याय और मरकत लक्षणाध्याय शीर्षक अध्यायों में हीरा, मोती, मूंगा, पन्ना, नीलम, पद्मराग, बैदूर्य, राजमणि, चंद्रकांत, गोमेद, पुष्पराज, प्रभृति विभिन्न प्रकार के रत्नों के लक्षणों गुण-दोष, प्राप्त होने के स्थान, धारण करने के शुभाशुभ फल और मूल्य निर्धारित करने के नियम आदि के विषय में महत्त्वपूर्ण एवं उपयोगी सूचनाएँ संकलित की हैं। इनसे तत्कालीन समाज में रत्नों के प्रचलन और लोकप्रियता का भी अनुमान लगाया जा सकता है।

**प्राणिविज्ञान के ज्ञाता**

प्राणि जगत का भी उन्होंने सूक्ष्म निरीक्षण किया था। गोलक्षण, अश्वलक्षण, हस्तिलक्षण प्रभृति अध्यायों में उन्होंने गाय, बैल, हाथी, घोड़ा, ऊँट, भेड़, बकरा–बकरी आदि पालतू पशुओं के बारे में बहुत उपयोगी जानकारी दी है। इस सूक्ष्म निरीक्षण से कुत्ते, कछुए और कुक्कुट (मुर्गे) भी नहीं बचे हैं।

स्त्री-पुरुष-लक्षणों की भी सामुद्रिक शास्त्र के अनुसार विस्तृत विवेचना की गयी है। गर्भाधान के बारे में व्यावहारिक निर्देश दिये हैं और बतलाया है कि ऋतु से समरात्रियों में समागम से पुरुष और विषम रात्रियों में कन्या की उत्पत्ति होती है। दूर स्थित सम राशियों में छठी, आठवी आदि सम राशियों में दीर्घायु, सुंदर और सुखी नर संतान उत्पन्न होती है। स्त्री के दक्षिण पार्श्व में गर्भ हो तो पुरुष और बायें भाग में होने से कन्या का जन्म होता है।

बृहत् संहिता में उन्होंने यह स्पष्ट उल्लेख किया कि ब्रह्मा और मुनियों द्वारा कहे हुए शास्त्रों में अति विस्तार देख कर क्रम से और संक्षेप में इस शास्त्र (ज्योतिष) को बताने के लिए मेरा उत्साह (ममोत्साह) है। उन्होंने अपने ग्रंथ में यथा स्थान पूर्ववर्ती आचार्यो जैसे गर्ग, विष्णु गुप्त, पराशर, बृद्ध गर्ग, वसिष्ठ, देवल प्रभृति के मतों के साथ पूर्ववर्त्ती ग्रंथों-ब्रह्म सिद्धांत, ब्रह्म स्फुट सिद्धान्त, सिद्धांत शिरोमणि, सूर्य-सिद्धान्त और समास संहिता के भी उद्धरण दिये हैं। जिनसे स्पष्ट होता है कि भारतीय ज्योतिष की परम्परा वराहमिहिर के बहुत पहिले पूर्णतया विकसित हो चुकी थी।

ग्रंथ के उत्तरार्ध में भी विभिन्न विषयों में अपने कथन की पुष्टि में बृहस्पति, काश्यप, गर्ग, विश्वकर्मा, मय, हिरण्यगर्भ, सारस्वत, वसिष्ठ, नग्रजीत, पराशर, समुद्र, बाहुलक, ऋषिपुत्र एवं यवनेश्वर के मतों तथा किरणाख्य तंत्र, सारावली एवं शालिहोत्र ग्रंथों के उद्धरण दिये हैं। इससे वराहमिहिर के पूर्व के भारत की वैज्ञानिक

परम्परा पर अच्छा प्रकाश पड़ता है और सिद्ध होता है कि हमारे ऋषि-मुनियों का मनन और चिंतन केवल अध्यात्म एवं दर्शन ही तक सीमित न था। वे दैनिक जीवन में काम में आने वाली विभिन्न विद्याओं में भी सक्रिय रुचि लेते थे उनकी विद्याएं या विज्ञान की विभिन्न विद्याएं जनसाधारण के छोटे से छोटे क्षेत्र से आरम्भ होकर बड़े-बड़े संपन्न व्यक्तियों तक की सुख सुविधा प्रदान करने में समर्थ थीं। इससे सहज ही अनुमान लगाया जा सकता है कि हमारे प्राचीन संस्कृत साहित्य में ज्ञान–विज्ञान की विभिन्न विद्याओं का असीम भण्डार है। आवश्यकता है इसके सद् उपयोग और पुनरीक्षण की जिससे आधुनिक वैज्ञानिक संदर्भ में राष्ट्रहित में इसका समुचित लाभ उठाया जा सके।

वराहमिहिर ने ग्रंथ के उपसंहार में स्वयं भी कहा है :

इस शास्त्र को बनाते हुए मैने पूर्वाचार्यो कृत ग्रंथों के आशय को नहीं छोड़ा है। अतः उन पूर्वाचार्यों के ग्रंथों को और इस शास्त्र को यत्नपूर्वक देखकर पंडितों को प्रयत्न करना चाहिए और जो अच्छा हो उसे ग्रहण करना चाहिए।

साहित्यनिकेतन,
शिवाला रोड, गिलिस बाज़ार,
कानपुर–१, उ.प्र.

◆

## सच्चा जीवन

सन् १९१४ की बात है। कविवर श्री रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने एक बार सी. एफ. एण्डूज से कहा, 'सच्चा जीवन जीने के लिए मनुष्य को विवाह आवश्यक है। बिना इसके वह पूर्णता की चहार-दीवारी को लांघ नहीं सकता और फिर आपने ने ऐसा न करके एक बहुत बड़ी भूल की है।' उस समय दीन बंधु एण्डज ने सहज भाव से हंसते हुए उत्तर दिया, 'हां। हां यह सत्य है कि अविवाहित रहने से मेरे जीवन का विकास रुक जायेगा, क्योंकि मैं न तो पितृत्व के मोहक कर्तव्य एवं पवित्र प्रेम को ही समझ सकूंगा और न गृहस्थ जीवन के छोटे से आंगन में दुःख - सुख के आते - जाते झोंकों का ही अनुभव कर सकूंगा किन्तु क्या करूं? जब दाम्पत्य जीवन के मोहक सपने संजोने की सोचने लगता हूं, मेरा मन कह उठता है तुमतो अपने को राष्ट्रीय आंदोलन में समर्पित कर चुके और मिशन की सर्विस का क्या भरोसा? आज है कल नहीं। इसलिए घर-गृहस्थी का बोझ कैसे संभालोगे? औरं फिर तुम्हारा घर तो पूरा देश ही है।'

यही सोचकर उन्होंने आजीवन विवाह न कर, देश को हर दृष्टिकोण से समृद्ध एवं शक्तिशाली बनाने के लिए हर बाधाओं, परिस्थितियों से जूझते हुए भी हम सब भारतवासियों को हंस हंसकर जीने के लिए नयी दिशा का बोध कराते रहे।

**कांतिलाल मोदी**

# एक यात्रा रघुराजपुर की

❑ डॉ. शीला टावरी

रघुराजपुर नाम है एक छोटे से गांव का। पुरी से बीस किलोमीटर दूर, भुवनेश्वर मार्ग पर बसा हुआ, नारियल के घने पेड़ों के बीच छुपा हुआ छोटा-सा गांव। लगभग ८५ घर होंगे। भौगोलिक विशेषता कोई नहीं। लेकिन उड़ीसा खादी बोर्ड के श्रीदास ने जब 'पट्टचित्रों' के कलाकारों के गांव के रूप में उसकी परिभाषा की तो इस गांव को देखने का मोह उमड़ पड़ा।

भुवनेश्वर तथा पुरी के बाजारों में अनेक रंगी, अनेक ढंगी 'पट्टचित्र' देखने को मिले थे। ये 'पट्टचित्र' बनते हैं रघुराजपुर में। पूरा का पूरा गांव कलाकारों का। अद्‌भुत, सुखद शांति से परिपूर्ण। घर-घर में चित्रकारी हो रही है। क्या पुरुष क्या स्त्रियां, क्या युवा क्या वृद्ध। सभी कला की साधना में निमग्न। हमारी जीप की घड़घड़ाहट ने यहां की शांति को अंशतः भंग किया। सस्मित स्वागत में कुछ युवा आगे आये। उस वक्त यह समझ में भी नहीं आया कि आगे का कुछ समय जीवन के लिए एक नया संदेश देने वाला समय होने जा रहा है।

'पट्टचित्र' का शब्दार्थ है वस्त्र पर बना हुआ चित्र। यह यहां की कला भी है और उद्योग भी। शौक भी है और व्यवसाय भी। अगर उद्यम कहें तो इसका कच्चा माल बहुत ही साधारण है। हर चीज गांव में ही उपलब्ध है। 'आयातित' कुछ भी नहीं। गांधीजी के अर्थव्यवस्था के विचारों का मानों यह एक आदर्श प्रदर्शन है। चित्र के लिए 'पट्ट' तैयार करने का काम हो या रंग बनाने का सब कुछ यहीं पर हो रहा है। इसीलिए हर कोई व्यस्त है, हर हाथ को काम है।

चित्रों में चटकीले, चमकीले लाल, पीले, हरे,सफेद, काले, नीले तथा अन्य कई रंग प्रयोग में लाये जाते हैं। ये रंग चित्रकार स्वयं ही बनाते हैं। चित्रों में प्रयुक्त सफेद रंग प्रचुरता से उपलब्ध समुद्री शंखों से बनता है। शंखों को पीसकर कैथे (कपित्थ, कविठ,कौठ)के गोंद के साथ पानी में उबाला जाता है । इस प्रक्रिया में सफेद रंग घनीभूत होकर पात्र के तल में बैठ जाता है। इस्तेमाल करते वक्त इसे पानी में घोल लिया जाता है। हिंगुल से लाल रंग तथा हरिताल से पीला रंग बना लिया जाता है।

दीपक के काजल से काला रंग और नीले रंग के लिये 'नील' प्रयोग में लायी जाती है। गेरू से कत्थई रंग बनाते हैं। बाकी सभी रंग विविध मिश्रणों के द्वारा बनाये जाते हैं। उदाहरणार्थ नील तथा हरिताल को मिलाकर हरा रंग बना लिया जाता है।

रंग तो रंग—तूलिका भी चित्रकार स्वतः बना लेते हैं। अधिकतर चूहे गिलहरी के बालों से, या फिर भैंसे के बाल भी काम में आ जाते हैं लेकिन इन चीजों के लिए गांव के बाहर नहीं जाना पड़ता। नारियल इतना पैदा होता है कि रंगपात्र भी नारियल की खोल के होते हैं।

'पट्ट' जिस पर चित्रकारी होती है उसे भी विशेष प्रकार से तैयार किया जाता है। 'पट्ट' शब्द से जैसा कि स्पष्ट है, चित्रकारी वस्त्र पर होती है। सूती तथा टसर दोनों प्रयोग में लाये जाते हैं। इसे तैयार करने के लिए पहले इमली के बीजों को पीसकर पानी में पका लिया जाता है जिससे लेई बन जाती है। इसमें विशिष्ट मात्रा में खड़िया मिलाकर कपड़े पर इस मिश्रण का लेप चढ़ाया जाता है। थोड़ा सूखने के बाद इस पर पत्थर से घिसाई कर इसे खूब चिकना बना लिया जाता है। अब चित्रकारी के लिए 'पट्ट' तैयार है। 'पट्ट' तैयार करने का काम सिर्फ महिलाएं ही करती हैं। शायद लेई तथा खड़िया का अनुपात वे ही सही समझ पाती हैं। लेई ज्यादा हो जाय तो चित्र चिटकने का खतरा रहता है और खड़िया ज्यादा हो जाय तो पपड़ी गिरने लगती है अतः यह विशेष कौशल्य का कार्य है।

रघुराजपुर मुख्यतः 'महाराणा' (कारीगर) तथा 'महापात्र' (चित्रकार) लोगों का गांव है। सभी ८५ परिवारों में यही उद्यम हो रहा है। लगभग ५०० लोग इसी कार्य में लगे हुए हैं। परिवार के सभी सदस्य - सभी उम्रवर्ग के सदस्य 'बिजी' हैं तथा कम से कम ५० रुपये रोज कमा लेते हैं। एक २.५×१.५ फीट का चित्र बनाने में लगभग ६ दिन तक लग जाते हैं। यह कोई सरकारी नौकरी तो है नहीं। रोज लगभग बारह घंटे काम करते हैं। श्री जगन्नाथ महापात्र को १९६५ में इस कला के लिए राष्ट्रीय पुरस्कार से सम्मानित किया गया। आज वे गांव के युवकों को इस कला में प्रशिक्षित कर रहे हैं। सुप्रसिद्ध कलाकार केलूचरण महापात्र भी इसी गांव के हैं। बातचीत से लगा कि गांव के लोगों को अपनी धरती के इस सुपुत्र पर बड़ा गर्व है।

'पट्ट' के अलावा साबुत नारियल को भी 'कैनवास' बना लिया जाता है। ज्यादातर चित्र देवी-देवताओं के हैं। पुरी के जगन्नाथ, बलभद्र तथा सुभद्राजी सबसे अधिक प्रिय विषय हैं। पौराणिक प्रसंग, दशावतार, नवग्रह, श्रीकृष्ण लीला इत्यादि विषयों पर ज्यादातर चित्र बनते हैं। श्री पूर्णचन्द्र महाराणा तथा उनका परिवार गोबर तथा पेपरमैशी के खिलौने बनाते हैं। मुखौटे भी

बनाये जाते हैं। गांव के युवकों ने बड़े गर्व से बताया कि हरिजन महिलाएं भी इस काम मे पीछे नहीं हैं। रोजाना लगभग ४० रूपये ये भी कमा लेती हैं।

किसी भी उद्योग का आधार होता है 'विक्रय'। बिक्री के बिना कोई भी उद्यम चल नहीं सकता। रघुराजपुर इस विषय में बहुत ही खुशनसीब है। इनको बिक्री की समस्या ही नहीं है। चित्र बेचने इन्हें नहीं जाना पड़ता। अक्सर भुवनेश्वर तथा पुरी से आर्डर मिलते रहते हैं, विशेषकर विदेशी पर्यटक यहां आकर मुंहमांगे दाम देकर चित्र खरीद लेते हैं। चित्र की कारीगरी के अनुसार, तथा ग्राहक की क्षमता देखकर भी, कीमत तय करते हैं। चित्र के अनुसार यह कीमत कभी कभी ५ से १० हजार रूपयों तक भी पहुंच जाती है।

पट्ट चित्रकला इस गांव की परंपरागत कला है। इसका प्रणेता कौन है यह किसी को ठीक से नहीं मालूम। नहीं सीखने के लिए किसी स्कूल जाना पड़ा। सारा गांव ही इस कला का विद्यालय है। सरकारी सहायता के बारे में पूछा तो एक ही जवाब था कोई नहीं। लेकिन यह भी कि सरकारी सहायता हमें चाहिए भी नहीं सरकार विषयक कोई कटु भावना भी नहीं उड़ीसा खादी बोर्ड के उच्चाधिकारी साथ मौजूद होते हुए भी एक विशेष बात देख में आयी कि कोई भी उनके पी अर्जियां-चिट्ठियां लेकर दौड़ नहीं रहा था किसी प्रकार की मदद ही मांग रहा थ कुछ युवा तो आत्मविश्वास के जीते-जाग नमूने लग रहे थे। अच्छी हिन्दी भी बोल र थे। सारी बात का सार यह कि 'हम पू तरह स्वावलंबी हैं।' यह घमंड नहीं आत्मविश्वास से ओतप्रोत सरलता है। क दिखावा नहीं, लेकिन दीनता भी नहीं गांधी का असली स्मारक तो यह रघुराजपु है। तस्वीरों के इस गांव की तस्वीर मेरे दि में उस दिन से घर कर गयी है। और इस लिए मैं उड़ीसा खादी बोर्ड तथा उन अधिकारियों की विशेष शुक्रगुजार जिन्होंने हमें इस अध्ययन में सहयोग दि

— द्वारा कमल टाव
खादी ग्रामोद्योग कमीश
इर्ला रोड, बंबई-४०००५

* * *

जूडी हॉलीडे उन दिनों अभी प्रसिद्ध गायिका नहीं बनी थी और एक नाइट-क्लब में गा करती थी।

एक बार उसने अपने दो साथियों के साथ ऐसा कार्यक्रम प्रस्तुत किया कि हंस-हंस कर श्रोता के पेट दुःखने लगे। प्रोग्राम बहुत सफल रहा।

फिर, एक मौके पर यही कार्यक्रम अमरीका के प्रेसीडेंट, हर्बर्ट हूवर के सामने पेश किया ग हर्बर्ट हूवर एक बार भी नहीं हंसे। जूडी को यह देखकर हैरानी हुई। तब उसने उन्हें हंसाने का भी प्रयत्न किया, लेकिन वे नहीं हंसे।

* * *

# सांस्कृतिक मंच

## म. हिं. सा. सम्मेलन

'महाराष्ट्र हिंदी साहित्य सम्मेलन' के, नये पदाधिकारियों का चुनाव आगामी तीन वर्षों के लिए सर्वसम्मति से हुआ।

पं. सत्यकाम विद्यालंकार (अध्यक्ष); डॉ. रामयतन सिंह 'भ्रमर', श्री अवधनारायणधर द्विवेदी, प्रो. नंदलाल पाठक, डॉ. गिरिजाशंकर त्रिवेदी उपाध्यक्ष; श्री जयदेव सिंधानिया (प्रधानमंत्री); डॉ. सुधाकर मिश्र (साहित्यमंत्री); श्री शचींद्रपति त्रिपाठी (प्रचारमंत्री); डॉ. सुशीला गुप्ता (सांस्कृतिक मंत्री); श्रीमती उमा शर्मा (संपर्क मंत्री); श्री गोकुलदास लखोटिया (कोषाध्याक्ष) श्री मुरलीधर पांडेय (संयोजक नगर समिति); श्री देवमणि पांडेय (संयोजक उपनगर समितीय)।

—जयदेव सिंघानियां

* * *

## अंचलजी सम्मानित

वरिष्ठ साहित्यकार श्री रामेश्वर शुक्ल अंचल को म.प्र. हिंदी साहित्य सम्मेलन के प्रतिष्ठापूर्ण भवभूति अलंकरण से सम्मानित किया गया। डॉ. विनय मोहन शर्मा ने उन्हें पांच सहस्र रूपये, शाल, श्रीफल व प्रशस्तिपत्र भेंट कर सम्मानित किया। आल इंडिया आर्टिस्ट एसोसियेशन शिमला की ओर से उन्हें मुख्य अतिथि राज्य के गृह मंत्री सीतला सहाय ने बलराज साहनी राष्ट्रीय सम्मान से सम्मानित किया।

अपने कृतित्व पर टिप्पणी करते हुए श्री अंचल ने कहा कि लेखन मेरे जीवन की जिजीविषा है और संवेदना ही मेरी शैली बन गयी है।

आचार्य विनय मोहन शर्मा ने श्री अंचलजी को शुभकामनायें देते हुए उनके निरंतर सृजन की कामना की।

– गिरिजाशंकर भोपाल

* * *

## रामनरेश त्रिपाठी की याद में

साहित्य अकादमी द्वारा रामनरेश त्रिपाठी जन्मशतवार्षिकी के अवसर पर एक संगोष्ठी आयोजित की गयी। प्रो. केदारनाथ सिंह ने अपने मुख्य व्याख्यान में त्रिपाठी को देशप्रेम या देशराग का कवि बताया। डॉ. कृष्णदेव उपाध्याय ने उन्हें श्रीधर पाठक की स्वच्छंदतावादी भूमि पर चलनेवाला पथिक बताया। श्री विष्णुप्रभाकर गिरिजाकुमार माथुर, श्री जगदीश गुप्त, श्री विश्वनाथ प्रसाद तिवारी, डॉ. कृष्णदत्त पालीवाल ने उनके कृतित्व और व्यक्तित्व पर प्रकाश डाला।

—ब्रजेंद्र त्रिपाठी, नयी दिल्ली

* * *

पश्चिम बंगाल सरकार ने १९९० के

लिए कवि किरणमय सेनगुप्त को रवींद्र पुरस्कार देने की घोषणा की है। उनके कविता संग्रह 'जयाजननी' पर यह पुरस्कार दिया गया है। पुरस्कार में दस हजार रुपये नकद व एक मान-पत्र शामिल है।

* * *

## भारतीय भाषा परिषद पुरस्कार

एक सादगीपूर्ण समारोह में प. बंगाल के राज्यपाल श्री नुरुल हसन ने असमिया के लक्ष्यधर चौधरी, कन्नड़ के के.पी. पूर्णचंद्र तेजस्वी, पंजाबी के संतसिंह सीखी, बंगला के देवेश राय, मराठी की ज्योत्स्ना केशव देवधर, राजस्थानी के सत्यप्रकाश जोशी, संस्कृत के डॉ. रामकरण शर्मा एवं हिंदी के मंजूर एहतेशाम को गत दिन उनकी उत्कृष्ट रचनाओं के लिए भारतीय भाषा परिषद द्वारा पुरस्कार प्रदान किया गया।

**इंदु चौबे**

* * *

## गांव हैं साहित्य के ज्योतिबिंदु

'संदर्भ-साहित्य-परिषद् जमानियां, गाजीपुर की हरपुर इकाई का वार्षिकोत्सव १७ मई ९० को, काव्य-समारोह के माध्यम से संपन्न हुआ। वयोवृद्ध कवि श्री रामअधारसिंह का सारस्वत-सम्मान 'संदर्भ-साहित्य-परिषद्' की ओर से हुआ।

इस काव्य-समारोह में अध्यक्ष पद से बोलते हुए कविवर वंशराज सिंह ने कहा 'हमारे गांव हमारी अस्मिता, संस्कृति, कला-संचेतना, साहित्य के ज्योतिबिंदु हैं।' मधुर नज्मी, भरतलाल कंचन, कपिलमुनि पंकज, वीरेंद्र सारंग, मोहनसिं कुशवाहा, उजबक आजमगढ़ी, मैनावती मैना, हलचल मिर्जापुरी, कृष्णदेव घायल, हरिवंश पाठक 'गुमनाम', वंशराज सिंह, वंशनारायण सिंह 'मनज' रामअधार सिंह, राजकुमार, अशोककुमार, तथा रहिम कवियों ने काव्य-पाठ किया। श्री सारंगजी ने आभार ज्ञापित किया। **—राजकुमार सिं**

* * *

## मई दिवस पर नुक्कड़ नाटक

'सूत्रधार', खगोल के तत्त्वावधान में मई दिवस के अवसर पर एक दिवसीय नुक्कड़ नाटक का आयोजन किया गया, जिसके तहत संस्था ने खगोल (मोतीचौक) तथा फुलवारी शरीफ चुनौटी कुआं और कांग्रेस मैदान, पेठिया बाजार आदि स्थलों सरूर अली अंसारी लिखित नाटक 'दूरदृष्टि' का नुक्कड़ प्रदर्शन कर उपस्थित दर्शकों को व्यवस्था से रु-ब-रु कराया।

**—नवाब आलम**

* * *

## जवाहर सुलिपि प्रतियोगिता

जबलपुर स्थित नर्मदा वेलफेयर सोसायटी ने जवाहर शताब्दी वर्ष-८९ के अंतर्गत तीन आयु समूहों में अयोजित अपनी निःशुल्क अखिल भारतीय जवाहर हिंदी सुलिपि प्रतियोगिता का पुरस्कार वितरण समारोह मई-९० को संपन्न किया।

निम्नलिखित समूह क्रम से पुरस्कृत

किया गया।

आयु समूहः (१) प्रथम - कु. नीति परमार, आगरा (स्वर्णपदक तथा १००१ रु.)। द्वितीय-कु. मंजूषा निगम, जबलपुर (रजतपदक तथा ५०१रु.) तृतीय-श्री गौरव ब्यौहार, . जबलपुर (कांस्यपदक तथा ३०१रु)।

आयु समूहः (२) प्रथम-कु. उत्तमा शर्मा, भीलवाड़ा (राजस्थान) (स्वर्णपदक तथा १००१ रु.)

द्वितीय-श्री सत्यनारायण शर्मा, भीलवाड़ा (राजस्थान) रजत पदक तथा ५०१ रु)

तृतीय-श्री अनुराग पाठक, जबलपुर (कांस्य पदक तथा ३०१ रु)

आयु समूह (३) प्रथम-डॉ. प्रभुनाथ द्विवेदी, वाराणसी (स्वर्णपदक तथा १००१ रु)

द्वितीय-श्री अशोक श्रीवास्तव गोरखपुर (रजत पदक तथा ५०१ रु)।

तृतीय-श्री योगेंद्रप्रसाद श्रीवास्तव, चांदपुर बिहार (कांस्य पदक तथा ३०१ रु)

श्री मुकुंददास माहेश्वरी ने प्रतियोगिता के संयोजक के नाते समस्त अतिथियों के प्रति आभार प्रदर्शित किया।

* * *

## श्रद्धांजलि गोष्ठी

रायबरेली, २८ अप्रैल। अखिल भारतीय रचनाकार संगठन रायबरेली एवं बज़्मे-गंगोजमन के संयुक्त तत्वावधान में उर्दू के सुप्रसिद्ध साहित्यकार 'रागिव' साहब के निधन पर, उनके निवास पर एक श्रद्धांजलि गोष्ठी संपन्न हुई, जिसमें सर्वश्री युसूफ फतेहपुरी, हसन रायबरेलवी, वहीद रायबरेलवी, डॉ. हैदर, डॉ. अजीत खैराबादी, वृजेश त्रिपाठी, स्वप्निल तिवारी, रईस बल्लवी, यूसुफ खां, अख्तर हुसेन फारूकी, देवनारायण त्रिवेदी 'देव', रहबर रायबरेलवी, वजीर साहब, मोहसिन रिज़वी तथा जनपद के अन्य साहित्यकार उपस्थित थे।

**— जफ़र चिश्ती**

* * *

## डॉ. विकल को विद्यासागर उपाधि

जमशेदपुर। सुप्रसिद्ध साहित्यकार डॉ. रामसेवक विकल को हिंदी साहित्य में उनके योगदान के लिए विक्रमशिला हिंदी विद्यापीठ ने विद्यासागर (डी.लिट्) की उपाधि दी है। **—डॉ. बच्चन पाठक सलिल**

* * *

## 'प्रसाद' को श्रद्धांजलि

'हमें अपनी सांस्कृतिक धरोहर की रक्षा करनी है अन्यथा यह राजनीति के खारे सागर में मिलकर दूषित हो जायेगी। सांस्कृतिक एकता बनाये रखने का संकल्प ही जयशंकर प्रसाद को सच्ची श्रद्धांजलि हो सकती है।' यह उद्‌गार प्रख्यात कवि डॉ. शिवमंगल सिंह 'सुमन' ने मध्य प्रदेश के रतलाम जिले के तेहसील मुख्यालय तैलाना नगर में, जो कि अपने फैक्टस बगीचे के लिए एशिया भर में प्रसिद्ध है, संस्था 'राष्ट्रभाषा रंगमंच' द्वारा आयोजित महाकवि जयशंकर प्रसाद जन्मशती

समारोह के अवसर पर मुख्य अतिथि के रूप में व्यक्त किये।

श्री श्याम् संन्यासी ने अपने संबोधन में कहा, 'साहित्य हमारे जीवन की पूंजी है।'

अध्यक्ष पद से बोलते हुए डॉ. प्रभाकर माचवे ने कहा, 'प्रसादजी सत्य के अनन्य उपासक थे। उनके साहित्य में ज्ञान, भक्ति और कर्म का अनुपम संयोग्य है।'

समारोह संचालक श्री कैलाश जोशी ने प्रसाद साहित्य का मूल्यांकन करते हुए कहा कि 'कामायनी', 'रामचरित मानस' के बाद हिंदी का सर्वश्रेष्ठ महाकाव्य है।

**—प्रशांत जोशी**

* * *

## डॉ. वाकणकर जयंती

'वाकणकर भारती संस्कृति अन्वेषण न्यास' के नवनिर्मित हो रहे भवन-परिसर में मानपुरा पीठाधीश्वर जगद्गुरु शंकराचार्य श्री दिव्यानंदजी ने सुप्रद्धि पुराविद् एवं कला मनीषी पद्मश्री स्व. डॉ. वि. श्री. वाकणकर जयंती पर 'अशोक' वृक्षारोपण किया और 'सुविचार साहित्यालय' पुस्तक विक्री केंद्र का उद्घाटन किया।

कार्यक्रम-संचालन एवं आभार प्रदर्शन डॉ.विष्णु भटनागर ने किया। श्रीमती लक्ष्मी वाकणकर द्वारा काष्ठ कला केंद्र 'कला उपहार' का उद्घाटन किया गया।

**—विष्णु भटनागर, उज्जैन**

* * *

## लघुकथा-सम्मेलन

फतुहा (पटना), अ.भा. प्रगतिशील लघुकथा मंच 'युवा जनवादी रचनाकार समिति' एवं 'अयन प्रकाशन, नयी दिल्ली' के संयुक्त तत्ववधान में १३-१४ अप्रैल १९९० को छः सत्रों में द्विदिवसीय संमेलन सार्थक विचार-विमर्श के साथ सम्पन्न हुआ।

इस सम्मेलन का उद्घाटन 'सारिका' के संपादक अवधनारायण मुद्गल ने कियां।

सम्मेलन के स्वागताध्यक्ष थे डॉ. सतीशराज पुष्करणा।

इस सत्र में डॉ. कमलकिशोर गोयनका, प्रो. निशांतकेतु, डॉ. भगवतीशरण मिश्र, बिहार विद्यालय सेवा बोर्ड एवं कवि हरिवंश 'तरुण', गौरीशंकर मिश्र, जियालाल आर्य, अनुरंजन प्रसाद सिंह, कवयित्री एवं कथाकार डॉ. मिथिलेशकुमारी मिश्र, बाबूनंद प्रसाद आदि ने लघुकथा विषयक अपने बहुमूल्य विचारों से अवगत कराया। **—रामयतन प्रसाद यादव**

* * *

## 'गीत संग्रह' का विमोचन

राष्ट्रभाषा परिषद के निदेशक शिवशंकर पांडेय की अध्यक्षता में पिछले दिनों पटना में आयोजित विमोचन समारोह में कवि उमाशंकर के गीत संग्रह 'तुम गा दो' का विमोचन कवि श्री सत्यनारायण द्वारा किया गया।

इस अवसर पर संग्रह के गीतों का पाठ अर्चना, उर्वशी, सीमा तथा प्रियंका ने

किया। कासिम खुर्शीद के संचालन में आयोजित विमोचन समारोह में आरसी प्रसाद सिंह, उषा वर्मा, आनंद, स्वरूप वर्मा, आलोक रंजन आदि ने कवि की कृति पर प्रकाश डाला।

**— पंकजकुमार वर्मा**

* * *

## रचनाकार वार्षिकोत्सव

३० मई, साहित्यिक संस्था भारतीय रचनाकार परिषद (फैजाबाद) के वार्षिकोत्सव पर प्रथम सत्र में आयोजित कार्यक्रम में मुख्य अतिथि सुप्रसिद्ध पत्रकार श्री शीतला सिंह, संपादक दैनिक 'जनमोर्चा' द्वारा पं. रामनाथ शास्त्री द्विजराज हिंदी एवं संस्कृत के विद्वान को अभिनंदन, प्रशस्तिपत्र, पुस्तकें एवं उत्तरीय भेंट करके सम्मानित किया गया। उन्होंने बोलते हुए कहा कि किसी रचनाकार के लिए उस सम्मान का बड़ा महत्त्व है जो अपने घर में मिले। मुख्य अतिथि का स्वागत संस्था निदेशक हनुमान प्रसाद मिश्र द्वारा किया गया।

**— अवनीश कुमार शुक्ल**

* * *

## अखिल भारतीय कवि सम्मेलन

दि. ९ मई को सहतवार सांस्कृतिक संघ की ओर से श्री चैनराम बाबा इंटर कालेज सहतवार (बलिया) के प्रांगण में एक भव्य अखिल भारतीय कवि सम्मेलन का आयोजन किया गया, जिसकी अध्यक्षता नवगीतकार श्री सच्चिदानंद सिंह 'समीर' ने की। सर्वश्री गोपालदास 'नीरज', पाडेय 'आशुतोष' (चंपारन) डॉ. उमाशंकर तिवारी (आजमगढ़), श्रीमती सावित्री गौड़ (वाराणसी), डा. रामप्रकाश शुक्ल निर्मोही' (गाजीपुर), वैभव (आजमगढ़) उमाश्री (फैजावाद) चंचल जौनपुरी (वाराणसी), नरेंद्र शास्त्री, धीरज (बलिया), रामजी सिंह 'मुखिया' (बिहार) ने अपनी कविताएं सुनायीं। कवि सम्मेलन का संचालन सूंड फैजाबादी ने किया। इस अवसर पर एस.डी.एम. बांसडीह प्रमुख अतिथि के रूप में आमंत्रित थे, जिन्होंने कवि-सम्मेलन का उद्घाटन भी किया। श्री नरेंद्र शास्त्री ने कवियों का परिचय दिया तथा श्री धीरज ने स्वागत किया और आभार ज्ञापित किया।

**— नरेंद्र शास्त्री**

---

### हार जीत की बौछारें ...

चुनावी हार जीत के मौके भी बड़े मजेदार होते है, आइये, इसी माहौल के बीच आपको भी हंसी के सागर में गोता खिलाने ले चलते हैं।

चुनाव परिणाम के उपरांत एक वोटर ने अपने क्षेत्र के नेता से पूछा— 'क्या कारण है चुनाव हारकर भी आप प्रसन्न हो रहे हैं?'

यह सुनकर नेता ने जवाब दिया — 'इसलिये कि आप जैसे हजारों वोटरों को मैने अपनी औकात से ज्यादा सुविधांएं देने का वचन दिया था और अब उन सारे वचनों को पूरा करने के कष्ट से बच गया।'

* * *

## भिखारी संघर्ष करेंगे

*छिंदवाड़ा, मध्यप्रदेश में भिखारी महासंघ की स्थापना की गयी है। इसके राष्ट्रीय अध्यक्ष एम. रहमान 'जिन्दादिल' ने एक प्रेस कान्फ्रेंस में बताया कि देश के ५० लाख भिखारियों को महासंघ का सदस्य बनाकर हम उनके लिए संघर्ष करना चाहते हैं भिखारी महासंघ ने ११ सूत्री मांग पत्र तैयार किया है जिसमें भिखारियों के बच्चों के लिए निःशुल्क शिक्षा व्यवस्था, आजीवन निःशुल्क यात्रा, आवास, निःशुल्क चिकित्सा आदि की मांगें शामिल है। संघ ने सरकार से तब तक संघर्ष करने का फैसला किया है जब तक उसकी मांगें मान नहीं ली जातीं।*

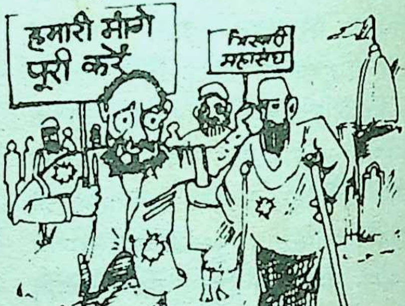

## ब्रह्मचारी के ५२ बच्चे

*जबलपुर पुलिस ने एक ब्रह्मचारी बाबा को गिरफ्तार किया है। बाबा एक देवी मन्दिर में रहते थे। वे स्त्रियों को सन्तान होने का आशीर्वाद देते थे। ब्रह्मचारी बाबा ने १९८२ तक १०८ बच्चे पैदा करने का संकल्प लिया था। बाबा का यह संकल्प तो पूरा नहीं हुआ पर अपनी ८ पत्नियों से ब्रह्मचारी बाबा ने ५२ बच्चे पैदा किये हैं।*

सु. रामकृष्णन् द्वारा भारतीय विद्या भवन, क. मा. मुंशी मार्ग, बम्बई–४००००७ के लिए
प्रकाशित तथा एसोसियेटेड एडवरटाइजर्स एंड प्रिन्टर्स, बेम्बई ४०००३४ में मुद्रित।

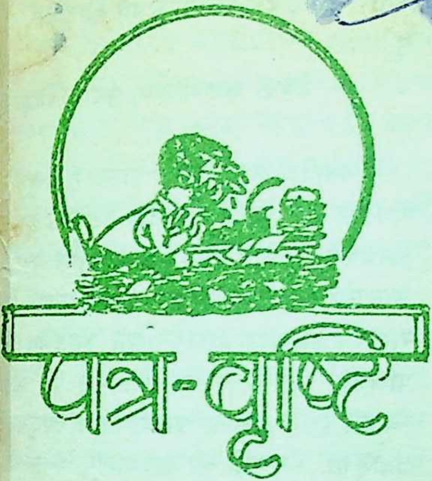

# पत्र-वृष्टि

**नवनीत** के जून ९० के अंक में डॉ. कुंवर चंद्रप्रकाश सिंह की कविता 'कवि हे !' पढ़कर मन आंदोलित हो उठा। आज का साहित्यकार किस प्रकार और कितना ह्रासोन्मुख होता जा रहा है? उसकी साहित्य-सृष्टि निर्जीव यथार्थ की अभिव्यक्ति मात्र होकर क्यों रही जा रही है ? क्या उसके द्वारा कोई महान संदेश मुखर होना अभीष्ट नहीं ? इन सब प्रश्नों को बड़ी प्रभुविष्णु शैली में प्रस्तुत किया गया है। कुंवर साहब जैसे मनीषी साहित्य-स्रष्टा को ऐसी उत्कृष्ट प्रेरक कविता के लिए अनेकशः साधुवाद। वैसे **नवनीत** में प्रकाशित संपूर्ण सामग्री पठनीय और संग्रहणीय है। ऐसी स्तरीय साहित्यिक पत्रिका के संपादन हेतु हार्दिक बधाई स्वीकार करें।

**— डॉ. उमाशंकर शुक्ल, गुलाबपुर,**
**जि. सीतापुर, उ.प्र.**

**नवनीत** का जून - ९० का अंक पढ़ने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। इस अंक की प्रायः सभी रचनाएं स्तरीय तथा प्रभावी हैं। इन सब में डॉ. गणेशदत्त सारस्वत का 'क्वांरी आशा' शीर्षक गीत विशेषरूप से रुचिकर प्रतीत हुआ। इसमें प्रेम का अध्यात्म में पर्यवसान देखते ही बनता है। बाबूलाल शर्मा प्रेम' की 'पुनर्जन्म' शीर्षक रचना भी आत्मविस्मृति का मार्ग मुक्त कर देती है। डॉ. कुंवर चंद्रप्रकाश सिंह की 'कवि हे !' शीर्षक रचना दिग्भ्रांत कवियों के लिए प्रकाश-स्तंभ का कार्य करती है। ऐसी उत्तम रचनाओं के प्रकाशन के लिए आप साधुवाद के अधिकारी हैं।

**— डॉ. अहीन नकवी, आगरा, उ.प्र.**

* * *

२९ जून को आवश्यक कार्य हेतु मैं दुर्ग गया था। मैं साहित्यिक पत्रिका व पुस्तकों का बड़ा शौकीन हूं। स्टाल में कई पुस्तकें, पत्रिकाएं देखीं, किंतु तभी **नवनीत** पर नजर पड़ी। मैं निहाल हो गया। उच्चकोटि की कविताएं पढ़ने का मैं सतत प्रयत्न करता हूं। किंतु आज तक पत्रिकाओं में ऐसी पत्रिका पढ़ने को नहीं मिली थी। पर उस दिन 'इंद्रधनुष की पालकी', 'कुंवारी आशा', 'कवि हे !' आदि ने मन को छू लिया। ग्रामीण साहित्यकारों के लिए एक नया स्तंभ प्रारंभ करें।

**- राजेश जैन धमु, देवकर (दुर्ग) म.प्र.**

* * *

**नवनीत** का मेरे लिए प्रत्येक अंक प्रत्येक माह अनुलाहट पैदा करता है। क्योंकि हमारे सागर में **नवनीत** देर से नहीं, बल्कि बहुत देर से पहुंचता है। ऐसी स्थिति में मैंने देखा है साहित्यप्रेमी लोग बाजार जाते हैं और **नवनीत** न प्राप्त होने के कारण अन्य कई पत्रिकाएं खरीद-खरीद कर ले आते हैं, जबकि उनकी इच्छा प्रायः **नवनीत** पढ़ने की होती है। **नवनीत** के पाठक जो प्रायः मध्यमवर्गीय हैं, **नवनीत** विलंब से आने के कारण अन्य पत्रिकाएं खरीदने के लिए मजबूर होते हैं।

**— सुरेंद्र सिंह गौर, सागर, म.प्र.**

* * *

आपकी मासिक पत्रिका जून अंक में छपे 'चित्रकार बालिका' (बालकथा) में लेखक सुरेंद्र सिंह गौर नेजो बालिकाओं में चित्रकारी भावना जागृत करने की प्रेरणा दी है, बहुत पसंद आयी। लेखक को साधुवाद!

**— जे. आर. राठिया, सिवनी, म.प्र.**

* * *

**नवनीत** का जून - ९० अंक पढ़ा। विविधवर्णी रचनाओं के चयन में पत्रिका की श्रेष्ठता झलकती है। **नवनीत** सचमुच हिंदी की सर्वश्रेष्ठ पत्रिका है। व्यक्ति चित्र 'प्राध्यापक या जादूगर', कहानी 'जीवनरेखा' तथा 'विविधा' बहुत पसंद आयीं। 'मृत्युलोक का अमृत छाव' लेख उपयोगी लगा। कविताओं में देवेंद्र शर्मा 'इंद्र' का गीत, इसाक अश्क के नवगीत, मिश्रीलाल जायसवाल की चुटकियां अच्छी लगीं। राजेंद्र तिवारी की ग़ज़लें मन को बहुत गहरायी छू गयीं।

**— देवेश करुणाकर, पटना, बि**

* * *

मैं **नवनीत** का नियमित पाठक हूं। जू ९० का अंक देखकर हार्दिक प्रसन्नता हु सर्वप्रथम तो इस अंक का मुखपृष्ठ का आकर्षक प्रतीत हुआ। इस अंक में प्रका रामचंद्र चंद्रभूषण द्वारा लिखित 'इंद्रधनुष पालकी' कविता ने तो मेरा मन ही लिया। इसके अलावा 'प्राध्यापक या जादू 'विविधा', 'चमड़ी की देखभाल', 'स्नेह प्रतिदान', 'अपनों के बीच', 'शत्रु कौन' बहुत ही ज्ञानवर्धक रचनाएं सिद्ध हु 'सांस्कृतिक मंच' से मैंने बहुत सी जान हासिल की जो बहुत खोज़ने तथा पैसा करने के बावजूद भी मेरे हाथ न लग इसके अलावा राजेंद्र तिवारी द्वारा लिखित ग़ज़लें' हमें बहुत ही रुचिकर ल 'हिंदुस्तान समाचार फीचर सेवा' प्रकाशित 'पत्नी पीड़ित पति' पढ़कर मैं को हंसने से रोक न सका।

**— मुन्नालाल राठौर, भोपाल,**

* * *

अप्रैल १९६० से जब मेरा नर्सिंग शुरू हुआ, तब से (३० वर्षों से) मैं ल **नवनीत** डाक द्वारा मंगवा रहा हूं। पहले भी यानी १९५२ से १९५९ त सारे अंक विशेष अनुदेश द्वारा तत्कालीन ताड़देव स्थित कार्यालय मंगवाये थे। मेरे संग्रहालय में आज

**नवनीत** मौजूद हैं ।

'नवनीत सौरभ' काफी रोचक होने से मैंने उसकी १५ प्रतियां अलग-अलग शिक्षण संस्थाओं को उपहार के रूप में बांटी हैं । यात्रा के दौरान श्रीमतीजी का तो साथ होता ही है, परंतु **नवनीत** पढ़ने से समय का पता ही नहीं चलता है तथा अवर्णनीय आनंद प्राप्त होता है ।

**नवनीत** जून महीने का अंक २६ जून को मिला । महीने के आखिरी सप्ताह में मिलने से उस महीने में आने वाले व्रत व त्यौहार तथा मासिक भविष्यफल से मतलब सिद्ध नहीं होता है । मैं आप को बतलाना चाहता हूं कि अब की बार मुद्रण भी बदला हुआ है, टाइप भी नाजुक है, सामग्री में ८ पेज की कमी की गयी है तथा विशिष्ट लेखों में भी कमी की गयी है ।

इस अंक में 'मृत्युलोक का अमृत छाछ' के लेखक वैद्य ओ. पी. वर्मा सही मायनों में प्रशंसा के पात्र हैं । उन्होंने छाछ के विषय में जो जानकारी दी है तथा उसके गुण-दोष पर प्रकाश डाला है, वह पाठकगण के लिए महत्वपूर्ण उपयोगी सिद्ध होगा ।

**– डॉ. विपिन शाह, बीलीमोरा, गुजरात**

* * *

हममें से हर एक यह उम्मीद रखता है कि दूसरे सभी हमारी भावनाओं को समझें व ऐसे कार्य न करें जो हमें दुख पहुंचायें । किंतु अत्यंत खेद का विषय है कि हम यही बात दूसरों के विषय में नहीं सोचते और समय-समय पर अपने से छोटे तथा बड़ों के प्रति ऐसे-ऐसे कार्य कर गुजरते हैं कि वे जहां संबंधित व्यक्ति को सदमा पहुंचाते हैं, वहीं हमारे भीतर गिरते मानवता के स्तर को भी स्पष्ट करते हैं । और यही तथ्य प्रस्तुत करती है **नवनीत** के जून अंक में प्रकाशित कमला चमोला की कहानी 'जीवनरेखा' ।

साथ ही इस अंक से मुद्रण की दृष्टि से **नवनीत** ने नया व चित्ताकर्षक रूप पाया है, जो कि प्रसन्नता का विषय है ।

**– उदय सोले विदिशा म.प्र.**

* * *

**नवनीत** का जून अंक पढ़ा । सभी सामग्री सदा की तरह रोचक और हृदयग्राही है । विशेषत: कहानी चयन सुरुचिपूर्ण है । भाषा बड़ी सरल और सुग्राह्य है । इन कहानियों को पढ़ते समय ऐसा भान नहीं होता कि हम कथा पढ़ रहे हैं, बल्कि यह प्रतीत होता है कि कथानक को हम स्वयं जी रहे हैं ।

'इंद्रधनुष की पालकी' कविता पसंद आयी । 'विविधा' का संकलन भी अच्छा रहा । इन सबके साथ एक भूल भी खटकी । विजय प्रकाश त्रिपाठी द्वारा संकलित प्रेरक प्रसंग 'मन का स्वभाव' दोबारा छप गया है ।

**– राका पांडेय, रायबरेली, उ.प्र.**

* * *

**नवनीत** जून अंक प्राप्त हुआ । **नवनीत** में प्रकाशित सत्यकाम विद्यालंकार द्वारा प्राचीन सूक्ति का लयबद्ध सरल अर्थ मन को लुभाता आया है । इसी अंक में प्रकाशित कहानियां 'जीवनरेखा', 'स्नेह का प्रतिदान' एवं 'अपनों

(शेषांश पृष्ठ ६ पर)

# नवनीत

संपादक गिरिजाशंकर त्रिवेदी
उप-संपादक रामलाल शुक्ल
अतिरिक्त सहयोग } किशोरीरमण टंडन
प्रकाशक सु. रामकृष्णन्
वर्ष ३९, अंक ८

संस्थापक : कन्हैयालाल मुंशी
भारती : स्थापना १९५६
श्रीगोपाल नेवटिया
नवनीत : स्थापना १९५२

अगस्त १९९०

| | | |
|---|---|---|
| पत्र-वृष्टि | | १ |
| दो ग़ज़लें | अरुणसिंह 'मख्मूर' | ७ |
| संपादकाचार्य श्री लक्ष्मणनारायण गर्दे | डॉ. लक्ष्मीशंकर व्यास | ८ |
| शयन-विज्ञान | उमेश पांडे | १५ |
| अध्यक्ष के पत्र | .... | १७ |
| दो कविताएं | सावित्री परमार | २० |
| जब हम अमरकंटक पहुंचे | डॉ. रामनारायण सिंह 'मधुर' | २१ |
| 'भारत छोड़ो' आंदोलन | अरविन्द मिश्र | २८ |
| प्रार्थना | .... | ३३ |
| संतुलन का जीवन में महत्व | रमेशचंद्र महरोत्रा | ३४ |
| हाजिरजवाबी फिराक की | डॉ. अंजनीकुमार श्रीवास्तव | ३६ |
| संत कबीर और संत सर्वज्ञ | मदनगोपाल शर्मा | ४१ |
| स्वाधीनता दिवस (कविता) | रामस्वरूप अवस्थी | ४३ |
| कवि कालिदास का संगीत वैशिष्ट्य | डॉ. सुनीला मिश्र | ४४ |
| पेड़ : चार कविताएं | बलदेव वंशी | ४७ |
| बनारसी ठाटबाट पर निकले डाक टिकट | गोपीचंद श्रीनागर | ४९ |
| मरते समय (अंग्रेजी कहानी) | सुई किड | ५२ |
| मासिक भविष्यफल : अगस्त १९९० | पं. वी.के. तिवारी | ५७ |

| | | |
|---|---|---|
| सांस्कृतिक मंच | .... | ६० |
| हे गोविन्द, हे गोपाल राखो शरण | दुर्गाप्रसाद मंडेलिया | ६५ |
| जीवन-सौरभ | डॉ. के.एन. अवस्थी | ६९ |
| मालवा की सांस्कृतिक संपदा | डॉ. प्रभाकर माचवे | ७३ |
| राष्ट्रीय-पर्व : रक्षाबंधन | योगेशचन्द्र शर्मा | ७६ |
| मृत्यु : जीवन का स्वर्ण-कलश | डॉ. मनु कोठारी/डॉ. लोपा मेहता | ८० |
| ग्रंथलोक | अग्रवाल, गुजराती, दवे, नलिन, भारतीय, अस्थाना, श्रीवास्तव | ८७ |
| कीड़े की देन रेशम | रामानन्द त्रिपाठी | ९४ |
| लोक संस्कृति (उड़िया कहानी) | जगन्नाथ प्रसाद दास | ९७ |
| अम्मां (कहानी) | दीपशिखा शर्मा | १०४ |
| द्वापर से कलियुग तक जल रहस्य | .... | ११४ |
| रास्ते अपने-अपने (कहानी) | कमला चमोला | ११७ |
| हाइकू : दो कविताएं | रमेशचन्द्र शर्मा 'चन्द्र'/कमलेश भट्ट 'कमल' | १२८ |
| मदद (गुजराती बाल कहानी) | जीवराम जोशी | १२९ |
| काले मेघा (कविता) | डॉ. राष्ट्रबंधु | १३१ |
| वर्षा (कविता) | डॉ. इसाक 'अश्क' | १३१ |
| कहावतों में अनावृष्टि | डॉ. मनोहरलाल | १३२ |
| मन की एकाग्रता | अशोक श्रीश्रीमाल | १३५ |
| कार्टून | सौरभ गोदीका | १३६ |

**आवरण-चित्र** : निहालचंद जैन

**चित्र-सज्जा** : ओके, शेणै, आर. डी. पुरोहित, दुबे, राजेंद्र पोयरेकर·

**कार्यालय** : भारतीय विद्या भवन, क. मा. मुंशी मार्ग, बंबई-७ फोन : ८११४४६२

के बीच' रोचक होते हुए भी कहीं-कहीं उबाऊ रहीं।

मराठी कहानी - 'अब भी इंतजार है', हिंदी कहानी – 'साधना की आराधना', 'अमरवेल', पंजाबी कहानी 'शत्रु कौन', एवं बालकथा 'चित्रकार बालिका' शिक्षाप्रद एवं अच्छी रहीं।

**– उमाशंकर प्रजापति, सागर, म.प्र.**

* * *

**नवनीत** के जून अंक में जीवनदर्शन स्तंभ के अंतर्गत 'श्रद्धादीप' मन को आलोकित कर गया। 'जीवनरेखा' व 'स्नेह का प्रतिदान' कहानी मन पर छाप छोड़ गयीं। अन्य सभी कहानियां व लेख रोचक, सरस व ज्ञानवर्द्धक लगे।

**नवनीत** हिंदी पत्रकारिता का नवनीत है। वास्तव में यह अपने ढंग की विलक्षण पत्रिका है। आध्यात्मिक, सामाजिक, पारिवारिक एवं राष्ट्रीय भावना से ओतप्रोत तथा सुदृढ़ चरित्र निर्माण करने वाली पत्रिका है।

**नवनीत** की समस्त सामग्री प्रशंसनीय है। प्रत्येक पाठक की रुचि को संतुष्ट करने वाली यह पत्रिका गागर में सागर है।

**– रीता सक्सेना, आगरा, उ.प्र.**

* * *

गत दिसंबर से मैं **नवनीत** का नियमित पाठक बना। प्रति माह मैं **नवनीत** के अंक का बड़ी बेसब्री से इंतजार करता हूं। जून - ९० का अंक बहुत ही अच्छा लगा। डॉ. इसाक 'अश्क' के गीत तथा 'नास्तिक' की पांच हाइकु कविताएं पसंद आयीं। साधना श्रीवास्तव की कहानी- 'स्नेह का प्रतिदान' भी पसंद आयी। स्वास्थ्य-चर्चा के अंतर्गत ज्ञानवर्द्धक जानकारी मिली। आप इसी तरह स्तरीय एवं शिक्षाप्रद रचनाएं देते रहें। मैं **नवनीत** के उज्ज्वल भविष्य की कामना करता हूं।

**– तरुण कीमती, पत्रकार,**
**रामपुरा, म.प्र.**

* * *

मई अंक बहुत देर से मिला। 'नर्मदा के घाट' मुखपृष्ठ की शोभा बढ़ा रहे थे। अमृतलाल नागर के प्रति राममोहन शर्मा की श्रद्धांजलि सुंदर है। कुमुदजी ने भी 'कालपी' पर सम्यक शोध की है। नेलसन मंडेला पर रामपाल सिंह का लेख प्रभावी और जानकारीपूर्ण है। शकुंतला शर्मा की कहानी - 'अपनी देहरी', धनेश्वरप्रसाद की 'अहसास' तथा डॉ. शोभा निगम की 'सहारा' रोचक हैं। 'चिनार झुक गये', 'सलाह', 'श्रद्धांजलि' इस अंक की अच्छी कविताएं हैं।

**नवनीत** अपनी विशिष्टता बनाये हुए है। सांस्कृतिक आवरणपृष्ठ तथा साहित्यिक लेख, निबंध हर अंक को संग्रहणीय बना देते हैं। शोधपरक लेख बोधगम्य शैली में सरलता से ग्राह्य हो जाते हैं। व्यवस्था कुछ कमजोर समझ में आती है, क्योंकि काफी इंतजार के बाद यह मई अंक मुझे उपलब्ध हो सका। इस ओर ध्यान दें।

**– आदर्श प्रहरी, उरई, उ.प्र.**

# दो ग़ज़लें

कुछ शहीदों की तरह का, कर दिखाना चाहिये
घिर गई तूफान में कश्ती बचाना चाहिये

देश तो आज़ाद है, पर हैं कहाँ आज़ाद हम
साँस खुलकर लें जहाँ, ऐसा ठिकाना चाहिये

अब भी हाथों में है ताकत, हौंसले भी हैं बुलंद
अपनी कुव्वत को जरा फिर आज़माना चाहिये

जिसको सुनकर झूम जाते थे सिपाही देश के
सरफ़रोशी का हमें फिर वो तराना चाहिये

उस तरफ तो रास्ते ही बंद हैं 'मख़्मूर' के
जिस तरफ से ज़िन्दगी का जाम आना चाहिये

* * *

यूँ हाथ मिलाने को रफ़ाकत नहीं कहते
गर्दन के झुकने को इबादत नहीं कहते

कुछ ऐसी हवा बाँधो कि दुश्मन भी फ़िदा हो
अंजाम से डरने को मोहब्बत नहीं कहते

दौलत के इज़ाफे से तो क़द बढ़ नहीं जाता
मिट्टी के घरौंदे को इमारत नहीं कहते

बाग़ी नहीं हम लोग, हमारा ये वतन है
जज़्बे को शहादत के, बग़ावत नहीं कहते

तू मेरा मददगार है तो पास बुला ले
दुख दर्द मिटाने को इनायत नहीं कहते

'मख़्मूर' ग़ज़ल वो हैं, जो अल्लाह लिखा दे
हर एक इबारत को तो आयत नहीं कहते

**– अरुणसिंह 'मख्मूर'**
देना बैंक भवन, २रा माला,
दूसरी पास्ता गली,
कुलाबा, बम्बई – ४०० ००५.

पत्रकारिता के उन्नायक

# सम्पादकाचार्य श्री लक्ष्मणनारायण गर्दे

☐ डॉ. लक्ष्मीशंकर व्यास

गौर, वर्ण, सिर पर श्वेत केश, चौड़ा ललाट, गंम्भीर मुख पर सौम्य भाव, शुभ्र खादी की धोती, कुर्ता और गांधी टोपी में सम्पादकाचार्य गर्देजी की स्नेह विनयपूर्ण मूर्ति सहज ही सबका ध्यान आकृष्ट कर लेती थी। हिन्दी पत्रकारिता के इस आचार्य ने पिछले पचास वर्षो से त्याग तथा सेवा-भावना से अनवरत साहित्यसाधना की और पत्रकारों के क्षेत्र में अपनी अमिट छाप छोड़ी है।

गर्देजी हिन्दी पत्रकारिता के आदि आचार्यो में तो रहे ही हैं, इसी अवधि में साहित्य के विविध अंगो की रचना भी की है। सच बात तो यह है कि आप सर्वतोमुखी प्रतिभा के साहित्य-स्रष्टा थे। प्रारंम्भ से ही आपके लेख देश के विभिन्न पत्रों में प्रकाशित होते रहे हैं। हिन्दी तथा मराठी के अतिरिक्त अंगरेजी भाषा में भी आपके बहुत से लेख तत्कालीन प्रमुख पत्रों में प्रकाशित होते थे। आपकी लिखी 'महाराष्ट्र रहस्य' लेखमाला जो पहले 'भारत मित्र' में प्रकाशित हुई थी, इतनी लोकप्रसिद्ध हुई कि बाद में उसे पुस्तकाकार निकाला गया। 'सरल गीता' और 'कृष्ण चरित' आपकी दो मौलिक और अत्यंत लोकप्रिय कृतियां रही हैं। मृत्यु के लगभग एक वर्ष पूर्व इन पंक्तियों के लेखक को गर्देजी ने बताया था कि मेरी अत्यंत प्रिय यही दोनों रचनाएं हैं। 'सरल गीता' की सर्वत्र प्रशंसा हुई थी। आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी तथा सम्पादकाचार्य बाबूराव विष्णु पराड़करजी आदि तत्कालीन विद्वानों ने अपने पत्रों में उसकी प्रशंसा करते हुए विस्तृत समालोचना की थी।

## साहित्य साधना

काशी में पण्डित लक्ष्मणनारायण गर्दे प्रसिद्ध देशभक्त, दानवीर और हिन्दी-प्रेमी श्री शिवप्रसाद गुप्त के संपर्क में आये। आपने काशी की प्रसिद्ध प्रकाशन-संस्था ज्ञानमण्डल की स्थापना के प्रारंभिक दिनों में उसके कार्यों में सहयोग दिया। यहीं गर्देजी ने 'मांटेगू-चेम्सफोर्ड' रिपोर्ट का हिन्दी अनुवाद, श्री श्रीप्रकाशजी (भूतपूर्व राज्यपाल, महाराष्ट्र) के साथ किया। 'जापान की राजनीतिक प्रगति' शीर्षक पुस्तक भी आपने इसी समय लिखी।

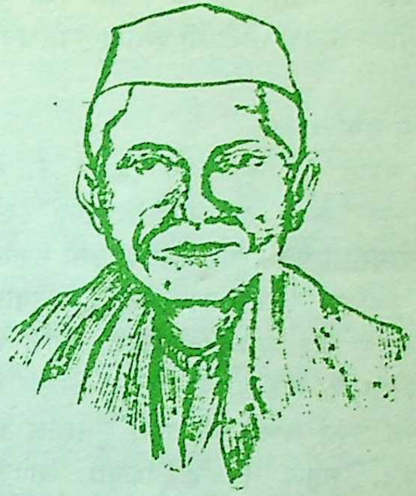

लक्ष्मणनारायण गर्दे

संत साहित्य की ओर आपकी विशेष अभिरुचि रही है। यही कारण है कि आपने महाराष्ट्रीय संत ज्ञानेश्वर, एकनाथ तथा तुकाराम के जीवन-चरित्रों के हिन्दी में अनुवाद प्रस्तुत किये। योगिराज अरविन्द की ओर आप सहज आकृष्ट थे और उनके साहित्य- 'माता', 'योग प्रदीप' तथा 'गीता प्रबंध' को हिन्दी में लाने का श्रेय आपको ही है। 'माता' के अनुवाद को सुंदरता तथा उसके मूल भावों को हिन्दी में रूपांतरित करने के लिए योगिराज अरविंद ने पत्र लिखकर आपको बधाई दी थी।

'एशिया का जागरण', 'गांधी सिद्धांत', 'अरविंद योग', 'जेल में चार मास'। 'आरोग्य-उसके साधन' आदि आपकी अन्य उल्लेख्य पुस्तकें हैं। इनके अतिरिक्त आपने उपन्यास भी लिखे हैं, जिनके नाम हैं - नकली प्रोफेसर, 'मेंहदी का बाग' और 'मिया की करतूत'। महात्मा गांधी की गुजराती पुस्तक 'हिन्दी स्वराज्य' का अनुवाद गर्देजी ने गांधी सिद्धांत नामक पुस्तक के रूप में किया था। गांधीजी की इस पुस्तक का अंग्रेजी अनुवाद श्री चक्रवर्ती राजगोपालाचारी ने 'इंडियन होम रूल' के नाम से किया था और हिन्दी अनुवाद गर्देजी ने 'गांधी सिद्धांत' के नाम से।

सन १९२० में भारतीय जनता के समक्ष गांधीजी के सिद्धांतों को रखने में इस पुस्तक द्वारा गर्देजी ने विशेष योग दिया था। 'गांधी सिद्धांत' में विदेशी वस्त्रों के बहिष्कार के साथ ही मिलों के भी बहिष्कार का प्रचार किया गया था। देश में उस समय आवश्यकता इस बात की थी कि खद्दर के प्रचार के साथ-साथ देशी मिलों के कपड़े का भी प्रचार हो। विदेशी वस्त्रों के पूर्णरूपेण बहिष्कार के निमित्त यह आवश्यक था। गर्देजी ने इस तथ्य को समझा और निश्चय किया कि गांधीजी स्वयं प्रस्तावना लिखकर इस विषय में समय के अनुकूल संशोधन कर दें। 'गांधी सिद्धांत' के छपे फर्म लेकर आप गांधीजी के पास गये जो उन दिनों प्रयाग में थे। गांधीजी ने गर्देजी के इस विचार को पसंद किया और कहा कि मेरे साथ बंबई चलो। अवसर मिलते ही मैं प्रस्तावना लिखा दूंगा। वे तूफानी दिन, गांधीजी की व्यस्तता और उनके दौरे का कार्यक्रम। बारह दिन तक बराबर गर्देजी

गांधीजी के साथ रहे और तब कहीं वे गांधीजी से एक छोटी-सी प्रस्तावना लिखवा सके।

**जन्म तथा शिक्षा**

गर्देजी का जन्म सन १८८९ ई. में फाल्गुन मास में महा-शिवरात्रि को वाराणसी स्थित पत्थर गली के उसी मकान में हुआ था, जिसमें आप सपरिवार निवास करते थे और जो आपकी पैतृक सम्पत्ति है। महाराष्ट्रीय ब्राह्मणों के विद्वान् परिवार में जन्म लेकर आपने परंपरागत कुलशील का सर्वदा सहज निर्वाह किया। आपकी प्रारंभिक शिक्षा आंग्रे के बाड़े की महाराष्ट्र पाठशाला में हुई। इसके बाद आपने पहले क्वीन्स कालेजियेट स्कूल तथा उसके अनंतर सेंट्रल हिन्दू कालेज में विज्ञान लेकर स्कूल फाइनल परीक्षा उत्तीर्ण की। इन्ही दिनों आपने पराड़करजी, केलकरजी तथा दुगवेकरजी के सहयोग से 'ज्ञान संवर्धिनी सभा' की स्थापना की। देश में हो रहे राष्ट्रीय आंदोलन तथा कार्यक्रमों की इसमें चर्चा होती, निबंध लिखे जाते और व्याख्यानों के आयोजन होते।

राष्ट्रीय भावनाओं से ओतप्रोत तथा इंटरमीडिएट कक्षा की पढ़ाई छोड़कर जब गर्देजी बंबई पहुंचे तो उन दिनों लोकमान्य तिलक बर्मा के माण्डले नामक स्थान में बंदी जीवन व्यतीत कर रहे थे।

लोकमान्य के सहयोगी और मित्र श्री माधव राजा बोडस ने आपको परामर्श दिया कि वे देश में राष्ट्रीय चेतना के प्रसार हेतु पत्रकारिता का क्षेत्र अपनायें। आपके आग्रह से गर्देजी 'वेंकटेश्वर समाचार' में काम करने लगे। पत्र के संपादक ने प्रथम दिन ही आपका कार्य देखकर प्रसन्नता प्रकट की। गर्देजी तो राष्ट्रीय आंदोलन में सक्रिय भाग लेने की कामना से गये थे। फलतः कुछ ही दिनों के बाद आप पत्रकारिता के क्षेत्र में पुनः प्रविष्ट होने के लिए कलकत्ता पहुंचे और वहां 'हिन्दी बंगबासी' तथा 'भारत मित्र' का संपादन कर महान कीर्ति अर्जित की। पत्रकारिता के माध्यम से आपने देश की महान सेवा की, जनजीवन में जागृति का संदेश फैलाया तथा राष्ट्रभाषा हिन्दी को सरस-सहज लेखन-शैली दी है।

**पत्रकारिता में योगदान**

पण्डित लक्ष्मणनारायण गर्दे ने हिन्दी पत्रकारिता को जो बहुमूल्य देन दी है इसका उल्लेख प्रारंभ में हो चुका है। दैनिक समाचार-पत्र साप्ताहिक और मासिक पत्रों का संपादन और प्रकाशन करके आपने दिखा दिया कि इनका आदर्श रूप क्या हो सकता है। सन १९१५ में आप दैनिक 'भारत मित्र' के विशेष प्रतिनिधि थे। उस समय जब महात्मा गांधी काशी आये तो आपने उनसे 'भारत मित्र' - प्रतिनिधि की हैसियत से इंटरव्यू लिया था। हिन्दी पत्रों में तथा पत्रकारिता में इंटरव्यू (भेंट वार्ता) की आधुनिक पद्धति का प्रवर्तन एवं प्रचलन करने का श्रेय स्वर्गीय गर्देजी को ही है।

आपने देश के ऐतिहासिक आंदोलन के दिनों में बड़े-बड़े नेताओं से इंटरव्यू लिये। उन्हीं दिनों ब्रिटिश मंत्रिमण्डल के स्वास्थ्य मंत्री जब भारत आये थे तो आपने उनसे भेंटकर अपने पत्र के लिए विशिष्ट समाचार भेजे थे। महात्मा गांधी, मौलाना आजाद, देशबंधु चित्तरंजनदास आदि गण्यमान नेताओं के इंटरव्यू लेकर 'भारत मित्र' में आपने भेजे थे।

पत्रकारिता उन दिनों देश-सेवा का महत्वपूर्ण माध्यम थी। राष्ट्र की स्वाधीनता के लिए विचारों की क्रांति का प्रचार आवश्यक था और गर्देजी में राष्ट्र की उत्कट सेवा-भावना थी। पत्रकारिता के साथ-साथ आपने सक्रिय राजनीति में भाग लिया था और जेलयात्रा भी की थी । एक बार चर्चा के प्रसंग में गर्देजी ने बताया कि उन दिनों कांग्रेस-कार्य तथा आन्दोलन में सहायता के लिए अग्रलेख लिखे जाते थे। उनमें स्पष्टतः लिखा जाता था कि १५ हजार रुपया और अपनी शक्ति के अनुसार एक रुपया देने वाले समान आदर के पात्र हैं। अधिक या कम रकम सहायतार्थ देने पर आदर का अंश घटा या बढ़ा नहीं करता था। हिन्दी साहित्य संम्मेलन के उन्नीसवें गोरखपुर अधिवेशन में सम्पादक-संमेलन के आप अध्यक्ष बनाये गये थे। इस अवसर पर आपका पत्रकारिता संबंधी अभिभाषण काफी चर्चा एवं विचार का विषय था। आप एक बार बिहार प्रांतीय पत्रकार सम्मेलन के भी अध्यक्ष निर्वाचित हुए थे। इस अवसर पर आप डाक्टर राजेन्द्रप्रसादजी (स्वर्गीय राष्ट्रपति) तथा श्री अनुग्रहनारायण सिंह (स्वर्गीय) के निकट सम्पर्क में आये थे।

कलकत्ते में आपने 'हिन्दी बंगवासी' में श्री हरेकृष्ण जौहर के अधीन रहकर पत्रकारिता का कार्य सीखा था। आपका कथन था कि यह संयोग की बात है कि हिन्दी के सभी सम्पादकाचार्यों को अपने पत्रकार जीवन का श्रीगणेश 'हिन्दी बंगवासी' से ही करना पड़ा। सम्पादकाचार्य पण्डित अम्बिकाप्रसाद बाजपेयी और स्वर्गीय सम्पादकाचार्य पण्डित बाबूराव विष्णु पराड़कर ने भी प्रारंभ में 'हिन्दी बंगवासी' में जौहरजी के साथ ही कार्य किया था। इस प्रकार हिन्दी पत्रकारों की 'बृहत्त्रयी' इस पत्र से संबद्ध थी। 'भारत मित्र' सम्पादक श्री बाबूराव विष्णु पराड़कर जब १९१६ में राजद्रोहात्मक कार्य के अभियोग में नजरबन्द कर दिये गये तो उस वर्ष बजट के अवसर पर उनके अभाव का अनुभव किया गया। गर्देजी की मान्यता थी कि बजट साहित्य के संबंध में समाचार देने तथा उसकी समालोचना करने में पराड़करजी विशेषज्ञ माने जाते थे। अर्थशास्त्र संबंधी उनका अध्ययन और मनन अत्यंत गहन था।

जिन हिन्दी दैनिक पत्रों से गर्देजी का संबंध रहा उनके नाम है वेंक्टेश्वर समाचार, हिन्दी बंगवासी, भारत मित्र, संसार,

सन्मार्ग और नवजीवन। उसमें सबसे अधिक और महत्वपूर्ण संबंध भारत मित्र का था। जिन दिनों सम्पादकाचार्य अम्बिकाप्रसादजी वाजपेयी तथा पराड़करजी 'भारत मित्र' के सम्पादक थे तभी से गर्देजी का संबंध 'भारत मित्र' से था। उन दिनों आप इस पत्र के विशेष संवाददाता थे। उसके बाद आपने इसके सहायक संपादक के रूप में स्थान ग्रहण किया। कुछ दिन कार्य करने के बाद आप काशी चले आये और भारतेंदु हरिश्चंद्र द्वारा स्थापित स्कूल में अध्यापन कार्य किया बाद में 'भारत मित्र' से पुनः तार आया कि 'आकर पूरा भार संभालिये'। कलकत्ते पहुंचने पर बाजपेयीजी ने आपका स्वागत भावी संपादक के रूप में किया। गर्देजी की पत्रकारिता का सबसे महत्वपूर्ण समय यहीं से प्रारंभ होता है। 'भारत मित्र' उन दिनों देश का सर्वश्रेष्ठ दैनिक हिन्दी पत्र बन गया था।

'भारत मित्र' पर महात्मा गान्धी, देशबन्धु चित्तरंजनदास आदि मान्य नेताओं की बड़ी कृपा रहती थी। यही कारण था कि कांग्रेस की गुप्त से गुप्त बात प्रायः 'भारत मित्र' में सर्वप्रथम प्रकाशित होती थी। महात्मा गान्धी के 'यंग इंडिया' में छपने वाले लेख अकसर 'यंग इंडिया' के कलकत्ते पहुंचने के पूर्व ही 'भारत मित्र' में प्रकाशित हो जाते थे। गांधीजी के असहयोग-आन्दोलन के प्रथम प्रबल समर्थकों में 'भारत मित्र' था। जिस समय लोग गांधीजी के असहयोग आंदोलन के समर्थन में हिचकते थे, उस समय गर्देजी ने उसका स्पष्ट शब्दों में समर्थन किया। 'साम्यवाद' के प्रचार में भी आपका योग उल्लेख्य रहा है। 'भारत मित्र' में छपे अग्रलेखों के अनुवाद मद्रास के 'स्वराज्य' कलकत्ते के 'सर्वेण्ट' तथा उर्दू 'प्रताप' में प्रकाशित हुआ करते थे। आशय यह कि आपके लेखों की धूम कलकत्ते से पंजाब तक मची रहती थी। गर्देजी के राष्ट्रीय विचार उन दिनों इतने लोकप्रिय थे कि लाहौर में छपने वाले कैलेण्डर में एकाधिक बार आपके चित्र प्रकाशित. किये गये थे। कलकत्ता कारपोरेशन में स्वीकृत प्रथम श्रेणी के पत्रों में आपका 'भारत मित्र' भी था।

अक्तूबर १९२० में गर्देजी ने 'भारत मित्र' में लिखा-'भूतकाल तिलक महाराज का था, वर्तमान गांधी का है और भविष्य अरविन्द घोष का है। अरविन्द घोष एकान्तवास कर रहे हैं। उनको अपना काम करने दीजिए और महात्मा गांधी के साथ संयमशील वीर सैनिक के समान आगे बढ़िये'। गर्देजी भारतीय संस्कृति तथा सनातन-धर्मी परम्परा के पोषक थे। आपका स्पष्ट मत था कि सनातनधर्मी, मुसलमानों से द्वेष नहीं करता। धर्म प्रेम करना सिखाता है, किसी से द्वेष करना नहीं। सन १९२५ 'भारत मित्र' का संचालक मण्डल बद और उसमें नीति विषयक ऐसे मौलि

परिवर्तन हुए कि गर्देजी ने इस पत्र से संबंध विच्छेद करना ही उचित समझा। इसके बाद आपने कलकत्ते से ही 'श्रीकृष्ण सन्देश' नामक आदर्श साप्ताहिक पत्र निकाला। १ अक्तूबर, १९२५ को सम्पादकाचार्य पराड़करजी ने 'आज' में इस पत्र का स्वागत करते हुए जो टिप्पणी लिखी थी वह इस प्रकार है - 'हम अपने नये सहयोगी 'श्रीकृष्ण सन्देश' का सहर्ष स्वागत करते हैं। यह साप्ताहिक पत्र नवम्बर ४ ताराचन्द दत्त स्ट्रीट कलकत्ते से निकलने लगा है। 'भारत मित्र' के भूतपूर्व सम्पादक पण्डित लक्ष्मणनारायण गर्दे इसका सम्पादन करते हैं। पहला अंक जो विजया दशमी के शुभ मुहूर्त पर निकला है, उत्तम लेखों से परिपूर्ण है। सनातन धर्मी होने पर भी हिन्दू महासभा का समर्थन करेगा और कहना व्यर्थ है कि गर्देजी द्वारा सम्पादित पत्र राजनैतिक क्षेत्र में अवश्य ही राष्ट्रीय मत का होगा। हमें आशा है कि 'श्रीकृष्ण सन्देश' हिन्दी में आदर्श साप्ताहिक पत्र बन जाएगा। गर्देजी जैसे अनुभवी सम्पादक के लिए ही यह सम्भव है।'

'श्रीकृष्ण सन्देश' के अतिरिक्त गर्देजी ने 'नवनीत' नामक मासिक पत्र भी निकाला था। इसी पत्र से श्री सम्पूर्णानंदजी की साहित्य-सेवा का प्रारंभ होता है। इस पत्र में श्री हनुमानप्रसाद पोद्दार (सम्पादक कल्याण) भी उन दिनों लिखते थे। 'विजय' नामक पत्र का सम्पादन गर्देजी ने किया था जिसका भार उन्होंने श्री बैजनाथ केडिया (अब स्वर्गीय) को सोंप दिया था। सम्पादकाचार्य बाजपेयीजी ने 'स्वतन्त्र' नामक पत्र निकाला था। अर्थाभाव तथा अन्यान्य कठिनाइयों से इसका प्रकाशन बन्द हो गया। श्री घनश्यामदास जी बिडला चाहते थे कि 'स्वतंत्र' में यदि गर्देजी आ जायें तो वे उस पत्र की आर्थिक व्यवस्था में योग दें, पर स्थिति-विशेष से गर्देजी 'स्वतंत्र' में न जा सके।

### सांस्कृतिक अभ्युत्थान में योग

श्री गर्देजी ने अपने नाम का मोह छोड़कर मौन-साधक की भांति देश की स्वतन्त्रता तथा उसके सांस्कृतिक अभ्युत्थान में योग दिया है। सम्भवतः यह बहुत कम लोगों को विदित है कि गीताप्रेस गोरखपुर से प्रकाशित होने वाले भारत प्रसिद्ध पत्र 'कल्याण' के अनेकानेक विशेषांकों कें सम्पादन में आपका विशेष सहयोग रहा है। इस संबंध में 'कल्याण' के योगांक, सन्तांक, वेदांतांक तथा साधनांक के नाम विशेष उल्लेख्य हैं। 'संसार' तथा 'सन्मार्ग' दैनिक पत्रों में भी आप 'चक्रपाणि' तथा अन्य उपनामों से लेख लिखा करते थे। पराड़करजी के सम्पादकत्व में निकलने वाली मासिक पत्रिका 'कमला' का (पराड़करजी की अस्वस्थता के समय) आपने कई महीनों तक सम्पादन किया था।

जीवन के अन्त तक गर्देजी हिन्दी भाषा, साहित्य तथा पत्रकारी के संवर्धन में लगे

रहे। काशी नागरीप्रचारिणी सभा के आप उपाध्यक्ष थे और थे काशी पत्रकार संघ के संरक्षक। काशी के साहित्यिक और पत्रकार सभी आपसे पथनिर्देशन लिया करते थे। काशी में उत्तर प्रदेश श्रमजीवी पत्रकार यूनियन का वार्षिक अधिवेशन थियोसाफिकल सोसायटी में पत्रकार पी. डी. टण्डन की अध्यक्षता में हुआ था। इस सम्मेलन के स्वागताध्यक्ष गर्देजी ही थे। इस भाषण में आपने समाचार-पत्रों तथा पत्रकारिता के संबंध में महत्वपूर्ण निर्देश दिये थे। सम्मेलन का उद्‌घाटन केन्द्रीय मन्त्री श्री लालबहादुर शास्त्री ने किया था।

जब मैं दक्षिण पूर्वी एशिया के बर्मा, मलाया, सिंगापुर, आदि देशों की यात्रा से लौटा तो मित्रों ने एक स्वागत-गोष्ठी का आयोजन किया। इस गोष्ठी की अध्यक्षता पण्डित लक्ष्मणनारायण गर्देजी ने की थी ओर आशीर्वाद दिया था। काशी में आपके सान्निध्य के अनेकानेक संस्मरण हैं। धोती, गंजी पहने तथा सफेद दुपट्टा ओढ़े हु तथा गोद में पौत्र को लिए हुए गर्देजी के दर्शन चोखम्भा बाजार में प्रायः हुआ कर थे। पत्थर गली स्थित आपके निवास में भी मुझे आपके चरणों में बैठकर पत्रकारित तथा पत्रकारिता के आचार्य देउसकर तथा पराड़करजी के अनेक दुर्लभ संस्मर सुनने का सौभाग्य मिला है। आप सरल और विनम्रता की मूर्ति थे। एक बार आप पराड़करजी के लेखों का संग्रह त सम्पादन करना स्वीकार कर लिया किन्तु बाद में स्वास्थ्य के कारण यह कार्य हो सका। गीता के आप मर्मज्ञ विद्वान गीता-व्याख्याता के रूप में आप देश प्रख्यात थे। पिछली आधी शताब्दी तक दे की स्वतन्त्रता की लड़ाई, राष्ट्रभाषा हि की उन्नति, देश के सांस्कृतिक उत्थान त हिन्दी सम्पादन कला के उन्नयन में लगे रहे। वे राष्ट्रभारती के महान् और मौ साधक थे।

□

एक छोटी लड़की प्रायः प्रतिदिन, तीसरे पहर, प्रसिद्ध गणितज्ञ आइंस्टीन से मिलने जा करती थी। एक दिन उस लड़की की मां ने क्षमा मांगते हुए उनसे कहा — 'मै लज्जित हूं कि मेरी बच्ची आपको परेशान किया करती है।'

'नहीं! नहीं!' आइंस्टीन ने कहा, 'आप चिंता न करें। मुझे उसके साथ समय बिताने में ब आनंद आता है।'

लड़की की मां ने कहा — 'यह तो आपकी भलमनसाहत है। भला आठ वर्ष की बच्ची ७ वर्ष के आप जैसे सज्जन को तंग करने के सिवा और क्या कर सकती है?'

'बहुत कुछ!' संसार के महान वैज्ञानिक के चेहरे पर बालकों जैसी मुस्कान फूट पड़ी, उसके गणित के सवाल लगा दिया करता हूं और वह मुझे चाकलेट देती है। मुझे चाकलेट ब पसंद है।'

— डॉ. गोपाल प्रसाद 'वं

* * *

# शयन-विज्ञान

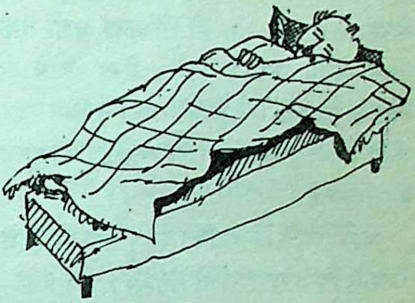

□ उमेश पाण्डे

भारतीय प्राचीन शास्त्रों में स्वास्थ्योपकार हेतु किस प्रकार शयन करना चाहिये? इसका पर्याप्त विवेचन मिलता है। वैज्ञानिक रूप से भी ये तमाम बातें सिद्ध हो चुकी हैं। उदाहरणार्थ सोते समय सिर किस दिशा में होना चाहिए? यह बात महाभारत के निम्न श्लोक से स्पष्ट होती है। युधिष्ठिर आदि के सिर शयन करते समय दक्षिण दिशा की ओर रहते थे :–

**यथा स्वकीयान्यजिनानिसर्वे**
**संस्तीर्य वीराः सुषुपुर्धरण्याम् ।**
**अगस्त्यशास्ताम् (दक्षिणाम्)**
**अभितोदिशंतु**
**शिरांसितेषां कुरूसत्तमानाम् ।।**
**(महा. १/१९४/८-९१)**

वैखानसगृहय सूत्र के 'प्रत्यगुत्तरशिराश्च न स्वपिति' (३/१/१/७) के द्वारा स्पष्ट है कि सोते समय उत्तर तथा पश्चिम दिशा की ओर सिर नहीं होना चाहिये।

उपरोक्त शयन नियम के पीछे वैज्ञानिक कारण यह बताया गया है कि पृथ्वी चुम्बक से निकलने वाली बल रेखाओं का प्रभाव इन स्थितियों में शयन करने से शरीर पर प्रतिकूल पड़ता है।

सोते समय कौन सी करवट से सोना। इसके लिये भी कहा गया है कि व्यक्ति को सदैव दाहिनी करवट ही सोना चाहिये। क्योंकि बायी करवट से सोने में हृदय पिण्ड पर दबाव पड़ता है जिसके परिणाम स्वरूप यह अपना कार्य ठीक से नहीं कर पाता। लगातार बायीं करवट सोने से व्यक्ति हृदय रोग अथवा अनियमित रक्तचाप का शिकार हो जाता है।

बायीं करवट सोने से दाहिना स्वर चालू हो जाता है। यह सूर्य स्वर होता है। इस स्वर में

शरीर में अधिक ऊर्जा पैदा होती है। अतः भोजनोपरांत कुछ क्षणों के लिए बायीं करवट से सोना भोजन पचाने की दृष्टि से अत्यंत शुभ है। इसी प्रकार सहवास के पूर्व यदि बायां स्वर चल रहा हो तो कुछ क्षणों तक पहले बायीं करवट सोवें। ऐसा करने से दाहिना स्वर प्रारंभ हो जायेगा। दाहिने स्वर में ही सहवास करना शरीर स्वास्थ्य का दृष्टि से उत्तम है।

कहा गया है कि व्यक्ति को पूर्ण पीठ के बल अर्थात् चित्त नहीं सोना चाहिये। इस प्रकार शयन करने से शरीर में, रुधिर संचालन में गड़बड़ी होती है जो कि स्वास्थ्य के लिए अतीव हानिकारक है। इसी प्रकार चित्त सोने से श्वासोच्छ्वास की गति भी बिगड़ जाती है अर्थात् जिस प्रकार दिन भर में दाहिने और बायें स्वर चलना चाहिये वे नहीं चल पाते। मुख्यतः सुषुम्ना स्वर अथवा लगातार एक ही स्वर चलता रहता है जिसका अधिक चलना स्वास्थ्य के लिए निरापद नहीं है।

पेट के बल सोना भी बहुत हानिकारक है। पेट के बल सोने वाले को तमाम उदर विकार घेर लेते हैं। उसके आमाशय में भोजन का पर्याप्त पाचन नहीं होता है। इसी प्रकार के सोने में पसलियों और छाती पर दबाव पड़ता है जो कि रक्त परिवहन तंत्र और श्वसन तंत्र पर विपरीत प्रभाव डालता है।

गाल के नीचे हाथ रखकर शयन किया जाने पर जिस गाल के नीचे हाथ रखकर प्रायः सोया जाता है, उस ओर की आंख कुछ बैठ जाती है अथवा उस ओर की दृष्टि कु कमजोर पड़ जाती है।

हाथ-पांव सिकोड़कर सोने से अथवा पे में घुटने टेककर सोना भी हानिकारक है। इ शयन के परिणामस्वरूप मेरुदंड में वक्रत आ जाती है, जिससे शरीर टेढ़ा हो जाता है।

जो लोग अत्यधिक ऊंचा तकिया लगाक शयन करते हैं उनकी नांक में कुछ टेढ़ापन आ जाता है अथवा उन्हें नासिका विकारों क सामना करना पड़ता है। इसी प्रकार ज व्यक्ति हाथ को तकिया बनाकर सोते हैं उनके उस हाथ की कार्य दक्षता में शिथिलता आ जाती है, जिस पर सिर रखकर वे सोते है अथवा उस हाथ की हड्डियां जल्दी उत जाती हैं।

और अंत में, जो लोग सोते समय अपने हाथों को जंघाओं की बीचं दबाकर औ सिकुड़कर शयन करते है उनकी आंतों प प्रतिकूल प्रभाव पड़ने से उनमें कब्ज, उद विकार तथा वायु बिकार के लक्षण दृष्टिगोच होते हैं। उपरोक्त बातें ऐसे लोगों प परिलक्षित होती हैं जो अधिकांश सम स्थिति विशेष में ही शयन करते हैं। स्थि बदल-बदल कर शयन करने वालों के सा ऐसा नहीं होता है। इस प्रकार शयन कर समय स्वास्थ्य की दृष्टि से प्रतिकूल बातों क परित्याग करते हुए शयन करने से निश्च ही पूर्ण शयन सुख हमें प्राप्त होगा।

— ३१९, म.गां. मा
मल्हारगंज, इन्दौर, म.

□

# अध्यक्ष के पत्र

राज भवन,
मलाबार हिल,
बम्बई

प्रिय सुहद.

दिनांक १८ जून १९९० को समूचे राष्ट्र विशेषकर महाराष्ट्र ने सन्त ज्ञानेश्वर द्वारा रचित श्रीमद्भगवद्गीता की प्रसिद्ध ज्ञानेश्वरी टीका का ७०० वाँ वर्ष मनाया।

मराठी भाषा की सर्वप्रथम दार्शनिक एवं साहित्यिक कृति के रूप में यह विख्यात है। सन्त ज्ञानेश्वर ने पंढरपुर के देव पाण्डुरंग विट्ठल के चरणों में समर्पण हेतु इसे मराठी भाषा में रचा था। सात शताब्दियों के दीर्घकाल के उपरान्त आज भी उसका तेज कम नहीं हुआ है। जब तक मराठी भाषा में ओज और माधुर्य गुण रहेगा तब तक इसका प्रभाव उसी रूप में रहेगा। सचमुच यह कृति अमर रहेगी।

सन्त ज्ञानेश्वर की गीता की टीका का दूसरा महत्त्वपूर्ण नाम भावार्थदीपिका है। दीपिका का अर्थ है प्रकाश फैलानेवाला तथा भावार्थ का अर्थ दार्शनिक विचार। करुणा एवं भगवत् प्रेरित ज्ञानेश्वर ने इस लोकप्रिय टीका द्वारा मातृभाषा में ही गीता के जीवनदायी ज्ञान प्रकाशित का लोगों कर जीवन की अन्धी गलियों से निकालकर उन्हें ज्ञान के शिखर पर बिठा दिया।

आज भी महाराष्ट्र में अनेक लोगों ने गीता के ७०० संक्षिप्त श्लोकों तथा उसकी विभिन्न टीकाओं, जिसमें आदि शंकराचार्य की टीका भी सम्मिलित है, पर आधारित ज्ञानेश्वरी के ९००० छंदों को कंठस्थ कर रखा है।

दर्शन भाव स्वरूप होने के कारण स्वभाव से अमूर्त होता है। ज्ञानेश्वर को इसी अमूर्त को मूर्तवत् प्रस्तुत करना था। वह भी केवल पढ़े–लिखे लोगों के लिए नहीं बल्कि जन सामान्य के लिए। सन्त ज्ञानेश्वर मनसा, बाचा और कर्मणा से जन हितैषी थे। उसी तरह उनकी कृतिभी लोगों के हृदयों को जोड़ती है।

दार्शनिक एवं कवि सन्त ज्ञानेश्वर ने गीता को महाराष्ट्र के जनमानस को आकर्षक बनाकर एक बड़ा चमत्कार कर दिखाया है। गीतामृत का पान करने के लिए उत्कंठित जनता को सरल सुबोध उपमाओं द्वारा उन्होंने तुष्ट किया।

गीता के तेरहवें अध्याय में ज्ञानयोग के

सम्बन्ध में अदंभित्व को इस प्रकार समझाया था, कि 'जिस प्रकार कृपण व्यक्ति मृत्यु भय उपस्थित होनेपर भी अपना संग्रह नहीं दिखलाता, उसी प्रकार अदंभित्व व्यक्ति अपने द्वारा किये गये अच्छे कार्यों को नहीं बताता।'

'चतुर गाय अपने दूध के प्रवाह को जैसे रोक लेती है, अथवा जैसे धनी पथिक अनजान प्रदेश में अपने धन को छिपा लेता है या जैसे कुलीन घर की लड़की अपने अंगों को छिपा लेती है अथवा जैसे किसान बीजों को जमीन में छिपा देता है, उसी प्रकार वह अपने पुण्य कार्यों को छिपा लेता है।'

ज्ञानी का वर्णन करते समय उन्होंने कहा था कि 'यद्यपि केले का पेड़ हलका और खोखला लगता है, किन्तु वह भरपूर फल देता है। छोटे–मोटे बादल के टुकड़े जिनको देखकर लगता है कि उन्हें हवा उड़ा ले जायेगी, पर्याप्त वर्षा कर देते हैं। इसी प्रकार जिन्हें आत्म ज्ञान प्राप्त हो गया है वे वाह्यरूप से देखने में अस्वच्छ दिखाई देते हों, किन्तु हृदय को खुशियों से भर देते हैं।'

अपने पुनीत कार्य द्वारा सन्त ज्ञानेश्वर आध्यात्मिक ज्ञान का प्रचार कर लोगों के विवेक को जागृत करना चाहते थे। उनका उद्देश्य हर व्यक्ति तक ईश्वरी ज्ञान पहुंचाना था।

राजनीतिक लोकतंत्र के साकार होने के बहुत काल पहले ही इस धरती पर लोकतान्त्रिक रहस्यवाद का सन्देश उन्होंने दिया था। महाराष्ट्र में भागवत् संप्रदाय के वे संस्थापक माने जाते हैं। संत तुकाराम की शिष्या बाहिनी बाई तो उन्हें भक्ति के राजमन्दिर का संस्थापक एवं निर्माता मानती थीं। अन्य सन्तों ने उस मन्दिर के सजाने में अपना योग दिया है।

महाराष्ट्र लोकतान्त्रिक रहस्यवाद का अक्षयपात्र कहा जा सकता है। यहां पर अनेक सन्त और संन्यासी जो समाज के विभिन्न वर्गों से आते हैं, प्रमाणित कर दिया है कि भगवान के भक्तों का एक ही परिवार होता है और वे एक ही भाषा बोलते हैं। जाति और धर्म के झगड़े अज्ञान के कारण उत्पन्न होते हैं।

इस प्रकार महाराष्ट्र में ब्राह्मण कुल में उत्पन्न एकनाथ और समर्थ रामदास की तरह ही गोरा कुम्भार, चोखपेला अछूत, सेना नाई, नरहरि सुनार, तुकाराम व्यापारी, सावन्त माली, जनाबाई नौकरानी कान्होपात्र नाचने वाली लड़की आदि सभी ने समान सम्मान प्राप्त किया था।

विभिन्न वर्गों से आने वाले जिन सन्तों ने भक्ति आन्दोलन को सबल बनाया, उनमें दो प्रमुख हैं, जिनकी अभिव्यक्ति वारकरी, यात्रा के रूप में हुई। एक सन्त ज्ञानेश्वर के समाधिस्थल आलंदी और दूसरी सन्त तुकाराम के जन्मस्थल देहू से प्रारंभ हुई। दोनों का समागम भक्ति स्तंभ के रूप में पंढरपुर में हुआ। प्रतिवर्ष जेष्ठ मास के अष्टमी के दिन सन्त ज्ञानेश्वर की पादुका समारोह के साथ पालकी में इन्द्रयानी नदी के तट पर बसे प्रशान्त गांव आलन्दी से पंढरपुर तक लाखों वारकरियों द्वारा विट्ठल का नाम

जपते हुए, अभंग गाते हुए, पैदल ले जायी जाती है। इस वर्ष १७ जून को मुझे पुणे में पादुका के स्वागत का सौभाग्य प्राप्त हुआ था।

इय महान घटना से भारत की सांस्कृतिक एकता पुनः पुष्ट हो जाती है, साथ ही यह भी प्रमाणित हो जाता है कि हमारी लोकतांत्रिक भावना जाति, वर्ग, स्थान और धर्म की दीवारों को तोड़ती हुई आगे निकल जाती है।

**आपका**
**सी. सुब्रमण्यम**

□

## कर्मयोग की शिक्षा

रामशास्त्री पेशवा माधवराव के मुख्य न्यायाधीश थे। उन्होंने काशी में न्यायशास्त्र की शिक्षा पायी थी। वे निष्पक्ष और एक स्पष्टवादी वक्ता थे।। पूना में रहकर वे न्याय व्यवस्था देखा करते थे।

पेशवा का राजदरबार धीरे-धीरे भ्रष्टाचार और अन्याय का दरबार बन गया था। पेशवा माधवराव अपने अधिकारियों की कठ्पुतली बन चुके थे। वे निष्क्रिय होकर राजमहल में पड़े रहते थे और योगाभ्यास करते थे। प्रशासन में उनका मन नहीं लगता था।

राज्य की बिगड़ती हुई न्याय व्यवस्था को देखकर रामशास्त्री क्षुब्ध थे। एक दिन वे पेशवा के पास पहुंचे और बोले, 'राजन, मेरा त्याग पत्र स्वीकार कर लें।'

रामशास्त्री को देखते ही पेशवा माधवराव घबड़ा गये और अपने को संभालते हुए बोले – 'मेरी गलती बताइये। आप क्यों त्यागपत्र दे रहे हैं?'

'जिस राज्य का राजा निष्क्रिय हो और उसका राजदरबार नौकरशाहियों का अड्डा बन चुका हो, वहां जनता को न्याय कैसे मिल सकता है?' रामशास्त्री ने उग्र होकर कहा।

'रामशास्त्री, आप न्याय के देवता हैं। मैं आपके निर्देश का पालन करूंगा। मैं भवानी की शपथ लेता हूं आज से मैं जनसेवा में जुट जाऊंगा। कृपया आप त्याग पत्र न दें।' रुंधे स्वरों में पेशवा बोले।

'राजन, जनसेवा ही कर्मयोग है। आप राजमहल में भी रहकर जनकल्याण का विचार कर सकते हैं। यही आपका योगाभ्यास है।'

पेशवा सुनते ही रामशास्त्री के आगे नतमस्तक हो गये और कहने लगे – 'आज से मैं राजा नहीं, कर्मयोगी हूं।'

**–बनवारीलाल ऊमर वैश्य**

# बूंद-बूंद रागिनी

लिख गया मौसम
हरे शब्द शाखों पर ।

दूर पास
आसपास
पावस रंग छा रहे
महुआ
झरबेरी
लहरा कर गा रहे

फूलों के बिब झुके
तितली की पांखों पर ।

तन-मन
श्रृंगारित
गली-गली कामिनी
मधुछंदा
स्वर्णपरी
बूंद-बूंद रागिनी

स्वप्न तिरे मनमौजी
नीलमणी आंखों पर ।

क्या खोया
पाया क्या
बरगद मन जोड़ रहा

फटे पृष्ठ
पतझर के
नियति मान छोड़ रहा

स्मृतियां खोज रहा
हारिल मन राहों पर ।

# होती रही बरसात ...

पहाड़ों की
दिल्लगी अच्छी रही
रातभर होती रही बरसात ।

नृत्य ऐसा घटाओं ने
किया नभ के प्रांगण में
शिथिल वेणी
खुल गये भुजबंद
नयन रतनारे हुए
अलमस्त मेघों के
रच गये चुपचाप
कितने प्रणय के अनुबंध

मिलन ऐसा हुआ
अंबर से धरा का
मिट गये बंधन सभी अनुपात ।

इन्द्रधनु हो उठीं
मोरों की खुली पांखें
नयन मोहक मयूरी के
अधखुले से रह गये
जंगलों की झिर्रियों से
बांसुरी लहकी
हंस पड़ा सागर हथेली खुल गई
शंख सीपी रत्न ढेरों बह गये

झील ने खोला जरा सा
पुलक अवगुण्ठन
और भी मधुरस हुए जलजात ।

**□ सावित्री परमार**
— पालीवाल भवन, खजाने वालों का रास्ता,
चांदपोल, जयपुर - ३०२ ००१

□

# जब हम अमरकंटक पहुंचे

❑ डॉ. रामनारायण सिंह 'मधुर'

शासकीय सेवा का क्या भरोसा, आज यहां, कल वहां। सोचा, सिवनी में रहते अमरकंटक देख लूं। पुराणों, शास्त्रों एवं पर्यटकों ने बड़ा गुणगान किया है अमरकंटक का। वाकई महत्वपूर्ण जगह होगी। ले-देकर तैयार किया मेलाराम बरकड़े को साथ चलने के लिए। सिवनी से अमरकंटक के लिए ६ बजे सुबह बस छूटती है। बरकड़े ५ बजे ही आ धमका मेरे यहां। झुंझलाइट हुई, पर प्रारंभ में ही बकझक करना उचित नहीं समझा, बिदक गया तो? बस स्टैंड पहुचने पर चालक-परिचालक सहित बस गायब मिली। पता चला, सुधर रही है, माथा ठनका, रास्ते में दगा देगी क्या? दादा की कविता याद आयी-

**राज्य परिवहन की बस का**
**क्या भरोसा**
**बस स्टैंड से चले, नाके पर बिगड़ जाय**
**दमड़ी तो दमड़ी चमड़ी तक उधड़ जाय।**

खटर-पटर करती बस चली ८ बजे। मंडला पहुंची एक बजे। भूख लग आयी थी, सामने के भोजनालय में घुस गये। सामान बस में, हम होटल में। एक आंख बस पर, एक आंख भोजन पर। खा ही रहे थे कि बस भर्र-भर्र धुआं उगलने लगी। मैनें कहा 'बरकड़े, बस छूट रही है, दौड़ो।' हम आगे-आगे और होटलवाला पीछे-पीछे 'बाबूजी, खाने के पैसे!' बरकड़े था फुर्तीला, दौड़कर बस पकड़ ली। गिरते-पड़ते भी बस में दाखिल हो ही गया और दस का एक नोट होटल वाले की ओर उछाल दिया। 'बाबूजी, पांच रुपये और' मैं चिल्लाया 'लोटती बार।' बस गति पकड़ चुकी थी।

बस जब डिंडोरी से रवाना हुई तो सांझ ढल चुकी थी। अमरकंटक पहुंचते-पहुंचते रात के १० बज गये। बस से नीचे उतरते ही ऐसी फरफरी उठी कि मसूरी का मजा आ गया। विंध्य-क्षेत्र में हिमालय की कल्पना हो आयी। पता तो था कि अमरकंटक में काफी ठंड पड़ती है, पर इतनी ठंड पड़ती है, इसकी कल्पना नहीं थी। गरम कपड़े पहने, कम्बल ओढा और बरकड़े से कहा - 'कल्याण आश्रम चलो।' सुन रखा था कि वहां यात्रियों को रुकने की सुविधा मिल जाती है। दो कि.मी. चल कर कल्याण आश्रम पहुंचे। एक साधु मिले, बोले - 'ना,

ना, यहां साधु-संत निवास करते हैं, आप लोगों को कैसे ठहराया जा सकता है?' मैंने कहा 'बाबा, लोगों ने बताया कि यहां किराये पर कमरे उपलब्ध हो जाते हैं।' 'अच्छा रुकिये, महंतजी से बात करता हूं।

रात बढ़ रही थी, साथ-साथ ठंड भी बढ़ रही थी। थके-मांदे खड़े-खड़े हम उस आश्रम की छवि निहार रहे थे। मंदिर में पूजा हो रही थी, एक साधु के श्री मुख से बचनामृत झर रहा था, कई साधु थाली ले-लेकर प्रसाद पाने भोजनालय की ओर जा रहे थे। तीस चालीस क्षण उपरांत महंतजी के एक पट्ट शिष्य आकर हमसे पूछ-ताछ करने लगे- 'कहां से आये हैं? कोई परिचय पत्र लाये हैं? सामान भी आपके पास कम है, हमारे पास बिस्तर और रजाई नहीं है। महंतजी ने कहा है कि यहां साधुओं के अलावा और कोई भी नहीं रुक सकता। आप योगाश्रम चले जायें, बर्फानी योगाश्रम, वहां अवश्य जगह मिल जायेगी।' इतना कहकर वे जहां से आये थे, वहां समाहित हो गये।

'बरकड़े, हमें ये लोग चोर-उचक्के समझ रहे है। शायद योगाश्रम में जगह मिल जाये?' तीन कि.मी. पैदल चल कर बर्फानी योगाश्रम पहुंचे। यह आश्रम नर्मदा-कुंड के पीछे है। लोहे के सींकचों वाला बड़ा फाटक बंद था। दस्तक देने पर कोपीन धारी नंग-धड़ंग एक योगी आये। मकसद समझते ही नाराज होकर बोले, 'कैसे-कैसे लोग चले आते हैं! यहां केवल योगी रहते हैं।' और फिर उन्होंने इतने जोर से दरवाजा बंद किया कि हमारे दिलों की धड़कन बंद होते-होते बची।

शासकीय धर्मशाला निर्माणावस्था में थी। एक धर्मशाला थी, पर पानी नहीं, बिस्तर नहीं। पूछते-पाछते, पांच कि.मी. चलने के बाद हम पर्यटकों के लिए बने 'टूरिस्ट काटेज' पहुंचे। प्रयत्न करने पर दफ्तर के बाबू साहब मिले और उन्होंने तीस रूपये प्रति दिन के किराये के हिसाब से एक कक्ष हमें सौंपा। दो पलंग, जिन पर आरामदेह गद्दे बिछे थे। एक कम्बल में अपना कम्बल सटाकर हम सो गये और दिन चढ़े तक सोते रहे। सुबह गरम जल से नहा-धोकर जब हम बाहर निकले तो सामने की वन-श्री का दृश्य देखकर अभिभूत रह गये। एक दूसरे से अटे-सटे झाड़ बड़े मनोरम लग रहे थे तथा सुहावनी-सुनहली धूप में चमक रहे थे।

उत्तर-दक्षिण दिशाओं में फैली विध्य-सतपुड़ा पर्वत की सुरम्य श्रृंगमालाएं यहां अपने आगोश में प्राचीन भारतीय संस्कृति एवं कला को समेटे हुए हैं। इस विशेष क्षेत्र को 'मैंकल पर्वत' कहते हैं। मैकल पर्वत का पठार चतुर्दिक सघन वन-कानन से घिरा हुआ है। समुद्र-स्तह से यह ३५०० फुट ऊंचा है। इसकी चारों दिशाओं में चार नदियां पूर्व में शोण, पश्चिम में नर्मदा, दक्षिण में महानदी और

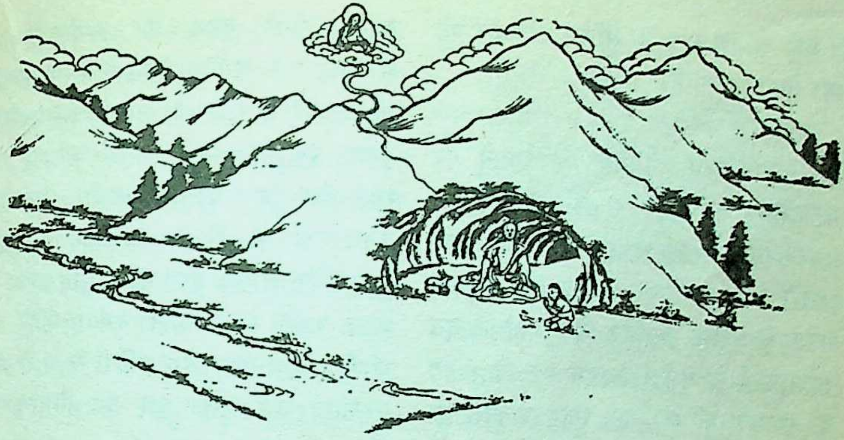

उत्तर में ज्वालावती (जुहला), प्रवाहमान हैं। शैल चट्टनों से झर-झर झरते निर्झर, तरु-गुल्म, लता-पुष्प, 'मस्ती में संगीत सुनाते पक्षी, गिरि-गुहा में साधना रत साधक, सदा बहार वन-श्री देख पर्यटक विस्मय विमुग्ध हो जाते हैं।

रामायणकाल में मैकल का नाम 'ऋक्ष' पर्वत था। प्रहस्त आदि मंत्रियों के साथ पुष्पक विमान पर आरुढ लंकापति रावण ने यहां की प्राकृतिक श्री-सुषमा का अवलोकन किया था- 'वर्षा ऋतु बीत चुकी थी। शरद के शिशिरावात से मैकल-पठार रजत-रंजित हिमगिरि के समान चमक रहा था। चार दिशाओं में चार जलप्रपात छलछला रहे थे। आकाश निर्मल था, कहीं कहीं बादलों के टुकड़े मंद वायु के सहारे दौड़ते उत्तर शैलशिखर पर टकरा रहे थे।' (वाल्मीकि रामायण, 3 39-9)

महाभारत में राजा युधिष्ठिर अपने भाइयों के साथ यहां आये थे और महामुनि मार्कण्डेय के आश्रम में पहुंचकर उनकी विधिवत पूजा की थी। मुनि-आश्रम से थोड़ी दूर दलदली क्षेत्र में एक विशाल वंश गुल्म था, जिसके मूल से नर्मदा की पतली-सी धारा निकलती थी। महाभारत के लगभग अढ़ाई हजार वर्ष बीत जाने पर आदिगुरु शंकराचार्य का इस धरा-धाम पर अवतार हुआ। गुरु-खोज में परिभ्रमण करते हुए शंकराचार्यजी मैकल पर्वत पर वहां पहुंचे, जहां स्वामी गोविंदपाद साधना-रत थे। कहते हैं उस समय नर्मदा में बाढ़ आ गयी और आचार्य ने उस जल-प्रवाह को अपने कमंडल में रख लिया, 'नर्मदा अष्टक' की रचना की तथा गुरु गोविंदपाद से संन्यास धर्म की दीक्षा ली। नर्मदा के मूल स्रोत का पता लगाकर आचार्य शंकर ने एक शिवलिंग की स्थापना की, जो आज 'पानालेश्वर महादेव' के नाम से विख्यात

है। यहां श्रावण मास के अंतिम सोमवार को बड़ा मेला लगता है।

आदि गुरु शंकराचार्य के उपरांत लगभग एक हजार पांच सौ वर्ष बीत जाने पर कलचुरी राजवंश के राजाओं का शासन अमरकंटक पर हुआ। इस वंश के परम प्रतापी राजा कर्णदेव, शंकराचार्य के परम भक्त थे। राजा कर्णदेव ने, जहां आद्य शंकराचार्य ने नर्मदा-उद्गम पर शिवलिंग की स्थापना की थी, वहां सुंदर आकृति का कुण्ड बनवाया, जो सूर्यकुंड के नाम से विख्यात हुआ।

कलचुरियों के बाद अमरकंटक पर रतनपुर के भोसलों का शासन प्रारंभ हुआ। इस वंश के राजा नाना साहेब रावल ने गोस्वामियों की खिलाफत से चिढ़कर द्वितीय नर्मदा-कुण्ड का निर्माण कराया तथा नर्मदेश्वर मंदिर की स्थापना की। सौ वर्ष पश्चात रीवां और बांधवगढ़ के बघेलों के ऊपर विजय प्राप्त कर अमरकंटक को अपने राज्य में शामिल कर लिया। महाराज रघुराज सिंह बघेल के शासनकाल में अमरकंटक की बहुत उन्नति हुई। महाराज ने नर्मदा-कुण्ड तथा अनेक प्राचीन मंदिरों का जीर्णोद्धार कराया। भजन-पूजन के लिए बाहर से पण्डेपुजारियों को लाकर बसाया। रघुराज सिंह के स्वर्गवासी हो जाने पर रीवां की गद्दी वेंकटरमण को मिली। वे प्रतिवर्ष शिवरात्रि के अवसर पर अमरकंटक आते और नर्मदाकुण्ड में स्नान कर दान-पुण्य करते। रीवां नरेश की उपस्थिति
अमरकंटक के आदिवासियों में अपूर्व उल्
छा जाता। वे राजा के सामने करमा-शै
नृत्य प्रस्तुत करते और उपहार
मांस-फल-पुष्प प्रस्तुत करते। महारा
वेंकटरमण के निधन के बाद महारा
गुलाबसिंह शासक हुए। गुलाबसिंह नर्मदा
परम भक्त थे। उन्होंने नर्मदा मंदिर
जीर्णोद्धार कराया, देव मंदिरों के चारों
परकोटा एवं मुख्य द्वार का निर्माण
कराया।

1947 में भारत के स्वतंत्र हो जाने
पश्चात 'अमरकंटक नगर-विकास बोर्
की स्थापना हुई। अब अमरकंटक के विका
की सारी योजना उक्त बोर्ड के विधान
अंतर्गत है।

इतिहास-गाथा सुनते-सुनाते हम
नर्मदा-मंदिर पहुंच गये, पता ही नहीं चल
नर्मदा देवी के मंदिर धवल-निर्मल
सुन्दर लग रहे थे। ये मंदिर नर्मदा-कुण्ड
समीप अवस्थित हैं। नर्मदा-मंदिर के साम
अमर कंठेश्वर महादेव बिराजमान हैं। भै
पत्थर की नर्मदा देवी की मूर्ति अत्
प्राचीन एवं भव्य है। भैरवी-चक्र, हनुम
तथा कार्तिकेय स्वामी की मूर्तियां
दर्शनीय हैं। नर्मदा-कुण्ड के चारों
प्राचीन मंदिर हैं, जिनमें विष्णु मंदि
भवानी-शंकर, घण्टेश्वर, त्रिपुर सुंद
दुर्गा माता, सिद्धेश्वर महादेव, गौरीशंक
राम-मंदिर, मुरली मनोहर, एकादश

अन्नपूर्णा मंदिर उल्लेखनीय है। नर्मदा माता के हाथी भी देखने योग्य हैं। भोंसला-राजा रतनपुर नाना साहब रावल ने नर्मदा कुण्ड का निर्माण कराया था। मंदिरों का निर्माण रीवां-नरेश रघुराज सिंह ने और जीर्णोद्धार महाराज गुलाब सिंह ने कराया था।

नर्मदा-कुण्ड में पाइप लगे हुए हैं। सड़क के नीचे से इन पाइपों में से होकर नर्मदा जल उत्सर्गित होता हैं। पंडे कहते हैं कि कुण्ड में नर्मदा विलुप्त हो गयी है और बहुत दूर जाकर ही प्रकट हुई है।

नर्मदा-मंदिर के दक्षिण में सूर्यकुंड है। यह कुंड अत्यंत प्राचीन एवं जीर्ण है। जनश्रुति है कि यही कुंड नर्मदा का उद्गम. स्थल था। आदि-गुरु शंकराचार्य ने यहां नर्मदा-मूल की स्थापना की थी और पातालेश्वर महादेव 'की थी भी। सूर्यकुंड के संस्थापक थे कलचुरि नरेश कर्णदेव। आज से ५०० वर्ष पूर्व सूर्य कुंड में ही तीर्थयात्री स्नान किया करते थे।

नर्मदा-मंदिर के परकोटे के बाहर ऊंचे स्थान पर बने कुछ विशाल एवं प्राचीन मंदिर अपनी भव्यता के कारण हमें बुला रहे थे। पहुंचने पर पता चला कि कर्ण मंदिर है। वहां कलकत्ता के कुछ भद्र जन ताबड़तोड़ फोटो खींचने में लगे थे। वस्तुतः तब मुझे अपना 'केमरा' घर भूल आने का दुख हुआ। मेरे अनुरोध को स्वीकार कर उन्होंने कुछ निर्देशित चित्र भी उतारे। श्री फलगुनी मंडल से तो दोस्ती ही हो गयी। उन्होंने कर्ण मंदिर की ओर संकेत करते हुए कहा, 'देखिये, कितना विशाल और भव्य है?'

सचमुच अमरकंटक का सर्वाधिक प्राचीन मंदिर कर्ण-मंदिर ही है। १०वीं शताब्दी में इस मंदिर का निर्माण रतनपुर के महाप्रतापी राजा कर्णदेव कलचुरि ने कराया था। कहते है, ग्रीष्मकाल में आखेट करते-करते 'महाराज कर्णदेव को बहुत प्यास लगी है, और उनकी प्यास बुझी नर्मदा की शीतल जल-धारा से। तृप्त महाराज को यहां का वन-वैभव इतना पसंद आया कि सूर्यकुंड के साथ ही उन्होंने कर्णेश्वर महादेव की स्थापना भी की, जिसे अब कर्ण-मंदिर कहते हैं। इस मंदिर की स्थापत्य कला विलक्षण है। मंदिर का समुन्नत शिखर बाहर की ओर उभार लिए उठाया गया है। शिखर-निर्माण की यह दुर्लभ एवं आकर्षक शैली है। दीवारों का अलंकरण दर्शकों को मुग्ध कर देता है।

समीप ही भगवान विष्णु का प्राचीन मंदिर है। एक ही काले पत्थर में अंकित भगवान विष्णु, लक्ष्मी तथा भगवान के दस अवतारों की प्रतिमाएं मूर्तिकला की अनुपम निधि हैं। विष्णु-मंदिर के उत्तर में महादेव

का प्राचीन मंदिर है, जिसकी स्थापत्य कला एलोरा गुफा से मिलती जुलती है।

यहीं है वह रंगमहल, जिसमें कभी महर्षि भृगुऋषि ने विष्णु और लक्ष्मी का व्याह रचाया था। जो भी हो, अब यहां महंत बलराजपुरी रहते है। उन्होंने दुख प्रकट करते हुए करुणा विगलित वाणी में कहा कि सरकार और पूंजीपति मिलकर 'अमरकंटक बाक्साइट' आदि कारखानों का निर्माण करके अमरकंटक के प्राकृतिक वैभव को नष्ट करने पर तुले हैं। मैने श्री राजीव गांधी, मध्यप्रदेश के मुख्य मंत्री आदि नेताओं एवं मंत्रियों को लिखा पर कोई प्रतिफल नहीं निकला। आप कुछ कीजिये।'

मैंने कहा- 'दुख तो मुझे भी है। पर एक अदना प्रोफेसर मैं, कर ही क्या सकता हूँ? फिर भी पत्र-पत्रिकाओं के माध्यम से आपकी बात पहुंचाऊंगा।' उनकी आशावादिता एवं अपनी असमर्थता पर मुझे गहरी ठेस लगी।

नर्मदा-कुंड से पूर्व की ओर तीन-चार कि.मी. चलने के उपरांत भाई की बगिया है। वृक्ष एवं झाड़ियों से आच्छादित दलदलीय प्रदेश में से पतली-सी पानी की धारा निकलती है। यहां गुलबकावली का पौधा पाया जाता है, जो उर्दू-साहित्य में बहुचर्चित है। नेत्र-औषधि के लिए इसके पुष्प वरदान स्वरूप हैं। यहां से दक्षिण की ओर बढ़ने पर विशाल गिरि गुहाएं हैं, जिनमें व्याघ्र और मणिहारे सांप निवास करते हैं। ज्योतिष्मती नाम की महौषधि भी यहां उपलब्ध है, जिसका तांत्रिक विधि से उपयोग करने पर शरीर कांतिमान हो जाता है।

नर्मदा-मंदिर से तीन कि.मी. पूर्व-दक्षिण के कोने पर सोनभद्र नदी का उद्गम स्थल है। इसे सोनमूढ़ा कहते हैं। सोन नदी की क्षीण जलधारा हजारों फुट नीचे गिरकर प्रपात बनाती है। नर्मदा-कुंड से २०० गज पूर्व की ओर मार्कण्डेय मुनि का आश्रम है। यहां एक सरोवर है, जिसके निर्मल जल में कमल पुष्प खिले रहते हैं।

संध्या की मटमैली काली चादर फैलने लगी थी और हम थक भी गये थे। अतः शेष स्थानों को देखने का निर्णय कल पर छोड़कर 'टूरिस्ट काटेज' में पहुंचकर विश्राम करने लगे। दूसरे दिन हम सर्वप्रथम भृगु कमण्डल देखने गये। यह स्थान नर्मदा-कुंड से दक्षिण की ओर ३ कि.मी. की दूरी पर स्थित है। एक विशाल शिला खण्ड में छोड़ा-सा छेद है, जिसमें बारह मास जल सुरक्षित रहता है। पौराणिक आख्यान है कि यहां महर्षि भृगु ने कठिन तप कर भगवान शंकर को प्रसन्न किया था।

अमरकण्टक से ५ कि.मी. दूर दक्षिण-पश्चिम कोण पर गहन वन-झाड़ियों के बीच रुद्र गंगा नामक प्रपात है, जिससे महानदी की धारा प्रवाहित होती है। शम्भु-धारा जल प्रपात देखते-देखते दोपहर

अगले

हो गई। भोजन और विश्राम करके हम कपिलधारा की ओर बढ़ चले।

अपने उद्गम स्थल से ८ कि.मी. अमरकंटक के पठार पर बहती हुई नर्मदा जहां हजारों फुट नीचे गिरकर एक सुंदर जल-प्रपात का निर्माण करती है, उसे कपिलधारा कहते हैं। झरने की आवाज दूर-दूर तक घाटियों में गूंजती रहती है। यात्रियों की सुविधा के लिए वहां नर्मदा पर एक छोटा सा पुल बना दिया गया है। यह पुल जहां समाप्त होता है, वहां कपिलेश्वर महादेव का मंदिर है। कहते हैं महर्षि कपिल ने यहां तपस्या की थी। मंदिर के बाद सीढ़ियों के सहारे धीरे-धीरे गहरी घाटी में उतरने पर ऊंचाई से गिरती नर्मदा की जल धारा दर्शक को विस्मय विमुग्ध कर देती है। प्रकृति के सौंदर्य का ऐसा निर्मल अभिषेक, आश्चर्य। उस गहरी वन-शंकुल घाटी में २०० गज आगे बढ़ने पर नर्मदा-धारा इतनी स्वच्छ-श्वेत दिखती है कि दूध-सी लगती है। इसलिए इसे दूध-धारा की संज्ञा दी गयी है। साधु-संन्यासियों की कुटियों में कोई नहीं मिला, दरवाजों पर ताले अवश्य मिले। हम स्तब्ध होकर घंटों प्रकृति के उस दिव्य उपादान का मुग्ध-पान कर तंद्रिल होते रहे। चौंके तब, जब मंदिर के घंट घनघनाने लगे। पश्चिमी क्षितिज पर सूर्यदेव बिंदा ले रहे थे और पीछे से रात अपनी पायल बजाती हुई बढ़ती चली आ रही थी। एक-एक कर संभल-संभलकर कदम रखते हम ऊपर पहुंचे। दम फूल रहा था और ठंड में भी श्रम-बूंदें माथे पर चुहचुहा आयी थीं। पार्श्ववर्ती छोटे-से होटल में चाय पीकर कुछ स्वस्थ होने के पश्चात् हम अमरकंटक की ओर बढ़े।

रात गहरा गयी थी। सड़क के दोनों तरफ जंगल भांय-भांय कर रहे थे। गहरी खामोशी, एक भी आदमी नहीं।

तय था कि एक दिन का किराया साहब हजम कर गये थे! अमरकंटक जैसी पवित्र जगह में भी शासकीय कर्मचारी भ्रष्टाचार करने में नहीं चूकते। मैंने बरकड़े से पूछा- 'अमरकंटक का मतलब समझे?'

उसने कहा - 'कूर्म पुराण' में लिखा है--

**कलिंग देशपश्चादे पर्वतेभद्रकंटके।**
**पुण्या रेवा त्रिलोकेषु रमणीया पदे-पदे।।**
(कू.उ.४.८)

कलिंग देश के पश्चिमोत्तर कोने पर अमरकंटक नामक पर्वत है। पुण्य सलिला रेवा का प्रवाह और कदम-कदम पर प्राकृतिक सौंदर्य, इसे तीनों लोकों में दुर्लभ बना देता है। और 'अमर' माने देवता, अकंट माने शरीर। अर्थात देवता के समान शोभनीय शरीर (पर्वताकार) जिसका हो, उसे अमरकंटक कहते हैं।'

मैंने कहा- 'नहीं, यह नहीं। आधुनिके संदर्भ में कहेंगे, जहां लोग कंटक (भ्रष्टाचार) को अमर (सतत) करने में लगे हों, उसे अमरकंटक कहते हैं।' बरकड़े हंसने लगा। **—बारापत्थर, सिवनी-४८०६६१**

# भारत छोड़ो - आन्दोलन

☐ **अरविन्द मिश्र**

करो या मरो । या तो हम भारत को आजाद करेंगे या आजादी की कोशिश में प्राण दे देंगे । हम अपनी आंखों से अपने देश का सदा गुलाम और परतंत्र बना रहना नहीं देखेंगे । प्रत्येक सच्चा कांग्रेसी - चाहे वह पुरुष हो या स्त्री - इस दृढ़ निश्चय से संघर्ष में शामिल होगा कि वह देश को बंधन और दासता में बने रहने को देखने के लिए जिंदा नहीं रहेगा । ऐसी आपकी प्रतिज्ञा होनी चाहिये । जेल का खयाल् मन में न लाइये । अगर सरकार मुझे कैद न करे, तो मैं आपको जेल भरने का कष्ट नहीं दूंगा । ऐसे समय में - जबकि सरकार खुद मुसीबत में फंसी है - मैं उस पर भी भारी संख्या में कैदियों के प्रबंध का बोझ नहीं डालूंगा । अब से हर पुरुष और हर स्त्री को अपने जीवन का हर क्षण यह जानते हुए बिताना है कि वे स्वतंत्रता की खातिर जी रहे हैं और अगर जरूरत हुई, तो वे उस लक्ष्य की प्राप्ति् के लिए प्राण दे देंगे । ईश्वर को अपने अंत:करण को साक्षी मानकर यह प्रण कीजिये कि जब तक आजादी नहीं मिलती, तब तक हम दम नहीं लेंगे और आजादी लेने के लिए अपनी जान देने को भी तैयार रहेंगे । जो जान देगा, उसे जीवन मिलेगा और जो जान बचायेगा, वह जीवन से वंचित हो जायेगा । स्वतंत्रता कायर या डरपोक को नहीं मिलती ।

कोई भी काम गुप्त रूप से नहीं करना चाहिये । यह एक खुली बगावत है । इस संघर्ष में गुप्त रूप से काम करना पाप है । स्वतंत्र आदमी किसी गुप्त आन्दोलन में शामिल नहीं होता । वर्तमान संघर्ष में हमें खुल्लमखुल्ला कार्यवाही करनी है और अपनी छाती पर गोलियां खानी हैं और भागना नहीं है । मेरे भीतर की वह आवाज जो मुझे कभी धोका नहीं देती - अब मुझसे कह रही है तुम्हें सारे संसार के विरुद्ध खड़ा होना है, भले ही तुम्हारा साथ कोई न दे और तुम अकेले ही रह जाओ । तुम्हें संसार के सामने खड़ा होना है, भले ही संसार तुम्हें खूनी आंखों से देखे । डरो नहीं । उस छोटी-सी चीज पर विश्वास करो, जो तुम्हारे हृदय में बसती है । वह कहती है कि मित्रों को, पत्नी को और सबको त्याग दो । लेकिन जिसके लिए तुम जीते हो और जिसके लिए तुम्हें मरना है, वह सिद्ध करके दिखा दो । यदि सारा संसार मेरा त्याग कर देता है, तब भी मैं कहूंगा कि आप लोग गलत हैं । भारत अहिंसा द्वारा अनिच्छुक हाथों से अपनी स्वाधीनता छीनकर रहेगा । यदि मेरे

आँखें बंद हो जाती हैं और भारत को स्वाधीनता नहीं मिलती, तब भी अहिंसा का अंत नहीं होगा।

मित्र-राष्ट्रों के सामने जो कहते हैं कि उन्हें भारत की जरूरत है, आज यह सुअवसर है कि वे भारत को स्वतंत्र घोषित कर दें और इस तरह अपनी सदाशयता सिद्ध करें। यदि वे ऐसा नहीं करते, तो वे अपने जीवन में मिले इस सुअवसर को खो देंगे और इतिहास के पृष्ठों पर यह बात सदा के लिए अंकित हो जायेगी कि उन्होंने समय पर भारत के प्रति अपने दायित्व का पालन नहीं किया और लड़ाई हार गये। मैं समस्त संसार की शुभ कामनाएं चाहता हूं, जिससे कि उनके साथ अपने प्रयास में मैं सफलता हासिल कर सकूं। स्वतंत्रता को यदि आना है, तो आज ही आना चाहिये। यदि आज आप लोग - जिनके पास मदद करने की ताकत है - अपनी उस ताकत का प्रयोग नहीं करते, तो उस स्वतंत्रता का कोई आनंद नहीं रह जायेगा। यदि आप उस ताकत का प्रयोग कर सकें, तो आज जो असंभव लगता है - वह कल स्वतंत्रता की अरुणिमा में संभव हो जायेगा। मानवता के इस विशाल सागर को संसार की मुक्ति के कार्य की ओर तब तक कैसे प्रेरित किया जा सकता है, जब तक कि भारत को स्वयं स्वतंत्रता की अनुमति नहीं हो जाती? आज उसमें जीवन का कोई चिह्न शेष नहीं है। उसके जीवन के रस को निचोड़ लिया गया है। यदि उसकी आँखों की चमक को वापस लाना है, तो स्वतंत्रता को कल नहीं - बल्कि आज ही आना होगा। इसलिए मैंने कांग्रेस को यह शपथ दिलाई है और कांग्रेस ने यह शपथ ली है कि वह करेगी या मरेगी।

— मो. क. गांधी

९ अगस्त, १९४२ को सबेरे मैं 'सर्चलाइट' में अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी, बम्बई की कार्रवाई पढ़ रहा था कि डिस्ट्रिक्ट मजिस्ट्रेट मिस्टर आर्चर पहुंचे। मैं चारपाई पर था। उन्होंने मुझे देखकर मेरे स्वास्थ्य के संबंध में पूछ-तांछ की और यह पूछा कि कार्यक्रम क्या है। मैं तो समझ गया था कि इनके आने का कारण क्या था। क्योंकि रेडियो में गांधीजी तथा वर्किंग कमेटी के सदस्यों की गिरफ्तारी की खबर संक्षेप में आ चुकी थी। मेरी बीमारी देखकर उन्होंने गवर्नमेंट से पूछा कि ऐसी अवस्था में क्या किया जाय। वहाँ से हुक्म आया कि सिविल सर्जन से दिखलाओ और पूछो कि वहां से दूर ले जाने योग्य हैं या नहीं। सिविल सर्जन को मिस्टर आर्चर जाकर ले आये।

सिविल सर्जन की राय हुई कि मैं सफर के लायक नहीं हूं। इसलिए मुझे ११-१२ बजे दिन के करीब बाँकीपुर-जेल में ही ले गये। दूसरे दिन तो और लोग भी आने लगे। पटने में जोरों से पदर्शन होने लगा। बड़े-बड़े जुलूस निकलने लगे। कचहरियां बंद हो गयी और एक बहुत बड़ा जुलूस गवर्नमेंट हाउस के दरवाजे तक नारा लगाता हुआ जा पहुंचा। रात हो गयी थी। इसलिए और कुछ उस दिन नहीं हुआ। पर खबर मशहूर

थी कि दूसरे दिन सेक्रेटेरियट पर झंडा चढ़ाने के लिए जुलूस जायेगा।

जेल में खबर मिलने का साधन एक ही था और वह था - गिरफ्तार होकर नये लोगों का आना। अखबार अभी बंद नहीं थे। पर उनसे थोड़ी खबर मिलती। सेक्रेटिरियट पर जुलूस गया। गोली चली। ८-९ युवक शहीद हो गये। बहुतेरे घायल हुए, जिनको लोगों ने अस्पताल पहुंचाया। उस जुलूस में से ४०-५० लड़के गिरफ्तार करके बांकीपुर जेल में उसी रात को लाये गये। उनसे गोली- कांड की बातें मालूम हुईं। रात भर सारे शहर में जुलूस निकलते रहे। जेल के अंदर भी जुलूसों की आवाज पहुंचती रही। उसी दिन तार और टेलीफोन तोड़ने का काम आरंभ हो गया। हमने सुना कि पटने में टेलीफोन बंद हो गया। जेल - आफिस में भी टेलीफोन का आना-जाना रुक गया। जो लड़के सेक्रेटेरियट के जुलूस से गिरफ्तार करके लाये गये थे, वे किसी तरह बाँकीपुर जेल में रात भर रखे गये। दूसरे दिन उन्हें कैंप - जेल में भेजने की तैयारी होने लगी। जब तक लड़के कैंप - जेल में नहीं भेजे गये, शहर की बड़ी जमात जेल के फाटक पर और सड़कों पर खड़ी थी। जब तीन बजे के करीब उनको ले जाने के लिए लारियाँ लाई गई, तो उनमें वे सवार कराये गये। पहली लारी आगे बढ़ी, तो जनता लारी पर टूट पड़ी, लड़कों को छुड़ा लिया और लारी में आग लगा दी। दूसरी लारियों को फिर आगे नहीं बढ़ाया। उनमें सवार लड़कों को उतारकर फिर जेल में ले आये। कुछ देर में फौज बुलाई गई। उसने रास्ता साफ किया। आगे-पीछे फौजी गाड़ियों के बीच में कैदियों की लारियाँ कैंप- जेल पहुंचाई गईं।

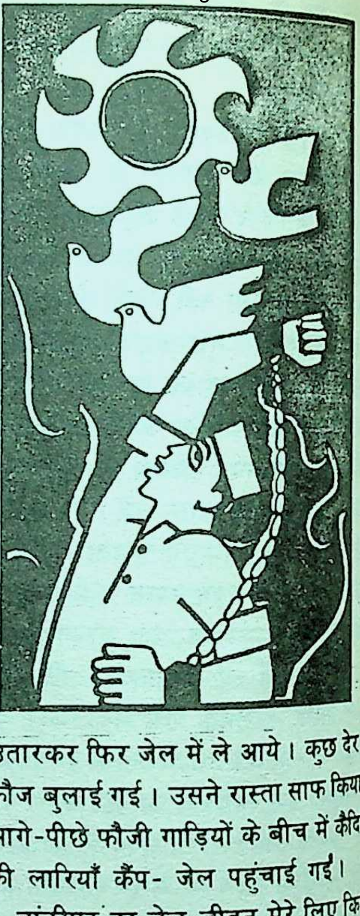

बांकीपुर का जेल-जीवन मेरे लिए किसी तरह कष्टप्रद न हुआ। घर के लोगों से बराबर मुलाकात होती रही। जेल में ९ अगस्त, १९४२ को मैं लाया गया और वहां से १५ जून, १९४५ को निकला।

**— राजेन्द्र प्रसाद**

९ अगस्त, १९४२ को तड़के ही सारे हिंदुस्तान में बहुत-सी गिरफ्तारियां हुईं। सारे प्रमुख नेता अचानक ही अलग हटा दिए

गये थे। किसी की समझ में न आता था कि क्या करना चाहिये। विरोध तो होता ही और अपने-आप ही उसके प्रदर्शन हुए। इन प्रदर्शनों को कुचला गया, उन पर गोली चलाई गई, टियर-गैस इस्तेमाल कीं गई और सार्वजनिक भावना को प्रकट करनेवाले सारे तरीके रोक दिये गये। तब ये सारी दबी हुई भावनाएं फूट पडीं। शहरों और देहाती हलकों में भीड़ें इकट्ठी हुईं और फौज के साथ खुली लड़ाई हुई। उन्होंने खास तौर से उन चीजों पर - जो ब्रिटिश हुकूमत और ताकत का प्रतीक मालूम पड़ी - हमला किया। वे चीजें थीं - थाने, डाकखाने और रेल के स्टेशन। उन्होंने तार औंर टेलीफोन के तारों को काट दिया। इन निहत्थे बिना नेताओं के झुंडों ने पुलिस और फौजों का सामना किया। सरकारी बयानों के मुताबिक ५३८ मौकों पर गोलियां चलीं। साथ ही नीचे उड़ने वाले हवाई जहाजों और मशीन-गनों सें भी गोलियां चलाई गईं।

देश में गांवों और कस्बों दोनों में ही यह प्रतिक्रिया असाधारण रूप से व्यापक थी। करीब-करीब हर सूबे में और ज्यादातर हिन्दुस्तानी रियासतों में सरकारी रोक के खिलाफ भी अनगिनत प्रदर्शन हुए। हड़तालें हुईं। दुकानें और बाजार बंद हुए। सभी जगह काम-काज रोक दिया गया। इसी तरह मजदूरों ने भी काम बंद किया। वे लोग ज्यादा संगठित थे। मिलकर एक साथ काम करने का उनमें अनुशासन था। कारखानों के मजदूरों ने बहुत-सी खास-खास जगहों में अपने-आप हड़ताल का एलान किया। यह सब सरकार द्वारा कौमी नेताओं की गिरफ्तारी के विरोध में हुआ।

**— जवाहरलाल नेहरू**

स्वतंत्रता-संग्राम के इतिहास में ९ अगस्त, १९४२ का विशेष महत्व है। मुझे १९४२ का वह दिन याद है, जबकि हम बम्बई में थे। ८ अगस्त की रात को अखिल भारतीय कांग्रेस समिति ने भारत छोड़ो प्रस्ताव अपनाया। मुझे याद है कि ९ अगस्त की सुबह ४ बजे दरवाजे की घंटी बजी। नींद से भरी आंखों से जब मैं दरवाजा खोलने गई, तो देखा वहां पुलिस मेरे पिता और मेरे फूफा की गिरफ्तारी का वारंट लिए खड़ी थी। उस समय हम बम्बई में पिता जी की छोटी बहन के घर रहे थे। देश के साथ-साथ सारे शहर को इस बात से बड़ा धक्का लगा। लेकिन यह क्षणिक था। हमें काम करना था और हम तुरंत गोवालिया टैंक मैदान में झंडा फहराने के लिए गये। यह हमारे आन्दोलन के अंतिम चरण की शुरुआत थी।

हमारी आजादी का आन्दोलन अनोखा था।

वह केवल राजनीतिक नहीं था, सामाजिक और आर्थिक क्रांति भी उसमें थी।

**— इन्दिरा गांधी**

**— बी - ६०१,**
**लालबाग कम्पलेक्स,**
**लखनऊ - २२६ ००१, उ.प्र.**

□

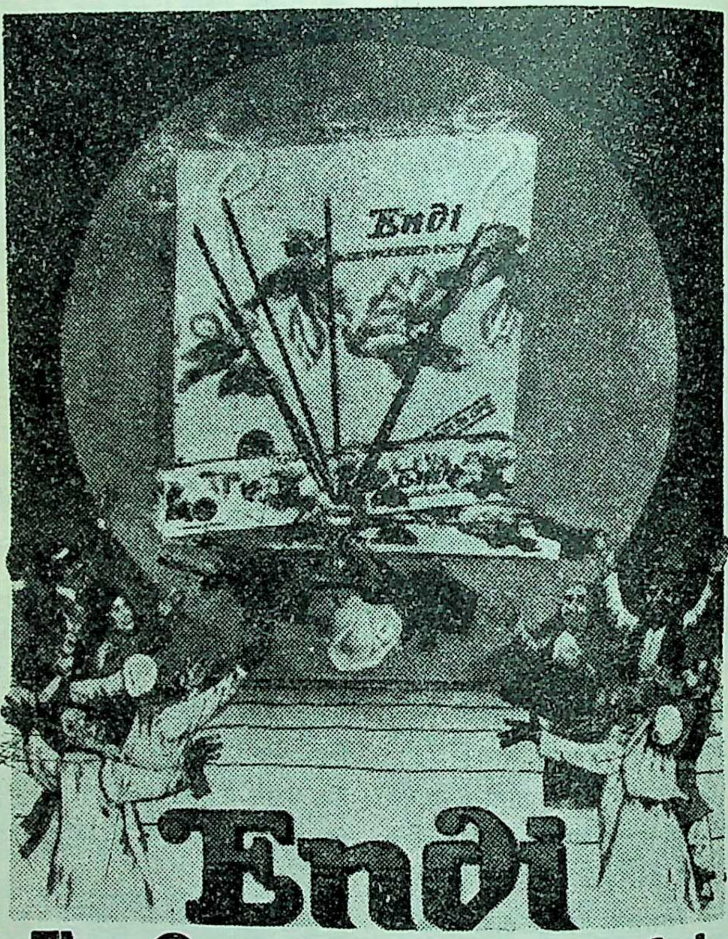

**The Great and Graceful Fragrance** SEVEN IN ONE

MYSORE SUGANDHI
DHOOP FACTORY PVT. LTD.
13, Commercial Chambers, Yusuf Meharali Rd.,
P.O. Box 3178, Bombay 400 003.

**आ नो भद्राः क्रतवो यन्तु विश्वतः**

भवन की पत्रिका 'भारती' से समन्वित

# नवनीत

मनुष्य के नवोत्थान का सूचक
जीवन, साहित्य और संस्कृति का मासिक

## प्रार्थना

**देवता– रात्रिः ।**

**रात्रिमातरुषसे नः परिदेहि,**
**उषानो अन्हे परिददातु,**
**अहस्तुभ्यं विभावरि । अथर्व १९.४५.२**

रात्रिमां ममतामयी आ
गोद में मुझको उठा, लोरियां मुझको सुना,
पालने में फिर झुला । रात्रिमां ममतामयी आ ।
सुबह जब आये उषा, मैं सूर्य से नवप्राण पाऊं ।
कर्म में मैं जूझ जाऊं । प्रखर यश अपना बढ़ाऊं
शिखर के ऊपर चढ़ा ।
रामिमां ममतामयी आ । गोद में मुझको उठा ।
हे विभावरि मां थकूं जब, तू मुझे देना शरण
गोद में ही जन्म मेरा, गोद में तेरी मरण ।
हर समय पाता रहूं, आशीष तेरे प्यार की ।
रात्रि मां ममतामयी आ ।

(भाषानुवाद : **सत्यकाम विद्यालंकार**)

निबंधिका

# संतुलन का जीवन में महत्व

□ रमेश चंद्र महरोत्रा

यदि किसी का व्यक्तित्व केवल अंतर्मुखी रहता है, तो उसका सामाजिक स्तर पर विकास नहीं हो पाता; लेकिन यदि उसका व्यक्तित्व केवल बहिर्मुखी रहता है, तो उसमें भीतरी गुणों का अभाव रह जाता है।

कोई व्यक्ति यदि जीवन के पुराने मूल्यों पर ही स्थिर रहता है, तो वह पुरातनपंथी और दकियानूस कहलाने लगता है; लेकिन यदि वह इतना आधुनिक बन जाता है कि नैतिकता के भी मूल्यों की अवहेलना करने लगता है, तो वह अपनी संस्कृति और सभ्यता से दूर जाने वाला कहलाने लगता है।

आदमी यदि हर समय असंतोष से ग्रस्त रहे, तो उसका जीना दुश्वार हो जाये; लेकिन यदि वह हर बात और स्थिति में संतोष कर लिया करे, तो उसकी प्रगति रुक जाये।

ऊपर बताये गये तीनों उदाहरणों की तह में एक बात समान रूप से छिपी हुई है कि संतुलन का जीवन के हर पहलू में भारी महत्व है। आप अपने व्यवहार में मीठे ज़रूर बनिये, पर इतने नहीं कि लोग आप को चाट जायें; इसके विपरीत, आप इतने कड़वे भी मत बनिये कि लोग आप पर थू-थू करने लगें लचीला होना अच्छा है, पर इतना नहीं कि रीढ़ की हड्डी ही समाप्त हो जाये; इ प्रकार, कड़ा होना भी अच्छा है, पर इतन नहीं कि मुड़ते ही टूट जाना ज़रूरी हो 'स्थायित्व' का अर्थ यदि 'स्थिरता' है, त दूसरी ओर 'जड़ता' भी निकलता है; इ प्रकार, 'अस्थायित्व' का अर्थ य 'डांवाडोल' है, तो दूसरी ओर 'परिवर्तन' अ 'प्रगति' भी निकलता है।

जीवन में संतुलन के लिए आप जित महत्व 'आदर्श' को दें, उतना ही 'यथार्थ' भी दीजिये; जितनी बातें सिद्धांत अ विचार की करें, उतनी ही अभ्यास अ आचार की भी करें; जितना प्रेम करें, उत ही कर्तव्य भी निभायें; जितनी स्वतंत्रता कामना करें, उतना ही अनुशासन का पालन करें; और जितना पचा सकें, उतना खायें, न ज़रूरत से ज़्यादा पेट भरें और न रहें। यदि आप केवल स्वार्थ की बातें करते तो आपका स्तर हलका कहा जायेगा; प्रकार, यदि आप केवल परमार्थ की करेंगे, तो आप सांसारिक नहीं रह जायें

अ

आदमी के लिए यदि श्रम करना आवश्यक है, तो विश्राम करना भी आवश्यक है। यदि उसे शक्तिवर्धन के लिए अम्लकारी वस्तुएं खानी चाहिये, तो स्वस्थता के लिए क्षारयुक्त वस्तुएं भी खानी चाहिये। चौबीसों घंटे अध्ययन करना किसी समझदार ने नहीं बताया, साथ में खेल और मनोरंजन पर सभी ने बल दिया है। भौतिक जगत् की सुख-सुविधाओं के साथ-साथ आध्यात्मिक जगत् से संबंधित मंदिर-मस्जिद-गिरजे-गुरुद्वारे कभी कम नहीं हुए हैं। बच्चों को सही शिक्षा देने के लिए नरमी के साथ-साथ नियम-पालन की सख़्ती की भी आवश्यकता पड़ा करती है। गांधीजी कहा करते थे कि गुस्सा करो या न करो, पर 'करना' ज़रूर आना चाहिये। कोमलता और उदारता का अस्तित्व ही तब है, जब दृढ़ता और अनुदारता भी विद्यमान हो। न्यायाधीश औचित्य और अनौचित्य को देखते हुए अपने निर्णयों में अत्यंत कठोर भी होता है और अत्यंत नम्र भी।

मनुष्य को व्यक्तिवादी और समाजवादी दोनों ही होने की ज़रूरत है, क्योंकि यदि वह केवल व्यक्तिवादी रहा, तो उसमें स्वार्थपरक असामाजिकता आ जायेगी, और यदि वह केवल सामाजिक हो गया, तो उसका व्यक्तिगत जीवन समाप्तप्राय हो जायेगा।

भावुकता और बुद्धिवादिता के बीच भी संतुलन रखने की आवश्यकता है, क्योंकि केवल भावुक व्यक्ति घुट-घुटकर मर जायेगा और केवल बुद्धिवादी व्यक्ति मशीन होकर रह जायेगा। 'कामायनी' की श्रद्धा और इड़ा इसी संतुलन का संदेश दे रही हैं। सार्थक जीवन-चक्र की हर दिशा में व्याप्त इस संतुलन के लिए एक उदाहरण और प्रस्तुत है कि मानव की कुछ इच्छाओं का पूरा होना और कुछ का पूरा न होना ही भवितव्यता है।

**-भाषाविज्ञान-विभागाध्यक्ष,**
**रविशंकर विश्वविद्यालय,**
**रायपुर - ४९२ ०१०, म.प्र.**

□

अभिनेत्री रोसालिंड रसल कुछ शहरों का दौरा करती हुई अपना कार्यक्रम पेश कर रही थी। एक दिन उसने लम्बे सफर के बाद एक शहर में पहुंचने पर कार्यक्रम देने से पहले कुछ देर आराम करना चाहा। इस ख्याल से कि कोई उसके आराम में विघ्न न डाले, उसने एक कागज़ पर 'डू नॉट डिस्टर्ब' लिखकर अपने ड्रेसिंग-रूम के दरवाजे पर लगा दिया।
उसे नींद अभी आयी ही थी कि दरवाज़े पर लगातार दस्तक की आवाज़ सुनकर वह जाग पड़ी।

दरवाज़ा खोलने पर उसने बाहर एक छोटी-सी लड़की को खड़े पाया, जिसके हाथ में वह कागज़ था, जो उसने 'डू नॉट डिस्टर्ब' लिखकर दरवाज़े पर लगाया था।

लड़की उसे देखकर खुश हो उठी और वह कागज़ उसकी ओर बढ़ाते हुए बोली, 'इस पर अपने हस्ताक्षर कर दीजिये।'

* * *

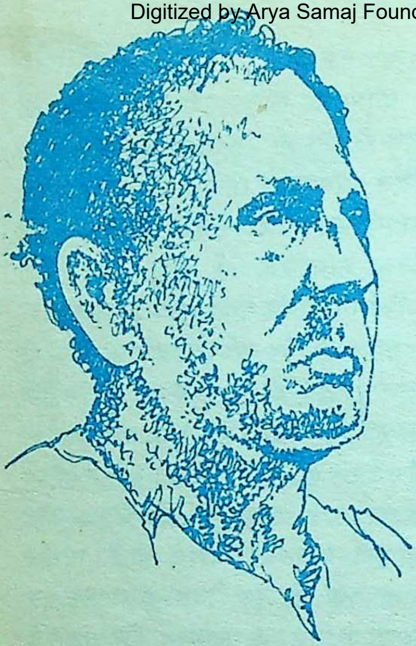

# हाज़िरजवाबी फ़िराक़ की

□

**डॉ. अंजनीकुमार श्रीवास्तव**

वह कौन सी चीज है जो इस कठिन संसार को काफी हद तक सरल और सहज बनाये रखती है ? बेशक वह है जीवनी-शक्ति जो इन्सान को उसके हर हाल में, हर परिस्थिति में मजबूत बनाये रखती है और उसकी रहनुमाई करती है स्फूर्ति और प्रेरणा देती है और ज़िन्दगी को जीने योग्य बनाती है। इसी जीवनी-शक्ति का एक अहम हिस्सा है हँसी-मज़ाक जिसका मुख्य मकसद होता है मनोरंजन करना, ताज़गी और जीवंतता प्रदान करना, मगर किसी भी कीमत पर दिल को चोट न पहुँचाना, रगों को न दुखाना। अक्सर ऐसा देखा गया है कि प्रतिभाशाली व्यक्तिओं के अन्दर बड़ी महीन हास्यवृत्ति होती है। नोक-झोंक और छेड़-छाड़ में रस लेना उनके स्वभाव में हो है।

फ़िराक़ साहब की भी बातचीत में उन 'विट' बहुत प्रभावित करता था। एक मह कवि के रूप में, एक बेमिसाल हस्ती के में, एक साहित्यिक 'जीनियस' के रूप उनके नाम और शोहरत का क्या कह मगर चुहलभरी जुमलेबाजी में भी उन कोई जवाब न था। ज़िन्दगी के अन्तिम तक उनकी ज़िन्दादिली और तेज़ी ज्यों त्यों बनी रही। उनकी हाज़िरजवा उनकी साफ़गोई, हमेशा कुछ न कुछ कहते रहने की उनकी खूबी, बेलाग दो बयानों की जगह अब शायद ही को सके।

आज उनके बारे में कुछ सोचते हुए उनकी जादूबयानी उनकी खुशमिजाज़ी, उनकी खुद्दारी और उनकी अन्दरूनी शख़्सियत के कई पहलुओं को उजागर कर रहीं तमाम बातें बेसाख़्ता याद आ रही हैं। उनके जीवन के बारे में, उनकी कृतियों के बारे में, उनकी ऊंचाइयों के बारे में, बहुत सारे लोग बहुत कुछ बता सकते हैं, मगर इलाहाबाद यूनिवर्सिटी में अपने अध्ययन् के दिनों से लगातार बरसों तक उनके सान्निध्य और उनकी स्नेह-परिधि में रहने के फलस्वरूप जिन बातों या जिन घटनाओं को प्रस्तुत कर रहा हूं उन पर इससे पहले बहुत कम लोगों की नज़रें गयी होंगी।

वाकया है बम्बई के एक मशहूर मुशायरे का। कई शायर अपने अशआर अर्ज़ कर चुके तो शायरे-आज़म फ़िराक़ की बारी आयी। फ़िराक साहब मंच पर बैठे-बैठे ही शेर पढ़ रहे थे। तभी श्रोताओं की भीड़ में से एक आवाज उभरी – 'जनाब फ़िराक़ साहब, हम आप को ठीक से देख नहीं पा रहे हैं, कृपया खड़े हो कर अपनी रचना सुनायें!' फ़िराक कब चुप रहने वाले थे! उन्होंने तुरन्त जवाब दिया – 'अफ़सोस! मैं खड़ा हो ही नहीं सकता। मेरे पाजामें का इज़ारबन्द टूट गया है।'

दोस्तों की बज़्म में एक बार एक बुजुर्ग अदीब पुराने जमाने के हिन्दुस्तान और उसकी तहज़ीब का जिक्र कर रहे थे। बातों बातों में उन्होंने कहा – 'आज से कई बरस पहले जब मैं अपना मकान बनवा रहा था तो नींव की मजबूती के ख़्याल से ज़मीन मैंने काफी गहरी खुदवायी जिसमें से कुछ तार बरामद हुए। इससे पता चलता है कि प्राचीन भारत में तार (वायर) का रिवाज रहा होगा।' वहां उपस्थित लोगों में फ़िराक ही ऐसे थे जिन्होंने उन सज्जन की बात के जवाब में कुछ कहना जरूरी समझा। कहा फ़ारक साहब ने – 'जनाब, लगभग उन्हीं दिनों मेरा मकान भी बन रहा था और मैंने भी काफी गहराई तक जमीन खोदवायी थी। मगर उसके अन्दर से कुछ भी नहीं निकला। ज़ाहिर है प्राचीन भारत में 'वायरलेस' (बेतार का तार) का रिवाज था।'

विज्ञान भवन, नयी दिल्ली में भारतीय ज्ञानपीठ पुरस्कार समर्पण समारोह का आयोजन हुआ था, जिसमें फ़िराक गोरखपुरी पुरस्कृत हुए थे। रात में आठ-साढ़े आठ का वक्त रहा होगा। भारतीय ज्ञानपीठ की अध्यक्ष श्रीमती रमा जैन, प्रवर परिषद के अध्यक्ष डा. बी. गोपालारेड्डी के लिखित भाषण के पढ़े जाने के बाद अब पुरस्कार विजेता फ़िराक के व्याख्यान की बारी थी। अपने लिखित और मुद्रित भाषण को पढ़ने में फ़िराक़ ने अपनी परेशानी ज़ाहिर की। उन्होंने कहा – 'मुझसे पहले जिन दोस्तों ने तकरीर की है उन्हें रात में भी दिखायी देता है। मेरी दिक्कत यह है कि मुझे सिर्फ दिन में दिखायी देता है।' पूरा हॉल हंसी से गूंज रहा था। तत्कालीन प्रधानमंत्री श्रीमती इन्दिरा गांधी, जो उस समारोह की मुख्य अतिथि भी

थीं, अपनी हंसी न रोक सकीं और उनके ऊपर भी कुछ ऐसा असर हुआ कि उन्होंने भी अपने लिखित भाषण को मेज पर छोड़कर फ़िराक़ की काव्यगत विशेषताओं पर 'एक्सटेम्पोर' मगर बड़ा ही सरस और सजीव भाषण दिया।

फिल्म डिवीज़न की ओर से फ़िराक़ के जीवन और काव्य पर एक वृत्त-चित्र बनाया जा रहा था। इलाहाबाद में बैंक रोड स्थित उनके आवास के कुछ दृश्य फिल्माये जा रहे थे। फिल्म के निर्देशक उन्हें 'सीन' समझा रहे थे – 'देखिये फ़िराक़ साहब! पलंग से उतर कर धीरे धीरे चल कर सामने वाले कमरे में आइये, फिर उस आदमकद शीशे में अपने आप को देखिये और वहीं टंगे हुए तौलिये से अपना मुंह पोंछिये।' ऐसा कह कर फिल्म निर्देशक ने उस तौलिये से अपना मुंह पोंछते हुए उन्हें समझाया ताकि वे ठीक वैसा ही करें। इसके बाद निर्देशक ने कैमरामेन को सावधान हो जाने की हिदायत दी। फ़िराक़ ने बीच ही में अपनी चिन्ता व्यक्त की – '...मगर उस तौलिये से अब अपना मुंह कैसे पोछूंगा? आप ने जो उसका इस्तेमाल कर लिया।'

एक बार की बात है फ़िराक़ साहब के पास भेंटवार्ता के लिए आये हुए किसी सम्मानित पत्र के प्रतिनिधि ने उनसे यह प्रश्न पूछा – 'आप अपना नाम प्रोफेसर रघुपति सहाय 'फ़िराक़' लिखा जाना पसन्द करते हैं या सिर्फ 'फ़िराक़'?' फ़िराक़ साहब का जवाब था – 'आप जो चाहे लिखें मगर मैं आपको बता दूं कि मेरे नाम में 'रघुपति सहाय' उतना ही अनइम्पॉर्टेन्ट (महत्वहीन) है जितना कि शेक्सपियर के नाम में 'विलियम'।'

कई साल पहले की बात है। फ़िराक़ साहब के नाम एक खत आया कि अमुक संस्था या समिति उन्हें एक पुरस्कार से सम्मानित करना चाहती है। स्वाभिमानी फ़िराक़ ने खत के जवाब में लिखवाया था – '...मुझसे ज़्यादा तो वह पुरस्कार ही सम्मानित हो उठेगा, मेरे नाम से जुड़कर।'

उर्दू अदब के जाने-माने आलोचक प्रो. एहतेशाम हुसैन की प्रथम पुण्यतिथि पर वाराणसी नगर निगम के प्रेक्षागृह में साहित्यकारों की एक गोष्ठी और काव्य-संध्या का आयोजन हुआ था। उत्तर प्रदेश के तत्कालीन राज्यपाल जनाब अकबर अली खां भी तशरीफ लाये थे। शाम को एक्स-मेयर श्री बृजपाल दास ने क्लार्क्स होटल में एक शानदार दावत दी थी। इन पंक्तियों का लेखक भी उस दावत में सपत्नीक शरीक था। दावत के बाद बाहर निकल कर जब फ़िराक़ साहब हम लोगों के साथ कार में बैठने को हुए तभी 'आज' दैनिक के प्रधान सम्पादक श्री सत्येन्द्र कुमा गुप्त ने स्नेहभाव से श्रीमती मम श्रीवास्तव की ओर संकेत करते हुए (औ यह न जान कर कि वह फ़िराक़ साहब की आत्मीयों में हैं) फ़िराक़ साहब से कहा – मेरी बेटी है।' फ़िराक़ साहब ने चुहल भ अन्दाज़ में वहीं कार के पास खड़े-खड़े ए

अगल

किस्सा बयान कर दिया – ...एक मास्टर साहब थे, रिटायर्ड। हर शाम अपनी पत्नी के साथ टहलने निकलते थे। रास्ते में जो भी नौजवान दिखायी देता उसे अपना छात्र बतलाते और फिर अपनी पत्नी की ओर देखते हुए उस व्यक्ति से यों कहा करते – 'इनसे मिलो, ये तुम्हारी मां हैं।' हंसते हंसते लोट-पोट हो गये हम लोग और श्री गुप्त भी।

कानपुर के एक मुशायरे की बात है। कुछ शायरों ने अपना कलाम पेश कर लिया तो संचालक ने जनाब नश्तर साहब का नाम पुकारा। नश्तर साहब जितने अच्छे शायर हैं उतने ही शरीफ और हंसमुख इन्सान भी। साथ ही शरीर से बेहद भारी-भरकम और बड़ी तोंद वाले। ज्यों ही जनाब नश्तर साहब शेर पढ़ने माइक के सामने आये फ़िराक़ साहब दोस्ताना हंसी-मज़ाक के लहजे में बोल पड़े – 'अरे बाप रे, इतना मोटा नश्तर!' उनकी इस बात पर सभी लोगों के साथ खुद नश्तर साहब भी जोर से हंस पड़े।

दूरदर्शन पर फ़िराक़ साहब का इण्टरव्यू किया जा रहा था। फ़िराक़ हर प्रश्न का जवाब अपने खास अन्दाज में दिये जा रहे थे। अब प्रश्न रखा गया उनके सामने – 'अच्छा, फ़िराक़ साहब, क्या आप यह बतायेंगे कि सूरदास की कौन सी पंक्ति आप को सबसे ज्यादा पसन्द है।' फ़िराक़ कब चूकने वाले थे, उन्होंने मुंहतोड़ जवाब दिया – 'बहुत खूब! क्या सवाल है! मगर ज़रा आप ही बता दीजिये कि गंगा की कौन सी लहर आप को सबसे ज़्यादा प्यारी लगती है या सूरज की कौन सी किरण आप के ऊपर सबसे अधिक असर डालती है!'

मसूरी का वाक़िया है। मौसम खराब था। कड़ाके की सर्दी और ऊपर से तेज़ बारिश। फ़िराक़ साहब वहीं माल रोड के एक होटल में ठहरे हुए थे। उसी होटल में जोश साहब के भी ठहरने का इन्तज़ाम किया गया था। भयंकर सर्दी में रात भर जोश अपने कमरे में करवटें बदलते रहे। सुबह के वक्त जोश साहब दो-दो कम्बल ओढ़े फ़िराक़ के कमरे में दाखिल हुए और कहने लगे – 'कयामत की सर्दी रही। रात भर दांत बजते रहे।' फ़िराक़ साहब ने उनकी बात से इत्तफ़ाक करते हुए फ़रमाया – 'रात को खाना खाने के बाद ब्रश करने मैं बाथरूम गया और भूल से अपने दांत वहीं छोड़ आये। क़मबख़्त रात भर वहीं बजते रहे होंगे।'

एक बार मजनूं गोरखपुरी ने फ़िराक़ साहब के सामने यह सवाल रखा – 'हजूर, चटकना और चटखना में किसका इस्तेमाल कहां करना उचित है?'

फ़िराक साहब ने पहले तो एक जोरदार ठहाका लगाया और फिर बोले – 'जनाब, कली चटकती है और जूतियां चटखायी जाती हैं।'

एक सज्जन के पुस्तक-प्रेम की चर्चा हो रही थी। किसी ने कहा कि वे इस क़दर शौकीन हैं पढ़ने के कि उन्होंने 'मैकबेथ'

कम से कम सौ बार पढ़ी होगी।

'ये तो हद हो गयी बेवकूफी की।' फिराक साहब बोले, 'किसी चीज को समझने के लिए समझदारों को एक बार ही पढ़ना काफी होता है।'

देहरादून में मुशायरा था। किसी शानदार होटल में फ़िराक साहब के ठहरने का इन्तज़ाम किया गया था। मुशायरा ठीक वक्त पर शुरू हो गया। कोई साढ़े नौ बजे तक फ़िराक साहब को हॉल में न देख कर मुशायरे के आयोजकों को कुछ घबराहट सी हुई। आयोजन समिति के दो सदस्य दौड़े-दौड़े फ़िराक साहब के कमरे में पहुंचे, जहां वे बड़े इतमिनान से सो रहे थे। वे लोग उन्हें जगाते हुए बोले – 'हजूर, आप सो रहे हैं, तबीयत तो ठीक है! आप ही के नाम पर इतने महंगे टिकट बिके हैं। हम श्रोताओं को क्या जवाब देंगे?' फ़िराक ने नींद की सुस्ती में कहा – 'यहां से कितनी दूर है तुम्हारे मुशायरे की जगह?' उन लोगों ने बताया – 'बहुत ही करीब है, हजूर, बस इस अहाते के दूसरे छोर पर!' 'फिर क्या, लाओ यहीं बैठे-बैठे शेर पढ़ देता हूँ।' फ़िराक का जवाब था।

किसी गेस्ट हाउस के रजिस्टर में नाम, उम्र और पता लिख लेने के बाद साहिर लुधियानवी साहब की कलम 'पेशा' वाले खाने पर रुक गयी। पास ही खड़े फ़िराक साहब से उन्होंने राय लेनी चाही - 'जनाब, यहाँ पेशे वाले कॉलम में क्या लिख दिया जाय?'

फिराक साहब ने मुस्कराते हुए कहा - 'माशूक लिख दीजिये।' 'माशूक और वो भी इस उम्र में!' – साहिर साहब ने कुछ झेंपते हुए कहा।

'अरे तो वहीं ब्रैकेट में 'रिटायर्ड' नोट कर दीजिये।' फ़िराक साहब ने सलाह दी।

– बी. ३७/२ बैजनत्था
वाराणसी – २२१ ०१०.

□

## संस्मरण के शीशे में

एक बार एक सज्जन नें गणेश शंकर विद्यार्थी को लिखा कि मै कानपुर में कुछ ऐसे साधुओं लाला रहा हूँ जो पाँच पाँच सौ वर्ष की आयु के हैं, एक आद्य तो महाभारत काल के हैं। उनके स्वाग का प्रबंध कीजिए।

विद्यार्थीजी ने वह पत्र फौरन रद्दी की टोकरी में डाल दिया।

कुछ दिन बाद वह सज्जन उनके पास आये और बड़े नाराज! बोले, आपने स्वागत का प्रबं नहीं किया?

विद्यार्थीजी नें संयत स्वर में उत्तर दिया, वे पाँच सौ वर्ष के हों या हजार वर्ष के इससे क्या? यदि वे इतने दिन जिये तो अपने लिए। हमारे लिए एक दिन भी मरे जीये हों तो बताइये।

# संत कबीर और संत सर्वज्ञ

**□ मदनगोपाल शर्मा**

संत कबीर युगद्रष्टा कवि थे, उन्होंने अपनी वाणी के माध्यम से समाज को नयी दिशा दी। झूठे आडंबरों, कुरीतियों व अविश्वास के भंवर में फंसी मानवता को उभारा तथा साहस और दृढ़ता के साथ सही मार्ग पर चलने को प्रेरित किया। हालांकि उनके द्वारा उठाया गया बीड़ा बहुत दुष्कर था। प्रारंभ से ही उनको हर स्तर पर बैर-विरोध का सामना करना पड़ा तथापि वे अपने ध्येय पर अडिग रहे और अंततः सफल भी हुए। सत्ता व समाज के अभिजात्य वर्ग से टकराव स्वाभाविक था, परंतु उनका उद्देश्य नेक था, प्रयास सार्थक थे तथा साधन सत्य और निष्ठा से परिपूर्ण थे। वे स्वयं पारस थे, उन्होंने जिसको छुआ वह पारस बन गया। यही कारण था कि समाज में नयी चेतना, नयी जागृति की लहर आयी और जनमानस में विकृति उत्पन्न करनेवाले तत्व निराश और हताश हो गये।

संत कबीर की भांति कर्नाटक में संत सर्वज्ञ हुए। उन्होंने भी कबीर की तरह समाज की विकृतियों को दूर करने और जनमानस में नव जागृति लाने का अभियान चलाया। संत सर्वज्ञ का जन्म कर्नाटक राज्य के धारवाड़ जिले में सोलहवी शताब्दी में हुआ था। कबीर की तरह उनके जीवन के संबंध में कोई प्रामाणिक जानकारी उपलब्ध नहीं है। केवल किवदंतियों के आधार पर यह जाना जा सकता है कि उनका जन्म किसी कुलीन

परिवार में न होकर साधारण परिवार में हुआ था। माता-पिता दोनों अलग-अलग जाति के थे तथा तत्कालीन समाज की उपेक्षा का शिकार उनको होना पड़ा। यही कारण था कि उन्होंने भी कबीर की तरह समाज की कुरीतियों का भंडाफोड़ किया तथा तत्कालीन समाज के नियम के झूठे आदर्शों की धज्जियां उड़ायीं।

कबीर ने भगवान की आराधना के नाम पर आडंबर का विरोध किया तथा इधर-उधर भटकने के बजाय मन के भीतर स्थित ईश्वर का आलेख जगाने को प्रेरित किया। कबीर ने स्पष्ट शब्दों में कहा कि यदि पत्थर पूजने से ही ईश्वर की प्राप्ति संभव हो तो मैं पहाड़ की पूजा करना चाहता हूं। ठीक इसी तरह संत सर्वज्ञ कहते हैं कि पापी मन से मंदिर के चक्कर लगाने से कोई लाभ नहीं होता। कोल्हू का बैल भी तो दिन भर चक्कर लगाता है पर अंत में वहीं का वहीं खड़ा रहता हैं। मन से भक्ति न करने वाले की स्थिति भी कोल्हू के बैल की तरह ही हैं।

मानव जीवन में कर्म का सर्वोपरि महत्व है इसीलिये सभी संतों ने कर्मशीलता पर सर्वाधिक जोर दिया है। सत्कर्म मनुष्य को सही दिशा में आगे बढ़ाते हैं, जब कि दुष्कर्म मनुष्य को गलत रास्ते पर ले जाते हैं। इन्द्रियां यदि अनियंत्रित रहें तो पतन निश्चित है। इंद्रिय नियंत्रण का उपदेश कबीर व सर्वज्ञ दोनों ने बड़ी सरल सुबोध भाषा में दिया है तथा मन-वाणी के संयम का महत्व समझाया है। सज्जन व्यक्ति की संगति से कभी हानि नहीं होती। यह बात संत सर्वज्ञ ने बहुत सरल उदाहरण द्वारा समझायी है। वे कहते हैं कि फलों में केले का फल टेढ़ा होता है। भीतर बाहर दोनों तरह से टेढ़ा होता है परंतु रोचक व स्वादिष्ट होता है। ठीक इसी तरह संतों का बांकपन है। उनका व्यवहार अन्य लोगों की तुलना में थोड़ा बिलग लगता भी है तो वह केले के समान है अर्थात टेढ़ा होते हुए भी मधुर व सुंदर है। इस छोटे-से उदाहरण से कवि ने सही मानों में अपनी बात कह दी है। कबीर और सर्वज्ञ दोनों ही अक्खड़ स्वभाव के थे। उन्होंने समाज को सही दिशा के लिए सभी प्रकार के उपाय अपनाये। प्रेम व सद्भाव से समझाया, पाखंडियों को फटकारा, ढोंगी लोगों की पोल खोली। अपने ध्येय की सिद्धि के लिए उनको थोड़ा बांकपन का रवैया भी अपनाना पड़ा, पर यह बांकपन मधुर केले की तरह था।

कबीर ने अपने पदों व दोहों के माध्यम से अपनी बात लोगों तक पहुंचायी। सर्वज्ञ ने भी 'त्रिपद' नामक एक सरल छंद के माध्यम से अपनी बात कही। यह एक बहुत सरल छंद है जो आम आदमी की समझ में आसानी से आता है। संत सर्वज्ञ के ये त्रिपद आज भी कन्नड भाषी लोगों की जिह्वा पर रहते हैं तथा भारतीय साहित्य की अमूल्य निधि हैं। ये सभी त्रिपद कवि के अंतर्मन की अनुभूतियां हैं तथा समाज के प्रत्येक वर्ग के लिए आज भी उपयोगी व प्रेरणापद हैं।

**— ६०, अनुपम नगर, नोलखा परेड**
**ग्वालियर - ४७४ ०११, म.प्र.**

# स्वाधीनता दिवस

दिग्-दिगंत मुखरित छविमान
ग्राम-नगर सब शुद्ध समुज्ज्वल,
तोरण-कलश कलित दूर्वादल,
द्वार-द्वार सज्जित आलोकित,
सुरभित सुंदर मृदु-मुसकान ।
दिग्-दिगंत मुखरित छविमान ।।

शांति कवच संयम के रथ पर,
पूर्ण स्वतंत्र प्रगति के पथ पर,
राष्ट्ररथी जनतंत्र मंत्र पढ़,
सुनता जननायक आह्वान ।
दिग्-दिगंत मुखरित छविमान ।।

पुण्य-पर्व पावन अंतर्मन,
दृढ़ संकल्प समुत्थित जन-जन,
जागरूक श्रम शील सजग तन,
होता निर्भय नव-निर्माण ।
दिग्-दिगंत मुखरित छविमान ।।

**— रामस्वरूप अवस्थी**
२२९, तरीनपुर,
सीतापुर - २६१ ००१, उ.प्र.

□

मेघदूत में

# कवि कालिदास का संगीत वैशिष्ट्य

□ डॉ. सुनीला मिश्र

कवि कालिदास की कृतियों में कला की अनेक नयी रूप विधाओं का वर्णन हुआ है। संगीत भी उनमें से एक है। भारत की ललित कलायें उनकी कृतियों में आज भी सुवासित हो रही हैं। विशेषतः मेघदूत में ऐसी पीड़ायुक्त तान हैं जो मन को छू लेती हैं। संगीत के सभी तत्वों का मेघदूत में समावेश होना सम्मोहित सा करता है।

संगीत के अन्तर्गत गायन-वादन एवं नृत्य तीनों ही आते हैं। और मेघदूत यह प्रमाणित करता है कि संगीत की तीनों विधाओं का कवि कालिदास को ज्ञान था।

'भारतीय संस्कृति और कला' पुस्तक में श्री वाचस्पति गेरूला के शब्दों में कालिदास के ग्रंथ में उल्लिखित (संगीत) कला विषयक सामग्री की समीक्षा वस्तुतः एक स्वतन्त्र विचारणा का विषय है। सौन्दर्यानुरागी एवं रसवादी कवि कालिदास की कला के प्रति रुचि होनी स्वाभाविक है।'

प्राचीन काल से शास्त्रीय संगीत में भरत के नाट्य शास्त्र के वाक्य ही प्रमाणस्वरूप माने जाते हैं। इस कसौटी पर भी मेघदूत खरा उतरता है। संगीत के विद्वान आचार्य बृहस्पति ने इसे स्वीकार किया है, 'कवि कालिदास कवि मात्र नहीं वह तो कवि कुल-गुरु हैं भरत के नाट्य शास्त्र से उनका प्रगाढ़ परिचय है। इस शास्त्र के सिद्धान्त और प्रयोग दोनों ही पक्षों पर उनका समान अधिकार था।' (संगीत चिन्तामणि पृ. ३५

संगीत के प्रमुख तत्व नाद, राग, रस, ल इन सभी तत्वों का समावेश मेघदूत में है।

नाद-भरत मुनि ने कहा है 'गीते प्रत्यन प्रथमं कार्या:' गीत पर सर्वप्रथम प्रयत्न करना चाहिए। अच्छे गीत में भावों के अनुकूल भाषा या शब्द प्रयोग, रस के अनुसार राग एवं छंद लय से तल्लीनता आती है। मेघदूत के श्लोक में नाद सौन्द तथा संगीत ध्वनि है। उदाहरणार्थ -

'मन्दं मन्दं नुदति पवनश्चानुकूलो य
त्वां वामश्चायं न
मधुरश्चातकस्ते सगन्धः' (पूर्वमेघ - श्लो.

इस श्लोक में म न द वर्ण प्रयुक्त है, नाद सौन्दर्य को उत्पन्न करने में सफल है यदि इनका अर्थ नहीं भी मालूम है तो

अगल

सुनने में, अच्छे लगते हैं। भरत मुनि ने संगीत को सुखजनक नाद विशेष कहा हैं। यह गुण यहां विद्यमान है।

राग-रस - संगीत में राग का तात्पर्य स्वरों की विशेष रचना से है। जिसके द्वारा विभिन्न रसों के विशेष भावों का प्रकाशन किया जाता है। (रंजक : स्वर सन्दर्भों राग इत्यभिधयिते- संगीत पारिजात) जो ध्वनि मन को प्रसन्न करती है वही राग है। संगीत के उपादान स्वर हैं। और मेघदूत के श्लोक के शब्द और भाव इसके राग का निर्धारण कर देते हैं। इसके राग वर्षा ऋतु में गाये जाने वाले राग होने चाहिए। मेघदूत जैसा कि नाम से ही प्रतीत होता है मेघ वर्षा ऋतु में ही आते हैं। यक्ष शाप ग्रस्त है। और अपनी पत्नी के वियोग की व्यथा मेघ से कह रहा है। विप्रलम्भ श्रृंगार रस के भाव ऋतु प्रधान रागों के स्वर रागों को ऋतु के अनुकूल बना देते हैं। वर्षा ऋतु में मुख्य रूप से मेघ मल्हार, गौड़ मल्लार, बहार, देश आदि राग गाये जाते हैं। मेघदूत का उक्त श्लोक वर्षा ऋतु में गाये जाने वाले राग में बद्ध कर गाया जा सकता है। (अन्य सभी श्लोक भी गाये जा सकते हैं) ।

धूमः ज्योतिः सलिल मरूतां सनिपातः त्वा मेघः - (पू.श. ५) मनुष्य की चेतना को जैसे काव्य प्रभावित करता है वैसे ही संगीत भी प्रभावित करता है। श्लोक के साथ संगीत का मेल होने से कला की शक्ति दुगनी हो जाती है।

मेघदूत मन्दाक्रान्ता छन्द में रचा गया है। जैसा कि छद के नाम से ही ध्वनित हो रहा है। इसकी गति या लय मन्द है। वियोग रस के कारण छन्द भावों के अनुकूल रस व्यक्त कर रहा है। रस परिपाक में राग और पद के अतिरिक्त लय का भी प्रमुख स्थान है। काव्य में लय छंद से आती है और संगीत में मात्रा की चाल या गति से आती है। लय की विविधता से विविध रस उत्पन्न होते हैं। विभिन्न प्रकार की तालों में ये गुण होता है। विलम्बित, मध्य तथा द्रुत तीन प्रकार की लय तालों में होती है। मेघदूत के समस्त श्लोक रूपक ताल में बद्ध कर गाये जा सकते हैं। मध्य या विलम्बित लय वियोग रस के अनुकूल होती है।

नृत्य की अनेक शैलियों का भी वर्णन मिलता है। अभिनय कटाक्ष, भ्रू विलास आदि। कत्थक, भरत नाट्यम्, ओडिसी इत्यादि नृत्यों की विशेषतायें मेघदूत में पायी जाती हैं। जैसे कि - तेषां दिक्षु प्रथित

विदिशालक्षां [illegible] (पू.मे.श. २४) | नेत्रों द्वारा विभिन्न मुद्राओं को प्रकट करना नृत्य में अभिनय के अन्तर्गत आता है। कत्थक नृत्य की एक शैली नायिका भेद भी है। मेघदूत के नायिका वर्णन में ऐसी चित्रात्मकता है जोकि नायिका के भावों का चित्र सा खींच देती हैं, जैसे कि - नूनं तस्या प्रवलरूदितोच्छूननेत्रं प्रियाया (उ.मे.श. २३)।

श्लोक के भाव इस प्रकार हैं - मेरे वियोग में रोने के कारण उसके नेत्र सूज गये होंगे, गरम सांसों की दाह से अधरों का रंग उड़ गया होगा, कपोलों पर हाथ रक्खे हुए सोचने की अवस्था में उसकी केश राशि विखर गयी होगी।

इसी प्रकार

**उत्संगे वा मलिन वसने सौम्य निक्षप्य वीणा (उ.मे.श. २५)**

'वीणा हाथ में लिये हुए मलिन वस्त्रों को धारण किये हुए वह मेरे पदों को गाना चाहती होगी तो अश्रु प्रभाव से तंत्री भीग जाती होगी।

मुग्धा नायिका के वर्णन का श्लोक है 'तन्वी श्यामा शिखरि दशिना पक्व बिम्बाफल अधरोष्ठी' (उ.मे.श. २०) मुग्धा नायिका के गुण कोमलता और भोलापन हैं। इन सभी का उक्त श्लोक में वर्णन है। सब कुछ इतना सहज ग्राह्य है कि इन श्लोकों को पढ़कर नर्तकी अपनी मुद्रा बना सकती है। गायक अपना राग निर्धारित कर सकता है। और चित्रकार त्रित्र बना सकता है। कुशल नृत्यांगनाओं ने इनको आधार बनाकर नृत्य प्रदर्शन किये हैं, जैसे श्रीमती संयुक्ता पाणिग्रही। करूण रस होने के कारण गायक वियोग रस प्रधान रागों का चयन कर सकते हैं। श्री शलेन्द्र दे ने विरही यक्ष के चित्र बनाये हैं 'मेघदूत चित्रावली' जोकि भारत कला भवन संग्रह में संग्रहीत हैं। कवि ने अनेक स्थलों पर मेघगर्जना की उपमा मृदंग ध्वनि से की है। बांसुरी, वीणा इत्यादि वाद्यों का नामोल्लेख किया है।

शब्दायन्ते मधुरमनिलौ कीचका : पूर्य- माणा, अर्थात वायु के मेल से बांसों के वन जहां बांसुरी के समान मधुर स्वर करते हैं जिनमें तान मिलाकर किन्नरियां त्रिपुर विजय का राग अलापती हैं। वहां तेरा (मेघ) मृदंग समान घोष ध्वनित होगा तो भगवान शंकर की नृत्य सम्बन्धी सामग्री पूर्ण हो जायेगी। गायन, वादन और नृत्य तीनों ही संगीत को पूर्णता देते हैं।

संगीत की मनोहारी शक्ति का वर्णन भी मिलता है।

कवि ने मयूरों के नृत्य को भी अमूल्य उपहार बताया है जो मेघ की यात्रा की थकान को दूर कर देगा।

संगीत में ही ऐसी शक्ति है जो मनुष्य की पीड़ा, थकान को दूर कर देती हैं। अस्तु कवि कालिदास के मेघदूत में जो सम्मोहन है इसमें संगीत का बहुत योगदान है। कवि के संगीत वैशिष्टय के कारण भी कवि कालिदास को कवियों में श्रेष्ठ कहा जाता है।

— ११३/२५०, स्वरूपनगर,
कानपुर, उ.

□

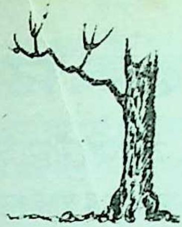

# पेड़ : चार कविताएं

**— बलदेव वंशी**

### सृजन सुख

पेड़ ने
अपने इच्छा बीज
छिटक दिये धरती में
और सो गया
धरती खिलखिला उठी
तृप्ति में
लोग हैरान हैं —
ये इतने सारे पेड़
कौन बो गया !...

***

### पक्षियों का सपना

पेड़ पर
ढेरों बौर लदे हैं !
पक्षियों की कामनाएं
टहनियों पर फल रही हैं
और
पेड़ की जड़ें
पक्षियों के सपनों में चल रही हैं...

### स्मृति-पुष्प

न जाने यह कौन पक्षी
किस देश-प्रदेश से आकर
वृक्ष के ऊपर कुहुका
सिर्फ़ कुहुका
कि पुष्पों से भर गया
वृक्ष का गान !

न जाने यह कौन पक्षी....

***

### हवा चली

हवा चली !
हवा चली
तो
पेड़ के प्राणों में जन्मी
गंध तक
पेड़ को छोड़
हवा के साथ हो ली
हवा चली !...

***

**ए-३/२८३, पश्चिम बिहार, नयी दिल्ली - ११० ०६३**

# बनारसी ठाठबाट पर निकले डाक टिकट

□ गोपीचंद श्रीनाग

'तीन लोक में न्यारी काशी', ऐसी मान्यता प्राचीन काल से चली आ रही है। काशी एक मोक्ष क्षेत्र है, वाराणसी एक पावन नगरी है। काशीधाम मुक्तिक्षेत्र कहलाता है। वाराणसी बाबा विश्वनाथ की नगरी है। भोले बाबा की इस नगरी में भारतीय संस्कृति-साहित्य-शिक्षा-राजनीति की एक निरंतर गहन धारा बहती रही है। यहां इतिहास ने कई बार करवटें ली हैं। आज मैं कुछ उन देशी-विदेशी स्मारक व खास डाक टिकटों का उल्लेख कर रहा हूं, जिनपर भारत का यह काशीक्षेत्र अपनी पूरी आन बान शान के साथ मुखरित हो उठा है।

सबसे पहले काशी का स्मरण बाबा विश्वनाथ के प्रसिद्ध प्राचीन मंदिर व पतितपावनी गंगाज़ी के कारण किया जाता है। वाराणसी की पावन-स्फूर्तिदायिनी सुबहें दूर-दूर तक विख्यात हैं। काशी में गंगा के किनारे, पावन तट पर निर्मित जगप्रसिद्ध घाट विदेशी पर्यटकों तक के आकर्षण के केंद्र बने हुए हैं। भला ऐसा क्यों न हो। नजीर बनारसी ने तो इन घाटों को देवताओं की राजधानी की संज्ञा दी है।

**'ये घाट हैं सामने नजर के**
**कि देवताओं की राजधानी।'**

वाराणसी के प्रसिद्ध घाटों पर भारत ने ३ अक्तूबर सन १९८३ में २०० पैसेवाला एक बहुरंगी स्मारक डाक टिकट निकाला था। इस भारतीय स्मारक डाक टिकट को जर्मनी की एक पत्रिका - ब्रीफ मार्केन वेल्ट द्वारा आयोजित पर्यटन डाक टिक प्रतियोगिता में उस साल के विश्व के पर्यटन डाक टिकटों में तीसरा पुरस्कार प्राप्त हुआ था। इस पुरस्कृत डाक टिकट पर वाराणसी का दशाश्वमेध घाट प्रमुखता से दिखलाई प रहा है। शिव (नटराज) व शिवालयों प निकाले भारतीय डाक टिकट देखने में आते हैं लेकिन इनमें बाबा विश्वनाथ कहीं न मिलते हैं।

काशी केवल हिन्दुओं का ही तीर्थस्थ नहीं है। यहां वाराणसी से ५ मील सारनाथ बौद्धों का महान तीर्थ है। गया ज्ञान प्राप्ति के बाद, यहां सारनाथ 'मृगदाव' में भगवान बुद्ध ने सबसे प अपने ५ प्रमुख शिष्यों के सामने प्रवचन कि था। इसे धर्मचक्र प्रवर्तन कहते हैं। भगवान बुद्ध पर अथवा सारनाथ पर भा में अभी तक एक भी डाक टिकट नहीं निक गया है लेकिन चीन-जापान-नेपाल-बर्मा- लंका- थाईलैण्ड आदि ने समय-समय

अ

काफी संख्या में अपने यहां डाक टिकट निकाले हैं। भगवान बुद्ध स्वयं अपनी मूर्ति-चित्र पूजा के विपरीत थे।

सारनाथ में बौद्ध सम्राट अशोक महान द्वारा स्थापित एक शिलावाले स्तंभ के ऊपरी परगहे को अवश्य भारत सरकार ने अपना राष्ट्रीय चिह्न स्वीकार किया हुआ है। इस चिह्न को २६ जनवरी सन १९५० में राष्ट्रीय चिह्न स्वीकार कर लिया गया था। १५ दिसंबर सन १९४७ में निकले एक जयहिन्द भारतीय डाक टिकट (डेढ़ आना) पर इसी सिह परगहे का चित्र मौजूद मिलता है। सोवियत संघ ने भी १४ दिसंबर सन १९७७ को ६ कोपेक मूल्यवाला एक स्मारक डाक टिकट सारनाथ के इसी ऊपरी परगहे वाले भारतीय राष्ट्रीय चिह्न पर, स्वतंत्र भारत की ३०वीं वर्षगांठ पर निकाला था। महापंडित राहुल सांकृत्यायन की रचना- 'वोल्गा से गंगा' की भावना इस डाक टिकट पर अवतरित लगती है।

जहां तक सारनाथ के बौद्ध स्तूप का प्रश्न है, थाईलैण्ड ने सन १९७१ में सारनाथ स्तूप पर २ बहत मूल्य वाला स्मारक डाक टिकट (बुद्ध का प्रथम प्रवचन) निकाला था। आचार्य महाप्रभु बल्लभाचार्य वाराणसी में स्थायी रूप से बस गये थे। शुद्धाद्वैतवाद के प्रतिपादक दार्शनिक महाप्रभु (डाक टिकट १०० पैसे - १४ अप्रैल १९७७) ने सन १५३१ में यहां समाधि ली थी।

जैसा कहा जाता है कि काशी का हर कंकर शंकर है, यहां का हर साधारण नागरिक भी विद्वान है। गुदड़ी के लाल हैं। संस्कृत व हिन्दी भाषा व साहित्य के क्षेत्र में जो-जो आंदोलन यहां होते रहे हैं, उनसे साहित्य में युगों का निर्माण हुआ है। हिन्दी साहित्य में भारतेन्दु युग इस तथ्य का जीता-जागता उदाहरण है। बनारसी ठठबाट के धनी, दरियादिल इंसान व साहित्यकार भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र (सन १८५०-१८८५) पर एक स्मारक डाक टिकट (२५ पैसा - ९ सितंबर १९७६) हमें पहले ही देखने को मिल चुका है।

हिन्दी गद्य-पद्य को खड़ी बोली से सजाने वाले भारतेन्दु बाबू के अलावा भारत के मैक्सिम गोर्की, अभूतपूर्व अमर कथाकार मुंशी प्रेमचन्द (३० पैसे- ३१ जुलाई १९८०), सितारे हिन्द बाबू शिवप्रसाद गुप्त (सन १८८३-१९४४) पर भी डाक टिकट (६० पैसे २८ जून सन १९८८) निकल चुके हैं। हिन्दी कहानी में प्रेमचन्द जी (सन १८८०-१९३६) मील के एक पत्थर थे। काशी के अनेकानेक हिन्दी समाचार पत्रों (भारतमित्र, आज, संसार, रणभेरी, कमला आदि) के स्वनामधन्य सम्पादक व क्रांतिकारी बाबूराव विष्णु पराड़कर (सन १८८३-१९५५) पर भी एक स्मारक डाक टिकट (५० पैसे) १४ सितंबर १९८४ को निकला था। पराड़कर जी प्रथम हिन्दी सम्पादक सम्मेलन (१९२५) के अध्यक्ष रहे थे। प्रेमचन्दजी का जन्म ३१ जुलाई १८८० में लमही नामक गांव में हुआ था जो वाराणसी के पास है।

१५वीं शताब्दी के हिन्दी भक्तियुग के संत कवि महात्मा कबीर का नाम भला कौन भुला सकता है। एक फक्कड़, अति अक्खड़ संत कबीर का स्थान आज हर समझदार व्यक्ति के दिल में जमा हुआ है। वह समझदार व्यक्ति हिन्दू हो सकता है, मुसलमान भी हो सकता है। संत रविदास भी वाराणसी की उपज थे। उनका जन्म सीर गोवर्धनपुरा में हुआ था। सन्त रविदास पर डायमंड आकार का एक डाक टिकट (२० पैसे) १० फरवरी १९७१ में निकाला गया था। वाराणसी के इन दो संतों-कबीर व रविदास रचित 'शबद' पवित्र गुरु ग्रंथ साहिब में शामिल किये गये थे।

काशी के नागरिकों की जीवन शैली ही अलग रही है। वे जीवन को बेफिक्री से जी भर जीते हैं। मस्ती व साहस उनके गुण रहे हैं। उनमें जन सरदार व जन सम्मानित गुण्डे हुए हैं। अत्याचार-अन्याय से जूझने को अपना परम कर्तव्य माननेवालों, स्वतंत्रता के प्रतिपक्षी लोगों में सबसे पहला नाम झांसी की रानी लक्ष्मीबाई, बिठूर की छबीली व वाराणसी की मनू का ही आता है। ये तीनों नाम एक ही ज्वालामुखीवाले व्यक्तित्व के हैं। बालिका मनू वाराणसी के मणिकर्णिका घाट क्षेत्र में ही पेशवा चिमाजी आपा के आश्रित पिता मोरोपंत ताम्बे व माता भागीरथीबाई के घर जन्मी थीं। महारानी लक्ष्मीबाई (बलिदान ८ जून सन १८५८)पर पहला डाक टिकट (१५ नये पैसे) १५ अगस्त सन १९५७ को व दूसरा डाक टिकट (६० पैसे) सन् १९८८ में ९ मई को निकला था। दूसरे स्मारक डाक टिकट की डिजाइन प्रख्यात भारतीय चित्रकार सांसद मकबूल फिदा हुसैन साहेब की पेंटिंग पर आधारित है। बलिदान के समय लक्ष्मीबाई लगभग ३० वर्ष की थीं।

जब स्वतंत्रता संग्राम की बात छिड़ गयी है तब भारत के दूसरे प्रधानमंत्री स्व. लालबहादुर शास्त्री (सन १९०४-१९६६) का नाम भला कैसे भुलाया जा सकता है जिन पर २६ जनवरी सन १९६६ को १५ पैसेवाला एक शोक डाक टिकट भारत में निकाला जा चुका है। अपने शास्त्रीजी पर हंगरी ने भी सन १९६६ में १ फोरिंट मूल्य वाला एक स्मारक डाक टिकट (भारतीय प्रधानमंत्री) निकाला था। शास्त्रीजी का जन्म २ अक्तूबर को मुगलसराय में हुआ था।

काशी विद्या की नगरी है, एक सरस्वती पीठ है। हिन्दू विश्वविद्यालय (पूर्व संस्था: सेन्ट्रल हिन्दू कालेज) को शैक्षिक उच्चता के कारण काशी की अपनी अलग पहचान है। सेन्ट्रल हिन्दू कालेज श्रीमती एनी बेसेन्ट (सन १८४७-१९३३) की देन था। बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय पर अभी तक कोई भी डाक टिकट नहीं निकाला गया है। हां, इतना अवश्य है कि इस विश्वविद्यालय के संस्थापक, विद्वान, शिक्षाशास्त्री महामना मदन मोहन मालवीयजी (सन १८६१-१९४६) पर एक स्मारक डाक टिकट (१५ नये पैसे) २४ दिसंबर सन् १९६१ को

निकला था। मालवीयजी एक स्वतंत्रता संग्राम सेनानी, राष्ट्रीय कांग्रेस के शीर्षस्थ नेता व प्रख्यात पत्रकार भी थे। महामना तीन राष्ट्रीय कांग्रेस महाधिवेशनों (लाहौर - सन १९०९, दिल्ली-सन १९१८ व कलकत्ता - सन १९३३) के अध्यक्ष रह चुके थे।

जब सन १९०५ में यहां पर अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी का महाधिवेशन हुआ था, तब उसकी अध्यक्षता गोपालकृष्ण गोखले (सन १८६६-१९१५) ने की थी। गोखले जी महात्मा गांधी के राजनैतिक गुरु थे और इन पर ९ मई सन १९६८ में १५ पैसे वाला एक स्मारक डाक टिकट देखने को मिला था।

भारत के भूतपूर्व राष्ट्रपति (सन १९६२-१९६७) दार्शनिक डा. सर्वपल्ली राधाकृष्णन (सन १८८८-१९७५) कभी हिन्दू विश्वविद्यालय के उपकुलपति रहे थे। डा. राधाकृष्णन पर २ स्मारक डाक टिकट अब तक निकले हैं। पहला डाक टिकट (१५ पैसे - ५ सितंबर सन १९६७) व दूसरा डाक टिकट (६० पैसे) ११ सितंबर सन १९८९ में निकला है।

हिन्दू विश्वविद्यालय के अलावा सन १९२१ में स्थापित यहां का विद्यापीठ स्वतंत्रता आन्दोलन के दौरान काफी चर्चित रहा है। शास्त्रीजी यहीं के एक छात्र थे। प्रसिद्ध दार्शनिक डा. भगवानदास यहां के शिक्षकों में से थे। डा. भगवानदासजी पर एक स्मारक डाक टिकट (२० पैसे) १२ जनवरी सन १९६९ को निकला था। डा. भगवानदासजी (सन १८६९-१९५५) को सन १९५६ में 'भारतरत्न' की उपाधि ससम्मान प्रदान की गयी थी।

काशीविद्यापीठ की स्वर्ण जयन्ती पर एक स्मारक डाक टिकट (२० पैसे) १० फरवरी सन १९७१ को निकाला जा चुका है। इसकी स्थापना में मुख्तार अहमद अंसारी (डाक टिकट ३५ पैसे - २५ दिसंबर १९८०) का अमूल्य सहयोग रहा था।

काशी मेलों, त्यौहारों, उत्सवों का अनूठा क्षेत्र है। यहां रामनगर (वाराणसी) की रामलीला एक महत्वपूर्ण सांस्कृतिक चेतना की प्रतीक है। हिन्दी का ऐसा खुला रंगमंच अन्यत्र दुर्लभ है। यहां की रामलीला के रावण के एक मुखौटे पर एक रंगीन डाक टिकट (रु. २) १५ अप्रैल सन १९७४ को निकला था। भारत के प्रसिद्ध नर्तक उदयशंकर (सन १९००–१९७७) का बचपन गाजीपुर में बीता था। किशोर उदयशंकर ने वाराणसी में शिक्षा पायी थी। २६ दिसंबर सन १९७८ में एक स्मारक डाक टिकट उदयशंकर पर भी निकाला गया था। गांधीजी के आध्यात्मिक पुत्र आचार्य विनोबा भावे ने सन १९१६ में वाराणसी आकर विद्या हासिल की थी। विनोबाजी पर एक डाक टिकट (५० पैसे-१५ नवंबर सन १९८३)निकल चुका है। यहां ज्ञान प्राप्त करने वाले आते ही रहे हैं। और आते ही रहेंगे।

आपको इन डाक टिकटों पर बनारसी ठाठबाट की एक झलक अवश्य दिखी होगी।

□

# मरते समय

☐ सुई किड

जनवरी की उस शाम अस्पताल में असाधारण खामोशी और शांति थी। यह कुछ ऐसी ही निस्तब्धता लगती थी, जैसी कि सामान्य रूप में तूफान के आगमन से पहले छा जाती है। मैंने नर्सों के कमरे में लगे हुए दीवारगीर क्लाक की ओर देखा। नौ बज चुके थे। मैंने एक स्टेथस्कोप गले में डाला और वार्ड नम्बर सत्रह की ओर चल दी।

मैंने कमरा नम्बर सत्रह में प्रवेश किया, तो वहां लेटे हुए रोगी मिस्टर मिल्ज़ ने उत्सुक अंदाज में बिस्तर पर सिर उठाया, लेकिन जब उन्होंने देखा कि आनेवाली केवल उनकी नर्स है तो उन्होंने तनिक निराशा से दोबारा तकिये पर सिर टिका दिया। मैंने स्टेथस्कोप उनके सीने पर रख कर उनके दिल की धड़कन सुनी। धड़कन कमज़ोर, लेकिन समतल थी और यह अंदाज़ा करना कठिन था कि उस व्यक्ति को कुछ घंटे पूर्व दिल का दौरा पड़ चुका है।

उसने गर्दन मोड़ कर मेरी ओर देखा। उसकी आंखों में तरलता झलक रही थी। मैंने सहानुभूतिपूर्ण अंदाज़ में उसका हाथ थपथपाया, तो वह बोला, 'क्या तुम मेरी बेटी को बुला दोगी?' उसके स्वर में असंख्य याचनाएं थीं, 'तुम्हें शायद मालूम हो कि मैं अकेला रहता हूं और मेरा इस संसार में एक बेटी के सिवा कोई नहीं।' उसकी सांसे ते होने लगीं।

मैंने उसके लिए आक्सीजन सप्लाई बढ़ाते हुए कहा, मैं अवश्य आपकी बेटी को बुलवा दूंगी।'

उसने बिस्तर की चादर को व्यग्रतापू अंदाज में मुट्ठी में भींच लिया और चेहरे प तनाव लिये उत्सुक स्वर में कहा, 'तुम उ अभी... इसी समय... तत्काल बुलवा सक हो?' उसकी सांसे और तेज़ होती जा र थीं। 'मैं जितनी जल्दी संभव हो सका, उ बुलवाने का प्रयत्न करूंगी।' मैंने कहा, 'अ आप कुछ देर आराम करने का प्रयास करें...

उसने आंखें बंद कर लीं और मैं मटिया प्रकाश में धीमे कदमों से चलती हुई खिड़ में जा खड़ी हुई। खिड़की का शीशा कु धुंधला और ठंडा था। पार्किंग-लाट धुंध-सी छायी हुई थी और आकाश बर्फीले बादल तैर रहे थे।

'नर्स', पीछे से मिल्ज़ ने पुकारा, 'तुम

अगले

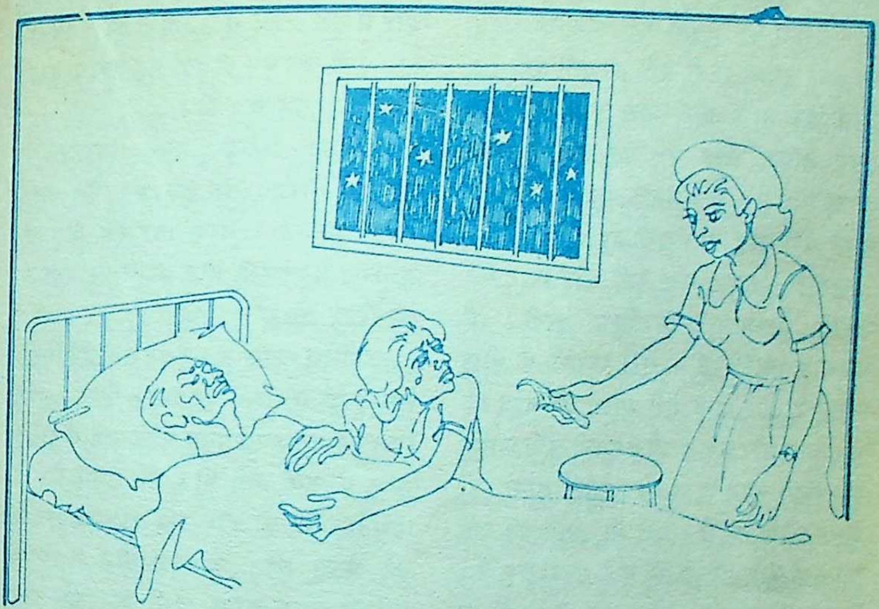

पैंसिल और कागज़ दे सकती हो ?'

मैंने अपनी जेब से पीले कागज़ का एक टुकड़ा और पेन निकाला और बैड से जुड़ी हुई मेज़ पर रख दिया। उसने धन्यवाद कहा और मैं उसके कमरे से निकल आयी।

मिल्ज़ के चार्ट पर संबंधियों के खाने में केवल उसकी बेटी का नाम दर्ज था। मैंने जानकारी-विभाग से उसकी बेटी का नम्बर प्राप्त करके फोन पर उससे संपर्क कायम करके कहा, 'मिस जेनी मिल्ज़ मैं सूई किड बोल रही हूं। मैं अस्पताल में नर्स हूं। मुझे आपको आपके पिता के बारे में सूचना देनी थी। उन्हें आज शाम दिल का दौरा पड़ा था, जिसके कारण उन्हें अस्पताल में दाखिल किया गया था...'

'नहीं...' वह अकस्मात फोन पर चिल्ला उठी और मैं एक क्षण के लिए डर-सी गयी, 'वह कुशलता से तो हैं ? उनकी हालत खतरे से बाहर है या नहीं ?'

'फिलहाल तो उनकी हालत खतरे से बाहर है और वह शांत हैं, मैंने यथासंभव सांत्वना देने वाले स्वर में कहा।

'आप लोग उन्हें मरने मत दीजियेगा।' उसने कुछ ऐसे स्वर में कहा कि एक क्षण के लिए रिसीवर मेरे हाथ में कांप गया।

'इस अस्पताल में रोगियों को सर्वोत्तम सुविधाएं उपलब्ध हैं और आपके डैडी पर पूरा ध्यान दिया जा रहा है', मैंने कहा।

'वास्तव में... आपको मालूम नहीं...' वह लगभग रोते हुए बोली, 'एक वर्ष पूर्व मेरी

और डैडी का सख्त झगड़ा हो गया था। उस समय से मेरी और उनकी मुलाकात नहीं हुई। इस सारे समय में मैं यही सोचती रही कि उनके पास जाऊं और उनसे क्षमा मांग लूं। उनसे अंतिम शब्द मैंने यह कहे थे, मुझे आपसे घृणा है। और उसके बाद से आज तक उनसे मेरी कोई बात नहीं हुई।'

उसकी आवाज़ रुंध गयी और फिर मैंने उसकी यातनापूर्ण सिसकियां सुनीं। मैं चुपचाप सुनती रही। मेरी पलकों के पीछे रुके हुए आंसू मानों मेरी आंखों को जला रहे थे। पिता और पुत्री के बीच इतनी बड़ी खाई! मुझे फिर अपने पिता का खयाल आया, जो मुझसे कोसों दूर थे। मुझे भी उनसे यह कहे हुए वर्षों बीत गये थे कि मुझे उनसे प्रेम है। फिर ऐसी खाई बीच में आ गयी थी कि मैं यह शब्द कहने को और वह शायद यह शब्द सुनने को आज तक तरस ही रहे थे।

जेनी अपनी सिसकियों पर काबू पाने का प्रयत्न कर रही थी और मैं प्रार्थना कर रही थी, 'हे ईश्वर! इस पुत्री को पिता से क्षमा मांगने का अवसर अवश्य प्रदान करना।'

'मैं आ रही हूं।' जेनी बोली, 'मै आधे घंटे में पहुंच जाऊंगी।' उसने संपर्क तोड़ दिया।

मैंने नर्सों वाले कमरे में अपनी मेज़ पर रखे हुए चार्टों के अम्बार में अपने आपको उलझाने का प्रयास किया। मैं अपने आप को व्यस्त रखने के इस प्रयास में असफल रही। बार-बार मेरा मस्तिष्क कमरा नम्बर सत्रह की ओर जा रहा था। न जाने क्यों मेरा दिल चाह रहा था कि उस कमरे का एक चक्कर लगा कर आऊं। अंत में मुझसे रहा न गया और मैं एक झटके से उठ खड़ी हुई। अनजाने रूप में मैं लगभग दौड़ती हुई कमरा नम्बर सत्रह की ओर चल दी।

मिस्टर मिल्ज़ अपने बिस्तर पर निश्चल-निस्पंद लेटे हुए थे। मैंने उनकी नब्ज़ चेक की। नब्ज़ निश्चल थी। मैंने तत्काल एमरजेंसी बोर्ड का स्विच दबा कर आपरेटर को सूचित किया।

संबंधित स्टाफ के पहुंचने तक मैंने मिस्टर मिल्ज़ को संभालने का प्रयत्न किया। उनके दिल की धड़कन शायद अकस्मात और बिना कष्ट के रुक गयी थी। मैंने उनके बैड की पायंती ऊंची की और उन्हें कृत्रिम श्वास देने की चेष्टा की। आपात्कालीन स्थिति में पहुंचने वाला स्टाफ अभी तक नहीं आया था।

मैंने मिस्टर मिल्ज़ को कृत्रिम श्वास देने के प्रयत्न में बेहाल हुई जा रही थी और दिल ही दिल में प्रार्थना कर रही थी, 'हे भगवान! इस व्यक्ति को कम से कम कुछ मिनट का जीवन तो और प्रदान कर दें... उसकी बेटी उससे क्षमा मांगने आ रही है... उसके दिल में जीवन भर के लिए कसक रह जायेगी... हे ईश्वर इस मामले का अंत इस अंदाज में तो नहीं होना चाहिए।'

अंत में कुछ सैकंड बाद दरवाज़ा एक झटके से खुला और डाक्टर और नर्सें आपात्कालीन अवस्था में उपयोग होनेवाली मशीनों को ढकेलते हुए कमरे में दाखिल हुए। एक डाक्टर ने दिल को पम्प करने की मशी

संभाली। हवा पहुंचाने के लिए रोगी के कण्ठ में नाली डाली और नसों से जुड़ी ट्यूबों में नर्सों ने विभिन्न दवाएं प्रवेश कीं।

मैं 'हार्ट मोनेटर' की स्क्रीन को देख रही थी। उस पर प्रकाश की कोई गतिशील रेखा प्रकट नहीं हुई थी, जो दिल की धड़कन को ज़ाहिर करती।

'सब लोग पीछे हट जायें,' अंत में एक डाक्टर चिल्लाया, मैंने उसे यंत्र पकड़ाये और उसने मशीन के द्वारा मिस्टर मिल्ज़ के दिल को विद्युत-झटका दिया। कई झटके देने से भी कोई परिणाम प्रकट नहीं हुआ।

अंत में डाक्टर के इशारे पर एक नर्स ने सभी मशीनें बंद कर दीं। एक-एक करके वे सब बोझल खामोशी के साये में वापस चले गये। केवल मैं हत्प्रभ-सी मिस्टर मिल्ज़ के बैड के पास खड़ी रह गयी। खिड़की के शीशों पर बर्फ गिर रही थी। मैं सोच रही थी कि मैं किस प्रकार मिल्ज़ की बेटी का सामना करूंगी?

मैं कमरे से निकली तो मैंने गलियारे में एक लड़की को एक डाक्टर से बात करतें हुए देखा। उसके अंदाज़ से ही मुझे मालूम हो गया कि वह जेनी थी। उसके चेहरे पर आंसुओं की तरलता और वहशत थी। डाक्टर उसे कुछ बता कर आगे बढ़ गया और वह दीवार से रगड़ खाती हुई धीरे-धीरे यों बैठ गयी, जैसे उसकी टांगों में जान न रही हो। उसकी आंखों में जो यातना और पीड़ा थी, उसे मैं शब्दों में बयान नहीं कर सकती।

मैं उसका हाथ थाम कर उसे नर्सों के लाउंज में ले गयी। कई मिनट तक हम दोनों चुपचाप बैठी रहीं। प्रकट में हमारे चेहरे सपाट थे। उस शीशे की तरह, जो ज़रा-सी ठेस लगने से किरची-किरची हो जाता है।

'जेनी, मुझे खेद है...' मुझे अपने आप पर तरस आया कि कहने के लिए मुझे उपयुक्त शब्द नहीं मिल रहे थे।

'मुझे इनसे घृणा नहीं थी... कभी भी घृणा नहीं रही थी... मुझे तो उनसे प्रेम था।' वह बोली, 'मैं उन्हें देखना चाहती थी।'

उसकी इस प्रार्थना पर सबसे पहला ख्याल मेरे मस्तिष्क में यही आया, 'क्यों अपनी यातना को बढ़ाना चाहती हो?' लेकिन यह सोचने के बावजूद मैं उठ खड़ी हुई और उसे सहारा देकर धीरे-धीरे कमरा नम्बर सत्रह की ओर ले चली। कमरे में प्रवेश करके वह अपने पिता के बैड के निकट पहुंची और एकदम उस पर गिर कर उसके सीने में मुंह छुपा लिया। मैं इस करुणाजनक विदाई दृश्य को देखने के लिए खड़े रहना नहीं चाहती थी। मैं कमरे से बाहर जाने के लिए मुड़ी तो मेरा हाथ बैड से जुड़ी हुई छोटी-सी टेबल से छू गया और पीले कागज़ का एक छोटा-सा टुकड़ा मेज़ से फिसल कर फ़र्श पर गिर पड़ा। यह वही कागज़ था, जो मैंने मिस्टर मिल्ज़ को कुछ लिखने के लिए दिया था। मैंने उठा कर देखा। उस पर लिखा था:

'मेरी प्रियतम हस्ती, मेरी बेटी जेनी,

मैंने तुम्हें क्षमा किया और मेरी प्रार्थना है, कि तुम भी मुझे क्षमा कर दो। मुझे मालूम है कि तुम्हें दरअसल अपने डैडी से प्रेम है। मुझे

भी तुमसे बहुत प्रेम है – डैडी।'

मैंने कांपते हाथ से कागज़ का टुकड़ा जेनी को थमा दिया। उसने उसे दो-तीन बार पढ़ा। उसकी आंखों में संतोष और शांति फैलती चली गयी और उसने कागज़ के उस टुकड़े को उन्मत्त अंदाज़ में चूम लिया।

'हे ईश्वर! तेरा बहुत-बहुत धन्यवाद!' मैंने खुसर-फुसर में कहा और खिड़की की ओर देखा। अंधेरे आकाश पर कुछ सितारे प्रकट हो चुके थे और मानों तरलता में भीगे झिलमिला रहे थे। बर्फ का एक गोला खिड़की के शीशे से आकर टकराया और अपने आप पिघल गया। रिश्ते-नाते भी बर्फ के गोलों की तरह नाज़ुक होते हैं। एक क्षण में पिघल जाते हैं। लोप हो जाते हैं, लेकिन यदि सही क्षण पर कोई निर्णय कर लिया जाये, तो उन्हें लोप होने से बचाया जा सकता है।

मैं कमरे से निकली और तेज़ी से नर्सों के कमरे की ओर चल दी। मैं जल्दी से जल्दी अपने डैडी को फोन करना चाहती थी। मुझे उनसे केवल इतना कहना था, 'मैं आपसे बहुत प्यार करती हूं, डैडी!'

**अनुवादक : सुरजीत**

□

## लेखकों से निवेदन

* जो भी रचना प्रकाशनार्थ भेजी जा
अब टाइप कराके ही भेजी
हस्तलिखित रचना स्वीकृत नहीं की
* प्रतिदिन नवनीत में प्रकाशनार्थ बहुत
डाक आती है। कई बार अनुरोध कर
भी कुछ लेखक वापसी के लिए रच
साथ पर्याप्त टिकट लगा लिफाफा
भेजते। भविष्य में ऐसी रचनाओं
लोटाया जायेगा और न उन पर प्रका
विचार ही किया जायेगा।
* जब तक आपकी पूर्व स्वीकृत
प्रकाशित न हो जाये दूसरी रचना न
* कुछ लेखक अभी भी वापसी के लि
पर्याप्त टिकट लगे लिफाफे के
विचारार्थ भेजते रहते हैं। ऐसी अ
रचनाओं को आप पत्र लिखकर वाप
सकेंगे, यह अपेक्षा न रखें, क्योंकि
संभालकर रखना हमारे लिए संभव न

अभिनेत्री ज़ा ज़ा गेबर से किसी ने पूछा, 'स्त्री के लिए अपने पति को वश में रखने का
तरीका है?'

'बहुत आसान तरीका है,' ज़ा ज़ा गेबर ने कहा। 'पति आग की तरह होते हैं। आग को फूं
रहिये, वह जलती रहेगी। उसकी ओर से बेध्यान हो जाइये, वह बुझ जायेगी!'

* * *

# मासिक भविष्यफल – अगस्त ९०

□ पं. वी. के. तिवारी

**मेष (१४ अप्रैल - १४ मई)**

यह समय वर्ष का सर्वाधिक बुरा हो सकता है। व्यस्तता, संघर्ष, विवाद, आकस्मिक व्यय व हानि की संभावनाओं से इंकार नहीं किया जा सकता। राजनीति, मुकदमें एवं प्रतियोगिता के क्षेत्र में पक्ष निर्बल रहेगा। स्त्रीवर्ग को अग्नि से विशेष सावधानी रखना श्रेयस्कर होगा। वाहन संचालन एवं यात्रादि में विशेष सजगता उपयोगी सिद्ध होगी। व्यावसायिक स्थिति सामान्य रहेगी। आर्थिक स्थिति कमजोर होगी। जनसंपर्क की दृष्टि से पत्रकार व राजनीतिज्ञ वर्ग सफल होगा।

**वृष (१५ मई - १५ जून)**

दांपत्य जीवन के साथी को स्वास्थ्य-पीड़ा सहनी होगी। यात्रा में कष्ट होगा। आकस्मिक व्यय या लंबी यात्रा के अवसर आयेंगे। उच्चवर्ग से संपर्क बढ़ेंगें। स्थायी लाभ के सुयोग बनेंगे। पारिवारिक एवं परिवार के बड़ों का सुख यथेष्ठ रहेगा। प्रथम सप्ताह उत्तम व्यतीत होगा। द्वितीय व अंतिम सप्ताह प्रत्येक दृष्टि से प्रतिकूल समय का आभास देगा। निराशा व क्रोध में वृद्धि होगी। बिना बाधा के कोई भी कार्य संपादित नहीं हो सकेगा। आर्थिक स्थिति सामान्य रहेगी। जनसंपर्क करने वालों को कष्ट रहेगा। यात्रा का अभीष्ट उद्देष्ट पूरा नहीं हो सकेगा।

**मिथुन (१६ जून - १६ जुलाई)**

माह का द्वितीय सप्ताह सर्वोत्तम रहेगा। सफलता, यश एवं उपलब्धि का सुयोग बनेगा। शेष समय में चिंता एवं आरोप की स्थिति से दो-चार होना पड़ेगा। स्थायी संपत्ति से आय बढ़ेगी। आत्मीय वर्ग से विवाद की स्थिती निर्मित होगी। माह के उत्तरार्ध में नये कार्यों में रुचि बढ़ेगी। उच्च मनोबल बना रहेगा। स्वास्थ्य उत्तम रहेगा। यश व आर्थिक लाभ में वृद्धि होगी।

**कर्क (१७ जुलाई - १६ अगस्त)**

वर्ष का श्रेष्ठ समय आपके साथ है। स्वास्थ्य में सुधार होगा। भूमि एवं भवन से आय अथवा लाभ बढ़ेगा। बंधु-बांधवों का सहयोग उत्तम मिलेगा। उच्च वर्ग से श्रेष्ठ सम्मति मिलेगी। व्यवसाय की उन्नति

होगी। आर्थिक व राजनीतिक दृष्टि से माह उत्तम रहेगा। वकील वर्ग सुखी होगा। सामान्य रोजगार में बाधा रहेगी। परिवार-सुख में कमी होगी। बच्चों का शैक्षणिक कार्यक्रम बिगड़ेगा, प्रतियोगिता में सफलता की संभावना कम रहेगी। विवाद में समय नष्ट होगा। माह का द्वितीय सप्ताह श्रेष्ठ रहेगा। शुभ समाचारों से मन हर्षित होगा।

### सिंह (१७ अगस्त - १६ सितंबर)

इस माह शरीर या मानसिक पीड़ा का योग है। भाग्य-बाधा का अनुभव प्रत्येक कार्य में पग-पग पर अनुभव होगा। धर्म पर से आस्था घटेगी। विरोधी सक्रिय रहेंगे। बंधु-बांधवों से अपेक्षित सहयोग नहीं मिल सकेगा। दिनचर्या में व्यतिक्रम उत्पन्न होगा। १३ से १८ तारीख की अवधि ही कुछ राहत या आंशिक सफलता दे सकेगी, अत: सूझबूझ एवं योजनाबद्ध प्रयास से मन प्रसन्न होगा। संतान पक्ष से मन में चिंता रहेगी।

### कन्या (१७ सितंबर - १६ अक्तूबर'

माह की १९ तारीख तक अस्वास्थ्य एवं व्यस्तता के अतिरिक्त प्रत्येक दृष्टि से समय के सुनहरे रूप के दर्शन होंगे। समस्याओं अथवा व्याधानों के जमघट चुटकी बजाते ही बिखर जायेंगे। परिवार, धनलाभ, व्यवसाय एवं प्रतियोगिता में समय आपकी इच्छानुरूप चलेगा। २० से मासांत तक आपको अपनी गतिविधियों पर नियंत्रण स्थापित करते हुए सूझ-बूझ एवं बुद्धिकौशल का भरपूर उपयोग करना चाहिए। परिवार सुख-सुविधा में कटौती होगी।

### तुला (१७ अक्तूबर - १६ नवंबर)

तृतीय सप्ताह इस माह का सर्वाधिक अनुकूल, यशवर्धक एवं आमोद-प्रमोद का रहेगा। कार्यों में व्यवधान उत्पन्न होंगे। इस माह की विशेषता यह होगी कि किसी-किसी क्षेत्र में अनायास अकल्पित सफलता मिलेगी तो किसी-किसी क्षेत्र में सारी सूझ–बूझ धरी रह जायेगी। स्वास्थ्य के प्रति अतिरिक्त सजगता श्रेयस्कर रहेगी। वर्ष का उत्तम समय प्रमाणित हो सकता है। पद व अधिकार में वृद्धि होगी। उदारता, दयालुता एवं पुण्य कार्यों से व्यवधानों का शमन होगा। आर्थिक दृष्टि से उत्तम माह है।

### वृश्चिक (१६ नवंबर - १५ दिसंबर)

इस माह मान-सम्मान में वृद्धि होगी। भूमि, भवन, गृह सुख, भौतिक सुख आशानुरूप मिलेंगे। विवाद एवं संघर्ष में विजयश्री हस्तगत होगी। सफलता अंतिम क्षणों में मिलेगी, जबकि आप निराश होकर या क्रोधित होकर गलत निर्णय की ओर झुक रहे होंगे। आपके निर्णय एवं कार्यों की प्रशंसा होगी। व्यक्तिगत प्रभाव में वृद्धि होगी। माह की अत्युत्तम अवधि १८ से २४ तारीख की होगी। मनोबल एवं चरित्रबल आवश्यक व उपयोगी शस्त्र सिद्ध होंगे।

### धनु (१६ दिसंबर - १५ जनवरी)

संतान पक्ष की ओर से विशेष चिंतित रहेंगे। विरोधी सक्रिय होकर सफल हो सकते हैं। स्वास्थ्यबाधा रहेगी। व्यवसाय में व्यवधान उत्पन्न होंगे। यह वर्ष की अप्रीतिकर अवधि है। रोजगार में जोखिम न

लें। दांपत्य जीवन के सुख में न्यूनता प्रभावी होगी। राजनीति एवं सामाजिक स्थिति में वृद्धि आयेगी। विद्या में उन्नति होगी। माह का चतुर्थ सप्ताह आपके प्रयासों की सुखद परणिति का एवं आकस्मिक सुसमाचार का रहेगा।

### मकर (१४ जनवरी - १२ फरवरी)

इस माह रोजगार, व्यवसाय, यश एवं परिवार की दृष्टि से बाधाओं का सैलाब उमड़ता प्रतीत होगा। व्यय पर नियंत्रण रखने का प्रयास करें। मनोबल, धैर्य व सूझबूझ का उपयोग भरपूर करें। चरित्र एवं चर्चा का संतुलन विशेष उपयोगी सिद्ध होगा। कनिष्ठ एवं जनसामान्य वर्ग विरोध एवं अपयश दे सकता है। आत्मीय वर्ग का व्यवहार भी अपेक्षित सहयोगपूर्ण दृष्टिगोचर नहीं होगा। मासांत के अंतिम दिनों में आपके प्रयत्नों व प्रभाव से सफलता के दर्शन होंगे। अपनी योजनाएं प्रकट न करें।

### कुंभ (१३ फरवरी - १४ मार्च)

पत्नी-सुख में कमी होगी। यात्रा का दौर चलेगा। विरोध या विवाद की परणिति संधि के रूप में होगी। यह वर्ष का विशेष अनुकूल समय कहा जा सकता है क्योंकि राजनीति, रोजगार-एवं सामाजिक क्षेत्रों में सफलता की स्थिति सुदृढ़ होगी। नये कार्य हाथ में न लें। आर्थिक स्थिति सामान्य रहेगी। प्रियवर्ग के हित में कार्य संपादन होगा। माह का पूर्वार्ध श्रेष्ठ रहेगा, विशेषतः प्रथम सप्ताह पूर्णतः आपके लिए अनुकूल रहेगा। माह के द्वितीयार्ध में निश्चित रूप से आपके लिए कठिनाइयों एवं व्यस्तता की स्थिति निर्मित होगी।

### मीन (१५ मार्च - १३ अप्रैल)

माह की ७ तारीख से २० तक आपको उलझनों, व्यस्तता एवं बाधाओं से निपटना पड़ेगा। निर्णय एवं कार्यप्रगति में विलंब होगा। आर्थिक एवं राजनीतिक स्थिति के प्रति चिंता बनेगी। २१ से मासांत तक स्थायीलाभ के कार्य-निष्पादित होंगे। भौतिक सुख सामग्री के प्रति रुचि बढ़ेगी। व्यवसाय में लाभ आशानुरूप होगा। रोजगार में आपका कार्यक्षेत्र बढ़ सकता है। आपके कार्यों या निर्णय की भूरि-भूरि प्रशंसा होगी। दांपत्य जीवन में सुख की वर्षा होगी। संतान पक्ष - आपको यश एवं सुख प्रदान करेगा। प्रसन्नता बढ़ेगी।

### व्रत एवं त्यौहार

एकादशी पवित्रा एवं जया क्रमशः २ व १७; प्रदोष व्रत - ४ एवं १३; चर्तुदशी व्रत - ५; श्रावणी पूर्णिमा - रक्षाबंधन एवं चंद्रग्रहण ६; कज्जली तीज, गणेश चतुर्थी व्रत - ९; चंद्र षष्ठी - ११; हल षष्ठी - १२;, श्रीकृष्ण जन्माष्टमी - १३; गोवत्सनवमी - १४; गोवत्स द्वादशी -१७; मास शिवरात्रि व्रत - १९; सोमवती अमवास्या - २०; हरतलिका व्रत - २३; श्री गणेश जयंती - २४; ऋषिपंचमी - २५; संतान सप्तमी - २७; राधाष्टमी - २८; श्री चंद्रनवमी २९; अगस्त।

# सांस्कृतिक मंच

## साहित्यकार समाज के निर्माता

'साक्षात्कारों द्वारा साहित्यकारों के अनुभवों और उनके जीवन की उन घटनाओं को सुरक्षित रखा जा सकता है, जो साहित्यकारों तक सीमित रह जाते हैं। ये अनुभव साहित्य की धरोहर बन जाते हैं, जिनसे भावी पीढ़ियां लाभ उठाती हैं। साक्षात्कार करने वाले की सफलता इसी में है कि वह साहित्यकारों से कहलवा सके।' उपराष्ट्रपति डॉ. शंकरदयाल शर्मा ने श्री अशोक लव की पुस्तक 'हिन्दी के प्रतिनिधि साहित्यकारों से साक्षात्कार' का लोकार्पण करते हुए कहा।

उपराष्ट्रपति-निवास पर आयोजित लोकार्पण-समारोह में अध्यक्ष पद से बोलते हुए वरिष्ठ पत्रकार एवं दैनिक 'हिंदुस्तान' के संपादकीय सलाहकार श्री विनोद मिश्र ने कहा कि साक्षात्कारों द्वारा अशोक लव ने एक युग के इतिहास को समेट लिया है।

लोकार्पण-समारोह 'सुमंगलम्' संस्था द्वारा आयोजित किया गया। इसके अध्यक्ष श्री श्रवण राही ने अतिथियों का स्वागत किया। संस्था के सचिव श्री सर्वेश शर्मा ने अतिथियों का माल्यार्पण द्वारा अभिनंदन किया। आकाशवाणी के विदेश हिंदी सेवा के प्रमुख डॉ. उपेन्द्र रैणा ने लोकार्पण- समारोह का संचालन किया।

**— आरिफ जमाल**

## पं. वी. के. तिवारी सम्मानित

'भारतीय ज्योतिष विज्ञान संगठन' द्वारा आयोजित अ. भा. ज्योतिष सम्मेलन के समापन अवसर पर सहकारिता मंत्री श्री लक्ष्मीनारायण शर्मा ने राजधानी के प्रसिद्ध ज्योतिषी पं. वी. के. तिवारी को 'ज्योतिष मार्तंड' की मानद उपाधि प्रदान की।

पं. तिवारी को यह उपाधि ज्योतिष ज्ञान के माध्यम से जनमानस की सराहनीय सेवा, सत्य सटीक भविष्यवाणियों व ज्योतिष के गवेषणात्मक प्रयोग हेतु प्रदान की गयी है।

* * *

## साहित्यकार का अभिनंदन

म.प्र. साहित्यकार मंच का दसवां स्थापना दिवस समारोह सरदार रतनसिंह के मुख्य आतिथ्य तथा श्री कामता तिवारी 'राज' की अध्यक्षता में संपन्न हुआ।

मंच ने व्यंग्य शिल्पी डॉ. रामनारायण सिं 'मधुर', सिवनी का अभिनंदन शाल, श्रीफल तथा एक हजार एक रुपये की राशि समर्पित करके किया। इस अवसर पर प्रकाशित स्मारिका का औपचारिक विमोचन सरदार रतनसिंह ने किया।

**— ओमप्रकाश अग्रवा**

* * *

## 'शिल्पी' की कला प्रदर्शनी

कानपुर की सर्वाधिक चर्चित चित्रका

अपर

संस्था शिल्पी की वार्षिक कला-प्रदर्शनी का आयोजन किया गया। ५० दिवसीय इस कला प्रदर्शनी में २६ कलाकारों की कलाकृतियां प्रदर्शित की गयी थीं। प्रदर्शित चित्र अधिकांशतः तैल रंगों से निर्मित किये गये थे। डॉ.एस. एन. सक्सेना की कृति 'अभिसारिका' जल-रंगों में निर्मित शक्तिशाली रचना थी। डॉ. प्रेमा मिश्रा की कृति 'इण्डिया' सुकोमल रंग-योजना में निर्मित भारतीय संस्कृति को प्रतिविम्बित करती उत्कृष्ट रचना रही। डॉ. रेखा निगम एवं सरला सिंह की कृति दर्शक पहले की चित्र-प्रदर्शनी में भी देख चुके थे। डॉ.मकबूल अंसारी, बृजेश कटियार, रमा वर्मा, प्रेमकुमारी मिश्र, डॉ. सत्य प्रकाश सक्सेना, दीपा मिश्रा, योगेन्द्र देव सिंह, अजय पाठक, आनन्द लखटकिया, बी. एन. सिंह, दिनेश कुमार मिश्र, डॉ. शशी माथुर, डॉ.आई. बी. रूबेन, अलका कटियार, डॉ. रामेश्वर वर्मा, कृष्ण मोहन व अल्पना गुप्ता की कृतियां दर्शकों के आकर्षण का केन्द्र रहीं।

* * *

## अभिनन्दन एवं काव्य-गोष्ठी

कानपुर की साहित्यिक, कला एवं सांस्कृतिक मंच 'उपनिषद्' के तत्वावधान में प्रसिद्ध चित्रकार, कला-समीक्षक, कवि एवं समाज सेवी श्री बी. एन. सिंह का अभिनन्दन एक भव्य-समारोह में किया गया। इसके साथ ही उनके सम्मान में एक काव्य-गोष्ठी का भी आयोजन किया गया।

कवयित्री श्रीमती माधवी लता शुक्ल की अध्यक्षता में सम्पन्न इस समारोह में सर्वश्री प्रो. के. के. शुक्ल, डॉ. प्रतीक मिश्र, चन्द्रेश गुप्त, अम्बिका सिंह वर्मा, डॉ. रामेश्वर वर्मा एवं 'समवाय' के महासचिव संतोष गुप्त ने श्री सिंह के व्यक्तित्व एवं कृतित्व पर प्रकाश डाला। श्री सिंह को स्मृतिचिह्न, उत्तरीय एवं अभिनन्दन पत्र सम्मान में भेंट किया गया।

**— डॉ. रामेश्वर वर्मा**

* * *

## उत्तर महाभारत : ग्रंथ-विमोचन

हिंदी के यशस्वी कवि डॉ. किशोर काबरा के प्रबंध काव्य 'उत्तर महाभारत' का विमोचन डॉ. रामगोपाल शर्मा 'दिनेश' के कर कमलों द्वारा बैंक आफ बड़ौदा स्टाफ कॉलेज, अहमदाबाद में संपन्न हुआ।

कृति की समीक्षा हिंदी के मूर्द्धन्य समीक्षक एवं आचार्य डॉ. राममूर्ति त्रिपाठी (उज्जैन), डॉ. भूपतिराम साकरिया (वल्लभ विद्यानगर), डॉ. भगवत शरण अग्रवाल, डॉ. भगवतीप्रसाद पंड्या एवं श्री अविनाश श्रीवास्तव ने की। सभी समीक्षकों ने महाभारत की बिंबात्मक उत्तर कथा को समसामयिक संदर्भों में प्रस्तुत करनेवाली इस कृति को हिंदी प्रबंध काव्य परंपरा में एक उपलब्धि बताया।

समारोह का आयोजन 'हिंदी साहित्य -

परिषद, अहमदाबाद' ने किया। कार्यक्रम के अध्यक्ष थे डॉ. अंबाशंकर नागर एवं संयोजक डॉ. रामकुमार गुप्त।

— **डॉ. भ्रमर माहेश्वरी**

* * *

## भोजपुरी दिवस समारोह

'भोजपुरी लोक पत्रिका' की ओर से कबीर जयंती के अवसर पर लखनऊ में भोजपुरी दिवस समारोह आयोजित किया गया। द्विदिवसीय समारोह का उद्घाटन माननीय श्रीदिवाकर विक्रम सिंह खाद्य एवं रसद मंत्री ने किया। कार्यक्रम का शुभारंभ परंपरागत भोजपुरी बटोहिया गीत से हुआ। सरस्वती एवं कबीरदास के चित्र पर माल्यार्पण समारोह के अध्यक्ष श्री दिवाकर विक्रम सिंह एवं मुख्य अतिथि श्री गणेश चौबे के द्वारा किया गया। अतिथियों का स्वागत 'भोजपुरी लोक पत्रिका' की संपादक एवं समारोह की संयोजक श्रीमती राजेश्वरी शांडिल्य ने किया।

इस समारोह के मुख्य अतिथि थे, उत्तर प्रदेश हिंदी संस्थान के कार्यकारी उपाध्यक्ष डॉ. परिपूर्णानंद वर्मा, श्री गणेश चौबे एवं डॉ. मदन मोहन 'मनुज'।

— **डॉ. मंजुलता तिवारी**

* * *

## कोटा में बालोत्सव

कोटा (राजस्थान) शहर में १० मई से १५ जून तक 'बालोत्सव' का आयोजन संपन्न हुआ। इस बार 'बालोत्सव' में लगभग ९०० बालक-बालिकाओं ने भाग लिया। बालोत्सव में कलाभिरुचि प्रशिक्षण शिविर में कुशल प्रशिक्षकों ने ९ केंद्रों पर विधिवत रूप से नृत्य, संगीत, चित्रकला एवं नाटक का प्रशिक्षण दिया। इस बालोत्सव आयोजन समिति के अध्यक्ष शिक्षा मंत्री श्री हरिकुमार औदीच्य को बनाया गया। आयोजन समिति के संयोजक हाड़ौती के जन कवि प्रेमजी 'प्रेम' थे।

— **रामगोपाल मीना**

* * *

## कवि-सम्मेलन सह-मुशायरा

स्थानीय युवा साहित्यकारों की जीवंत साहित्यिक संस्था 'साहित्य जागरण मंच समस्तीपुर' के प्रथम दशक पूरा करने के उपलक्ष्य में एक रंगारंग कवि सम्मेलन सह मुशायरा का आयोजन किया गया। कवि सम्मेलन का शुभारंभ मंच के उपाध्यक्ष श्री 'सुमन' के काव्य पाठ से हुआ। सम्मेलन में उपस्थित अन्य कवियों में प्रमुख थे, सर्वश्री नाशाद औरंगाबादी, रजा अश्क, लक्ष्मी ना. जिज्ञासु डॉ. नारायण दास, रामपुनीत ठकुर 'तरुण', यदुनंदन 'रसिक', नागेश्वर राय, वासुदेव 'सरस', रवींद्र ठकुर, राजेश कुमार वर्मा, चौ. रमेशकुमार 'रविकर', अरु अभिषेक, प्रियदर्शी हरेकृष्ण, रामप्रेम मि 'निराला', अमरफ समस्तीपुरी, अजी अभरफ, उमेश ठाकुरदीन, मुशब्बिर शम नंदकिशोर शर्मा, इत्यादि। विशिष्ट अतिथि थे रजा 'अश्क'। मुख्य अतिथि नारायणदास तथा रामपुनीत 'तरुण'।

अध्यक्षता की श्री लक्ष्मीनारायण जिज्ञासु ने और मंच का संचालन किया नाशाद औरंगाबादी ने।

- नंदकिशोर शर्मा

* * *

## रचनावली का विमोचन

'जबलपुर जिला हिंदी साहित्य सम्मेलन' के तत्वावधान में आयोजित एक साहित्यिक समारोह में द्विवेदी युग के विद्वान और साहित्यसेवी स्व. पं. गंगाप्रसाद अग्निहोत्री की रचनाओं का संकलन 'पंडित गंगाप्रसाद अग्निहोत्री रचनावली' के रूप में विमोचित किया गया। श्री मायारामजी सुरजन ने समारोह की अध्यक्षता की तथा डॉ. हनुमानप्रसादजी दीक्षित मुख्य अतिथि के रूप में पधारे थे।

कार्यक्रम का शुभारंभ प्राध्यापिका श्रीमती माला भट्टाचार्य के द्वारा प्रस्तुत सरस्वती वंदना से हुआ। नगर की विभिन्न साहित्यिक संस्थाओं के प्रतिनिधियों ने अग्निहोत्री रचनावली के संपादक और जिला सम्मेलन के अध्यक्ष पं. हरिकृष्ण त्रिपाठी ने स्व. अग्निहोत्रीजी के कृतित्व पर प्रकाश डाला। इसके साथ ही आपने सन १९५६ से १९७७ तक की अवधि के साठ दिवंगत मध्यप्रदेशीय साहित्यकारों के बड़े चित्र विश्वविद्यालय के हिंदी विभाग के लिए कुलपतिजी को भेंट किये।

इसी अवसर पर डॉ. रामकिंकर मिश्र कृत प्रबंध काव्य 'अगस्त्य'और श्री इंद्रमणि उपाध्याय कृत उपन्यास 'सात दिन सात वर्ष' का भी विमोचन किया गया।

मा. भट्टाचार्य

* * *

## कथाकार दामोदर खड़से पुरस्कृत

'महाराष्ट्र हिन्दी साहित्य अकादमी' ने दामोदर खड़से के 'पार्टनर' कथासंग्रह को १९८९ का 'मुंशी प्रेमचंद पुरस्कार' प्रदान करने की घोषणा की है। यह पुरस्कार १४ सितंबर १९९० को बंबई में आयोजित एक समारोह में दिया जायेगा। पुरस्कार राशि पांच हजार रुपये है।

इससे पूर्व दामोदर खड़से के एक अन्य कहानी संग्रह को भारत सरकार द्वारा पुरस्कृत किया गया है। उनका इस वर्ष प्रकाशित उपन्यास 'कालासूरज' चर्चित रहा है। दया पवार की चर्चित और झकझोर देने वाली मराठी आत्मकथा 'अछूत' सहित पांच पुस्तकों के उनके अनुवाद प्रकाशित हो चुके हैं। 'रामनगरी' को म.प्र. साहित्य परिषद ने श्रेष्ठ अनुवाद के लिए 'आचार्य रामचंद्र शुक्ल पुरस्कार' प्रदान किया है।

* * *

## 'राजस्थानश्री' सम्मान-समारोह

राजस्थान दिवस समारोह के समापन और शूरशिरोमणि मेवाड़ के महाराणा प्रताप की जयंती के शुभ अवसर पर २७ मई को

राजस्थान दिवस समारोह समिति के तत्वावधान में जयपुर में एक भव्य कार्यक्रम का आयोजन हुआ। इस प्रोग्राम के तहत कला, संस्कृति, शिल्प संगीत, साहित्य, नृत्य, उद्योग, व्यवसाय, न्याय आदि विभिन्न क्षेत्रों की लब्धप्रतिष्ठ विभूतियों को 'राजस्थान श्री', ताम्र प्रशस्ति पत्र व प्रमाणपत्र प्रदान कर विभूषित किया गया।

इस सम्मान समारोह में उत्तर प्रदेश के राज्यपाल महामहिम बी. सत्यनारायण रेड्डी ने वयोवृद्ध स्वतन्त्रता सेनानी लैफ्टीनेंट जनरल नाथू सिंह, फिल्म निर्माता के. सी. बोकाड़िया उद्योगपति, लेखक और कवि रामनिवास जाजू, प्रवासी राजस्थानी और देना बैंक के निदेशक विजय कालात्री को 'राजस्थान श्री' की उपाधि और वैजयन्ती प्रदान कर सम्मानित किया।

इसके साथ ही माननीय राज्यपाल ने शेर और शायरी के क्षेत्र में कुश्तर मकरानवी, संगीत और गायन में दानसिंह, चिकित्सा के क्षेत्र में सवाई मानसिंह अस्पताल के अधीक्षक डॉ. एम.एल. शर्मा, हस्तशिल्प और पेन्टिंग के लिए चिरंजीलाल बोहरा, स्वतन्त्रता सेनानी श्याम पांडे, 'दैनिक हिन्दुस्तान' के स्थानीय संवाददाता डॉ. भैरव सुराणा, नाट्य लेखक और निदेशक सरताज नारायण माथुर, सांस्कृतिक धरोहर के संरक्षक रणबीर सिंह, कवि परमेश्वर द्विरेफ, सिन्धी और हिन्दी के सुप्रसिद्ध साहित्यकार भगवान अटलानी, लेखक और कला प्रेमी डॉ. प्रेमचन्द गोस्वामी, कत्थक नृत्यांगना सुश्री प्रेरणा श्रीमाली, समाजसेवा और योग के लिये आर.डी. बाहेती, आयुर्वेदिक शल्य चिकित्सक डॉ. श्याम सुन्दर शर्मा, बी. एल. अग्रवाल, मीनाकार सरदार इन्द्र सिंह, नेत्र विशेषज्ञा डॉ. सुनीता अग्रवाल तथा मूर्तिकार गोपाल सोनी को प्रशस्ति ताम्रपत्र और प्रमाणपत्र प्रदान कर विभूषित किया।

बाडमेर लोक सभा से जनता दल के सांसद कल्याण सिंह कालवी की अध्यक्षता में सम्पन्न हुए इस समारोह में पांडिचेरी की उपराज्यपाल ने मुख्य वक्ता के रूप में, उत्तर प्रदेश के राज्यपाल महामहिम बी. सत्यनारायण रेड्डी ने मुख्य अतिथि के रूप में अपने विचार व्यक्त किये। समारोह के अध्यक्ष और कार्यक्रम के संचालक ललित तिवाड़ी ने आभार व्यक्त किया।

**—रत्नकुमार सांभरिया**

□

मुवक्किल ने वकील से कहा, 'बिल में आपने मुझसे एक ही तारीख में दो बार सलाह लेने की फीस लिखी है, जबकि मुझे अच्छी तरह याद है कि उस दिन मैंने आपसे एकही बार सलाह ली थी।'

वकील ने कहा, 'ओह, याद आ गया। जाने के बाद आप फिर लौटे आये थे और आपने मुझसे पूछा था कि मेरा छाता तो यहां नहीं रह गया?'

**— डॉ. गोपाल प्रसाद 'वंशी'**

* * *

भक्ति.

सू र
हे
है। यह ए
जिसमें ए
पीने गया
लिया। ह
लड़ाई हुई
और केवल
बचा तब
पुकारा, जि
कोई प्र
सब प्रयास
श्रद्धा से
संकट दूर
संकट के स
किया था
चीर-हरण
परन्तु इसक
ऐसी घटना
उस जमाने
कम थी औ
नहीं हुई थी
होती थी उ

# हे गोविन्द, हे गोपाल राखो शरण

□ **दुर्गाप्रसाद मंडेलिया**

सूरदासजी का यह भजन 'हे गोविन्द, हे गोपाल राखो शरण' काफी प्रसिद्ध है। यह एक पौराणिक कथा पर आधारित है जिसमें एक हाथियों का मुखिया नदी में पानी पीने गया और वहां एक ग्राह ने उसको पकड़ लिया। हाथी और ग्राह में काफी देर तक लड़ाई हुई, पर जब हाथी नदी में डूबने लगा और केवल उसकी सूंड का अग्रिम भाग बाकी बचा तब उसने भगवान को सहायता के लिए पुकारा, जिससे उसका उद्धार हुआ।

कोई प्राणी संकट से बचने के लिए अपने सब प्रयासों में विफल हो जाता है तब पूर्ण श्रद्धा से भगवान को याद करने से उसका संकट दूर हो जाता है। द्रौपदी ने भी महान संकट के समय में इसी अमोघ अस्त्र का प्रयोग किया था। गजेन्द्र मोक्ष और द्रौपदी चीर-हरण की कथा हजारों वर्ष पहले की है परन्तु इसका अर्थ यह नहीं है कि इसके बाद ऐसी घटनायें फिर नहीं हुईं। बात यह है कि उस जमाने में भारतवर्ष की जनसंख्या बहुत कम थी और लिखने-पढ़ने की प्रथा चालू ही नहीं हुई थी। अतः जो भी इस तरह की घटना होती थी उसका मौखिक प्रचार होता रहता था और वंश प्रतिवंश वह कथा के रूप में हर पीढ़ी प्रति पीढ़ी चलती आ रही है। आज भी ऐसी घटनाएं रोज होती हैं परन्तु जिनको इनका अनुभव होता है उसकी चर्चा नहीं होती है और इसका प्रचार भी नहीं होता है। मेरी मान्यता है, और मान्यता ही नहीं अनुभव भी है कि प्रत्येक व्यक्ति जो भगवान में आस्था रखता है, अपने जीवन में इस प्रकार की घटना का अवश्य ही अनुभव करता रहता है।

इस कथा का एक पहलू दार्शनिक भी है। कथा की शुरूआत होती है :

**''नीर पीवन हेतु गयो सिंधु के किनारे,**
**सिंधु बीच बसत ग्राह चरण धर पछाड़े'**

साधारण अर्थ में तो वह हाथी पानी पीने के लिए नदी के किनारे गया परन्तु दार्शनिक रूप में यहां नदी का अर्थ यह संसार लेना चाहिये। मनुष्य को जीवन धारण के लिए भोजन और जल आवश्यक है और उसका जुगाड़ बिठाने के लिए सांसारिक कार्यों में लिप्त होने के कारण काम, क्रोध, मद, मोह, लोभ रूपी ''ग्राह'' की जकड़ में आ जाता है, और वह इनमें इतना फंस जाता है कि यह सारी मनोवृत्तियां उसके ऊपर हावी हो जाती हैं।

फिर :

**"चार प्रहर युद्ध भयो ले गयो मझधारे**
**नाक कान डूबन लागे, कृष्ण को पुकारे"**

इस जकड़ से छुटकारा पाने के लिये वह बहुत प्रयत्न करता है परन्तु उसे सफलता नहीं मिलती है। उल्टे जकड़ और भी मजबूत हो जाती है। तब वह हार कर भगवान का सहारा लेता है और पुकार उठता है :

**"हे गोविन्द, हे गोपाल,**
**राखो शरण अब तो जीवन हारे।"**

हे भगवान अब तो तुम्हारा ही एक आसरा है, मैं तो पूर्ण-रूप से हार गया। और तब :

**"द्वारका में शब्द भयो, शोर भयो भारे**
**शंख चक्र गदा पद्म गरुड़ ले सिधारे"**

द्वारका में भगवान कृष्ण निवास करते थे। परन्तु जब यह पद लिखा गया था तब द्वारका जल मग्न हो गई थी। श्रीकृष्ण भी इसके बहुत पहले विष्णुलोक चले गये थे। अतः यहां द्वारका का अर्थ मनुष्य का हृदय मानना चाहिये जहां भगवान सर्वदा निवास करते हैं और जब आर्त हृदय से श्रद्धापूर्वक निर्बल होकर भगवान से प्रार्थना की जाती है तो बड़े जोर से अंतःस्थल में विराजित भगवान के पास पहुंचती है। जोर शोर दो प्रकार के होते हैं। एक तो वह जो कानों से सुनाई देता है परन्तु कानों से सुनाई देने की शक्ति मर्यादित होती है जो बहुत ऊंची ध्वनि को नहीं सुन पाते हैं परन्तु वह ऊंची ध्वनि इतनी शक्तिशाली होती है कि वह किसी भी गहराई तक पहुंच जाती है। तब उसे अपने हृदय में स्थित भगवान का सान्निध्य अनुभव होता है कि भगवान, शंख, चक्र, गदा, पद्म से सुशो बताये गये हैं और उनके साथ गरुड़ भी यह क्यों? चक्र उसके क्रोध और लो विनाश करता है, गरुड़ उसके विषरूपी माया को खा जाता है और गदा उसके को चूर कर देती है। शंख धुनि से खोया मनोबल और उत्साह प्राप्त हो जाता है तदुपरान्त मनुष्य पद्म के पुष्प की तरह स्वच्छ और दोषरहित हो जाता है।

अंत में सूरदास कहते हैं –

**"सूर कहे श्याम सुनो,**
**शरण है तिहारे**
**अबकी बार पार करो**
**नंद के दुलारे।"**

हे नंद के दुलारे कृष्ण, इस बार तुम इन दुर्गुणों से मुक्त कर अपनी शरण में

भगवान कहते हैं :

**काम एष क्रोध एष रजोगुणसमुद्**
**महाशनो महापाप्मा विद्धयेनमिह**
**वैरिणम् (गीता ३/**

रजोगुण से उत्पन्न हुआ यह काम क्रोध है यह (ही) महा अशन अर्थात् अ सदृश भोगों से न तृप्त होनेवाला बड़ा इस विषय में इसको (ही) (तू) बैरी ज

गजेन्द्र मोक्ष की कथा में हाथी का बै था। परन्तु भगवान कहते हैं कि मनु बैरी, काम और क्रोध रूपी महा पाप

फिर भगवान कहते हैं :

**धूमेनाव्रियते वह्निर्यथादर्शो मले**

**यथोल्बेनावृतो गर्भस्तथा**
**तेनेदमावृतम् ।। (गीता ३/३८)**

जैसे धुएं से अग्नि और मल से दर्पण ढका जाता है (तथा) जैसे जेर से गर्भ ढका हुआ है वैसे ही उस काम के द्वारा यह (ज्ञान) ढका हुआ है।

**आवृतं ज्ञानमेतेन ज्ञानिनो नित्यवैरिणा ।**
**कामरूपेण कौन्तेय दुष्पूरेणानलेन च ।।**
**(गीता ३/३९)**

और हे अर्जुन इस अग्नि (सदृश) न पूर्ण होनेवाले कामरूप ज्ञानियों के नित्य बैरी से ज्ञान ढका हुआ है।

**इन्द्रियाणि मनो**
**बुद्धिरस्याधिष्ठानमुच्यते ।**
**एतैर्विमोहयत्येष ज्ञानमावृत्य देहिनम् ।।**
**(गीता ३/४०)**

इन्द्रियां मन (और) बुद्धि इसके वासस्थान कहे जाते हैं (और) यह (काम) इन (मन, बुद्धि और इन्द्रियों) द्वारा ही ज्ञान को आच्छादित करके (इस) जीवात्मा को मोहित करता है।

परन्तु इन्द्रियों पर विजय पाना साधारण मनुष्य की शक्ति के परे हैं। यह बैरी अत्यन्त बलवान हैं और जिस तरह ग्राह ने गजराज को चार प्रहर यानी बारह घंटा के भीषण युद्ध के बाद हरा दिया और तब गजराज ने भगवान को पुकारा उसी प्रकार अन्त में हारकर मनुष्य को भगवान का ही सहारा लेना पड़ता है। इसके बिना छुटकारा पाने का और कोई उपाय नहीं। भगवान के शरणागत होने पर फिर प्राणी को अपने लिये कुछ नहीं करना पड़ता फिर उसका सारा भार भगवान अपने सिर पर ले लेते हैं।

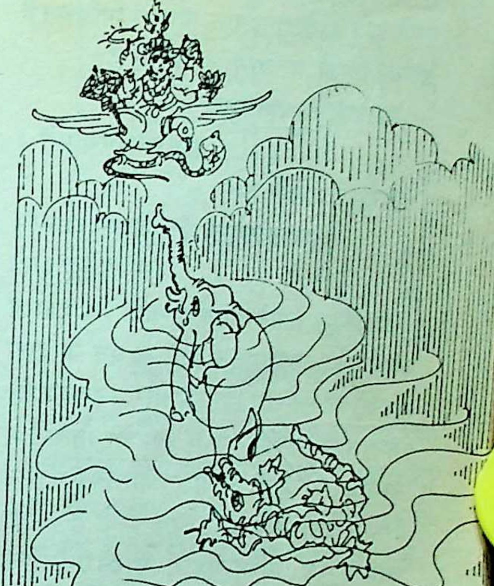

भगवान कहते हैं :

**अनन्याश्चिन्तयन्तो मां ये जना :**
**पर्युपासते ।**
**तेषां नित्याभियुक्तानां योगक्षेमं**
**वहाम्यहम् ।। (गीता ९/२२)**

जो अनन्यभाव से मेरे में स्थित हुए भक्तजन मुझ परमेश्वर को निरन्तर चिन्तन करते हुए निष्काम भाव से भजते हैं उन नित्य एकीभाव से मेरे में स्थितिवाले पुरुषों का योगक्षेम मैं स्वयम् वहन कर लेता हूं।

यदि गजेन्द्र कृष्ण के शरणागत नहीं होता तो ग्राह द्वारा उसका विनाश निश्चित था। उसी प्रकार यदि मनुष्य भगवान का शरणागत नहीं होता है तो काम और क्रोध

रूपी शत्रुओं द्वारा उसका विनाश निश्चित है इसकी क्रिया भगवान यों बताते हैं :

**ध्यायतो विषयान्पुंसः**
**संगस्तेषूपजायते ।**
**सगात्संजायते कामः**
**कामात्क्रोधोऽभिजायते ।।२।।**
**(गीता २/६२)**

हे अर्जुन ! मनसहित इन्द्रियों को वश में करके मेरे परायण न होने से मन के द्वारा विषयों का चिन्तन होता है और – विषयों का चिन्तन करनेवाले पुरुष की उन विषयों में आसक्ति हो जाती है (और) आसक्ति से (उन विषयों की) कामना उत्पन्न होती है (और) कामना (में विघ्न पड़ने) से क्रोध उत्पन्न होता है।

**क्रोधाद्भवति संमोहः**
**संमोहात्स्मृतिविभ्रमः।**
**समृतिभ्रंशाद्बुद्धिनाशो**
**बुद्धिनाशात्प्रणश्यति ।।**

क्रोध से अविवेक अर्थात् मूढ़भाव उत्पन्न होता है (और) अविवेक से स्मरणशक्ति भ्रमित हो जाती है (और) स्मृति के भ्रमित हो जाने से बुद्धि अर्थात् ज्ञान शक्ति का नाश हो जाता है (और) बुद्धि के नाश होने से (यह पुरुष) अपने श्रेय साधन से गिर जाता है

शरणागत होने का अर्थ निष्कर्मण्य हो बैठने का नहीं है। सबसे बड़े शरणागत श्री अन्जनेय हुए हैं जिन्होंने बड़े से बड़े कठिन से कठिन काम किये। "काज किये देवन के" परन्तु शरणागत के सब विवेकपूर्ण होते हैं। विवेक कहते हैं भले की पहचान करने की शक्ति को और शक्ति अज्ञान का नाश होकर ज्ञान के होने से प्राप्त होती है। भगवान शरणागत अज्ञान का नाश कर देते हैं और अंत:स्थल में ज्ञान का दीप जला देते हैं।

**तेषामेवानुकम्पार्थमहमज्ञानजं तमः।**
**नाशयाम्यात्मभावस्थो ज्ञानदीपेन**
**भास्वता ।।११।। (गीता १०/**

हे अर्जुन - उनके (ऊपर) अनुग्रह कर लिये ही मैं स्वयं (उनके) अन्त:करण एकीभाव से स्थित हुआ अज्ञान से उत्पन्न अन्धकार को प्रकाशमय तत्वज्ञानरूप द्वारा नष्ट करता हूं।

**–शुभमू**
**अमृता शेरगिल**
**नयी दिल्ली ११०**

□

'मेरी आय का बहुत बड़ा भाग तो विज्ञापनों में ही खर्च हो जाता है।'
लेकिन मैंने तो कभी आपको किसी चीज का विज्ञापन कहीं देखा नहीं ?'
'यह सही है, लेकिन मेरी पत्नी औरों के विज्ञापन जो पढ़ा करती है।'

— * —

## दाम्पत्य सुख

# जीवन-सौरभ

☐ **डॉ. के. एन. अवस्थी**

चित्र : विनोद दुबे

किसी ने ठीक ही कहा है – 'जीवन एक पुष्प है, और प्रेम उसका सौरभ।' प्रसिद्ध विद्वान दार्शनिक महात्मा टाल्सटाय के विचार में 'प्रेम ही ईश्वर है और ईश्वर ही प्रेम।' अर्थात् ईश्वर ही सदा प्रेमस्वरूप है। जहां प्रेम है वहीं ईश्वर है। अपने दैनिक जीवन में हमें इस कथन की सत्यता प्रत्यक्ष रूप में देखने को मिलती है। प्रेम के अभाव में हमारा जीवन सूना और नीरस लगता है और जहां प्रेम के दर्शन होते हैं वहां जीवन रसपूर्ण, आनंदमय और खुशियों से भर जाता है। ऐसा क्यों है कि हम सभी उसी फूल को अधिक पसन्द करते हैं, जिसमें सुवासित सुगंध की मादकता होती है। इसके विपरीत, यदि किसी पुष्प में मनभावनी सुवास न हुई तो हम उसकी अधिक चाह नहीं करते, उसकी कद्र नहीं करते और बार बार ओठों तक ले जाकर उसे सूंघते भी नहीं। बहुत से लोग उसे गुलदस्ते में सजाकर कमरे में रखना भी पसन्द नहीं करते। मेरे विचार से ठीक ऐसी ही दशा हमारे दाम्पत्य-जीवन की है। यदि पति-पत्नी के हृदय में एक दूसरे के लिए प्रेमपूर्ण भावना न हुई तो जीवन दूभर हो जाता है, नीरस बन जाता है और आपसी प्रेम के अभाव में एक दिन टूट कर बिखर जाता है। इस प्रकार हमारा जीवन सौरभ-विहीन गंधरहित व सदा के लिए दुखदायी बन जाता है।

एक अंगरेज़ी कहावत के अनुसार 'अपना प्रेम देकर ही दूसरे का प्रेम पाया जा सकता है।' अर्थात प्रेम पाने के लिए प्रेम देना आवश्यक है। अतएव, दाम्पत्य जीवन आरम्भ करने से पहिले यदि नवदम्पति इस मंगल-सूत्र को धारण कर लें और आपसी सदव्यवहार द्वारा अपने दैनिक जीवन में चरितार्थ कर दिखावें तो मेरा विश्वास है कि उनका विवाहित जीवन सदा सुखी और आनन्दित रहेगा, कारण कि पति और चिर जीवन-संगिनी (पत्नी) वास्तव में एक दूसरे के पूरक हैं और इस लम्बी जीवन-यात्रा में दोनों का एक शरीर रूप में प्राणवंत समान होना नितान्त आवश्यक है। और यह कार्य

प्रेम के अभाव में होना असम्भव है। इस प्रकार सुखी और प्रेममय जीवन बिताने के लिए हमें साधारंण धरातल से ऊपर उठना होगा तभी हम जीवन का वास्तविक सुख भोग सकेंगे। इस गीत के आदर्श-अनुरूप –

**लो प्रीति की जीत हुई साजन,**
**जो बिछुड़े थे वे मिल जायें,**
**तू–तू न रहे, मैं-मैं न रहूं,**
**कुछ ऐसे हम घुलमिल जायें!**

इस आधार पर, सुखी जीवन बिताने के लिए यह आवश्यक है कि पति-पत्नी दोनों एक दूसरे के स्वभाव, व्यक्तिगत गुणों, विचारों इच्छाओं तथा भावनाओं का समुचित आदर करें तथा विवाहोपरान्त इसी आधार पर एक दूसरे को समझते हुए उसके अनुरूप बनने का प्रयत्न करें। इस प्रकार दोनों प्राणियों में आपसी सद्भावना व पारस्परिक प्रेम प्रकट हो सकता है और दाम्पत्य जीवन का सच्चा सुख व आनन्द उठाया जा सकता है। एक लम्बी जीवन यात्रा पार करने के लिए दोनों प्राणियों में ऐसा सामंजस्य होना अति आवश्यक है जिससे प्रेरित होकर, वे एक दूसरे के लिए बड़े से बड़ा त्याग व समर्पण करने को सदा तत्पर रहें। दाम्पत्य जीवन को सुखी बनाने की यह एक सफल और व्यावहारिक कुंजी है, इसमें सन्देह नहीं।

इस प्रकार जीवन को सौरभपूर्ण बनाने के लिए हमें नारी को सहधर्मिणी व जीवन संगिनी स्वीकार करते हुए, नवीन परिस्थितियों से समझौता करना आवश्यक होगा। अर्थात् पुरुषवर्ग को अपने अहंभाव को त्यागना पड़ेगा और कालान्तर से चली आ रही पत्नी पर शासन करने की प्रवृत्ति दूर करनी होगी, कारण कि अधिकार की भावना में प्रेम पल्लवित नहीं होता। अतएव हमें पुरानी परम्पराओं को त्यागते हुए, अपनी पत्नी के प्रति अधिक से अधिक ध्यान देना होगा, उसके गुण-दोषों को सराहते व नकारते हुए उसे प्रेम, आदर व पारस्परिक सम्मान देना होगा तथा सहभोग्या के रूप में उसे समानता का स्थान देना आवश्यक होगा। केवल नारी के बाहरी स्वरूप व सौन्दर्य के प्रति आकर्षित होने से काम नहीं चलेगा। हमें उसके हृदय की सुन्दरता, उसके नारीत्व व मातृत्व की भावना तथा उसकी नारी-आत्मा से प्यार करना होगा तभी सत शिवं सुन्दरम् के दर्शन होंगे तथा पति-पत्नी में एक दूसरे के लिए सच्ची आत्मीयता व प्रे की भावना उदय होगी।

याद रखिये, गृहस्थ जीवन में नारी की अवहेलना, उसका अपमान व तिरस्कार ही अधिकतर मनमुटाव का कारण बनता है जिसके फलस्वरूप अनेक घर-परिव बरबाद अथवा उजड़ते हुए देखने को मिल हैं। आजकल के दाम्पत्य जीवन की झलकियां दूरदर्शन से प्रसारित नाट फ़िल्मों तथा मासिक पत्रिकाओं की कहानि में देखने को मिलती हैं। इस प्रकार जीव बरबाद होने का मुख्य कारण है आप मनोमालिन्य, पति-पत्नी में सच्चे प्रेम

अभाव होना, एक दूसरे की इच्छाओं तथा विचारों के प्रति उदासीन रहना, क्षणिक भावावेश में आकर एक दूसरे की कोमल भावनाओं को ठेस पहुँचाना तथा एक दूसरे के प्रति अनुराग व आदर की भावनाओं का सर्वथा लोप होना। परिणामस्वरूप, अपने उत्तरदायित्व का भलीप्रकार निर्वाह न कर सकने के कारण दोनों का भविष्य जीवन सुखी होने के बजाय अंधकारपूर्ण बन जाता है और आजकल के ज़माने में सम्बन्ध-विच्छेद तक की नौबत पहुँच जाती है। परिस्थिति कुछ ऐसी बन जातीं है कि –

**न मैं अब वर से हिलता हूँ,**
**न वह अब वर से हिलते हैं,**
**हकीकत में न मिलने का मज़ा,**
**दोनों को मिलता है**!'

आधुनिक ज़माने के बदलते हुए परिवेश में नयी मान्यताओं को अंगीकार करते हुए, हमें यह न भूलना चाहिये कि भारतीय संस्कृति व सभ्यता के अनुसार, विशेषतया हिन्दू समाज में अग्निदेव को साक्षी मानकर जिन वैदिक मंत्रों द्वारा पति-पत्नी आजीवन एक दूसरे के साथ प्रणय-सूत्र में बंधने की प्रतिज्ञा करते हैं वह एक प्रकार से 'शपथ ग्रहण समारोह' होता है, जिसे (Oath Taking Ceremony:) कहा जाता है, जिसका जीवन पर्यन्त निर्वाह करने का दोनों प्राणियों ने उपस्थित जन समूह के सन्मुख व्रत धारण किया होता है। फिर अपने जीवनकाल में इस प्रतिज्ञा से मुकर जाने का प्रश्न ही नहीं उठता। सच पूछिए तो दाम्पत्य जीवन सम्बन्धी संविधान की इस धारा में सुविधानुसार संशोधन किया जाना संभव नहीं है कारण कि इसका सम्बन्ध किसी दल-बदल राजनीति से नहीं अपितु जीवन पर्यन्त निर्वाह किये जानेवाली 'प्रणय–नीति' से है। ऐसी दशा में एक बार पुरुष की अर्धांगिनी बन जाने पर उसे पारस्परिक हित में, दाम्पत्य ज़ीवन को सुखी बनाने के लिए पति के अनुरूप ही चलना पड़ता है। अपने पतिदेव की घर-गृहस्थी की गाड़ी का दूसरा पहिया बन कर सच्चे अर्थों में पति की जीवन-सहचरी के रूप में, उसके स्वर में अपना सरगम मिलाते हुए जीवन संगीत का मधुरतम आनन्द उठाया जा सकता है। जीवन की सफलता का यह गूढ़ रहस्य है जिसे प्रत्येक सुयोग्य तथा शिक्षित नारी को भली प्रकार समझ लेना चाहिये।

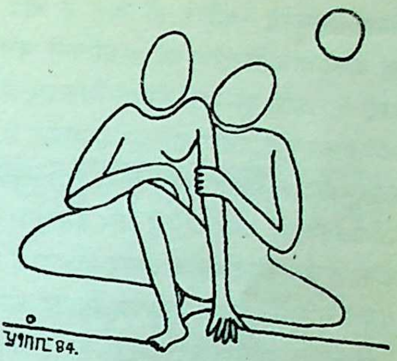

इस जीवन-सौरभ प्रकरण के सुगंधकोष को नारी-वर्ग को समर्पित करते हुए मैं उनसे भी खुले आम दो शब्द कहना चाहूंगा। भारतीय नारी को यह नहीं भूलना चाहिये कि

विवाह-सम्बन्ध स्थापित हो जाने के बाद, वह अपने विवाहित पति की 'अर्धांगिनी' बन जाती है। आज का नारी समाज जिस प्रकार स्वतंत्र रूप से जीवन निर्वाह करना चाहता है, पुरुष की अर्धांगिनी बन जाने पर वही रस्साकशी को जन्म देता है और इस प्रकार दोनों के जीवन पर घातक प्रभाव डालता है। ऐसी परिस्थिति में साधारण प्रेम-विवाद आगे चलकर सम्पूर्ण वैर-विवाद में ही बदल जाता है, जहां एक बार पहुंच कर वापस लौटने में दोनों ही अपनी मान हानि समझते हैं। वे ऐसे मुकाम पर जा पहुंचते हैं, जहां विपरीत दिशाओं में स्थापित दक्षिणी और उत्तरी ध्रुवों के बीच ऐसी किसी भूगोलिक समानान्तर-रेखा के दर्शन नहीं होते, जहां पहुंचकर दोनों के दिलों की दरार भर जाये। किसी शायर ने कितने सुन्दर शब्दों में इस मनोव्यथा का चित्रण किया है –

**इतनी दूर हैं हुजूर,**
**फिर कैसे मुलाक़ात हो?**
**कुछ तुम चलो, कुछ हम चलें,**
**तब दिल की दिल से बात हो!'**

यह एक गम्भीर समस्या है जिसका बुरा प्रभाव आजकल हमारे जीवन व समाज पर पड़ रहा है। तब यह प्रश्न उठना स्वाभाविक है कि आखिर इसका उपाय क्या है? मेरे विचार में इस प्रकार से असंन्तुष्ट जीवन को सुखी बनाने का केवल एक ही उपाय है। इस जटिल समस्या को व्यक्तिगत, पारिवारिक अथवा सामाजिक आधार पर नहीं सुलझाया जा सकता। इसे केवल राजनैतिक ढंग से ही हल किया जा सकता है। यदि अपने पारिवारिक जीवन में नारी को 'डोमिनियन स्टेटस' अर्थात स्वायत्त शासन का अधिका मिल जाये तो पति-पत्नी दोनों का जीवन स्तर सुधर सकता है। इस 'डोमिनियन स्टेटस' की दशा में, एक सर्वोच्च सत्ता के आधीन वे सभी सामाजिक तथा राजनीतिक अधिकार प्राप्त हो जाते हैं, जिनके द्वारा स्वतंत्र रूप से गृह-कार्य अथवा राज्य-कार्य संपादित किया जा सकता है।

किन्तु, शर्त यह है कि इस परमोपयोगी स्थिति को स्वीकारने के पहिले पति-पत्नी में उन सभी चारित्रिक गुणों का समावेश होना चाहिये जिनका वर्णन इस लेख में पहिले किया जा चुका है। इस निर्णय की सफलता के लिये पति के हृदय में अपनी प्रिय पत्नी के प्रति अपार प्रेम व आदर की भावना होना नितान्त आवश्यक है।

महान बलवती 'प्रेम-शक्ति' का सही ढं से प्रयोग करके पत्नी का अपने पति पर औ पति का अपनी पत्नी पर ही विजय नहीं पा जा सकती अपितु सारे परिवार, पास-पड़ोस घर-आँगन तथा अपनी प्यारी ज़िन्दगी के उन तमाम खुशियों से भरा जा सकता जिसमें जीवन-सौरभ की मन मोहक सुगंध साथ उस ईश्वर के भी साक्षात दर्शन ह सकते हैं जिसका इस जीवन में प्रेम से घनि संबंध है!

**अगर कहीं है स्वर्ग, तो उतार ला**
**ज़मीन पर!**

– प्रभू टाउन, रायबरेली, उ.प्र

अग

---

बहु

म

भ

उपल
डॉ. व
प्रगैति
विश्व
उन
गुफाएं
नदी व
गुफाअ
के ये
में ब
महाया
गुप्तक
ताम्रपत्र
का प्रा
एवं पां
गायक
घुड़सव
हैं। य
मार्ग से
बाघ में
१९९०

बहुमूल्य धरोहर

# मालवा की सांस्कृतिक संपदा

□ **डॉ. प्रभाकर माचवे**

भीम बेटका के गुहा शैल चित्र मालवा अंचल की एक बहुत बड़ी उपलब्धि हैं। उनका आविष्कार स्वर्गीय डॉ.वाकणकर ने किया। वे चित्र प्रगैतिहासिक काल की आदिवासी कला के, विश्वविख्यात प्राचीनतम नमूने हैं।

उनके बाद कालक्रमानुसार आती हैं बाघ गुफाएं। बिंध्याचल की शृंखला में बसे बाघ नदी के किनारे बाघ ग्राम के निकट इन नौ गुफाओं की स्थिति बहुत ही खराब है। वहां के ये भित्ति-चित्र पांचवीं या छठीं ईस्वी सदी में बनाये गये होंगे, ऐसा अनुमान है। महायान शाखा के बौद्ध चित्रकारों ने उत्तर गुप्तकाल में इन्हें अंकित किया। सुबंधु के ताम्रपत्र से यह पता लगता है कि इन गुफाओं का प्राचीन नाम बाघ-विहार था। गुफा चार एवं पांच में बुद्ध, बोधिसत्व, राजपरिवार, गायक-गायिकाओं, नर्तकियों, सैनिकों, घुड़सवार और हाथी पर सवार पुरुषों के चित्र हैं। यक्ष, किन्नर गाते-बजाते आकाशीय मार्ग से विचरण करते हुए बड़े मनोहारी चित्र बाघ में हैं। ये अजंता के भित्तिचित्रों जैसे हैं।

तीन-चार सदियों के गुजरने के बाद परमार काल में मालवा की चित्रकला का भिन्न शैली में विकास हुआ। मध्य युग में मालवा का अधिकांश क्षेत्र ग़ोरी और खिलजी सुलतानों के अधीन आ गया। मांडवगढ़ उनकी राजधानी थी। मालवा का जीवन अस्थिर और संघर्षमय बीता। उत्तर परमार काल में जैन चित्रकला कल्पसूत्रों की कथाओं के अंकन के रूप में मिलती है। पैंथड़ शाह के वंशज भैंसा साह और गदा साह के महल का

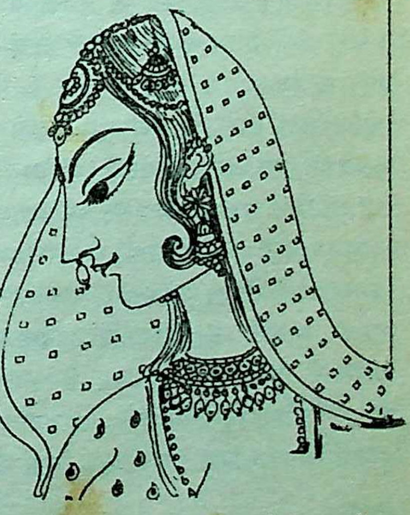

भग्नावशेष जहाज महल के सामने है। रंगीन बेलबूटे और भित्तिचित्रों के अवशेष उनके कलानुराग का प्रमाण जुटाते हैं। भवनों के गवाक्षों में भी आराइश की गयी है। मालवा की विशेष रंग-संयोजना उनमें मिलती है। होशंगशाह के समय सन १४१९ से १४९८ के बीच मांडव में रचित कल्पसूत्रों की पांडुलिपि में मालवी शैली के दर्शन होते हैं। राजपुरुषों और महर्षियों की आकृतियां, एक दूसरे को काटते हुए वृत्तों में नारी के रूप, वृषभ और गौओं का चित्रण, अश्वों के चित्रण में मेहराब-सी झुकी गर्दन और अनुपात से छोटे सिर जैन चित्रकला की विशेषताएँ हैं। इन चित्रों में लाल, नीले, हरे सुनहरी कीमती रंगों का प्रयोग बड़ी कुशलता से हुआ हैं।

मालवा की चित्रकला-शैली में परंपरागत लोकशैली, जैन शैली, फारस से आयी शीराज़ की तुर्कमान शैली आदि का सम्मिश्रण है। शेख सादी के बोस्तां पर १५०३ ई. में हेरात शैली के चित्र बनाये गये। बाज़बहादुर के समय १५५४ ई. में 'लोरिक चंदा' और 'चौर पंचशिका' पर चित्र बनाये गये, ऐसे उल्लेख मिलते हैं। संगीत की राग रागिनियों पर कई चित्र बने, जो बड़ौदा म्युजियम में हैं। 'रसिकप्रिया' के कुछ चित्र मालवा शैली में हैं। १६८० में माधवदास नामक मालवी चित्रकार ने रागमाला चित्रावली तैयार की। १६५२ में 'अमरु शतक' पर कुछ चित्र मिलते हैं। बारहमासा, कृष्णलीला, रामायण पर भी कई चित्रों की कृतियां मिलती हैं। नैशनल म्युजियम, दिल्ली, बंबई और बॉस्टन म्युजियम में वे चित्र पाये जाते हैं।

नरसिहगढ़ में कुछ मध्ययुगीन भित्तिचित्र पाये गये। मंदिरों की दीवारों पर और गुंब के भीतर ये चित्र मिले हैं। कालीतलां मंदिर, कुंवरानी मंदिर, श्यामजी मंदिर में ये चित्र मिलते हैं। चांपा मंदिर में कृष्णलीला, लंकादहन, घुड़सवारी विष्णु के दशावतारों से संबंधित अनेक चित्र हैं। कुंवरानी मंदिर में शिव परिवार, शेषशायी विष्णु और रामपंचायतन मिलते हैं। सत्रहवीं शती के अंत तक मालवा की कलाशैली फिर विलुप्त हो जाती सी लगती है। डॉ. रघुबीर सिंह के अनुसार 'मुगल सम्राट राजपूत मनसबदारों को जागीरें देने लगे, तब फिर चित्रकला को दरबारी आश्रय मिला।' अठहरवीं शती में मालवा में मराठे आये। मराठा-राजपूत चित्रकला शैली मुगल शैली से मिश्रित हो गयी। उज्जैन, मंदसौर, इंदौर में ऐ भित्तिचित्र और पोथियों के चित्र अनुसंधान का विषय रहे हैं। डॉ. दुर्गा शर्मा ने इस मराठ भित्तिचित्र शैली पर पी.एच.डी. प्रबंध लि है। श्रीकृष्ण जोशी, श्यामसुंदर निगम, सु आर्य, झाला, भावसार, विष्णु भटनागर ने कालखंडों की चित्रकला पर अपने लेखों प्रकाश डाला है। देवास के चित्रकार अफ़ ने चरणदास के मंदिर के भित्तिचित्रों व्यापक अध्ययन किया। कई हवेलियां मंदिरों के चित्र अब नष्ट हो चुके हैं। अ

अग

मंदसौर जिले की हवेलियों के १३ कक्षों में ५०० भित्तिचित्र थे। सिरोही का प्राच्य शोध संस्थान, उज्जैन में सं. १८६५ में रचित 'कल्पसूत्र' और 'मधुमालती' की सचित्र पोथियां हैं।

बीसवीं सदी में पश्चिम की चित्रकला का प्रभाव बंबई स्कूल आफ आर्ट पर पड़ा। उसी की एक शाखा डी.डी. देवलालीकर ने इंदौर में स्थापित की। उसी इंदौर स्कूल ऑफ आर्ट्स से नारायण श्रीधर सोलेगांवकर, मनोहर जोशी, देवकृष्ण जोशी, मक़बूल फ़िदा हुसैन जैसे चित्रकार आगे आये, जिन्हें सारा हिंदुस्तान जानता है। लक्ष्मण सिह राजपूत ग्वालियर में कार्य करते रहे और भी कई चित्रकार मालवे के बाहर जाकर विदेश तक में प्रसिद्ध हुए, जैसे भावसार और रज़ा आदि। संप्रति, इंदौर के विष्णु चिंचालकर गुरुजी ने चित्रकला के संस्कार बच्चों तक पहुंचाने का बड़ा कार्य किया। उनके लकड़ी के कोलाज भी बड़े सुंदर हैं। मालवे में श्रेणिक जैन, रामजी वर्मा जैसे पुराने चित्रकार तो हैं ही। और भी अनेक उभरते नये कलाकार हैं। उन सब पर एक-एक अलग लेख लिखना होगा। हमने उनमें से कई लोगों का काम देखा है और बहुत प्रभावित हुए हैं। मिर्ज़ा इस्माइल बेग, रंजना पोहनकर, शंकर शिंदे, सफ़दर,अखिलेश वर्मा आदि अनेक नाम याद आ रहे हैं। भारत भवन भोपाल ने आदिवासी कला की एक स्थायी दीर्घा स्थापित की है। मालवा की अपनी चित्रकला परंपरा है और उसे बराबर आगे बढ़ाते रहने के और प्रयत्न होने चाहिये। उसकी शिक्षा की समुचित व्यवस्था विकसित होनी चाहिये। बीसवीं सदी के अंत तक मालवा की चित्रकला अपनी बाघ गुफा के प्राचीन श्रेष्ठत्व तक पहुंचेगी, ऐसी आशा है। यदि सार्वजनिक इमारतों और नये उद्योगपतियों के प्रासादों में उस चित्रकला को समुचित प्रश्रय मिले। आज तो सिर्फ भद्दे, फूहड़, वर्णाढ्य सिनेमा के पोस्टरों और नेताओं की विद्रूप शबीहों से चौराहे और सड़कें दूषित हैं। जनता की रुचि का विकास तभी होगा, जब चित्रकला को सस्ती व्यावसायिकता से उंबारा जायेगा। पत्र-पत्रिकाओं को भी इस ओर अधिक ध्यान देना चाहिये। जो अभी नहीं है। मालवा में अच्छे कला समीक्षक नहीं हैं।

— ७३, वल्लभ नगर,
इंदौर,म.प्र.

□

अत्यन्त प्राचीन है

# राष्ट्रीय पर्व – 'रक्षाबन्धन'

□ योगेश चन्द्र शर्मा

रक्षाबन्धन का पुनीत पर्व कब से प्रारम्भ हुआ, निश्चितत: कुछ कहना कठिन है। मगर, यह सर्वमान्य सत्य है कि इसकी मूल भावना हमारे यहां अत्यन्त प्राचीन काल से चली आ रही है। पौराणिक कथा के अनुसार भगवान विष्णु के वामनावतार'ने भी राजा बलि के रक्षा सूत्र बांधा था और उसके उपरान्त ही उन्हें पाताल जाने का आदेश दिया था। आज भी रक्षाबन्धन के समय जो मन्त्र पढ़ा जाता है, उसमें इसी घटना का जिक्र होता है –

**येन बद्धो बली राजा, दानवेन्द्रो महाबलः।**
**तेन त्वामनुबध्नामि, रक्षे मा चल मा चल।।**

अर्थात् यह वही रक्षा सूत्र है, जिससे महाबलवान राक्षसों के राजा बलि बांधे गए। रक्षा सूत्र, तुम चल विचल मत हो। प्रतिष्ठित बने रहो।

प्राचीन भारत में ऋषि महर्षि सामान्यत: श्रावण से कार्तिक तक के चार महीनों में भ्रमण नहीं किया करते थे। इस अवधि में वे किसी एक ही स्थान पर रुककर प्रवचन अथवा यज्ञादि किया करते थे। यज्ञ में सम्मिलित होने वाले व्यक्तियों के हाथों में अक्सर चिन्ह् के रूप में यज्ञ-सूत्र बांध दिया जाता था। यही यज्ञ-सूत्र आगे चलकर रक्षा-सूत्र के रूप में प्रयुक्त किया जाने लगा। रक्षा-सूत्र का अर्थ है रक्षा की व्यवस्था। जिस व्यक्ति के रक्षा-सूत्र बांधा जाता है, उसकी रक्षा की भावना ही रक्षा-सूत्र में निहित है। यज्ञ-सूत्र में भी, सांसारिक संकटों से रक्षा की यह भावना निहित थी। आज भी यज्ञादि में रक्षा-सूत्र बांधने की परंपरा है, जिसे साधारणत: 'मौली' भी कहा जाता है। तान्त्रिक साधना में भी गुरुजन अपने शिष्यों के इसी प्रकार के रक्षासूत्र बांधते हैं, जिसका उद्देश्य होता है अनिष्टकारी भूतप्रेतादि के आक्रमण से रक्षा। साधारण कथावाचन और पूजन आदि में भी रक्षासूत्र बांधने की प्रथा है।

रक्षासूत्र के संदर्भ, में, महाभारत में एक कथा का उल्लेख है। इस कथा के अनुसार, एक समय देवताओं और राक्षसों में भयानक युद्ध हुआ, जो लम्बे समय तक चला। इस युद्ध में राक्षस विजयी हो रहे थे और देवता

पराजित। यह आशंका होने लगी थी कि राक्षस देवताओं से इन्द्रासन और इन्द्रलोक छीन लेंगे। इस पर इन्द्राणी भयभीत होकर अत्यन्त दयनीय स्थिति में देवताओं के गुरु बृहस्पति के पास पहुंची और उनसे समस्या का समाधान पूछा। गुरु बृहस्पति ने उपाय बतलाया कि श्रावण शुक्ला पूर्णिमा को इन्द्राणी, इन्द्र को तिलक लगाये और उसकी दाहिनी भुजा पर वेदज्ञ ऋषियों से अभिमंत्रित रक्षासूत्र बांध दे। ऐसा होने पर, गुरु बृहस्पति ने इन्द्राणी को देवताओं की विजय का आश्वासन दिया। इन्द्राणी ने ऐसा किया भी। इससे इन्द्र को असाधारण शक्ति प्राप्त हुई। युद्ध का पासा पलटने लगा और विजयश्री ने देवताओं का वरण किया। यह कथा श्रीकृष्ण ने युधिष्ठिर को उस समय सुनायी, जब पांडव अत्यन्त संकटग्रस्त थे। युधिष्ठिर ने भी इसी साधन को अपनाया और सफलता प्राप्त की। इसी रक्षाबन्धन से आगे चलकर महाराज रघु चक्रवर्ती सम्राट बने और यम देव ने संकटों पर विजय प्राप्त की।

यह पौराणिक घटना एक ओर जहां रक्षाबन्धन के स्वरूप को प्रकट करती है वहां दूसरी ओर हमारे प्राचीन समाज में महिलाओं की प्रतिष्ठा और उनके विशिष्ठ स्थान को भी उजागर करती है। महिलाएं शक्ति की प्रेरक स्रोत मानी जाती रही हैं। उन्हीं महिलाओं के द्वारा किया गया रक्षाबन्धन स्पष्ट ही पुरुषों में शक्ति का संचार करता है और उन्हें सफलता की तरफ आगे बढ़ाता है।

रक्षाबन्धन का पुनीत पर्व श्रावण शुक्ला पूर्णिमा को मनाया जाता है। पौराणिक व्यवस्था के अनुसार रक्षाबन्धन में अक्षत, सरसों, सुवर्ण, कपास या रेशम का सूत और वस्त्र भी सम्मिलित हैं। इस दिन अपराह्न में रक्षा सूत्र का पूजन करने और उसके उपरान्त रक्षाबन्धन का विधान है। यह रक्षाबन्धन राजा के पुरोहित द्वारा, यजमान के ब्राम्हण द्वारा, भाई के बहिन द्वारा और पति के पत्नी द्वारा दाहिनी कलाई पर सम्पन्न होता है। संस्कृत की निम्नांकित उक्ति के अनुसार, जिस व्यक्ति के रक्षासूत्र बांधा जाता है, वह वर्ष भर प्रसन्न रहता है –

**अनेन विधिना यस्तु रक्षाबन्धन माचरेत।**
**स सर्वदोषरहितः सुखी संवत्सरं भवेत्।।**

अर्थात् इस प्रकार विधिपूर्वक, जिसके रक्षाबन्धन किया जाता है, वह सम्पूर्ण दोषों से दूर रहकर सम्पूर्ण वर्ष सुखी रहता है।

रक्षाबन्धन में मूलतः दो भावनाएं काम करती रही हैं। प्रथम, जिस व्यक्ति के रक्षाबंधन किया जाता है, उसकी कल्याण कामना और दूसरे, रक्षाबन्धन करने वाले की

उसके प्रति स्नेहभावना। इस प्रकार रक्षाबन्धन वास्तव में स्नेह, अपनत्व, शान्ति और रक्षा का बन्धन है। इसमें सबके सुख और कल्याण की भावना है। "सर्वे सुखिनः भवन्तु सर्वे सन्तु निरामयः" वाली भारतीय संस्कृति इसमें पूर्णतः मुखरित है।

सांस्कृतिक परम्पराओं में समयानुकूल यत्किंचित परिवर्तन आना सहज स्वाभाविक है। रक्षाबन्धन के स्वरूप में भी कुछ परिवर्तन आया है। रक्षाबन्धन की आकृति अब केवल एक सरल धागे के रूप में ही नहीं रही। उसकी आकृति अब काफी कलात्मक होती जा रही है। फिर भी रक्षाबन्धन के पीछे 'रक्षा' की मूल भावना यथावत बनी हुई है।

मध्यकाल में रक्षा की इस भावना का दोहरा अर्थ माना जाने लगा। प्रथम, जिस व्यक्ति के रक्षाबन्धन किया जाय, उसकी कल्याण कामना और दूसरे रक्षाबन्धन करने या रक्षासूत्र भेजने वाले की सहायता। मुगल शासन काल में अनेक महिलाओं ने आक्रमणकारियों से बचने के लिए, बहादुर व्यक्तियों को रक्षासूत्र भेजे और उन व्यक्तियों ने बिना किसी प्रकार के धर्म या जाति का भेदभाव किये हुए, उन महिलाओं की रक्षा की। इनमें महारानी कर्णवती की घटना विशेष रूप से उल्लेखनीय है।

कर्णवती, चित्तौड़ की महारानी थी। गुजरात के बादशाह, बहादुरशाह ने चित्तौड़ पर आक्रमण कर दिया और किले का घेरा डालकर पड़ गया। उसकी विशाल सेना से टक्कर लेना चित्तौड़ के लिए सम्भव न था। ऐसी स्थिति में महारानी कर्णवती ने अपनी सहायता के लिए मुगल बादशा हुमायुं के पास राखी भेजी। हुमायुं ने राखी का पूरा सम्मान किया और महारानी कर्णवती को अपनी बहन मानकर उसकी सहायता के लि तत्काल चित्तौड़ पहुंच गया।

हुमायुं के बाद, अन्य बादशाह भी रक्षाबन्धन के महत्व को स्वीकारते रहे अ अपनी प्रजा के साथ उत्साह से इसको मन रहे। फलस्वरूप रक्षाबन्धन का उत्स साम्प्रदायिक सौहार्द का प्रतीक बन गया बादशाह शाह आलम सानी के दरबार रक्षाबन्धन के उत्सव को विशेष प्रति मिली। एक ब्राह्मण महिला रामकौर शाह आलम सानी ने अपनी बहिन के रूप सम्मानित किया। रक्षाबन्धन के दिन महलों में आती और सोने की घुंडी लगी स मोतियों की राखी बादशाह को बांधते बादशाह उसे बड़ी मात्रा में धन-दौलत दे विदा करता। अकबर शाह सानी रक्षाबन्धन के परम्परागत उत्सव को शौकत से मनाता रहा। रामकौर की बेटी उसको राखी बांधती और वह उसे ब जैसा स्नेह देता।

अन्तिम मुगल बादशाह बहादुरश जफर के शासनकाल में रक्षाबन्धन की शौकत और भी अधिक बढ़ गई। इस अव पर लाल किले में आठ दिन पहले से तैयारियां शुरू हो जातीं। झूले डाले ज

अग

---

तरह-त
सम्पूर्ण
से महत
महिला
उन्हें अ
पूर्वक स
उपहार
जयघोष

सिक
राष्ट्रीय
मिला।
भयानक
का हौस
पराजय
कि विश
सिकन्दर
हाथ न
यूनानी
आशय
बहिन म
प्राणों की
लाज बच
बार अव
नहीं लिये

हमारे
का विशे
अंग्रेजी स
करके, उ
का प्रयत्न

तरह-तरह के पकवान तैयार होते और सम्पूर्ण वातावरण विभिन्न प्रकार की सुगन्धों से महक उठता। रक्षाबन्धन के दिन हिन्दू महिलाएं बादशाह के राखी बांधतीं, ब्राह्मण उन्हें आशीर्वाद देते और सम्राट यह सब स्नेह पूर्वक स्वीकार करते हुए, उन्हें तरह-तरह के उपहार देते। सम्पूर्ण दरबार, सम्राट के जयघोष से गूंज उठता।

सिकन्दर के आक्रमण के समय हमारे इस राष्ट्रीय पर्व को अन्तर्राष्ट्रीयता का भी स्पर्श मिला। सिकन्दर और सम्राट पुरु के बीच भयानक युद्ध चल रहा था। सिकन्दर की सेना का हौसला पस्त हो रहा था और उसकी पराजय के आसार बढ़ रहे थे। आशंका थी कि विश्वविजय का स्वप्न देखने वाले सिकन्दर को कहीं इस युद्ध में अपने प्राणों से हाथ न धोना पड़े। ऐसी परिस्थिति में एक यूनानी महिला ने सम्राट पुरु के पास, इस आशय के साथ राखी भेजी कि वे उसे अपनी बहिन माने तथा हर हालत में सिकन्दर के प्राणों की रक्षा करें। इसके बाद, राखी की लाज बचाने के लिए ही सम्राट पुरु ने अनेक बार अवसर मिलने पर भी सिकन्दर के प्राण नहीं लिये।

हमारे राष्ट्रीय आन्दोलन में भी रक्षाबन्धन का विशेष योगदान रहा है। १९०५ में अंग्रेजी सरकार ने जब बंगाल का विभाजन करके, उसकी बढ़ती हुई राष्ट्रीयता को रोकने का प्रयत्न किया तो दोनों विभाजित क्षेत्रों की

जनता नें आपस में एक दूसरे के राखी बांधकर, अपनी एकता की दृढ़ भावना को व्यक्त किया और अंग्रेजों के फूट डालने वाले इरादों पर पानी फेर दिया। स्वदेशी आन्दोलन के समय भी सबको स्वदेशी सूत की राखी बांधने का आह्वान किया गया था।

आजकल रक्षाबन्धन मुख्यत: बहिनों के त्योहार के रूप में ही मनाया जाता है। यह पर्व कितने ही रूठे भाई बहिनों को आपस में मिला देता है। बहिनें इस दिन की प्रतीक्षा पूरे वर्ष पर्यन्त करती हैं और राखी के धागों में उनके हृदय की समस्त स्नेहसिक्त कोमंल भावनाएं साकार रूप हो उठती हैं। वे अपने भाइयों के उज्ज्वल भविष्य के लिए मंगल कामना करती हैं और किसी भी संकट के समय, अपनी सुरक्षा का उनसे आश्वासन पाती हैं। भारतीय संस्कृति के अनुसार स्त्री

**(शेषांश पृष्ठ ९३ पर)**

चिन्तन-मनन

# मृत्यु : जीवन का सुवर्ण-कलश

□ डॉ. मनु कोठारी/डॉ. लोपा मेह

मानव समाज में बालक का जन्म एक आनंद का प्रसंग होता है। हमारे देश में भी भले ही प्रति सेकंड एक बालक पैदा होता हो, किंतु जब खबर पड़ती है कि घर में नया बालक आनेवाला है तो सबको हर्ष होता है। दंपति तथा अन्य कुटुंबी जन उसको घर की जनसंख्या का सदस्य समझकर पुलकित होते हैं। मां बननेवाली का मान बढ़ जाता है। आनेवाले बालक पर कोई विपरीत असर न पड़े, इससे सभी लोग माता को फूल की भांति संभाल रखते हैं।

हर प्रकार की सावधानी रखकर सभी पूरी तरह की पूर्व तैयारी करके बालक के आगमन की राह देखते हैं।

लड़का पैदा हो तो पूछना ही क्या? अति उत्साहित कुटुंबी जन मिठाई बाँटते हैं।

और मृत्यु के समय में! तब तो उदासी का वातावरण पैदा हो जाता है। शोक एक स्वाभाविक भाव के रूप में स्वीकारा जाता है। परंतु मृत्यु के लिए मानव का अज्ञान अकल्पित है। मृत्यु जीवन का दूसरी सीमा का एक स्वाभाविक स्वरूप है, यह कोई सुनने को भी तैयार नहीं। इससे मृत्यु का आगमन चाहे जैसे हो, वह सदैव आघात-जनक बनती है। मृत्यु के समाचार के साथ भी अचान और 'असमय' ऐसे दो शब्द अचूक व्यव होते हैं।

प्रसूति के लिए प्रसव शब्द व्यवहार आता है। मृत्यु के लिए ऐसा कोई श इस्तेमाल नहीं होता। किंतु इस समाचार प्रचार के समय अशुभ की निशानी सा रहती ही है। पत्र द्वारा यदि समाचार दे आये तो उसके चारों किनारे काले कर दे तथा ऊपर 'अशुभ' लिखते हैं। ऐसे पत्र घर में कोई संग्रह नहीं करता। पढ़कर तु फाड़ डालने का रिवाज है। बहुत से ल मृत्यु का समाचार सुनकर स्नान कर लेते हैं सगे-संबंधियों के प्रत्युत्तर में सांत्वना संदेश ही होता है। यदि अखबार में वि जाता है तो दिवंगत व्यक्ति का बड़ा फ छपाते हैं तथा नीचे सभी के नाम के साथ भरा संदेश होता है एवं उस संदेश के च ओर काला बोर्डर होता है।

माता जब नौ महीने के अंत में बालक जन्म देती है तो उसके लिए कोई असमय अचानक शब्द का प्रयोग नहीं होता। स्मरणीय है कि जन्म भी उदर के भीतर महीने के निवास का अंत है। मृत्यु भी

प्रकार धरती पर के जीवन का अंत है। इस सीमा के साधने की मानव शरीर जीवन भर तैयारी करता है। हकीकत यह है कि प्रथम जन्म दिन से ही शरीर प्रत्येक क्षण मृत्यु के समीप पैर बढ़ाता रहता है। सारे प्रवास में भी शरीर का लक्ष्य मृत्यु बनता है। एक भी प्राकृतिक मृत्यु या अकस्मात हुई मृत्यु असमय अथवा अचानक नहीं होती।

हमारे समाज में भगवान के प्रति श्रद्धा सहज रहती है। उसको सर्वत्र ईश्वर की कृपा दिखायी देती है किंतु जब जन्म और मृत्यु की बात आती है, तब वे दोनों को ईश्वर के प्रसाद के रूप में समभाव से नहीं देख सकते। जन्म को मनाते हैं तथा मृत्यु की उपेक्षा करते हैं। मृत्यु के लिंए सहज नापसन्दगी विविध रूप से प्रदर्शित करते हैं। एकाध मृत्यु टिप्पणी पर यदि आप की नजर पड़ी हो तो भले ८५ वर्ष के नेता लंबी बीमारी भोगकर मृत्यु पाये हों, किंतु टिप्पणी में तो 'अकाल दुखदायक अवसान' शब्द ही प्रयोग में आते हैं।

मानव भगवान के साथ भी व्यापार करता है। उनके साथ करार करता है कि सिक्का सीधा पड़े तो मैं जीतूं और उल्टा पड़े तो तू हारे। मानव केंद्रित विचारसरणी ही मनुष्य को मृत्यु की अवहेलना करने को प्रेरित करती है। मानव जब भगवान की प्रार्थना करता है कि श्रीनाथजी प्रण पूरा करें, कि तिरुपति की मनौती मानें, तब वह भगवान को भी सोना चांदी या पैसे की भेंट की रिश्वत देकर अपना काम बना लेने की इच्छा रखता है। भविष्य के समाजशास्त्री भारतीय अध्ययन से निर्णय करेंगे कि प्रत्येक मनुष्य में रिश्वत लेने की वृत्ति की मात्रा कितनी है, उसे मापना हो तो उन्हें भगवान को जीवन भर कितनी रिश्वत देनी है, इसे जान लें। समाज में एक अनुच्चारित नियम है कि मानव हो कि भगवान, उनके पास से काम बनाना हो तो उसका एक ही रास्ता है, उनकी कीमत चुकाना। हिंदू, मुसलमान, क्रिश्चियन, पारसी या कोई भी धर्म लें – सभी में भगवान को सर्वज्ञ तथा सर्वशक्तिमान के रूप में स्वीकारने में आता है। परंतु मानव को जब अपने स्वार्थ की बात होती है तब भगवान अज्ञ बन जाता है, इसीसे सभी ऐसा ही समझते हैं कि भगवान के पास अरजी देनी पड़े तो ही भगवान को, किसे कौन-सी जरूरत है, यह खबर पड़ती है। इस व्यावहारिक बात को एक कदम आगे बढ़कर सोचें तो जन्म के लिए दयालु, सर्वज्ञ तथा सर्वशक्तिमान है। किंतु

मनुष्य की समझ के अनुसार रोग और मृत्यु के लिए ईश्वर दयाहीन, अज्ञ और अल्पशक्तिमान है। मृत्यु को ईश्वर की कृपादृष्टि के रूप में न स्वीकारने से रोग और मृत्यु से दूर भागने की वृत्ति सहज ही बनती है।

हम ब्रह्मा की सर्जक के रूप में प्रशंसा करते हैं, विष्णु की पालक के तौर पर पूजा करके प्रसन्न करते हैं, किंतु संहारक शंकर से घबराते हैं। पश्चिमी समाज की परिस्थिति इससे भिन्न नहीं। हमारी अज्ञात, विवेकशून्य, सीमित मानवकेंद्रित विचारसरणी हमें मृत्यु को समझने और स्वीकारने में बाधक बनती है। अग्रगण्य वैज्ञानिक भी इसमें अपवाद नहीं। १९७४ में क्लोड, डीडवे और पेलडे को कोश की अति सूक्ष्म रचना के संशोधन के लिए नोबेल पुरस्कार प्रदान किया गया। उन तीनों वैज्ञानिकों ने कोश की रचना तथा कोश के जन्म, पोषण और पुनरुद्धार के विविध स्वरूपों पर अध्ययन किया, किंतु वहीं कोश भगवान के तीसरे महत्व के कार्य संहार के लिए किस तरह मदद करता है, यह भी जानना चाहिये ऐसा विचार उन्हें सूझा नहीं।

हमारे शास्त्रों में ब्रह्मा, विष्णु तथा महेश त्रिमूर्ति की स्तुति करने में आती है। इस लेख में हम मृत्यु में भगवान के स्वरूप का दर्शन करवाने का प्रयत्न करेंगे, मृत्यु सदाचारी है। मृत्यु का सौजन्य सर्वत्र व्याप्त है। मृत्यु सौम्य है। दिव्य है। साक्षात करुणा और कृपा है। निष्पक्ष मृत्यु यमराज है। धर्मराज है। जन्म तथा मृत्यु रूपी जीवन के दो किनारों के पार जाते ब्रह्मांड का मधुर स्वर जन्म, जीवन, वृद्धत्व, रोग और मृत्यु के गान में सुनायी पड़ेगा।

पश्चिमी पद्धति से सीखते डाक्टरी के विद्यार्थियों के लिए हेनरी ग्रेनी एनाटोमी - शरीर रचना शास्त्र की बाइबिल मानी जाती है। इस सुंदर ग्रंथ में शरीर में अवस्थित प्रत्येक सूक्ष्म से लेकर स्थूल अंगों के लिए विस्तृत जानकारी दी गयी है। एनाटोमी की जानकारी अर्थात् अनात्मिक की - पार्थिव शरीर संबंधी जानकारी।

आयुर्वेद की दृष्टि से देखने पर रचना शास्त्र में बड़े गहरे अर्थ मिलते हैं। आयुर्वेद शरीर रचना के अध्ययन के समय में केवल मृत देह को केंद्रित न करके जीवित शरीर को अध्ययन का केंद्र बनाता है। ऐसा करते शरीर रचना के पार्थिव शरीर, स्थूल शरीर, प्रकृति, विकार और इन सबको धारण करनेवाली आत्मा मुख्य अंग बनते हैं। सजीव शरीर रचना का अध्ययन करते मानव अखंड ब्रह्मांड में अभिन्न रूप से जुड़ जाता है। इसमें पूर्व जन्म का अस्तित्व, जन्म, जीवन, बुढ़ापा, रोग, जरा-मृत्यु तथा मृत्यु के पश्चात् का अस्तित्व एकरस हो जाता है।

गहराई से विचार करने पर जान पड़ता है कि जीवन उस अस्तित्व की त्रिकालता का एक साकार स्वरूप है, जो उसके दो किनारे निराकार रूप में नित्य हैं। गीता में श्रीकृष्ण भगवान अर्जुन को प्रमाण देते हैं कि मैं और

तुम कभी भी थे नहीं, ऐसा कभी हुआ ही नहीं और भविष्य में कभी होंगे नहीं, ऐसा भी नहीं होगा। विशेषरूप से कहते हैं कि तुम्हारे सत्य स्वरूपी आत्मा को अग्नि भस्म नहीं कर सकता, पवन सुखा नहीं सकता, पानी भिगा नहीं सकता और अस्त्र कभी भेद नहीं सकता। वह तो अपने पारमार्थिक स्वरूप से नित्य, शुद्ध, बुद्ध, सद्, चिद्, आनंद, अजर, अमर, अविनाशी, 'ज्ञान' स्वरूप है, जो कुदरत की अनंत लीला का नित्य साक्षी है।

मानव शरीर में कुछ विशेष नहीं। उसकी रचना और केंचुए की रचना की गूढ़ता में फर्क नहीं। सूक्ष्म जीवाणुओं की रचना के साथ भी उनकी तुलना कर सकते हैं। हकीकत में तो ५०० करोड़ के इस धरती पर के जीवन के इतिहास में जीवन के मूल घटक कोष की रचना या कार्य में कुछ भी फर्क नहीं पड़ा। आइंस्टीन के दिमाग के ज्ञानतंतु में सर्वप्रथम कोष से कुछ उल्लेखनीय फेरफार हुआ नहीं। उपनिषद् में जो कहने में आता है कि सारा जगत ईश्वर से आच्छादित है, इसका अनुभव हो सकता है, ऐसी वास्तविकता है। सर्वत्र समाया हुआ अंतर्यामी व्हेल या मनुष्य में बैठा हुआ अंतर्यामी से किसी भी प्रकार पृथक अथवा छोटा नहीं।

जन्म और मरण से अनंत जीवन के लगते विचार केवल हमारे वेद तथा उपनिषद् में ही है, ऐसा नहीं है। जिन शास्त्रविदों ने विविध धर्मों की तुलना की है या इतिहास का गहन अध्ययन किया है, उन्हें क्रिश्चियन, यहूदी पारसी तथा अन्य धर्मों में तथा चीनी, ग्रीक, इजिप्त तथा यूरोपियन संस्कृतियों में भी इसी प्रकार के विचार की बात मिली होगी। पायथागोरस, प्लेटो और प्लोटिनस जैसे दार्शनिकों एवं प्रकृति प्रेमी वर्डस्वर्थ, टेनिसन और व्हिटमैन जैसे कवियों ने भी इस विचार का समर्थन किया है।

चित्र : आरिफ बेग

विज्ञान भी अब अपने अध्ययन और सोच पर से जन्म के पूर्व तथा मृत्यु के पश्चात् की अनंतता को निश्चितरूप से स्वीकार करने लगा है। आकार स्वरूप पहले का अस्तित्व वर्तमान जीवन को अनंत भूतकाल के साथ और मृत्यु के बाद का अस्तित्व भविष्य काल के साथ संबद्ध कर देता है। जन्म निराकार को साकार स्वरूप देता है तथा मृत्यु साकार को निराकार में परिवर्तित कर देती है।

**आत्मा क्या है?**

आत्मा : आत्मा यह अखंड सर्वोत्कृष्ट

परमात्मा है। आज का प्रत्येक व्यक्ति वर्तमान के अन्य सभी मौजूद व्यक्तियों से, भूतकाल में हो गये; सब व्यक्तियों से और भविष्य में होनेवाले प्रत्येक व्यक्ति से भिन्न है। प्रत्येक व्यक्ति बेजोड़ है। जुड़वां भाई भी इसमें अपवाद नहीं। अमुक जैसा अन्य कोई भूतकाल में जन्मा नहीं, भविष्य में कोई होगा नहीं, और वर्तमान में है भी नहीं। चाहे जितना अनंत भूतकाल में दृष्टिपात करें और धरती के दूसरे किनारे तक दृष्टि दौड़ायें, परंतु कभी भी दो व्यक्ति मुख्य तौर पर समान मिलेंगे नहीं। यही वास्तविकता आगामी अनंत भविष्यकाल के लिए भी सच होगी। इस बेजोड़ता की नित्य वास्तविकता, समय तथा स्थान के बंधन से मुक्त तभी संभव बन सकता है, जब हर वक्त माता के उदर में आकार लेते गर्भ के पास में अब तक हो गये व्यक्तियों, भविष्य में होनेवाले सभी व्यक्तियों तथा वर्तमान के सभी व्यक्तियों की रचना और कार्य का ज्ञान मौजूद हो, जिससे गर्भ अजोड़ता के निश्चित नियम का पालन कर सके।

### कृति से पहले प्रकृति

प्रकृति : निराकार आत्मा को बेजोड़ साकार रूप में प्रस्तुत करने वाली प्रकृति है। जो कृति के पहले से ही अव्यक्त रचना हो चुकी है, वह प्रकृति। हमारे शास्त्रों में इसे मायाशक्ति कहा गया है। त्रिगुणी माया में से पंचमहाभूत सर्जित होते हैं। इस सर्जन में ही अतुल जन्म, जीवन, वृद्धत्व, रोग और मृत्यु का समावेश हो जाता है। इस विधान के लिए प्रत्यक्ष प्रमाण देखना हो तो पासपोर्ट के लिए लेने में आनेवाली फोटुओं की उंगली की छाप का अध्ययन करें। कोई भी दो व्यक्ति कभी समान मिलेंगे नहीं।

सारी धरती में रहे पदार्थ को हम यदि घन-पदार्थ में परिवर्तित कर डालें तो पृथ्वी का केंद्र एक छोटे टेबल टेनिस के डंडे जैसा हो जाय। भगवान बुद्ध ने तो अपनी दिव्य दृष्टि से विश्व को शून्य के रूप में देखा था। आधुनिक भौतिक शास्त्र तो मुश्किल से अब इस विधान को समझ सका है। यदि इतनी विशाल कामधेनु समान पृथ्वी में केवल इतने नगण्य पदार्थ हों तो प्रत्येक मानव देह की तो बात ही क्या करना? मानव देह केवल प्रवाही खोखला है, जो प्रकृति रचित सूक्ष्म शरीर रूपी कलश का आकार लेता है।

हमारे शास्त्र के अनुसार जीवात्मा की तीन देह होती हैं। कारण शरीर, सूक्ष्म शरीर तथा स्थूल शरीर। कारण शरीर के आसपास पारदर्शक कलश की भांति सूक्ष्म शरीर रचा होता है, जिसमें स्थूल शरीर रूपी प्रवाही ढूंढ़ता व्यक्ति कलश का आकार लेता है। सूक्ष्म शरीर में ही चैतन्य रूपी जीवन मन, बुद्धि, अहंकार और चिद् और प्राण समाया हुआ है। अनात्मिक स्थूल शरीर में प्रकट होता चैतन्य सूक्ष्म शरीर का अभारी है। जहां तक सूक्ष्म शरीर स्थूल शरीर के साथ जुड़ा रहता है, तहां तक स्थूल शरीर जीवंत रहता है। पूर्व निर्धारित समय में स्थूल शरीर में से सूक्ष्म शरीर अलग पड़ जाता है, जिसे व्यावहारिक दृष्टि से मृत्यु कहने में आता है।

स्थूल शरीर निश्चेतन जड़ पार्थिव स्वरूप में रह जाता है, जिसके लिए स्वजनों को अंतिम क्रिया करनी पड़ती है।

आधुनिक विज्ञान के आधार पर रूस में कीरलियन फोटोग्राफी की कला विकसित हुई है। उसके द्वारा जीवित व्यक्ति और पदार्थ के आसपास की आभा देखने में आती है। यह सूक्ष्म प्रतिबिंब हो सकता है। सूक्ष्म शरीर का स्थूल शरीर से असंबंधित होना यह समय आधारित प्रक्रिया है। इसका स्वास्थ्य या रोग के साथ कोई वास्ता नहीं। कारण, एक सर्व सामान्य रोज का अनुभव है कि तंदुरुस्त व्यक्ति मर जाता है और बीमार व्यक्ति जी जाता है।

## विकार पर विचार

विकार : शरीर शब्द की व्युत्पत्ति शरीर के साथ में जुड़ी हुई है। पत्ता पुराना होकर पीला पड़कर अपने आप गिर जाता है। फूल मुरझा कर झड़ जाता है। मानव देह को भी इसी प्रमाण में विकार की प्रक्रिया लागू पड़ती है। आयुर्वेद की दृष्टि से विकार एक स्वाभाविक प्रक्रिया है। जीर्ण होना और मृत्यु पाना यह शरीर का प्राकृतिक धर्म है। 'मरणं प्रकृतिः शरीरिणा' (रघुवंश ८.८७)

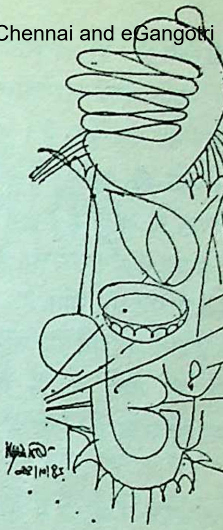

उम्र के मुताबिक शरीर घिसने पर बाल सफेद होने लगते हैं। दांत गिर जाते हैं। चमड़ी में झुर्री पड़ जाती है। संधियां जकड़ जाती हैं, हृदय का रोग होता है, कैंसर होता है, मधुमेह हो जाता है, पक्षाघात होता है, संधियां घिस जाती हैं। ये सभी विकार की प्रक्रियाएं प्राणि-सहज हैं। समस्त प्राणि जगत में ये प्रक्रियाएं देखने में आती हैं। व्यक्तिगत स्तर पर हर प्रक्रिया का स्वरूप बेजोड़ रहता है। प्रत्येक प्रक्रिया प्रकृति के समय के अनुसार क्रम से नियंत्रित होती है। इसलिए कि वे सभी कारण रहित हैं। इसीलिए आधुनिक चिकित्साशास्त्र को इन प्रत्येक 'रोग' के कारणों की शोध करने में खुलेआम निष्फलता मिली है। अरबों रुपये का खर्च गंवाने के पश्चात्, असंख्य जीवजंतु, पशु-पक्षी और मानव के उपयोग में हजारों वैज्ञानिकों द्वारा की गयी उग्र तपश्चर्या के अंत में उसमें एक भी रोग का कारण मिला नहीं और डाक्टर उमर के मुताबिक विकार रूपी रोगों के कार्यक्रम में लेशमात्र भी ऐच्छिक फेरफार कर नहीं सके।

## मृत्यु : अंतिम दृश्य

मृत्यु : जीवन का स्वर्ण कलश मृत्यु है। जीवन के अंतिम दृश्य में मृत्यु मुख्य नायक के

रूप में दिखायी देती है। इस प्राकृतिक क्रिया में जीवन भर सतत कार्य करनेवाला हृदय अपना कारबार बंद कर देता है। हृदय की धड़कन बंद होते ही शरीर में रक्त का संचालन अवरुद्ध हो जाता है। एक के बाद एक अवयव अपना कार्य समेट लेते हैं। और स्थूल शरीर निश्चेष्ट बन जाता है। इजिप्त में आज तक हजारों वर्ष पूर्व हुए फाराओं की निश्चेष्ट देह को सूखी लकड़ी की तरह सुरक्षित रखा जा सका है, जीव के तौर पर नहीं।

हाल के अध्ययन से जानने में आया है कि जीवन का अंतिम क्षण मृत्यु के रूप में अत्यंत सुखदायी होता है। उस समय में व्यक्ति की नजर में संपूर्ण जीवन की झांकी चलचित्र की भांति उभर आती है। अत्यंत ज्ञानमय प्रकाश का अवर्णनीय प्रवाह छूटता है। इस क्षण को तिब्बत के लोगों ने बड़े विस्तार से वर्णन किया है। इस घड़ी में व्यक्ति की अंतिम इच्छा पूरी करने के लिए सारा ब्रह्मांड सेवा में प्रस्तुत रहता है। इस समय व्यक्ति इच्छारहित रहे तो पुनर्जन्म का प्रश्न नहीं पैदा होता। इस स्थिति को मोक्ष के निर्वाण के रूप में जानने में आता है। मुख्य तौर पर मानव इच्छाओं के जाल के बंधन से मुक्त नहीं हो सकता। एक या दूसरी सहज इच्छा के वह वश में होता है तथा उसे फलीभूत करने के लिए पुनर्जन्म होता है। साकार स्वरूप के जन्म-मरण का चक्र बस इसी प्रकार चला करता है।

मृत्यु के अनंतर व्यक्ति का साकार अस्तित्व नहीं रहता। परंतु वही व्यक्ति उसी
के कारण और सूक्ष्म शरीर के रूप में
रहता है। परंतु इस अव्यक्त शरीर
धारक आत्मा, सर्वात्मा, परमात्मा तो
सद्, चिद्, आनंद, सर्वव्यापी,
निराकार, निरंजन, शुद्ध, बुद्ध,
अविकारी है।

काकासाहब कालेलकर ने मृत्यु को
सखा के रूप में संबोधित किया है
उमाशंकर जोशी जिन्दगी का सत्य
प्राप्त करते हैं। १०० वर्ष जीने वाले
में हृदय तैतीस वर्ष सक्रिय रहता है और
वर्ष अक्रिय रहता है। श्वासोच्छ्वास
प्रक्रिया में पहले सांस ली जाती है और
उच्छ्वास बाहर निकाली जाती है।
श्वास के अंत में प्रकृति व्यक्ति
श्वासोच्छ्वास के हिसाब की जांच करती
जहां तक बचत होती है वहां तक श्वास
देती है। संपूर्ण जीवन यात्रा में, प्रत्येक
धड़कन में, प्रत्येक श्वास में मृत्यु परम
के रूप में साथ देती है।

वैराग्य, इच्छा में से मुक्ति और सुख-
भरा सारा जीवन बिताने वाले व्यक्ति
मृत्यु का गौरव प्राप्त होता है। मृत्यु
जीवन का सार है। मृत्यु स्वयं
धर्मराज है। इसके साम्राज्य में सभी
हैं। वहां कोई राजा नहीं तथा रंक नहीं।
ऊंच न कोई नीच। वहां समभाव है,
सम है। मृत्यु बेजोड़ है।

**— डिपार्टमेंट ऑफ**
**सेठ जी. एस. मेडिकल**
**परेल, बंबई - ४००**

---

* शनि
श्रीमाली
दरियागंज

ऐसी
पक्ष
नहीं है।
वर्चस्व स
मंत्रों मे
की क्रमव
प्रयोग का
प्रस्तुत पुस्
है।

पुस्तक
मंत्र-तंत्र
शनि कव
साढ़ेसाती
शनि-संबं
किया गया

* गोपाल
लेखक :
प्रकाशक :
नई दिल्ली
१९९०

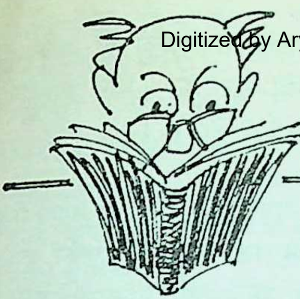

# ग्रंथलोक

*** शनि उपासना* लेखक : पं. राधाकृष्ण श्रीमाली; प्रकाशन : डायमंड पाकेट बुक्स, दरियांगज, नई दिल्ली; मूल्य : १२ रुपये ।**

ऐसी मान्यता है कि शनि देवता जिसका पक्ष ले लें, उसके लिए कुछ भी असंभव नहीं है । वह समाज और राष्ट्र में अपना वर्चस्व सहज में ही स्थापित कर लेता है ।

मंत्रों में अपार शक्ति होती है । परंतु मंत्रों की क्रमबद्धता, शुद्ध उच्चारण और उनके प्रयोग का ज्ञान भी परम आवश्यक है । प्रस्तुत पुस्तक इस दिशा में एक सार्थक प्रयास है ।

पुस्तक में विस्तार पूर्वक शनि से संबंधित मंत्र-तंत्र साधना, ध्यान, शनि-व्युत्पत्ति, शनि कवच, शनि-स्तोत्र, मेष लग्न और साढ़ेसाती आदि पर प्रकाश डालते हुए शनि-संबंधी अनेक कथाओं का भी संकलन किया गया है ।

* * *

*** गोपाल कृष्ण गोखले (जीवन गाथा)* लेखक : अवधेश कुमार चतुर्वेदी; प्रकाशक : डायमंड पाकेट बुक्स, दरियागंज, नई दिल्ली; मूल्य : १२ रुपये ।**

स्वतंत्र भारत के निर्माण के लिए भारत माता के जिन सपूतों ने अपना जीवन अर्पित कर दिया, उन्हीं महान् सपूतों में 'गोपालकृष्ण गोखले' का नामं स्वर्णाक्षरों में लिखे जाने योग्य है ।

गोखले ने भारतीय राजनीति में एक नयी विचारधारा, नयी चिंतन-पद्धति और चेतना को जन्म दिया, जिसने भारतीय जनमानस को शिक्षा, आर्थिक व सामाजिक पक्ष में नयी दिशा दी । उन्होंने हमें महात्मा गांधी जैसा नेता दिया, सर्वेंट्स ऑफ इंडिया सोसायटी जैसी संस्थाओं को जन्म दिया, आश्रम-पद्धति को विकसित किया ।

महान् देशभक्त, अहिंसा के पुजारी, सांप्रदायिक एकता के प्रबल समर्थक गोपालकृष्ण गोखले की बहुआयामी प्रतिभा और उनके जीवन-चरित्र से जुड़े अमर प्रसंगों से परिचित करानेवाली यह पुस्तक निश्चय ही स्वागत योग्य है ।

* * *

*** अशफाक उल्ला खाँ (जीवन-गाथा) * लेखक : भवान सिंह राणा; प्रकाशक : डायमंड पाकेट बुक्स, दरियागंज, नई**

दिल्ली; मूल्य : १२ रुपये ।

भारत को स्वतंत्र कराने तथा स्वतंत्र भारत के निर्माण में देश के अनेकानेक वीर सपूतों ने अपने प्राण उत्सर्ग कर दिये। अशफाक उल्ला खां ऐसे ही वीर सपूत का नाम है जो मस्ती के साथ गीत गाते हुए फांसी के फंदे पर झूल गये।

प्रस्तुत पुस्तक में प्रारंभिक जीवन-क्रांति-पथ का वरण, काकोरी कांड, काकोरी के बाद न्याय का नाटक आदि शीर्षकों के अंनर्गत अशफाक उल्ला खां के जीवन और उनकी क्रांतिकारी गतिविधियों पर व्यापक प्रकाश डाला गया है।

क्रांतिकारी अशफाक उल्ला खां के जीवन को समझने के लिए उपादेय यह पुस्तक सबके लिए संग्रहणीय है।

* * *

***हर्षचरित* लेखक : बाण भट्ट; प्रस्तुति : अशोक कौशिक; प्रकाशक : डायमंड पाकेट बुक्स, दरियागंज, नई दिल्ली; मूल्य : १२ रुपये ।**

महाकवि बाण भट्ट का 'हर्षचरित' ऐतिहासिक, सांस्कृतिक, सामाजिक और धार्मिक दृष्टि से संस्कृत साहित्य का अमूल्य ग्रंथ है।

''हर्षचरित'' बाण भट्ट की प्रथम कृति मानी जाती है। इसे ऐतिहासिक काव्य की श्रेणी में रखा गया है। कहा जा सकता है कि संस्कृत साहित्य में ऐतिहासिक काव्य लिखने का आरंभ बाण के द्वारा ही किया गया। बाण की इस रचना से पाठकों को हर्षकाली समाज, राज्य, साहित्य का ज्ञान प्राप्त हो इसमें किंचित संदेह नहीं।

* * *

*** तात्या टोपे * लेखक : डा. भवान राणा; प्रकाशक : डायमंड पाकेट बु दरियागंज, नई दिल्ली; मूल्य : १२ रुप**

भारत की स्वतंत्रता के संग्राम में कि ही शूरवीरों ने हंसते-हंसते अ प्राणों का उत्सर्ग कर दिया। इन्हीं म वीरों में भारत के अमर क्रांतिकारी तात्या टो का नाम स्वर्ण अक्षरों में लिखे जाने योग्य है।

वीरवर तात्या टोपे महान् देशभ कुशल सेनानायक, धर्मनिष्ठ, क्रांतिका हिन्दू-मुस्लिम एकता के विशाल स्तंभ थे। भारत को अंग्रजों की गुलामी से मुक्त करा लिए वे जीवन-भर संघर्ष करते रहे अंततः स्वाधीनता-प्राप्ति के संघर्ष में फां पर झूल गये।

प्रमाणित स्रोतों से प्राप्त सामग्री के आ पर लिखा गया तात्या टोपे का यह जी चरित पाठकों को नयी दिशा देगा।

* * *

*** मुद्राराक्षस (नाटक) * लेखक : विशाखदत्त, अनुवादक : अशोक कौशि प्रकाशक : डायमंड पाकेट बुक्स, दरिया नई दिल्ली; मूल्य : १२ रुपये ।**

संस्कृत के महान नाटककार विशा दत्त द्वारा लिखित नाटक '' राक्षस'' नई शैली का तथा विशुद्ध

नीतिक राजनीति को आधार बनाकर लिखा गया एक अद्वितीय नाटक है। संस्कृत साहित्य में राजनीति को सामान्यतया 'वारांगना' के रूप में चित्रित किया गया है, किंतु इसमें उसे सर्पिणी बताया गया है। इसमें संपेरा, संन्यासी, ज्योतिषी और वैतालिक आदि सभी गुप्तचरी में संलग्न हैं।

नायिका विहीन इस नाटक का नायक चाणक्य है जिसने अपनी कूटनीति से नंदवंश को समूल नष्ट कर दिया।

* * *

*** क्या मेरा क्या तेरा (कबीर वाणी)* प्रकाशक : डायमंड पाकेट बुक्स, दरियागंज, नई दिल्ली*; मूल्य : १२ रुपये ।**

रजनीश के रूप में अपने धार्मिक क्रांतिकारी विचारों से विश्व को आंदोलित कर देने वाले ओशो रजनीश की पुस्तक है – 'क्या मेरा क्या तेरा' मां अमृत मुक्ति और मां योग प्रज्ञा ने उन प्रवचनों का संकलन किया है जो प्रसिद्ध संत कबीर की वाणी और उनके क्रांतिकारी विचारों से संबंधित हैं।

रजनीश की शैली की भावात्मकता और काव्यात्मकता हृदय को स्पर्श करती है तो उनकी तार्किक शक्ति बुद्धि के सारे कुहरे को छाँट देती है। इस पुस्तक के प्रत्येक पृष्ठ पर प्रबुद्ध पाठक को ऐसा आभास होगा कि वह यही सोचता जा रहा है – क्या मेरा क्या तेरा।

* * *

*** बोले शेख फरीद (फरीद वाणी)* प्रकाशक : डायमंड पाकेट बुक्स, दरियागंज, नई दिल्ली; मूल्य : १२ रुपये ।**

शेख फरीद प्रेम के पथिक थे। कबीर ने भी प्रेम की बात की है किंतु ध्यान की भी। दादू भी प्रेम की बातें कहते थे किंतु उन्होंने भी ध्यान को पूरी तरह विस्मृत नहीं किया। नानक भी प्रेम की बात करते हैं किंतु वह भी ध्यान से मिश्रित हैं। फरीद ने शुद्ध प्रेम के गीत गाये हैं। उन्होंने ध्यान की बात ही नहीं की। प्रेम को समझ लिया तो मानों फरीद को समझ लिया। फरीद को समझ लिया तो जैसे प्रेम को समझ लिया।

प्रेम के साधक फरीद की वाणी को अपनी भावात्मक और तार्किक शैली में प्रस्तुत किया है ओशो रजनीश ने।

— डा. गिरिराजशरण अग्रवाल

* * *

*** काला सूरज (उपन्यास) * लेखक : दामोदर खड़से; प्रकाशक : हिन्दी साहित्य संसार, १५४३, नई सड़क, दिल्ली - ६; मूल्य : पैंतीस रुपये ।**

'मेरी सहेली' में धारावाही प्रकाशन के उपरांत बहुचर्चित उपन्यास 'काला सूरज' अभी-अभी पुस्तक रूप में सुंदर मुखपृष्ठ तथा बढ़िया मुद्रण के साथ बाजार में आया है।

लेखक दामोदर खड़से इस उपन्यास में महानगरीय जीवन की त्रासदियों के परिवेश में मध्यमवर्गीय पात्रों के राग-विराग, दुख-सुख, इच्छा-आकांक्षा, उन्नति-अवनति और उनकी राजनीतिक सापेक्षता को

उजागर करने में सफल हुए हैं। उनकी लेखनी ने इन चरित्रों को साक्षात् जीवन प्रदान किया है। सत्ता-केन्द्रित होती जा रही नीति-विहीन राजनीति और जंग लगी पीत पत्रकारिता के कई अनछुए पहलू इस उपन्यास के प्रस्तुतीकरण को विशिष्टता तो देते हैं, पर किसी काल्पनिक या लौकिक जगत में नहीं ले जाते। पाठक हर पल महसूस करता है कि ये सारी घटनाएं तो उसके आसपास सदैव घटित होती हैं लेकिन वह इन्हें लिखित शब्द में नहीं बदल पाता।

असुरक्षा के वातावरण में युवावस्था में पहुंचे कैलाश के जीवन में रिश्तों-नातों का अबूझ जाल एक पहेली बनकर उसे छकाता है। खुरदरी रेत और खारे जल के इस समंदर से अमोल शंख-सीपियां ही नहीं अपितु मोती तलाशने के संघर्ष में वह डुबकी पर डुबकी लगाता जाता है। मंजिल की इस गरिमामय खोज में लेखक मानवीय संबंधों को यथार्थ के धरातल पर उकेरता है। पत्रकार कैलाश पत्नी की ओर से प्रस्तुत आंतरिक दबावों को नकारकर उसे त्यागना स्वीकार करता है। सामंतवादी एवं राजनीति के हाथों कठपुतली सी नाचती बेईमान पत्रकारिता के प्रति अविश्वास व्यक्त कर वह इस्तीफा देना पसंद करता है।

इन परिस्थितियों से उपजे अपने अकेलेपन को वह चाहता तो पूर्व प्रेमिका के इर्द-गिर्द चक्रव्यूह-सा वृत्त रचकर या पामेला-सी मुक्त विचारों वाली युवती को केन्द्र बनाकर जी जाने को ही जीवन का लक्ष्य निर्धारित कर लेता।

संक्षेप में, यह उपन्यास आज के स्वार्थपरक और भ्रष्ट व्यवस्था के प्र आक्रोशभरी शिकायत करता और अनैति समझौतों को अस्वीकार करता हुआ आग सुखद भविष्य के लिए आशा जगाता है।

— अशोक गुजरा

* * *

*** मानवतावादी साहित्य साधक - प्रेम और मैथिलीशरण गुप्त * संपाद कैलाश जोशी; प्रकाशक : हिन्दी पु सेन्टर, आसफ़ अली रोड, नई दिल्ल मूल्य : ७० रुपये।**

राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त जन्मशती एवम् उपन्यास स प्रेमचन्द के निर्वाण अर्द्धशताब्दी पर प्रक यह पुस्तक (देश के प्रसिद्ध साहित्यकारों निबन्धों के संकलन के रूप में संग्रहणीय है

इस संकलन में देश के लब्ध प्रति साहित्यकारों ने दोनों रचनाकारों के अपने श्रद्धासुमन अर्पित किये हैं। 'इन सभ विचार इस समीक्षा में प्रस्तुत करना कठि फिर भी डॉ. प्रभाकर माचवे, डॉ. विज स्नातक, डॉ. रामविलास शर्मा, रामे शुक्ल 'अंचल', विष्णुकान्त शास्त्री, स संन्यासी, राजेन्द्र यादव, सोवियत लेखक चेलिशेव, डॉ. शिवमंगलसिंह 'सुमन', लक्ष्मीनारायण दुबे और स्वयं कैलाश जो ने इस सारस्वत अनुष्ठान में अपनी ओ

अ

---

मार्मिक
इनके
आचार्य ह
माखनला
अमृतला
राजेन्द्र
डॉ. प्रेमश
राष्ट्रकवि
विचारों व

* गीत ग
प्रकाशक
(मोतीपाव

स मी
कैल
का संग्रह
प्यार और
के गीत, श्र
जैसे प्रखण
संकलन की
'आशीर्वाद
गेय, प्रभाव
गीतों से रा
काव्य प्र
गीत-गरिम
व्यापक हैं।
निश्चय
मधुमास के
प्रभा तथा

मार्मिक समीक्षा प्र[illegible] हैं।

इनके अतिरिक्त आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी, महादेवी वर्मा, माखनलाल चतुर्वेदी, रायकृष्णदास, अमृतलाल नागर, कविवर दिनकर, डॉ. राजेन्द्र प्रसाद, नरेश मेहता, डॉ. नगेन्द्र डॉ. प्रेमशंकर और अनेक साहित्यकारों द्वारा राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त के लिए व्यक्त विचारों का भी इसमें समावेश है।

— **प्रकाश दुबे**

* * *

*** गीत गरिमा * कवि : कैलाश कल्पित; प्रकाशक : पारिजात ३४१ बहादुरगंज (मोतीपार्क) इलाहाबाद; मूल्य ४५ रुपये।**

समीक्ष्य-कृति हिन्दी के वरेण्य कवि कैलाश कल्पित के ८० गेय गीतों का संग्रह है। संकलन, अभिमंत्रित-गीत, प्यार और प्रणय के गीत, व्यथा और वियोग के गीत, श्रद्धा के गीत, स्नेह सौरभ के गीत जैसे प्रखण्डों में विभाजित है। 'प्रतीक्षा' संकलन की पहली तथा जन्मदिवस पर रचित 'आशीर्वाद' अंतिम कविता है। सभी रचनायें गेय, प्रभावोत्पादिनी, तथा हृदय-स्पर्शी हैं। गीतों से रागात्मक प्र[illegible]नःसृत होता है। काव्य प्रणयात्मकता से संश्लिष्ट गीत-गरिमा के गीत सर्वप्रभावी तथा सर्वव्यापक हैं।

निश्चय ही गीत गरिमा के गीत जीवन के मधुमास को लुटाते हैं, जीवन को नई गति, प्रभा तथा त्वरा से संपूरित करते हैं।

— **चक्रधर नलिन**

*** 'सारी पृथ्वी समेटना है' * कवयित्री डॉ. शैलकुमारी; प्रकाशक : पराग प्रकाशन, दिल्ली–३२; मूल्य : ३५ रुपये।**

'सारी पृथ्वी समेटना है' डॉ. शैलकुमारी की वेदना प्रधान ८४ (चौरासी) कविताओं का उत्कृष्ट संग्रह है। यद्यपि संकलन में व्यष्टिपीड़ा का प्राबल्य है, तथापि इस व्यष्टि में समष्टि की वेदना को अपने में समेटने की तीव्र ललक है।

डॉ. शैलकुमारी की कविता, 'दर्द की कविता' है, पर वह अपने दर्द में एकाकीपन की पक्षधर होकर भी समष्टि के हित-चिंतन के लिए व्यग्र है –

**मुझे नहीं चाहिए।**
**अपने हिस्से की उजास,**
**लो, तुम उन्हें बांट दो।**
**उन आंखों को जो नम हैं।**

कविता-संग्रह में जीवन की विभिन्न अवस्थाओं और मनोदशाओं के श्याम-श्वेत एवं बहुरंगी अनगिनत चित्र हैं, जो पाठक को बरबस झकझोरते और सोचने के लिए विवश करते हैं।

रचनाकर्त्री में नयी भाषा, नये शिल्प की ललक है।

— **डॉ. पाण्डेय रामेन्द्र**

* * *

*** माटी का मोह * लेखक : भाव सिंह हिरवानी; प्रकाशक : पारख प्रकाशन, कबीर संस्थान, प्रीतम नगर, इलाहाबाद; मूल्य : १५ रुपये।**

माटी का मोह (कथा संग्रह) में लेखक की अठारह कहानियां संकलित हैं। अधिकांश कहानियों में भारत के ग्रामीण परिवेश को दर्शाया गया है। जहां गरीबी, भुखमरी, रूढ़िवादिता, छुआछूत, ऊंच-नीच तथा विभिन्न प्रकार के अंधविश्वासों की विभीषिका ने सभ्यता के इस युग में आज भी अपना जाल बुरी तरह फैला रखा है। इस कथा संग्रह की सभी कथाएं मार्मिक हैं।

प्राय : हर कहानी अभाव, अशिक्षा अथवा अज्ञान के विरुद्ध अलग-अलग स्तर पर, सभ्यता के विकास का उद्देश्य लेकर जूझती हुई दिखायी देती है।

— जयप्रकाश 'भारतीय'

* * *

*** पेरोल पर कभी तो रिहा होगी आग (ग़ज़लों का संग्रह) * कवि : महेन्द्र कुमार अग्रवाल; प्रकाशक : प्रमोद प्रकाशन, २/८-ए जंगपुरा-ए, नई दिल्ली; मूल्य : ३० रुपये।**

हिन्दी में ग़ज़ल आज की बहुचर्चित विधा है। इश्क और हुस्न की भावभूमि से हटकर जनजीवन के प्रति सोच, अनुभव और अभिव्यक्ति के माध्यम के रूप में हिन्दी और उसके मुहावरे व तेवर को अपनाने वाली ग़ज़लें, हिन्दी-ग़ज़ल के नाम से प्रचलित हैं।

निस्संदेह कवि महेन्द्र कुमार अग्रवाल की संकलित ६४ ग़ज़लें आम आदमी के बाह्य और आंतरिक जीवन-संघर्ष, सामाजिक राजनैतिक एवं आर्थिक स्तर पर व्याप्त असमानताओं, विसंगतियों एवं विद्रूपता तथा बदलते हुए जीवन मूल्यों के प्रति तट भाव से अपनी अनुभूतियों को अभिव्य करने में समर्थ हैं।

श्रम के महत्व को कवि ने एक शे प्रतिपादित किया है —

**'जिनके हाथों में बल नहीं होता।**
**प्रश्न रोटी का हल नहीं होता।।'**

आंगन की खुशहाली घर की पह विशेषता है। कवि का शेर देखिए -

**'तलाश करना है किलकारियों की आंग**
**तलाश करना है किलकारियों की**
**आंगन में -**
**ये सबसे पहली जरूरत है**
**अपने घर के लिए।।'**

कवि ने बड़ी सफाई से मुहावरों का प्र करते हुए ग़ज़लों में नई जान डाल दी है। शेर प्रस्तुत है —

**'लोग देते हैं मुल्क में उस दिन,**
**जब भी सर से गुज़र गया पानी।।'**

कुल मिलाकर कथ्य एवं शिल्प की दृ संकलित ग़ज़लें किसी न किसी रूप में न का अहसास कराती हैं।

— **डॉ. रोहिताश्व अस**

* * *

*** गांधीवाद बनाम सर्वोदय एवं चेतना गी लेखक : घनश्याम प्रजापति 'दं प्रकाशक : भारत प्रिंटिंग प्रेस, गांधी न बस्ती, उ.प्र.; मूल्य : १० रुपये।**

घनश्याम प्रजापति दंगल गां विनोबाजी के अनुयायी साहित्य

लेखक का कहना है कि व्यक्तिगत स्वार्थों के टकराव में आकर लोग एक दूसरे के तथा चिंतक हैं।

गांधीवाद बनाम सर्वोदय एवं चेतना गीत इनकी मौलिक एवं महत्वपूर्ण नव प्रकाशित कृति है। स्वयं दंगलजी आजादी की लड़ाई के दौरान गांधीजी के आश्रम में रह चुके हैं। इन्होंने २६ पुस्तकों की रचना की है।

विरोधी बन बैठे हैं। आज कल राजनैतिक और सामाजिक परिवेश प्रदूषित है। यदि राजनैतिक परिवेश स्वच्छ हो जाय, नौकरशाही में ईमानदारी और कर्तव्यनिष्ठा आ जाय तो देश का भविष्य उज्ज्वल हो जायेगा।

**— सुरेश श्रीवास्तव**

* * *

□

## ( पृष्ठ ७९ का शेषांश )

रक्षणीया है और रक्षाबन्धन का आधुनिक पर्व, संस्कृति के इस रूप का प्रतीक है। रक्षा की भावना पर आधारित होने के कारण, यह त्योहार शक्ति और साहस का संदेशवाहक भी है।

रक्षाबन्धम का त्योहार, मूलतः केवल भाई बहिन का ही नहीं, अपितु सम्पूर्ण मानव जाति के स्नेह बन्धन और कल्याण कामना का त्योहार है। यह साम्प्रदायिक तथा मानवीय सौहार्द का राष्ट्रीय पर्व है। यज्ञसूत्र और रक्षासूत्र की मंजिलों को पार करता हुआ, आज रक्षाबन्धन का जो स्वरूप हमारे सामने है उसमें भी मूल भावना वही है, जो पहले थी।

अर्थात् स्नेह का प्रतीक और रक्षा का आश्वासन।

परम्परानुसार रक्षाबन्धन पर, बहिन भाई के राखी बांधती है और भाई भेंट के रूप में उसे कुछ धन आदि प्रदान करता है। कलात्मक ढंग से सजीधजी राखियां अनेक प्रकार की आती हैं। कुछ सस्ती होती हैं और कुछ अत्यधिक महंगी भी। मगर भावना की दृष्टि से साधारण, धागे और बहुमूल्य राखी के बीच कोई अन्तर नहीं। अतएव हमें राखी की भावना पर ही विशेष ध्यान देना चाहिए। इसी प्रकार भाई के द्वारा दिया जाने वाला उपहार भी केवल स्नेह का प्रतीक है।

**१०/६११, मानसरोवर**
**जयपुर (राजस्थान)**

# कीड़े की देन - रेशम

□ रामानन्द त्रिपाठी

रेशम इतना पुराना है कि इसकी उत्पत्ति का सही अनुमान नहीं है, लेकिन इसमें संदेह नहीं कि इसकी उत्पत्ति चीन में ही हुई थी। चीन की एक पुरानी कथा के अनुसार वहाँ के राजा 'हुवैंगटी' की पत्नी ने पहले-पहल २६४० ईसा पूर्व में रेशम व्यवसाय को प्रारंभ किया था। लगभग ३००० वर्ष तक चीन रेशम के कीड़ों से रेशम उत्पन्न करने की क्रिया को गुप्त रखे रहा था, जो बाद में दो विदेशी यात्रियों द्वारा कांस्टैंटिनोपिल में फैला, जहां वे इसके अंडे छुपाकर ले गये थे। ३०० ईसा पूर्व में यह जापान और कोरिया में फैला और साथ ही साथ भारत, थाईलैंड और बर्मा में भी इसका प्रचार हुआ। इटली में यह व्यवसाय १२०४ ईसवी में फैला तथा वहीं से अन्य यूरोपीय देशों में पहुचा। एक अन्य मतानुसार यह व्यवसाय हिमालय और भारत से शुरू हुआ था जहां रेशम के कीड़ों का जन्मस्थान माना जाता है। रेशम को अंग्रेजी में 'सिल्क' कहा जाता है। रेशम जिस कीट द्वारा उत्पन्न होता है उसका नाम 'बोम्बैक्स मोरी' है। 'शहतूत के पत्तों को खाने वाले इस कीट के कैटरपिलर जब अंडे से बाहर निकलते हैं तब लगभग मिलीमीटर लंबे होते हैं। चिकने और हल्के सफेद पीले रंग के इन कैटरपिलरों के पांच जोड़ी पैर होते हैं। शुरू में यह कीड़ा बहुत खाता है और ४ ते ६ सप्ताह में पूर्ण विकसित हो जाता है। इस बीच यह चार बार केंचुल बदलता है। पूरा बड़ा लार्वा साढ़े सात सेंटीमीटर लंबा होता है। जब कैटरपिलर पूर्ण विकसित हो जाता है तब वह खाना बंद कर देता है और बेचैनी की हालत में हो जाता है तथा अपनी दूसरी शक्ल बदलने के लिए एकांत स्थान खोजने लगता है। जब उसे कोई उपयुक्त स्थान मिल जाता है तब वह 'कोकून' बुनना शुरू करता है जो तीन या चार दिनों में पूरा हो जाता है। कोकून के अंदर १२ से १६ दिनों के बाद कीट बाहर निकलता है जो निकलने के तुरंत बाद संभोग करता है और मादा कीट ३०० से ४०० अंडे जो सफेद रंग के होते हैं, शहतूत के पत्तों पर देती है। बाद में कीट मर जाता है परंतु रेशम बनाने के लिए यह आवश्यक होता है कि कीट

अगले

निकलने के पूर्व ही कोकून को उबाल लिया जाये। शहतूत के रेशम के कीड़े को बहुत ही सावधानी से रखा जाता है, इसके अंडों को रेशम के बीज भी कहा जा सकता है। ये अंड़ों से निकले कैटर पिलरों को शहतूत की पत्तियां खिलाते हैं और पहली केंचुल बदलने पर ताजी पत्तियां खिलाई जाती हैं। पूरे बड़े होने तक इन्हें साफ तश्तरियों में पाला जाता है। इस अवस्था में लकड़ी के टुकड़े, फूस, कागज़ की छीलन आदि उपयुक्त पदार्थ तश्तरियों में रख दिये जाते हैं। लार्वा उन पर चढ़ता है और कोकून बुनता है। यह सब कार्य एक उपर्युक्त वातावरण में किया जाता है। जहां इन्हें रखते हैं वहां कोकून को तुरंत फैक्टरियों को भेज दिया जाता है। फैक्टरियों में धागा निकाला जाता है। यदि ऐसा मुमकिन न हो तो इन्हें गर्म पानी में डाल देते हैं या जमा देते हैं, ताकि कीड़ा उसमें से निकलकर सिल्क के धागों को नष्ट न करे। कोकून को गर्म करने की क्रिया को 'स्टिफिंग' कहते हैं जिससे इस कीड़े के प्यूपा मर जाते हैं। रेशम का प्राकृतिक धागा लगभग अंग्रेजी के ८ की शक्ल का होता है। रासायनिक परीक्षणों से पता चलता है कि इसके दो भाग होते हैं — एक तो भीतर का चिपचिपा भाग 'सिरीसिन' और उसके ऊपर 'फिबरॉयन' या धागों का आवरण होता है। 'फिबरॉयन' का ७० से ८०% भाग जल में अविलेय है जबकि 'सिरीसिन' आसानी से पानी में घुल जाता है। इसके अतिरिक्त बहुत कम मात्रा में रंगीन और मोम जैसा पदार्थ होता है।

रेशम कैटरपिलर के अंदर उसकी पाचननली के दोनों ओर स्थित लंबी ट्यूब जैसी घुमावदार ग्रंथियों द्वारा पैदा होता है। प्रत्येक ग्रंथी 'फिबरायन' को एक धागे के रूप में बाहर निकालती है जो पहले तरल के रूप में होता है। ऊपर की अतिरिक्त ग्रंथियां 'सिरीसिन' निकालती हैं जो दोनों धागों को चिपकाती जाती हैं। कैटरपिलर के शरीर का सिकुड़ना इन दोनों धागों के निकलने में सहायक होता है।

रेशम व्यवसाय में कामयाबी तभी हासिल की जा सकती है जब कैटरपिलर के खाने की उचित व्यवस्था रहे और उनके बढ़ने के लिए आवश्यक तापक्रम व सफाई इत्यादि की देखभाल ठीक से होती रहे। १५ से ३०°c तक का तापमान 'सिल्क वर्म हाउस' में उचित रहता है। हालांकि २० ते २३°c तापमान और इसी प्रतिशत की आर्द्रता में भी इसकी उत्पत्ति ठीक प्रकार से होती है। फैक्टरियों में कोकून को उनके रंग और बनावट के अनुसार अलग किया जाता है। यहां विशेषज्ञ इनके धागों को निकालते हैं। इसके लिए कोकून को गर्म पानी में थोड़ी देर भिगोकर बराबर ब्रश से घुमाते हैं। गर्म पानी से भिगोने पर धागों को अलग करने में सहायता मिलती है, क्योंकि उनकी चिपचिपाहट मुलायम पड़ जाती है। कोकून के ऊपर से जो पदार्थ निकलता है उसे 'सिल्क-वेस्ट' कहते हैं जो बाद में 'स्पन सिल्क' बन जाता है।

कई कोकून के धागों का आखिरी भाग सुई

के छेद जैसे भाग से पिरोकर, सिल्क के एक धागे का रूप धारण कर पाता है, जो एक रील के रूप में लपेटा जाता है, इसे 'रॉ-सिल्क' या कच्चा रेशम कहा जाता है। बाद में इनके 'हैंग्स' बनाकर फैक्ट्रियों में भेजते हैं। ५०० ग्राम रॉ-सिल्क बनाने में ४००० से ५००० तक कोकून लगते हैं। यह बाद में कपड़ों की बुनावट के काम आता है। इसके कई तरह के वस्त्र बनते हैं और विभिन्न तरह से प्रयोग होता है। टेलीफोन के कॉइल, रेसिंग मोटर के टायर, वायुसेना के पैराशूट आदि में भी रेशम का प्रयोग होता है। रेशम के धागे बहुत ही हल्के और पतले होते हैं। २५ ग्राम वजन के रेशमी धागों की लम्बाई लगभग एक लाख मीटर होती है। यह बहुत ही लचीला लगभग २०% होता है, अर्थात् अपनी लम्बाई का पाँचवा हिस्सा यह लम्बाई में खींचा जा सकता है और बाद में छोड़ देने पर फिर से अपनी लम्बाई प्राप्त कर लेता है।

रेशम के कीड़ों में बुरी हवा, आदान-प्रदान की क्रिया, तापमान पर अनियंत्रण और आर्द्रता या नमी तथा सड़े-गले भोजन के कारण 'पेबरीन' नामक बीमारी हो जाती है जो 'नोसेमा-बोम्बाइटिस' नामक प्रोटोजोआ पैरासाइट से होती है। इस रोग से रेशम के कैटरपिलर हल्के बादामी रंग के होकर मर जाते हैं।

जो कुछ भी हो शुद्ध रेशम से बहुत ही सुंदर और विलासी वस्त्र बनते हैं। इसके वस्त्रों में जो विशेषताएं होती हैं वे दूसरों में नहीं होतीं। और सबसे बड़ी बात तो यह है कि ये एक कीड़े की देन हैं।

**— सिविल लाईन, वारासिवनी,**
**जिला बालाघाट, म.प्र.**

□

गांधीजी मन, कर्म वचन से पूर्ण अहिंसक थे। यहां तक कि अपनी जीवनरक्षा के लिए भी हिंसा करना उन्हें रुचिकर न था। उनका विचार था कि सच्चा अहिंसक अन्यायी और कट्टर शत्रु पर भी क्रोध नहीं करता पर उससे प्रेम करता है और सदैव उसका भला चाहता है।

साबरमती और सेवाग्राम दोनों ही आश्रमों में सांप व बिच्छू बहुधा निकला करते थे। आश्रमवासी उनको पकड़कर दूर जंगल में छोड़ आते थे। एक दिन महादेव भाई ने कहा - 'बापू, आप सर्प को नहीं मारने देते। इससे कभी बहुत पछताना पड़ेगा।' गांधीजी ने कहा - 'महादेव, मैं नहीं मारता।' क्योंकि आत्मरक्षा के लिए सांप को मारना भी रुचिकर नहीं लगता।

एक बार बापू प्रार्थना कर रहे थे कि एक काला सांप पीछे से उनकी पीठ पर चढ़कर कंधे पर आया। लोगों ने बापू को सावधान किया। बापू ने हंसकर कहा — 'यह तो अपने आप ही चला जायेगा। इसके द्वारा मेरी मृत्यु लिखी होगी तो कोई चिंता की बात नहीं।'

थोड़ी देर बाद वह सांप अपने आप चला गया।

**— डॉ. गोपाल प्रसाद 'वंशी'**

उड़िया कहानी

# लोक संस्कृति

□ जगन्नाथ प्रसाद दास

मैं गांव लौट रहा था काफी अरसे बाद। गांव से मेरा संपर्क काफी सालों से कट चुका था। अपनी स्कूल की पढ़ाई के बाद मैं सिर्फ एकाध बार गांव आया होऊंगा। कालेज की पढ़ाई और फिर नौकरी शुरू करने के बाद गांव से संबंध भी कम रह गया था। इसके अलावा गांव हमने वास्तव में छोड़ दिया था बहुत साल पहले। गांव में जो खेती-बाड़ी थी वह कब की बिक चुकी थी। वहां सिर्फ हमारा एक घर बचा था, उसी को बेचने की व्यवस्था करने मैं चार दिनों की छुट्टी लेकर गांव जा रहा था।

देखा जाये तो यह कोई हमारे पुरखों का गांव नहीं था। पिताजी जब उस इलाके में पोस्ट मास्टर थे, पहले उन्होंने सस्ते में खेती के लिए ज़मीन खरीदी और बाद में उस गांव के निकट ही रहने के लिए एक घर भी बनवाया था। मेरा जन्म भी हुआ था उसी गांव में। वहां से पिताजी का तबादला होने के बाद हम वहीं रह गये। धीरे-धीरे हमारा और सभी जगहों से संपर्क कट गया था और मैं वहीं के स्कूल में पढ़ने लगा। जब मैंने कालेज में दाखिला लिया, गांव छोड़कर शहर चले आये। पिताजी ने शहर में एक मकान ले लिया और हमारा गांव से कोई संबंध नहीं रहा। बस कभी-कभार पिताजी छुट्टी लेकर वहां जाते और खेती-बाड़ी का काम देख कर लौट आते। बीच-बीच में गांव से कोई किसान आकर हमें धान-चावल दे जाता था। उसके बाद काश्तकारी कानून लागू होने पर पिताजी ने वहां के खेत भी धीरे-धीरे बेच दिये और गांव से हमारा संपर्क कम होने लगा। सिर्फ हमारा रिहायशी घर पिताजी ने नहीं बेचा था। वे सोचते थे कि भविष्य में हमारे परिवार का कोई सदस्य कभी वहां जाकर रहेगा।

यह भी काफी पहले की बात है। पिताजी के मरने के बाद मैं ही अपने घर का ध्यान रखता था। गांव के विषय में मेरे कई सुखद अनुभव थे, क्योंकि मेरा पूरा बचपन और स्कूल की पढ़ाई का समय इसी गांव में बीता था। हालांकि मैं उसे अपना गांव कह रहा हूं, हमारा घर ठीक उस गांव में नहीं था। उस गांव के लोग अछूत थे और उस समय उनके साथ मिलकर रहने का सवाल ही नहीं उठता था। शायद इतनी सस्ती ज़मीन न मिली होती तो पिताजी ने कहीं और घर बनवाया होता। हमारा घर था गांव के बाहर तालाब

के पास, गांव से थोड़ी दूरी पर। हमें गांववालों के पास और दूर दोनों जगह रहने का अवसर व सुविधाएं मिली थीं।

हालांकि छुआ-छूत एक समस्या बन सकती थी, पर हमारे लिए वह कोई खास परेशानी नहीं बनी थी। नौकरी में बारंबार तबादला होने के कारण मां-पिताजी का अपने आत्मीय जनों से अब कोई खास संपर्क नहीं रह गया था। इसलिए यहां कुछ करने या न करने पर बिरादरी का कोई डर-भय नहीं था। अत: हम लोग गांववालों के साथ खूब सुविधा सहयोग से जीवन बिता रहे थे। गांव के अधिकांश लोग भूमिहीन किसान थे और किसानी के दिनों में जिस किसी के भी खेत में काम करके गुजर-बसर करते थे। गांव में एक छोटा स्कूल था। गांव के बच्चे कुछ दिनों तक छोटी कक्षाओं में पढ़ते थे, लेकिन वहां की पढ़ाई खत्म हो जाने पर कोई भी दूर बड़े गांव के उच्च स्कूल में पढ़ने नहीं जाता था। काम करने की उम्र होते ही वे लोग चले जाते थे खेतों में मजूरी करने।

छोटे-स्कूल में पढ़ते समय गांव में मेरे बहुत से दोस्त थे। बाद में जब उच्च स्कूल में पढ़ने लगा, मेरे साथ गांव के दो-चार लड़के भी पढ़ने जाते। कुछ वर्ष बाद मेरे स्कूल पास करने तक हालांकि वे सभी स्कूल छोड़ चुके थे। मेरा बचपन गांव के माहौल में खूब खुशी से बीता था। खुला मैदान, अमराई, नदी, पहाड़, जंगल से घिरे इस गांव की याद करने पर अभी भी मेरा मन खुशी और रहस्य की स्मृतियों से भर जाता है। शहर के छोटे-से मकान में बैठा मैं अक्सर गांव और बचपन की बातें याद किया करता था।

गांव के पर्व-त्यौहारों में कई तरह के उत्सव होते थे। हालांकि गांव में कोई बड़ा मंदिर नहीं था, पत्थरों के छोटे-छोटे घर और गांव के सिरे पर पेड़ के नीचे तरह-तरह की देवी-देवताओं की मूर्तियां रखी थीं और पर्व के दिनों में वहां फूल चंदन, धूना, सिंदूर, मुर्गों की बलि, रंगीन कपड़ों और चमकदार कागजों का मेला लग जाता था। ये दिन गांव के बच्चों के लिए सबसे अधिक खुशी के होते थे।

हमारे गांव का सबसे प्रसिद्ध यात्रा पर्व था बाघ-नाच। फागुन के महीने में जब खेती-किसानी का काम नहीं होता, यह तीन दिनों का यात्रा-पर्व शुरू होता था। इस यात्रा के लिए पंद्रह-बीस दिन पहले से तैयारियां शुरू हो जाती थीं। पूजा-पाठ के अलावा इन तीन दिनों तक जो नाच होता था वह आसपास के इलाके में प्रसिद्ध था। हमारे गांव का बाघ-नाच दल दूसरे गांवों में भी जाता था और कुछ पैसे भी कमा लाता था। बाघ-नाच का मुखिया था रघु चौकीदार, जोकि यात्रा के काफी पहले से गांव के युवकों को नाच सिखाता था। रघु चौकीदार हमारे खेती-बाड़ी की देखभाल किया करता और उसका बेटा गोपाल मेरे साथ पढ़ता था। इसलिए हमारे परिवार से उनका अच्छा परिचय था और मुझे तैयारी करने से लेकर अंत तक अच्छी तरह बाघ-नाच देखने का अवसर मिल जाता था।

बाघ-नाच भी वास्तव में एक देखने लायक

चीज थी। पंद्रह-बीस [illegible] युवक जब खुले बदन में पीला पट्टेदार रंग लगाकर ढोल और शहनाई की ताल पर नाचते, देखने वालों के सीने में भय और उत्तेजना पैदा होती थी इसमें संदेह नहीं। नाच अच्छा हो, इसके लिए रघु चौकीदार और गांव के युवक भी विशेष परिश्रम करते थे, पंद्रह दिनों तक खाना-पीना छोड़कर रघु चौकीदार गांव के बाहर ढोल लिए बैठा रहता था। नाच सिखाते समय यदि कोई कुछ भूल करता, रघु उसकी ओर आंखें फाड़कर चिल्लाता था। उन दिनों यदि वह कभी हमारे घर आ जाता और पिताजी उसे कोई काम बताते, तो कहता, 'ज़रा बाघ-यात्रा खत्म हो जाये, मैं कर दूंगा।'

जब गोपाल ने उस साल नाच सीखना शुरू किया, हम बच्चे कुछ आश्चर्य और ईर्ष्यालु हुए थे। गोपाल बड़ा चपल व चंचल स्वभाव का था और पढ़ाई-लिखाई में उसका मन नहीं लगाता था। उसकी उम्र सभी नाचनेवालों की उम्र से कम थी, लेकिन रघु चौकीदार का बेटा होने की वजह से ही उसे इतनी कम उम्र में ही दल में जगह मिल गई थी। परंतु वह बहुत जल्द अच्छी तरह नाचना सीख गया और कुछ ही वर्षों में वह दल में सबसे अच्छा नाचने वाले के रूप में मशहूर हो गया। स्कूल छोड़ने के बाद वह नाच के लिए अधिक समय देने लगा। जिन दिनों रघु चौकीदार अभ्यास कराने नहीं आ पाता, उन दिनों नाच सिखाने का भार गोपाल पर ही पड़ता था।

जब हम लोग गांव छोड़कर शहर आने लगे, पिताजी ने हमारे घर और खेती-बाड़ी की देखभाल का काम रघु चौकीदार को सौंप दिया था। कुछ वर्षों के बाद हम लोगों को रघु के मरने की खबर मिली और गोपाल ने ही उसकी सारी जिम्मेदारी ले ली। शायद मैं कालेज में पढ़ते समय उन्हीं दिनों एक बार गांव गया था। गोपाल के पास हमारे घर की चावी थी और जब तक मैं गांव में रहा उसने मेरी देखभाल अच्छी तरह की थी। जबकि उन दिनों बाघ-नाच की तैयारी चलने की वजह से वह खूब व्यस्त भी रहता था। एक बार मैं उनका रिहर्सल देखने भी गया था। नाच सीखने वाले युवक गोपाल को खूब मानते थे और खूब उत्साह से नाच सीखते थे। गोपाल अब गोपाल चौकीदार के नाम से जाना जाता था और सभी उसे गोपाल चौकीदार कहकर बुलाते थे। रघु के पूर्वजों में कभी कोई गांव का चौकीदार रहा होगा, लेकिन ऐसा लगता है कि यह उपाधि उनके वंश के पुरुषों को क्रमानुसार मिलती चली आ रही है।

इस बार मैं गांव लौट रहा था दस-पंद्रह साल बाद। इस दौरान गांव से मेरा एकमात्र संपर्क था गोपाल चौकीदार। मैं उसे बीच-बीच में हमारे मकान की देखभाल करने के लिए चिट्ठी और मरम्मत के लिए रुपये भेजा करता था। इतने अरसे बाद गांव जा रहे होने के कारण एवं वहां गोपाल से मुलाकात होने की सोचकर मैं बहुत खुश था। शाम को स्टेशन पर उतरकर सोचा था गोपाल आया होगा लेने। लेकिन एक कम उम्र का नये फैशन वाला युवक मुझे स्टेशन

पर मिला और बताया कि [illegible] गोपाल ने उसे भेजा है। जब मैंने उससे गांव के लिए बस पकड़ने की बात कही, उस युवक ने मुझे बताया कि वह मेरे लिए टैक्सी लेकर आया है। गांव की ऐसी प्रगति के बारे में सुनकर मैं खुश हुआ, क्योंकि पहले इस इलाके में लोग टैक्सी का नाम तक नहीं जानते थे। बस भी उस सड़क में खूब कम आती-जाती थी और बस हमें गांव के रास्ते के पास उतार देती और बाद में हमें फिर कुछ दूर तक कीचड़ भरे रास्तें से होकर जाना पड़ता था।

जब टैक्सी सीधे हमारे गांव की ओर रवाना हुई, मैं दंग रह गया, क्योंकि वह सड़क खूब अच्छी हो गई थी। जब मैंने पूछा कि सड़क ग्राम विकास योजना की ओर से बनी है क्या, तब उसने बताया कि अमेरिका की किसी संस्था ने बनवाई है यह सड़क। मैं और कुछ पूछने ही वाला था कि टैक्सी हमारे गांव के निकट पहुंच गई। सड़क की तरह मैं अपना गांव भी नहीं पहचान पाया। वहां काफी कुछ बदल गया था और सब कुछ काफी समृद्ध व संपन्न दिखाई दे रहा था। टैक्सी हमारे घर के आगे रुकी। गांव की तरह हमारा घर भी पहचाना नहीं जा रहा था। घर में हाल ही में सफेदी हुई थी, उसमें शायद और कई नये कमरे जोड़े गये थे और घर के चबूतरे पर लाइट जल रही थीं। सबसे चौंकानेवाली बात यह थी कि घर के आगे दो खंभों के बीच एक बड़ा साइन बोर्ड लगा था, जिसमें लिखा था 'व्याघ्र नृत्य संस्था'।

मेरे आश्चर्य का ठिकाना नहीं रहा, जब मैंने अपने घर के चबूतरे पर कई गोरे लोगों को बैठे देखा। अच्छा हुआ कि उसी व गोपाल चौकीदार घर से बाहर निकलकर मे पास आया। वह भी पहचाना नहीं जा र था, क्योंकि उसने शास्त्रीय संगीतज्ञों जै पोशाक पहन रखी थी। मैं उसे 'क्यों गोपाल कैसा है ?' कहकर गले से लगाने ही वाला कि उसने 'गुड मॉर्निंग' कहकर मेरी ओर हा बढ़ाया और अति अंतरंगता से हाथ दबाया। फिर मुझे ले जाकर चबूतरे पर बैठे आठ-द विदेशी महिला-पुरुषों से उसने मेरा परिच करवाया और मुझे मेरे लिए साफ-सुथरा कि कमरे में लिवा गया। मुझे यह देखक आश्चर्य और खुशी हुई कि अब गोपा चौकीदार एकदम गलत, परंतु धारा प्रवा अंग्रेजी में बातचीत कर लेता था और बाह बैठे गोरे लोग उससे अति संकोचपूर्ण व्यवहा करते थे।

जब हम दोनों कमरे में अकेले बैठे गोपाल ने मुझे अब तक की सारी बा बताई। कहा कि इस बीच बाघ-नाच दुनि भर में मशहूर हो गया है और उसके दल देश-विदेश से बुलावा आता है। वह सात आधे दिन विदेश में रहकर वहां के विदे छात्र-छात्राओं को नाच सिखाता था या वि अपने दल का कार्यक्रम दिखाता था। वि से अनेक महिला-पुरुष भी हमारे गांव सीखने या शोध करने आते हैं। हमारा अब ठीक-ठाक करके गोपाल ने अपने का लगा लिया था और अब वही इस घर खरीदना भी चाहता था। जब रात को उ

अ

चलकर रि
कुछ चौंक
अभी काफी
मुझे समझ
चलता है अ
न आ पाने
दिनों के लि
सबकुछ लि
पुस्तिका दे

बाघ-ना
बहुत-से न
पहले नहीं
एक भारती
व्याघ्रशास्त्र
तालपत्र की

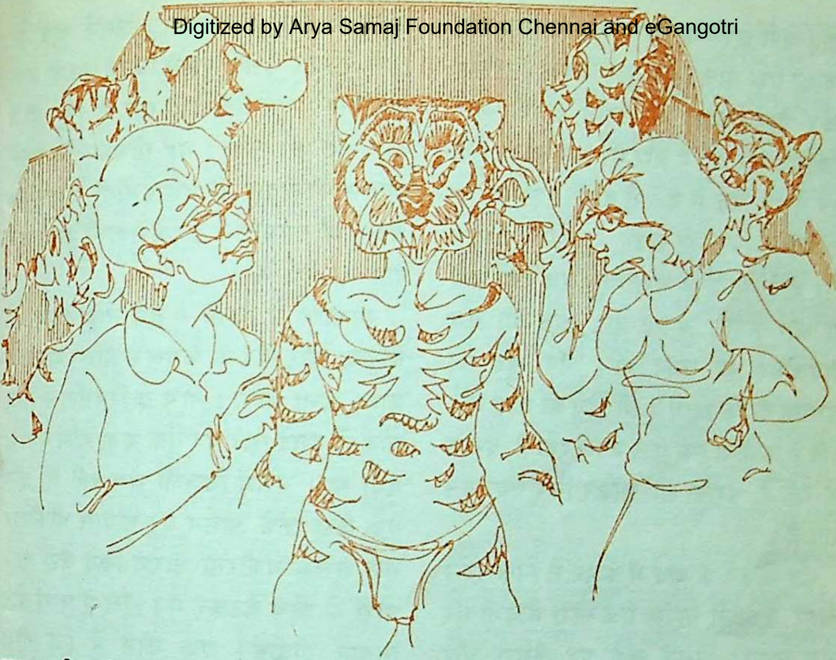

चलकर रिहर्सल देखने को कहा तो पहले मैं कुछ चौंका, क्योंकि बाघ-नाच पर्व को तो अभी काफी दिन बचे थे। परन्तु गोपाल ने मुझे समझाया कि आजकल नाच सालों चलता है और गर्मियों में विदेशी लोगों के यहां न आ पाने की वजह से पर्व को भी जाड़े के दिनों के लिए खिसका दिया गया है। 'इसमें सबकुछ लिखा है' कहकर वह मुझे एक पुस्तिका देकर बाहर चला गया।

बाघ-नाच पर लिखी पुस्तिका पढ़कर मुझे बहुत-से नये तथ्यों का पता चला, जो कि मैं पहले नहीं जानता था। कहते हैं व्याघ्र नृत्य एक भारतीय शास्त्रीय नृत्यकला है जो कि व्याघ्रशास्त्रम् नामक पहली बार आविष्कृत तालपत्र की पोथी द्वारा अनुमोदित हो चुकी है। आगे चलकर यह नृत्य एक विशेष अंचल अर्थात् हमारे गांव में ही सीमित रह गया था एवं प्रादेशिक-आंचलिक प्रभाव की वजह से भ्रष्ट और विकृत हो गया था। यह नृत्य अब तक अतीत के गर्भ में लीन हो गया होता यदि कुछ साल पहले एक अमेरिकी नृतत्त्व शोधकर्ता ने गाड़ी खराब होने के कारण बाघ-नाच की प्रस्तुति के समय हमारे गांव में रात न बिताई होती। उसके बाद शुरू हुआ बाघ-नाच का पुररुद्धार और शुद्धीकरण। कहना न होगा कि गुरु गोपाल के अदम्य उत्साह व मेहनत एवं विदेशी शोधकर्ताओं, नृत्यविदों व संस्थाओं की मदद से यह विश्व प्रसिद्ध हो गया था।

किताब पढ़कर मैं खुश और दुःखी दोनों

हुआ। मेरी खुशी का कारण यह था कि हमारे गांव की एक चीज आज सारे विश्व में प्रसिद्ध होकर देश-विदेश का ध्यान अपनी ओर आकर्षित कर रही है और मेरे बचपन का एक मित्र इसके केंद्र में है। मैं दुःखी इसलिए था कि मेरे बचपन की खुशी, उत्साह, रोमांच और हँसी-ठट्टा से भरा गांव अब वहां नहीं था और हमारा अपना बाघ-नाच भी अब सार्वजनिक हो चुका था। मैंने खुद को दिलासा दी कि इसमें दुःखी होने की कोई बात नहीं है, क्योंकि सब कुछ बदल रहा है, प्रगति हो रही है, पुराना खो-खाकर फिर नया बन रहा है।

यह सोचने के बाद मैं कमरे से निकलकर बाहर आया ही था कि एक गोरा आदमी मेरे पास आया। उसके कंधे पर कैमरा और टेपरिकार्डर एवं हाथ में नोट-बुक देखकर मैं समझ गया कि वह कोई शोधकर्ता होगा। मेरे पास आकर बिना किसी सौजन्य विनिमय के उसने मेरे मुंह की ओर माइक्रोफोन बढ़ाते हुए पूछा, 'क्या आप गुरु गोपाल के लैंडलॉर्ड हैं ?' मैं इस सवाल का तुरंत कोई जबाब नहीं दे सका, क्योंकि गोपाल चौकीदार के पास हमारे घर की चाबी होने के कारण घर के मालिक और किरायेदार जैसे संबंध का सवाल ही नहीं उठता था। मुझे चुप देखकर गोरे ने अपना सवाल दूसरी तरह से पूछा, 'गुरु गोपाल जिस घर में रहते हैं, क्या आप उसके मालिक हैं ?' मैंने हामी भरी। उसके बाद वह मुझे मेरे ही कमरे में ले गया और बिठाया। फिर कंधे से टेपरिकार्डर उतारकर उसका प्लग दीवार के स्विच-बोर्ड में लगा दिया। उसके बाद मे आगे बैठकर उसने मुझसे जिरह करना शु कर दिया। मुझे बेचैनी हो रही थी, फिर भी मना नहीं कर सका। यह सोचकर कि इस गोपाल चौकीदार की भलाई होगी, यथासंभ भद्रता और नम्रता से उसके सवालों का जवा देता जा रहा था।

सौभाग्य से किसी ने हमें नाच देखने बुलाया और गोरे के चंगुल से मुक्ति पाकर बाहर चला आया। नाच के रिहर्सल के लि गांव के दूसरे सिरे पर एक बड़ा हॉल बन गया था। उसमें बिजली जल रही थी एक कुछ ऊंचे आसन पर गोपाल चौकीदार गुरु सुलभ गंभीरता धारण किये बैठा गोरों के बीच बैठकर मैंने हॉल में चारों निगाह दौड़ाई। एक कोने में एक आदमी हाथ में कैमरा लिए खड़ा था गोपाल चौकीदार के पैरों के पास बैठी विदे युवती टेपरिकार्डर का माइक्रोफोन हाथ लिए गोपाल की ओर तन्मयता से ताक थी। गोपाल के सामने जो नाचने वाले बैठे उनके बदन पर बाघ की खाल-सी लग मखमल की पोशाक और चेहरे पर बाघ मुखौटा था। गोपाल की बायीं ओर संगीतज्ञ तरह-तरह के वाद्य यंत्र लिए के आगे बैठे गुरु के निर्देश की प्रतीक्षा कर थे।

हमारे बैठने के बाद गोपाल चौकीदा आंखे बंद करके कोई मंत्र पढ़ भूमि-स्पर्श करके अंगुलियां माथे लगायीं। उसके बाद सभी नाचने वाले

---

पैरों के
करके गो
हुआ और
कर दिय
चित्ताकर्ष
में जो बा
उसकी दू
नहीं था
सका। ना
से मुखौटा
दो विदेशी

नाच ख
व्यक्ति पुन
सवाल कर
उसके चंगु
बदनसीबी
में जा पड़ा
बाघ-नाच
उस सवाल
शांत-शिष्ट
प्रश्न-वाणों
बहुत-सी न
संरक्षण
लोक-संस्कृ
में भी बहुत

लोक-सं
अनुसार शु
लिए अनेक
धीरे-धीरे उ
पर वह
अपसंस्कृति

पैरों के पास बैठी उस लड़की ने एक-एक करके गोपाल के पैर छुए। फिर संगीत शुरू हुआ और नाचने वालों ने उठकर नाचना शुरू कर दिया। नाच अति उत्तेजक और चित्ताकर्षक था। लेकिन मैंने बचपन में गांव में जो बाघ-नाच देखा था, इस व्याघ्र नृत्य से उसकी दूर-दूर तक कोई समानता या संपर्क नहीं था और यह नाच मेरे दिल को छू नहीं सका। नाच के बाद जब नाचनेवालों ने चेहरे से मुखौटा उतार दिया, मैंने यह देखा कि उनमें दो विदेशी युवक और एक युवती भी थी।

नाच खत्म होने के तुरंत बाद वह गोरा व्यक्ति पुनः मेरे पीछे लग गया, मुझसे और सवाल करने। लेकिन मैं बड़ी होशियारी से उसके चंगुल से निकल जरूर आया, पर बदनसीबी से एक दूसरे गोरा व्यक्ति की चपेट में जा पड़ा। उसने मुझे बताया कि वह है बाघ-नाच का प्रथम उद्धारकर्ता। यह व्यक्ति उस सवाल करने वाले गोरा व्यक्ति से अधिक शांत-शिष्ट स्वभाव का था, और मुझे प्रश्न-वाणों से उलझन में डालने के बदले बहुत-सी नई-नई बातें बतायी। भारतवर्ष में संरक्षण के अभाव में किस तरह लोक-संस्कृति लोप होती जा रही है, उस बारे में भी बहुत-सी बातें वतायीं।

लोक-संस्कृति को भारतीय परंपरा के अनुसार शुद्ध और मिलावट से परे रखने के लिए अनेक उपाय करने होंगे। वरना धीरे-धीरे उसमें तमाम घटिया चीजें मिलने पर वह लोक संस्कृति क्रमशः एक अपसंस्कृति में बदल जाएगी जो कि कला की विडंबना ही होगी। जिस तरह कि बाघ-नाच का मुखौटा और पोशाक धीरे-धीरे लुप्त हो गये थे। यह सुनकर मुझे खुशी हुई कि कम से कम विदेशियों की कोशिश से बाघ-नाच हमारे गांव के लोगों के चंगुल से बच गया और परिमार्जित शुद्ध रूप में विदेशों में खूब नाम कमा रहा है। आज रघु चौकीदार जिंदा होता तो इस बारे में क्या कहता, मैंने उस चिंता से खुद को अलग कर लिया।

यह गांव अब रघु चौकीदार का गांव नहीं था। यह था एक अंतर्राष्ट्रीय कला क्षेत्र। बाघ-नाच से हमारे गांव के लोगों का कोई संबंध नहीं था। यह नृत्य-कला देश-विदेश के विदग्ध लोगों के उपभोग तथा नृतत्वविद, समाज शास्त्र, नृत्य-शास्त्रज्ञ शोधकर्ताओं के अध्ययन का विषय था। चेहरे का मुखौटा, बाघ की पोशाक पहनकर नाचने वाले अब हमारे गांव के लोग नहीं थे। वे थे हमारे देश के एक-एक सांस्कृतिक राजदूत।

ये बातें सोचता हुआ मैं गोपाल चौकीदार के पास गया। अब तक उसके पीछे साया-सी चिपकी लड़की उससे दूर नहीं हुई थी। हाथ में एक बाघ का मुखौटा लिए गोपाल उसे समझा रहा था बाघ की आंखे लाल रंग की क्यों हैं। भरत के नाट्यशास्त्र के अनुसार लाल रंग रौद्र रस का प्रतीक है। उस लड़की का चेहरा ख़ुशी से खिल उठा और गोपाल को ज़रा रुकने को कहकर उसने अपनी कापी में कुछ लिखा। पूछने पर मालूम हुआ कि वह लड़की गुरु गोपाल की एक संपूर्ण जीवनी

(शेषांश पृष्ठ १०८ पर)

# अम्मा

□

**दीपशिखा शर्मा**

अम्मा से मेरा परिचय भी एक अजीब संयोग है। लखनऊ जैसे शहर में आने के बाद मुझे एक 'कामवाली बाई' की तलाश थी, जो घर की साफ-सफाई कर सके। इसी उद्देश्य को लेकर मैंने कई लोगों से सम्पर्क साधा और इसी सम्पर्क का फल थी 'अम्मा'।

'बिटिया हमका पड़ोसवाली बहूजी भेजिन हैं, कहती रहें तुमका कामवाली चाही।' उसने कहा।

मैंने उसे ऊपर से नीचे तक देखा और देखने के बाद हृदय में एक कम्पन सा महसूस किया, 'यह मेरी सेवा करेगी या मैं इसकी' मन में ही सोचा।

छोटे कद की, पतली-दुबली काठी पर लाल रंग की घिसी हुई सूती धोती और हरे रंग का रंग उड़ा जम्पर पहने वह मेरी ओर देख रही थी। सिर ढका हुआ था, किन्तु श्वेत बालों की कुछ नटखट लटें उसके अन्दर से ऐसे झांक रही थीं जैसे घूंघट में से नई - नवेली दुल्हन। चौड़े माथे की असंख्य सिलवटें उसकी जीवन संध्या की ओर संकेत कर रही थीं, कटोरों में धंसी आंखे आशा-निराश मध्य झूल रही थीं, पिचके गालों पर सल के एक बड़े समूह ने अपना आधि स्थापित करके गालों के अस्तित्व को ही के लिए समाप्त कर दिया था, उन्नत नाि से आनेवाला श्वासों का ज्वार-भाटा उ घबराहट को मुझ तक पहुंचा रहा था।

'खण्डहर बताते हैं इमारत कभी तो बु होगी' वास्तव में उसका वृद्धावस्था का रूप उसके युवावस्था के सौन्दर्य की संकेत करने में जरा भी नहीं हिचकिचा था।

उसके इस स्वरूप को देखकर मैंने निष्कर्ष पर पहुंचने में जरा भी देर नहीं यह अपने काम करने की उम्र को बहुत छोड़ चुकी है, ये दिन तो इसके आराम के हैं।

मैं कुछ कहती कि इससे पहले ही शायद मेरे मन के भावों को पढ़ गई और पैर पकड़ कर रोने लगी, 'बिटिया, हम मनई का कोऊ काम नाई देत है, सबै हैं कि हम काम न कर पईबे पर बिटि

अ

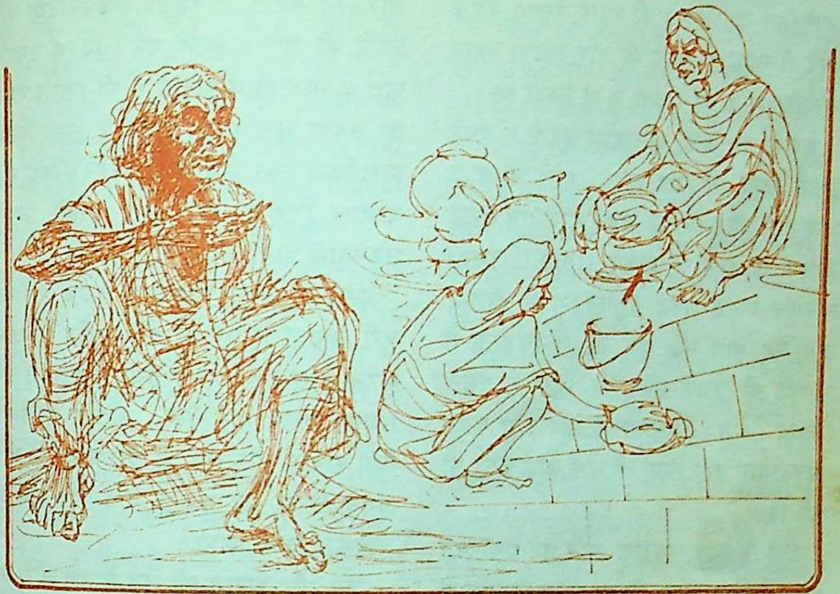

सब कर लेईबे बस तुम बता दियो।' मैं असमंजस की स्थिति में फँसी उसे देख रही थी। उसका प्रलाप जारी थां, 'बिटिया, एक मौका तो दई के द्याखो तुमका हमरे काम ते तिनको शिकायत न मिली ई दुनियाँ मा हमार कोऊ नहीं है, खाय का कौऊनों तो आसरा चहीं, कोऊ काम नहीं देत तुमहू न देईहौ तो...' इतना कहते-कहते वह फफक पड़ी।

उसके झुर्रीदार गालों पर बहती पानी की रेखायें उसकी विवशता को पूरी तरह से व्यक्त कर रही थीं। कौन ऐसा निर्दयी होगा जो उसकी इस अवस्था में भी, परिश्रम करके खाने की ललक पर पानी फेर देगा? अतः उसका स्थान मेरे गृह में सदैव के लिए निश्चित सा हो गया।

'क्या नाम है तुम्हारा?' मैंने पूछा। 'गंगा देवी।' उसका आशामिश्रित उत्तर था। सच नाम के अनुरूप ही तो वह थी — सरल, सौम्य और निष्कलंक सी। क्या सम्बोधन दूं इसको, मेरा मन नवीन एवं प्राचीन मान्यताओं के मध्य फँस कर समाधान ढूंढ़ने लगा। अंत में विजयश्री का वरण किया प्राचीन मान्यता ने ही और मुख ने उसे 'अम्मा' जैसे आदर सूचक सम्बोधन से विभूषित किया।

'अम्मा', तुम कल से काम पर आ जाना...' मेरे यह कहने पर वह मुझे हजारों आशीष देती हुई चली गयी। अपना काम वह बखूबी निभा रही थी। झाड़ू-पोंछा करना और बर्तन

धोना उसके जिम्मे बस यही दो काम थे। पहले दिन की विषाद की काली रेखायें उसके चेहरे से साफ़ हो चुकी थीं और उसका स्थान आत्मसम्मान की दृढ़ता ने ले लिया था।

मुझसे वह घंटों बतियाया करती। अपने पुराने दिनों को याद करते-करते समय के अन्तराल को लांघ वह अपने सुखी एवं समृद्ध जीवन के झूले में झूलनें लगती। उसका बचपन समृद्ध-युक्त वातावरण में बीता। जब वह मात्र एक वर्ष की थी विधाता ने उसकी माँ उससे छीन ली, पिता ने दूसरा विवाह किया। विमाता ने यदि उसे बहुत लाड़-प्यार नहीं दिया तो उसे कोई कष्ट भी नहीं दिया।

गौने के बाद ससुराल आने पर यथोचित आदर सत्कार हुआ, किन्तु शीघ्र ही पति के अवगुणों की खान उसके आगे खुल गई। उसका पति न केवल शराबी बल्कि जुआड़ी भी नम्बर एक था। शराब पीकर उसे मारना उसका नित्य का काम था। जिस दिन वह न मारता उस दिन की कसर उसकी जेठानियां पूरी करतीं, सास थी नहीं वरना शायद उस अबला पर वह भी अपनी हस्तविशेषता का प्रदर्शन अवश्य करतीं।

लाड़ली बेटी के दुख से दुखी बाप बेटी को घर ले आया। उसके दुख का मूल कारण खुद को मानते हुए उसका दूसरा विवाह कर देने का आश्वासन दिया, किन्तु धर्मभीरु गंगादेवी पिता की बात से सहमत नहीं हुई और श्वसुर गृह में वापस लौट गई। फिर भी आशंकित पिता नित अनाज के बड़े-बड़े, भरे-भरे बोरे उसकी ससुराल भेजने लगा और स्वयं आश्वस्त करता कि शायद अब बिटिया किसी की मार न खानी पड़े। किन्तु पति के साथ ही जेठानियों में भी शायद का सर्वथा अभाव था, इसीलिये उसके द्वारा किया गया कोई भी उपाय जिठानियों वाचाल जिह्वा और नित उसके उठनेवाले हाथों को न रोक पाया।

काल के कराल विषदन्तों ने एवं पति बुरी आदतों ने घर की श्री-समृद्धि को करना शुरू कर दिया तो ससुर ने बंटवारा सबको अलग कर दिया। बंटवारे का पैसा शराब और जुए की भेंट चढ़ाने के अपने हिस्से का मकान बेच पति उसे लखनऊ चला आया।

जुए और शराब की लत ने उसे चोरी ओर अग्रसर किया। रेलवे विभाग से चुराने के जुर्म में उसे रेलवे की नौकरी हमेशा के लिए छुट्टी दे दी गयी। घर में रोटी के दर्शन भी दुर्लभ हो जाने पर चलाने का जिम्मा गंगादेवी ने अपने लिया। हाड़तोड़ परिश्रम का जो क्रम चला उसका सिलसिला आज भी गंगादेवी जीवन में अनवरत रूप से चला आ रहा शराब और जुए की लत ने उसके जर्जर अवस्था में पहुंचा बिस्तर का बना दिया और एक दिन अपनी बुरी को इसी समाज को सौंप सदा-सदा के चला गया। रह गई अकेली गंगादेवी उसका श्रमसाध्य शरीर।

किसी के आगे हाथ न फैलाना

इसीलिए वह कभी 'दाल मिल' में काम करती तो कभी 'बगिया' में। कभी ईंटा ढोती तो कभी कोई और काम करती। समय के बहाव ने 'दाल मिल' को बन्द करा दिया, बगिया को उजाड़ कर महानगर का निर्माण करा दिया तो जीविका के लिए एक बार फिर गंगादेवी को भ्रमित पथ पर खड़ा होना पड़ा।

इसी समय इस एकाकी जीवन की सहचरी का हाथ मेरे हाथों में सौंप शायद ईश्वर निश्चित हो गया, तभी तो उसके जीवन की रक्षा का दायित्व मैंने स्वयं अपने ऊपर ले लिया।

विधाता तो शायद उसकी परीक्षा ले-लेकर उसे खरा सोना बनाने पर तुला था, उसकी ज्योतिर्मयी नेत्र की ज्योति पर तुषारापात कर दूर खड़ा मन्द-मन्द मुस्कुरा कर मेरी ओर व्यंग्य से देखने लगा। शायद उसे इस कलयुगी संसार में अब एक भी ऐसे व्यक्ति की आशा शेष न थी जो बिना किसी स्वार्थ के किसी अभागे दीन-दुखी की सहायता करने की कामना रखता हो। मुझे लगा ईश्वर की इस सोच को बदलना ही होगा, अतः मैंने इस अभियान के लिए कमर कस ली।

जब इस अभियान का परीक्षा फल घोषित हुआ तो घोषणा की प्रतिक्रिया स्वरूप अम्मा भूरी कमानी पर उड़ती चिड़िया से सजे फ्रेम का ऐनक लगाये मेरे समक्ष खड़ी थी। 'बिटिया, तुम हमका जिया लीन्हीयू' के साथ ही गर्म-गर्म अश्रु बूंदें मेरे पैर पखारने लगीं।

उसे भय था कि शायद मैं उसे अब पुनः काम पर न रखूं, इसीलिए वह जितने दिन अस्पताल में रही बार-बार मुझसे आश्वासन लेती रहती कि वही पुनः काम पर आयेगी। जीवन फिर पुराने ढर्रे पर चल पड़ा। कुछ ही दिन चैन से बीते थे कि एक दिन फिर अम्मा रोती-रोती आई और बोली, 'बिटिया, हमार दूसर आंख बहुत पिरा रही है, लागत है, मानों कोऊ छूरी चला रहा होये' उसकी आँख से अनवरत बहने वाले अश्रुकण भी उसकी बात की पुष्टि कर रहे थे।

पुनः वही अस्पताल का क्रम शुरू हुआ। पता चला उसकी दूसरी आंख का 'दीदा' सड़ गया था। तुरन्त आप्रेशन किया गया। आप्रेशन के बाद जब वह बाहर आई तो जैसे उसके शरीर में रक्त की एक बूँद भी शेष नहीं बची थी। रक्त के अभाव में उसका गौर वर्ण श्वेत हो गया था। बाद में आप्रेशन के जिस वीभत्स रूप का उसने वर्णन किया उसे सुन मेरे शरीर के समस्त रोयें खड़े हो गये। 'बिटिया डॉगडर भईया हमका बेहोश नहीं कीन्हिन, कहत रहैं तुम्हरे शरीर मा इत्ती ताकद नहीं है कि तुमका बेहोश कीन जाये। बिटिया, हमरे होशये मा औजार लैके हमरी आंखिन मा घुसेड़ दीन्हिन और हमरी पूरी आंख खलबला दीन्हिन... 'उफ् मैंने अम्मा को बीच में ही रोक दिया, 'बस करो अम्मा, मैं न सुन पाऊंगी।' वह हंस दी, 'बस इत्ते मा ही घबरा गयू।' इस आप्रेशन ने उसे तोड़ दिया था। उसकी शारीरिक शक्ति का बिल्कुल ह्रास हो गया था, किन्तु फिर भी वह काम करने की जिद्द लिए बैठी थी। शायद उसे डर था कि यदि वह काम नहीं करेगी तो मेरे

घर से दुत्कार दी जायेगी, तब वह खायेगी क्या? जीवन भर सुरक्षा देने का आश्वासन भी उसे बहुत दिनों तक आश्वस्त न कर पाया!

यद्यपि घर के काम अब दूसरी बाई करती है, किन्तु अम्मा ने अब अपने जिम्मे दूसरे नये काम ढूंढ़ निकाले हैं, 'बिटिया, इत्ती देर भई अब हीं नाश्ता नाहीं कीन्हियू। चलो नाश्ता करि लेओ।' या फिर 'बिटिया, अब बहुत पढ़ि भयु जाओ तनिक घूमि आओ, बिटिया, दूध पका देओ तब कहूं जाओ नहीं तो खराब हुई जाई।' आदि निर्देशों से मुझे तो निर्देशित करती ही साथ ही कमली को भी निर्देशित करती, 'ये कमली, बर्तन तिनुक साफ धोआ करो। सारे बर्तनन मा जूठन लागि रहति है। तिनुक रगड़ के फरश साफ करो।' औ बड़बड़ाने लगती और दोनों म वाक्य यु छिड़ जाता और तब तक चलता रहता ज तक मैं हस्तक्षेप न करती। सब्जी काट आटा माड़ना, चटनी बनाना जैसे अनेक का उसने स्वयं खोज निकाले।

जब कभी किसी कारण वश अम्मा घर आये तो मन आशंकित हो उठता है और त तक आशंकित ही रहता है जब तक वह आ जाये। मैं कभी-कभी सोचती हूं कि जब ईश्वर के बुलावे पर हम लोगों रोकते-रोकते भी चली जायेगी, तब क होगा!'

— सी-१० के तो
महानगर (विस्तार
लखनऊ - ६, उ.

☐

### (पृष्ठ १०३ का शेषांश)

लिखने में जुटी है। अब उस लड़की को पता चला कि मैं गोपाल के बचपन का दोस्त हूं, मुझसे एक पूरे दिन का साक्षात्कार लेने का वायदा करवा लिया।

हम गांव के पिछवाड़े से होकर नृत्याभ्यास वाले स्थान से अपने घर लौटे। जाड़े की रात थी। गांव के सारे लोग सो चुके थे और सब कुछ खामोश था। अमराई के साथ वाले रास्ते से होकर गुजरते समय थोड़ी-थोड़ी दूरी पर पसरी चांदनी, जाड़े का कोहरा, झींगुर की आवाज़, मिट्टी की महक और चमगादड़ की फड़फड़ाहट सुनकर मुझे बचपन की याद आ गयी। लेकिन यह इंद्रजाल सहसा मिट गया, जब मेरी आंखों के आगे हमारा बिजली रोशनी वाला घर और उसके आगे प्रहरी खड़ा संस्था का साइन बोर्ड दिखाई दिया

जब हम सभी बैठे खाना खा रहे थे गो ने मुझसे पुछा, मैं गांव में और कितने दि रहूंगा? कैमरा, टेपरिकार्डर, नोट-बु फ्लश लाइट, जीवनी-लेखक, नृतत्व शोधकर्ताओं की ओर देखकर मेरा मन तरह से खिन्न हो उठा। मुझे यह मा अटपटा-सा लग रहा था और घुटन मह हो रही थी। मैंने उससे कहा, 'शहर में ज़रूरी काम है, कल सुबह ही लौट जाऊंगा

अनुवाद : डॉ. राजेन्द्र प्रसाद मि

☐

# बोनस

**☐ दामोदर खड़से**

लोकल में चढ़ते ही वह बहुत खुश हुआ। खिड़की की जगह उसे बैठने के लिए मिल गई थी। वी.टी.स्टेशन से शायद ही कभी उसे बैठने के लिए जगह मिली हो। आज तो खिड़की के पास उसने अपनी थैलियां ऊपर रख दीं और सोचने लगा, यह पहली दीवाली है कि उसने घर के सभी लोगों के लिए कपड़े बनवाए हैं। वैसे उसे तीन हज़ार तनख्वाह मिलती है। पर बंबई में पता ही नहीं चलता-ऊंट के मुंह में जीरा। इसलिए उसने एक अलिखित नियम-सा बना रखा था, जिसका जब जन्मदिन आएगा, कपड़े सिलेंगे। इससे अपने आप एक साथ खरीदने की झंझट से भी वह बच गया और उसके लिए भी बोझ धीरे-धीरे उठाने जैसा लगने लगा।

वैसे उसका परिवार बहुत ही संतुलित है, जैसा कि आजकल सब चाहते हैं। उसे किसी तरह का कोई ऐसा-वैसा शौक भी नहीं था। फिर भी वह हमेशा चिंता में रहता है। २५ तारिख के बाद तो उसे १ तारीख का इंतजार ही करना पड़ता है। आज खिड़की की जगह बैठकर वह मानखुर्द के लिए जा रहा था। खिड़की से बाहर बंबई की बस्ती। रेलवे लाइन के पास झुग्गी-झोपड़ियों की अनंत लाइनें। दादर से आगे बढ़ने पर तो इसकी संख्या भी बढ़ती गई। उसकी आंखों के सामने अपनी पुरानी जिंदगी तैर गई।

ऐसी ही झोपड़ियों में उसका बचपन बीता। कई बार उसका घर बना, टूटा, तोड़ा भी गया और फिर-फिर बना। बचपन से वह अपने बाप को घर बनाने के लिए ही चिंतित पाता रहा था। तबसे उसने मन में एक गांठ बांध ली थी कि वह छोटा-सा ही क्यों न हो एक अपना घर जरूर बनाएगा, जिसे कोई तोड़ न पाए। कम से कम उसके बच्चे अपनी आंखों से टूटता घर न देखें। बस उसकी इत्ती-सी ख्वाईश थी, जो पूरी हो गई, पांच साल पहले। पर इसके लिए करीब-करीब उसे अपने आपको गिरवी रखना पड़ा। इधर-उधर से तमाम लोन लेकर उसने अपने सबसे बड़े सपने को साकार कर ही डाला। पर उसके जीवन के ये पांच साल बेहद बेचैनी के रहे। पिता नया फ़्लैट देख नहीं पाए। उनका दमा उन्हें ले डूबा। मां भी कुछ ही दिन रह पाई इस नए फ़्लैट में। और उसकी हर शाम ऑफिस से छूटते ही एक दूकानदार

के खाताबही लिखने में विसर्जित होती रही। लेकिन कर्ज की रकम है कि हनुमान की पूंछ की तरह कम होने का नाम ही न लेती। एक लंबे संघर्ष के बाद पिछले साल से उसकी पगार घर ले जाने लायक बनी। पत्नी के खूब मना करने के बाद उसने शाम की नौकरी छोड़ी। पर वैसे भी घर रात नौ से पहले नहीं पहुंच पाता था।

उसकी इस पांच साला पिछली जिंदगी में पता नहीं कब, आराम की जगह मिलने से उसकी आंख लग गई। या वह खुली आंखों से अपना भूतकाल देखते-देखते तंग आ गया था। लेकिन वर्तमान को देखने पर उसे संतोष होता कि उसकी मेहनत उसे एक अच्छा घर-परिवार दे पाई। उसका पूरा घर उसकी गाढ़ी कमाई का था। उसने कभी बंबई की काली छाया अपने घर पर नहीं पड़ने दी। वरना उसके आफिस में लोग न जाने क्या-क्या करते हैं। उसने अपना ईमान, प्राणों की तरह संजोकर रखा था।

बीच-बीच में उसकी आंख खुलती। वह बाहर झांक लेता कुर्ला स्टेशन आ गया। कितनी भीड़ है। पैर तक रखने के लिए जगह नहीं है। कितनी तकलीफ है। लोग खड़े-खड़े ही सो रहे हैं। क्या करते। वह एक बार अपनी थैलियों की ओर देख लेता। नए कपड़ों में प्राची कैसी लगेगी। गुड़िया की तरह फुदकेगी वह, तब उसका आकाश उसके कदमों में होगा। और प्रशांत अब कुछ बड़ा हो चला है - शांत भी। वह इन कपड़ों में और कुछ बड़ा लगेगा। और सरला - वह तो बेहद संतुलित है। कभी उसने अपने लिए किसी चीज की ज़िद ही नहीं की। पता नहीं उसे यह साड़ी मन से पसंद भी आती है या नहीं। वैसे जो भी वह उसे लाकर देता है, वह उत्साह से ही लेती है। पर भीतर से उसे भी पसंद आ जाए तो क्या कहने। वैसे इस बार यह तय था कि वह अपनी पसंद से सबके कपड़े लाकर देगा। अन्यथा सरला ऐसी खरीदारी में साथ होती ही है।

फिर जैसे ही उसकी आंखे खुलीं - अरे मानखुर्द आ गया! काफी लोग तो उतर भी गए। वह भी जल्दी-जल्दी उतर गया, क्योंकि आगे उसे बस पकड़नी है। वह लगभग दौड़ता हुआ स्टेशन से बाहर गया। बस स्टैंड पर लंबी लाइन थी। पर बस लग चुकी थी, लोग धीरे-धीरे बस में समा रहे थे। उसे लगा किसी तरह बस में घुस जाऊं तो और आधे घंटे में घर पहुंच जाऊंगा। साढ़े आठ बज रहे थे, उसकी घड़ी में। बस में ड्राइवर बैठ चुका था। बस लगभग शुरू हो चुकी थी। भीतर खचाखच भीड़ और कंडक्टर ने घंटी दे दी। वह लाइन तोड़कर बस की ओर भागा। उसके साथ और तीन-चार लोग थे। उसने बस का बार पकड़ा और अपने आपको बस के हवाले कर दिया। थकान थी वह झूल-सा गया था, पर लोगों ने थाम लिया और उसे भीतर आ जाने दिया। जैसे ही वह भीतर घुसा उसे याद आया कि वह अपनी थैलियां ट्रेन में ही भूल आया है!

पल भर को लगा कि उसकी धड़कन ही थम गई। फिर इतनी जोर से धड़कनें बढ़ीं कि

वह पसीनें से लथ-पथ हो गया। अगले पल उसे होश आया और उसका हाथ सीधे बस की घंटी पर गया। जोर से खींचा उसने और पिछले दरवाजे की ओर सबको ठेलता हुआ आगे बढ़ा। न जाने कितने लोगों ने उसे गालियां दीं, भला-बुरा कहा। पर उसके कान तो जल रहे थे।

ड्राइवर ने चिल्लाते हुए पीछे देखा था, ऐसे में बस कुछ धीमी हुई थी। मोड़ पर वह कूद पड़ा।

पता नहीं कहां से उसमें शक्ति आ गई थी। वह सिर्फ लड़खड़ाया, पर गिरा नहीं। लोग पूछते भर रह गए क्या हुआ, क्या हुआ! आगे बस रुकी थी। पर वह स्टेशन की ओर भाग रहा था। कोई रिक्शा खाली न मिलता। वह लगातार भाग रहा था। स्टेशन पहुंचा। भीड़ को चीरता हुआ वह ट्रेन तक पहुंचा पर यह क्या, पहले वाली ट्रेन तो कब की निकल चुकी है। यह दूसरी ट्रेन है। अभी-अभी आई है। लोग अभी भी ट्रेन से उतर रहे हैं। उसका एक मन हुआ कि वह इसी ट्रेन से आगे जाए और पहली ट्रेन में अपनी थैलियां देखे। वैसे संभावना उसे भी बिल्कुल नहीं लग रही थी। पर, ऐसा न करे तो क्या करे? दीवार को लग कर सीमेंट की बैंच पर वह बैठ गया। क्या करेगा जाकर! किसी ने उठा लिया होगा अब तक। ...नहीं, रात का समय है, अभी मानखुर्द से वी. टी. स्टेशन कौन जाएगा ....फिर भी वह बैठा रहा। सामने से दूसरी ट्रेन वी.टी. के लिए रवाना हो गई।

अब कहीं जाकर उसे होश-सा आया। बोझिल कदमों से वह उठा। लगा उसके पांव हाथी रोग के शिकार हो गये हैं। आंखों के सामने कोहरा पसर गया है। उसने आंखें पोंछी और सिर को एक झटका दिया। सरला से आँखें चार करनी हैं। उसे कितना अफसोस होगा। वह कोसेगी तो नहीं, पर मुझे इस तरह भूलना नहीं चाहिए था।

वह स्टेशन मास्टर के सामने था, 'साहब कोशिश तो कीजिए कुर्ला स्टेशन तक शायद मेरी तकदीर से मिल जाए।'

कुला स्टेशन से गाड़ी अब तक निकल चुंकी होगी।

मैं वी.टी. पर सूचना दे देता हूं। वैसे कुछ कहते-कहते स्टेशन मास्टर रुक गया। उसने वी.टी. स्टेशन पर तुरंत सूचना दे दी। जानता तो यह भी था कि अब उम्मीद करना बेकार है, लेकिन फिर भी उसे राहत मिली।

वह जैसे-तैसे बस स्टैंड पहुंचा उसका सारा उत्साह, सारी शक्ति ज्यों उन थैलियों के साथ ट्रेन में छूट गई हो। कितनी तमन्ना से उसने ये कपड़े खरीदे थे। और कितने दिनों बाद! अपेक्षाकृत महंगे भी।

वह कब बस में चढ़ा पता ही नहीं। सीट भी मिल गई बिना किसी भाग-दौड़ के, परिश्रम के। रात ग्यारह बजे कौन बचेगा घर जाने के लिए। कुछ लोग थे। पर भीड़ नहीं थी। क्या कहेगा सरला को? कैसे भूल गया वह?

अपने दरवाजे के सामने वह खड़ा था। बेल बजाने का साहस नहीं रहा था। उसके

पैर ज्यों सूख गए हों। पूरा रास्ता। पीछे से कोई अगली मंजिल के लिए दनदनाता हुआ चला गया। क्या सोचता होगा मेरे बारे में। बस उसकी अंगुली ने बेल को छुआ और दरवाजा खुल गया। ज्यों सरला दरवाजे पर ही खड़ी हो।

'कितनी देर कर दी। बच्चे अभी तक जाग रहे थे आपके लिए कि पप्पा के साथ खाना खाएंगे ...आप बहुत थके लग रहे हैं। आप जल्दी से फ्रेश हो लीजिए ....मैं खाना लगाती हूं।'

उसे भी बाथरूम जाने की जल्दी थी। वह फ्रेश होने चला गया। बाथरूम जाकर उसे लगा कि वह तो सरला से एक शब्द भी नहीं बोला और न ही आंखें मिलाई। और कितनी भली है वह। उसे मालूम था कि आज मैं कपड़े लेकर आने वाला हूं। फिर भी कुछ नहीं पूछा। लंच बॉक्स भी उन्हीं थैलियों में था। अच्छा हुआ आंखें नहीं मिलीं। शायद वह रो पड़ता। उन थैलियों में सिर्फ कपड़े ही नहीं थे। उनमें साल की खुशियां थीं। उत्साह था, स्फूर्ति थी और एक-दूसरे को नए कपड़ों में देखकर आनंदित होने के क्षण समाए हुए थे। औरों को नए कपड़ों में देख बच्चे कितने अनमने हो जाएंगे।

पता नहीं कब तक वह शॉवर के नीचे खड़ा था।

बाहर से आवाज आई, 'बाकी कल नहा लेना। खाना तैयार है।'

तब उसे याद आया। यह भी क्या पागलपन है। उसने तो कितना कुछ खोया है, कितना पाया है। ऐसी घटनाओं के लिए इतना समय काफी दे गया। जो होना था सो तो हो चुका। अब संभल गया था वह। उसके चेहरे पर फैली बेबसी और निराशा कुछ कम हुई। शायद न-होने से भी उसे कुछ ताजगी महसूस हो रही थी।

उसने खाना खाया। भोजन के समय उसकी इच्छा हुई थी कि सरला को बताए। पर फिर सोचा सरला का भोजन भी क्यों कसैला करूं। नहीं बताया उसने। सामान्य-सा रहा।

खाना खाने के बाद वह विवश हो गया, 'सरला आज कपड़े मैं ट्रेन में ही भूल आया। पता नहीं यह गलती कैसे हो गई। मेरे साथ ऐसा क्यों होता है ...कोई हराम की कमाई तो थी नहीं, फिर क्यों ऐसा हुआ?'

'सरला ने पूछा कैसे भूल गए। कोई चुरा ले गया?'

'नहीं मैं ही भूल गया। बच्चे कितने निराश होंगे। कितने सालों बाद सब के लिए कपड़े खरीदे ...पर रास नहीं आए ...' वह लगभग रुंआसा हो गया।

सरला उसके करीब आई, 'होना था सो हो गया। परीक्षा की घड़ी कभी समाप्त नहीं होती।' लेकिन, बच्चों को तो सब कुछ समय पर ही मिलना चाहिए न... दो महीने बाद उन्हें कपड़े देने से क्या होगा?' वह ज्यों अपने आपको कोसने लगा।

सरला ने हालात की लगाम थाम ली। ऐसे बोझिल समय में वह अधिक दृढ़ हो जाती है। वह ज्यों मुरझा ही गया था। पर सरला की

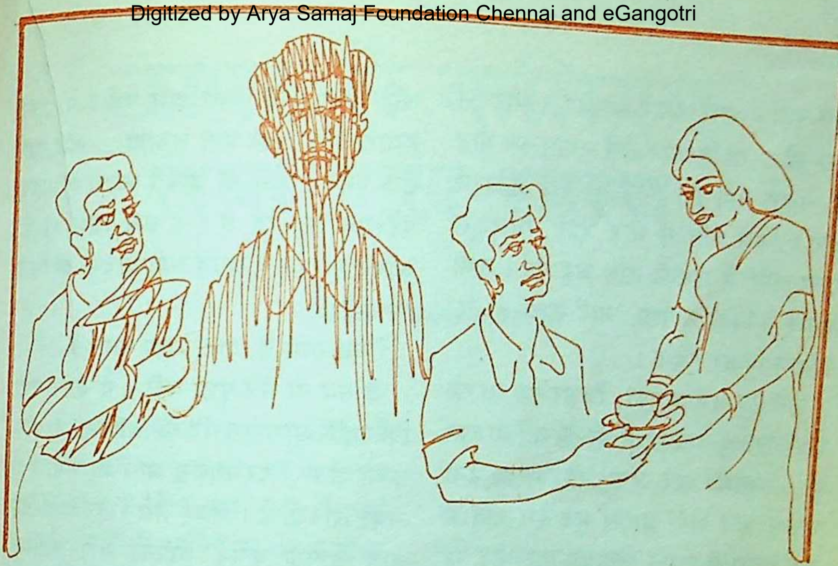

दृढ़ता ने उसे ठंडक पहुंचाई। उसकी जड़ें फिर गीली हो गईं। उसके जीवन के इस लंबे रेगिस्तान में, सरला ऐसे टूटते क्षणों में पता नहीं कैसे थाम लेती है। वैसे हमेशा वह बहुत ही सामान्य-सी और अस्तित्वहीन लगती है। उसने सरला को थाम लिया।

दूसरा दिन कुछ बोझिल-सा रहा उसके लिए। सिर में कुछ दर्द और आंखों में चुभन। अपनी ही धुन में वह ऑफिस के लिए निकल पड़ा। बच्चे सुबह सात-बजे ही स्कूल के लिए निकल पड़ते हैं। उसकी सुबह-सुबह आंख लगी थी, इसलिए सरला ने नहीं जगाया। वैसे भी वह बच्चों से रात में ही मिल पाता है।

स्टेशन पहुंच कर उसने स्टेशन मास्टर से पूछताछ की। वही उत्तर मिलना था। कोई खबर नहीं। आफिस भी वह अनमना ही रहा। किसी से ऐसे संबंध नहीं जिसे वह अपने मन की बात बताता। और पता नहीं कौन इस बेवकूफी पर हंसी उड़ाए। चाय के समय सब हंसी-मज़ाक के मूड में थे। दीवाली की तैयारी-खरीदारी की चर्चाएं। हंसी-मुस्कान उसे भीतर तक छेद जाती। फिर वह सोचता, ऐसा मन किस काम का जो ऐसी बातों में टूटता ही रहे। बस वही गिरता, वही थमता। दिन भर कोई काम नहीं हो सका उससे। वो तो अच्छा हुआ जो जरूरी काम नहीं आ पड़ा उस दिन। न ही बॉस ने बुलाया।

जैसे पिछले दो दिन उसकी ज़िंदगी में आये ही नहीं। अफसोस और सिर्फ अफसोस से सराबोर ये दिन कब और कैसे चले गये उसे पता नहीं चला। शाम को वह स्टेशन के लिए

चल पड़ा। आंखें जमीन में गड़ाए। भीड़ का एक छोटा-सा हिस्सा। उसे लगता वह भीड़ से अलग नहीं है। भीड़ का एक अकाट्य अंग। जिस गति से भीड़ जाती, बिलकुल उसी गति से उसकी गति जुड़ गई। तभी बगल से किसी ने पुछा, 'भाई साहब वी.टी. स्टेशन किधर पड़ेगा।'

उसे एक मज़ाक सूझा, 'जिधर सब जा रहे उधर निकल जाइए। मैं भी तो वहीं जा रहा हूं...।' बोलने पर लगा, सीधे बता देना चाहिए था। खैर, उसका मूड इस बात से कुछ हल्का हो गया। अचानक एक मोड़ पर वह उस अजनबी राही से बोला 'आप सीधे निकल जाइए.... मुझे एक काम याद आ गया...' कहकर वह मुड़ गया। बिना किसी उद्देश्य से। सोचा, चलो टेलर की दुकान से हो चलें।

दुकान के सामंने पहुंचते ही टेलर मुस्काया। 'क्यों साहब, कल कपड़े ट्रेन में ही भूल आए!'

उसकी धड़कन फिर रुक गई और तेजी से चलने लगी। उसकी आंखों में एक तेज चमक उठीं और वह टेलर के अगले वाक्य की बेसब्री से प्रतीक्षा करने लगा। टेलर अपने कपंड़ों के माप के साथ ही बात कर रहा था। कल एक साहब आए थे, उन्होंने आपकी थैलियां यहां रखीं और बताने लगे कि उन्होंने कहां पाई और किस तरह थैली और रसीद पर छपे हमारी दुकान का पता लगाया.... और यहां तक पहुँचे। मुझे तो आपसे ज्यादा वे साहब परेशान लग रहे थे। वे कल शाम को भी आकर गए कि वे कपड़े सही आदमी को मिले या नहीं।

'क्या नाम है, कहां काम करते हैं...?'

ये सब तो मैंने पूछा नहीं... ये जरूर कहा कि यहीं आसपास किसी ऑफिस में काम करते हैं। ...पर साहब आप भी कमाल के लकी आदमी हैं। बंबई जैसे शहर में दो दिन बाद आपके कपड़े आपको सही सलामत वापस मिल रहे हैं। जरूर आपकी यह गाढ़ी कमाई का पैसा होगा।

वह कुछ नहीं बोल पाया। टेलर की बातें सुनता रहा। अपनी थैलियां लेकर उस आदमी का चेहरा अपनी आंखों के सामने बना रहा था।

तभी बगल से किसी ने पूछा, 'साहब वी.टी. स्टेशन किधर पड़ेगा?'

उसने उस आदमी को गौर से देखा। यह भीड़ का हिस्सा नहीं था! वह बोला, 'चलिए टैक्सी में मेरे साथ। मैं भी वी.टी. ही जा रहा हूं।'

—केंद्रीय राजभाषा विभाग,
बैंक ऑफ महाराष्ट्र,
१५०१, शिवाजीनगर,
पुणे - ४११ ००५.

□

# द्वापर से कलियुग तक जल रहस्य

(हिन्दुस्तान समाचार फीचर सेवा)

महाभारत समाप्ति पर था। दुर्योधन की सब सेना मारी जा चुकी थी। वह जलमन्थन करके पानी के भीतर जहां लक्ष्मी थी, वहां पहुंचा। लक्ष्मी ने दुर्योधन पर प्रसन्न होकर उसकी सहायता का आश्वासन दिया। लक्ष्मी दुर्योधन की मदद करतीं इससे पहले ही भीम ने उसे ललकारा और वह पानी से बाहर आ गया। झीलों या समुद्र के भीतर के रहस्यों की यह एकाकी कथा नहीं। भारतीय पुराण ऐसी कथाओं से भरे पड़े हैं। समुद्र के रहस्य आज भी साहसी युवकों को अपनी ओर आकर्षित करते हैं। ऐसे ही तीन साहसी युवकों ने स्पेन के तट से दूर वैलेंशिया की खाड़ी में डूबी गुफाओं से निकलती प्रकाश किरणों का रहस्य जानने को समुद्र में प्रवेश किया था।

क्वार (अक्टूबर) का महीना था। वैलेंशिया की खाड़ी अपेक्षाकृत शान्त थी। सर्गोविया अपने दो अन्य मनमौजी साथी युवकों के साथ समुद्र में गोता लगा रहा था। अचानक इन गोताखोरों ने देखा कि सामने की चट्टानों के बीच से नील-श्वेत किरणें फैल रही हैं। तीनों युवक तैर कर उन चट्टानों के पास पहुंचे। उन्होंने देखा कि प्रकाश किरणें समुद्र के भीतर एक गुफा से निकल रही हैं। गुफा के भीतर से आने वाले इस प्रकाश का उत्स जानने के लिए ये युवा गोताखोर समुद्र के भीतर उस गुफा के द्वार पर पहुंचे। गुफा के भीतर लगभग आधा घण्टे तक प्रकाश के स्रोत का पता लगाते रहे पर उन्हें इसमें सफलता नहीं मिली। अचानक प्रकाश गायब हो गया। युवा गोताखोर गुफा के भीतर थे। गुफा में गहरा अन्धकार था। संयोग से जब प्रकाश गायब हुआ तब तीनों युवा गोताखोर गुफा द्वार पर थे। खुले शान्त समुद्र से जो प्रकाश पानी के भीतर आ रहा था उसके सहारे ये गुफा से निकल कर बाहर आये। उन्होंने मुड़कर देखा। गुफा द्वार पर प्रकाश का कहीं कोई लेश नहीं था। इससे उनकी जिज्ञासा और बढ़ी।

अगले दिन वे फिर उसी समय खाड़ी के उसी स्थान पर पहुंचे। उन्होंने फिर समुद्र के भीतर की गुफा से वैसी ही प्रकाश किरणें निकलती देखीं। तीनों युवक गोता लगा कर फिर गुफा द्वार पर पहुंचे। उन्होंने एक

गुफा द्वार से उसी तरह रस्सी बांधी जैसे पर्वतारोही स्वयं को रस्सी से बांधते हैं। इस रस्सी के सहारे तीनों युवक गुफा के भीतर दाखिल हुए। गुफा लगभग आधे घण्टे तक नील-श्वेत आभा से आलोकित रही और फिर प्रकाश का लोप हो गया।

गोताखोरों ने पता लगाया कि प्रकाश कैसे होता है। उन्होंने पानी की गहराई की गणना की और उगते सूर्य के कोण का सही पता लगाया। उन्हें पता चला कि आश्विन मास (अक्टूबर) में सूर्य की तिरछी किरणें गुफा द्वार पर पड़ती हैं जिससे वह प्रकाशित हो उठती है। यह प्रकाश इस तरह परावर्तित होता है कि गुफा द्वार से नील-श्वेत किरणावली निकलती प्रतीत होती है। इस जानकारी के आधार पर विज्ञानियों ने वैलेंशिया खाड़ी की अन्य गुफाओं की खोज की। उन्हें पता चला कि शरद ऋतु में प्रातःकाल थोड़ी देर के लिए सूर्य की किरणें वक्र होकर गुफा द्वार पर पड़ती और परावर्तित होती हैं जिससे अधिसंख्य गुफाओं से प्रकाश किरणें निकलती नजर आती है।

इस घटना के बाद से दुनिया में विज्ञानी समुद्र की गुफाओं की खोज और अध्ययन में जुट गये हैं। अमेरिका में तो अधोजल गुफा अनुसंधान दल की स्थापना की गयी है। पर विज्ञानी इस पर भी जोर देते हैं कि समुद्री गुफाओं के रहस्यों का पता लगाने के लिए गोता लगाने से पूर्व उचित प्रशिक्षण और अध्ययन आवश्यक है। सुरक्षा नियमों का पालन भी आवश्यक है।

समुद्री गुफाओं के रहस्यों की खोज में कितने खतरे हैं इसकी एक घटना बैडन-बैडन के निकट एक समुद्री गुफा की खोज के समय घटी। गोताखोर फ्रिट्ज मैनहीम ने २६४ फुट की गहराई तक गोता लगाया। यह गोता तो ठीक रहा। पर दूसरे गोते में जब मैनहीम पानी के भीतर २५९ फुट की गहराई पर पहुंचा तब निर्देशक रस्सी टूट गयी। यह तो भाग्य ही था कि गोताखोर सही सलामत पानी के ऊपर आगया। इतालवी गोताखोर गुफा द्वार की घास हटा कर गुफा के भीतर चला गया। उसके अन्य साथी आये पर उन्हें घास से ढकी गुफा के द्वार का कहीं पता न चला। सब साथी गुफा के पास प्रतीक्षा करते रहे पर उनका साथी जो गुफा के भीतर गया था, नहीं लौटा तो नहीं लौटा। लापता गोताखोर के साथी चट्टान पर फैली घास में गुफा का द्वार खोजते रहे, पर न द्वार मिला और न साथी। इस घटना ने गुफाओं की खोज के खतरे को यथार्थ बना दिया है।

# रास्ते अपने-अपने

**☐ कमला चमोला**

पंचायती राज और उसमें स्त्रियों के लिये स्थान के आरक्षण की बात तो आज सुनने में आ रही है। मेरे गांव में तो स्त्रियों की पंचायत बड़े ही सफल तथा सुनियोजित ढंग से कई बरसों से चली आ रही है। अमूनन गांव हम कम आते हैं, ये आना-जाना खुशी-गमी तक ही सीमित रह गया है। वैसे महानगरीय परिवेश में पलने-पुसने के बाद गांव में हमारे लिये विशेष आकर्षण भी शेष नहीं है। जब भी गये टूरिस्ट बन कर ही गये कभी किसी रिश्तेदार के विवाह में या फिर मृत्यु पर। गांव में बीसियों तरह की समस्यायें हैं। जिनमें हम भाई-बहिन स्वयं को समायोजित नहीं कर पाते।

इस बार का हमारा गांव आना शायद अंतिम आना होगा, क्योंकि दादी के रूप में अंतिम शेष तंतु भी उनकी मृत्यु के साथ टूट गया। दादी थी तो एक हल्की सी दायित्व बोध की प्रतीति पापा को भी होती रहती थी, अब तो पापा की संवेदनायें भी वीतरागी हो जायेंगी। दादी की मौत पर तो हम पहुंच नहीं सके, चाचा पहुंच गये थे। उन्हींने अड़ोस-पड़ोस वालों की सहायता से दादी का अंतिम संस्कार कर दिया, तेरहवीं की जिम्मेदारी निभाने तक पापा भी आ पहुंचे थे। ब्राह्मण भोज निपट चुका था। मां अन्य स्त्रियों के साथ रसोई समेटने में लगी थीं, मैं छज्जे में बैठी उबासियां ले रही थी। जब शरबती बोली... 'यहां बैठे-बैठे जी उकता रहा है बिटिया, तुम्हारा... जाओ तनिक टहल आओ...।'

'कहां जायें टहलने... यहां धरा ही क्या है!' अपनी ऊब भरी खीझ शरबती पर उतार दी मैंने।

'और नहीं तो पीपल तले की पंचायत देख आओ, औरतों की पंचायत में आज देवरानी-जेठानी का मुकदमा चल रहा है।'

'औरतों की पंचायत?'

'हां बिटिया, छः बरस पहले बनी थी ये पंचायत। इसमें लुगाइयों की बातें ही सुनी-गुनी जाती हैं। जिस पे भी विपदा आन पड़े न्याय पाने इस पंचायत में जा सकती है। पंचायत जो फैसला दे मानना होता है।'

मेरे मन में कौतूहल सा जागा, इस पिछड़े अंधविश्वासी समाज में भला इतनी जागरूकता कैसे आ गई, कैसे औरतों ने

औरतों की समस्यायें सुनकर उस पर फैसला देने का अधिकार अपने हाथ में लिया ? शहर में मैं भी तो नारी मुक्ति आन्दोलन से सक्रिय रूप से जुड़ी हूँ। स्त्रियों के स्वयं सेवी संगठन के साथ हम कॉलेज की लड़कियां भी संबद्ध हुई हैं। शहर में घटी किसी भी नारी शोषण की घटना के विरोध में हम भी आवाज उठाते हैं, गला फाड़-फाड़कर नारे लगाते हैं, स्त्री को पुरुष शोषण से निजात दिलाने के लिए सकारात्मक कदम भी उठाते हैं। ये गांव की स्त्री पंचायत भी तो एक तरह से नारी मुक्ति संगठन का ही ग्रामीण प्रारूप है... चलकर देखूं तो ये गांव वाली स्त्रियां कैसे सुलटा पाती हैं अपनी समस्याओं को।

शरबती को साथ ले पीपल के चबूतरे तक आई और झरबेरी की आड़ में खड़ी हो गई। जमीन में दूर तक औरतों का जमावड़ा था, पीपल के चबूतरे पर पांच स्त्रियां बैठी थीं। बीच में बैठी स्त्री को मैं पहली नजर में ही पहचान गई, ताई ही थी... काली स्याह रंगत, गठीला मर्दाना सा बदन, गाल की उभरी हड्डियां उस कुरूपता को और बढ़ा रही थीं... पूरे पांच बरस बाद देख रही हूँ ताई को। रूप की तरह नाम भी तो अनोखा है इनका। 'आमला' 'आमला ताई' के रूप में ही जानी जाती हैं। गांव भर में एक बार कह भी बैठी थी मैं... 'बड़ा अजीब नाम है तुम्हारा, ताई...।'

'अरी, आमले के झाड़ के नीचे जो पैदा हुए थे सो बाप-महतारी ने आमला नाम धर लिया। चौथी लौंडिया सो भी इतनी बदसूरत किसको गरज थी जो हमारा भला-सा नाम रखता....।'

'वे ही सरपंचजी हैं।' शरबती ने आमला ताई की ओर इशारा किया। मैं विस्मय से जड़ थी, आमला ताई का सुदृढ़ सबल व्यक्तित्व उन्हें इस ऊँचाई तक ला खड़ा करेगा इसकी कल्पना नहीं थी मुझे। उनका अतीत अपमान और अवहेलना के काटे करीलों से छिदा है इतना तो पता था। मुझे ताई ने ही बताया था ये सब। जब वे नयी ब्याही इस गांव में आई थीं तब जिसने भी घूंघट उठाकर उनका चेहरा देखा व्यंग और विद्रूप से मुंह बिचका दिया। सास के माध्यम से उन्हें ही सुनाया जाता... 'ये हूर परी कहां से खोज लाई, चाची ?'

'क्या जोड़ मिलाया है अपने पूत का... कहां वो सुंदर सलोना राजकुमार कहां से हिडिम्बा...।'

'अजी धन के लोभ ने मति हर ली डुकरिया की ...जभी न ऐसी बदसूरत दुल्हिन लाई है...।'

स्त्रियों के व्यंग भरे आक्षेप पिघले सीसे से ताई के कान में उतरते रहे ...आज वही ताई कैसे इन सम्मानजनक ऊँचाईयों को पा सकीं इसका कुछ-कुछ तो मान है मुझे। ताई की अधूरी कहानी जो सुन गई थी पांच छः बरस पहले...।

आमला ताई बड़े मनोयोग से वादी-प्रतिवादी स्त्रियों की शिकायत सुन रहीं थीं, देवरानी जेठानी का मुकदमा पेश था उनकी अदालत में।

जेठनी बोल रही थी ... देखो सरपंचजी, बंटवारे में घर-द्वार बंटा, ढोर-डंगर बंटे, खेतखलिहाल बंटा, सो बंटना ही था, बंटवारे के बखत ऐसा ही हुआ करता है, पर अब जरा इस छोटी की बात सुनो...।' जेठनी ने क्रोध और क्षोभ से देवरानी की ओर देखा जो दर्प से तनी-तनी बेफिक्री से घास का एक तिनका चबा रही थी ...'कहती है मेरा बच्चा भी वापिस कर ...तुम तो गवाह हो ताई, मुझ निपूती की झोली में खुद इसने डाला था ये बालक, कहा था दीदी ये लौंडा तेरा हुआ मेरे पास चार-चार बच्चे पहले ही हैं, कहां से पालूंगी इस पांचवें को ? अब चार बरस बाद बंटवारा हुआ तो बच्चे को वापिस मांग रही है।'

'क्यों, छोटी तुझे क्या कहना है ?' आमला ताई देवरानी की ओर उन्मुख हुईं।

'कहना क्या, अपना बिसनू वापिस मांग रही हूं।'

'लेकिन तेरे पास तो चार बच्चे हैं ही, तीन लड़के एक लड़की, बिसनू भी अपनी बड़ी मां से हिला हुआ है। क्यों मांग रही है उसे वापिस ?'

'अपनी कोखजाई औलाद मांग कर कोई जुलम नहीं कर रही...।' छोटी अब भी उसी तरह अकड़ के खड़ी थी। एकाएक जेठनी फूट-फूटकर रो पड़ी ...'बिसनू को मैं नहीं लौटा सकती, चाहे बदले में मेरी जान ले ले।'

मैं खामोशी से इस अजीबोगरीब मुकदमें को देख रही थी जो अब एक दिलचस्प मोड़ पर आ पहुंचा था। मैं समझ गई थी कि कानून छोटी के पक्ष में है तो भावना बड़ी के ...पर न्याय में तो भावनाओं का कोई स्थान नहीं और बिना भावना के किया न्याय वास्तव में अन्याय ही होगा। क्या फैसला देगी ताई इस स्थिति में ...और जो फैसला देगी भी वो क्या दोनों को मान्य होगा ? आमला ताई अब समझौते के स्वर में छोटी से बोल रही थी—

'देख छोटी, सारा गांव जानता है बिसनू तेरी औलाद है, तेरे ही पेट से जनमा है, पर सब ये भी जानते हैं कि बिसनू को तूने पैदा भर किया है, पाला इसे तेरी जिठनी ने है। तूने खुद बित्ते भर के उस अठमासे मांस के लोथड़े को अपनी जिठनी की गोद में डाला था।'

'डाला था तो अब वापिस मांग रही हूं। जब लेने में इन्कार नहीं था तो लौटानें में कैसा इन्कार ?'

'बिसनू आदमी का जाया है, ढोर डंगर नहीं, जिसे जब चाहा जिस खूंटे से बांध दिया...।' ताई का स्वर तनिक ऊंचा हो गया था जिसे दबाकर वे पूर्ववत कोमल स्वर में बोलीं...

'देख छोटी, तू जो ये हठ कर रही है वो बिसनू के मोह में नहीं आपस की रंजिश के मारे कर रही है। जरा सोच के देख, खेत-खलिहान, ढोर-डंगर बंटते हैं पर मा-बाप, औलाद नहीं बंटा करती। तू तो किसान की बेटी है जानती है बीज बोने भर से कुछ नहीं होता, जो पालता-पोसता है, खाद-पानी देता है बिरवे पर उसका भी हक होता है। बड़की ने किस-किस जतन से पाला है बिसनू को तू भी तो जानती है। उसे बड़की

के ही पास रहने दे, गांव भर में तेरा मान बढ़ेगा। तेरे त्याग के गुण गायेंगे लोग। अरी तू तो देवकी मैया है ही अपने कृष्ण कन्हैया की ...बड़की को भी यशोदा मैया बना दे तो वो भी धन्य हो जाये। है तो बिसनू तुम दोनों का ही न ?'

पंचायत में सन्नाटा-सा था। आमला ताई के भावपूर्ण तर्कों के जाल में फंसी छोटी उलझन की सी स्थिति में खड़ी थी, चेहरे पर हठ की जगह एक कच्चा-पन सा आ गया था। आमला ताई की बुद्धिमत्ता और वाक् चातुर्य की मैं कायल हो उठी, स्थिति को परखने की उनकी क्षमता अद्‌भुत थी। बच्चे को भावना के वशीभूत होकर गोद दिया गया था कोई कानूनी कार्यवाही नहीं थी। ऐसे में कोर्ट-कचहरी नहीं हो सकती थी, होती भी तो फैसला छोटी के ही हक में जाता। छोटी को सिर्फ ममता की दुहाई दे कर भावपूर्ण बातों से ही समझाया जा सकता था और ताई ने यही किया।

लोहा गरम देख ताई ने फिर चोट करी ...'देख छोटी, बिसनू बड़की के पास रहेगा तो उसकी जमीन-जायदाद का भी इकलौता वारिस बनेगा, घर की जायदाद घर में ही रहेगी, वरना क्या भरोसो बड़की रिसाय के किसी ऐरे-गैरे के नाम कर दे सब कुछ। जमीन जायदाद के लोभ में कोई भी इसकी गोद में डाल देगा अपना बालक।'

ताई की बात पर छोटी छटपटा गई। इन तर्कों ने जैसे उसके मर्म को छू लिया। कुछ देर वह असंमजस की सी स्थिति में खड़ी रही फिर निर्णायक स्वर में बोली ...'ठीक है ताई, तुम्हारा फ़ैसला सिर माथे पर, आज के बाद से बिसनू बड़की दीदी का हुआ, जो वापिस मांगू तो जीभ गल जाये मेरी।'

'जुग जुग जियो, बहना...।' बड़की ने पल्लू से आखें पोंछीं और आभार स्वरूप छोटी का हाथ अपनी हथेलियों के बीच ले लिया। छोटी ने मुस्कुराकर जेठानी के कंधों को बांहों से घेर लिया। पंचायत इस फैसले के बाद तितर-बितर होने लगी।

आंमला ताई भी चौपाल से उतरीं, उनके मुख पर एक संतोष भरी आभा थी। अचानक उसकी नजर मेरे पर पड़ी तो वे ठिठक गईं, पल भर ध्यान से मुझे देख पहचानने का यत्न किया ओर फिर बोलीं... 'रेवती हो न... बिसंभर की बेटी।'

'हाँ ताई।' मैंने मुस्कुराकर उनके पांव छू लिये। 'आज तो तुमने कमाल ही कर दिया, ताई, ऐसी चतुराई से बोलीं कि बस तुम्हें तो हाईकोर्ट का जज होना चाहिये था।'

'अरी जा काहे ठिठोली करती हो, चलो घर चलो।'

'ताऊ जी कैसे हैं ?'

'ठीक हैं, आज जरा परले गांव गये हैं वैद्यजी के पास। पिछले साल से हमें सांस की तकलीफ हो गई है, उसी की दवा लाने गये हैं... हमने लाख मना किया पर कान कहां धरते हैं, हमारी बात पे...।' ताई का स्वर लाड़ से भर आया।

मैं अभिभूत सी थी – क्या ये वही ताऊजी हैं ब्याह की पहली रात जो आमला ताई का

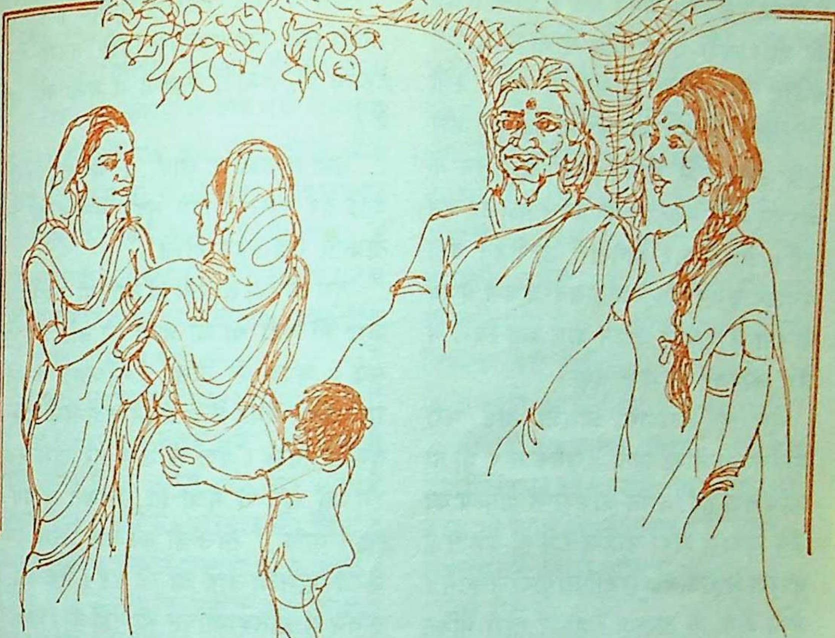

चेहरा देख गुस्से से बौरा गये थे और पांव पटककर पत्नी का मुंह दोबारा न देखने की कसम खा ली थी। आज वे ताऊ ही जेठ की चिलचिलाती दोपहरी में ताई की दवा लाने सात कोस दूर के गांव गये हैं। पिछले दफे पांच साल पहले जब गांव आई थी तब अपने विवाह की प्रथम रात्रि का ये किस्सा आमला ताई ने स्वयं सुनाया था।

'फिर तो तुम खूब रोई होंगी, ताई... दिन भर गांव की औरतों की जली-कटी सुनी और रात को ताऊजी की...।'

'नहीं री!' ताई ने गहरी उसांस ली थी... 'रोना तो किसी बात का हल नहीं था, हम जानते थे हम काले हैं कुरूप हैं, उनकी जूती की धूल बराबर भी नही।'

'तो फिर कैसे बस में किया ताऊजी को' मेरा सोलह वर्ष का किशोर मन सब कुछ जान लेने को उत्कंठित था। अभी ताई का आत्मकथ्य रोचक मुकाम पर पहुंचा ही था कि घर से बुलावा आ गया, फिर दोबारा ताई के घर जाना नहीं हो पाया। अगले ही दिन शहर वापिस जाना था। गांव से तो आ गई पर अंतः चेतना पर आमला ताई ही छाई रहीं। अक्सर सोचती रहती, कैसे बस में कर पाई होंगी ताई अपने कामदेव से सुन्दर पति को? कहानी के अधूरे छूटे सूत्र को मैं अपने ही ढंग से गांठती-जोड़ती रहती। इस दौरान उम्र के पांच वर्ष और फलांग कर यौवन की देहरी

में कदम रख दिया मैंने। अब मैं इक्कीस वर्ष की थी। नारी-पुरुष, पति-पत्नी के आपसी संबंधों की प्रतीति हो गई थी मुझे। स्त्री अधिकारों के प्रति जागरूकता पैदा हुई और इसी उत्साह में 'वीमेन लिब' आंदोलन के अंतर्गत नारी स्वातंत्र्य की प्रबल पक्षधर बन गई। स्त्रियों पर होनेवाले उत्पीड़न दंश बनकर चुभने लगे, उनके दबे-कुचले बजूद के पक्ष में आवाज उठाने वाले कंठ स्वरों में मेरा कंठस्वर भी मिल गया।

ऐसे में अनायास आमला ताई मेरी मनस्चेतना में आ जातीं ...उनके साथ भी तो ज्यादतियां हुईं, अपने अभिशप्त दांपत्य को कैसे निभाया होगा उन्होंने? वे तो कहती हैं तपस्या से ही सब कुछ वापिस पाया उन्होंने। कैसी होगी वो तपस्या? हमारे नारी मुक्ति आंदोलन में तो इस किस्म की तपस्या का कोई प्रावधान नहीं ...अपना हक यदि पाना है तो मान सम्मान से पाना है, लड़ कर पाना है। आमला ताई ने पुरुष शोषण के चंगुल से कैसे मुक्त कराया होगा स्वयं को?

उसी अधूरे सूत्र को जोड़ने का जो सुयोग मिला था उसे मैं खोना नहीं चाहती थी। ताई भीतर से तश्तरी में मठरी, चिवड़ा और पानी का गिलास ले आई। मठरी कुतरती हुई मैं बोली... 'ताई, तुम्हारी कहानी तो अभी तक अधूरी ही है।'

'कैसी कहानी?'

'वही जब ताऊजी ब्याह की रात ही तुम्हें कमरे में छोड़कर चल दिये थे – फिर क्या हुआ, ताई?'

आमला ताई खिलखिलाकर हंस पड़ीं, 'अरी, तुम, शहरवालियां इत्ते सिनेमा-थेटर देखती हो, हमारी कहानी में भला क्या धरा है?'

'नहीं सुनाओ न, ताई...।' मेरे हठ पर ताई कुछ देर गुमसुम जैसे सुदूर अतीत की ओर ताकती रहीं फिर बोलीं'...

'तुम तो देख ही रही हो बिटिया, हममें ऐसा कुछ भी नहीं था जो मरद को बांध कर रख सके। मरद भी कैसा... साच्छात कामदेव सा! बहुत सुंदर थे ये अपने जवानी के दिनों में तुम्हारे ताऊ। ईख से ऊंचे पूरे गोरा भक्क रंग जो छूनें से मैला हो, दहकते अलाव से लाल गाल...' ताऊजी का नख शिख वर्णन करते आमला ताई खो सी गईं। वैसे ताई के कथन में अतिशयोक्ति भी नहीं थी। ताऊजी का व्यक्तित्व इस अधेड़ावस्था में भी दर्शनीय है – गोरा रंग आज भी दप-दप करता है। चेहरे पर झुर्रियाँ सी आ जाने पर भी उनके गालों के दहकते अंगारों को अपनी अथक सेवा से बुझने नहीं दिया ताई ने। आमला ताई बोल रही थीं ... 'तुम्हारे ताऊ को हमने डोली में बैठे-बैठे परदे की आड़ में ही देख लिया था और उसी दम अपने ललार के लिखे को भांप गये थे, समझ गये थे कि हमारे साथ ऐसा ही कुछ होगा। हमारी बदसूरती के एवज में बापू ने जो ढेरों दहेज दिया था वो डोली के पीछे-पीछे बैलगाड़ी में आ रहा था, फिर भी हम जानते थे मरद लुगाई के बीच कुछ नहीं आ सकता, पैसा-धेला, सोना-चांदी कुछ भी नहीं ...ये तो मन के नेह नाते हैं, बने तो बने

मिटे तो मिटे...।'

'फिर, ताई?'

'फिर क्या, बिटिया, जब रात तुम्हारे ताऊ हमें न देखने की कसम ले चले गये, तब हम रात भर सोचते रहे अब क्या होगा, कैसे निबाह होगा इस घर में, जिसका मरद उसका न हो सका फिर और कौन उसका होगा? न जाने कब तक हम बुत बने बैठे रहे और तब अचानक हमारे अंदर ज्ञान सा पैदा हुआ, जैसे कोई भीतर से बोल रहा हो —

'आमला, मरद को रिझाने लायक रूप नहीं तेरे पास! इसकी भरपाई तुझे दूसरे ढंग से करनी होगी। जो कुछ भी तेरे पास है निछावर कर दे इस घर परिवार पे। मिटा दे अपने आप को। रूप के अलावा जो कुछ भी है उसी से चला अपनी गिरस्थी।' बस बिटिया उसी दम मन का जो हिस्सा पिराता है, टीसता है उसे हमने सात ताले में बंद कर दिया ...चाबी भरे बबुए बन गये, खुद को जैसा चाहा वैसा चलाया...।'

'कैसे चलाया तुमने खुद को, ताई?' ताई की कहानी अब एक दिलचस्प मोड़ पर आ पहुंची थी।

'सबसे पहले हमने अपने सास-ससुर को अपनी दिन-रात की सेवा से बस में किया, क्योंकि हम जानते थे, ये ही वो पुल है जिससे होकर हम इन तक पहुंच सकते हैं। सास को हमने राजरानी बनाकर बिठा दिया, खुद दिन भर मधुमक्खी से काम में जुटे रहते। उनकी पूजा की थाली सजाना, धोती को मांड देकर चुन्नट में तहाना, पान-तम्बाकू से पानडब्बा खाली न होने देना, चूल्हा-चौका, बर्तन-बासन सब निपटा के रात घंटा भर उनके पांव दबाना। ससुर जी का मनपसंद खाना बनाना, हुक्का-चिलम ठंडी न होने देना बस, बिटिया चार-छ: माह में ही सास-ससुर का मन जीत लिया हमने। सास गुण गाते न अघाती — अरे नहीं सुंदर तो न सही ऐसी गुणवती कमेरी बहू है किसी की सारे गाम-गिराम में? सौ-सौ खूबसूरत परियां निछावर मेरी बहुरिया पे...'

'ताऊजी को कैसे बस में किया, ताई?'

'वो तो एक लम्बी कहानी है, बिटिया हमारी तपस्या की। इसके बाद के चार-पांच बरस तो हमारे अगनी परीच्छा से गुजरे — सचमुच की अगनी परीच्छा थी वो।'

'वो कैसे?'

'तुम्हारे ताऊ बात के पक्के निकले, इसके बाद मुंह नहीं देखा हमारा, हम सामने पड़ जाते तो सिर घुमा लेते। हम थाली परोसते तो थाली सरका देते। ऊपर दुछत्ती में सोते थे। आंख झुकाये-झुकाये घर में आते ताकि हम पर नजर न पड़ जाये। सो एक दिन हम इनसे बोले...

'हमारे कसूर की सजा तुम क्यों भुगत रहे हो, तुम काहे परेशान होते हो? तुम्हारे वचन की लाज हम रखेंगे। हमारा बदसुगुनी चेहरा कभी तुम्हारे सामने नहीं पड़ेगा। हम सदा घूंघट काढ़े रहेंगे। गंगा मइया की सौंह मरघट तक भी मुंह ढांप कर जायेंगे। जिस दिन तुम अपने मुंह से इसे हटाने को कहोगे उस दिन हटायेंगे ये घूंघट...'

नारी का ये रूप अकल्पनीय था मेरे लिए। आखिर किस बात की सजा मिल रही थी ताई को ? क्या कसूर था उनका ? और ताई भी इस पुरुष शोषण का विरोध करने के बजाय बराबर की साझीदार बनी, खुद अपने ही खिलाफ षड़्यंत्र रचती रहीं, पर मन के खौलते आवेश को अंदर ही घोंट लिया मैंने। ताई से उन पुराने दिनों की कैफियत मांगने का कोई औचित्य भी तो नहीं था। सिर्फ इतना ही बोल पाई – 'खुद पर अत्याचार करने में तुम भी पीछे नहीं रहीं, ताई ?'

मेरी बात पर ताई के चेहरे पर एक फीकी मुस्कान सी आ गई और वे बोलीं – 'अभी तो आधी कहानी ही सुनी है तुमने, बिटिया, आगे सुनो – तुम्हारे ताऊ अक्सर छत पर जाकर दंड पेलते थे। मास-पखवाड़े में ही हम जान गये कि दंड पेलने के बहाने वे सामने के घर वाले बुढ़ऊ नाई की जवान ब्याहता से आंख मटक्का करते रहते हैं। वो भी किसी न किसी बहाने छत पे ही डोलती रहती है। एक बार तो हमारे सारे तन में बीछी सी दौड़ गई। फिर मन को समझाया, मरद जब प्यासा हो तो भटकेगा ही। गलती मरद की नहीं उस पोखर की है जो सूखा है।'

'क्या कहती हो, ताई? स्वयं अपनी बेगुनाही को यूं गुनाह क्यों बना रही थीं तुम ?

'और क्या, बिटिया, हम सूखे पोखर ही तो थे। जिस घाट आदमी का पांव न पड़े वो पानी से लबालब होते भी सूखा ही तो होता है। हां, तो हम कह रहे थे तुम्हारे ताऊ की उस नाइन से सांठ-गांठ चल रही थी। नाइन भी कैसी घाट-घाट का पानी पिये, खासी तिरपट! हम समझ गये जिस ढलांव पर तुम्हारे ताऊ खड़े हैं वहां फिसलन ही फिसलन है। सो एक दिन सांझ ढले नाइन के घर पहुंचे – रंगीली नाम था उसका। हमें देखा तो चेहरा फक्क पड़ गया उसका। समझी, हम गलियाने-जुतियाने आये हैं। हम बोले – देख रंगीली, मरद का मन है, तुझ पर रीझा है तो तू ही सही। तू भी सौ जान से निछावर है उन पर, ये हम जानते हैं, पर एक बात कान खोलकर सुन ले, उनकी बदनामी हमें गवारा नहीं – वे ठकुर खानदान के हैं, वे नहीं आयेंगे तेरे पास, उनसे मिलना है तो तुझे ही आना होगा हमारे घर...।'

'य...ये क्या कह रही हो, जिज्जी ?' रंगीली का बदन पीपल के पात सा थरथराने लगा।

'ठीक कह रहे हैं हम – तू रात ढले पिछवाड़े बगिया के रास्ते आना, कोठार का दरवाजा हम खुला रखेंगे। वहीं मिलना उनसे।'

रंगीली अविश्वास भरी नजरों से टुकुर-टुकुर हमें ही ताक रही थी - ऐसी अनहोनी भी हो सकती है, इसका विश्वास नहीं हो रहा था उसे।'

'भरोसा नहीं हो रहा न हमारी बात पर। पर हम सच बोल रहे हैं। भोले बाबा की सौगंध इसमें कोई चाल नहीं – उनके सुख के लिए ही हम ये सब कर रहे हैं और तुझे भी सौंह है गंगा मइया की, किसी को कानों-कान खबर न हो। अगर तीसरे कान में ये बात पड़ी तो हम तेरा झोंटा पकड़कर गांव भर में

घुमायेंगे। इसके बाद हम घर आये। कोठार धोया, साफ किया। बेला चमेली के गुच्छे फूलदान में सजाये। अपने हाथों सेज सजाई और इनके पास जाकर घूंघट की ओट से बोले – 'हम रंगीली से बात कर आये हैं, रात बगिया वाले रास्ते से वो कोठार में आयेगी – हमने सब इंतजाम कर लिया है।'

इनके मुख से वाक् न फूटा। इनकी भौंचक निगाहें घूंघट को भेद कर अचरज भरी नजरों से हमारी ओर देख रही हैं, ये हम घूंघट की आड़ से ही जान गये।'

इस समय तो मैं अपनी भौंचक नजरों से देख रही हूं तुम्हें, ताई, औरत होकर तुमने ऐसा गलत कदम उठाकर अपनी मान-मर्यादा, पत्नी होने का अपना गौरव, अधिकार सब धूल में मिला दिया!' आवेश में मुझे बोलने को शब्द नहीं मिल रहे थे। ताई का ये समर्पणोन्मुखी व्यवहार मेरी नजरों में नारी के अपमान और शोषण की पराकाष्ठा थी। जानती भी थी इन सब बातों का अब कोई लाभ भी नहीं। अतीत को लौटा कर सुधारा नहीं जा सकता। ताई महज कथावाचक है और मैं एक श्रोता, पर फिर भी न जाने क्यों मूक श्रोता बनकर नहीं बैठ पा रही थी मैं, बीच-बीच में मेरा आवेश निसर्ग के लिए स्थान बना ही देता था।

'वो सब हम नहीं जानते, बिटिया।' ताई ने सफाई दी – 'हम तो इतना ही जानते थे कि हमें इनको खुश रखना है। जो भी ये चाहते हैं वो सब हमें देना है। बस इसके बाद रंगीली अक्सर बगिया के रास्ते कोठार में आने लगी। मनचीता पा जाने से तुम्हारे ताऊ भी खुश-खुश रहनें लगे, बुझा-बुझा चेहरा खिल उठा। अब तो कभी-कभी हमारे दुःख-सुख के बारे में भी पूछने लगे – हम तो इतने से ही तिरप्त हो गये। तन-मन से इनकी सेवा में जुटे रहते।'

ताई की ये आत्मतुष्टि उनके लिए बेशक तृप्ति का कारण बनी हो, मेरे लिए ये स्त्री का मानसिक पतन था – आखिर वे कौन से जड़ रूढ़िवादी संस्कार हैं जो औरत को मर्द के पांव की जूती बन कर रहने में सुख भरा संतोष दे देते हैं? मन के खौलते भावों को यत्न से दबा पूछा – 'ये रंगीली वाला किस्सा कब तक चला, कब तक सेज बिछाती रहीं तुम सौत की?' मेरे स्वर में उभर आये व्यंग्य को भांप कर भी अनसुना कर ताई बोलीं – 'चार साल तक। ये रंगीली के साथ कोठार में होते और हम मुस्तैदी से चौकीदारी करते रहते। चार साल बाद रंगीली का दिल एक दूसरे जवान नाई पर आ गया सो उसने इन्हें छोड़ दिया।'

'फिर?'

'फिर क्या, तुम्हारे ताऊ का मन रंगीली की इस दगाबाजी से बुझ सा गया। नफरत करने लगे ये उससे। शायद पहली बार इन्हें पता चला कि सुंदर औरत तो तितली की नाईं होती है, जहां खिला फूल देखा उड़ चली। हम इन्हें खुश रखने का पूरा जतन करते। पहली बार ये भी अंदर से कच्चे पड़ने शुरू हुए। सुंदर मुखड़े की नफरत ने इन्हें हमारी बदसूरती की ओर झुका लिया और एक दिन ये हमसे बोले –

'आमला, आज इसके घूंघट खतम किया करो।' हम बता नहीं सकते बिटिया, उस दिन हम कितने खुश थे, लगा हमारा बनवास पूरा हुआ। हमसे ये बोलने बतियाने लगे फिर हमारे कमरे में भी सोना शुरू कर दिया। बस बिटिया, इस तरह हमारी जिंदगानी पर छाये काले बादल फटने लगे। ये अक्सर कहते, आमला, तूने अपनी सेवा से हमें जीत लिया।'

फिर एक-एक करके हमारी चार औलादें हुई। सौर घर में हम ये ही मनाया करते — हे भोले बाबा, रंग-रूप में बच्चे अपने बाप पर जायें, हमारी परछाई भी न पड़े इन पर, जैसे तिल-तिल करके हमें सुलगना पड़ा है इन्हें न सुलगना पड़े। कम से कम बिटिया को तो उनका सा सुंदर रूप देना, हमारी तरह उसे अगनी परीक्षा नहीं देनी पड़े। हमने तो आग में तपकर अपना खरापन दिखाया सबको, पर हमारी बिटिया ये सब नहीं भी झेल पायेगी। बस, रामजी ने सुन ली। चारों बच्चे एक से एक खूबसूरत हुए, ऐन अपने बाप की तरह। बस बिटिया, इस तरह हमारे दिनों ने धीरे-धीरे पलटा खाया। अब तो तुम्हारे ताऊ पल भर भी हमारे बिना नहीं रह सकते। मायके भी नहीं जाने देते। जैसे किसी नशे का अमल हो जाता है न वैसे तुम्हारे ताऊ को आमला का अमल हो गया है।' अपने मज़ाक पर ताई खुद ही खिलखिला कर हंस पड़ीं।

घर आते हुए मैं सोच में डूबी आमला ताई के बारे में ही सोच रही थी, आमला ताई आज बहुत सुखी हैं, एक लड़की थी सो अच्छे खाते पीते घर ब्याही गई, तीनों लड़के अच्छी नौकरी पर हैं, माँ का खूब सम्मान करते हैं, ताऊ जान छिड़कते हैं ताई पर — ये सब ताई ने अपने रास्ते पर चल कर पाया। यदि ताई जैसी समस्याग्रस्त स्त्री हमारे पास शहर में आती तो हम क्या करते? हमारे पास तो शायद विवाह विच्छेद के अलावा और कोई रास्ता नहीं इस किस्म की औरतों के लिए। दो चार उत्तेजनायुक्त भाषण देकर औरत को मर्द के शोषण से अल्पकालीन निज़ात तो दिला देते, पर क्या उसके जीवन को वो सम्मानजनक पूर्णता दिला सकते जो आज ताई के पास है? घर ही नहीं समाज में भी ताई अपने लिए एक मानयुक्त बनाने में सफल हुई हैं। कैसे — ये सब तो गांव के ही किसी आदमी से पूछना होगा।

शरबती से पूछा तो बोली — 'गजब की औरत है ये आमला ताई। अपने छुट्टे सांड जैसे मरद को तो अपनी सेवा और लगन से पालतू बैल बना खूंटे से बांधा ही सास-ससुर को भी खूब राज-रजाया। बड़ी गुणवती लुगाई है ये। कौन सा हुनर है जो इसे नहीं आता। दु:ख-मुसीबत से सबके संग रहती है। दूसरों की बिपदा इसे अपनी सी लगती है। सबसे आगे खड़ी नजर आती है। पैसा-धेला लगाने में भी नहीं हिचकती। एक दफे तो अनहोनी ही हो गई, बैदराज की बिटिया को ब्याह की बेदी में छोड़ कर जा रहे थे दूल्हा और बराती कि बहू को जेवर कम चढ़ाया। बैदराज बेचारे लाख पांव पड़े पर टस से मस न हुए बाराती। आमला ताई भी

वहीं थीं। चट से अपना झूमर उतारकर दूल्हे के बाप के हाथ में धर दिया तब कहीं जा कर फेरे पड़े। पांच बरस पहले जब औरतों की पंचायत बनी तो सबने एक सुर में इन्हीं को सरपंच बनने को कहा – ये जो कह दें पत्थर की लकीर होता है, इतना मान रखती हैं लुगाइयां इनकी बात का।'

मैं उलझन में अपने नारी मुक्ति आंदोलन की विचार दृष्टि और आमला ताई की जीवन शैली को तौल रही थी - कहीं कोई मेल नहीं, कोई समानता नहीं। जो मेरी जैसी आधुनिका के लिए लज्जास्पद अपमानजनक स्थिति थी, उसे आमला ताई ने विष की तरह हलक में उतारा और नई बुलंदियों को छुआ।

मैं संभ्रम की सी स्थिति में अब भी गलत-सही का विशलेषण करने में लगी थी।

– १०/७९, नया कैम्पस,
हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय,
हिसार - १२५ ००४ हरियाणा

□

## 'नवनीत हिंदी डाइजेस्ट' की चंदे की दरें

* एक प्रति (भारत में) रु. ६.००

भारत में (साधारण डाक से)

* एक वर्ष : ६५ रु.; दो वर्ष : १२० रु.; तीन वर्ष : १७० रु.

विदेशों में समुद्री मार्ग से (एक वर्ष के लिए)

* पाकिस्तान, श्रीलंका, रु.१२०; अन्य देश रू.१८५

विदेशों में हवाई डाक से (एक वर्ष के लिए)

* प्रत्येक देश के लिए रु.३१०

* बम्बई से बाहर के चेक भेजने वाले रु. ७ अधिक भेजें।

–व्यवस्थापक, नवनीत हिंदी डाइजेस्ट, भारतीय विद्या भवन, बम्बई–४००००७

# हाइकू कविताएं

जीवन जियो ।
चयन मत करो ।
भले-बुरे का ।

बहुत हुआ
आज नहीं तो कल
छंटेगा धुंआ ।

मैंने कहा था
तुमने सुना भी था
समझा नहीं ।

स्यार, स्यारों को
ओढ़ शेर की खाल
धमकाता है ।

आप ही आप
तब कैसा हर्ष
कैसा संताप ।

उत्तर तो है
प्रश्न पूछने की
आदत जो है ।

मिल गये हो
बिछुड़ मत जाना
धूप-छांह से

**– रमेशचन्द्र शर्मा 'चन्द्र'**

६४/१५१२५ मेघाणीनगर,
अहमदाबाद - ३८० ०१६.

□

पहला पानी
महमह धरती
मन बौराया ।

चले टेकते
बूंदों की लकुटी ले
बादल काले ।

'प्रिय से मिलें'
सोचकर बादल
पास आ गये ।

बन बौछारें
बिरहिन बारिश
देहरी चूमे ।

हो गये पस्त
शूरवीर बादल
बरसते ही ।

तृप्ति का सुख
व्यक्त है धरती का
हरियाली में ।

बढ़ आयी है
तटबन्धों को छूने
आतुर नदी ।

**– कमलेश भट्ट 'कमल'**

७/७०, तिलकनगर,
कानपुर - २०८ ००२ उ.प्र.

□

गुजराती बाल कहानी

# मदद

**□ जीवराम जोशी**

एक पीपल का वृक्ष था। मोटी-मोटी डालें और बड़े-बड़े पत्ते थे। एक कौआ कहीं से उड़ता हुआ आया और एक डाल पर बैठ गया। लगा अपनी चोंच डाल से खुजलाने।

तभी उसने आवाज सुनी, 'कौआ भाई, जरा धीरे-धीरे।'

कौए को आश्चर्य हुआ। यह कौन बोला? इधर देखा, उधर देखा। नीचे और ऊपर भी देखा। कोई दिखाई नहीं पड़ा। उसने पूछा, 'तुम कौन हो, भाई?'

उसी डाल का एक पत्ता कांप रहा था। उसने कहा, 'मैं बोल रहा हूं।'

कौए ने अब उसकी तरफ देखकर पूछा, 'क्या बात है?'

पत्ते ने इस बार फिर कहा, 'जरा धीरे से चोंच रगड़ो।'

कौए ने पूछा, 'क्यों?'

पत्ते ने कहा, 'तुम्हारी चोंच मुझे लग जायेगी तो मैं उखड़कर नीचे गिर पड़ूंगा।'

कौआ बोला, 'तुम तो डरपोक हो। इस तरह चोंच छू जाने से तुम उखड़कर गिर नहीं जाओगे।'

'लेकिन मैं तो पक गया हूं।' पत्ते ने कहा 'मेरा रंग देखो। पीला हो गया है। जोर से हवा चलती है तो मुझे भय लगता है। अभी-अभी उखड़कर गिर पड़ूंगा।'

तभी हवा का एक झोंका आया। पत्ता उखड़कर फर-फर करता उड़ गया। सीधा-उलटा वह हवा के साथ चक्कर खाता रहा। फिर नीचे धरती पर गिरा। वहां धूल-मिट्टी का एक ढेर पड़ा था।

पत्ता बोला, 'भाई मिट्टी के ढेर! जरा मुझे अपने भार से दबा लो न! हवा तेज चल रही है। मुझे उड़ा ले जायेगी और न जाने कहां फेंक देगी?'

मिट्टी के ढेर ने कहा, 'मैं तुम्हें किसलिए अपने भार से दबाऊं? मुझे तुम्हारी क्या जरूरत?'

पत्ता बोला, 'ओ भाई मिट्टी के ढेर! एक दूसरे की मदद करना, यह सबसे बड़ा धर्म है। किसी की हम मदद करेंगे तो दूसरा भी हमारी मदद करेगा।'

मिट्टी के ढेर ने कहा, 'तुम तो हलके-फुलके पत्ते हो। तुम मेरी क्या मदद कर सकोगे?'

पत्ता बोला, 'जल्दी करो, भाई! मुझे जल्दी अपने भार से दबा लो। हवा मुझे उड़ा ले जायेगी।'

और तभी हवा का एक तेज़ झोंका आया।

पत्ता उसकी लपेट में आ गया और हवा में उड़ गया। हवा का झोंका ऊपर-ऊपर उठता गया, उसके साथ-साथ पत्ता भी चक्कर खाता ऊपर पहुंच गया! कुछ देर बाद हवा बंद हुई, तो पत्ता वापस धरती पर गिर पड़ा। संयोग से उसी जगह गिरा, जहां वह मिट्टी का ढेर पड़ा था।

उस मिट्टी के ढेर ने कहा, 'क्यों पत्ते भाई, ऊपर उड़ने में कैसा मजा आया?'

पत्ता बोला, 'वह मजा नहीं, बल्कि मौत थी। बाप रे बाप! इस तरह हवा के झोंकों के साथ-चक्कर खाने पड़े, हवा की चोट सहन करनी पड़ी। तुमने मुझे अपने भार से दबा लिया होता, तो मुझे यह पीड़ा सहन न करनी पड़ती।'

तभी बिजली चमकी। पत्ता डर गया।

मिट्टी का ढेर बोला, 'यह क्या हुआ?'

पत्ते ने बताया, 'आकाश में बादल घिरे हैं। बिजली चमकी और मेघ गरजे। उसी का धमाका था।'

टप-टप कर पानी की बूंदें गिरनी शुरू हो गयीं थीं। मिट्टी का ढेर घबराया। पत्ते ने पूछा, 'क्यों घबराते हो, मिट्टी के ढेर!

'वर्षा होगी। मैं भीग जाऊंगा और पानी में गलकर मेरा कण-कण बिखर जायेगा।' मिट्टी के ढेर ने कहा।

पत्ता बोला, 'घबराओ नहीं, मिट्टी के ढेर! मैं तुम्हें भीगने नहीं दूंगा। लो, मैं तुम्हें अपने से ढक देता हूं, जैसे छाते के नीचे आदमी!'

वर्षा का पानी पत्ते पर गिरता और फिसलकर बह जाता। मिट्टी का ढेर भीगने से बच गया। वर्षा बंद हुई तब मिट्टी के उस ढेर ने पत्ते से कहा, 'ओ पत्ते भाई! तुम्हारा बहुत आभारी हूं। तुमने मेरी जान बचा ली। मुझे बिखरने-टूटने से बचा लिया।'

कौआ उसी डालपर पत्तों से छिपा बैठ था। वह बोला, 'ओ मिट्टी के ढेर। दूसरे की मदद करना बहुत बड़ा धर्म है। आज किसी की मदद करोगे तो कल कोई तुम्हारी भी मदद करेगा। देखो, इन पत्तों ने तुम्हें ही नहीं, मुझे भी भीगने से बचाया है।'

मिट्टी का ढेर शर्म से झुक गया और पत्ते का आभार माना।

**अनुवादक : गोपालदास नागर**

□

महान अभिनेत्री, हेलेन हेमस ने एक बार अपने पति और पुत्र को कहा, 'मैं तुम लोगों को बताये बिना, गुप्त रूप से, खाना बनाने की शिक्षा लेती रही हूं, और आज पहली बार मैंने अपने हाथों से खाना तैयार किया है। खाने के बारे में मैं तुम्हारी कोई आलोचना सुनना नहीं चाहती। अगर वह पसंद न आया, तो चुपचाप उठ जाना। तब तैयार हो कर किसी होटल में खाने के लिए चलेंगे।'

कुछ देर के बाद जब वह रसोई में से चीज़ें लेकर डाईनिंग–रूम में आयी, तो क्या देखती है कि उसका पति और पुत्र, दोनों सूट पहने और सिरों पर हैट रखे बाहर जाने के लिए तैयार बैठे थे।

* * *

# काले मेघा

☐ डॉ. राष्ट्रबन्धु

काले मेघा पानी दे ।
पानी दे गुड़धानी दे ।
लड्डू बरसें खेत में,
बच्चे हरसें रेत में ।
उछलें कूदें पानी में,
मेघों की अगवानी में ।।
सबको नाना नानी दे ।
हर दिन एक कहानी दे ।।
बिजली कड़के जोर से,
धरती गूंजे शोर से ।
रेनी डे की छुट्टी हो,
पिकनिक जायें भोर से ।।
उलझन में आसानी दे,
अपने जैसी बानी दे ।।
सिक्कों की निगरानी दे,
रानी को हैरानी दे ।
कंजूसों को दानी दे,
घर घर मच्छरदानी दे ।।
दुश्मन पानी मांग उठें,
ऐसा हमको पानी दे ।।

— १०९/३०९ रामकृष्णनगर,
—कानपुर—२०८ ०१२

# वर्षा

☐ डॉ. इसाक 'अश्क'

बादल लेकर
महासिंधु के खत आए हैं ।

जो पहाड़
तालाब, नदी, जंगल —
खेतों के नाम लिखे हैं,
जिनमें
इन्द्रधनुष जैसे कुछ
सपने ललित, ललाम छिपे हैं,

वरदहस्त की
मुद्रा में मीलों छाए हैं ।

जिनके मन
प्यासे अधरों पर —
मर मिटने की साध बसी है,
जिनकी शिरा-शिरा
रस डूबे
फूलों की जीवन्त हंसी है

यायावर से
बस्ती दर बस्ती धाये हैं ।

-शुजालपुर मंडी,
जिला शाजापुर, म.प्र.

☐

# कहावतों में अनावृष्टि

□ डा. मनोहरलाल

हमारे देश का लोक-साहित्य बड़ा समृद्ध है। उसमें कृषि विज्ञान विषयक अमूल्य जानकारी भी उपलब्ध है। यह अलग बात है कि विज्ञान के युग में जी रहे हम लोग लोकतत्व की बातों को अधिक महत्व नहीं दे पाते। उनका वैज्ञानिक दृष्टि से परीक्षण नहीं करते। इस संदर्भ में घाघ और भड्डरी ने बहुत कुछ कहा है।

सावन में एक-एक दिन में सौ-सौ बार वर्षा होने की बात कही जाती है, भड्डरी ने सावन की वर्षा के बारे में बहुत कुछ लिखा है। उसका मत है कि यदि सावन बदी दसमी को रोहिणी नक्षत्र हो, तो अनाज के भाव आसमान छूने लगेंगे, पानी कम बरसेगा और जनता कष्ट पाएगी।

**सावन पहिले पाख में, दसमी रोहिनि होइ।**
**महंग नाज अरु अल्प जल, बिरला बिलसै कोइ।।**

भड्डरी का कहना है कि सावन बदी एकादशी को आधी रात के समय बादल गरजे तो अकाल निश्चित है –

**सावन कृष्ण एकादसी, गरजि मेघ अधरात।**
**तुम जाओ पिय मालवा, हम जावें गुजरात।।**

और, यदि चित्रा, स्वाति और विशाखा नक्षत्रों में सावन में वर्षा न हो तो अन्न का भाव दूना हो जायेगा। ऐसे में अन्न-संग्रह करने का सुझाव दिया गया है।

इसी तरह श्रावण में वर्षा न होने तथा अकाल पड़ने के कुछ लक्षण यों हैं –

**सावन सुकला सत्तमी, चंदा छिटिक करै।**
**की जल देखौं कूप में, की कामिनि सीस धरै।**

अर्थात् यदि सावन सुदी सप्तमी को आसमान में चन्द्रमा चाँदनी छिटक रहा हो तो पानी या तो किसी गहरे कुएं में मिलेगा या औरतों के सिरों पर रखे घड़ों में।

**सावन पहली पंचमी, जोर की चलै बयार।**
**तुम जाना पिउ मालवे, हम जैबे पितु-सार।।**

अर्थात् यदि सावन बदी पंचमी को बड़े जोर की हवा चले तो हे प्रिय! तुम मालवे चले जाना और मैं अपने पीहर चली

जाऊंगी। [illegible] भयंकर अकाल पड़ेगा, जीना दूभर हो जायेगा।

**सावन सुक्ला सप्तमी, जो गरजै**
**अधिरात ।**
**बरसै तो सूखा पड़ै, ना हिं समो**
**सुकाल ।।**

अर्थात् सावन सुदी सप्तमी को आधी रात के समय बादल गरजे और बरसे तो सूखा पड़ेगा। यदि न गरजे-बरसे तो समय अच्छा होगा।

इतना ही नहीं भड्डरी ने सावन के कतिपय लक्षणों की चपेट में सूखे की ही बात ही नहीं कही, बल्कि राजा और प्रजा में वैमनस्य, अराजकता तथा हिंसा भड़कने की बात भी कही है। मान्यता है कि यदि सावन बदी में तुला का मंगल, कर्क का बृहस्पति और सिंह राशि का शुक्र हो तो तालाब आदि सूख जायेंगे। धूल भरी आंधिया चलेंगी। किसी भी तरह का अन्न पैदा नहीं होगा। साथ ही इन लक्षणों के प्रभाव से अधिकारी तथा राजा लोग वापस में लड़ेंगे, अशांति फैलेगी –

**सावन कृष्ण पक्ष में देखो ।**
**तुल को मंगल होय बिसेखो ।।**
**कर्क राशि पर गुरू जो आवे**
**सिंह राशि शुक्र सुहावै ।।**
**ताल सो सोखै बरसै धूर ।**
**कहूं न उपजै सातों तूर ।।**
**सावन उजरे पाख में, जो ये सब**
**बरसायं ।**
**दुंद होइ छत्री लड़ै, भिरै भूमिपति**
**राय ।।**

पर इसके साथ-साथ यह भी स्पष्ट कहा गया है कि यदि सावन में तेज गर्मी और भादों में ठिठुराने वाली सर्दी पड़े तो तात्पर्य है कि निकट भविष्य में खूब वर्षा होगी –

**सावन उखमैं भादों जाड़ ।**
**वर्षा मारे ठाढ़ कछाड़ ।।**

और भड्डरी का यह भी कहना है कि यदि सावन के पहले पखवाड़े में कोई तिथि टूट जाये तो ऐसा भयंकर अकाल पड़ेगा कि किसी-किसी देश में मां को अपनी औलाद तक को बेच देने के लिए विवश होना पड़ेगा।

**सावन पहिले पाख में, जो तिथि**
**ऊणी जाय ।**
**कैयक कैयक देस में, टाबर बेंचो**
**माय ।।**

सावन के वर्षा-विज्ञान के अतिरिक्त भड्डरी ने अनावृष्टि के कुछ सामान्य लक्षण भी बताये हैं, जो कटु सत्य सिद्ध होते अनुभव किये गये हैं। मान्यता है कि रात के समय आसमान साफ हो और दिन में बादलों का साया बना रहे तो समझिये वर्षा नदारद –

**रात निर्मली दिन में छाहीं ।**
**कहै भड्डरी वर्षा नाहीं ।।**

सबेरे-सबेरे आसमान में बादलों की दौड़ लगती हो, दोपहर को तेज गर्मी पड़े और रात होने पर आसमान एकदम स्वच्छ होकर तारे मोतियों की तरह चमक उठें तो समझिये कि अब अकाल पड़ा ही। बचाव

के लिए अपना प्रयत्न जारी कर देना चाहिए।

कई बार देखा गया है कि दिन में तो तेज गर्मी पड़ती है और रात को ओस। यह भी वर्षा के कोसों दूर भागने का लक्षण है -- **'दिन में गरमी रात में ओस कहै घाघ वर्षा सौ कोस।'**

आसमान के रंग तथा बादलों की चाल के भी कुछ लक्षण ऐसे बताये गये हैं जो वर्षा न होने के सूचक हैं। आकाश के लाल-पीले होने का अर्थ भी अनावृष्टि है और बादलों की छांव-धूप बनते बिगड़ते रहना भी —

**लाल पियर जब होय अकास ।**
**तब नाहीं वर्षा कै आस ।।**
**रात दिना घमछाहीं ।**
**'घाघ' कहै अब वर्षा नाहीं ।।**

और, आषाढ़ से पहले ही यदि नदी में बाढ़ का पानी उफनने लगे तो समझिये चौमासे तक वर्षा नहीं होगी —

**पहिले पानी नदी उफनाय ।**
**तो जानियो की वर्षा नांय ।।**

कई बार मई में वर्षा और जून-जुलाई की अनावृष्टि से यह कहावत सच होती दिखाई पड़ती है।

यह भी कहा गया है कि दिन में बादल हों, रात में आसमान निर्मल हो, पुरवैया हवा थम-थमकर चले तो समझिये कि कुछ अनिष्ट होने वाला है। और वह यह कि सूखा पड़ेगा। धोबियों को नदी के घाटों पर कपड़े धोने के लिए पानी नहीं मिलेगा, उन्हें कुओं की शरण में जाना पड़ेगा जो अकाल का लक्षण है --

**दिन का बद्दर रात निबद्दर ।**
**बहै पुरवैया झब्बर-झब्बर ।।**
**कहै 'घाघ' कुछ हानी होई ।**
**कुआं के पानी धोबी धोई ।।**

और, लोकसाहित्य में निहित अनावृष्टि के बारे में कही गयीं ये बातें सच सिद्ध हो रही हैं। लोककवियों की वर्षा-विज्ञान विषयक पकड़ कितनी सूक्ष्म तथा सच्ची थी यह सर्वविदित है।

**-- के ४७, नवीन शाहदरा,**
**दिल्ली - ३२.**

☐

आयरलैंड का विश्वप्रसिद्ध कवि और नाटककार, येट्स किसी नाटक के लिए पर्दे पर सूर्यास्त का शानदार दृश्य पेश करना चाहता था। वह बिजली के कई तरह के बलबों और अन्य कई साधनों से वह दृश्य पैदा करने के प्रयत्न में कई घंटे तक प्रयोग करता रहा।

एक मौके पर, जैसा कि वह चाहता था, अचानक वैसा दृश्य पर्दे पर दिखाई दिया, तो येट्स ने चीखकर अपने साथियों से कहा, 'अब बात बनी है। बस, कुछ देर इसी तरह कायम रखना इसे। बस, कुछ ही देर, तब तक मैं....'

'यह कायम नहीं रखा जा सकता,' इसके एक साथी ने घबराई हुई आवाज़ में कहा, 'थियेटर को आग लग गयी है।'

# मन की एकाग्रता

**□ अशोक श्रीश्रीमाल**

घटना उस समय की है जब स्वामी विवेकानंद अमेरिका प्रवास पर थे। एक दिन सायंकाल वे समुद्र के किनारे टहल रहे थे कि उन्होंने देखा कि कुछ अमेरिकी नवयुवक निशानेबाजी का खेल खेल रहे हैं। युवक रबड़ की गेंद को पानी की सतह पर उछाल देते। जैसे ही गेंद उछलती, उनमें से एक युवक उस पर निशाना लगाता, काफी देर तक खेल चलता रहा, किसी भी युवक को इस निशानेबाजी में सफलता नहीं मिली। स्वामीजी काफी देर तक यह खेल देखते रहे। अमेरिकी युवकों की निशानेबाजी चूकती देखकर स्वामी को हंसी आ गई।

एक भारतीय साधु को हंसता देख कुछ युवक चिढ़-से गये। उनमें से एक नौजवान ने कहा - 'महाशय! इस तरह निशाना लगाना कोई बच्चों का खेल नहीं है। बड़े-बड़े निशानेबाजों के लिए भी यह एक मुश्किल काम है।'

स्वामीजी ने कोई जवाब नहीं दिया और एक युवक के हाथ से बंदूक लेकर कहा - 'भाई, जरा गेंद उछालना!'

युवक ने गेंद पानी में उछाल दी। स्वामीजी ने निशाना बनाया और बंदूक चला दी। स्वामीजी का निशाना बिलकुल ठीक लगा था। सभी युवक आश्चर्य में पड़ गये। इसे संयोग मान कर एक युवक ने पुनः पानी में गेंद उछाल दी, स्वामीजी का निशाना इस बार भी सही बैठा। इस प्रकार बारी-बारी से सात बार स्वामीजी ने अचूक निशाना साध कर सभी युवकों को अचरज में डाल दिया। एक युवक से नहीं रहा गया और पूछ बैठा - 'माफ करना, आप तो कोई पेशेवर निशानेबाज मालूम होते हैं!'

'नहीं, मैंने तो आज जिंदगी में पहली बार बंदूक हाथ में ली है।' स्वामीजी ने जवाब दिया। युवक संतुष्ट नहीं हुए। स्वामीजी ने उन्हें समझाते हुए कहा - 'इसमें अचरज की कोई बात नहीं है, दरअसल मैंने अपने मन को एकाग्र कर लिया है, तभी मुझे निशानेबाजी में सफलता मिली है। मन की एकाग्रता में बहुत शक्ति होती है। मेरा विश्वास है कि एकाग्र मन से किया गया काम हमेशा सफलता दिलाता है।' अमेरिकी युवक स्वामीजी के जवाब से संतुष्ट थे।

**— श्रीश्रीमाल भवन, बंबा रोड,**
**भवानी मंडी, राजस्थान**

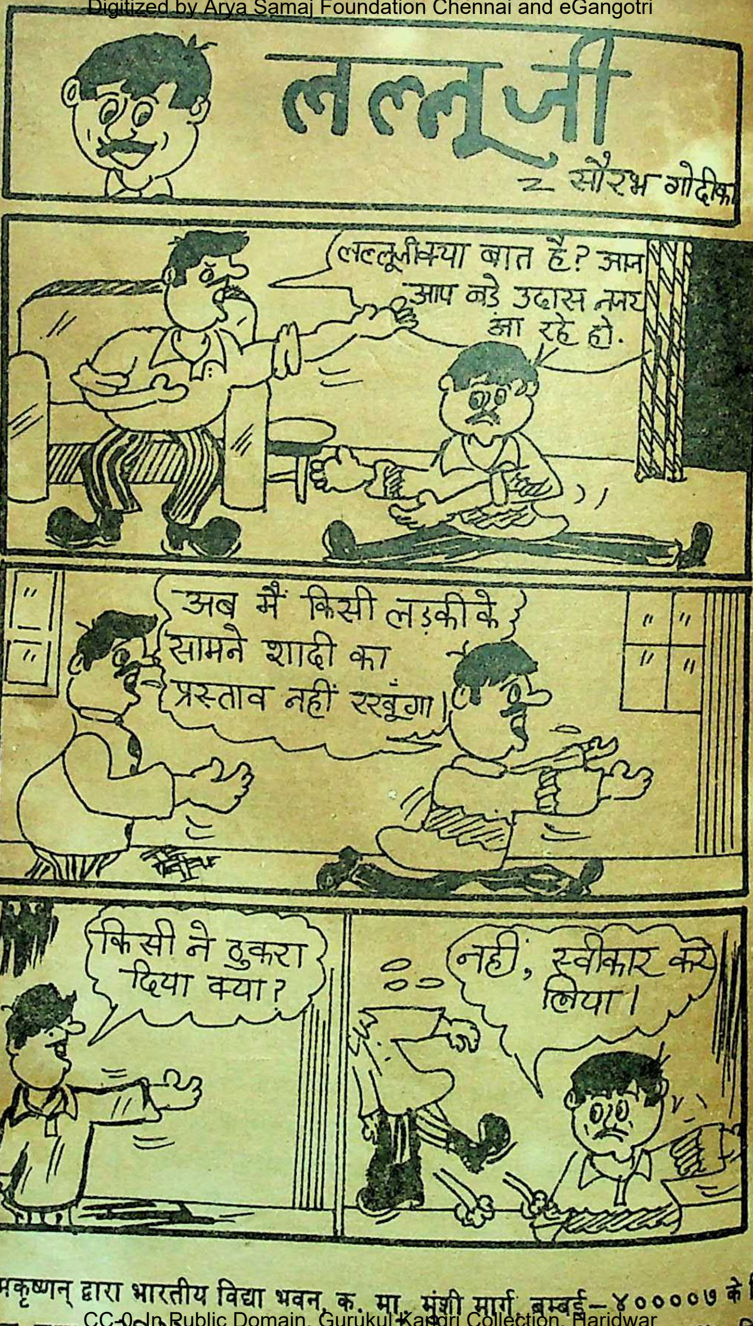
लल्लूजी
– सौरभ गोदीका
लल्लूजी क्या बात है? आज आप बड़े उदास नज़र आ रहे हो.
अब मैं किसी लड़की के सामने शादी का प्रस्ताव नहीं रखूंगा।
किसी ने ठुकरा दिया क्या?
नहीं, स्वीकार कर लिया।

सु. रामकृष्णन् द्वारा भारतीय विद्या भवन, क. मा. मुंशी मार्ग, बम्बई–४००००७ के लिए प्रकाशित तथा एसोसियेटेड एडवरटाइजर्स एंड प्रिन्टर्स, बम्बई ४०००३४ में मुद्रित।

# हिन्दी के भीष्म पितामह पं. श्रीनारायण चतुर्वेदी

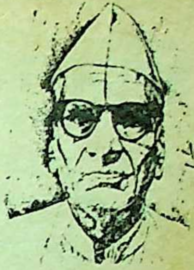

पिछले कई सालों से जीवन-मृत्यु से जूझ रहे ९६ वर्षीय पद्मभूषण पं. श्रीनारायण चतुर्वेदी का लखनऊ में १८ अगस्त के दिन निधन हो गया। लेखक और पत्रकार के रूप में उनकी ख्याति तो थी ही, पर अपनी भाषा और राष्ट्रीयता को गौरवान्वित करने वाला उनका व्यक्तित्व बेमिसाल था।

पिछले साल ही उत्तरप्रदेश सरकार द्वारा उर्दू को द्वितीय राजभाषा बनाये जाने के विरोध में उन्होंने सरकार के १ लाख रुपये 'भारत भारती' पुरस्कार को तुरंत ठुकरा दिया। बाद में जनता द्वारा धन संग्रह करके दिये गये एक लाख ग्यारह हजार रुपये के 'जनता भारत भारती' पुरस्कार को ससम्मान स्वीकार कर गौरव का अनुभव किया। यह चतुर्वेदीजी की जनप्रियता का जबर्दस्त प्रमाण है।

ब्रिटिश सरकार की रायबहादुरी भी उन्हें राष्ट्रीय विचारधारा से विचलित नहीं कर सकी। वे हमेशा अपनी संपादकीय टिप्पणियों में सरकार की खबर लेते रहे।

हिंदी की प्रतिष्ठित पत्रिका 'सरस्वती' का लंबे अर्से तक उन्होंने कुशल संपादन किया था। 'सचित्र संसार', 'राजभवन की सिगारदानी' और 'विनोद शर्मा अभिनंदन ग्रंथ' उनकी व्यंग्य रचनाएं बहुत लोकप्रिय हुईं। वे कुशल प्रशासनिक शिक्षाधिकारी के रूप में प्रख्यात रहे। भारतीयता और भारत की भाषा हिंदी को महिमा मंडित करने के लिए वे जीवन-भर जूझते रहे। इसीलिए देशवासी उन्हें 'हिंदी का भीष्म पितामह' कहने में गौरव का अनुभव करते हैं।

उनका प्रतिभाशाली व्यक्तित्व खोती जा रही राष्ट्रीय अस्मिता को बनाये रखने के लिए हरदम बेचैन ही नहीं रहा, बल्कि उसके लिए सर्वस्व समर्पित करने को तत्पर रहा। अतएव उन्हें केवल हिंदी भक्त मानकर उनकी प्रतिभा का अवमूल्यन करना होगा। एक युगपुरुष की तरह उन्होंने देश की हर स्थिति को संवारने और समृद्ध करने के लिए समग्रता का दृष्टिकोण अपनाया।

### चतुर्मुखी प्रतिभा के धनी

# श्रीनारायण चतुर्वेदी

☐ **प्रोफेसर कृष्णदत्त वाजपेयी**

श्रीनारायण चतुर्वेदी दिवंगत हो गये, यह समाचार हिंदी-प्रेमियों के लिए अत्यन्त दु:खद है। उन्होंने ९६ वर्षों की आयु पायी, जो एक साहित्यकार के लिए असाधारण मानी जायेगी। चतुर्वेदी जी पिछले एक वर्ष अस्वस्थ रहे। उसके पहले तक वे बराबर अध्ययन-लेखन में संलग्न रहे। दीर्घ जीवन को इस प्रकार कृतार्थ करने का सौभाग्य बहुत कम लोगों को मिलता है।

हिंदी भाषा और साहित्य के प्रति चतुर्वेदीजी पूर्णरूप से समर्पित थे। भारतीय राजनीतिक और सांस्कृतिक विकास में हिंदी का जो महत्वपूर्ण योगदान है, उसे वे भलीभांति समझते थे। राष्ट्रीय भावना के विकास में हिंदी ने निस्संदेह विशेष भूमिका निबाही। चतुर्वेदीजी चाहते थे कि राष्ट्रीयता और सांस्कृतिक विकास के परिप्रेक्ष्य में हिंदी के महत्व को उचित रूप से स्वीकारा जाये। इस दिशा में विदेशी शासनकाल में तथा स्वतंत्रता के बाद अनेक अड़चनें आयीं। चतुर्वेदीजी अपने अनेक सहयोगियों के साथ इन अड़चनों को दूर करने तथा अनेक जटिल समस्याओं से जूझने में कभी पीछे नहीं हटे। हिंदी को उसका गौरवपूर्ण स्थान दिलाने में आधुनिक युग के अनेक मनीषियों में चतुर्वेदीजी का नाम अमर रहेगा।

साहित्य-सर्जक होने के साथ-साथ चतुर्वेदीजी शिक्षाशास्त्र तथा पुरातत्व के अच्छे ज्ञाता थे। शिक्षाशास्त्री के रूप में उनके कार्यों से बहुसंख्यक जन परिचित हैं। प्राचीन कलाकृतियों तथा स्मारकों में उनकी विशेष रुचि थी। हिंदू मंदिरों के वास्तु पर लिखित उनका ग्रंथ अपने विषय की एक विशेष उपलब्धि है। 'सरस्वती' का संपादन करते समय भारतीय इतिहास और पुरातत्व पर उन्होंने अनेक संपादकीय लिखे। उनके समय में 'सरस्वती' का स्तर ऊंचा रहा। उसमें साहित्यिक विषयों के अलावा ज्ञान-विज्ञान से संबंधित अनेक लेख छपते थे। 'सरस्वती' के मुखपृष्ठ पर चतुर्वेदीजी प्राय: प्राचीन भारतीय चित्रकला या मूर्तिकला की चुनी हुई आकृति प्रकाशित करते थे।

चतुर्वेदीजी के साथ पिछले लगभग चालीस वर्षों तक मेरा संबंध रहा। उनके साथ इतिहास और साहित्य की चर्चा में बड़ा आनंद आता था। अनेक पुराने और नये

विद्वानों से उनके संबंध थे। उनके बारे में वे रोचक और ज्ञानवर्द्धक संस्मरण सुनाते थे।

किसी के साथ यदि चतुर्वेदीजी की तुलना की जा सकती है तो वे केवल चतुर्मुख विधाता हो सकते हैं। विधाता की तरह ही श्रीनारायणजी चतुर्मुख थे। उनका एक मुख वेदपाठी था, जिससे वे हजारों साहित्यिकों (और असाहित्यिकों) के हितार्थ स्वस्ति-वाचन करते थे। दूसरा मुख हिंदी का सर्जक-संरक्षक था। तीसरा भारतीय पुरातत्व और संस्कृति का उद्घोषक था। उनका चौथा मुख आलोचक का था, जो कभी-कभी दुर्वासा का रूप धारण कर बड़े सिंहासनस्थों तक को हिला-डुला देता था। पर साधारणतः यह मुख व्यंग्य-विनोद-संकुल था और उनके 'विनोद शर्मा' उपनाम को सार्थक करता था।

श्रीनारायण के साथ एक युग चला गया। हिंदी के राष्ट्रभाषा-स्वरूप को सम्यक ढंग से समझने वाले और उसके लिए मर मिटनेवाले मनीषी का पार्थिव शरीर उठ गया। पर उन्होंने राष्ट्र और भारतीय संस्कृति की गरिमा का जो संदेश दिया वह अमर रहेगा।

चतुर्वेदीजी के प्रति अपनी निम्नांकित काव्य-रचना के माध्यम से श्रद्धांजलि अर्पित कर रहा हूं:

**चतुर्वेद कुल-कमल-प्रभाकर,**
**श्रीनारायण शीलनिधान,**
**सरस्वती के प्रथित पुजारी**
**कर्मयोग के व्रती महान।**
**विश्वामित्र-वसिष्ठ, उभय के**
**गुणमंडित थे विप्र-प्रवर,**
**हिंदी के अश्रांत भगीरथ,**
**अप्रतिरथ, गतिशील, अजर।**

* * *

**मानव मूल्यों की गरिमा को**
**किया प्रतिष्ठित उस नर ने,**
**अनाचार से आजीवन लड़,**
**प्राप्त किया यश श्रीवर ने**
**नव दशकों की कीर्ति तुम्हारी**
**प्रेरक होगी युग-युग तक,**
**हिंदी की उपलब्धि बनी वह**
**प्रेरक-सर्जक युग-युग तक।**

* * *

**तुम भवभूति-समान रहे,**
**पर निज गौरव न बखान किया,**
**हिंदी के निःस्पृह साधक बन,**
**स्नेह-धर्म का गान किया।**
**है यह निरवधि काल,**
**विपुल पृथ्वी भी है गुम्फित-गरिमा,**
**श्रीनारायण के समानधर्मा**
**जानेंगे तव महिमा।**

**— १५ पद्माकर नगर,**
**मकरोनिया, सागर, म.प्र.**

□

# नवनीत

संपादक गिरिजाशंकर त्रिवेदी
उप-संपादक रामलाल शुक्ल
अतिरिक्त सहयोग } किशोरीरमण टंडन
प्रकाशक सु. रामकृष्णन्

संस्थापक : कन्हैयालाल मुंशी
भारती : स्थापना १९५६
श्रीगोपाल नेवटिया
नवनीत : स्थापना १९५२

वर्ष ३९, अंक ९
सितंबर १९९०

| | | |
|---|---|---|
| श्रीनारायण चतुर्वेदी | संपादक | १ |
| श्रीनारायण चतुर्वेदी 'श्रीवर' | प्रो. कृष्णदत्त वाजपेयी | २ |
| कु. भावना कुमुद: एक साक्षात्कार | .. | ६ |
| पत्र-वृष्टि | .. | ९ |
| अध्यक्ष के पत्र | सी. सुब्रमण्यम | १२ |
| तुम (कविता) | रामेश्वर शुक्ल अंचल | १५ |
| भाषा जीवन है | डॉ. धर्मध्वज त्रिपाठी | १६ |
| ग़ज़ल | हरिसिंह 'हरीश' | १९ |
| जिंदा मांसखोर गिद्ध | दुर्गाशंकर त्रिवेदी | २० |
| बचपन की अनुभूति | कमलेश द्विवेदी | २४ |
| सांस्कृतिक मंच | .. | २५ |
| प्रार्थना | .. | ३३ |
| एक भाग्यशाली पशु | शिशिर विक्रांत | ३४ |
| राजाजी की हिंदी सेवा | गोवर्धनलाल पुरोहित | ३६ |
| कार्टून्स | किशोर | ३९ |
| संस्कृत प्रेमी यूनानी सम्राट | राजीव सक्सेना | ४० |
| बच्चों में अतिसार रोग | डॉ. चंद्रशेखर अवस्थी | ४२ |
| राष्ट्रयोगिनी भगिनी निवेदिता | डॉ. भगवानशरण भारद्वाज | ४४ |
| आदमी का दर्द आदमी (कहानी) | रज्जन त्रिवेदी | ५२ |
| रूमानिया के तानाशाह चेसेस्क्यू | डॉ. भोलानाथ चतुर्वेदी | ६१ |

| | | |
|---|---|---|
| आंखें (कविता) | जगरानी कपूर | ६४ |
| प्रकृति का कुशल अध्येता जहांगीर | शुकदेव प्रसाद | ६५ |
| जानवरों की याद में स्मारक | वीरकुमार अधीर | ७१ |
| तनख्वाह का दिन (व्यंग्य वार्ता) | हरीशकुमार 'अमित' | ७५ |
| निबिया अकेल (पारिवारिक कहानी) | विनयकुमार तिवारी | ७७ |
| पं. बद्रीनारायण तिवारी से बातचीत | डॉ. आत्माराम त्रिपाठी | ८५ |
| गीत | रामनरेश सिंह 'मंजुल' | ९० |
| रामायण के प्रति आस्था (प्रेरक प्रसंग) | शिव रैना | ९१ |
| पेट्रोलियम की खेती कीजिये | राजकुमार जैन | ९२ |
| सुखी दाम्पत्य की चाबी (महिला जीवन) | गिरिजा 'सुधा' | ९३ |
| शब्द की आराधना (कविता) | रश्मि भार्गव | ९६ |
| चमत्कारी रुद्राक्ष | पंकज कुमार कर्ण | ९७ |
| नाते बन गये शूल (कविता) | डॉ. किशोरीलाल त्रिवेदी | ९९ |
| बोलती हैं ये चीजें (कविता) | कुंअर बेचैन | ९९ |
| अपने लाड़ले को कैसी कहानियां सुनायें | विभा प्रकाश | १०० |
| दृष्टिकोण (कविता) | रमाकांत शर्मा | १०३ |
| दुनिया का सबसे महंगा दाह-संस्कार | रांजीव सक्सेना | १०४ |
| ग़ज़ल | कृपाशंकर शर्मा | १०७ |
| पढ़ाई हो भी तो कैसे ? (बालकथा) | विवेक भारती | १०८ |
| चाय पीने-पिलाने के रिवाज | रंदी सत्यनारायण राव | ११० |
| स्तुति-पत्र (उर्दू हास्य-व्यंग्य) | इब्ने इंशा | ११२ |
| बरस गये बदरा झमाझम | के. पी. सक्सेना | ११५ |
| मासिक भविष्यफल - सितंबर ९० | पं. वी. के. तिवारी | ११७ |
| विश्वासघात (कहानी) | शकुंतला वर्मा | १२० |
| ग्रंथलोक | अवस्थी, साहू, मिश्र, याज्ञिक, दुबे श्रीवास्तव, अग्रवाल | १२९ |
| पानी है ठहरा (कविता) | मिश्रीलाल जैन | १३४ |
| कार्टून चित्रावली | एन. आजम | १३५ |
| दो क्षण तो हंस लें | किशोरीरमण टंडन | १३६ |

**आवरण-चित्र** : एस. ए. एम. काजी **चित्र-सज्जा** : ओके, शेणै, एन. आजम

कार्यालय : भारतीय विद्या भवन, क. मा. मुंशी मार्ग, बम्बई - ७ फोन : ८११४४६२.

# कु. भावना कुमुद : एक साक्षात्कार

कु. भावना कुमुद भले ही मन-मस्तिष्क से कुछ और हों, पर हृदय से चित्रकार हैं। उनके बनाये चित्र कला प्रेमियों का मन वरबस मोह लेते हैं। कोमलता-भरी रेखाएं और भावनाएं भावना की तूलिका से जब कैनवास पर उतरती हैं, तो उनसे जो आकृति रूपांकित होती है, वह यह सोचने के लिए विवश कर देती है कि आखिर उरई जैसी छोटी जगह में उन्होंने यह गुणवत्ता कैसे प्राप्त की। उम्र लगभगं २० साल। उनके पिता से मिलने-जुलने आनेवाले साहित्यकार और कलाकार ही उनके प्रेरणा स्रोत हैं। अपने निवास (कुमुद निवास, राठ रोड, उरई - २८५००१) में वे रचनाकारों का जिस आत्मीयता से स्वागत करती हैं, उसी का प्रतिफल है उनमें अल्प वय में एक उत्कृष्ट कलाकार का जन्म। **— संपादक**

**आपकी कला रुचि कब-कैसे विकसित हुई ?**

मेरी कला रुचि १९८२ से विकसित हुई। उस वर्ष मैंने एक मोर सैलोलाइड फिल्म पर फैब्रिक रंगों से बनाया था। तब मैं १२ वर्ष की थी। मेरे पिताजी के पास कलाशिक्षक राष्ट्रपति पुरस्कृत श्री लक्ष्मीनारायण श्रीवास्तव प्रायः आते थे। उन्होंने चित्र को सराहा और मेरी तूलिका को तेजी मिली।

कु० भावना कुमुद

**किन माध्यमों से चित्र बनाये ?**

मेरी मुख्य रुचि वातिक तथा तैल चित्रों में है। मैंने हार्डबोर्ड तथा कैनवैस तथा थर्मोकोल पर भी तैल चित्र बनाये हैं। कांच के सामने और पीछे से भी तैल चित्र बनाये। धातु के उत्कीर्णन तथा पार्श्वउत्कीर्णन (ऐचिंग) से भी चित्र बनाये। जलरंग पुटीन से उभार देकर 'रिलीफ वर्क', नाइफ वर्क, कोलाज आदि से भी चित्र बनाये। लोककला आलेखन शैली में भी कुछ चित्र हैं। कागज पर उत्कीर्णन करके भी कुछ चित्र बनाये हैं।

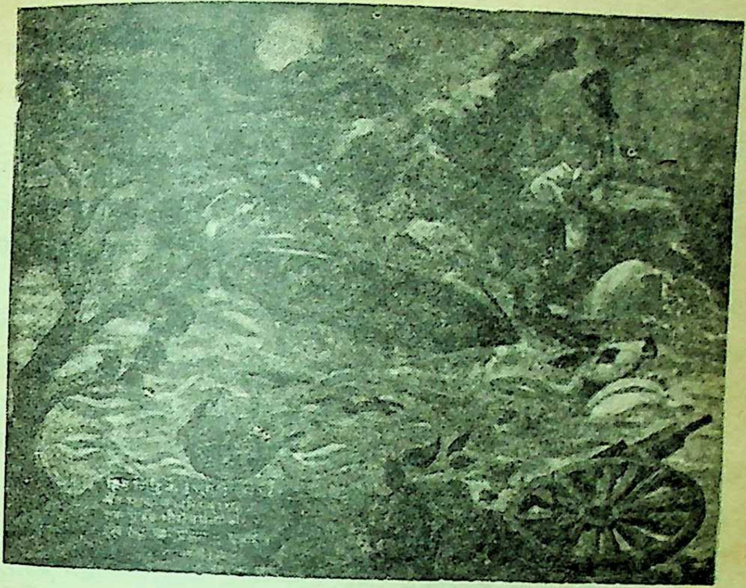

अबतक लगभग ७० पेंटिंग्स विभिन्न माध्यमों पर बनायीं।

### कला के क्षेत्र में शिक्षा किससे ?

जैसा कि आप जानते हैं, उरई छोटी जगह है। यहां कोई कला विद्यालय नहीं है। घर पर ही, पिताजी के पास विभिन्न विद्याओं के जो कलाविद् आते रहे, उन्हीं के मार्गदर्शन में घर पर ही अभ्यास करके इस क्षेत्र में आगे बढ़ी। बाद में बोंबे ड्राइंग का सर्टीफिकेट कोर्स किया। मेरे प्रेरक मुख्यतया श्री लक्ष्मीनारायण श्रीवास्तव, डॉ. जयश्री एवं मु. जावेद रहे।

### चित्रों की प्रदर्शनियां कहां-कहां ?

समूह प्रतियोगिताओं में तो कई जगह लगीं किन्तु एकल प्रदर्शनियां तीन लगीं। पहली प्रदर्शनी १९८७ में जालौन के एक बालविद्यालय में १४ नवंबर पर लगी थी। उसका उद्घाटन श्री लक्ष्मीनारायण श्रीवास्तव ने किया था। दूसरी प्रदर्शनी सिद्धकवि मैथिली शरण गुप्त की नगरी चिरगांव में १९८८ में लगी। वहां नेहरू युवा केंन्द्र का १४ प्रांतों का अंतर्राज्यीय शिविर लगा। उस में यह प्रदर्शनी लगी। अनेक मंत्रियों, पत्रकारों तथा प्रांतीय ख्याति के लोगों ने इसे देखा तथा मुझे प्रोत्साहित किया था। तीसरी प्रदर्शनी कुंभ मेला प्रयाग में फरवरी १९८९ मे लगी। वहां डॉ. रामकुमार वर्मा ने उद्घाटन कर मुझे आशीर्वाद दिया तथा राष्ट्रीय स्तर के व्यक्तियों ने देखा और सराहा।

**सबसे अच्छी कृति कौन-सी ?**

कृतियां तो कई अच्छी हैं किंतु श्रेष्ठतम 'प्रलय प्रवाह' को मानती हूं। यह प्रसादजी, की कामायनी की प्रारंभिक चार पंक्तियों पर चित्रित की गयी हैं- हार्डबोर्ड पर तैल चित्र से। इसमें प्रलय की कल्पना है। मनु चिंतित मुद्रा में 'प्रलय-प्रवाह' देख रहे हैं।

**प्रतीकों तथा दृश्यांकन में क्या विशेषता ?**

इसमें मुख्य रूप से वो प्रतीक लिये गये हैं- पहला, काल चक्र टूटने का जो नीचे पड़ा है तथा दूसरा, गिद्ध के उल्टे होने का, जो सर्वविनाश का द्योतक है। यानी प्रलय आने पर सब कुछ उलट-पुलट जायेगा, यहां तक कि आकाश में उड़ते पक्षी भी। जड़ों से उखड़ते वृक्ष, उड़ते वृक्ष, उड़ते हुए मकान, टूट-टूटकर हवा में उड़ते शिलाखंड, हर जगह जलप्लावन तथा थोड़ी बची भूमि-'धरा संकुचित नवलवधू-सी'- यही चित्रांकन के मुख्य बिंदु हैं। रंगयोजना तो आप देखकर ही पसंद या नापसंद कर सकते हैं। मैंने उसें स्वाभाविक रंग देने का प्रयास किया है।

**आप क्या बनना चाहती हैं ?**

मैंने इंटरमीडियेट के बाद सेक्रेटेरियल प्रेक्टिस में डिप्लोमा किया है तथा आजकल इलाहाबाद विश्वविद्यालय से बी.काम. कर रही हूं। पढ़-लिखकर मैं एक अच्छी एक्जीक्यूटिव बनना चाहती हूं। किंतु चित्रकला के क्षेत्र में साधना जारी रखना चाहती हूं... उच्चतम स्थान् तक जाने का विश्वास संजोकर।

छोटे स्थानों पर भी कला प्रतिभाओं का चयन कर उन्हें अच्छा प्रशिक्षण मिले तो देश में कला प्रतिभायें असाधारण परिणाम दिखा सकती हैं।

□

एक धनी व्यक्ति की पत्नी की वर्षगांठ थी। पत्नी को जानवरों को पालने का शौक था। पति ने उसे उपहार में एक ऐसी चिड़िया भिजवायी जो ग्यारह भाषाएं बोल सकती थी। उसकी कीमत पांच सौ रुपये थी। जब वह शाम को आफिस से घर आया तो उसने अपनी पत्नी से उसी उपहार के विषय में पूछा, 'तुम्हें मेरी भेजी हुई चिड़िया कैसी लगी ?'

'ओह ! बहुत अच्छी, मैंने उसे पकाने के लिए रसोइये को दे दिया है, अभी आप भी उसका स्वाद लीजियेगा।'

'रसोइये को !' आश्चर्य से धनी पति ने कहा।' लेकिन वह तो ग्यारह भाषाएं बोलनेवाली चिड़िया थी'

'अच्छा, फिर उसने मुझे ऐसा करने से मना क्यों नहीं किया ?'

□

# पत्र-वृष्टि

जुलाई-९० का **नवनीत** काफी प्रतीक्षा के बाद मिला। **नवनीत** जब समय पर नहीं मिलता तो इसे पाने के लिए कई-कई पुस्तक-केंद्रों पर भाग-दौड़ करनी पड़ती है। **नवनीत** को मैं हिंदी साहित्य की बेहद अनूठी और बेजोड़ पत्रिका मानता हूं। वैसे इसका हर अंक अपने आप में उदाहरण है। यह अंक बहुआयामी सामग्रियों से परिपूर्ण था। कहानी 'निःस्वार्थ प्रेम' और 'मां' (तमिल कहानी) जहां रोचक एवं यथार्थपरक हैं, वहीं लेख 'आचार्य कृपलानी', 'महान वैज्ञानिक वराह मिहिर', 'मिलोगे तुम कहां', और 'महापुरुषों का जीवन' प्रेरणादायी प्रतीत हुए। हास्य 'नींद क्यों रात भर नहीं आती' अच्छा लगा।

**— अरुण कुमार सिंह, 'चंचल', रांची, बिहार**

* * *

**नवनीत** का जुलाई अंक साहित्य की अपनी परंपरा में शानदार भूमिका का निर्वाहक बन पड़ा है। 'बच्चों के चित्र' व 'रिश्ता' कविताएं अपनी निराली छबि प्रस्तुत करती हैं। 'निःस्वार्थ प्रेम', 'मां' कहानियां वर्तमान जीवन में वास्तविकता प्रमाणित करती हैं। 'महान चिंतक जे. कृष्णमूर्ति' संबंधी लेख प्रेरणादायक एवं अनुकरणीय है।

ज्ञानवर्द्धक तथा सुरुचिपूर्ण सामग्री के लिए हार्दिक बधाई।

**— अमितेश नस्कर, जमालपुर, बिहार**

* * *

जुलाई का **नवनीत** देखा। हिंदी की पत्रिकाओं में यह अलग-थलग तो है ही भारतीय संस्कार एवं परंपरा की पोषक भी है। इसके साथ ही साथ बदलते समय के अनुरूप भी एक सही दिशा निर्देश करती प्रतीत होती है। उदाहरण के तौर पर इस अंक में प्रकाशित श्री अश्विनी केशरवानी, डॉ. सोम प्रकाश, श्री कमल टावरी, लक्ष्मी रमणन् की रचनाएं देखी-पढ़ी जा सकती हैं।

**— डॉ. सतीशराज पुष्करणा, पटना**

* * *

जुलाई-९० का अंक काफी प्रतीक्षा के बाद प्राप्त हुआ। आवरण-पृष्ठ को देखते ही मन पुलकित हो उठा।

**नवनीत** व्यावसायिक नहीं, अपितु साहित्यिक पत्रिका के रूप में विख्यात है। इसकी प्रशंसा जितनी की जाय, कम है। 'मिस्र के पिरामिड' लेख अत्यंत रोचक है।

'ऐसे पत्र मिलते थे बापू को' कमल सौगानी का लेख भी अच्छा तथा ज्ञानवर्द्धक रहा ।

**– शैलेंद्र कुमार चतुर्वेदी, इलाहाबाद, उ.प्र**

* * *

मैं भारतीय विद्या भवन के पूना केंद्र के श्री ज्ञानेश्वर हरिकथा कीर्तन महाविद्यालय का विद्यार्थी हूं। जुलाई-९० का अंक आज मिला। 'पृथ्वी का गुरुत्वाकर्षण' मनमोहनदयाल चतुर्वेदी का लेख पढ़ते समय 'भारतीय संस्कृति' दुनिया में सबसे पहले कितनी विज्ञान में आगे थी, इसका अभिमान हुआ। 'प्राणों की बाजी' लेख तो बहुत दिलचस्प लगा। इस अंक के सभी लेख ज्ञानवर्धक थे। **नवनीत** के सभी अंक अच्छे होतें हैं और सभी अंक के आवरण-पृष्ठ सुन्दर। **– विनोद सुधाकर शेंडगे, पुणे**

* * *

काफी दिनों की प्रतीक्षा के बाद **नवनीत** का जुलाई-९० अंक प्राप्त हुआ। आवरण-पृष्ठ की सुंदर रूप-रेखा को देखकर तो मेरा मन भी फूल की भांति खिल उठा। इस अंक में प्रकाशित कहानियां, कविताएं, हास्य-व्यंग्य, लेख सभी बेजोड़ हैं। परंतु इन सब में 'खई के पान बनारस वाला' का रोचक वर्णन मुझे बहुत पसंद आया। इसके शीर्षक पढ़ते ही मुझे दो गीत याद आ गये। वे हैं :–

**खई के पान बनारस वाला,**
**मैं छोरा गंगा किनारे वाला ।**

और

**मैं मुख में रखूं हमेशा पान,**
**ये बबुआ यही मेरी पहचान ।**
**मैं छोरा गंगा तट वाला,**
**टिका है मुझपे हिंदुस्तान ।।**

**– अरविंद कुमार, गया, बिहार**

* * *

जून-९० का **नवनीत** देखकर प्रसन्नता हुई। कुंवर चंद्रप्रकाश सिंह की 'कवि हे!' रचना ने रवींद्रनाथ टैगोर की उस रचना की ओर हठात् ध्यान दिलाया, जिसमें उन्होंने कवि गुरु कालिदास के संबंध मे कहा है कि 'हे महाकवि ! तुम्हारे समय में भी तो ईर्ष्या, द्वेष, कलह रहा होगा। किंतु महाकाल शंकर की भांति तुमने उस विष का स्वयं पान किया। अपनी रचना में उसको लेश मात्र भी नहीं आने दिया। हम लोगों के लिंए तुमने अमृत की भांति सुख के संदर्भों का ही वर्णन किया।' वर्तमान में यथार्थवाद के नाम पर जिस हलाहल विषमय साहित्य का सृजन हो रहा है, उनके सर्जनकर्ताओं से प्रश्न पूछकर कवि ने उनसे पवित्र दृष्टिकोण एवं सही मार्ग पर चलने का निवेदन किया। यदि आज के साहित्य सर्जनकर्ता अपने उत्तरदायित्व को समझकर उस भावना का आदर करें तो दोनों का कल्याण निश्चित है। वैसे इस अंक की अन्य रचनाएं भी उदात्त हैं।

**– श्रीवत्स निगमालंकार, दिल्ली**

* * *

**नवनीत** से पुरानी प्रीत रही है। किंतु यह आसानी से उपलब्ध नहीं होती। इस शहर में कुछ माह पूर्व तक **नवनीत** की मात्र एक प्रति

आती थी। मेरे अनुरोध पर अब दो उपलब्ध हो जाती हैं।

जून का अंक जुलाई में प्राप्त हुआ। अपने नये परिधान में यह और आकर्षक लगा। अनेक मुद्रण दोष और वाक्य-विन्यास आंखों को खटके। इस स्तरीय पत्रिका में मुद्रणदोष अक्षम्य है।

कमला चमोला की 'जीवन रेखा', कुलवंत की 'शत्रु कौन' तथा साधना श्रीवास्तव की 'स्नेह का प्रतिदान' कहानियां हृदयस्पर्शी व रोचक लगीं। राजेंद्र तिवारी की ग़ज़लें, नास्तिक की हाइकु कविताएं तथा मिश्रीलाल जायसवाल की चुटकियां भी अच्छी थीं।

**नवनीत** का स्तर बनाये रखने के लिए साधुवाद तथा शुभकामनाएं।

**– टी. आर. चमोली, टिहरी, उ.प्र.**

* * *

मैं एक भौतिक विज्ञान का छात्र हूं। इसी वर्ष मैंने एम.एस.सी. फाइनल की परीक्षा दी थी। अब मुझे पत्रिका पढ़ने को मिली तो **नवनीत** ही हाथ लगी। सर्वप्रथम मैंने जून-९० के अंक का 'प्राध्यापक या जादूगर' नामक लेख पढ़ा। इसमें भौतिकी के वैज्ञानिक प्रो. मिलर के पढ़ाने का ढंग प्रस्तुत किया गया बड़ा ही रोचक लगा और मुझे भी कई नयी जानकारी समझने के लिए दिशा मिली। तब से मैं **नवनीत** का सगा बन गया।

**– श्रवणकुमार भावसार, रामपुरा,**
**मंदसौर, म.प्र.**

* * *

**नवनीत** जून-९० अंक पढ़ा, जिसमें कुंवर चंद्रप्रकाश सिंहजी की कविता 'कवि हे!', 'डा. निशंक' का 'राष्ट्रीय भोजन' तथा कुलवंत की पंजाबी कहानी 'शत्रु कौन' ने अंक में चार चांद लगा दिये। ऐसी सामग्री के प्रकाशन पर मेरी ओर से बधाई स्वीकारें।

**- बालकवि बलराम जैनपुरी,**
**बाराबंकी, उ.प्र.**

* * *

**नवनीत** का जून-९० अंक पढ़ा। कहानियां 'स्नेह का प्रतिदान' और 'अपनों के बीच' सामाजिक परिस्थितियों के अलग-अलग रूपों को प्रकट करती हैं। दोनों शिक्षाप्रद व मार्मिक लगीं। इनके अलावा स्वास्थ्य चर्चा के अंतर्गत छाछ के गुण व उपयोग और उपयोगी सलाह के अंतर्गत 'चमड़ी की देखभाल' ज्ञानवर्द्धक लगे। आशा है कि भविष्य में भी ऐसी ही प्रेरणादायी रचनाएं व ज्ञानवर्द्धक जानकारियां प्राप्त होंगी। **– रविकांत शिंदे, उज्जैन, म.प्र.**

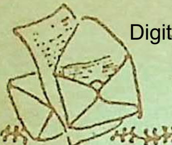

# अध्यक्ष के पत्र

**राज भवन**
**मलाबार हिल, बम्बई**

प्रिय सुहृद,

भारतीय विद्या भवन के तिरुपति केंद्र के श्री वेंकटेश्वर विद्यालय के उद्घाटन के सम्बन्ध में २ जून १९९० को एक कार्यक्रम का आयोजन किया गया था। मैंने उसमें मुख्य अतिथि के रूप में शिक्षा के कुछ पहलुओं पर प्रकाश डाला था। कार्यक्रम का शुभारंभ परंपरागत ढंग से दीप जलाकर किया गया, क्योंकि दीपक की लौ सदैव सीधी और ऊपर की ओर रहती है और इसे कुछ क्षण के लिए भले ही बदल दिया जाय, किन्तु अपनी पूर्व की स्थिति में वह पुन: आ जाती है। एक दीपक हजारों दीपकों को प्रज्वलित कर सकता है। यह ज्ञान का प्रतीक है।

शिक्षा के दो पहलू होते हैं – एक जनसामान्य की शिक्षा तथा दूसरी नेतृत्व के लिए शिक्षा। यदि आप विकसित देशों के इतिहास पर नज़र डालें तो आप देखेंगे कि जनसामान्य की शिक्षा सदैव उनके विकास का मुख्य कार्य रहा है। विगत शताब्दी के अन्तिम भाग में स्वामी विवेकानन्द ने अपनी अमेरिका यात्रा के पश्चात् भारतीय मित्र को लिखा था कि शिक्षा को कुछ प्रबुद्ध वर्ग तक सीमित रखने की अपेक्षा व्यापक आधार पर होनी चाहिए। विश्व साक्षरता ही भारत की प्रगति का मुख्य उद्देश्य था। इसीलिए हमने अपने संविधान में स्पष्ट उल्लेख किया है कि हम दस वर्ष में ही चौदह वर्ष तक के बच्चों को अनिवार्य और नि:शुल्क शिक्षा देने की व्यवस्था करेंगे। किन्तु हम चालीस वर्षों में भी उसे पूरा नहीं कर सके। मुझे पूरा भरोसा है कि अगले दस वर्षों में हम चाहे जो हो किन्तु एक साक्षर राष्ट्र अवश्य बन जायेंगे। इसी भाव से हमें प्रारंभिक शिक्षा, माध्यमिक शिक्षा और महाविद्यालयी शिक्षा की इमारत खड़ी करनी चाहिए।

सुगठित व्यक्तित्व के विकास के लिंए भारतीय विद्या भवन ने तीन प्रकार की शिक्षा की व्यवस्था की है, शारीरिक, बौद्धिक तथा आध्यात्मिक। शारीरिक शक्ति ही अन्य दो प्रकार के विकास का आधार बनती है। जैसे कि स्वामी विवेकानन्द ने कहा था कि 'बच्चों को खेल के मैदान में जाकर खेलना चाहिए, उन्हें कसरत करनी चाहिए। स्वस्थ रहकर वे भगवद्गीता को अच्छी तरह समझ सकते हैं। शारीरिक दृष्टि से मजबूत राष्ट्र का बड़ा महत्व होता है।

दूसरे प्रकार की शिक्षा बौद्धिक शिक्षा है। मानव जीवन के विविध क्रियाकलापों के

सम्बन्ध में विश्व में प्राप्त ज्ञान बच्चों को सुलभ होना चाहिए।

तीसरे प्रकार की शिक्षा आध्यात्मिक शिक्षा है। यह भावनात्मक होने के कारण अधिक महत्वपूर्ण है। जब तक उक्त तीनों प्रकार की शिक्षा न दी जाय तब तक हमारी शिक्षा अधूरी है। केवल शारिरिक विकास से तो राक्षस ही उत्पन्न हो सकते हैं। ज्ञान तथा कौशल का उससे समन्वय आवश्यक है। ज्ञान एक दुधारी तलवार है जिसका प्रयोग अच्छे और बुरे दोनों के लिए किया जा सकता है। इसीलिए आध्यात्मिक शिक्षा बहुत ही महत्वपूर्ण हो जाती है। ज्ञान का अच्छे कार्यों में प्रयोग ही बुद्धिमत्ता है। विश्व से प्राप्त जानकारी की परिणति ज्ञान तथा ज्ञान की परिणति बुद्धिमत्ता में होनी चाहिए।

हमारी सरकार को, जो नयी शिक्षानीति निर्धारित करना चाहती है, मार्गदर्शन के लिए विदेशों की ओर नहीं ताकना चाहिए। उन्हें भारतीय विद्या भवन, रामकृष्ण मिशन, चिन्मय मिशन तथा ईसाई मिशनों से पर्याप्त जानकारी प्राप्त हो सकती है। उन्हीं को सुव्यवस्थित कर अपनाया जा सकता है। उसमें सभी प्रकार की शिक्षा सम्मिलित है।

अभी हाल तक साम्यवादी देशों ने, खासकर सोवियत रूस ने, अधार्मिक नीति अपनायी थी। उनकी समझ से धर्म अफीम की तरह लोगों पर असर करता है। किन्तु ७० वर्षों के पश्चात् उन्होंने समझा कि भौतिक विकास से समस्यायें अधिक उत्पन्न हुईं और उनका समाधान कम निकला। सोवियत रूस के अध्यक्ष गोरबाचाव ने १८ मास पूर्व अपने एक भाषण में 'आध्यात्मिकता' का प्रयोग १७ बार किया। उन्होंने कहा कि विज्ञान और तकनीकी की प्रगति के अनन्तर गरीबी और संघर्ष बढ़ा है उसका कारण आध्यात्मिकता की कमी है।

सौभाग्य से हमें अपने पूर्वजों से आध्यात्मिकता प्रचुर मात्रा मे मिली है। हमारे सन्त-महात्माओं ने ऋषि-मुनियों ने तथा स्वामी विवेकानन्द, श्री अरविन्द महात्मा गान्धी, डा. राधाकृष्णन् आदि ने भविष्यवाणी की थी कि मानवता का आदर्श भारत में ही उत्पन्न होगा। हमें खेद है कि इस समय हमारे चारोंओर अव्यवस्था, अराजकता, अनुशासनहीनता, हिंसा तथा होड़ फैली हुई है। निश्चित ही यह आदर्श नहीं है। इसलिए हमें अपने बच्चों की शिक्षा पर विशेष ध्यान देना चाहिए ताकि यदि हम आदर्श नहीं उपस्थित कर सके तो कम से कम हमारे बच्चे उसे कर दिखायें।

## अध्यापक की भूमिका

किसी भी शिक्षा-व्यवस्था में अध्यापक की मुख्य भूमिका होती है। एक अच्छी शिक्षा संस्था में सेवाभाव से प्रेरित कर्म एवं समर्पित अध्यापकों की नितान्त आवश्यकता होती है। इस सम्बन्ध में तिरुमलानैकन के समय की मदुराई की एक कहानी याद आती है। पंद्रहवी सदी में मीनाक्षी मन्दिर के लिए पत्थरतराश का कार्य चल रहा था।

तिरुमलनैकन ने एक पत्थर तराश से पुछा—'आप क्या कर रहे हैं?' उसने बड़े ही कड़वे ढंग से कहा कि 'अपने पुराने पापों का प्रायश्चित कर रहा हूं।' राजा ने दूसरे से वही प्रश्न किया। उसने कहा कि वह उसका पेशा था और जीविकोपार्जन के लिए कार्य कर रहा है। राजा ने जब तीसरे व्यक्ति से वही प्रश्न किया तो वह भाव विभोर हो उठा और कहा कि 'मेरे लिए इससे बढ़कर सौभाग्य की बात और कौन-सी हो सकती है कि मैं मां मीनाक्षी के मन्दिर-निर्माण में कुछ कार्य कर सकूं और मैं वही कर रहा हूं।' यही बात अध्यापक के सम्बन्ध में कही जा सकती है। उन्हें सोचना चाहिए कि वे एक नये राष्ट्र का निर्माण कर रहे हैं और शिक्षा देना उनका धर्म है। समाज को भी इसके बदले में उन्हें एक स्वच्छ जीवन देने की जिम्मेदारी लेनी चाहिए।

अध्यापक, प्रबन्धक और अभिभावक तीन स्तंभों पर शिक्षा का महल खड़ा हो सकता है। जब तक तीनों में पूर्ण सहयोग नहीं होगा, संस्था सफल नहीं हो सकती। जिस ढंग से इसकी संरचना की गयी है और जो लोग इस पवित्र कार्य में लगे हैं उन्हें देख कर मुझे पूर्ण विश्वास है कि शीघ्र श्री वेंकटेश्वर विद्यालय की परिणति श्री वेंकटेश्वर विद्याश्रम के रूप में हो जायेगी। समाज के लिए यह आदर्श बनेगा।

आपका
**सी. सुब्रमण्यम**

□

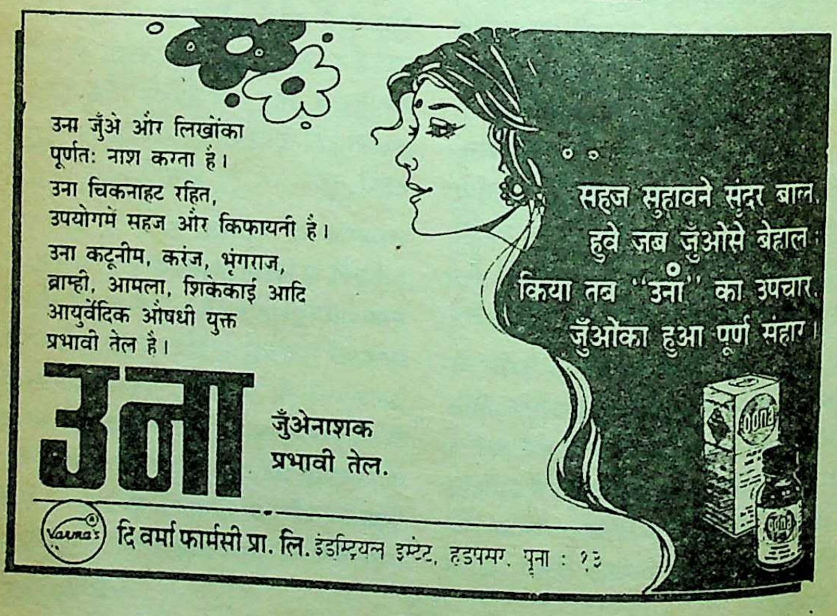

उना जुँऐ और लिखोंका
पूर्णतः नाश करता है।
उना चिकनाहट रहित,
उपयोगमें सहज और किफायती है।
उना कटूनीम, करंज, भृंगराज,
ब्राम्ही, आमला, शिकेकाई आदि
आयुर्वेदिक औषधी युक्त
प्रभावी तेल है।

उना
जुँऐनाशक
प्रभावी तेल.

दि वर्मा फार्मसी प्रा. लि. इंडस्ट्रियल इस्टेट, हडपसर, पूना : १३

# तुम

## रामेश्वर शुक्ल 'अंचल'

तुम मेरे जन्मान्तर के सब पुन्य पहनकर आयी हो
मेरे चिर संचित कर्मों की पावनता हर लायी हो
मेरे बीते वरदानों की तुम पुलकित पहचान नयी
जन्मे और अजन्मे जीवन की साकार पुजाई हो

मेरे जनम-जनम की गति की तुम अविनश्वर उज्ज्वलता
युगों-युगों से मंजते मेरे मन की निर्मल सुन्दरता
तुम्हें पुकारूं - स्वर में ऐसी तन्मयता की सांस कहां
फ़िर भी तुम्हें बुलाने का सुख प्रतिक्षण होठों में जलता

सचमुच मेरे सत्कर्मों की तुम हो पकती नयी फसल
उठे-उठे फागुन की नूतन गंधभरी आभा श्यामल
तुम मेरे अगणित जन्मों की आस्था की आलोक-शिखा
तिल-तिल जोड़ी गयी ज्योति का अविरल बहता मुक्ताजल

मेरे जनम-जन्म के तुम सौभाग्य पहनकर आयी हो
तुम प्यासे प्राणों में कैसी तृप्तिभरी पहुनाई हो
बांध दिया पहले तो मेरा मन आकाश कुसुम से यों
फिर भी तुम मेरी हर अंजलि में नभ से तिर आयी हो

तुम मेरे सब खोये-खोये स्वप्न पहनकर आयी हो
पूजा के पहले जलती हर लौ में तुम्हीं समायी हो
माना तुम दूरागत वंशी ध्वनि जैसी खोयी-खोयी
कभी न मेरी होकर भी क्यों लगती नहीं परायी हो ।

**— पचपेढ़ी, दक्षिणी सिविल लाइन्स,**
**जबलपुर, म.प्र.**

# 'भाषा' जीवन है

□

### डॉ. धर्मध्वज त्रिपाठी

'भाषा' संस्कृत की 'भाष्' धातु से निष्पन्न है। इसका आशय है - कथन या अभिव्यक्ति। इसके अतिरिक्त प्रस्तुत करना, रखना, प्रकट करना, खोलना, ध्वनित करना तथा प्रक्षेपित करना भी इसके अर्थ बताये गये हैं। समग्र रूप से 'भाषा' भावों या विचारों के प्रकट करने का एक सबलतम साधन है। 'भाषा' से ही जीव की पहचान है।

'भाषा' का आविर्भाव मानव द्वारा होता है। मानव एक सामाजिक प्राणी है। समाज में रहते हुए वह अपने परिवेश, वातावरण आदि से जुड़ता है। जो वह देखता सुनता, समझता और अनुभव करता है, उसकी वह प्रभावशाली ढंग से अभिव्यक्ति भी करता है। उसकी यह अभिव्यक्ति की प्रक्रिया ही 'भाषा' है। भाषा ही मनुष्य को समस्त जीवों से श्रेष्ठ प्रभावित करती है। मनुष्य भाषा-सोपानों के माध्यम से ही देवत्व की ओर प्रस्थित होता है।

भाषा समाज द्वारा अनुमोदित एवं मनुष्य द्वारा अर्जित है। मनुष्य अपनी जातीय, राष्ट्रीय एवं मानवीय धरोहर की सुरक्षा भाषा के ही माध्यम से करता है। संस्कृति, कला, ज्ञान, विज्ञान, प्रौद्योगिकी तथा अन्यान्य मानवीय बहुमूल्य संपत्तियां 'भाषा' द्वारा ही सुरक्षित हैं। आदिम युग से आज तक मनुष्य अपनी भाषा के विभिन्न सोपानों पर आरूढ़ रहकर 'मानवता' का निरन्तर जयघोष करता रहा है। भाषा की कीर्तिगाथा को मनुष्य ने कभी धूमिल नहीं होने दिया और भाषा ने भी मानवता के विजयरथ को कभी गतिहीन नहीं बनाया। इस प्रकार भाषा और मनुष्य का परस्पर अन्योन्याश्रित संबंध है।

'भाषा' को स्वार्थ, संकीर्णता एवं समुदाय की सीमाओं में बांधना भाषा को संकुचित करना है, उसके स्वाभाविक प्रवाह को बलात् रोकना है। भाषा प्रवहमान सरिता के सदृश है, उसे रोकना संघर्ष का जलप्लावन लाना है। गति में क्षिप्रता या मंदता उसकी गति है। उसे प्रवहमान रहने देना ही मानव का लक्ष्य होना चाहिए। भाषा-सरिता के पावन-शीतल रस से जीवन लतिका को विकसित एवं पल्लवित करने का यत्न करना आवश्यक है।

भाषा जीवन का स्पंदन है। स्पंदन पर प्रहार करना मृत्यु को आमंत्रित करना है। भाषा हृदयों को जोड़ती है, भावों को मधुर, रसमय एवं कोमलता प्रदान करती हैं तथा विचारों को पुष्ट, प्रभावपूर्ण और मुग्धकारी

बनाती है। वर्ग, जाति, सम्प्रदाय, क्षेत्र तथा देश विशेष की 'भाषा' कहकर भाषा का ही नहीं, मानव जाति के प्रति उपेक्षा और तिरस्कार का भाव उत्पन्न करना है। भाषा मानव को सम्पूर्णता की ओर ले जाने का एक सशक्त माध्यम है। दर्शन, विचार, दृष्टि, कला और सभ्यताओं के संदेश 'भाषा' में ही अंकित हैं। 'भाषा' जीवन का एक महान सूत्र है;जिससे मानव अपने कर्तव्य-पथ का निर्माण करता है। कर्तव्य के कारण ही मनुष्य सतत् जागरूक रहता है।

हिंदी भाषा पर प्रायः आक्षेप लगाया जाता है कि इसका शब्द भण्डार अन्य भाषाओं के शब्दों से भरा है। इस आरोप में कोई तर्क नहीं है। यह सर्वस्वीकृत तथ्य है कि भाषा का निर्माण जन समुदाय द्वारा होता है। भाषा में प्रयुक्त होने वाले शब्दों का प्रयोग जनता के द्वारा जिस मात्रा में किया जाता है, वे शब्द उसी अनुपात में अपनी लोकप्रियता बनाते हैं। जिन शब्दों का प्रयोग बहुलता के साथ, व्यापकता के साथ होता है, वे जनता में अतिप्रचलित होते हैं। शिक्षित-अशिक्षित सभी इनके प्रयोग एवं अर्थगौरव से परिचित होते हैं। टिकट, स्टेशन, स्कूल, कॉलेज, पुलिस, जज, गलीचा, चाकू, कुलुफ, सरहद, सरदार, सरफरोश, सरकार, बेईमान, बेदाग, बेरहम, बेकरार, बेजान आदि ऐसे शब्द हैं,जो विदेशी हैं किन्तु आज इनका हिंदी में व्यापकस्तर पर प्रयोग हो रहा है। ये शब्द हमारी जीवन प्रक्रिया में इतना घुलमिल गये हैं कि उनके 'विदेशी' होने का अहसास ही नहीं होता। इसका कारण है कि एक सुदीर्घकाल तक हमारे देश पर इस्लाम और अंग्रेजों का शासन रहा है। उनके सम्पर्क में रहने के कारण उनके द्वारा प्रयुक्त किये गये शब्दों को हमने धीरे-धीरे अपने जीवन की गतिविधियों में सम्मिलित कर लिया। आज कमीज, बटन, शर्ट, पैण्ट और टेलरमास्टर की बात सभी करते रहते हैं। इन शब्दों के प्रयोग और उसके वैशिष्ट्य की यहीं प्रामाणिकता है।

यह नहीं भाषा की रचना भी बड़े मजेदार ढंग से होती है। जनरुचि भाषा के निर्माण में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह करती है। दो भाषाओं के अलग-अलग शब्दों को लेकर एक ऐसा शब्द बनाया जाता है जो एक अर्थविशेष का प्रतीक बनता है। जेल-यात्रा, लाठीचार्ज, बाढ़समिति, गुन्डा-एक्ट आदि ऐसे शब्द है,जो अलग-अलग भाषाओं से मिलकर बने हैं,जिनका अर्थ समाज में अत्यंत लोकप्रिय एवं महत्वपूर्ण है। आज हिंदी में एक शब्द 'लोकल' व्यापकता के साथ प्रयुक्त हो रहा है। इसका प्रयोग झूठ, धोखा या गलतबयानी के अर्थ में किया जाता है। जैसे 'मुझसे लोकल मत बोलें' या 'तुम बहुत लोकल हो।' इसी को और अधिक जोर देकर कहा जाता है तुम लोकलिस्ट (धोखेबाज, झूठे) हो। 'लोकल' शब्द वास्तव में अंग्रेजी का है जिसका अर्थ 'स्थानीय' है किन्तु हिंदी में इसका प्रयोग दूसरे अर्थ में प्रारंभ हो गया है।

यही नहीं भाषा में आज 'माडर्न' की परत भी चढ़ने लगी है। यह परत 'आकाशवाणी' और 'दूरदर्शन' पर भी पूर्व प्रधानमत्री के भाषण में प्रायः सुनी गयी है। 'यह काम हमने करा है'। 'करा' में क्रिया की माडर्न परत चढ़ी है। 'किया' के बजाय 'करा' का प्रयोग भाषा की विकासमान स्थिति का प्रतीक है। 'जी हां' के लिए 'हैंजी' या 'हंजी' का प्रयोग 'पंजाबी लहजे' के कारण बढ़ रहा है। भाषा की इस प्रवृत्ति को आज सिनेमा और दूरदर्शन के कार्यक्रमों में भी आसानी से देखा जा सकता है।

'भाषा' की प्रवृत्ति को, उसकी वर्तनी को गलत ढंग से प्रस्तुत करने में हिंदी फिल्मों की अहम भूमिका है। बड़े-बड़े पोस्टरों पर लिखे हुए शब्द जब पढ़े जाते हैं तो उनका मन पर प्रभाव पड़ता है। विद्यालयों में पढ़ने वाले छात्र इन शब्दों का सही प्रयोग, सही वर्तनी मानकर अपने प्रयोग में लाना प्रारंभ करते हैं। उदाहरणार्थ 'कबीला' के लिए 'कबिला' संन्यासी के लिए 'सन्यासी', 'रंगाखुश' के लिए 'रन्गाखुस' आदि। 'गढ़ा' के लिए 'घड़ा', 'शुभ' के लिए 'सुभ', 'सरफरोश' के लिए 'सरफरोस' आदि शब्द इसी प्रक्रिया के उदाहरण हैं। यही नहीं अंग्रेजी भाषा की भी वर्तनी बिगाड़ने में फिल्में ही उत्तरदायी हैं।

'भाषा' में देशज शब्दों की भी अपनी भूमिका होती है। इन शब्दों की उपेक्षा किसी भी मूल्य पर नहीं की जा सकती। क्षेत्र विशेष, समाज विशेष, समुदाय विशेष की बोली का प्रतीक ये शब्द होते हैं। बंगाल का 'सिघाड़ा' शब्द उ.प्र. में 'समोसा' के नाम से जाना जाता है। केन्द्रीय अवधी क्षेत्र ('लखनऊ, उन्नाव, कानपुर के आसपास) में इसे 'तिकोना' के नाम से भी जाना जाता है। इसी प्रकार मिट्टी का बना बर्तन हुण्डा, चुघ्घड़, सकोरा, गंगासागर आदि नामों से जाना जाता है। शब्द की अपनी अर्थ-अभिव्यक्ति की सामर्थ्य है। इस सामर्थ्य से ही भाषा की गहनता और उसकी व्यापकता का पता चलता है। देशज-शब्दों का वास्तविक प्रेम भाषा की महत्ता को प्रतिपादित करता है।

कभी-कभी देशज शब्दों के प्रयोग पर कतिपय लोग नाक-भौं सिकोड़ते हैं, उसे अछूत-सा समझते हैं, यह प्रवृत्ति अनुचित है। भाषा सर्वप्रिय होती है। भाषा पर सभी का समान अधिकार है। भाषा में जीवन की शैली और समाज की गतिविधियां सन्निहित होती हैं। भाषा पर किसी जाति, धर्म, समुदाय या समाज का एकाधिकार नहीं होता। यदि ऐसा है तो वह भाषा नहीं है वरन् किसी की बंधुआ अभिव्यक्ति है। भाषा इतिहास, भूगोल, व्याकरण, साहित्य, कला, संगीत, मनोविज्ञान, समाज विज्ञान, अर्थशास्त्र आदि से सीधी सम्वद्ध रहती है। 'प्रेम की भी भाषा' होती है। रत्नाकर ने कहा है — 'नैकु कही नैननि सों, अनेक कही बैननि सों, रही सही सोऊ कहिदीनि हिचकानि सौं'। उक्त कथन भावाभिव्यक्ति का सर्वोत्तम उदाहरण है।

# ग़ज़ल

मौत के साये खड़े हैं ज़िन्दगी के सामने ।
छाये हैं कितने अंधेरे रोशनी के सामने ?
बदलियों, बरसात का आलम है कैसा देखिये,
क्या बला आई है देखो चाँदनी के सामने ?
अब नहीं कोई किसी के सामने मुसकायेगा,
दुश्मनों की बाड़ आयी आदमी के सामने ।
चाँद-तारे टूटकर जाने कहाँ पर खो गये,
आसमां क़दमों तले है अब जमीं के सामने ।
मंदिरों में भी नहीं कोई सुरक्षित दिख रहा,
यह परेशानी हुई है हर किसी के सामने ।
वो ज़माना और था जब गोपियाँ मर-मिट गयीं,
अब कोई मरता नहीं है बाँसुरी के सामने ।
क्या करे शायर अकेला लिख-लिखाकर रख चुका,
हर कोई आज़िज हुआ है शायरी के सामने ।
ऐ 'हरीश' तू ही चला जा यार की दहलीज पर,
शायद वो भी सर झुकाये बन्दगी के सामने ।

**□ हरिसिंह 'हरीश'**
— सुमन साहित्य सदन, दतिया (म.प्र.)
पिन - ४७५६६१.

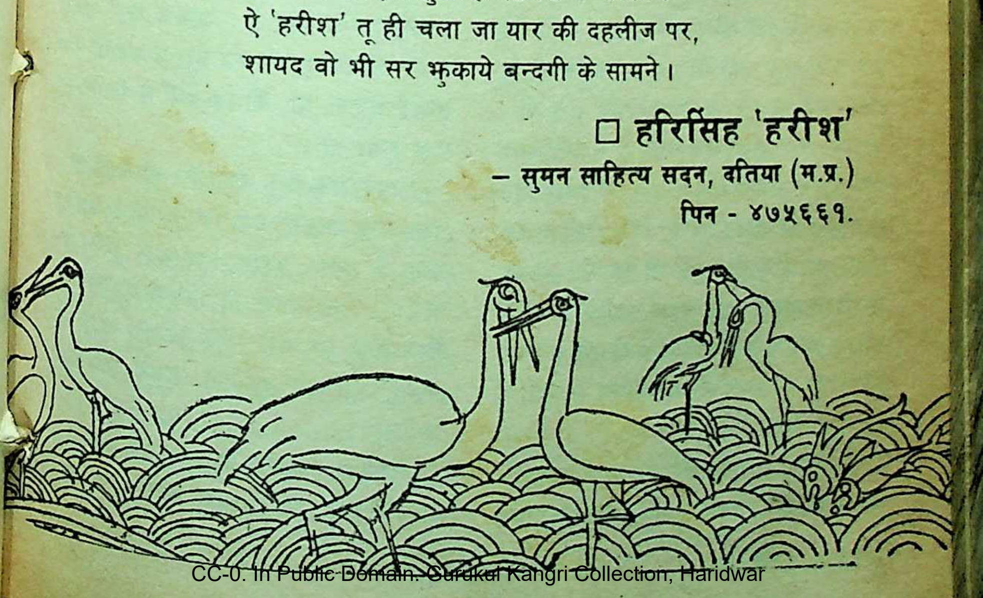

सत्यकथा

# मांसखोर गिद्धों के सामने

### दुर्गाशंकर त्रिवेदी

फनीमूर कूपर अमेरिकी नागरिक थे। एक हवाई अड्डे के निर्माण के लिए उन्हें भारत में लगभग डेढ़-दो वर्ष रहना था। वे जब बम्बई के हवाई अड्डे पर आये तो उन्हें वहां एक खूबसूरत अंग्रेज लड़की पामीला से मजबूरी में जान-पहिचान करनी पड़ी, क्योंकि उस दिन तेज वर्षा हो रही थी और दोनों को पूर्वांचल भारत का सफर करना था। समाचार-पत्रों में पूर्वी भारत में भयंकर बाढ़ की विनाश लीला की सुर्खियां बड़े-बड़े अक्षरों में झांक रही थीं। कूपर साहब की ही नहीं, पामीला की भी मंजिल यही क्षेत्र थी। पामीला के पिताजी जलपाईगुड़ी में इंजीनियर थे। उसे लन्दन में उनकी मृत्यु शैया पर मौत से जूझने की खबर मिली थी। इसलिए वह आयी थी और चाह रही थी कि जैसे भी हो, जल्दी से जल्दी वहां पहुंच जाये। चर्चा के दौरान ही उन दोनों तरुणों में दोस्ती हो गयी, जो समय की धार में आत्मीयता मे तेजी से बदलती गयी।

कूपर ने तलाश की तो पता चला कि आपातकालीन स्थिति को देखते हुए एक छोटा जहाज असम के लिए उड़ान भरने वाला है। उन्होंने जोड़-तोड़ करके जैसे-तैसे अपने लिए और पामीला के लिए जगह जुटाई। वे दोनों कुछ ही क्षणों के बाद बम्बई की चकाचौंध को टा-टा कर रहे थे। जहाज उड़ता रहा, उड़ता रहा। तभी उन्हें सूचना मिली कि जहाज जलपाईगुड़ी नहीं जा पायेगा। मौसम के अत्यधिक खराब होने की वजह से इसको एक निर्जन हवाई अड्डे पर उतारना पड़ रहा है। जहाज जहां उतरा असल में वह एक विश्व युद्ध में बनाया गया हवाई अड्डा था, जो कि वर्षों से वीरान-सा पड़ा हुआ था।

वे परेशान थे। वर्षा तेज हो चली थी। तभी उन्हें बताया गया कि विमान खराब हो गया है और उड़ान फिलहाल नहीं भर पायेगा। अब पटना या आगरा से मौसम के ठीक होने पर यदि कोई विमान आया तो उसके यात्रियों को भी उससे ही भेजा जायेगा।

पामीला परेशान थी। विमान चालक ने उसे बताया कि मौसम और आने वाले

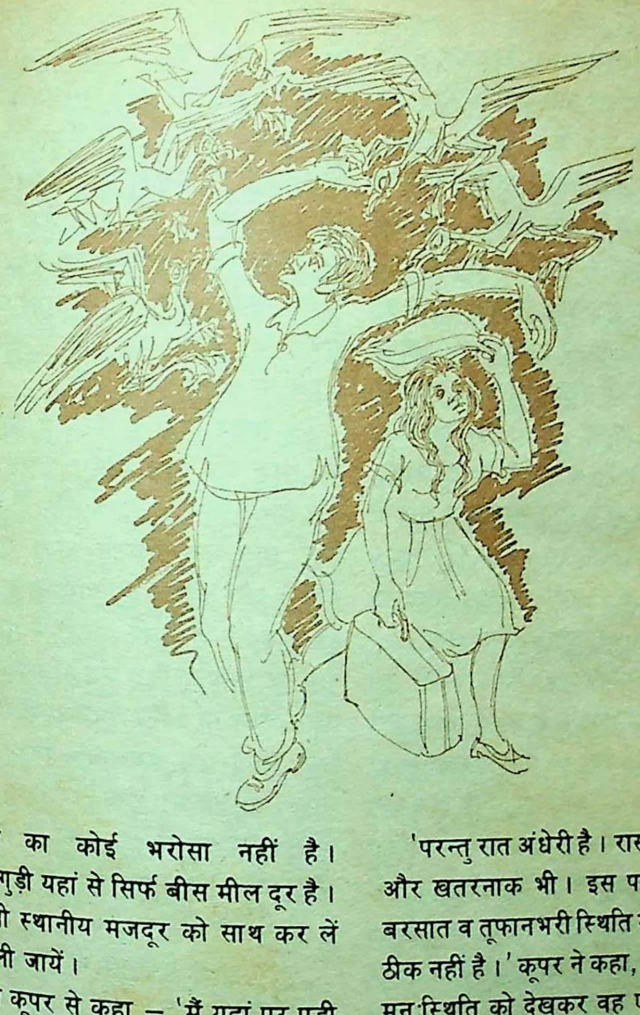

वायुयान का कोई भरोसा नहीं है। जलपाईगुड़ी यहां से सिर्फ बीस मील दूर है। किसी भी स्थानीय मजदूर को साथ कर लें और चली जायें।

उसने कूपर से कहा — 'मैं यहां पर पड़ी रहने के बजाय पैदल चलकर ही जल्द से जल्द जलपाईगुड़ी जाना अधिक पसन्द करूंगी। बीमार पिता के पास जितनी भी जल्दी पहुंच जाऊं, उतना ही ठीक।'

'परन्तु रात अंधेरी है। रास्ता भी जंगली है और खतरनाक भी। इस पर भी जोरों की बरसात व तूफानभरी स्थिति में खतरा उठाना ठीक नहीं है।' कूपर ने कहा, पर पामीला की मन:स्थिति को देखकर वह एक मजदूर तय कर लाया और उसके साथ हो लिया। फिर बोला — 'पामीला! संकट किस पर नहीं आता। मैं तुम्हें किसी न किसी तरह जलपाईगुड़ी पहुंचा आता हूं। अंधेरी

डरावनी रात और खतरनाक जंगली इलाके में तुम्हें अकेली नहीं जाने दूंगा।'

खैर वे तीनों चल दिये। रात भर चलते रहे, पर उन्हें मंजिल नहीं मिली। तीनों एक दूसरे को कोस रहे थे। आंधी, तूफान, बरसात, भूख, प्यास, सभी उनकी परीक्षा ले रहे थे। आखिर सूर्योदय हुआ। उन्हें एक मकान नजर आया जो पानी भरे खेतों के बीच खड़ा था। कूपर ने मजदूर को उस मकान की तरफ चलने को कहा तो उसने स्थानीय बोली में कुछ कहा, पर वे समझ नहीं पाये। कुछ देर वह प्रतिरोध करता रहा। फिर गुस्से में सामान फेंक कर पैसे मजदूरी के मांगने लगा। उन्होंने उसे मजूदूरी दी। ठण्ड और भूख से परेशान वे चल दिये उस मकान की तरफ। वहां कूपर को बड़ा अजीब नजारा देखने को मिला। सुनिए खुद उनकी ही जुबानी।

पामीला की बांह पकड़कर जब मैंने उस मकान में प्रवेश किया तो सबसे पहले मेरी नर्जर एक मानव शव पर पड़ी जिसका आधा मांस गायब था और चेहरे पर आंखों के बजाय दो गड्ढे थे। मैं ठिठक गया और मकान में जाने के लिए दूसरा रास्ता ढूंढ़ने लगा। तभी सहसा मेरी निगाह एक दरवाजे पर पड़ी जो आधा खुला हुआ था। मैंने दरवाजा खोलकर अन्दर प्रवेश किया तो कमरे का सामान अस्त-व्यस्त पाया। फर्श बिलकुल गीला था। हम दोनों कमरे से आगे बढ़े तो हमें एक बड़ा आंगन दिखाई दिया। जिसमें चारों ओर कोठरियां बनी हुई थीं। मैं आंगन के बीच पहुचा तो वहां पर मांस-भक्षी गिद्धों को बैठा देखकर मेरे होश उड़ गये। एक कोने में कुत्ते का शव सड़ रहा था। इसलिए मुझे यह समझने में देर नहीं लगी कि गिद्ध केवल उस कुत्ते के सड़े मांस के लोभ में यहां एकत्र हैं। लेकिन यह मेरा भ्रम ही था। मैं जैसे ही आंगन पार करने लगा। एक बहुत बड़ा गिद्ध मुझ पर झपट पड़ा। पामीला यह दृश्य देखकर चीखने लगी। मैंने उस गिंद्ध को पत्थर से कुचल कर खत्म कर दिया। लेकिन यह प्रारंभ था केवल, अन्त नहीं।

हमलावार गिद्ध के मरने के फौरन बाद कई गिद्ध एक साथ आंगन में मंडराने लगे और हमारे सिरों पर पहुंच गये। मैंने रक्षा के लिए घास-फूस समेटने वाला एक बांस उठाया और चीखते हुए पामीला से कहा कि वह दौड़कर के किसी कोठरी में घुस जाये। पामीला भागी तो गिद्ध उसके बिलकुल समीप पहुंच चुका था। मैंने अपने प्राणों की परवाह किये बिना उस हमलावार गिद्ध पर डंडा मारा। वह चीखता हुआ गिर पड़ा। अब तक पामीला कोठरी में घुस चुकी थी लेकिन वह कोठरी के दरवाजे पर खड़ी-खड़ी जोर-जोर से चीख रही थी।

दृश्य इतना भयानक था कि आज भी मुझे भारत की वह सुबह याद हो आती है, तो मेरे रौंगटे खड़े हो जाते हैं। लगभग १० खूंखार गिद्ध मुझ पर हमला कर चुके थे और उनकी पैनी चोंचें और पंजों से मेरा हाथ जख्मी हो चुका था। मैं बांस और उस पर लगे लोहे की

सहायता से अब तक चार गिद्ध मार चुका था। परिणाम यह हुआ कि मैं भी उस कोठरी में दौड़कर घुस गया बचाव के लिए और चटपट अन्दर से दरवाजा बन्द कर लिया।

अब हम हमले से सुरक्षित थे, लेकिन गिद्ध अब भी कोठरी के दरवाजे पर आक्रमण कर रहे थे। यह समझते हमें समय नहीं लगा कि वे मृत नहीं बल्कि जिंदा मांस खाने के आदी गिद्ध हैं। इसीलिए उन्होंने आंगन में पड़े मृत कुत्ते का मांस नहीं खाया था। इस अहसास के बाद मेरे भय की सीमा नहीं रही। सारे दिन भूखे-प्यासे रहे। कोठरी का दरवाजा खोलते तो कुछ गिद्ध बैठे ही दिखलाई देते। कोठरी में सूखी घास रखी थी। घास के गट्ठर देखकर सहसा मेरे मस्तिष्क में एक नया विचार आया। मैंने पामीला की सहायता से घास का एक गट्ठर उठाया। उसको कोठरी के दरवाजे के पास रक्खा और फिर उसमें आग लगा दी।

जब घास तेजी से जलने लगी तो मैंने कोठरी का दरवाजा खोलकर यह गट्ठर आंगन में लुढ़का दिया। आग की लपटें देखकर गिद्ध चीखते हुए हवा में उड़ गये। इसी तरह मैंने घास के एक अन्य गट्ठर में आग लगायी और उसको भी तेजी से लुढ़का दिया।

उस समय शाम के चार बजे थे। आग पूरे आंगन में फैल गयी। उसके धुएं ने पूरे मकान को निगल लिया। हमारे लिए कोठरी में खड़ा रहना असंभव हो चुका था। हमने अपना सामान उठाया और बाहर निकल आये। मेरी बुद्धिमत्ता वस्तुतः काम आ गयी थी। गिद्धों का अब दूर-दूर तक पता नहीं था। वे डरकर उड़ गये थे शायद, परन्तु हम तो भय से आतंकित थे ही अभी तक।

हम अब बहुत तेजी से मकान से निकले और सड़क पर आ गये। जब हमने पलटकर देखा तो मकान पूरी तरह शोलों की लपेट में आ चुका था और गिद्ध वायुमण्डल में बहुत ऊंचाई पर उड़ रहे थे। हमने भागना शुरू किया। आशंका थी कि वे हम पर पुनः हमला नहीं कर दें। पर यह भयावह आशंका ही बनी रही।

रास्ते भर हमें बाढ़ग्रस्त मकान मिले, खेत मिले, लाशें मिलीं और हमें जो भी जिन्दा इन्सान मिले मुरदों से भी बदतर थे। बाढ़ ने उस पूरे प्रदेश को बिल्कुल बरबाद कर दिया था।

जलपाईगुड़ी जब बिल्कुल समीप आ गया तो हमें फिर एक बार कुछ गिद्ध नजर आये पर वे हमारी राह में जरा भी बाधक नहीं बने।

पामीला ने जब पिता के मकान में प्रवेश किया तो वे अंतिम सांसें ले रहे थे। वे उससे मिलकर बड़े प्रसन्न हुए। दूसरी रात वे सदा के लिए हमें छोड़कर चले गये। यहां अब यह बतलाने की आवश्यकता नहीं है कि पामीला मेरी पत्नी बन चुकी है।

**— बी - १६, विजय पथ,**
**तिलकनगर, जयपुर**

# बचपन की अनुभूति

**☐ कमलेश द्विवेदी**

बचपन की अनुभूति डायरी के पन्नों पर उतरी ।
मैंने इसे सहेजा जैसे पलक सहेजें पुतरी ।।

बरसों साथ किसी के देखा
मन्दिर वाला मेला ।
बरसों साथ किसी के नदिया
तट पनघट पर खेला ।

पता नहीं कब हुई दोपहर और सांझ कब गहरी ।
बचपन की अनुभूति डायरी के पन्नों पर उतरी ।।

अपने मुख से कहती हैं ये
बीती हुई कहानी ।
अलमारी में मिली चिट्ठियां
मुझको बहुत पुरानी ।

कुछ की पड़ी लिखावट फीकी कुछ चूहों ने कुतरी ।
बचपन की अनुभूति डायरी के पन्नों पर उतरी ।।

जब-जब मन के कैनवास पर
सुधि ने चित्र बनाया ।
तब-तब मैंने सोचा अब तक
क्या खोया क्या पाया ?

इसी सोच में प्राण लांघने लगे देह की देहरी ।
बचपन की अनुभूति डायरी के पन्नों पर उतरी ।।

— ११९/४२७ दर्शनपुरवा,
कानपुर - २०० ०१२, उ. प्र.

# सांस्कृतिक मंच

## शुकदेव प्रसाद पुरस्कृत

एलेक्ट्रानिकी, परमाणु ऊर्जा और अंतरिक्ष विभाग (भारत सरकार) की हिंदी सलाहकार समिति के सदस्य, विज्ञान लेखक शुकदेव प्रसाद को विज्ञान और प्रौद्योगिकी विभाग, भारत सरकार की ओर से १०,००० रुपये के पुरस्कार देने की घोषणा की गयी है। हिंदी में मौलिक विज्ञान लेखन के लिए शुकदेव प्रसाद की पुस्तक 'परिवहन की कहानी' के लिए उक्त पुरस्कार टेक्नोलोजी भवन, नयी दिल्ली में आयोजित एक समारोह में दिया जायेगा।

* * *

## रानी झांसी का बलिदान-दिवस

नयी दिल्ली। गत दिनों प्रथम स्वतंत्रता संग्राम की अमर सेनानी झांसी की रानी लक्ष्मीबाई के १३३ वें बलिदान दिवस की याद में नयी दिल्ली में सामाजिक संस्था - 'परिवर्तन' द्वारा विभिन्न साहित्यिक एवं सामाजिक कार्यक्रमों का आयोजन किया गया।

इसी अवसर पर सामाजिक बुराइयों तथा सांप्रदायिकता के विरोध में अखिल भारतीय स्तर पर शुरू की गयी 'किशोर' के कार्टून, लघुकथा एवं कविताओं की प्रदर्शनी का उद्घाटन वयोवृद्ध स्वतंत्रता सेनानी श्री मन्मथनाथ गुप्त तथा सांसद डॉ. भगवान दास राठौर के मुख्य आतिथ्य में संपन्न हुआ।

* * *

## 'मृगवाल' का वार्षिकोत्सव

झांसी की 'मृगवाल' पत्रिका ने अपने वार्षिकोत्सव पर दो दिवसीय कार्यक्रम का आयोजन किया।

पुलिस अधीक्षक श्री देवराज नागर के मुख्य आतिथ्य एवं नगर मजिस्ट्रेट श्री राकेश चंद्रा की अध्यक्षता में आयोजित समारोह में गीत, संगीत, नृत्य तथा सामान्य ज्ञान आदि प्रतियोगिताओं का आयोजन भी किया गया।

समारोह के पहले दिन श्री राजेंद्र मेहर एवं कु. रचना श्रीवास्तव के संयोजन में बालक-बालिकाओं द्वारा गीत एवं नृत्य के आकर्षक कार्यक्रम प्रस्तुत किये गये।

दूसरे दिन एक काव्य संगोष्ठी का संचालन श्री सत्य प्रकाश ताम्रकार ने किया। इस अवसर पर विभिन्न विजयी प्रतियोगियों को पत्रिका के संपादक श्री अरुण श्रीवास्तव 'मुन्नाजी' की ओर से ट्राफियां प्रदान की गयीं।

समारोह का संचालन कु. ममता सक्सेना एवं कु. पूनम तनेजा ने किया।

**- अरुण नागर**

## तुलसी जयंती

कानपुर में गत २९ जुलाई को प्रातः 'तुलसी उपवन' में महाकवि तुलसीदास का जन्म-दिवस समारोह संपन्न हुआ। कार्यक्रम के आरंभ में श्री रामकृष्ण तैलंगजी ने महाकवि तुलसी के दो पदों को स्वर बद्ध कर वाणी प्रदान की। डॉ. माधवी लता शुक्ल ने अपना गीत पढ़ा। डॉ. ललित अवस्थी ने गोस्वामी तुलसी के व्यक्तित्व और कृतित्व पर प्रकाश डाला। प्रो. रमेश तिवारी 'बीरान' ने अपनी 'शब्दावतार' रचना सुनायी। उत्तर प्रदेश के शिक्षामंत्री श्री सच्चिदानंद वाजपेयी ने तुलसी की वर्तमान संदर्भों में प्रासंगिकता पर प्रकाश डाला। धन्यवाद ज्ञापन कानपुर के नगर प्रमुख श्रीयुत प्रकाश जायसवाल ने किया।

कार्यक्रम का संचालन डॉ. प्रतीक मिश्र ने किया, आयोजक थे श्री बद्रीनारायण तिवारी।

**— अनुभव तिवारी**

* * *

## वाकणकर स्मृति प्रदर्शनी

लोकमान्य तिलक सांस्कृतिक न्यास उज्जैन के तत्वावधान में सुप्रसिद्ध प्राच्यविद्याविशारद स्व. डॉ. वि. श्री. वाकणकर की स्मृति में कला दीर्घा स्थापित की गयी।

डॉ. शरद भाण्ड ने डॉ. वाकणकर से संबंधित संस्मरण सुनाये और कला निदेशक डॉ. विष्णु भटनागर ने दीर्घा की उपयोगिता पर प्रकाश डाला तथा इस अवसर पर आयोजित प्रथम डॉ. वाकणकर स्मृति राज्य स्तरीय कला प्रतियोगिता के पुरस्कारों की घोषणा की। प्रदेश के ख्यात चित्रकार श्री डी. सी. जयंत एवं श्री रमेश नानवानी के निर्णायक मण्डल ने सर्वश्रेष्ठ पुरस्कार शंकर शिंदे (इंदौर), द्वितीय बी. आर. बोदड़े एवं तृतीय चंदन यादव (उज्जैन) को घोषित किया। इनके अतिरिक्त चार प्रशंसनीय पुरस्कार क्रमशः उमेश चौहान, प्रिया मेंढे, राजश्री दिसावल (उज्जैन) एवं नीना कीमती (सरदारपुर) को प्रदान किये गये।

'वाकणकर भारती संस्कृति अन्वेषण न्यास उज्जैन' के तत्वावधान में डॉ. वाकणकर जयंती पर संस्कृत एवं नाट्यशास्त्र के विद्वान प्रो. बाबूलाल शुक्ल शास्त्री को 'प्रो. अनन्त वामन वाकणकर सम्मान' से विभूषित किया गया। प्रमुख वक्ता डॉ. सुरेन्द्र कुमार आर्य ने 'आर्य समस्या और समाधान' एवं डॉ. विष्णु भटनागर ने कला, पुरातत्व की नवीन खोजों के माध्यम से इतिहास पुनर्लेखन की आवश्यकता प्रतिपादित की। **— डॉ. विष्णु भटनागर**

* * *

## जयंती समारोह

सीतापुर, 'हिंदी सभा' के तत्वावधान में आयोजित तुलसी जयंती समारोह में मुख्य अतिथि डॉ. शिव बालक शुक्ल (हरदोई) ने कहा कि तुलसी साहित्य में काव्य शास्त्रीय मौलिक सिद्धांतों के प्रयोग को देखकर यह

सिद्ध होता है कि तुलसी हिंदी साहित्य के सर्वश्रेष्ठ कवि ही नहीं वरन् एक स्वतंत्र चेता आचार्य भी थे।

डॉ. कृपाशंकर शुक्ल, श्रीमती डॉ. उषा गर्ग, डॉ. अरुण त्रिवेदी, डॉ. श्यामसुंदर मिश्र 'मधुप', डॉ. रामस्वरूप अवस्थी 'रूप' ने तुलसी की महत्ता पर प्रकाश डाला।

छात्राओं ने तुलसी के 'जाउँ कहां तजि चरन तिहारे' शीर्षक पद की अत्यंत प्रभावपूर्ण प्रस्तुति की। अमर शिक्षा मंदिर की कु. सूफिया की रचनाएं काफी सराही गयीं। श्री शुभकार शुक्ल ने छंदों का सस्वर पाठ किया।

* * *

## लोक गायिका अभिनंदित

जमशेदपुर, गत ३१ जुलाई को यहां रवींद्र भवन प्रेक्षागार में विख्यात लोक गायिका श्रीमती शारदा सिन्हा का अभिनंदन चेतना की ओर से किया गया। समारोह की अध्यक्षता प्रसिद्ध साहित्यकार डॉ. बच्चन पाठक 'सलिल' ने की। टाटा स्टील के कार्यपालक निदेशक डॉ. एस. एन. पांडेय ने शारदाजी को अभिनंदन पत्र और शाल प्रदान किया।

**– हरेराम राय 'हंस'**

* * *

## मंचीय गद्यपाठ : एक प्रयोग

काव्य की तरह मंच से गद्य का पाठ भी उतना ही प्रभावशाली हो सकता है, इस उद्देश्य पर आधारित जबलपुर की महिला संस्था 'त्रिवेणी परिषद्' द्वारा २१ व २२ जून को 'आपन मुख' शीर्षक देकर एक गद्य लेखिकाओं का सम्मेलन संसद साहित्यकार श्रीमती रत्नकुमारी देवी की अध्यक्षता में आयोजित किया गया। प्रमुख रचनाकार के रूप में डॉ. सूर्यबाला ने कथा और व्यंग्य की समीक्षा करते हुए अपनी कहानियां – 'होगी जय हे पुरुष होगी जय' तथा 'कागज की नावें चांदी के बाल' का सराहनीय पाठ कर श्रोताओं को रस-विभोर किया। स्थानीय लेखिकाओं में डॉ. रोमा चटर्जी, सुनीति सक्सेना व सुस्मिता चटर्जी ने अपनी कहानियों का तथा सुधारानी श्रीवास्तव, साधना उपाध्याय और मनोरमा तिवारी ने व्यंग्य रचनाओं का पाठ किया।

डॉ. चित्रा दुबे ने डॉ. चित्रा चतुर्वेदी के उपन्यास पर आधारित आलेख पढ़ा।

**– वत्सला बर्वे**

* * *

## डॉ. परिपूर्णानंद का सम्मान

लखीमपुर खीरी। हिंदी साहित्य परिषद् के आमंत्रण पर डॉ. परिपूर्णानंद वर्मा का सारस्वत सम्मान, स्थानीय कुंवर खुशवक्त राय विद्यालय के सभागार में संपन्न हुआ।

कार्यक्रम का संयोजन, रोटरी क्लब में करते हुए डॉ. वर्मा का परिचय श्री कैलाशनाथ मेहरोत्रा अध्यक्ष ने दिया। रोटरी बंधुओं द्वारा शाल तथा हिंदी साहित्य परिषद् द्वारा 'साहित्यश्री' सम्मान प्रतीक व सम्मान पत्र श्री अवधेश शुक्ल (अध्यक्ष) ने

भेंट किया।

माननीय बी. के. शर्मा जिला न्यायाधीश विशिष्ट अतिथि थे। विशिष्ट वक्ता प्रो. बी. एन. अवस्थी ने विषय प्रवर्तन किया। साहित्य प्रदूषण और आर्यावर्त की वैदिक भावना की स्मृति दिलाया सुश्री डॉ. कामिनी महेन्द्र, अध्यक्ष राष्ट्रभाषा समिति ने।

* * *

## पं. श्यामदत्त की पुण्यतिथि

साहित्यिक संस्था 'गया जिला हिन्दी साहित्य सम्मेलन' की ओर से साहित्यकार पं. श्यामदत्त मिश्र की पहली पुण्य तिथि मनायी गयी जिसकी अध्यक्षता पं. रामनरेश पाठक ने की। कार्यक्रम के प्रारंभ में सर्वश्री रामनरेश पाठक, पं. तारानाथ मिश्र, रामकृष्ण, रामपुकार सिंह राठोर, श्रीकांत पन्नगारी, राधाकृष्ण राय, सुश्री कल्पना सिंह, डॉ. अन्नपूर्णा श्रीवास्तव, श्रीमती आशा मिश्रा, ने उनके व्यक्तित्व एवं कृतित्व पर प्रकाश डाला।

विचार गोष्ठी के उपरान्त एक कवि सम्मेलन का भी आयोजन किया गया जिसमें निम्नलिखित लोगों – पं. रामनरेश पाठक, रामकृष्ण, श्रीकांत पन्नगारी, रामपुकार सिंह राठोर, सुश्री कल्पना सिंह, डॉ. अन्नपूर्णा श्रीवास्तव, शैलेन्द्र मिश्र 'शैल', विश्वबंधु, शान्तनु चक्रवर्ती, विश्वनाथ, कृष्णा कुमार, ने अपनी-अपनी कविताएं सुनायीं। कार्यक्रम का संचालन श्री रामकृष्ण ने किया।

**– शिवगोपाल शर्मा**

## देवीशंकर अवस्थी स्मृति

कानपुर के साहित्य, कला, संस्कृति मंच 'समवाय' तथा कलाकृति व के. के. कालेज बालिका समिति ने दो अलग-अलग आयोजन करके कहानी समीक्षा के अपने समय के बहुचर्चित हस्ताक्षर स्व. डॉ. देवी शंकर अवस्थी के ६० वें जन्म-दिन के अवसर पर उनका पुण्य स्मरण किया।

'समवाय' ने इस अवसर पर एक कहानी समीक्षा पर परिचर्चा का आयोजन किया। जिसमें सर्वश्री नरेशचंद्र चतुर्वेदी, पं. हृषीकेश, डॉ. सुमन राजे तथा संस्था के अध्यक्ष गिरिराज किशोर ने स्व. अवस्थीजी के कहानी समीक्षा के प्रति दृष्टिकोण को स्पष्ट करते हुए उसे आज के संदर्भों में रेखांकित किया।

कलाकृति व के. के. बालिका समिति ने इस अवसर पर एक भव्य काव्य-समारोह का आयोजन किया, जिसके प्रमुख आकर्षण कविवर बाल स्वरूप राही थे। अन्य प्रमुख रचनाकारों में श्रीमती पुष्पा राही, गोविन्द व्यास तथा राधेश्याम बंधु आदि थे। श्रीमती माधवी लता द्वारा संयोजित तथा चंद्रेश गुप्त द्वारा संचालित इस कार्यक्रम में नगर के कवियों ने भी उत्साह से भाग लिया। स्व. अवस्थीजी की पत्नी श्रीमती कमलेश अवस्थी ने इस अवसर पर आगत जनों के प्रति भाव-विगलित आभार व्यक्त किया।

## 'पितामह' का लोकार्पण

विगत माह प्रसिद्ध ऐतिहासिक उपन्यासकार डॉ. वाल्मीकि त्रिपाठी की नव्य कृति 'पितामह' का लोकार्पण हिंदी संस्थान उ.प्र. के कार्यकारी उपाध्यक्ष डॉ. परिपूर्णानंद वर्मा के करकमलों द्वारा संपन्न हुआ।

डॉ. श्रीनारायण अग्निहोत्री की अध्यक्षता में संपन्न इस समारोह में डॉ. प्रेमनारायण शुक्ल, डॉ. श्यामनारायण पांडेय, डॉ. अवधेश नारायण, डॉ. रामस्वरूप त्रिपाठी, डॉ. रामेश्वर वर्मा, डॉ. शिवकुमार दीक्षित, डॉ. लक्ष्मीकांत पांडेय, डॉ. सरोजिनी त्रिपाठी, गणेश गुप्त तथा मधुर नज्मी (आजमगढ़) सहित अनेक विद्वानों और साहित्यकारों ने भाग लिया।

उपनिषद् कानपुर तथा हिंदी साहित्य सम्मेलन के संयुक्त तत्वावधान में आयोजित इस समारोह का संयोजन डॉ. प्रेमनारायण शुक्ल तथा पं. कन्हैयालाल तिवारी ने किया।

* * *

## बी. एन. सिंह अभिनंदन

गत माह नगर की सुपरिचित साहित्यिक सांस्कृतिक संस्था 'उपनिषद्' ने वरिष्ठ चित्रकार, कवि, समाजसेवी एवं कला समीक्षक श्री बी. एन. सिंह को सम्मान-पत्र, उत्तरीय, स्मृति चिह्न तथा पुस्तकें भेंट की गयीं।

श्रीमती माधवी लता शुक्ल की अध्यक्षता में संपन्न इस समारोह में प्रो. के. के. शुक्ल, डॉ. रामेश्वर वर्मा, वीरेश कात्यायन, नथमल खेतान, विनोद तरुण, कुमार गुप्त, सुरेंद्र तिवारी, संतोष गुप्त, गुरुप्रसाद रस्तोगी, जयराम सिंह 'जय', द्वारिकानाथ मेहरोत्रा 'दुआ', मत्या मिश्र, 'सजल', तरुण अग्रवाल, चंद्रेश गुप्त तथा पंकज गुप्त सहित नगर के अनेक गण्यमान नागरिकों तथा कवियों ने कार्यक्रम को भव्यता प्रदान की। समारोह का सफल संचालन श्रीगणेश गुप्त तथा संयोजन श्री वीरेश कात्यायन ने किया।

**— डॉ. प्रतीक मिश्र**

* * *

## भोजपुरी-दिवस

'भोजपुरी लोक' हिन्दी मासिक पत्रिका के सौजन्य से 'भोजपुरी दिवस' कबीर जयंती के रूप में, एकता, अखंडता, साहित्यिक-सांस्कृतिक सद्भावना को गति देने की नियति से, राज्य हिंदी-संस्थान एवं सूचना-जन-संपर्क विभाग लखनऊ के समन्वित सहयोग से, विगत १९-२० जून को संपन्न हुआ। प्रथम दिवस-सत्र भोजपुरी भाषा के विकास की दिशा लेकर था। जिसकी अध्यक्षता पं. नर्मदेश्वर चतुर्वेदी ने की। वयोवृद्ध कवि पं. गणेश चौबे (चंपारण) मुख्य अतिथि रहे। आकाशवाणी लखनऊ के संगीत कंपोजर, प्रख्यात गायक निर्देशक श्री केवलकुमार की सफल गीत-प्रस्तुतियां, पद्मा ग्रेवानी, आभारानी वर्मा की लोक धुन से पूरित जन-गीत, मिर्जापुर के कलाकारों द्वारा प्रस्तुत 'करमा' गीत-नृत्य आकर्षण के केंद्र में था।

पत्रिका संपादिका राजेश्वरी शांडिल्य और श्रीचंद्र तिवारी (संयोजक) का प्रयास स्वागतेय है।

२० जून को दिन की संगोष्ठी में विचार प्रस्तुत करने वाले साहित्यकारों में डॉ. वेद प्रकाश अमिताभ, डॉ. कुंदनलाल 'उप्रेती', डॉ. कमला सिंह, गणेश चौबे, डॉ. शकुंतला सिरौठिया, डॉ. राजकुमारी, पं. नर्मदेश्वर चतुर्वेदी, राजेश्वरी शांडिल्य, प्रमुख थे। गीतकार मधुर नज्मी के संचालन, भोजपुरी के वरिष्ठ कवि भोलानाथ गहमरी की अध्यक्षता में कार्यक्रम की समापन कड़ी में कवि-सम्मेलन हुआ। जिसमें डॉ. प्रतीक मिश्र, माधवी लता शुक्ल, डॉ. राधा पांडेय, विजय शंकर त्रिपाठी, शैख जैनुल आब्दीन, मधुर नज्मी, कुबेर मिश्र 'विचित्र', डॉ. कमला सिंह, डॉ. छबिनाथ पांडेय, दयानंद पांडेय, डॉ. वेदप्रकाश अमिताभ, डॉ. कुंदनलाल 'उप्रेती', सावित्री गौड़, गिरधर 'करुण', हरिवंश पाठक 'गुमनाम', भोलानाथ गहमरी, विध्याचल श्रीवास्तव ने काव्य-पाठ किया।

**— मधुर नज्मी**

* * *

## विचार सह कथा गोष्ठी

जन संस्कृति मंच द्वारा कटिहार में एक 'विचार सह कथा गोष्ठी' का आयोजन किया गया।

'उपभोक्तावादी अपसंस्कृति में साहित्य का स्वास्थ्य' विषय पर आयोजित इस विचार गोष्ठी में पूर्णियां से आये विचारवादी आलोचक अरुण अभिषेक ने उपभोक्तावाद के राष्ट्रीय हस्तक्षेप पर चिंता प्रकट की। युवा रचनाकार राकेश कुमार ने साहित्य पर पड़नेवाले दबाओं का जिक्र किया। मधेपुरा के श्रीधनेश दत्त पांडेय ने समकालीनता की समझ के खतरे का जिक्र किया।

मुख्य वक्ता प्रो. भरत शर्मा ने अपसंस्कृति के साहित्य पर पड़ने वाले प्रभावों की चर्चा की।

दूसरे सत्र में एक कथा-गोष्ठी का आयोजन किया गया। जिसमें 'जूते' (चंद्रकांत) तथा 'मुर्गाहलाल' (धनेशदत्त पांडेय) जैसी कहानियां आयीं, जो प्रतीकों के कलात्मक इस्तेमाल के बावजूद अपनी प्रतिबद्धता के प्रति सतर्क रह सकीं। कार्यक्रम के अंत में अध्यक्षता कर रहे गौहाटी विश्वविद्यालय के प्रो. धर्मदेव तिवारी ने पठित कहानियों पर अपनी समीक्षात्मक टिप्पणी प्रस्तुत की और सृजन से जन संस्कृति को प्रतिष्ठित करने की बात की।

**— राकेश कुमार**

* * *

## श्रद्धांजलि व काव्य-गोष्ठी

अवधी लोक नाट्य विशेषज्ञ एवं सुप्रसिद्ध परशुराम अभिनेता पं. गोरेलाल त्रिपाठी 'कलाहंस' की प्रथम पुण्य तिथि पर विगत १० जुलाई ९०, मंगलवार को कानपुर के स्थानीय ज्ञान भारती एम.एस. इंटर कालेज, बिरहाना रोड, कानपुर में श्रद्धांजलि सभा का आयोजन किया गया।

सभा में मुख्य वक्ता थें पूर्व सांसद एवं

साहित्यकार नरेशचंद्र चतुर्वेदी। उन्होंने गोरेलाल त्रिपाठी को अपना एक अच्छा मित्र बताया।

श्रम शिक्षा अधिकारी श्री शंकर दयालु मिश्र ने आचार्य 'कलाहंस' के जीवन से प्रेरणा लेने की बात कही। इस अवसर पर प्राचार्य डॉ. रघुनाथ प्रसाद गुप्त ने श्री त्रिपाठीजी के व्यक्तित्व एवं कृतित्व पर प्रकाश डाला। शिक्षक नेता शिवप्रसन्न सिंह ने उनके गुणों की चर्चा की। अध्यक्षता पं. रमेश चंद्र त्रिपाठी 'आयुर्वेदाचार्य' कर रहे थे व संचालन नगर के प्रख्यात युवा कवि डॉ. प्रतीक मिश्र ने किया। आभार डॉ. श्याम बाबू गुप्त ने प्रकट किया।

इसी कार्यक्रम के दूसरे सत्र में 'कानपुर कान्यकुब्ज समाज' ने आचार्य प्रवर गोरेलाल त्रिपाठी के जीवन से संबंधित एक विशेषांक प्रकाशित किया तथा मूर्धन्य ज्योतिषाचार्य पं. महानंदजी पांडेय को 'कान्यकुब्ज वारिधि' की उपाधि से विभूषित किया गया। इस कार्यक्रम की अध्यक्षता भागलपुर विश्वविद्यालय से पधारे श्री युगल किशोर मिश्र ने की। आचार्य पांडेयजी को उत्तरीय मानस संगम के संयोजक पं. बद्रीनारायण तिवारी ने प्रदान किया तथा आचार्य त्रिपाठी विशेषांक का विमोचन महाराज प्रयाग नारायण शिवाला ट्रस्ट के अध्यक्ष पं. ध्रुवनारायण तिवारी ने किया।

बाद में कवि-गोष्ठी का आयोजन हुआ, जिसका संचालन कवि वीरेन्द्र आस्तिक ने किया। काव्य-पाठ करने वालों में सर्वश्री वीरेश कात्यायन, डॉ. प्रतीक मिश्र, राजेंद्र तिवारी, सरसिज शुक्ल, अशोक शास्त्री, विजय प्रकाश त्रिपाठी, हरि प्रकाश वाजपेयी 'अकेला', डॉ. रघुनाथ प्रसाद गुप्त, भारतभूषण गुप्त 'स्वतंत्र' व अजय 'रत्न' ने किया। आभार कान्यकुब्ज पत्रिका के संपादक श्री श्रीराम तिवारी ने व्यक्त किया।

**– विजयप्रकाश त्रिपाठी**

* * *

## खेगोल में संगीत संध्या

भारतीय एकजुट सांस्कृतिक संघ, खेगोल के तत्वावधान में पिछले दिनों सांस्कृतिक संध्या और पुरस्कार वितरण समारोह का आयोजन किया गया।

दो चरणों में विभक्त इस आयोजन के प्रथम चरण में सांस्कृतिक संध्या के तहत गीत, संगीत, नृत्य, भजन, गजल, लोकगीत का आकर्षक कार्यक्रम प्रस्तुत किया गया।

रजनी द्वारा प्रस्तुत सरस्वती वंदना से इस कार्यक्रम की शुरुआत हुई।

तत्पश्चात बच्चन के गीत 'कहते हैं तारे, और मीरा के भजन 'हे नंदलाला तेरा मन है काला' गायन की प्रस्तुति रूना गोस्वामी ने की।

'बीत गये दिन भजन बिना रे' कबीर के इस भजन की प्रस्तुति छात्रा शालिनी मिश्रा ने की। तबले पर साथ दे रहे थे कमल बोस। कबीर के इस भजन के बाद नन्हीं बालिका जया गुप्ता ने कथक के आरंभिक अंशों को

कुशलता से प्रस्तुत किया ।

कार्यक्रम का सिलसिला जारी रखते हुए आकाशवाणी पटना के लोकगीत गायक कपिलेश्वर शर्मा ने लोकगीत प्रस्तुत किया । उसके बाद लीना गोस्वामी और महिजा रेड्डी ने भजन तथा इंद्रजीत गोस्वामी और अनिल कुमार ने गज़ल प्रस्तुत किया ।

मंच संचालन आर. पी. वर्मा 'तरुण' ने किया ।

**— नवाब आलम**

* * *

## लेखक और पत्रकार सम्मानित

राजस्थान की साहित्यिक संस्था डॉ. डॉ. अंबेडकर साहित्य अकादमी की ओर से जयपुर में डॉ. अंबेडकर सर्किल पर भाषा विभाग राजस्थान के निदेशक श्री कलानाथ शास्त्री की अध्यक्षता में 'दलित उत्पीड़न और साहित्यकारों की भूमिका' विषय पर गोष्ठी तथा सम्मान समारोह का आयोजन किया गया । इस अवसर पर लेखक और पत्रकार श्री मोहनदास नेमिशराय ने मुख्य वक्ता के रूप में बोलते हुए कहा कि साहित्यकारो का यह कर्त्तव्य बन जाता है कि वे दलित और शोषित समाज के बारे में ज्यादा लिखें ।

श्री कलानाथ शास्त्री ने अपने अध्यक्षीय भाषण में इस बात को नि:संकोच स्वीकार किया कि देश के एक बड़े वर्ग पर हमारी विकृत समाज व्यवस्था के कारण सदियों से अत्याचार हुआ है, दमन हुआ है ।

गोष्ठी में श्री रामटेके, कवि श्यामल, भंवर बागड़ी, परशुराम, रामलाल मीणा, पूरण सिंह मौर्य की भी सहभागिता रही ।

अकादमी की ओर से आयोजित इस कार्यक्रम में लेखक और पत्रकार मोहनदास नेमिशराय को उनके द्वारा दलितोत्थान के लिए किये जा रहे कार्यों के लिए श्री कलानाथ शास्त्री ने एक शाल ओढ़ाकर और कलम भेंट करके सम्मानित किया ।

**— रत्नकुमार सांभरिया**

◆

'आने-जाने वालों से तो नाक में दम आ गया है ।'

'तो बहन, तुम मेरी वाली तरकीब काम में लाओ ।'

'बताओ, मैं तो आजिज आ गयी हूं ।'

'जब कोई दरवाजा खटखटाये, तो हाथ में रूमाल और पैर में चप्पल डाल कर खोलने जाओ और टालना चाहो तो कहो कि क्या बतायें हम तो बाहर जाने वाले हैं ।'

'और मान लो हम उससे बात करना चाहें ?'

'तो कह दो, आओ, हम अभी बाजार से आये ही थे ।'

◆

आ नो भद्राः क्रतवो यन्तु विश्वतः
भवन की पत्रिका 'भारती' से समन्वित

# नवनीत

**मनुष्य के नवोत्थान का सूचक**
**जीवन, साहित्य और संस्कृति का मासिक**

## प्रार्थना

इदमुच्छ्रेयो अवसानमागां, शिवे मे द्यावापृथिवी अभूताम् ।
असपत्नाः मे प्रदिशो भवंतु, न वै त्वा द्विष्मो अभयं नो अस्तु ।।
**अथर्व. १९.१४.१**

प्रभु मेरे दे दो यह वरदान, सबका हो कल्याण ।
अब तो केवल यही श्रेय है, सबका मंगल सतत प्रेय है,
जीवन की संध्या बेला में, वैरभाव का हो अवसान ।
प्रभु मेरे दे दो यह वरदान ।
पृथ्वी-नभ के सभी देवता, पूरब-पश्चिम दिशा-दिशा,
सदा दयालु रहें मानव पर, करें सदा कल्याण ।
प्रभु मेरे दे दो यह वरदान ।
मन की तृष्णा मिट जाये, वैर-विरोध भाव हट जाये,
सभी देवताओं से हर पल, मिले अभय वरदान ।
प्रभु मेरे दे दो यह वरदान ।

[ भावानुवाद : **सत्यकाम विद्यालंकार** ]

# एक भाग्यशाली पशु

– शिशिर विक्रांत –

श्रीराम जन्मस्थली अयोध्या के राजा साहब द्वारा बनवाया हुआ कनक भवन अति भव्य और दर्शनीय मंदिर है।

लगभग साठ वर्ष पूर्व की बात है। श्री कनकभवन बिहारीजी की सेवा में अयोध्या की रानी साहिबा की ओर से एक घोड़ी रहती थी। उसका मंदिर के उत्सव, यात्रा आदि में उपयोग होता था। कनकभवन में रहते-रहते ही वह बूढ़ी हो गयी। एक दिन रानी साहिबा मंदिर में श्री कनकभवन बिहारीजी के दर्शन को पधारीं। उन्होंने घोड़ी को निहारा तो अपने साथ आये अपने मुख्य सेवक को आदेश दिया – 'यह घोड़ी तो काफी बूढ़ी हो गयी है। इसे अब जमींदारी पर भेज दो और यहां पर भगवान की सेवा में कोई सुंदर सलोना घोड़ा पहुंचा दो।'

राजमहल से दूसरा घोड़ा मंदिर में प्रभु सेवा के लिए आ गया। घोड़ी को रेल द्वारा जमींदारी पर भेजने के लिए कई स्टेशन दूर भेजना था। जब लोग उसे मंदिर से हटाकर स्टेशन ले जाने आये तो जो घोड़ी कभी भी अड़ती नहीं देखी गयी थी, भूमि में लेट गयी और किसी तरह उठाये नहीं उठती थी। अश्वशाला के सेवकों ने बताया कि 'जब से इसके बाहर भेजने की चर्चा हुई है, तब से इसने दाना-घास तो क्या जल तक भी नहीं पिया है। इसकी आंखों से बराबर आंसू बह रहे हैं।'

बेचारे मूक प्राणी के दर्द को कौन समझता? रस्सियों से बांधकर ठेले पर लादकर घोड़ी को स्टेशन पहुंचाया गया। पशु ढोनेवाले मालगाड़ी के डिब्बे में बंद कर दिया गया और उसकी रस्सियां खोल दी गयीं। दाना-घास और जल रख दिया गया। स्टेशन मास्टर ने किराया लेकर उसको भेजने की बिल्टी बना दी।

मंदिर के महंतजी को बड़ी दया आयी घोड़ी पर, उन्होंने रानी साहिबा के पास कहलवाया –'रानीमां। घोड़ी उपवास कर रही है। वह बाहर जाकर मर जायेगी। इतने दिनों वह श्री कनकभवन बिहारीजी की सेवा में रही है। अब बूढ़ी होने पर उसे अयोध्या की दिव्य भूमि से न निकाला जाये।' बात रानी साहिबा के ध्यान में ठीक बैठ गयी। उन्होंने कह दिया– 'घोड़ी चली न गयी हो तो उसे रोक लिया जाये।'

महंतजी स्वयं स्टेशन गये। पहले वे वहां

गये जहां घोड़ी मालगाड़ी के डिब्बे में बंद खड़ी थी। महंतजी को देखकर घोड़ी की आंखों से आंसू की धारा वेग से बहने लगी। महंतजी ने उसें पुचकारा, आश्वासन दिया और फिर वे स्टेशन मास्टर के पास आये। स्टेशन मास्टर ने कहा– 'महंतजी, घोड़ी की हालत देखकर मुझे भी बहुत दुःख हुआ, किंतु मैं कर ही क्या सकता था? मालगाड़ी तो चली गयी है। घोड़ी जिस डिब्बे में थी वह डिब्बा उसी (गयी हुई)मालगाड़ी में जाना था और मैंने उस ट्रेन के गार्ड को बिल्टी नम्बर आदि दे दिये थे। घोड़ी तो चली गयी।'

किंतु जब महंतजी ने बताया कि घोड़ी तो गयी नहीं है, तब स्टेशन मास्टर को बड़ा आश्चर्य हुआ। मालगाड़ी के गार्ड की भूल से ट्रेन में वह डिब्बा जोड़ा ही नहीं गया था। उस मूक प्राणी की पुकार और कोई सुने या न सुने पर कनकभवन में जो उसके स्वामी विराजमान हैं उन्होंने सुन ली थी। 'चींटी के पग घुंघरू बाजे सो भी सांई सुनता है।'

आवश्यक लिखा-पढ़ी का काम पूरा हो जाने पर घोड़ी को डिब्बे से उतारा गया। घोड़ी दौड़ती-भागती सीधे कनकभवन में अपने स्थान पर आकर खड़ी हो गयी।

उस भाग्यशाली पशु ने जीवन भर कनकभवन की पशुशाला में निवास किया और जब अवधधाम में देहत्याग किया तब उसका शरीर सरयूजी में प्रवाहित किया गया।

**प्रस्तुति : हरेकृष्ण गुप्ता**
**विपिन विहार, १३७ ई/१२ बी,**
**राजरूपपुर, इलाहाबाद, उ.प्र.**

□

## गांधीजी का उत्तर

एक सेठ मगनवाड़ी आश्रम में गांधीजी से मिलने गये हुए थे। सेठजी के सिर पर बड़ी सी पगड़ी लिपटी हुई थी। बातचीत के दौरान सेठजी ने बापू से एक बात पूछी, 'गांधीजी, आपके नाम पर देश-भर के अधिकांश लोग गांधी टोपी पहनते हैं, किंतु आप स्वयं इसे नहीं पहनते। ऐसा क्यों?'

गांधीजी मुस्कारते हुए बोले, 'आपका कहना बिल्कुल ठीक है सेठजी, कि मैं टोपी नहीं पहनता, यह जानने के लिए जरा आप अपने सिर से उतारकर तो देखिए। आपकी पगड़ी में से कम-से-कम बीस टोपियां तो बनायी जा सकती हैं। है न?'

'जी हां।' सेठजी बोले।

'तो जब बीस टोपियों के बराबर का कपड़ा आप जैसे धनी व्यक्ति अपनी पगड़ी में लगाकर फिरते हैं तो बेचारे उन्नीस व्यक्तियों में आप मेरी भी गिनती कर लीजिए।'

गांधीजी के इस उत्तर को सुनकर सेठजी ने शर्म से गर्दन झुका ली।

**—रणबीर सिंह सेठी**

### १४ सितंबर हिन्दी दिवस के उपलक्ष्य में

# राजाजी की हिन्दी सेवा

**□ गोवर्धनलाल पुरोहित**

राजाजी का जन्म ८ सितंबर १८७८ ई. को तमिलनाडु के सेलम जिला के तोरपल्ली नामक गांव में हुआ था । वे "श्रीवैष्णव" ब्राह्मण परिवार के संस्कारी पुत्र थे । उनके पिता धर्मपरायण विवेकी व सुशिक्षित व्यक्ति थे । संस्कृत के प्रकाण्ड पंडित थे । इसी कारण भारतीय संस्कृति व परंपरा के प्रति उनकी गहन श्रद्धा थी । राजाजी के जीवन पर पिता के संस्कारों का प्रभाव पड़े बिना नहीं रहा । पढ़-लिखकर समृद्ध होने पर भारत के प्राचीन धर्म ग्रथों का अनुवाद कर भारत के जीवन दर्शन को संसार के सामने रखने में उन्होंने महत्वपूर्ण योगदान किया । संक्षेप में अपने समय के राजनीतिज्ञों में भारतीय मनीषा व वाङ्मय के क्षेत्र में उनका कार्य अद्वितीय था ।

प्रारम्भ में राजाजी गरम दल के प्रमुख नेता के रूप में माने जाते थे । महात्मा तिलक के चार सूत्री कार्यक्रम में उनकी गहरी आस्था थी । अतः राष्ट्रीय शिक्षा के प्रसार में हिन्दी के महत्व को वे समझने लगे । इसी बीच राजाजी का राजनैतिक रुझान गरम दल से हटकर नरम दल की ओर होने लगा । उन्हीं दिनों गांधीजी का प्रभाव भी फैलने लगा था । अतः राजाजी गांधीजी के नेतृत्व में ही कांग्रेस के विकास को देखने लगे ।

गांधीजी ने हिन्दी प्रचार को स्वातंत्र्य संग्राम का एक प्रबल साधन माना था। क्योंकि हिन्दी राष्ट्रीय हितों के लिए अमृततुल्य थी। अतः गांधीजी की प्रेरणा से सन १६ जून १९१८ ई. में मद्रास शहर में दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा की स्थापना हुई। गांधीजी के पुत्र श्री देवदास गांधी व स्वामी श्री सत्यदेव परिव्राजक मद्रास पहुंच कर हिन्दी का प्रचार करने लगे। उन्हीं दिनों राजाजी मद्रास शहर में वकालत करने आ गये थे। अतः राजाजी ने हिन्दी प्रचार सभा की भरपूर सहायता की। जमनालालजी बजाज के साथ लगभग डेढ़ माह तक दक्षिण हिन्दी प्रचार सभा के लिए धन एकत्रित करने के लिए गांव-गांव घूमते रहे। श्री जमनालालजी के आग्रह पर राजाजी ने हिन्दी प्रचार सभा का निदेशक पद स्वीकार किया। १९२८ से १९३८ ई. तक राजाजी इस पद पर रहे। इस तरह राजाजी का हिन्दी प्रचार सभा की वृद्धि तथा समृद्धि में महत्वपूर्ण योगदान रहा।

निदेशक बनने के बाद सन १९२८ से

लेकर १९४६ ई. के १८ वर्ष तक इस सभा के निधि पालक रहे। इस तरह से बीस वर्षों तक हिन्दी प्रचार सभा को राजाजी का पितृवत स्नेह मिलता रहा। राजाजी की छत्रछाया में सभा एक सम्पन्न सुस्थिर तथा यशस्वी संस्था बन गयी। दक्षिण भारत की सभी राष्ट्रीय प्रवृत्तियों का केन्द्र बनी और मूर्तिमान राष्ट्रीयता की पर्याय बन गयी। राजाजी की देखरेख में ही १९४६ ई. में हिन्दी प्रचार सभा की रजत जयंती मनाई गयी। इस अवसर पर महात्माजी भी पधारे थे। जयंती बहुत वैभव एवं राष्ट्रीय पर्व के रूप में मनाई गयी। इसका सारा श्रेय राजाजी को था।

दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा के १९२८ ई. में 'अंग्रेजी हिन्दी स्वयं शिक्षक' के प्रथम संस्करण की प्रस्तावना राजाजी ने ही लिखी थी। उसमें उन्होंने बताया 'हिन्दी को केन्द्रीय सरकार एवं परिषद की और प्रान्तीय सरकारों के बीच में आपसी काम-काज की भाषा मानना है। यदि दक्षिण भारत के भारतीय क्रियात्मक रूप से पूरे भारत देश के साथ एक सूत्र में बंधकर रहना चाहते हैं और वे अखिल भारतीय मामलों तथा तत्संबंधी निर्णयों के प्रभाव से दूर नहीं रहना चाहते तो उन्हें हिन्दी पढ़ना जरूरी है। यह सम्भव वांछित नहीं है कि अंग्रेजी को बनाये रखकर पूरे भारत में जनता द्वारा अपने प्रतिनिधि पर नियंत्रण को कमजोर किया जाय। नेहरूजी के संवैधानिक विवरण में हिन्दी को भारत की राजभाषा स्वीकार किया गया है। भारत में अपनी सरकार की स्थापना का यह तर्कसंगत परिणाम है।'

'भारत की सांस्कृतिक एकता के लिए भी एक सर्वमान्य भाषा को ग्रहण करना पड़ेगा। दक्षिण भारतीयों को पूरे भारत में सरकारी तथा व्यावसायिक नौकरियों को पाने के लिए भी हिन्दी बोलने-समझने और लिखने का ज्ञान प्राप्त करना आवश्यक है।'

'हिन्दी के ग्रहण का अर्थ मातृभाषा के महत्व को कम करना नहीं है। हिन्दी का महत्व केवल उसे सम्भाव्य राजभाषा बनाने के संबंध में है, इसलिये दक्षिण के लोगों को इसे पढ़ना चाहिये। हां, इन्हें मातृभाषा की उपेक्षा नहीं करनी चाहिये। जब हिन्दी अखिल भारत की सरकारी नौकरियों की भाषा और मातृभाषा प्रांत विशेष की राजनैतिक एवं सांस्कृतिक कार्यों की भाषा बन जायेगी तो अंग्रेजी पढ़ने में लगने वाला समय इस सीमा तक बचेगा कि उसे मातृभाषा का पूरा विकास करने का भरपूर समय मिल जायेगा।'

हिन्दी साहित्य सम्मेलन की स्थायी समिति की बैठक २६ मार्च १९३७ को दोहर में हुई। उसमें राजाजी ने भी भाग लिया, और उन्होंने एक महत्वपूर्ण प्रस्ताव पेश किया, जो सर्वसम्मति से पास हुआ। प्रस्ताव इस प्रकार था।

'यह सम्मेलन कांग्रेस कार्यसमिति से अनुरोध करता है कि वह एक ऐसा निश्चय करे कि भविष्य में कांग्रेस की कार्यसमिति एवं

अखिल भारतीय महासमिति की कार्यवाही में अंग्रेजी भाषा का उपयोग नहीं किया जायेगा और उसके स्थान पर हिन्दी यानी हिन्दुस्तानी का ही उपयोग होगा। लेकिन जो सदस्य हिन्दी या हिन्दुस्तानी में अपना मतलब पूरी तरह से नहीं समझा सकेगा, वह अंग्रेजी भाषा का उपयोग कर सकेगा।'

'यह कहना जरूरी नहीं है कि जो सदस्य हिन्दी या हिन्दुस्तानी न जानने के कारण अपनी मातृभाषा में बोलना चाहे उस पर कोई रोक नहीं है। सम्मेलन की राय है कि ऐसी परिस्थिति में अनुवादक रखे जायें। यदि किसी को अंग्रेजी में समझाने की आवश्यकता हो, तो अध्यक्ष की अनुमति से कोई भी सदस्य अंग्रेजी का उपयोग कर सकेगा।'

'राजाजी ने सरल हिन्दी के प्रयोग पर जोर दिया। दूसरे शब्दों में गांधीजी की हिन्दुस्तानी भाषा के पक्षधर थे। वे उर्दू को हिन्दी की एक शैली मानते थे। उनकी मान्यता थी कि भले ही लिपियां अलग-अलग हों, फिर भी हिन्दी व उर्दू एक ही राष्ट्रभाषा के दो रूप हैं।

राजाजी ने अपने मुख्य मंत्रित्व काल में हिन्दी को सभी स्कूलों में अनिवार्य शिक्षण की व्यवस्था की। इस पर अंतरराष्ट्रीय तत्वों ने काफी शोर-गुल किया। परंतु राजाजी ने अनेक छोटी-छोटी जनसभाओं में 'तथा संवाददाता सम्मेलन में हिन्दी की उपयोगिता पर प्रकाश डाला। निर्भीकता से हिन्दी के पक्ष में प्रचार किया। फलस्वरूप जनमानस को अपने अनुकूल बनाने में वे सफल हुए।

सन १९५५ ई. तक राजाजी हिन्दी के कट्टर समर्थक रहे, परंतु बाद में कांग्रेस से अलग होने के बाद उनके विचारों में थोड़ा परिवर्तन आया। जब भारत सरकार द्वारा नियुक्त राजभाषा आयोग मद्रास पहुंचा तो राजाजी ने इस आयोग के सामने जो वक्तव्य दिया, उससे सुनकर सारा हिन्दी संसार चकित रह गया। उनका कहना था कि हिन्दी अभी पूर्ण रूपेण राजभाषा के लिए सक्षम नहीं है।

राजाजी के उपर्युक्त विचार एक चुनौती के रूप में स्वीकार किये जाने चाहिये और हिन्दी को व्यापक व सक्षम बनाने का भरपूर प्रयास किया जाना चाहिये। राजाजी हिन्दी के प्रचार-प्रसार के विरूद्ध नहीं थे, वरन् जल्दबाजी में राजभाषा बनाने के विरोधी थे। उनका विचार कुछ अंशों में ठीक भी था, जब हिन्दी भाषी राज्य ही अंग्रेजी में राज-काज चला रहे थे, तब दक्षिणी राज्यों पर हिन्दी लादना कहां तक उचित था। राजाजी ने हिन्दी को राष्ट्रभाषा मानकर हमेशा इसकी श्रीवृद्धि में भरपूर सहयोग दिया। उनका तो केवल इतना ही कहना था कि हिन्दी को राजभाषा बनाने के लिए अभी बहुत करना बाकी है। अतः राजाजी के निर्देशानुसार हमें हिन्दी को सबल व सक्षम बनाने के लिए जुट जाना चाहिये।

**— प्रताप नगर - ७६,**
**ग्लास फैक्ट्री के पास,**
**टौंक रोड, जयपुर - १७**

□

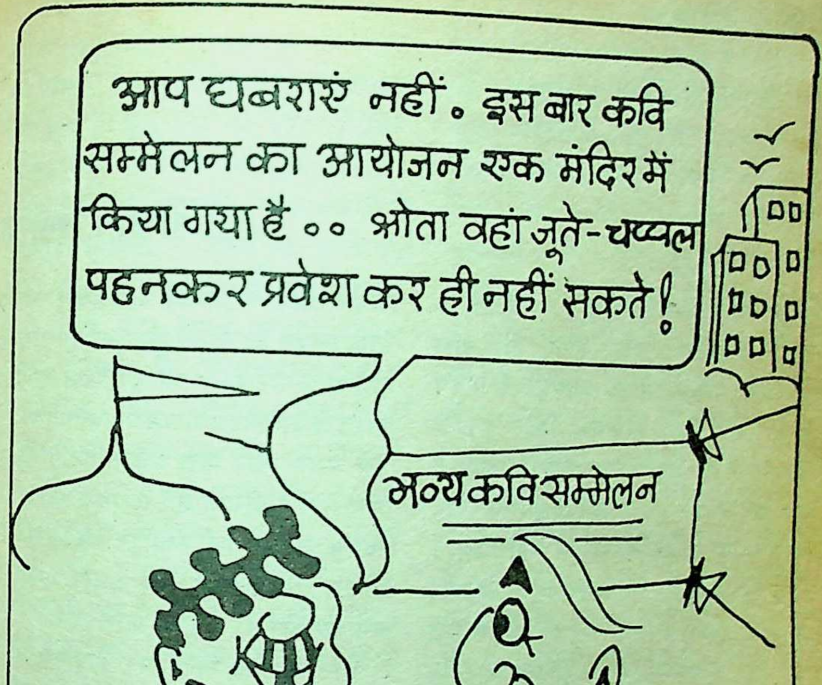
आप घबराएं नहीं. इस बार कवि सम्मेलन का आयोजन एक मंदिर में किया गया है .. श्रोता वहां जूते-चप्पल पहनकर प्रवेश कर ही नहीं सकते!
भव्य कवि सम्मेलन
कविताएं
आयोजक
किशोर

# संस्कृत प्रेमी यूनानी सम्राट

□ **राजीव सक्सेना**

प्राचीन काल में ईसा से पूर्व यूनान के सिकन्दर और ईरान के दारा (डेरियस) सहित अनेक शासकों ने पवित्र भारत भूमि पर आक्रमण किए थे। ये आक्रमणकारी शासक भारतीय संस्कृति से प्रभावित अवश्य हुए लेकिन उन्होंने भारतीय संस्कृति को कभी आत्मसात नहीं किया। किंतु यूनानी सम्राट मिनाण्डर इसका अपवाद कहा जा सकता है। एक विदेशी शासक होते हुए भी मिनाण्डर ने न केवल भारतीय संस्कृति को अपनाया बल्कि उसने देव भाषा संस्कृत का विधिवत अध्ययन भी किया था। मिनाण्डर भारतीय इतिहास से प्रभावित होने वाला संभवतः पहला विदेशी सम्राट था जिसे संस्कृत भाषा से अनुराग था और जिसने संस्कृत में साहित्य की रचना भी की थी।

यूनानी सम्राट मिनाण्डर एक महान विजेता था। आरंभ में वह भारत के पश्चिमोत्तर भाग में स्थित यूनानी राज्य बैक्ट्रिया (बाख्त्री) के शासक डिमिट्रियस का सेनापति था। महत्त्वाकांक्षी मिनाण्डर ने १८३ ईसा पूर्व में भारत के सीमांत क्षेत्र पर आक्रमण किया। उसने साकल (आधुनिक सियालकोट) से प्रस्थान कर मथुरा, साकेत आदि प्रदेशों को जीतते हुए पुष्यमित्र शुंग की राजधानी पाटलीपुत्र को घेर लिया था किंतु भारत के शक्तिशाली सम्राट पुष्यमित्र शुंग ने उसे परास्त कर पीछे ढकेल दिया। तो भी मिनाण्डर ने सीमांत क्षेत्र से मथुरा तक अपना स्वतंत्र यूनानी राज्य स्थापित कर लिया और साकल (सियालकोट) को अपनी राजधानी बनाकर इस पर शासन करने लगा।

मिनाण्डर ने भारत पर आक्रमण जरूर किया किंतु वह भारतीय संस्कृति, भारत के धर्मों, भारतीय दर्शन और भारतीयों के रहन-सहन से प्रभावित हुए बिना नहीं रह सका। भारत आने पर मिनाण्डर की मुलाकात बौद्ध भिक्षु नागसेन से हुई। भिक्षु नागसेन का व्यक्तित्त्व बड़ा आकर्षक था। नागसेन ने मिनाण्डर को बहुत प्रभावित किया। एक बार धर्मानुरागी सम्राट मिनाण्डर और भिक्षु नागसेन में बौद्ध धर्म को लेकर शास्त्रार्थ हुआ। कहा जाता है कि सम्राट मिनाण्डर और भिक्षु नागसेन का यह शास्त्रार्थ कई दिनों तक चला। अंत में मिनाण्डर परास्त हुआ और उसने बौद्ध धर्म

को अंगीकार कर लिया। यहां तक कि उसने अपना नाम मिनाण्डर से बदल कर 'मिलिन्द' रख लिया। बौद्ध धर्म अंगीकार करने के बाद मिनाण्डर ने बौद्ध धर्म का गहन अध्ययन किया। उसने 'धर्मचक्र' और 'ध्रमिक' जैसी दुर्लभ उपाधियां धारण कीं। बौद्ध कथाओं के अनुसार मिनाण्डर ने 'अर्हत' पद प्राप्त कर लिया था। जो उसके पहले स्वयं महात्मा बुद्ध, उनके पट्ट शिष्य आनंद, आचार्य जीवक, नागार्जुन और मौदगल्यायन ही प्राप्त कर पाये थे। कहा तो यहां तक जाता है कि मिनाण्डर बौद्धदर्शन का इतना बड़ा विद्वान बन गया था कि उसका समकालीन कोई भी बौद्ध भिक्षु उसे शास्त्रार्थ में परास्त नहीं कर सकता था। मिनाण्डर बौद्ध भिक्षुओं, दार्शनिकों और विद्वानों का बहुत सम्मान किया करता था। मिनाण्डर की राजधानी के सभी नागरिक या तो बौद्ध भिक्षु थे या फिर दार्शनिक और विद्वान थे।

बौद्ध धर्म के अलावा मिनाण्डर को भारतीय दर्शन और संस्कृत भाषा से भी गहरा लगाव था। न्याय, वैशेषिक, सांख्य योग और मीमांसा में उसकी गहन रुचि थी। वह इन समस्त दर्शनों का अध्ययन करना चाहता था। भारतीय दर्शन में मिनाण्डर की कितनी गहरी दिलचस्पी थी इसका अंदाज एक दंतकथा से लगाया जा सकता है जो उसके बारे में प्रचलित है। दंतकथा है कि जब मिनाण्डर को नालंदा विश्वविद्यालय के कुलपति ने प्रवेश नहीं दिया तो वह छात्र के वेश में तक्षशिला विश्वविद्यालय में प्रविष्ट हुआ। उसने विश्वविद्यालय के द्वार पंडित को शास्त्रार्थ में पराजित किया और फिर अपने वास्तविक व्यक्तित्व को छिपाते हुए गोपनीय ढंग से वर्षों तक दर्शन का अध्ययन करता रहा। चूंकि भारतीय दर्शन का अध्ययन करने के लिए संस्कृत का ज्ञान होना जरूरी था इसलिए मिनाण्डर ने संस्कृत भाषा को सर्वप्रथम सीखा। मिनाण्डर ने शीघ्र ही संस्कृत भाषा पर अधिकार प्राप्त कर लिया और वह इसका प्रकांड पंडित बन गया।

बौद्ध साहित्य में वर्णन मिलता है कि मिनाण्डर भिक्षुओं और विद्वानों से संस्कृत में ही वार्तालाप किया करता था। मिनाण्डर ने अपने समय में जितने भी बौद्ध ग्रंथ तैयार कराये थे वे सभी संस्कृत भाषा में लिखे गये थे। यहां तक कि स्वंय उसने पाली भाषा में लिखे अनेक बौद्ध ग्रंथों का संस्कृत में अनुवाद किया था। मिनाण्डर में साहित्य सृजन की अद्भुत प्रतिभा थी। उसने संस्कृत भाषा में अनेक रचनाएं लिखीं। संस्कृत में लिखी उसकी रचनाएं आज भी 'मिलिन्दपन्हो' और 'अदवान कल्पलता' में संग्रहित हैं। कतिपय विद्वानों का कहना है कि उक्त दोनों बौद्ध ग्रंथों की रचना स्वयं मिनाण्डर ने की थी। कहा जा सकता है कि मिनाण्डर पहला विदेशी सम्राट था जिसे बौद्ध धर्म, भारतीय संस्कृति और संस्कृत भाषा से गहरा अनुराग था।

**— किसरौल - नागफनी,**
**मुरादाबाद, उ.प्र.**

## कारण और निवारण

# बच्चों में अतिसार रोग

### □ डॉ. चन्द्रशेखर अवस्थी

बच्चों में पायी जाने वाली आम बीमारियों में से अतिसार या डायरिया रोग प्रमुख है। शिशुओं और बालकों के अस्पताल में एक चौथाई रोगी अतिसार के होते हैं। इस रोग से विश्व में प्रतिवर्ष ४० लाख बच्चे मौत का शिकार होते हैं। यह रोग सबसे अधिक बालक के प्रथम वर्ष में होता है।

बच्चों में बार-बार दस्त आने को ही अतिसार या डायरिया कहते हैं। ये दस्त पानी जैसे पतले तथा खून वाले भी हो सकते हैं। यहां पर यह ध्यान देने योग्य है कि दस्तों का बारबार आना उतना घातक नहीं है जितनी कि दस्त के साथ निकलने वाली पानी की मात्रा।

**क्या कारण हैं रोग का?**

मां का दूध पीने वाले बच्चों में अतिसार रोग बहुत कम होता है। बोतल का दूध या गाय का दूध पीने वालों में ही अधिकतर होता है।बोतल को तथा दूध को ठीक-ठीक न उबालने से ही संक्रमण इसमें प्रवेश करता है। यह बीमारी मुख्य रूप से दूध के कारण ही होती देखी गयी है। मक्खियां इस रोग को फैलाने में महत्त्वपूर्ण होती हैं।

कई बार दस्त, गले की खराबी, निमोनिया और मलेरिया के कारण भी लग सकते हैं। जो बच्चे कमजोर होते हैं वे खाना ठीक से पचा नहीं पाते हैं इससे उन्हें भी दस्त लग सकते हैं।

**लक्षण अतिसार के :**

शिशु पहले की तरह चाव से दूध न पिये तो यह समझना चाहिये कि उसे अतिसार होने वाला है। इसके बाद उसे द्रवयुक्त पतले दस्त होने लगते हैं। दस्त के साथ कभी-कभी उल्टी भी शुरू हो जाती है। एक दो दिन के दस्त से ही रक्त का बहुत-सा जल और नमक बाहर निकल जाता है, जिससे शरीर में पानी की कमी या डिहाइड्रेशन हो जाता है। यहां यह बात ध्यान देने योग्य है कि रोगी को रोग के संक्रमण से उतनी हानि नहीं पहुंचती जितनी कि इस डिहाइड्रेशन या पानी की कमी से। देखा गया है कि अतिसार रोग से मरने वाले बच्चे डिहाइड्रेशन के कारण ही मरते हैं।

अतिसार में डिहाइड्रेशन होने पर आंखें अंदर धंस जाती हैं और तालू नीचे दब जाता है। बच्चे की जबान और होंठ सूख जाते हैं और उसे प्यास ज्यादा लगती है। यहाँ यह

याद रखने वाली बात है कि छोटा बच्चा प्यास लगने पर पानी नहीं मांग सकता । वह बेचैनी से रोने लगता हैं । अगर इस समय उसके शरीर में डिहाइड्रेशन दूर न किया गया तो शरीर में पानी की कमी ज्यादा हो जाने पर बच्चे की हालत खतरनाक हो जाती है । पेशाब की मात्रा कम हो जाती है तथा ठण्डा पसीना आने लगता है ।

अधिकांशत: जीवाणुओं के संक्रमण के कारण यह रोग होता है और मक्खियां इस रोग को फैलाने मे सहयोग करती हैं अतः गृहणियों को चाहिये कि दूध जैसी खाने की वस्तुओं को मक्खियों से बचाने के लिए सदैव ढक कर रखें । साथ ही बच्चे को दूध पिलाने वाली बोतल की नियमित रूप से सफाई करें ।

**रोग से बचाव :**

अतिसार से बचाव के लिए बच्चे को एक साल की उम्र तक उबाला हुआ पानी पिलाना चाहिये । पानी को ढके हुए बर्तनों में रखना चाहिये तथा उसे लंबे हैंडल वाले लोटे से निकालना चाहिये ताकि हाथों से उसे छूना न पड़े ।

परिवार के सदस्यों को चाहिये कि वे पाखाना जाने के बाद और बच्चे को खाना खिलाने से पहले साबुन से हाथ अवश्य धो लें । घर का कूड़ा-कर्कट भी सावधानी पूर्वक कूड़ेदान में ही रखें ।

**अतिसार होने पर क्या करें ?**

अतिसार होने पर तुरंत चिकित्सक को दिखाना चाहिये लेकिन अगर इस स्थिति में न हों कि तुरंत चिकित्सक के पास पहुंच सकें तो डिहाइड्रेशन दूर करने के लिए घर पर ही व्यवस्था की जा सकती है । इसके लिए नमक पानी और चीनी के मिश्रण के घोल को रोगी को प्रयोग कराना चाहिये । घोल बनाने का घरेलू तरीका यह है कि आधा लीटर पानी में तीन चुटकी भर नमक और एक मुट्ठी चीनी मिलाकर घोल बनावें अगर नमक सही मात्रा में है तो घोल का स्वाद आंसुओं जैसा खारा होगा ।

यह घोल बच्चे को जितनी प्यास होगी उतना ही पियेगा, जब तक उसे प्यास है वह तरल पदार्थ खुशी से पीता है । बच्चे को एक बार में यह घोल ३ या ४ छोटे चम्मच थोड़ी-थोड़ी देर बार देना चाहिये । इससे उसे उल्टी नहीं होगी । बच्चे को एक घंटे में एक गिलास तरल पदार्थ पीने की जरूरत होती है । बच्चे को तरल पदार्थ तब तक देते रहना चाहिये जब तक बच्चे में डिहाइड्रेशन के कोई भी लक्षण बाकी रहें ।

याद रहे कि बच्चे में डिहाइड्रेशन को दूर करना दवा देने से ज्यादा जरूरी है । दवा का प्रयोग तभी करना चाहिये जब दस्त बहुत दिनों तक आयें या फिर टट्टी में खून या आँव आ रही हो । कभी-कभी अतिसार में बच्चे को बुखार भी आ जाता है । अगर ऐसी स्थिति में रोगी हो तब दवा का इस्तेमाल तुरंत आवश्यक है ।

**—राजकीय पुरुष चिकित्सालय,**
**अतर्रा (बाँदा), उ.प्र.**

आदर्श जीवन

# राष्ट्रयोगिनी भगिनी निवेदिता

## डॉ. भगवानशरण भारद्वाज

'मुझे स्मरण रखना चाहिये कि भगवत-प्राप्ति की पिपासा में ही जीवन की पूर्ण सार्थकता है। मेरा प्रियतम वह चिरानंदमय सबका प्यारा है जो इस खिड़की से झांक रहा है, जो इस द्वार को खटखटा रहा है। प्रियतम की कोई आकांक्षा नहीं, फिर भी वह स्वयं को मानवीय आवश्यकताओं से आच्छादित कर लेता है जिससे मैं उसकी सेवा कर सकूं। वह मेरे घर आता है ताकि मैं द्वार खोलकर उसे आश्रय दे सकूं। वह थकान का आभास देता है ताकि मैं सुख प्रदान कर सकूं। प्रियतम, मेरा सार-सर्वस्व तुम्हारा है। हां, मैं पूर्णतः तुम्हारी हूं।' (९ अक्तूबर, १९११ की दैनंदिनी से)

लक्ष्यहीन जीवन एक भयंकर विडंबना है। वह उस जीवन के धारक के लिए ही नहीं, उस समाज के लिए भी एक निरर्थक भार है। लक्ष्यविहीन जीवन की कल्पना उस नदी के प्रवाह से की जा सकती है, जिसमें दौड़ने वाली नौका अपने गंतव्य से अपरिचित है। लक्ष्ययुक्त जीवन में यदि सौ स्खलन होते हैं तो लक्ष्यहीन जीवन में प्रमादों की गणना ही नहीं की जा सकती। अपने जीवन के लक्ष्य का साक्षात्कार बहुत बड़ी साधना है और लक्ष्य को पहचानकर अपने आपको उसके लिए सर्वथा समर्पित कर देना विश्व की सबसे बड़ी सिद्धि है। जिन्हें जीवन के लक्ष्य का बोध है और उसे प्राप्त करने की उत्कट लालसा है, जिनके जीवन का हर क्षण लक्ष्य के आवाहन के लिए अर्पित है और जो अपनी सांसों को ध्येयदेव की आरती बना देते हैं, जीवन की समस्त विभूतियां उनके चरणों पर लोट कर स्वयं को कृतार्थ करती हैं और इतिहास का झुका हुआ सिर कुछ पलों के लिए गर्व से तन जाता है।

मागरिट नोबुल का जन्म सैम्युअल रिचमण्ड नामक आयरिश सज्जन के संभ्रांत परिवार में १८ अक्तूबर, १८६७ ई. को, माता मेरी हैमिल्टन की पवित्र कोख से लंदन में हुआ। पिता धर्मोपदेष्टा थे, अतएव उनके यहां पादरियों का तांता लगा रहता था। भारत में धर्मप्रचारार्थ भेजे गये एक धर्मयाजक ने मागरिट के सिर पर स्नेहपूर्वक हाथ फेरते हुए एक दिन कहा – 'भारत को किसी दिन इसकी आवश्यकता पड़ेगी।' कौन जानता था कि यह भविष्यवाणी सत्य सिद्ध हो

जायेगी। पिता रिचमण्ड चौंतीस वर्ष की अल्पायु में ही परलोक चले गये किंतु उनके ओठों से निकले अंतिम शब्द मागरिट के हृदयपटल पर अमिट लिपि में अंकित हो गये – 'मागरिट के जीवन में एक पुकार आयेगी। जब प्रभु की ओर से ऐसा अवसर आये तो उसे जाने देना। उसे कभी मत रोकना। उसके द्वारा महत्कार्य संपन्न होगा।'

हॉलीफैक्स कॉलेज में अध्ययन करते समय मागरिट पर वहां की प्रधानाचार्या लैरेटी का प्रभाव सबसे अधिक पड़ा। वे मदिरा और विलासिता से दूर रहकर कर्म-कठोर जीवन व्यतीत करती थीं। युवावस्था में मागरिट ने हर क्षेत्र में विजय प्राप्त की। विद्यालय और सामाजिक जीवन में उनकी प्रतिष्ठा का छोर नहीं था। मित्र ऐसे मिले थे कि ईर्ष्या होती थी। किंतु हृदय के निभृत कोने में निर्मम पराभव की दारुण वेदना उसे झेलनी पड़ी। अठारह मास उसने बिताये प्रेम का स्वप्न देखकर। मन ही मन सुख के कितने ही नीड़ उसने रचे। उमड़ते विश्वास और विपुल निर्भरता से उसने भावी सुख को निश्चित ही समझ लिया था। विवाह का दिन भी तय हो चुका था तभी अनभ्र वज्रपात हुआ। प्रबलतर दावा लेकर मार्ग में एक प्रणयिनी और आ गयी। नियति के निःशब्द आघात से मागरिट का सुख-स्वप्न छिन्न-भिन्न हो गया।

सहसा उसे मिस कॉलिस की बात याद आयी। उनकी तापसी-सुलभ पोशाक के अंदर एक स्नेह-करुण कोमल हृदय छिपा था। प्राचार्या कॉलिस ने उसे सप्ताह-भर अपने सान्निध्य में रखा। मागरिट के चित्त की शांति किसी तरह वापस लौटी। मिस कॉलिंस ने उसे समझाया – 'इस कठोर आघात से अंतर में ज्योति का उत्स खुल जायेगा। चित्त शांत होते ही उस दिव्य ज्योति के अनिर्वचनीय प्रसाद का तुम्हें अनुभव होगा।' उनकी प्रेरणा से मागरिट ने साहित्य, कला, दर्शन, विज्ञान आदि विभिन्न विषयों का अनुशीलन किया।

मागरिट ने गहन विचार-मंथन के उपरांत यह निष्कर्ष प्राप्त किया कि सेवा ही सर्वोत्कृष्ट आनंद का मार्ग खोलती है। मनुष्य का वास्तविक अलंकार और विश्वसनीय मित्र सेवा ही है। उसी से व्यक्तित्त्व के सारे स्तर और समस्त क्षमताएं शतदल की भांति विकसित और श्रीसंपन्न बनती हैं। सेवा का मार्ग साधना और समर्पण का मार्ग है। वह भोग की नहीं प्रत्युत योग की साधना है। अतः उन्होंने सत्रह वर्ष की आयु में ही अध्यापन कार्य आरंभ कर दिया १८६६ में पाठन के साथ ही समाजसेवा के क्षेत्र में भी वे सक्रिय हो उठीं। विख्यात शिक्षाविद् फ्रीबेल की शिष्या डी.ल्यू. के आग्रह पर उन्होंने लंदन में एक नवीन विद्यालय की स्थापना की। १८९२ में उन्होंने रस्किन विद्यालय का श्रीगणेश किया और मनोवैज्ञानिक रीति से शिशुओं की कलात्मक, बोधात्मक और नैतिक प्रवृत्तियों का पूर्ण विकास करने पर

ध्यान केंद्रित किया।

मार्गरिट के मन में शांति न थी। वे एकांत में अथवा गिरजाघर में घंटों बैठी रहती थीं। एक दिन भारत के सर्वस्वत्यागी राजकुमार गौतम बुद्ध का जीवनचरित उनके हाथ लग गया। उनका मन इतनी कम वय में भी धर्म के प्रति अनेक शंकाओं से घिर गया था। ऐंग्लिकन चर्च के फ्रीह्यूमन संप्रदाय के नेता से उनका परिचय तो हुआ किंतु असहिष्णुता की कठोर चट्टान ने उन्हें घायल कर दिया। शिकागो की सर्वधर्मसंसद् अभी हो चुकी थी। १८९५ के सितंबर मास में विवेकानंद इंग्लैंड पधारे। एबेंजर कुक ने चित्रांकन सिखाते समय मार्गरिट से कहा – 'लेडी ईसाबेल मार्गसन के घर पर कई मित्रों के बीच एक हिंदू संन्यासी कुछ कहेंगे। क्या तुम वहां चलोगी?' मार्गरिट ने नितांत कौतुहलवश उस आमंत्रण को स्वीकार कर लिया। सीसेम क्लब के सदस्य मिस्टर स्टर्डी और हेन रियेटामूलर ने संयुक्त राष्ट्र में तरुण संन्यासी की असामान्य सफलता का विशद विवरण सुनाया।

बैठक के सभी पर्दे उस दिन खिंचे हुए थे। कक्ष में प्रवेश करते ही मार्गरिट को न जाने कैसी बेचैनी हुई। वे लगभग सभी के बाद आयी थीं। वहां कम से कम पंद्रह व्यक्ति थे – सभी चुप। गैरिक वस्त्र धारण किये एक तपस्वी आया और सामने बैठ गया, प्रशांत, धीर और आत्मसमाहित योगी महावीर विवेकानंद। लेडी ईसाबेल ने बहुत धीरे से कहा – 'स्वामिन! सभी मित्र आ गये हैं। स्वामीजी के अधरों पर मधुर मुस्कान छा गयी। सरगम की भांति उनके कंठ-स्वर में कभी उतार आता तो कभी चढ़ाव। उनके प्रवचन में न जाने कैसी आत्मीयता का स्वर अनुरणित हो उठा। स्वयं मार्गरिट के शब्दों में 'मुझे आभास होने लगा कि एक अपरिचित संस्कृति में पले हुए इस व्यक्ति की बात को साधारण समझकर उड़ा देना अनुदारता का परिचायक होगा। ऐसे चिंतनशील व्यक्ति का दर्शन मुझे आज तक कभी नहीं हुआ।' मार्गरिट ने सभी गोष्ठियों में उपस्थित रहना आरंभ कर दिया। 'शंकासमाधान का क्रम चलने लगा। अंधकार छंटने लगा, प्रकाश की शीतल किरण हृदय को छूने लगी – 'कल्पना करो, यदि स्वामीजी उन दिनों लंदन न पधारे होते तो यह जीवन निरर्थक हो जाता! उसने अनंत काल के लिए एक दुःखद स्पप्न का रूप ग्रहन कर लिया होता।'

१५ अप्रैल १८९६ को स्वामीजी ने इंग्लैंड में दूसरा प्रवास किया। वेदांत की कक्षाएं विधिवत् चलने लगीं। एक दिन देवपुरुष विवेकानंद रस्किन-विद्यालय जा पहुंचे। भारत के निर्धन, निरक्षर शिशुओं का स्मरण आते ही उनकी आंखें आंसुओं से डबडबा आयीं। मार्गरिट ने भारत के दीन-दुखियों की सेवा के यज्ञ में सहयोग करने का आश्वासन दिया। १६ दिसंबर, १८९६ को स्वामीजी भारत चल दिये। पत्राचार में जब भी मार्गरिट भारत आने की इच्छा व्यक्त करती, स्वामीजी

टाल जाते। जब उन्हें यह विश्वास हो गया कि मार्गरिट के दृष्टिकोण में अभीष्ट परिवर्तन आ चुका है, तो उन्होंने पत्र में लिखा –

'बिना किसी संकोच के बता रहा हूं कि मेरा यह निश्चित दृष्टिकोण है कि भारत में कार्य की दृष्टि से तुम्हारा भविष्य प्रकाशमय है। आवश्यकता एक पुरुष की नहीं, वरन् एक महिला की है जो सिंहनी के समान हो। कठिनाइयां अपार हैं। यहां फैली हुई निर्धनता, अंधविश्वास तथा दासता की कल्पना भी तुम नहीं कर सकतीं। तुम्हें उन अर्धनग्न स्त्रियों और पुरुषों के बीच रहना होगा जो एकांत जीवन और जातिवाद के संबंध में विचित्र धारणाएं रखते हैं। जलवायु भयानक गर्म है। इसके बाद भी यदि तुम काम करने का साहस रखती हो तो तुम्हारा स्वागत है।'

सेवा की दुर्दमनीय पुकार को मार्गरिट ठुकरा न सकीं। सेवा के कंटकाकीर्ण मार्ग का वरण करने के लिए उन्होंने सारा जीवन ही दांव पर लगा दिया। परिजन, देशवासी और जीवन के समस्त सुख-भोगों को लात मारकर भगिनी ने लोक-सेविका का यज्ञमय जीवन चुना। स्वामी विवेकानंद ने उनके हृदय-क्षेत्र में पड़े सेवा के बीज को उचित प्रकाश, जल और उर्वरक प्रदान किया। सेवा का आव्हान मिलने पर भगिनी शांत न रह सकीं। अंततः वे भारत की ओर चल पड़ीं।

युगाचार्य विवेकानंद ने अपने संन्यासी-परिकर के साथ २८ जनवरी १८९८ को पुष्पहारों से उनका स्वागत किया। १६ मार्च को मार्गरिट मां शारदामणि से मिलीं। 'उनका घर किस ओर है, मुझे बता दें। मैं स्वयं जाऊंगी उनके दर्शन को।' कोई कुछ न बोल रहा था। मार्ग में जो भी मिलता, दूर-दूर चला जाता। विचित्र असमंजस में पड़ी कु. नोबुल अतुल विश्वास और श्रद्धा से हिल्लोलित हृदय लिए मां के द्वार पर पहुंच ही गयीं। द्वार पर ही उनके पैर ठिठक गये। सहसा भीतर से आवाज आयी – 'आओ बेटी, भीतर आओ! बाहर क्यों रुक गयीं?'

नोबुल आत्मविभोर हो गयीं। देखा, श्वेत वसन धारण किये अगाधममता की मूर्ति मां शारदा अंक में भर लेने के लिए हाथ फैलाये हैं – 'इधर आ बेटी, मेरे पास।'

मां ने कहा – 'बेटी, नरेन ने मुझे सब कुछ बता दिया है। अतः आज से तू इस आश्रम में मेरी बेटी और गुरुभाइयों की बहन के रूप में सुशोभित होगी। नरेन ने तुझे मेरे लिए निवेदित किया है, अतः तू निवेदिता कहलायेगी।'

शिष्यों से मां ने कहा – 'देखो, नरेन पश्चिम से इस श्वेतकमल को ठाकुर के चरणों में उत्सर्ग करने लाया है।'

भगिनी निवेदिता ने योगी-गुरु के साथ सारे भारत की यात्रा कर अपने सपनों के देश से परिचय प्राप्त किया। १३ नवंबर, १८९८ को उन्होंने मां शारदामणि के शुभाशीर्वाद के साथ एक कन्या–विद्यालय आरंभ किया। इसके लिए उन्हें लोगों की संशय और संदेह से

पूर्ण दृष्टि, तिरस्कार और अपमान का सामना करना पड़ा। लोग उनकी चमड़ी देखकर ही झिझकने लगते थे और अपनी बेटियों को उनके हाथों सौंपने के लिए प्रस्तुत नहीं हो पाते थे। धीरे-धीरे केशवचंद्र सेन, रवींद्रनाथ ठाकुर और जगदीशचंद्र बसु जैसे जगतप्रसिद्ध व्यक्तियों के परिवारों की बालिकाएं पढ़ने आने लगीं। भगिनी लोकसेवा के याज्ञिक अनुष्ठान में सर्वतोभावेन जुट गयीं। इतिहासकार सर जदुनाथ सरकार ने लिखा है – 'कलकत्ता में प्लेग के प्रथम प्रकोप के दिनों में, जब लोग मृत्यु की विभीषिका से आतंकित-आशंकित होकर घरबार छोड़कर भाग रहे थे, मेहतर मिलते न थे, उन दिनों निवेदिता ने हाथ में फावड़े लेकर बाग-बाज़ार की उपेक्षित गलियों की सफाई की। उनके उदाहरण ने अनेक युवकों को लज्जित कर आगे आने के लिए विवश कर दिया।'

जब भगिनी को डॉ. जगदीशचंद्र बसु के अनुसंधानों के संबंध में जानकारी मिली और पश्चिमी वैज्ञानिकों द्वारा उनके प्रति किये गये दुर्व्यवहार का पता चला, तब उन्होंने अंतर्राष्ट्रीय जगत में डॉ. बसु के सिद्धांत और गवेषणाओं को मान्यता दिलाने के लिए तथा प्रकारांतर से विज्ञान के क्षेत्र में भारत के योगदान का महत्व स्थापित करने की दृष्टि से भीष्म प्रयास आरंभ कर दिया। १८९८ में वे श्रीमती बुल के साथ डॉ. बसु से भेंट करने गयीं। उस समय वे 'रिसपांस ऑफ द लिविंग एंड नॉन-लिविंग' पर नवीन अनुसंधानों में व्यस्त थे। अगस्त, १९०० में अंतर्राष्ट्रीय भौतिकीपरिषद् ने पेरिस-प्रदर्शनी में उन्हें आमंत्रित किया। भारत सरकार की ओर से डॉ. बसु ने उस सम्मेलन में भाग लिया और शोध-पत्र का वाचन भी किया। उस समय देवात्मा विवेकानंद और निवेदिता पेरिस में थीं। भारत का मस्तक समस्त संसार में गर्वोन्नत करने के लिए स्वामीजी ने डॉ. बसु का हार्दिक अभिनंदन किया। जब आचार्य बसु पेरिस से इंग्लैंड लौटे, उस समय दिसंबर में उनकी शल्य-क्रिया हुई जिसके उपरांत विम्बल्डन में भगिनी के घर पर ही उनकी सेवा-सुश्रूषा हुई। बाद में जब श्रीमती बसु अस्वस्थ हुई', तब उनकी भी परिचर्या वहीं हुई। इसके बाद प्रसिद्ध 'बसु-युद्ध' आरंभ हुआ। आचार्य के शोधपत्रों को या तो प्रकाशित होने की अनुज्ञा नहीं दी गयी या जानबूझकर उनके मुद्रण में अशुद्धियां की गयीं। इससे डॉ. बसु को बहुत मनस्ताप हुआ। इस समय भगिनी ने उनके कार्य में अपूर्व सहयोग दिया। उनकी पुस्तकों तथा शोधपत्रों का संपादन किया और प्रकाशन-साहाय्य के लिए वित्तीय व्यवस्था की।

भारत लौटकर योगीन मां और क्रिस्टायन के साथ भगिनी महिला-शिक्षण के कार्य में प्राण-पण से संलग्न हो गयीं। उनका विद्यालय अध्यापक, शिल्पी, कलाकार राजनेता, संन्यासी, वैज्ञानिक, पत्रकार और

क्रांतिकारियों के लिए प्रेरणा-तीर्थ बन गया। विभिन्न नगरों में व्याख्यानों के माध्यम से उन्होंने भारतीयों के अंत:करण में राष्ट्रीयता के प्रसुप्त संस्कारों को झकझोरा। उन्हें स्वाभिमान, स्वाधीनता, स्वधर्मनिष्ठा और देशभक्ति का प्रेरक मंत्र प्रदान किया और अनेक युवकों में देश के लिए समर्पित जीवन जीने की प्रचंड प्रेरणा फूंकी। डॉन समिति, अनुशीलन समिति, क्रांतिकारी-समिति और विवेकानंद-समिति के माध्यम से ही नहीं, विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में छद्म नाम से लेख लिखकर उन्होंने युवा पीढ़ी का मार्गदर्शन किया।

'युगांतर' और 'वंदेमातरम्' को लोकप्रियता प्रदान करने में उनका बहुत हाथ था। भारतीय राष्ट्रीय महासभा में उस समय दो दल थे – उग्रपंथी और नरम दल। भगिनी ने दोनों के बीच बढ़ती खाई पाटने की भरपूर चेष्टा की। वे बड़ोदरा जाकर श्री अरविंद से मिलीं। उन्होंने कलकत्ता आकर क्रांतिकारी आंदोलन का संचालन करने का अनुरोध किया। वे भारत को स्वाधीन देखना चाहती थीं। उन्होंने ही उल्लासकर दत्त को प्रफुल्लचंद्र राय की वैज्ञानिक प्रयोगशाला में बम बनाना सिखाया। उन्होंने हेमचंद्र को फ्रांस और इटली भेजा ताकि उसकी नवीनतम निर्माण-विधि का अध्ययन किया जा सके।

स्वामी विवेकानंद के तिरोधान के बाद रामकृष्ण मिशन के संचालकों को आशंका हुई कि राजनीति में भगिनी के पदार्पण से कहीं मठ पर संकट न मंडराने लगे। अत: निवेदिता ने बेलूड़ मठ से सम्बन्ध-विच्छेद कर लिया। गिरीशचंद्र घोष भगिनी से मिले। उन्होंने पूछा – 'तुमने मिशन से संबंध क्यों तोड़ लिया? राजनीति में क्यों चली गयीं?'

भगिनी ने कहा – 'सुनिये जी. सी., आप मुझसे बहुत स्नेह रखते हैं, आप मेरी बात समझ जायेंगे। मैं नहीं जानती कि स्वामीजी को आप लोगों ने किस दृष्टि से देखा है। भारत की पराधीनता की विषजर्जरता से उन्हें कैसी मर्मान्तक वेदना थी, यह आप लोगों ने कितना लक्षित किया है, मुझे मालूम नहीं। किंतु मैंने देखा है कश्मीर के कितने ही तीर्थस्थलों में, समुद्र के हिल्लोल पर वार्तालाप में, आलोचना में, लेखनी में विरुद्धवादियों से उनके प्रत्यक्ष संग्राम में, अपनी जन्मभूमि की पराधीनता की ग्लानि कितनी तीक्ष्णता से उनके हृदय पर आघात करती थी! तमतमाते मुखमंडल से स्फुरित आयालबाल केसरी की भांति कैसी लाचार उद्विग्नता से वह चहल कदमी करते थे। क्या मैंने उनका वह रूप नहीं देखा? दिन को देखा, रात को देखा। इस देश में देखा, विदेश में देखा। कश्मीर घाटी में वित्ताभर भूमि के लिए गोरे कर्मचारी द्वारा उनका अपमान और उसका प्रतिकार कर पाने की असमर्थता के कारण स्वामीजी का असह्य विक्षोभ क्या मैं भूल सकती हूं? ...जिस दिन मेरे शरीर का रक्त सूख जायेगा और मृत्यु मुझे धूलि में मिला देगी, शायद उसी दिन मैं गुरुदेव की

दारुण वेदना की मर्मभेदी स्मृति को भुला सकूंगी। स्वामीजी ने पराधीन देश में जन्म लिया और पराधीनता की ग्लानि में ही शरीर का विसर्जन किया, यह सोचना भी मेरे लिए असह्य है। इसलिए देश की दास्य-श्रृंखलाओं को तोड़ने की भरसक चेष्टा किये बिना मैं नहीं रह सकूंगी। लेकिन यह भी सच है कि राजनैतिक आंदोलन ही जाति के जीवन का सर्वांगीण आन्दोलन नहीं, वरन् उसकी आंशिक प्रचेष्टा-भर है। इसलिए मुझसे आप ऐसा अनुरोध न करें। मैं आपका आदर करती हूं।'

भगिनी को असत्य से घोर घृणा थी। कलकत्ता विश्वविद्यालय के दीक्षांत समारोह में लॉर्ड कर्ज़न ने आक्षेप करते हुए कहा – 'भारत के लोग अतिशयोक्तिप्रिय होते हैं। अतिरंजना करना इनका स्वभाव है।' भगिनी वहां उपस्थित थीं। समारोह के समापन पर वे सर गुरुदास को लेकर इम्पीरियल ग्रंथालय गयीं। वहां कर्ज़न रचित 'पूर्व की समस्याएं' से उन्होंने सिद्ध किया कि कर्ज़न स्वयं मिथ्याचारी और अतिशयोक्तिप्रिय हैं। कर्जन के वक्तव्य पर सर गुरुदास का प्रतिवाद अमृतबाज़ार पत्रिका में प्रकाशित हुआ। स्वयं भगिनी ने कई पत्र-पत्रिकाओं में कर्ज़न के आरोप का निराकरण प्रसारित किया।

उन्होंने भारतीय इतिहास, धर्म और दर्शन का अनुशीलन गहनता के साथ किया था। 'द वेव ऑव् इण्डियन लाइफ', 'भारतीय इतिहास के पदचिह्न', 'रिलीजन और धर्म', 'मां काली', 'भारतीय राष्ट्रीयता' जैसे ग्रंथ उनकी आंतरिक ग्रहणशीलता, अंतर्दर्शिनी मेधा और असाधारण क्षमता का प्रमाण प्रस्तुत करते हैं। हिंदू धर्म की बालकथाएं, 'स्टडीज़ फ्रॉम ऐन् ईस्टर्न हाउस', भारत में राष्ट्रीय शिक्षा पर कुछ संकेत आदि पुस्तकों में उन्होंने भारतीय जीवन और शिक्षा के संबंध में चिंतन प्रस्तुत किया है। 'मेरे गुरु : जैसा मैंने उन्हें देखा' में स्वामी विवेकानंद के पावन संस्मरण हैं।

वे दिन पर अंतर्मुखी होती जा रही थीं। उनका शरीर कंकाल-मात्र रह गया था। उनके नेत्र मुंदे रहते थे और उंगलियां रुद्राक्ष पर। २३ अक्तूबर, १९११ को भगिनी का हंस मानसरोवर की ओर उड़ गया। दार्जिलिंग में हज़ारों भारतीयों के आंसू और सिसकियों के बीच भगिनी के पांच भौतिक देह का अग्नि-संस्कार हुआ।

साहित्य-देवता रवि ठाकुर उन्हें सती कहते थे और कलागुरु अवनींद्रनाथ उन्हें महाश्वेता के नाम से संबोधित करते थे। नंदलाल वसु, असित हालदार जैसे कलाकार, ब्रह्मबांधव उपाध्याय और ऋषि रामानंद चट्टोपाध्याय सरीखे पत्रकार उनमें गुरुवत् श्रद्धा रखते थे। अंग्रेज पत्रकार रैडक्लिफ उनका लोहा मानते थे। आचार्य प्रफुल्लचंद्र राय उनमें असीम श्रद्धा रखते थे। १९१३ में भगिनी क्रिस्टायन ने मिस मैक्लियॉड को पत्र में लिखा :

'डॉ. बसु शारीरिक और मानसिक दृष्टि से पूर्वापेक्षा स्वस्थ हैं, लेकिन हर किसी के मन में यह आशंका बनी हुई है कि वे बहुत दिनों हमारे बीच नहीं रहेंगे, क्योंकि जीवन में उन्हें बिल्कुल रुचि नहीं रह गयी है।' आचार्य बसु की लोकांतर-यात्रा का समाचार पाकर कविकुलगुरु ठाकुर ने सच ही कहा — 'संघर्ष के दिनों में जगदीश को एक अनमोल सहयोगी और सम्प्रेरक व्यक्ति मिला, वह थीं भगिनी निवेदिता। उन्हीं की सहायता से जगदीशचंद्र की कीर्ति सारे अवरोधों का ध्वंस कर समस्त भूमंडल में प्रसृत हुई।'

नागपुर की विराट् जनसभा में उन्होंने जो विचार व्यक्त किये, उनकी प्रासंगिकता आज भी कम नहीं हुई है —

'हमारे देश में उच्च शिक्षा बड़ी द्रुतगति से बढ़ रही है। पर्याप्त संख्या में स्नातक निकल रहे हैं, लेकिन उनकी ओर देखने से मन निराशा से भर उठता है। न तो उनके शरीर में शक्ति है और न हृदय में साहस। वीर्यशून्य, उद्यमशून्य युवकों का दल जो अपनी मां-बहनों के सम्मान की रक्षा करने में भी असमर्थ है। ऐसे लोगों से देश की कौन सी भलाई होगी? आज देश की मांग है कार्यकत्ताओं की टोली की, जो स्वास्थ्य से झलमलाती हो, आत्मविश्वास की दृढ़ता से युक्त हो और देशप्रेम में मतवाली हो। ऐसे ही जीवटवाले नौनिहाल चाहिये जो पराधीनता के कलंक को न सहेंगे, विदेशी शासकों के शासन-तंत्र को सक्रिय रखने से घृणा करेंगे और उसे पंगु तथा व्यर्थ बना देंगे।'

**— चित्रकूट - ४३, सिन्धुनगर,**
**बरेली - २४३ ००५, उ.प्र.**

* * *

१९३५ में अपने ही देश की एक चर्चित तवायफ ने बापू को एक पत्र लिखा था और लिफाफे पर पते के स्थान पर लिखा था। 'साबरमती के संत' और लखनऊ से चला यह पत्र बापू के पास पहुंच गया।

और अंत में देखिये, एक और पत्र पर लिखे पते का नमूना : यह पत्र ४ जुलाई १९२६ में स्पेन से चला था इसे लिखने वाली थी १६ बरस की मेरी डायना। मेरी डायना ने अपने लिखे खत में बापू की खूब प्रशंसा की थी। साथ ही यह भी लिखा 'मुझे आपका पता ठीक से याद नहीं है। अतः लिफाफे पर लिखा पता पढ़कर मेरा मजाक न बनायें। हां यदि यह पत्र आपको मिल जाये तो तुरंत जवाब दें और अपना सही सही पता भी लिखें।' मेरी डायना ने पता इस तरह से लिखा था। 'तीनं बंदरों के सरदार, लंगोटवाले बाबा जो हाथ में लकड़ी रखते हैं और लकड़ी की ही चप्पल पहनते हैं, उन्हें यह पत्र मिले।'

हिंदी कहानी

# आदमी का दर्द आदमी

**☐ राज्जन त्रिवेदी**

'आओ यहीं बैठते हैं, मुझे तो सामने वाले लोग अच्छे लगते हैं, फिर अपने पास छिनने को, छीना जाने को है ही क्या?' अशोक बाबू ने थर्मस को कंधे पर से उतारते-उतारते कह दिया।

हम अच्छे हैं तो दूसरा अच्छा होगा ही, अच्छे को अच्छा ही मिलता है... अच्छा होता है।' कह कर बैठ गये। उन्हें यही लगा कि, जयाजी का देखना कुछ और ही है, अपनी ओर से निर्णय दे देना ठीक नहीं, इसीलिए बैठते हुए उनकी ओर देखते रहे।

वे बेंच के आगे गयीं, सूटकेस भी उस पर रख दिया और आंखें जमाते हुए बोलीं। उनके माथे पर सिकुडने बन बिगड़ रही थीं, संभवत: वे अंदाज लगा रही थीं कि सूटकेस में किसके कितने कपड़े रखे गये हैं, तेल-कंघी रखा या नहीं, दाढ़ी का सामान रखा तो है, पर ब्लेड... रुमाल में सफरी आईना बाकायदा रख लिया है। माथे पर लगाने वाली बड़ी टिकलियों का पैकेट रखा है, कितना लफर-लफर मच गया था, ओफ़... स्टेशन पर पहुंचे तो ट्रेन प्लेटफार्म पर लग गई थी, देखते ही पसीना छूटने लगा, अच्छा था कि, सि टी -बुकिंग से टिकटें ले ली थीं।

अशोक बाबू देख रहे थे कि बोलते-बोलते ये रुक कैसे गयीं?

'आप तो बहुत जल्दी ही किसी भी आदमी को अपना समझने लगते हैं, ऐसों से तत्काल दुख नहीं मिलता, बल्कि उनसे दुख का रसना चालू हो जाता है, जैसे-जैसे वे खुलने लगते हैं तब वह सब हमें बुरा लगने लगता है। सामने वाला वैसा ही है, जैसा हमने सोचा है? यह सब ज़ानने की कोशिाश हम नहीं करते। ऊपरी दिखावे या तामझाम में जल्दी आ जाते हैं, और वही सब बाद को बुरी तरह टूटते हैं, तब हम जोड़े नहीं जुड़ते। यह सब भ्रमों का ही टूटना है, और अंत में हम 'ठगे गये' के दर्द को लंबे समय तक पाले रहते हैं। अच्छा है, इस़ तरह के भ्रम जितने कम पाले जायें उतना अच्छा है, उतनी ही शांति बनी रहेगी, मन उत्साहित बना रहेगा।' वे इतना धीरे बोल रही थीं कि सामने वाले नहीं सुन पा रहे थे, बातों का एक टुकड़ा भी वे उधर गिर कर जाने नहीं दे रही थीं। उनकी नाक की लौंग और माथे की बड़ी लाल बिंदिया बोलते समय चहकने लगती थी। जरा देर को वे चुप हुईं बिंदिया लौंग फिर चहकमे लगी।

मुझे लगता है, तुम सामने वाले का सही

अंदाजा नहीं ले पा रहे हो, मुझे उसकी कंजी आंखें, खड़ी भौंहें, बारबार सिकुड़ता माथा, गौर वर्ण में व्रणों के गड्ढे रह-रह कर उड़ते थूक को छेंक लेते हैं, चपल होती पुतलियां सूकर की आंखों की तरह टंग जातीं, कत्थे, चूने से, तंबाकू से मढ़े दांत, मसूड़े, अकारण पगुराये जाते जबड़े में चबा जाने का अभ्यास करते नहीं लग रहे, गाल रह-रह कर कैसे कस जाते हैं? अच्छाई सहिष्णुता से जनमती है, अशोक बाबू, यह तो एकदम विपरीत लगता है। देख नहीं रहे हो। लगता है कुछ चबुलाये ही चला जा रहा है....'

कह कर उन्होंने भी कनखियों से सामने वाले को देखा, और अब बैंच पर पलथी मारते हुए जरा पास सरकते हुए फिर बोलने लगीं।

दोनों को लगा कि ये लोग उन्हीं के बारे में बोल रहे हैं, पर वे चुप रहे।

'बहुत जल्दी किसी को भी अपना मत समझो, उसे समझने के अवसरों पर ध्यान रखो। क्योंकि किसी का भी मन जल्दी पढ़ा नहीं जाता। फिर विकृत मन विकृत चेहरों पर जो कारीगरी करने लगता वह भी धीरे-धीरे। वकीलों को देखा है न, वे तो विकृतियों के बीच ही जीते - लगते हैं, उनका पथरीला, खिंचा, कड़आता, विक्षोभ देता चेहरा वर्गीय, अभिजात्य समझी जाने वाली सभ्यता की देन होता है। यही नहीं डाक्टरों तक का चेहरा पैसों की दौड़ में मानवीयता को ताक में रख मक्कार और पथरीला हो जाता है, हर समय पैसों की जुगाड़ उसे असहिष्णुता में जिलाने लगती है। यह सब जल्दी समझ में नहीं आता, घटना या व्यवहार का नश्तर लगने के बाद ही ये समझ में आते हैं, इनका मनुष्य कोसों दूर छूट जाता है, ये उसके लिए जीना

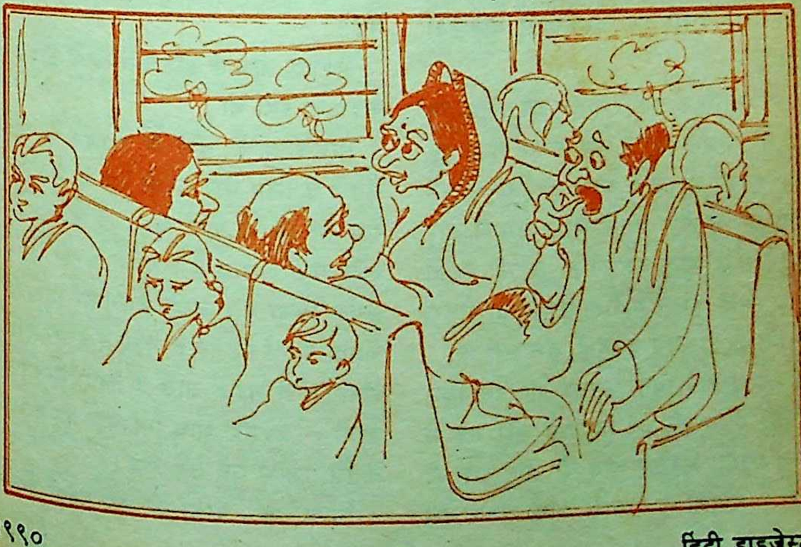

भी नहीं चाहते और न रुकना ही। गलत आदमी का गलत चेहरा जो गढ़न लेता है, वह मानसिक यात्रा की देन होता है अशोकजी, आप सामने वाले को अहमियत ज्यादा मत दीजिये।'

रेल चलने लगी थी, दोनों बतियाते चले जा रहे थे. सीटी तक सुनाई नहीं पड़ी। डिब्बे में भीड़ नहीं थी। सामने बैठी महिला अपने को "चारुशीला" दिखाने में कभी साड़ी समेट लेती, कभी दूर-दूर देखने लगती, निरपेक्ष सी। कभी बीच में शाल, कभी रूमाल माँग लेती, और सज्जन बिना चेहरे पर कोई भाव लाये, वे चीजें देतें जा रहे थे, पगुराते चेहरे, मसूड़े खिचते नथुने तब रुक गये जब उन्होंने कहा, 'भाई साहब, जरा-सा सरक जाइये तो पीक, थूक दूं, खिड़की से...' वे न सरकते तो पीक उसके कंधे पर धनुष की तरह टंग जाती, और फिर रास्ते भर भनभनाती मक्खियां छोड़तीं।

जल्दबाजी में उनकी तंबाकू की तलब दब गई थी, सामने वाले ने उसे उकसा दिया था, अब उनकी भी जीभ स्वाद के लिए नाचने लगी थी, उन्होंने उसके बैठते उसकी ओर ऐसे देखा कि मानो कह रहे हों, चुटकी भर हो दे दो, भाई, हमारे यहाँ तो तंबाकू या दोहरा जोड़ने का ही काम करते हैं, बस जरा सा.... लेकिन उन्होंने बिना उनकी ओर देखे फिर डिब्बी से चुटकी भर निकाली और मुंह मे डाल लिया, अशोक बाबू की ओर देखा ही नहीं। जयाजी ने याचकी आंखें जरूर देख लीं। और वे सूटकेस में उनकी तंबाकू की डब्बी खोजने लगीं, उन्हें याद भी आ रहा था, चलते-चलते उन्होंने रखा है। काफी इधर-उधर खोजा, पर वह नहीं मिली। दोनों ने गहरी सांसें छोड़ दीं।

'चुटकी भर तंबाकू दे देता तो घट जाता क्या... छिन जाता... क्या आदमी हैं...? आगे देखो हम अच्छे हैं, तो सामने वाला भी अच्छा होगा... होना भी चाहिये... क्यों?' जयाजी के कान में लगा चमेली का फाहा उन्हें अच्छा नहीं लगा, पहले तंबाकू की गंध ही मिल जाती तो अच्छा होता, तलब को समझाया नहीं जा सकता। उनकी चुनौटी और तंबाकू की डिबिया घर ही रह गई थीं, कहर ढाने।

सामने वाले सज्जन तंबाकू चबुलाये चले जा रहे थे, मानो कह रहे हों, शौक पालने होते हैं तो दूसरे के भरोसे नहीं, देखा न बींबी दगा दे गई।

अशोक बाबू के ओंठ कस रहे थे और आंखें फड़फड़ा रही थीं।

सामने वाली बर्थ के सज्जन जो अभी थूकने के लिए मुझे सरका रहे थे, तुमने इन्हें देख कर जो भी कहा, वह मुझे जल्दबाजी में कहा गया लगता है। तुमने बगुले को हंस समझ लिया है। अच्छे हमसफर या पड़ोसी ज्यादा सुकून भी देते हैं, देखो न बेचारे ने किस शराफत से सरक जाने के लिए मिन्नत कर डाली।' अशोक बाबू एकाएक बुरे न बनने के लिहाज से यह कह गये।

मिन्न...त... शब्द को उठा लिया जयाजी

ने अब जरा फुसफुसा कर बोलीं—'अगर उस सब को मिन्नत करना कह रहे हैं तो आप शराफ़त का अंदाज गलत लगा रहे हैं। वहां थूकना उनके लिए सरल था, इसलिए वे पास आये, फिर पीक आपके खींसे में गिर जाती तो उसका बाहर आना कितना कठिन हो जाता, फिर बाहर आना भी संयोग नहीं—बड़े चारित्रिक विश्वास का ज्वलंत क्षण हुआ करता है। मेरे देखते में वह ज्वलंत क्षण आपके पास आज तक नहीं आया, मिन्नत करने वाले लोग अक्सर बिना रीढ़ के होते हैं, वैसे आप में अभी कुछ स्पाईनल-कार्ड बकाया हैं, ऐसा मानती हूं, वर्ना अब तक आप खुल कर चुटकी भर तंबाकू मांग चुके होते इस आदमी से।' कह कर वे जरा विजयी भाव से देखने लगीं, रेल झकझक कर दौड़ी जा रही थी, सामने वाले तंबाकू चबाये जा रहे थे। चपचप उनका चपचपाना अशोक बाबू के लिए मुश्किल बनता जा रहा था, उसे तंबाकू खाते देख वे बेजार हुए जा रहे थे। कितना अच्छा होता कि जयाजी तंबाकू लाना न भूलतीं, इस कष्ट का सामना तो न करना पड़ता। अकड़ने से काम बिगड़ जायेगा, जरा सम्हालना चाहिये बेरुखे सज्जन को। उन्होंने अपना थर्मस खोला और छोटे गिलासों मे चाय उन्हें पहले दी, दोस्ती की अपनी ओर से शुरुआत क्यों न की जाय?

वे हे..हे..हे.. कहते हुए गिलास ले चुके थे। तंबाकू को दूसरे जबड़े के हवाले करते हुए वे चाय पीने लगे, उनकी पत्नी भी सिप करने लगी थी।

जयाजी, बुदबुदा रही थीं, 'पत्थर पर कितना भी पानी डालो अशोक बाबू, बूंद क्या उसका आभास तक नहीं रहता, फिर चिकना घुटाघुटाया पत्थर...ओफ़...'चाय पीने के बाद उन्हें लगा कि वह तंबाकू देगा, उसने तंबाकू की डिब्बी खोली भी, चुटकी में भरी अशोकजी की ओर बढ़ने वाली अंगुलियां सीधे उसी के मुंह की ओर चली गईं। अशोकजी, जीभ बारबार ओठों पर फिराने लगे, थूक गिटकने लगे, माथे पर शिकनें बनने-बिगड़ने लगीं। उन्हें लगा कहीं जंया की बात तो सच नहीं होने जा रही, नहीं वे ज्यादा सोचने लगती हैं, चाय पिला कर इतनी जल्दी भुनाने की कोशिश उन्हें करनी चाहिये थी, जरा उतावलापन दिखता हैं। लगा कि कंजी आंखें कनखियों से उसके तरसते ओठों का, जीभ का, खिंचते गालों का मुआयना किए जा रही हैं।

गाड़ी झक-झक करती भागी जा रही थी, कंजी आंखें चपचप करने से बाज नहीं आ रही थीं। वे बार-बार अपनी गदोरी को मलने लगते, जैसे चूना तंबाकू में मिला रहे हों। सामने वाला आदमी इतना तो समझ गया था कि अशोकजी तंबाकू के शौकीन हैं। न देकर उसे सताने में मजा आ रहा है या वह देना ही नहीं चाहता, मुफ़्तखोरी की परंपरा को आगे नहीं बढ़ाना चाहता, फिर चाय क्यों पी...?

जयाजी रेलडिब्बे से भागते पेड़ों को दूर सहमे बादलों को, कपास और ज्वार के खेतों

को देखे जा रही थीं, बोल कुछ नहीं रही थीं।

तंबाकू बिना अशोक बाबू की बेचैनी बढ़ती जा रही थी, वह रह-रहकर झूठ-मूठ ही गदोरी रगड़ने लगता था, खींसे से अकारण डिबिया निकाल लेता फिर रख देता। कंजी आखों को भौंहों के बांसबन में टांग अशोक बाबू की मुंह में बेचैन जीभ को, खिंचते गालों को, गालों के हड्डों को, पीक थूकने के भ्रम में दबते-खुलते ओठों को देखे जा रहा था।

अशोक बाबू को लग रहा था कि, जान-पहचान अगर आगे नहीं बढ़ाई गई तो यह तंबाकू के लिए तरसा डालेगा। रास्ते में अगर चक्कर आ गया तो जयाजी का क्या होगा? तंबाकू खाई जा रही थी सामने लेकिन जीभ चल रही थी अशोक बाबू की, चपचप से प्रतिध्वनित हो रहे थे, अशोक बाबू, चुटकी बना कर ओठों के भीतर रखने की अदा से घायल हो रहे थे अशोक बाबू। वे मन मसोस कर रह जाते, दिमाग और मन बुरी तरह से बेचैन था।

जयाजी बारी-बारी से तीनों पर नजर घुमाती जा रही थीं। तंबाकू वाले की पत्नी बार-बार पति की आंखों में झांकने की कोशिश करती और कंजी आंखें भौंहों के बांसबन में टंग जातीं। अशोक बाबू अब अपनी पर्स छूने लगे थे, जरा सी तंबाकू खरीद ही क्यों न ली जाय, ये बेचेगा? संकोचवश पूछ नहीं पा रहे थे, फिर भी बात, दोस्ती आगे बढ़ाने के लिए, वे बोलने लगे, मुंह सी कर यात्रा करने वाले वे घोंघा तो हैं नहीं, विलायती सभ्यता के नकलची भी नहीं। जीभ को ओठों से तर करते हुए वे बोल चले 'लगता है, आपको भी तंबाकू का शौक काफी पुराना है, दांतों, मसूड़ों के बीच चूने का इतिहास, तंबाकू के गंध-कोष काफी पुराने लगते हैं, और पीक थूकने का अंदाज थोड़ा-थोड़ा नवाबी लगता है, थूकने के लिए उठना कितना कष्टदायी लगता है। पीकदान होतीं तो कितना अच्छा होता, कोई उठा कर सामने कर देता और आप पच्च से पीक उगल देते और पीकदान बाजू से या कुछ अलग रख दी जाती। पहले तो नवाब लोग पता नहीं पीकदानें साथ ही लिए चला करते, लाव-लश्कर के साथ, उसके बिना सफर अधूरा हो जाया करता।'

अशोक बाबू कहे जा रहे थे, और उसका मुंह देखे जा रहे थे, बातों का कितना असर जा रहा है, कितना पिघल रहा है, पिघलने की संभावना है? उन्होंने फिर सहलाना शुरू करते हुए कहा, 'वाजिदअली शाह की पीक भी क्या पीक थी, कितनी पीकदानियां उपकृत हो जातीं। अच्छी चमकीली पीकदानियों का उन्हें गहरा शौक था, आजूबाजू साथ चलतीं, पास बैठी रहतीं, चमचमाती रहतीं, महकती रहतीं, तंबाकू की खुशबू जिस किसी के हिस्से में आ जाय, वह बागबाग हो उठती, और पीक तो रूह फूंक देती। तंबाकू और पीकदानियों के शौक में नवाबों का कोई जवाब नहीं। ऊंची गिलौरियां ऊंची तंबाकू, ऊंची सुगंधें, ऊंचा किमाम, ऊंची दुकान और फिर

चमचमाती पीकदानें... वल्लाह क्या बात है..., आप में भी तंबाकू खाने का कम से कम ऊंचा मिजाज तो है ही, ये सारे शौक नवाबों से तवारीख से हमें जोड़ते है...'

रेल की झकssझकsउभरती जा रही थी, और कंजी आंख वाला बराबर चपचप किये जा रहा था। वह कनखियों से देखने के बाद अशोक बाबू को लगा वह हंसी को ओठों से बाहर निकलने नहीं दे रहा, लार गिटकती गर्दन, बेचैन ओंठ, खुजलाती गदौरी को वह देखे जा रहा है, परेशान चेहरा उसे अच्छा लग रहा है, जब अशोकजी उसकी ओर देखते होते तो वह ऐसा दिखाता कि वह कहीं और देख रहा है, और उन्हीं के सामने चुटकी भर तंबाकू निकाल मुंह के अंदर कर लेता, वे उसकी हरकतें देखे जा रहे थे, कड़ेपन से बात बिगड़ने की संभावना उन्हें ज्यादा लगती।

फेरी लगाने वाले पान-बीड़ी, माचिस, सिगरेट, ककड़ी, संतरा, हरे चने, चीनाबादाम की आवाजें दूसरे डब्बों में लगा रहे थे, इधर क्यों नही आ रहे कमबख्त... कंजी आंख वाले की श्रीमतीजी को अशोकजी की बातें अच्छी लगीं, उनका लखनौआ अंदाज, नवाबों से जोड़ा गया रिश्ता, हम सफर की उदारता, वे पति की ओर झुकीं और कुछ बोल गईं, लेकिन रेल की गड़गड़ झकssझकs से संलाप अशोकजी सुन नहीं पाये। वे तंबाकू देने के लिए रिकमेंड कर रही थीं, पर उनकी दाल गली नहीं। ऊंचे खानदान का जिंदा वारिस बांट कर खाने की, जीने की जुर्रत क्यों करे... खानदान की शोहरत कम करे? वह नकारात्मक ढंग से सिर हिलाता हुआ बोलने लगा, 'उदारता तब बरतनी चाहिये जब अपनी जमीन पुख्ता हो, अपन देने लायक हों। जब नवाबों के खानदान के लोग तांगे वाले और कुंजड़ों के बीच अपनी हैसियत के परचम लिये बैठे मिलें तो हमें शहनशाही ख्वाबों में जीना नहीं चाहिये, जो कुछ अपना हो, अपना उपार्जित हो वही दिखाना, बोलना चाहिये, समझी... फिर फुकट फंड में लेने वाले बिना मेहनत के कुछ भी हथिया लेने में आजादी के बाद हर जगह मिलने लगे हैं, इसी से भ्रष्टाचार फैलता है, मेहनत करो और पावो...' पत्नी से कहते-कहते कंजी आंखें अशोक बाबू की ओर मुखातिब हो गईं। ये बोल रही थीं कि, आप बहुत अच्छा बोलते हैं, ऐसे लोग सफर में मिल जाने से वक्त बड़े आराम से कट जाता है। आप मुझे नेता तो नहीं लगते लेकिन प्रोफेसर जरूर लगते है, कैसा बढ़िया समझाते हैं... वाह...।

अशोक बाबू समझ गये कि इसने यह बात गढ़ कर कही है। पत्नी ने चुटकी भर तंबाकू देने को कहा होगा। नकारने की अदा को, नेता और प्रोफेसर के लेबल लगा नकार रहा है। ज्यादा बुरा न लगे, कैसा मंद-मंद मुस्काता जा रहा है गंदे पानी की काई पर चमकती रोशनी की तरह हंसी को वे उठा नहीं पाते, लेकिन तेज कह जाना संकट को और बढ़ाना है। दांतों में फंसी तंबाकू की

पत्ती को दो अंगुलियों से वह आ.sआ..sकर निकालने लगा था जैसे दांत का डाक्टर समसी से सड़ा दांत निकाल रहा हो। उसका यह प्रदर्शन अशोकजी के लिए उत्तेजक बन रहा था पर वे उसे भी पी गये।

वह दांत से निकाली पत्ती को इस ढंग से दिखा रहा था कि तलवारों की धार के बीच से फंसी जिंदगी को निकाल लाया है। क्षण भर अशोकजी ने देखा भी। उन्हें लगा वह उसे फेंक देगा, पर वह उसे फिर मुंह में डाल बैठा।

बात-बात में अशोकजी ने बता दिया कि वे युनिवर्सिटी में रजिस्ट्रार हैं, कुछ असर पड़ जाय इस नीयत से, लेकिन वे चपचपाते रहे। और तभी गाड़ी रुकने लगी तो गेट की ओर भागे। पान की दुकान की ओर बढ़े भी, पर वह बंद थी। लौटते वक्त समोसे ले लिए कि कंजी आंख खाते ही पिघलेगी, पसीजेगी, दस रुपये जाते है तो जायें, तलब का बन्दोबस्त तो आपदकाल में होना ही चाहिये।

हें..हें..हें..ss करते हुए फिर उन्होंने समोसे ले लिये, श्रीमतीजी के लिए भी ले लिये, जयाजी खाने लगी थीं, लेकिन उनकी आंखों में शिकायत थी, वे कह रही थीं, नैवेद्य ही नहीं अशोकजी महाप्रसाद भी सामने रख दो इनके, ये पसीजने वाले नहीं, दुरात्माएं अपने रक्तगुणों का बखान अपने कर्तव्यों से कर जाती हैं, आप कितनी भी कोशिश करके देख लीजिए।

कंजी आंख की स्पीड ज्यादा थी, उसने दोनों समोसे दो-ढाई मिनट मे साफ कर दिये, उन्होंने उनकी ओर एक बढ़ा दिया और दूसरा बढ़ाते कि जयाजी ने अपनी ओर झटके से खींच लिया। जयाजी के तेवर देखने के बाद भी सामने वाले सज्जन ने तीसरा समोसा भी साफ कर दिया और बोला, 'क्या ऊंची चीज आप लाये। इस तरह के स्वाद वाले समोसे हमने खाये ही नहीं।' अशोकजी को लगा कंजा पिघल रहा है, पानी पीने के बाद तंबाकू की डिब्बी मेरी ओर बढ़ायेगा ही। नैवेद्य तो शत्रु क्या पत्थर तक को पिघला देता है, फिर ये कंजी आंख। कंजी आंख मुंह की पत्तियों को लार के साथ बाहर जाने ही नहीं देता था। डिब्बी खोल उसने फिर चुटकी भरी और मुंह में डाल लिया। अशोकजी फिर ठगे गये से रह गये।

जयाजी की आंखों में था कि कैसे आदमी हो, खींच लो डिब्बी और निकाल कर खा लो तंबाकू। दूसरे का खाने में दर्द नहीं, अपने खिलाने में देना तो दूर इधर देखता ही नहीं। फिर समोसा काफी दबा गया है, आप डैश तो मारिये।

गाड़ी भागी जा रही थी, दूसरी बेंचों में बैठे इक्का-दुक्का लोग कभी-कभी इधर देख लेते। अशोकजी का चेहरा, जीभ तलब के मारे खिच-खिच आ रही थी, और वह इधर देख कर मुस्काने लगता, उसकी पत्नी खिड़की के पार लगातार देखे जा रही थी, वह किसी के आगे अपनी आंखें नहीं रख पा रही थी।

समोसे का प्रयोग भी इस कदर फेल हो जायेगा, उन्होंने नहीं सोचा था। जयाजी ने कुहनी मारी और पास सरक आने का इशारा करते हुए कहा कि, 'सूटकेस में संदेश मैं रख लाई हूं, पूड़ा खोल कर कुछ दे दो, तुम्हारी हालत तो मेरे से देखी नहीं जा रही, किस धातु का बना है कंजा, राम जाने लोग तो यात्रा में इसी तरह एक दूसरे के निकट आ जाते हैं, एक दूसरे का खाते-पीते मंजिल तय कर डालते हैं, सामने वाले को जरा भी न समझने की बात, दुराग्रह और उपेक्षा से ज्यादा जुड़े लगते हैं।'

अशोकजी ने सूटकेस से पूड़ा निकाल लिया। कंजा पूड़े को खोलते हुए गौर से देखने लगा, कुछ और खाने की चीज आ रही है क्या? वह चप-चप किये जा रहा था।

'जो व्यवहार में या बातों में सिर्फ फायदे ही लेना जानते हैं, सामने वाले की उदारता या बिछने के बाद वे एक झटके में बाहर फेंक दिये जाते हैं, एक किक में ग्राउंड के बाहर हो जाते हैं फिर अंधेरे में खड़े होकर मूंगफलियां चबाते हैं या फुटाने फांकते है। बंधो या बांधों, मिठास घोलो तभी जी सकोगे, रेगिस्तान भी एक नखलिस्तान के नाम पर जीता रहता है, फिर ऐसे लोग जिये तो क्या, न जिये तो क्या?'

जयाजी ने अपनी बात सुनाकर कह दी। उसकी श्रीमती समझी भी, पर वह चपचप करता रहा, चपचपाते समय उड़-उड़कर जाने वाला थूक गालों और नाक पर बैठता जा रहा था, रेल भागी जा रही थी, छोटे स्टेशनों पर लगा वह रुकती ही नहीं है। डब्बों में ककड़ी वाले, मूंगफली वाले, हरा चना रहे बना वाले, कटलेट, समोसे वाले गर्दन में खोंचा लटकाये एक के बाद एक प्रकट हो गये। अशोकजी ने छूटते ही पानबीड़ी वाले को बुलाया और जर्दा मांगा... वह गाये जा रहा था, पान बनारस वाला...पान बनारस वाला...अशोकजी की बात उड़ाते हुए बोला, 'मगही बना दूं...या खर्रा मार दूं...।' अशोकजी ने फिर तंबाकू की बात की, तो बोला, 'साब, खतम हो गया अगले टेसन पर दूंगा...' कह कर उनका मुंह देखने लगा, रूखा हो गया अशोकजी का चेहरा 'तंबाकू खतम हो गई' की बात सुन बुरी तरह लाचार दिखने लगा। सूखा चेहरा कटे खेत-सा निराश लग रहा था।

कंजा भी 'तंबाकू नहीं' बात सुन चुटकी भर देने की जगह फिर कनखियों से अशोकजी की ओर देख मंद-मंद मुस्का गया। इस मुस्कान को दोनों ने देख लिया, जयाजी तो गुस्से में आ खिड़की से पिच्च से थूक भी बैठी, थूकते हुए कंजे ने भी देखा और वह जोर-जोर से चपचपाने लगा। गाड़ी भागी जा रही थी।

जब गाड़ी स्टेशन पर रुकी तो अशोकजी ने एक कोशिश और कर डाली, कैम्पा कोला वाला भागता जा रहा था, उसे बुलाया और चार कैम्पा मांगे वह खोल-खोल देता रहा। कंजा पहले ही ले बैठा था और एक ही सांस में पी गया। उसकी पत्नी धीरे-धीरे पी रही थी। जयाजी उसके जल्दी पी लेने को समझ

गई। वे कुछ बोलतीं उसके पहले ही अशोकजी बोले, 'और लेंगे आप...?'

शर्माते हुए कंजा बोल गया—'नहीं..नहीं.. आपने तो तर कर दिया, साहब... तर..., रास्ते भर आप सेठ लोगों की बरात की तरह स्वागत करते चले आये हैं...' और उसने अब की टेंट में हाथ लगाया, जयाजी समझीं कि वह कैम्पा के पैसे दे रहा है, और अशोकजी समझे कि वह तंबाकू की कोई विशेष डिबिया, या पुड़िया निकाल रहा है, स्वागत से प्रसन्न हो कर। लेकिन वह खुजला कर टेंट को फिर डिब्बी निकाल बैठा, और चुटकी भर मुंह में डाल आंख दबाता हुआ देख गया अशोकजी की ओर। अबकी वह डिब्बी धीरे-धीरे बंद कर रहा था। अशोकजी ने इतनी गहरी सांस छोड़ी की जयाजी ही नहीं उसकी श्रीमती भी उनकी ओर देखने लगी।

गाड़ी भागी जा रही थी, झक..झ्झक ..झ्क..ss क्ल..क्ल.झ्झ्.... झss..ss

कैम्पा वाले को पन्द्रह रुपये देने के बाद अशोकजी खिड़की से टिक गये, सूखे हो जाते ओंठ, बार-बार गिटकी जाती लार, जीभ की परेशानी ही नहीं बन गई थी, अशोकजी अब छत के भन-भन करते घूमते पंखे को, बुझते-जलते बल्ब को देखे जा रहे थे, एक चिड़िया पता नहीं कहां से घुस आई थी, फड़फड़ा कर लगा पंखे से कटना चाह रही थी।

रेल भागी जा रही थी। वे पास आ धीरे से बोल चलीं, 'तीस-चालीस रुपयों के बाद भी चुटकी भर तंबाकू हम खरीद नहीं सके, ऐसे समय रोबेट क्या पत्थर भी पिघल जाता। चुटकी भर तंबाकू देने में कहां दर्द है कहना कठिन है, हम लोग ढूंढ़ नहीं पाये। लेकिन जबड़े के आसपास जमी हुई लार नाक के नीचे पसीने की ठहरी हुई बूंदें तिकोने गालों के व्रणवाले गड्ढों में उड़्-उड़ जमने वाले थूक के छींटे अब मुझे उबकाई देने लगे हैं। आदमी की जात कपड़ों या रहन-सहन से मालूम नहीं होती, बोलने-बताने में भी चालाकी आ जाती है, घटना या व्यवहार इस सब को भीतर ते उधेड़ देते हैं, चीर देते हैं। ऐसे ही लोग ऊंची जात के बनते हैं और बाप की मैयत के खर्च को भी वसूल कर लेते हैं, छोटे भाई से।'

स्टेशन आते ही, जयाजी ने सूटकेस उठा लिया, थके से अशोकजी भी उठे, दरवाजे की ओर सरकने लगे। गाड़ी के रुकते ही कंजे की श्रीमती कह रही थी, और लगा वह अपने को लज्जित अनुभव कर रही थी, 'इतना खाया पिया, कुछ तो बोझ उतार देना था, जरा-सा तंबाकू भाई साहब को देते तो खाल छिल जाती क्या? भाई साहब का चुटकी भर तंबाकू के बिना क्या हाल था, देखा नहीं? तुम्हारे भीतर का आदमी कुछ भी अपना देते मर जाता है, क्या?'

'चुप रह, ज्यादा बक-बक मत कर। दे देता तो विवेकानंद स्मारक जाने तक वह पुरती? कहाँ से लाता फिर चुटकी भर तंबाकू, बोल न..बोल?'

**सीताबर्डी, नागपुर**

□

रोमांचकारी जीवन

# रूमानिया के तानाशाह चेसेस्क्यू

**□ डॉ. भोलानाथ चतुर्वेदी**

रूमानिया के तानाशाह चेसेस्क्यू, जिसको और जिसकी पत्नी एलेना को हाल ही में वहां की सरकार ने मौत की सजा दी, एक रोमांचकारी उपन्यास के नायक के रूप में उभरा और उसका अंत भी रोमांचकारी ढंग से हुआ । चेकेस्क्यू का जन्म रूमानिया के एक गरीब किसान परिवार में २६ जनवरी १९१८ को हुआ, जबकि उस समय का उसका देश प्रथम महायुद्ध की विभीषिका से गुजर रहा था। क्योंकि वह गरीब परिवार में पैदा हुआ था, और मामूली शिक्षा ही पा सका था, इसलिये आरंभ से ही उसके दिल में संभ्रांत तथा उच्च शिक्षा प्राप्त लोगों के प्रति घृणा बस गयी थी, जिसको वह जन्म-पर्यंत दूर नहीं कर सका । राजनीति में उसकी रुचि तब जागी जब वह रूमानिया के कम्यूनिस्ट नेता झौरझियो देज के संपर्क में आया, जिसने १९४५ में रूस सरकार की मदद से नाज़ियों के खिलाफ लड़कर देश की सत्ता अपने हाथ में ले ली थी । तभी चेसेस्क्यू को उप-रक्षा मंत्री बनाया गया और इस तरह उसने सेना पर अपनी धाक जमा ली और अपने खिलाफ लोगों को मौत के घाट उतारा ।उसने किसानों को भी रूसी पद्धति पर संयुक्त-खेती करने के लिए मजबूर किया ।

जब १९६५ में झौरझियों देज की मृत्यु हो गयी तो देश की सत्ता उसके हाथ में आयी । अब उसको इरादे के अनुसार खुलकर खेलने का मौका मिला ।, उसने पुराने गांवों को उजाड़कर बड़े-बड़े उद्योगों को वहां जमाया और ऊंची-ऊंची अट्टालिकायें बनवायीं, जिनके विभिन्न खंडों में किसानों को अपने मवेशी रखने को मजबूर होना पड़ा । कहा जाता है इन अट्टालिकाओं में किसानों को अपने जानवर लिफ्ट द्वारा ले जाने पड़ते थे ।

१९३९ में ही उसने एक सराय के मालिक की लड़की एलेना से शादी कर ली थी जो एक प्रयोगशाला में काम करती थी । लोगों को आश्चर्य तो तब हुआ जब इस मामूली औरत को चेसेस्क्यू ने अपने अधिकार से रूमानिया के सबसे बड़े वैज्ञानिक की उपाधि से विभूषित किया । उसने दूसरे वैज्ञानिकों के काम को अपना जामा पहनाकर दूर देशों में ख्याति प्राप्ति की थी और लंदन तथा न्यूयार्क जैसे शहरों से उसको सम्मान मिला । १९७८ में बकिंघम पैलेस में उसका शानदार स्वागत किया गया, उस पर बहुमूल्य इत्रों का

छिड़काव हुआ और दुर्लभ मिक कोट उसको भेंट में दिये गये। आखिर तो वह लंदन एक महत्वपूर्ण देश की प्रथम महिला के रूप में गयी थी।

चेसेस्क्यू तथा उसकी पत्नी ने देश में सेक्वेरीटेट नामक गुप्तचर पुलिस का संगठन किया, जो इन दोनों के दुश्मनों पर निगाह रखती थी, और उनको नष्ट करने के लिए घृणित से घृणित उपाय काम में लाती थी। संदिग्ध लोगों के घरों में टेप लगाये जाते थे और उनकी बातचीत रिकार्ड की जाती थी। इस दुष्कार्य में पति-पत्नी ने अपने बच्चों को भी न छोड़ा। एलेना अपनी पुत्री जोइया को संदेह की निगाह से देखती थी और विदेशी राजनयिकों की तरह सेक्वेरीटेट उस पर भी कड़ी नज़र रखती थी और उसके कमरे में छिपे हुए संयंत्रों से उसकी भी आवाज़ टेप की जाती थी। जोइया इस तरह के व्यवहार से इतनी परेशान हुई कि वह विक्षिप्त-सी हो गयी और उसको एक मानसिक चिकित्सालय में शरण लेनी पड़ी। बड़े लड़के वैलेन्टिन को भी माता-पिता ने दूर ही रखा और उसको किसी प्रकार का प्रोत्साहन नहीं दिया गया। वह भी अज्ञातवास में अपना जीवन बिता रहा है। इसके विपरीत पति-पत्नी के वे संबंधी जिन पर उनको विश्वास था, बड़े-बड़े ओहदों से सुशोभित किये गये और कुनबा-परस्ती को बढ़ावा दिया गया। चेसेस्क्यू के एक भाई निकोलाई को जनरल का पद दिया गया और एक दूसरे भाई आयोन को देश के नियोजन आयोग का वाइस-चैयरमैन बनाया गया। इस तरह पति-पत्नी के करीब चालीस संबंधियों को ऊंचे-ऊंचे पदों पर बैठाया गया।

जैसे और देशों के तानाशाह और देशनायक चाटुकारों से घिर जाते हैं, वैसे ही चेसेस्क्यू भी चाटुकारों से घिरा रहता था। उसकी ६९ वीं वर्षगांठ पर उसके ऐसे ही एक चाटुकार लेखक ने उसकी तुलना एक दार्शनिक राजनेता से की थी और उसको एक संत की श्रेणी में रखा था। रूमानिया के सरकारी प्रेस ने उसकी तुलना, जूलियस सीज़र, नैपोलियन और क्रौमवेल से की। उसके आलोचकों ने उसको चंगेज खां की तरह आतंकवादी बताया। लेकिन इसको मानना पड़ेगा कि वह अपने समय का सबसे कम उम्र का शासक था तथा उसने २५ साल तक निर्द्वंद्व राज्य किया। वह पोलैंड जैसे आसपास के देशों में स्वतंत्रता की लहर देखकर घबड़ा गया था और एक साल पहले जब पोलैंड में यह हवा बह रही थी तो उसने वहां के नेताओं को इस आंदोलन को कुचल देने के लिए कहा था। पर अब तो पूरा केंद्रीय योरप इस लहर की चपेट में आ गया है।

कहना न होगा कि चेसेस्क्यू तथा उसकी पत्नी एलेना का रहन-सहन किसी शहंशाही घराने से कम न था। चेसेस्क्यू का दो मंजिला महल चालीस कमरों के दायरे को घेरे हुए था। पति-पत्नी अलग-अलग कमरों में सोते थे और दोनों के ऐश्वर्यमय जीवन के

अपने-अपने मापदंड थे।

जैसे ही पत्रकारों को उनके महल में प्रवेश कराया गया, सबसे पहले उनको सोने से मढ़ा हुआ संसार का गुंबद दिखायी दिया और कमरे में चारों तरफ बहुमूल्य फूलदान पड़े मिले। एक तरफ योरप का सबसे मूल्यवान पियानो रखा हुआ था। और कमरों में तरह-तरह के बहुमूल्य चित्र, विभिन्न प्रकार के गहने तथा सोने से मढ़ी हुई मेज-कुर्सिया रखी थीं। स्नानगृहों में सजी हुई टोंटियों से गरम पानी बराबर बह रहा था जबकि कहा जाता है आम जनता को कभी-कभी गांवों के लिए पानी लेने के लिए, राजधानी बुखारेस्ट आना पड़ता था। एलेना के कमरों की तो शान ही और थी। चारों ओर बहुमूल्य कपड़े और फरो कोट पड़े हुए थे तथा सबसे मूल्यवान तो थे उसके जूते जिनकी एड़ियों में हीरे जवाहरात जड़े हुए थे और जो पैरिस से उसके लिए खास तौर से मंगवाये गये थे।

चेसेस्क्यू ने अपने बचाव के लिए अपने महल के अंदर से बहुत दूर-दूर तक सुरंगें बनवायी थीं, जिनका पता लगाने की कोशिश जारी है कि वे कहां निकलती हैं। उनमें भी कहीं-कहीं बहुमूल्य रत्नों का जड़ाव है, और जगह-जगह पर रसद वगैरह का भी इंतजाम। इनमें पता नहीं सेक्वेरीटेट के क़ितने सिपाही अब भी छिपे हुए हैं जिनसे निबटने के लिए काफी सावधानी से काम लिया जा रहा है।

रूमानिया की नई पार्टी काउंन्सिल आफ नैशनल सैलवेशन ने तानाशाही को बिलकुल खत्म कर दिया है और देश में नये सुधारों को लाने का प्रयत्न किया है, जैसे अनाज को देश के बाहर भेजना बंद करना जिससे देश में युद्ध के समय की तरह राशन की व्यवस्था समाप्त हो जाय। आम चुनावों को भी जल्दी कराने की घोषणा की है।

चेसेस्क्यू तथा उसकी पत्नी को मौत की सजा देने के लिए रूमानिया में सैनिक अदालत बिठायी गयी थी, जिसने चेसेस्क्यू से उसके जघन्य अपराधों के लिए काफी पूछताछ की। पहले तो उसने इस अदालत के अस्तित्व को ही नहीं स्वीकारा और सवालों के उत्तर देने में भी टालमटोल करता रहा। पहले तो उसने कहा कि वह एक भी प्रश्न का उत्तर न देगा। जब उससे कहा गया कि उसके शासन में लोग भूखे मर रहे थे और गांववालों को अनाज खरीदने को बुखारेस्ट आना पड़ता था तो उससे यही जवाब देते बना कि यह सब झूठ है और लोगों में देशभक्ति न होने का द्योतक है। जब उससे पूछा गया कि लोगों को गोली मारने के आदेश किसने दिये थे? तो उसने कहा कि वह किसी प्रश्न का उत्तर नहीं देगा। उसकी पत्नी शांत थी और उसने यही कहा कि हम दोनों दया नहीं चाहते, एक साथ मरना चाहते हैं। इसके बाद दोनों को मृत्यु दण्ड दिया गया। हिटलर और मुसोलिनी के सिवाय योरोप में शायद ही कोई ऐसा तानशाह हुआ हो। – सी ६६ ए - निराला नगर, लखनऊ, उ.प्र.

# आंखें

[श्रीमती जगरानी कपूर अब इस दुनिया में नहीं हैं। अपने पुत्र नेत्र-विशेषज्ञ डॉ. आर. के. कपूर (बम्बई अस्पताल) को शिक्षा के लिए विलायत जाते समय उन्होंने आशीर्वाद रूप में उनके सूटकेस में लिख कर रख दी थी। पर आज भी इसकी सार्थकता उतनी ही है, जितनी तब थी।]

☐

आंखों से ही दीप जलाकर, करना पर उपकार ।
आंखों से ही सदा पढ़ोगे, कुल संदेश उदार ।।

आंखों में माता की काया,
आंखों में नारी की छाया,
आंखों में नागिन की माया,

आंखों में ही समझ सकोगे, शिशु का मृदुल दुलार ।

राह चलोगे शूल मिलेंगे,
कहीं-कहीं पर फूल खिलेंगे,
एक चुभेंगे एक छलेंगे,

दो आंखों के बिना अंधेरा, पथ चलना दुश्वार ।

पीड़ित की आंखों की धारा,
मानो गंग-जमुन जलधारा,
जिसमें मज्जन कर जग सारा,

हृदय कलुष को दूर हटा कर, पाता है उद्धार ।
आंखों से ही दीप जलाकर, करना पर उपकार ।

**जगरानी कपूर**

☐

# प्रकृति का कुशल अध्येता: जहांगीर

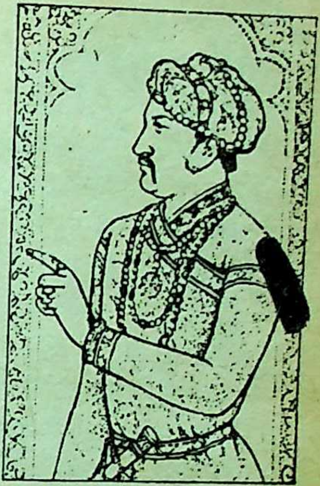

☐ **शुकदेव प्रसाद**

भारत भूमि में अनेक राजे-महाराजे हुए हैं। प्राकृतिक अनुराग और प्रकृति के करिश्मों में बेहद दिलचस्पी लेने के कारण भारतीय राजाओं में जहांगीर का अन्यतम स्थान है। जहांगीर प्रकृति प्रेमी था। प्राणियों के अध्ययन, पर्यवेक्षण में उसकी ऐसी गहन अभिरुचि थी कि वह सहज ही प्राणि - विशेषज्ञ बन गया। हालांकि तब प्राणि - पर्यवेक्षण के लिए वैज्ञानिक सुविधाएं नहीं थीं, अपने निजी अनुभवों पर जहांगीर ने कुछेक ऐसे निष्कर्ष प्रस्तुत किये कि आज हमें उन पर आश्चर्य होता है।

एक प्रसंग है। जहांगीर के मुख्य शिकारी इमाम बिरदी के हाथ एक सफेद तीतर लग गया, लेकिन वह निश्चय नहीं कर सका कि यह नर है या मादा। बिरदी को यह ज्ञात थी कि नर तीतर की टांगों पर नुकीले खांग मौजूद होते हैं, मादा तीतर में यह विशेषता नहीं होती, लेकिन यहां तो मामला पेचीदा था। बात यह थी कि जो तीतर बिरदी ने पकड़ा था, उसकी एक टांग पर खांग था। सो उसने सोचा कि क्यों न जहाँपनाह से ही यह बात पूछी जाय। इसी बहाने उनके पक्षी ज्ञान की परख हो जायेगी। सो वह सम्राट के पास पहुँच गया।

बिरदी ने झुककर आदाब बजाया और 'हुजूर, गुस्ताखी माफ हो,' कहते हुए तीतर उनके सामने कर दिया और पूछ बैठा यह नर है या मादा?

सम्राट ने उसे थोड़ी देर तक गौर से देखा और सहज भाव से बोले - 'मादा है।' बाद में पक्षी को मारकर जब उसका पेट चीरा गया तो उसमें कुछ अंडे मिले, जो इस बात का प्रमाण था कि तीतर मादा थी।

बाद में सम्राट ने खुलासा किया - 'इसके मादा होने का पता मैंने उसकी चोंच से लगाया। चोंचों का सिर बहुत छोटा था।'

वस्तुतः जहांगीर की पशु - पक्षियों के बारे में गहरी परख थी। एक खोजी दृष्टि थी, तभी तो उसने प्राणिजातों का गहन अध्ययन कर के ऐसी - ऐसी बातें लिखीं कि हमें उसे प्राणि विशारद् मानना पड़ता है। किसी राजे - महाराजे का शिकार प्रेम तो स्वाभाविक है, लेकिन पशुओं के बारे में लेखा - जोखा रखना, उनकी विचित्रताओं की जानकारी एकत्र करना, उनके स्वभाव, जीवन चक्र की खोज खबर लेना सचमुच विस्मयकारी हैं।

पशुओं ही नहीं, पेड़ पौधों के बारे में भी जहांगीर की इतनी ही दिलचस्पी थी और उनके वह अपने खास कलाकारों से चित्र बनवाया करता था। प्रकृति अनुरागी जहाँगीर अपने राजसी ठाठ - बाट और शानो - शौकत की जिंदगी तथा राज्य के कार्यो के बीच भी इतनी फुरसत निकाल लेता था, यह बात कम विलक्षण नहीं है।

अपनी आत्मकथात्मक कृति 'तुजुक-ए-जहाँगीरी' में पशु - पक्षियों और पेड़ - पौधों की विचित्रताओं का जिक्र जहाँगीर ने किया है। यह एक राजा के शौकिया जिदंगी की नहीं, अपितु उसके वन्य प्रेम और पारखी नजर की अद्‌भुत दास्तान भी है।

मुगल सम्राट अकबर और आमेर के राजा भारमल की बेटी महारानी जोधाबाई की कोख से जन्मा जहाँगीर गद्दीनशीं होने के बाद २२ वर्ष तक राज करके उसने दुनिया से कूच किया। इस अवधि में उसने कई लड़ाइयां लड़ीं, भ्रमण किया, शासन चलाया, फिर भी अपनी भाग-दौड़ के बीच वह प्रकृति पर्यवेक्षण के लिए कुछ क्षण निकाल ही लेता। कुछ ऐसे तथ्य भी जहाँगीर ने कलमबंद किये हैं कि पूर्णकालिक प्रकृति विज्ञानी भी उसकी उपलब्धियों पर नाज कर सकता है। जहांगीर पर टिप्पणी करते हुए प्रख्यात पक्षी विशेषज्ञ डॉ. सालिम अली ने कहा था - जहांगीर के संस्मरण तो मानो उस समय के भारत के प्रकृति विज्ञान का कोश ही हैं।'

जिन पक्षियों का वर्णन जहाँगीर ने किया है उनमें सर्वाधिक जिक्र सारस का ही है। जहाँगीर जब गुजरात की यात्रा पर था, तब उसने सारस की प्रणय लीला का वर्णन किया है। पक्षी विज्ञान के समूचे इतिहास में जहांगीर ही प्रथम व्यक्ति है, जिसने सारस की संभोग विधि का वर्णन किया है। इतना ही नहीं उसने सारसों की शिशुचर्या का भी रोचक उल्लेख किया है।

जहाँगीर ने अपनी गुजरात यात्रा के संस्मरणों में लिखा है कि बरसात होने के कारण ठंडी बयार से अंडों को बचाने व सुरक्षित रखने के लिए चौबीस घंटे नर - मादा अंडे की रक्षा करते रहे और नर सुबह से दोपहर तक बैठा रहा और उसी दोपहर

से अगली सुबह तक मादा अंडों पर बराबर बैठी रही। सबसे बड़ी विचित्र बात यह थी कि वे पहले अंडों को पेट के नीचे सटाकर रखते थे, किंतु एक पखवाड़ा बीतते-बीतते वे अंडों को कुछ दूरी पर रखने लगे क्योंकि सटे रहने से अधिक गरमी के कारण अंडे कहीं विनष्ट न हो जांय। कैसा सूक्ष्म पर्यवेक्षण किया था जहाँगीर ने!

मादा सारस के प्रति नर सारस कितना प्रेम भाव रखता है, इस बारे में जहाँगीर ने एक बड़ा ही मार्मिक प्रसंग लिखा है। एक बार कियाम खां ने एक सारस को बैठे हुए देखा। जैसे ही वह उस जगह पर पहुंचा, सारस उठकर चला गया। सारस के बैठने की जगह पर कुछ हड्डियां और पंख दिखायी पड़े। उसने उस स्थान पर जाल लगा दिया। कुछ दिन बाद सारस उसमें फंस गया। सारस पकड़ने पर उसने पाया कि उसके सारे पंख झड़े हुए थे। चमड़ा व माँस अलग हो गया था और उनमें कीड़े पड़ गये थे। सारस की संगिनी मर गयी थी। इसलिए उसी दिन से यह उस स्थान पर बैठा था।

जहाँगीर ने अपने पक्षी विज्ञान के शौक के चलते अपना एक निजी चिड़ियाघर बनवा रखा था। छोटी सी छोटी बात का पता लगाने में जहाँगीर घंटों वहाँ बैठा रहता और कभी-कभी तो रात-रात और दिन भर गुजर जाता। ऐसी प्रकृति निष्ठा दुर्लभ है।

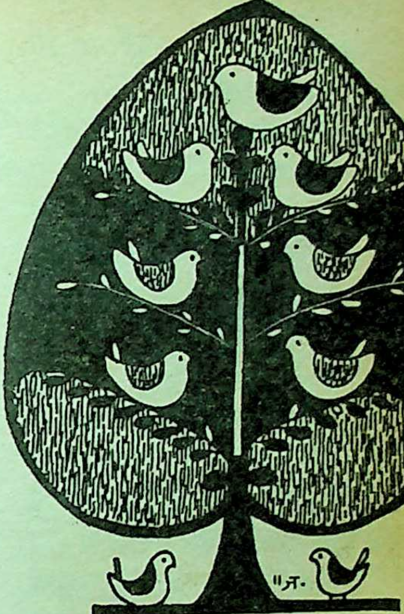

जहाँगीर ने हाथी की सगर्भता अवधि का पता लगाया। उन्नीसवीं शती के मध्य काल तक लोगों को इस बारे में ठीक-ठीक पता नहीं था। जहाँगीर ने पहली बार बताया कि यह अवधि १८-१९ माह होती है। प्रकृति विज्ञान के इतिहास में ये अवधारणाएँ जहाँगीर की मौलिक देन हैं।

जहांगीर ने एक खास किस्म के हिरण का जिक्र करते हुए लिखा है कि इसके चार सींग थे, जिनमें दो उसकी आंखों के किनारे पर, दो अंगुल ऊंचे थे और दो अन्य सीधे चार अंगुल हट कर गरदन की गांठ के पास थे। भारत के लोग इसे 'दुधाधारित' कहते हैं। नर के चार सींग होते हैं, किन्तु मादा के सींग नहीं होते। जहाँगीर ने इस हिरण का नाम नहीं दिया है। कदाचित यह चौसिंगा था।

जहांगीर ने एक बार एक बबर शेर मारा और उसकी अंतड़ियां निकालने पर उसे कुछ अलहदा किस्म का पाया।

आगरा में राजा बीर सिंहदेव एक सफेद चीता जहाँगीर को दिखाने लाये थे। जहाँगीर ने पहली बार अपने जीवन में सफेद चीता देखा था। इसका विवरण प्रस्तुत करते हुए उसने लिखा है कि इसके शरीर पर नीले रंग के धब्बे थे और शरीर भी हल्का नीला रंग लिये सफेद था।

जहाँगीर को अजब-अजब प्रयोग करने में दिलचस्पी थी। 'तुजुक़-ए-जहाँगीरी' के एक प्रसंग से पता चलता है कि जहाँग़ीर ने अहमदाबाद में दो मारखोर बकरे अपने पास रखे थे। और अरब की सात बर्बरी बकरियों से उनका जोड़ा मिलवाया था। छह माह बाद प्रत्येक को एक-एक बच्चा फतेहपुर में हुआ। इनमें चार मादा और तीन नर थे। नर बच्चा फ़तेहपुर में हुआ। इनमें चार मादा और तीन नर थे। नर बच्चों की पीठ पर काली धारियाँ थी। इन बच्चों में खास बात यह थी कि ये सामान्य बकरियों के बच्चों के विपरीत बिना चिल्लाये चुपचाप खड़े रहते थे। पशु-पक्षियों की ऐसी नाना-विचित्रताओं, उनके व्यवहार रहन-सहन, खान-पान, जीवन चक्रों के विवरणों से भरी-पड़ी है जहाँगीर की आत्मकथा।

जहाँगीर जितना जिज्ञासु पशु-पक्षियों के प्रति था, उतनी ही उसकी दिलचस्पी वनस्पति जगत में थी। उसने नाना वनस्पतियों, वृक्षों का जिक्र किया है। विभिन्न स्थान के फलों की तुलना जहाँगीर ने की। जिन पुरुषों ने उसे अपने मोह पाश में बांध लिया, उनके चित्र बनाने के आदेश जहाँगीर ने अपने चित्रकारों को दिये और उन्होंने अपने रंग भरे। असाधारण और दिलचस्प पुरुषों का चित्रांकन जहांगीर ने विशेष रूप से करवाया।

मांडू के किले में जहाँगीर ने एक जंगली केले का जिक्र किया है। ये केले बिना जोती हुई भूमि में लगे रहते थे। इन जंगली केलों से एक प्रकार का मिष्ठान्न बनाया जाता था, जो फालूद के समान सरस और सुस्वादु होता था।

जहाँगीर ने बिहार से लाये गये सोना केला के बारे में लिखा है कि ये लंबाई में एक अंगुली के बराबर होते थे पर अत्यंत मीठे और स्वादिष्ट। दूसरे केलों से इसकी कोई बराबरी न थी। जहाँगीर ने लिखा है कि हिंदुस्तान में बहुत प्रकार के वृक्ष होते हैं, जिनमें सरों, काख, सूफेदवार, अर-अर चिनार, तोह, चंदन आदि हैं। इनकी प्रशंसा जहाँगीर ने की है।

कश्मीर के एक पुष्पोद्यान को देखकर जहाँगीर ने लिखा है कि इसमें सर्वत्र हरियाली थी तथा लाल गुलाब, बनफशा व नरगिस के फूल लगे हुए थे। इस पर मसनवी ने कुछ शेर भी लिखे, जिनका मतलब कुछ इस तरह निकलता है- 'उद्यान की सुदरियाँ सुशोभित हुईं। प्रत्येक के मुख

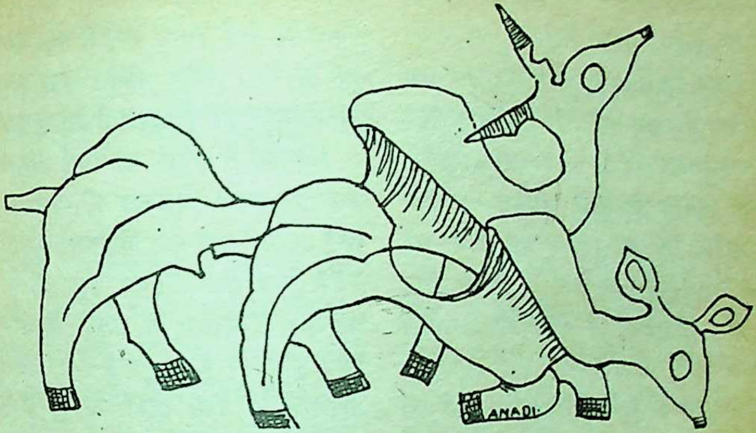

दीपक से प्रकाशमान हो गये। विघावन, फूलों तथा हरियाली से उद्यान बस रहा है। पुष्प रूपी दीपक वायु से प्रकाशमान हो गया है। बनफशा ने जुल्फ के सिरों को टेढ़ा कर दिया है। कलियों के हृदय में गांठें दृढ़ हो गयी हैं।

कश्मीर के ही पास पांमपुर ग्राम में जहाँगीर ने केशर के खेत देखे, जिनमें फूल खिले हुए थे। जहाँगीर ने इसके बारे में लिखा है कि यहां की हवा से मस्तिष्क सुगंधित हो जाता था। इस पुष्प में चार पत्ते थे तथा रंग बैगनी था। यह चंपा के फूल के बराबर होता था। इसके मध्य केशर के तीन तार निकले रहते थे।

नूरपुर नामक एक स्थान पर जहाँगीर ने एक अद्भुत पेड़ देखा, जिसे 'हलथल वृक्ष' कहा जाता था। इसमें विशेष बात यह थी कि जब इसकी एक डाली को हिलाया जाता था तो पूरा पेड़ ही हिलने लगता था।

अपने शासन काल के ग्यारहवें साल जहांगीर ने जब उज्जैन के पास डीह क़ाजियान नामक गाँव में पड़ाव डाला था, तो उसने एक विचित्र पेड़ देखा। हरिद्रा नामक इस वृक्ष का घेरा अट्ठाइस मीटर था। जहाँगीर ने, स्वाभाविक है, इस विचित्र पेड़ के चित्रांकन का आदेश दिया।

नूरअफजा बाग में चार वृक्षों में फल लगे थे। इनका नामकरण करते हुए जहांगीर ने एक को शीरीबार (मीठा बोझ का), दूसरे को खुशगवार (स्वादिष्ट), तीसरे को पुरबार (अधिक बोझ वाला) कहा क्योंकि इसमें अधिक फल लगते थे। चौथे वृक्ष को जिसमें कम फल लगते थे, 'कमबार' कहा।

जब जहाँगीर कोई अद्भुत पंछी देखता अथवा किसी पशु पौधे में कोई तुक नजर आता तो झट से वह अपने किसी चित्रकार को बुलाकर उसका चित्र बनाने को जरूर कहता। उसकी चित्रकार मंडली में जो

सबसे दक्ष और कुशल चित्रकार था, उसका नाम था उस्ताद मंसूर। मंसूर की कला पर खुश होकर बादशाह ने उसे नादिर-उल-अस्र की खिताब अता की थी। जहाँगीर द्वारा तैयार करवायी गई यह चित्रावली आधुनिक प्रकृति विज्ञान के लिए जीवित-संदर्भिका है, लेकिन खेद का प्रकरण यह है ये सारे चित्र तितर-बितर हो गये। मुगलों के पतन के बाद विदेशियों ने यहाँ की अनमोल धरोहरें लूटीं, खजाने लूटे, यहां की कला और संस्कृति को विच्छिन्न किया और जो कुछ ले जा सकते थे, अपने साथ लेते गये। यही हाल जहांगीर की चित्रावली का भी हुआ।

१९५३ में रूसी शोधकर्ता ए.इवानोव ने डोडो के एक दुर्लभ चित्र को खोज निकाला। यह चित्र सोवियत विज्ञान अकादमी के 'इंस्टीटयूट ऑफ ओरिएन्टलिस्ट्स' के संग्रह में था। डोडो कबूतर की जाति का एक पंछी हुआ करता था जो उड़ नहीं पाता था। यह मारीशस में १६ वीं शती में पाया जाता था। १५०५ में जब पुर्तगालियों ने मारीशस की धरती पर कदम रखा तो इस सीधे पक्षी की ओर उनका ध्यान गया और उन्होंने इसे 'डोडो' (बुध्दू) नाम दिया। मानव विहीन इस टापू पर डोडो निर्भय होकर घूमता था और उसे अपने को बचाने के आवश्यकता ही नहीं पड़ी। लेकिन पुर्तगालियों के बाद इस टापू पर आने वाले डचों, फ्रांसीसियों ने बंदूकों, कुत्तों, बंदरों के साथ डोडो पर धावा बोल दिया और मानवीय अतिक्रमण का शिकार होकर यह पंछी १७५ वर्षों में सदा के लिए लुप्त हो गया। अंतिम जीवित डोडो को पक्षी प्रेमी बेंजामिन हैरी ने १६८१ में देखा था।

इवानोव ने डोडो का चित्र खोजा तो जरूर पर उसके चित्रकार को पहचानने का कोई जरिया नहीं था। विशेषज्ञों की धारणा है कि चित्र शैली उस्ताद मंसूर की है, जो जहाँगीर के दरबार में शाही चित्रकार थे। इधर और भी पुष्टि हुई है कि उक्त चित्र मारीशस के पंछी डोडो का ही है, जिसे किसी व्यापारी ने प्रायः १६२४ के आस-पास जहांगीर को तोहफे के रूप में पेश किया था। और उसी का चित्रांकन उस्ताद मंसूर ने किया था, जो अपनी विलुप्ति की तीन शतियों बाद पुनः प्रकाश में आ गया है और इसी बहाने पक्षी प्रेमी जहाँगीर, चित्रकार मंसूर और डोडो की यादें ताजा हो चलीं।

जहांगीर के जीवन के इन प्रसंगों पर दृष्टिपात करने से हमारे मानस-पटल पर उसकी एक संवेदनशील. तस्वीर उभरती है, जो कुदरत के करिश्मों पर हैरान होकर अपनी तमाम व्यस्तताओं के बीच भी प्रकृति के पाश में आ बैठता था। हमें यह कहने में कोई संकोच नहीं है कि जहांगीर प्रकृति विज्ञान का कुशल अध्येता था।

**—विज्ञान वैचारिकी अकादमी,**
**३४, एलनगंज,**
**इलाहाबाद, उ.प्र.**

## इतिहास के झरोखे से:

# जानवरों की याद में स्मारक

**☐ वीरकुमार अधीर**

दिल्ली में इंडिया गेट पर स्थित है शहीद स्मारक, जो उन श्रद्धेय शहीदों की याद दिलाता है, जिन्होंने राष्ट्र-प्रेम में अपने जीवन का बलिदान किया। आगरा में स्थित है शहंशाही प्रणय-भावना की यादगार, जिसका निर्माण मुगल बादशाह शाहजहां ने, ताजमहल के रूप में, अपनी महबूबा पत्नी मुमताज की याद में कराया था। मिस्र के गगनचुंबी पिरामिड अपने फेराओं की याद दिलाते हैं और चीन की प्राचीन दीवार का निर्माण चीन के आदि-सम्राट चिन ने अपनी स्मृति को स्थायी बनाये रखने के लिए कराया था। ऐसे कितने ही मक़बरे और स्मारक सारे संसार में मौजूद हैं, जो किसी न किसी घटना अथवा व्यक्ति की कीर्ति-पताका लहराते हुए अतीत की स्मृति को अक्षुण बनाये हुए हैं। ऐसे ही स्मृति-चिन्हों में वे मक़बरे, समाधियां तथा स्मारक भी हैं, जिन्हें समय-समय पर विभिन्न जानवरों की याद में बनाया गया था। उनमें से आज भी इतिहास के पन्नों की तरह अपनी ओर ध्यान आकृष्ट करते हैं।

महाराणा प्रताप के घोड़े चेतक की कहानी किसी से छिपी नहीं है। मुगल बादशाह अकबर और चित्तौड़ के राणा प्रताप के बीच हुए हल्दीघाटी के इतिहास-प्रसिद्ध संग्राम में इस जुझारु घोड़े चेतक ने, न केवल युद्ध-कौशल में महाराणा का साथ दिया था, बल्कि जब राणा लड़ते-लड़ते घायल हो गये तो शत्रुओं से उनकी रक्षा के लिए युद्ध-भूमि से उन्हें निकाल ले गया था। यद्यपि चेतक स्वयं भी युद्ध में आहत हो चुका था, लेकिन अपनी मृत्यु को रोक कर वह राणा को किसी सुरक्षित स्थान पर पहुंचाने के लिए तेजी से भाग खड़ा हुआ और उसने तभी दम तोड़ा, जब राणा को उस स्थान तक पहुंचा दिया। इस प्रकार उस रणबांकुरे स्वामि-भक्त घोड़े को प्राण त्यागते देखकर स्वयं राणा प्रताप की आंखों में भी आंसू आ गये। उन्होंने अपने उस घोड़े की याद में उसी स्थान पर, जहां उसने शरीर छोड़ा था, एक समाधि का निर्माण कराया, जो आज भी उसकी कीर्ति पताका फहरा रही है।

स्वामि-भक्ति के मामले में सबसे ज्यादा वफादार समझा जाने वाला जानवर कुत्ता है। तब फिर भला उसकी यादगार क्यों न स्थापित की जाती। बर्मा के शहंशाह को

एक बार किसी ने एक कुत्ता भेंट किया। शहंशाह उसे बेहद प्यार करते थे। उन्होंने उसे विशिष्ट शाही उपाधि प्रदान की थी। उस कुत्ते की मृत्यु होने पर बाकायदा मनुष्य की भांति उसका जनाजा निकाला गया और जहां उसे दफनाया गया, वहां एक खूबसूरत इमारत मक़बरे के तौर पर बना दी गयी।

इसी प्रकार मिर्जापुर शहर के निकट मौतिया नामक एक कुत्ते की याद में मोतियातालाब का निर्माण कराया गया था। उस तालाब का निर्माण कराया था वहां के एक सेठ ने। कहा जाता है कि उस सेठ के घर में चोरी हुई थी और चोरों ने उसकी संपत्ति को कहीं दूर स्थित एक पहाड़ की तलहटी में छिपा दिया था। अब यह तो सभी जानते हैं कि कुत्ते में विशिष्ट घ्राण-शक्ति होती है और इसीलिए पुलिस विभाग जासूसी के लिए उसकी इस विशिष्टता का लाभ उठाता रहा है। परन्तु मोतिया ने किसी प्रशिक्षण के बगैर ही अपने स्वामी की संपत्ति वापस दिलाने के लिए अपनी घ्राण-शक्ति का लाभ उठाया। वह अपने मालिक को उस स्थान तक ले गया, जहां चोरों ने उसकी संपत्ति छिपायी हुई थी और इस प्रकार चोरी में गयी उसकी सारी संपत्ति उसे वापस मिल गयी। अतएव सेठ ने उसकी मृत्यु होने पर उसकी याद में इस तालाब का निर्माण कराया।

जानवरों के मक़बरों और स्मारकों में सर्वाधिक विचित्र प्रतीत होते हैं मक्खी तथा जूं जैसे जीव-जंतुओं की याद में किये गये निर्माण। वैसे तो इस श्रेणी के जीव-जंतुओं और कीट-पतंगों से प्रेम करने वालों में अंग्रेजी के विख्यात कवि ओलिवर गोल्डस्मिथ का नाम भी लिया जा सकता है। उसने अपने पालतू एक कीट-पतंग की मृत्यु पर एक 'एलिजी' (शोक कविता) लिखी थी, जो अंग्रेजी साहित्य की अमर निधि है। परंतु एक मक्खी से प्रेम का जो दृष्टांत रोम के कवि पब्लिएस वर्जिलिएस मारो ने प्रस्तुत किया, वैसा संसार में शायद ही कोई दूसरा हो। वह अपनी प्रिय उस पालतू मक्खी की मृत्यु पर शौक-विह्वल हो उठा और उसने एक लंबी शोक-कविता लिख डाली। उसके घर से मक्खी का जनाजा बाकायदा निकाला गया और शवयात्रा में अनेक गण्यमान्य व्यक्ति शामिल हुए। तत्पश्चात, लगभग छह वर्गमील भूमि पर उसका मक़बरा बनाया गया।

इससे भी विचित्र है गुजरात के अन्हिलवाड़ जिले में निर्मित एक जूं के स्मारक की स्थापना। कहा जाता है कि गुजरात का तत्कालीन राजा कुमारपाल पक्का अहिंसावादी और जैन धर्म का कट्टर अनुयायी था। अतः उसने अपने राज्य में किसी भी प्रकार की हिंसा पर कड़ा प्रतिबंध लगा दिया था। एक बार उसके गुप्तचरों ने उसे सूचना दी कि एक सेठ ने अपने सिर से जूं निकल कर उसे मार डाला। सेठ को

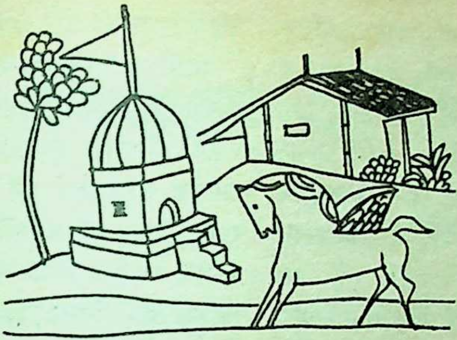

तत्काल पकड़ कर लाया गया और न्यायालय में पेश किया गया। निर्णय के अनुसार हिंसा के इस अपराध पर सेठ की सारी संपत्ति जप्त कर ली गयी और उससे उस जूं की स्मृति में एक देवालय का निर्माण कराया गया।

महाराष्ट्र के जाजूरी क्षेत्र में स्थित एक देवालय में एक शिला है, जिसे 'सवा लाख का भौंरा' कहा जाता है। बताया जाता है कि इस देवालय में यह शिला औरंगजेब ने भौंरों की याद में स्थापित कराई थी। कहा जाता है कि औरंगजेब देवालयों और मंदिरों को तोड़ता हुआ महाराष्ट्र के उस क्षेत्र में खंडेराय के देवालय को नेस्तोनाबूद करने के लिए आगे बढ़ा। परंतु देवालय पहाड़ी पर स्थित था और उसे तोड़ना सहज न था। अतः उसके सैनिक सुरंग लगाकर उसे तोड़ने का प्रयास कर रहे थे। तभी भौंरों के एक बड़े दल ने उनपर हमला बोल दिया। परिणामस्वरूप उन्हें भागना पड़ा। परंतु भोंरों ने उन्हे काटना नहीं छोड़ा और उनके पीछे पड़े रहे। आखिर औरंगजेब ने इसे खंडेराय का प्रताप समझकर जान छुड़ाने के लिए प्रार्थना की और ऐलान किया कि यदि प्रभु खंडेराय क्षमा कर दें तो वह उन भौरों की याद में सवा लाख रुपये की लागत से एक प्रतिमा स्थापित करायेगा। इसके साथ ही भौरों ने उसकी सेना का पीछा छोड़ दिया। बाद में औरंगजेब ने घोषणा के अनुसार उन भौरों की याद में इस शिला की स्थापना करायी।

विश्व में सर्प, नेवले, बैल और यहां तक कि अन्य पशु-पक्षियों के अलावा चूहों और रंगीन तितलियों तक के स्मारक और मक़बरे मोजूद हैं। लेकिन मोरों का स्मारक शायद हमारे ही देश में विद्यमान है, वह भी राजस्थान में। राजस्थान के जिला बीकानेर में स्वर्गीय राजाओं की छतरियों के निकट ही स्थापित एक छतरी पर मोर-मोरनियों के चित्र बने हैं। कहा जाता है कि राजा अनूप

सिंह के अंतिम संस्कार के समय जब उनकी रानियां सती हो रही थीं, तभी प्रज्वलित चिता-कुंड में निकटवर्ती वट वृक्ष से मोर-मोरनियां आ-आकर गिरने लगे। उन्हें लोगों ने आग से बचाना चाहा। लेकिन चिता में से आवाज आयी कि 'ये मोर पूर्वज में हमारे वंशज थे, जो पाप-कर्मों के कारण मोर बनकर जनमे। अतः इन्हें इस अग्नि-कुंड में प्रवेश करने से रोका न जाये।' इस पर लोगों ने मोरों को आत्माहुति से रोकने की चेष्टा छोड़ दी और बात ही बात में उस वृक्ष पर रहने वाले मोरों के अनेक जोड़े चिता में जलकर भस्म हो गये। बाद में उनकी स्मृति स्वरूप मृत राजाओं की छतरियों के साथ ही उस छतरी का निर्माण करा दिया गया।

इसी प्रकार एक अन्य स्मारक राजस्थान में गत वर्ष बनाया गया है एक सर्प-सर्पिणी की याद में। किंवदंती के अनुसार एक गांव में जब एक सर्प आग में जल रहा था, झाड़ियों से निकलकर एक सर्पिणी आयी ओर सर्प के साथ ही सती हो गयी। इस पर गांव वालों ने उसे सती के रूप में समादृत किया और उसका स्मारक बनाकर विधिवत उसकी पूजा की जाने लगी।

धार्मिक आस्थाओं के संदर्भ में अनेक स्थलों पर विविध जीवों के स्मारक और मक़बरे विद्यमान हैं। लेकिन तमिलनाडु में लगभग सत्रह वर्ष पूर्व एक शिवालय में राज्य सरकार की अनुमति से एक हाथी का स्मारक स्थापित किया गया। कहा जाता है कि यह हाथी नित्य नियम से इस शिवालय में आकर शिवलिंग को मस्तक नवाता था और उसके प्रति श्रद्धाभाव व्यक्त करता था। उस हाथी ने कभी किसी मनुष्य को हानि नहीं पहुंचायी। एक दिन इस शिवालय के परिसर में ही उसकी मृत्यु हो गयी। अतः भक्तजनों ने राज्य सरकार की अनुमति से शिवालय में ही उस हाथी की स्मृति स्वरूप उसके एक दांत की स्थापना की।

जीव-जंतुओं के मक़बरों और स्मारकों की यह श्रृंखला शायद कभी समाप्त होने वाली नहीं है, क्योंकि मनुष्य का उनसे किसी न किसी रूप में संपर्क सदा ही रहा है और भविष्य में भी रहेगा। — २-सी

**रेसकोर्स, देहरादून-२४८००१**

□

एक बार देशबंधु चितरंजनदास ने अपने अखबार के लिए शरत बाबू से एक कहानी मांगी। शरत ने कहानी लिखी, प्रकाशित हुई और बदले में शरत को एक कोरा चैक मिला, जिस पर सिर्फ देशबंधु के दस्तखत थे। उन्होंने चैक के साथ एक पत्र भी लिखा जो इस प्रकार था - 'आपकी कहानी के लिए क्या दूं? समझ में नहीं आता, फिर भी यह कोरा चैक भेज रहा हूं, आप जितने चाहे रुपये अपने हाथ से लिख लें।' ऐसे महान कथाकार थे शरत बाबू।

**— डॉ. गोपाल प्रसाद 'वंशी'**

* * *

व्यंग्य वार्ता

# तनख़्वाह का दिन

□ हरीश कुमार 'अमित'

यह तनख्वाह का दिन भी बड़ा अजीब दिन होता है साहब! आप कह सकते हैं कि अजीब क्यों, यह तो बड़ा मुबारक दिन होता है। आख़िर पूरे महीने की मेहनत के बाद आज ही के दिन तो लोगों की जेब गर्म होती है। मतलब यह कि यह तो बड़ा ख़ुशी का दिन होता है।

लेकिन हुज़ूर, अगर हम कहें कि ये तो वो ढोल हैं, जो दूर से ही सुहाने लगते हैं, तो आप क्या कहेंगे। बात यह है जनाब कि तनख़्वाह वाले दिन आदमी तनख़्वाह मिलने तक तो बड़े-२ सपनों में झूलता रहता है। अपनी खाली जेबें खंगालता हुआ सोचता है कि तनख्वाह मिलेगी तो यह लूंगा, वह लूंगा, जो चीज़ें पिछले कई महीनों से टलती आ रही हैं, वे सब-की-सब इस महीने ले सकूंगा।

मगर जब तनख़्वाह मिल जाती है (विभिन्न ऋणों की किश्तें काटने के बाद जो उसने दफ़्तर से लिए होते हैं), तो आदमी बड़ा ख़ुश-ख़ुश-सा उसे अपनी जेब में रखता है!

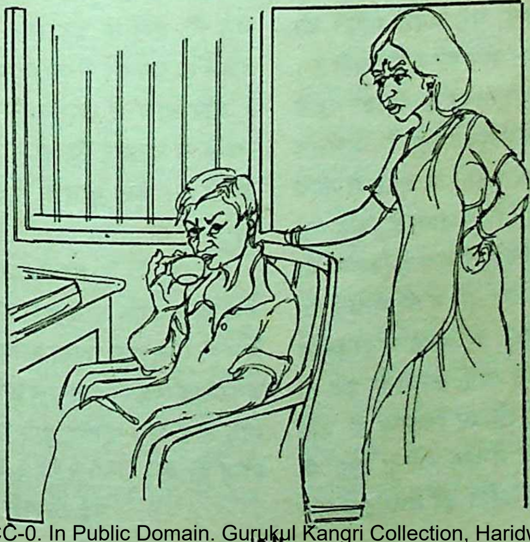

घर पहुंचने तक उसकी बड़ी संभाल करता है। लेकिन घर पहुंचकर चाय-वाय पीने के बाद जब हिसाब-किताब करता है तो उसके छक्के छूट जाते हैं। उसे पता चलता है कि इस पैसे से तो रोटी खाना भी मुश्किल है। अभी तो उसे गांव में अपने घरवालों को मनिऑर्डर करवाना है; कई जगहों से लिए हुए उधार भी चुकाने हैं; वग़ैरह-वग़ैरह, कई-कई चीज़ें ख़रीदने के सपनों के जो महल उसने बनाए होते हैं, वे उसी मिट्टी में मिलते नज़र आते हैं। उसके दिल-दिमाग़ पर बेइन्तहां परेशानी छा जाती है, वह किसी तरह अपने दिल को तसल्ली देता है। रुआंसी आवाज़ में अपनी बीवी को कहता है कि पैसे संभालकर रख लो और एक कप चाय और बनाओ। और फिर बिस्तर पर अधलेटे होकर चाय की चुस्कियां लेते हुए सोचने लगता है कि फलां-फ़लां चीज़ इस महीने तो नहीं ली जा सकती, पर अगले महीने की तनख़्वाह मिलने पर तो ज़रूर खरीद लेनी है।

कई बार तनख़्वाह जब एक-दो दिन पहले मिल जाती है तो बड़ी खुशी होती है। मसलन सरकारी दफ्तरों में महीने के आख़िरी कार्य दिवस को तनख़्वाह मिल जाती है, चाहे वह दिन महीने की आख़िरी तारीख़ से कितना भी पहले क्यों न हो। कई बार यूं भी होता है कि किसी त्यौहार वग़ैरह की वजह से तनख़्वाह और भी जल्दी मिल जाया करती है, तब तो कर्मचारियों की खुशी का ठिकाना ही नहीं रहता। मगर साल में एक महीना ऐसा भी आता है जब उस महीने की तनख़्वाह उस महीने के आख़िर में नहीं, बल्कि अगले महीने के पहले कार्यदिवस को मिलती है। यह महीना होता है मार्च का। मार्च को चूंकि वित्तीय वर्ष समाप्त होता है, इसलिए इस महीने की तनख़्वाह अप्रैल की एक तारीख से पहले नहीं मिला करती। अगर एक अप्रैल को छुट्टी हो तो दो को और दो की भी छुट्टी हो तो तीन अप्रैल को तनख़्वाह मिलती है। सन् १९८८ में तो यह चार अप्रैल को मिली थी। सो मार्च का महीना काटना सरकारी कर्मचारियों के लिए बड़ा मुश्किल पड़ता है। जान सांसत में आ जाती है और तनख़्वाह मिलनेवाली तारीख़ आती नज़र नहीं आती। और खुदाया-खुदाया करके जब तनख़्वाह मिल जाती है तो वही परेशानियां खड़ी हो जाती हैं जो ऊपर गिनवाई गई हैं।

यूं जनवरी से मार्च तक के महीने काटने कर्मचारियों के लिए वैसे भी बहुत मुश्किल होते हैं, क्योंकि इन दिनों इन्कम टैक्स से बचने के चक्कर में ज़्यादा बचत करनी पड़ती है और हाथ में आनेवाली तनख़्वाह हज़ारों रुपयों से घटकर सैंकड़ों रुपयों तक आ जाया करती है। कुछ मामलों में तो यह सौ रुपए से भी कम रह जाया करती है।

अरे, रे, रे, बातों-बातों में हम यह तो भूल ही गए कि आज हमारा भी तनख़्वाह का दिन है। अच्छा, खुदा हाफ़िज़, ज़रा हम भी तनख़्वाह लेकर चन्द पल खुशियों के सागर में गोते लगा लें। उसके बाद तो जो होना है, सो होना ही है। -१२/४६ ए, पंजाबी बाग,

नई दिल्ली - ११० ०२६.

पारिवारिक कहानी

# निबिया अकेल

### □ विनयकुमार तिवारी

कभी-कभी अकेलेपन की सोच के किन्ही खास लम्हों में, कुछ चेहरे चुपके से सामने आ खड़े होते हैं। लोग कहते हैं कि चले हुए रास्ते का और गुजरे-हुए लोगों का मोह कैसा? आते-जाते लोगों में संगी-साथी मिल जाते हैं, बन जाते हैं। होगा-मुझसे नहीं हो पाता यह सब। मेरे अन्दर एक जो निकल भागने वाला यायावर मन बैठा है, उसके चलते यह सब हो पाये तब न फिर कितने लोग ऐसे हैं जो शेखर जैसे हो पाते हैं। तभी तो कमरे क्रे इस निःस्तब्ध मौन में उसकी यादें तिरती आ रही हैं।

लखनऊ की अमीरुद्दौला पब्लिक लाईब्रेरी में अक्सर मैं बैठता था; कभी पत्र-पत्रिकाओं के लिए, कभी उपन्यास साहित्य की अपनी अभिरुचि हेतु। अधिकतर इसलिए भी कि संस्थान से वहां तक पैदल पहुंचने में बामुश्किल दस मिनट लगते थे। आर्गेनिक केमिस्ट्री से ताजातरीन एम.एस.सी. करने के बाद स्थानीय सी.डी.आर.आई. में रिसर्च स्कालर था, मैं। रस रसायनों की क्रिया अभिक्रिया से थककर लाईब्रेरी में आ बैठता। अच्छा स्वाद बदल जाता था। सात बजे के बाद, शहीद स्मारक के तिराहे पर, फारूख चचा की केन्टीन में चाय पीता और दुकान बन्द होने तक उनकी लंतरानियों का रस लेता। तो, शेखर से मेरी भेंट हुई थी, लाइब्रेरी में। वह निकट ही रैक में कोई पुस्तक ढूंढ़ रहा था, शायद। मैं पेन घर भूल आया था और एक जरूरी चीज तुरन्त ही नोट करनी थी। उसे देखकर कहा मैंने –

'बन्धु, क्षमा कीजिए, आपके पास पेन होगी क्या?'

'होगी नहीं, है।' वह सस्मित बोला, 'यह लीजिए। जो वर्तमान है उसे भविष्य क्यों बना रहे हैं आप।'

'धन्यवाद', पेन लेते लेते मैं भी हँस पडा। 'कह तो भाई आप निःसन्देह सही रहे हैं किन्तु व्यवहार में इतना व्याकरण दोष चल ही जाता है।'

'चलने को तो बन्धुवर बहुत कुछ चल जाता है, किन्तु कोई न चलने वाली चीज जब जानबूझकर जबरन चलायी जाती है तब तो हँसी ही आती है, है न? ...खैर लिखें आप।'

काम समाप्त करके देखा मैंने वह अपने आप में मगन था। उसके खुलेपन से मुझे जाने क्यों सहज आकर्षण होता गया था। परिचय की इच्छा सहज विकल हो उठी।

सात बज गये थे। हम बाहर निकल आये। मैंने उसे चाय के लिए आमंत्रित किया तो क्षणभर असमंजस में डूब-उतराकर अन्ततः उसने स्वीकृति दे ही दी। चाय पीते हुए एक दूसरे से परिचित होकर जाना मैंने कि वह के.जी. मेडिकल कालेज, लखनऊ में एम.बी.बी.एस. तृतीय वर्ष का छात्र था। गाजीपुर के एक सुदूर गांव में घर था उसका और भविष्य में वहीं जाकर प्रेक्टिस करने का इरादा रखता था वहां।उसी समय यह बात लक्ष्य किया मैंने कि गांव की माटी की सोंधी गन्ध, सहज संस्कार और शाश्वत जीवन मूल्य उसके अन्दर गहरायी तक रच-बस गये थे।

ग़ज़ब का आकर्षण था उसके व्यक्तित्व में। बोलता तो ऐसे बोलता चला जाता कि प्रभावित हुए बिना न रह सको। हिन्दी-ऊर्दू की मिश्रित शब्दावली, छोटे-छोटे गुंफित संयुक्त वाक्य। उचित उतार-चढ़ाव से युक्त भाषण शैली। सहज और सलोनी अभिव्यक्ति। साहित्य और दर्शन उसके प्रिय विषय थे। चिकित्सा विज्ञान की अपनी पढ़ायी के साथ-साथ, जाने कहां से वह इतनी सारी चीजें एक साथ आत्मसात किये बैठा था। कभी किसी छोर को छूकर बगल हो तो और शेखर महोदय तन्द्रा में आ गये तो क्या कहना। घटनाओं और उदाहरणों के अपने अक्षय कोष से उसने जाने कितनी कहानियों के बेहतरीन प्लाट दिये मुझे कभी-कभी मजाक में कहता भी मैं —

'डा. साब, तुम भी यार कहां फंस गये हकीमी में। तुम्हे तो साहित्यकार होना चाहिए था।'

'हूं तो, भाई' एक मुफ्त हंसी बिखेरता कहता वह, 'संवेदना के स्तर पर डाक्टर और साहित्यकार तो सहोदर भ्राता हैं, बन्धु। हमारी कैंची भी तो उनके क़लम की तरह रचनात्मक वृत्ति की परिचायक है। पर मूल में संवेदनशील तो दोनों होते हैं।'

धीरे-धीरे हम निकट से निकटतम होते चले गये। मोतीमहल के अपने आवास से मुझे फुरसत मिलती तो उसके यहां चला जाता, सी.बी. होस्टल में या वही आ जाता मेरे यहां। और गोमती की जल तरंगों को छू-छूकर आतीं अलमस्त बयार के बीच, यत्नपूर्वक बनाये गये पत्थरों के तट-बंध पर चलते हुए हम मीलों का फासला तय कर डालते। मौज में आकर अक्सर वह एक शेर सुनाया करता था, 'मिल बैठे कुछ देर तो गनीमत इसे समझो, वरना फिर कोई कहीं, कोई कहीं, कोई कहीं है।'

फिर हंसते-हंसते गंभीर होकर कह उठता - 'समझे गुरु! तो खूब हंस बोल लों। कल कौन जाने तुम कहां रहो, मैं कहां रहूं।' आज सोच रहा हूं, सही कहता था वह। मैं यहां आ गया डिग्री कालेज में वह चला गया गांव। कहां मिलना हो पाता है।

आत्मनिरीक्षण के किन्हीं भावुक क्षणों में एक बार, रेजीडेन्सी के निस्तब्ध परिवेश में उसने, अपने विगत जीवन की एक ऐसी अंतरंग पर्त से परिचित कराया था जिसे इतने वर्षों बाद भी बिसार पाना सम्भव न हो

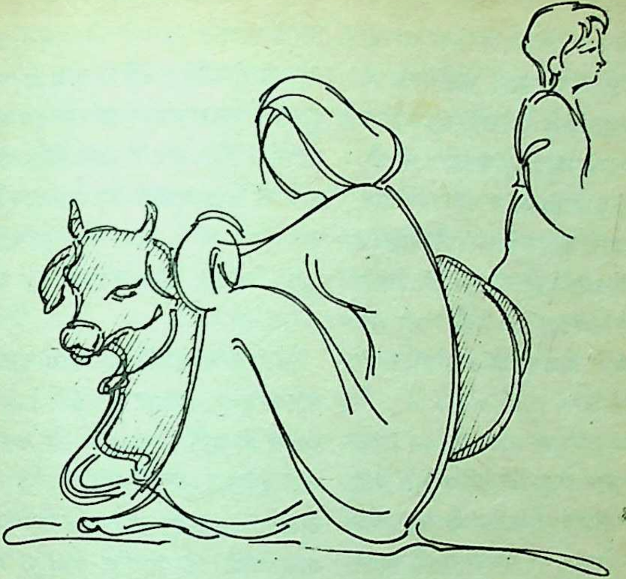

सका।

'गुरु', तनिक अधलेटा होकर अपने बांयें हाथ को सिर के नीचे टेक देते हुए उसने चिरपरिचत सम्बोधन से कहना शुरू किया - 'यूं तो मैं उन सभी लोगों का आभारी हूं जिन्होंने मुझे बढ़ने-पढ़ने और चढ़ने में मदद दिया, किन्तु उन सभी लोगों में स्मृति शेष भाभी का जितना ऋणी हूं उतना शायद किसी का नहीं। वे मेरे लिए एक ऐसी वातावरण थीं, जहां पहुंचकर मैं ताजी हवा पाता था, और पाता था नयी ऊर्जा।' उसकी आंखें दूर अतीत में जा टिकी थीं और तंद्रिल अवस्था में बोले जा रहा था वह।

'चमेली की फूल थीं भाभी। सुगन्ध प्रकीर्ण उनकी सहज प्रवृत्ति थी, उत्स था उनका। भइया ही गुण के और गुणी के ग्राहक न हुए, तो किसे दोष दें। भाभी के बारे में जितना सोचता हूं, श्रद्धा उतनी गहराती चली जाती है और उतना ही भइया के प्रति आक्रोश उमड़ता है।'

'क्यों?' मैं सहज उत्सुक होकर प्रश्नायी आंखों से देखने लगा।

'बताता हूं, सुनो।' उसने छूटे छोर को फिर पकड़ते हुए कहा -'भइया और मेरे बीच बीसेक वर्षों का अंतराल तो है ही, उम्र के लिहाज से देवनागरी की डोर पकड़कर जब मैंने, गांव की पाठशाला में अपनी शिक्षा प्रारम्भ की थी, तब तक वे बी.ए. के फाइनल इअर में थे, हिन्दू विश्वविद्यालय, बनारस में।'

'अच्छा...फिर?'

'तो, गांवों की एकनिष्ठ परम्परा यह होती है कि लड़के को जल्दी से जल्दी विवाहित कर दो। इन सबके बीच, इतने वर्षों तक भी भइया अविवाहित कैसे रह पाये, इसके पीछे भी वस्तुतः पिताजी का ही हाथ रहा। तो भी, रिश्तेदारों का जोर निरन्तर पड़ रहा था। बाबा की इच्छा तो थी पर वे भी जाने क्यों चुप बैठे थे। जब भड़के तब तय ही कर लिया उन्होंने शादी। भइया के भावी ससुर को सम्बोधित करके, क्षणभर में आश्वासन की डोर थमा बोले वे –

'हं..सरपंच, नाती का ब्याह हम तय करते हैं। देखते हैं कौन रोकता है हमें।' तो, भाई उन्हें रोकता कौन? और वह भी तब, जब उस संयुक्त परिवार पर उनका एकाधिकार था। शादी तय पा गयी। एक निश्चित तिथि में तिलक का कार्यक्रम भी सम्पन्न हो गया।'

'भइया तो बड़े हो चुके थे उनसे नहीं पूछा गया कुछ?'

'न...उनसे तो नहीं पूछा गया। फिर भी वे मौजूद तो थे ही और उनके मौन से स्वीकृत का ही अर्थ लगाया गया। वैसे भी तब अभिभावक का निर्णय ही सर्वमान्य होता था। हां, एक बात और बता दूं। भइया जरूरत से भी ज्यादा गंभीर रहते थे। एक ऐसा आवरण उनके इर्द-गिर्द घिरा रहता कि चाहकर भी न जान सके कि सामने वाले आदमी की कैफियत कैसी है? ऐसे, खोल में छिपे रहने वाले लोगों के लिए हमारी स्थानीय बोली में, 'घुन्ना' कहा जाता है। तो भइया भी पूरे घुन्ना थे। नौकर-चाकर उनसे ऐसे डरते थे कि हाड़ कांपता था सबका। मैं तो खैर उनके सामने पड़ने से ही कतरा जाता था। वैसे भी मैं घर रुकता ही कब था अधिक। वे दूसरों से मतलब ही कहां रखते थे ज्यादा। मां भी नहीं कि रोकती-टोंकती। मैं बेलगाम घोड़े की तरह घूमता-फिरता था। घर से मेरा नाता तब खाने और सोने से अधिक नहीं रहा।' शेखर सांस लेने के लिए रुक गया।

'हां-तो?'

'तमाम-तमाम ताम-झाम लादकर बीसों बैलगाड़ियां, विवाह के तीन दिन पहले ही रवाना हो गयीं। चावल-दाल, लकड़ी-कंडा, चर-चबेना, लादे-फांदे, रास्ते में पड़ाव डालते, बरात पहुंची। मुझे खूब याद है कि मैं बाजे-गाजे में भागता फिरता था इधर-उधर। खूब मजा आया। भाभी, विवाह में ही विदा हो आयीं। शुरुआत में चार-पांच दिनों तक तो खूब भीड़ रही। भाभी को देखने की इच्छा कभी-कभी जोर तो मारती किन्तु कुछ मेहमानों से और बहुत कुछ संगी-साथियों के उपद्रवी स्वभाव, ऐसा हो पाना सम्भव न हुआ। भइया दो दिनों बाद फिर बनारस चले गये।' वह फिर रुका और सांस लेकर दूब पर पूरा पसर गया।

'छह-सात दिनों बाद मेहमान भी चले गये सब। मैं पहले घर में सोता था दादी के पास। भाभी के आ जाने से अब कभी पिताजी के पास सो रहता, कभी बाबा के पास। शरमाता था, भाई।'

'अच्छा!' मैं भी मुस्करा उठा।

'तो एक रात काफी देर से सोया था। थका-हारा था खूब। सुबह नींद खुली। खूब घाम चढ़ जाने पर, यही कोई नौ बजे। स्कूल जाना था। नल पर जल्दी-जल्दी हाथ-मुंह धोकर, दातून करने जा रहा था। तभी लगा पीछे कोई खड़ा है। देखा तो भाभी थीं। ऐसा हड़बड़ाया कि लोटा दूर गिरा जाकर नाली में। नल की हैंडिल न पकड़ लेता तो मैं ही शर्तिया चोट खा जाता। भाभी धीरे से हंस पड़ीं और कहा –

'अरे! लाला, तुम तो ऐसे डर गये जैसे मैं कोई भूतनी हूं।' मेरा हाथ पकड़ बड़े अपनापे से बोलीं वे – 'और हां, तुम घर-बार क्यों छोड़ बैठे हो? मैं तुम्हें सन्दूक में बंद कर लूंगी क्या? कभी रुकते ही नहीं। बौड़म की तरह दिन भर घूमते-फिरते हो। न खाने की सुध, न पहनने की फुरसत।' शेखर ने हंसते हुए कहा – भाभी बोलीं - 'इसी शकल से पढ़ने जाते हो क्या महाराज? अब दातून कर लो, पर भाग मत जाना। तुम्हे नहलाना है समझे?' वह फिर पूर्ववत गंभीर हो उठा था।

'अब एक-एक बात का ब्यौरा क्या दूं। बन्धु, यह जो खण्ड-खण्ड परिचय है न। ये सब मेरी स्मृति के वे बिन्दु हैं जो चाहकर भी भुला नहीं पाता। पता नही, मैं स्नेह का भूखा था इसलिए ऐसा हो रहा था। भाभी में थी ही ऐसी आत्मशक्ति कि उनकी सब बातें मैं मन्त्रविद्ध सा मानता। जितना स्नेह दिया भाभी ने उसे शब्दों में बांध पाना बड़ा कठिन लग रहा है। पांच साल के बचपने से लेकर बीस साल की वय तक जो मेरे साथ परछायीं की तरह डोलती फिरी हैं, वे भाभी थीं। वरना किसी बेहद लापरवाह और घुमन्तू जीव को इकट्ठे बांध कर रख पाना क्या इतना आसान होता है। कहानियां तो जाने कितनी याद थीं भाभी को। कभी बूढ़ी भठियारिन की, कभी राजा नल की, कभी बौने जादूगर की। बुझौवल की तो भंडार ही थीं जैसे। मुझे किसी पहेली के भ्रमजाल में उलझा कर, स्वयं बगल हो जातीं। और उत्तर की खोज में हाथ पांव मारते देख हंसती रहतीं। मोहक स्निग्ध हंसी। मैं थककर हार मानता तब बतातीं कहीं। कहानियां सुनते-सुनते, पहेलियां बूझते मैं उन्हीं की चारपायी पर नींद की गोद में चला जाता तब जाकर उनकी कथा यात्रा समाप्त होती।'

'भाई साहब तो घर आते थे न?'

'हां'- उसने दीर्घ निश्वास छोड़कर कहा, 'पर बहुत कम। आकर भी वे इतने अनमने रहते। सदैव से खुश-खुश रहने वाली मेरी भाभी भइया के आ जाने से तब उतना क्यों उदास हो जाती थीं। क्यों उनके चेहरे पर हफ्तों तक कान्ति वापस न आती थी। इस सब का रहस्य बाद में जाना कि भइया ने उन्हें परित्यक्त कर दिया था। बहुत बाद में समझा कि अपने स्नेह निर्झर का शीतल जल प्रदान करने वाली मेरी भाभी स्वयं के जीवन में, कितनी मारक त्रासदी झेल रही थीं। उन वर्षों में भइया और पिताजी के बीच जो अघोषित शीत युद्ध हो रहा था वही कालांतर में भीषण गृहदाह के रूप में प्रकट हुआ।

शेखर रुका तो उसका चेहरा आवेशित था।

'किन्तु, भइया ने उन्हें आखिर परित्यक्त किया क्यों ?' क्रान्तिक स्थिति में आकर घटनाक्रम में क्षणिक व्यवधान भी अब असह्य था मुझसे।

'क्यों किया ?' शेखर विद्रूप भाव से बोला, 'किया उन्होंने अपनी विवेकहीन महत्वाकांक्षाओं के चलते। किया उस सोच की खातिर जिसमें अपने स्वार्थ के आगे दूसरों के सब अधिकार नष्ट हो जाते हैं। उस सुपीरियारिटी काम्पलेक्स के लिए जो ग्रामीण संस्कारों के सर्वथा विपरीत थी।

'मुझे याद है, अंतिम बार जब वे घर आये थे तो पिताजी से काफी झगड़ा हो गया। तमाम ऊंच-नीच समझाने के बाद भी उन्होंने भाभी को स्वीकार करना मंजूर किया ही नहीं। उसी रात चले गये बनारस फिर आये ही नहीं।

'पहले यह सोचा गया कि गुस्सा उतरने पर वे खुद ही आयेंगे। फिर दो-तीन महीनों बाद पिताजी बनारस गये तो मालूम हुआ कि अपने किसी विदेशी सहपाठिनी के साथ वे नाइजीरिया चले गये थे। वस्तुस्थिति यह थी कि उनका प्रेम प्रकरण तो काफी वर्षों से चल रहा था, किंतु आश्चर्य यह है कि उसकी भनक घर के किसी प्राणी को नहीं थी।'

'पर भाभी को तो निरपराध दण्ड भोगना पड़ा।' मैं स्वयं आवेशित हो उठा।

'हां...यही तो...मैं कहता हूं... अगर भाभी से जुड़ नहीं पाये तो इसमें दोष किसका है ?' फिर विरोध ही करना था तो पहले क्यों नहीं किया ? ऐसे ही बड़े फन्ने खाँ थे तो बोलते कुछ। कोई अल्प वयस का लड़का, ऐसी हरकत करता तो उसे एक बार माफ भी किया जा सकता था पर वे तो वयस्क थे, अपने पक्ष पर कुछ कहते तो। जिस खोल में छिपकर उन्होंने यह घोर अपराध किया वह कितना अमानवीय है। एक सम्पूर्ण सहचर की जितनी मांगें होनी चाहिए, सब थीं भाभी में। फिर किसी के साथ चलने का वायदा करके उसे बीच रास्ते में छोड़कर भाग जाना क्या न्याय संगत है ? पत्नी कोई खूंटे से बंधी गाय है क्या ? कि उसे वृत्त परिधि पर घूमते रहने के लिए विवश छोड़ उड़न छू हो जाओ। बड़ी भदेस है यह-पलायन वृत्ति। उससे भी भदेस उनका अपनी संस्कृति से विरोध। यह मरीचिका उन्हें ताउम्र भटकाती रहेंगी। ऐसे व्यक्ति कमी शक्ति तो पा ही नहीं सकते।'

'फिर भाभी..?'

'होना जो था वही हुआ। तिल-तिलकर गलने लगीं वे। इन स्थितियों का सबसे अधिक असर पड़ा बाबा के ऊपर। उन्होंने तो बहुत कोशिश की, समझाया-बुझाया भाभी को कि देखो बहू, अभी कुंए-ताल सी जिंदगी जाने कब पटे, दूसरा विवाह ही करवा दें तुम्हारे पिताजी से कहकर। पर वे नहीं मानीं। तनिक तुम्हीं सोचो... यादों की वे भी तिक्त यादों की टूटी वैशाखियों पर कोई उम्र का कितना लम्बा पड़ाव तय कर सकता है। भाभी तो हंसना जैसे भूल गयी थीं। हां कभी-कभी पीड़ा घनीभूत हो जाने पर वे गाने लगतीं। सब सुध-बुध खोकर।

'सखियां सहेलियां बिसरि गयीं
बाबा रे ! रहि गइल निबिया अकेल...
अपने लिलरिया मा धावै लिखा है वा
सब रे करमवा के खेल...'

आरोह की ओर अग्रसर उनका स्वर, गीत के अन्तिम बन्द पर पहुंचकर जब अवरोह में आता तो 'अकेल' को किंचित लम्बा खींच कर वे रो पड़तीं। मैं बेचैन हो उठता।

'भाभी' संवादहीनता की उस स्थिति में उनके पैरों के पास बैठकर मैं स्वयं अनाथ दुख से सराबोर हो जाता।

'लाला जी ! अभी तुम न जान पाओगे, कितने छोटे तो हो अभी। सब सखी सहेली छूट गयीं, लाला। निबिया के करम में ही अकेला रहना बदा था। कौन विधि का लेखा मिटाये।' या कभी वे अतीव भावुक हो कह उठतीं – 'इस जीवन से मन भर गया लाला, अब। तुमको पुत्र सा पाला है। कोख के जाये तुम जरूर नहीं हो मगर वही सबका कहां हो पाता है ? तुमसे कभी कुछ मांगा नहीं। सच पूछो तो प्राप्तव्य मेरे हिस्से में तो जैसे है ही नहीं। आज तुमसे एक चीज मांगती हूं, तुम पर मेरा अधिकार है इसलिए, तुम दोगे ही इस वजह से। मेरी मृत्यु के बाद मुखाग्नि तुम्हीं देना, यह मेरी इच्छा है।'

'भाभी, मां को देखा नहीं। कैसी थीं याद नहीं। पर आप मेरी मां समान ही हैं। एक संबंध होता है मन का, उससे मैं आपको मां मानता हूं। मृत्यु जैसी बात फिर न निकालना मुंह से।'

'अब जीकर भी क्या करूंगी, लालाजी। और किसके लिए जिऊं ? कभी-कभी बड़ी तीव्र इच्छा होती है कि एक बार भइया से तुम्हारे फिर भेंट हो जाती तो पूछती कि ऐसी सजा क्यों दी उन्होंने। मैं आदमी नही हूं, देवी हूं क्या। यह दुख, यह पीड़ा, यह फांस बहुत खटकती है, लालाजी। अब नहीं सहा जाता !'

उपसंहार के लिए शेखर ने दीर्घश्वास लिया तो मैंने देखा उसके चेहरे पर पीड़ा के स्पष्ट लक्षण थे।

'बन्धु, उन बीती बातों को आज याद करता हूं तो मन जाने कैसा-कैसा हो जाता है। घोर व्यथा ने भाभी को ब्लड प्रेशर का मरीज बना दिया। कहां-कहां दवा नहीं करायी उनकी। वहां बनारस मेडिकल कालेज से दिल्ली आयुर्विज्ञान संस्थान तक। किन्तु जो तन से अधिक मन से अस्वस्थ हो उसे कौन ठीक कर सकता है, भाई ? आखिर तीन साल पहले वे भौतिक रूप बिछुड़ गयीं। अपनी निर्वाण रात्रि में, उन्हें मृत्यु का पूर्वाभास हो गया था। मुझे चम्मच में दवा डालते देख बोलीं –

'रहने दो लालाजी, अब मुक्त हो रही हूं मैं। तुम मुझे बंधनों में नही बांध पाओगे। तनिक और निकट आ जाओ मेरे, तुम्हें फिर प्यार कर लूं। एक तुम्हीं हो बहुत अपने लगते हो।' और मेरा हाथ पकड़े-पकड़े निष्प्राण हो गयीं वे। मैं चीख उठा।

समय का लंबा अंतराल तय करके जब मैं डाक्टरी पढ़ने यहां आया था तो भाभी जीवित थीं। यह जानकर खुश-खुश बोलीं – 'शाबास लाला, जी जुड़ा गया आज। अब

तुम जल्दी से डॉक्टर बन आओ तो पहले मुझे ठीक करो।'

'कौन जानता था,' शेखर सजल नेत्रों से बोला, 'कि वह सब एक भ्रम मात्र था। एक ऐसा विभ्रम, जहां पहुंचकर हम आश्वस्त हो जाने की भूल कर बैठते हैं।' शेखर ने वाणी को विराम दिया तो उसकी आंखें भर आयीं। और हम भरे मन से उठकर चाय की दुकान की ओर चल दिये।

कौन जाने, घटना आपको नितांत साधारण सी लगे। कहीं पर कथानक की मार्मिकता आपको छू सकी कि नहीं यह आप जानें, पर इतना तो कहूंगा ही कि भाभी के दुख में मैं जलकुम्भी की तरह देर तक डूबा-उतराया। इस घटना को याद करके आज भी, बेचैन हो जाता हूं।

— दंतविभाग,
उच्चीकृत प्राथमिक
स्वास्थ्य केंद्र, तरबगंज,
गोण्डा, उ.प्र.

□

# बापू और बा

कुछ दिन बापू मगनवाड़ी जाकर कुमारप्पा के पास रहे थे। मगनवाड़ी में गांव की दस्तकारियां सिखायी जाती हैं। उन दिनों वहां सब लोग रोज के सब कामों में भाग लेते थे। रसोई से बरतन तक मांजते थे। एक दिन यह काम करने की बारी गांधीजी की आयी। कुमारप्पा उनके साथी थे। दोनों ने कुएं के पास सब बरतनों का ढेर लगाया। फिर नारियल की जटाओं का जूना बनाया। उसे राख और मिट्टी में सान कर बरतनों की कालिख छुड़ाने लगे। बरतन बड़े-बड़े थे। खूब रगड़ना पड़ा। कोहनियों तक हाथ कीचड़ में भर गये।

इसी समय कस्तूबा गांधी उधर आ निकलीं। कुछ मिनट तो बुत बनी वह चुपचाप इस अनोखे नजारे को देखती रहीं। फिर एकाएक बापू पर बरस पड़ीं, बोलीं, 'आप जैसे आदमी को यह काम शोभा नहीं देता। और बहुत से काम करने को पड़े हैं। यहां से उठकर जाइये और अपना काम किसी और को करने दीजिये।'

फिर बड़ी तेजी के साथ आगे बढ़कर उन्होंने बापू के हाथ से देगची छीन ली। यह सारा काम इतनी फुर्ती से हुआ कि बापू दंग रह गये। हाथ में जूना लिये वह कुछ देर कुमारप्पा की ओर देखते रहे, फिर हंस पड़े। बोले, 'कुमारप्पा, तुमने शादी नहीं की। तुम सुखी हो। तुम किसी के ताबेदार नहीं। पर मुझे तो घर में अमन रखना है। इनका कहना मानना ही पड़ेगा। अच्छा भाई, माफ करना। अब ये ही मेरी जगह बरतन मांजेंगी। मैं चला।'

— डॉ. गोपाल प्रसाद 'वंशी'

* * *

# पं. बद्री नारायण तिवारी से बातचीत

□ डॉ. आशाराम त्रिपाठी

बचपन में ही भर्तृहरि के नीतिशतक का यह श्लोक

> मनसि वचसि काये पुण्यपीपूषपूर्णा –
> स्त्रिभुवनमुपकारश्रेणिभिः प्रीणयन्तः ।
> परगुर्ण परमाणून्पर्वतीकृत्य नित्यं
> निजहृदि विकसन्तः सन्ति सन्तः कियन्तः ।।

मुझे कण्ठस्थ तो हो गया था किन्तु उस पर मनन–चिन्तन उम्र के बीस वर्ष के बाद आरम्भ हुआ और जब चिन्तन आरम्भ हुआ तब जहाँ जहाँ भी जाने का अवसर मिला मन, वाणी और कर्म से उपकार से लोगों को प्रसन्न करने वाले, दूसरे के गुणों को बहुत अधिक समझने वाले सन्तों की खोज करता। बचपन से आज तक इनेगिने लोग ही मिले हैं जो दूसरों की बड़ाई ही किया करते हैं, दूसरों की भलाई करने के लिए वे सदा तैयार रहते हैं, भलाई करके भूल जाते हैं, दूसरे के दोषों को छिपाते हैं तथा गुणों को उजागर करते रहते है – ऐसे ही एक गृहस्थ संत है – विनम्र, गुणी, परोपकारी परन्तु परम संकोची स्वभाव वाले मानस – मराल–पं. बद्री नारायण तिवारी, जो मानस--संगम के संस्थापक भी हैं, उनसे एकान्त के क्षणों में बातचीत करने का सुअवसर मिला। प्रस्तुत है उन्हीं सौभाग्यशाली क्षणों में की गयी बातचीत।

**प्रश्न** : तिवारीजी, श्रीराम के प्रति, मानस के प्रति आस्था कब से आरम्भ हुई, प्रेरणा कहाँ से, किससे मिली ?

**उत्तर** : त्रिपाठीजी, सन १९६० के आसपास की बात है, उस समय मेरी अवस्था २५-२६ वर्ष की थी। मैं अपनी बहन श्रीमती करुणा मिश्रा (राजापुर, बाँदा) के यहाँ अनेक अवसरों पर जाया करता था। उनके यहाँ का वातावरण राममय रहता था। उनके घर प्रायः श्रीरामचरित मानस के चुने हुए अंशों का पाठ हुआ करता था जैसे–

**मंगल करनिं कलि-मल हरनि तुलसी कथा रघुनाथ की ।**

* * *

एकु छत्रु एकु मुकुटमनि सब बरननि पर जोउ ।
तुलसी रघुबर नाम के बरन बिराजत दोउ ।।

* * *

रामनाम मन दीप धरु जीह देहरी द्वार ।
तुलसी भीतर बाहेरहुँ जो चाहसि उजियार ।।

* * *

नामु राम को कल्पतरु कलि कल्यान निवासु ।
जो सुमिरत भयो नाम तें तुलसी तुलसीदासु ।।

इन पंक्तियों ने बरबस मेरे मानस पटल पर अपना स्थान बना लिया। पता नहीं क्यों मेरा मन उधर आकृष्ट होने लगा मानस और श्रीराम की ओर। ऐसा ही एक अन्य अवसर आया। मैं बहन के घर पहुँचा, वहाँ मानस का पाठ हो रहा था। बालकाण्ड का पाठ चल रहा था। उसमें से कुछ पंक्तियों ने हठात मेरे मन को अपने वश में कर लिया।

**प्रश्न** : वे कौन सी पंक्तियाँ थीं, तिवारीजी ?

**उत्तर** : त्रिपाठीजी, सुनिए ।

रामकथा मन्दाकिनी चित्रकूट चितचारु ।
तुलसी सुभग सतेह बन सिय रघुबीर बिहारु ।।
राम चरित चिंतामनि चारू । संत सुमति तिय सुभग सिंगारू ।

* * *

सेवक मन मानस कराल से। पावन गंग तरंग माल से ।।

इस तरह मेरा मन मानस से ओतप्रोत हो गया। भगवान श्रीराम के प्रति आस्था बढ़ने लगी।

**प्रश्न** : तिवारीजी, 'मानस संगम' की स्थापना किन परिस्थितियों में हुई ?

**उत्तर** : यह प्रश्न पूछकर आपने मुझे पुरानी स्मृतियों में कुछ क्षण खो जाने का अवसर दिया है। बात सन १९६० के आसपास की है। पं. गोविन्द वल्लभ पन्त 'तुलसी स्मारक समिति' के अध्यक्ष, श्री चतुर्भुज शर्मा मन्त्री थे। उसी समय मैं उस समिति से जुड़ा।

**प्रश्न** : उसके बाद क्या हुआ ?

**उत्तर** : उसके बाद मानस के प्रति दिन प्रतिदिन लगाव बढ़ता गया। मानस प्रेमियों से सम्पर्क बढ़ता गया - हिन्दी के परम समर्थक कामिल बुल्के, चतुर्भुज शर्मा से बहुत घनिष्ठ हो गये।

**प्रश्न** : कृपया बताएँ, 'मानस संगम' का अंकुरण कहाँ से हुआ ?

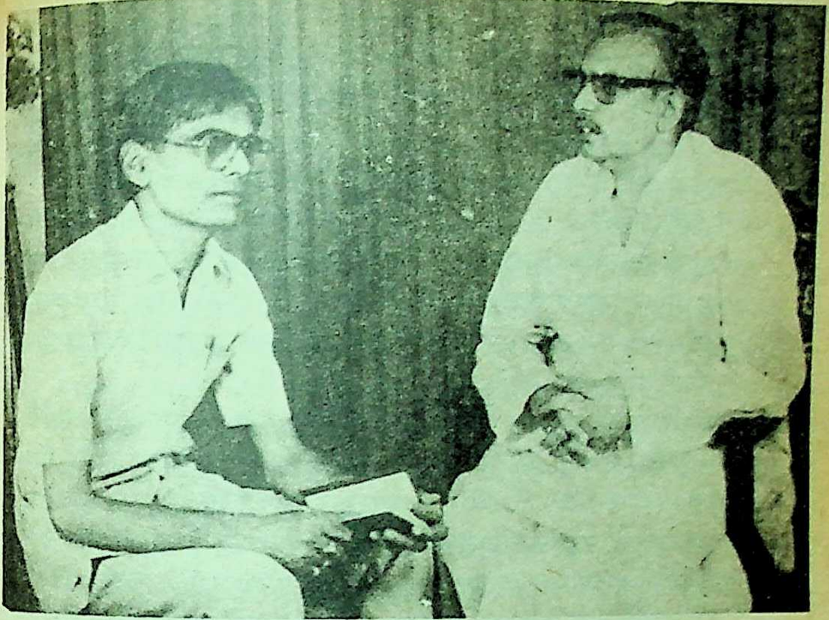

पं. बद्रीनारायण तिवारी (दायें) के साथ लेखक

**उत्तर :** बाद में तो धीरे-धीरे अनेक विद्वान हमारे घर पर आने लगे । रामकथा, मानसपाठ से वातावरण सुरभित हो उठता था । मानस के प्रति लगाव गहराता गया ।

**प्रश्न :** तिवारीजी, आपने 'मानस संगम' का श्रीगणेश कब से किया ?

**उत्तर :** त्रिपाठीजी, 'मानस संगम' की स्थापना से पूर्व ही कई वर्षों से रामकथा हमारे यहाँ हो रही है । रामकथा के अद्वितीय मनीषी पं. रामकिंकरजी उपाध्याय अपनी अमृतमय वाणी से श्रोताओं को भाव विभोर कर देते हैं । पंडितजी ने रामकथा को एक नया आयाम दिया । हम प्राय: देखते हैं कि रामकथा जहाँ होती है वहाँ प्राय: वृद्ध नर-नारी ही श्रोता रूप में रहते हैं । किन्तु पं. रामकिंकरजी उपाध्याय जहाँ पर रामकथा सुनाते हैं वहाँ आप देखेंगे कि युवा और वृद्ध सभी वय के बुद्धिजीवी भाव विभोर होकर रसास्वादन करते हैं ।

**प्रश्न :** तो मुख्य रूप से 'मानस संगम' के प्रेरणास्रोत पंडित रामकिंकरजी उपाध्याय हैं ?

**उत्तर :** जी हाँ, पंडितजी 'मानस संगम' की स्थापना के प्रेरणास्रोत तथा 'मानस संगम' समारोह के मेरुदण्ड हैं । सन १९६५ में मानस चतु:शती समारोह की स्थापना हुई उसकी

अध्यक्ष थीं श्रीमती इन्दिरा गांधी। कार्यवाहक अध्यक्ष थे पं. कमलापति त्रिपाठी। डॉ. जनार्दनदत्त शुक्ल भी इससे जुड़े थे, उनकी निजी समिति थी। उन्होंने भी मुझे प्रभावित किया किन्तु पं. रामकिंकरजी उपाध्याय के आशीर्वाद, रामकथा को जन मानस, दलितों से जोड़ने के लिए उनकी प्रेरणा से 'मानस संगम' की स्थापना हो सकी।

**प्रश्न :** तिवारीजी, इस 'मानस संगम' को विश्वरूप देने का उद्देश्य क्या था?

**उत्तर :** मेरी ऐसी मान्यता है त्रिपाठीजी, कि हिन्दी का प्रचार प्रसार विशेष कृतियों के माध्यम से तथा व्यक्ति विशेष के प्रभाव से अधिक सम्भव है। श्रीरामचरितमानस के द्वारा निश्चित रूप से हिन्दी का विकास होगा इसी बात को ध्यान में रखकर इसे विश्वरूप दिया गया और इसमें दो राय नहीं कि आज विश्व के मानचित्र पर हिन्दी का जो रूप है उसमें मानस का विशेष रूप से योगदान है।

**प्रश्न :** तिवारीजी, मानस का प्रभाव आज की नयी पीढ़ी पर पड़ेगा? आपकी क्या राय है?

**उत्तर :** इसमें सन्देह करना ही नहीं चाहिए। अवश्य पड़ेगा क्योंकि मानस में ऐसे जीवन मूल्य हैं जो आज की ही नहीं भावी पीढ़ियों का मार्गदर्शन करेंगे - मूल्य शाश्वत हैं न। गांधीजी और डॉ. लोहिया ने राष्ट्रीय एकता को मजबूत करने के लिए रामायण मेले के आयोजन की आवश्यकता पर बल दिया। उसी का परिणाम है कि पहले केवल बाँदा में ही रामायण मेला आयोजित होता था अब कई स्थानों पर आयोजित होता हैं।

**प्रश्न :** तिवारीजी, 'मानस संगम' के मंच पर अनेक विदेशी विद्वानों को आप बुलाते हैं - इसमें आपका क्या उद्देश्य हैं?

**उत्तर :** 'हिन्दी के प्रति हमारी हीन भावना दूर हो इसीलिए विदेशी विद्वानों को बुलाता हूँ - किन्तु हमने हेखा है कि हमारे द्वारा दिये गये सम्मान से वे बहुत प्रसन्न होते हैं। वे मंच पर हिन्दी प्रेमियों, मानस प्रेमियों को पाकर यह सोचने को विवश होते हैं कि मानस में कोई न कोई ऐसी विशेषता अवश्य है जिसके कारण इतने श्रोता उपस्थित होते हैं।

**प्रश्न :** तिवारीजी, आप समझते हैं कि मानस से हिन्दी का विकास होगा?

**उत्तर :** मेरा तो दृढ़ विश्वास है कि मानस जिस तरह पहले प्रकारान्तर से हिन्दी के बिकास में महत्त्वपूर्ण योगदान दिया है, आज भी दे रहा है, उसी तरह भविष्य में भी योगदान देता रहेगा। अब देखिए न, हमारे पूर्वज विदेश गये और अपने साथ "श्री रामचरितमानस" की प्रतियाँ लेते गये। मानस उनके सुख-दुख का साथी बना। विपत्ति में उन्हें सहारा दिया अन्धकार में प्रकाश की किरण बिखेरी मानस ने। मेरे विचार से मानस के समान कोई दूसरी रचना अभी नहीं आयी।

**प्रश्न :** तिवारीजी, आपकी भावी योजना क्या है मानस और हिन्दी के विषय में ?

**उत्तर :** मैं इतना ही कह सकता हूँ कि भगवान राम मुझे वह शक्ति दे कि मैं मानस और हिन्दी की ठोस सेवा कर सकूं ।

**प्रश्न :** ठोस सेवा से आपका तात्पर्य ?

**उत्तर :** अच्छा प्रश्न किया आपने। त्रिपाठीजी, मानस ने हिन्दी की सेवा की। इसी तरह हमारा भी यह कर्तव्य है कि हम भी मानस की सेवा करें। वैसे मानस की सेवा ही हमारी स्वयं की सेवा है। इस ओर से हम उदासीन ही हैं। अब देखिए – मैं 'मानस संगम' का संयोजक हूँ इसीलिए देश–विदेश से अनेक शोधकर्ता हमारे पास आते हैं मानस से संबधित शोधकार्यो की जानकारी के लिए। मैं तो बहुत दुखी हो जाता हूँ जब हम उन शोधकर्ताओं की अपेक्षित सहायता नहीं कर पाता। इसी सन्दर्भ में मैं आपको बता दूँ कि मैंने अपने देश के सभी विश्वविद्यालयों से जानना चाहा कि क्या मानस अथवा गोस्वामी तुलसीदास के सम्बन्ध में उनके यहाँ जितने शोधकार्य हुए हैं जानकारी मिल सकती है क्या ? किन्तु कहीं इस तरह का रिकार्ड ही नहीं रखा गया है।

**प्रश्न :** तो आपने इस सम्बन्ध में क्या किया ?

**उत्तर :** बड़े प्रयास से मैने सामग्री संकलित की और उसे एक पुस्तक के रूप में प्रकाशित किया। पुस्तक का नाम है 'तुलसी एक केन्द्र बिन्दु : शोधकर्ता शत-शत'– इस पुस्तक में अनेक विद्वानों के विचारों के साथ तुलसी साहित्य के विश्व अन्वेषकों की सम्पूर्ण तालिका है। और आप आश्चर्य करेंगे कि इटली के प्रसिद्ध विद्वान लुइजि पियो टेस्सिटोरी ने मानस के संबंध में पहला शोध प्रबन्ध प्रस्तुत किया – 'तुलसीकृत रामचरितमानस और वाल्मीकि रामायण का तुलनात्मक अध्ययन' इस पर फ्लोरेंस विश्वविद्यालय, इटली में पी.एच.डी. की सर्वप्रथम उपाधि के लिए स्वीकृति मिली। उसके बाद विदेशी दूसरे विद्वान है – जे.एन. कारपेण्टर जिन्हें 'द थियोलाजी आफ तुलसीदास' पर लन्दन विश्वविद्यालय की डी. लिट की उपाधि से सम्मानित किया गया सन १९१८ में। इससे आप क्या समझते हैं ? मेरा तो विचार है कि मानस में वर्णित चरित्रों से प्रभावित होकर देश–विदेश में उसके प्रति आस्था है। मानस में माता-पिता और गुरु की सेवा को बहुत अधिक महत्व दिया गया है– इसी से प्रभावित होकर काभिल बुल्के ने 'रामकथा' पर शोध प्रबन्ध प्रस्तुत किया। इतना ही नहीं वे भारत के ही होकर रह गये। हिन्दी की, मानस की जो सेवा डा. बुल्के ने की है उसे हम कभी नहीं भुला पाएंगे।

**प्रश्न :** तिवारीजी, आपने तो बहुत महत्त्वपूर्ण कार्य किया है। निश्चय ही इससे मानस के शोधकर्ताओं का मार्गदर्शन होगा। आपकी जानकारी में अभी तक मानस और

# गीत

लहरों का संग छूट जाय न सबेरे,
मौसम का रंग जरा देख रे मछेरे।

गुमसुम है नदी घाट-घाट पर अंधेरा,
दुर्दिन के दिन आकर डाल दिये घेरा।

सन्नाटा फैल गया पंख खोल धरती पर,
तूलिका तू अपनी अब फेर रे चितेरे।

चिट्ठियां अनेक गुमनाम बांचता कोई,
पल छिन में पंथ की प्रगति आंकता कोई।

विषधर सा मन व्याकुल अनगिन व्याघातों से,
बीन जरा हौले से टेर रे संपेरे।।

**— रामनरेश सिंह 'मंजुल'**
**हरैया (बस्ती), उ.प्र.**

---

गोस्वामी तुलसीदास के सम्बन्ध में कितने शोध प्रबन्ध प्रस्तुत किए गये है ?

**उत्तर :** अभी तक लगभग ५०० शोधकार्य हुए हैं। शायद ही संसार का कोई ऐसा कवि हो जिसकी कृतियों पर इतने शोध प्रबन्ध लिखे गये और स्वीकृति हुए हों। इसका कारण गोस्वामी तुलसीदास और उंनके श्री रामचरितमानस की लोकप्रियता तो है ही साथ ही गोस्वामीजी ने अपने काव्यों में लगभग सोलह हजार शब्दों का प्रयोग किया है। भाषा वैज्ञानिकों के अनुसार संसार की किसी भी भाषा के किसी एक कवि ने अपनी रचनाओं में इतनी विशाल शब्द सम्पदा का प्रयोग अभी तक नहीं किया है।

**प्रश्न :** हिन्दी और मानस के प्रचार-प्रसार के लिए आज हमें क्या करना चाहिए ?

**उत्तर :** हमारा विचार है कि कम मूल्य के ग्रन्थ उपलब्ध होने चाहिए। जन जन तक मानस के सन्देश पहुँचाने के लिए सस्ते मूल्य पर मानस तथा अन्य कृतियों की प्रतियां उपलब्ध व प्रकाशित होनी चाहिए। जहाँ तक हिन्दी के प्रचार-प्रसार की बात है मानस के साथ-साथ गीता तथा संस्कृत के अन्य महत्त्वपूर्ण ग्रन्थों को भी हिन्दी अनुवाद तथा हिन्दी व्याख्या के साथ सस्ते मूल्य पर प्रकाशित कर देश-विदेश में उनकी प्रतियाँ भेजी जायें। हिन्दी का प्रचार-प्रसार एक तरह से और हो सकता है — वह जैसे — विदेशी साहित्य के अच्छे प्रसंगों को हिन्दी में अनूदित करके।

□

# रामायण के प्रति आस्था

□ शिव रैना

चार साल पहले की बात है । हमारी स्वस्थ-चुस्त माताजी को एक सुबह मंदिर से लौटते ही, भयंकर पक्षाघात हो गया । शरीर का दाहिना भाग निर्जीव हो गया । पंद्रह दिन अस्पताल में रखने के बाद, मांताजी को हम पूर्वावस्था में घर ले आये । बेहतरीन इलाज और सेवा-सुश्रूषा के बावजूद, रत्ती-भर लाभ न हुआ । मेरी धर्मपत्नी ने माताजी के पास बैठकर, गीता और रामायण—पाठ शुरू कर दिया । एक दिन पड़ोसी के दो नंन्हें-मुन्ने बच्चे माताजी के पास खड़े हो गये । उन्होंने तोतली भाषा में, मेरी धर्मपत्नी से पूछा, 'क्यों पाठ करने से, माताजी ठीक हो जायेंगी ?' पत्नी ने सिर हिलाकर हामी भर दी । दोनों बच्चे टुकुर—टुकुर देखते रहे । जब कभी रुग्ण माताजी का शरीर हिलता, बच्चे ताली बजाते : 'वाह, दादी अम्मा ठीक हो रही हैं !' ये बच्चे पूरे तीन दिनों तक आते रहे और रामायण पाठ के समय, कौतूहलपूर्ण ताली बजाते रहे । इसे भाग्य कहियें या आस्था, कि चौथे रोज़ ही हमारी माताजी बिस्तर पर करवटें बदलने लगीं और फिर पुनः आत्मनिर्भर हो गय़ीं ।

— ८७, रघुनाथ स्ट्रीट,
जम्मू - १९० ००१ (कश्मीर)

□

# पेट्रोलियम की खेती कीजिये

### □ राजकुमार जैन

है न अचरज वाली बात ! आप भी कहेंगे कि भला पेट्रोलियम की खेती भी कहीं होती है ? जी हां, यह बात सौ फीसदी सच है । प्रसिद्ध अमेरिकी रसायनशास्त्री डा. कात्विन ने कुछ अर्सा पहले गन्नों की तरह मोटे डंठल वाले जंगली व समुद्री पौधों व झाड़ियों के तनों को पेर कर पेट्रोलियम बनाने का सुझाव दिया है ।

डा. कात्विन के इस कथन के पश्चात् अमेरिका के कैलिफोर्निया विश्वविद्यालय में, जहां डा. कात्विन अध्यापन करते हैं, अनेक अनुसंधानकर्ताओं में यह होड़-सी लग गयी कि कौन पहले डा. कात्विन के कथन को सत्य प्रमाणित करता है और ऐसे पेट्रोलियम-भंडारों के तेजी से खत्म होने की आशंका का सामना करने के लिए एक नयी दिशा में अनूठे प्रयोगों की शुरूआत हुई ।

कैलिफोर्निया के आसपास फैली बंजर जमीन पर उगने वाले पौधे यूफोर्बिया के रस को विभिन्न रासायनिक प्रयोगों से गुजार कर उच्च श्रेणी के पेट्रोलियम पदार्थ के निर्माण में आशातीत सफलता हासिल हुई है । इस सफलता से अनेक देशों के वैज्ञानिकों को इस दिशा में कुछ नया करने की प्रेरणा मिली है ।

भारत में भी इस सिलसिले में विभिन्न प्रयोग किये जा रहे हैं । इन प्रयोगों के नतीजों से यह साबित हो चुका है कि पेट्रोलियम प्राप्त करने के लिए उगाई गयी खास किस्म की झाड़ियों से एक एकड़ भूमि में दस से लेकर पंद्रह बैरेल तक पेट्रोलियम प्राप्त किया जा सकता है । एक दिलचस्प बात यह है कि इस फसल की खेती में कोई खास खर्च नहीं आता, क्योंकि एक बार इस झाड़ी को बो देने के बाद आगामी बीस सालों तक बोने की ज़रूरत नहीं रहती ।

ब्राजील की एक निजी कंपनी पेट्रोबा भी इस फसल के आर्थिक व तकनीकी मुद्दों पर गहन अनुसंधान के पश्चात् इस निष्कर्ष पर पहुंची है कि औद्योगिक कामों के लिए इन झाड़ियों से प्राप्त पेट्रोलियम समान उपयोगी है ।

भारतीय वैज्ञानिक इस तरह के पेट्रोलियम के प्रयोगों में गहरी दिलचस्पी दिखा रहे हैं । शायद इसकी एक वजह यह भी हो कि खनिज तेल और पेट्रोलियम फसलें उगाने से जहां एक ओर तेल-संकट का समाधान हो सकेगा, वहीं देश में फैली लाखों वर्ग-मील बंजर रेगिस्तानी भूमि का बेहतर उपयोग किया जा सकेगा ।

**— राज स्टेशनर्स, पचपहाड रोड,**
**भवानीमण्डी राजस्थान**

# सुखी दाम्पत्य की चाभी

□ गिरिजा 'सुधा'

उस दिन मैं सुप्रसिद्ध समाजसेवी श्रीमती शिवदेवीजी के साथ आर्य समाज रोड पर जा रही थी। उनका कार्यक्रम किसी से मिलने का था और मैं थी दालभात में मूसलचन्द की संज्ञा प्राप्त एक वांछित इकाई। पर वे नहीं मानीं तो चली गयी। रास्ते में बड़ तालाब के किनारे मैंने एक बड़ा ही दिलचस्प दृश्य देखा। दो स्वस्थ गायें जिनकी गरदनें एक ही रस्सी में बंधी हुई थीं, हमारे पास से लगभग दौड़ती हुई गुजरीं। उनमें एक बड़ी मस्त और चुलबुली थी। वह उत्साह से उछलती-कूदती जा रही थी। जबकि दूसरी बड़ी उदास थी। उसके चेहरे से मायूसी रह-रहकर कुछ कहती प्रकट हो रही थी। वह अपनी साथिन के इस अर्थहीन उल्लास से पीड़ित-सी मजबूरीवश उसमें भाग लेने की विवशता पर कुढ़ती हुई पैरों को घसीट-घसीटकर चल रहीं थी। इस तरह उनकी दौड़ अजीब सा दृश्य प्रस्तुत कर रही थी। तभी जीवन की मर्मज्ञता के व्यावहारिक पक्ष की साधिका शिवदेवीजी ने मुझसे पूछा- 'गिरिजा, ये दोनों गायें कुछ कह रही हैं, आजकल के दाम्पत्य जीवन के एक मर्मस्पर्शी पक्ष के बारे में। क्या तुम उन्हें सुन या समझ रही हो?'

मैं चौंक उठी इस अप्रत्याशित प्रश्न को सुनकर। बोली, 'देखने के लिए भी तो आंख और सुनने के लिए भी कान चाहिए विशेष सतर्कता वाले। मेरे पास शायद वे हैं ही नहीं। आप ही बता दीजिए न ये क्या कह रही हैं? क्या बतला रही हैं?'

वे मुस्करायीं। पर अगले ही क्षण मैंने उस महान समाजसेविका के चेहरे पर तैरती विषाद की रेखाएं देखीं, वे बोलीं, 'गिरिजा! कहते हुए मन व्यथा से भर उठता है। क्या आज अधिकांश नव दम्पति कुछ इसी तरह दाम्पत्य जीवन की गाड़ी नहीं घिसट रहे हैं। मजबूरी से जुड़े हुए।'

मैंने 'हां' की। गंतव्य स्थान आ गया था। बात आयी गयी हो गयी उस वक्त तो। पर मैं बराबर चिन्तन करती रही। कई अजीबो-गरीब कटु अनुभव सामने आये। मीठे प्रसंगों की महक आयी। इस प्रश्न के जलते पक्ष पर मैं उलझती-सुलझती रही। जो मंथन से नवनीत मिला, उस पर चर्चा से कुछ अन्य नारियां भी पा सकती हैं। इसलिए इस गुफ्तगू में मैं उन्हें भी आमंत्रित कर लेती हूं।

आधुनिक विवाहों के बारे में कहते-सुनते वक्त 'चक्रवाकेव दम्पती' की वैदिक व्याख्या मुझको निरर्थक लगने लगती है। कहा है आज पति-पत्नी में चकवा-चकवी की तरह सहज प्रेम। मेरा अपना ख्याल है कि आजकल विवाह एकदम लड़की के हाथ पीले करके मुक्ति पाने या बहू लाकर घर के काम से राहत पाने की जो हूक समाज में पनप चुकी है, वह बड़ी अजीब है। ये संबंध बड़ी उतावली में तय किये जाते हैं। पर यह भूल जाते हैं कि अकस्मात भड़के हुए आग के चन्द शोले विस्फोट भले ही करवा दें परन्तु वे चूल्हा सुलगाकर परिवार के लिए भोजन नहीं पका सकते हैं। इसीलिए तो हर घर में 'महाभारत' का रिहर्सल यदा-कदा देखने को मिलता है। पड़ौसी मुफ्त में ही किसी नाटक के मजेदार संवाद सुनने का आनंद लेते रहते हैं।

हाथ-कंगन को आरसी की क्या जरूरत? खुद ही देखिए न कैसे 'चट मंगनी पट ब्याह' हो जाया करते हैं आजकल। लड़का-लड़की एक दूसरे को देखभर पाये और खूंटे से बंध गये। आज मुलाकात हुई। चन्द बातें पूछी गयीं और वे मियां-बीबी बन गये। सच तो यह है कि यह स्थिति भी कुछ तथाकथित पढ़े-लिखे आधुनिकों की है। किन्तु अधिकांश विवाह तो हमारे यहां परमात्मा ने पहले ही तय कर दिये हैं। 'शारदा एक्ट' को पैरों तले कुचल-कुचलकर हम हर वर्ष कितने बाल विवाह करते चले आ रहे हैं। इस संदर्भ में हम अच्छा-बुरा सोचते तक भी नहीं।

## घरेलू पंचशील

सुखी गृहस्थ जीवन के लिए कुछ खास गु तो अनुभवों की पथरीली राह पर लहुलुहान होकर ही संभव है। किन्तु मेरी माताजी ने बातों ही बातों में एक बार आदर्श दाम्पत्य के लिए पांच बातों पर हम दोनों बहिनों का ध्यान आकर्षित किया था। बाद में उन पर चलने का प्रयत्न करके मैंने उसे 'लाजवाब घरेलू पंचशील' कहना शुरू कर दिया।

वे पंचतत्व की संज्ञा प्राप्त अनुभव कुछ इस प्रकार के हैं :—

'मियां-बीबी राजी तो क्या करेगा काजी' वाली कहावत रटने की नहीं, व्यवहार में लाने की युक्ति है। उन्हें एक दूसरे पर पूरा-पूरा विश्वास होना चाहिए। कोई भी शंका उठ रही हो अन्दर घुटते रहने के बजाय उनसे साफ कह-सुनकर मानव ईर्ष्या शांति के लिए सबसे बड़ा खतरा है। मनोमालिन्यता की जननी भी है यह। मेरी एक पड़ोसिन दिन-रात पति को यह बताया करती हैं कि वह तो काम के पहाड़ तले दबी दासी-बांदी की तरह घर में खटती रहती है और वे दफ्तर में कार्यरत किशोरियों के साथ गुलछर्रे उड़ाया करते हैं।

पारिवारिक आर्थिक स्थिति पर भी निगाह रखिए। रुपये-पैसे के मामले में यदि मियां-बीबी में दुःख-दुराव, छिपाव नहीं रहेगा तो वे बढ़ती महंगाई और आर्थिक परेशानियों को प्रसन्नता पूर्वक झेल सकेंगे। यदि दोनों ही कमाते हों तो गलतफहमी पैदा

हो ऐसी स्थिति बनने ही नहीं दें।

पारिवारिक बुजुर्गों के प्रति नवदम्पति बड़ी तेजी से असहिष्णु होते चले जा रहे हैं। जरूरी है कि उन्हें आप अपनी भावनाएं समझाएं और उनकी भावनाओं को समझें। वे आपके सदैव ही शुभचिन्तक रहे हैं। आगे भी रहेंगे।

सुखद दाम्पत्य जीवन के लिए पांच सूत्र कमोवेश मात्रा में सदा मार्ग दीप की तरह भटके पति- पत्नियों को रोशनी दिखाने में समर्थ हैं, बशर्ते हममें देखने वाली आंख हो।

### राजधानी पर पकड़ मजबूत रखें

मैं किसी भी 'स्त्री' के लिए यह बेहद जरूरी मानती हूं कि वह पाक कला की विशेषज्ञा हो। यह नहीं हो पाये तो कम से कम भोजन बनाने में माहिर तो हो ही। आपको स्वयं भोजन बनाने की जरूरत नहीं पड़े ऐसी दशा में भी यह जरूरी है।

किसी भी विवाहित स्त्री को यह नहीं भूलना चाहिए कि उसका असली साम्राज्य तो घर ही है। 'रसोईघर' उसकी राजधानी है। इस राजधानी पर उसकी अपनी पकड़ मजबूत रहनी ही चाहिए। यदि आप भोजन नौकर-नौकरानी से बनवाती हैं तो भी आपको निगाहें उस पर रहनी चाहिए।

### टूटिये मत, झुकिये

बाढ़ तथा प्रबल झंझावत में नदी के किनारे खड़े वृक्ष बाढ़ की चपेट में आकर टूट जाते हैं। उनका अस्तित्व ही मिट जाता है। इसके विपरीत बेंत झुक कर, दुबककर लहरों को पानी के ऊफान को गुजर जाने देती है। यही स्थिति सुखी दाम्पत्य के लिए भी आवश्यक ही नहीं अनिवार्य तत्व है।

### सामाजिक कार्यकलापों से जुड़ें

कई महिलाएं अति उत्साही होती हैं। वे घर-बार की परवाह किये बिना काफी समय धार्मिक या सामाजिक संस्थाओं, क्लबों आदि में बिताती हैं। ऐसी महिलाओं को चाहिए कि बच्चों को, पति को उनकी जरूरत है। वे ही तो उनका सहारा होते हैं। अतः अपना दायित्व पूरा करते हुए ही समाजसेवा की प्रवृत्तियों से जुड़ें।

### एक-दूसरे से सीखें

पति-पत्नी गृहस्थी की गाड़ी के दो पहिए हैं। उन दोनों का संतुलित बना रहना जरूरी है। सफल वैवाहिक जीवन की निशानी यह है कि पति-पत्नी एक दूसरे के सच्चे शुभचिन्तक, सच्चे मित्र तथा आदर्श, किन्तु व्यावहारिक सलाहकार बन जायें।

### एक मन हो जाइये

भारतीय संस्कृति में पत्नी को 'अर्द्धांगिनी' कहा गया है, अतः पुरुष और स्त्री दोनों को ही एक मन हो जाना चाहिए। यदि वे एक दूसरे से दुराव-छिपाव रखेंगे, कुछ छिपायेंगे, कटुता पालते रहेंगे तो दूसरे पक्ष का कम अपना ही नुकसान अधिक करेंगे। अज्ञात पीड़ा से छटपटाते रहेंगे। एक-दूसरे को पूर्ण समर्पण भाव से समझना सुखद दाम्पत्य की महत्वपूर्ण शर्त है। इसे हर युवा जोड़े को डायरी में नहीं आचरण में उतारना चाहिये।

**– बी-११६, विजयपथ,**  
**तिलकनगर, जयपुर - ३०२००४**  
**(राजस्थान)**

# शब्द की आराधना

शब्दों की
आराधना करनी है
शब्द शब्द
पुण्य है
शब्द ही तो अर्थ है
शब्द ही तो प्रेम है
शब्दों की वंदना करनी है ।

शब्द कोई विकृत संस्कृति नहीं है,
शब्द कोई जड़ता नहीं है
शब्द कोई आडम्बर नहीं है,
शब्द कोई दुर्लभता नहीं है,
शब्द तो मंगलाचरण है
शब्द तो विश्वास है
शब्द शब्द
आराधना करनी है ।

शब्द महिमा अपरिमित है,
शब्द शिव (सत्य, सुन्दर, सुख) है,
शब्द अभिप्राय है
शब्द अलंकरण है
शब्द जीवन है
शब्दों की स्तुति
करनी है ।

शब्द एक निर्वाह है,
शब्द एक अनुभव है
शब्द गांभीर्य है
शब्द माधुर्य मधु-मधु है
शब्द शब्द
अर्चना करनी है ।

शब्द संकलन है
शब्द धरातल है
शब्द शिल्प है
शब्द स्पर्श है
शब्द अनन्त है
शब्द भक्ति है
शब्दों की आराधना
करनी है ।
शब्दों का उजाला फैलाना है ।
शब्द शब्द
मंगल कामना करनी है ।

**— रश्मि भार्गव**

भार्गव चश्मे वाले,
प्रेम प्रकाश सिनेमा के सामने
चौड़ा रास्ता, जयपुर, राजस्थान

□

# चमत्कारी रुद्राक्ष

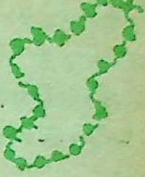

□ **पंकज कुमार कर्ण**

रुद्राक्ष एक जाना-माना नाम है जो सौंदर्य वृद्धि के साथ-साथ चिकित्सा के लिए भी काफी उपयोगी होता है। ऐसा माना जाता है कि इसमें कोई चमत्कारिक शक्ति निहित है। वास्तव में साधुसंतों और योगियों ने तो इसकी चमत्कारिक शक्ति से ही अभिभूत होकर इसे अपनाया है।

भारतीय जनमानस में रुद्राक्ष के प्रति अनन्य श्रद्धा है। इसे भगवान शंकर का स्वरूप मानकर पवित्र माना जाता है। शिवपुराण में इसे भूतबाधा तथा ग्रहपीड़ा निवारक माना गया है। विश्वभर में इसकी लगभग १२३ प्रजातियां पायी जाती हैं। संस्कृत, गुजराती, मराठी, हिंदी तथा कन्नड़ में भी इसे रुद्राक्ष के नाम से ही पुकारा जाता है। वनस्पति जगत में यह 'इलिओकार्पस गैनीटूस' के नाम से मशहूर है। इसके पेड़ एशियाखंड में विषुवत रेखा के प्रदेश, मलाया नेपाल, स्याम, जावा, सुमात्रा, बोर्नियो और आस्ट्रेलिया के जंगलों में काफी संख्या में पाये जाते हैं। इसके अतिरिक्त भारत के असम, मध्यप्रदेश, महाराष्ट्र, बिहार आदि राज्यों में भी इसके पेड़ पाये जाते हैं।

रुद्राक्ष का पेड़ पचपन-साठ फुट ऊँचा होता है। इसकी शाखाएं सीधी व लंबी होती हैं, पत्ते लंबवर्तुलाकार होते हैं जो स्पर्श में एकदम रुक्ष होते हैं। विचित्र बात तो यह है कि इसके पके (पुराने) पत्तों का रंग गहरा लाल हो जाता है। इसका फल गहरा आसमानी होता है। जब फल पक जाते हैं तब उसे तोड़कर एक जगह इकट्ठा कर लिया जाता है, फिर कुछ विशेष प्रक्रिया द्वारा फलों के ऊपर के आवरण को हटा दिया जाता है, अंदर से जो बीज निकलता है उसे ही 'रुद्राक्ष' कहते हैं। रुद्राक्ष विविध आकर्षक रंगों के होते हैं। इनमें से श्वेत, रक्तवर्णी, पीत और कृष्ण रुद्राक्ष सहज ही हमारा ध्यान अपनी ओर खींच लेता है।

इन बीजों पर कई लकीरें अंकित होती हैं जिनकी संख्या आमतौर पर पांच होती हैं। इन्हीं लकीरों को रुद्राक्ष के मुखों के नाम से जाना जाता है।

मुख्यत: रुद्राक्ष छोटे और बड़े दो आकार के होते हैं। छोटे आकार के रुद्राक्ष पर लकीरें अधिक स्पष्ट नहीं होती हैं लेकिन बड़े आकार के रुद्राक्ष पर सभी लकीरें स्पष्ट होती हैं।

हिन्दू धर्म में छोटे आकार के रुद्राक्ष को ही पवित्र माना गया है। इसमें संदेह नहीं कि जो रुद्राक्ष जितना ही अधिक छोटा होता है, वह उतना ही अधिक फलदायी होता है। इसलिए छोटे आकार के रुद्राक्ष की भी कीमत काफी होती है।

रुद्राक्ष एक मुखी से लेकर चौदह मुखी होते हैं। ऐसा माना जाता है कि इसे धारण करनेवालों का व्यक्तित्व काफी प्रभावशाली बन जाता है। एकमुखी रुद्राक्ष का मिलना बहुत कठिन होता है।

आजकल बहुत से लोग नकली रुद्राक्ष को ही असली रुद्राक्ष समझकर ले लेते हैं। यहां यह बता देना कितेकलाम न होगा कि यह बेर की गुठली से बहुत कुछ मिलता-जुलता है। इसलिए विक्रेता बेर की गुठली को ही थोड़ा आकार-प्रकार देकर रुद्राक्ष में खपा देते हैं। यही नहीं, भद्राक्ष और रुद्राक्ष में नाम के साथ-साथ रंगरूप में भी काफी साम्यता होती है जिससे लोग भ्रमवश भद्राक्ष को ही रुद्राक्ष समझ बैठते हैं और यह स्वाभाविक भी लगता है। वास्तव में रुद्राक्ष की सामान्य पहचान यह है कि वह पानी में आसानी से डूब जाता है तथा दो तांबे की प्लेटों के बीच रखने पर घूमने लगता है। इसलिए इसे खरीदते समय अच्छी तरह अवश्य परख लें।

रुद्राक्ष की सहायता से गर्भस्थ शिशु के लिंग निर्धारण के सैकड़ों सफल प्रयोग किये जा चुके हैं। रुद्राक्ष को एक धागे में बांधकर प्रसूता के पेट पर लटकाने पर उसके घूमने की गति के आधार पर गर्भस्थ शिशु के लड़ अथवा लड़की होने का निर्धारण आसानी किया जा सकता है। यदि रुद्राक्ष के घूमने गति चक्राकार हो तो लड़का और यदि घूम की गति लंबाकार हो तो लड़की के जन्म संभावना अधिक होती है।

सोने, चांदी या फिर तांबे के संसर्ग से इस गुणों में काफी वृद्धि होती है। शायद बहु कम लोग इसके औषधीय गुणों से भी परिचि हैं। यह स्वाद में खट्टा, रुचिवर्धक, क और वायुनाशक होता है। मधुमेह के रोगि को शहद में इसे घिसकर अवश्य पीन चाहिए। इससे मधुमेह की बीमारी एकद समाप्त हो जाती है। रक्तचाप की तो य अचूक औषधि मानी गयी है। वास्तव में इ गले तथा हाथ में बांधने से रक्तचाप एकद नियंत्रित रहता है।

इसके ३२ मनकों की माला गले में धार करने से सर्दी से दुखते गले को आराम मिलता ही है, साथ ही, ज्वरादि भी उतर जा हैं। गंडमाला और टोंसिल्स में भी रुद्राक्ष माला उपयोगी पायी गयी है। इस अतिरिक्त वात-विकार कृमिनाशक औ हृदय के रोगियों के लिए भी यह का उपयोगी है

कीड़ा लगा, टूटा-फूटा, व्रणयुक्त, बि उभरे दानोंवाला तथा जो पूरा गोल न हो - पांच प्रकार के रुद्राक्ष काम में कभी नहीं ला चाहिए। जिस रुद्राक्ष में अपने-आप धा पिरोने योग्य छेद हो गया हो, वही सब

# नाते बन गये शूल

नाते बन गये शूल
घरों में जैसे उगें बबूल ।।
सुगना तरस गया तड़के को
गूंगी हो गयी चक्की
हर आंचल कुछ विफरा-विफरा
हर पगड़ी कुछ शक्की।
पलथन का बस नाम,
बटोरी चौके पर की धूल।
नाते बन गये शूल।।
कानों पर विस्फोट कर गयीं
बतियां सहमी-सहमी
कैक्टस का पर्याय बन गयी
बेला की हर टहनी
किस पर हो विश्वास
धरम का कांटा हुआ त्रिशूल
नाते बन गये शूल
घरों में जैसे उगें बबूल।।

**— डॉ. किशोरीलाल त्रिवेदी**
१४, अध्यापक आवास,
सैनिक स्कूल परिसर,
घोड़ाखाल, नैनीताल, उ.प्र.

# बोलती हैं ये चीज़ें

अपने अन्दर की खुशबू से ही काम ले
मन में खिलते हुए फूल का नाम ले

जिसपै हक़ हो तेरा सिर्फ उसको ही छू
यूं न हाथों में तू ग़ैर का जाम ले।

तेरा हाकिम सजा दे के खुद रो पड़े
अपने सर कोई ऐसा भी इल्ज़ाम ले।

शब्द गिरने लगे हैं मेरे होंठ से
कोई होंठों से अपने इन्हें थाम ले।

बोलती हैं ये चीज़ें सभी कुछ न कुछ
जितने जी चाहे इनसे तू पैग़ाम ले।

चलते-चलते 'कुंअर' थक गया है बहुत
नींद आ जायें तो अब ये विश्राम ले।

**— कुंअर बेचैन**
२, एफ-५१ नेहरूनगर, गाजियाबाद

---

उत्तम माना जाता है, जिसमें मनुष्य के प्रयत्न द्वारा छेद किया जाता है, वह मध्यम श्रेणी का होता है।

इस प्रकार असली रुद्राक्ष में कोई न कोई अदृश्य शक्ति अवश्य है यह निर्विवाद है। इसलिए इसे काफी सोच-समझकर ही धारण करना चाहिए : क्योंकि यह सभी को रास नहीं आता है। इसे धारण करने से पूर्व मंत्र द्वारा भी साध लेना (किसी योग्य व्यक्ति से) चाहिए।

**— मुहल्ला - दहियावां, महमूद चौक**
**(अधन्नी बाबू के स्कूल के**
**बगलवाली गली में), पो. - छपरा,**
**जि. सारण - ८४१ ३०१ (बिहार)**

# अपने लाड़ले को कैसी कहानियां सुनायें ?

☐ विमा प्रकाश

बड़ा व्यक्ति हो या बच्चा जिस वस्तु विषय या चर्चा में उसका मन लगता है, उस स्थिति को कहते हैं 'तन्मयता' । यह तन्मयता व्यक्ति के अंतः मन पर इतना गंभीर प्रभाव डालती है कि उसकी दशा धीरे-धीरे उसी ओर मुड़ने लगती है, आकस्मिक रूप से घटने वाली कोई घटना या बात जो हृदय को छू लेती है और तत्काल संबंधित व्यक्ति का जीवन बदल देती है । इस समय तो व्यक्ति की तन्मयता इतनी प्रगाढ़ हो जाती है कि लगता है कि जैसे समाधि ही लग गयी हो ।

पर ऐसी घटनायें हर किसी के साथ नहीं घटतीं और न घटने की आशा की जानी चाहिये । इसलिये बच्चों के व्यक्तित्व को किसी सांचे में ढालना है तो आवश्यक है कि उसमें उपयुक्त संस्कार डालने से पूर्व माध्यमों के प्रति तन्मयता उत्पन्न की जाये ।

'तन्मयता' उत्पन्न करने के लिए बेहतर है कि कोई ऐसा माध्यम अपनाया जाये, जिसमें बच्चे को रस भी मिले और संस्कार भी । वह माध्यम है कथा-कहानियां सुनाने का । अब तक हमारे देश में दादी, नानी और मातायें बच्चों को सोते समय कथा-कहानियां सुनाती हैं, पर इनका स्तर इतना घटिया होता है कि बच्चों में कोई अच्छी वृत्ति पलने, अच्छे संस्कार उत्पन्न होने की अपेक्षा अंधविश्वास, भय और अज्ञान की जड़ें जमाता है । बड़े-बड़े इंजीनियर, डॉक्टर सुशिक्षित लोगों में भी तरह-तरह के अंधविश्वास देखे जा सकते हैं । इसका कारण यह नहीं कि शिक्षा-दीक्षा ठीक से नहीं हुई अथवा उनमें विचारशीलता का अभाव हो, वरन् इसका कारण यह है कि बचपन में अम्मा-दादी से उन्होंने भूत-प्रेतों की, जादू-टोना की जो कहानियां सुनी थीं, उनके संस्कार इतनी मजबूती से मानस पर जम गये हैं कि पत्थर की लकीर बन गये।

एक प्रभाव तो यह है बच्चों को कहानियां सुनाने का जो उन्हें आजीवन भीरु कायर, अंधविश्वासी बनाये रखता है, इसका एक पन्ना उजला भी है कि बच्चों को अच्छी विचारशील कहानियां सुनायी जायें, जिससे उनमें अच्छी आस्थायें उत्पन्न हों, अच्छी मान्यतायें जागृत हों और आगे चलकर

उनका व्यक्तित्व फूल की तरह खिले तथा चंदन की तरह महके।

एक नहीं ढेरों उदाहरण इस तरह के हैं कि बच्चों को केवल कहानियां सुनाकर ही योग्य बनाया गया। आचार्य विष्णु शर्मा की कथा प्रसिद्ध है। उस राज्य का राजकुमार मंद बुद्धि का व अयोग्य था। राजा को बड़ी चिंता हुई कि मेरे बाद इस राज्य का क्या होगा। अतः विष्णु शर्मा ने अपने ढंग का अनुठा प्रयोग किया, जानवर-पात्रों की कथा सुना-सुनाकर राजकुमार को योग्य तथा राजनीति में भी दक्ष बना दिया। उस प्रयोग का विवरण आज भी इतिहास में पंच-तंत्र के नाम से मशहूर है।

बच्चों को शिक्षाप्रद कहानियां सुनाना आवश्यक है। इसके दो ही स्रोत हैं। माता-पिता द्वारा सुनायी कहानियां या दूसरे बाल-साहित्य द्वारा। प्रश्न उठता है कि बच्चों को कैसी कहानियां सुनायें? प्रायः बच्चों को अलौकिक कहानियां अधिक पसंद होती हैं, पर आजकल जितनी भी कहानियां मिलती हैं वे परियों, दानवों, भूत-प्रेतों और जादू-टोनों से ज्यादा संबंध रखती हैं। कुछ कहानियों की शुरुआत इस प्रकार भी होती है – एक राजकुमार था, वह घोड़े पर चढ़ा जा रहा था, बीच में एक महल दिखायी दिया, उसके झरोखे में से राजकुमारी ने उसे देखा। और राजकुमार ने राजकुमारी को देखा। दोनों एक-दूसरे की ओर आकृष्ट हो गये।

इस तरह की प्रेम कथायें भी बच्चों के लिए बेमतलब की होती हैं और उनमें इससे अच्छे संस्कार भी नहीं पड़ते। परियों, दानवों और राक्षसों की कहानियां भले ही सुनायी जायें परंतु वे शिक्षाप्रद हों। बच्चों के मन में उसका एक ऐसा काल्पनिक चित्र बन जाता है कि वे उन पात्रों को सचमुच का मान लेते हैं। मनोवैज्ञानिकों का कहना है कि इस तरह की कहानियां बच्चों के मन में पलायनवाद का भूत भर देती हैं। अलौकिक कहानियों का इतना ही तात्पर्य नहीं की राक्षसों व भूतों की ही भूमिका हो, वरन् इसका वास्तविक तात्पर्य यह है कि कहानी की विषय वस्तु पृथ्वी की ही हो और मनुष्य की असीमित क्षमताओं का प्रकटीकरण करता हो।

प्रश्न उठता है कि किस उम्र के बच्चे को कहानियां सुनानी चाहिये। प्रायः तीन-चार वर्ष के बच्चों का मानसिक विकास इतना हो चुका होता है कि उन्हें हलकी-फुलकी बातें समझायी जा सकें। बस तब से ही कहानियां सुनाने का काम प्रारंभ कर दिया जाये। कहानी पांच से दस मिनट लंबी हो, ताकि उसमें सम्मिलित की गयी बातों को बच्चा

अच्छी तरह ग्रहण कर सकें। प्रारंभ में प्रतिदिन कहानी सुनाने का क्रम रखा जाये। बच्चा रुचि लेता दिखायी दे तो कहानियों की संख्या फिर बढ़ायी भी जा सकती है।

कथा-कहानियां न केवल बच्चों के हृदय को छूती हैं वरन् जन सामान्य के लिए भी वे बड़ी उपादेय होती हैं। उन्हें भी कहानियों से बड़ी प्रेरणा मिलती है और रस भी आता है। यही कारण है कि हमारे वेद-उपनिषद् औ दर्शन-ग्रंथ की अपेक्षा रामायण, भगवद् गीता, महाभारत, पुराण आदि अधि लोकप्रिय हैं। उनको कई-कई दिन त सुनाने की बड़ी महिमा है।

— आर. बी. २/६२, जी. एफ.
रेलवे कालोनी, बाद, मथुरा उ.

□

किसी जगह एक मंत्रीजी भाषण कर रहे थे – 'आपने मुझे इस क्षेत्र के लिए निर्विरोध वि घोषित किया, इससे मेरा हृदय आपके प्रति अपार श्रद्धा से गद्गद् हो उठा है।'

सुनकर जनसमूह एक स्वर में गिड़गिड़ाते हुए बोला – 'जब सारे प्रतिद्वंद्वियों ने अपने ना वापस ले लिये तो, हम कर ही क्या सकते थे?'

* * *

उस दिन राह चलते नेता से पत्रकार ने पूछा – 'आपकी हार का मुख्य कारण?' वे बोले, ' शिकार हो गया।'

सुनकर पत्रकार ने बारीकी से कुरेदा – 'किस चीज का?'

नेताजी बोले – 'सही मतगणना का!'

* * *

चुनाव जीतकर अपने क्षेत्र में आये एम. पी. साहब से एक देहाती ने कहा – 'आवश्यक वस्तु के दामों में इन दिनों और बढ़ोतरी हुई है, अब हम क्या करें?'

एम. पी. साहब आम जनता के समक्ष हंसते हुए बोले – 'कीजिये यह कि आज जिन वस्तुओं क आवश्यक समझते हैं, कल से उन्हें अनावश्यक समझने लगिये।'

* * *

चुनाव जीतने के उपरांत भारी भरकम नेताजी भाषण कर रहे थे – 'आप पिछली सारी बातों को भूल जाइये! हमें अब नये सिरे से देश को आगे बढ़ाना ...' तभी पीछे से किसी श्रोता ने उन्हें टोका, 'पहले हमारे उधार के रुपये दे दीजिये तब भूलने भुला की बात करना।'

* * *

# दृष्टिदोष

— रमाकान्त शर्मा

हो गया समय को आज दृष्टिदोष
होश खो दिये हैं वर्तमान ने
दुरभि-संधि बीच प्रीति पल रही
टूटते विधान संविधान में।
चश्में तो रखे हुए अनेक किन्तु
सबमें हैं लैंस उसी कांच के
जो खुद भी, औ जिसके पुरखे भी
बनते विरोधी रहे सांच के
साधारण, धारण किसे करें?
बूढ़ी दृष्टि पूछती जवान से,
असमय का बादल,क्या उत्तर दे,
उसको क्या बूढ़े आसमान से,
कोहरे की कील जो बलात, क्यों
गढ़ गयी है मध्य अंशुमान में।
ढह रहे प्रबोध-तन्तु शब्द के
व्यंजना मलीन, अर्थ मौन है
काव्य शास्त्र घिस रही नवीनता
मन्त्र पूछता कि तन्त्र कौन है?
छद्म के ललाट पर विजयमुकुट
वंचनाएं कीर्ति की कथा लिये
कुप्रचार हुआ सद्विचार का
अर्थ भी अनर्थ की व्यथा लिये
छिछली औ' सतही संवेदना
स्थापित हुई झूठी शान में।

हिन्दी-भवन, विश्वभारती,
शान्तिनिकेतन-७३१२३५(बंगाल)

# दुनिया का सबसे महंगा दाह संस्कार

□ राजीव सक्से

सिकन्दर भारत से वापस लौट रहा था। उसका चेहरा तनावयुक्त था। भारत में जिस तरह उसकी सेना ने विशाल मगध साम्राज्य की सैन्यशक्ति का वर्णनमात्र सुनकर ही व्यास नदी को पार करने से इंकार कर दिया था, उससे सिकन्दर का मनोबल एकदम गिर गया था। उसने वापस यूनान लौटने का फैसला किया। सिकन्दर के सैनिक अंतहीन युद्धों से ऊब चुके थे, वे भी अब घर लौटने के इच्छुक थे। स्वयं सिकन्दर में भी युद्ध के लिए कोई उत्साह बाकी न रह गया था। बारह साल पहले मकदूनिया से विश्वविजय के लिए जिस जोश से रवाना हुआ था वह कब का ठंडा पड़ चुका था। अब वह कोई विश्वविजेता नहीं बल्कि एक हताश, टूटा हुआ और चुप रहने वाला सेनानायक ही नजर आता था।

भारत से यूनान तक वापसी की यह यात्रा भी कम घातक सिद्ध नहीं हुई। कठ छापामारों ने सिकन्दर की थकी हुई सेना को खूब सताया था। सिकन्दर को अपने कई मित्र और योग्य सेनापति खोने पड़े। आगे तो और भी बुरा हाल हो गया। रसद और की कमी के कारण धड़ाधड़ सैनिक लगे। सिकन्दर की समझ में न आया कि किया जाये? वह चुपचाप अपने मरते सैनिकों को देखता रहता और बराबर घड़ी को कोसता जब वह थीब्ज को जीतने बाद ईरान पर हमला करने के लिए हुआ था।

सिकन्दर का सैन्य दल आखिरक बेबीलोन के करीब पहुंच गया। सिकन्दर अपने सेनानायकों के चेहरे पर दृष्टि किया। उनके चेहरों पर संतोष की रेख स्पष्ट उभर रही थीं। सहसा सिकन्दर साथ चल रहा हैफेस्शन लहराया और से घोड़े से नीचे आ गिरा।

सिकन्दर ने अपने मित्र हैफेस्शन को की पीठ से नीचे गिरते देखा। वह आर्त में चिल्लाया — 'हैफैस्शन! क्या हैफेस्शन?'' लेकिन कोई जबाब मिला। सिकन्दर ने सब को रुकने का किया और झपटकर घोड़े से उतरा। रुककर हैफेस्शन को देखने लगा,

शरीर को हिलाया-डुलाया। हैफेस्शन के शरीर में जीवन का कोई चिह्न बाकी नहीं था, वह मर चुका था।

सिकन्दर को आघात लगा। उसकी आंखें पथरा गयीं। वह अपने परममित्र हैफेस्शन को हमेशा के लिए खो चुका था। कुछ क्षणों के लिए सिकन्दर एकदम अतीत में चला गया। उसकी नजरों के सामने वह दृश्य साकार हो उठा जब एथेन्स में अरस्तु के विद्यालय में उसकी मुलाकात किशोर हैफेस्शन से हुई थी। तब दोनों मित्र बन गये थे। उनकी मित्रता तब और भी प्रगाढ़ हो गयी थी जब हैफेस्शन ने युद्ध के दौरान एक ईरानी योद्धा से सिकन्दर के प्राणों की रक्षा की थी। पुनः जब सेना में विद्रोह हुआ और डेमाक्लीज और उसके साथियों ने सोये सिकन्दर पर प्राणघातक हमला किया था तब उन्हें अकेला ही पराजित कर हैफेस्शन ने मित्रता की इस गांठ को और भी पक्का कर दिया था। बस तभी से हैफेस्शन विश्वविजयी सम्राट का अभिन्न मित्र बन गया था। उसने सुख-दुख में बराबर साथ दिया और मृत्यु तक अपनी मित्रता को निभाकर दिखाया। सिकन्दर को सब कुछ ध्यान में आ रहा था।

वह उन्मादी की तरह चिल्लाया — 'हेस्टानीज! मेरा मित्र हैफेस्शन मर गया।' फिर डूबे स्वर में आदेश दिया — 'उसकी चिता सजाओ, उसका दाह संस्कार इतना शानदार होना चाहिए कि दुनिया में अभी तक किसी का न हुआ हो।'

हैफेस्शन के दाह संस्कार की तैयारियां शुरू हो गयीं। सैनिक और सेनापति सभी काम में जुटे थे। स्वयं सिकन्दर की देखरेख में हैफेस्शन की चिता सजायी जा रही थी। दुनिया की सबसे महंगी और सबसे शानदार चिता थी वह।

सम्राट ने अपना खजाना खोल दिया। सोने की सिल्लियों के ढेर लगाये जाने लगे। हजारों सिल्लियां एक के ऊपर एक चुन दी गयीं। हेस्टानजि ने कहा-'सम्राट, क्या स्वर्ण यूनान नहीं ले चलेंगे?' सिकन्दर ने संयत स्वर में कहा - 'यह स्वर्ण मैं हैफेस्शन की बदौलत ही इकट्ठा कर पाया था।' फिर उसने आदेश दिया-'लिसिमैकस! बेशकीमती रत्नों, हाथी दांत, दुर्लभ मसालों और रेशमी वस्त्रों के ढेर हैफेस्शन की स्वर्ण चिता पर लगा दो।' बस, फिर क्या था! सैनिक इन सब चीजों से चिता को सजाने लगे। लेकिन सिकन्दर को तो जैसे इससे भी संतोष न था, वह बार-बार यही बड़बड़ाता — 'मैं विवश हूं हैफेस्शन... बस यही कर सकता हूं तुम्हारे लिए...'

हैफेस्शन के मृत शरीर को स्वर्णाभरणों से सजाया गया फिर कई फुट ऊंची उस स्वर्ण चिता पर मृत देह को रखा गया। सोने की सिल्लियों की चमचमाहट और कीमती रत्नों की चकाचौंध के बीच मृत हैफेस्शन कोई दिव्य देहधारी पुरुष प्रतीत हो रहा था। हैफेस्शन की चिता भी दिव्य थी, दुनिया की सबसे महंगी और शानदार चिता। आज की

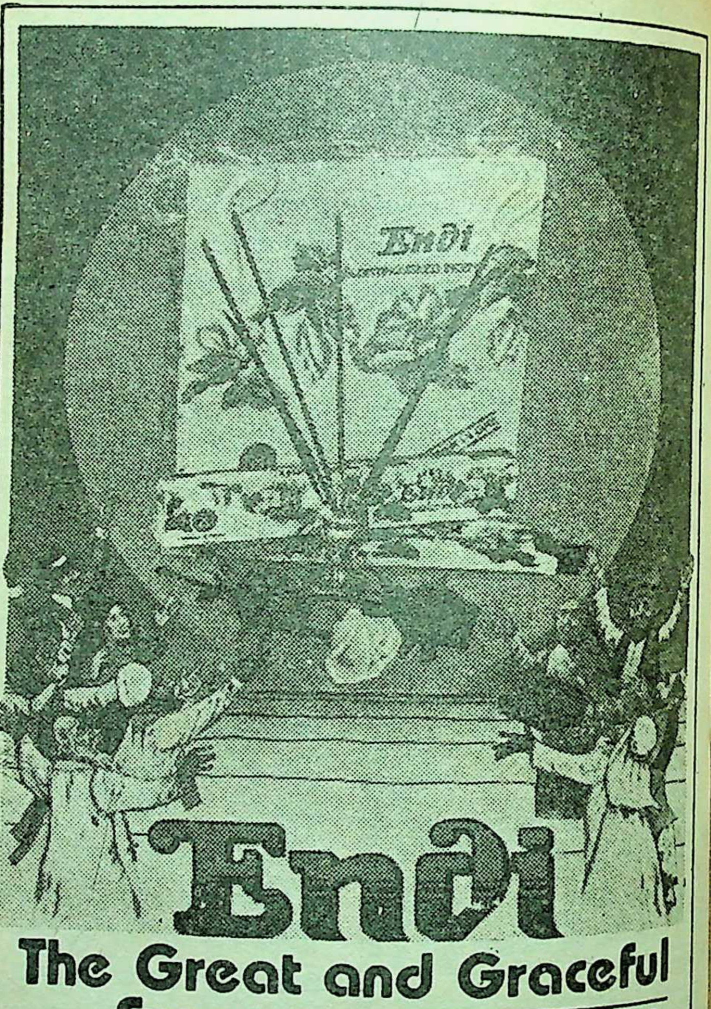

Endi

The Great and Graceful Fragrance

SEVEN IN ONE

MYSORE SUGANDHI
DHOOP FACTORY PVT. LTD.
13. Commercial Chambers, Yusuf Meharali Rd.,
P.O. Box 3178, Bombay 400 003.

# ग़ज़ल

आदमी को अपनी अब, आदत बदलनी चाहिये,
जो चुभी थी कील सीने में, निकलनी चाहिये ।

पत्थरों के देश में, पत्थर मिलेंगे बस यहां,
किस तरह मंजिल मिले, कुछ चाल चलनी चाहिये ।

रुक गयी क्यों भीड़, जो आयी है कोसों दूर से,
इस तरह आवाज हो, धरती दहलनी चाहिये ।

उठ रहीं चिनगारियां, जो आज चारों ओर हैं,
आज इन चिनगारियों से, आग जलनी चाहिये ।

उग रहे गुलशन में मेरे, पेड़ कांटेदार जो,
क्यों नहीं आबोहवा, इसकी बदलनी चाहिये ।

घूमते देखे हजारों लोग मस्ती में 'अचूक'
आदमी की आदमी से, शक्ल मिलनी चाहिये ।

**— कृपाशंकर शर्मा**
**प्लाट नं. ३८, विजयनगर,**
**करतारपुरा, २२ गोदाम, जयपुर**

□

मुद्रा में इस स्वर्ण चिता का मूल्य था — ग्यारह अरब डालर। आज की दुनिया में कोई व्यक्ति इतने महंगे दाह संस्कार की कल्पना तक नहीं कर सकता ।

पुरोहित के निर्देशानुसार स्वयं सिकन्दर ने हैफेस्शन की चिता को अग्नि दी। समूचा सैन्य दल इस दिव्य चिता को जलते हुए स्तब्ध-सा देख रहा था। इतना महंगा दाह संस्कार उस सैन्य दल ने न कभी देखा था न सुना था।

हैफेस्शन के दाह संस्कार को हुए अभी कुछ ही दिन बीते थे कि स्वयं सिकन्दर की भी अत्यधिक मद्यपान के कारण मृत्यु हो गयी। किंतु सिकन्दर को इतना महंगा और शानदार दाह संस्कार नसीब न हुआ जैसा स्वयं उसने अपने मित्र हैफेस्शन का किया था।

**— किसरौल - नागफनी,**
**मुरादाबाद, उ.प्र.**

रोचक बालकथा

# पढ़ाई हो भी तो कैसे ?

☐ विवेक भारत

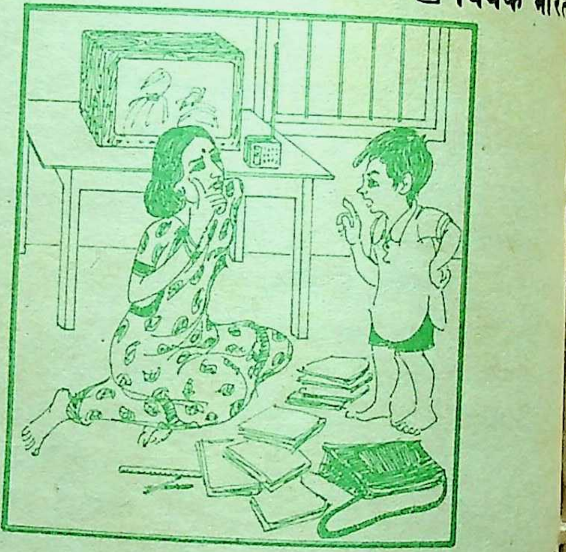

'अरे नरेन्द्र ! तुम इस साल भी फेल हो गये हो । बहुत बुरी बात है भाई यह तो । ऐसा कैसे चलेगा ?' उसकी मम्मी ने उसे मीठी सी झिड़की देते हुए कहा ।

'ठीक कहती हैं मम्मीजी, आप । पर पढ़ाई हो भी तो कैसे ?' नरेन्द्र बोला ।

'क्यों, पढ़ाई क्यों नही हो ?'

'मम्मीजी, बात यह है कि मैंने तो अपने एक-एक पल का हिसाब तैयार कर रखा है । एक भी पल बेकार खर्च नहीं करता हूं ।' नरेन्द्र ने कहा तभी ।

'कैसे करते हो जरा मैं भी तो सुनूं तुम्ह एक-एक पल का हिसाब ।' मम्मी ने क तथा जरा आंखें तरेर कर लाल-पीली करके ।

'तो लो सुनो कान लगा कर ।'

'हां सुनाओ जरा जल्दी से ।'

'सुनिए, मम्मीजी । एक वर्ष में होते ह ३६५ दिन । इनमें से इस वर्ष ३० दि दशहरा, दिवाली की छुट्टियों में बीत गये । रहे सिर्फ ३३५ दिन ।

'और फिर आती ग्रीष्म कालीन छुट्टियां । ये होते हैं ४५ दिन यानी डेढ़ माह की । इ

तरह कुल बचे अब २९० दिन। बात चल रही है छुट्टियों की तो ५२ रविवार भी आते हैं, न। सो इन्हें कम करने पर बचेंगे दिन २३८ मात्र।'

'हां यह तो हिसाब ठीक है, बेटा। पर अभी जो दिन बचे हैं उनका उपयोग भी पढ़ने में हो ही सकता है।'

'सोचता मैं भी यही था। परन्तु चिकित्सा शास्त्रियों की राय मान कर विद्यार्थी अपना बंटाढार कर बैठे।'

'कैसे हुअ बंटाढार बेटा।'

हमारे चिकित्सकों की राय में मम्मी, कि हर एक विद्यार्थी को विश्राम के लिए ८ घंटे रोज सोना चाहिए? हिसाब लगाओ तो १२० दिन सोने यानी कुम्भकर्णी नींद में चले गये। अब बचे कुल ११८ दिन। ...और मम्मी। फैशन और सभ्यता के नाम पर भी पढ़ाई के समय पूरा-पूरा बंटाढार हो गया। देखिए न हम विद्यार्थी को नहाने, कपड़े बदलने स्कूल के लिए तैयार होने में, ढाई घंटे करीब लगता है। इस तरह बेशकीमती समय के ३८ दिन इस तरह के कामों में लग जाते हैं। शेष रहे ८० दिन मात्र!'

'तो इनमें ही डट कर पढ़ लिया करते बेटा, तो फिर यह दिन देखने को नहीं मिलता।' मम्मी बोली।

'अरे मम्मीजी! आप तो जल्दबाजी कर रही हैं। सुनिए न आगे का हिसाब भी। महीने के आखिरी शनिवार को हमारे स्कूल में छुट्टियां होती हैं। इस तरह ९ दिन और तफरीह में गये। बचे अब सिर्फ ७१ दिन। इनमें से ३५ दिन स्कूल में विविध उत्सवों, राष्ट्रीय त्यौहारों, जयंतियों, पुण्यतिथियों में बीत जाते हैं। अब बचे सिर्फ ३६ दिन मात्र।'

'हां, कहता तो तू ठीक ही है रे नरेन्द्र! मैंने तो इस तरह कभी सोचा ही नहीं था।' मम्मी ने थोड़ा गम्भीर होकर कहा।

'...और आगे सुनो, मम्मी। त्यौहारों और बीमारी में २० दिन चले जाते हैं। बाकी बचे हैं सिर्फ १६ दिन। इनमें से भी मम्मी जी, कम से कम १५ दिन तो परीक्षाओं के चक्कर में भेंट चढ़ जाते हैं। अध्यापक सोचते ही नहीं कि जब पढ़ाई हुई ही नहीं तो फिर परीक्षा किस बात पर लेते रहते हैं?' वह पूछ उठा।

'हां, बेटा! यह तो खिलते हुए फूलों पर कल के राष्ट्र के भाग्य विधाताओं पर अत्याचार है।'

'तो बचा मम्मी, एक अमूल्य दिन। वह भी कमबख्त परीक्षाफल सुनने में चला जाता है। अब आप ही बताइये आपके कलेजे का टुकड़ा पढ़े तो कब पढ़े? वह फेल नहीं होगा तो क्या मैरिट में आयेगा?

**— बी. १२६ विजयपथ,**
**तिलकनगर,**
**जयपुर - ३०२ ००४ (राज.)**

□

# चाय पीने-पिलाने के रिवाज

□

### रंदी सत्यनारायण राव

प्राचीनतम भारतीय साहित्य में 'सोमरस' का जितना अधिक उल्लेख मिलता है, शायद ही किसी अन्य पेय पदार्थ का वैसा उल्लेख मिलता है। आज के आधुनिक युग में 'चाय' को ही 'सोमरस' कहूं, तो अतिशयोक्ति नहीं माना जाना चाहिए।

आज चाय का प्रचलन झोपड़ियों से लेकर महलों तक है। इसकी आवश्यकता और दिनों की अपेक्षा वर्षा ऋतु एवं शरद ऋतु के मौसम में अत्यधिक महसूस की जाती है। हमारे देश के बाहर सुदूर योरप, अमरीका, एशिया अफ्रीका महाद्वीपों के कुछ देशों में, चाय पीने-पिलाने के विचित्र रीति-रिवाज प्रचलित हैं।

इस लेख का मुख्य उद्देश्य उन्हीं प्रचलित रीति-रिवाजों से आपको परिचित कराना है।

तिब्बत में यदि आप किसी के घर जायें, तो वे आपको अपने साथ मक्खन मिलाये हुए चाय का एक कप बगैर पिलाये नहीं जाने देंगे। यह मक्खन चाय, चाय का फांट, मक्खन और नमक का मिला-जुला एक विशेष प्रकार का 'काढ़ा' होता है। काढ़े को इस प्रकार तैयार किया जाता है, सर्वप्रथम बांस के एक लम्बे खोल को लिया जाता है, तत्पश्चात् खोल में गर्म पानी उड़ेला जाता है। कुछ-कुछ देर के बाद उसमें मक्खन तथा नमक मिलाकर घोंटा जाता है, बस हो गयी चाय। मजे की बात तो यह है कि इसे लकड़ी से बने कटोरों में ही परोसा जाता है।

ईरान में चाय लगभग सभी अवसरों पर दी जाती रही है। किंतु अधिकतर यह चांदी के होल्डरों से बनी छोटे प्यालों में दी जाती है। गिलासों में यह कुछ गाढ़ी काली और अपेक्षाकृत कड़वी प्रतीत होती है।

एक विदेशी यात्री ने अरब देशों में भ्रमण करने के पश्चात् अपने विचार कुछ यों व्यक्त किये हैं — चाय उबलने से कुछ पहले चाय के बर्तन में कुछ पानी डाल दिया जाता है और शीघ्रता से उस पानी में सूखी चाय मिला दी जाती है। फिर उचित मात्रा में चीनी डालकर उसे अच्छी तरह खौला दिया जाता है। इसके बाद लगभग ६० सेंटीमीटर की ऊंचाई से गिलासों में वह डाल दी जाती है। इसी प्रकार यह प्रक्रिया तीन बार दोहरायी जाती है। यह

सब इसलिये की जाती है कि 'हम सब मित्र हैं और किसी प्रकार आशंकित नहीं होना चाहिये।'

जापान में चाय की पत्तियां गर्म पानी में मिला दी जाती हैं और विशेष अवसरों पर छना हुआ मिश्रण मिलाया जाता है। एक प्रेक्षक ने जापानी चाय बनाने की क्रिया-विधियों को देखने के बाद बताया कि सारी क्रिया-विधि में २ घंटे ३ घंटे तक लगते हैं, जिसमें उबलता हुआ पानी नहीं, बल्कि गर्म पानी हरी चाय के पाउडर के ऊपर डाल दिया जाता है, मजे की बात तो यह है जापानी चाय में 'दूध' नहीं मिलाते।

बहुत दिनों पूर्व मैंने न्यूयार्क से प्रकाशित 'टी एण्ड कॉफी ट्रेड जर्नल' में एक संवाददाता का लेख पढ़ा था – बर्मा के शान राज्यों के मूल निवासी चाय की पत्तियों को बांस की नली में भर देते हैं और उन्हें नमक के पानी में महीनों भिगोये रखते हैं, जब उनको कोई कठिन कार्य करना होता है तब वे उचित मात्रा में इन खुशबूदार भीगी हुई पत्तियों को निकाल कर खा लेते हैं, इससे उनमें उत्तेजना जगती है। बर्मा के कुछ स्थानों में नवविवाहित युगल, जीवन के आनंद में वृद्धि हेतु चाय की पत्तियों से तेल में टपकाये गये फांट का प्याला पीते हैं और यौवन का उपभोग करते हैं।

थाईलैण्ड के लोग चाय को खूब मजे लेकर चबाते हैं और फिर मजे की बात तो यह है कि वे चाय को अपनी भाषा में 'म्याउं-म्याउं' कहते हैं। चाय में वे नमक और दूसरे मिर्च-मसाले भी मिलाते हैं, किंतु अब थाईलैण्ड वासी चाय को भारतीय ढंग से पीने-पिलाने में विशेष रुचि ले रहे हैं।

संयुक्त राष्ट्र अमेरिका में चाय की खपत दो अलग-अलग पेयों द्वारा होती है, इनमें से पहली गर्म चाय कहलाती है, तथा दूसरी बर्फ चाय। बर्फ चाय अधिकतर गर्मियों के तेरह सप्ताहों के दौरान प्रयोग में लायी जाती है और गर्म चाय शेष दिनों में। अमेरिका में चाय के बारे में दूसरी विशेष बात है – चाय कीं थैली जिसे प्याले अथवा चाय के बर्तन में पूरे खौलते पानी में डुबो देते हैं, ताकि उसका अर्क पूरी मात्रा में निकल जाय।

रूस में चाय अधिकतर लंबे गिलासों में दी जाती है, लेकिन इसमें दूध नहीं डाला जाता, बल्कि जैक मधु अथवा शक्कर से मीठा बनाया जाता है। 'जूस' और 'रम' के भी अक्सर उपयोग किये जाते हैं।

ब्रिटेन में सर्वप्रथम चाय पीने का रिवाज १६५७ में आरंभ हुआ। उस समय चाय पीने का कोई निश्चित तरीका नहीं था – उबलती हुई पत्तियों को चबाया जाता था। लोगों को चाय बनाने के सही तरीके का बहुत बाद में पता चला।

**– एल ३/९, तिरना रोड, साकची,**
**जमशेदपुर - ८३१ ००१ बिहार**

# स्तुति-पत्र

इब्ने इंशा

श्रीमानजी, भारत के निःस्वार्थ कार्यकर्ताओं की एकमात्र प्रतिनिधि संस्था 'देशभक्त स्वयंसेवक संस्था' (रजिस्टर्ड) आपका हार्दिक स्वागत करती है।

श्रीमानजी, निःसंदेह संस्था के कार्यकर्ताओं की एक बड़ी संख्या अंडे-मुर्गी का व्यवसाय करती है और इस देश के नागरिकों को प्रोटीन से सम्पन्न करती है, फिर भी संस्था के नाम में 'देशभक्त स्वयंसेवक' का मतलब कुछ और भी है, जिससे श्रीमानजी अपनी विद्वता के कारण भली-भांति अवगत होंगे।

श्रीमानजी, इस समय आवश्यकता इस बात की है कि सभी देशभक्त, जिनमें अंडे-मुर्गी का व्यवसाय करने वाले भी शामिल हैं, मिलकर सरकार के हाथ मज़बूत करें। इसलिए यह संस्था सहृदयतापूर्वक वर्तमान सरकार के हाथ उसी प्रकार मज़बूत करने को तैयार है, जिस प्रकार पहली सरकार के हाथ मज़बूत करती रही है।

श्रीमानजी, इस संस्था की एक विशेषता सरकार के हाथ मज़बूत करने के अतिरिक्त मैदान में कूद पड़ना भी है। इसलिए आज भी हम अपने प्रिय प्रधानमंत्री के मामूली इशारे पर मैदान में कूद पड़ने को तैयार हैं, बशर्ते कि मैदान में यहां से वहां तक रूई के गद्दे, मखमल के नहालचे और गलीचे बिछा दिये जायें। उनके बिना मैदान में कूदना नुकसान का कारण बन सकता है। चोट आ सकती है, मोच आ सकती है, जो देश की वर्तमान शोचनीय अवस्था को देखते हुए उपयुक्त नहीं होगा?

श्रीमानजी, देशभक्त स्वयंसेवक संस्था (रजिस्टर्ड) के दरवाज़े सब के लिए खुले हैं। इसलिए कि इसके किंवाड़ भूतपूर्व पदाधिकारी उखाड़कर ले गये हैं। ईश्वर को धन्यवाद है कि इसके नाम का बोर्ड ऊंचाई पर और पक्की कीलों से स्थापित था, नहीं तो उसे भी ले जाते। अब उस बोर्ड को संस्था बड़ी खुशी से राष्ट्र को समर्पित करने के लिए तैयार है। यह मज़बूत शीशम की लकड़ी का बना हुआ है। इस पर धोबी कपड़े पटक सकते हैं, और जो धोबी नहीं, वे सिर पटक सकते हैं।

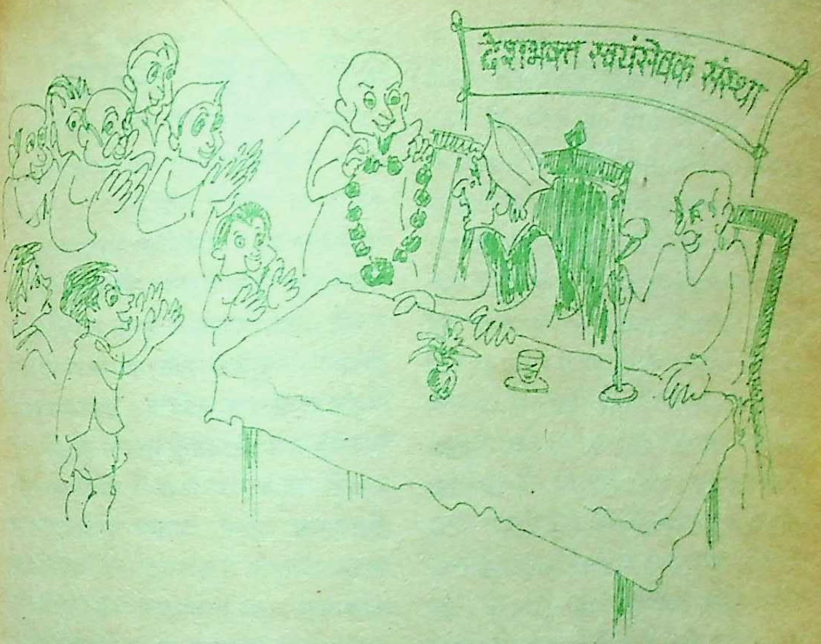

श्रीमानजी, संस्था के सभी कार्यकर्ता, जैसा कि निवेदन कर चुका हूं, उच्चकोटि के निःस्वार्थ कार्यकर्ता हैं। उनसे फोई उनकी सेवा के बदले की बात करता है, तो मारने को दौड़ते है। यह सेवक मियां फकीर मुहम्मद फकीर, सेक्रेटरी, देशभक्त स्वयंसेवक संस्था, विशेषतया फकीर स्वभाव का आदमी है। इसे आप से कोई इच्छा नहीं है - सिवाय पद की इच्छा के। अन्य कोई प्रलोभन नहीं है, सिवाय रुपये के प्रलोभन के। पिछली सरकार ने सेवक को खरीदने का बहुत प्रयत्न किया, लेकिन खरीद न सकी। पहले मंत्रीपद की पेशकश कीं। सेवक ने उस पर लात मार दी। राजदूत का पद पेश किया, उस पर भी लात मार दी। सेवक दौलत पर लात मार चुका है, शोहरत पर लात मार चुका है। अन्य भी कई चीज़ों पर लात मार चुका है, जिनकी सूची लम्बी है। खेद है, अब यह लात इस योग्य नहीं रही कि और किसी चीज़ पर मारी जा सके। आदत से मजबूर इस सेवक ने एक कुत्ते को लात मार दी थी। वह मुहावरे नहीं समझता था, त्याग के अर्थ से अवगत नहीं था। उसने जवाब में दांत मार दिये मनुष्यता के प्रतिकूल हरकत की।

श्रीमानजी, जैसा कि सेवक ने निवेदन किया-सेवक को आपसे या आपकी सरकार से

किसी प्रकार का कोई मतलब नहीं, फिर भी सेवक को नगर के केन्द्रीय मार्केट में, जो निर्माणाधीन है, कोने वाली बड़ी दुकान अलाट कर दी जाये, तो सेवक की त्याग भावना और निःस्वार्थ सेवा के संकल्प को प्रोत्साहन मिल सकता है। सेवक की फर्म का नाम श्रीमानजी ने अवश्य सुना होगा। 'फकीर स्टोन वर्क्स' के नाम से चक्की के पाट, पत्थर के गमले, कब्रों के लिंए संगमर्मर और कस्बे के पायेदार पत्थर मुहैया करना इस फर्म की विशेषता है। हमारे प्रिय प्रधानमंत्री ने पिछले दिनों फरमाया था कि हमें मेहनत क़रनी चाहिए। पेट पर पत्थर बांध कर देश के लिए रात-दिन काम करना चाहिए। सेवक की फर्म ने लोगों के पेट पर बांधने के लिए पत्थर मुहैया करने का बीड़ा उठाया है। यहं पत्थर मंघो पीर की पहाड़ी के है। इसलिए मज़बूत होने के अतिरिक्त आध्यात्मिकता से भरपूर है। ये पत्थर पेट बांधने के अलावा भी कई काम आ सकते हैं। महबूब लोग इनसे 'प्रेम-स्थान' बनवाते हैं और इस पर आशिक लोगों से जीभें घिसवाते हैं, नाक रगड़वाते हैं। जीभ और नाक घिसने के बलावा आप इन पर हलदी और मिर्च भी भलीभांति पीस सकते हैं। आत्महत्या के लिए भी हमारे यहां के पत्थर परखे हुए हैं। जो कोई भी इनको बांध कर दरिया में कूदा, फिर पानी की सतह पर नहीं उभरा। निर्दयी समाज हाथ मलता रह गया। आत्महत्या करने वालों के असंख्य प्रमाण-पत्र हमारे पास मौजूद हैं कि हमको एक ही पत्थर से सचमुच फायदा हुआ। जीवन-बंधन और दुखी जगत से मुक्ति मिल गयी। अब कुछ पत्थर अमुक-अमुक महाशयगण को हमारी ओर से भेज दीजिये। दुकान से दरिया के पुल तक पहुंचाने का खर्च फर्म अपने पल्ले से देती है।

श्रीमानजी, न जाने किस शायर ने कहा है, लेकिन खूब कहा है, कि 'उस रिज़क से मौत अच्छी, जिस रिज़क से आती हो परवाज़ में कोताही।' वाकई सारी खराबियों की जड़ रिज़क यानी अन्न आदि हैं। इस समय हमारे देश को अन्न की उतनी ज़रूरत नहीं, जितनी पत्थरों की है। एक छोटी-सी मिसाल है। हमारे एक बुजुर्ग, जिनका वाम इस समय हमारे मस्तिष्क से उतर गया है, अन्न के दाने के कारण स्वर्ग से निकाले गये। आज तक कोई पत्थरों के कारण स्वर्ग से नहीं निकाला गया, स्वर्ग तो क्या, नरक से भी नहीं निकाला गया। शायर ने जो रिज़क से मौत को बेहतर बताया है, यह भी एक नुक्ते की बात है। यह भी चतुराई से खाली नहीं है। मरनेवाले के मज़ार पर हमारे दुकान के मज़बूत और खूबसूरत पत्थर लगाये जा सकते हैं, किसी ज़िंदा आदमी के मज़ार पर नहीं। जिसने एक बार अपनी कब्र पर हमारे पत्थर की तख्ती लगवायी, सदा के लिए हमारा प्रेमी हो गया। श्रीमानजी, एक पत्थर यह सेवक, निधन-तिथि सहित आपकी भेंट करता है। आशा है, स्वीकार करेंगे।

**अनुवादक : सुरजीत**

व्यंग्य

# 'बरस गये बदरा झमाझम...

□ के.पी. सक्सेना

खुद परमात्मा गवाह है कि परमात्मा के बाद मेरा सब से अधिक विश्वास मौसम-विभाग में है। संभवतः यही कारण है कि सुबह के अख़बार में मैं सब से पहले मौसम पढ़ता हूं। टी.वी. पर भी या तो मैं सिर्फ विज्ञापन देखता हूं या ख़बरों के अन्त में मौसम का हाल। बाकी टाइम मेरे टी.वी. सेट पर ग़िलाफ चढ़ा रहता है। बच्चों को भी तोकीद है कि सनलाइट और निरमा के अलावा सिर्फ मौसम का हाल और चार महानगरों का न्यूनतम और अधिकतम तापमान सुनें और बंद कर दें...।

मौसम शास्त्रियों के प्रति मेरी इतनी अगाध निष्ठा है कि जब जब पेपर में होता है कि गरज के साथ छींटे पड़ेंगे, मैं ऊनी कपड़े इस विश्वास के साथ सूखने डाल देता हूं कि आज शर्तिया दिन भर तेज़ धूप रहेगी। और जब प्रसारित होता है कि मौसम सूखा रहेगा, तब मैं छाता, रेनकोट, गमबूट तड़ से निकाल लेता हूं। उस दिन शर्तिया बारिश होती है। कुल मिलाकर मैं मौसम विभाग की जानकारी का ज़रूरत से ज्यादा से भी कुछ अधिक आभारी हूं। ऐसी निष्ठाएं आज इन्डिया में बहुत कम मिलती हैं। ख़ैर...।

उधर मौसम विभाग के प्रति मेरे मन में सहानुभूति भी है। कभी-कभी बेचारे बड़ी इल्लत में फंस जाते हैं। एक अदद नमूना देखो आप। घटना राजनंद गांव की है। आपकी जानकारी के लिए अर्ज़ कर दूं कि राजनंद गांव जो है वह महाराष्ट्र में है। कहते हैं कि गत वर्ष एक दिन अख़बार में ख़बर छप गई कि वहां एक दिन २४ घंटों में २७ मिलीमीटर वर्षा हो गई! मगर तमाशा यह देखो आप कि इतनी झमाझम बारिश के बावजूद वहां के किसान मुंह लटकाए तथा इंद्र देवता के प्रति गाल फुलाए बैठे थे! क्यो? क्योंकि सचमुच में वहां एक बूंद पानी भी नहीं बरसा था! खेत सूखे पड़े थे। पूरी २७ मि.मी. वर्षा मौसम-विभाग के रजिस्टरों और अख़बार के पन्नों में ही होकर रह गई। ख़बर पढ़ कर चिढ़े हुए किसानों ने मामला ऊपर पहुंचाया और तड़ से छानबीन शुरू हो गई। जांचोपरान्त पता लगा कि सारा कुसूर मौसम-विभाग के वर्षा मापक यंत्र का था। यह यंत्र वर्षा का पानी नापने के लिए खुले में रखा रहता है। हुआ यों कि रात में कुछ कुत्ते इस यंत्र पर कृपा दृष्टि डाल गये और वर्षा मापक यंत्र २७ मि.मी. भर गया। बाकी

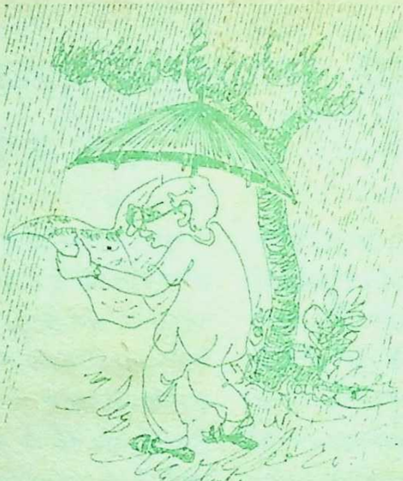

सब खैरियत। यंत्र पढ़ कर अख़बारों को २७ मि.मी. की सूचना जारी कर दी गई। यह किसी ने न देखा कि आजूबाजू कि ज़मीन सूखी पड़ी है। रजिस्टरों की जांच से पता लगा कि कुत्तेजी की कृपा स्वरूप इस इलाके में टोटल ९०० मि.मी. वर्षा रेकार्ड की गई... भले ही ज़मीन सूखी की सूखी रही...।

अब आप भली भांति समझ गये होंगे कि मौसम विभाग के प्रति मेरी इतनी ज़बरदस्त श्रद्धा क्यों हैं? आज भी (जब मैं यह लेख लिख रहा हूं) सुबह पेपर में छपा कि लखनऊ और आसपास सारा दिन बूंदाबांदी का अनुमान है। आसपास का मुझे पता नहीं, अलबत्ता लखनऊ में मैं सारा दिन छतरी तले बैठा रहा। शाम को देखा कि मैं, और छतरी दोनों, सूखे हैं। हां, चिलचिलाती धूप से ज़रूर बचा रहा छतरी के कारण। हां, इतना शुक्रगुज़ार मैं ज़रूर हूं कि मौसम-विभाग की पेशीनगोई के फलस्वरूप मैं दिन भर कल्पना करता रहा... घटाएं घिर रही हैं... बिजलियां चमक रही हैं... पानी बरस रहा है। यह कल्पना ही बहते पसीने से राहत देने को काफ़ी थी। बस यहीं पर मुझे शेर याद आ गया–

**'बरसीं वहीं वहीं पे समन्दर थे जिस जगह,**
**ऊपर से हुक्म था तो घटाएं भी क्या करें।'**

–७२, नारायण नगर, रामसागर
लखनऊ - २२६०१

□

---

मा

मेष : (१
माह व
प्रतिकूलत
के अन्य
आर्थिक ए
संतोषप्रद
ओर से स
एवं राज
आपका
आमोद-प्र
होगी। अ
मिलेंगे।
अपेक्षित
वृष : (१
आपके
निश्चय ह
अंतिम स
उल्लेखनी
परिवार-स
व्यवधान
हो सकती

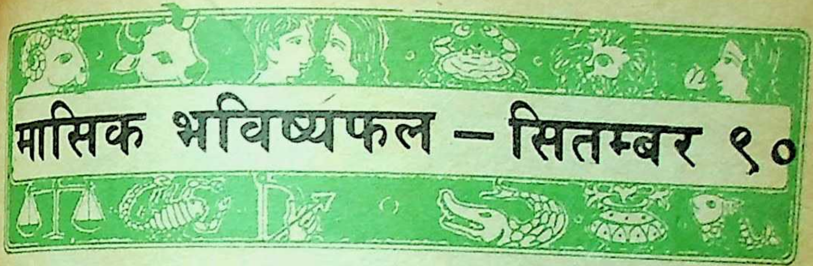

# मासिक भविष्यफल – सितम्बर ९०

**□ पं. वी. के. तिवारी**

**मेष : (१४ अप्रैल-१४ मई)**

माह का द्वितीय सप्ताह आपको समय की प्रतिकूलता का साक्षी बतायेगा। जबकि माह के अन्य दिनों में ग्रहों के समन्वित प्रभाव आर्थिक एवं व्यावसायिक दृष्टि से सामान्यत: संतोषप्रद स्थिति के होंगे। संतान पक्ष की ओर से सुखद संयोजन होगा। कार्यालयीन एवं राजनीति के क्षेत्र में रचनात्मक एवं आपका सहयोगी रुख प्रशंसनीय होगा। आमोद-प्रमोद,यात्रा के अवसरों में वृद्धि होगी। आध्यात्मिक एवं भौतिक सुख यथेष्ठ मिलेंगे। शरीर कष्ट की स्थिति के प्रति अपेक्षित ध्यान देना उपयोगी रहेगा।

**वृष : (१५ मई-१५ जून)**

आपके सुखों में कटौती करने हेतु ग्रह निश्चय ही कटिबद्ध हैं। माह का प्रथम व अंतिम सप्ताह प्रतिकूलता की दृष्टि से उल्लेखनीय कहा जा सकता है। परिवार-सुख संतान एवं दांपत्य सुख में व्यवधान उत्पन्न होंगे। लंबी अबाधित यात्रा हो सकती है। धैर्य, संयम, शांति एवं स्थितियों का सूक्ष्मावलोकन करने के उपरांत अपनी राय निर्धारित करना विशेष आवश्यक होगा। आत्मीय वर्ग से विवाद या मतभेद की कटु स्थिति निर्मित हो सकती है। अपव्यय, आरोप, धनक्षति आदि स्थितियाँ मानसिक पीड़ा देंगी।

**मिथुन : (१६ जून-१६ जुलाई)**

विरोधी स्थितियों का सृजन आपको हतप्रभ कर देगी। स्वास्थ्य के प्रति ध्यान रखें। लंबी यात्रा का योग प्रबल है। रोगादि तथा अन्य आकस्मिक व्यय आपके संतुलित-आर्थिक पक्ष को चरमरा देंगे। आपको प्रयासों के वांछित परिणाम नहीं मिल सकेंगे। परिवार-सुख यथेष्ठ रहेगा। यशवर्धक स्थितियां बनेंगी। मन की स्थिरता संदिग्ध रहेगी। उच्चवर्ग आपके कार्यों से संतुष्ट नहीं होगा। मित्रों से वांछित सहयोग मिलेगा। स्थानपरिवर्तन या कार्यपरिवर्तन के अवसर उत्पन्न हो सकते हैं।

**कर्क : (१७ जुलाई-१६ अगस्त)**

आपका दांपत्य जीवन, धन-लाभ,

यशवृद्धि से योजना का संयोजन सफल सफल एवं सुखद रहेगा। माह का द्वितीय सप्ताह श्रेष्ठ सिद्ध होगा। प्रथम एवं तृतीय सप्ताह में मन में खिन्नता अवसाद एवं शारीरिक कष्ट की स्थिति बनेगी। लंबित प्रकरण निपटेंगे। परिवार से बाहर के व्यक्ति द्वारा आपके हित में चिंतन एवं कार्य किया जायेगा। समस्या का समाधान आपके पक्ष में होगा। विजयश्री के प्रति आपकी आकांक्षा एवं प्रयास के परिणाम उत्तम रहेंगे।

### सिंह : (१६ अगस्त-१६ सितम्बर)

यह माह विभिन्न-स्तर सामान्य सा ही व्यतीत होगा। आशा के अनुरूप कार्य-प्रगति होगी। आय कम होगी। महत्त्वपूर्ण व्यक्तियों से सम्पर्क बढ़ेंगे। नये कार्य या दायित्व के अवसर मिलेंगे। जोखिम लेना हितकर नही होगा। राजनीति में विवाद गहरायेंगे। दौड़्धूप बढ़ेगी। समय का व्यर्थ ही अपव्यय होगा। दांपत्य जीवन में एवं संतान पक्ष से सुखभाव की स्थिति बनेगी। विश्वसनीय साथियों की मूल्यवान मदद से कार्य पूर्ण हो सकेंगे। द्वितीय सप्ताह विशेष उत्तम रहेगा।

### कन्या : (१७ सितम्बर-१६ अक्तूबर)

आपको मानसिक कष्ट अधिक रहेगा। उलझनें बढ़ेंगी। रोजगार, राजनीति एवं व्यवसाय तीनों ही दृष्टि से माह विशेष अनुकूल नहीं रहेगा। तनाव एवं पीड़ा की दुःस्थिति से इंकार नहीं किया जा सकता हैं। नये कार्य में हाथ न डालें। व्यवसाय एवं आवश्यक कार्यों में धन की कमी की प्रतीति होगी। द्वितीय सप्ताह श्रेष्ठ व्यतीत होगा।

### तुला : (१७ अक्तूबर-१५ नवंबर)

आपको शारीरिक दृष्टि से विशेष कष्ट एवं पीड़ा मिल सकती है। संतान एवं भाग्य संबंधित कार्य की प्रगति उत्साहवर्धक रहेगी। स्थायी लाभ के अवसर बढ़ेंगे। यश बढ़ेगा। कनिष्क वर्ग से स्तरीय सहयोग मिलेगा। आपकी योजना पूर्ण होगी। अधिकार बढ़ेंगे। व्यवसायिक एवं राजनीतिक लाभ संतोषप्रद रहेंगे। प्रभाव व सम्मान में वृद्धि होगी। तृतीय सप्ताह श्रेष्ठतम होगा। नये कार्य या जोखम के कार्य में आप सफल रहेंगे। माह के उत्तरार्ध में व्यय एवं विवाद अथवा यात्रा के अवसर निश्चय ही उत्पन्न होंगे, जिनसे सुख-प्रवाह में विराम लगेगा।

### वृश्चिक (१६ नवंबर-१५ दिसम्बर)

वर्ष का श्रेष्ठतम माह सिद्ध हो सकता है। विभिन्न स्तर पर यश, सफलता, आकांक्षापूर्ति, समस्या एवं लंबित कार्य-निपटारा आदि के सुयोग प्रतीक्षित हैं। जोखम, नयी योजना, सटीक निर्णय अथवा व्यावसायिक संबंधों में वृद्धि संतोषप्रद रहेगी। संतान एवं दांपत्य पक्ष की ओर से चिंता उत्पन्न हो सकती है। गृह-कलह संभावित है। माह का उत्तरार्ध स्थायी लाभ की दृष्टि से उल्लेखनीय है। समस्याओं पर विजय मिलना सहज है।

**धनु : (१६ दिसम्बर-१३ जनवरी)**

सुख-दुख की मिश्रित स्थितियों से आप उबर नहीं सकेंगे। गृह सुख-दुख के भी अवसर समान रहेंगे। व्यय में वृद्धि होगी। प्रयासों के परिणाम सामान्यतः आपके पक्ष में रहेंगे। वकील, विद्यार्थी एवं प्रशासनिक वर्ग को आंशिक सफलता, परंतु अवरोध के पश्चात ही मिलेगी। १८ से २३ तारीख तक की अवधि विरोधी, विपरीत या प्रतिकूल स्थितियों पर लगाम लगाने का अवसर देने के साथ-साथ सफलता, यश, समृद्धि एवं सिद्धि प्रदान करेगी।

**मकर : (१४ जनवरी-१२ फरवरी)**

वर्ष का यह प्रतिकूलता भरा माह सिद्ध हो सकता है। आपके कार्यों, परिश्रम एवं योजना का लाभ अन्य व्यक्तियों को मिलेगा। यात्रा या व्यस्तता की अधिकता से शरीर-सुख प्रभावित होगा। व्यय एवं दांपत्य सुख में कमी होगी। वाहन से कष्ट की संभावना प्रबल है। उच्चपदस्थ व्यक्तियों एवं सहयोगियों की ओर से अपयशदायी स्थितियां सृजित की जा सकती हैं। तृतीय सप्ताह विशेष उपादेय रहेगा।

**कुंभ : (१३ फरवरी-१४ मार्च)**

लेखक, वकील एवं योजना से जुड़े व्यक्तियों के लिए माह उत्कर्षपूर्ण एवं यशवर्धक सिद्ध होगा। रोजगार में प्रशंसा के अवसर पर्याप्त हैं। न्यायलयीन कार्यों में ग्रह आपको यश देंगे। आर्थिक एवं सामाजिक दृष्टि से माह विशेष उपयोगी रहेगा। वरिष्ठवर्ग आपके सहयोग के बिना स्वयं को पंगु समझेगा। महत्त्वपूर्ण यात्रा का उद्देश्य पूरा होगा। द्वितीय सप्ताह विशेष प्रतिकूल रहेगा, जबकि अंतिम सप्ताह विशेष उत्तम सिद्ध होगा।

**मीन : (१५ मार्च-१३ अप्रैल)**

पारिवारिक जीवन में सुख, शांति एवं आरोग्यता की स्थिति रहेगी। विलंब एवं बाधाओं की स्थिति समाप्त होगी। आकांक्षाओं की पूर्ति प्रयासों से अवश्यमेव होगी। विरोधी वर्ग मुंह की खायेगा। स्थायी काम एवं पराक्रम में वृद्धि होगी। परिवार में आत्मीयता एवं सद्भाव बढ़ेगा। नये सम्पर्क जुड़ेंगे।

**व्रत एवं त्यौहार (सितम्बर)**

जलझूलनी/पद्मा एकादशी-१: प्रदोषव्रत, भुनेश्वरी जयंती-२: अनंत चतुर्दशीव्रत, उमा-महेश्वर व्रत-४: महालयारंभ-५: गणेश चतुर्थीव्रत-८: महालक्ष्मी व्रत, काली जयंती-११: कालाष्टमी, जीवित्पुत्रिका व्रत-१२: इंदिरा एकादशी व्रत-१५: प्रदोष व्रत-१६: मासशिवरात्रि व्रत-१७: सर्ववैत्री अमावस्या, पितृमोक्ष अमावस्या-१८: शारदीय कलशस्थापना, नवरात्रारंभ-२०: विनायक गणेशचतुर्थी व्रत-२२: महाष्टमी, दुर्गाष्टमी व्रत-२६: महानवमी व्रत-२८: विजयादशमी-२९: पापांकुशा एकादशी व्रत-३० सितम्बर। **—देवलोक कालोनी,**

**सी. टी. ओ., बैरागढ़, भोपाल, म. प्र.**

# विश्वासघात

□ शकुन्तला वर्मा

आज सर्जन दुबे का ऑपरेशन डे था। उनकी पूरी टीम उन्हें सहायता करने के लिए ऑपरेशन थियेटर में पहुँच चुकी थी। पल्लवी ने समय से पहले ही पहुँच कर एक बार ऑपरेशन थियेटर का निरीक्षण कर लिया था। उसे भली प्रकार मालूम था ऑपरेशन के समय डॉ. दुबे जरा-सी भी लापरवाही से बेहद नाराज़ हो जाते हैं और फिर ऑपरेशन के बाद एक-एक सहयोगी का बाकायदा क्लास लगता है। पल्लवी सर्जन दुबे के अंडर में एम.एस. कर रही थी। वह यह नहीं चाहती थी कि ज़रा-सी लापरवाही के लिए उसके सर सबके सामने उसे कुछ कहें।

सही समय पर डॉ. दुबे ऑपरेशन थियेटर में आये। मरीज को एनीसथीसिया देने के लिए डॉ. चन्द्रा को उन्होंने कहा। और देखते ही देखते ऑपरेशन शुरू हो गया। जिस कुशलता से पल्लवी डॉ. दुबे को आसिस्ट कर रही थी उसे देख डॉ. चन्द्रा अभिभूत हो गये।

बाहर निकल कर उन्होंने डॉ. भण्डारी से पूछा—'यह कौन लेडी डाक्टर, डॉ. दुबे को ऑपरेशन में मदद कर रही थी? अभी से उसके हाथ में बड़ी सफ़ाई है। लगता है जल्दी ही अपनी फील्ड में काफी नाम कमायेगी।'

'आप डॉ. पल्लवी जोशी की बात कर रहे हैं। यह हमारे कालेज की सबसे तेज़ छात्राओं में रही है। पांचों साल फ़र्स्ट डिवीजन और पोजीशन से पास हुई है। और अब सर्जन दुबे के अंडर के एम.एस. कर रही है।'

'लगता है डॉ. दुबे को उस पर काफी भरोसा है।' डॉ. चन्द्रा ने जिज्ञासा से पूछा।

'आफ कोर्स। उसकी जैसी छात्रा का डॉ. दुबे के अण्डर शोध करना मामूली बात नही है। डॉ. दुबे तो इतने सख़्त मिज़ाज़ हैं कि उनके साथ काम करना हंसी-खेल नहीं है। अच्छे-अच्छों को मिनटों में रुला देते हैं। लेकिन डॉ. जोशी के काम से वह बेहद खुश हैं। समझिए आजकल वह उनका दाहिना हाथ हैं।' कह कर डॉ. भण्डारी ऑपरेशन थियेटर के बग़ल वाले कमरे में जाकर एपरन वगैरा बदलने लगे।

डॉ. युगीन्द्र चन्द्रा पल्लवी की कुशलता पर ही विमुग्ध नहीं हुए। जब उन्होंने उसे साड़ी

पर ख़ाली एपरन पहने जाते हुए देखा तो उन्हें लगा पल्लवी आम लड़कियों से कहीं हट कर है। चुने हुए नैन-नक्श, खुलता गुलाबी रंग, चल-ढाल में गरिमा, सौम्यता का अजब संगम था उसमें। उन्हें लगा काश पल्लवी उन्हें जीवनसंगिनी के रूप में मिल जाये तो उनका सपना साकार हो जाये।

उन्होंने आगे बढ़ कर कहा—'डॉ. जोशी। कैंटीन में चलकर मेरे साथ एक प्याला चाय पीने में आपको कोई इतराज़ तो नहीं है।'

'इस समय क्षमा चाहूंगी। मरीज़ को पोस्ट आपरेटिव वार्ड में पहुंचवा कर उसे वहां ठीक से सैटिल करवाना है। आपकी चाय ड्यू रही। फिर कभी पी लूंगी' कह कर पल्लवी जल्दी-जल्दी कदम बढ़ाती पोस्ट ऑपरेटिव वार्ड की ओर बढ़ गयी।

डॉ. चन्द्रा दूर तक जाती पल्लवी को निहारते रहे। फिर उन्होंने अपना स्कूटर उठाया और वहाँ से चल दिये।

कई दिनों तक युगीन्द्र के मन में ऊहापोह मचा रहा। किस तरह से पल्लवी के सामने मित्रता का हाथ बढ़ाया जाये। जब भी वह मेडिकल कालेज जाते पल्लवी को अपने काम में व्यस्त पाते। उसके धीर-गम्भीर सौम्य व्यक्तित्त्व के आगे उनका साहस न पड़ता कि वह इससे कुछ बात कर सकें। कोई अन्य रास्ता न देख एक दिन उन्होंने अपनी माँ से कहा— 'मां तुम और पापा मेरी शादी के लिए पीछे पड़े हो।मैं शादी करने को तैयार हूं मगर मेरी एक शर्त है।'

'कौन सी शर्त?' मां ने उत्सुकता से पूछा।

युगीन्द्र ने पल्लवी के विषय में आदि से अन्त तक सब बता दिया और फिर बोले—'मां, इस विवाह के प्रस्ताव को लेकर आप लोगों को ही जाना होगा।'

मां ने पुत्र का पल्लवी के प्रति आकर्षण देखा फिर मन ही मन सोचा। देखने में सुन्दर, पढ़ने में कुशाग्र-बुद्धि। पुत्र और पुत्र-वधू दोनों डॉक्टर। इससे अच्छा जोड़ा कहां मिलेगा। उन्होंने मुस्करा कर युगीन्द्र की शर्त मान ली।

एक दिन शाम को दोनों पति-पत्नी विवाह का प्रस्ताव लेकर जोशीजी के घर पहुँचे। पल्लवी के माता-पिता ने दोनों की आवभगत में कोई कोर-कसर नहीं रखी। घर बैठे लड़की के विवाह का प्रस्ताव और वह भी डाक्टर लड़का। पल्लवी को देखकर युगीन्द्र के माता-पिता गद्गद् हो गये। ऐसी सर्वगुण सम्पन्न बहू की तो उन्होंने स्वप्न में भी कल्पना नहीं की थी।

चलते समय चन्द्रा साहब ने इतना ही कहा—'हमारी ओर से शादी की हाँ है। आप पल्लवी बेटी से और पूछ लें। आजकल पहले जैसा ज़माना तो रह नहीं गया कि जहाँ माता-पिता ने पसन्द कर ली वहीं लड़के-लड़की चुपचाप शादी कर लिये। अबके बच्चे पढ़े-लिखे होते है। उन्हें अपना जीवन-साथी चुनने की स्वतंत्रता तो होनी ही चाहिए।'

'अच्छी बात है। मैं पल्लवी से पूछकर आपको एक-दो दिन में जवाब देने स्वयं आपके यहाँ आऊंगा।' कह कर अमरेन्द्र और उनकी पत्नी उन्हें फाटक तक छोड़ने गये।

उन लोगों के जाने के बाद अमरेन्द्र ने पल्लवी को अपने पास बुलाया और पूछा—'तुमने डॉ. युगीन्द्र को देखा है?'

'जी पापा। एक ऑपरेशन में पिछले हफ़्ते वह हम लोगों के साथ थे।'

'अगर लड़का तुम्हें ठीक लगा है तो मैं हां कर दूं। हम दोनों के परिवार ही मध्यमवर्गीय हैं। रहन-सहन में खास अन्तर न होंने से तुम्हें एडजस्टमेंट में ख़ास दिक्कत नहीं होगी। उन्होंने खुद शादी का पैग़ाम दिया है। मेरे ख्याल से इनके वहाँ से कोई

ख़ास मांग भी नहीं होनी चाहिए।'

'पापा, वैसे तो सब ठीक है। मगर मैं अपना एम.एस. पूरा किये बिना विवाह नहीं करूंगी। अगर वह लोग इस बात से सहमत हों तो मुझे कोई एतराज़ नहीं है।'

'अच्छी बात है। विवाह की तिथि तुम्हारे इम्तहान के बाद ही रखी जायेगी,' कह कर जोशीजी अपने कपड़े बदलने चले गये।

युगीन्द्र के पापा अमरेन्द्रजी के इस प्रस्ताव से सहमत हो गये कि विवाह पल्लवी के इम्तहान के बाद होगा। अंगूठी बदलवा कर सादी-सी मंगनी की रस्म कर दी गयी।

एम.एस. का इम्तहान होते ही युगीन्द्र और पल्लवी परिणय-सूत्र में बंध गये। हनीमून से लौटे तो पल्लवी ने मेडिकल कालेज ज्वाइन करना चाहा। मगर युगीन्द्र ने कहा—'पल्लवी, मैंने पी.एम.एस. का इम्तहान दिया था। मेरी पोस्टिंग जबलपुर हो गयी है। यहाँ मैं एडहॉक बेसिस पर हूं। पता नहीं कब तक ऐसे लटके रहना पड़े। तुम यहाँ और मैं अकेला वहाँ। भला बताओ हमारे विवाह करने का क्या फायदा? तुम भी क्यों नहीं वहीं सिविल हास्पिटल ज्वाइन कर लेतीं।'

'मगर युगीन्द्र, मैंने जी-जान लगाकर एम.एस. किया है। सिविल अस्पताल में आम डॉक्टर बन कर रह जाऊंगी। रात-दिन वही डिलीवरि के केस—' पल्लवी ने उदास मन से कहा।

'तुम मेरी ख़ातिर इतना भी त्याग नहीं कर सकती?' युगीन्द्र ने पल्लवी की ओर आशा भरी निगाहों से देखा।

युगीन्द्र के प्यार, नई-नई शादी के खुमार ने पल्लवी को कुछ सोचने ही नहीं दिया। वह भी युगीन्द्र के साथ जबलपुर चलने को तैयार हो गयी।

चलने से पहले वह सर्जन दुबे से मिलने गयी। उन्होंने बस इतना ही कहा—'तुमसे मुझे बड़ी आशाएं थीं, पल्लवी। ख़ैर अब तुम किसी की पत्नी हो। उसके सुख-दुख का ख्याल रखना भी तुम्हारा फर्ज़ है। जहां भी रहो सुखी रहो, यही मेरा आशीर्वाद है।'

पल्लवी का एपाइंटमेंट महिला सिविल अस्पताल में हो गया। दोनों पति-पत्नी प्रसन्न थे। विवाह के एक वर्ष बाद ऋषि का जन्म हुआ। और उसके डेढ़ साल बाद छवि का। पल्लवी रात-दिन अस्पताल, घर और बच्चों में इतनी व्यस्त रहने लगी कि उसे सांस लेने की भी फुरसत न मिलती।

एक रात जब वह काम निबटा कर बच्चों को सुलाकर लेटने आई तो युगीन्द्र उसे कुछ देर एकटक देखता रहा। पल्लवी हंसकर बोली—'ऐसे क्या देख रहे हो? क्या पहले कभी मुझे देखा नहीं है?'

'देखा तो ज़रूर है। मगर आज की तरह नहीं।'

'आज कोई ख़ास बात है क्या?' पल्लवी के स्वर में सहज उत्सुकता झलक रही थी।

'वायदा करो, जो कुछ मैं कहूंगा उसे सुनकर न तुम उदास होगी, न रोओगी।'

सुनते ही पल्लवी का जी धक् से हो गया। वह धम् से पलंग पर बैठते हुए बोली—'प्लीज़ युगीन्द्र, पहेलियां मत बुझाओ साफ़-साफ़ बताओ बात क्या है?'

युगीन्द्र ने उसे अपने निकट बैठाते हुए कहा—'कैसी डाक्टर हो? ज़रा-सी बात में इतना नर्वस हो रही हो। ऐसे घबराने की कोई बात नहीं है। तुम नाहक परेशान हो रही हो। मैंने हायर स्टडी के लिए लन्दन में एप्लाई किया था। वहां से मंजूरी आ गयी है। मगर मुझे वह स्कॉलरशिप देने को तैयार नहीं हैं। आने-जाने और वहां रहने का खर्च मुझे खुद करना होगा।'

'कितनें दिनों का कोर्स है?'

'बस यही कोई एक डेढ़ साल का। पल्लवी, अगर तुम मेरा साथ दे दो तो मैं यह कोर्स कर सकता हूं। मैं जानता हूं मेरे जाने के बाद अकेले तुम्हें बहुत परेशानी होगी। यहाँ मुझे वेतन नहीं मिलेगा। बस तुम्हारे भेजे खर्च से ही मैं अपनी पढ़ाई पूरी कर पाऊंगा। तुम्हें बेहद आर्थिक तंगी हो जायेगी।' युगीन्द्र ने दबी ज़बान से कहा।

'अगर तुम्हारा मन है युगीन्द्र, तो मैं तुम्हारे आड़े नहीं आऊंगी। साल-डेढ़ साल जैसे भी बनेगा हम और बच्चे काट लेंगे। मैं नहीं चाहती तुम्हारी मन की साध तुम्हारे मन में ही रह जायें।' कर कर पल्लवी चुप हो गयी।

डॉ. युगीन्द्र ने दौड़-धूप कर अपना पासपोर्ट और वीज़ा बनवाया और एक महीने के भीतर ही वह पल्लवी और बच्चों से विदा ले फ्लाई कर गया।

शुरू-शुरू में उसके जल्दी-जल्दी पत्र आते। जहाँ जाता वहाँ का विस्तार से वर्णन करता। लिखता, 'तुम्हारे और बच्चों के बिना जीवन यहाँ इतना सूना लगेगा मैंने कभी कल्पना भी नहीं की थी। इच्छा होती है पंख लगाकर उड़ कर तुम लोगों के पास पहुंच जाऊं। ऋषि बड़ा हो रहा है। उसका विशेष ध्यान रखना। छवि कैसी लगती है। तुम सब बहुत-बहुत याद आते हो।'

जिस दिन पत्र आता पल्लवी दिन में उसे कई-कई बार पढ़ती। पापा कहाँ हैं? कैसे हैं सारी बातें विस्तार से बच्चों को बताती। वेतन मिलते ही उसका पहला काम होता युगीन्द्र को पैसे भेजना। विदेश में किसी बात की ज़रूरत पड़े तो वह किसके आगे हाथ फैलायेगा।

कहते हैं दुख का एक पल भी युग के समान बीतता है और खुशी का समय कब आता है और कब बीत जाता है इंसान जान ही नहीं पाता। युगीन्द्र को गये सवा साल से ऊपर होने को आ रहा था। ऋषि स्कूल जाने लगा था। छवि को घर पर अकेले छोड़ने की समस्या थी। मगर आया को छोड़ एक महरी तक तो वह रख नहीं सकती थी। प्रायः वह कमरे में खिलौने रख, खिला-पिला कर छवि को घर में बन्द करके अस्पताल जाती। हाथ और मस्तिष्क एक ओर मरीज़ों को देखते और उनका हाल सुनते होते पर

मन उसका छवि के आस-पास मंडराया करता। उसे लगता किसी तरह युगीन्द्र वापस लौटे तो उसका यह संकट दूर हों। फिर वह अपने मन को समझा लेती कि बस तीन-चार महीने की तो बात और है। फिर उसका घर-संसार पहले की तरह भरा-पूरा होगा। जहां इतना समय काट लिया, वहाँ कुछ महीनों की तो बात और है।

धीरे-धीरे युगीन्द्र के पत्र कम आने लगे। आते भी तो बस यही लिखा होता पढ़ाई में व्यस्त हूं। इतना समय ही नहीं मिलता कि तुम्हें विस्तार से पत्र लिखूं। पैसे जल्दी से जल्दी भेज देना।

फिर तीन महीने कोई पत्र नहीं आया। पल्लवी बेहद परेशान। कहीं ऐसा तो नहीं कि ज्यादा मेहनत और जलवायु परिवर्तन की वजह से वह बीमार पड़ गया हो। जितना ही वह सोचती उतना ही उसका मन चिन्ताओं से और घिरता जातां। साथ के डाक्टरों ने राय दी केबिल भेज कर हाल पूछ लो।

केबिल का जवाब आया। नया कोर्स ज्वाइन कर लिया है। फिलहाल वापस नहीं आ सकता। पल्लवी उस दिन अकेले में फूट-फूट कर रोई। उसे लगा अकेले छोटे-छोटे बच्चों के साथ एक-एक पैसे को मोहताज होकर कैसे दिन गुज़ारे हैं, यह केवल वही जानती है। ऊपर से शान्त दिखने वाली पल्लवी के हृदय के भीतर तूफ़ान ज्वार-भाटे की तरह ऊंची-ऊंची हिलोरें ले रहा था। कहीं ओर छोर दिखाई नहीं दे रहा था। वह समझ नहीं पा रही थी कि कैसे क्या करे?

युगीन्द्र के अस्पताल से नोटिस आ गया था कि अगर तुरन्त ज्वाइन नहीं करते तो सर्विस खत्म हो जायेगी। पल्लवी ने वह नोटिस लिफ़ाफ़े में रखकर लन्दन भेज दिया। साथ ही लिखा 'युगीन्द्र, बच्चे अब समझदार हो रहे हैं। अकेले उन्हें, नौकरी और घर-बाहर की ज़िम्मेदारियां सम्हालना मेरे लिए अब असम्भव हो रहा है। तुम्हें भेजने के बाद मेरे पास इतना नहीं बचता कि ठीक से बच्चों को पाल-पोस सकूं। मेरे नहीं तो कम से कम अपने बच्चों के ख़ातिर लौट आओ। देर कर दी तो लगी लगाई नौकरी भी तुम्हारी चली जायेगी।'

उत्तर में चार लाइनों का जवाब आया था। तुम्हारे विश्वास के सहारे ही इतनी दूर आया था। लगता है अपनी कमाई में से पैसा भेजना अब तुम्हें खलने लगा है। अगर नहीं भेजोगी तो मुझे यहां कुछ न कुछ और काम करना पड़ेगा। फिर लौटने में देर हो तो मुझे दोषी मत ठहराना। नौकरी का क्या है यह छूट भी गई तो बहुतेरी मिल जायेंगी। डिग्री हाथ में होनी चाहिए।

इस पत्र के आगे हथियार डालने के सिवाय पल्लवी के पास और कोई चारा नहीं था। अमरेन्द्र दो-एक बार आये थे। बेटी की पीड़ा देख उसकी आंखें अश्रुपूरित हो उठी थीं। उन्होंने समझाते हुए कहा था—'पल्लवी, ऐसे कब तक चलेगा।

युगीन्द्र वापस क्यों नहीं आ रहे ? अब तो उन्हें गये ४-५ साल होने आ रहे हैं। लोग पूछते हैं तो कुछ उत्तर नहीं देते बनता। कहीं...।'

'पापा, मुझे भी अब लगने लगा है कि युगीन्द्र का लौटने का इरादा नहीं है। वरना लगभग पांच वर्ष एक लम्बा अरसा होता है। बच्चे पूछते हैं कि पापा कब आयेंगे ? तो मुझसे अब जवाब नहीं देते बनता। कब तक उन्हें झूठा दिलासा देती रहूं। जब मेरा ही मन अस्थिर होने लगा है तो वे तो मासूम बच्चे हैं। छवि को तो युगीन्द्र की शक्ल तक याद नहीं।'

अमरेन्द्र ने कहा था—'मेरी मानो तो किसी तरह कुछ दिनों को बच्चों को लेकर तुम ही लन्दन हो आओ। साथ भी रह लोगी और मन भी बदल जायेगा।'

'नहीं पापा, मेरा जाना असम्भव है। कहाँ से लाऊंगी तीन प्राणियों के आने-जाने का किराया ? भगवान शायद मेरी परीक्षा ले रहे हैं। देखती हूं कितना सह पाती हूं। नहीं जानती मेरे भाग्य में क्या लिखा है ?' कहकर पल्लवी चुप हो गई थी। पापा के सामने अपने को कमजोर दिखाकर वह उन्हें दुखी नहीं करना चाहती थी।

'अमरेन्द्र दो-तीन दिन रुक कर वापस चले गये थे। पल्लवी अपनी नियमित दिनचर्या में फिर व्यस्त हो गई थी।

एक दिन उसे लखनऊ मेडिकल कालेज की ओर से एक कॉन्फ्रेंस में सम्मिलित होने का निमंत्रण मिला। उसने सोचा वहाँ जाने से बंधी-बंधाई ज़िन्दगी से दो-चार दिन को मन बदल जायेगा। पुराने सहपाठी और प्रोफ़ेसरों से मिलने के साथ ही ममी-पापा के पास भी रह लेगी। पल्लवी ने एक सप्ताह की छुट्टी के लिए प्रार्थना-पत्र दिया और कॉन्फ्रेंस में शामिल होने बच्चों को साथ लेकर लखनऊ चल दी।

कॉन्फ्रेंस के डा. दुबे ऐसे मिले मानो अपनी बिछुड़ी हुई बेटी से मिल रहे हों। कई डाक्टर साथ के पढ़े मिले। पल्लवी को वर्षों बाद ऐसा लगा मानो ठहरी घुटन से भरी ज़िन्दगी में कुछ पल को ही सही एक ताज़ी हवा का झोंका आया हो।

कॉन्फ्रेंस के अंतिम दिन डा. भण्डारी ने पल्लवी से कहा—'मुझसे बिना मिले मत जाना। कॉन्फ्रेंस के बाद मैं अपने कमरे में मिलूंगा। तुमसे कुछ ख़ास बातें करनी हैं।'

सबसे विदा ले डा. भण्डारी के कमरे में जब पल्लवी पहुंची तो वे उसी की प्रतीक्षा कर रहे थे। उन्होंने उसे बैठा कर उसके काम, उसके बच्चों की पढ़ाई, देखभाल आदि के बारे में विस्तार से पूछा। फिर बोले—'पल्लवी, डा. चन्द्रा ने तुम्हें अपने बारे में कुछ लिखा है ?'

'बस यही सर, कि वे आगे और पढ़ना चाहते हैं। मैं पहले की तरह उन्हें रुपया भेजती रहूं, वरना उनकी पढ़ाई में बाधा पड़ेगी।'

'मैं अभी हाल लन्दन से लौटा हूं,

पल्लवी। वहाँ डा. चन्द्रा से भी मेरी मुलाकात हुई थी।'

'कैसे हैं वे सर? कैसी पढ़ाई चल रही है उनकी?' कुछ उन्होंने आपसे बताया कि वे कब तक भारत लोटेंगे? मैं, ऋषि और छवि एक-एक दिन उनके इंतज़ार में काट रहे हैं।' पल्लवी प्रश्न पर प्रश्न किये जा रही थी।

डा. भण्डारी की समझ में नहीं आ रहा था कि वह कहां से बात आरम्भ करें। वह कुछ क्षण ठहरे फिर बोले—'पल्लवी, तुम मेरी बेटी के समान हो। जो समाचार मैं तुम्हें देने जा रहा हूं वह सुखद नहीं है।'

'वह स्वस्थ तो हैं? पैसों की तंगी की वजह से उन्हें रहने-खाने की तो कोई समस्या नहीं है?' पल्लवी के स्वर में अजब-सी कातरता थी। मानो अधिक रुपया न भेज सकने के कारण वह ही अपराधी हो।

'नहीं पल्लवी, डा. चन्द्रा एकदम हेल एण्ड हार्टी हैं। उन्होंने वहाँ दो-तीन साल पहले जेनी नाम की एक लड़की से शादी कर ली है। दोनों के एक साल की बेटी है। डा. चन्द्रा वहाँ अस्पताल में नौकर हैं। अच्छी तनख्वाह पा रहे हैं। सिर्फ तुम्हें पता न चले इसलिए तुमसे बराबर रुपया मंगा रहे हैं। सच पूछो तो तुम्हारे पैसों से दोनों ऐश की ज़िन्दगी बिता रहे हैं।'

डा. भण्डारी की बात पल्लवी के कानों में घुले हुए सीसे की भांति जाकर अपना असर करती जा रही थी। मस्तिष्क धीरे-धीरे सुन्न होता जा रहा था। एक पल को उसे लगा मानो उसके पैरों तले से धरती खिसक गई हो। फिर उसे सारा ब्रह्माण्ड घूमता-सा लगा और आंखों के आगे अंधेरा-सा आकर सितारे झरने लगे। पल्लवी ने लाख अपने को सम्हालने की कोशिश की पर इतना बड़ा आघात और वह भी विश्वासघात के रूप में सहन कर पाना सहज नहीं था। एक बार आंखों के आगे अंधेरा छाया और फिर वह बेहोश हो गयी।

जब उसे होश आया तो डा. भण्डारी के साथ सर्जन दुबे भी उसके सिरहाने खड़े थे। उसकी समझ में नहीं आ रहा था कि अब वह दुनिया को अपना क्या मुंह दिखायेगी। कैसे कहेगी कि जिस पति के लिए उसने सावित्री की भांति सालों तपस्या की है, उसने उसे बिना किसी कसूर के परित्यक्ता की भांति छोड़ दिया है। बच्चे पूछेंगे तो वह उन्हें क्या जवाब देगी कि उनके पिता ने उन सबके होते हुए दूसरी औरत से शादी क्यों कर ली है? अब हमारा उनका कोई सम्बन्ध नहीं है।

सर्जन दुबे ने सांत्वना का हाथ उसके सिर पर फेरा तो वह उनके कंधे पर सिर रखकर फूट-फूट कर रोने लगी। डा. भण्डारी ने समझाना चाहा तो सर्जन दुबे ने इशारे से उन्हें मना कर दिया। रो लेने के बाद जब वह थोड़ा शान्त और सुस्थिर हुई तो बोली—'सर, जबलपुर में सभी जानते हैं मैं

डा. चन्द्रा की पत्नी हूं। यह बात कब तक छिपी रह सकती है। कोई यह नहीं जानेगा कि युगीन्द्र ने मेरे विश्वास को किस तरह छला है। सभी समझेंगे दोषी मैं हूं। तभी पति ने मुझे त्याग दिया है।'

सर्जन दुबे बोले–'पल्लवी, डा. भण्डारी ने मुझे लौट कर सब बताया था, तभी मैंने जानबूझ कर तुम्हें यहां बुलाया। सर्जन डिपार्टमेंट में एक लेक्चरर की पोस्ट ख़ाली है। तुम प्रार्थना-पत्र दे दो। तुम्हारा केरियर इतना अच्छा रहा है। फिर हम सब हैं। तुम्हारा सेलेक्शन यहाँ हो जायेगा। फिर यहां तुम्हारे माता-पिता हैं। उनके साथ रहो। बच्चे नाना-नानी के साया में पलेंगे तो कुछ दिनों में युगीन्द्र को भूलने लगेंगे। तुम लखनऊ में अपना नया जीवन शुरू करो। मिसिज़ चन्द्रा बन कर नहीं, डॉ पल्लवी जोशी के रूप में। वकील से नोटिस मैं भिजवा दूंगा। उसकी चिन्ता तुम मत करो।'

'सर, नया जीवन आरम्भ करना क्या इतना आसान है? फिर जिस युगीन्द्र ने पति होकर मेरे साथ इतना बड़ा विश्वासघात किया उसे कैसे भूल पाऊंगी? प्रतिशोध से मेरा रोम-रोम जल रहा है।'

'मैं जानता हूं युगीन्द्र ने आर्थिक रूप से तो तुम्हें छला ही, जो विश्वासघात तुम्हारे और बच्चों के साथ किया है, उसे भुलाना सहज नहीं होगा। फिर भी पल्लवी जीवन के अच्छे या बरे पल जो बीत जाते हैं वह चाह कर भी लौटाये नहीं जा सकते। जबलपुर में क्या अकेले लोगों की उल्टी-सीधी बातें, बच्चों की पढ़ाई और देखभाल के साथ अपने को सम्हाल पाओगी? तुम्हारे पापा से हम लोग बात कर चुके हैं। जाकर अपना त्याग-पत्र दे आओ।'

डा. भण्डारी ने कहा–'विश्वास मानो पल्लवी, नया वातावरण तुम्हारे ज़ख्मों पर मरहम का काम करेगा। समय एक ऐसी अचूक दवा है जो बड़े से बड़े घावों को पूरा नहीं भर पाती मगर कम से कम उसे पूरने और जलन मिटाने में औषधि का काम करती है।'

पल्लवी को लगा भगवान ने जहां उसके सारे रस्ते बन्द कर दिये थे, वहां सर्जन दुबे और डा. भण्डारी ने उसे वापस लखनऊ बुलाने को कहकर जीवन की अंधेरी गलियों में भटकने से पहले ही एक धुंधली-सी आशा की किरण तो दिखायी।

पल्लवी ने साहस बटोरा। मेडिकल कालेज की इन्टरव्यू देकर वह जबलपुर गयी। त्याग-पत्र देकर सारा सामान बांधकर उसने ईश्वर से प्रार्थना की कि एक बार जीवन मे वह प्रवंचना के जाल में फंस चुकी है। अब उसमें इतना साहस और शक्ति दो कि युगीन्द्र जैसे विश्वासघाती को भूल कर वह ऋषि और छवि का सहारा बनकर अकेले एक नये जीवन की शुरुआत कर सके।

**– कोठी राजा इमाम बख्श,**
**मशकगंज, लखनऊ-२२६०१८**

# ग्रंथलोक

**• श्रीमद्भगवद्गीता (पद्यबद्ध अनुवाद)* अनुवादिका : डॉ. मालती जौहरी; प्रकाशक: रोमी जौहरी, ४०९, डॉक्टर हाउस, १४ पेडर रोड, बंबई - ४०० ०२५; मूल्य : २५ रुपये ।**

यह भगवद्गीता का काव्यानुवाद है। सामयिक और शाश्वत भी।

आज भी, व्यक्ति और समाज महासंग्राम कर रहे हैं। यह संग्राम है, व्याधि, अज्ञान, अन्याय, प्रतिकूल परिस्थितियों तथा संकटों के विरुद्ध।

ऐसे महासंग्राम में विजयश्री तथा साफल्य-सिद्धि के लिए, कर्म-पौरुष का ही दर्शन संबल बनेगा। समर्थ पौरुष का स्रोत है– आत्मविश्वासपूर्ण मन। ऐसा सबल मन, जो फल की आकांक्षा, शंका, आशंका से व्यथित-अधीर न हो। युद्ध तथा शांति में, दिव्यत्व में स्थिर रहे।

यह महान दर्शन, आत्मसात होकर, हिंदी में, श्रीमद्भगवद्गीता के सरल, रागात्मक बोधगम्य काव्यानुवाद में अवतरित है।

इस काव्यानुवाद कृति की कवयित्री डॉ. मालती जौहरी की पूर्व कृति थी, 'अष्टावक्र-संहिता' का बोधगम्य सफल हिंदी पद्यानुवाद जो व्यापक रूप से सराहा जा चुका है।

गीता का प्रस्तुत काव्यानुवाद-भाव-लय-राग से पूर्ण है। प्रस्तुत हैं कुछ पंक्तियां –

**क्रमशः इस शरीर में जैसे,**
**शैशव, यौवन, जरा रहे।**
**नयी देह मिलती आत्मा को,**
**शंका धीर न यहां करे।।२/१३**
**होता है जब नाश धर्म का**
**औ अधर्म बढ़ जाता है।**
**तब ही मैं साकार बनूं**
**उत्थान धर्म का होता है।।४/७**

पृष्ठ संख्या १६० की पुस्तक का मूल्य २५ रुपये मात्र है, संभवतः प्रचारार्थ ही इतना कम मूल्य रखा गया है।

**–रमाकांत अवस्थी**

* * *

*** कलम आज उनकी जय बोल * लेखक : जगदीश जगेश; प्रकाशक : हिंदी प्रचार**

**संस्थान, पिशाचमोचन, वाराणसी-१; पृष्ठसंख्या ३०० (लगभग); मूल्य : ३० रुपये मात्र ।**

वही राष्ट्र सशक्त होता है, जो अपने बलिदानी वीरों की शौर्य-गाथाओं को कभी विस्मृत नहीं करता । हमारे स्वतंत्र राष्ट्र के सुदृढ़ आधार-स्तंभ स्वतंत्रता संग्राम के शहीदों के वे अगणित पार्थिव शरीर हैं, जिन्हें विदेशी आक्रांताओं की कठोरतम यातनाएं झेलकर निर्जीव होना पड़ा है, किंतु उनकी यश अमरता हमारे राष्ट्रीय जीवन को सदैव स्पंदनशील रखेगी ।

श्री जगदीश 'जगेश' की लेखनी से उद्भूत क्रांतिकारी कृति 'कलम आज उनकी जय बोल' पुस्तक के साधना संकलित सूत्र राष्ट्रभक्ति और श्रेष्ठ नागरिकता के भाव जागरण की अद्भूत क्षमता रखते हैं ।

जगेशजी की इस कृति पर अपना अभिमत प्रकट करते हुए क्रांतिवीर श्री मन्मथनाथ गुप्त लिखते हैं. 'श्री जगदीश जगेश हिंदी के उन इने-गिने लेखकों में हैं, जो तभी किसी विषय पर कलम उठाते हैं, जब उसका गहरे पानी पैठ अध्ययन कर लेते हैं ।'

वे लिखते हैं 'आज बहादुर शाह के बेटों के वे कटे सिर, झांसी की मर्दानी रानी के आहत मस्तक से बहता हुआ रक्त, फड़के, चापेकर, सावरकर, धींगरा, मास्टर अमीरचंद, बाघा जतीन, मास्टर सूर्यसेन, सुखदेव, विनय बादल दिनेश, अनंत हरिमित्र, हरिगोपाल बाल. गांधीजी, इंदिराजी सभी बारंबार याद आ रहे हैं । और हृदय उनके संकल्प को आशीर्वाद का राजतिलक बनाकर माथे पर धारण करने को आकुल है । जय उन शहीदों की, जय उनकी आराध्य भारतमाता की, जय उस पावन भूमि की, जहां उनके चरण पड़े । कलम भावविभोर हो रही है मन की तरह; स्याही श्रद्धाभिभूत हो रही है, बेसुध तन की तरह ।'

'वर्तमान युग की कुंठा-निराशा, जाति संकीर्णता और धर्म की संकीर्णता का उन्माद दूर करने हेतु इस ग्रंथ की उपादेयता स्वीकार की जानी चाहिये ।

१६ अध्यायों में लिखित इस पुस्तक में सन १६०० से लेकर १९४७ तक के स्वाधीनता का सचित्र इतिहास विस्तारपूर्वक इसमें समाहित है । — **डॉ. रामभरोसे साहू**

* * *

*** पत्थर के स्वप्न * लेखक : श्री योगेश प्रवीन; प्रकाशक : सुलभ प्रकाशन, १७, अशोक मार्ग, लखनऊ - १; मूल्य : ५० रुपये ।**

हिन्दी के सुपरिचित लेखक व कवि श्री योगेश प्रवीन अवध संस्कृति और इतिहास के गंभीर अध्येता एवं व्याख्याता के रूप में विशेष रूप से चर्चित रहे हैं । आपके विचार से भारतवर्ष का अतीत एवं मध्यकाल वास्तुशिल्प की दृष्टि से अतीव समृद्धशाली रहा है । पाषाणयुग, मौर्ययुग एवं मुगलकाल की स्थापत्यकला विश्व में चर्चा का विषय रही है । विदेशी विद्वानों एवं

यात्रियों ने इस कला की मुक्तकंठ से प्रशंसा की है। भारतीय धर्म, विश्वास तथा जीवन दर्शन को मुखरित करना यहां की कला की उल्लेखनीय विशेषता रही है।

'पत्थर के स्वप्न' भारतीय वास्तुशिल्प के विभिन्न प्रकारों को उनके ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में प्रस्तुत करने वाली एक बहुत ही ज्ञानवर्द्धक एवं पठनीय पुस्तक है। भारतीय वास्तु-विन्यास की विशिष्टताओं का विभिन्न दृष्टियों से विवरण देते हुए प्रत्येक प्रकार की एक इमारत का उत्तर-प्रदेश के विभिन्न अंचलों की एक-एक शिल्प का रेखाचित्र सहित उदाहरण दिया गया है। इस प्रकार यह पुस्तक उत्तर-प्रदेश पयर्टन विभाग के लिए भी उपयोगी सिद्ध होगी।

पुस्तक में जिन-वास्तु-विन्यासों का समावेश है, उनके नाम इस प्रकार हैं — गोपुरम, तोरण, मंदिर, शिवाला, जगमोहन, गढ़ी, घाट, पैडी, कुण्ड, तीर्थ, स्तूप, लाट, दुर्ग, हवेली, ठाकुरद्वारा भवन, द्वार, गवाक्ष, दीवानखाना, मीनार, प्राकार, सेतु, मस्जिद, छतरी, जन्तर-मन्तर, महल, बुर्ज, मकबरा, बावली, त्रिपोलिया, इमामबाड़ा, शबीह, बारादरी, कोठी, मसनबी और गुम्बद।

पुस्तक की भाषा सरल तथा प्रवाहपूर्ण है। सरल उर्दू शब्दों का प्रयोग श्री योगेश प्रवीन की भाषाशैली की एक विशेषता है। पुस्तक संग्रहणीय, शिक्षाप्रद एवं उपयोगी है।

**— डॉ. दुर्गाशंकर मिश्र**

* * *

### * बुन्देलखण्डी फड़ साहित्य (शोध ग्रंथ) *

**लेखक : डॉ. गनेशीलाल बुधौलिया; प्रकाशक : बुन्देल भारती प्रकाशन, राठ (हमीरपुर), उ.प्र. मूल्य : ४२ रुपये**

डॉ. गनेशीलाल बुधौलिया का यह श्रमसाध्य और विद्वतापूर्ण शोध प्रबंध बुन्देलखण्ड के जन साहित्य का एक मंजुल पारदर्शी दर्पण है। लोकसाहित्य में साधारण लोक-मानस का अकृत्रिम, सहज, सरल, भावोच्छ्वास समग्र निर्मलता से प्रस्तुत होता है। इसमें देश काल और व्यक्ति समष्टि की अवस्था का सजीव और चारु चित्रण सुलभ होता है। मनोरंजन से संश्लिष्ट यह हमारी महान सांस्कृतिक धरोहर है। जीवन और जगत का कोमल, कलित और भाव प्रवण - प्रक्षेपण इसमें जन भाषा के समग्र लालित्य से संयुक्त होकर सम्मुख आता है।

डॉ. बुधौलिया ने इस रस प्रवण फड़-साहित्य के आविर्भाव, भेद, शास्त्रीय आधार और आलोचनात्मक अध्ययन में इस लोक साहित्य के अन्तर्गत समाहित विविध रूपों और विधाओं की विद्वतापूर्ण और सारगर्भित विवेचना को जिज्ञासु पाठकों के सामने भली-भांति परोसा है।

फड़-साहित्य की असंदिग्ध लोकप्रियता बुन्देलखंड तक ही परिसीमित नहीं है। फागें, ख्यालबाजी, और कीर्त्तन जैसी फड़ साहित्य की विधाएं जनमानस का गलहार बनी हुई हैं। सैर के फड़ों में मानव की कोमल

अनुभूतियों की कुशलता एवम् भाव प्रवणता से अभिव्यंजित किया गया है। फाग, ख्याल, लावनी, दिवारी गीत, कवित्त में भावानुभूति है, संगीत का माधुर्य है नृत्य का सम्पुट एक अद्भूत सौष्ठव तथा सौन्दर्य का सृजन करता है। फड़ साहित्य के प्रतिनिधि कवियों और उनकी रचनाओं की समाविष्टि इस ग्रंथ की उपादेयता में चार चांद लगाती है।

ईसुरी की लोकप्रिय फागों से यह एक फाग रसास्वादनीय है।

**जो तुम छैल छला बन जाते,**
**परे उंगरियन राते।**
**मौं पोंछत गालन के ऊपर,**
**कजरा देत दिखाते।**
**घरी-घरी घूंघट खोलत में,**
**नजर सामने आते।**
**'ईसुर' दूर दरस के लाने,**
**ऐसे काए लिलाते।'**

इस तरह यह रस रत्नाकर 'बुन्देलखण्डी फड़-साहित्य' डॉ. गनेशीलाल बुधौलिया की रस मर्मज्ञता का एक सुदृढ़ प्रमाण है जो रसज्ञ पाठक की रस निष्पत्ति को जागरूकता प्रदान करता है। **— डॉ. विश्वनाथ याज्ञिक**

* * *

*** राष्ट्रभाषा के संघर्ष भरे पच्चीस वर्ष* सम्पादक : कैलाश जोशी; प्रकाशक : राष्ट्रभाषा रंगमंच सैलाना (रतलाम), म.प्र.; मूल्य ४५ रुपये।**

दयनीय है वह देश, जिसके भौतिक स्वरूप को जीभ तो मिली है, परन्तु भाषा न होने से गूंगी हो गई हो। दयनीय है वह देश, जहां के लोग बिना भाषा के पशुवत जुगाली करते हों।

इस पुस्तक के सम्पादक श्री कैलाश जोशी राष्ट्रप्रेम से ओतप्रोत हैं। राष्ट्रभाषा के सम्बन्ध में देश के महान् साहित्यकारों, राजिनीतिज्ञों व विचारकों के लेखों का संग्रह कर इन्होंने राष्ट्रभाषा प्रेमियों को बहुत लाभान्वित किया है।

पुस्तक के अंत में देश में हिन्दी सेवा संस्थाओं का संक्षिप्त परिचय भी दिया गया है। देश व विदेश में हिन्दी में प्रकाशित साहित्यिक पत्र, पत्रिकाओं के नाम, पते भी दिये गये हैं। यह संकलन हिन्दी के प्रति चिन्तन करनेवाले सभी व्यक्तियों, संस्थाओं व शोधकर्ताओं के लिए बहुत उपयोगी सिद्ध होगी। **— प्रकाश दुबे**

* * *

*** मछली नाची उछल-उछल * कवि : जवाहर इन्दु; निराला प्रकाशन, मुराई का बाग, डलमऊ, रायबरेली, उ.प्र.।**

समीक्ष्य कृति रायबरेली जनपद के युवा कवि्र श्री जवाहर 'इन्दु' की सद्यः प्रकाशित बाल-काव्य है। इस कृति की सभी कवितायें बाल मनोभावों को बड़ी वखूबी से छूती हैं।

कविता में बच्चों का मनोरंजन और ज्ञान-वर्द्धन दोनों हो इसका भी पूर्ण ध्यान कवि ने रखा है। दो से लेकर दस तक का रोचक पहाड़ा इस बात का सफल प्रमाण है। 'गांव

हमारे बिजली आयी' में कवि ने बिजली की रोशनी में आज के बदले हुए गावों का बहुत ही सरल और सुबोध भाषा में चित्रण किया है -

**काका ने टी.वी. लगवाया,**
**पूरा गांव देखने आया ।**
**टक-टक ताकें जुम्मन भाई,**
**गांव हमारे बिजली आयी ।**

निःसन्देह इस कृति की कवितायें पढ़कर बच्चों का मन आनंदातिरेक से उछल पड़ेगा तथा युवा और वृद्ध इसे पढ़कर अपने बचपन की ओर लौट पड़ेंगे ।

**— आनंद स्वरूप श्रीवास्तव**

* * *

*** महामात्य चाणक्य * प्रस्तुति : अश्विनी पाराशर; प्रकाशक : डायमंड पाकेट बुक्स, दरिया गंज, नई दिल्ली; मूल्य : १२ रुपये।**

महामात्य चाणक्य भारतीय इतिहास का एक ऐसा विशिष्ट चरित्र है, जो मात्र व्यक्ति न रहकर एक युग बन गया। भारतीय राजनीति और अर्थनीति के प्रस्तुतकर्ता के रूप में ही नहीं, टूटते भारत को एक सूत्र में पिरोने के लिए प्रयासरत महामात्य, सम्राट चंद्रगुप्त के रचयिता, सभी प्रकार की सुख-सुविधाओं के होते हुए भी एक संन्यासी, सदाशयता और आक्रोश की साक्षात प्रतिमा के रूप में चाणक्य का व्यक्तित्व उन्हें ऐतिहासिक चरित्रों में सबसे अधिक विशिष्ट बना देता है ।

इसी ऐतिहासिक गाथा को इस पुस्तक में औपन्यासिक शैली में प्रस्तुत किया गया है ।

* * *

*** महावीर अश्वत्थामा * प्रस्तुति : डॉ. विनय; प्रकाशक : डायमंड पाकेट बुक्स, दरियागंज, नई दिल्ली; मूल्य : १० रुपये ।**

द्रोण पुत्र अश्वत्थामा महाभारत के उन महारथियों में से एक हैं, जो परिस्थितियों के दास होकर यह जानते हुए भी कि धर्म पांडवों की ओर है, दुर्योधन के पक्ष-समर्थक रहे ।

अश्वत्थामा महापराक्रमी तो था ही, उसके मन में अपूर्व बल, उत्साह और शक्ति का संचार था । पिता का वध किये जाने पर तो वह प्रतिशोध की आग में जल उठा । समरभूमि में "टूटी जंघा वाले दुर्योधन के विलाप" ने उस आग में घी का काम किया । प्रतिशोध से जलता हुआ अश्वत्थामा पांडव शिबिर में घुस गया और उसने सेनापति धृष्टद्युम्न, युधामनु, शिखंडी, द्रुपद पुत्रों, द्रौपदी पुत्रों और सहस्रों योद्धा ओं को मृत्यु की नींद सुला दिया ।

अश्वत्थामा के चरित्र की यह औपन्यासिक प्रस्तुति उसके चरित्र, उसकी गरिमा, बल वीरता को चलचित्र की भांति प्रस्तुत करने में समर्थ है ।

* * *

*** तेनालीराम की सूझबूझ * प्रस्तुति : कुमुद रस्तौगी; प्रकाशक : डायमंड पाकेट बुक्स, दरियागंज, नई दिल्ली; मूल्य : १२ रुपये ।**

# पानी है ठहरा

उथले में पानी है ठहरा
युग का दर्द बड़ा है गहरा।

तोड़ दिया गुस्से में दर्पण
दिखा दिया जो असली चेहरा।

संवेदना खो गयी भीड़ में
हर चेहरा है नकली चेहरा।

किसको मैं आवाज लगाऊँ?
हर रिश्ता है गूंगा, बहरा।

उस जल का उपकार मानिये
आयु अंजुलि में जो ठहरा।

**मिश्रीलाल जैन**
– पृथ्वीराज मार्ग, गुना म.प्र.

---

तेनालीराम विजयनगर के यशस्वी राजा कृष्णदेव राय का राज्य विदूषक था। गंभीर से गंभीर समस्या को भी अपने परिहास द्वारा सुलझा देना उसका विशिष्ट गुण था।

विजय नगर के राजदरबार में विदूषक का स्थान ग्रहण करने में तेनालीराम को अत्यधिक संघर्ष करना पड़ा, किन्तु आशावादी और परिश्रमी तेनालीराम ने हिम्मत नहीं हारी और एक दिन वह अपने लक्ष्य में सफल हो गया।

तेनालीराम से संबंधित अनेकानेक परिहास कथाएं प्रचलित हैं। उनमें से ७४ प्रसिद्ध कथाओं को इस पुस्तक में संग्रहीत किया गया है। ये कथाएं रुचिकर और हास्यपूर्ण तो हैं ही, पाठकों को सोचने के लिए भी विवश करती हैं।

* * *

*** परम प्रेमस्वरूपा भक्ति : (ओशो के प्रवचन)*; प्रकाशक : डायमंड पाकेट बुक्स, दरियागंज, नई दिल्ली; मूल्य : १२ रुपये।**

नारद भक्ति सूत्र में भक्ति की तर्क संगत व्याख्या की गयी है। चिंतन और मनन के ग्राहय-अग्राहय द्वारों को पार करके हम भक्ति के सारतत्व को पहचान पाते हैं। किन्तु 'परम प्रेमस्वरूपा भक्ति' स्वयं को मिटाने की कला है भक्ति, बड़ी संवेदनशील है भक्ति, सहज स्फूर्ति अनुशासन है भक्ति।

भक्ति में प्रेम प्रधान है और समर्पण तथा त्याग के बिना प्रेम संभव नहीं। ओशो का मत है – अनन्यभाव में मैं और तू दो नहीं एक ही बचता है।

भक्ति के रहस्यों को सरलतम भाषा में, काव्यात्मक शैली में भावनात्मक दृष्टि से समझना हो तो उक्त पुस्तक पठनीय है।

**– डॉ. गिरिराज शरण अग्रवाल**

* * *

# कार्टून चित्रावली

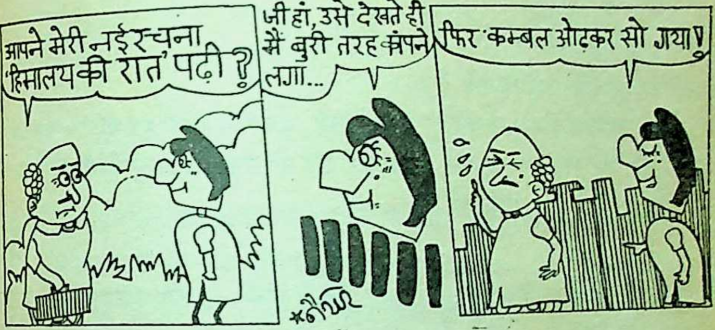
आपने मेरी नई रचना 'हिमालय की रात' पढ़ी?
जी हां, उसे देखते ही मैं बुरी तरह कांपने लगा...
फिर कम्बल ओढ़कर सो गया!

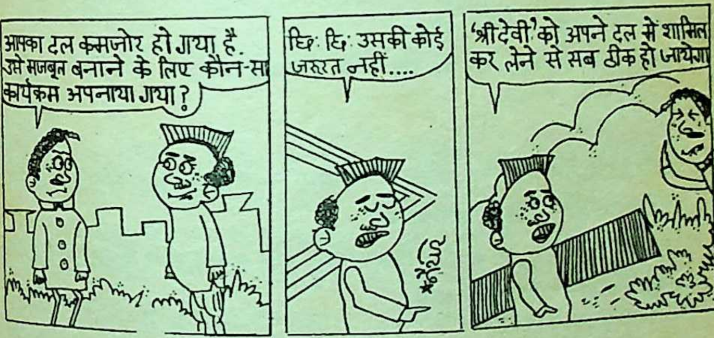
आपका दल कमजोर हो गया है. उसे मजबूत बनाने के लिए कौन-सा कार्यक्रम अपनाया गया?
छिः छिः उसकी कोई जरूरत नहीं....
'श्रीदेवी' को अपने दल में शामिल कर लेने से सब ठीक हो जायेगा

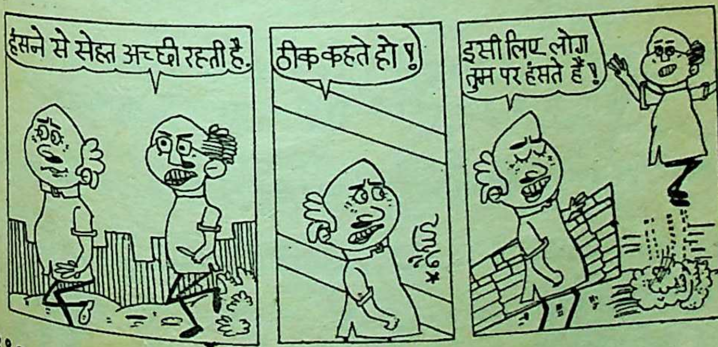
हंसने से सेहत अच्छी रहती है.
ठीक कहते हो!
इसी लिए लोग तुम पर हंसते हैं!

# दो क्षण तो हँस लें

जनगणना के सिलसिले में गणक ने पूछा,

'श्रीमतीजी, आपकी उम्र कितनी है ?'

'मेरी उम्र ?' महिला ने जरा सोचते हुए कहा, 'देखो, जब मेरी शादी हुई थी उस समय में १८ साल की थी और मेरे पति ३० साल के। अब मेरे पति की उम्र ६० साल की है, यानी पहले से दूनी, इस हिसाब से में ३६ साल की हूं।'

— * —

महिला जो कार चलाना सीख रही थी, अपने पति से बोली – 'देखिए यह सामने का शीशा ठीक से लगा हुआ नहीं है।'

'क्यों, क्या गड़बड़ है ?' पति ने पुछा।

'इसमें तो मैं पीछे आ रही कारें ही देख पाती हूं। अपना चेहरा तो मुझे बिलकुल नहीं दिखलाई पड़ता।'

— * —

'प्रिये, मैं सेठ धनीराम की तरह मोटर-बंगलेवाला रईस तो नहीं हूं लेकिन मैं तुम्हें बहुत अधिक प्यार करता हूं।' प्रेमी ने अनुनय की।

'मैं भी तुम्हें बहुत प्यार करती हूं, प्रिय किंतु तनिक मुझे धनीरामजी के बारे में कुछ अधिक विस्तार से तो बताओ।' प्रेमिका ने कहा।

— * —

मैनेजर – 'आपकी योग्यता क्या है ?'

युवती – 'मैंने कहानी तथा कविता प्रतियोगिताओं में बहुत से इनाम जीते हैं।'

मैनेजर – 'यह तो ठीक है, मगर हमें ऐसी लड़की की जरूरत है, जो आफिस के समय में होशियार हो।'

युवती – 'जी, इन सब प्रतियोगिताओं के प्रयत्न मैंने ऑफिस के समय में ही किये थे।'

---

सु. रामकृष्णन् द्वारा भारतीय विद्या भवन, क. मा. मुंशी मार्ग, बम्बई–४००००७ के लिए प्रकाशित तथा एसोसियेटेड एडवरटाइजर्स एंड प्रिन्टर्स, बम्बई ४०००३४ में मुद्रित।

एल्डूस हक्सले की विचार-सरणि

# आत्मिक और वैज्ञानिक मूल्यों का समन्वय

☐ हरि

**अराजकता और अंधकार में भटक रही, दिशाहारा मानव आत्मा की इस महान संकट-घड़ी में स्व. श्री एल्डूस हक्सले नव- आध्यात्मिक प्रकाश के विरल पैगंबरों में से थे। उनके अवसान से मानवजाति ने आत्मिक और वैज्ञानिक मूल्यों के समन्वय का एक महान ज्योतिर्धर खो दिया है। यहां हम उनकी एक अंतिम कृति को प्रकाशित कर रहे हैं।**

अंग्रेजी के शब्द 'पर्सनैलिटी' की उत्पत्ति लेटिन से हुई है, और प्रायः प्रयुक्त होने वाले शब्दों में इस शब्द को काफी ऊँचा और आदरणीय स्थान प्राप्त है। 'पर्सनैलिटी', अर्थात् मानवीय सत्यता और वास्तविकता का सर्वाधिक वंदनीय स्वरूप।

पर, मान लीजिये, कोई 'पर्सनैलिटी' के स्थान पर ट्यूटौनिक भाषा के पर्यायवाची शब्द 'सैल्फनेस' का प्रयोग करता है तो। अर्थ दोनों शब्दों के एक ही हैं, लेकिन 'पर्सनैलिटी' शब्द सुनकर मन में जो प्रतिक्रिया होती है, वह 'सैल्फनेस' शब्द को सुनकर नहीं होती। अजस्र तथा नित्य जीवन-दर्शन के समर्थक सदा से कहते आये हैं कि स्वार्थ-चिंतन तथा स्वार्थ-परता, भगवान के यौगिक बोध के मार्ग में सबसे बड़ी बाधा हैं। निजी हित तथा आनंद के लिये जीना उनकी दृष्टि में सबसे बड़ा पाप है, तथा स्वार्थ-हीन और आत्म-त्याग सबसे बड़ा सद्गुण।

ह्यूम ने एक स्थान पर कहा है कि 'मानव जाति क्या है? विभिन्न अनुभूतियों तथा चैतन्य भावों का एक संग्रह ही तो, जो सदैव गतिशील है।' बौद्धधर्म के अनुयायी ऐसा ही कहते हैं, दोनों ही इस गतिशीलता के पीछे छिपी किसी स्थायी आत्मा में विश्वास नहीं करते। ह्यूम ने मानव-जाति की स्वार्थपरता का अच्छा वर्णन किया है। पर, उन्होंने यह नहीं बताया कि ये संग्रह (या बौद्ध धर्म के

अनुसार स्वच्छ जीवन के पांच तत्व रूप) आखिर बनते क्यों हैं ? कौन उन्हें बनाता है, और कैसे ?

इस प्रश्न का युक्तिसंगत उत्तर पाने के लिए हमें प्राचीन हिंदू ऋषियों तथा अरस्तू से लेकर आज तक के पश्चिमी चिंतकों की शरण में जाना पड़ेगा। वे हमें बतायेंगे कि नित्य आत्मा ही 'अनुभूतियों' की व्यवस्था करती है। और, इन विशिष्ट अनुभूतियों के आधार पर विभिन्न व्यक्तित्वों का निर्माण करती है। इन चितकों के अनुसार मनुष्य, शरीर, मन तथा पवित्रात्मा के त्रय की प्रतीकात्मक अभिव्यक्ति है। मानव-जीवन का ध्येय प्रेम करना, ज्ञान प्राप्त करना, तथा अंत में सर्वांतर्यामी तथा इंद्रियातीत दैवत्व में विलीन हो जाता है।

'स्वं' से पृथक कोई वस्तु मनुष्य में नहीं होती। यदि ऐसी कोई वस्तु होती, तो वह 'स्व' को अस्वीकार ही क्यों करता ?' — विलियम लॉ

'मनुष्य क्या है ? एक देवता, एक पशु, एक शून्य, एक विश्व, जिसे वह इच्छानुसार, दैवत्व से पूर सकता है, तथा खाली कर सकता हैं।' — बैरूल

'हम सबमें दैवत्व के बीज मौजूद हैं। हममें जो चतुर तथा बुद्धिमान किसान होते हैं, वे इस बीज से दैवत्व का वृक्ष खड़ा कर लेते हैं।' — एकहार्ट

आदमी जो चाहे, करने के लिये स्वतंत्र है। हम चाहें तो पवित्रात्मा और सर्वव्यापी व इंद्रियानुभवातीत भगवान की उपेक्षा करके, निजी हित तथा निजी आनंद में मगन रह सकते हैं, किंतु ऐसी दशा में हमारी अंतरात्मा हमें धिक्कारती रहेगी, तथा हम परम दुष्ट मनुष्य बन जायेंगे। और, हम चाहें तो अपने अंदर के दैवत्व से एकात्म स्थापित कर संत बन सकते हैं।

यह भी हो सकता है कि कभी संत के समान व्यवहार करें, और कभी परम दुष्ट के समान। तब हम उन असंख्य मनुष्यों के समान रहेंगे, जो न तो इतने अधिक ईशकेंद्रीय ही होंगे कि पूरी तरह ईश्वराभिमुख हो जायें, और न इतने अधिक आत्मकेंद्रीय ही, कि पूरी तरह सब बंधनों से मुक्त हो सकें।

मनुष्य की उत्कंठा ईश्वर के यौगिक ज्ञान के बिना तृप्त नहीं हो सकती। और चूंकि मन और शरीर से असीमित अनुभवों की प्राप्ति हो सकती है, इसलिए हम असीमित व्यक्तियों और विषयों से एकात्मता कर, सुखानुभव कर सकते हैं। किसी को मद्यपान में आनंद आ सकता है, किसी को पेटूपन से, और किसी को धन, विलास प्रियता या प्रतिष्ठा में। तादात्म्य के लिए अनुभवों और विषयों की कोई सीमा नहीं है।

हम चाहें तो एक साथ अनेक विषयों या वस्तुओं में लीन हो सकते हैं। ऐसी स्थिति में, हमारे भीतर विषम व्यक्तित्व का जन्म होता है। हमें ऐसे लोग मिल जायेंगे, जो अपने धंधे में महाचतुर हैं शराब तथा धन के पीछे दीवाने हैं, जासूसी उपन्यासों और घुड़दौड़ के शौकीन हैं, पर अपनी माँ के बड़े भक्त हैं,

अच्छी कविता के प्रशंसक हैं, नरक से डरते हैं, और दूसरों को दान देने में कोई संकोच नहीं करते।

यद्यपि स्वभावों और अभिरुचियों के अनुसार, मनुष्यों और विभिन्न वर्गों में विभाजित करना बड़ा आसान है, फिर भी हमें एक बात याद रखनी चाहिए। और, वह यह कि नीच से नीच व्यक्ति भी कुमार्ग प्रेरक वस्तुओं और प्रवृत्तियों से ऊपर उठ सकता है।

इस संबंध में 'हारपर्स मैगजीन' में प्रकाशित 'संकटकाल के दौरान लोग कैसे व्यवहार करते हैं?' लेख मुझे बहुत पसंद आया। इस लेख में एक तरुण वैज्ञानिक ने जो पाँच हवाई हमलों के दौरान, कुछ हवाबाजों के साथ उपस्थित था, बताया कि गंभीर संकट के समय, सभी व्यक्ति एक सा व्यवहार करते हैं, भले ही, अन्य परिस्थितियों में उनके व्यवहार एक दूसरे से भिन्न क्यों न रहे हों।

उनके व्यवहार का वर्णन सुनिये स्वंयं इस वैज्ञानिक के शब्दों में– 'मैंने पाया कि उन सबकी प्रतिक्रियाएँ आश्चर्यजनक रूप से समान थीं। आक्रमण के भीषणतम क्षणों में वे सब शांत रहे और सभी ने अचूक, तात्कालिक निर्णय बुद्धि से काम लिया। आक्रमण के आंरभ में ही 'टेल गनर', 'राइट वेस्ट-गनर', और 'नेवीगेटर' बुरी तरह घायल हो गये थे, किंतु तीनों बिना रुके, अपना काम करते रहे। संकटापन्न स्थितियों में सबसे ज्यादा जिम्मेदारी पाइलेट, इंजीनियर और 'वॉल टरेटगनर' की थी। मगर इन तीनों की कार्य-कुशलता, मुस्तैदी, और सामर्थ्य में कोई अंतर नहीं आया। आक्रमण के दौरान तत्काल निर्णय लेने की जिम्मेवारी पाइलेट, को-पाइलेट तथा बम्बार्डियर की थी, लेकिन उन्होंने अपने निर्णय जितनी मुस्तैदी के साथ लिये, उतनी ही मुस्तैदी के साथ उनका पालन भी किया।

'उस समय उनके व्यवहार को देखकर, एक बार भी कोई यह नहीं कह सकता था कि इनमें से एक चिड़चिड़े स्वभाव का है, और दूसरा शांत और शर्मीली तबियत का।'

वे सभी शांत, सुव्यवस्थित, अव्यग्र और चौकस थे। उनका व्यवहार एक ऐसे कर्मचारी-वर्ग का व्यवहार था, जो भली-भाँति जानते थे कि भय क्या है, तथा इस कारण शरीर से भय को संयुक्त किये बिना अपना काम पूरी कार्य-क्षमता से कर सकते थे, जो प्रशिक्षित होने के कारण अपना काम सफ़ाई और चुस्ती के साथ कर सकते थे, तथा जिनका मिलजुलकर काम करने की क्षमता में पूरा अटल विश्वास था।'

तो, हमने देखा कि संकटकालीन स्थिति में इनमें से प्रत्येक अपने उस विशेष व्यक्तित्व को भूल गया था, जिसका निर्माण उसने अपनी वंश-परंपरा तथा अपने परिवेश के आधार पर किया था। इस अवसर पर वे सब अपने उन विभिन्न अनुभवों को भी भूल गये थे, जो उन्होंने मन और शरीर द्वारा प्राप्त किये थे। सबने अपने निजी हितों और सुखों को भुलाकर एक बड़े हित और सुख के लिए कार्य किया।

# नवनीत

संपादक गिरिजाशंकर त्रिवेदी
उप-संपादक रामलाल शुक्ल
अतिरिक्त सहयोग किशोरीरमण टंडन
प्रकाशक सु. रामकृष्णन्
**वर्ष ३९, अंक १०**

संस्थापक : **कन्हैयालाल मुंशी**
भारती : स्थापना १९५६
**श्रीगोपाल नेवटिया**
नवनीत : स्थापना १९५२

**अक्तूबर १९९०**

**लेख** : आत्मिक एवं वैज्ञानिक मूल्य : हरि १; शंकर मठ उत्तराखंड का सिद्धपीठ : प्रो. पी. आर. शुक्ल ६; अध्यक्ष के पत्र : सी. सुब्रमण्यम ८; गिरते नैतिक मूल्य और उपेक्षित माता-पिता : डॉ. विनोद गुप्ता १०; अनूठा इलाज : प्रवासी विनयकृष्ण ३४; अजर-अमर : दिनेश दर्पण ३५; पहली रचना साहित्यकारों की : रामेश्वर दयाल दुबे ३६; हिंदी कवियों की अंतिम रचनाएं : सरला मिश्र ४०; भारवि के अर्थ-गौरव की एक झलक : देवीसहाय शर्मा ४६; जब सम्राट ने भीख मांगी : डॉ. रामनारायण सिंह 'मधुर' ५०; गरीब का दीप कब जलेगा : चंद्रकांता शर्मा ५३; विवेक शून्य : मोहनलाल पुरोहित ८७; 'वह पाटल-पुरुष हमारा' : जयदेव सिंघानिया ८८; सची राउतराय का काव्य फलक : दुर्गाशंकर त्रिवेदी ९२; नोबेल पुरस्कार विजेता पास्तरनाक : डॉ. लक्ष्मीशंकर व्यास १५२; कुछ प्रसिद्ध महारानियों की सनकें : डॉ. गोपाल प्रसाद 'वंशी' १५९; मानसिकता परिवर्तन : कमल टावरी १८०; दीपक एक दृष्टिकोण अनेक : उमाशंकर चतुर्वेदी १८८; दीपावली पर बैल पूजा : प्रभातकुमार सिंघल १९१; व्यास की प्रतिमा : डॉ. परिपूर्णानन्द वर्मा २१८ ।

**परिचर्चा १** : दूरदर्शन कितना हित और कितना अहित ? सत्यकाम विद्यालंकार, डॉ. शिवमंगल सिंह सुमन, डॉ. जयन्त नारलीकर, डॉ. प्रभाकर माचवे, विष्णु प्रभाकर, मृणाल पाण्डे, वीरेन्द्रकुमार जैन, रामेश्वर शुक्ल अंचल, डॉ. श्याम सिंह 'शशि', डॉ. कल्याणमल लोढा, डॉ. कुंवर चंद्रप्रकाश सिंह, रामेश्वर दयाल दुबे, शम्भुशरण द्विवेदी 'बंधु', डॉ. राममूर्ति त्रिपाठी, कन्हैयालाल मिश्र 'प्रभाकर', डॉ. विष्णुकांत शास्त्री, चंद्रशेखर पाण्डेय, यशपाल जैन, डॉ. विवेकी राय, उमाशंकर शुक्ल, के. पी. सक्सेना, डॉ. विजयेन्द्र स्नातक, जगदीशप्रसाद चतुर्वेदी, क्षेमचंद्र सुमन, कमल टावरी, मोहनलाल पुरोहित, जयप्रकाश भारती, डॉ. श्रीपाल सिंह 'क्षेम', अनन्तकुमार पाषाण, कमला रतनम, र. शौरिराजन, ठाकुरप्रसाद सिंह, लक्ष्मीशंकर व्यास ६० ।

**परिचर्चा २ :** क्या लक्ष्मी अंधकार से प्रकाश की ओर ले जा सकती है? आयोजक : जगदीश किंजल्क १८३ ।

**कविता :** मधुर नज़्मी १२; डॉ. गिरिजाशंकर त्रिवेदी १३; जर्मन कविताएं ४४; शिवप्रसाद कमल ५२; किशोरीरमण टंडन ५२; रामजीदास कपूर; डॉ. मनोरमा शुक्ल ९६; सतीश आर्य १३८: महीपाल १३९; शरद सिंह १४३; दिनेश शुक्ल १४३; देवनारायण त्रिवेदी 'देव' २११; दिलीपकुमार तिवारी २१२; डॉ. शिवशंकर शर्मा; बालकृष्ण गर्ग २१३; कुंवर चंद्रपकाश सिंह २१६; कुमार शैलेन्द्र २२१; शम्भुदयाल सिंह 'सुधाकर' २२२; संतोष निर्मल २२२; धनंजय अवस्थी २२३; तारादत्त निर्विरोध २२४। अशोक अंजुम ३१

**कहानी :** कुत्ता सड़क का : सरला अग्रवाल ६५; बलिदान : कमलाशंकर त्रिपाठी ७२; वे क्षण : डॉ. दीपा त्यागी ८०; लहू (बंगला कहानी) : वारीन्द्रनाथ दास ९७; बिरादरी का सवाल है : धनेश्वर प्रसाद १०८; हरे रंग की दीवारोंवाला कमरा : सुखबीर ११६; अंतरिक्ष (मराठी कहानी) वि. वा. शिरवाडकर १२४; मुर्गा बांग क्यों देता है? (तातारी लोककथा) : महेश अमोली १४०; गूंगी तोप (फिलस्तीनी कहानी) : माहिर अहमद हुसैन १४४; चिट्ठी (फ्रेंच कहानी) : पोल थेवाल १५६; सूरज की दीवाली (बालकथा) : नरेन्द्र सिंघवी २१४।

**संस्मरण :** संस्कार और संवेदना के नव-सृजेता : रामेश्वर शुक्ल अंचल १६; सोने की थाली में ज्यौना परोस्यों : डॉ. रवीन्द्र भ्रमर ५६ ।

**स्वास्थ्य :** आयुर्वेद और शल्य-चिकित्सा : डॉ. मनोहर भंडारी २५ ।

**कला-जगत् :** चित्रकार चेतन और उनका जीवन संघर्ष : महेशवर्धन त्रिपाठी १२३ ।

**भविष्यफल :** अक्तूबर १९९० : पं. वी. के. तिवारी १४९ ।

**हास्य-व्यंग्य :** बर्थ डे अनारकली का : राजेन्द्र परदेशी १०५ ।

**धारावाहिक उपन्यास :** सही आदमी : सुधा १६० ।

**आवरण :** कमलाक्ष शेणै ।

**चित्र सज्जा :** ओके, शेणै, आर. डी. पुरोहित, सतीश चव्हाण

**कार्यालय :** भारतीय विद्या भवन, क.मा. मुंशी मार्ग, बंबई - ७

फोन ८११४४६२/८११८२६१

# 'शंकरमठ : उत्तराखंड का सिद्धपीठ

☐ प्रो. पी.आर. शुक्ल

भारत का उत्तराखण्ड केवल अपने प्राकृतिक सौंदर्य के लिए ही विख्यात नहीं है, बल्कि यह अनेक विलक्षणताओं से भी भरा पड़ा है। लोगों का विश्वास है कि इस क्षेत्र में आज भी सैंकड़ों वर्षों की आयु वाले अनेक योगी समाधिस्थ हैं तथा यह क्षेत्र अनेक सिद्धपीठों को अपने आंचल में छुपाये हुए है। किंतु बिरले ही इन तक पहुंच पाते है।

उत्तराखण्ड के गढ़वाल मंडल में श्रीनगर एक महत्वपूर्ण स्थान है। देहरादून, ऋषिकेश या हरिद्वार से बद्रीनाथ, केदारनाथ जाने के लिए टेढ़े-मेढ़े खतरनाक मोड़ों से भरी पहाड़ी सड़क ही आवागमन का एकमात्र साधन है। इस पर प्रतिदिन सैकड़ों की संख्या में स्थानीय निवासी तथा तीर्थयात्री बसों, कारों एवं टैक्सियों द्वारा यात्राएं करते हैं। गढ़वाल मंडल का थोड़ा-बहुत औद्योगिक विकास हो जाने के कारण अब यहाँ भारी वाहनों का आना-जाना भी बढ़ गया है।

ऋषिकेश से बद्रीनाथ या केदारनाथ की ओर जानेवाले सभी यात्री श्रीनगर में एक रात्रि विश्राम अवश्य करते हैं। फिर दूसरे दिन अपनी यात्रा आरंभ कर देते हैं। इसी प्रकार यात्रा की वापसी में भी यात्री श्रीनगर में एक रात्रि अवश्य रुकते है। श्रीनगर में गढ़वाल विश्वविद्यालय बन जाने के कारण यह शिक्षा का प्रमुख केंद्र भी बन गया है। अतः अब यहाँ की आबादी तेजी से बढ़ रही है।

श्रीनगर को साधारण दृष्टि से देखने पर ऐसा लगता है कि जैसे यह नवनिर्मित नगर है, किंतु वास्तव में ऐसा नहीं है। यह एक अत्यंत प्राचीन नगर है, जो अनेक तीर्थस्थलों तथा सिद्धपीठों से विभूषित है। इन्हीं में एक सिद्धपीठ है - 'शंकरमठ'। शंकरमठ के विषय में लोगों को कुछ अधिक जानकारी नहीं है। कभी-कभी बाहर से आने वाले तीर्थयात्री या पर्यटक 'शंकरमठ' को एक साधारण मंदिर समझकर देखने चले आते हैं। किंतु मंदिर की दिव्य विश्वमोहिनी की एक झलक उन्हें ऐसा प्रभावित करती है कि वे यहाँ बार-बार दर्शन करने के लिए आने लगते हैं।

ग्रीष्मावकाश में अपने उत्तराखण्ड प्रवास के मध्य मुझे 'शंकरमठ' के दर्शन करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। यह मठ एस.एस.बी. (पूर्व पी.ए.सी. कमांडेंट कार्यालय) के निकट सड़क से मात्र एक फलांग की दूरी पर अलकनंदा नदी के किनारे बना हुआ है।

मंदिर के चारों ओर का प्राकृतिक सौंदर्य अत्यंत मोहक एवं दर्शनीय है ।

स्कंदपुराण तथा ब्रह्मपुराण में 'शंकरमठ' के माहाल्य का विशद वर्णन देखने को मिलता है। इसे गंगामठ, अश्वतीर्थराज, ब्रह्मतीर्थ, देवलाश्रम तथा बैकुण्ठधाम भी कहते है । इस मठ में भगवान विष्णु तथा विश्वमोहिनी की दुर्लभ शालिगराम शिला की अत्यंत भव्य मूर्तियाँ हैं, जिन्हें देखने से लगता है कि ये अभी बोल पड़ेंगी ।

'शंकरमठ' विश्वमोहिनी की जन्मभूमि है। यहीं पर देवर्षि नारद को मोह हुआ था । यही वह मायानगरी है जहां विश्वमोहिनी का विराट स्वयंवर हुआ था। इसमें सभी देवतागण पधारे थे। यहीं देवर्षि नारद को वानर का रूप प्राप्त हुआ था ।

'शंकरमठ' को 'मोक्ष द्वार' भी कहते है । जगदगुरु श्रीशंकराचार्य एक बार यहाँ अस्वस्थ हो गये थे । उन्होंने उसी स्थिति में घोर तप किया था। जिससे उन्हें विश्वमोहिनी के दर्शन हुए थे । 'शंकरमठ' अनेक देवताओं तथा ऋषियों की तपस्थली रहा है। महर्षि देवल ने भी यहीं तप किया था। इसीलिए इसे देवलाश्रम भी कहते हैं ।

एक बार रघुवंशी राजा नहुष ने इसी स्थान पर अश्वमेध यज्ञ किया था । उनके यज्ञ के घोड़े को देवराज इन्द्र ने चोरी कर कहीं छिपा दिया। नहुष ने देवराज इन्द्र को परास्त करने के लिए घोर तप किया। उनकी तपस्या से प्रसन्न होकर भगवान शंकर ने उन्हें विजय का वरदान दिया था। यह तप अश्व की प्राप्ति के लिए किया गया था, अतः शंकरमठ को अश्वतीर्थ के नाम से भी जाना जाता है ।

'शंकरमठ' के घाट के निकट ही रामघाट, केदारघाट, राजघाट, दुभरी का घाट तथा सरस्वती कुण्ड, ब्रह्मकुण्ड व देवलकुण्ड आदि स्थापित है, जिनके माहात्म्य को केवल आध्यात्मिक विचार वाला व्यक्ति ही समझ सकता है ।

'शंकरमठ' के वर्तमान महंत श्रीकृष्ण उनियाल अत्यंत सौम्य, गंभीर एवं आध्यात्मिक प्रवृत्ति के संत हैं अठारह पीढ़ियों से उनके पूर्वज 'शंकरमठ' के महंत का पद संभाले हुए हैं। महंत श्रीकृष्ण उनियाल से मुझे अनेक बार साक्षात्कार करने का अवसर प्राप्त हुआ । उन्होंने बताया कि एक बार सन १८९३ की वीरगंगा की बाढ़ में पूरा श्रीनगर डूब गया था। केवल 'शंकरमठ' ही बचा था । किंतु थोड़ी बहुत क्षति मठ की भी हुई थी । अनेक वर्षों तक धनाभाव एवं शासन की उपेक्षा के कारण मंदिर की जर्जर स्थिति से वे बड़े चिंतित लगे। वह आज भी मंदिर के कायाकल्प हेतु प्रयत्नशील हैं।

**— ३, गोविन्दगंज,**
**दतिया - ४७५६६१, म.प्र.**

* * *

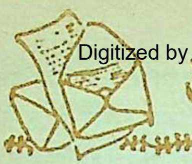

# अध्यक्ष के पत्र

राजभवन
मलबार हिल
बम्बई
३० सितंबर १९९०

प्रिय सुहृद

नवरात्रि ।

**आधारभूता जगतस्त्वमेका**
**महीस्वरूपेण यतः स्थितासि ।**
**अपां स्वरूपस्थितया त्वयैत -**
**बाप्यायते कृत्स्नमलङ्घ्यवीर्ये ।।**

**देवी माहात्म्य ११-४**

'पृथ्वी रूप में तुम जगत का एक आधार हो। जलस्वरूप होकर तुमने सारे जगत को सन्तुष्ट किया है। हे देवी तुम अजेय हो।'

**शक्ति मां जगन्माता नाम से विदित हैं** जिसका अर्थ है सम्पूर्ण विश्व की मां। अत्यन्त सूक्ष्म रूप तथा अत्यन्त व्यापक रूप धारण करने की क्षमता उसमें (शक्ति)होती है। शक्ति की पूजा होती है। भक्तगण निराकार ब्रह्मस्वरूप शक्ति को सहायता के लिए पुकार सकते हैं। ईश्वर की उपासना वैदिककाल से चली आ रही है। महालक्ष्मी की प्रशस्ति में रचा हुआ श्रीसूक्त प्रसिद्ध वैदिक स्त्रोत है। भवन ने लन्दन के श्री बी. बी. कोन्नुर के अनुवाद के साथ श्रीसूक्त को प्रकाशित किया है।

हमारे संविधान के अनुसार इंडिया और भारत एक ही देश के दो नाम हैं। फिर दोनों नामों से मन में सगान भाव उत्पन्न नहीं होते। इंडिया के प्राचीन संस्कृत नाम भारतवर्ष का संक्षिप्त रूप ही भारत है। जब हम अपने देश के विषय में सोचते हैं तब हमारे मन में भारत माता का एक रूप उभर आता है। स्वतंत्रता संग्राम के समय हमारा राष्ट्रगीत 'वन्दे मातरम्' ही था।

हमारी प्रसिद्ध नदी गंगा मैया है गंगा पिता नहीं। जिस धरती पर हम रहते हैं तथा जिससे अपना भोजन प्राप्त करते हैं वह धरती मां है धरती पिता नहीं।

मेरे मन में माता की पूजा के विचार इसलिए पैदा हुए हैं क्योंकि आश्विन शुक्ल पक्ष में पहले दस दिन तक भक्तगण अम्बे माता की पूजा एवं आराधना करते हैं। दस दिन के इस काल को दशहरा कहते है। पहले नौ दिन को नवरात्रि तथा दसवें दिन को विजयादशमी कहते हैं। उसी दिन विद्या की देवी अर्थात् सरस्वती की उपासना करके स्वाध्याय करते हैं और नये सिरे से विद्यारंभ करते हैं।

आज दिन भी हमारी इस पवित्र भूमि में पुस्तकों का नाम सरस्वती से जुड़ा रहता है। पुस्तकों का सम्मान हमारी पुरानी परंपरा है। पुस्तकों के सम्मान के सम्बन्ध में केवल उन्हीं पुस्तकों की गणना करनी चाहिए जो आत्मा के उद्धार के लिए हों तथा जिनमें जीवनमूल्य भरे हों।

नवरात्रि के समय पर हमें अपनी मातृभूमिकी सेवा में पुनः अपने आपको समर्पित करना चाहिए। **जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी**। अर्थात् माता और मातृभूमि स्वर्ग से भी बढ़कर होती है। यह भावनात्मक विचार है। किसी भौगोलिक मूर्ति की पूजा नहीं। हमें सर्वप्रथम भारतीय तथा अन्ततः भारतीय रहना चाहिए।

विजयदशमी के दिन हथियारों की पूजा होती है। इसी दिन किसान खेती के औजारों तथा कारखाने में काम करने वाले मजदूर यंत्रों की पूजा करते हैं। कार्य ही पूजा है इससे अच्छा उदाहरण दूसरा क्या हो सकता है।

नवरात्रि के त्यौहार के समय प्रकृति भी भरीपूरी और उदार हो जाती है। स्वामी चिद्भवानंद ने अपनी पुस्तक ब्रह्म के स्वरूप (Faces of Brahman) में इस त्यौहार के मौसम का वर्णन बड़ी सजीवता से किया है। 'धरती माता को पर्याप्त सेचन सुख देकर वर्षा प्रायः इस समय रुक जाती है। धरती हरियाली के गलीचे से ढक उठती है। चारों ओर ताज़गी ही ताज़गी नज़र आती है। हरियाली के साथ साथ अनेक प्रकार के रंगीन पुष्पों के गुच्छे शोभाययान होते हैं। खेती की जमीन फसलों से भरी हुई लहलहाती रहती है। मैदानों में घास के पत्तों पर पड़ी हुई ओस की बूंदें सूर्योदय काल में चमक उठती हैं। फल और फूल भरपूर होते हैं। ऐसे समय में मानव के लिए स्वाभाविक है कि वह मां (शक्ति-मां) की जी भरकर आराधना करे।''

स्वामीजी ने अन्यत्र कहा है कि, 'ईश्वर को माता रूप में देखना उससे अत्यन्त मधुर और मनोहर संबंधों को स्थापित करना है। माता और उसके बच्चे के बीच के संबंध अकथनीय हैं। अन्य दूसरे संबंध उसके निकट तक नहीं आते। ईश्वर को माता के रूप में देखने से उसकी पूजा और आराधना सहज तथा स्वाभाविक हो जाती है फिर पूजा के प्रकार का प्रश्न ही नहीं उठता। ईश्वर-माता अपने बालक की कमियों की ओर ध्यान ही नहीं देती। माता की पूजा कोई जबानी खातिर नहीं है और नही धार्मिक परंपरा का अभ्यास ही। इस प्रक्रिया द्वारा मानव माता की भौतिक तथा आध्यात्मिक सम्पत्ति का उत्तराधिकारी बन जाता है।'

दशहरा के इस शुभ अवसर पर भवन के विशाल परिवार-विश्वस्त मण्डल, पदाधिकारी, कार्यसंचालक, शिक्षक, प्रशासनिक कार्यकर्ता विद्यार्थियों आदि – के लिए मैं माता से मंगलकामना करता हूं।

आपका
**सी. सुब्रमण्यम**

# गिरते नैतिक मूल्य और उपेक्षित माता-पिता

☐ **डॉ. विनोद गुप्ता**

'शादी होते ही पति-पत्नी बच्चे की चाह करने लगते हैं। बच्चे के जन्म लेते ही माता-पिता सुनहरे सपने संजोने लगते हैं कि उनका बच्चा बड़ा होकर डॉक्टर, इंजीनियर, अफसर आदि बनेगा और अपने माता-पिता की बुढ़ापे में सेवा करेगा। अपने इस अटूट विश्वास के कारण हर माता-पिता अपने बच्चों का अच्छे से अच्छा पालन करते हैं, पढ़ाते हैं, खुद अभावों में रहकर भी बच्चों को किसी वस्तु का अभाव महसूस नहीं होने देते। इस प्रकार माता-पिता अपनी सारी कमाई बच्चों के भविष्य निमार्ण पर खर्च कर देते हैं लेकिन बदले में उन्हें क्या मिल रहा है? तिरस्कार, अपमान और उपेक्षा। क्या इसी सबके लिए मां-बाप संतान को जन्म देते हैं कि बुढ़ापे में जब उन्हें सहारे की जरूरत हो, उन्हें घर से बाहर निकाल दिया जाये?

माता-पिता को देवता तुल्य मानने की परंपरा वाले देश भारत में इन दिनों बुजुर्गों से जो सलूक होने लगा है, वह किसी से छिपा नहीं है। इससे अधिक निंदनीय और क्या हो सकता है कि बड़े-बूढ़ों को अपना ही खून कुछ इस तरह भुलाने, बिसराने व उपेक्षित समझने लगा है जैसे कोई रिश्ता-नाता ही नहीं रहा हो। आज हमारे नैतिक मूल्य इतने अधिक गिर चुके हैं कि जन्म देने वाले माता-पिता भी बोझ लगने लगे हैं।

आज की संतानें अपने बुजुर्ग माता-पिता की कितनी दुर्दशा कर रही हैं, इसकी एक कहानी वृद्ध मां के शब्दों में, 'मैं बहुत ही संपन्न परिवार की थी। मेरे द्वार दुखियों के लिए हमेशा खुले रहते थे। दया, ममता और करुणा का मेरा आंचल उन्हें ढंक लेता था, लेकिन आज इस घाट की सीढ़ियों पर चढ़ने वाले हर व्यक्ति के मैं पैर छूती हूँ और कहती हूँ, कि अन्नदाता सिर्फ एक रोटी का सवाल है।' अपनी आप बीती को जारी रखते हुए यह वृद्धा कहती है, 'मेरे पति की मौत के बाद सारी संपत्ति मुझे मिली। मैंने वह बेटे के नाम कर दी। बस उसी दिन से बहू और बेटे ने मुझे जो लात मारी तो मैं वाराणसी के इस घाट की सीढ़ियों पर गिरी।'

कैसी विडंबना है जिन मां-बापों ने अपना सारा जीवन अपने बेटों पर न्यौछावर कर दिया हो, उन्हें वृद्धावस्था में दर-दर की ठोकरें खानी पड़ रही हैं और भीख मांगने पर मजबूर

होना पड़ रहा है। इससे बुरी बात और क्या हो सकती है?

हमारे देश में ७० से ज्यादा उम्र वाले लोगों की संख्या साढ़े चार करोड़ से भी अधिक है। इस शताब्दी के अंत तक इनकी संख्या सात करोड़ तक पहुंच जायेगी। हमारे यहां तो बुढ़ापा शीघ्र आ जाता है, क्योंकि गरीबी और कुपोषण की वजह से शरीर प्रौढ़ावस्था से ही शिथिल होने लगता है। ५५-६० तक पहुंचते-पहुंचते तो अंग-अंग ढीले पड़ जाते हैं। वैसे बुढ़ापा जीवन का अनिवार्य क्रम है और यदि दुर्भाग्यवश व्यक्ति इससे पूर्व नहीं मरता है तो सभी को बुढ़ापा आना है। लेकिन आज हमारे नैतिक मूल्यों का इतना पतन हो गया है कि अधिकांश परिवारों में बूढ़े मां-बाप को बोझ समझा जाता है और इस कारण उन्हें वह उचित आदर और सम्मान नहीं मिल पा रहा है, जिसके वे हकदार हैं।

इस बारे में दो राय नहीं कि आज के अधिकांश कमाऊ पूत अपने बुजुर्ग माता-पिता को केवल बोझ ही समझते हैं। बूढ़े मां-बाप को दो वक्त रोटी भले ही दे दें पर उनके पास पल-दो पल बैठकर उनका दुःख-सुख सुनना इन्हें अखरने लगा है। बहुत कम माता-पिता ऐसे सौभाग्यशाली होंगे, जिनकी संतान बुढ़ापे में उनकी सेवा कर रही होगी, वैसे ज्यादातर माता-पिता तो बुढ़ापे में शोषण और उपेक्षा के शिकार बने हैं।

वृद्धावस्था उस समय बहुत अखरती है, जब अपनी ही संतानें उनके साथ नौकरों जैसा व्यवहार करती हैं तथा बहुएं बात-बात में ताने और झिड़कियां सुनाने लगती हैं। अपने परिवारों में तो वृद्ध माता-पिता की इतनी दुर्दशा है कि उन्हें छोटी-छोटी चीजों के लिए भी बच्चों पर निर्भर रहना पड़ता है। कई बार बच्चे बूढ़े बाप को झिड़क देते हैं और बेचारा बूढ़ा बाप अपना अपमान चुपचाप सहन करता चला जाता है। बूढ़ों को परिवार में सबसे दयनीय प्राणी के रूप में समझा जाता है। हर बार उन्हें प्रताड़ित किया जाता है और उनसे ऐसे कार्य लिए जाते हैं जो उनके सम्मान के खिलाफ हैं।

इतना ही नहीं आधुनिक पत्नियां अपने पतियों को उल्टी-सीधी पट्टी पढ़ाकर या तो स्वयं अपनी गृहस्थी अलग बसा लेती हैं, अथवा बूढ़े सास-ससुर को घर छोड़ने पर बाध्य कर देती हैं। ऐसे में बूढ़े मां-बाप पर क्या बीतती हैं, वह हर भुक्तभोगी अच्छी तरह से जानता है। जिन बुजुर्गों के पास संचित धन नहीं होता उनकी तो भारी उपेक्षा की जाती है।

क्या कभी युवा संतानों ने अपने वृद्ध मां-बाप की परेशानियां जानने का प्रयास किया है? इन सब बातों को जानने का समय भला किसके पास है? आज मां-बाप के महत्त्व को कौन स्वीकारता है? क्या वे आर्थिक रूप से उत्पादन करने लायक नहीं रहे, महज इसीलिए उनकी उपेक्षा की जानी चाहिए?

वृद्ध मां-बाप को रोटी और कपड़ा देने से ही संतानों के कर्तव्य की इतिश्री नहीं हो जाती। बुजुर्गों को रोटी कपड़ा ही नहीं, प्यार

# दो ग़ज़ल

## (१)

इस कदर भीं संभाले गये
आईने तोड़ डाले गये ।

ज़िन्दगी की इबारत से हम
बेरुख़ी से निकाले गये ।

कटघरे में है सूरज खड़ा
दिन हसीं धूप वाले गये ।

क्या कहें, किस लिए लोग फिर
जैसे सिक्के उछाले गये ।

जिस्म के अब हर इक मोड़ पर
ज़ख़्म के बुनते जाले गये ।

सुख को समझाने के वास्ते
दु:ख के ग़मगीन छाले गये ।

## (२)

मौत जैसी ये सुनसान है
ज़िन्दगानी बियाबान है ।

दर्द के व्याकरण में बंधा
आदमी कितना बेजान है ।

जिस्म के ज़ख़्म सुलगा किये
ज़िन्दगी जैसे लोबान है ।

आज के दौर में भी मेरा
ये कलम, बन्धु ईमान है ।

हादसा, हादसा, हादसा –
हर कहानी का उनुवान है ।

ओस की बूंद-सा आदमी
रेत के घर में मेहमान है ।

**– मधुर नज़्मी**
श्री 'हरिऔध' कला-भवन,
आज़मगढ़ - २७६ ००१

---

और सहानुभूति भी चाहिए। हमें वृद्धों के प्रति अपना दृष्टिकोण बदलना होगा। बुजुर्गों की परिवार में महत्त्वपूर्ण भूमिका है, उन्हें बोझ मानना ठीक नहीं है। उनके पास अनुभव व ज्ञान का अथाह भंडार है, जिससे नयी पीढ़ी बहुत कुछ सीख सकती है। परिवार में बड़े-बूढ़ों की मौजूदगी ही बहुत महत्त्व रखती है। उन्हें उपेक्षा की नहीं आदर, सम्मान और प्यार की जरूरत है और उन्हें मिलना ही चाहिए। जिन माता-पिता ने हमें जन्म दिया औंर पढ़ा-लिखाकर अपने पैरों पर खड़े होने लायक बनाया, उनकी सेवा से विमुख होना कृतघ्नता है।

– १६, सुदामा नगर एक्टेंशन-२,
रामटेकरी, मन्दसौर - ४५८००१, म.प्र.

# बापू की लंगोटी

### डॉ. गिरिजाशंकर त्रिवेदी

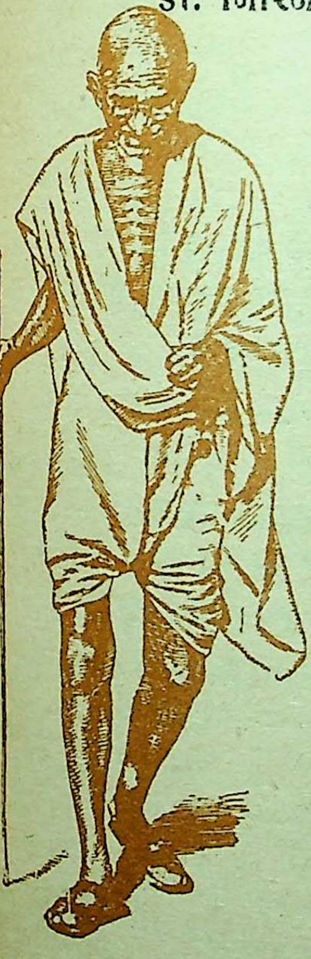

प्यारे बापू !
हमारा काम रह गया है
केवल तुम्हारा जन्म-दिवस मनाना !
तुम्हारी प्रतिमा पर फूल-मालाएं
चढ़ाकर अपने चित्र खिंचवाना।
लगता है, कहीं कुछ खो गया है,
इस देश को न जाने क्या हो गया है
चौराहे पर खड़ी
तुम्हारी आदमकद प्रतिमा
आंसू बहाया करती है,
शायद अपने बेटों की करतूत पर
पछताया करती है।
जिन बेटों को तुमने
विदेशी शासकों से
देश को आजाद करना सिखाया था
सत्य, अहिंसा और सत्याग्रह का
अमोघ मंत्र समझाया था,
वे अब अहिंसा के खिलाफ
हिंसा भड़का रहे हैं,

१९९०

सत्य की धज्जियां उड़ा रहे हैं,
और सत्याग्रह को राजनीति का
मोहरा बना रहे हैं!

हे राष्ट्र पिता बापू !
अब वे तुम्हारे देश की
भोलीभाली जनता को
देश के टुकड़े-टुकड़े करना
सिखा रहे हैं।

इतना ही नहीं बापू,
अब वे कई कदम आगे बढ़ गये हैं,
अखबारों की सुर्खियों पर चढ़ गये हैं।
भाई को भाई से लड़वा रहे हैं,
खून–खराबे कराकर
जश्न मना रहे हैं।

कुछ तो और भी आगे बढ़ गये हैं,
निजी दुनियादारी में पड़ गये हैं,
देश के विश्वास को बेंचकर खा रहे हैं,
मौज–मस्ती की जिन्दगी बिता रहे हैं।

अब क्या होगा बापू,
तुम्हारे प्यारे देश का
तुम्हारे लकुटियाधारी
सादगी के परिवेश का
आज नामधारी तुम्हारे चेले

जाति, भाषा और धर्म के नाम पर
अलग-अलग दूकानें खुलवा रहे हैं
देश की परवाह न कर
अपनी कुर्सी बचाने में
सारी ताकत लगा रहे हैं
क्या होगा बापू
भोली-भाली जनता के भाग्य का
क्या सपना पूरा हो पायेगा
तुम्हारे रामराज्य का ?
अब तो बापू अगर तुम
एक बार जनता का दर्द दूर करने
आ भी जाओगे,
तो सच कहता हूँ कि
बुरी तरह पछताओगे,
बात बहुत आगे बढ़ गयी है
यहां अपनी-अपनी पड़ गयी है ।
तुम्हें देखते ही वे फिर तुम्हारे पास
इस मकसद से चले आयेंगे
कि अब तक तो
वे तुम्हारे नाम की खा रहे थे
पर अब
तुम्हारी लंगोटी भी बेच खायेंगे ।

—नवनीत, भारतीय विद्या भवन,
के॰ एम॰ मुंशी मार्ग, बम्बई-७

□

# संस्कार और संवेदना के नवसृजेता

### ☐ रामेश्वर शुक्ल अंचल

सन १९३७ का जनवरी का महीना रहा होगा, जब मुझे प्रसादजी के प्रथम और अंतिम दर्शन लखनऊ में हुए थे। मेरे जीवन का बाइसवां बसन्त था। लखनऊ में शासकीय अखिल भारतीय इन्डस्ट्रियल प्रदर्शनी चल रही थी। गोरखपुर के धार्मिक साहित्य प्रकाशन प्रतिष्ठान (मासिक कल्याण के प्रकाशक) की एक विशद चित्रशाला भी संजोयी गयी थी। आचार्य नंददुलारे बाजपेयी उसके मैनेजर थे और मैं उनका संयुक्त सहयोगी जो दर्शकों को कल्याण में समय-समय पर छपे उन मूल रंगीन चित्रों के संदर्भ देकर उनकी भावभूमि बताता था। देश के कोने-कोने से लोग प्रदर्शनी देखने आते थे। उस अवसर पर दुलारेलाल भार्गव के संयोजन में एक द्वि-दिवसीय कवि-सम्मेलन हुआ था। पं. श्यामबिहारी मिश्र उसके कार्यवाहक अध्यक्ष थे। मैथिलीशरण गुप्त, निराला और प्रसाद से लेकर उन दिनों उदीयमानता की परिधि में आने वाले भगवतीचरण वर्मा, बच्चन, श्यामनारायण पांडेय, तक सभी मौजूद थे। दिन में अपरान्ह कवि सम्मेलन हुआ था। उसी के एक दिन पहले अखिल भारतीय मुशायरा भी किसी खानबहादुर अफ़सर की सदारत में हुआ था। उसमें बाहर के प्रसिद्ध शायर कम ही आये थे।

नन्ददुलारे बाजपेयी प्रसादजी के विचारशील आलोचक के रूप में ख्याति प्राप्त कर चुके थे। यों भी अर्ध साप्ताहिक 'भारत' के संपादन से वे साहित्यिक विवेचना के एक केन्द्रबिन्दु बन चुके थे। उन दिनों वे गीताप्रेस से प्रकाशित 'मानसांक' के सुसंपादन में लगे थे। हनुमानप्रसाद पोद्दार को अपने समस्त वैतनिक लोगों में वे ही इस चित्रशाला के प्रबंधक के रूप में भेजे जाने योग्य जंचे थे। दाचस्पति पाठक और विनोदशंकर व्यास के साथ प्रसादजी आये तो बाजपेयीजी ने उन्हें अपनी गद्दीदार कुर्सी पर बिठाया। तब तक एक विवाद खड़ा हो चुका था।

संयोजक भार्गवजी के एक निकटतम सहयोगी ने प्रसादजी के प्रति कुछ अवज्ञा भाव लिये शब्द कहे थे। पाठकजी और व्यासजी (साथ में दो-तीन और काशी से उन्हीं के साथ आये साहित्यिक मित्र) कह रहे थे कि प्रसादजी को इस कवि-सम्मेलन में नहीं जाना चाहिये। बाजपेयीजी का समर्थन पाते ही यह

तय हो गया कि प्रसादजी उस विराट कवि-सम्मेलन में नहीं जायेंगे। मैथिलीशरणजी गुप्त तब तक वहां आ गये थे। यह सब सुनकर प्रसादजी से बोले थे — 'भैया! तुम जो करोगे वही मैं करूंगा।' अन्त में दोनों शीर्षस्थ कवि उस सम्मेलन में नहीं ही गये। दुलारेलालजी का आग्रह कारगर न हुआ।

मेरा परिचय पाकर प्रसादजी ने प्रसन्नता प्रकट की। माधुरी परिवार के गण्यमान कवि-लेखक वे शुरू से थे। मेरे पिताजी के संपादनकाल में वह अबाध लेखन-क्रम और बढ़ गया। पिताजी काशी जाते तो घंटों उनकी दुकान पर बैठते, भांग छनती, पान के दौर चलते। मेरे प्रति मेरे जैसे अन्य नवोदितों की अपेक्षा उनका विशेष स्नेह भाव होना स्वाभाविक था। अपने प्रथम कविता-संग्रह 'मधूलिका' की भूमिका लिखने को जब मैंने अनुरोध किया तो उन्होंने सहमति दे दी। पर मुझे यह सौभाग्य बदा न था। मेरी पुस्तक प्रेस में जाने के पहले ही वे महाप्रयाण कर चुके थे।

लखनऊ के साहित्य अभिरुचि-संपन्न तरुणों को यह कैसे बरदाश्त होता कि प्रसादजी लखनऊ (मेरी याद में १९२५ के बाद पहली बार) आयें और हम उनके अनुरूप एक आयोजन कर उनका काव्य-पाठ न सुनें। कान्यकुब्ज कालेज अब जयनारायण डिग्री कालेज के विशाल सभाकक्ष में उनके काव्य-पाठ की व्यवस्था की गयी। अमृतलाल नागर, डा. रामविलास शर्मा, रामचन्द्र द्विवेदी प्रदीप और उसी कालेज के पूर्व छात्र मैंने प्रसादजी को मना लिया। कालेज के कविता-रसज्ञ प्राचार्य बालकृष्ण पांडेय स्वयं उनसे निवेदन करने गये। प्रदर्शनी में आये भगवतीचरण वर्मा, भगवतीप्रसाद बाजपेयी, मुंशी अजमेरी आदि भी शायद वहीं थे। कालेज ने प्रसादजी का भावभीना स्वागत किया — अभिनंदन-पत्र अर्पित किया। निरालाजी अध्यक्ष थे — नंददुलारेजी प्रमुख वक्ता। प्रसादजी को सुनने, देखने के लिए सैकड़ों छात्र, अध्यापकों और काव्य-रसिकों से हाल भरा था।

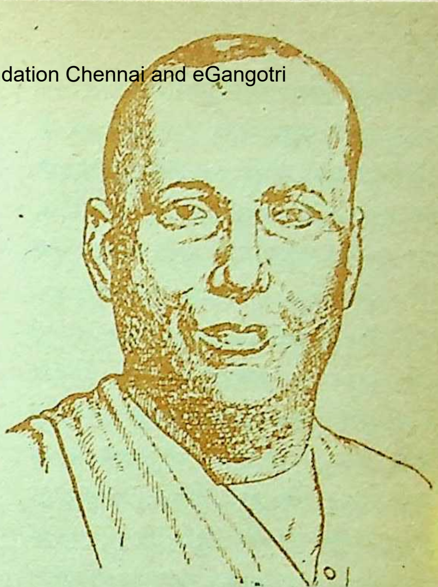

प्रसादजी के सम्मान में वहां बैठे सभी जाने-माने कवियों के बाद प्रसादजी ने 'आंसू' और 'लहर' में संकलित कुछ कवितायें सुनाकर कामायनी का 'लज्जा' सर्ग सुनाया जो वर्षों पहले सरस्वती के किसी नववार्षिकांक में प्रकाशित हुआ था। वाणी में

कलावंत के अलंकरण नहीं, किसी प्रकार की गायकी का उपक्रम नहीं, फिर भी पढ़ने की शैली का ऐसा अनूठापन, मंजे हुए (कभी स्वर-साधक रहे) कंठ का ऐसा भावोदीप्त लालित्य कि छोटे-बड़े सभी श्रोता झूम चले। कवितापाठ से कतराने वाला कवि हम छात्रों के स्नेहादर से अभिभूत हृदय का रस उड़ेल रहा था। वे सचमुच थक गये। (इसके ८-९ महीने बाद ही दिवंगत हो गये) मैंने विनय की– 'स्कंदगुप्त' का 'मुझे वेदना मिली विदाई' और सुना दीजिये। निरालाजी को यह गीत विशेष प्रिय था। उन्होंने प्रसादजी की ओर जैसे मेरी फरमाइश के प्रति अनुशंसा की दृष्टि से देखा। प्रसादजी ने उसे सुनाया और शालीनता के साथ सभी को नमन कर अपनी थकान दूर करने लगे। हमारे कालेज को प्रसादजी के लखनऊ आने का यह एकल साहित्यिक गौरव प्राप्त हुआ।

प्रसादजी के सान्निध्य और भेंट की एक यही याद मेरे पास है। पिताजी बनारस से लौटकर उनके गांभीर्य, कला-वैभव और रसवर्षी व्यक्तित्व की बातें करते जो प्रसाद के विपुल सृजन में सौन्दर्य, करुणा, ओज और प्रेम के बहुवर्णी आयाम लिये परिव्याप्त है। मेरे जैसे तब उनके असंख्य पाठक भी उनकी रचनायें पढ़कर इसी भावानुभव, इसी रसदशा में डूबा करते थे। हिन्दी के वे प्रगति-पुरुष तो थे ही, नाटक और कथा के सृजन में भी उनकी संवेदनायें इतनी गहरी हैं, जीवन और जगत के इतने सघन पक्षों को उजागर करती हैं कि उनके कल्पनालोक और अनुभूति जगत दोनों का औदात्य पाठक को भव्यता की ऐसी भूमि पर पहुंचा देता है जो दिव्य लगने पर भी इसी धरती से अपनी प्राण-ऊर्जा खींचती है। उनका यह भौमिक लगाव और अंगभूत जुड़ाव उन्हें अशरीरी या अतीन्द्रिय नहीं बनने देता। उनकी अभिव्यक्ति की सारी गरिमा, कल्पना का सारा रूप-सौरभ जलदागम मारुत से कंपित सृष्टि का जीवनोन्मेष, जीवनांकुरों की उर्वरता लिये है। वे भावनाजीवी होकर भी यथार्थों का जीवनभोग और सुन्दर-असुन्दर कर्म-गति लेकर चलते हैं।

मुझे बराबर यह विस्मय होता रहा है कि अतीत प्रसाद के हाथ में पड़कर इतना जीवन्त और अर्थ-गर्भ कैसे हो जाता है। क्या इसलिये कि अतीत और उसकी भव्यता प्रसाद के लिये साक्षात्कार है, परोक्ष अनुभव नहीं जो संवेदनशील से संवेदनशील इतिहास के अध्येता के मन में उपजता है? क्या इसलिये कि अपने समस्त आस्तेय के बावजूद उनका प्रत्येक मत-मान्यता, सदैव एक तीक्ष्ण प्रश्नता को साथ लिये है। सामाजिक हो या नैतिक, धार्मिक हो या अधार्मिक, घटना-बहुल, राजकीय परिवर्तनकारी हो या 'ज्यों का त्यों पन' - सभी को उन्होंने परंपरानुमोदन जैसा स्वीकार नहीं किया? सत्य कितने रूप रचकर, बहुमुख होकर अपने मूल में प्रौज्ज्वल है! पर प्रत्येक युग में उसे शिव-साधक की अपेक्षा उपाधक ही अधिक देखा और बनाया गया है। मुझे याद है आज से पचास वर्ष पहले 'कंकाल' को

अशुद्ध और मलीनताओं से भरा हुआ कहने पर मैंने युवकोचित जोश के साथ वक्ता से कहा था – 'कंकाल' को वर्ण शंकरों से भरा हुआ कहते हैं आप। उसे कुरुचिमूलक मानते हैं। तब तो सबसे पहले महाभारत को त्याज्य माना जाय जो दोगलों से भरा है। मगर अरविन्द घोष जैसे महान् विचारक वेदव्यास को 'प्रोग्रेसिव रियलिस्ट' कहते हैं। सामाजिक आचरण-व्यक्ति के चरित्र के दोमुंहेपन को सामने लाने की शल्यक्रिया निन्दनीय नहीं, स्वस्थ और कल्याणकारी होती है। कितने पातक कब तक निगले जायेंगे?

प्रसाद भाषा और अभिव्यक्ति में चाहे जितने कमनीयतावादी हों, पर चरित्र की चीरफाड़ में वे निर्मम होकर जीवन की भ्रष्टता और समाज के कुत्सित कदाचरण को भयानक से भयानक रूप में चित्रित करने में नहीं हिचकते। जीवन की किसी भी यथार्थता को वे अंतिम नहीं मानते। पर आत्मसंहारक तत्वों के विघटन में वे बहकते नहीं। अन्तर्मन की द्वंद्वात्मक स्थितियों का उद्घाटन करते हुए वे समाधानकारी नैसर्गिक तत्वों को– जीवन मूल्यों को नहीं भूलते, व्यक्तिवादी संस्कृति से सिरजे आज के अधिकांश चरित्रसृष्टाओं की भांति न तो वे नरनारी पात्रों में वह बौखलाहट, दुविधा, बेतुकी खीझ और दुःसाहसिक आक्रोश पैदा करते हैं और न उनके भीतर अचिन्त्य चाहनायें उकसाते – भड़काते हैं। वे अन्तर्द्वन्द्व के भीतर से ही त्राण की राह निकालते हैं – उसे ऊपर से आरोपित नहीं करते। आकर्षण-विकर्षण की, जीवन के संवादी और प्रतिवादी स्वरों की कल्पना और अनुभूति प्रसाद व्यक्ति के माध्यम से भले करते हों, पर यही व्यक्ति समष्टि के निषेधात्मक और विधेयात्मक तत्वों के घात-प्रतिघात को अग्रसर करता है। प्रेमचन्द के पात्र अधिकतर व्यक्ति नहीं वर्ग होते हैं। प्रसाद के पात्र समष्टिगत चेतना और वेदना को लेकर चलते हैं, भले उतने घनीभूत न हो पाते हों।

यही कारण है कि उनके भी अनेक वर्ग और समूह हैं। सभी अपनी विलक्षणतायें लिये हैं। पर एक बात सर्वत्र है, सब में है। वे जीवन के क्षेत्र में पूर्ण विश्वासी नहीं रहते – विश्वास और अविश्वास, आस्तेय और अनास्तेय के बीच झूलते हैं। आत्मविरोध, आत्मप्रतिवाद से वे इसीलिये भरे-भरे लगते हैं। पर जीवनेषणा, आस्था की मानवीय प्रतीति जो इन सबसे अलग और ऊपर है उनका साथ नहीं छोड़ती। प्रसादजी को सांस्कृतिक पुनरुत्थानवादी, सौन्दर्यवादी और रहस्योन्मुख स्वच्छंदतावादी आदि अनेक नामों से पुकारा गया है। जहां तक मुझे स्मरण है उनके काव्य की विशिष्टताओं पर पहली लेखमाला रामनाथ सुमन की सन १९३३-३४ में विभिन्न पत्रिकाओं में छपी थी, जो बाद में पुस्तकाकार प्रकाशित हुई। उन पर प्रकाशित होने वाली 'प्रसाद के दो नाटक' सन् १९३३ के आसपास (ले. कृष्णानंद गुप्त) जरूर धारावाहिक रूप से 'सुधा' में छपी थी। अपने ढंग की यह

अनोखी आलोचनात्मक कृति [illegible] पर उनके नाटकों का जो पैना गुण-दोष विवेचन उसमें हुआ था, उसने मूर्तिपूजक हिन्दी जगत में हलचल मचा दी थी। नन्ददुलारे बाजपेयीजी की पुस्तक 'जयशंकर प्रसाद' इसके बाद सन् १९४० में निकली जो उनके द्वारा समय-समय पर 'भारत' में छपे उनके गंभीर और जो उनके एकांगी होने की हदें छूते प्रशंसात्मक दृष्टिकोण की ही परिचायक थी। इसके बाद तो प्रसाद पर प्राध्यापकीय, पाठ्य पुस्तकीय विवेचनों का तांता लग गया और चर्वित-चर्वण की पराकाष्ठा हो गयी। पर साहित्यकार प्रसाद को इस प्रखर प्रश्नाकुल तीव्रता की ओर इन विज्ञ जनों का ध्यान कम ही गया। प्रत्येक बड़े लेखक की रचनाधर्मिता का एक मूल स्वर होता है जो उनके सारे प्रणयन में व्याप्त रहता है – उसे धार देता चलता है, प्रसाद किसी भी विश्वास-दर्शन को मुखर या प्रच्छन्न चुनौती देते हैं। कर्मवाद हो या नियतिवाद, पाप या पुन्य, अंगीकरण या असीकरण, शुचिता और मर्यादा हो या जीवन की ग्लानि और तन, मन, विवेक का पराभव – किसी को भी सहज शिरोधार्यता नहीं देते।

'संशयात्मा विनश्यति' को प्रसादजी ने न समझते-बूझते रहे हों ऐसी बात तो नहीं है। पर वे यह भी जानते थे कि प्रत्येक मान्यता कितनी भी प्रमाणित या चिरजीवी कही जाती हो प्राणोन्मुखी नहीं होती। प्रत्येक आकर्षण रूप की प्रतीति नहीं होता, प्रत्येक भावना सुन्दर नहीं होती, प्रत्येक विरह सौभाग्य में पर्यवसित नहीं होती। प्रत्येक उत्साह का फल अनुभव नहीं बनता, न प्रत्येक कर्मगति अपनी कोई अनिवार्य परिणति ही पाती है, न कोई व्यवहार लोकनिर्णायक होता है, न हर समय हर क्षेत्र में उसका विधान चलता है।

प्रसाद को रूपवादी, अभिव्यंजनावादी, लक्षणावादी कहा गया है। वे शिल्प-प्रसाधक हैं भाषा को अलंकरणों से संवार सिंगारकर उसे एक ललित आभिजात्य प्रदान करने वाले। अनुभूति को वे आत्मा की मननशक्ति की असाधारण अवस्था मानते हैं जो श्रेय सत्य को उसके मूल चारुत्व में सहसा ग्रहण कर लेती है। लौकिक-सुख, संपूर्ति, इन्द्रियगम्य सुख से इतर वह दुर्लभ और विरल है। यह सब बातें बड़े-बड़े आलोचकों ने दावेदारी के तौर पर की हैं। पर आज के रहस्यवाद को ही 'स्यूडो' मानने को मेरा जी करता है जो सोचा-सोचा और रचा-रचा लगता है। यों तो खैयाम के भोगवाद में भी लोग रहस्यात्मक प्रेरणा पा लेते हैं। पर भारतीय रहस्यानुभूति कर्मणा (मनसा वाचा के साथ ही) में ही अपनी सार्थकता पाती है। ईसाई सन्तों का ईरान के संतत्व-लब्ध रहस्यवादियों का पारदर्शी रहस्यवाद एक साधना है, जबकि छायावाद या उसके समान्तर चलता रहा रहस्यवाद एक प्रकार का उक्ति-लाघव या वैचित्र्यवाद है। प्रसाद अपनी पहचान बनाकर शृंगार को अधिकाधिक रमणीय बनानेवाले, मिलन-विरह, तृप्ति-अतृप्ति, प्रेमरसछाके श्रृंगारी कवि हैं – भले उनका बिम्ब-विधान

और रूप-रंजना, नयी-नयी उद्भावनायें, कल्पना और जीवन के यथार्थ परिवेश की नित्य नूतन होती छवि से आती हों।

पाश्चात्य और भारतीय आदर्शों का जो संघर्ष या वर्गगत वैषम्य ब्रिटिश साम्राज्य की स्थापना के बाद भारत के सामाजिक जीवन में प्रकट हुआ, उससे प्रसादजी को प्रायः अनभिज्ञ या उसके प्रति तटस्थ माना जाता है। पाश्चात्य सभ्यता में जीवन को युद्धमूलक संघर्ष माना गया है, क्योंकि वहां स्वार्थ की पूर्ति और लिप्ति की वासना सर्वोपरि है। भारत में चितना में मानव के सच्चे शत्रु उसके राक्षसी भाव हैं जिनसे हमें लड़ना चाहिये। तभी व्यक्ति की सच्ची स्वतंत्रता का अर्थ व्यक्ति की समता पूरा होगा। इसके लिए जीवनादर्श (जीवन-देवता) के प्रति श्रद्धापूर्ण समर्पण चाहिए, जो उसकी साधना का प्राण है। इसलिये अतीत का भार प्रसाद को कुंठित नहीं करता और भविष्य का अनिश्चय भाव, एक सीमा तक नियति की अनिवार्यता को स्वीकार करते हुए भी, उन्हें कायर या निष्क्रिय नहीं बनाता। उन्हें प्रेम में त्याग, साहस में संयम के धैर्य और विश्वास में स्वाधीनता की शक्ति दिखायी देती है। प्रसाद का इतिहास-प्रेम और पौराणिक कथाओं के प्रति लगाव देखकर यह जानने की उत्सुकता होती है कि वे स्त्री-पुरुष किस प्रकार के थे, जिन्होंने ऐसे प्रौज्ज्वल सपनों और प्यारी कल्पनाओं को इतना भव्य रूप प्रदान किया — न जाने विचारों, कल्पनाओं और घटनाओं की किस स्वर्ण खान को खोद कर प्रसादजी ने उन्हें निकाला।

इसी प्रसंग में प्रसाद के पात्रों, विशेषकर नारी पात्रों का स्मरण हो आता है जिनका चारित्रिक सौन्दर्य संयमन की ओर ले जाता है और यह संयमन भी हमारे सौन्दर्य-भोग की गंभीरता और गरिमा में अभिवृद्धि करता है। नारी के नैसर्गिक रुझानों में अर्पण हो या विद्रोह हमारे भीतर एक स्तब्ध मनोयोग पैदा करता है। इस दृष्टि से प्रसाद के नारी चरित्र रवीन्द्र के चरित्रों के साथ शरदचन्द्र के नारी चरित्रों की अपेक्षा अधिक सादृश्य रखते हैं। शरद के नारी पात्र कारुण्य-बोध और उससे आगे बढ़कर 'पाप' की मनोरमता के बीच से जीवात्मा की एक ज्योतर्मय छवि विकीर्ण करते हैं। रवीन्द्र की मान्यता है— एक परायण सती स्त्री ही तो प्रेम के यथार्थ सौन्दर्य की उपलब्धि कर सकती है, दुराचारिणी या पथभ्रष्ट स्त्री थोड़े ही कर सकती है। सतीत्व वही चांचल्य रहित संयम है, जिसके द्वारा गंभीर रूप से प्रेम के निगूढ़ रस को प्राप्त किया जा सकता है। दूसरी ओर व्यक्ति की विषम परिस्थितियों को जीवन सत्य के दो पहलू मानकर नारीत्व को सतीत्व से बड़ा स्वीकारने वाले शरद ही उस कालखंड में (जब भारतीय साहित्य में शुचिता और आचारिक मर्यादाशीलता का जीवनमूल प्रबल था) लिख सके— नाना परिस्थितियों के विपर्यय में एक समय 'नाना' व्यक्तियों के संपर्क में आना पड़ा था। वे मेरे मन में इस उपलब्धि को छोड़ गये कि कोई भी त्रुटि, विच्युति, अपराध, अधर्म ही मनुष्य का सब

कुछ नहीं है। चरित्रों में जो वस्तु, यथार्थ में मनुष्य है, जिसे आत्मा भी कहा जा सकता है, वह उसके सब अपराधों से बड़ी है। सुनीति और दुर्नीति का स्थान इसमें है पर यह वस्तु इससे बहुत ऊंची है।

प्रसाद के पात्र यथार्थ और अयथार्थ के सम्मिश्रण से निर्मित होकर भी आदर्शवाद पर टिकी प्रकृति, चरित्र और प्रेम की एकान्तिक मुद्रा को स्वस्थ रूप में व्यक्त करते हैं (अनुरक्ति या विराग किसी की भी हो) जो उसे प्रगीत के रूप में ढाल जाती हैं। उसमें रंगीन, पारदर्शी चित्र उभरते हैं। यह विशेषता उनके नाटकों, कहानियों, उपन्यासों सभी में रचित नर-नारी चरित्रों में है। अनास्था या अविश्वास के सौदे वहां नहीं हैं। भले ही तीक्ष्ण अन्तर्भेदी प्रश्नता हो पर एक प्रकार का निश्छल एकात्म वहां है जो उनकी निजस्वता या वैयक्तिकता बनाता है। उनकी मानसिक ग्रंथियां आयातित नहीं हैं, सर्वथा उनकी हैं। उनके राष्ट्रीय शौर्य, देशपूजा और आक्रान्ताओं के प्रति हिंसक संग्राम-संकल्प के प्रति हमारे मन में वीरोपासना और प्रेरणा का ओज जागृत होता है। विजया, देवसेना, अलका, कोमा, सुरमा, अनन्तदेवी जैसी नारियां अबला न होकर स्वतंत्रता, मुक्ति, राजसत्ता की डांवाडोल तथा उथल-पुथल करने की शक्ति लिये हैं। इस दृष्टि से बंगला के अमर नाटककार द्विजेन्द्रलाल राय सृजित चरित्रों का अन्तर्द्वन्द्व और बाह्य घात-प्रतिघात दोनों के लिये हैं। 'ध्रुवदेवी' तक आते-आते प्रसाद ने ध्रुवदेवी के रूप में उस नारी का परंपराभंजक रूप दिखाया है जो युगों से पुरुष की श्रृंखला में बद्ध तड़प-तड़प कर अपनी भावनाओं का बलिदान करती रही है। प्रसाद के पात्रों में व्यंजित अन्तर्द्वन्द्व खंडित-व्यक्तित्वों का मनोव्यापार या मनोविकार नहीं, जीवित जागृत विवेक और कर्तव्य से निराशा का अन्तर्मन्थन है। इतिहास का अन्तरावलंबन इसका साक्षी है।

प्रसाद की साहित्य-साधना के अनेक आयाम हैं। रामनाथ सुमन से शुरू हुई उनकी भावुकता भीनी आलोचना से कहीं आगे बढ़कर प्रसाद के लेखन का विशद व्यापक विवेचन हुआ है। न जाने किन-किन दृष्टियों से उन्हें देखा गया और उनके रचना-शिल्प को सराहा गया। नाटककार के रूप में उन्हें डी. एल. राय, कविता में रवीन्द्र और कथा-सृष्टि में शरद के समकक्ष रक्खा गया, क्योंकि हमारी तुलनात्मक पहुंच भारतीय साहित्य में प्रायः यहीं तक है। भारतीय वीरत्व, वैभव और स्वर्णयुग की याद जगाने में, इतिहास का दर्द और दर्प उठाने में भी अपनी सांस्कृतिक चेतना को वे निर्भ्रान्त रखते हैं। उनका संस्कारवाद जातीय धार्मिकता का नहीं, विश्व मानवता का है, जो प्रत्येक बुद्धि-व्यापार को, मनोविज्ञान की प्रत्येक जीवन दृष्टि को लगभग चुनौती जैसी लगती बोधवृत्ति से भरा है।

न जाने कैसे लम्बे समय तक यह भ्रान्ति छायी रही कि प्रसाद 'कला के लिए कला' के रचना-दर्शन को मानने वाले हैं। उनकी

अभिजात्यपूर्ण शैली और अलंकृत संगीत जैसी लगने वाली भाषा ने भी इस धारणा को बढ़ाया ही नहीं वरन् उनके मानवतावाद की ओर ही जैसे हमारा ध्यान न जाने दिया। मानवतावादी – उच्चतर जीवन मूल्यों का आकांक्षी स्वप्नशील होता ही है – जैसे इसे भुला दिया गया। पर यह अवदात मानवतावाद 'कला के लिए कला' जैसे सामाजिक प्रयोजनहीन जीवनोद्देश्य से बिलकुल अलग है। अतीत की आभा को पहचनवाना पलायन नहीं है। विजातीय आक्रमणकारी स्वाधीनता का अपहरण करने वाले ही होते हैं – चाहे शक और हूण हों चाहे इस्लाम – मतावलम्बी। जो चरित्र नायक इनसे देश की 'परित्राणाय साधूनाम' की आंशिक पूर्ति भी करते हैं वे नाटककार, कवि या कहिये समस्त लालित्य-शक्तिधर्मी की सृष्टि में उजागर हो उठते हैं। डी. एल. राय का 'मेवाड़ पतन' नाटक इसीलिये नाटक का अत्याधुनिक विकास हो जाने पर भी हमें प्रेरक संदेश प्रदान करता है।

प्रसाद को प्रगीत काव्य और प्रबंध काव्य दोनों की निर्मिति में विद्रोही माना जाता है। उनकी 'पलय की छाया' जैसी प्रगीतात्मक रचनायें भी प्रगीत का रूप-बोध और नाद-सौन्दर्य लिये हैं। रामनाथ 'सुमन' ने तो उसे रवीन्द्रनाथ की 'उर्वशी' के टक्कर की रचना माना है – असफल यौवन के और रूप-चित्रों की बहुलता के कलाकारोचित कौशल की दृष्टि से। रवीन्द्रनाथ के साथ तो किसी भी आधुनिक हिन्दी कवि की तुलना अनावश्यक है। यह प्रसाद के गीतों में व्यंजित भौमिक लगाव और मिलन या विरह की तीव्र आकांक्षा, इन्द्रियगम्यता उन्हें सचमुच अन्य कवियों से अलग कर देती है। नाटकों में आये उनके गीत प्रसंगों का अर्थ-गौरव लेकर नर-नारी मानस तरंगों और उमंगों की मार्मिक भाव राशि लिये हैं। निर्माण, अस्तित्व आर विनाश की बात छोड़ दी जाय तो भी उनकी रहस्योन्मुख हो उठने की प्रवृत्ति में मुझे अलौकिकत्व कम ही मिलता है।

प्रसाद का विद्रोह तो महाकाव्य विषयक प्रचलित आदर्शों और धारणाओं के विरुद्ध खड़ा हुआ है। राम और कृष्ण विषयक काव्य परंपरा के ज़ाल में जकड़ी प्रबंध हिन्दी कविता को व्यापक जीवन भूमि और विस्तृत भावाकाश उन्होंने ही दिखाया। उसका नायक मनु भी धीरोदात्त न होकर अस्थिर चित्त और ऐन्द्रिक कामनाओं की पूर्ति तलाशता है– जैसे जीवन के स्वाभाविक सरोकारों में रमा हो। दूसरी ओर 'कामायनी' की नारी पात्र श्रद्धा के हाथ में ज्ञान का दीप प्रकाशित कर उन्होंने भारतीय महाकाव्यों की प्रचलित परिपाटी से विद्रोह किया है। जीवन का अमृतपात्र उसी के हाथ में है। माया कही जाकर और घूम फिर कर लिप्ति में ही परिणति पाने वाली नारी का यह प्रखर विद्रोही और औदात्य-मंडित रूप रचकर (आज से साठ वर्ष पहले) प्रसाद ने नवयुग का सूत्रपात किया है। शरद और रवीन्द्र दोनों की नारी-महिमा जैसे एक साथ 'श्रद्धा' में साकार

हुई है । वर्तमान युग की उपभोक्तावादी सभ्यता के विरुद्ध भी कामायनी में जो प्रखर विद्रोही भाव व्यक्त हुआ है वह हिन्दी में तब लगभग बिलकुल नया था और आज की विभीषिकाओं और विडंबनाओं का पूर्वसूचक भी ।

प्रसाद के निधन पर निराला ने जो काव्यांजलि अर्पित की है, उसे पढ़कर मुझे लगता रहा है– अपने संतत्व और चरित्र की दीप्ति के बल पर किसी के भी आगे सहज न झुकने वाला यह क्रान्तिकारी और चिर व्रात्य कवि निराला प्रसाद को अपना प्रेरणास्रोत मानता था– न केवल अपना वरन् अपनी और बाद की पूरी साहित्यिक पीढ़ी का भी ।

लेख की समाप्ति मैं अपराजेय निराला की उस लम्बी कविता की ये पंक्तियां देकर करूंगा ।

**जीना सिखलाने को कर्म-निरत जीवन से**
**मरना निर्भय मंदहासमय महामरण से**
**हे चतुरंग तुम्हारी विजय-ध्वजा**
**धारण कर**
**खड़े सुमित्रानंदन, देवी, मोहन, दिनकर..**
**रहा साथ मैं नतमस्तक सेवा में अग्रज**
**चले गये तुम धरा छोड़**
**गौरव-विजय-ध्वज ।**

– पचपेढ़ी, दक्षिणी सिविल लाइंस,
जबलपुर, म.प्र.

□

**'नवनीत हिंदी डाइजेस्ट' की चंदे की दरें**

*** एक प्रति** (भारत में) रु. ६.००

**भारत में (साधारण डाक से)**

* एक वर्ष : ६५ रु.; दो वर्ष : १२० रु.; तीन वर्ष : १७० रु.; पांच वर्ष : २९० रु.; दस वर्ष : ५६० रु.

**विदेशों में समुद्री मार्ग से (एक वर्ष के लिए)**

* पाकिस्तान, श्रीलंका, रु. १२०; अन्य देश रु. १८५

**विदेशों में हवाई डाक से (एक वर्ष के लिए)**

* प्रत्येक देश के लिए रु. ३१०

* बम्बई से बाहर के चेक भेजने वाले रु. ७ अधिक भेजें ।

**– व्यवस्थापक, नवनीत हिंदी डाइजेस्ट, भारतीय विद्या भवन, बम्बई** - ४०० ००७.

# आयुर्वेद और शल्य चिकित्सा

डॉ. मनोहर भंडारी

यह हमारे लिए गौरव का विषय है कि सुश्रुत संहिता के विशद अध्ययन के पश्चात ब्रिटेन के आक्सफोर्ड विश्वविद्यालय से जुड़े विभिन्न देशों के चिकित्सा विज्ञानियों ने महर्षि सुश्रुत को निर्विवाद रूप से विश्व के चिकित्सा इतिहास में शल्य चिकित्सा का जनक माना है। 'सिनोप्सिस ऑफ आयुर्वेद' नामक शीघ्र प्रकाश्य पुस्तक में सुश्रुत संहिता को अमूल्य कृति निरूपित करते हुए उक्त घोषणा की गयी है। आधुनिक चिकित्सा पद्धति के वरिष्ठ प्राध्यापकों की मदद से यह पुस्तक ब्रिटेन के प्रोफेसर टी. जे. एस. पैटर्सन तथा काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के प्रोफेसर जी. डी. सिघल ने लिखी है।

भारत में शल्य चिकित्सा का इतिहास काफी पुराना है। वेदों तथा पौराणिक कथाओं में वर्णित कई घटनाओं से पता चलता है कि भारत में शताब्दियों पूर्व शल्य-चिकित्सा काफी उन्नत थी। वैदिक कथाओं में वर्णित देव वैद्य अश्विनी कुमारों द्वारा की गयी शल्य चिकित्सा के कुछ उदाहरण तदर्थ प्रस्तुत हैं। देव वैद्यों ने महर्षि दधीचि के मस्तक को काटकर उस पर दूसरा मस्तक लगाया था, जो पूर्व की भांति कार्य करने लगा था। बाद में उस कृत्रिम मस्तक को हटाकर उनके असली मस्तक को पुन: लगाया। उन्होंने यज्ञ के कटे मस्तक को जोड़ा, पूषन के दांतों को ठीक किया, कण्व को नया नेत्र प्रदान किया, अंधे व लंगड़े ऋषि परावक को नयी दृष्टि व गति दी, नृशद के पुत्र का बहरापन दूर किया तथा राजकुमारी विशाला की टूटी टांग के स्थान पर लोहे की टांग लगाकर उसे युद्ध योग्य बनाया। शल्य चिकित्सा तथा अंग प्रत्यारोपण के ये विलक्षण उदाहरण हैं, हालांकि वर्तमान विज्ञान के संदर्भ में ये घटनाएं कल्पनीय लगती हैं परंतु तेजी से प्रगति कर रहे चिकित्सा विज्ञान तथा शरीर के विभिन्न अंगों के (बदले जा सकने वाले) स्पेअर पार्ट्स उपलब्ध कराने को कृत संकल्प वैज्ञानिकों की मौजूदा उपलब्धियों को देखते हुए इन घटनाओं की सत्यता को नकारा नहीं जा सकता है।

रामायण व महाभारत के युद्धों में घायल व्यक्तियों की शल्यादि चिकित्सा का उल्लेख मिलता है। अन्यान्य युद्धों के समय भी शल्य चिकित्सा के अनूठे प्रयोग हुए हैं। युद्धों में

WELCOME TO GUJARAT

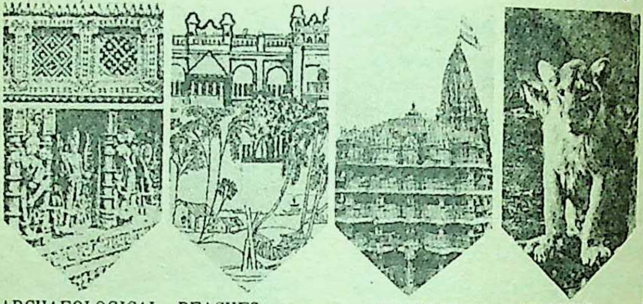

ARCHAEOLOGICAL SPOTS
- Ahmadabad
- Ghumli
- Lothal
- Modhera
- Patan

BEACHES
- Ahmedpur Mandvi
- Chorwad
- Porbandar
- Tithal
- Ubharat

TEMPLES
- Dakor
- Dwarka
- Hajipir
- Palitana
- Somnath

WILDLIFE SPOTS
- Jasor
- Little Rann of Kachchh
- Nalsarovar
- Sasangir
- Velavadar

BALARAM
MODHERA
GANDHINAGAR
AHMADABAD
LIMDI
LOTHAL
DWARKA
PAVAGADH
JUNAGADH
PALITANA
SHUKLATIRTH
PORBANDAR
SASANGIR
AHMEDPUR MANDVI
UBHRAT
SAPUTARA
HAJIRA
CHORWAD
VERAVAL
TULSISHYAM
TITHAL

FOR FURTHER INFORMATION CONTACT
TOURISM CORPORATION OF GUJARAT LTD.
H.K. HOUSE, ASHRAM ROAD, AHMADABAD 380 009.
PHONE : 449683, 449172 TELEX : 0121-549 TCGL IN
REGIONAL OFFICES :
BOMBAY : PHONE : 2024925, 2026868
DELHI : PHONE : 352107 SURAT PHONE : 26586
JUNAGADH : PHONE : 21201, 21203
VADODARA : PHONE : 65088 540797
RAJKOT : PHONE : 31616
MADRAS : PHONE : 862135
CALCUTTA : PHONE :
274529, 274691

Produced By
Directorate of Tourism
Government of Gujarat Gandhinagar

तीर, तलवार, बरछे, भाले, छुरे, फरसे आदि का प्रयोग होता था जिनसे अंग कट जाते थे, अस्त्र अंगों तथा हड्डियों में फंस जाते थे परंतु तत्कालीन शल्य चिकित्सक उनकी कुशलतापूर्वक चिकित्सा करते थे। शल्य चिकित्सा तथा काय-चिकित्सा के इतिहास के बारे में चरक तथा सुश्रुत संहिता दोनों में वर्णन किया गया है। सुश्रुत संहिता में कहा गया है कि काशी के वानप्रस्थित राजा दिवोदास धन्वन्तरि ने सुश्रुतादि ऋषियों को आयुर्वेद के अवतरण का वर्णन करते हुए कहा है 'आदिकाल में ब्रह्मा ने इस शास्त्र का प्रवचन किया था। ब्रह्मा से दक्ष प्रजापति ने और प्रजापति से अश्विनीकुमारों ने तथा उनसे इन्द्र ने इन्द्र से मैंने (आदि देव - धन्वन्तरि) इस ज्ञान को प्राप्त किया। अब अन्य आयुर्वेदांगों के साथ शल्य प्रधान आयुर्वेद का उपदेश करने के लिए राजा दिवोदास के रूप में इस भूमण्डल पर अवतरित हुआ हूं।

पाश्चात्य वैज्ञानिकों ने सुश्रुत का काल ईसा से छह सौ वर्ष पूर्व का माना है। महर्षि सुश्रुत, आत्रेय आदि ने शल्य चिकित्सा का उच्चस्तरीय विकास किया था। नालंदा, तक्षशिला आदि विद्यापीठों में प्रशिक्षण की समुचित व्यवस्था थी। देश-विदेश से विद्यार्थी अध्ययनार्थ आते थे। शल्य चिकित्सा में प्रयुक्त होने वाले विभिन्न यंत्रों तथा उपकरणों का विस्तृत वर्णन सुश्रुत संहिता में मिलता है। सुश्रुत काल में शल्य क्रिया में काम में आनेवाले छोटे-बड़े उपकरणों की संख्या 180 तक पहुच गयी थी। वर्तमान काल में शल्य शास्त्र की इतनी प्रगति होने पर भी सुश्रुत वर्णित शल्य उपकरणों का वर्गीकरण आज भी मान्य है। सुश्रुत संहिता को पांच खण्डों में बांटा गया है– सूत्र-स्थान, निदान स्थान, शरीर स्थान, चिकित्सा स्थान तथा कल्प स्थान। सूत्र स्थान में शल्य चिकित्सा की विधियों तथा उनमें काम आने वाले उपकरणों की विस्तार पूर्वक जानकारी दी गयी है। शरीर के किसी भाग में मवाद या गठान हो जाने पर चीरा कहां और कैसे लगाया जाये, शरीर के विभिन्न भागों में जलवृद्धि होने पर जल सुई से कैसे खींचा जाये, दंत चिकित्सा, अस्थिचिकित्सा, मूत्राशय की पथरी, भगंदर, बवासीर, मोतियाबिंद की शल्य क्रिया के साथ-साथ मां के गर्भ से चीरा लगाकर शिशु को जन्म देने की शल्य क्रिया आदि की बारीकियों का अनूठा वर्णन सुश्रुत संहिता में किया गया है। इसी तरह सौन्दर्यार्थ शल्य चिकित्सा (कास्मेटिक-प्लास्टिक सर्जरी) से जुड़ी क्रियाओं का भी विस्तृत वर्णन किया गया है। कटी हुई नाक को पैर में से मांस निकालकर ठीक किया जाता था। उस जमाने में अपराधों की सजा के रूप में राजाज्ञा से नाक काटी जाती थी तथा यह एक सामान्य सजा मानी जाती थी। नाक की पुनर्रचना की सुश्रुत द्वारा वर्णित विधि का सर्जरी की पाठ्य पुस्तकों में 'नाक की प्लास्टिक सर्जरी की भारतीय विधि' (इंडियन मेथड ऑफ प्लास्टिक सर्जरी ऑफ नोज) के नाम से

कर अरमां पूरे सभी के  जलायें दीप चलो खुशी के
अंधेरों को दूर करके  मनायें उत्सव रोशनी के

दीपावली यानी मानवी समाज की सम्पन्नता का तेजस्वी अविष्कार. इ सम्पन्नता को बनाये रखने के लिए महाराष्ट्र गत 30 वर्षोंसे विकास की वाती जा लाखो जनसाधारण की जीवन ज्योति जला रहा है. दीन, दलित, आदिवासी जैसे नि समाज घटकों के जीवन में उजाला करने के लिए गत दो वर्षों से अधिक समय में महारा ने मुख्यमंत्री श्री. शरद पवार के कुशल व गतिमान नेतृत्व में निश्चयपूर्वक कदम उठाये हैं

दो वर्ष पहले दिवाली के मुहूरतपर लाखो अल्प व अत्यल्प भूधारकों को रु. ३ करोड के कर्जभार से मुक्ति दिलाने का शुभनिर्णय लिया गया था. इस के बाद गांव ही विकास घटक मानकर रोजगार गारंटी योजना का श्रमशक्ति से किया गया सम लाखो हेक्टर पड़त जमीन को लो आई के अंतर्गत लाकर खेतीपर का बोझ कम करने के लिए फल रोपाई का महत्वाकांक्षी कार्यक्रम, आठवीं पंचवर्षीय योजनामें ग्रामोद्योग से छ: लाख लोगों को रोजगार देने का निश्चय, रोजगार में स्त्रियाएं व अनुसूचित जाति-जन जाति के लोगों को प्रधानता, ग्रामीण क्षेत्र की गरीबी दूर करने के लिए अविकसित क्षेत्र में ६५ विकास केन्द्रों का चयन व ९४ लघु औद्योगिक केन्द्र की स्थापना के लिए उठाये गए कदम, पिछड़े क्षेत्र में उद्योग शुरु करनेवाले उद्योजकों को विशेष सहुलते साथ ही अनिवासी भारतीयों के संकल्पित ४७० औद्योगिक घटकों को मंजूरी, गढ़चिरोली चंद्रपुर और धुले जिलेके आदिवासियों के जलद विकास के लिए कालबद्ध विशेष कृति कार्यक्रम, कोंकण विकास के लिए कोंकण रेलु प्रकल्प का अधिकतम आर्थिक भार उठाकर उसे गति देन का संकल्प केन्द्र से विदर्भ, मराठवाडा, कोंकण तथा शेष महाराष्ट्र के लिए भी वैधानिक विकास मण्डल स्थापित करने की मांग आदि निर्णय महाराष्ट्र के सकलजनों के निश्चितही भविष्य को प्रकाशमान कर देंगे.

कृतिशील शासन महाराष्ट्र शासन

सरकारी पत्रिका "लोकराज्य" नियमित रुपसे पढ़िये: वार्षिका चंदा रुपये २५

डीजीआईपीआर

उल्लेख किया गया है। घावों की शल्य चिकित्सा (वुड केयर) नामक पुस्तक में डॉ. बर्नार्ड नाइट ने 'घाव चिकित्सा के इतिहास' नामक अध्याय में लिखा है कि 'भारतीय शल्य चिकित्सा ईसा से शताब्दियों पूर्व काफी उन्नत थी। प्रसिद्ध शल्य चिकित्सक सुश्रुत घावों की चिकित्सा में पट्टियों व पुल्टिस का उपयोग करते थे। महर्षि सुश्रुत नाक की पुनर्रचना (राईनोप्लास्टी) किया करते थे।' सुश्रुत के समय में टांके लगाने के लिए रेशम, सूत, चमड़े के धागों तथा घोड़े के बालों का इस्तेमाल किया जाता था। सुश्रुत संहिता में शल्य चिकित्सा के सभी महत्वपूर्ण पक्षों की विस्तृत जानकारी दी गयी है। जैसे शल्य चिकित्सा के बाद क्या-क्या सावधानियां बरती जाना चाहिये, रोगी को किस तरह का आहार लेना चाहिये, घाव भर जाये इसके लिये कौन-कौन सी दवाइयां लेना चाहिये इत्यादि। परंतु कालांतर में इस उन्नत चिकित्सा की अवहेलना-सी हो गयी। शायद धार्मिक कारणों से शल्य चिकित्सा पर प्रतिबंध लगा दिया गया। इस संदर्भ में आस्ट्रेलिया के चिकित्सा विज्ञानी प्रो. ए. एल. बॉशम की मान्यता है कि 'संभवतया शुद्धता और अशुद्धता के नजरिए के कारण भारतीय वैद्यों ने कायचिकित्सा को वरीयता देकर शल्य चिकित्सा की उपेक्षा की' सुश्रुत संहिता पर पिछले २५ सालों से गहन अध्ययन और अनुसंधान चल रहा है। अमेरिका, ब्रिटेन, सोवियत संघ, आस्ट्रेलिया, इटली, कनाडा आदि देशों के प्रसिद्ध चिकित्सा-शास्त्रियों ने अपने अध्ययन के आधार पर १९७२ से भारतीय शल्य चिकित्सा पर पुस्तकों की श्रृंखला प्रारंभ की थी। 'पुरातन भारतीय शल्य चिकित्सा' (एन्शियन्ट इंडियन सर्जरी) नामक इस श्रृंखला की नौ पुस्तकें छप चुकी हैं तथा दो छपकर आने वाली हैं।

'सिनोप्सिस ऑफ आयुर्वेद' उस श्रृंखला की बारहवीं एवं अंतिम कृति है। इस पुस्तक में सुश्रुत संहिता के सभी अध्यायों को प्रामाणिक एवं आधुनिक चिकित्सा शब्दावली के साथ समाहित किया गया है। सोवियत चिकित्सा विज्ञान एकादमी के डॉ. बी. डी. पेतोव का कहना है कि 'भारतीय चिकित्सा विज्ञान पद्धति ने विश्व को काफी कुछ दिया है तथा रूस की प्राचीन पुस्तकों में भारतीय वनस्पतियों व खनिज औषधियों का उल्लेख मिलता है।' तेहरान विश्वविद्यालय के चिकित्सा शास्त्री डॉ. एम. नजमा वादी ने कहा है कि 'सुश्रुत संहिता' प्राचीन अरबी दुनिया में 'किताबे सुसरुव' के नाम से उपलब्ध थी। आधुनिक चिकित्सा जगत जब इस कृति को आत्मसात करेगा तब विश्व का चिकित्सा इतिहास बदल जायेगा।'

ब्रिटेन के आक्सफोर्ड विश्वविद्यालय से जुड़े विभिन्न देशों के कई विद्वान चिकित्सा शास्त्रियों ने २५ वर्ष के परिश्रम के बाद सुश्रुत संहिता को आधुनिक भाषा में गढ़कर पश्चिमी जगत के सामने प्रस्तुत कर दिये है।

**— २९, संवाद नगर,**
**इंदौर, म.प्र.**

□

*With Best Compliments From:*

**KHANDELWAL BROTHERS LTD.**

**Dharmakshetre**
**Kurukshetre**
**A battle was fought.**
**Where there is Krishna,**
**there is truth, and**
**where there is truth,**
**there is victory.**
**This truth has really**
**enlightened us.**

'Khandelwal Bhavan'
**166** Dr. D. N. Road,
BOMBAY-400 001.

# गीत

सूरज को देता,
दीपक उलाहने
तिमिर चला, अज्ञ ।
किरणों को ब्याहने ।

प्रतिद्वन्द्विता में हमसे,
पीर ही जीती ।
कोशिश तो की बहुत, पर –
गागर रही रीती ।

भटकाया बहुत हमको –
पनघट की राह ने ।

सदियों से प्रतीक्षा है,
आता नहीं मधुमास ।
वे लीलते रहे हैं,
जिन पर किया विश्वास ।

लूटा है बुजुर्गों की
कुंचित सलाह ने ।

**– अशोक 'अंजुम'**
**एफ - २३, नई कालोनी,**
**कासिमपुर, अलीगढ़, उ.प्र.**

□

"Service which is rendered without joy, helps neither the servant nor the served".

**Mahatma Gandhi**

*With best compliments from :*

**HERCULES HOISTS LIMITED**

110, Minerva Industrial Estate
Mulund (West), Bombay - 400 080
Tel. 561 8380. Gram : 'INDEF', MULUND (WEST)

*Mfrs. of :*

'INDEF' brand materials bondling equipments, such as, Chain Pulley Blocks, Chain and Wire Rope Electric Hoists, Ratchet Hoists, Travelling Trolleys, HOT/EOT/Stores Stacker Cranes etc,

परोपकाराय सतां विभूतयः
The wealth of good people is for the benefit of others
SUBHASHITA

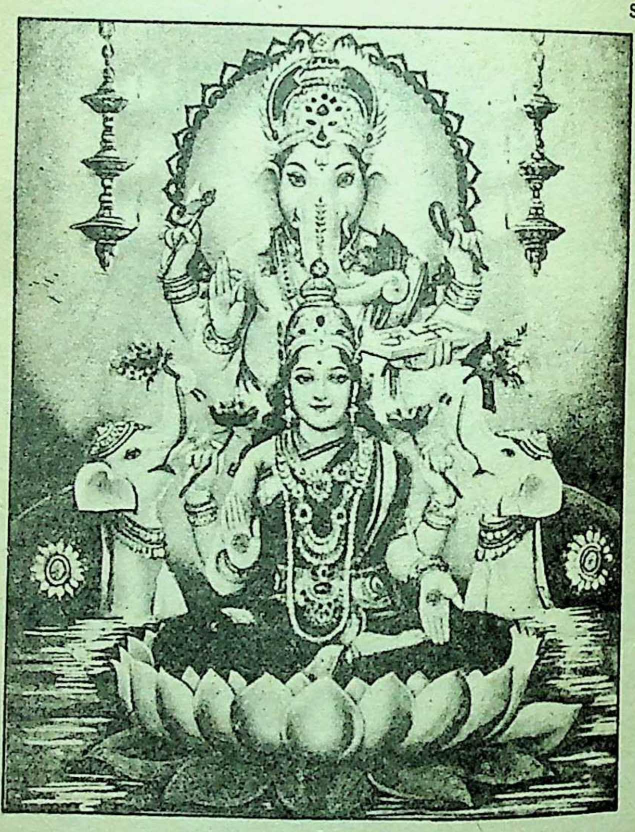

WITH PRAYERFUL COMPLIMENTS
FROM
SHREENATH KHANDELWAL TRUST
BOMBAY

**आ नो भद्राः क्रतवो यन्तु विश्वतः**

भवन की पत्रिका 'भारती' से समन्वित

# नवनीत

मनुष्य के नवोत्थान का सूचक
जीवन, साहित्य और संस्कृति का मासिक

## प्रार्थना

उद्वयं तमसस्परि स्वः पश्यन्त उत्तरम् ।
देवं देवत्रा सूर्यमगन्म ज्योतिरुत्तमम् ।।

यजु० २०–२१

अज्ञानरूपी अन्धकार से उत्तरोत्तर प्रकाश की ओर बढ़ते हुए हम, देवताओं में सूर्य के समान उत्तम ज्योति अर्थात् सर्वोत्कृष्ट अवस्था को प्राप्त करें ।

**मानवीय कर्तव्य**

# अनूठा इलाज

☐ **प्रवासी विनयकृष्ण**

अमेरिका में एक डॉक्टर साहब रहते थे। चिकित्सा के क्षेत्र में उनका जितना नाम था, उतनी ही ख्याति उन्हें अपनी दयालुता के लिए भी प्राप्त थी। उनके दवाखाने में अमीर-गरीब सभी तरह के रोगी इलाज के लिए आते थे।

डॉक्टर साहब को जब भी थोड़ी फुर्सत मिलती, सामाजिक उन्नति के कार्यों में जुट जाते। इतना ही नहीं, उन्होंने अपने पैसे से एक अनाथालय भी खोल रखा था, जिसमें सिर्फ अनाथ बच्चे ही नहीं पलते थे, बल्कि, वे बूढ़े लोग भी पनाह लिये हुए थे, जिनका इस दुनिया में कोई सगा-संबंधी नहीं था।

एक दिन डॉक्टर साहब के नाम एक पत्र आया। पत्र एक स्त्री ने लिखा था।

'आदरणीय डॉक्टर साहब,

मेरे पति पिछले कुछ दिनों से सख्त बीमार हैं। उनकी हालत इतनी खराब है कि बिस्तर से उठ ही नहीं सकते। कृपया यदि आप हमारे घर आते, तो शायद मेरे पति की जान बच जाती....।'

पत्र पढ़कर डॉक्टर साहब ने तुरंत दवाओं का बैग संभाला और उस स्त्री के घर जा पहुंचे।

घर के नाम पर वहां एक झोंपड़ी थी। उस में लकड़ी का एक बड़ा-सा बक्सा पड़ा था, जिस पर रोगी लेटा हुआ था। उसके कपड़े पैबंद लगे हुए थे। जमीन पर उस रोगी की पत्नी सिर झुकाये बैठी थी। डॉक्टर साहब को देखकर वह गिड़गिड़ाने लगी – 'मेरे पति को बचा लीजिये – डॉक्टर साहब।'

डॉक्टर साहब ने उस स्त्री को ढाढ़स बंधाते हुए कहा – 'घबराओ मत, बहन... ईश्वर पर भरोसा रखो... सब ठीक हो जायेगा।'

फिर वे रोगी की परीक्षा करने लगे। करीब घंटे-भर तक जांच-पड़ताल करने के बावजूद उन्हें रोग का सही-सही पता न चल पाया।

रोगी की पत्नी डॉक्टर साहब की मनोदशा ताड़ गयी। अब वह फूट-फूट कर रोने लगी – 'हे भगवान, अब क्या होगा... जब इतने बड़े डॉक्टर को रोग समझ में नहीं आ रहा, तो फिर....?'

डॉक्टर साहब ने गंभीर स्वर में कहा – 'तुम निराश मत हो, बहन... तुम्हारे पति को मैं समुचित चिकित्सा करूंगा।'

और डॉक्टर साहब चले गये।

रोगी की पत्नी रोती-सुबकती रही।

थोड़ी देर के बाद वहां एक आदमी आया।

उसके हाथ में दो डिब्बे थे। उसने डिब्बों को रोगी की पत्नी की ओर बढ़ाते हुए कहा — मुझे डॉक्टर साहब ने भेजा है। इन डिब्बों में कुछ कीमती दवाएं है। उन्हें आप रोगी को नियमित रूप से देती रहें। ये जल्द स्वस्थ हो जायेंगे।' इतना कह कर वह आदमी चला गया।

रोगी की पत्नी ने खुश होकर एक डिब्बा खोला, तो आश्चर्यचकित रह गयी — उसमें दवा की जगह कुछ फल थे। कागज के एक टुकड़े पर लिखा था — 'इन दवाओं के सेवन से रोगी में चलने-फिरने की शक्ति आ जायेगी।'

उत्सुकतावश उस स्त्री ने दूसरा डिब्बा भी खोला। उसमें दस हजार डॉलर के नोट भरे पड़े थे। छोटा-सा एक पत्र भी था।

'प्रिय बहन,

तुम्हारे पति को कोई शारीरिक रोग नहीं है। उसकी असली बीमारी हैं — गरीबी और भूख। मैं इस सामाजिक रोग की दवा भेज रहा हूं। इसका सदुपयोग करना....'

उस स्त्री की आंखों में कृतज्ञता के आंसू उमड़ आये — 'तुम डॉक्टर नहीं, देवदूत हो।'

डॉक्टर साहब का नाम डॉ. हेरॉल्ड था, जिनकी पुण्य-स्मृति में कई दातव्य चिकित्सालय देखने को मिलते हैं।

— राजधानी नमकीन सेंटर,
पटना कॉलेज के सामने,
अशोक राजपथ, पटना - ८०० ००६

□

# अजर-अमर

**□ दिनेश दर्पण**

महमूद गजनवी ने हिन्दुस्तान पर सत्रह बार हमला किया, उसने यहां के राजमहलों एवं मंदिरों को लूटकर बहुमूल्य हीरा, मोती, पन्ना आदि बहुत से रत्न ले गया और उसे अपने खजाने में जमा कर दिया। मरते समय उसने अपने नौकरों से कहा कि वह अपने खजाने को देखना चाहता है। नौकर महमूद को खजाने में ले गये। खजाने में हीरे, मोती, पन्ने, माणिक, नीलम आदि को देखकर जब यह वापस आया तो बच्चों की तरह फूट-फूटकर रोने लगा और बोला - 'यह सारे रत्न जिन्हें कितनी दूर देशों से लूटकर मैं यहाँ लाया था, अब मेरे किसी काम के नहीं हैं। मुझे इन्हें यहीं छोड़कर जाना पड़ेगा यदि मैंने इतनां खून नहीं बहाया होता ओर यह सारे पत्थर हिन्दुस्तान में ही पड़े रहते तो क्या बुरा था ? पत्थरों को इकट्ठा करके कोठरियों में भरने से मुझे क्या लाभ हुआ ? यही न कि मेरे मरने के बाद इतिहास मुझे लुटेरा कहकर गाली देगा। क्या अच्छा होता यदि मैंने अपने जीवन में लोगों की भलाई की होती तो मरने के बाद भी लोग मुझसे प्रेम करते इसलिए यदि दुनिया में कमाने की चीज कोई है तो वह है प्रेम, जिसे अर्जित करने पर उसके मरने के बाद भी वह सदा के लिए अजर-अमर हो जाता है।

□

# पहली रचना साहित्यकारों की

◇

### रामेश्वर दयाल दुबे

जिन यशस्वी कवियों-रचनाकारों ने अपने जीवन में अत्यन्त उच्च कोटि की रचनायें करके पद, प्रतिष्ठा और सम्मान प्राप्त किया है, जिन्होंने अपनी रचनाओं के द्वारा समाज का, देश का और मानवजाति का हित किया है, वे रचना के क्षेत्र में कब, कैसे और किसकी प्रेरणा से आये, कहां से प्रोत्साहन मिला, उनकी प्रथम रचना कौन-सी थी, आदि-आदि की जानकारी न केवल मनोरंजन, ज्ञानवर्धन कर सकती है, वरन नवीन रचनाकारों के लिए प्रेरणाप्रद और मार्गदर्शन भी कर सकती है।

मैं प्रसिद्ध साहित्यकार यशपालजी से सहमत हूं, जब वे कहते हैं- 'मैं साहित्यिकों को प्रकृति की विशेष देन अथवा विशिष्ट प्रकृति नहीं समझता। साहित्य संचित रसात्मक अभिव्यक्ति को कहा जाता है। रसात्मक अभिव्यक्ति की इच्छा सभी में होती है। ऐसे लोग हैं, जो बहुत उच्च कोटि का साहित्य सृजन कर सकते हैं किंतु अधिक महत्वपूर्ण कार्यों में व्यस्त रहने के कारण उन्हें इस प्रवृत्ति के लिए समय नहीं मिलता।'

यहां कुछ चोटी के रचनाकारों के प्रारंभिक जीवन की प्रथम रचनाओं का जिक्र करेंगे, जो मनोरंजक भी है और सीख देनेवाला भी।

हिन्दी के यशस्वी कवि पं. माखनलाल चतुर्वेदी 'एक भारतीय आत्मा' की रचनाओं ने हिन्दी साहित्य का गौरव तो बढ़ाया ही है, युवकों के हृदय में देशप्रेम की अग्नि भी प्रज्वलित की थी। इन्हीं महान कवि की प्रथम रचना कम रोचक नही है। बालक माखनलाल अपनी बुआ के यहां गया था। बुआ प्रात:काल खाट से उठते ही यह गीत गाती थीं— 'जागिये गोपाल लाल भोर भयो प्यारे।'

बालक माखनलाल सोचता—यह गोपाललाल कौन है ? गोपाललाल तो नहीं, उसे द्वारे पर बंधे दो बैल दिखाई दिये। सोचा—बुआ इन्हें क्यों नहीं जगातीं, मैं जगाऊंगा। और पहली कविता गीत रूप मे फूट निकली—

**जागिये दोनों बैल भोर भयो प्यारे।**
**जागिये दोनों बैल, करिए जंगल की सैर**

**चरिए जंगल की घास, छाड़िये अब घर की आस,**
**भोर भयो प्यारे॥**

अत्यन्त प्रसिद्ध कविता 'पुष्प की अभिलाषा' लिखने वाले महान कवि की बैलों को जगानेवाली यह पहली रचना थी।

प्रसिद्ध कवयित्री श्रीमती महादेवी वर्मा की

रचनाओं को पाकर हिन्दी साहित्य समृद्ध बना है। उनकी प्रारंभिक प्रथम रचना भी कम रोचक नहीं है। महीयसी महादेवी की माताश्री नित्य भगवान की मूर्ति की पूजा करती थीं और उस समय बालिका महादेवी को अपने पास नियम से बैठा लेती थीं। पांच वर्ष की बालिका देखती—मां ठंडे पानी से भगवान को नहलाती हैं, चन्दन लगाती हैं। अन्त में प्रसाद उसे मिल जाता है। बालिका ने एक छोटा गीत बना डाला—

**मां के ठकुरजी भोले हैं ।**
**ठंडे पानी से नहलाती,**
**ठंडा चन्दन इन्हें लगाती,**
**इनका भोग हमें दे जाती**
**फिर भी कभी नहीं बोले हैं ।**
**मा के ठकुरजी भोले हैं ।।**

ठकुरजी के भोलेपन पर बालिका को तरस आया - यह कम महत्व की बात नहीं हैं।

श्रीमती सुभद्रा कुमारी चौहान सरल भाषा मे लिखने वाली उच्च कोटि की कवयित्री थीं। उनकी प्रसिद्ध रचना 'खूब लड़ी मरदानी वह तो झांसी वाली रानी' से कौन परिचित नहीं? सुभद्रा उस समय मात्र ७ साल की थी। उनके पिता रामनाथ सिह ईश्वर भक्त थे, प्रात: काल गीत गाया करते थे। बचपन मे मां 'गोगा' कहकर बच्ची को डराया करती थी। गीत की प्रेरणा पिता से मिली और सात वर्ष की उम्र में दो पंक्तियाँ बना लीं—

**तुम बिन व्याकुल हैं सब लोगा ।**
**तुम तो हो इस देश के गोगा ।।**

हिन्दी के अनन्य उद्धारक भारतेन्दु हरिश्चन्द्र की साहित्य साधना से कौन परिचित नहीं? उनके पिता बाबू गोपालचन्द्र उच्च कोटि के कवि थे। घर पर कवियों का जमघट लगा ही रहता था। कवि सम्मेलन होते थे। श्री हरिश्चन्द्र जब मात्र पांच वर्ष के थे, तब वातावरण से प्रेरणा लेकर एक दोहा लिखा था—

**लै व्योड़ा ठड़े भए श्री अनिरुद्ध ।**
**सुजान ।**
**बाणासुर की सेन को हनन लगे ।**
**भगवान ।।**

इस दोहे में आसुरी वृत्ति के नाश की ही बात कही गई है। आगे चल कर जीवन भर सामाजिक बुराइयों, आडम्बरों तथा अन्धविश्वासों का विरोध करते रहे और भारत के लूटने वाले अंग्रेजी राज के विरुद्ध ये लिखते रहे।

पं.बनारसीदास चतुर्वेदी ने अपनी प्रथम रचना के सम्बन्ध में स्वयं लिखा है, उन्हीं के शब्दों में—

'बात सन १९१२ की है। मैं इन्टर का विद्यार्थी था। प्रथम पुरस्कार के रूप में मुझे 'सेल्फ हेल्प' नामक पुस्तक मिली थी। उसी के आधार पर मैंने एक लेख लिखा था। संस्कृत शब्दों का प्रयोग अपने ज्ञान को प्रदर्शित करने के लिए किया था, जैसा प्राय: नव लेखक करते हैं। काशी से प्रकाशित होनेवाले 'नवजीवन' के सम्पादक जी श्री केशवदेव शास्त्री फिरोजावाद आये थे, उन्हें प्रकाशनार्थ वह लेख दिया। प्रतीक्षा करता रहा कि मेरी प्रथम रचना कब छपती

है ? जून १९१२ में मेरा वह लेख छपा, किंतु बिल्कुल बदला हुआ । मैंने अपने लेख में कठिन शब्दों और उपमाओं की भरमार कर दी थी । वे सब गायब थे । भाषा सरल बना दी गई थी । मैने अपनी प्रथम रचना के परिवर्तित रूप से बहुत बड़ी शिक्षा प्राप्त की ।'

लेखक की प्रथम रचना जहां लेखक को आनन्द देती है, प्रोत्साहन देती है, कभी-कभी वह उसकी पिटाई भी कराती है । उर्दू के प्रसिद्ध लेखक श्री कृश्न चन्दर को कुछ ऐसा ही अनुभव हुआ । बात १९२८ की है । कृश्न चन्दरजी आठवीं कक्षा के विद्यार्थी थे । लाला बुलाकी राय फारसी के शिक्षक थे । कृश्न चन्दरजी की किसी शरारत पर शिक्षक ने खूब पीटा । बदला लेने की दृष्टि से कृश्न चन्दर ने एक व्यंग्य लेख लिखा—'एक गदहे की आत्मकथा' । 'रियासत' समाचार पत्र में वह छपा । लेख तो बहुतों को पसन्द आया, परन्तु कृश्न चन्दरजी की दुबारा पिटाई हुई । आज वे बड़े गर्व से कहा करते है—'मेरा साहित्यिक जीवन पिटाई और गाली से प्रारंभ हुआ । मैं उसका भी आभारी हूं ।'

पंजावी की प्रसिद्ध लेखिका श्रीमती अमृता प्रीतम की प्रथम रचना की कहानी भिन्न है । अमृताजी ग्यारह-वर्ष की थीं । एक दिन स्वप्न में वह आंख मिचोली खेल रही थीं । लड़कियां और भी थीं, पर पकड़ने वाला बार-बार अमृता का ही हाथ पकड़ता था । जागने पर वह सपना अमृता को अच्छा लगा और उस पकड़ने वाले का नाम योंहीं 'राजन' सोचा । उसी दिन पहली कविता लिखी और उस कविता का नाम 'राजन' लिख दिया । उस कविता को अपनी सहेली को दिखाने साथ स्कूल ले जाना चाहती थी, पर वह पिताजी के हाथ पड़ गई । उन्हें कुछ शक हुआ और एक चपत जड़ दी । पूछा 'राजन' कौन है ? स्वप्न की बात बताई, पर उस पर विश्वास न किया गया । अमृता प्रीतम की सैकड़ों भाव भरी कविताओं का श्रीगणेश इस कविता से हुआ था ।

हिन्दी के प्रसिद्ध लेखक पांडेय वेचन शर्मा 'उग्र' को उनकी पहली रचना चुनौती बन गई थी ।

काशी की घटना है । पांडेय वेचन शर्मा अपनी पहली कहानी लेकर 'आज' के सम्पादक श्री प्रकाशजी को प्रकाशनार्थ देने पहुँचे । उन्होंने कहानी को फेंकते हुए कहा—'आज' लड़कों के लिखने के लिए नहीं है ।'

उग्रजी को बड़ी चोट लगी । मन मारकर रह गये । सौभाग्य से उग्रजी के काका पं. छविनाथ पांडेय उसी कार्यालय में काम करते थे । उन्होंने बच्चे का मन रखने के लिए कहानी को परिमार्जित करा कर 'आज' में छपवाया । जब उसी कहानी को छपा देखा तो सारी ग्लानि दूर हुई । संशोधन और परिमार्जन का काम पराड़करजी ने किया था ।

प्रसिद्ध साहित्यकार यशपालजी जब अपने बचपन में छठीं श्रेणी में पढ़ते थे, तब गुरुकुल कांगड़ी की विभिन्न कक्षाओं से हस्त

लिखित पत्रिकायें निकलती थीं। यशपालजी की कक्षा से भी एक पत्रिका निकाली गई। एक विद्यार्थी ने किसी दूसरे लेखक की कहानी दी। मेरा आग्रह था कि कहानी स्वयं लिखकर देनी चाहिये। उस विद्यार्थी ने कहा- लिख न दो मौलिक कहानी'। यशपालजी पर चुनौती काम कर गई और उन्होंने 'अंगूठी' नाम की एक मौलिक कहानी लिख दी, जिसे सबने पसन्द किया। यशपालजी कहा करते थे-मेरी 'अंगूठी' कहानी ने मुझे रास्ता दिखा दिया।

नवीनजी की प्रथम कहानी पर सन्देह किया गया था। उन दिनों 'सरस्वती' पत्रिका में कुछ भी छपने का महत्व था। नवीनजी ने अपनी कहानी प्रकाशनार्थ प्रयाग भेजी। 'सरस्वती' के सम्पादक की ओर से पूछा गया-'बंगला की किस कहानी का अनुवाद आप ने भेजा है?'

नवीनजी ने उत्तर दिया-'मैं तो बंगला जानता ही नहीं। वह मेरी कहानी है।' फिर वह कहानी जनवरी १९१८ के अंक में प्रकाशित हुई। पहली कहानी ने ही नवीनजी कुशल लेखक सिद्ध कर दिया।

भगवतीचरण वर्मा सातवीं कक्षा के विद्यार्थी थे। कविता लिखने का शौक हुआ, उससे अधिक उसे छपाने का। अपनी पहली कविता लेकर कानपुर के 'प्रताप' कार्यालय पहुंचे। सह सम्पादक ने बड़ी बेरुखी से कविता रखली और कहा-'जाइये'।

## लेखकों से निवेदन

* जो भी रचना प्रकाशनार्थ भेजी जाय वह अब टाइप कराके ही भेजी जाय। हस्तलिखित रचना स्वीकृत नहीं की जायेगी।

* प्रतिदिन नवनीत में प्रकाशनार्थ बहुत सी डाक आती है। कई बार अनुरोध करने पर भी कुछ लेखक वापसी के लिए रचना के साथ पर्याप्त टिकट लगा लिफाफा नहीं भेजते। भविष्य में ऐसी रचनाओं को न लौटाया जायेगा और न उन पर प्रकाशनार्थ विचार ही किया जायेगा।

* जब तक आपकी पूर्व स्वीकृत रचना प्रकाशित न हो जाये दूसरी रचना न भेजें।

* कुछ लेखक अभी भी वापसी के लिए बिना पर्याप्त टिकट लगे लिफाफे के रचनाएं विचारार्थ भेजते रहते हैं। ऐसी अस्वीकृत रचनाओं को आप पत्र लिखकर वापस मंगा सकेंगे, यह अपेक्षा न रखें, क्योंकि उन्हें संभालकर रखना हमारे लिए संभव न होगा।

संपादक

निराश होकर भगवती बाबू लौट गये। तीन महीने बाद वह कविता छपी, परन्तु बिलकुल परिवर्तित-संशोधित रूप में। भगवती बाबू ने उस कविता का खूब अध्ययन किया, अपनी कमियां और उसके गुण देखे। बहुत कुछ सीखा। भगवती बाबू कहा करते थे-'मेरी वह पहली कविता मेरे लिए गुरु बन गई थी।'

— चित्रकूट सी/२७४, निराला नगर,
लखनऊ, उ.प्र.

# हिन्दी कवियों की अंतिम रचनाएं

◆

**सरला मिश्र**

आदि और अंत जीवन के दो महत्वपूर्ण पक्ष हैं। जीवन-सरिता इनके ही मध्य प्रवाहित होती है। वे एक दूसरे में पर्यवसित होने के कारण एक दूसरे के पूरक हैं। एक के अभाव में दूसरे का अस्तित्व नहीं है। लोक-मानस का दोनों के साथ तादात्म्य है। 'अंत भला सो सब भला' की उक्ति इसी लोकचिंता का प्रतिफल है। मानव जीवन में प्रत्येक क्षण की अपनी अलग महत्ता है, किन्तु जीवन का अंतिम क्षण अपनी विशिष्टता रखता है। वह ऋत और सत्य को उद्घाटित करता है। कवि-वाणी के संदर्भ में उक्त तथ्य और भी महत्वपूर्ण हो जाता है। लगभग एक सहस्राब्दी के हिन्दी साहित्य के इतिहास में अत्यल्प कवि ऐसे हैं, जिनकी अंतिम रचनाओं का अनुसंधान पृथक शोध प्रबन्ध का विषय है। संप्रति, हिन्दी के प्रसिद्ध कवियों की अंतिम रचनाएं प्रस्तुत हैं।

चंदवरदाई वीरगाथाकाल के प्रतिनिधि कवि हैं, जिन्होंने 'पृथ्वीराज रासो' की रचना की है। सन ११९२ में तराइन की दूसरी लड़ाई में पृथ्वीराज मुहम्मद गोरी से पराजित हुए। किंवदंती है कि गोरी पृथ्वीराज को गजनी ले गया और वहां बन्दीगृह में डाल दिया। पृथ्वीराज के अनन्य मित्र एवं दरबारी कवि चंदवरदाई पृथ्वीराज के बिछुड़ने से निरंतर खिन्न रहने लगे। उन्होंने पृथ्वीराज के साथ ही जीवन-मरण का विचार कर अपने पुत्र जल्ह को 'पृथ्वीराज रासो' महाकाव्य को सौंपकर उसे पूर्ण करने का आदेश देकर गजनी के लिए प्रस्थान किया। 'पृथ्वीराज रासो' में इस घटना का उल्लेख मिलता है - 'पुस्तक जल्हण हत्थ दै, चलि गज्जन नृपकाज'। गजनी पहुँचकर चंदवरदाई किसी प्रकार पृथ्वीराज से मिलने में सफल हो गये। दोनों ने मुहम्मद गोरी को समाप्त करने का विचार किया। अपनी निश्चित योजना के अनुसार चंदवरदाई ने मुहम्मद गोरी से कहा कि पृथ्वीराज शब्दवेधी बाण के अंतिम ज्ञाता हैं, आप उनसे यह कला सीख लीजिये। मुहम्मद गोरी इससे सहमत हौं गया। वह शब्दवेध-ज्ञान प्राप्त करने के निमित्त महल के सबसे उँचे स्थान पर बैठकर घंटे की ध्वनि करने लगा। पृथ्वीराज भी शब्दवेधी बाण संधान के लिये प्रस्तुत हुए। उसी समय चंदवरदाई ने निम्नलिखित दोहे के द्वारा पृथ्वीराज को संकेत किया:

**चार बाँस चौबीस गज, अंगुल अष्ट प्रमान ।**
**ता ऊपर सुल्तान है, मत चूको चौहान ।**

कहा जाता है कि पृथ्वीराज ने उक्त संकेत पर बाण चलाया जिससे गोरी का प्राणान्त हो गया। बाद में पृथ्वीराज और चंदवरदाई एक दूसरे को मारकर मर गये ।

भक्तिकालीन संत कवियों में कबीर अग्रणी हैं। वे बाहयाडंबरों के विरोधी थे । परंपरागत लोक धारणाओं के प्रति उनका दृष्टिकोण बिद्रोही था । कबीर के समय में यह लोकधारणा थी कि काशी में मरने पर मोक्ष प्राप्त होता है और मगहर में मृत्यु होने पर मनुष्य को नरक मिलता है। कबीर ने इस लोक विश्वास का व्यावहारिक स्तर पर विरोध किया। अपनी मृत्यु निकट जानकर वे काशी से मगहर आ गये । मृत्यु से पूर्व उन्होंने निम्नलिखित पंक्तियों में अपनी भावना व्यक्त की है-

**सकल जनम शिवपुरी गवाइया ।**
**मरती बार मगहरि उठि धाइया ।।**
**बहुत बरस तप कीआ कासी ।**
**मरन भाइया मगहर को बासी ।।**

भक्तिकाल के कवि सूरदास भी अपनी मृत्यु निकट जान परासौली (परमरास स्थली) चले गये और श्रीनाथजी की ध्वजा के सामने लेट गये । जब गोस्वामी विट्ठलदासजी को यह खबर मिली तो वे अपने शिष्यों के साथ सूर को देखने के लिए उपस्थित हुए । उस समय सूर अचेत थे । बल्लभाचार्यजी के एक शिष्य चतुर्भुजदास ने सूर से पूछा कि आपकी चित्तवृत्ति कहां है ? सूर ने उस समय अपना निम्नलिखित पद गाया -

**खंजन नैन रूप रसमाते ।**
**अतिसै चारु चपल अनियारे पल पिंजरा न समाते ।**
**चलि चलि जात निकट स्रवनन के उलटि उलटि तांटक फंदाते**
**सूरदास अंजन गुन अटके नातरु अब उड़ि जाते ।।**

इस पद को गाने के बाद सूर ने अपना शरीर त्याग दिया। इस घटना का उल्लेख 'चौरासी वैष्णवन की वार्ता' में मिलता है।

गोस्वामी तुलसीदास की मृत्यु संवत् १६८० में काशी के असीघाट पर गंगा के किनारे हुई। मृत्यु से पूर्व गोस्वामीजी ने एक दोहा पढ़ा जो उनका अंतिम दोहा माना जाता है

**राम नाम जस बरनि कै, भयो चहत अब मौन ।**
**तुलसी के मुख दीजिए, अजहूँ तुलसी सौन ।।**

डॉ. ग्रियर्सन ने 'नोट्स आन तुलसीदास' पुस्तक में इस दोहे का उल्लेख करते हुए टिप्पणी की है कि वैष्णवों में अंतिम समय में मुख में सोना और तुलसी डालने की परम्परा प्रचलित है ।

कृष्णदास अपने समय के एक प्रतिष्ठित भक्त कवि थे। आपकी कविताओं में भगवत् प्रेम की चिन्गारी प्रवाहित है। किंवदंती है कि निम्नांकित पद को गाकर

उन्होंने शरीर छोड़ा था-

**मो मन गिरिधर छवि पै अटक्यो**
**ललित त्रिभंग चाल पै चलि के,**
**चिबुक चारु गड़ि ठटक्यो**
**सजल श्याम घन-बरन लीन ह्वै,**
**फिरि चित अनत न भटक्यो ।**
**कृष्णदास किये प्राण निछावर, यह तन**
**जग सिर पटक्यो ।।**

संत काव्यधारा के कवि सुंदरदास ने संवत् १७४६ वि. में जयपुर के पास सांगानेर नामक स्थान पर अपना शरीर छोड़ा। शरीरान्त का समय निकट आया जान महाकवि ने निम्नलिखित दोहे पढ़े -

**बैद हमारे रामजी, औषधि है**
**हरिनाम ।**
**"सुंदर" यहै उपाय अब, सुमिरण**
**आठौ जाम ।।**
**सात बरस सौ में घटे, इतने दिन की**
**देह ।**
**सुंदर आतम अमर है, देह खेह की**
**खेह ।।**

उपर्युक्त पंक्तियों में कवि ने आत्मा की अमरता और शरीर की तुच्छता (नश्वरता) के साथ ही शरीर त्याग के समय की अपनी ९३ वर्षीय अवस्था का भी संकेत दिया है।

गंग का अकबरी दरबार में विशेष मान था। अब्दुल रहीम खानखाना ने उन्हें एक छप्पय - 'चकित भँवर रहिगयो गमन नहिं करत कमल वन' पर छत्तीस लाख रुपये पारितोषिक रूप में प्रदान किये थे। गंग को तुलसीदास के समान ही उच्च कोटि का कवि माना गया है - 'तुलसी गंग दुऔ गए सुकविन के सरदार'।

ऐसा कहा जाता है कि जहाँगीर से इनका कुछ मतभेद हो गया। जिससे राजा ने उन्हें हाथी से कुचलवा दिया था। मरने से पूर्व उन्होंने यह दोहा पढ़ा था -

**कबहुँ न भँडुवा रन चढ़े, कबहुँ न**
**बाजी बंब।**
**सकल सभाहि प्रनाम करि, बिदा होत**
**कवि गंग ।।**

अकबरी दरबार के एक अन्य कवि नरहरि हैं, जिनकी मृत्यु संवत् १६६७ में १०५ वर्ष की अवस्था में हुई। अपना अंत समय निकट आ जाने पर वे असनी में गंगा तट पर चले गये थे। वहाँ उन्होंने कुशासन ले लिया था। मृत्यु से पूर्व उन्होंने निम्नलिखित बरवै लिखा-

**कुस की बनी सथरिया, धनियां**
**परारि ।**
**सुख सों सोवत नरहरि, पाँव ।**
**पसारि ।।**

घनानंद रीतिकाल की स्वच्छन्दतावादी धारा के श्रेष्ठ कवि हैं। संवत् १७९६ में जब नादिरशाही सेना लूटपाट करते हुए मथुरा पहुँची तो उद्दण्ड सैनिकों ने निरपराध घनानंद का एक हाथ काट लिया। हाथ कट जाने पर अपना अंतिम समय निकट समझ खून से कवि ने यह कवित्त लिखा जो उनकी अंतिम रचना है -

**बहुत दिनान की अवधि आस-पास परे,**
**खरे अरबरानि भरे हैं उठि जान को ।**

**कहि कहि आवत छबीले मनभावन को,**
**गहि गहि राखति ही दै दै सनमान**
**को ।।**
**झूठी बतियानि की पत्यानि से उदास**
**ह्वै के,**
**अब जा घिरत घन आनंद निधान को ।**
**अधर लगे हैं आनि करिकै पयान प्रान,**
**चाहत चलन ये संदेसो ले सुजान को ।।**

आधुनिक कविता के जनक भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने मरने के समय निम्नलिखित पद गाया था-

**डंका कूच का बज रहा मुसाफिर जागो**
**रे भाई ।**
**देखो लाद चले सब पंथी तुम क्यों रहे**
**भुलाई ।।**
**जब चलना ही निहचल है तो लेकिन**
**माल लदाई ।**
**हरीचंद हरिपद बिनु नहिं तो रहि**
**जैहौं मुँहबाई ।।**

द्विवेदी युग के प्रमुख कवि पं. रामनरेश त्रिपाठी का निम्नलिखित छंद उनकी अंतिम रचना है, जिनमें कवि ने अपने जीवन का संक्षिप्त लेखाजोखा प्रस्तुत करते हुए अंतिम कामना व्यक्त की है-

**सरके कपोल के उजाले में दिवस,**
**रात केशों के अँधेरे में निकल भागी**
**पास से ।**
**सन्ध्या बालपन की युवापन की ।**
**आधी रात,**
**मैंने काट डाली क्षणभंगुर विलास से ।**
**श्वेत केश झलके प्रभात की किरण से**
**तो,**
**आँखें खुलीं काल के कुटिल मंद हास**
**से ।**
**मेरे करुणानिधि का आसन गरम**
**होगा,**
**कौन जाने कब मेरे शीतल उसास से ।।**

पं. कृष्ण बिहारी मिश्र लखनऊ के सुप्रसिद्ध समीक्षक एवं कवि थे। उन्होंने 'माधुरी' के संपादन का कार्य किया था तथा 'हिन्दी समालोचक' त्रैमासिक पत्र का संपादन भी किया था। २४ मई, १९५९ ई. को उनका हृदयगति रुकने से देहावसान हो गया। मृत्यु से पूर्व वे डॉ. प्रेम नारायण टंडन द्वारा संपादित 'रसवंती' के 'पांडेय स्मृति-ग्रंथ' के लिए एक छंद लिख रहे थे। उसी समय अचानक हृदयगति रुक जाने से वे उसका अंतिम चरण पूरा नहीं कर सके। छंद इस प्रकार है-

**अनुवाद स्वाद में अलोनोपन छाय गयो,**
**देवबानी बंगला को जानकार बूटिगो ।**
**मंजुल रसीली, अरसीली कविता की**
**गति,**
**उकति जुगति को चमत्कार ।**
**लूटिगो ।।**
**साहस, सहानुभूति, सम्बल सचाई**
**सूधी,**
**पत्रकारिता के गुन-गान सब ।**
**लूटिगो ।।**

**— ५०१/६२, हसन गंज (पार),**
**लखनऊ - ७, उ.प्र.**

☐

# जर्मन कविताएं

## निर्वासन

### इंगेबोर्ग बाखमान्न (१९२६-७३)

एक मुर्दा हूं, मैं, जो घूम रहा
कहीं नहीं पंजीकृत जो
अनजाना जी प्रीफेक्टो के राज्य में
गणना बाहर सुनहरे नगरों
तथा हरियाले देहात में
बहुत दिनों से खारिज हुआ
और बिना कुछ लिये साथ में
केवल पवन, समय और शब्द साथ मेरे
मैं जो नहीं रह सकती मानवों में
मैं जर्मन भाषा वाली
यह बादल मेरे चतुर्दिक है
जिसे मैं घर बनाकर हूं रखती
सभी भाषाओं में घूमती हुई
ओ कैसे तो यह धूमिल करता
उन अंधियारे उन वर्षों के स्वरों को
जिनसे कुछ ही नीचे झरते
ऊंचे, प्रकाश भरे क्षेत्रों में, मुर्दे को
ऊंचे लेकर, यह उसे ले जाता

□

## वर्षा में

### इयर्ग स्टाइनर (१९३०-)

लोगों को सड़कों पर जल्दी है
सड़कों पर वर्षा हो रही है
वर्षा बरसने पर लोग जल्दी करते हैं
घरों में लोगों के पास समय है
घरों में बहुत आराम है
वर्षा होने पर लोगों को समय मिलता है
घरों में बैठे लोग देखते हैं
सड़कों पर चलते लोगों को
वर्षा हो रही है।

□

# घर की याद

## एल्से लास्कर श्यूलर (१८७६-१९४५)

नहीं समझ पाती मैं भाषा
इस ठंडे देश की
और नहीं चल पाती इसके कदम
और न गुज़रते हुए मेघों को
मैं कुछ समझ पाती हूं

रात्रि भी, सौतेली-महारानी है।
सर्वदा सोचने पड़ते मुझे फरऊनो के वन
और चूमने होते चित्र अपने तारों के
आ गयी चमक मेरे होठों पर
और वे बातें करते दूर देशों की
मैं हूं सुंदर चित्र पुस्तक एक
तुम्हारी गोद में

पर तुम्हारा आनन्द बुनता
आवरण आंसुओं से
चीर कर निकाल दिये मूंगे
मेरे चमकते पक्षियों के

उपवन की बाड़ में
उनके मृदुल नीड़ पथरा गये हैं
कौन करता मेरे ध्वस्त महलों का अभिषेक
उनमे रहे थे मुकुट मेरे पुरखन के
उनकी प्रार्थना डूब चुकी पवित्र नदी में।

[मूल जर्मन से अनूदितः बाबूराम वर्मा]

□

# भारवि के अर्थ-गौरव की एक झलक

□ देवीसहाय शर्मा

संस्कृत भाषा के मूर्धन्य कवियों में कविवर भारवि अपनी रचना के वैशिष्ट्य 'अर्थ गौरव' के लिये विख्यात हैं। 'उपमा कालिदासस्य भारवेरर्थ गौरवम्'। इनका एक मात्र ग्रन्थ 'किरातार्जुनीय काव्यम्' उपलब्ध है, जिसमें १८ सर्ग हैं। इसका कथानक है कि पाण्डवों के वनवास में रहते हुए युधिष्ठिर की जिज्ञासा हुई कि दुर्योधन किस निपुणता से राज्य चला रहा है, इसका पता लगाया जाये। इसके लिए उन्होंने एक वनवासी किरात को गुप्तचर बनाकर हस्तिनापुर भेजा। वह गुप्तचर वापस आकर पूरा विवरण देता है। फिर वेदव्यासजी का वन में आकर पाण्डवों से मिलना, अर्जुन के प्रति विजय प्राप्ति के लिए तपश्चर्या करके विद्या प्राप्ति का उपदेश देना, अर्जुन का तपस्या के लिए हिमालयगमन, वहां किरात वेषधारी भगवान् शंकर के साथ अर्जुन का युद्ध, अर्जुन के पराक्रम से प्रसन्न होकर भगवान शंकर द्वारा पाशुपतास्त्रसहित धनुर्वेद की शिक्षा देना। भगवान् शिवजी की आज्ञा से इन्द्रादिक देवताओं द्वारा अर्जुन को वरदान व अपने अपने अस्त्र देना और अर्जुन का वापस लौटना- आदि विषय हैं।

कथानक के साथ ही सार्वभौमिक तथ्यों को नीति विश्लेषक वाक्यों द्वारा सहज ही प्रकट कर देना भारवि की विशेषता है। ये सहज वाक्य मुहावरों के रूप में प्रतिष्ठित व प्रयुक्त हो रहे हैं। कवि भारवि की कविता के अर्थ गौरव का रसस्वादन कराने की दृष्टि से कुछ उद्धरण यहां प्रस्तुत हैं।

वनवासी गुप्तचर दुर्योधन की नीतिनिपुणता को परख कर आया है, उसे शत्रु के गुणों का वर्णन करना होगा, अतः पूर्व ही क्षमायाचना करते हुए कहता है :–

**क्रियासुयुक्तैर्नृप चारचक्षुषो, न वञ्चनीयाः प्रभवोऽनुजीविभिः।**
**अतोऽर्हसि क्षन्तुमसाधु साधु वा, हितं मनोहारि च दुर्लभम् वचः।।**

हे राजन्! कार्य में नियुक्त गुप्तचर का कर्तव्य है कि स्वामी के समक्ष स्पष्ट बात रखे, क्योंकि गुप्तचर स्वामी की आंखें होते हैं। इन्हें अपने स्वामी से कुछ भी नहीं छिपाना चाहिये। अतः मेरे कथन में अप्रिय बात हो तो क्षमा करें, क्योंकि हितकारी वचनों का मनोहारी होना कठिन है। ऐसी स्थिति में क्या मौन रहना ही श्रेष्ठ है! इस आशंका को दूर करते हुए कहते हैं कि–

**स किंसखा साधु न शास्ति योऽधिपं हितान्न यः संशृणुते स किंप्रभुः।**
**सदानुकूलेषु हि कुर्वते रतिम्, नृपेष्वमात्येषु च सर्वसंपदः।।**

वह कैसा अमात्य जो अपने स्वामी को हितकारी बात न बताये और वह कैसा राजा, जो अपने हित की बात न सुन सके। परस्पर अनुकूल रहनेवाले राजा व अमात्यों में ही सभी संपदायें अनुराग करती हैं।

अब गुप्तचर दुर्योधन की व्यवस्था, अवस्था का वर्णन करता है कि –

**विशङ्कमानो भवतः पराभवं नृपासनस्थोऽपि वनाधिवासिनः।**
**दुरोदरच्छद्मजितां समीहते नयेन जेतुं जगतीं सुयोधनः॥**

राजा सिंहासन पर बैठा हुआ भी वह दुर्योधन वनवासी आप से पराजय की आशंका रखता हुआ, कपट पूर्ण ढंग से खेले गये जुए सें जीती हुई पृथ्वी को अब नीति द्वारा जीतने के प्रयास में जुटा हुआ है।

**प्रलीनभूपालमपि स्थिरायति प्रशासदावारिधि मण्डलं भुवः।**
**स चिन्तयत्येव भियस्त्वदेष्यतीरहो दुरन्ता बलवद्विरोधिता।**

शत्रुओं से शून्य आसमुद्र समस्त भूमण्डल पर राज्य करता हुआ भी वह दुर्योधन आपसे मिलने वाली पराजय की भीति से सदा चिंतित रहता है – बलवान के साथ विरोध अनर्थ की मूल है!

दुर्योधन की इस गूढ़ बात कि वह युधिष्ठिर से मिलनेवाली पराजय से भयभीत रहता है, गुप्तचर को कैसे पता चला? इसका आधार बताते हैं कि –

**कथाप्रसङ्गेन जनैरुदाहृतादनुस्मृताखण्डलसूनुविक्रमः।**
**तवाभिधानाद्व्यथते नताननः स दुःसहान्मन्त्रपदादिवोरगः।।**

बातचीत में लोगों द्वारा आपके नाम का उल्लेख होने पर वह दुर्योधन अर्जुन के पराक्रम को स्मरण करते हुए नीचा मुख करके दुखी हो जाता है – जैसे कि विष वैद्य द्वारा पढ़े जानेवाले दुःसह मंत्रपदों के उच्चारण से गरुड़ के पराक्रम को स्मरण कर सर्प हो जाता है। इस प्रकार वनेचर गुप्तचर द्वारा स्थिति का वर्णन कर चले जाने के बाद युधिष्ठिर ने गुप्तचर की बतायी बातें भाइयों व द्रौपदी को बतायीं।

सारी बातें सुनकर द्रौपदी युधिष्ठिर का क्रोध व उद्योग बढ़ाने के उद्देश्य से बोली –

**अखण्डमाखण्डलतुल्यधामभिश्चिरं धृता भूपतिभिः स्ववंशजैः।**
**त्वयात्महस्तेन मही मदच्युता मतङ्गजेन स्रगिवापवर्जिता।।**

इन्द्र समान पराक्रमी अपने वंश के राजाओं द्वारा चिरकाल तक अखण्ड रूप से धारण की हुई इस पृथ्वी को आपने ऐसे ही छोड़ दिया है, जैसे मदमस्त हाथी पुष्पमाला को।

**व्रजन्ति ते मूढधियः पराभवं भवन्ति मायाविषु ये न मायिनः।**
**प्रविश्य हि घ्नन्ति शठास्तथाविधानसंवृताङ्गान्निशिता इवेषवः।।**

उन जड़बुद्धि मनुष्यों को पराजय प्राप्त होनी है, जो मायावी पुरुषों के साथ वैसा ही व्यवहार

नहीं करते हैं। धूर्त लोग भी सीधे सादे लोगों को आत्मीय बनकर उसी तरह नष्ट कर देते हैं, जैसे शरीर में प्रवेश करके बाण।

**गुणानुरक्तामनुरक्तसाधनः कुलाभिमानी कुलजां नराधिपः ।**
**परैस्त्वदन्यः क इवापहारयेन्मनोरमामात्मवधूमिव श्रियम् ।।**

अनुकूल साधनवाले, कुलाभिमानी आप जैसे राजा के अतिरिक्त अन्य कौन होगा, जिसने मनोरमा, कुलीन वधू की तरह अपनी राज्य लक्ष्मी का स्वयं ही शत्रुओं द्वारा अपहरण करा दिया हो।

**भवन्तमेतर्हि मनस्विगर्हिते विवर्तमानं नरदेव वर्त्मनि ।**
**कथं न मन्युर्ज्वलयत्युदीरितः शमीतरूं शुष्कमिवाग्निरुच्छिखः ।**

हे नरेन्द्र! इस आपत्तिकाल में भी शूरवीरों द्वारा निन्दित इस मार्ग पर चलते हुए (अर्थात् शत्रुओं द्वारा की हुई दुर्दशा का अनुभव करते हुए भी) सूखे शमी वृक्ष की तरह आपको क्रोध क्यों नहीं जला रहा है।

**अथ क्षमामेव निरस्तविक्रमश्चिराय पर्येषि सुखस्य साधनम् ।**
**विहाय लक्ष्मीपतिलक्ष्म कार्मुकं जटाधरः सञ्जुहुधीह पावकम् ।।**

यदि विक्रम को छोड़कर क्षमा को ही सुख का साधन मानते हो तो राजाओं की पहिचान इस धनुष को छोड़कर जटाधारियों की तरह अग्नि में हवन करो।

द्रौपदी द्वारा इस प्रकार आक्रोश भरे ढंग से युधिष्ठिर को युद्ध के लिए प्रेरित करने के बाद भीमसेन बोले –

**तदलं प्रतिपक्षमुन्नतेरवलम्ब्य व्यवसायवन्ध्यताम् ।**
**निवसन्ति पराक्रमाश्रया न विषादेन समं समृद्धयः ।।**

उन्नति में बाधक इस उद्योग शून्यता को अब तो छोड़िये। पराक्रम के साथ रहनेवाली समृद्धियां, विषाद के साथ नहीं रहती हैं।

**अथ चेदवधिः प्रतीक्ष्यते कथमाविष्कृतजिह्मकृतिनः ।**
**धृतराष्ट्रसुतेन सुत्यजाश्चिरमास्वाद्य नरेन्द्रसंपदः ।।**

यदि वनवास की अवधि की समाप्ति तक प्रतीक्षा करना चाहते हों तो वह भी ठीक नहीं है, क्योंकि कपटी दुर्योधन चिरकाल तक राज्यसंपदा का भोग करने के बाद उसे छोड़ने को बिलकुल तैयार न होगा।

**मदसिक्तमुखैर्मृगाधिपः करिभिर्वर्तयते स्वयं हतैः ।**
**लघयन्खलु तेजसा जगन्न महानिच्छति भूतिमन्यतः ।।**

स्वयं द्वारा मारे हुए मदवर्षी हाथियों से ही सिंह अपनी वृत्ति चलाता है। अपने तेज से संसार को लघु बनानेवाले महान् पुरुष दूसरों के द्वारा दिये ऐश्वर्य की कामना नहीं करते हैं।

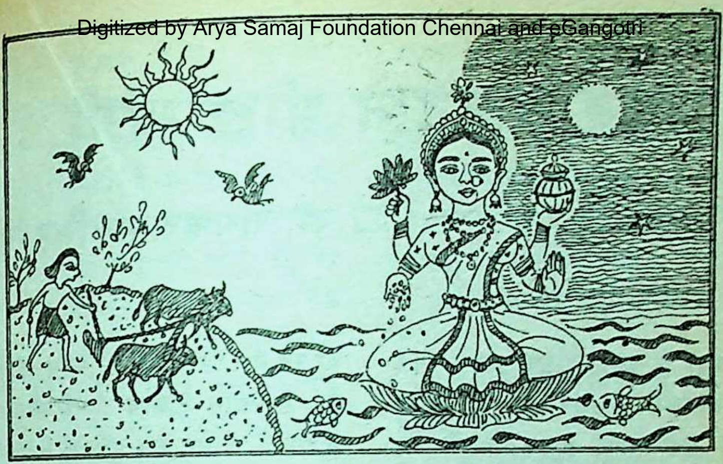

**कुरु तन्मतिमेव विक्रमे, नृप निर्धूय तमः प्रमादजम् ।**
**ध्रुवमेतदवेहि विद्विषां त्वदनुत्साहहता विपत्तयः ।।**

हे राजन्! इसलिये प्रमादजन्य अंधकार को छोड़कर विक्रम को स्वीकार कीजिये । इस बात को निश्चित जानिये कि आप के अनुत्साह के कारण ही शत्रुओं की विपत्तियां प्रतिबद्ध हैं ।

इस प्रकार भीमसेन की क्रोध भरी बातें सुनकर युधिष्ठिर उसको उसी तरह समझाने लगे जिस तरह मदमस्त हाथी को शनैः शनैः वश में किया जाता है ।

**सहसा विदधीत न क्रियामविवेकः परमापदां पदम् ।**
**वृणते हि विमृश्यकारिणं गुणलुब्धाः स्वयमेव संपदः ।।**

बिना ठीक से सोचे विचारे कोई भी काम सहसा नहीं करना चाहिये, क्योंकि गुणों की ओर सदा आकर्षित रहने वाली संपत्तियां सोच समझकर काम करने वाले मनुष्य का ही वरण करती हैं ।

**अभिवर्षीत योऽनुपालयन्विधिबीजानि विवेकवारिणा ।**
**स सदा फलशालिनीं क्रियां शरदं लोक इवाधितिष्ठति ।।**

जो मनुष्य कृत्यवस्तु को विवेकरूपी जल से सींचता हुआ प्रतीक्षा करता है, वह शरद की तरह सदा क्रिया फल को प्राप्त करता ही है । भावार्थ यह है कि साहसिक पुरुष को तो सिद्धि काकनालीय न्याय की तरह मिलनी है, सिद्धि मिलेगी की यह निश्चित नहीं है, किन्तु विवेकी पुरुष को तो वह निश्चय पूर्वक मिलती है । अतः किसी भी कार्य को खूब सोच समझकर समय की प्रतीक्षा करते हुए उचित अवसर पर ही करना चाहिये, यही कार्य सिद्धि का मूलमंत्र है ।

**– लक्ष्मी वेंकटेश्वर प्रेस बिल्डिंग,**
**अहिल्याबाई चौक, कल्याण**

□

# जब सम्राट ने भीख मांगी

□ डॉ. रामनारायण सिंह 'मधुर'

दो वर्षों से कुछ अधिक समय (१९ नवम्बर १७७९ से ६ अप्रैल १७८२) तक मिर्जा नजफ दिल्ली का वकील-ए-मुतलक के पद पर आसीन था। इन दो वर्षों की अवधि में दिल्ली दयनीय स्थिति को प्राप्त हो गयी थी। वातावरण प्रदूषित था तो जलवायु अस्वास्थ्यकर। तत्कालीन समाचार-पत्रों से विदित होता है कि इन वर्षों में शाही परिवार में बार-बार बीमारी आती थी और बच्चे बहुत मरते थे। शाही-खजाना रिक्त और शासन व्यवस्था भंग थी। मुगलिया सवारों का अत्याचार बढ़ गया था। वे जनता को लूटते तथा चुंगी एवं पुलिस के अधिकारियों को मारा करते थे। जनता भयभीत एवं त्रस्त थी। उसकी पुकार सुनने वाला कोई नहीं था, क्योंकि भारत-सम्राट शाह आलम द्वितीय परिस्थितियों का मारा, निकम्मा और भीरु स्वभाव का था। वस्तुतः मिर्जा नजफ ही उस पर प्रभावशील था। वह सम्राट की शिकायतों पर बिलकुल ही ध्यान नहीं देता था। संत्रस्त सम्राट कहा करता था — 'मिर्जा नजफ की उपेक्षा से साम्राज्य के टुकड़े-टुकड़े हो रहे हैं। सिपाहियों को वेतन नहीं मिलता है। वे ग्लानि के साथ नौकरी छोड़ रहे हैं। नजफ के अधीन सब इलाकों में कुप्रबंध है, तिस पर वह सुख-विलास में मग्न है। लताफत खां (मिर्जा नजफ का विलास प्रबंधक) की संगति में रहता है और इस दुखद एवं कष्टप्रद स्थिति को सुधारने के लिए कुछ भी नहीं कर रहा है। लताफत ने उसके दिल-दिमाग पर कब्जा जमा लिया है, जो कुछ यह कहता है, उस पर वह सहमत हो जाता है।'

हताश और निराश कृषकों ने शासन के विरुद्ध विद्रोह कर दिया और तहसीलदारों से लड़ाई लड़ने लगे। इस प्रकार आंय का यह स्रोत भी बंद हो गया। सूखा एवं अवर्षण से किसानों की हालत पतली हो गयी। १७८० के बाद सर्वत्र दुर्भिक्ष का प्रकोप बढ़ जाने के कारण अन्न और घास के भाव आसमान छूने लगे। उधर राज्य के पास अपने नौकरों एवं सैनिकों का वेतन चुकाने के लिए पैसा नहीं था। चारा एवं दाना के अभाव में शाही घुड़साल के अश्व तड़प-तड़प कर मरने लगे थे। भूख की विभिषिका से सब आतंकित

थे– सम्राट, उसका अंतःपुर, अगणित सलातीन (भूतपूर्व सम्राटों के पौत्र और प्रपौत्र) छोटे सेवक, शाही घराने के रक्षक। भूखों मरते हुए मिर्जा नजफ के कप्तान और सम्राट के भेजे हुए कर्मचारी प्रतिदिन उसके दफ्तर में क्रोधपूर्वक शोर मचाकर, खुले तौर पर उसे दोषी ठहराते हुए चिल्लाते थे– 'हम आपके वायदे को और अधिक नहीं मान सकते कि रूपये कल दिये जायेंगे। चाहें तो साफ इंकार कर बरखास्त कर दीजिये, पर बच्चों की भांति हमें मूर्ख न बनाइये।'

सम्राट शाह आलम की स्थिति और भी दुखद थी। वह उसे पक्का झूठा और दगाबाज कहा करता था। खर्च न मिलने के कारण हरम की बेगमों ने निश्चय किया कि हम सब हाथ में हाथ मिलाकर यमुना में डूब मरें। उनकी स्थिति इतनी खराब थी कि गिड़गिड़ाने पर भी महीनों तक उन्हें रूपये नहीं मिल पाते थे और बनियों ने भी उन्हें उधार देना बंद कर दिया था। इससे तो मर जाना ही अच्छा था। कुछ दिनों तक उन्होंने भूख हड़ताल भी की। नजफ खां ने अपने कर्मचारियों के माध्यम से सम्राट को समझाने का प्रयत्न किया कि रूपये क्यों नहीं मिल पा रहे हैं तो सम्राट और भी जल-भुन गया। संकट से व्याकुल होकर उसने अपने दास कम्बार से एक दिन कहा – 'यदि तुम आज खाना खाओगे तो मेरा खून पीओगे। नजफ खां के मकान के सामने जाकर धरना दो, न कुछ खाओ और न उसे खाने दो। अंतःपुर का पूरा खर्च लेकर आओ।' दूसरे दिन उसने मौलवी अताउल्ला से कहा – 'मेरी यह दशा हो गयी है कि मेरी संदूक में दूसरा कोट नहीं है।'

पुत्रों एवं भतीजों के सामने उसने यह शेर लिखा –

**जहांरा जहांवार बारव खराब ।**
**जे दस्ते नजफ खां अफरासियाब ।।**

अर्थात् - 'संसार का स्वामी नजफ खां अफरासियाब के द्वारा संसार को नष्ट कर रहा है।'

सिंहासन पर विराजमान शाहआलम ने एक दिन चिल्लाकर कहा – 'मैं इस जिंदगी से तंग आ गया हूं। निर्वाह के लिए रूपये नहीं हैं। साहूकारों एवं दुकानदारों का भारी ऋण है। अब इस लज्जा को सहन करना कठिन है। ए खुदा, मुझे शीघ्र मिट्टी में मिला दे।'

नजफ खां की मृत्यु एवं दिल्ली की गलियों में रक्तपात के बाद ही सम्राट को इससे मुक्ति मिली।

– **बारापत्थर, सिवनी - ४८०६६१, म.प्र.**

□

जबतक व्यक्ति अपने पुण्य पर अभिमान करता रहेगा, परम प्रभु उसे विनय की आवश्यकता सिखाने के लिये पाप-गर्त में गिराते रहेंगे।

□

# रोशनी

सप्तरंगी
ज्योति
मुस्काती
अमा की डाल पर
रास्तों में
मेड़ पर
पैठी हुई है
रोशनी
फिर तिमिर के
कक्ष में
बैठी हुई है
रोशनी
तारिकाएं
जगमगातीं
नील नभ के
जाल पर
रात की
अंधी गुफाओं में
कढ़े हैं
बेल बूटे
रंग दीपों से
अनारों की तरह
हर ओर फूटे
गंधकी
चंचल मृगी
चलती हवा के
चाल पर

**— शिवप्रसाद 'कमल'**
कल्पना - मंदिर, चुनार (मिर्जापुर) उ.प्र.

□

# हनुमानजी की पूंछ या महंगाई

रामायण सीरियल में
लंका-दहन के लिए
जब
हनुमानजी ने अपनी पूंछ बढ़ाई—
इतनी बढ़ाई
कि
आसमान छूती नज़र आयी !
तभी एक दर्शक ने
हैरत भरी आवाज में
हांक लगायी —
'अरे देखो, भाई !
यह हनुमानजी की पूंछ है
या
अपने देश की
बढ़ती हुई महंगाई !

**— किशोरीरमण टंडन**
४ पत्रकार कालोनी, बांद्रा (पूर्व), बंबई - ४०० ०५१

□

सामयिक प्रश्न

# गरीब का दीप कब जलेगा ?

**□ चन्द्रकांता शर्मा**

देश की लगभग बीस प्रतिशत जनता गरीबी से नीचे का जीवन स्तर जी रही है। ऐसे लोग करोड़ों की संख्या में हैं, जिनके पास तन ढकने का कपड़ा नहीं, खाने को अनाज नहीं तथा सिर ढकने को छप्पर नहीं, वे रोटी, कपड़ा और मकान की कोरी जिहाद में पिले बेवजंह जिन्दगी का बोझ ढो रहे हैं। उन्हें पता नहीं चलता कि कब दीवाली आयी और चली गयी। वही दिन उनके लिए दीवाली, जिस दिन भरपेट भोजन मिल जाये। पन्द्रह-बीस रुपये की मजदूरी के बाद परिवार के दस सदस्यों का लालन-पालन कोई मजाक नहीं होता। दो जून भरपेट रोटी नहीं, उससे कुपोषण से उत्पन्न महामारियों का प्रकोप अलग। ऐसे करोड़ों लोग हैं जिनका वर्तमान अंधकारमय है तथा भविष्य में कभी दीप जलने की आशा क्षीण-सी भी नहीं है। पीढ़ी दर पीढ़ी वे लोग अपने परिवार को गरीबी और अभावों से भरा जीवन विरासत में सौंप कर मृत्यु को प्राप्त होते रहे हैं। क्या कभी ऐसे लोगों को भी खुशी नसीब होगी? गरीब ज्यादा गरीब हो रहा है तथा अमीर और ज्यादा अमीर हो रहा है। ऐसे में क्या रह जाती है दीवाली की सार्थकता?

१९९०

सवाल खड़ा होता है आखिर फिर गांव का दीप कब जलेगा और कौन जलायेगा इसे? आजादी के बाद से हमारी सरकारें गरीबी मिटाने के काम को युद्ध स्तर पर चलाने का दावा करती रही हैं। पंचवर्षीय योजनाओं के माध्यम से गरीबी हटाने के लिए अरबों-खरबों रुपये खर्च किये गये हैं। लेकिन गरीबी जहां की तहां है – आज भी करोड़ों लोग फुटपाथों पर सोते हैं, दिन में एक बार खाना खाते हैं तथा नंगे बदन सर्दी, गर्मी और वर्षा के मौसम बर्दाश्त करते हैं। आखिर हमारे गरीबी मिटाओ कार्यक्रम से किसकी गरीबी मिटी? 'गरीबी मिटाओ' क्या राजनेताओं का लोकतंत्र में वोट प्राप्त करने का साधन मात्र हर गया है? क्या वोट की राजनीति गरीबी का जीवन स्तर ऊंचा न उठाने की साजिश कर रही है?

गांव के कमजोर किसानों, आंचलिक आदिवासी क्षेत्रों आदि के सामूहिक विकास के लिए करोड़ों रुपये स्वीकार किये जाते हैं। लेकिन विकास के नाम पर सब कुछ वही है, जो वर्षों से उन्हें विरासत में मिला है। आज भी स्थिति यह है कि गांवों-ढाणियों तथा छोटी-छोटी बस्तियों में न तो सभी घरों में

बिजली है और न ही सभी घरों के बच्चे स्कूल पहुंच पाते हैं। आर्थिक विषमताओं में दबा दीन-हीन आदमी वह सब नहीं कर पा रहा है, जो अन्य लोग कर रहे हैं।

'चाक चलाते-चलाते तो पीढ़ियां गुजर गयीं इस घर में और लगता है मेरा लड़का भी इसके आगे नहीं बढ़ पायेगा।' ग्यारसी के चेहरे पर विषाद की गहरी रेखायें उभर आयीं।

दीया बनाने वाला गांव का कुम्हार स्वयं अपने घर का दीपक रोशन करने में समर्थ नहीं है। वही उसका पारंपरिक चाक, मैला-गंदला गुफानुमा घर, जिसमें गधों की लीद और पेशाब की बदबू, गंदा अंगरखा तथा बढ़ी दाढ़ी के बीच से झांकता झुर्रीदार ग्यारसीलाल का चेहरा गरीबी की कहानी आप कह रहा है। मैंने पूछा - 'क्या बाबा, कितने वर्षों से चाक चला रहे हो?'

'तो क्या पूरी तरह गुजारा नहीं होता, इस चाक के भरोसे?'

'क्या बतायें साहब, विकास ने उल्टे हमारे पारंपरिक काम – घड़ों को और चौपट कर दिया है। लोगों को जरा शहर की हवा लगी है कि गांव की चीजों से कतराने लगते हैं। और साहब, फकत पेट भरना ही तो जिंदगी का मकसद नहीं है। हमारे भी अरमान हैं, बच्चे हैं, आर्थिक विषमता के कारण कुछ नहीं हो पाता। मैं भी चाहता हूं मेरा लड़का कॉलेज में पढ़कर किसी आफिस में काम करे। लेकिन लगता है, मैं भी अपने बाप-दादों की तरह यह साध लेकर चला जाऊंगा। माटी का काम करते-करते माटी में मिल जाना है। इससे बेहतर कोई बात नहीं होने वाली।

वाकई गांव में पिछड़ी जातियों तथा जनजातियों की हालत दर्दनाक है। केवल दो जून रोटी की फिक्र के अलावा वे लोग अन्य किसी के बारे में सोच ही नहीं पाते। एक नाई परिवार से मिलना हुआ तो वह इसी तरह का रोना रोने लगा – 'देख लीजिये हमारी जिंदगी। गांवों में एक-दो रोटी देकर पूरे परिवार की हजामत बनवा लेने की परंपरा आज तक जारी है। अन्य ग्राहक मिलते भी हैं तो आठ आने, बारह आने से ज्यादा कोई नहीं देता। क्या होता है साहब इतने से पैसों से? दिन भर में पांच-सात रुपया कमा लेना कोई मायने नहीं रखता। औरतें दिन भर बड़ के पत्ते तोड़ कर फत्तल दोने बनाती हैं। रुपया दो रुपया की मजूरी समझो यह हो जाती है। लेकिन पढ़ाई-लिखाई, ढंग के कपड़े व भोजन कब नसीब होगा, नहीं मालूम। ब्याह-शादियों तथा दूसरे मौकों पर यजमान के यहां काम करने से भी कोई विशेष लाभ नहीं है। गैरत का काम करो तथा बीस जली-कटी अलग सुनो। केवल जिंदा रहने की जुगाड़ है, अन्यथा कोई आकर्षण नहीं है जीवन का।' नजर दौड़ा कर मैंने देखा मैले-कुचैले बिस्तर, इधर-उधर पड़े बच्चे तथा एल्यूमिनियम के काले पड़े बर्तनों के अलावा घर में कोई अन्य उल्लेखनीय वस्तु नजर नहीं आयी।

यही हाल गांव में बढ़ईगिरी का काम करने वाले कारीगरों का है। कृषक वर्ग के काम पर

इन लोगों की रोजी-रोटी चल रही है लेकिन, खुरपी तथा हल का फाल बनाने का कार्य अथवा बैलगाड़ियों का निर्माण प्रमुख रूप से करते हैं। किसान इनको फसल पर अनाज देता है, यही इनकी मजूरी होती है। साल में दो बार फसल पर अनाज लेकर पेट भरना तो जीवन का संपूर्ण अर्थ नहीं है। खेती का कार्य करने वाले श्यामलाल से भेंट हुई तो कहने लगा – 'किस बात की दीवाली, साहब? दीवाली सैकड़ों निकल गयीं।' विवशता में दीप जैसे-तैसे जला लेते हैं, अन्यथा दीप क्या, दिल जलते हैं। किसान से मिलने वाला अनाज ही तो सारी आवश्यकताओं की पूर्ति नहीं कर सकता। फिर अनाज में मजदूरी पूरी नहीं मिलती। उस पर सूखा, बाढ़ या अकाल हो गया तो मिलने वाले अनाज से अलग हाथ धोना पड़ जाता है। किसान के साथ हम लोग भी भूखों मरने की स्थिति में पहुंच जाते हैं। जो कुछ चल रहा है परंपरा बतौर है। हम लोग पढ़ भी नहीं सके। हां, बच्चों के स्कूल में चपरासी हो जाने से थोड़ा विश्वास जरूर बंधा है, देखो, दिन कब फिरते हैं?'

जब गांव के नाई-धोबी-कुम्हार-खाती-दर्जी तथा अन्य छोटे-मोटे काम करने वाले लोग किसान वर्ग पर निर्भर करते हैं तो किसान की माली हालत जान लेना भी मुनासिब है। गांवों में हर किसान के पास बीघा, दो बीघा से ज्यादा जमीन नहीं है। ऐसे किसान बहुत कम हैं, जिनके पास बीसियों बीघा जमीन तथा कुआं हैं। सभी किसानों के पास न तो कुआं है और न बिजली। न ही अच्छा खाद व बीज जुटाने की स्थिति ही है। पानी की पर्याप्त सुविधा के अभाव और अच्छे खादों की कमी के कारण पैदावार का लाभ नहीं मिल पाता। फिर सभी के पास जमीन भी बहुत थोड़ी है। इस पर हारी-बीमारी, पशुधन की अकाल मौत आदि किसान के लिए अत्यंत घातक है।

दो बीघा जमीन के मालिक श्योप्रसाद से बात हुई तो बताने लगा – 'छोड़िये साहब, क्या रखा है? खून पसीना एक करते हैं। मिलता है केवल पेट भरने का सामान। दो बीघा जमीन के सहारे पीढ़ियां गुजर गयीं। सूखा पड़ गया अथवा बाढ़ आ गयी है कि गरीबी मिटेगी। नेता चुनाव में वोट लेकर भाग खड़ा होता है। सारे वादे नाकाम हो जाते हैं। हमारी फिक्र किसी को नहीं है। मेरा अब तो यहां तक मानना है कि सरकार के भरोसे गरीबी नहीं मिटेगी। हम पिछड़े, गरीब, कमजोर लोगों को ही मिलकर कुछ करना होगा। दीवाली तो दिवाला निकाल जाती है। फसल अच्छी तो दीवाली, वरना दिवाला।

गरीबों के दिलों के दीप जलें। इसके लिए सार्थक प्रयत्नों की आवश्यकता है। चंद लोगों के घर रोशन होने से समाजवाद का भ्रम फैलाना सिवाय इसके अन्य कुछ नहीं है। भारतमाता का वास्तविक स्वरूप गांवों में है। उनका समुचित विकास बिना किसी आग्रह के ईमानदारी से होना चाहिये, तभी इस दीपपर्व की सार्थकता है, अन्यथा तामझाम व्यर्थ है।

– १९५८, पं. शिवदीन का रास्ता,
जयपुर - ३०२ ००३.

□

# सोने की थाली में ज्यौना परोस्यों

□ डॉ. रवीन्द्र भ्रमर

बात कोई बीस वर्ष पुरानी है। ईस्वी सन १९७० के मार्च या अप्रैल का महीना रहा होगा। आकाशवाणी के लखनऊ-केन्द्र पर मेरे काव्यपाठ की रिकार्डिंग थी। स्टूडिओ से बाहर निकलने पर, केन्द्र-निदेशक के कक्ष में मेरी भेंट रामचरितमानस और रामकथा की दुन्दुभी बजानेवाले पं. लल्लनप्रसाद व्यास से हो गई। उनकी सहज जिज्ञासा के उत्तर में मैंने कहा कि सायंकाल पं. अमृतलाल नागर के दर्शन करने का विचार है, किन्तु प्रश्न यह है कि सुयोग उपलब्ध हो सकेगा अथवा निराशा हाथ लगेगी। मेरी बात सुनते ही, व्यासजी की तर्जनी टेलीफोन के डाएल पर घूम गई। नागरजी से सीधा सम्पर्क हो जाने पर, उन्होंने मेरी इच्छा से उन्हें अवगत कराया और फिर टेलीफोन मुझे दे दिया। अत्यन्त अत्मीयतापूर्ण और स्नेहपुलकित स्वरों में नागरजी के शब्द मुझ तक पहुंचे, 'तो भइया, शाम का भोजन भी मेरी ही कुटिया पर करना'। मैंने टेलीफ़ोन पर ही विनम्रतापूर्वक कहा, 'श्रद्धेय पण्डितजी, आपके दर्शनों से ही मेरी भूख और प्यास मिट जायेगी। मुझ अकिंचन के लिए आप इतना कष्ट मत कीजिए।' उधर से पण्डितजी की स्नेहिल और आग्रहपूर्ण आवाज़ फिर आई, 'भइया, इसमें क़ष्ट काहे का? आप वय में छोटे अवश्य हैं किन्तु एक केन्द्रीय विश्वविद्यालय में आचार्य के पद पर हैं और काव्य-रचना भी करते हैं, धन्य भाग कि आप मेरी कुटिया पर पधारें और जूठन गिरायें।' नागरजी के ऐसे मर्म-वचन सुनकर उस क्षण मैं निहाल हो गया। उनकी वाणी के माधुर्य और सहज शिष्टाचार में मुझे उनके बड़प्पन का बोध हुआ।

शाम होने पर, दिया जलने के बाद, लखनऊ की रंगीनियों का नज्जारा करता हुआ मैं चौक की ओर चल पड़ा। मेरे मन में एक अजीब-सा उत्साह था, एक विशेष प्रकार की उत्कण्ठा जगी हुई थी। मैं सोच रहा था कि अपने समय के एक महान् कथाशिल्पी को, मैं उसके घरेलू परिवेश में ज़रा निकट से देखने जा रहा हूँ। मैं सोच रहा था कि ऐसे समर्थ और सिद्ध लेखक का घर-परिवार कैसा होगा? वहां किस माहौल में और किस तरह बैठकर वह पढ़ता-लिखता होगा? कुछ इसी तरह की विचार-तरंगों में बहते हुए मैं नागरजी की हवेली से आ लगा।

वे मुख्य द्वार के बाहर ही मुझे मिल गये। टहल रहे थे। लगा कि इस तरह मेरी प्रतीक्षा कर रहे हैं। मैंने करबद्ध प्रणाम किया तो उन्होंने प्रसन्नतापूर्वक मुझे अपने अंक में भर लिया और फिर, हवेली के भीतर, औसत आकारवाले आंगन से लगी उस दालान में ले गये, जहां उनका 'तख़्त' सजा हुआ था। मैं उसी तख़्त पर एक मसनद का सहारा लेकर बैठा। नागरजी भी पद्मासन में शोभायमान हुए। उस तख़्त पर एक ओर कुछ पुस्तकें और पत्रिकाएं पड़ी हुई थीं और जहां तक मुझे याद पड़ता है, एक बड़ा-सा पानदान भी था जो अपेक्षित समस्त सामग्री से लैस था। कतिपय औपचारिक बातों के उपरांत, नागरजी ने 'ठंडाई' के लिए पूछा। मैंने जिज्ञासा की कि क्या उसमें भांग का भी पुट होगा और नागरजी मन्द स्मित के साथ चहक उठे। 'अरे भइया, तुम्हारे यहां महीने के राशन के साथ जैसे चाय की पत्ती आती होगी, हमारे यहां उसी प्रकार मिर्च-मसाले के साथ-साथ भांग की पत्ती आती है और हमारी घरैतिन उसे बड़े मन से धोकर, सुखाकर और साफ करके अलमारी में रखती हैं'। नागरजी के इस कथन से काशी के मेरे संस्कार जाग उठे।

'ठंडाई' के उपरान्त ब्राह्मणों के प्रिय आहार अर्थात् मिष्ठान्न का सेवन किया गया। फिर, नागरजी ने बड़े प्रेम के साथ पान का बीड़ा बनाया और मुझे भी दो बीड़े कुछ ऐसे अन्दाज़ से दिये जैसे महाराजा भोज अपनी सभा में महाकवि कालिदास को दिया करते थे। ठंडाई, मिष्ठान्न और पान के सेवन के उपरान्त हमारे मनोराग उद्दीप्त हो चुके थे। भांग की समुचित मात्रा के कारण, नागरजी तो जैसे सिद्धावस्था में प्रवेश कर गये थे। उन्होंने उसी तरंग में मुझसे अकस्मात् कहा, 'अच्छा भाई। अब अपनी दो-एक कविताएं सुनाओ।' लोभी को धन मिलने पर जैसी अनुभूति होती होगी, मुझे भी हुई। लगा कि मुझे मेरा अभीष्ट मिल गया है। एक बड़ा रचनाकार और एक बड़ी समझवाला लेखक मुझसे मेरी कविता सुनना चाहता है। और, मेरी स्वरतंत्री के तार झंकृत हो उठे—

**'हेरतीं कस्तूरी का फूल हिरना आंखें**
**बड़ी-बड़ी।**

**चतुर्दिक् व्याप रही मधु गन्ध,**
**कसा मन छलनाओं के छन्द,**
**दंश का कहीं न कुछ आभास-**
**बस ज़हर चढ़ता घड़ी-घड़ी, हिरना**
**आंखें बड़ी-बड़ी।'**

नागरजी ध्यानमग्न होकर सुनते रहे। पूरा गीत समाप्त होने पर उन्होंने कुछ चुहल और कुछ परीक्षा लेने के स्वर में पूछा-'रवीन्द्र भ्रमर, ये कस्तूरी का फूल किस देश में पाया जाता है?' मैंने विनम्रतापूर्वक उत्तर दिया, 'गुरुदेव! मैंने यह एक प्रतीक गढ़ा है, जिसका आशय उस प्रियतम से है जो हिरन की नाभि में स्थित कस्तूरी की भांति प्रेमी के प्राणों में समाया रहता है।' मेरा स्पष्टीकरण सुनकर नागरजी प्रसन्न हुए, बोले, 'जिओ, जीते रहो।' फिर, उनका आदेश हुआ कि एक गीत और। मैंने ऊपरी संकोच और आन्तरिक

पुलक के साथ यह रचना पढ़ी—

**'चांद को झुक-झुक कर देखा है।**
**सांझ की तलैया के निर्मल जल-दर्पन में,**
**पारे-सी फिसलनवाले चमकीले मन में**
**रूप की राशि को परेखा है।**
**दिशा-बाहुपाशों में कसकर नभ सांवरे को,**
**बहुत समझाया है इस नैना बावरे को,**
**वह पहचाने मुख की रेखा है।'**

नागरजी मुदित हुए और मन्द स्मित हो बोले, 'भइया। अपना चंदा एक दिन मुझे भी दिखला दो।' मैंने कहा, 'गुरुवर।' आपकी तो मुट्ठी ही में नव ग्रह स्थित हैं।'

अब भोजन का समय हो चुका था। नागरजी ने एक अवधी लोकगीत गुनगुनाने का आभास दिया, 'सोने की थाली मैं ज्यौना परोस्यों' और फिर उन्होंने आवाज़ लगाई, 'अरे भाई, कुछ खाना-वाना ले आओ।' कुछ ही क्षणों में उतने बड़े घर की मालकिन और उतने बड़े लेखक की अर्द्धांगिनी श्रीमती नागर दोनों हाथों में नाना व्यंजनों से विभूषित दो थाली लिये हुए देवी अन्नपूर्णा की भांति हमारे समक्ष विद्यमान थीं। मैं संभ्रम पूर्वक उठा और उन्हें करबद्ध प्रणाम किया। भोजन का क्रम शुरू हुआ तो बेटियां और बहुएं बारी-बारी से एक-एक पदार्थ लाती रहीं और नागरजी सभी का संक्षिप्त परिचय देते रहे। मेरा अनुमान है कि भोजन समाप्त होने तक परिवार के सभी महत्वपूर्ण प्राणी एक बार मेरे समक्ष आ चुके थे। और इस तरह मुझे उनके फूलते-फलते घर-कुटुम्ब की एक सलोनी झलक मिल गई। भोजन तो सुस्वादु था ही, उसे इतने प्रेम से परोसा गया, ऐसी सहज आत्मीयता से खिलाया गया कि मैं कुछ अधिक ही खा गया था और मन तथा प्राण दोनों से तृप्त हो उठा था।

आंगन की दीवार में लगे वाशबेसिन में हाथ धोने के लिए मैं आगे बढ़ा कि नागरजी ने हठात् रास्ता रोक लिया। वे तांबे का गेंड़ुआ (टोंटीदार लोटा) लिये हुए मेरे सामने खड़े थे, बोले 'भइया। आज तो मैं हाथ धुलाऊंगा।' नागरजी के ऐसे भद्र व्यवहार और उनकी विनम्र शालीनता के भीतर से झांकते हुए बड़प्पन के समक्ष मैं पानी-पानी हुआ जा रहा था। अवधी के जिस लोकगीत की एक पंक्ति से उन्होंने भोजन की पहल की थी। उसका दूसरा बन्द मेरे कानों से स्वतः ही गूंज उठा—

**सोने के गेड़ुआ गंगाजल लावउं,**
**पियैं मोरे राम, पियावै मोरा जियरा।**

पांच सितारा होटलों, बड़ी-बड़ी पार्टियों और भद्रजनों के निवास में मैंने न जाने कितनी बार भोजन किया होगा, लेकिन जिस खुलूस और सलीके से 'आली जनाब तस्लीम लखनवी' (नागरजी का एक उपनाम) साहब ने अपने दस्तरख़ान पर इज़्ज़त बख़्शी वो लाजवाब है और उसे मैं ताउम्र कभी भूल नहीं सकता।

छेदा खवास पुरवा, बिरहाना में आचार्य दुर्गाशंकर मिश्र के निवास-स्थान पर मैं ठहरा हुआ था। नागरजी को प्रणाम करके, उनसे विदा लेकर मैं उस ओर चल पड़ा। रास्ते भर,

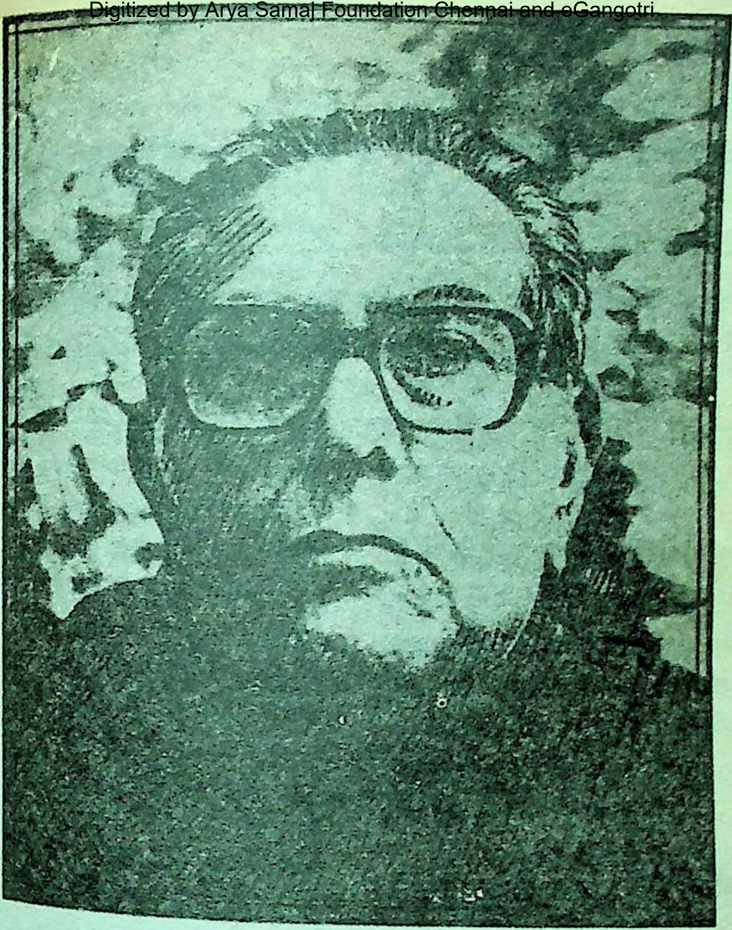

उनकी महानता, शालीनता और विनम्रता के चित्र मेरे मानस पर अंकित होते रहे। उस शाम, जो समय उनकी स्नेहिल छाया में व्यतीत हुआ, वह मेरे जीवन की अमूल्य धरोहर है। उस एक सलोनी संध्या के संसर्ग में मैंने उनसे जिस उदात्त आचरण की उपलब्धि की, क्या उसे किसी अन्य माध्यम से प्राप्त किया जा सकता है। वे एक महान् लेखक ही नहीं, एक सुसभ्य और सुसंस्कृत सत्पुरुष भी थे। उनकी स्मृति को मेरे कोटि प्रणाम।

**— शाकुन्तलम, मैरिस रोड,**
**अलीगढ़ - २०२ ००१, उ.प्र.**

□

# दूरदर्शन : कितना हित और कितना अहित?

**दीपावली के ज्योति-पर्व पर प्रकाशित होने वाले विशेषांक के लिए हमने अपने कुछ सुधी लेखकों एवं पाठकों से पूछा था– 'दूरदर्शन: कितना हित कितना अहित?' उन्हीं से प्राप्त उत्तरों को हम यहां प्रकाशित कर रहे हैं।**

– संपादक

## □ पं. सत्यकाम विद्यालंकार

दूरदर्शन से हित-अहित दोनों हो रहे हैं। तराजू पर दोनों पलड़े एक ही सतह पर उतरेंगे। अच्छा यही है कि जब चाहो बंद कर दो। मगर, कच्ची उम्र के युवक कहां मानते हैं! उन्हें तो दीवानगी पसंद है।

**– ५५ बी, - १४, वृंदावन सोसायटी,**
**थाना -४०० ०६१, महाराष्ट्र**

* * *

## □ डॉ. शिवमंगल सिंह 'सुमन'

दूरदर्शन ने परोक्ष ज्ञान-विज्ञान को चाक्षुशप्रत्यक्ष कराकर मानवता का बहुत बड़ा हित किया है। निरक्षरता के उन्मूलन और मानवमात्र को एक संवेदन सूत्र में गूंथ सकने का इतना सुंदर साधन दूसरा नहीं हो सकता। रामायण-महाभारत धारावाहिक के प्रसारण ने सांस्कृतिक सौहार्द के संचरण का सार्वभौमिक स्वरूप भी सिद्ध करके दिखा दिया है। परंतु उपभोक्ता संस्कृति के भोगवादी स्वरूप का संवाहक बनकर इस माध्यम ने सारा गुड़-गोबर कर दिया है। साबुन, तेल, क्रीम, पेय पदार्थों एवं अन्य बाह्य साज-सज्जा के उपकरणों के सस्ते विज्ञापन द्वारा राष्ट्र की पूरी की पूरी पीढ़ी को सस्ती, दिखाऊ एवं संवेदन शून्य बना देने का भयावह खतरा हमारे सरों पर मंडरा रहा है। परिणाम स्वरूप चरित्र निर्माण के स्थान पर तड़क-भड़क के साथ स्वार्थपरायण होते रहने की प्रक्रिया हमारे समाज में घुन की भांति भीतर ही भीतर खोखला कर देने के समस्त ज्ञान-विज्ञान के साधनों को जुटाने में पागल होती दिखायी पड़ती है। कार्यक्रमों के संयोजन में कोई अनुपात नहीं है। सत्संग अथवा पारस्परिक संगोष्ठियों की परंपराएं बिखरने लगी हैं। पड़ोसी, मित्र, सहृदय, जिज्ञासु संध्या समय एक दूसरे से मिलकर सहचिंतन और सहज चर्चाएं करने से घबराने लगे हैं। छुट्टी के दिनों में मिल-बैठकर विचार-वितर्क की तो परंपरा ही समाप्त होती दिखायी पड़ती है।

यदि एक बार जीवन का यह संतुलन खो गया तो समाज को बिखराव से बचाने के समस्त उपकरण हाथ से निकल जायेंगे। सर्वग्राही मनोरंजन की यह प्रक्रिया हमारे स्वस्थ चिंतन को ही समाप्त कर देगी। इससे बढ़कर घातक और संक्रामक किसी 'एड्स' जैसी महामारी की कल्पना नहीं की जा सकती। नयी पीढ़ी को इससे बचाना चाहिए। दूरदर्शन से अधिक आत्मदर्शन की आवश्यकता है।

**– समर्पण, उदयन मार्ग, उज्जैन, म.प्र.**

* * *

## ☐ डॉ. जयन्त नार्लीकर

दूरदर्शन एक प्रभावशाली माध्यम है। इसका उपयोग जनमानस पर इष्ट और अनिष्ट दोनों रूपों में प्रभाव डालने के लिए किया जाता है। अच्छे नाटक, फिल्में, कवि सम्मेलन, गाने की महफिलें जिनमें बड़े-बड़े गायक-वादक भाग लेते हैं, सांस्कृतिक कार्यक्रम, ऐतिहासिक चित्रण, विश्व की महत्वपूर्ण घटनाओं का ताजा विवरण एवं विज्ञान के विविध रूपों की जानकारी इत्यादि हितकारक कार्यक्रमों के लिए मैं दूरदर्शन को १०० में से ५० नंबर दूंगा। अहितकारी कार्यक्रम जैसे, मारपीट की फिल्में, लंबी एक जैसी और वास्तविकता से परे हिंदी फिल्में, अरोचक, अतिसामान्य धारावाहिक, अर्धसत्य दिखलाने वाले समाचार, विज्ञापनों की भरमार आदि के लिए भी दूरदर्शन को १०० में से ५० नंबर।

**– आई.यू.सी.ए.ए., पुणे - ४११ ००७.**

## ☐ डॉ. प्रभाकर माचवे

दूरदर्शन से अभी तो हित कम, अहित ज्यादा दिखता है। वह विज्ञापनों के पीछे जीता है। उस पर अंग्रेजी वालों का बहुत अधिक प्रभाव है। और उपभोक्ता संस्कृति का भी। एकाध 'रामायण' धारावाहिक से क्या होता है? छात्रों, युवकों, किशोरों को वह उपयोगी नहीं। मारधाड़ और सेक्स से भरपूर फिल्में दिखाकर, 'निरोध' और 'माला–टी' के विज्ञापनों से वह और समीप-दर्शन दिखाता है। हमने ११, १२, १३ अगस्त को बड़ा 'अंग्रेजी हटाओ' सम्मेलन बुलाया। उत्तर प्रदेश, हिमाचल प्रदेश, मध्य प्रदेश के मंत्री, केंद्रीय संचार मंत्री आदि आये। दूरदर्शन ने एक मिनट भी खबर दी नहीं। अभी तो दूरदर्शन की अफसरशाही भयानक भारतीय संस्कृति विरोधी और अंग्रेजी परस्त है। उसमें आमूलचूल परिवर्तन जरूरी है।

**– ७१, वल्लभ नगर,**
**इन्दौर - ४५२ ००३, म.प्र.**

* * *

## ☐ विष्णु प्रभाकर

दूरदर्शन के बारे में मेरी मान्यता बहुत स्पष्ट है। वह एक सशक्त माध्यम है। देश का नाश और निर्माण दोनों ही वह कर सकता है। प्रश्न यही है कि उसका उपयोग कौन और कैसे करता है।

उसकी लोकप्रियता की कोई सीमा नहीं

है। लेकिन उसका कारण यह नहीं है कि दूरदर्शन किसी की बौद्धिक जिज्ञासा को शांत करता है या उसकी दृष्टि सत्य शोधक की दृष्टि है या वह देश के निर्माण में कोई सार्थक भूमिका निभा रहा है। जनता मनोरंजन के लिए ही उसकी ओर आकर्षित होती है। और मनोरंजन भी वह जो जनता के स्वास्थ्य के लिए शुभ नहीं है वह संस्कार नहीं देता। जब हमारे देश में दूरदर्शन का उद्घाटन हुआ था, तब अमरीका से एक लड़की ने मुझे लिखा था 'दूरदर्शने-हमारे देश का तो नाश कर ही दिया, अब आपके देश का भी नाश होनेवाला है।' यह बात ऊपर से बहुत अटपटी लग सकती है, लेकिन गहराई से देखें तो इसमें बहुत बड़ी सच्चाई है।

सबसे अधिक शक्ति पुस्तक के शब्द में है। वह जितना हमारी चेतना को झकझोरता है, उतना और कोई शब्द नहीं। आकाशवाणी से प्रसारित होनेवाला शब्द भी हमारी चेतना को झकझोरता है और सोचने को विवश करता है। लेकिन दूरदर्शन का शब्द ऐसा बहुत कम कर पाता है। इसके कई कारण हैं। कि प्रायः एक बहुत गंभीर और त्रासद कार्यक्रम के तुरंत बाद चटपटी बातों का या हास्यरस का कोई प्रोगाम आ जाता है। उपभोक्ता संस्कृति के कारण जो नाना रूप मोहक विज्ञापन हमारे सामने आते हैं, वे गंभीर से गंभीर प्रोग्राम के प्रभाव को तुरन्त नष्ट कर देते हैं। चित्रहार व रद्दी फिल्में हमारी वासनाओं को सहलाकर रह जाती हैं। 'रामायण' और 'महाभारत' जैसे प्रोग्राम केवल श्रद्धा को ही शक्ति दे सके हैं। उनके सही अर्थ हमें कोई नहीं समझा सकता। अगर इच्छा शक्ति हो तो यह काम दूरदर्शन द्वारा किया जा सकता है। लेकिन मात्र वोट की शक्ति में विश्वास करनेवाला राष्ट्र इस इच्छा शक्ति को नहीं पा सकता। आवश्यकता गहरे चिंतन की है। अपनी सांस्कृतिक संपत्ति को फूहड़ बनाने की नहीं।

**— ८१८, कुंडेवालान, अजमेरी गेट,**
**दिल्ली - ११० ००६.**

* * *

□ मृणाल पांडे

दूरदर्शन हमारे युग के संवाद जगत की एक ऐसी ठोस सचाई है, जिसे नकारा नहीं जा सकता। अपनी बहुआयामी पकड़ के कारण इसका प्रभाव छपे अक्षर से प्रथमतया निश्चय ही अधिक होता है। लेकिन छपे अक्षर का प्रभाव हृदयंगम होने के बाद अधिक दूरगामी होता है। बहरहाल टी. वी. खोलकर देखना दिमागी तौर पर वैसी चुनौती नहीं बनता, जैसा एक गंभीर चिंतन परक लेख को उठाकर आद्योपांत उसे सोच-विचार कर पढ़ना। इसलिए दूरदर्शन के प्रसार से साहित्य के गंभीर पाठकों – चिंतकों की तादाद हमारे देश में घट रही है। इसे लेकर संपादक और लेखक ही नहीं, रचनात्मक चिंतन से जुड़े शिक्षक, बुद्धिजीवी तथा साहित्यप्रेमी सभी चिंतित हैं। हिटलर के नजदीकी जनरल गोएबल्स ने कहा था कि बार-बार दोहराने से झूठ विश्वसनीय बन

जाता है। राजनैतिक प्रपंच तथा दुर्बलता बढ़ने से दूरदर्शन का दुरुपयोग सत्तालोलुप जनों द्वारा इस दिशा में होने की बहुत अधिक संभावना है। क्योंकि यह एक नजरिया दिखाता तो है, पर उसके साथ ही स्वयं हमें उस नजरिये के सही-गलत होने पर सोचने को प्रेरित नहीं करता। अतः वैचारिकता का शून्य भरते चलना दूरदर्शन से जुड़े सभी जिम्मेदार लोगों का राष्ट्रीय और मानवीय कर्तव्य है।

**— साप्ताहिक हिंदुस्तान,**
**नयी दिल्ली - ११० ००१.**

* * *

## □ वीरेन्द्रकुमार जैन

वैज्ञानिक-औद्योगिक क्रांति जहां एक ओर वह भारतीय लोक-जीवन के लिए भयानक अभिशाप भी सिद्ध हुई है।

पिछले जमानों में हमारे देश में लोक-रंजन के कई सुंदर साधन थे। अलग-अलग ऋतुओं के मेले, तीज-त्योहार : उन प्रसंगों पर होनेवाले नाच-गान में लोक मानस को अभिव्यक्ति मिलती थी। उससे जन-मन का अत्यंत सुंदर रंजन होता था। मानसिक तृप्ति मिलती थी। आज वह सब अस्तप्राय है। सांझ के समय घर लौटने पर मनुष्य को कोई मनोरंजन तो चाहिए न। मन को भी कोई खूराक देनी पड़ती है। मन ही मनुष्य को मनुष्य बनाता है।

आज नगरों और कस्बों में दूरदर्शन ही एकमात्र ऐसा साधन है, जो नर-नारी, युवा-युवती, बालकों-किशोरों को कुछ मनोरंजन दे सकता है। हित और अहित के नैतिक पहलू भी हो सकते हैं। मसलन दूरदर्शन के धारावाहिकों और फिल्मों में दिखाये जानेवाले शृंगारिक दृश्य कभी-कभी बलात्कार और स्त्रियो के अंग-प्रदर्शन के दृश्य भी दिखाये जाते हैं। आज के भीषण संघर्ष के युग में दूरदर्शन के फिल्म-गीत या अच्छी फिल्में- मनुष्य को स्वप्न देती हैं। जीवनी-शक्ति देती हैं। और कोई विकल्प नहीं। यह एक अनिवार्यता बन गया है।

**— गोविंद निवास, सरोजिनी रोड,**
**विलेपार्ले, बंबई - ४०० ०५६**

* * *

## □ रामेश्वर शुक्ल अंचल

दूरदर्शन का सीमित प्रयोग समाचार प्रसारण के लिए या जनता की जीवन्दायी प्रबुद्धता बढ़ाने के लिए न्यूनतम जरूरत के माफिक होना चाहिए। माना कि विज्ञापनों से शासन खर्च निकालना है— संभव है घाटा भी कम होता जाता हो पर ये विज्ञापनदाता जनता का कितना व्यापारिक शोषण कर रहे होंगे?

घूम फिर कर चोट तो खरीदार कर दाता पर ही पड़ता है।

कला, संस्कृति की छबि बनाना और राष्ट्रीय चरित्र निर्माण की बात भी कम महत्व की नहीं है। पर इसमें सुधार हो सकता है। कार्यक्रमों का चयन, निर्धारण भी अधिक जीवनोन्मुख और जनोपयोगी बनाया जा

सकता है। दर्शकों को मध्यवर्गी उच्चता और सफेदपोशी को गिज़ा न पहुंचाते रहकर सद्‌गुणों पर जोर भी बढ़ाया जा सकता है। पर मूल प्रश्न है क्या हम इतने सक्षम हैं कि हाथियों की ये जमातें पाल सकें। वह धन जनता के स्वास्थ्य, सुख, संपोषक भोजन प्रदान, आवास-व्यवस्था को चहुंमुख बढ़ाने पर किया जा सकता है। भारत की शानदारी की बात न कर हमें शोषणों के मारे, उनसे हारे सर्वहारा वर्ग की बात करनी चाहिए, जो देश की अंदरूनी और करुण नग्न हकीकत है। सबको सन्मति दे भगवान।

— पचपेढ़ी, उत्तर सिविल लाइन,
जबलपुर, म.प्र.

## ☐ डॉ. श्याम सिंह शशि

हम हित की बातें करते हैं तो निश्चय ही यह एक सशक्त माध्यम है। स्वास्थ्य, शिक्षा तथा स्वस्थ मनोरंजन को लेकर दूरदर्शन की उपयोगित निर्विवाद है। किंतु जब विज्ञापनों की बौछार पर्दे पर पड़ती है तथा महंगे साबुनों को लेकर विलासिता की वस्तुओं तक का भारी प्रचार दिखाया जाता है तो अत्यंत कष्टदायी लगता है। अभावों में पलां कोई भी युवक उसे देखकर या तो कुंठित होगा अथवा भ्रष्ट साधनों के पथ पर भी चल सकता है।

एक और विडम्बना। दूरदर्शन एक ओर तो विभिन्न क्षेत्रों में ज्ञान-विज्ञान, राष्ट्रीय एकता, पारस्परिक सद्भावना तथा विविध रोचक विषयों पर अच्छे कार्यक्रम देता है, किंतु दूसरी ओर वही फिल्मों के द्वारा बेडरूम, स्वीमिंग तथा बलात्कार आदि के दृश्य दिखाकर भारतीय समाज की स्वस्थ परंपराओं में जहर घोलता है। अतः जब तक कार्यक्रमों में उपयुक्त संतुलन नहीं रखा जायेगा, दूरदर्शन हित की अपेक्षा अहित अधिक करेगा।

— बी - ४/२४५, सफदरजंग एनक्लेव,
नई दिल्ली

* * *

## ☐ डॉ. कल्याणमल लोढ़ा

दूरदर्शन वैज्ञानिक संस्कृति की एक अनुपम देन है। यह कितना श्रेयमय है अथवा हेय — यह इसके नियमित अथवा नियंत्रित उपयोग पर निर्भर करता है। इस संदर्भ में मुझे 'दिनकर' की ये पंक्तियां याद आ रही हैं :

**जो मंगल उपकरण कहाते वे मनुजों**
**के पाप हुए क्यों?**
**विस्मय है विज्ञान बिचारे के वर ही**
**अभिशाप हुए क्यों?**

यह है विज्ञान का वरदान, पर आज हो रहा है अभिशाप- और इसका कारण है इसका अनियमित और अनियंत्रित उपयोग। अनियमित से मेरा तात्पर्य है— इसके उपयोग की नियमहीनता, और इसके लिए सरकारी तंत्र का भी दायित्व है।

आज यह सर्वविदित है कि दूरदर्शन के

(शेषांश पृष्ठ १८३ पर)

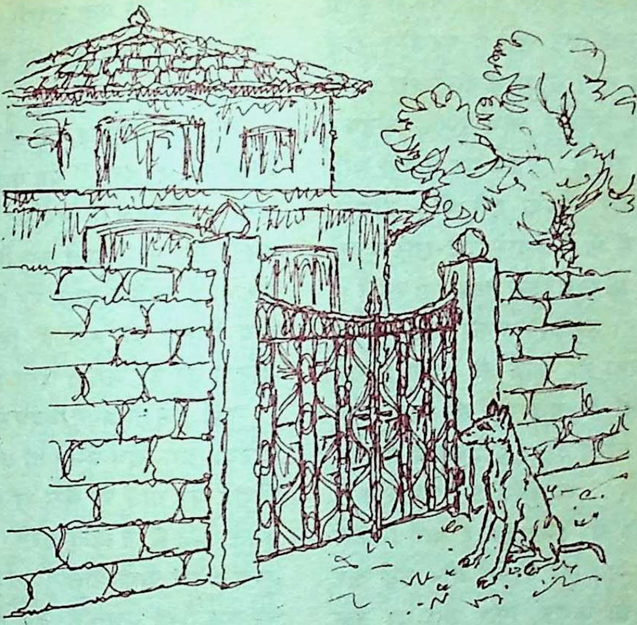

हिंदी कहानी

# कुत्ता सड़क का

**□ सरला अग्रवाल**

दिसम्बर महीने की ठण्डी रात में पूर्णमासी की चांदनी दूर-दूर तक तक छिटकी हुई थी। किसी-किसी बंगले के सामने से गुजरते तो चमेली एवं रात की रानी की महक नाक में घुस जाती। कहीं-कहीं मधुर संगीत भी सुनाई पड़ जाता। हम दोनों पति-पत्नी रात्रि भोजन के पश्चात् रोज़ की सैर पर निकले थे, और धीरे-धीरे टहलते हुए वल्लभनगर के अंतिम कोने की सड़क से निकल कर शिवमंदिर से होकर विवेकानन्द स्कूल की ओर चक्कर लगाकर वापस अपने घर की ओर आ रहे थे।

थोड़ा-सा चलने पर ही प्रतीत हुआ कि कोई हमारा पीछा कर रहा है; मुड़कर देखा तो

सफेद रंग का एक काफी हृष्ट-पुष्ट सा कुत्ता था, बाल उसके छोटे-छोटे थे, पर डील-डौल बहुत अच्छा था। सड़क के दोनों ओर इतनी सर्दी में भी बन्जारे लोग रजाई ओढ़कर बेखबर सो रहे थे। सड़क पर सैकड़ों बसें, ट्रकें और कारें आ-जा रही थीं। 'देखिये, इतनी सर्दी में भी ये बेचारे छोटे-छोटे बच्चों और स्त्रियों के साथ किस प्रकार सो रहे हैं ?' मैंने कहा था। उन्होंने मुड़ कर देखा — कुत्ता दुम हिला रहा था, स्नेह की अजस धारायें उसकी आंखों से टपक रहीं थीं। हम आगे बढ़ते गये। कोका कोला के डिब्बों के बराबर से निकलने लगे। वह श्वेत कुत्ता हमारे चारों ओर घूमघूम कर फिर हमारे आगे निकल जाता, फिर मुड़ कर देखता और रुक कर हमारी प्रतीक्षा करता, फिर कुछ दूर तक हमारे साथ-साथ चलने लगता। हमारे पहुंच जाने पर फिर एक बार हमारी परिक्रमा करके आगे बढ़ जाता।

'यह सफेद कुत्ता कब से हमारे साथ-साथ चल रहा है देखिये जी।'

'हां बन्जारे जहां सो रहे थे, उससे भी पहले से ही आ रहा है।'

रास्ते में हमारे एक परिचित मिल गये, दस-पन्द्रह मिनट ठहरकर हमने उनसे बातें कीं, फिर चलने लगे, कुत्ता तब भी हमारे पीछे आ रहा था, यानी वह भी चलते-चलते ठहर गया था। अब बाज़ार की दूकानों की कतार समाप्त हो गयी थी। रात का अंधेरा भी बढ़ चला था, सभी दूकानें बन्द हो चुकी थीं, एक मूंगफलीवाला ठेला लिए खड़ा था। हमने उससे 'सर्दी का मेवा करारी मूंगफली' ले लीं और खाते हुए घर की ओर चल दिये, घूमना पूरा हो गया था।

'तुम अब भी रोज़ गाय और कुत्ते की रोटी निकालती हो क्या ?' यह पूछने लगे तो मैंने कहा — 'मैं पहले तो नियमित रूप से निकाला करती थी, पर पिछले कुछ दिनों से ही बन्द कर दी हैं क्योंकि समय पर कोई कुत्ता तथा गाय मिलते ही नहीं हैं, खिलाऊं किसे? रोटियों का ढेर लगता चला जाता है।'

'नहीं, तुम तो अपने नियम से निकालां करो रोटियां, हम लोग घूमने तो आते ही हैं रोज़, चौराहे पर गाय भी बैठी रहती हैं, कुत्ते भी घूमते रहते हैं, दे दिया करेंगे।' 'चलिये, यह कुत्ता हमारे पीछे-पीछे तो आ ही रहा है, इसे घर तक लिये चलते हैं, अब भी कई रोटियां बची रखीं हैं, इसे खिला देंगे।'

उस कुत्ते को ज़रा-सा 'आ..आ..आ.. आ..' कहकर पुचकारा ही था कि वह बराबर दौड़-दौड़ कर साथ देने लगा, खुशी से उसकी आंखें चमकने लगीं, उसका उत्साह देखते ही बनता था। हमने घर लाकर उसे रोटियों के छोटे-छोटे टुकड़े करके देने शुरू किये। कुत्ता रोटी के टुकड़े को ज़मीन तक गिरने से पूर्व ही अपने मुख में लपक कर ले लेता था। जितने भी टुकड़े इधर-उधर घुमा-घुमा कर हमने फेंके, उसने सभी उचक-उचक कर अपनी कलाकारी दिखाते हुए खाये, वह बड़े ही शौक से खा रहा था, और उसे इस प्रकार खाते देख कर हमें बहुत आत्मसंतोष प्राप्त हो रहा था। ऐसा लगता था कि वह कभी किसी भलेमानुस

का पालतू कुत्ता रहा होगा, नहीं तो इतना समझदार कैसे होता ? बहरहाल, हमारे लिए तो वह सड़क का आवारा कुत्ता ही था जिसके गले में कोई पट्टा नहीं था और जिसे मांगने वाला या जिस पर हक जमाने वाला भी अब तक कोई नहीं आया था ।

सब रोटियां खिला चुके थे हम उसको, ये अन्दर चले गये थे, मैं भी सोने के लिए अलसाई और बेचैन हो रही थी, रात काफी बीत चुकी थी। सुबह जल्दी उठकर बच्चों को तैयार करके स्कूल भेजना था। मैंने कुत्ते से गेट के बाहर जाने को कहा ताकि मैं गेट पर ताला लगाकर सोने के लिए जा सकूं। पर वह जाता तब न ? वह वहां ही अड़ा खड़ा रहा, टस से मस भी नहीं हुआ। ज्यादा ठेलती तो बड़े जोर से गुर्राने लगता मानों कोई उसकी गद्दी छीन रहा हो। मुझे उससे बड़ा डर लगने लगा, झुंझलाहट तो हो ही रही थी कि नाहक मुसीबत गले बांध ली। मैंने अंदर जाकर उन्हें सब हाल बताया और अपने मेहमान को सम्मानपूर्वक विदा करने को कहा। जब उन्होंने उसे गेट से बाहर निकालना चाहा तो वह बड़े ही दयनीय भाव से 'कूं कूं' करके उनके पैरों से लिपट गया और सामने साष्टांग प्रणाम की मुद्रा में लेट गया, मानों विनती कर रहा हो, 'मुझे मत निकालो, मेरा आश्रय मुझसे मत छीनो, मैं तुम्हारे पैरों पड़ता हूं।' उसका दयनीय चेहरा, नेत्रों में भरे अश्रु देखकर हम दोनों का दिल भर आया, तरस आने लगा उस निरीह पशु पर जो बोल नहीं सकता, अपनी मूक-व्यथा केवल संकेतों एवं नयनों से ही व्यक्त कर सकता था। पर हम भी क्या करते ? सोचने लगे – 'आखिर, कुछ भी हो, है तो सड़क का कुत्ता ही, बच्चों का घर है, कल को किसी को काट ही लेवे, उसे बाहर करना ही ठीक है।' अतः हमने उसे बलपूर्वक डण्डे के ज़ोर से बाहर निकाल कर, गेट पर ताला बन्द कर लिया।

अगले दिन बड़े सवेरे जब मैं सोकर उठी तो सबसे पहले बाहर जाकर नित्यप्रति की भांति गेट पर लगा ताला खोलने गयी ताकि दूधवाला, अखबारवाला, महरी आदि लोग अन्दर आ सकें। जैसे ही बाहर निकली, देखा वही कुत्ता गेट के सामने खड़ा है, मुझे बाहर आते देखकर वह बड़े स्नेह एवं आशा भरी निगाहों से देखते हुए अपनी दुम हिलाने लगा, और जैसे ही मैंने गेट खोला, वह लपक कर भीतर आ गया और मेरे पैरों से लिपट गया। अपने को उससे छुड़ा कर जैसे-तैसे मैं अन्दर चली गयी थी, सारा काम यूं ही पड़ा था, सुबह के समय तो गृहिणी को दम मारने की फुरसत भी कहां मिल पाती है ? वह वहीं पर बैठा रहा, तब दोपहर के समय हमने उसे रोटी बनाकर खिला दीं, पर जब लगने लगा कि वह हमारे घर का द्वार छोड़कर अन्यत्र कहीं क्षण भर के लिए भी जाना ही नहीं चाहता है तो एक तरह से विवश होकर उसे हमने अपने घर में आश्रय दे ही दिया और उसके रहने-खाने का भार वहन करना स्वीकार कर लिया।

एक दिन की बात है, हम दोनों सदा की भांति रात के समय घूमने जा रहें थे। उसे हम 'मोती' कह कर पुकारने लगे थे क्योंकि

उसका रंग मोती के समान ही शुभ्र श्वेत था और मन मोती की छीन-सा उज्ज्वल और पवित्र। मोती हमारे पीछे-पीछे चलने लगा, वह नित्य इसी प्रकार हमारे साथ घूमने जाया करता था, यही नहीं दिन में भी मैं कहीं अकेली जाती तो वह मेरे पीछे-पीछे साये की नाईं चलता रहता। कई बार तो बाजार में पहुंच कर दूकानों में मेरे साथ अन्दर घुस जाने पर लोगों ने उसके वहा प्रवेश कर आपत्ति भी की थी। लोग, दूर से ही उसे देखकर 'देखा फलां साहब का कुत्ता जा रहा है' कहने लगे थे। हां, तो हम घूमने जा रहे थे और मोती हमारे पीछे-पीछे चल रहा था। वह अमावस्या की काली अंधियारी रात थी, सड़क पर लगीं नियोन लाइट्स भी जल नहीं रही थीं, हां हम अपने साथ टार्च अवश्य ले जाते थे। बातें करते हम मस्ती भरी चाल से चल रहे थे। खाना खाने के पश्चात यों भी चलने में थोड़ा आलस्य तो आता ही है। अचानक मोती आकर इनके पैरों से लिपट गया, उसे 'मोती हट... मोती हट तो' कह कर इन्होंने पैरों से अलग करने की कोशिश की तो उसकी पकड़ इनके पैरों पर और भी अधिक मजबूत हो गयी। उसे हमने उसकी इस अभद्रता के लिए जोर से डांटा तो वह बड़ी अजीब सी दयनीय मुद्रा में 'कूं...कूं...कूं...कूं' करके घिघियाने लगा मानों कुछ विनती कर रहा हो। अब हमें भी लगने लगा था कि अवश्य कोई बात है जो मोती इस प्रकार का व्यवहार कर रहा है, बेचारा मूक प्राणी मुंह से तो कुछ बोल नहीं सकता और किस प्रकार अपनी बात व्यक्त करे? वह अपनी भाषा में ही कुछ आवश्यक संदेश देना चाह रहा है। हमने टार्च को चारों ओर घुमाया तो देखा - हमसे दस-पन्द्रह कदम आगे ही कोई गज़ भर लम्बा काला भुजंग कोबरा फन उठाये बैठा है, उसकी काली चमकीली आंखें व चिकना चितकबरा कलेवर दूर से ही चमक रहा है, इतने बड़े काले सांप को वहां इस प्रकार बैठा देखकर हम अवाक् रह गये, और उस कुत्ते की समझदारी, वफादारी, निष्ठा तथा हमारी रक्षा करने की आतुरता एवं प्रयत्न पर हम अभिभूत हो गये और तुरन्त ही पलट कर घर की ओर चल दिये। वह कुत्ता नहीं हमारे लिए देवदूत बनकर प्रकट हुआ था, तभी हर समय एक संरक्षक की भांति हमारे साथ-साथ चलता रहता था।

इसके पश्चात् एक बार की बात है, हमारे घर में रात के समय चोरों ने कई तरफ के जाली के द्वार तोड़ डाले थे, दरवाजों व खिड़कियों को बाहर से कुंडी लगाने के स्थान से काट कर कुंडियां खोलने की कोशिश की

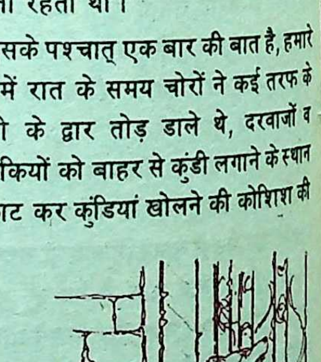

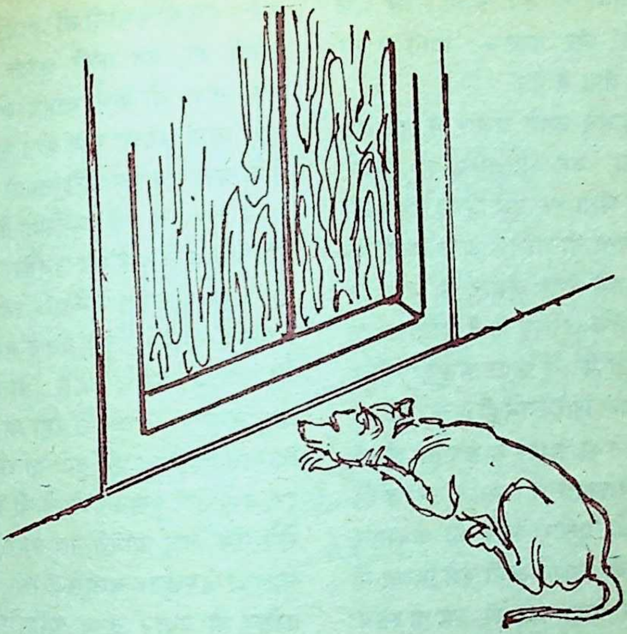

गयी थी। सर्दियों के दिन थे इस कारण मोती को बाहर के बरामदे में न छोड़कर हमने घर के अन्दर ही रखा हुआ था। सोते-सोते मुझे लगा था कि मोती भौंक रहा है और बड़ा परेशान-सा है। वह सभी कमरों में तेज़-तेज़ कदमों से चक्कर लगाता और ज़ोर-ज़ोर से भौंकता हुआ घूम रहा था, जैसे बड़ा ही बेचैन हो रहा हो कि कोई उठता क्यों नहीं, जागता क्यों नहीं? मेरी आंखें खुल गयी थीं, हमने बिजली जलाई आपस में इस विषय में बात कर ही रहे थे, पूरी बात समझ में आयी भी नहीं थी। जाग हुई जान कर चोर भाग गये थे, यह तो हमें बाद में सुबह उठने पर ही पता लगा था। उस दिन यदि हमारे जागने में थोड़ा-सा भी विलम्ब हुआ होता तो अवश्य ही चोर न केवल सामान ही ले जाते अपितु हम लोगों की जान को भी नहीं बख्शते, कारण बाहर हमें व पुलिस को उनके कुछ औज़ारों के साथ ही एक बड़ा-सा छुरा व कुछ बल्लम कार के नीचे रखे हुए मिले जिन्हें वे भागने की शीघ्रता में असावधानीवश छोड़ गये थे। उसी रात तो उन्होंने हमारे घर से भागने के पश्चात् हमारे पास के दो अन्य घरों में भी चोरी की थी। इस सब कार्यवाही के समय मोती की काली कजरारी, काजल का आभास देती बड़ी-बड़ी आंखों में ऐसी प्रसन्नता झलक रही थी कि देखते बनता था, पूरे समय वह हमारे पास ज़ोर-ज़ोर से दुम हिलाता, लिपटता, चिपटता खड़ा रहा था, मानों बताना चाह रहा हो कि उसने अपना कर्तव्य

ठीक़ से निभाया है न? हमने उसे गले लगाकर चूमा और कहा – 'मोती तू तो हमारा सच्चा मीत है रे!'

मोती को हमने कभी जंजीर से बांधकर नहीं रखा था, वह तो स्वयं ही हमारे स्नेह-बंधन में बंधा था, उसे किसी बंधन की क्या आवश्यकता थी भला? अन्य कुत्तों की भांति न ही हमें उसे जंजीर में बांधकर सुबह-शाम शौच के लिए ही ले जाना पड़ता था, वह स्वयं ही गेट के ऊपर चढ़कर बाहर निकल जाता और फिर स्वयं ही अन्दर भी आ जाता था। घूमने वह हमारे साथ जाता ही था अपनी स्वयं की इच्छा से। हमने उसे कभी अपने कमरों के अन्दर आने की अनुमति प्रदान नहीं की थी; उसने कभी इस विषय में कोई अनधिकार चेष्टा नहीं की, वह तो स्वयं ही सदैव प्रवेशद्वार पर बैठा या लेटा रहा। सर्दियों में अवश्य उसे अन्दर के बरामदे में बिछावन बिछाकर बिठा देते थे। जो खाने को देते थे, वही वह खुशी-खुशी खा लेता था।

एक बार हम लोग छुट्टियों में बाहर जा रहे थे तो 'मोती' का प्रश्न उठा। आपस में विचार विमर्श के पश्चात् यह तय पाया कि वह जहां चाहे रहे पर खाने के लिए दोनों समय की रोटियां हमारे पास रहने वाली पड़ोसिन बनाकर उसे दे दिया करेंगी। जिस दिन शाम को रेलगाड़ी से हमें जाना था, हमने अपना घर बन्द कर दिया और मोती को समझा दिया कि तुम्हें बराबरवालों के घर रहना है, खाना भी वहीं खाना है। हम लोग बाहर खड़े दो तिपहिया स्कूटरों में सामान रखने एवं बैठने लगे। इस बीच मोती की छटपटाहट देखते ही बनती थी, वह कभी अन्दर आता हमारे साथ-साथ, तो कभी बाहर जाता सामान के साथ मानों पगला गया हो। उसके कुछ ही क्षणों बाद जब हम ताले लगाने लगे घर में तो हमने देखा कि वह पड़ौसियों के घर के खुले ज़ीने से ऊपर चढ़ कर उनकी ऊपर की छत पर खड़ा होकर हमें निहार रहा है और दुम हिला-हिला कर, कूं कूं करके बड़ी जोर-जोर की आवाजें निकाल रहा है... वह रो रहा था... हिचकियां ले ले कर रो रहा था... बेचैन था कि उसे छोड़कर हम क्यों जा रहे हैं! उसकी इस दशा को देखकर बच्चे भी ज़ोर-ज़ोर से रोने लगे, सच मानिये उस समय, हमें स्कूटर चालकों से स्कूटर चलाने के लिए कहना बड़ा कठिन हो गया। कण्व ऋषि के आश्रम से मानों शकुन्तला की विदाई हो रही हो – ऐसा दृश्य उपस्थित हो गया।

छुट्टियों से वापस आने पर हमारे पड़ौसियों ने बताया था कि मोती को लाख-लाख लालच देने पर भी वह उनके घर में घुसा भी नहीं, बस आंखें मूंदे हमारे घर के बन्द दरवाज़े की चौखट पर ही पड़ा रहता थी। रोटी खिलाने के लिए बीच की दीवार के दूसरी और खड़े होकर आवाज देते तो भी वह आंख तक उठा कर ऊपर नहीं देखता था। हमारे घर के बाहरी गेट पर ताला लगा था अतः बार-बार ताला खोल कर अन्दर आना उनके लिए संभव नहीं था। वह गेट के बाहर से ही हाथ बढ़ा कर रोटियों के टुकड़े डाल देती थीं, पर मोती था कि रोटी खाने का नाम ही

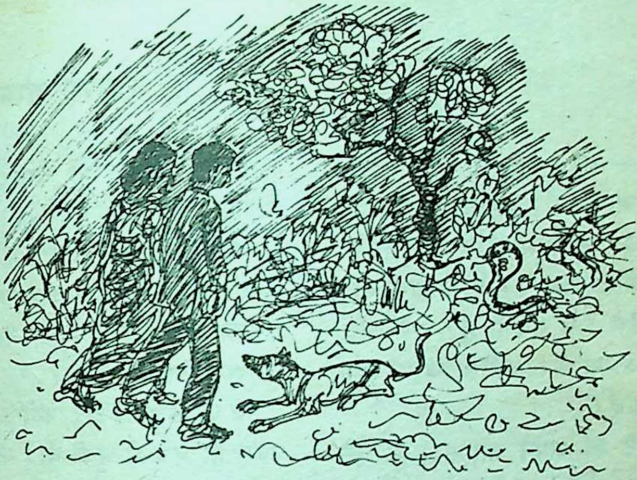

नहीं, यों ही आगे के दोनों पैरों पर अपना सिर रखे उदास-सा बैठा रहता था। जब हम छुट्टियों की सैर से वापस घर लौटे तो मोती की प्रसन्नता का पारावार नहीं था, उसका हमारे आगे-पीछे दौड़ना, उसकी चमकती आंखें, उसकी एक-एक मुद्रा से उसकी खुशी व्यक्त हो रही थी – मानों न जाने कितने जन्मों से बिछुड़े प्रेमी आ मिले हों।

पर आज! उसी साथी, प्राणरक्षक, स्नेही के मुख से झाग बह रहे हैं, वह निढ़ाल पड़ा है। डाक्टर जवाब देकर चले गये हैं। उसकी आंखों से अविरल अश्रु में ममता, दया और प्यार का सागर उमड़ा पड़ रहा है और हम असहाय से उसके सिर व शरीर पर हाथ फेरते हुए उसके समीप बैठे हैं। हमें लग रहा है जैसे आज हमारे परिवार का कोई अनन्य सदस्य, हमारे शरीर का अभिन्न अंग हमसे बिछुड़ रहा है और हम उसे रोक भी नहीं पा रहे। कैसी विवशता है ये? अरे! हमारा मोती क्या कोई सड़क का साधारण कुत्ता है! नहीं, अवश्य ही वह हमारे पूर्वजन्म का कोई साथी है, जिसने हमें इस दुनियां में फिर से खोज निकाला, पर हमारा दुर्भाग्य! हमने उसे आज फिर से खो दिया है! ईश्वर उसकी आत्मा को शान्ति प्रदान करे।

**– 'आस्था', ५ बी २० तलवंडी,**
**कोटा - ३२४ ००४.**

□

# बलिदान

☐ कमला शंकर त्रिपाठी

'मां – मां। मैं भी मेला देखने जाऊंगा,' कहता हुआ एक बालक दौड़कर अपनी मां से लिपट जाता है।

'नहीं-नहीं मेरे लाल। मैं तुम्हें इतनी भीड़ में अकेले कैसे भेज सकती हूं? मेरे चांद, हमारा कोई अपना भी तो नहीं है, जिसके साथ मैं तुम्हें भेज दूं।'

मां ने बेटे को अपने बाहुपाश में ऐसे आबद्ध कर लिया जैसे कोई मादा पक्षी अपने बच्चे को डैनों में छिपा लेती है।

'नहीं-नहीं मैं साई बाबा का मेला देखने जरूर जाऊंगा,' बालक नें ठुनकते हुए कहा – 'जाओ – मैं तुम्हारा 'लाल' भी नही बनूंगा और चांद भी नही।'

'अरे, ! रूठ गया मेरा लाल ! अच्छा आओ मेरे सीने से लग जाओ मेरा चांद मेला देखने जरूर जायेगा।' मां ने मुस्कराते हुए अपनी प्रगाढ़ बांहें फैला दीं।

'वाह मां! अब तो मै तुम्हारा लाल भी बनूंगा और चांद भी।' यह कहता हुआ बालक ममता के शीतल जलाशय में समा गया।

साक्षात् ममता के फैले हुए हाथ बालक के चतुर्दिक ऐसे सिमट गये, जैसे अथाह जलराशि किसी भी वस्तु को अपने में तिरोहित कर लेती है।

बालक भी आनन्दागार में समाधिस्थ हो गया। बेटे का रूठना और फिर मां के द्वारा उसका मनांया जाना कितने नैसर्गिक आनन्द की अनुभूति कराता है।

मां की समाधि टूटी, क्योंकि बेटे की तन्द्रा पहले ही भंग हो चुकी थी। मां की कमर से लिपटा वह कह रहा था –

'मां! मैं कौन-से कपड़े पहन कर मेला देखने जाऊंगा? मेरे पास तो नये कपड़े भी नहीं हैं। सब लोगों के पास तो नये-नये कपड़े हैं – दादू, बंटी, पिन्कू और मोहसिन के पास भी – मैं अभी देखकर आ रहा हूं।'

बालक ने अपनी मां की प्रतिक्रिया जानने के लिए जैसे ही अपना सर उठाया वह चौंक पड़ा।

'अरे मां! तुम रो रही हो। अच्छा – अब समझा। मां, तुम मत रोओ। मैं मेला देखने नहीं जाऊंगा और मुझे नये कपड़े भी नहीं चाहिये।'

अभावग्रस्त जीवन यापन करते हुए शायद बालक अपनी उम्र से कुछ अधिक ही प्रखरता प्राप्त कर चुका था।

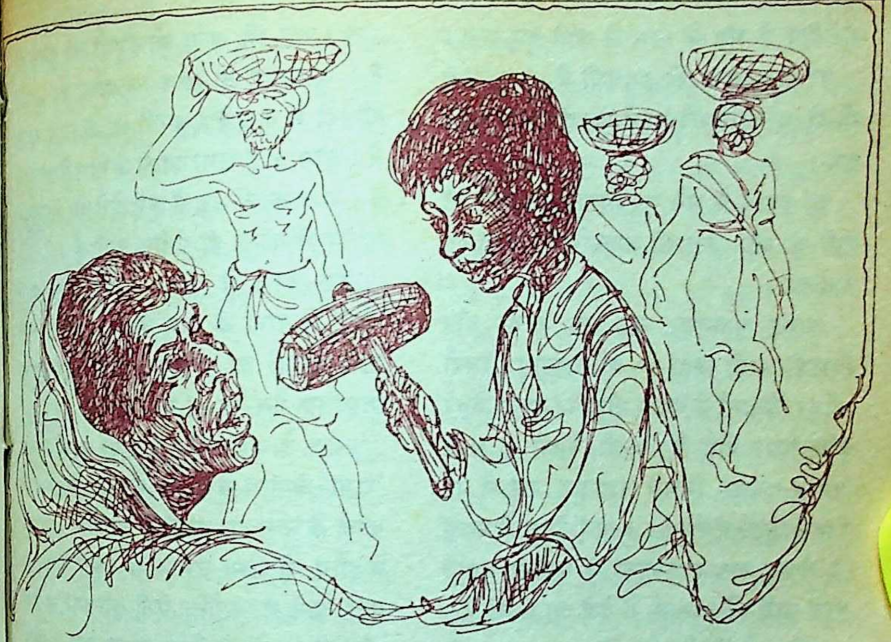

मां का हृदय हाहाकार कर उठा। उसने सोचा – इस नन्हें से बालक को क्या पता कि यह दर्द के आंसू नहीं हैं, अपितु ममता का प्रवाह है, जो प्रेम का आश्रय पाकर बह निकला।

'नहीं बेटा! तुम मेला देखने जरूर जाओगे। मैं अपने लाल को अभी नये कपड़े पहनाऊंगी। पहले तुम्हें अपने हाथों से खाना तो खिला दूं – आज मैंने अपने बेटे के लिए गेहूं की चपातियां और गुड़ की खीर बनायी है।'

'वाह मां! तुम कितनी अच्छी हो? पर मां, आज मैं अपने हाथों से खाना खाऊंगा।'

'क्यों? मेरे हाथों से अच्छा नहीं लगता?'

'नहीं यह बात नहीं है, पर क्या मैं अभी भी बच्चा ही हूं?'

'मेरे लिए तो तुम सदा बच्चे ही रहोगे, मेरे चांद,' मां ने बेटे के सिर पर प्यार से हाथ फेरते हुए कहा।

'वाह मां, आज तो मैं जी भर कर खाऊंगा। मुझे डाक्टर बन जाने दो फिर हमारे यहां रोज ऐसा ही खाना बना करेगा, तब मैं तुम्हें अपने हाथों से खिलाऊंगा। मां! आज तुम चुप क्यों हो? हमारे साथ तुम भी खाओ न।' बालक अत्यधिक उल्लास में था।

'नहीं, बेटा कुलदीप। पहले तुम्हें खिला दूं, फिर मैं खा लूंगी।' उसने एक निवाला

कुलदीप के मुंह के पास ले जाते हुए कहा।

परन्तु बालक की हठधर्मी के कारण उसे भी दो-चार निवाले अपने मुंह के हवाले करने पड़े।

मां प्यार से सने हुए निवाले खिलाये जा रही थी और बेटा भी आत्मविभोर हुआ जा रहा था।

व्यस्त महानगर की एक गन्दी और पिछड़ी बस्ती, जहां पर अधिकांशतः रिक्शे और तांगेवालों के बेबस और पिटे हुए से चेहरे दृष्टिगोचर होते हैं। इन्ही चेहरों के मध्य तमाम मजदूर, जिनमें जमादार, सड़कों पर गिट्टी कूटने वाले और कुलीगीरी करने वालों से लेकर कल-कारखानों में पसीना बहाने वाले साये भी आसानी से देखे जा सकते हैं।

मक्खियों की तीव्र भिनभिनाहट, बदबू की भभक और अजीब शोर-शराबे के बीच स्थित अनेकानेक जर्जर झोपड़ियां भारत की स्थिति का चित्रांकन करती हुई सी प्रतीत होती हैं।

सायंकाल के समय इन झोपड़ियों के ऊपर आकाश का नीलापन धुएं की प्रगाढ़ता के कारण कालिमापूर्ण हो जाता है। घुटनों तक बढ़े हुए पेट वाले बच्चे, खैराती नलों में पीने के पानी के लिए झगड़ती हुई पीतवर्णा स्त्रियों तथा मदिरा पीकर उन्मत्त हुए पुरुषों का भीषण कोलाहल — यही तो है यहां का वातावरण और इनकी दैनिकचर्या भी।

इसी वीभत्स पर दयनीय वातावरण की एक गली में स्थित झोपड़ी ठीक वैसी ही है, जैसे कांटों के मध्य मुरझाया हुआ गुलाब का पुष्प। यह भी अन्य झोपड़ियों की तरह ही है। अन्तर है तो मात्र स्वच्छता का। इसी झोपड़ी में कुलदीप अपनी मां के साथ रहता है। लोग उन्हें रामा काकी के नाम से पुकारते हैं। रामा काकी उम्र में कम होते हुए भी अपने शरीर से काकी ही प्रतीत होती हैं।

इस जगत में जीवन यापन करने वाले लोगों के नामों के साथ वार्धक्य प्रकट करने वाले शब्दों का असमय में ही जुड़ जाना प्राकृतिक देन-सा हो गया है।

आज से कुछ वर्ष पूर्व रामा काकी केवल 'रामा' के नाम से ही अपने पति प्रकाश और बच्चे के साथ इस बस्ती में आयी थीं। शायद ये लोग भी सभ्य समाज से अलग होकर ही यहां आये थे, क्योंकि ऐसी बस्तियां अनाथों और बेसहारों के लिए अपना दामन सदैव फैलाये रखती हैं।

धन्य है, ऐसी बस्तियां, जो निर्जीव होती हुई भी सुकोमल हृदय की स्वामिनी होती हैं।

इसी बस्ती की छांव तले यह परिवार मन्थर गति से आगे बढ़ रहा था। रामा काकी सड़कों पर गिट्टी कूटने का कार्य करती थी और प्रकाश सड़कों पर तारकोल बिछाने का।

समय अपनी स्वाभाविक गति से बढ़ता रहा। उसने अपने पीछे छूटने वालों का सदा की भांति इंतजार नहीं किया।

जीवन के अनेक घुमावदार मोड़ों से गुजरते हुए इस परिवार पर अचानक बज्राघात हो गया।

सदा की भांति उस दिन भी प्रकाश सड़क

पर तारकोल बिछाने का कार्य कर रहे थे। वे आवश्यक सुरक्षा से युक्त होकर तारकोल बिछा रहे थे कि वह मनहूस घड़ी आ गयी, जब गर्म तारकोल से भरी ड्रम उन पर उलट पड़ी थी।

अनेक कोशिशों के बावजूद भी उनको बचाया नहीं जा सका। अस्पताल में ही अपने अन्तिम समय में उन्होंने रामा काकी से कहा था।

'मैं जा रहा हूं– रामा! कुलदीप को डाक्टर बनाने का मेरा सपना सा का...' और तभी उनकी आत्मा बन्धनमुक्त हो गयी थी।

रामा काकी तभी एक सफलव्रती की भांति इस व्रत को पूर्ण करने में रत हैं।

समय रूपी पंछी ने अपने अनेक पंख झाड़ दिये पर रामा काकी अपने उद्‌देश्य की डोर से बन्धी हुई उसके परिवर्तन से अप्रभावी ही रहीं।

* * *

भीषण जन कोलाहल और धूल के उठते हुए बादलों से वातावरण पूर्णतः आच्छादित-सा हो रहा था। इस कोलाहल में बच्चों की आमोद पूर्ण चीखें, दूकानदारों की विभिन्न बोलियां, वाहनों से उत्पन्न शोर और व्यक्तियों की हेल-पेल वातावरण में एक प्रकार का तीखापन उत्पन्न करते थे। महानगर के मध्य में प्रतिवर्ष लगने वाला साईंबाबा का मेला अपने में अपूर्व था।

विस्तृत क्षेत्र में लगने वाला यह मेला दूकानदारों का मसीहा, कागज के रंगबिरंगे टुकड़ों पर चलने वालों के लिए – आमोद स्थली तथा जीने भर खाने वालों के लिए एक आश्चर्य होता है।

मेला इस समय अपने पूर्ण यौवन पर चल रहा था। सभी लोग अपनी-अपनी मनपसन्द वस्तुओं पर झुके हुए थे। जेबें खाली हो रही थीं, और उसके बदले में पेट भर रहे थे।

इसी रंग-बिरंगी दुनिया में कुलदीप की स्थिति ठीक वैसी ही थी, जैसे नक्षत्र-मण्डित आकाश के मध्य कोई बादल का टुकड़ा।

ऐसी तो होती है न धनवानों के बीच टिकी गरीब की झोपड़ी? कैसी भी होती हो, जीना तो पड़ता ही है बेचारी को, कुलदीप भी सबके मध्य घूम रहा था। उसके शरीर पर इस समय साधारण सूती कपड़े के बने कुर्ता और पाजामा तथा जेब में थे दस पैसों के दस सिक्के, जिन्हें रामा काकी ने अत्यधिक यतन व विशेष प्यार से संचित किया था, उसकी जेब में पैसों की पोटली डालते हुए काकी ने कहा था – 'बेटा! मेले में कहीं भटक न जाना। शीघ्र ही वापस आना और वहां कोई अच्छी चीज लेके खा लेना।'

'अरे मां! तुम चिन्ता क्यों करती हो? बस मैं गया और आया पर, तुम कहती हो कोई अच्छी चीज लेके खा लेना, सो अब इससे अच्छी और कौन चीज हो सकती है, जो तुमने अभी खिलायी थी,' उसका इशारा खीर व चपातियों की ओर था।

बालसुलभ चांचल्य से रामा काकी हंस पड़ी थी और बेटे के सिर पर हाथ फेरते हुए कहा था।

'जा बेटे, जल्दी आना। एक मां के

आशीर्वाद की छांव तेरे सिर पर हमेशा मण्डराती रहेगी।'

कुलदीप उछलता हुआ घर से निकल गया था और वे नित्य की भांति चली गयी थीं – सड़क पर गिट्टी कूटने।

कुलदीप मेले की गलियों को छान रहा था। वह पूर्ण विस्मय से चारों ओर देख रहा था। हर तरफ रंग-बिरंगे खिलौनों की भरमार थी। कोई हाथी ले रहा था तो कोई बांसुरी और कुछ बच्चे टी.वी. और टेलीफोन पर ही बलिहार हुए जा रहे थे।

कुलदीप के मन में भी एक खिलौना लेने की उत्कण्ठा जागृत हुई। ठीक उसी समय पास ही कोई गुब्बारा जोरों से फट पड़ा। कुलदीप ने सोचा, भला ऐसे खिलौने किस काम के, जो मेले में ही नष्ट हो जायें और वह आगे बढ़ गया।

इस समय वह काठ की गली, कपड़े की गली तथा बर्तनों की गली से गुजर रहा था, पर यहां से उसे कोई अच्छी चीज नहीं दिखायी दी। इस समय वह लोहे की गली से गुजर रहा था, अचानक उसकी नजर एक दूकान पर रखी हुई हथौड़ी पर पड़ी।

उसकी आंखों के सामने अपनी मां की टेढ़ी-मेढ़ी व दर्द करती उंगलियों की तस्वीर नाच उठी, जो ईंट से ही गिट्टी कूटने के कारण ऐसी हो गयी थीं। उसने सोचा यदि यह हथौड़ी ले ली जाय तो मां की उंगलियों में चोट नही लगेगी। इसी उद्देश्य से उसने दूकानदार से पूछा – 'यह हथौड़ी कितने की है?' 'दो रुपये की' उसने उत्तर दिया।

बेचारे कुलदीप का मुंह उतर गया फिर मां के दर्द का ध्यान कर उसने दुबारा कहने का साहस किया –

'मेरे पास तो एक रुपया है।'

'लाओ निकालो,' उसने कहा और हथौड़ी उसे दे दी।

अब कुलदीप का मेला हो चुका था। सिक्कों की पोटली तो हथौड़ी के रूप में अब उसके कन्धे पर आ बिराजी थी।

वह सोच रहा था – अब मां की उंगलियों में कभी चोट नही लगेगी। उसके पैर अपनी मां से मिलने के लिए बेताब थे।

सड़क के किनारे गिट्टियों के ढेर पर बैठी रामा काकी सामने से गुजरती भीड़ में अपना बेटा तलाश कर रही थी। वह बार-बार बेचैन होकर सोचने लगती – न जाने अभी तक कुलदीप क्यों नहीं आया? अब तक तो उसे आना चाहिए। 'हे भगवान! उस अबोध बालक की रक्षा करना।' वो ऊपर की ओर हाथ जोड़कर कहती, फिर अपने कार्य में लग जाती।

ऐसे ही एक बार, भीड़ से हटकर चलता हुआ उन्हें कुलदीप दिखायी पड़ गया। पागल-सी हो रही रामा काकी ने दौड़कर उसे अपने सीने से चिपटा लिया। जैसे ही उद्वेग कुछ कम पड़ा, उन्होंने बेटे का मुख चूमना चाहा, तभी वे चौंक पड़ीं।

'बेटा! यह तुम्हारे हाथ में क्या है?' उनके मुख से सहसा निकला।

'मां! तुम्हारी उंगलियों में रोज चोट लग जाया करती थी न, सो मैं यह हथौड़ी ले आया

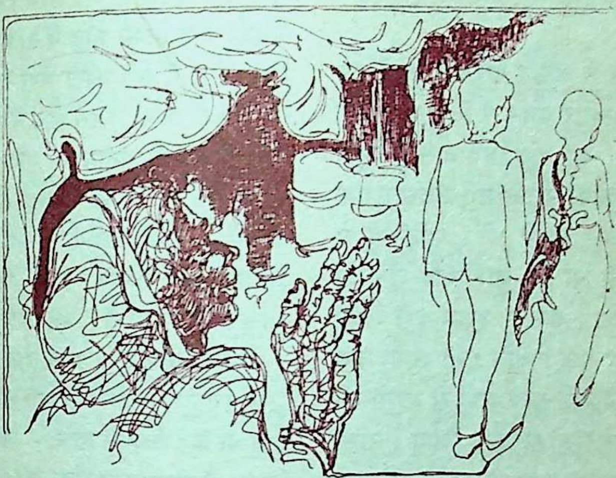

हूं – अब तुम इसी से गिट्टी कूटना – तो चोट नहीं लगेगी।' कुलदीप ने चहकते हुए कहा।

रामा काकी ने उसे और जोरों से भींच लिया। उनकी आंखों से अविरल अश्रुधारा बह रही थी।

* * *

मानव जीवन जलप्रवाह की भांति प्रवहशील होता है, जिस प्रकार जल की गति उसके उतार में निहित होती है, उसी प्रकार जीवन की गति भी निर्धारित होती है, परन्तु यह शाश्वत नहीं होती। उतार के पश्चात् चढ़ाव और चढ़ाव के पश्चात् उतार – यही तो है प्रकृति का नियम और इसी में ही गति का अस्तित्व भी अन्तर्निहित होता है।

रामा काकी का सीमित परिवार भी प्रकृति के नियमों की डोर से आबद्ध ही रहा, इस बीच प्रकृति ने अनेक बार अपना वाह्य परिवेश परिवर्तित किया। प्रत्येक पतझर के बाद बसन्त का आगमन होता रहा, परन्तु कभी-कभी ऐसा होता है जब पतझर की घड़ियां कभी समाप्त ही नहीं होतीं और बसन्त का आगमन मात्र यादों में ही होता है।

रामा काकी के पतझड़ युक्त जीवन का बसन्त कुलदीप आज उनकी यादगार तक ही सीमित रह गया था। वह अपने बेटे की मधुर छवि केवल अपने हृदय के झरोखों से ही निहार सकती थीं, दृष्टि लाभ से वे वंचित थीं – क्योंकि इधर चार-पांच वर्षों से

कुलदीप ने [illegible] दिया था और न किसी प्रकार का पत्र-व्यवहार ही किया था। अब उनके हाथों में सिलायी मशीन आ गयी थी, जो आय का मुख्य स्रोत थी।

रामा काकी ने कठिन परिश्रम करते हुए कुलदीप को डाक्टर बनने के लिए महानगर भेज दिया था। वह, वहां छात्रावास में रहता था और रामा काकी उसके लिए प्रतिमास एक धनराशि भेजती रहती थीं। छुट्टियों में कुलदीप अपनी मां का आशीर्वाद लेने आ जाया करता था। क्रमशः इसमें दूरी आती गयी और फिर एक स्थिति ऐसी आयी जब उसने लगातार चार-पांच वर्षों से बस्ती की ओर से अपना मुख ही मोड़ लिया। रामा काकी प्रतिदिन भगवान् से अपने बेटे की सफलता व कुशलता के लिए प्रार्थना करती रहीं।

कुलदीप अब डा. कुलदीप बन गया है। वह लोगों को जीवन-दान देता था। वह इन्सान के रूप में मसीहा है, परन्तु उसने कभी यह मालूम करने की कोशिश नहीं की कि एक रोगग्रस्त मां, जिसकी औषधि वह स्वयं है — उसकी याद में तड़प रही होगी।

क्या गुरुता आने पर व्यक्ति उर्ध्वगामी हो जाता है, जबकि प्रकृति का नियम तो इसके विपरीत है।

फिर ऐसा क्यों?

शायद यह समय के बदले हुए प्रारूप से संलग्न कोई कड़ी होगी, अथवा नये युग की नयी मान्यता!

रामा काकी अन्दर से घुल रही थीं। उनके अरमानों की होली जल रही थी। कभी-कभी वे अपने भूतकाल के विषय में सोचती रहती थीं। इस समय भी वह सोच रही थीं — कहीं उनका बेटा किसी भीड़ में तो नहीं खो गया? जिस भीड़ ने उसे कांटों भरा रास्ता अपनाने पर विवश किया, जिस भीड़ ने उसके पति को यम लोकगामी बनाया — यदि उसी भीड़ ने उसके बेटे को भी छीन लिया हो तो वह क्या करेगी — कहां जायेगी — किससे पूछेगी? आखिर यह समाज उसके पीछे हाथ-पैर धोकर क्यों पड़ा हैं? वह सोच रही थीं।

उनके विचारों ने एक नया मोड़ लिया। उन्हें स्वयं से ग्लानि-सी होने लगी। क्या वह एक मां है? उन्होंने सोचा — जो अपने बेटे के विषय में इस प्रकार सोच रही है, उसे तो बेटे की मंगल कामना करनी चहिए। शायद कार्य की अधिकता के कारण वह न आ सका हो अथवा छुट्टी न मिली हो। अब उनके चेहरे पर कुछ सन्तोष के लक्षण स्पष्ट हो रहे थे।

वह पुनः मशीन चलाने लगीं।

सन्ध्या का समय था। पश्चिम दिशा सूर्य की अरुणिमा से अरुणिम हो रही थी। पक्षी-कुल का कलरव दिन समाप्ति की सूचना दे रहा था। इसी कलरव में पिछड़ी बस्ती के नग्न-अर्धनग्न बच्चों का कोलाहल भी मिश्रित हो गया।

वे धूल उड़ाती हुई एक खूबसूरत कार के पीछे-पीछे चिल्लाते हुए दौड़ रहे थे। चलती हुई वह कार रामा काकी की झोपड़ी के सामने रुक गयी। मशीन पर झुकी हुई काकी का

ध्यान भी भंग हुआ। जैसे ही उन्होंने सर उठाया, चौंक पड़ीं –

रामा काकी ने क्षणभर में ही विश्व की तमाम खुशियों को पुंजीभूत होकर अपने दामन में गिरते देखा और देखा आनन्दातिरेक में नृत्य करते हुए आकाश-धरती-चांद और सितारों को।

आज उनका बेटा डा. कुलदीप के रूप में – बेशकीमती कपड़ों में लिपटा उनके सामने था और उसके बायीं ओर खड़ी थी एक खूबसूरत, सुसज्जित अप्सरा।

मां का यह शाश्वत आनन्द देर तक न टिक सका – क्योंकि बेटे ने उसे पुनः वापस इस लोक में खींच लिया था। वह चहकते हुए कह रहा था –

'मां! यह है मोना – हमारी पत्नी। हम दोनों ने बाकायदा लवमैरिज की है – और मां हम दोनों ने डाक्टरी की डिग्री भी एक ही कालेज से ली है।'

'अरे मोना! तुम मां से आशीर्वाद तो लो,' यह वाक्य उसने मोना की और देखते हुए कहा।

डा. मोना के कोमल हाथ रामा काकी के पैरों तक पहुंच भी न पाये थे कि उन्होंने मोना को हाथों में उठा लिया और तभी मां का सुलभ किन्तु महान आशीर्वाद फूट पड़ा।

'बेटा! तुम दोनों सदा फूलो – फलो, ईश्वर करे तुम्हारे रास्ते के कांटे मेरे दामन में आ जायें। पुनः वे फूल बनकर तुम्हारी राहों में बिछ जायें', उनके हाथ बहू-बेटे के सिरों पर फिर रहे थे।

क्षणिक निस्तब्धता कुलदीप ने भंग की।

'मां! अब हम यहां नहीं रहेंगे – तुम भी हमारी शहरवाली कोठी में रहोगी। चलो – जल्दी करो। यह सामान बस्ती वालों को बांट दो।' उसने झोपड़ी के अन्दर रखे हुए सामान की ओर उपेक्षा से देखकर कहा।

'बेटे। आज तुम्हारे पास जो कुछ भी है – वह सब इसी बस्ती की ही कृपा थी, फिर आज इस हालत में क्या हमें इसे छोड़ देना उचित है, जबकि इसने गाढ़े वक्त में साथ दिया था – इसके लिए अब हमें भी कुछ करना था।'

'खैर जैसी तुम्हारी मर्जी, पर मैं तो इस सड़न में नहीं रह सकता – तुम्हारे लिए मेरी कोठी सदा खुली रहेगी। जब इस बस्ती के लिए कुछ कर लेना तब चली आना।'

'चलो मोना! देर हो रही है – वहां मरीजों की भीड़ लगी होगी।' डा. कुलदीप ने मोना का हाथ अपने हाथ में लेकर तेजी से पीछे घूमते हुए कहा।

लोगों ने सुना, रामा काकी आशीर्वाद की मुद्रा में बड़बड़ा रही थीं – 'जाओ बेटा! मानव सेवा से बढ़कर कोई धर्म नहीं होता है – मैंने भी उनका सपना 'साकार' कर दिया....' उनके चेहरे पर इस समय पूर्ण गम्भीरता एवं आशा विद्यमान थी।

**– ३६२, निराला नगर,**
**रायबरेली, उ.प्र.**

○

# वे क्षण

☐ **डॉ. दीपा त्यागी**

छाती में घुटते गर्म धुएं का गुबार जब धीरे-धीरे छाती से उठ कर मेरे गले में आ अटका, तो मेरा लेटे रहना मुश्किल हो गया, उठ कर बैठ जाने की इच्छा हुई। इस धुएं की घुटन के बाद मुझे मालूम था कि अब वह खांसी का भयंकर दौरा पड़ेगा। लेटे हुए खांसी का दौरा झेलना कितना कठिन होता है यह कोई मुझ जैसा भुक्तभोगी ही जान सकता है। बिस्तर पर अपनी कोहनी टिका कर मैंने उठने का प्रयत्न किया। पर इससे पहले कि मैं बैठ पाता खांसी का दौरा शुरू हो गया। खांसते-खांसते मेरा चेहरा लाल हो गया मानो मेरे शरीर का पूरा दम चेहरे पर सिमट आया हो।

मेरी लगातार खों-खों छाती में अटके उस बलग़म को निकालने का प्रयत्न कर रही थी जो छाती में जोंक की तरह चिपटा था। मेरे लाख चाहने के बावजूद मेरी छाती में चिपटा वह बलग़म तो नहीं निकला हां खून की कुछ बूंदें जरूर बिस्तर पर आ गिरीं।

मेरे पास बैठी मधु जो अभी तक अपने को रोके थी, बिस्तर पर गिरी खून की बूंदें देखते ही बदहवास-सी हो गई। कुछ पल तो वह अपने स्याह पड़ते चेहरे से मुझे अपलक निहारती ही रह गई फिर दौड़ कर ड्यूटी- की तरफ डॉक्टर को बुलाने चली गयी।

जब तक मधु वार्ड में लौटी खांसी का दौर ठंडा पड़ गया था। मैं तकिये पर निढ़ाल- पड़ गया था, मैं जानता हूं जब तक मधु क सांस चलती है वह मुझे बचाने का हर संभ प्रयास करेगी, लेकिन अब उसकी मेहनत रं नहीं लायेगी... मैं अब कभी ठीक नहीं ह सकूंगा। मैं अपने शरीर की हालत अच्छी तरह जानता हूं, पर उससे कहने की हिम्मत नहीं जुटा पाता। मेरी यह मुश्किल अस्पताल के डाक्टर आसान कर सकते हैं, वे बेखटके कुछ महीनों बाद मेरी आसन्न-मृत्यु से मधु को अवगत करा सकते हैं, पर मैंने खुद ही डॉक्टरों के आगे हाथ जोड़-जोड़ कर मधु को अन्धेरे में रखने की विनती की है। मैं उसे आखिरी समय तक अन्धेरे में रखना चाहता हूं। मैं चाहता हूं मेरे अन्तिम क्षण तक उसके हृदय में मेरे पूर्ण स्वस्थ हो जाने की ज्योति जगमगाती रहे। यह ज्योति ही तो उसका साहस है, उसके चेहरे की कांति है।

मैं अपने पलंग पर निढाल-सा पड़ा था कि सूने वार्ड में मधु के कदमों की आहट गूंज उठी। उसके साथ उनींदा वह डॉक्टर भी था

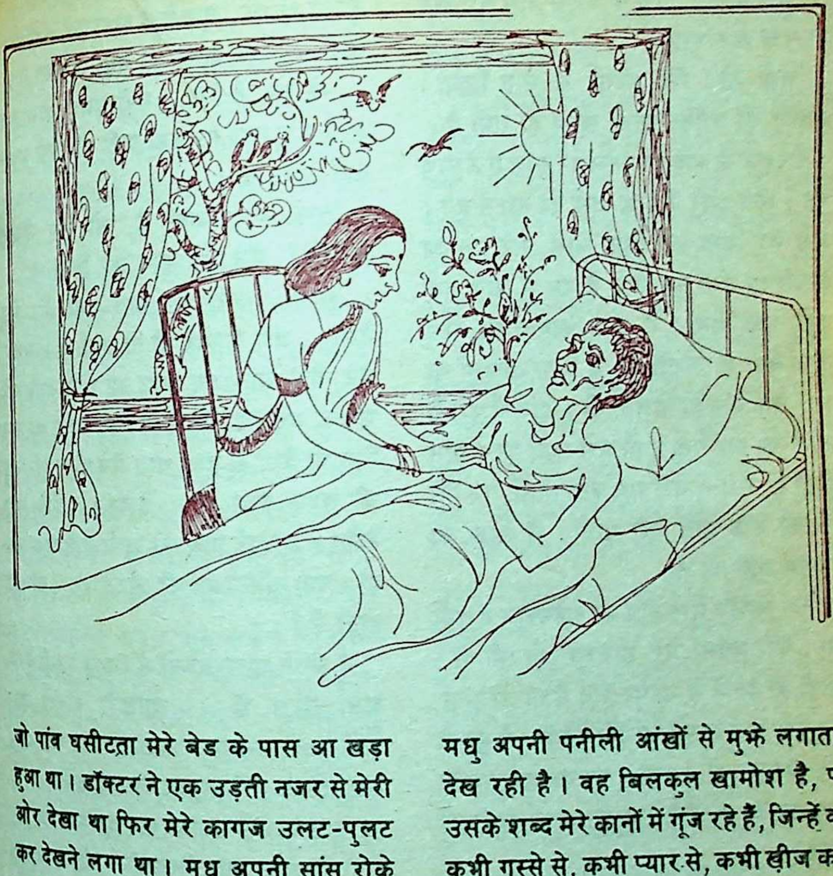

जो पांव घसीटता मेरे बेड के पास आ खड़ा हुआ था। डॉक्टर ने एक उड़ती नजर से मेरी ओर देखा था फिर मेरे कागज उलट-पुलट कर देखने लगा था। मधु अपनी सांस रोके अपनी दृष्टि डॉक्टर के चेहरे पर जमाये खड़ी थी। मेरे कागज देखकर डॉक्टर जंभाई लेता हुआ बोला था – 'ट्रीटमेंट तो यही रहेगा... अभी फिलहाल एक इंजेक्शन दे देते हैं... मैं सिस्टर को बोल देता हूं... नींद आ जायेगी।'

डॉक्टर चला गया है, सुनसान वार्ड में जाते हुए डॉक्टर के कदमों की पदचाप मैं दूर तक सुनता रहा हूं, अगर नहीं सुन पाया तो केवल मधु की बात ही पूरे जीवन नहीं सुन पाया। मधु अपनी पनीली आंखों से मुझे लगातार देख रही है। वह बिलकुल खामोश है, पर उसके शब्द मेरे कानों में गूंज रहे हैं, जिन्हें वह कभी गुस्से से, कभी प्यार से, कभी ख़ीज कर, कभी झगड़कर, कभी महंगाई का रोना रोकर, कभी मेरी सेहत की चिन्ता कर, कभी संभावित दुर्घटना के ख्याल से मुझे नशा करने से रोका करती थी। मुझे दांत पीस कर क्रोधातिरेक में मधु की तरफ उछाले गये अपने वे वाक्य भी बखूबी याद हैं जिन्हें सुन कर मधु घंटों रोया करती थी, मैं उसकी पीड़ा को तब नहीं समझता था आज महसूस करता हूं।

'कुछ कहा ?' मधु ने अपना हाथ मेरे माथे पर रख कर पूछा।

'नहीं तो! मैंने इशारे से मना किया। बोलने की शक्ति मानों खत्म हो गयी है।

विवाह के बाद हम साल दर साल एक साथ रहे। एक दूसरे के सुख-दुख को बांटते हुए। मधु मेरे बिना कहे बिना बोले, मेरे मन का वार्तालाप कैसे सुन लेती है यह मैं आज तक नहीं जान पाया। मैं जैसा चाहता था, मधु ठीक वैसा ही करती थी, मैं जैसा सोचता था मधु ठीक वैसा ही सोचती थी। आज मैं पुरानी बातों को दोहराता हूं तो मुझे स्वयं पर ग्लानि होती है, मधु ने मेरी सब बातें मानीं, पर मैंने उसकी एक बात नहीं मानी। मैं जोरू का गुलाम नहीं था न।

नर्स आकर मुझे नींद का इंजेक्शन दे गयी थी। मेरी चेतना धीरे-धीरे सुप्त हो रही थी। थोड़ी ही देर में मैं भरपूर नींद में सो जाऊंगा, पर मुझे पता है मधु जागती रहेगी। मैं उसके प्रति बेख़बर हो सकता हूं पर वह हमेशा मेरे लिए सतर्क रहती है, एक जागरूक प्रहरी की तरह।

मुझे आज भी वह दिन याद है जब स्थानीय महिला कालेज में प्रवक्ता-पद की कुछ नियुक्तिया होनी थीं और मधु भी हिन्दी-प्रवक्ता पद की एक उम्मीदवार थी। उस दिन उसकी महत्वाकांक्षी इच्छा ने मेरे समक्ष लगभग गिड़गिड़ा कर कहा था, ...अगर तुम साहनी साहब से एक बार कहलवा दो तो यह जॉब मुझे मिल जायेगा।'

लेकिन मैंने हिक़ारत से उसकी पेशकश ठुकरा दी थी, 'मुझसे ये खुशामदें नहीं होतीं, तुम्हें यह सब करने की क्या जरूरत है।'

'वो क्या है कि...' मेरी दबंग आवाज के आगे मधु कुछ हड़बड़ा गयी थी, उसे जवाब नहीं सूझा था।

'तुम्हें कोई कमी है, जो तुम नौकरी करोगी?' मैंने उसे पस्त कर दिया था।

'सुनोऽ, कमी की बात नहीं है। मेरा टेलेंट... और मैं बोर भी हो जाती हूं।' मधु ने मेरे पीछे आते हुए कहा था। न जाने क्यों उसकी बातों से मैं हमेशा चिढ़ जाता था, उस दिन भी वैसा ही हुआ था। मैंने पलट कर मधु की तरफ देखा था... 'टेलेंट। ...ऐसा क्या टेलेंट है तुम्हारे पास जो फूली नही समा रही हो। क्या दुनियाभर की औरतें घर में बोर ही होती हैं?'

वे अपने बाल-बच्चों में व्यस्त रहती हैं, मैं भला किस में...।' आखिरी शब्दों तक आते-आते उसका गला भर्रा गया था, बोल रुंध गये थे। मैं जानता था उसे बच्चे न होने का दु:ख मुझसे ज्यादा था, यह समस्या हम दोनों में से न जाने किसकी कमी के कारण हमारे बीच खड़ी थी, पर इसका दोषी हमेशा मधु को ही ठहराया गया। मेरा परिवार, मेरे पड़ौसी, मेरे मित्र सभी तो मधु को बंध्या कहते थे, चाहे वह लाख डॉक्टरी मुआयने की दुहाई देती थी। मैं भी जनमत का अपवाद नहीं था इसका पता मुझे उस दिन चला जब मैंने भी यह दोष केवल मधु पर डाला... नींद धीरे-धीरे घेर रही थी... घेरे बढ़ रहे थे... मैं डूब रहा था।

सुबह नींद खुली तो सूरज खिड़की से कक्ष तक पसर आया था डॉक्टरों का एक दल पूरे वार्ड में घूम रहा था और एक-एक मरीज़ को परख रहा था। मधु नहा-धोकर माथे पर सिन्दूर की बिंदिया सजाये मेरे करीब बैठी थी और बेसब्री से डॉक्टरों की प्रतीक्षा कर रही थी।

मुझे नींद से जागा देख, वह तुरंत उठी और मेरे बेड के नीचे से चिलमची बाहर निकाल मुझे बिठाने लगी। मेरा टूथ-पेस्ट, ब्रश, तौलिया उसने पहले से ही तैयार कर रखा था। मधु की सहायता से मैं जल्दी ही कुल्ला-मंजन से फारिग हो गया और आने वाले डॉक्टरी-दल की प्रतीक्षा करने लगा।

थोड़ी ही देर में मेरी प्रतीक्षा समाप्त हो गयी और मेरे बेड के चारों तरफ डॉक्टर- नर्स आकर खड़े हो गये। उन सफेद लिबास-धारियों को देख कर न जाने क्यों मेरा हृदय डूबने लगा। उनके चेहरों पर एक अजीब-सा तनाव था। वे आपस में तकनीकी-भाषा में क्या खुसर-पुसर कर रहे थे मेरी समझ में कुछ नहीं आ रहा था। मेरी निगाहें मधु को खोज रही थीं, पर वह मुझे दिखायी नहीं दे रही थी आखिर में मैंने अपनी निगाहें छत पर टिका दी थीं और अपना शरीर उस डॉक्टरी-दल के हवाले कर दिया था।

मेरा परीक्षण करने के थोड़ी देर बाद मेरे बेड के चारों तरफ से वे सफेद लिबासधारी हट गये थे और मुझे मधु दिखायी पड़ी थी। उसके चेहरे पर अब वह पहले वाली कांति न थी। उसकी लाल बिंदिया भी उदास थी। मैं उसे यूं चिन्तित देखकर मेरा ध्यान ही गया, मैंने उसे पुकारा 'मधुऽ! मधु!' पर मेरे शब्द मेरे होठों से बाहर नहीं निकले।

मैंने अपना साहस बटोर कर फिर मधु को पुकारा, पर जीभ ने मेरा साथ नहीं दिया। ओह! तो क्या कल से मेरी जीभ इसीलिये फूली-फूली लग रही थी कि उसे लकवा मार गया है। तो क्या अब मैं सिर्फ देख-सुन सकूंगा, बोल नहीं पाऊंगा। ओह!

तभी मुझे सामने से हैड-नर्स आती दिखायी दी। उसके हाथों में कुछ कागज फड़फड़ा रहे थे। उसने वे कागज मधु को थमा दिये और बोली, 'ये दवाओं का पर्चा है, कुछ दवायें अस्पताल के स्टोर से फ्री मिल जायेंगी· कुछ बाजार से ले लेना। बराबर अपने मरीज़ को दवा देना... तुम बहुत हिम्मतवाली है... आज डॉक्टर ने तुम्हारा मरीज़ का छुट्टी कर दिया... अब इसे घर पर आराम करने का है... ठीक।'

हैड-नर्स एक मुस्कान फेंक कर चली गयी थी। मैं कभी उसे जाते हुए देख रहा था तो कभी मधु की पनीली आंखों के बढ़ते सूनेपन को। मधु की आंखों में मोती झलक आये थे, जिन्हें उसने बड़ी सफाई से पोंछ लिया था और फिर बिंदास भाव से अपना सामान बटोरने लगी थी। मेरे आसपास बिखरा जरूरत का सामान भी कई थैलों में भरा गया था, जिन्हें मधु ने बरामदे में एक लाईन से रख दिया था।

वार्ड-बाय ने मुझे सहारा दे कर रिवालविंग - चेयर पर बिठा लिया था। मधु

कुछ मरीजों से आखिरी प्रणाम करने चली गयी थी।

आज महीनों बाद मैं अस्पताल के बरामदे में निकला था, खुली हवा में सांस ले रहा था। भीतर तो फिनायल की गंध से सराबोर हताश मरीजों की उसांसें दीवारों को खोखला कर रही थीं। मधु सब से मिल कर लौट आयी थी और थैले उठा रही थी। मधु के हाथ से दो-तीन थैले अस्पताल की सफाई कर्मचारी ने ले लिये थे और इनाम पाने की लालसा में वह मधु के पीछे-पीछे बाहर छोड़ने चल पड़ी थी।

अस्पताल के लम्बे बरामदे की दीवारों पर जगह-जगह फेमिली-प्लानिंग के विज्ञापन और नारे लिखे हुए थे। दो बच्चों के बीच जन्म का अन्तर रखने के लिए ढेरों उपाय लिखे हुए थे। कुछ आगे चल कर बच्चों के स्वास्थ्य-वर्धक टीकों और उनकी उपयोगिता के बारे में माता-पिता को हिदायतें लिखी थीं, ...ये सब पढ़ते-पढ़ते मेरा मन थक गया था मधु तो उन्हें रोज ही पढ़ती होगी, उसका मन...?

अपने घर की ओर लौटते हुए ताजी ठंडी हवा की खुशबू लेते हुए मैंने सोचा—अच्छा ही हुआ जो अस्पताल से छुट्टी मिल गयी, उस फिनाइल की गंध में तो अच्छा-भला आदमी बीमार हो जाये। घर चल कर खुली हवा में मैं जल्दी ठीक हो जाऊंगा। मधु ने जो मेरी इतनी सेवा की है उसका प्रतिफल भगवान उसे अवश्य देंगे। मधु ने अपने अखण्ड-सौभाग्य के लिए जो इतने व्रत-उपवास व्रत-त्योहार किये हैं वे निष्फल नहीं जा सकते। मैं अवश्य ठीक हो जाऊंगा।

घर पहुंच कर मधु ने सहारा देकर मुझे मेरे बिस्तर पर लिटा दिया। अपने बिस्तर की गंध ने मुझे आत्मिक बल दिया। मैं अपने तकिये पर सिर रख कर लेटा तो सामने खिड़की से सुगंध बिखेरता हरसिंगार का पेड़ झांक रहा था। न जाने क्यों उस क्षण मुझे लगा कि अगली सुबह मैं अपने बिस्तर से पहले की तरह ठीक-ठाक उठूंगा, बिलकुल निरोग, दफ्तर जाने के लिए तैयार।

अंधेरी रात का डूबा सा चांद बादलों की ओट में लुका-छिपी करता हुआ डूब गया और सूरज का जन्म हुआ। प्रकृति की लीला का यह पूरा चित्र मैंने कमरे की खिड़की से देखा। आज छाती में जरा भी दर्द नहीं था, बस नींद उड़ गयी थी। शायद उन संभावित दुःखों की कल्पना के कारण जो मेरे बाद मधु को सहने थे।

चिड़ियों का अनुराग-गीत शुरू हुआ तो मेरी आंख लग गयी। हल्की खटर-पटर मेरे घर में भी शुरू हो चुकी थी। यह सोने का समय नहीं था पर फिर भी मैं नींद के घेरों में डूबता गया।

आंख खुली तो देखा मधु सामने बैठी चिट्ठियां लिख रही थी। मुझे अपनी तरफ ताकते हुए देख कर वह बोली – 'आज तो खूब सोये।'

'हां।' मैंने कहना चाहा पर केवल मधु को देखता ही रह पाया।

'लो, दवा पी लो।' मधु ने मुझे सहारा

देकर दवा पिला दी। फिर चिट्ठियां दिखाते हुए बोली, 'सबको खबर कर रही हूं, दो-चार दिन में सब रिश्तेदार आ जायेंगे। गांव भी चिट्ठी लिख दी है। कहीं और लिखवाने का मन है?'

मधु की पनीली आंखों की भाषा मैं मन ही मन पढ़ रहा हूं। उसे सांत्वना भी तो नहीं दे सकता। मैं जानता हूं आदमी को ढोने के लिए चार आदमी तो चाहिए ही, मधु अकेली सब कैसे करेगी? ...आज भी मैं हमेशा की तरह इस संभावित दुर्घटना को हंसी में उड़ा देना चाहता हूं। मैं मधु को खुश करने के लिए कुछ कहना चाहता हूं, पर कह नहीं पा रहा हूं। जीभ मेरा साथ नहीं दे रही है। क्या करूं अब? अपनी सहायता के लिए किसे पुकारूं? हताश मेरी आंखों से अश्रुधारा बह निकली है।

'अरे, रो रहे हो? बड़ी से बड़ी मुसीबत में तो मुस्काये हो तुम। ना... नहीं, ...जी छोटा मत करो... मेरी तरफ देखो।' मधु ने अपने आंचल से मेरे अश्रु साफ करते हुए कहा तो मेरे भीतर का बांध टूट पड़ा है, मैं हिलक-हिलक कर रो रहा हूं.... रोये जा रहा हूं। मुझे चुप कराने वाली मधु भी हिचकी ले-ले कर रो रही है... ओह!

एक के बाद एक दिन बीत रहा है, उदास आंसू में डूबा हुआ। मेरी छाती तो मानो बोझ से खाली हो गई है। करवट बदलने भर की शक्ति भी देह में नहीं बची है, मैं हिल-डुल नहीं सकता। आंखें बस मधु पर ही टिक जाती हैं... घूम फिर कर बस मधु।

बरसात के बाद की सुबह थी वह, जब उजाले ने बाहर आंगन में खिली फुलवारी को एक नई जिन्दगी से भर दिया था। मधु गमलों में से सूखे पत्ते निकाल कर फेंक रही थी। मैं मधु की कमर तक फैली केश राशि देख रहा था, जो उतनी ही मोहक थी जैसी हमारे विवाह के अवसर पर थी, इससे पहले कि मैं कोई बात याद करता कि दरवाजे पर जाने–पहचाने छापेदार साड़ी लहराई.... मधु का करुण रुदन उभरा.... और कुछ क्षण बाद दो महिलायें मेरे समीप खड़ी थीं वे मधु की और मेरी मां थीं।

पिताजी अपना झोला- बक्सा दीवार से टिका कर मेरे पास आ खड़े हुए थे। उनका हाथ लगातार मेरे बालों में फिर रहा था और निचला होंठ उत्तेजना में कांप रहा था। लगता था वे बड़े प्रयत्न से अपनी रुलाई रोके हैं, पर मैं अपनी रुलाई नहीं रोक पाया था और खूब रोया था।

मेरी मां ने आते ही, घर की व्यवस्था बदल दी थी। मेरे खान-पान में भी डॉक्टरी हिदायत के बावजूद उन्होंने आमूल परिवर्तन कर दिया था। न जाने क्यों अब वे मधु को देखते ही बुरा-सा मुंह बना लेती थीं और कुछ-कुछ बड़बड़ाने लगती थीं। उनके स्वर न चाहते हुए भी कानों से टकराने लगते थे... 'जिस दिन से बांझ ने घर में कदम रखा है, सब डूबता ही जा रहा है... लड़का सूख कर कांटा हो गया... उसे जिन्दगी भर न खाने दिया न हंसने-बोलने दिया... उहं।'

मां जब मेरे करीब होती तो मधु बहुत दूर

रहती थी, मेरा मन भीतर से चिल्लाता था मधु मेरे पास आओ... मेरे बालों में उंगलियां फिराओ.... मेरी कमर मलो...। पर सास-ससुर के सामने बैठने से उसकी नारी - चेतना हिचकती थी, उसके संस्कार उसे पति का स्पर्श करने से रोकते थे और मैं उसके लिए तरसता था।

दवाइयों के लगातार सेवन के बावजूद मैं दिन पर दिन ढल रहा था। एक सुबह उस समय मेरे कान चौकन्ने हो उठे जब मैंने अपनी चल-अचल सम्पत्ति, मकान, बैंक-बैलेंस और घरेलू साजो-सामान को लेकर अपने माता-पिता में हो रही मंत्रणा को सुना। वे मुझसे शीघ्र स्वयं को वारिस घोषित करवाना चाह रहे थे। मधु मेरी गिरती दशा के बारे में डाक्टर से राय लेने अस्पताल गयी थी, मैं अपने घर में बिलकुल अकेला था असहाय-सा।

मधु जब अस्पताल से लौटी तो बदहवास-सी थी। उसकी भटकती आंखें मेरा मर्म बेंध रही थीं। वह मेरे पास आने को आतुर थी, पर मेरे पिता मेरे सामने से हटने का नाम ही नहीं ले रहे थे। मैं मधु से केवल इतना ही कहना चाह रहा था, कि मधु ये घर, ये मकान तुम्हारा है... मेरा बैंक बैंलेस... मेरे शेयर... तुम्हारे हैं... मैं जीकर भी तुम्हारा था... मैं मर कर भी तुम्हारा रहूंगा। पर मेरी जीभ मेरा साथ नहीं दे रही, मैं मधु को कोई सांत्वना नहीं दे पा रहा था।

आज नहीं तो कल मैं कहीं दूर चला जाऊंगा इन सब से सदा-सदा के लिए छूट जाऊंगा... ये सारे इनकी आंखों से ओझल हो जायेगा... मधु मेरे बिना कैसे रहेगी? कैसा होगा उसका एकाकी जीवन? कितना बड़ा दुःख है... जिस मधु के साथ मैं पूरे वैवाहिक जीवन हंसा-बोला, लड़ा-झगड़ा, आज उसी से दो बोल नहीं कह पा रहा हूं.... कितनी कोशिश करता हूं... कुछ बोलूं... पर शब्द जैसे सींखचों में बंद कैदी हो गये हैं, या पिंजरे में बंद पंछी।

आज मेरी आंखों के आगे ये सुनहरे घेरे क्या उमड़ रहे हैं? पता नहीं मेरे शरीर को क्या हो रहा है? मेरा पूरा परिवार... मेरे पड़ौसी... मेरे माता-पिता... मेरा नौकर... मधु, सब दौड़-दौड़ कर मेरे बेड के चारों तरफ क्यों आ जुटे हैं? मधु इतना रो क्यों रही है?

कहां हूं मैं? क्या हो गया है मुझे? मैं इतना हल्का और भारहीन क्यों हो गया हूं.... लगता है अब मैं हवा में उड़ने लगूंगा... अब न छाती में कोई धुआं है, न घुटन... लगता है जैसे सूरज का गोला मेरी छाती में भक से उजाला कर डूब गया है...।

अब मुझे कोई आवाज सुनायी नहीं दे रही। मैं जहां तक देखता हूं अनन्त आकाश है। सुनहरा आकाश। मैं बढ़ा चला जा रहा हूं... अब मैं स्वतंत्र हूं.... बिलकुल स्वतंत्र... कभी न मरनेवाली अजर-अमर आत्मा।

— २०/२० इन्द्रानगर, लखनऊ, उ.प्र.

□

चिंतनिका :

# विवेक-शून्य

**□ मोहनलाल पुरोहित**

अक्सर समान प्रकृति या आदतवाले प्राणियों में आपसी मेल-जोल या मित्रता देखने-सुनने को मिलती है। अपवादों को छोड़ दीजिए। इसी संदर्भ में एक कथा आती है – एक भैंस और गाय में प्रगाढ़ मित्रता थी। भैंस थी काली और गाय थी सफेद। बस, बात यह थी – गाय की पूंछ का गुच्छा काले रंग का था।

एक दिन भैंस ने गाय से कहा, 'सखी मैं तुम्हें एक बात बताना चाहती हूं, लेकिन सत्य कटु होता है। अतः ऐसा न हो कि तुम भी सच्चाई को सहन न कर सको और मेरे कथन को अन्यथा समझ बैठो। मेरे कहने का तात्पर्य मात्र यह है कि हमारी वर्षों की मित्रता एक छोटी-सी बात को लेकर टूट न जाये।'

गाय ने उत्तर में कहा – 'फिर तो ऐसा लगता है, तुमने मुझे पहचाना ही नहीं है। एक मित्र अपने दूसरे मित्र को उसके लाभार्थ कुछ सुझाव रखे, सत्पथ बताये और वह दूसरा भला मानुस उसका उपकार न मानकर बदले में नाराज हो बैठे। ऐसा तो नहीं होना चाहिए। बहन, तुम्हें जो कुछ भी कहना है, खुलकर कहो।'

भैंस ने कहा, 'तब सुनो। तुममें सभी प्रकार के गुणों के साथ-ही-साथ एक बड़ा दोष है। तुम्हारी पूंछ काली है।' गाय यह सुनकर जरा मुस्करायी। उसने प्रतिरोध में कोई उत्तर नहीं दिया। इस प्रकार समय अपनी द्रुतगति से चलता रहा। और इसी अंतराल में भैंस ने गाय से इसी विषय को लेकर, 'तुम्हारी पूंछ काली है', तीन-चार बार चर्चा कर डाली।

काफी अर्से के बाद एक दिन भैंस ने फिर से इसी विषय को गाय के सम्मुख दोहराया, तो गाय ने आज बड़ी गंभीर होकर निर्भयता से उत्तर दे डाला। 'देखो बहना! तुम यथार्थ में ठीक कहती हो। मेरी तो पूंछ ही काली है, लेकिन तुम जरा अपनी ओर तो निहारो! तुम तो सारी की सारी काली हो।'

निस्सन्देह प्राणी मात्र में अपने ढंग की कमियां रहती आ रही हैं। हम दोषों से भरे पड़े हैं। लेकिन सबसे बड़ी जो अखरनेवाली कमी मनुष्य में है – वह अपने दोषों की ओर आंखें मूंदे चलता है और हमेशा दूसरों के अवगुणों-दोषों को देखता रहता है।

**– भटड़ों का चौक, बीकानेर, राजस्थान**

### जिसकी मदिर सुगंध आज भी शेष है

# 'वह पाटल – पुरुष हमारा...'

**□ जयदेव सिंघानिया**

विश्वकवि रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने पं. जवाहरलाल नेहरू को 'भारत के ॠतुराज' कह सम्बोधित किया था और नेहरूजी का बहुपार्श्वी व्यक्तित्व था भी ॠतुराज वसन्त जैसा ही, जिसके आगमन से सारा परिवेश नया रंग, नया रूप धारण कर लेता है, जो नव्य का सर्जक व पोषक है, जिसकी मदिर सुगंध सारे वातावरण को सुवासित कर देती है।

'भारत के ॠतुराज' को पुष्पराज गुलाब से बेहद लगाव था। वे उसे अपने हृदय स्थान पर सदा लगाये रखते थे। नेहरूजी के लिए वह प्रतीक था भारत के शिशुओं का, बाल-गोपालों का, उनके निश्छल स्नेह का जो वे 'चाचा नेहरू' कहकर प्रतिवर्ष उन्हें देते थे। वह गुलाब, जो कांटों के सिर पर खिलता है, प्रतीक है, नेहरूजी के संघर्षशील व्यक्तित्व का, जो अकेला तूफानों से लड़ता रहा। 'चक्रान्तशीला और गुलाब' शीर्षक कविता में श्री शम्भूनाथ सिंह कहते है:

**तूफान, गुफाओं में बैठकर**
**सिसकने लगा,**
**मुझसे अकेला लड़नेवाला वह**
**'गुलाब' कहां है ?**
**(ज्योति पुरुष - पृ. १७)**

नेहरूजी को 'गुलाब' कहते-कहते कवियों ने उन्हें, 'गुलाबी' भी कर दिया। वस्तुत: वे थे भी 'गुलाबी' ही। मार्क्स की लाली और गांधीजी की श्वेतता का मिश्रण ही नेहरूजी का 'गुलाबीपन' था। वे जितने अतीत के प्रेमी थे उतने ही अधुनातन के, जितने अध्यात्म के प्रशंसक थे, उतने ही समाजवाद के समर्थक।

**एक हस्ताक्षर गुलाबी जिसे**
**सुधि श्रृंगारती है,**
**एक प्यारी गंध जिसको हर हवा**
**अंकवारती है।**
**घाटियों में भटकता है युग किसी**
**घायल हिरण-सा,**
**अश्रु-जल से चेतना, 'ॠतुराज'**
**को सत्कारती है।**
**(छविनाथ मिश्र - ज्योति पुरुष पृ. ६८)**

नेहरूजी की सर्वधर्म समभाव की नीति थी। उनका समता व देश की एकता में अटल विश्वास था। 'पंचशील और सहअस्तित्व' उनका ध्येय था। उनके यश-सौरभ ने विश्व को महका दिया था। 'गुलाब के प्रति' शीर्षक कविता में श्री रामसिंह यादव ने कहा है:

**अपनी महक से समस्त वातावरण**
**को सुवासित किया,**
**भारत की मिट्टी को जग में**

**विख्यात किया**
**वह गुलाब –**
**सत्ताइस मई चौंसठ को पौधे से झर गया**
**मिट्टी में समाहित हो,**
**यत्र तत्र सर्वत्र बिखर गया ।**
**(ज्योति पुरुष पृ. ३८५)**

नेहरूजी जनता के थे । जनता उनकी थी । उनके गुस्से पर भी जनता मोहित थी । उनकी मंद-मंद मुस्कान में एक जादू था । एक ऐसा आकर्षण था, जो अनायास जन-जन को उनकी ओर खींच लेता था ।

**लगभग एक सदी पलक मारते**
**गुजर गयी,**
**जिधर से तुम गुजरे**
**अपनी मुस्कराहट के असंख्य गुलाब**
**खिल गये**
**जिनकी भीनी सुगन्ध**
**हमेशा के लिए वातावरण**
**में बिखर गयी ।**
**(शंकर शैलेन्द्र - नेहरू, तुम्हें प्रणाम पृ. १४०)**

'गुलाब' को नेहरूजी के प्रेम के कारण अपनी संज्ञा ही खोनी पड़ी । लोग उसे गुलाब न कह, 'जवाहर पुष्प कहने लगे थे ।

**सुना तुमने !**
**अब गुलाब को,**
**गुलाब नहीं**
**'जवाहर-पुष्प' कहा जाने लगा है ।**
**(श्याम मोहन दूबे - ज्योति पुरुष पृ. २८१)**

नेहरूजी के देहावसान पर हमारे संवेदनशील रचनाधर्मियों को ऐसा लगा कि 'गुलाब' मुर्झा गया है । 'श्रद्धा के फुल' शीर्षक कविता में डॉ. सिद्धनाथ कुमार कहते है :

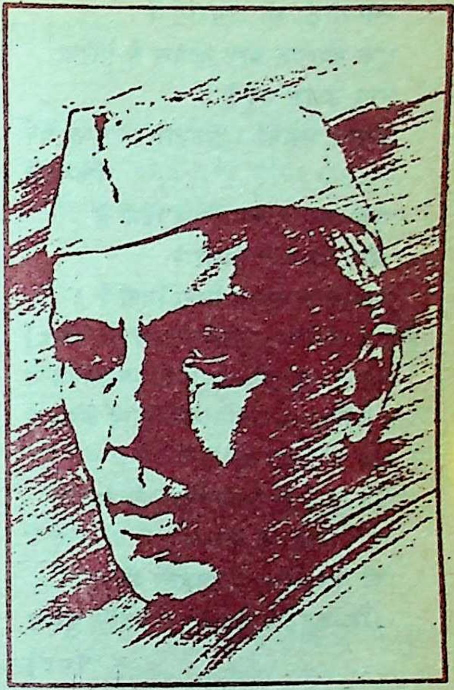

**समय के कोट से एक गुलाब का**
**लाल फूल गिर पड़ा,**
**समय के हाथ से एक**
**उजला कबूतर उड़ गया ।**
**एक आत्मकथा का पृष्ठ फटा –**
**और समय के इतिहास में**
**सदा सदा के लिये जुड़ गया ।**
**(ज्योति पुरुष पृ. ८५)**

चमन से मिटा गुलाब, इतिहास के पृष्ठों में खिल उठा ।

नयी पीढ़ी की अमराई में
एक नवागत बौर कोयल से पूछेगा
हवा उदास क्यूं है ?
कोयल कहेगी : इतिहास के पृष्ठों पर
किसी ने
एक लाल गुलाब लिख दिया है
और चमन से किसी ने
एक लाल गुलाब मिटा दिया है ।

(वीरेन्द्र दीपक - ज्योति पुरुष पृ. २५८)

नेहरूजी का वर्षों का साथी गुलाब ही ने उनके अन्तिम क्षणों में उनकी सांसों के स्वरों को सुना था। वह कहता है :

मैंने जानी है उनके दिल की बेचैनी
जो हिन्दुस्तान को –
नये रूप में गढ़ना चाहती थी ।

(दिनकर सोनवलकर - ज्योति पुरुष पृ. १८४)

नेहरूजी ने अपने प्रिय गुलाब को क्या कहा ? यह भी कवि ने सुन लिया। उन्होंने कहा –

ओ मेरी शेरवानी के लाल गुलाब
आज मैं तुम्हें
नयी पीढ़ी के हाथ में सौंपकर
अकेला ही जा रहा हूं–
जिसकी हथेली पर –
श्वेत कबूतर है,
जिसके पास समृद्ध साहित्य है
विस्तृत विज्ञान है
और वह सब कुछ है
जो उस वक्त
मेरी पीढ़ी के पास नहीं था ।

(राबिन शॉ 'पुष्प' – नेहरू तुम्हें प्रणाम पृ. ११५)

गुलाब के प्रति नेहरूजी का इतना ममत्व था, इतना समर्पण था कि श्री कार्तिकनाथ दास ने तो उन्हें 'गुलाबर्षि' कहकर सम्बोधित किया है :

एक गर्व दायक गुलाब मर गया,
उसकी गर्व कारिणी सत्ता -
रक्तबीज की तरह जन्मान्तरित होगी
देश में, विदेश में, आचार में, विचार में
कार्य में।

(ज्योति पुरुष - पृ. १९८)

और दिशाओं ने हमें बताया कि कहाँ गया है हमारा गुलाब और उन्होंने संकेत किया:

वह गुलाब का फूल टूटकर बन बैठा
जब एक सितारा,
इंगित किया दिशाओं ने तब,
वह है पाटल पुरुष हमारा ।'

(वीरेन्द्र मिश्र - ज्योति पुरुष - पृ. ३४५)

भारतवासियों को भाई-भाई की तरह जीने का संदेश डॉ. गिरिजाशंकर त्रिवेदी की कविता से मुखर हो उठता है –

सीने से लगे गुलाब ने कहा था–
मुझसे तो न रूठो मेरे देवता
मैंने तो सदा तुम्हारा प्यार पाया है
तुमने मुझे सदा सीने से लगाया है।
उसे उत्तर मिला था –
मेरे देशवासियों से इतना ही कहना तुम
सभी भाई हो, भाई बनकर रहना तुम।

गुलाब चला गया, लेकिन उसकी गंध

# उत्तर सन्ध्या

देखा सप्रमाण, क्यों परास्त है विभावरी से,
मात्र लोक लोचन तू यामा सिद्धि-दायिका।
भानु चण्डकर सितभानु-जननी प्रशान्त,
जो मरीचिमाली, यामिनी है मोहमायिका।
अर्यमा है नाम, निराकार आर्य मां का रूप,
पूषण! पियूष की अखिल अनुपायिका।
काल के जनक! वन्दनीया देवि कालरात्रि,
याम-अधिनायक त्रियामा नव्य नायिका।

* * *

डगमग होता सूर्य आशावारुणी में मग्न,
भौतिक शरीर में अंगार पिण्ड भरता।
मानों जातवेद इन्द्रजाल में प्रवेश कर,
वासना-विलोड़ित सदेह अवतरता।
प्रेम से परस बुध जीव शुक्र ईरित हो,
क्षितिज के पार अन्धकार में उतरता।
चुम्बकीय विद्युत-तरंग शक्ति तीव्र कर,
बैंगनी-परा-प्रभा निशा के द्वार धरता।

* * *

सुन्दर संयोग लोग सन्ध्या कहते हैं इसे,
रवि ने क्षपा में सोम-पुत्र उपजाया है।
षोडश कला से पूर्ण विग्रह विभास भर,
भाल पै कुरंगमद तिलक लगाया है।
सुखद हुआ है मित्र त्वरित गया है छिप,
शशि ने कुमोदिनी का हृदय जगाया है।
छलक रहा है अंग-अंग अनुराग राग,
चन्द्रमुखी चन्द्रिका के संग चन्द्र आया है।

**– रामजीदास कपूर**
लालबाग, सीतापुर, उ.प्र.

---

सदैव हमारे पास रहेगी, यह भावना व्यक्त की है श्री शम्भूसिंह मनोहर ने अपनी कविता 'वह गुलाब न फिर खिलेगा' में। वे कहते हैं–

**वह गुलाब जो शीश फूल सा,**
**मां के मन भाया था।**
**वह गुलाब जो आंधी,**
**तूफानों में मुस्काया था।**
**वह गुलाब जिसमें प्राणों ने गंध,**
**रूप रस पाया,**
**वह गुलाब जो जीवनभर**
**आंखों में लहराया था,**
**वह गुलाब अब फिर न खिलेगा,**
**केवल गंध रहेगी,**
**रोज सुबह शबनम फूलों से**
**उसकी कथा कहेगी।**
**(ज्योति पुरुष - पृ. २१७)**

'गुलाब' का फूल प्रतीक है नेहरूजी की सहृदयता का, उनकी भावुकता का, उनके संघर्षशील व्यक्तित्व का, उनकी रागात्मक वृत्ति का और विश्व-शान्ति के लिए उनकी आकुलता का। नेहरूजी के स्पर्श ने 'गुलाब' को भी अमर कर दिया। उस पाटल पुरुष के साथ पाटल भी इतिहास पुष्प हो गया।

**– २९ ए, बालाराम स्ट्रीट,**
**ग्रान्ट रोड, बम्बई - ४०० ००७**

# सची राउतराय का काव्य फलक

□ दुर्गाशंकर त्रिवेदी

हमारे देश के स्वातंत्र्य प्राप्ति के प्रारम्भिक काल के आसपास उड़िया भाषायी काव्य गगन में निनादित होने वाले कविता के वाद्यवृन्द के सृजेता हैं– 'सची राउतराय'। लगभग ६ दशकों से वह अहर्निश साधनारत हैं। उनका काव्य संसार पदार्थ से लेकर आत्मा के अस्तित्व तक फैला हुआ है। वर्ष १९८६ में ज्ञानपीठ पुरस्कार से सम्मानित उड़िया साहित्य के मुक्तिदाता डॉ. सच्चिदानन्द राउतराय ने उड़िया कविता को नयी भावभूमि पर प्रतिष्ठापित किया।

काव्य सृजन के प्रारम्भिक दौर में राउतराय पर जिन साहित्यकारों का व्यापक प्रभाव पड़ा, उनमें वे मायकोव्स्की को भी महत्व देते हैं। अपनी शुरुआती रचना प्रक्रिया पर विचार व्यक्त करते वक्त उन्होंने यह दावा भी किया था – 'न तो वह टैगोर है और न शैले।' यही नहीं उन्होंने यह भी कहा है – 'जब आप मेरी पुस्तक का स्पर्श करते हैं, आप सचमुच ही मनुष्य का हृदय स्पर्श करते हैं।

काव्य समीक्षकों की कसौटी पर उनके ये कथन ठीक-ठीक भी उतरे हैं। अपने कविता संग्रहों 'पाथेय' और 'पाण्डुलिपि' द्वारा उन्होंने उड़िया साहित्य पर नवयुग और नयी कविता के द्वार खोल दिये। उनके ऐतिहासिक महत्व के कालजयी कविता संग्रह 'कविता-१९६२' में इस नयी प्रवृत्ति को और भी स्पष्ट और मूर्त रूप मिला।

उनकी काव्य भंगिमा एक क्षयग्रस्त सामाजिक व्यवस्था के विरुद्ध मानव अधिकारों का एक आक्रोशी घोषणा पत्र है। वह मानव-गरिमा और भय-मुक्ति के मंत्रदाता हैं। अपनी 'अभिज्ञान' शीर्षक कविता में उन्होंने खुले कण्ठ से गाया है:-

**'मैं श्रमिकों का कवि बड़ा हूं**
**लिये हाथ में कलम हथियार की तरह**
**स्वप्न देखता उस दिन का**
**जब मनुष्य लौटेगा बलिवेदी से**
**जागेगा स्वतंत्रता की भोर में**
**और एक नया लाल-सूरज**
**तथा मेरे कवि की कलम**
**करेगी हस्ताक्षर**
**'मनुष्य मनुष्य के लिए' के**
**अधिकार पत्र पर।'**

अपने १८ काव्य संकलनों और एक काव्य नाटक के माध्यम से सची राउतराय ने वयं राष्ट्रै जागृयाम (मैं राष्ट्र को जागृत रखूंगा)

जैसी भावना को मूर्त रूप दिया है। वह निरन्तर संघर्षरत रहने की हूक यत्र-तत्र व्यक्त करता है। 'संतुलन' में उसकी यह छटपटाहट व्यक्त हो रही है –

'पूरा करो फिर मेरा खाली तूणीर
दो ही विषम बाणों से
विद्रोह और विद्रूप से
संग्राम मेरी वृत्ति हो ।
विद्रूप उज्ज्वल करे
मेरा अवसर ।
इनमें से एक मुझे दो
या फिर दे दो ये दोनों ही तीर ।'

उनकी प्रथम काव्य कृति 'पाथेय' १९३२ में प्रकाशित हुई थी, जब वे सिर्फ १६ वर्ष के थे। लेकिन गोष्ठियों में मित्रों में वे १२ वर्ष की उम्र से ही कविताएं लिख-लिखकर सुनाने लगे थे। जब १९४७ में उनका काव्य संकलन 'पाण्डुलिपि' प्रकाश में आया, तब तक राधानाथ के समय से लेकर उड़िया काव्य का मुख्य पक्ष इतिवृत्तात्मक, ऐतिहासिक, रोमानी भावनामय ही था। 'पाण्डुलिपि' की भाषा रोमानी होते हुए भी उसके कथ्य के नयेपन ने सबका ध्यान अपनी तरफ आकर्षित किया। तमाम राजनीतिक अतिशयता और लंबी-चौड़ी डींगों, भाषणबाज़ी आदि के बावजूद भी पाण्डुलिपि की 'प्रतिमानायक' तथा 'चौथे दशक के पार' जैसी कविताओं की विषयवस्तु की आधुनिकता प्रतिष्ठापित हुई।

राउतराय ने विविध प्रकार के काव्य शिल्पों और प्रक्रियाओं के प्रयोग अपने सृजन में किये हैं। वे रोमानी क्रांतिकारी भी रहे, किंतु समकालीन परिवेश में व्यक्ति के विकृत होने और उसके दायित्व बोध के हनन की गहरी अनुभूति ने उसे कष्टकारी चेतना से उपजा मनस्ताप भी दिया। 'कहां हो भगवान' ऐसी ही मनः स्थिति की देन है। वह पूछ उठता है :–

'धर्म के नाम पर करवाया है रण
बलि चढ़ाया है समूह और गण
व्यक्ति के लिए धरा पर मौतें
पलभर में गयी हैं फैल
कहां हो, भगवान ?'

...और 'नदी को एक दरवाजा' जैसी एक कविता में नदी अकस्मात् गृहोन्मुख समय की छाया बन जाती है। यह अभिव्यक्ति कितनी सम्मोहक है –

'पुल निर्मल दीखता है,
कोई अकेला राहगीर
छोर को जोड़ देता है
अस्तव्यस्त दिन के बदन से,
कहां है नदी ? क्या नदी नहीं है ?
लगता है, यह नदी
घर लौटते समय की उल्टी छाया है
जोड़ा है जिसने मुझे
उस केन्द्रीय प्रतिमा से ।'

बिम्ब योजना में पारंगत सची राउतराय वर्ण, ध्वनि तथा आकृतियों पर आधारित भांति-भांति के बिम्बों का प्रयोग करते रहे हैं। प्रारंभ से ही उन्होंने मुक्त छंद का विकास किया जो कि निर्बंध तथा लचीला है। उनकी मान्यता है कि कविता को समस्त अलंकरणों

को तथा संगीत प्रलोभनों को त्याग कर मात्र कविता विशुद्ध कविता के रूप में ही अपनी नैसर्गिक गरिमा के द्वारा पाठकों के मन-मस्तिष्क पर छा जाना चाहिए। उनके इसी सोच का नतीजा है कि क्रान्तिकारी आवेश और समकालीन विसंगतियों के बावजूद उनके सृजन में ग्राम्य जीवन की लयात्मकता और उसके बहुमुखी सौन्दर्य से परिचय तथा उनके प्रति गहरी जागरूकता भी नजर आती है। 'वृत्त भंग' में वह इसीलिए कह उठते हैं :–

**'यात्रा करेंगे**
**दो समानान्तर**
**सरल रेखाओं-सी**
**भूर्ज-वन की ओर।**
**पढ़ेंगे वहां**
**दमयन्ती की चिट्ठी।'**

...और कभी-कभी वह अपने आपको सांवला बादल भी रूपापित करता है। 'बादल' में उसका यही निष्कर्ष नजर आता है :–

**'होगा-होगा कल का तोरण उदित।**
**और श्रेष्ठ जय का मेहराव**
**जिसके लिए मैं रत जगा करता हूं।**
**मैं एक सांवला बादल हूं**
**छू जाता है जो**
**तुम्हारी सत्ता के गिरि-श्रृंगों में।'**

अनुभवों की गहनता, समकालीन संत्रास की छटपटाहट, आसपास जरा-जरा से स्वार्थों के लिए पुनरावृत्त महाभारत के दृश्य, स्वप्न भंजन और कटु यथार्थ के स्पर्श ने सची राउतराय की काव्य कल्पना को सतत उद्वेलित करके नवीन ऊर्जा प्रदांन की। स्वप्न (१९५८) कविता-१९६२ कविता १९६ कविता-१९७१ और कविता-१९७४ इन पांचों काव्य संग्रहों में उनकी करीब २७ कविताएं संकलित हैं। जो जीवन के विद्रूपों को उखाड़ती हुई प्रगतिशील विचारधारा से सम्पृक्त हैं। 'नींद' में वह कितनी गहनता से हमारे समकालीन द्वेष-विष के प्रसारण पर व्यथा जाहिर करता है। पौराणिक ऐतिहासिक सन्दर्भों से उठाये चरित्रों एवं विम्बों ने उसे और भी महत्वपूर्ण बना दिया है –

**'घास उग आई**
**कुरुक्षेत्र के मैदान में**
**अब हो रहे हैं वहां एशियाड के खेल**
**मैं सो गया था।**
**उसके बाद कितना कुछ घटित हो गया।**
**मुगल आये, पुर्तगाली आये**
**अंग्रेज,**
**मंगल पाण्डे, तात्या टोपे**
**सभी उड़ गये राई की तरह**
**साइमन कमीशन आया**
**आये कई मिशन**
**भरत खण्ड का अलग हो गया**
**एक खण्ड**
**किन्तु हम आजाद हुए।'**

राष्ट्रीयता की प्रबल भावनाओं में किलोल करते हुए भी कवि ने अपने आपको सदैव विश्व बन्धुत्व की भावना का संवाहक ही सिद्ध किया है। 'स्मृति-लेख' में इसी सरोकार

से जुड़ा हुआ वह दशार्ण ग्राम, जो कि कालिदास के 'मेघदूत' में वर्णित ग्राम विशेष है, की तुलना आस्ट्रेलिया की मेलबोर्न नगरी से की, जहां कवि ने महीनों निवास करके अन्तर्राष्ट्रीय बंधुत्व की भावना पल्लवित की। वह कहता है :–

**'उसका स्पर्श,**
**उसके बदन की गंध और पिघला हर्ष,**
**लीलापूर्ण स्त्रियोचित ललित इस्पात**
**आंखों की मोरनी-सी मुद्रा**
**अगणित कामनाओं की**
**अनिद्रित नीलाभ चौरंगी ।**
**याद आती है, याद आती है,**
**याद आती है,**
**अति दूर**
**फल-भरे जामुन वन की छाया के बीच**
**वह मेरा दशार्ण**
**ग्राम है ।**
**नाम है मेलबोर्न**
**मेरी प्रिय नगरी ।'**

'दूसरे शहर का आदमी' – कविता में भी मनुष्य के मनुष्य से नैकट्य का कुछ मानवीय अहसास तीव्रता से कवि को कुरेदता नजर आता है। तब वह वहां के जहां वह है परिवेश से अपने परिवेश की तुलना कर उठता है :–

**'और व्याकरण –**
**कर्त्ता कभी छोड़ता नहीं क्रिया का साथ**
**उस सुदूर पर्वत का एकान्त सुनसान**
**तड़बन्ने की छाया और चढ़ाई भरे जंगल,**
**हांफते और चढ़ते-उतरते रंग,**
**वहां का मौसम**
**छोड़-गया है निशान**
**धोती हालांकि बनी है मद्रास में,**
**फिर भी यहां वैसी किनारी**
**कहीं देखी नहीं ।**
**कलम हालांकि यहां का नहीं है बना**
**याद नहीं आती देखा हो वैसा**
**ही कहीं और ।'**

उनकी काव्य सृजन यात्रा का मूल्यांकन करते हुए सीताकान्त महापात्र ने कहा है :– 'एक कवि के रूप में राउतराय एक लम्बी यात्रा तय कर आये हैं। यह निःसन्देह एक प्रमुख भारतीय कवि हैं और निश्चित रूप से आधुनिक उड़िया कविता के प्रवर्तकों में से हैं। चौथा और पांचवा दशक प्रगतिशील कविता का दौर रहा है और राउतराय उसके एक प्रमुख स्वर रहे हैं। किन्तु उनकी इस अवधि की सर्वाधिक महत्वपूर्ण रचना 'बाजी राउत' है, जो भूतपूर्व राजाओं की रियासत ढेनकलाल की निरंकुशता की गोली के शिकार एक नौजवान लड़के के विषय में लिखा गया शोकगीत है। हरेन्द्रनाथ चट्टोपाध्याय ने इस कविता तथा कतिपय अन्य कविताओं का 'दि बोटमेन बॉय एण्ड ४० अदर पोयम्स' नाम से अंग्रेजी में अनुवाद किया था, जिसका बड़ा अच्छा स्वागत हुआ। इन कविताओं ने विपन्न व्यक्ति, उसके अभावों तथा कष्टों और निर्मम नियति को समर्पित संवेदनशील कविताओं के बतौर ख्याति अर्जित की। इन कविताओं में क्रान्तिकारी आवेश भी सांसें ले रहा है।'

उनका विपुल सृजन अनूदित होकर भी

विविध भाषाभाषी क्षेत्रों में चर्चित हो चुका है।

विविधता भरे साहित्यिक सांस्कृतिक चिन्तन अनुष्ठानों में रत उनका गद्य साहित्य भी विपुल मात्रा में है। उड़ीसा साहित्य अकादमी के अध्यक्ष, फिल्म सैंसर बोर्ड के सदस्य, उड़िया कला परिषद के संस्थापन से भी वे अग्रगण्य उड़िया साहित्य मनीषियों में गिने जाते हैं। पदमश्री भी उन्हें प्रदत्त की गयी, पर उड़िया जनता तो उन्हें उड़िया काव्य गंगा का भगीरथ कहकर सम्मानित करती रही है। उनकी अनेक कविताओं के नाट्य रूपान्तर भी हुए और जनमानस पर उनकी गहन छाप भी पड़ी।

स्वाधीनता संघर्ष में निरन्तर अग्रणी रहकर इन्होंने अंग्रेजों की कृष्ण-भवनीय यातनाएं भी सही हैं। राउतराय के पास कवि का मन और शिल्प विधान तो था ही, आजादी के आन्दोलनों से प्राप्त भोगे हुए यथार्थ उन्हें अनुभवों की पोटली सौंपी, जिससे वे मानवता, व्यंग्य, तीव्र भावावेग और समझदारी की दीप्ति भी काव्यानुरागियों को दे सके।

'बसन्त के एकान्त जिले में' शीर्षक से भारतीय ज्ञानपीठ ने राजेन्द्र प्रसाद मिश्र तथा अजितकुमार द्वारा अनूदित चुनी हुई कविताओं की कृति राष्ट्रभाषा के पाठकों के लिए प्रकाशित की है। चयन कवि की सलाह से हुआ है। यह सारस्वत अनुष्ठान भावात्मक एकता को बल देगा। उम्मीद करनी चाहिए कि सची राउतराय समकालीन यंत्रणाओं पर भी बेलाग कलम चलाकर उड़िया काव्य भण्डार को अपना अवदान भेंट करते रहेंगे।

— बी. ११६ विजयपथ, तिलकनगर,
जयपुर - ३०२००४ (राज.)

□

# दो छन्द

भयभीत हूं मैं इतनी परछाई की संज्ञा से भी डरने लगी हूं।
दुख ऐसा 'मनीषा' मिला दुखदाई की संज्ञा से भी डरने लगी हूं।
तपा ऐसा निदाघ कि मैं अमराई की संज्ञा से भी डरने लगी हूं।
अब तो इस जीवन में सुखदाई की संज्ञा से भी डरने लगी हूं।

* * *

मनभावन का मिट योग गया तब चातक का स्वन क्या करेगा?
नहीं सत्य बनेगा 'मनीषा' कभी तब कल्पना का धन क्या करेगा?
पिया घोर हलाहल जीवन में तब अमृत का कन क्या करेगा?
तन का मन का रस रीत गया तब पावस का घन क्या करेगा?

**— डॉ. मनोरमा शुक्ल 'मधुर मनीषा'**
**सारस्वत सदन, सिविल लाइन्स, सीतापुर, उ.प्र.**

बंगला कहानी

# लट्टू

### □ बारीन्द्रनाथ दास

बस्ती छोटी है। कभी शायद बागान नाम था। आजकल नया नामकरण होकर एक प्रसिद्ध आदमी की स्मृति बनाये हुए है। रास्ता मझोल किस्म का चौड़ा है, जिसके एक ओर अभिजात ट्राम का रास्ता है और दूसरी ओर सिरकी के बने ठसाठस मकान हैं।

बीच में सिर्फ मध्यवित्त लोगों की बस्ती है। उठते व्यवसायी, बिगड़े जमींदार, एडवोकेट, डॉक्टर, प्रोफेसर, दफ्तर के कर्मचारी आदि।

उनके बीच में एक मकान का गैरेज भाड़े पर लेकर एक धोबी घराना रहता है, बाप रामपुकार, मां मोतिया और लड़की लट्टू।

मुहल्ले में घर-घर जाकर रामपुकार कपड़े ले आता है। उसके बाद छोटे-से ठेले पर कपड़ों के गट्ठर लादकर रामपुकार और मोतिया उन कपड़ों को पता नहीं कहां दे आते हैं। चार-पांच दिन के बाद वे गट्ठर फिर लौट

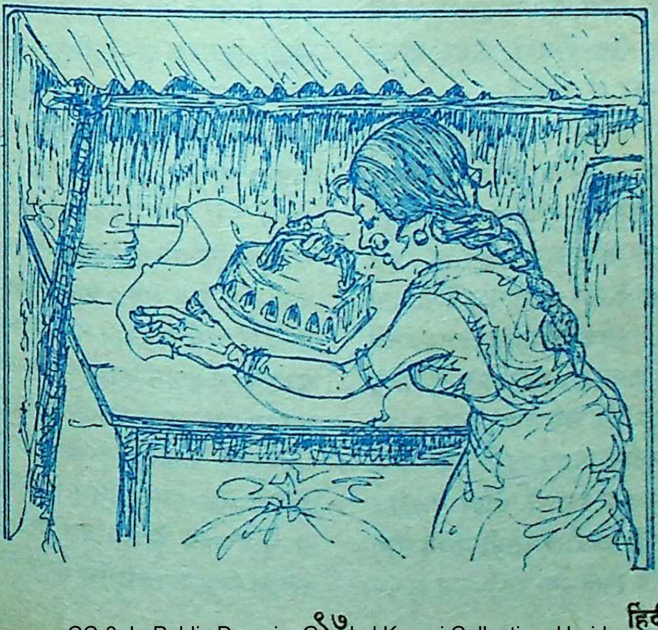

१९९०

आते। किसी-किसी घर के नौकर बीच-बीच में दो-दो, एक-एक कर शर्ट या पैंट ले आते और कहते, 'बाबू ने कहा है, कल ही देना होगा!' कल देने को रामपुकार कभी राजी न होता। परसों देने से काम चले तो वह अर्जेंट कर सकता। उसके बाद मोतिया उसे पीछे की ओर के नल पर धो लाती और रास्ते के एक ओर किसी के बाड़े या चबूतरे पर सुखा लेती।

संध्या के समय रास्ते के किनारे कोयले की अंगीठी जलती। उस पर रखी जातीं दो-तीन लोहे की इस्तरी। आफिस से लौटते बाबू, स्कूल से लौटतीं लड़कियां और कालेज से लौटते लड़के देखते कि सोलह साल की सांवली, चंचल लड़की लट्टू ऐसी गरमी में पसीने से तर-बतर एक के बाद दूसरी शर्ट, ब्लाउज, धोती-साड़ी, पैंट पर इस्तरी करती जाती है और बीच-बीच मे बाहर आकर इस्तरी बदल कर ले जाती है।

सब दिन उसका यही काम चलता रहता। वह नहीं होता तो सुबह के समय केवल फुटपाथ के किनारे हाथ में लोटा लेकर दातुन करने बैठ जाती और दिन चढ़ने के पहले दरवाजे के पास बैठकर आटा माड़ते मोतिया से बातें करती। इसके सिवा और कुछ करते उसे नहीं देखा जाता। केवल शाम के समय पाच बजे से रात आठ बजे तक इस्तरी करना उसका बंधा रुटीन था।

उसकी की हुई इस्तरी बेऐब रहती। अंग्रेजों की बस्ती के चीना लांड्री में भी ऐसी अच्छी इस्तरी न होती।

एक बार, पता नहीं किसने, मजाक में कह दिया था, 'लट्टू बीवी की लांड्री।' वही नाम अब चालू हो गया था। केवल बस्ती के बाहर के लोग इस नाम को नहीं जानते थे, क्योंकि इस नाम का साइनबोर्ड लगाने की बात किसी ने कभी नहीं सोची। किसी घर के किसी बच्चे ने एक रोज दरवाजे पर चाक से यह नाम लिख दिया था, तो भीगे चिथड़े से वो पोंछते-पोंछते मोतिया ने इतनी गालियां सुनायीं कि फिर किसीने उसके सामने इसका नाम भी न लिया। सिर्फ लट्टू हंसती रही थी। उसे यह नाम बड़ा मजेदार लगा था, 'लट्टू बीवी की लांड्री।' मां को इतना गुस्सा क्यों है, यह उसकी समझ में कभी नहीं आया।

पास ही एक दूसरे मकान के पास, एक टुकड़ा जमीन पर टीन से छाया एक मकान है, जिसमें छोटी-सी चाय की दुकान है। पान, बीड़ी, सिगरेट और मित्तिर बेकरी की आधा पाउंड, अथवा क्वार्टर पाउंड रोटी भी मिलती। बस्ती के नौकर, नौकरानियां वहां अड्डा मारने आया करते, कभी कभी कुछ अच्छे घरों के दरबान, ड्रायवर भी आते। रास्ते के किनारे टीन की कुर्सी पर बैठकर वे कुल्हड़ में चाय पीते। चाय की उस दुकान का भी कोई नाम नहीं था। सब हरिपद की दुकान कहा करते। उस दुकान में एक लड़का काम करता, उसका नाम था, गोपाल। उसकी उमर भी अठारह, उन्नीस या बीस रही होगी। खूब काला, दुबला-पतला, चेहरे पर दो-चार माता के दाग और धंसी हुई आंखें। वह हरिपद का कछ रिश्तेदार लगता था।

दूसरे नौकर, नौकरानियां, ड्रायवर, दरबान उस पर खुब हुक्म चलाते। उसे जरा फुर्सत न मिलती, वही सवेरे से जुटता, तो रात बारह-एक तक जुटा ही रहता। अभी कोयला तोड़ रहा है, अभी चाय की केतली साफ कर रहा है, सौदा खरीदकर ला रहा है। हरिपद की लड़की को गोद में लिये टहल रहा है, फिर अनगिनती बार पानी भरकर लट्टू के मकान के पिछवाड़े के नल पर से ला रहा है।

शुरू-शुरू में चार-पांच दिन तक लट्टू चुपचाप देखती रही। उसके बाद एक दिन पूछा- 'अरे, वह तुझे कितना रुपया महीना देता है?'

गोपाल ने जरा हैरानी से उसकी ओर देखा। कुछ बुद्धू-सा लड़का, ताजा गांव से आया, कैशोर्य की सरलता उसके चेहरे पर अभी भी थी। वह जानता था कि यह पछांह के देहाती हैं, आने के बाद से मोतिया और रामपुकार का देहाती झगड़ा अपने कानों से सुना था। समझा कुछ नहीं। सिर्फ हंसता रहा। लट्टू के मुंह से शुद्ध मधुर बंगला सुनकर हैरान रह गया।

'मुंह फाड़ के क्या देखे है? बोल न।'

'तुम बंगला बोल सकती हो?'

'अलबत्त बोल सकती हूं। मैं इसी कलकत्ता में पैदा हुई। यहीं बड़ी हुई, बंगला क्यों न जानूंगी? मैं तेरी तरह गंवार नहीं हूं, तुमसे बहुत अच्छी बंगला बोल सकती हूं। पर बताया नहीं। तुझे वह कितना महीना देता है?'

'कुछ नहीं। खाना देता है, पहनने को देता है, रहने को देता है।'

'बस? और कुछ नहीं? तो फिर यहां क्यों रहता है?'

'कहा था। काम ठीक करा देगा।'

'अरे, मेरी सास के टाल, वह तेरा काम ठीक करा देगा? हो चुका।'

'क्यो?'

'ऐसा बिन पैसों का गुलाम हरिपद को कहां मिलेगा?'

सुनकर गोपाल चुप रह गया।

'देश में तेरे कौन है?'

'मां रही, सो मर गई। यही मामा ले आये।'

'हरिपद शायद तेरा मामा है?'

'हां।'

'अच्छा, अभी जा।' कहकर लट्टू काम में जुट गई।

पानी लेकर गोपाल चला गया। मोतिया बाहर सूखते कपड़े लेकर आयी थी।

मुकर्जी लोगों का ड्रायवर बलायी पाठक याद दिला गया– 'क्योंजी, मोतिया, खूब भागी-भागी घूमती हो। साहब का रुमाल, गंजी और शर्ट शाम के पहले चाहिये। लट्टू को इतना खटाती हो, स्वंय तो खूब आराम से पैर फैलाकर बैठे पान-सुपारी चबाती रहती हो। इतवार को साहब कई दिन के लिये बाहर जा रहे हैं। कहो तो लट्टू को गाड़ी पर बैठा के चिड़ियाघर या रेसकोर्स दिखा लाऊं।'

लट्टू के कान लाल हो उठे। मोतिया ने बलाई पाठक को एक मोटी-सी गाली दी वह

हंसते-हंसते चला गया। यह उन लोगों का रोज का हंसी-मजाक था, हंसी-मजाक होने पर भी उसके पीछे कुछ रंगीन उम्मीदें न हों, ऐसी बात न थी।

उस दिन पानी ले जाते समय गोपाल ने थोड़ा रुक कर पूछा, 'तुम्हारा नाम क्या है?'

'अभी तक किसी के मुंह से सुना नहीं? तू तो बिलकुल बौड़म है। मेरा नाम लट्टू है।'

गांव के सीधे-सादे लड़के गोपाल के चेहरे पर हंसी खिल उठी। उसने पूछा- 'तेरे साथ जिसका ब्याह होगा, उसका नाम शायद लत्ती होगा।'

लट्टू ने आंखें उठाकर देखा। उसके बाद हंसते हुए ही बोली- 'लत्ती नहीं तो मुझे संभाल कैसे सकेगा? क्यों तू बनेगा मेरा लत्ती?'

गोपाल के कान, आंख, मुंह लाल हो उठे। इन शहरी लड़कियों के मुंह में कोई बात अटकती नहीं, गांव का लड़का गोपाल सोचने लगा फिर उसके मुंह से बात न निकली। वह आंखें झुकाये चला गया। इस्तरी करते-करते लट्टू मन-ही मन हंसती रही।

तभी रामपुकार घर में घुसा। उसने पूछा, 'कुछ काम नहीं है, बस हंसना-ही-हंसना है। तेरी मां कहां है?'

लट्टू मां का पता बताये कि इससे पहले ही बोस लोगों का दरबान नन्दन कतार आकर दरवाजे पर खड़ा हो गया। बड़े लोगों का दरबान। अपने हाथ भी दो-चार पैसे हैं। वैसा ही मिजाज भी है। रुपये पर दस पैसे महीना ब्याज लेकर इसे-उसे रुपया उधार भी दिया करता। इसीलिए बहुत लोग उसके अत्यंत अनुगत थे।

उसे देखकर रामपुकार का मुंह स्याह प गया। लट्टू चिढ़ उठी।

'क्यो रे, आज भी शायद किस्त न मिलेगी?' नन्दन कहार ने थोड़ा हंसकर पूछा। लट्टू के आगे उसका मिजाज नरम हो जाता था। बोला, 'तुम-औरत-मर्द, सब लोग मिलकर खटते हो, जरा-सी लड़की लट्टू को भी खटाते हो। तब भी तेरे हाथ में पैसा नहीं रुकता। लट्टू को खटा-खटा कर मार डालेगा। कर दे उसकी शादी।'

'रुपया कहां है, भाई?' रामपुकार बोला।

'रुपयों की क्या फिकर? जो लगेगा, मैं उधार दूंगा लट्टू की शादी के लिए रुपये ब्याज न देना।' कहकर पान चबाते-चबाते तिरछी नजर से नंदन ने लट्टू की तरफ देखा।

लट्टू कपड़ों पर इस्तरी करने की ओर ही ध्यान लगाये रही।

'कल, लेकिन याद करके इस महीने की किस्त दे देना', कहते हुए वह चला गया।

एक दिन गोपाल के हाथ में ज्यादा काम नहीं था। चुपचाप खड़े-खड़े लट्टू को इस्त्री करता देखता रहा।

'कैसी अच्छी शर्ट है।' वह बोला।

'यह शर्ट मुकर्जी साहब की है, वह, जिनकी बड़ी-सी गाड़ी है। बलाइ पाठक चलाता है। वह मुकर्जी साहब।'

'शर्ट का सामना तो उस तरह का है। दूसरी तरफ ऐसा क्यों है?'

'तू कैसा बुद्धू है। यह तू नहीं जानता?

इसको कहते हैं, डिरेस शर्ट। यह पहनकर साहब लोग शराब पीने जाते हैं। यह सब तो वह हमारे ऐसे लोगों को धोने को नहीं देते, लिंडसे-स्ट्रीट, पार्क स्ट्रीट की अंग्रेजी दूकानों पर धोने को देते हैं। मैं खूब अच्छी तरह इस्तरी करती हूं, इसलिये ही साहब बीच-बीच में हमारे पास इस्तरी करने को कपड़े भेजते हैं।'

थोड़ा चुप रहकर वह इस्तरी करने में लगी रही। गोपाल ने देखा कि लट्टू का माथा पसीने से चमक रहा है। वह कुछ अनमना हो गया।

लट्टू ने ही फिर बात करना शुरू किया। बोली 'मुकर्जी साहब पहले बहुत बड़े आदमी थे। बहुत-सा रुपया, बड़ी ज़मींदारी, कलकत्ते में बहुत-से मकान थे। अब कुछ नहीं रहा। बस, पहले का छोटा-मोटा ठाट रह गया है। मैं अच्छी इस्तरी करती हूं, क्या इसलिये अब भेजते हैं। धुलायी में देने लायक पैसे नहीं रहे। इसीलिये साहब देहाती धोबिन को याद किया है।'

'वह क्या है रे? वह जो चमक रहा है?'

'वह? उसे शार्कस्किन कहते हैं। आज कल खूब चालू है। हाथ में पैसा आते ही बाबू लोग इस कपड़े की अचकन बनवा लेते हैं। बड़ा दामी है। ऊपर गीला कपड़ा रखकर इस्तरी करना पड़ता है। छोटे बाबू का कपड़ा है यह। बोस बाबू लोगों को नहीं जानता? वही तो, जिनके घर नंदन कहार दरबान है। उनके पास बहुत पैसा है। पांच ही साल पहले

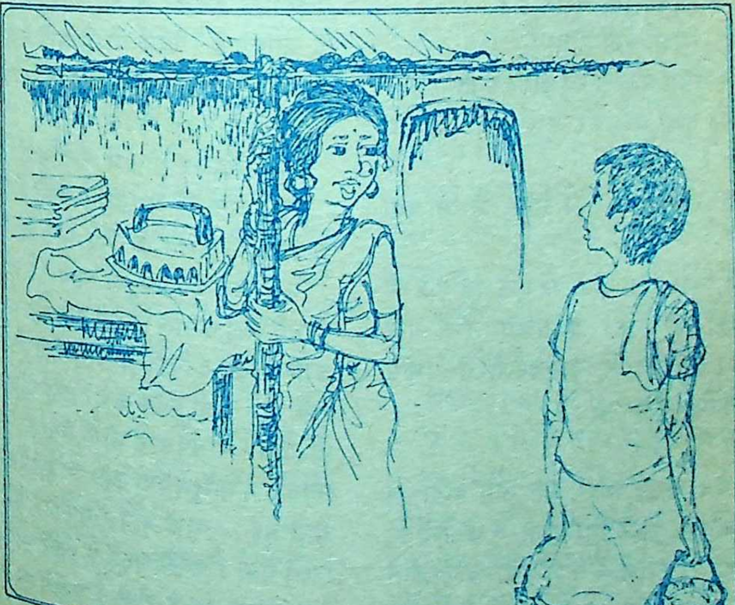

तो उनकी मामूली-सी हालत थी। इन कुछ बरसों में ही रोजगार में मुनाफा किया है।'

गोपाल ने अपनी धोती की ओर देखा। बडी गंदी हो गयी है। उसने सोचा, धोना पड़ेगा। सोचते-सोचते चला गया।

एक दिन पानी भरकर जाते-जाते देखा कि बलाई पाठक लट्टू से कुछ कह रहे हैं और लट्टू कपड़ों पर इस्तरी करते-करते ठी-ठी हंस रही है। सहसा उसका मन क्यों खराब हो गया, यह गोपाल की समझ में न आया। वह झटपट अपने काम से चला गया। लट्टू ने मुंह उठाकर भी नहीं देखा। बहुत देर बाद फिर पानी लेने जाते समय वह किसी ओर देखे बिना ही सीधा चला आ रहा था।

लट्टू ने उसे बुलाया। बोली, 'क्यों रे लगता है, तुझे बड़ा गुस्सा है?'

'क्यों, गुस्सा क्यों होगा?'

'उस समय मुकर्जी का ड्रायवर आया था। इसीलिए तुझे बुलाकर कुछ बात नहीं की, इसलिये?'

'नहीं बोली तो नहीं सही, उससे क्या हुआ?'

'नहीं, कुछ हुआ नहीं, पर एक बड़े मजे की बात हो रही थी। इसीलिए तुझे नहीं बुलाया। जानता है, ड्रायवरजी ने मुझसे शादी करना चाहा था।'

'ऐसा?'

'हां रे। उससे कहा, यह कैसे होगा, तू दूसरी जात है, दूसरे देश का है, तू बंगाली है, हम बिहारी। सुन तो उसकी लंबी-चौड़ी बातें बोला लट्टू, जमाना बदल गया है, कैसी जात और कैसा बंगाली-बिहारी? प्यार मुहब्बत यदि है, तो शादी होवे, सीधी बात। बोला कि उसकी दो-सौ तनख्वाह है, साहेब के बंगले पर बड़ा सा कोठा है। पर यह काम छोड़कर चटकल में ड्रायवर का काम ले रहा है। वहां और बेसी तनखा है।'

'ठीक तो है। उससे ब्याह कर ले।'

लट्टू हंसी। बोली– 'मैने कह दिया, वह सब नहीं होगा।'

'क्यों?'

'मैं तो उससे प्यार करती नहीं।' लट्टू ने मुस्कराकर उत्तर दिया।

'तू किसे प्यार करती है?' गोपाल ने धड़कते हृदय से पूछा।

लट्टू ने आंख उठाकर गोपाल की ओर देखा फिर हंसकर बोली, 'किसे प्यार करती हू, जानता है? किसी से कहेगा तो नहीं? बाबू लोगों के उस दरबान से नन्दन कहार से, उसके पास बहुत रुपया है।'

'हूं-' कहकर गोपाल चला गया।

लट्टू मन-ही-मन हंसते-हंसते अंगीठी पर से इस्तरी बदलने के लिए चली गयी।

उस दिन हरिपद की चाय की दुकान के सामने बैठा गोपाल कोयले तोड़ रहा था। उस समय लट्टू दरवाजे के पास बैठी आटा सान रही थी। तभी नंदन कहार वहां आकर खड़ा हो गया। रामपुकार धोबी निकला। उससे नंदन ने न मालूम क्या कहा। पहले दबे गले से बातें हुईं। उसके बाद रामपुकार जैसे थोड़ा नरम पड़ा। पहले लट्टू से जाने क्या कहा। उसके बाद कहार बोला। जवाब देने के लिये

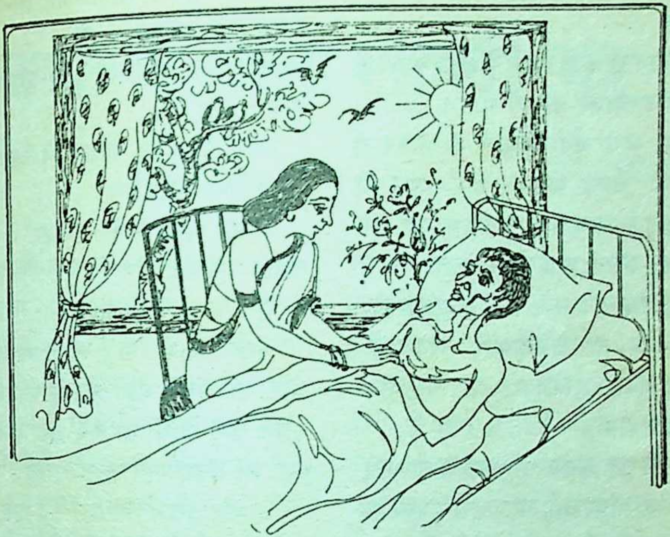

लट्टू ने मुंह उठाया।

पर बैठे-बैठे कुछ देखने का सुयोग न मिला। हरिपद दुकानदार ने उसे एक बार पुकारा उसके बाद उसे मां की आवाज देकर गाली दी। उसके बाद उसे दो पैकेट चाय खरीदने के लिये बाजार भेज दिया।

शाम के समय जब पानी लिये गोपाल लौट रहा था, लट्टू दरवाजे के पास चुपचाप बैठी थी। गोपाल थोड़ा चौंका। इस समय वह इस्तरी करती रहती, बैठती न थी।

उसे देखकर लट्टू ने पुकारा— 'सुन! बात बिना किये भाग कहां रहा है? एक मजे की बात है। जानता है। नंदन कहार मुझसे शादी करना चाहता था।'

'अच्छा ?' निरासक्त भाव से गोपाल ने पूछा।

'हां, बाबा ने उससे कुछ रुपये उधार लिये थे। अभी दे नहीं पा रहे हैं।'

'अच्छा तो है। नंदन से प्यार कर ले। उस दिन तो कह रही थी कि तू नन्दन को प्यार करती है। उसके पास बहुत-सा रुपया है।

लट्टू मुस्करायी। गोपाल की ओर देखकर बोली— 'नहीं रे, अब हमारा दिल दूसरी बात कहता है। जानता है क्या? मैं प्यार करती हूं उस ड्रायवर बलाई पाठक को। वह देखने में बड़ा खूबसूरत है।'

'अच्छा, ब्याह में मुझे न्यौता देना।'

'हां रे, तुझे तो जरूर दावत खिलाऊंगी। तू मेरा कितना दोस्त है।'

दुकान पर काम करते-करते गोपाल ने देखा कि उस दिन रामपुकार के घर के सामने इस्तरी गरम करने के लिए अंगीठी नहीं

जली। मोतिया चुपचाप रोटी बना गयी। बाहर मोढ़े पर बैठा रामपुकार मूंछें पर ताव देता रहा।

उसके बाद रोज के समय से बहुत पहले ही कोठरी का दरवाजा बंद हो गया।

कुछ देर बाद बंद दरवाजे के भीतर से सुनायी पड़ी, बहुत झगड़ा, डांट-डपट की आवाज, उसके पश्चात धमाधिम थप्पड़-घूंसे की आवाज, उसके बाद रोना।

सब लोग पहचान गये, रोना लट्टू का है।

कोठरी के सामने नौकर, नौकरानी, दरबान, ड्रायवर, दूकानदार और राहगीरों की भीड़ लग गयी।

गोपाल को उस समय भी बहुत काम था। उधर जाने का मौका नहीं था। उसने सुना कि रामपुकार का किसी से झगड़ा हो रहा है। तमाम लोग उसे डांट रहे हैं।

हाथ का काम निपटाकर बाहर आते-आते गोपाल ने देखा कि भीड़ छंट गयी है। रामपुकार और उसकी औरत मोतिया ने फिर दरवाजा बंद कर दिया था।

बलाई पाठक सिर झुकाये एक ओर चले जा रहे थे। नन्दन कहार सिर नीचा किये दूसरी ओर जा रहा है।

उस दिन रात को बड़ी गरमी थी। दत्त बाबू का बरांडा खाली था। वहीं चटायी बिछाकर गोपाल पड़ रहा।

मुकर्जी बाबू के घर की छत पर उस समय चांद निकला था और इधर-उधर छिटके हुए तारे झिलमिला रहे थे। उन्हें ही देखते-देखते गोपाल सो गया।

दिन-भर कड़ी मेहनत के बाद जो आती है, उसमें आराम तो मिलता है, सपने नहीं आते।

वही नींद किसी के हाथ के स्पर्श से गयी।

आंखें फाड़कर गोपाल ने देखा कि उसके पास बैठी है।

'सपना नहीं है रे।' लट्टू ने हंसते कहा– 'सच है।'

'तू? इतनी रात गये!'

'पूछने आयी थी', लट्टू बोली, 'बाबा और मां अगर यह कोठरी छोड़कर दूसरी जगह चले जायें, तो हम और तुम मिलकर यहां का काम नहीं चला सकते?'

'मैं और तुम?' गोपाल ने हैरानी से पूछा।

'हां, रे।' लट्टू बोली, 'आज बाबा और मां से साफ-साफ कह डाला। कहा, हो न वह दूसरी जात, हो न वह दूसरे देश का आदमी, फिर भी उसके साथ मेरी बहुत दिन की आसनायी है। बाबा और मां ने मुझे डांट, मारा, आखिर को राजी हो गये।'

गोपाल चुपचाप लट्टू की ओर देखता रहा। कुछ देर बाद बोला – 'तूने खुद ही कहा?'

लट्टू ने हंसते हुए गोपाल का गाल दबाकर कहा, 'बिना बोले काम कहां चलता था? तू तो ऐसा गंवार है, अपने मुंह से तो एक बात भी न कहता। और तेरे भरोसे बैठी रहती, तो पूरी जिन्दगी बीत जाती।'

[अनुवाद : प्रभाती]

□

व्यंग्य

# बर्थ-डे अनारकली का

☐ राजेन्द्र परदेसी

सुबह आफिस जाने लगा, तो श्रीमतीजी ने कहा, अजी सुनते हो ! आज जरा जल्दी लौट आना, शर्माजी के यहां शाम को चलना है। उनकी अनारकली का बर्थ-डे है। उनकी मिसेस कल ही कह गयी थीं कि आप दोनों जने जरूर आइयेगा।

यह तो जानता था कि शर्माजी मुहल्ले के बड़े आदमी हैं। किसी कम्पनी में ऊँचे पद पर हैं। घर में टी.वी., फ्रीज आदि लगा रखा है। सवारी के लिए एक कार भी रख छोड़ी है, जिसका उपयोग वह तो कम, उनकी श्रीमती ज्यादा करती हैं। मुहल्लेवालों पर रोब गालिब करने के लिए वह पास-पड़ोस की महिलाओं को भी कभी-कभार बाज़ार जाते समय कार में बिठा लेती हैं। इन महिलाओं से काम तो वे नौकरानियों का ही लेती हैं, लेकिन 'बहनजी', भी कहती रहती हैं। काम भी निकल जाये और बुरा भी न मानें।

दो-चार बार मेरी श्रीमतीजी को भी कार में घुमा क्या दिया, तो वह भी उनकी भक्त हो गयी हैं। जब देखो, उनकी प्रशंसा के पुल बांधती रहती हैं।

शर्माजी जब कार ले आये, तो श्रीमतीजी ने ही पहले-पहल इसकी सूचना मुझे दी थी। लेकिन उनके यहां अनारकली कब आयी, इसकी सूचना आज तक मुझे नहीं मिली थी। आज पहले-पहल उसके बारे में सुन रहा हूं।

शर्माजी बड़े आदमी ठहरे। बड़े आदमियों की बड़ी बातें होती हैं। इस कारण अधिक कुछ नहीं पूछा। श्रीमतीजी को भी अब कुछ नहीं कहना है, इसलिए अपनी साइकिल आगे बढ़ाया ही था कि पुनः उनकी आवाज सुनायी पड़ी, 'अजी, भूलना मत। जल्दी ही लौटना... और सुनो, उसके लिए कोई चीज़ जरूर लेते आना।' यह निर्देश देकर दरवाजा बन्द कर लिया।

बन्दा भी साइकिल पर सवार होकर पैडिल मारता हुआ आगे बढ़ने लगा, यह सोचते हुए कि वेतन तो सरकार देती है, लेकिन आने-जाने के समय का निर्धारण खुद श्रीमतीजी करती हैं। शायद सोचती हैं कि आफिस न हुआ, खालाजी का घर है। जब मन आया गये, जब न आया नहीं गये।

मेरे साहब मुझ पर कुछ ज्यादा ही मेहरबान रहते हैं। शादी-शुदा हैं, इस कारण पति की पीड़ा को समझते हैं। तभी तो जब हाफ़-टाइम की छूट्टी मांगी, तो पहले मेरे मासूम चेहरे को देखा, फिर मुस्कराकर

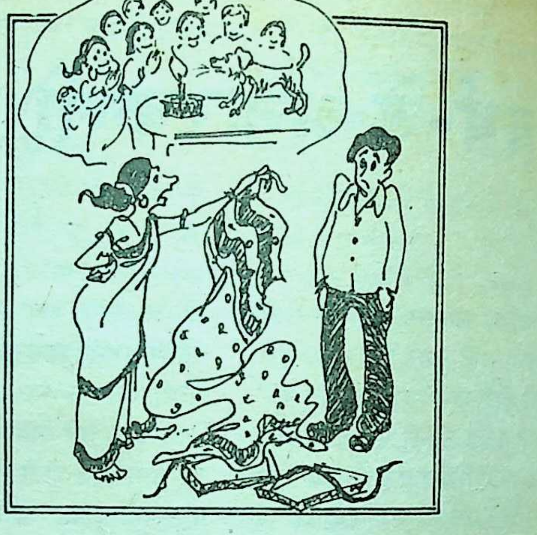

अपनी स्वीकृति दे दी।

जल्दी घर लौटने की समस्या तो हल हो गयी, लेकिन सबसे बड़ी समस्या जो थी, वह थी अनारकली के लिए प्रेजेन्टेशन। मेरे जैसे मन्द-बुद्धि वाले की समझ में नहीं आ रहा था कि क्या करूं?

विद्यार्थी जीवन में जब मैं इलाहाबाद में पढ़ता था, तो 'मुगले-आज़म' की अनारकली को देखा था, लेकिन मुहल्ले के शर्माजी की अनारकली को मैंने कभी नहीं देखा। फिर बिना देखे-समझे कैसे क्या लूं?

मेरी समझ ने जब समझने से इंकार कर दिया, तो हार कर 'मुगले-आज़म' में देखी अनारकली को ही आदर्श मानकर प्रेजेन्टेशन लेने चल दिया।

शर्माजी की अनारकली को भी पैदा होना था, तो महीने के आखिर में ही पैदा हुई। पहले हफ़्ते में पैदा हुई होती तो कुछ और ही रंग होता। बर्थ-डे भी तो महीने के प
हफ़्ते में पड़ा करता है। अन्त में तो घर
खर्च चलाना ही मुश्किल हो जाता है। ऐ
कोई अच्छा प्रेजेन्टेशन कहां से लिया जा
वह भी अनारकली के लिए?

उधार देने वालों में ले-देकर ए
चरणदास ही ऐसा है, जिससे कुछ-न-कु
मिल जाता है। बाकी तो सब ऐसे ही हैं
उनके आगे मुंह खोलने का दिल ही न
करता। इस बार भी बेचारे ने जबान खा
नहीं जाने दिया। उधार में एक साड़ी दे दी
इस शर्त पर कि पहली को तनख्वाह मिलते ही
घर जाने से पहले साड़ी का पैसा इधर से दे
जायेंगे। मुझे जरूरत थी तो उस समय व
शर्त स्वीकार कर ली। सोचा, चरणदास
अपनी दुकान देखेगा कि पहली तारीख को
मेरा पीछा करेगा। कोई ज़रूरी है कि उसकी
दुकानवाली सड़क से ही होकर आफिस जा

करें। बगलवाली गली से तो और नज़दीक पड़ता है। इधर से बस एक फायदा है कि साइकिल से उतरना नहीं पड़ता, गलीवाले रास्ते में दो जगह उतरना पड़ता है। वह रास्ता ठीक नहीं है। करूं भी तो क्या करूं? इसके अलावा और कोई चारा नहीं। पहली तारीख को चरणदास को सौ दे दूंगा तो महीने का शेष खर्चा कैसे चलेगा। इतनी महंगी न लेता, तो लोग क्या कहते? दो महीने बाद तो गुड़िया की शादी है। आज उन्हें सौ की साड़ी दूंगा तो उसकी शादी में कम-से-कम दो सौ की देंगे ही। चरणदास को तभी देखा जायेगा।

साड़ी लेकर घर पहुंचा तो मन ही मन खुश था।श्रीमतीजी हर बार मुझे कोसती थीं कि मुझे बाज़ार करना नहीं आता। इस बार तो मेरी तारीफ जरूर करेंगी।

साइकिल की आवाज से ही उनको पता चल गया कि मैं आ गया हूं। तुरन्त दरवाजा खोलकर पूछा 'क्या लाये हो।'

खुशी से उनकी ओर पैकेट बढ़ाते हुए कहा, 'देख लो। फिर मत कहना कि मुझे खरीददारी करनी नहीं आती।'

पैकेट खोलकर साड़ी देखते ही श्रीमतीजी मेरे ऊपर ऐसे बरस पड़ीं, जैसे अचानक बिना बादल के बरसात के साथ ओले गिरने लगे हों। मैं अपनी गलती महसूस करने लगा कि बड़े लोगों के यहां तो सौ रुपये की साड़ियां नौकरानियां पहनती हैं, फिर यह साड़ी शर्माजी की अनारकली क्या पहनेगी। अपनी भूल पर पश्चात्ताप कर ही रहा था कि श्रीमतीजी गरजती हुई बोलीं, 'कुतिया के लिए यही लाना था?'

पहले तो मेरा माथा ठनका, शायद श्रीमतीजी को शर्माजी की अनारकली से ईर्ष्या हो रही है। इसी कारण उसे मानव जाति से हटाकर पशु की श्रेणी में रख रही हैं। गुस्सा जब अपने से कम हुआ तो उन्होंने स्वयं ही सब कुछ स्पष्ट किया। तब कहीं जाकर समझ मे आया कि उनकी विलायती कुतिया का देशी नाम अनारकली है। आज वह एक साल की हो जायेगी, उसी के उपलक्ष्य में बर्थ-डे मनाया जा रहा था।

साड़ी तो आ ही गयी थी। सोचा, श्रीमतीजी की लगभग सभी साड़ियां फट गयी हैं। इसका रोना भी रो रही थीं। मौका अच्छा है, क्यों न मक्खनबाजी ही कर डालूं! तुरन्त बोला, 'अच्छा ही हुआ, इसी बहाने तुम्हारे लिए एक साड़ी आ गयी। अब जल्दी पहनकर तैयार हो जाओ। शाम के शो में पिक्चर देखने चलेंगे। रही बात शर्माजी के यहाँ जाने की, तो उसके लिए कोई बहाना बना देना, उसमें तो तुम माहिर हो ही।'

मेरी मक्खनबाजी सफल रही। तभी तो वे जाते-जाते मुस्कराकर मीठी फटकार देती गयीं- 'अजी हटो, तुम बड़े..... हो।'

— ६३, आवास विकास कालोनी
बस्ती-२७२००१,उ.प्र.

□

# बिरादरी का सवाल है

☐ धनेश्वर प्रसाद

एडवोकेट नारायण बाबू की चारदीवारी में बंद खानदानी कोठी रात्रि के सन्नाटे में डूबी हुई थी। किन्तु उनके शयन कक्ष की बत्ती अभी भी जल रही थी। वह किसी मुकदमे की तैयारी में जुटे हुए थे। उन्हें जिस दिन रात्रि में अधिक देर तक कार्य करना होता है उस दिन वह अध्ययन कक्ष से शयन कक्ष में चले जाते हैं।

वैसे तो वह आपराधिक मामलों के वकील थे, पर गंभीर और चिड़चिड़े स्वभाव के नहीं थे। बड़े शांत एवं हंसमुख प्रकृति के थे वह। उनकी पत्नी सावित्री देवी भी धर्मपरायण और दयालु प्रकृति की महिला थीं। उनकी शिक्षा यद्यपि सिर्फ धार्मिक हिन्दी पुस्तकें पढ़ने और पत्रादि लिखने तक सीमित थी पर वह गृहस्थी की गाड़ी सुचारुता से चलाने में सिद्धहस्त थीं।

सावित्री देवी पलंग पर लेट कर किसी धार्मिक पुस्तक का हिन्दी संस्करण पढ़ रही थीं, मगर उनकी नजरें बार-बार नारायण बाबू की ओर चली जाती थीं। इसका मतलब था कि उनके समक्ष कोई ऐसी समस्या थी, जिसका समाधान करने में नारायण बाबू का सहयोग अपेक्षित था।

परन्तु नारायण बाबू उनकी समस्या से बेखबर बड़ी तन्मयता से अपने कार्य में संलग्न थे। मेज पर कानून की मोटी-मोटी पुस्तकों का अम्बार लगा हुआ था। टेबल लैंप के प्रकाश में उनकी नजरें एक पुस्तक के पन्ने पर तैर रही थीं।

बहुत देर तक इंतजार करने के बावजूद जब नारायण बाबू का ध्यान नहीं टूटा तो वह प्यार से झिड़ककर बोलीं – 'दिन-रात काम और काम।'

'क्या बात है?' वह मुस्कराकर परिहास के स्वर में बोले, 'आज मेरा इंतजार क्यों हो रहा है?'

'दुत्!' वह लजा कर बोलीं, 'बड़े बेशर्म हैं आप।'

'लो, मैंने ऐसा क्या कह दिया कि 'बेशर्मी' की पदवी मिल गयी मुझे?' वह हंस कर बोले।

'गृहस्थी में कोई न कोई समस्या होती ही है।' वह बिदक कर बोलीं, 'उसकी ओर भी आपको ध्यान देना चाहिये।'

'गृहस्थी का क्षेत्र तुम्हारा है। उसकी समस्याओं से तुम स्वयं निपटो।'

'कुछ समस्यायें ऐसी भी होती हैं जिनमें घर

के मालिक की आवश्यकता पड़ती है।

'मेरी समझ में नहीं आता कि इस गृहस्थी में अब ऐसी कौन-सी समस्या उठ खड़ी हुई, जिसमें मेरी आवश्यकता है।' वह पुस्तक के पन्ने पर नजरें गड़ाये बोले, 'दोनों बेटियों की गृहस्थी बस ही गयी हैं। लड़का पढ़ लिखकर खानदानी पेशे, यानी वकालत में आ ही गया। कोई आर्थिक कठिनाई है ही नहीं। हम सब स्वस्थ और मस्त हैं ही। फिर किस समस्या के लिये तुम परेशान हो?'

'समस्या चंद्र की है।'

'चंद्रप्रकाश अब बच्चा नहीं रहा कि उसकी समस्या हम सुलझायें।'

'हमारे लिए तो वह सदा बच्चा ही रहेगा।'

'ऐसा समझने की गलती मत करो। उसे अपनी समस्या का समाधान स्वयं ढूंढ़ने दो।'

'उसे जीवन का अभी अनुभव नहीं है। और आप अपनी एक जिम्मेदारी भूल ही गये हैं।'

'कौन-सी?'

'उसकी शादी की?'

'नहीं, भूला नहीं हूं।' वह मुस्कराते हुए बोले, 'यदि वह शादी करने के लिए इतना ही उतावला है तो कहो, कल ही कर देता हूं। पर मैं चाहता हूं कि वह अपनी गृहस्थी बसाने के पहले वकालत के पेशे में अपने पांव भलीभांति जमा ले, मेरे नाम के सहारे न चले।'

'ऐसा है जी कि मामला प्रेम का है।' वह दबी जबान में बोलीं।

वह ठहाका लगाकर हंस पड़े। फिर सहज स्वर में कहा – 'चलो, उसने एक काम तो ऐसा किया जो खानदानी परम्परा से हट कर

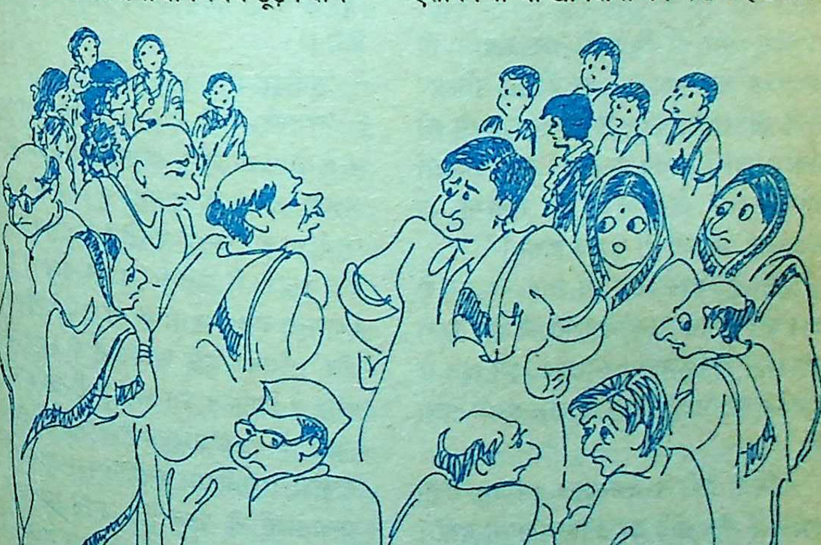

है।'

'आपको तो बस मजाक ही सूझता है।' वह तुनक कर बोलीं, 'कभी तो किसी मसले पर गंभीरता से सोचिये।'

'यही तो अपनी आदत नहीं है।' वह सामान्य स्वर में बोले, 'और यह कोई ऐसी समस्या भी नहीं है कि इस पर माथापच्ची करूं। यदि चंद्र उस लड़की से शादी करना चाहता है तो मुझे कोई एतराज नहीं है।'

'लेकिन वह लड़की अपनी बिरादरी की नहीं है।'

'मेरी बिरादरी की सीमा की कोई हद नहीं है।'

यह जरूरी नहीं कि सभी का नजरिया आपकी तरह ही उदार हो।'

वह मौन पुस्तक के पन्ने पर नजरें गड़ाये रहे।

'इस प्रेम में बिरादरी का सवाल ही रुकावट बन गया है। लड़की का परिवार बेटी की शादी बिरादरी से बाहर करने को तैयार नहीं है। चंद्र आजकल बहुत चिंतित और उदास रहता है। इस समस्या का समाधान आपको ही ढूंढ़ना होगा।'

'ठीक है, कल शाम को चाय पर चंद्र से बात कर लूंगा।' उन्होंने पत्नी की ओर देखते हुए कहा, ' फिलहाल तो मुझे इस खून के मुकदमे की तैयारी करने दो, कल खुलने वाला है।'

सावित्री देवी ने बेडस्वीच दबाकर बत्ती बुझा दी और सोने का उपक्रम करने लगीं।

* * *

संध्या के छह बज रहे थे।

नारायण बाबू पत्नी और बेटे के साथ बैठक में चाय पीते हुए गप कर रहे थे। वह शायद कल रात वाली बात भूल गये थे, क्योंकि उन्होंने उस विषय पर चंद्रप्रकाश से कोई बात नहीं की।

सावित्री देवी ने ही बात छेड़ी, 'चंद्र, अपनी समस्या अपने पापा को बताते क्यों नहीं?'

वह झेंप गया।

'बोलो भी।' सावित्री देवी प्यार से झिड़क कर बोलीं, 'झिझक छोड़ो।'

उसने सारे तथ्य संक्षेप में बता दिये।

'लीजिये वकील साहब, अब सारे तथ्य आपके सामने हैं। कोई ऐसा मुद्दा ढूंढ़िये कि हमारा काम बन जाये।'

वह चाय की एक चुस्की लेकर बोले- 'पहले तथ्यों का विश्लेषण सुनिये, सुमित्रा देवी।'

'सुनाइये।'

'लड़की, यानी लतिका के पिता श्यामला बाबू और उसकी मां राधिका देवी को मैं बहुत अच्छी तरह से जानता हूं। दोनों अच्छे खानदान से ताल्लुक रखते हैं, शिक्षित हैं और इस शहर में उनकी अच्छी प्रतिष्ठा है। श्यामला बाबू लड़कों के स्कूल में प्रिंसिपल हैं और राधिका देवी लड़कियों के स्कूल में। मगर वे शिक्षित इस अर्थ में हैं कि वे ऊंची पढ़ाई के डिग्रीधारक हैं वरना वे संकीर्ण विचारों, पुरानी एवं अर्थहीन परम्पराओं और मान्यताओं से ग्रस्त हैं। उनसे यह आशा करना व्यर्थ है कि वे सामान्य स्थिति में

लतिका की शादी अपनी बिरादरी से बाहर करेंगे।'

'आपने कोई नयी बात नहीं कही। यह सब तो मैं चंद्र से सुन चुकी हूं। अगर वे तैयार ही हो जाते तो यह छोटी-सी बात समस्या क्यों बन जाती?'

'मैं उनसे बात करके भी कुछ हासिल नहीं कर पाऊंगा, सावित्री। इस समस्या का अब एक ही समाधान है।'

'क्या?'

'यदि लतिका तैयार हो तो चंद्र कोर्ट में शादी कर ले।'

'क्या लतिका के मां-बाप और रिश्तेदार इसे चुपचाप सह लेंगे, हंगामा नहीं करेंगे?'

'हंगामा करके भी क्या कर लेंगे। लड़का-लड़की दोनों बालिग हैं। मियां बीवी राजी तो का करेगा काजी।' कह, वह हंस पड़े।

'आप तो हमेशा कानून की भाषा में बात करते हैं।' वह झिड़क कर बोलीं, 'शादी रोज-रोज थोड़े होती है। लोग तरह-तरह की बातें बनायेंगे। ऐसी शादी से क्या फायदा जिससे केवल बदनामी मिले। न लड़की के घर में खुशी झलके न लड़के के घर में।'

'लतिका भी अपने मां-बाप की इजाजत के बिना शादी करने को तैयार नहीं है, मां।' चंद्रप्रकाश ने कहा, 'उसका कहना है कि वह अपने मां-बाप की एकमात्र संतान है। वे इस सदमे को बर्दाश्त नहीं कर पायेंगे। उन्हें दुःख पहुंचा कर वह अपनी खुशी प्राप्त करना नहीं चाहती। मैं भी इस प्रकार शादी करने के पक्ष में नही हूं। किस-किस की जबान पकड़ेंगे।'

'कोई ऐसा मुद्दा ढूढ़िये न, वकील साहब कि सांप भी मर जाये और लाठी भी न टूटे।'

'श्यामला बाबू को पता है कि तुम लतिका से शादी करना चाहते हो?' नारायण बाबू कुछ सोचते हुए बोले।

'नहीं। लतिका ने अपनी मां से बात की थी। हालांकि उसने मेरे बारे में कुछ नहीं कहा है।'

'समय का इंतजार करो, सुमित्रा। ऐसे दकियानूसी विचार रखने वाले लोगों को समझाने-बुझाने से कोई फायदा नहीं होगा। समय ही किसी का दृष्टिकोण या मान्यता बदल सकता है।' वह कलाई घड़ी की ओर देखते हुए बोले, 'मुझे खुशी है कि चंद्र और लतिका ने प्रेम के आवेग में कोई गलत कदम नहीं उठाया है। दोनों ने प्रेम की उत्तम परम्परा का निर्वाह किया है। प्रेम में त्याग करना सबसे उत्तम परम्परा है।' और वह मुवक्किलों से मिलने वाले कक्ष की ओर चले गये।

* * *

एक माह व्यतीत हो गया। इस विषय पर पुनः कोई चर्चा नहीं हुई।

एक दिन अचानक लतिका की शादी का निमंत्रण पत्र आ गया। सुमित्रा देवी और चंद्रप्रकाश तो हताश हुए ही, नारायण बाबू को भी अच्छा नहीं लगा।

दूसरे दिन जब वह कोर्ट से लौटे तो पत्नी से कहा – 'चल रही हो न?'

'कहां ?' वह अनभिज्ञता प्रकट करते हुए बोलीं।

'आज लतिका की शादी है न।'

'तो कौन वह मेरी रिश्तेदार है कि मेरा जाना जरूरी है।' वह झिड़क कर बोलीं, 'आप इस शहर के प्रतिष्ठित आदमी हैं इसीलिये निमंत्रण पत्र आया है न। आप हो आइये।'

'वाह !' वह शांत स्वर में बोले, 'कल तक तो लतिका को बहू बनाने का सपना देख रही थी और आज उसे आशीर्वाद देने भी जाना नहीं चाहती। इसमें उसका क्या कसूर है ?'

'हुंह !' वह नथुने फड़काते बोलीं, 'बड़े काबिल वकील बनते हैं। काबलियत दिखाने वाली क्या बात थी ?' वह मुंह फुलाये मौन बैठी रहीं।

'जाओ, जाओ, जल्दी से तैयार होकर आओ। सपरिवार निमंत्रण है। अकेले जाना अच्छा नहीं लगता।'

'वह उठ कर जाने लगीं तो उन्होंने पूछा — 'चंद्र कहां है ?'

'सो रहा है।'

'यह कोई सोने का समय है।' वह बोले, 'आज कोर्ट भी नहीं गया था। उसकी तबीयत ठीक है न ?'

'हां, ठीक ही है।' वह सुबक उठीं, 'वह कितना उदास है, आपको क्या पता।'

'हां, मुझे क्या पता।' वह मुस्करा कर बोले, 'मैंने तो शादी के बाद प्रेम करना सीखा है।'

'हुंह, खाली मजाक ही सूझता है।' बड़बड़ाती वह चली गयीं।

वह जोर से हंस पड़े। फिर नौकर को आवाज दी, 'राघव।'

'जी, साब।'

'छोटे साहब को बुला ला।'

'अच्छा जी।'

कुछ ही देर में चंद्रप्रकाश अस्तव्यस्त मुद्रा में उनके समक्ष आ खड़ा हुआ। उसे घूरते हुए उन्होंने पूछा — 'तबीयत ठीक है न ?'

'हूं।'

'लतिका की शादी में चल रहे हो ?'

'आप हो आइये।'

'वैसे तुम्हें लतिका की खुशी में सम्मिलित होना चाहिये।' उन्होंने गंभीर मुद्रा में कहा, 'इसके अलावा तुम एक वकील हो और वकील को समाज के हर वर्ग से संपर्क रखना चाहिये, जब भी मौका मिले।'

वह मौन खड़ा रहा।

'जाओ, शीघ्र तैयार होकर आओ।' उन्होंने आदेशात्मक स्वर में कहा, 'तुम्हारी मां भी तैयार होने गयी है।'

* * *

श्यामला बाबू का दुमंजिला मकान रंगबिरंगी बत्तियों की लड़ियों से सजा हुआ था। शहनाई की मधुर धुन सारे वातावरण में बिखरी हुई थी। घर अंदर-बाहर रिश्तेदारों और अन्य अतिथियों से भरा हुआ था।

ऊपरी मंजिल का एक कमरा, जिसमें लतिका थी, औरतों से भरा हुआ था। लतिका की हमजोलियों की खिलखिलाहट से

रुक-रुक कर कमरा गूंज उठता था। मगर लतिका गंभीर और उदास थी। शादी की खुशी का एक कतरा भी उसके चेहरे से परिलक्षित नहीं हो रहा था।

नारायण बाबू अपनी पत्नी और बेटे के साथ जैसे ही कार से उतरे, श्यामला बाबू ने दोनों हाथ जोड़कर उनकी अगवानी की। सुमित्रा देवी अंदर चली गयीं।

बरात के लिए बाजा-बत्ती, आदि का इंतजाम श्यामला बाबू ने ही किया था। बरात दूसरे शहर से आने वाली थी। लेकिन आश्चर्य की बात यह थी कि साढ़े छह बज चुके थे, पर बरात का अभी तक अतापता नहीं था। लोगों में कानाफूसी शुरू हो चुकी थी।

श्यामला बाबू चिंतित मुद्रा में चहलकदमी कर रहे थे। तभी उनके बड़े साले साहब निरंजन बाबू चीख कर बोले — 'क्या बात है, श्यामला बाबू, बरात अभी तक क्यों नहीं आयी?'

'अब मैं क्या बताऊं। जहां आप हैं वहां मैं हूं।' वह चिड़चिड़े मूड में बोले, 'लड़के के पिता ने लड़के को आने के लिए एक कार की मांग की थी। उसे भी मैंने भेज ही दिया है।'

'पता नहीं, आपने शादी कहां तय की है।' वह व्यंग्य से बोले।

उसी समय भेजी गयी कार दरवाजे पर आ गयी। ड्राइवर के कार से उतरते ही श्यामला बाबू ने उत्सुकता से पूछा — 'लड़के को जनवासे में पहुंचा दिया है न?'

'नहीं जी, इससे कोई आया ही नहीं।'

'क्यों?'

'मुझे तो किसी ने कुछ नहीं बताया। यह पत्र देकर लौटा दिया।' कहता उसने उनकी ओर एक पत्र बढ़ा दिया।

उन्होंने जल्दी से पत्र लेकर पढ़ा और जोर से बोले — 'ये क्या मजाक है।'

उपस्थित लोग किसी गड़बड़ी की आशंका से ग्रस्त हो उठे। निरंजन बाबू ने चिंतित स्वर में पूछा — 'क्या बात है?'

'एक लाख रुपये की मांग आयी है। रुपया पहुंचने के बाद ही बरात आयेगी।'

'तो भिजवाइये रुपया।' वह जबान ऐंठ कर बोले।

'रुपये का क्या पेड़ लगा हुआ है कि तोड़कर भिजवा दूं। इतने रुपये का तुरंत इंतजाम कैसे हो सकता है?' वह बौखलाये हुए स्वर में बोले, 'जो भी मांग हो शादी ठीक करने के पहले ही कहना चाहिए न!'

'मैं तो यहां शादी करने के पक्ष में था ही नहीं। कितना बढ़िया रिश्ता लाया था मैं।'

'हां, बहुत बढ़िया रिश्ता लाये थे।' वह खीझकर बोले, 'दो लाख रुपये की मांग हो रही थी वहां से।'

'ऐसी बातों पर अब बहस करने से कोई फायदा नहीं है।'

नारायण बाबू कुरसी से उठ कर श्यामला बाबू की ओर आते हुए बोले, 'इस समय हमारे सामने जो समस्या है उस पर सोचने की जरूरत है।'

'मेरा तो दिमाग ही काम नहीं कर रहा है, वकील साहब।' श्यामला बाबू हताश स्वर में बोले।

'इतने हताश क्यों हो रहे हैं, जनाब? आखिर बिरादरी के लोग किस दिन काम आयेंगे। इतने बिरादरी वाले जुटे हुए हैं यहां, एक लाख रुपये का इंतजाम होने में कितनी देर लगेगी।'

नारायण बाबू के ऐसा कहते ही वहां सन्नाटा छा गया। कुछ पल गुजर गये पर रुपया देने का प्रस्ताव किसी की ओर से नहीं आया।

'हमारे पूर्वजों ने बिरादरी वालों को अन्य लोगों से अधिक महत्व इसीलिए दिया था कि वे किसी मुसीबत के समय बाहर वालों से पहले काम आयेंगे। पांच-दस लोग मिलकर भी इतने रुपये का इंतजाम तो कर ही सकते हैं, पर लगता है कि बिरादरी वालों का काम आलोचना करना और मीन-मेख निकालना ही रह गया है।' नारायण बाबू ने गंभीर मुद्रा में कहा, 'श्यामला बाबू, मैं आपकी बिरादरी का तो नहीं हूं पर आपकी इज्जत मेरी इज्जत है। यदि आपको स्वीकार हो तो मैं रुपया देने को तैयार हूं।'

'वकील साहब।' श्यामला बाबू ने भावावेश में उनका हाथ थामते हुए कहा, 'सही माने में तो बिरादरी वाले आप ही हुए।'

'लेकिन एक बहुत अहम बात है जिस पर आपको अच्छी तरह से विचार कर लेना चाहिये।'

'कहिये, वकील साहब।'

'क्या आप अपनी बेटी की शादी ऐसे खानदान में करेंगे जो ऐसी नीच हरकत करता है। शादी हो जाने के बाद यदि इसी प्रकार की कोई दूसरी मांग आये तो आप क्या करेंगे?'

'आप ठीक कह रहे हैं, वकील साहब।' निरंजन बाबू तपाक से बोले, 'ऐसे लालची आदमी के बेटे से शादी करना ठीक नहीं है। लतिका का जीवन बर्बाद हो जायेगा।'

'आप लोग ठीक कह रहे हैं, पर इस समय मैं क्या करूं? क्या अपनी इज्जत का नीलाम होने दूं?' श्यामला बाबू रुंआसी आवाज में बोले, 'बाजा, बत्ती, खानदान, आदि पर मेरा बहुत पैसा खर्च हो चुका है। मैंने इतना कुछ इंतजाम किया है, इनका क्या होगा?'

'इसके लिए भी एक रास्ता है।' नारायण बाबू बोले, 'आपके इतने बिरादरी वाले जुटे हुए हैं, किसी के पास तो शादी योग्य लड़का होगा। बाजा बत्ती, खानपान, आदि सभी चीजों का इंतजाम है ही। इसी लग्न मंडप में शादी हो सकती है। क्या ख्याल है, निरंजन बाबू?'

'आपका प्रस्ताव बड़ा उत्तम है, वकील साहब।' निरंजन बाबू ने कहा, 'हमारी बिरादरी के बहुत से ऐसे लड़के अपने माता-पिता के साथ यहां उपस्थित हैं। मुझे पूरी आशा और विश्वास है कि वे स्थिति की नाजुकता को समझेंगे और उनमें से कोई न कोई इस प्रस्ताव को स्वीकार करने के लिए आगे आयेगा। अगर किसी की कोई मांग हो तो उस पर भी विचार किया जायेगा।'

लोगों के बीच फुसफुसाहट फैल गयी। बहुत देर तक भुनभुनाहट का स्वर मुखरित होता रहा और आंखों ही आंखों में इशारे चलते रहे पर शादी करने का प्रस्ताव किसी

की ओर से नहीं आया ।

श्यामला बाबू सोच की मुद्रा में गरदन झुकाकर कुरसी पर बैठ गये । निरंजन बाबू गुस्से में अपनी बायीं हथेली पर दायें हाथ से मुक्का मारते हुए चहलकदमी करने लगे ।

नारायण बाबू ने श्यामला बाबू का हाथ पकड़कर उठाया । कहा – 'मेरा एक और प्रस्ताव है, श्यामला बाबू । यदि आपको स्वीकार है तो ठीक है वरना मैं आपके लिए रुपया ला दूंगा ।'

'कहिये, वकील साहब ।' श्यामला बाबू हताश स्वर में बोले ।

'लतिका की शादी मेरे लड़के से कीजियेगा ?' फिर उन्होंने चंद्रप्रकाश की ओर उंगली से इशारा करते हुए कहा – 'वही मेरा लड़का है । नाम है चंद्रप्रकाश । इस वर्ष से उसने वकालत शुरू कर दी है ।'

श्यामला बाबू आश्चर्य और हर्ष मिश्रित नजरों से उनकी ओर मौन देखते रह गये ।

'अब आप क्या सोच रहे हैं, श्यामला बाबू ?' निरंजन बाबू उन्हें मौन देख कर उबल कर बोले, 'इस प्रस्ताव को स्वीकार क्यों नहीं कर रहे हैं ? लतिका के लिए इससे भी अच्छा घर-वर मिलेगा ?'

'आपको पता है न भाई साहब, कि वकील साहब अपनी बिरादरी के नहीं है ?'

'हां, हां, पता है ।' वह चीख कर बोले ।

'फिर भी आप प्रस्ताव स्वीकार करने के लिए कह रहे हैं ?'

'हां ।' वह एक लंबी सांस भर कर बोले, 'देख लिया बिरादरी का ढकोसला । एक बिरादरी वाला एक लाख रुपया मिलने के बाद बरात लाने को कह रहा है और यहां उपस्थित बिरादरी वाले हमारी इज्जत का नीलाम होते हुए देखते रहे । इनमें से ऐसे बहुत से लोग हैं जो एक लाख रुपया देने में समर्थ हैं, पर क्या कोई सामने आया ? ऐसे बहुत से लड़के हैं जिनकी शादियां आज नहीं तो कल होंगी, पर क्या किसी ने हमारे प्रस्ताव को स्वीकार किया ?'

'जल्दी से बरात लगवाइये, वकील साहब ।' श्यामला बाबू ने नारायण बाबू के गले लगते हुए कहा ।

चंद्रप्रकाश का मुरझाया चेहरा खिल गया । जब यह समाचार घर के अंदर पहुंचा तो लतिका भी खिल उठी । यह सूचना पाकर सुमित्रा देवी भागी-भागी नारायण बाबू के पास पहुंची । उन्हें इस प्रकार बदहवासी में आते देखकर वह घबरा कर बोले –'अरे, क्या बात है ?'

उन्होंने फुसफुसाकर कहा – 'मुझे आज पता चला वकील साहब, कि आपके पास मुवक्किलों की भीड़ क्यों लगी रहती है ?'

'हां, जब तक मैं मुकदमा अंतिम कोर्ट से हार नहीं जाता, तब तक मैं जीतने की आशा नहीं छोड़ता ।'

'शहनाई बजाओ, भई ।' निरंजन बाबू जोर से बोले ।

शहनाई की धुन से वातावरण पुनः मधुर हो उठा ।

**– एशिया हाउस, कस्तूरबा गांधी मार्ग,**
**नयी दिल्ली - ११० ००१.**

□

हिंदी कहानी

# हरे रंग की दीवारोंवाला कमरा

□ सुखबीर

सत्या ने देखा, उसकी दायीं पिंडली नंगी थी और उस पर एक छिपकली चढ़ आयी थी। वह धीरे-धीरे चलती हुई ऊपर की ओर आ रही थी। सत्या ने चाहा कि एकाएक उठे और उसे झटक दे। पर किसी डर और घिन से उसका शरीर निर्जीव-सा बना हुआ था, और उसमें उठने की शक्ति नहीं थी।

कुछ ही देर में उसका यह सपना टूट गया और उसने आंखें खोल दीं। तभी उसने ऊपर छत की ओर देखा, जहां मटमैले रंग की एक बड़ी घिनौनी छिपकली को वह प्रायः देखा करती थी। उस समय छिपकली छत से चिपकी हुई उसकी ओर मुंह उठाये देख रही थी।

सत्या ने आज तीसरी बार सपने में छिपकली को अपनी टांग पर चढ़ते हुए पाया था। पता नहीं, मुई कहां से आ जाती थी और टांग पर इस तरह चढ़ने लगती थी कि सारा शरीर जैसे मिट्टी का बन जाता था। एक दिन तो इतनी ऊपर चढ़ आयी थी कि...

उसने छिपकली की ओर से आंखे हटाकर कमरे में नजर दौड़ायी। उसे लगा, वह जैसे कोई अपरिचित-सा कमरा हो। वह उसे पहचानने का यत्न करने लगी। कुछ देर के बाद वह उसे अपना ही कमरा लगा। हां, अपना, पर कुछ अजीब-सा भी, और कुछ पराया सा भी।

आखिर वह उठी और अधलेटी-सी हालत में बैठ गयी। उसकी दायीं पिंडली नंगी थी और उस पर वह अभी भी छिपकली का चलना महसूस कर रही थी। उसका मन मितलाने लगा। उसने अपनी पिंडली पर हाथ फेरा, मानो छिपकली के स्पर्श को मिटाना चाही हो। फिर, उसने साड़ी से पिंडली को ढंक लिया।

यद्यपि उसकी आंखों में नींद थी, पर अब वह सो नहीं सकती थी। वह सोना चाहती भी नहीं थी। उसने आंखें मलीं और कमरे में शून्य-सी दृष्टि से देखने लगी। तब उसे वह दिन अन्य दिनों की अपेक्षा अलग-सा लगा, जो सुबह ही एक तलखी लिए हुए चढ़ा था। वास्तव में, वह तलखी रात ही पैदा हो चुकी थी। उसका पति काफी रात गये आया था और नशे में चूर था। आते ही वह कपड़े उतार कर बिस्तर पर पड़ गया था। तभी पति को ऐसी उल्टी हुई थी कि सत्या का शरीर और बिस्तर उससे लथपथ हो गया

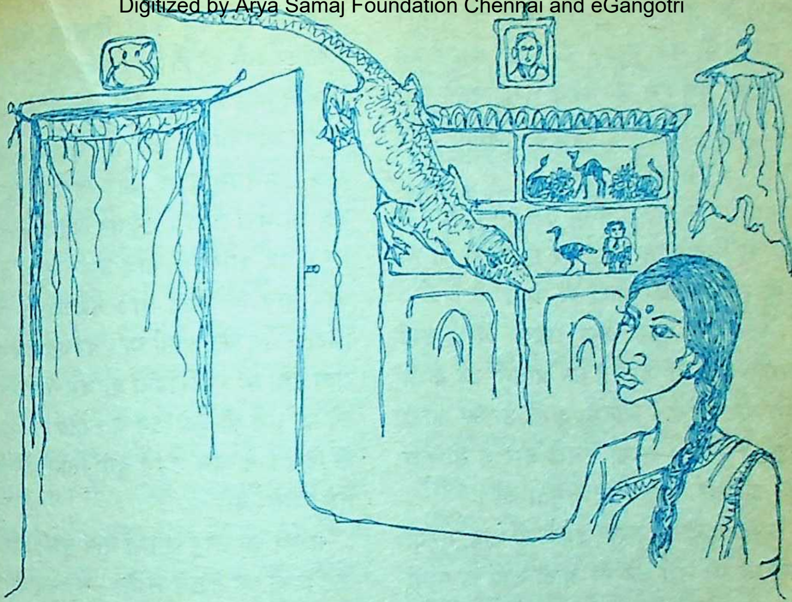

था।

यह कमरे की घुटन थी या दिल की घुटन कि सत्या का मन घबराने लगा। उस घुटन में दीवारों पर के गहरे हरे रंग की तीखी महक भी समायी हुई थी। दो महीने हो गये थे वह रंग कराये हुए, पर देखने में अभी भी गीला-सा लगता था। हां, देखने में, छूने में नहीं। और उसमें से पहले दिन जैसी ही ताजा और तीखी महक आती थी। अजीब बात थी कि वह रंग उसके पति को बहुत पसन्द था। पर वह सत्या के लिए असह्य था। किसी-किसी समय तो वह उसे पिघलता हुआ-सा लगता। बस, देखने में ही, छूने में नहीं। तब दीवारें और ज्यादा गहरी हरी हो जातीं और जैसे तेज और गर्म सांस ले रही प्रतीत होतीं। सत्या वहां से भाग जाना चाहती। पर कहां जाती? वह बस, बैठी रहती।

दीवारों का वह रंग और उसकी महक ऐसी थी कि इतने दिन हो जाने पर भी सत्या उसकी आदी नहीं हो पायी थी। पता नहीं, अभी और कितने दिन लगें। शुरू-शुरू में एक दिन उसने पति से इसकी शिकायत की थी, तो वह हंसा था। तुम क्या जानो इस रंग की कदर करना! उसने कहा था। यह आयल कलर है। आम रंगों से कहीं महंगा। पर मैंने काफी सस्ते में करा लिया है। देखती नहीं, कमरा कैसा नया बन गया है। चमकने लगा है।... अब शहर में रहना सीखो और गांव के दिन भूल जाओ कि गोबर में पानी डाला और

दीवारों को लीप दिया। सच पूछो तो तुम्हारे अन्दर अभी तक गोबर की बदबू समाई हुई है। तभी इस रंग की महक तुम्हें भाती नहीं है। पर धीरे-धीरे इसकी आदत पड़ जायेगी। यह आयल कलर...

इसके बाद सत्या कभी उस रंग के बारे में पति से शिकायत नहीं कर पायी थी, न ही अभी तक उसकी आदी हो पायी थी।

कुछ रंग और कुछ महकें और कुछ तलखियां कैसी होती हैं कि आदमी को कभी रास नहीं आतीं। आदमी कभी उनका आदी नहीं हो पाता। सत्या उनके बारे में सोचती थी, तो उसे अजीब-सा लगता था।

उस रंग ही की तरह, शादी के बाद, सत्या तम्बाकू की गंध की भी आदी नहीं हो पायी थी। उसके पति को सिगरेट पीने की आदत थी। तम्बाकू की गन्ध से सत्या का दिल घबराने लगता था। खासकर पति की सांसों में बसी तम्बाकू की गंध को तो वह बिलकुल ही सहन न कर पाती। यद्यपि आज तक वह गंध उसे सुहाई नहीं थी, पर अब एक हद तक उसे स्वीकार कर लिया था, जैसे जीवन की अन्य बहुत-सी कड़वी-कसैली चीजों को स्वीकार कर लिया था। कुछ चीज़ें तो नापसन्द होने पर भी स्वीकार करनी ही पड़ती हैं। पर दीवारों के उस तीखे, सीले, चमचमाते, गहरे हरे रंग को वह अभी तक स्वीकार नहीं कर पायी थी। उसमें छिपकली के स्पर्श का घिनौना अहसास था।

सत्या की नजर अनायास ही छत की ओर उठ गयी और उसने छिपकली को देखना चाहा। पर वह कहीं दिखायी नहीं दी। छिपकलियों की ही तरह कुछ जानवर कितने घिनौने होते हैं। सत्या ने सोचा। मेंढक और केंचुए और सांप। उन्हें छूने से घिन होती है। सांप उसने सिर्फ एक बार ही देखा था, और वह भी मरा हुआ। उसका फन कुचला हुआ था। पर शादी के बाद उसने सपने में कई बार सांप को देखा था। वह हमेशा उसके बिस्तर पर चढ़ आता था। पर वह गांव वाला सांप नहीं था। उन दिनों वह दस-ग्यारह साल की थी। वे भी कैसे दिन थे। गांव की जिन्दगी के दिन। वे दिन उड़ते हुए प्रतीत होते थे-ऐसे, जैसे-जैसे –

सत्या को कोई उपमा नहीं सूझी और वह उन दिनों को देखने लगी – बचपन के दिनों को और जवानी के दिनों को। उन दिनों उसने कभी कल्पना भी नहीं की थी कि शादी के बाद बम्बई जैसे शहर में रहने लगेगी – इतने बड़े शहर में कि आदमी उसे जिन्दगी भर देखता रहे, तो भी उसका आर-पार न पा सके। और आज वह उस शहर में रह रही थी। उस शहर की एक इतनी बड़ी इमारत में, जिसमें दो सौ से ज्यादा परिवार रहते थे। इतने परिवार तो उसके पूरे गांव में भी नहीं थे। जैसे एक ही इमारत में बहुत बड़ा गांव बसा हुआ था।

सगाई होने पर जब सत्या को पता लगा था कि उसका होने वाला दूल्हा बारह जमातें पढ़ा हुआ है और बम्बई में नौकरी करता है, तो उसकी खुशी का आर-पार नहीं रहा था। गांव की लड़कियों ने उसके भाग्य को सराहा

था। तब तक उस गांव की कोई भी लड़की किसी अच्छे पढ़े-लिखे लड़के से ब्याही नहीं गयी थी। फिर, हर लड़की शहर के बजाय गांव में ही ब्याही गयी थी। वैसे, सत्या उनसे ज्यादा पढ़ी-लिखी भी तो थी। वह मिडल पास थी, और सिलाई-कढ़ाई के काम में सबसे होशियार। दो साल अपनी मासी के यहां एक छोटे-से शहर में रहकर उसने वहां के स्कूल से मिडल पास किया था। साथ ही, सीने-पिरोने का काम भी सीखा था। मिडल पास होकर वह गांव आयी थी, तो उसकी कितनी शान थी। उसी मिडल पास होने की बदौलत उसे इतना पढ़ा-लिखा वर मिला था। और शादी के एक साल बाद बम्बई देखने और उसमें रहने का अवसर मिला था।

बम्बई शहर उसकी कल्पना में कोई परी-लोक था। कितनी खुश थी वह बम्बई आते समय। पर उस परी-लोक में पहुंच कर जब उसने अपने इस कमरे में पांव रखा था, तो उसे एक अजीब-सी उदासी महसूस हुई थी, और घुटन भी। तब इस कमरे की दीवारें मैली थीं। फर्श पर चारों ओर सामान बिखरा पड़ा था। कमरे में सीलन थी, और ऐसी बू, जो पहचानी नहीं जाती थी कि वह किस चीज़ की बू है। उस वातावरण में सत्या को पहली बार परायेपन का अहसास हुआ था। पति साथ था, फिर भी परायेपन का अहसास हुआ था।

वह परायापन कई दिन तक मिटा नहीं था। उस कमरे का परायापन, जिसके एक कोने में रसोई थी, एक कोने में चारपाई थी, और एक कोने में छोटी-सी अलमारी और दो ट्रंक थे। ऐसे ही दो सौ से ज्यादा कमरों की वह इमारत थी। उसकी चार मंजिलें थीं और दायें-बायें से दो सीढ़ियां ऊपर जाती थीं। उन सीढ़ियों में हमेशा मद्धिम-सा अन्धेरा छाया रहता था। बाहर से आने पर तो वह अन्धेरा काफी गहरा दिखायी देता।

सत्या का कमरा इमारत की तीसरी मंजिल पर था। सात कमरे उसके दायें हाथ थे, चार कमरे बायें हाथ। बारह कमरों के सामने वैसे ही बारह कमरे और थे। बीच में संकरा रास्ता था। इमारत के दूसरी ओर भी हर मंजिल पर इसी प्रकार के कमरों की दो-दो पंक्तियां थीं। पहले तो सत्या को वह इमारत एक गोरखधंधा-सा प्रतीत हुई थी और पता ही नहीं लगता था कि उसमें कमरे किस तरतीब से बनाये गये थे। उससे तो गांव की टेढ़ी-मेढ़ी गलियां ही सीधी प्रतीत होती थीं। पर बाद में उसे इमारत का ढांचा बहुत सादा-सा लगा था। वह एक चौरस कागज पर चार खाने बनाकर पूरी इमारत का नक्शा समझा सकती थी। और उसमें सही स्थान पर अपना कमरा दिखा सकती थी — वह कमरा, जिसमें हर समय घुटन भरी रहती थी।

उस कमरे में बैठे हुए जब भी कभी सत्या का मन भटकता, वह कल्पना में अपने गांव पहुंच जाती, जिसमें उसने जिन्दगी के सोलह साल बिताये थे। वह छोटे-से गांव की जिन्दगी थी, पर कितना फैलाव था उसमें। फसलों भरे लहराते हुए खेतों का फैलाव।

हवा और धूप और ताज़गी। बदलते हुए मौसम। सर्दी और गर्मी, पतझड़ और वसंत। गरजते हुए बादलों वाली बरसात। सचमुच, कितने रंग थे वहां।

पर यहां इस कमरे में एक ही रंग था। जिन्दगी जैसे चारों ओर से बन्द हो गयी थी। कमरे के दरवाजे पर हमेशा एक भूरे रंग का पर्दा लटकता रहता। उस पर्दे को हटाया नहीं जा सकता था, क्योंकि सामने से गुजरने वाले लोग अन्दर झांकने से न रहते। फिर, सामने के घर में दो बूढ़ी चमकीली आंखें थीं, जो हर समय उस ओर ताकती रहतीं। दरवाजा तो फिर भी खुला रहता, पर उसके सामने की दीवार में जो खिड़की थी, वह अधिकांशतः बन्द रखनी पड़ी। उस इमारत के उत्तर में एक और चार मंजिली इमारत थी। दोनों इमारतों के बीच में जो दो-तीन फुट की जगह थी, वह दोनों ओर के घरों में से फेंके हुए कूड़े-कर्कट और खाने-पीने की बची-खुची चीजों से भरी रहती और उसमें से हर समय ऐसी बदबू उठती रहती कि तबीयत मितलाने लगती।

सीमाओं से घिरे, घुटन भरे वातावरण में जिन्दगी भी तो घुटकर रह जाती है। वह पंख फैलाकर उड़ना चाहे भी, तो कैसे उड़ सकती है? सत्या ने कुछ एक बार उड़ना चाहा था, तो छटपटा कर गिर पड़ी थी। कोई भी तो रास्ता नहीं था निकलने का।

सत्या ने कमरे में नज़र दौड़ा कर देखा, तो उसे बेबसी-सी महसूस हुई। कौन-सा रास्ता है अब? उसने सोचा। जिन्दगी की इस कैद से निकलने का कौन-सा रास्ता है? क्या एक दिन इसी तरह प्राण निकल जायेंगे? हरे रंग की इन मनहूस दीवारों में...

दीवारों पर वह हरा रंग कराये जाने से पहले एक बार सत्या ने पति से कहा था कि वे उस कमरे को छोड़कर किसी और जगह रहने चले जायें – किसी विरल-सी बस्ती में, जहां मकान थोड़ी-थोड़ी दूर पर बने हों। घर के सामने छोटा-सा आंगन हो, जिसमें एक छोटी-सी क्यारी बनाकर फूलों और तरकारियों के पौधे लगाये जा सकें। और उस आंगन में खड़े होकर चढ़ते हुए सूरज को देखा जा सके। रात के समय तारों भरे आसमान को निहारा जा सके। ऐसा घर, जहां...

पर पति माना नहीं था। 'तुम कभी समझोगी भी?' उसने समझाते हुए कहा था। 'भला इस कमरे को कैसे छोड़ा जा सकता है, जिसका सिर्फ ग्यारह रुपये किराया है और जो स्टेशन के इतना पास है? यहां से मेरा दफ्तर भी ज्यादा दूर नहीं पड़ता। फिर, इस इलाके में मकानों की पगड़ी की दर बढ़ती जा रही है। एक साल पहले इस कमरे की तीन हजार रुपये पगड़ी मिलती थी। आज चार हजार मिलती है। आज से साल बाद पांच हजार मिलने लगेगी। उससे एक साल बाद छः या सात हजार। पर इसके मुकाबले में अगर सबर्बन इलाके में मकान लिया जाये, तो उसका पैंतीस-चालीस रुपये से कम किराया नहीं होगा। फिर वह स्टेशन से डेढ़ दो मील दूर भी होगा। दफ्तर पहुंचने के लिए घंटा डेड़ घंटा गाड़ी का सफर करो और हर

महीने का दस-बारह रुपये किराया भरो। नहीं-नहीं, यह कमरा किसी भी हालत में छोड़ा नहीं जा सकता। हां, अगर इसकी दीवारें मैली हैं और इसमें दम घुटता है, तो रंग-रोगन कराया जा सकता है। बिलकुल नये जैसा बन जायेगा।'

सो, दो महीने पहले उसने दीवारों पर गहरे हरे रंग का आयल-कलर करा दिया था और कहा था, 'रंग पर तो अस्सी-पचासी रुपये ही खर्च आये हैं, पर अब इस कमरे की पांच सौ रुपया और ज्यादा पगड़ी मिल सकती है।'

सत्या चुप रही थी और उसे लगा था, जैसे कमरे की चार दीवारों के अन्दर चार दीवारें और खड़ी हो गयी हों। और अब तो वहां से निकलने का कोई भी रास्ता नहीं था।

सत्या सीधी होकर बैठ गयी। अधलेटी हालत में उसकी कमर दुखने लगी थी। कमरा उसे चारों ओर से बन्द प्रतीत हुआ, तो उसने चाहा कि उठे और दरवाजा का पर्दा हटा दे। पर वह बैठी रही। उसे सामने के घर में की दो बूढ़ी आंखों का ख्याल आया। कितनी भूखी थीं वे आंखें, जैसे औरत कभी देखी न हो। आखिर क्यों नहीं यह खूसट बूढ़ा अपने कमरे की चार हजार रुपये पगड़ी लेकर यहां से चला जाता। अपने गांव चला जाये और बड़े आराम से बाकी की जिन्दगी बिताये।... तभी सत्या को ख्याल आया कि उसकी अपनी जिन्दगी कैसे बीतेगी? दस महीने पहले वह यहां आयी थी। अब लगता था, जैसे दस साल हो गये हों। और जब सचमुच ही यहां रहते हुए दस साल हो जायेंगे, तो क्या होगा? दस साल बीत भी सकेंगे?

सत्या देर तक दस सालों के उस समय का अन्दाजा लगाती रही। दस साल। दस साल शायद कट भी जायें, अगर पति के साथ वैवाहिक जीवन का यह रूप न हो। कैसी खाई थी दोनों में। जैसे उस इमारत और साथ वाली इमारत के बीच में खाई थी। और उस खाई में समाई हुई तम्बाकू की गन्ध, शराब की गन्ध, और छिपकली को छूने का अहसास।

कमरे के एक कोने में आहट हुई, तो सत्या ने उधर देखा। शायद कोई चूहा था। कुछ देर के बाद वह आवाज बन्द हो गयी। तब सत्या की नजर अलमारी के ऊपरी खाने पर टिक गयी, जिसमें कुछ खिलौने पड़े थे। वे खिलौने उसने पिछले अरसे में एक-एक, दो-दो करके खरीदे थे। उनमें रेशमी निक्कर-कमीज पहने एक गुड्डा था, प्लास्टिक के छोटे-छोटे बर्तन थे, पीतल का ऊंट था, सीपियों की बनी चार चिड़ियां थीं, चीनी के दो शेर थे, और मिट्टी की एक मोरनी थी। उस मोरनी के साथ एक मोर भी था, जो एक दिन नीचे गिर कर टूट गया था। सत्या को लगा, जैसे वे सभी खिलौने वहां कैद थे। लाचार और बेबस। भला अगर अलमारी का पल्ला खोल दिया जाये, तो क्या वे भाग जायेंगे? शेर तो ऐसे आराम से बैठे हुए हैं, जैसे अब यही उनका घर हो। ऊंट गर्दन उठाये छत की ओर देखे जा रहा था। गुड्डा बहुत खुश लग रहा था। और मोरनी भी – पर नहीं, वह अलमारी के कांच में से

बाहर झांक रही थी, जैसे पल्ला खुलते ही उड़ जायेगी। कितनी अकेली लग रही थी। अब तो बस उड़ ही जाना चाहती थी। पर जायेगी कहां? अगर कहीं सचमुच...। एकाएक सत्या को लगा, मोरनी जैसे सजीव हो उठी हो और सचमुच ही उड़ जाना चाहती हो। वह उसे एकटक देखती रही। तभी वह उसे चलती हुई प्रतीत हुई। किस शान से चल रही थी। मोरनी की चाल भी — सत्या के अन्दर सिहरन दौड़ गयी। तभी उसे अपने गांव में, घर की छत पर चलती हुई मोरनी दिखायी दी। साथ ही, उसे चन्दन सिह 'चन्दन' का ख्याल आया, जो उनके गांव में, 'कवीशर' (कवीश्वर) के नाम से मशहूर था। वह अनपढ़ था, पर 'बेंत' और 'कबित्त' ऐसे बढ़िया जोड़ता था कि लोग सुनते, तो अश-अश कर उठते थे। आस-पास के गांवों में कहीं भी कोई जलसा होता, तो वह उसमें वह अपनी कविता सुनाता। उसकी एक कविता का शीर्षक था 'तेरी मोरनी जैसी चाल'। वह कविता सत्या को जबानी याद थी। किसी भी कविता को वह तीन-चार बार पढ़ लेती, तो उसे ज़बानी याद हो जाती। उस कविता के बारे में बहुत बाद में उसे पता लगा था कि वह उसी के बारे में लिखी गयी थी। उसे पहले तो विश्वास ही नहीं हुआ था। फिर, एकाएक उस पर जैसे कोई भेद खुल गया था, और उसके अन्दर सिहरन दौड़ गयी थी। वह सिहरन आज भी मरी नहीं थी।

एक बार फिर सत्या ने अपने अन्दर उस सिहरन को महसूस किया, और कमरे की उमस भरी घुटन में एक क्षण के लिए उसे ठंड-सी लगी। तब उसने स्वयं को अपने गांव में घर की छत पर बैठे हुए पाया। सुबह का समय था और सर्दियों की धूप खिली हुई थी। सामने कुछ दूर पर एक मोरनी दाने चुग रही थी और इठला-इठला कर चल रह थी। ...कुछ ही देर में सत्या का ध्यान टूटा और उसने पाया कि वह अपने कमरे में ही बैठी थी और अलमारी की मोरनी को देख रही थी। अब वह मोरनी रुक गयी थी और पहले ही की तरह उड़ने के लिए तैयार थी और उसकी ओर ऐसे देख रही थी, जैसे अपनी मूक दृष्टि से उसे अलमारी का पल्ला खोलने के लिए कह रही हो।

सत्या उठी और अलमारी के पास जाकर उसने धीरे-से उसका एक पल्ला खोला, और फिर दूसरा भी खोला। वह कुछ क्षण वहां खड़ी रही। आखिर वह चारपाई पर आकर बैठ गयी और मोरनी को एकटक देखने लगीं। वह उड़ना चाह रही थी, और अलमारी खुली थी, पर वह वहीं की वहीं खड़ी थी। आखिर तो मिट्टी की बनी हुई थी। असली होती, तो उड़ जाती। तभी सत्या को लगा कि चारपाई पर बैठी हुई वह खुद भी मिट्टी की बनी हुई थी।

— बी - १६, सन एंड सी,
वरसोवा रोड, बम्बई - ६१

□

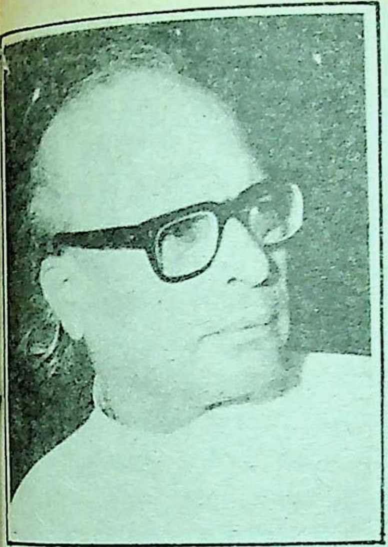

कला वीथिका

# चित्रकार चेतन और उनका जीवन संघर्ष

□

**महेश वर्धन त्रिपाठी**

स्थान : टेरस आर्ट गैलरी, बंबई (कलाकार चेतन का स्टूडियो)

समय : दोपहर के दो बजे ।

मैं चित्रकार चेतन के स्टूडियो में बैठा हूं।

एक सवाल – 'चेतन भाई ! मैं जब स्कूल में पढ़ता था, उसमें मैंने आपका एक चित्र देखा था, जो 'धर्मयुग' में प्रकाशित हुआ था । तब से आज तक मैं आपके सैकड़ों चित्र देख चुका हूं। मैं जब भी आपके चित्र देखता हूं, मेरे मन में एक सवाल बार-बार उठता है । अगर आप बुरा न मानें और इजाजत दें तो मैं आज उस सवाल को वापस पूछ लूं।'

चित्रकार चेतनभाई हंसते हैं, और हंसकर कहते हैं – बुरा मानने का तो कोई प्रश्न ही नहीं उठता। आप बेधड़क होकर पूछिये।'

प्रश्न : आपके चित्रों को देखकर लगता है. इस संसार में जो कुछ भी है, सुंदर है, रंग-बिरंगा है, सभी दिशाओं में खुशियों और आनंद की हवाएं बह रही हैं । और तो और आपके चित्रों में पत्थर एक सुंदर फूलों जैसी कोमलता लिये देखने को मिल जाते हैं । क्या दुनिया सचमुच इतनी ही सुंदर है, क्या आपको कहीं भी भूख, अभाव, कष्ट, पीड़ा, बीमारी, मृत्यु, यातना दिखायी नहीं पड़ती ? और अगर यह सब देखते हैं तो आपके चित्रों में यह सब क्यों देखने को नहीं मिलता ?

**उत्तर :** गरीबी, भूख, मजबूरी, दु:ख और यातना यह सब तो समाज में जिधर नजर उठाइये, थोक के भाव में देखने को मिल जायेगा। समाज की बात छोड़िये, बचपन से लेकर जवानी तक जितनी तकलीफें और कष्ट मैंने उठाये हैं, उन्हें आज भी जब मैं याद करता हूं तो मेरी रूह कांप जाती है। लेकिन क्या चित्रों में यह सब दिखाने से सामाजिक बुराइयां छूमंतर हो जायेंगी। मेरे सोचने का ढंग कुछ अलग है। मैं कहता हूं कि किसी गरीब का चित्र बनाकर लोगों के सेंटीमेंट को उभार कर उसे बेचकर अपना पेट भरना एक तरह से गरीब और उसकी गरीबी का मजाक उड़ाने के समान है। असल में अगर हमें सचमुच गरीबी देखकर दु:ख होता है तो किसी गरीब की हम मदद करें।

मैं बहुत-से चित्रकारों को जानता हूं, जो गरीब और गरीबी का चित्रण करते हैं, लेकिन गरीबों के प्रति पशुओं से बदतर व्यवहार करते हैं। मैं इस प्रकार का चित्रकार नहीं बनना चाहता, जो कैनवास पर कुछ और असली जिंदगी में कुछ और हो।

**प्रश्न :** लोग आपको डेकोरेटिव पेंटर कहते हैं। इस बारे में आपका क्या ख्याल है?

**उत्तर :** अगर लोग मुझे डेकोरेटिव पेंटर कहते हैं तो यह मेरे लिए एक तरह से अच्छा कांप्लीमेंट है। क्योंकि विश्व की अस्सी प्रतिशत से भी ज्यादा कला डेकोरेटिव ही है। अगर विश्व की अस्सी प्रतिशत कला को रिजक्ट करेंगे, तभी आप मेरी कला को नकार सकते हैं। भारतीय मंदिरों की मूर्तियां, जैन मिनेचर, पहाड़ी पेंटिंग, राजस्थानी चित्र, विश्व प्रसिद्ध नटराज की मूर्ति, यामिनीराय के चित्र ये सब डेकोरेटिव ही तो हैं। दूसरी तमाम चीजों की तरह डेकोरेटिव कहना भी एक फैशन है। जिस तरह समय के साथ फैशन मर जाता है, उसी तरह यह शब्द भी अपना अर्थ खो देगा।

**प्रश्न :** आप चित्र क्यों बनाते हैं?

**उत्तर :** कोई अगर यह पूछे पक्षी क्यों उड़ते हैं? मछली पानी में क्यों तैरती है? तो भाई, पक्षी का आकाश में उड़ना और मछली का पानी में तैरना उसका स्वभाव है। बस उसी तरह पेंटिंग बनाना मेरा स्वभाव है। जिस तरह पक्षी बिना आकाश में उड़े जिंदा नहीं रह सकता, उसी प्रकार मैं बिना चित्र बनाये नहीं रह सकता।

**प्रश्न :** क्या आप चित्र पैसे के लिए बनाते हैं?

**उत्तर :** मैं चित्र तब भी बनाता था, जब मेरे चित्र कोई दो पैसे में भी खरीदने को तैयार नहीं होता था। इसलिए यह कहना कि मैं केवल पैसे के लिए बनाता हूं, गलत होगा। हां, जब कोई मेरा चित्र खरीदता है तो खुशी जरूर होती है, जो मानवीय स्वभाव है। जब मैंने चित्रकार बनने का निर्णय लिया तो मुझे मालूम था कि इस पेशे से दो वक्त की रोटी भी नसीब नहीं होगी। यह सब जानते हुए भी मैं चित्रकार ही बना। मैंने कभी भी

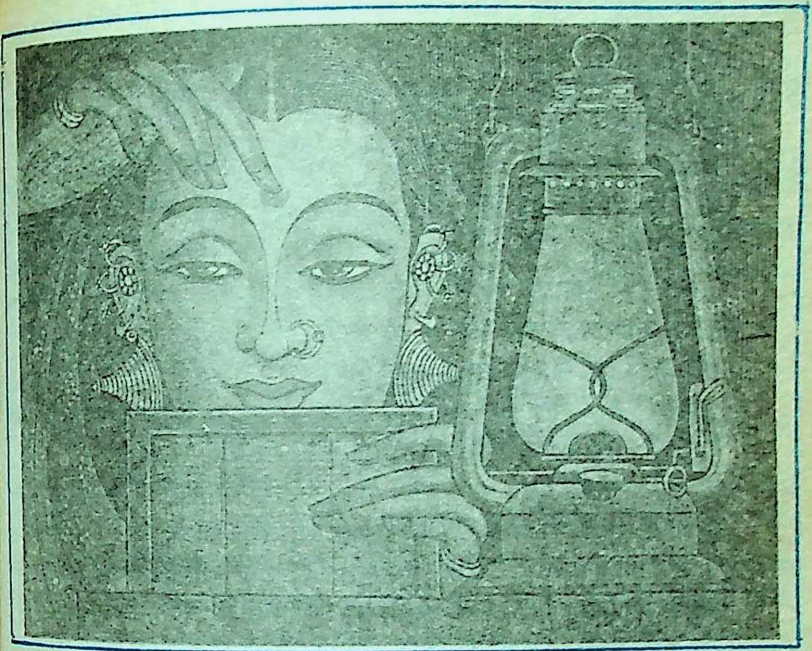

कांदे-बटाटे का व्यापार करने की नहीं सोची, फिर कोई यह कैसे कह सकता है कि मैं केवल पैसा कमाने के लिए चित्र बनाता हूं। जब मैं चित्र बनाता हूं, उस समय मैं केवल अपने दिल-दिमाग और आंखों को आनंद देने के उद्देश्य से चित्र बनाता हूं। अगर चित्र बिक गया तो वाह-वाह।

**प्रश्न :** आप के बेटे-बेटियों में से किसी ने भी आपके चित्रकारी के पेशे को नहीं अपनाया क्यों?

**उत्तर :** चित्रकार का पेशा कोई पंसारी की दूकान तो है नहीं कि बाप रिटायर हुआ तो बेटा दूकान पर बैठ जाये। कला तो प्रकृति का वरदान है। जिसे वह देती है वही बनता है। अब कोई बाप अपने बेटे-बेटी को करोड़ों रुपया खर्च करके भी लता मंगेशकर या रविशंकर बनाना चाहे तो क्या बन सकता है? अगर ऐसा होता तो सभी करोड़पतियों के बेटे-बेटियां लता मंगेशकर, रविशंकर बन गये होते। मेरे बच्चों में प्रतिभा नहीं थी। मैंने भी उन्हें मजबूर नहीं किया जिसको जिस क्षेत्र में जाना था, गये। वहां वे सफल हैं, खुश हैं।

**प्रश्न :** अगर भगवान आप से पूछे कि क्या आप अगले जन्म में भी चित्रकार बनना चाहेंगे तो आप क्या उत्तर देंगे?

**उत्तर :** अगर भगवान ने यह सवाल किया तो मैं अगले दस जन्मों में भी चित्रकार ही बनने की एडवांस बुकिंग करवा लूंगा।

**प्रश्न :** आप अपने जीवन की कोई ऐसी अविस्मरणीय घटना बताइये जिसने आपके जीवन को प्रभावित किया हो?

**उत्तर :** बात उन दिनों की है जब जिंदगी घोर गरीबी में कट रही थी। जवानी का आलम था, प्यार होना जरूरी था। प्यार हो गया। शादी भी हो गयी। लेकिन लड़की के मां-बाप ने कोर्ट में केस कर दिया। खाने को पूरा नहीं पड़ता था तो मुकदमा कहां से लड़ता? मेरे पड़ोस में एक संडास साफ करने वाली औरत रहती थी। एक दिन जब उसे मेरी हालत का पता चला तो वह बोली — बेटा, घबराना नही, मैं तेरे साथ हूं। और उस जमाने में जब पांच सौ रुपये एक बहुत बड़ी रकम होती, उसने मेरे हाथ में रख दिये। उसके बाद मैंने लाखों रुपये कमाये, लेकिन वह खुशी मुझे आज तक नहीं नहीं हुई। उस घटना ने मेरे जीवन-दर्शन को ही बदल डाला।

**प्रश्न :** वह तो जिंदगी की सुखद घटना हुई। क्या कोई ऐसी भी घटना है, जिसने आपके मन में इंसानी क्रूरता का जीता-जागता प्रमाण भी प्रस्तुत किया हो?

**उत्तर :** हां, ऐसी कई घटनाएं हैं। लेकिन उनमें एक घटना ऐसी भी हैं, जिसे मैं कभी भी भुला नहीं सकूंगा। मेरा भाई कुमार भयंकर रूप से बीमार हो गया। उसके इलाज के लिए मुझे पैसों की जरूरत थी। मैं एक कला-व्यवसायी के पास गया। मैंने अपनी समस्या बतायी। उन्होंने मेरी करीब सौ पेंटिंग्स रद्दी के भाव में खरीद ली। मैं मजबूर था। जो उन्होंने दिया लेकर चला आया। उस दिन मैंने जाना कि इस संसार में ऐसे भी इन्सान हैं, जो लोगों की मुसीबतों का व्यापार करके भी पैसा कमाने में नहीं हिचकते।

**प्रश्न :** आपने सबसे पहली पेंटिंग कितने में बेची?

**उत्तर :** एक साथ १२ पेंटिंग्स एक व्यक्ति को १०० रु. में बेची थीं।

**प्रश्न :** इस समय आप अपनी पेंटिंग्स कितने में बेचते हैं?

**उत्तर :** इस समय मैं अपनी पेंटिंग्स की कीमत कम से कम पांच सौ और ज्यादा से ज्यादा बीस हजार रुपये तक लेता हूं।

**प्रश्न :** आपके प्रिय चित्रकार कौन-कौन से हैं?

**उत्तर :** मेरे प्रिय चित्रकार हैं हलदंकर, एस. एम. पंडित और ब्रिटिश लैंडस्केप चित्रकार हर्नर।

**प्रश्न :** क्या आप ईश्वर पर विश्वास करते हैं?

**उत्तर :** हां, मैं ईश्वर पर विश्वास करता हूं। जीवन में कई बार ऐसे मौके आये हैं, जब चारों तरफ अंधेरा ही अंधेरा नजर आता था, आशा की कोई किरण नहीं दिखायी पड़ती

थी। ऐसे मौकों पर कभी-कभी ऐसे चमत्कार हुए कि मुझे लगा ईश्वर जैसी शक्ति का अस्तित्व इस संसार में अवश्य है। एक बार की बात है। उन दिनों मेरी शादी हो चुकी थी। मेरी एक दूध पीती बेटी भी थी। ठीक से खाना न मिलने के कारण मेरी पत्नी के स्तन सूख गये थे। बच्ची भूख से बिलबिलाती रोती थी। मेरे पास इतने पैसे नहीं थे कि मैं दूध खरीद सकता। पैसे के लिए दिनभर इधर-उधर भटका, मगर पैसा कहीं नहीं मिला। रात को निराश लौटा। ऐसी हालत में मैं और मेरी पत्नी दोनों काली मां की फोटो के सामने रोये, प्रार्थना की, और भूखे पेट सो गये। दूसरे दिन सुबहसुबह किसी ने दरवाजे पर दस्तक दी। मैंने दरवाजा खोला तो मेरे सामने एक आदमी खड़ा पूछ रहा था – चेतनजी आप ही हैं?

मैं बोला – हां, कहिये क्या काम है?

वह बोला – ये पांच सौ रुपये रामचंद्र ठाकुर ने एडवांस भेजे हैं।

कहां काम के पैसे नहीं मिल रहें थे, कहां एडवांस मिल रहा था। मैं तो उसे अपनी प्रार्थना और ईश्वर का चमत्कार ही कहूंगा।

**प्रश्न :** मैं जानता हूं आपके कला प्रशंसक देश में ही नहीं, विदेशों में भी हैं। क्या आप अपने कुछ विशिष्ट कला प्रशंसकों के नाम बतायेंगे?

**उत्तर :** मेरी दूसरी एकल प्रदर्शनी (१९५७) का उद्घाटन स्वर्गीय श्रीमती लीलावती मुन्शी ने किया था। लीलाजी मेरे चित्रों की प्रशंसिका ही नहीं, बल्कि समय-समय पर वे अपने सुझाव भी दिया करती थीं। उनके अलावा कुछ और भी विशिष्ट व्यक्ति हैं, जिन्होंने मेरे चित्रों को समय-समय पर खरीदकर मेरे आत्मविश्वास को बढ़ाया है। जैसे, के. ए. अब्बास, पी. बी. चेरियन, जे. जे. भाभा, महारानी आफ कूच विहार, सुनील दत्त, इंदिरा गांधी, डॉ जाकिर हुसेन, राज कपूर, आर. के. करंजिया, श्रीमती सुमति मोरारजी. पं. जवाहरलाल नेहरू, अभिनेत्री आशा पारेख, पोरबंदर के महाराजा, बलराज साहनी आदि। इन विशिष्ट व्यक्तियों के अलावा भी बहुत से महत्वपूर्ण विदेशी कला प्रेमियों के पास मेरे चित्र संग्रहीत हैं।

कलाकार चेतन का संपूर्ण कृतित्व दो भागों में विभाजित किया जा सकता है। कैरियर की शुरुआती दौर के उनके सभी चित्र यथार्थवादी शैली में हैं। इन चित्रों की रंग-रचना सभी में एक रोमांटिक कवि जैसी प्रवृत्ति देखने को मिलती है। पश्चिमी यथार्थवादी कलाकारों में चित्रकार इंग्रेस इसी शैली का यथार्थवादी चित्रकार था। चेतन के चित्रों में भी प्रकृति की सब सुंदर और लुभावनी वस्तुओं का ही चित्रण देखने को मिलता है। यहां तक कि खंडहर भी चित्र में उतने आकर्षक लगते हैं कि उन्हें बार-बार देखने का मन करता है। इसके बाद चेतन ने रेखा प्रधान चित्रों का सृजन किया। उन चित्रों में भारतीय लोक जीवन की झांकी

देखने को मिलती है। इन चित्रों में अजंता के चित्रों जैसा छाया-प्रकाश के साथ काली रेखा की प्रधानता पायी जाती है। साथ ही साथ आधुनिक बिंदुवादी चित्रकारों जैसा टेक्स्चर रहता है। जो लोक जीवन के खुरदरेपन और अपने देश की मिट्टी से जुड़ाव को उजागर कर है।

चित्रकार चेतन का बचपन घोर अभावों और गरीबी में बीता बचपन में ही मां-बाप का सिर से उठ गया। पिता एक सिद्धहस्त चित्रकार थे। चेतन की मां इतनी सुंदर गुड़िया ब थीं कि लोग दूर-दूर से उनसे गुड़िया बनवाने आते थे। कला चेतन को विरासत में मि

मोरावी से कच्छ तक कच्छ से फिर मोरावी। मोरावी से अहमदाबाद और अहमदाबा बंबई की एक लंबी यातनापूर्ण जिंदगी चित्रकार चेतन ने जी है। बंबई आकर पोस्टर ब नाटकों और नृत्य नाटिकाओं के लिए वेशभूषा और सेट डिजाइनिंग की। केदार शर्मा 'चित्रलेखा' में चेतन द्वारा की गयी वेशभूषा डिजाइनिंग के लिए सर्वोत्तम पुरस्कार भी मिल

१९६२ में जब चीन ने आक्रमण किया, उस समय चेतन ने अनेकों पोस्टर बनाकर पं लगाकर बंबई नागरिक लीग के साथ काम किया।

१९६६ में जब पाकिस्तान ने देश पर हमला किया तो देश के हर नागरिक ने अपने-अ ढंग से युद्ध में अपनी सक्रिय भूमिका निभायी। चित्रकार चेतन और कुमार ने भी इस युद्ध शहीद हुए चित्रकारों के व्यक्ति-चित्र बनाकर एक प्रदर्शनी आयोजित की। ये सारे चि भारतीय सेना को समर्पित कर दिये गये थे।

आधुनिक चित्रकारों के बारे में अपना विचार व्यक्त करते हुए चेतन कहते हैं, 'ये आधुनि चित्रकार ईश्वर, ब्रह्म और सृष्टि की व्याख्या तो कर लेते हैं, लेकिन अपने चित्रों की व्याख्या स्वयं भी नहीं कर पाते तो कला प्रेमियों को दोष क्यों दिया जाय।

चित्रकार चेतन का पता – 'प्रनव'
७-९७८ जुहू रोड, सांताक्रुज,
बंबई-४०० ०५४.

– १०९, अशोक नगर, अचोले रो
'नालासोपारा (पूर्व), थाना महारा

□

मराठी कहानी

# अन्तरिक्ष

□ वि. वा. शिरवाडकर 'कुसुमाग्रज'

क्षितिज पर दूर तक फैले घने अंधकार में अकस्मात चार-पांच दरारें पड़ीं और अरुणिम किरणें विकीर्ण होने लगीं।

सरोवर के रेतीले तट पर लगभग सहस्र पक्षियों का समूह निश्चल मौन भाव से निद्रावस्था में था। उनकी लम्बी गर्दनें रजनी की मसृण क्रोड में थकी-मांदी विश्राम कर रही थीं।

क्षितिज पर फैली प्रकाश रेखा की ओर दृष्टि जाते ही एक पाखी अपने पंखों को फड़फड़ाते हुए ऊंचे स्वर में हांक लगाते आकाश में उड़ा। उसकी देखादेखी उसके पीछे और दस-बीस पंछियों ने आकाश में उड़ान भरी और अपने नायक के साथ-साथ ऊंचे दूर-दूर उड़ने लगे।

सरोवर का परिसर शान्त था। जल की लोल लहरें मन्द गति से रेतीले तट की ओर पुन:पुन: लौट रही थीं, जिन दस-बीस पंछियों ने हांक लगाते आकाश में ऊंची उड़ाने भरी थीं, उनकी उस हांक ने नीरवता को खंड-खंड कर दिया था। सरोवर के तट पर निद्रस्थ पंछियों का समूह हड़बड़ाकर जाग उठा, जागरण की एक लहर उठी, पंखों की फड़फड़ाहट हुई, पंछियों ने अपनी लचीली गर्दन को जरा इधर-उधर किया और अरुणिम नेत्रों के निद्रा-अलस भाव को झटक दिया।

एक सामूहिक अनुभूति।

अब नये प्रवास का प्रारम्भ। सरोवर के तट पर का सुख-दुख मिश्रित भाव के इस मुकाम को अब विदा।

अब अंतरिक्ष।

पल-पल, क्षण-क्षण, पूरे-पूरे दिन सिर्फ अंतरिक्ष।

पंखों की फड़फड़ाहट कर पंछी चुप हो गये। अपने शरीर की पूरी ताकत को वे पंखों में इकट्ठी करने लगे थे।

पंछियों के उस झुंड में एक छुटका था। अपनी अम्मा की गोद में बैठ अपने पंखों में प्राणशक्ति इकट्ठी करने की दिशा में प्रयत्नशील। उसकी यह पहली उड़ान थी। बहुत उत्साह था, उमंग थी, छोटे-छोटे पंख ही नहीं, उसका नन्हा-सा मन भी शत शत पंख लगा कर उड़ने की दिशा में प्रयत्नशील था। छुटके को अपने बड़े और बलवान होने का एहसास प्रतिक्षण हो रहा था।

उस झुंड में उसके जैसे सैकड़ों छुटके थे जिन्हें अब तक की तीन ऊंची उड़ानों में पर्याप्त अभ्यास करवाया गया था, दो घंटे सें तीन दिन तक निरन्तर उड़ने का।

अब लम्बी यात्रा का यह अंतिम पड़ाव था। थकान मिटाने के लिए एक-दो दिन का यह मुकाम, बाद में असीम जलराशि। जलनिधि के दुर्गम प्रवासोपरान्त एक रात्रि विश्रान्ति और फिर अपना नंदनवन।

अपने जैसे हजारों-लाखों पंछी दुनिया के कोने-कोने से इस नंदनवन में आते हैं। भीड़-भाड़ से रहित यह भूमि केवल अपनी ही– इस विहंगभूमि में अत्यन्त सुखकर सूर्यप्रकाश, स्वच्छ जलाशय, भरपूर अन्न राशि, हरी- भरी वनराजि और उस वनराजि में प्रेम, प्रणययुक्त सहचरों का सान्निध्य।

यह लुभावना वर्णन छुटके ने अपनी अम्मा से हजार बार सुना था।

मार्ग निरापद है या नहीं इसका अंदाज लेने के लिए उड़े हुए पंछी अब वापस जमीन पर आ गये थे। अन्य पंछी अग्रिम यात्रा के लिए सन्नद्ध हो गये थे। नायक ने संकेत किया और उस झुंड के हजारों पंछियों ने पंख फैला कर आकाश में उड़ान भरी। ऊंचे-ऊंचे और ऊंचे। और बाद में उस विहंगभूमि की दिशा की ओर।

सरोवर का तट अब सूना-सूना और खिन्न था।

सूरज ढले दो घंटे बीत गये थे। पंछियों का झुंड अभी भी आकाश में उड़ान भर रहा था। मुकाम की जगह अब भी बहुत दूर थी। और दो-तीन घंटे की उड़ान...

नायक ने देखा –

सामने क्षितिज पर विद्युत का प्रकाश। घने काले मेघ मानो धरती के आलिंगन के लिए आतुर थे। सरसराती हवा की प्रत्येक लहर संकेत कर रही थी कि उस प्रदेश में मूसलाधार वृष्टि हो रही है बादलों के बीच बिजली कड़क रही है।

वहां पहुंचकर रात्रि में डेरा डालना संभव ही नहीं था।

वह तनिक जमीन की ओर आया और उसने एक नजर धरती पर फेंकी।

तीन ओर से छोटी पहाड़ियों से घिरा, मीठे जल का एक सुन्दर जलाशय उसे दिखाई पड़ा। तट पर ही आड़ू और अशोक के पेड़ों का घना जंगल था। खुली रेतीली जमीन ज्यादा अच्छी होती है। यहां उतरा जा सकता है एक ही रात तो गुजारनी है।

'उतरो नीचे'– उसने हुकुम दिया। उसके उपनायक ने भी उसके स्वर का समर्थन किया।

समूह नीचे उतरा। उसने सरोवर के तट पर अपना डेरा डाला।

स्थान अपरिचित होते हुए भी सुखावह और सुविधायुक्त था। सरोवर में और तट पर खाद्य सामग्री भरपूर थी। हवा भी अनुकूल थी। आकाश से चन्द्र किरणें धरती पर अपनी स्नेह किरणों का बिखराव कर रही थीं। उस स्थान पर अन्य प्राणियों के अस्तित्व का आभास नहीं था।

एक घंटे में पंछी अपनी चहचहाट बन्द कर निद्राधीन हो गये।

आधी रात तक कहीं कुछ भी घटित नहीं हुआ लेकिन बाद में...

सरोवर के एक कोने से दस-बीस पंछियों के आर्त स्वर से आकाश गूंज उठा। पचास-साठ पंछियों ने अपनी ही जगह पंख फड़फड़ाये। क्या घटित हुआ है यह समझने के पहले ही पेड़ों के झुरमुट में से पचीस-तीस जंगली बिल्लियों ने उन पक्षियों के समूह में घुस कर उन पर झपट्टा मारना शुरू किया। पहाड़ी के पीछे से उद्बिलावों का एक जत्था दौड़ा आ रहा था।

बिल्लियों के चपेट में आये पंछी चीत्कार कर रहे थे। उस चीत्कार ध्वनि के भय से अन्य पंछी चिल्लाते भाग रहे थे, उड़ रहे थे अपने प्राणों को बचाने के लिए।

नायक ने अवाज दी— 'पेड़ पर। पेड़ पर।' सारे पंछी एक क्षण में ही पंखों को फड़फड़ाते ऊंचे पेड़ पर जा बैठे।

उद्बिलावों की संख्या अब बढ़ गयी थी। दो-तीन उद्बिलाव अपनी जीभ से मुंह चाटते, नीली-नीली चमकती आंखों से मिचमिचाते शिकार पकड़ने की ताक में थे। वे पेड़ पर छलांग लगाना चाहते थे।

यही क्षण परीक्षा का था, जूझने का था, अपनी प्राणरक्षा के लिए भिड़ जाने का था।

नायक ने निर्धार किया और आदेश दिया— 'मारो झपट्टा। टूट पड़ो अपनी नुकीली चौंचों से फोड़ो उनकी आंखें। करो प्रहार उनके शरीर पर। चोंचें गड़ाओ।'

दूसरे क्षण पेड़ के आश्रय में बैठे पंछियों ने एक साथ पलटा मारा और उद्बिलावों पर जबरदस्त हल्ला बोला। नीचे आकर जो सामने दिखा उसके शरीर पर, आंखों पर, गर्दन, पीठ, जहां दिखा वहां उस जगह पर अपनी नुकीली चोंचें गड़ाना शुरू किया। उद्बिलाव भी गुस्से से पूंछ फुलाकर उनका विरोध कर रहे थे। पंद्रह-बीस मिनट तक यह प्राणलेवा संघर्ष जारी रहा। कुछ पंछी तो लहूलुहान हो जमीन पर गिर पड़े, पर उद्बिलावों को पराजित होना पड़ा था। कुछ की आंखें फूट कर मांस बाहर निकल आया था। कुछ के पेट, पीठ से खून रिस रहा था। जिस तरह बिना आवाज किये हौले-हौले वह झुंड आया था, उसी प्रकार पराजित हो हौले-हौले पहाड़ी की पिछाड़ी में चला गया।

रात्रि का शेष प्रहर पंछियों ने सरोवर के उस तट पर बिताया और पौ फटते ही पुनः आकाश में उड़ान ले आगे की यात्रा शुरू की।

छुटके के जीवन में इस प्रकार संघर्ष करने का यह पहला ही अवसर था पर उसने इसमें जी-जान से भाग लिया था। एक-दो क्या, कम से कम दस-बीस उद्बिलावों को तो उसने अपनी चोंच से क़ोंचकोंच कर मारा ही होगा। प्राणों का भय तो उसे था ही नहीं। किसी अलौकिक खेल का, किसी मजेदार खेल का ही एक भाग हो— ऐसा ही उसे प्रतीत हो रहा था।

आकाश में ऊंची उड़ान भरते जब वह अपनी अम्मा के साथ-साथ था तब वह उसे

बढ़ावा दे रही थी, उसके उड़ान की प्रशंसा कर रही थी पर उसने 'कुछ विशेष' किया है यह उसे स्वीकार नहीं था।

प्रातःकाल की शीतल मंद बयार से आल्हादित अंतरिक्ष में उड़ान भरी जा रही थी। एक कतार में पंछी आकाश में उड़े जा रहे थे, मानो एक सशक्त लहर ही संतरण कर रही हो।

छुटके को बड़ा अच्छा लग रहा था। सूरज की कोमल किरणों से उसके पंख सिक रहे थे। हवा में भी अभी ठंडक ही थी, उड़ान की गति और उल्लास में उसकी अनुभूति तीव्र नहीं थी। हवा का एक झोंका अपने साथ सारे पंछियों को अपने प्रवाह में बहाये लिये जा रहा था। छुटका बड़कों का अनुकरण कर रहा था। कई बार हवा की गति कम होते ही वह नीचे की ओर आने लगता था, फिर प्रयत्न से वह ऊंची उड़ान भर कर अपनी कतार में आ जाता था।

अब और एक पड़ाव आया। आनंददायक! उसके बाद एक लम्बी– पंखों में एकत्रित की प्राणशक्ति की परीक्षा लेने वाली प्रदीर्घ उड़ान की शुरूआत–।

यह उड़ान अनथक चार दिन और चार रात्रि की। समुद्र की अथाह जलराशि के ऊपर कहीं द्वीप नहीं, जमीन का तट नहीं, समुद्र पार करने पर केवल एक और मुकाम! एक रात्रि का। उसके बाद तो वह ज्योति-भूमि! पंछियों का नंदनवन।

उस झुंड ने समुद्र के ऊपर असीम अंतरिक्ष में उड़ान भरी।

इस नये और अपूर्व अनुभव से छुटके का मन उल्लसित था। अब नीचे न अवनी थी, न हरे-भरे खेत, न जंगल, न पहाड़, न कुछ। विस्तृत जलराशि दूर क्षितिज तक फैली हुई थी। जल ही जल।

चार दिनों की अखंड यात्रा में समुद्र ने विविध रूप धारण किये थे। कभी उदित होते बाल रवि की कोमल किरणों से मिलकर अत्यंत प्रसन्न और प्रिय प्रतीत होता, तो सांध्य बेला में एकाकीपन की भावना से अभिभूत हो जाता, तो रात्रि की काली छाया में विरद प क्रोधित हो अपनी लहरों के गर्जन तर्जन से वातावरण को भयावह बना देता। रत्नाकर के सभी रूपों को देखकर छुटका मन ही मन कभी उल्लसित, कभी भयभीत और कभी पुलकित हो उठता।

उड़ान के समय कभी उसके समवयस्क पंछी उसे घेर लेते थे। आपस में खेल-खिलवाड़ करते थे। वह भी अपने पंखों के स्पर्श से प्रसन्न होता, अपनी चोंच से एक दूसरे को छेड़ देता। उसे भी मजा आ रहा था पुरुषार्थ के एक नये रूप का प्रत्यय उसे मिल रहा था।

* * *

झुंड अंतरिक्ष में तीव्र गति से आगे बढ़ा जा रहा था। आधी रात होने को आयी। आकाश में चन्द्रमा की एक कोर क्षीण गति से आगे सरक रही थी। तारागण दूर चमचमा रहे थे। नीचे समुद्र की लहरें एक दूसरे के गले मिल रही थीं।

समुद्र यात्रा का यह अंतिम टप्पा था। कुछ

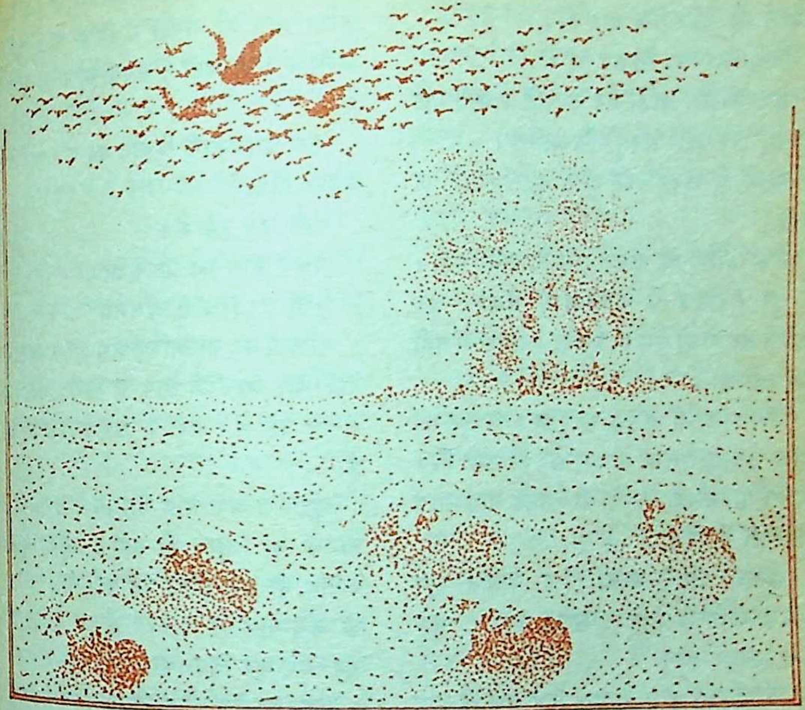

अंतर काटना ही शेष था। सच कहा जाय तो अब वह खतम होने को था।

झुंड के पक्षी थककर चूर-चूर हो गये थे। पंखों में इकट्ठी की प्राणशक्ति अब चुकने लगी थी। भूख और प्यास से शरीर टूट रहा था।

लेकिन....

अंदाज गलत साबित हुआ था। पंद्रह-बीस मील दूर के समुद्र किनारे पर सूर्यास्त के पहले पहुंचा जाय, नदी के तट पर विश्राम किया जाय, नदी के निर्मल जल के स्पर्श से उड़ान की थकान मिटाने की योजना थी। अटकल गलत साबित होने के कारण आधी रात हो जाने के बाद भी किनारा क्यों नहीं दिख रहा? नायक चिन्तित हो उठा था।

किनारा लगभग दस मील दूर था। मेघखंडों ने चांद को अपने कैद में रखा था। दूर तक अंधकार ही अंधकार। कुछ भी दिखायी नहीं पड़ रहा था, फिर भी पंछियों को रास्ते की थोड़ी अटकल थी ही।

नायक ने पुकारा किया– 'तट अब निकट है, हम अब शीघ्र ही अपने प्रिय नदी किनारे पर उतरेंगे।'

पंछियों ने पंखों की फड़फड़ाहट से आनंद

व्यक्त कर घोषणा का स्वागत किया और उड़ान की गति तेज कर दी।

विश्राम स्थल निकट था।

थकान अब थोड़ी देर में मिट जायेगी नदी किनारे पर अब भरपूर विश्रान्ति।

इतने में छुटके की दृष्टि दूर किनारे पर गयी।

एक अग्नि की लपट उसे दिखायी पड़ी।

दूर क्षितिज में उठनेवाला धुआं– वह अग्नि का था या मेघ या कुहरा? समझ में नहीं आ रहा था।

उसने अपनी अम्मा से पूछा। अम्मा की दृष्टि उसकी तुलना में कमजोर हो गयी थी। उसने नायक को सूचना दी। यदि वहां आग ही लगी होगी तो?

छुटका जल्दी-जल्दी पंख फैलाते हुए नायक के पास पहुंचा। उसने कहा– 'मुझे उस किनारे आग...'

'मैं जानता हूं।' नायक पूर्ण रूप से थक चुका था। उसकी चौकस नजर भी अब थक गयी थी। फिर भी यंत्रवत् वह अपना नायकत्व संभाले हुए था। धैर्य तो अब चुक ही गया था।

नायक के साथ और उसके अगल-बगल से उड़नेवाले पंछियों को भी इस संकट की आहट मिल गयी थी।

जैसे-जैसे दूरी कम होती गयी, वैसे-वैसे तट पर के भयानक, भयावह दृश्य अधिक स्पष्ट होने लगे। सभी के ध्यान में आया–

दावाग्नि।

पृथ्वी के गर्भ का सारा क्रोध मानो अग्नि की लपटों में बाहर फेंका जा रहा है। सारा प्रदेश आग की लपटों से घिरा था। धुएं के अम्बार ने आकाश में अपना साम्राज्य फैला था।

'इस प्रलयकारी स्थिति को पार कर आगे बढ़ना होगा?'

पंछी उड़ रहे थे।

सर्वत्र आग का प्रखर ताप।

वृक्षों पर टिकना असंभव।

पंछियों का आत्मविश्वास ढीला पड़ता जा रहा था, आग के ताप से शरीर और पंख झुलस रहे थे। गले में खरखराहट हो रही थी।

छुटके ने जरा आगे बढ़ कर देखा तो क्या नायक का नेतृत्व ही नहीं। उसकी जीवन ज्योति भी अब धीमी पड़ गयी थी। निराशा के वज्राघात ने उसकी जीवन शक्ति को चूर-चूर कर दिया था।

पवन का तेज झोंका नायक को नीचे फेंकता था तो वह पुनः अपनी ऊर्जा पंखों में समेट ऊपर उड़ने की कोशिश करता। यह मौत के साथ उसका संघर्ष था।

उपनायक उसके आसपास मंडराकर उसे धीरज रखने को कह रहा था। ...पर अब उसकी अंतिम बेला निकट थी। हवा से उल्टी-सीधी एक दो कुलांचें खाकर वह सीधे नीचे आया– समुद्र में।

झुंड में भय और घबराहट हुई। एक कतार में उड़नेवाले पंछी इधर-उधर होने लगे। उनकी कतार टूट गयी। भय और निराशा से एक विचित्र स्वर कंठ से बाहर आ

रहा था। कुछ डरपोक पंछी तो पंख फड़फड़ाकर इधर-उधर उड़े जा रहे थे पाखी तितर-बितर हो रहे थे। भय से चीत्कार रहे थे।

एक संकट में से दूसरे संकट का जन्म हुआ था।

उड़ान चालू रहते नायक के इस प्रकार खो जाने का यह पहला ही अवसर था। पुराने को खोने और नये को पाने का।

उपनायक तो था— लेकिन इस अनपेक्षित परिस्थिति का सामना करने में उसकी ताकत फीकी पड़ रही थी। जमावड़े में का कोई पंछी आगे आकर यह नहीं कह रहा था कि मैं अब नायक बनता हूं।

इस महत्वपूर्ण जिम्मेदारी के भार वहन के लिए किसी के भी पग आगे नहीं बढ़ रहे थे।

समय फिसलता जा रहा था। पाखी भय से चीत्कार रहे थे। एक अजीब स्वर कंठ से निकल रहा था।

कतार तो पूर्ण रूप से अस्तव्यस्त हो गयी थी। सैकड़ों पंछी थक कर नीचे की ओर झुके जा रहे थे। कुछ अपनी ही जगह पर पंख फड़फड़ाये जा रहे थे पंछी 'नायक'-'नायक' की पुकार कर रहे थे।

छुटके के मन में कहीं कुछ कौंधा। उसने अपनी सारी प्राणशक्ति इकट्ठी की। छोटे-छोटे नेत्र आनंद उल्लास से चमक उठे।

वह एक पलटा ले आगे बढ़ा। उपनायक के भी आगे। ऊंची उड़ान भर आत्मविश्वास से तीव्र स्वर में उसने घोष किया— 'मैं-मैं-मैं। नायक-नायक नायक।'

उपनायक प्रसन्न हुआ। उसने उसके नायकत्व को स्वीकारा। वह चहका। पंछियों के समूह ने भी उपनायक के स्वर का समर्थन किया। अधिक कुछ सोचने-विचारने का समय ही नहीं था। जो उस स्थान पर आये उसका स्वागत ही था।

छुटका अब आदेश के स्वर में चहका—

'— एक कतार में आओ।'

'— एक ही दिशा में उड़ो।'

'— अपना आत्मविश्वास बनाये रखो। हम अवश्य अपनी प्रकाशभूमि का स्पर्श करेंगे। विजयी होंगे।'

उड़ान सामने की दिशा में ही करनी है या दिशा बदलनी होगी, इसका आदेश कुछ क्षणों में ही मिलेगा।

तब तक इसी वेग से, इसी गति से, इसी दिशा में...'

उपनायक ने झुंड के सब पंछियों की एक परिक्रमा की। नये नायक का संदेश सब पंछियों तक पहुंचाया, उसके अनुरूप अमल किया जा रहा है या नहीं, इसका भी निरीक्षण परीक्षण किया। अब पंछियों की चहचहाट, शोरगुल हो-हुल्ला, गड़बड़ी समाप्त हो गयी थी। सभी पहले जैसे निःशब्द लहरवत अंतरिक्ष में संतरण कर रहे थे।

पल-पल से छुटके का आत्मविश्वास और ताकत दोनों ही बढ़ रहे थे। अन्तर्मन के तेजोबल की सारी पंखुड़ियां ताजगी से भर गयी थीं। जिस 'नायकत्व' को उसने स्वीकारा था उसके अनुरूप ही अन्तर्मन की ऊर्जा उस पर बिखराव कर रही थी वर्षा की

बूंदों के समान।

अब दिशा का निर्णय– ।

पीछे लौटना तो असंभव। समूह के इतिहास में 'पीछे लौटना' इसके पहले कभी भी नहीं हुआ था, अतः वापस लौटने का तो सवाल ही नहीं उठता। चार दिन और चार रात्रि की जो दूरी उन्होंने तय की थी उसे पुनः पार करना उनके बस की बात नहीं थी। तब दिशा बदलना तो असंभव।

तब क्या उसी मार्ग से गुजरना होगा? जहां से अग्नि की प्रचंड लपटें उठ रही हैं? 'हां' – 'हां'। उसी मार्ग से गुजरना होगा। हो सकता है कि दावाग्नि का फैलाव आगे न हो।

'दावाग्नि के क्षेत्र को हम पार कर उस प्रकाशभूमि की ओर जा सकते हैं। केवल विश्वास चाहिए। पक्का इरादा होना चाहिए। हम अजेय हैं। दृढ़ विश्वास से हम निश्चित ही लक्ष्य तक पहुंच सकते हैं।'

छुटका– लेकिन अब वह 'छुटका' नहीं रह गया था। वह तो अब उस जमावड़े का 'नायक' था न।

उसने निश्चय किया और अपना निर्णय सबको सुना दिया।

जमावड़ा तट के अंतरिक्ष पर आ पहुंचा। जल की अथाह सीमा को वे पार कर चुके थे। अब उन्हें सर्वत्र आग की लपटों का ही समुद्र दिखलायी पड़ रहा था। आकाश में लपटें ही लपटें। मानो आकाश में ही अग्नि का तांडव हो रहा हो। उन लपटों का ताप असह्य था।

छुटके ने – 'नायक' ने हुकुम किया – 'कतार में चलो।'

'और ऊपर से उड़ान भरो।'

पंछी ऊपर और ऊपर का पल्ला पक उड़ने की कोशिश कर रहे थे। पर थके-मां पंछियों को पंख पसार कर ऊपर के पल्ले उड़ना संभव ही नहीं था।

सौ- दो सौ पंछियों का जत्था उसी प्रयत्न में जमीन पर आ गिरा। आग की लपटों भुन गया।

नायक ने देखा। किसी के शरीर पर खू की बूंद देखकर कातर होनेवाला 'छुटक 'नायक' बनते ही मन से कठोर औ निर्लिप्त बन गया था। जो गिर रहे थे, उनके लिए वह कुछ भी नहीं कर सकता था पर ज उड़ रहे हैं उन्हें बचा कर गंतव्य तक पहुंचाने का दायित्व उस पर था। उस प्रकाशभूमि तक ले जाने का। आग में स्वाहा होनेवालों उसकी अम्मा भी रही होगी तो। एक क्षण के लिए वह बैचेन हो उठा, पर उसकी खोज खबर लेने का समय भी उसके पास नहीं था। तीव्रगति से वह अपने झुंड के आगे उड़ा जा रहा था।

अब सभी ऊपर से उड़ रहे थे। निरन्तर एक गति से। वह अपनी प्रकाशभूमि तक पहुंचने की दूरी कम कर रहा था।

निचली भूमि पर दावाग्नि अपने क्रूर रूप का प्रदर्शन कर रही थी। पर्वत, पहाड़, पेड़ सभी आग की चपेट में आ गये थे। लपटें आकाश छू रही थीं। सर्वत्र धुआं ही धुआं। उस दावाग्नि की लपटों की आंच अब ऊपरी तल्ले तक पहुंच गयी थी।

नायक ने पुनः आदेश दिया। उपनायक ने

उसे हकारा देकर सब पंछियों तक पहुंचा दिया।

'और ऊपर। और ऊपर। और ऊपर। सात हाथ उंचे।' छुटका प्राण कंठ में लाकर चिल्लाया।

थके-मांदे पंछी फिर ऊपर की ओर जाने लगे। बची-खुची शक्ति दांव पर लगा वे ऊपर उड़ान भरने लगे। इस प्रयत्न में कुछ थक गये थे एकदम जमीन की ओर खिंच गये और उस अग्नि की होम समिधा बन गये।

जो बचे थे वे और ऊपर से उड़ान भर रहे थे।

दावाग्नि के शेष होने के कोई चिह्न दृष्टिगत नहीं हो रहे थे। नीचे लपट और ऊपर नील निरभ्र गगन और एक क्षीण चन्द्रकोर।

जमावड़ा पुनः उसी गति से एक कतार में आगे बढ़ रहा था।

प्रत्येक पाखी नियति के अधीन था। जिजीविषा की लालसा भी अब क्षीण हो चुकी थी। अब एक गति में पंख फड़फड़ाते उड़ते जाना और नायक के आदेश का पालन करना– इसके सिवाय उन्हें और कुछ सूझ नहीं रहा था। सभी अनुभूतियां जड़ हो गयी थीं।

अग्रभाग में उड़ान भर अपने जमावड़े की गति को अपनी नियंत्रित गति में रखनेवाला 'छुटका' बार-बार पीछे मुड़कर एक बार देख लेता था। क्षण-क्षण में जमाव के पंछी एक-एक कर नीचे गिर रहे थे, क्षीण आवाज निकाल 'राम' बोल रहे थे।

अब बचे कितने हैं? हजारों का जमावड़ा अब सैकड़ पर आ टिका। उपनायक जो अब तक साथ था वह अभी-अभी ही नीचे गिरा है। जो पंछी उड़ रहे हैं, उनके भी पंख एक-एक कर टूटकर अलग हो रहे हैं।

यह स्थिति अवश्य ही दुखदायी थी निरुत्तर करने वाली थी।

उत्तर था तो केवल एक।

– उड़ान भरते रहना।

छुटका भी अब अत्यधिक थकान का अनुभव कर रहा था। आग की लपटों से दूर-दूर क्या वह पहुंच पायेगा?

उसने एक नजर नीचे की ओर डाली और मन एकदम आशा, आनंद और उत्साह से भर उठा।

दावाग्नि का प्रदेश अब दूर छूट गया था। जमीन पर अग्नि अभी भी थी। लेकिन अब लपटें नहीं अंगार थे। ऊंचे-ऊंचे वृक्ष जलकर धराशायी हो गये थे। केवल अब अंगार धधक रहे थे, आकाश धूम्राच्छादित था।

छुटके ने अब आनंद से विजयी होने की किलकारी भरी।

'हम पहुंच गये हैं। विजयी हुए हैं। आग का दरिया पीछे छूट गया है। प्रकाश भूमि अब आ गयी है....'

जमावड़े ने आनंदपूर्ण किलकारी भरी, अपना वेग बढ़ाया। नये उत्साह से, नयी संजीवनी पाकर पंछी और तेजी से आगे बढ़ने लगे।

उन्हें अब धरती का वह छोर दिखायी पड़ रहा था जो दावाग्नि से पूर्णतः बचा हुआ था।

# रश्मि को फिर तिमिर न छले !

आज दीपक जले तो जले,
किन्तु भीतर का तम भी गले,
तुम जलो सूर्य बनकर स्वयं–
किन्तु तुम में अहं न पले ।

एक अभियान ऐसा चले,
ज्योति हो दीप के भी तले,
दीप यों दीप्त हों प्राण में
रश्मि को फिर तिमिर न छले ।

**– सतीश आर्य**

**मनकापुर-गोण्डा-२७१ ३०२, उ.प्र.**

---

उसके बाद हरी-भरी घास से भरे मैदान और ऊंचे-ऊंचे वृक्षों से भरा घना जंगल प्रदेश दिखायी पड़ने लगा ।

पंछी आकाश में उड़ान भरनेवाले अन्य पंछियों को बता रहे थे– 'आ जाओ, यहां आ जाओ ।'

विशाल जलाशय देख छुटके ने आदेश दिया– 'नीचे । नीचे ।'

सभी पंछी नीचे उतरे । हरी-हरी घास अमृतवत प्रतीत हो रही थी । जमीन का स्पर्श मौत से जीवन में प्रवेश करने की अनुभूति लिये हुए था । हम सब जीवित हैं इस पर उन पंछियों को विश्वास नहीं हो रहा था ।

छुटके ने झुंड के चारों ओर एक चक्कर लगाकर अंदाज लिया । सौ-सवा सौ पंछी बचे थे । उनके पंख तार-तार हो गये थे आग की लपटों से झुलस गये थे, काले पड़ गये थे दृष्टि में विजय का आनंद और अस्तित्व रहने का सुख अनुभव कर रहे थे।

अब रात्रि फिर विश्रान्ति।

पूर्वीय क्षितिज के अरुणिम होने का संके मिलते ही छुटके ने जागरण की सूचना दी और मार्गदर्शन के हेतु उड़ा। साथ में और चार-पांच पंछी उड़े।

थोड़ी ही देर में वे नीचे आये। उड़ान भरने के लिए तैयार पंछियों के समूह को संकेत क छुटका बोला –

'अब अंतिम टप्पे की उड़ान। अपनी प्रकाशभूमि, विहंगभूमि, नंदनवन की ओर।'

अब पंछियों ने अपने पंख पसार दिये थे।

**हिन्दी रूपान्तर : डॉ. विद्या केशव चिटको**

□

# यही बना माहौले शायरी

## (शायर ने अपने को ही देखा है)

भले लगे वो बेगाना सा
लगता यार है पहचाना सा

कई महफ़िलों में देखा है
हर महफ़िल से उकताया सा

रक़्क़ासा के घर भी देखा
जाम हाथ में पर खोया सा

गिरी आम्रपाली कदमों में
हज़रत बुद्ध और वही तमाशा

लेकिन एक अजनबी शबनम
कर गयी हंसता फूल रोआसा

छोड़-छाड़ सब चला बिरागी
दे क़िस्मत के हाथों पासा

भूखा रेगिस्तान से आया
सागर की नगरी में प्यासा

दिन रंगीन ख़ुशनुमा रातें
चकाचौंध के बीच उदासा

कुछ हरकत दीवानों जैसी
शख़्स मगर है अच्छा ख़ासा

नहीं किसी से गिला-शिकायत
कभी ख़िज़ां सा, कभी फ़िज़ा सा

नावाकिफ तहज़ीबे जहां से
जैसे सोकर अभी उठा सा

बात शैख़ सी क़रता रहता
पर मिज़ाज है रिन्दों का सा

कुछ सुलझाया अक्लो ख़िरद ने
वहीं अक़ीदों ने फिर फांसा

आप तमाशा या तमाशबीं
इस सवाल का कहां खुलासा

तब पीरों-संतो संग भटका
ज़्यादा गहरा गयी निराशा

पायी झूठ इबादतगाहें
मैखाने ने दिया दिलासा

मैख़ाना भी दिल के अन्दर
साकी भी रूठा-रूठा सा

यही बना माहौले शायरी
रहता जिसका अजब नशा सा

**— महीपाल —**

**२२ विजयमहल, 'डी' रोड,**
**चर्चगेट, बम्बई ४०० ०२०**

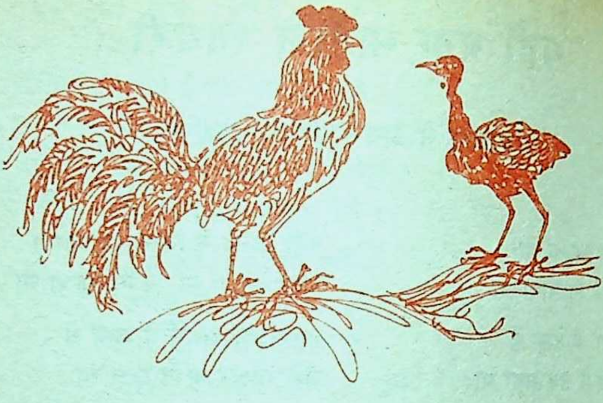

## एक तातारी लोककथा

# मुर्गा बांग क्यों देता है ?

□ **महेश अमोत**

पहले मोर वैसा सुन्दर नहीं था जैसा वह आज है। उसका शरीर बहुत भद्दा था। कोई पक्षी उसे पसन्द नहीं करता था। जहां कहीं भी वह जाता, पक्षी उससे मुंह फेर लेते। मोर उदास हो जाता। उसे अपनी कुरूपता पर बहुत ग्लानि होती। वह अकसर अकेला ही रहता, अपने भौंडे परों को देखता और रोया करता। वह ईश्वर को कोसता कि उसने उसे सुन्दर क्यों नहीं बनाया। इस तरह कुरूप होने का अहसास उसे रात-दिन कचोटता रहता।

एक दिन उसने एक खूबसूरत पक्षी को घूमते हुए देखा। उसके लम्बे और झिलमिलाते पंखों की छटा देखते ही बनती थी। पक्षी जितना सुन्दर था उतना ही भोल भी लगता था। उस पक्षी को आज मुर्गा कह जाता है। उसे देखकर मोर ने मन ही म कहा– 'इस पक्षी से दोस्ती करना मेरे लिए आसान रहेगा। इसके साथ रहकर पक्षी मेर तिरस्कार भी नहीं करेंगे।' उसने ऐसा ह किया। उसने मुर्गे की प्रशंसा के पुल बांधकर उसे खुश कर लिया। मुर्गा और मोर दोनों मे मित्रता हो गयी। दोनों साथ-साथ रहने लगे।

मुर्गे के साथ मोर का दिल तो बहल जाता पर वह असुन्दर होने की टीस को न छोड़ पाता। जब कभी भी वह मुर्गे के सुन्दर पंखों को देखता तो उदास हो जाता। उसकी

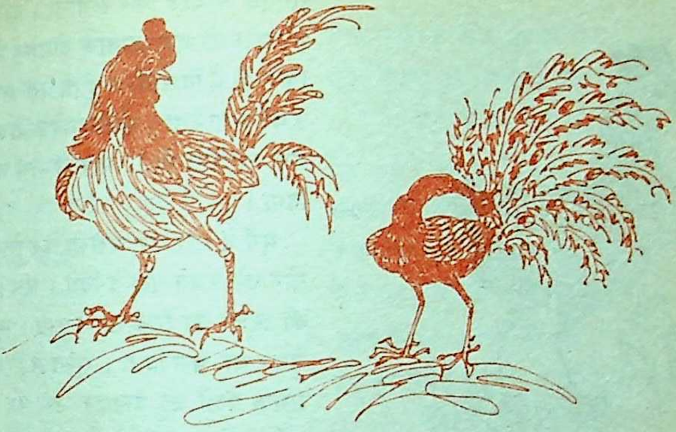

उदासी को देखकर मुर्गे ने उसे एक दिन एंक उपाय सुझाया– 'मित्र मोर, क्यों न तुम शादी कर लो। मुझसे तुम्हारी उदासी देखी नहीं जाती। पत्नी के प्रेम में तुम सब कुछ भूल जाओगे।'

यह सुनकर मोर का गला भर आया। वह रुंधे कंठ से बोला– 'यह कैसे हो सकता है, मित्र? कोई मोरनी मुझे पसंद ही नहीं करती – 'मैं कुरूप जो हूं। काश! मेरे भी तुम्हारे जैसे सुन्दर पंख होते तो मैं कुंआरा ही

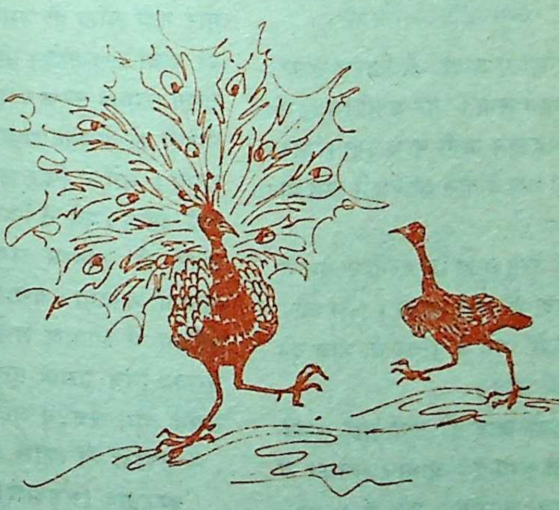

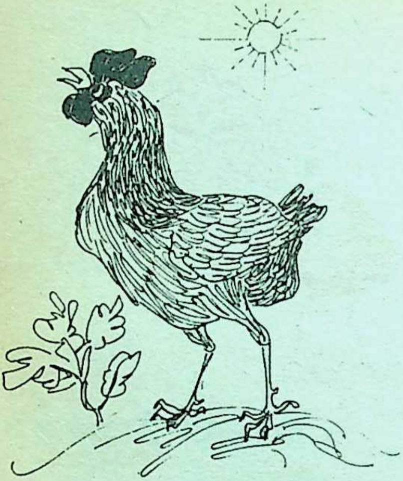

न रहता।'

'दिल छोटा न करो, मित्र। अब तुम कुंआरे नहीं रहोगे। तुम कुछ दिनों के लिए मेरे पंख ले लो। जब तुम्हारी शादी हो जाय तो मेरे पंख वापस कर देना।' मुर्गे ने मोर को धीरज बंधाया।

मोर की आंखों में आशा की किरण उभर आयी। वह कहने लगा। 'मेरे अच्छे मित्र, मैं तुम्हारा यह अहसान कभी न भूलूंगा। यदि तुम मुझे अपने पंख दे दोगे तो शादी होते ही उन्हें लौटा दूंगा।'

'मगर कहीं ऐसा न हो कि पत्नी के प्रेम में तुम अपना वादा ही भूल जाओ। और लौट कर ही न आओ' मुर्गे ने शंका के भाव को प्रकट करते हुए कहा।

'यदि ऐसा हो जाय तो तुम मुझे तड़के उठकर आवाज लगाना। आवाज सुनकर मैं तुम्हारे पास चला आऊंगा। यदि मैं न आऊं, तो एक आवाज फिर लगाना। यदि मैं तब भी न आऊं तो एक आवाज दोपहर में लगाना। फिर भी मैं दिखायी न दूं तो एक आवाज शाम ढलते लगा देना। कोई न कोई आवाज तो मुझ तक पहुंचेगी ही।' मोर ने मुर्गे को दिलासा दिया।

मुर्गे ने मोर पर भरोसा कर लिया। उसने मोर को अपने पंख दे दिये। पंख पाकर मोर की खुशी का ठिकाना न रहा। मुर्गे से विदा लेकर वह चल दिया। रास्ते में ही एक मोरनी उसके पंखों को देखकर उस पर मोहित हो गयी। मोर खुशी के मारे झूम उठा। उसने मोरनी से विवाह कर लिया। अब उसे पंख लौटाने की याद आयी। पर उसका पंख लौटाना तो दूर रहा, उसने मुर्गे के पास जाने का विचार ही छोड़ दिया।

इधर मुर्गा मोर की प्रतीक्षा में दिन गिनता। जब काफी दिन बीत जाने पर भी मोर नहीं लौटा तो उसने तड़के उठकर मोर को आवाज लगायी। मोर ने आवाज सुनी पर उसने उसकी तरफ कोई ध्यान न दिया। वह मोरनी को नाच दिखाकर उसे रिझाने में मस्त रहता। मुर्गे ने फिर आवाज लगायी। मोर नहीं आया। मुर्गे ने फिर दोपहर और सांझ ढलते ही आवाज लगायी पर मोर कहीं दिखायी न दिया। बेचारा मुर्गा आज भी इसी प्रतीक्षा में आवाज लगाता है कि एक दिन उसका मित्र उसके सुन्दर पंखों को लौटाने उसके पास अवश्य आयेगा।

**— हरीश टी स्टॉल, पुरानी सब्जी मंडी,**
**कोटद्वार (गढ़वाल) २४६ १४९, उ.प्र.**

## नदी रोशनी की

अंधेरा बहुत है, दिए हम जलायें
इधर चांदनी के अधर पीले-पीले,
उधर पांव कांटों की वसीयत हुए हैं,
बिखरती हुई रेत सी जिंदगी है,
ये सपने जो दुख की इबारत हुए हैं ।

ये आंसू के चेहरे,
ये पहरों पर पहरे,
चलो गीत मीठा
कोई गुनगुनायें ।

अभी कैद है रात तम के घरों में,
उजालों को लूटे हैं बौने अंधेरे ।
नदी रोशनी की अपाहिज सिसकती,
धुंधली सुबह के हैं कैदी सवेरे ।

अभी काफिले,
खुशबुओं के जले हैं,
हम पर्वत को टेरे,
हवा को जगायें ।

ये किरनों के घुंघरू, दिये की उदासी,
ये गूंगी, ये बहरी, सदी एक प्यासी
ये बस्ती, ये जंगल, ये स्वर बांसुरी के,
ये टूटे घरौंदे, समंदर तरीके ।

इन्हीं में छुपी
जिंदगी की हरारत,
नये जुगनुओं के,
बसेरे बसायें ।

**— दिनेश शुक्ल**
**रामश्वर रोड, खण्डवा, म.प्र.**

□

## रोशनी के गीत गाना

मास कातिक और मावस
छत-मुंडेरों पर, सजीले दीप की कड़ियां सजाना
रोशनी के गीत गाना ।

यह सुभग त्यौहार जगमग
ज्योति के उपहार का है
कुछ हृदय की जीत का है
कुछ हृदय की हार का है

रात्रि है यह प्राप्ति की भी
इसलिए सोई हुई हर कामना को तुम जगाना
रोशनी के गीत गाना ।

सूर्य की लाली चुरा कर
सातिए में रंग भरना
यह तिमिर पावन तिमिर है
इस तिमिर में भी संवरना

देहरी पर बांध तेरण
देह के ऊपर, किरण को ठीक से रचना-रचाना
रोशनी के गीत गाना ।

लाभ-शुभ के अक्षरों में
नेह को भी जोड़ देना
रात जब होवे युवा तो
याद मेरी ओढ़ लेना

मैं यहां पर दूर तुमसे
तुम वहां मेरी तरफ से सिर्फ इक बाती जलाना
रोशनी के गीत गाना ।

**— शरद सिंह**
**एफ-३६, एम.पी.ई.बी. कॉलोनी,**
**मकरोनिया, सागर-४, म.प्र.**

□

# गूंगी तोप

□ माहिर अहमद हुसै

शरीफ जन्म से ही गूंगा और बहरा था। शायद इसी कारण सारे गांव को उससे प्यार था और सहानुभूति भी। किन्तु उसके अब्बा के दिल में जैसे कुछ चुभ रहा था। जब भी शरीफ उसके सामने पड़ता, यह चुभन और भी तीव्र हो उठती और वह, उसकी मामूली-सी ग़लती पर भी शरीफ को मारने-पीटने लगता। मार खाने के बाद शरीफ जी भर कर रोता। गूंगा होने के कारण बेचारा फ़रियाद करने में भी असमर्थ था।

शरीफ के अब्बा को सबसे बड़ी शिकायत यह थी कि कमबख़्त कित्ता बड़ा हो गया है किन्तु बेकार है — नाकारा है, लड़कियों की तरह घर में छिपकर बैठा रहता है — या आवारा घूमता रहता है और छह-छह घंटे घर से गायब रहता है। मुहल्ले में मेरा तो शर्म से सर झुक जाता है।

सुबह-शाम चौपाल में लोग इकट्ठा होते, वर्तमान परिस्थितियों पर विचार-विमर्श होता तो उसका पड़ोसी अबु-मुहम्मद, जिसके दो बेटे फिलस्तीनी सेना में थे और उनकी वीरता की बड़ी ख्याति रही थी — प्राय: वह अपने सीने को गज़ों फैला लेता औ मुहल्लें के लोग शरीफ के अब्बा को उपह का पात्र बनाया करते।

अबु-मुहम्मद प्राय: कहा करता, 'मेरे बे तो शेर हैं — शेर। जब वे छोटे थे तभी से यह आभास होने लगा था कि किसी न कि दिन वे कोई वीरतापूर्ण कारनामा अंजा देंगे। अपने गांव में जब भी इज़राइल की पुलिस आती तो दोनों उस पर पत्थर फेंका करते... पत्थरों की बौछार लगा देते। ए दफ़ा, जानते हैं आप, बड़े लड़के ने क्या किया? एक इज़राइली सैनिक को अकेला देखकर लाठियों से पीट डाला था...।'

उस दिन चौपाल से उठकर लोगों ने अपने घरों को प्रस्थान किया तो शरीफ का अब्बा भी उठकर चुप-चाप अपने घर की ओर चल दिया। दरवाज़े के करीब जाकर उसने देखा कि शरीफ, मुहल्ले की छोटी-छोटी बच्चियों के साथ खेल रहा है। देखते ही वह शरीफ को लातों से लताड़ने लगा। शरीफ औंधे-मुंह गिर गया और ऊंचे स्वर में चीखने लगा। उसकी आंखों से आंसू बहने लगे और वह

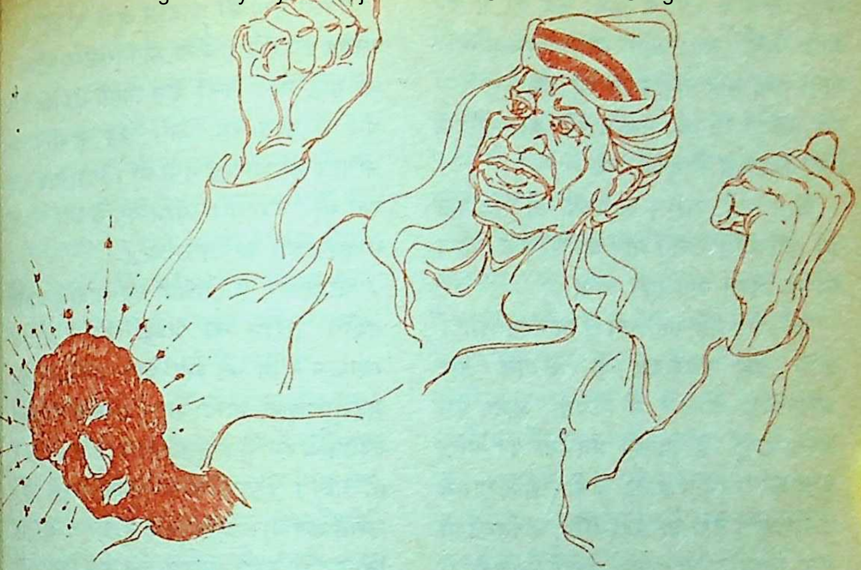

करुणापूर्ण दृष्टि से अपने अब्बा की ओर देखने लगा। शिकायत करने का अधिकार तो उससे खुदा ने ही छीन लिया था। हां उसकी निगाह अवश्य पूछ रही थी, 'अब्बा! मेरा कसूर क्या है?'

शरीफ अब भी चित पड़ा रोये जा रहा था। उसका अब्बा भीतर चला गया। दहलीज़ पर पांव रखते ही वह बुड़बुड़ाने लगा – 'धिक्कार है इसके जन्म पर। पता नहीं कमबख़्त कौन सी मनहूस घड़ी में पैदा हुआ था।'

सामने शरीफ की बूढ़ी मां खड़ी थी। उसने आगे बढ़कर धीरे से कहा – 'क्यों गुस्सा होते हैं? आखिर आप यह क्यों नहीं सोचते कि बेचारा गूंगा और बहरा है। इतनी अक़्ल इसमें कहां कि अच्छे बुरे की तमीज़ कर सके।'

सूर्यास्त हो चुका था। मुहल्ले की मस्जिद में अज़ान हो रही थी। शरीफ की मां ने फौरन 'मुसल्ला' बिछाया। दोनों, पति-पत्नी व उनके दोनों बेटों ने नमाज़ अदा की। नमाज़ पढ़ने के बाद सब ने मिलकर खुदा से दुआ मांगी कि – फिलस्तीनियों को आज़ादी मिले और दुश्मन के हौसले पस्त हों...।'

नमाज़ पढ़ने और दुआ मांगने के उपरांत परिवार के सभी सदस्यों ने खाना खाया। खा-पी चुकने के बाद सभी आपस में बातें करने लगे। वार्तालाप के बीच-बीच कई बार शरीफ की अनुपस्थिति अखरती अवश्य – फिर भी किसी ने इस ओर विशेष ध्यान नहीं

दिया, क्योंकि रात में प्रायः वह देर से घर आया करता था। बातों का सिलसिला लंबा होता गया और शरीफ की मां ऊंधने लगी – तब, सबने रात की नमाज़ पढ़ी और सोने के लिए बिस्तरों में दुबक गये।

जाने क्यों, शरीफ के अब्बा को नींद नहीं आ रही थी। उसने सोने का भरसक प्रयत्न किया, किन्तु नींद नहीं आयी।

लेटे-लेटे वह भ्रान्तियों में विचरने लगा। कभी वह इज़राइल के अन्याय और अत्याचारों के बारे में सोचता, कभी उसे अरब-राष्ट्रों के आपसी मतभेदों पर गहरे दुःख की अनुभूति होती, कभी उसके सामने उसका गूंगा बेटा आ खड़ा होता, जो निकम्मा और निखट्टू था। वह इन्हीं विचारो में ग़ल्तान था कि अनायास वह सिहर उठा और उसके विचारों की श्रृंखला टूट गयी, क्योंकि कहीं नज़दीक से ही गोले फटने की आवाज़ें आने लगी थीं।

धमाकों की आवाज़ से, शरीफ के अब्बा की ही नहीं, सारे गांव की शांति भंग हो चुकी थी। लोग अपने बिस्तरों में पड़े सोच रहे थे कि आज फिलस्तीनी मुक्तिवाहिनी की कोई टुकड़ी सीमा पार करने में सफल हो गयी है। आज उन अमेरिकी यहूदियों की खैर नहीं, जिन्होंने एक वर्ष पहले अमेरिका से यहां आकर कब्ज़ा कर लिया था और अरबों को खदेड़कर उनके उद्यानों और खेतों पर अधिकार जमा कर डालर के वरदान से गगन-चुंबी इमारतों का निर्माण कर लिया था।

मशीनगनों की आवाज़ अभी आ रही थी। शायद इज़राइली सेना भी निकटस्थ चौकी से आ गयी थी। सारा गांव किसी अप्रत्याशित भय से कांप रहा था। अब फायरिंग की आवाज़ मद्धिम पड़ गयी थी। सारा गांव जाग रहा था। घरों के दरवाजे बंद थे और गलियों में ख़ामोशी का पहरा था।

थोड़ी देर में गोलियों की आवाज़ें बंद हो गयीं। शरीफ का अब्बा बिस्तर में लेटा व्याकुल हुआ जा रहा था। उसी क्षण उसे महसूस हुआ मानों बाहर दरवाजे पर कोई दस्तक दे रहा है। उसके दिल की धड़कन तेज़ हो गयी। दस्तक स्पष्ट सुनाई दे रही थी। उसने कई बार ध्यानपूर्वक सुना। आख़िर वह बिस्तर से उठा, अल्लाह का नाम लिया और दरवाजे के पास आकर पूछा – 'कौन....कौन है?'

दस्तक देनेवाले ने कोई उत्तर नहीं दिया। वह लगातार दरवाजा खटखटाये जा रहा था। शरीफ का अब्बा थोड़ी देर तो दुविधा की स्थिति में खड़ा रहा, फिर साहस बटोरकर उसने दरवाजा खोल दिया। किन्तु बाहर कोई भी नहीं था। पुनः एक बार उसका दिल तेज़ी से धड़कने लगा। उसने दरवाजे से बाहर आकर दाएं-बाएं निगाह दौड़ाई। दीवार से लगा कोई व्यक्ति, गहरी सांसें ले रहा था। उसने आंखें फाड़-फाड़कर उसे पहचानने की कोशिश की। सहसा अंधेरे में एक स्वर उभरा – 'मेरे बेटे! शरीफ! मेरे जिगर के टुकड़े..., तुम कहां थे?' उसने शरीफ को सीने से लिपटा लिया।

शरीफ के शरीर से लहू बह रहा था। वह ज़ख्मी हो गया था और चुपचाप लड़खड़ा रहा था। भला वह क्या उत्तर देता, जबकि वह गूंगा था इतने में परिवार के अन्य सदस्य भी उठ बैठे थे। सब ने यह अंदाज लगाया कि मूर्ख को किसी ने कुएं में धक्का दे दिया होगा, या वह खुद ही अंधेरे में गिर गया होगा। जाने कितनी बार समझाया, पर यह नहीं समझा। ...नहीं...नहीं...इसे तो गोली लगी है।

शरीफ के शरीर से काफी खून बह चुका था। वह अधिक समय तक खड़ा नहीं रह सका, आखिर नीचे बैठ गया। और फिर लेट गया। उंगली से उसने एक ओर संकेत किया, किन्तु कोई भी उस संकेत को समझ नहीं सका। फिर उसने अपनी जीभ से कोई और संकेत किया। उसकी बहन पानी लाने दौड़ी। वह ऊंचे- ऊंचे चिल्लाया, किन्तु उसकी भाषा कोई भी समझ नहीं पाया। जिधर से धमाकों की आवाजें आ रही थीं, उसने उस तरफ हाथ उठाया और फिर अगले ही क्षण उसका हाथ धरती पर ऐसे गिरा कि फिर उठ नहीं सका। मां, दहलीज़ से बाहर आकर उससे लिपट गयी और रोने लगी। बहनों ने आंसुओं से दुपट्टे भिगो लिये और फिर सभी जने लाश को उठाकर भीतर ले गये।

शरीफ की अंत्येष्टि हुए बारह घंटे गुजर चुके थे। सूर्यास्त के बाद जब अंधेरा होने लगा तो सारा गांव दियों की मद्धिम रोशनी में फीकी मुस्कराहट बिखेरने लगा, किन्तु शरीफ के घर में सन्नाटा और अंधेरा छाया रहा। शरीफ की छोटी बहन ने घबराकर रेडियो ऑन कर दिया। रेडियो पर राष्ट्रीय-गीतों का प्रसारण हो रहा था। शरीफ का अब्बा भी सरक कर रेडियो के नज़दीक आ बैठा। वह स्वयं को लुटा-पुटा सा महसूस कर रहा था।

राष्ट्रीय गीतों का कार्यक्रम समाप्त हुआ तो अनाउंसर का स्वर उभरा – 'यह रेडियो फ़िलस्तीन है, आज की खबरों में सबसे महत्वपूर्ण ख़बर प्रस्तुत है। पिछली रात हमारे खुफिया संगठन के एक सदस्य ने, अमेरिका से आकर बसे हुए पूंजीपति यहूदियों की गगनचुंबी इमारतों को डाइनामाइट से उड़ा दिया – जिन्होंने हमारे अरब भाइयों को उनकी मातृभूमि से खदेड़कर उनके खेतों और उद्यानों पर जबरदस्ती कब्जा कर लिया था। यह घटना कल 'कोलीय' गांव में घटी थी। उस देशभक्त ने सिर्फ इमारतें ही नहीं, बल्कि दुश्मन लुटेरों को भी मिट्टी में मिला दिया। प्रत्युत निकटस्थ चौकी के समस्त सैनिकों को भी मौत के घाट उतार दिया। यह कारनामा हमारे खुफिया संगठन के एक सदस्य मुहम्मद शरीफ ने सर-अंजाम दिया। आप सब को यह सुनकर अति खेद होगा कि अपना यह हीरो अब इस संसार में नहीं रहा। वह वीरगति को प्राप्त हो चुका है। बहादुर शरीफ जन्मजात गूंगा और बहरा था, किन्तु उसे मातृभूमि की आज़ादी का पूरी तरह अहसास था। हम 'अलफतेह' की ओर से उसके माता-पिता और उसके गांव के प्रति सहानुभूति प्रकट करते हैं। आशा है वे खुश होंगे कि उनका लहू व्यर्थ नहीं गया।'

# दीप-चेतना

झिलमिल-झिलमिल दीप जले हिल-मिल ।
दिन की तपन, नयन रजनी के;
ये अनबोले बोल नुकीले;
श्यामा की चंदन-सज्जा के –
विमल बिन्दु गीले-चमकीले ।
धरती के धन, चिंतन के प्रतिफल ।
बीज-मंत्र जागृति के जागे;
अग्नि-शस्य-से उगते जाते;
सरस छुवन से ही क्षण-भर की–
जगते-जगते रात बिताते ।
निर्भर स्नेह-भरे सस्मित अविरल ।
त्रेता ने जय-दीप जलाए;
पर द्वापर उल्लास रास का;
यह वंचन-युग स्नेह-अकिंचन -
अर्थ-परक परमार्थ-ह्रास का ।
अन्तर में बस गया तिमिर तिल-तिल ।
रचित क्षितिज के ताम्रपत्र पर -
स्वर्णिम वर्णों की कविता-सी;
एक दीप सौ दीप जलाए,
सृष्टि-कल्पना थी स्रष्टा की ।
दीप ब्रह्म सत-चिति-मुदमय मंजुल ।
दीपमालिके ! वही दीप दो -
लचे न लौ आंधी में जिसकी;
कल की आज, आज की कल तक -
मिटे अमावस जन-मानस की ।
लोक-दीप्ति से आलोकित नभ-तल ।

**– डॉ. शिवशंकर शर्मा 'राकेश'**
**भारती नगर, मैरिस रोड, अलीगढ़ - २०२००१**

---

गांव के लोगों को ही नहीं, खुद शरीफ के माता-पिता और उसकी बहनों के कानों को भी यह समाचार सुनकर विश्वास नहीं हो रहा था । ...'या अल्लाह ! हम यह क्या सुन रहे हैं ?'

शरीफ का दुखी अब्बा खुशी से पागल हुआ जा रहा था । 'शरीफ की अम्मां, शरीफ की अम्मा, तुमने कुछ सुना.... हमारा बेटा मरा नहीं, वह शहीद हो गया ...शरीफ की मां... अब मैं सीना तान कर सारे गांव में चल सकूंगा । मैं जाकर अबु-मुहम्मद को बताता हूं कि तूने यदि शेर पैदा किये हैं, तो मैंने बब शेर को जन्म दिया है ।'

वह उठ खड़ा हुआ । दरवाजा खोला और चीख़ा और दौड़ने लगा । ... 'गांववालि कान खोल कर सुन लो, मेरा बेटा गूंगा नहीं था, ...वह भलीभांति जानता नहीं कि बा कैसे की ज्जाती है, किन्तु आप की भाषा में नहीं, बल्कि एक सुन्दर लहजे में, इंकलाब की आवाज़, गोले-बारूद और बमों की भाषा में...।'

**अनुवाद : शाकिर पुरुषार्थी**

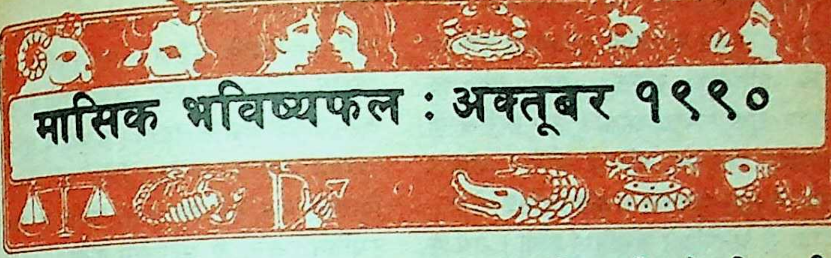

# मासिक भविष्यफल : अक्तूबर १९९०

**□ पंडित वी. के. तिवारी**

**मेष : (१४ अप्रैल - १४ मई)**

यह माह प्रारंभिक चरण में आपको विभिन्न क्षेत्रों में अनुकूल सिद्ध होगा। आपके प्रयासों की परणिति उत्तम व अशातीत रहेगी। राजनीति एवं न्यायालयीन कार्यों में सफलता निश्चय ही हस्तगत होगी। मनोबल एवं महत्वाकांक्षा के अच्छे परिणाम मिल सकेंगे। दिनांक २० से मासांत तक गृहस्थ सुख शांति में बाधा उत्पन्न होगी। चिता एवं क्लेश की स्थितियों से गुजरना पड़ेगा। व्यवसाय में कोई जोखिम न लें। यात्रा जोखिम तथा, निर्णय स्थगित रखना बेहतर होगा।

**वृष : (१५ मई - १५ जून)**

आपकी कठिनाइयों के हल स्वतः निकलते जायेंगे। निराशा से बचने का प्रयास करें। उच्च मनोबल एवं दृढ़ इच्छा शक्ति वाले व्यक्ति यश व लाभ अर्जित करेंगे। विरोधी वर्ग पर आपका प्रभाव सिद्ध होगा। संतान पक्ष से प्रसन्नता प्राप्त होगी। आमोद-प्रमोद की क्षणिकाओं में वृद्धि होगी। मैत्री संबंध सुदृढ़ होंगे। २३ से मासांत तक स्थिति में गिरावट आयेगी। समय का बदलता रुख दिखाई देगा। प्रगति का प्रतिभास होने लगेगा। प्रथम सप्ताह श्रेष्ठ रहेगा, जबकि अंतिम विशेष प्रतिकूल रहेगा।

**मिथुन : (१६ जून - १६ जुलाई)**

माह के प्रथम व अंतिम दिनों की प्रतिकूलता एवं विषम स्थितियों की उत्पत्ति आपको हतप्रभ कर देगी। विचार परिवर्तन तथा मनोबल में ह्रास होगा। महत्वपूर्ण कार्य अथवा योजनाओं की प्रगति में बाधाएं उत्पन्न होंगी। दिनांक १६ के पूर्व शुभाशुभ प्रभावों का योग रहेगा, जबकि इसके उपरांत उत्तरोत्तर आर्थिक एवं मानसिक कष्टों में वृद्धि होती जायेगी। दांपत्य सुख में अभाव उत्पन्न होगा। प्रेम-पक्ष से सुख अपेक्षानुरूप नहीं रहेगा। व्यवसायी वर्ग लाभान्वित होगा। वकील व विद्यार्थी वर्ग के साथ-साथ राजनीति में संलग्न व्यक्ति असफलता से ग्रस्त रहेंगे।

**कर्क (१७ जुलाई - १६ अगस्त)**

नये संबंधों में वृद्धि होगी। परिचय का क्षेत्र बढ़ेगा। भविष्य के प्रति आशंका एवं भय

उत्पन्न होगा। धन का आकस्मिक व्यय होगा। शासन या उच्च अधिकारी वर्ग का रुख प्रतिकूल रहेगा। पद, यश व संतान-सुख यथेष्ठ रहेगा। १८ तारीख के पश्चात् सफलता संदिग्ध रहेगी। दांपत्य सुख में सुख-दुख की स्थिति निर्मित होगी। यात्रा में अनपेक्षित असुविधा होगी। धर्म में रुचि बढ़ेगी। विचार शक्ति एवं मानसिक सुख में त्रास होगा। राजनीति में विरोधी कुचक्र रचेंगे अस्तु लंबी यात्राएं न करें।

**सिंह (१७ अगस्त १६ सितंबर)**

व्यवसायी एवं राजनीति के क्षेत्र में संलग्न व्यक्तियों के लिए यह माह धैर्य, संयम, शांति व सूझबूझ से निर्णय लेने वाला सिद्ध होगा। विरोधी सफल हो सकते हैं। संधिवार्ता की विवशता रहेगी। साझेदार अथवा व्यवसाय का पक्ष कमजोर या प्रतिकूल रहेगा। यात्रा २० तारीख तक कष्टदायी रहेगी। प्रथम व अंतिम सप्ताह माह का विशेष प्रतिकूल सिद्ध हो सकता है। नये कार्य, महत्वपूर्ण व्यक्तियों से मिलना या वार्ता करना, किसी भी प्रकार की जोखिम या जल्दबाजी में निर्णय लेना अथवा यात्रादि कार्य अपरिहार्य हो जाने पर ही किये जाने चाहिए। अन्यथा सुपरिणाम की अपेक्षा रखना व्यर्थ है। दांपत्य सुख व धनलाभ सामान्यत: ठीक रहेगा।

**कन्या : (१७ सितंबर - १६ अक्तूबर)**

नये संबंध, विवाह, संतान जन्म आदि का अवसर परिवार में उत्पन्न होगा। विद्यार्थी सफल रहेंगे। प्रियवर्ग से सम्पर्क टूटेगा। दैनिक सुख में कमी उत्पन्न होगी। मित्रों से विरोध भाव पनपेंगे। भाई से प्रसन्नता व सुख-सहयोगादि बढ़ेगा। १९ तारीख तक विशेष प्रतिकूलता रहेगा। शेष समय मासांत तक आपके पक्ष में रहेगा। प्रथम व अंतिम सप्ताह माह का अनुकूल सिद्ध नहीं होगा। दिनांक २७ को महत्वपूर्ण कार्य व यात्रा स्थगित रखना ही अत्युत्तम होगा।

**तुला : (१७ अक्तूबर - १५ नवंबर)**

इस माह धनलाभ आवश्यकतानुरूप हो सकेगा। आमोद, प्रमोद के अवसर आयेंगे। वस्त्र व्यवसायी प्रथमार्ध में हानि व मंदी से त्रस्त रहेंगे। संबंधों में कटुता उत्पन्न होने के अवसर आयेंगे। वाक्शक्ति पर नियंत्रण से अप्रिय स्थितियां टाली जा सकेंगी। अधिकार, पद, यश, धन एवं स्वास्थ्य की ओर से ग्रह जन्य प्रतिकूलता रहेगी। विरोधी सक्रिय रहेंगे। विशिष्ट व्यक्तियों पर विश्वास रखें। भ्रम या द्विविधा में पड़ने से कष्टदायी स्थिति बनने की प्रबल संभावना है।

**वृश्चिक : (१६ नवंबर - १५ दिसंबर)**

यह माह वर्ष का श्रेष्ठतम सिद्ध हो सकता है। आपके द्वारा पूर्व में किये गये प्रयासों की स्वर्णिम परिणति होगी। राजनीति, व्यवसाय एवं जोखिम के कार्यों में आपकी स्थिति सुदृढ़ रहेगी। पद, यश, अधिकार, सम्मान व सफलता हस्तगत होगी। परिवार सुख समृद्धि बढ़ेगी। आप स्वर्णिम काल की इस अवधि को आमोद-प्रमोद में व्यर्थ न जाने दें। भविष्योपयोगी योजना, नये निर्णय, नये कार्य एवं अपनी मित्रता सुदृढ़ करने के प्रयास कर आने वाले समय के प्रतिकूल प्रवाह की तेजी

रोक सकने में समर्थ होंगे। ५ तारीख प्रत्येक कार्य हेतु वर्जित है, अस्तु यात्रा स्थगित रखें।

**धनु : (१६ दिसंबर - १३ जनवरी)**

आपको इस माह २० तारीख तक सभी शुक्रवार छोड़कर अपने कार्य में सन्नद्ध रहना चाहिए। माह में आपको विशेष उत्तम फल मिलेंगे। रोग, चिंता एवं विरोध की स्थिति ५ से १२ तारीख के मध्य रहेगी। गृहसुख-सुविधा में वृद्धि होगी। प्रगति के द्वार खुले रहेंगे। आर्थिक क्षेत्र में समृद्धि बढ़ेगी। विलबित कार्यों से अवरोध हटेगा। यश व कीर्ति में वृद्धि होगी। राजनीति में उत्कर्ष एवं उत्तम आमंत्रण मिलेंगे।

**मकर : (१४ जनवरी - १२ फरवरी)**

दिनांक २० के पूर्व स्थायी लाभ का सुयोग बनेगा। परिवार में मांगलिक कार्य की आयोजना होगी। लंबी यात्रा संभावित है। स्वास्थ्य ठीक रहेगा। यात्रा में असुविधा होगी। व्यवसाय, राजनीति के कार्यों में विघ्न-बाधाएं उत्पन्न होंगी। मिथ्यारोप, यश व धनहानि, आय में न्यूनता एवं कार्यबाधा से मनोबल क्षीणता तथा असुरक्षा प्रतीत होगी। रोजगार एवं शरीर कष्ट रहेगा। १७ से मासांत तक विघ्न-बाधा के मेघ हट जायेंगे। सफलता, सुयश, अधिकार व नवचेतना की रश्मि का आलोक होगा।

**कुंभ : (१३ फरवरी - १४ मार्च)**

नौकरी-पेशा एवं जोखिम के कार्यों में संलग्न व्यक्तियों हेतु लापरवाही दंड का कारण बन जायेगी। इस माह यात्रा, उच्च अधिकारियों से मिलना या मंत्रणा करना, किसी भी प्रकार की जोखिम अथवा धन का विनियोजन (अत्यंत अपरिहार्य स्थित छोड़कर) करने का सुझाव ज्योतिष सम्मत नहीं है। गृह सुख व मित्र सुख में न्यूनता रहेगी ७, ८, १६, १७ एवं ३०, ३१ दिनांक सामान्यतः व्यय, विवाद; कष्ट एवं व्यस्तता पूर्ण रहेगा। राजनीति में विरोधी प्रबल होंगे।

**मीन : (१५ मार्च - १३ अप्रैल)**

प्रारंभिक २० दिनों में परिवार सुख में कमी होगी। प्रत्येक कार्य बाधा से ही पूर्ण हो सकेंगे। यात्रा में सुविधा वांछित नहीं मिल सकेगी। दांपत्य या प्रेम संबंधों में विवाद एवं क्लेश की गुंजाइश रहेगी। रोजगार में विशेष श्रम करना होगा। २० के उपरांत मासांत तक प्रतियोगिता, सुख-सामग्री सफलता व यश में वृद्धि होगी। विरोधी वर्ग से विवाद बढ़ेगा, विजय आपको हस्तगत होगी। शरीर कष्ट रहेगा।

### व्रत एवं त्यौहार

प्रदोष व्रत - २, १६ व ३१; कोजागरीव्रत - ३; शरद्पूर्णिमा - ४; करवा चौथ - ७; अहोई अष्टमी - ११; रमा एकादशी व देव उठनी एकादशी क्रमशः - १४ व ३०; गोवत्स द्वादशी - १५; धनतेरस - १६; नरकचतुर्दशी - १७; दीवालीपूजन - १८; बलिपूजा एवं गोर्वधनपूजा - १९; भाईदूज, चित्रगुप्त - २०; विनायक चतुर्थी - २२; गोपाष्टमी - २७; अक्षय नवमी - २८ अक्तूबर।

**— देवलोक कालोनी (बैरागढ़)**
**सी. टी. ओ. भोपाल**

□

### रूस में परिवर्तन का भविष्यवक्ता

# नोबेल पुरस्कार विजेता पास्टरनाक

☐ डा. लक्ष्मी शंकर व्यास

रूस के प्रख्यात कवि और उपन्यासकार बोरिस लियौनिडोविच पास्टरनाक की गणना विश्व के उन श्रेष्ठ साहित्यकारों में की जाती है, जिन्होंने मानवता को नवीन चेतना और दिशा प्रदान की है। पास्टरनाक की सभी रचनाओं में, चाहे वह अनुवाद अथवा मौलिक हो सभी में उसकी अप्रतिम प्रतिभा का सहज दर्शन होता है। 'डाक्टर जिवागो' उसकी सर्वश्रेष्ठ रचना है। सन १९५७ में इसके प्रकाशन के साथ उसका नाम अन्तरराष्ट्रीय जगत् में प्रतिष्ठित हो गया। अगले ही वर्ष उसे इस बहुचर्चित कृति के लिए नोबेल पुरस्कार भी प्राप्त हुआ जिसे उसे अस्वीकार करना पड़ा। वास्तव में, यह उपन्यास वर्तमान भौतिकतापूर्ण और यन्त्रीकृत जीवन की परिस्थितियों का यथार्थपूर्ण चित्रण है।

**नोबेल पुरस्कार : एक कविता**

जीवन में मोड़ आते रहते हैं और पास्टरनाक भी इसके अपवाद नहीं थे उसने 'डाक्टर जिवागो' उपन्यास सन १९५१ में पूरा कर लिया था। पांच वर्ष के बाद इसके प्रकाशन हेतु इटली की एक प्रकाशनं संस्था को उसने अधिकार पत्र दे दिया। कुछ समय बाद पास्टरनाक ने उक्त प्रकाशन संस्था से उपन्यास की पाण्डुलिपि लौटाने के लिए आग्रह किया। वह चाहता था कि प्रकाशन से पूर्व उसमें कुछ संशोधन कर दिया जाय, लेकिन प्रकाशक ने उसे तत्काल प्रकाशित कर बिक्री के लिए बाजार में उपलब्ध करा दिया। जीवन के अन्तिम वर्षों में वह प्रतिष्ठा अर्जित करने के बावजूद इन परिस्थितियों से दु:खी था। यही नहीं, उसके एक मित्र ने भी उसके साथ विश्वासघात किया। उसने नोबेल पुरस्कार के बारे में एक कविता लिखी थी जिसे निजी तौर पर एक मित्र को भेजा था। उसकी अनुमति के बिना उसे 'लन्दन डेलीमेल' में प्रकाशित कर दिया गया। फलतः उसे इसका स्पष्टीकरण करना पड़ा कि एक ब्रिटिश पत्रकार ने मेरी नयी कविता 'नोबेल पुरस्कार' प्रकाशित कर मेरे साथ विश्वासघात किया है। यह कविता मैंने अपने पेरिस के मित्र के पास भेजी थी- कहीं भी प्रकाशन के लिए नहीं। पेंसिल से लिखी कविता में कवि ने कहा है कि 'मैं खो गया हूं- एक पशु की भांति घेरे में और दुष्टता का कलंक मुझ पर लगाया गया है।' अन्त में कवि ने आशा प्रकट की है कि एक दिन ऐसा आयेगा जब सत् की असत् पर विजय होगी। उक्त पूरी कविता इस प्रकार है—

**पिंजरे में बन्द, हिंस्र पशु सदृश**
**मैं एकाकी यहां, खोया-खोया-सा**
**जीवन, जन और स्वतन्त्रता से**
**दूर अति दूर**
**मार्ग एक ही, अन्धानुकरण,**
**अन्य चारा नहीं ।**
**विच्छिन्न सम्बन्ध, झील के किनारे,**
**गहन अन्धकार में, खड़ा हूं ठूंठ-समान,**
**जो हो मांगूगा ।**
**एकाकी मन में उठता है प्रश्न**
**मैं, जिसने-मुग्ध किया विश्व को**
**मातृभूमि के सौन्दर्य से । लांछित क्यों ?**
**किन्तु, मृत्यु के अति सन्निकट,**
**मरणासन्न, एकाकी मन में,**
**दृढ़ विश्वास एक — होगी विजय**
**एक दिन सत्य की असत्य पर ।**

पास्टरनाक का जन्मकाल सन १८९० ई. है और जन्मस्थान मास्को । उनकी शिक्षा-दीक्षा मास्को में हुई । कुछ समय उसने जर्मनी में भी अध्ययन किया । उनके पिता लियोनिड ख्यातिलब्ध चित्रकार थे, जो रूसी क्रान्ति के बाद ब्रिटेन चले गये थे । पास्टरनाक रूसी कवि सेकरिया विन से बहुत अधिक प्रभावित था ।

पास्टरनाक का जीवन कलात्मक सर्जना के लिए समर्पित था । रूसी क्रान्ति की पूर्व हलचल ने वहां के प्रबुद्ध वर्ग पर जो प्रभाव परिलक्षित किया, पास्टरनाक उसकी उपज था । साहित्य साधना के प्रारम्भिक वर्षों में उसने जो कुछ किया वह उसके लक्ष्य की पृष्ठभूमि थी । उसने पश्चिम को शास्त्रीय साहित्यिक विधाओं का न केवल अध्ययन किया अपितु गेटे और शेक्सपीयर जैसे महान् साहित्यकारों की प्रतिनिधि रचनाओं का रूसी भाषा में सुन्दर अनुवाद भी किया । वह संवेदनशील कवि के साथ निपुण संगीतज्ञ भी था । उसने अपना साहित्यिक क्रियाकलाप सन १९१२ से ही आरम्भ कर दिया था । उसकी रचनाओं को तीन वर्ग में विभाजित किया जा सकता है – पद्य, अनुवाद और गद्य । 'ट्वीन इन द क्लाउड्स (१९१४ ई.)', 'ऐवभ द वैरियर्स' (१९१६ ई.), 'माई सिस्टर लाइफ' (१९१७ ई.), 'थीम्स एण्ड वैयेशन्स' (१९२३ ई.), 'गाड' (१९०५-१९२६ ई.) 'सेकेण्डबर्थ' (१९३२ ई.) 'इन अरली ट्रेन्स' (१९४२ ई.) आदि उसकी प्रमुख काव्यकृतियां हैं ।' ट्वीन इन द क्लाउड्स' और 'ऐवभ द वैरियर्स' में कवि ने समकालीन मानवीय परिस्थितियों को अभिव्यक्ति प्रदान की है । उसका सन्देश है कि बहुत अधिक उत्तेजना के क्षणों में बहुत धैर्य के साथ सोचना ही श्रेयस्कर है । उसने पश्चिमी जगत् के कई प्रख्यात साहित्यकार गेटे, हेर्वेग, वेन जानसन, स्टीनवर्ग, शैली और शेक्सपीयर की श्रेष्ठ रचनाओं का रूसी भाषा में प्रामाणिक और सुन्दर अनुवाद किया । वैसे, वह मूलतः कवि था और उसने गद्य में जो कुछ लिखा वह उसकी बहुमुखी काव्य प्रतिभा का ही विस्तृत स्वरूप है । पास्टरनाक की अन्य गद्य रचनाओं में 'द चाइल्ड हुड' (१९१८), 'एरियल वेज' (१९२६ ई.) 'सेफ कण्डक्ट' (१९३१ ई.) आदि प्रसिद्ध हैं ।

## सर्वश्रेष्ठ रचना : डाक्टर जिवागो

पास्टरनाक की अनुपम कृति मानव और समाज के सम्बन्धों पर आधारित उपन्यास 'डाक्टर जिवागो' है। मूलतः यह उपन्यास रूस के एक चिकित्सक, समकालीन घटनाक्रम और राजनीतिक व्यवस्था से सम्बन्धित है। इसके बारे में स्वयं पास्टरनाक ने संकेत किया है कि रूस की परिस्थितियों का यथार्थ और कलापूर्ण चित्रण करना मेरा उद्देश्य रहा है। इटली में इस कृति का प्रथम प्रकाशन नवम्बर १९५७ में हुआ। प्रकाशन के पहले सप्ताह के दौरान ही इसकी छः हजार से अधिक प्रतियां बिक गयीं तथा दूसरे सप्ताह से 'डेली एक्सप्रेस' में यह उपन्यास धारावाहिक रूप में प्रकाशित हुआ। यह उपन्यास इतना लोकप्रिय हुआ कि अल्पकाल में ही विश्व की सभी प्रमुख भाषाओं में इसका अनुवाद उपलब्ध हो गया। इस उपन्यास के माध्यम से तत्कालीन सामाजिक और राजनीतिक चितनधाराओं की विसंगतियों पर प्रहार किया गया है और समर्थ लेखक इस कार्य में पूर्णतः सफल भी हुआ है। उसे थोपी गयी व्यवस्था पसन्द नहीं है। 'डाक्टर जिवागो' उसकी इस भावना की अभिव्यक्ति है। इस उपन्यास का एक अंश है – 'तुम यह जान लो, मुझे अपनी जीविका के साधनों का परित्याग करने के लिए विवश किया जा सकता है किन्तु यह कोई नयी बात नहीं है। इसकी पुनरावृत्ति होती रहती है। आगे बढ़ो। हम अच्छे और नैष्ठिक कार्यों का स्वागत करेंगे, हम विशेष रूप से नये विचारों का स्वागत करेंगे। तुम अपना संकल्प न भूलो और संघर्ष करते रहो।' सात सौ पृष्ठों के इस उपन्यास में एक लाख चालीस हजार शब्द हैं और पचीस कविताएं भी हैं।

इस उपन्यास की तुलना टालस्टाय की अमरकृति 'वार एण्ड पीस' (युद्ध और शान्ति) से की जा सकती है। इसमें तनिक सन्देह नहीं कि 'डाक्टर जिवागो' विशुद्ध मानवीय दृष्टिकोण से ओतप्रोत है। सन १९५८ में जब इस महान कृति के लिए पास्टरनाक को नोबेल पुरस्कार से सम्मानित करने की घोषणा की गयी तो उसने अस्वीकार तो कर दिया किन्तु स्वीडेन की नोबेल पुरस्कार अकादमी के प्रति तार भेजकर आभार व्यक्त किया। धन्यवाद के शब्द इस प्रकार है – 'बहुत-बहुत धन्यवाद, गर्वित चकित, प्रभावित आल्हादित।'

पास्टरनाक दूसरे रूसी साहित्यकार थे जिन्हें नोबेल पुरस्कार प्रदान करने की घोषणा की गयी थी। इससे पहले सन १९३३ में रूस में जन्मे लेखक इवान ए. बुनिन को यह सम्मान प्राप्त हुआ था। वह उस समय फ्रान्स में निर्वासित जीवन व्यतीत कर रहा था।

पास्टरनाक ने अर्धशती की साहित्य साधना की अवधि में जहां एक ओर समर्पित प्रतिष्ठा अर्जित की वहीं दूसरी ओर जीवन के उत्तरार्ध में उन्हें विवादों का शिकार भी होना पड़ा। उत्कर्ष के आरम्भिक काल से उन्होंने जीवन की परिस्थितियों में परिवर्तन देखा था। इससे उसकी विचारधारा ने एक नया

मोड़ लिया। वह एक प्रतिष्ठित कलाकार का पुत्र था। पिता की अभिव्यक्ति का माध्यम तूलिका थी और पुत्र की अभिव्यक्ति का माध्यम लेखनी थी। कला के इस वरद् पुत्र ने काव्य और उपन्यास के रूप में उस युग को चित्रित किया है जिसके बीच उसने अपनी जिन्दगी गुजारी थी। उसके साथ ही उसने अपने जीवन के कड़वे-मीठे अनुभवों की छाप भी दे दी है। वह स्टालिन के सभी विचारों से सहमत नहीं था और एक बार तो उसे स्टालिन के कोपभाजन का भय हो गया था। सन १९५८ के सितम्बर मास में स्टाकहोम विश्वविद्यालय के साहित्य विभाग के सहायक प्राध्यापक नित्स आके नित्सन के साथ एक भेंटवार्ता में पास्टरनाक ने यह रहस्योद्घाटन किया कि मेरे मित्रों ने एक बार मुझे स्टालिन के कोप से बचा लिया। सन १९३७ में मैंने स्टालिन के समर्थन के बजाय मृत्यु के वरण का संकल्प किया। मार्शल मिखैल एन. तुखाचेवस्की और सात अन्य जनरलों की सजा की पुष्टि करने के प्रस्ताव पर हस्ताक्षर करने से मैंने इनकार कर दिया, लेकिन रूसी लेखक संघ के मित्रों और सहयोगियों ने मेरा साथ देकर मुझे सम्भाव्य गिरफ्तारी से बचा लिया। इसके साथ ही साक्षात्कार वार्ता में उसने यह भी कहा कि जिस पुरुष का अस्त्र उसका पुरुषार्थ हो उसके शत्रु हो नहीं सकते। वह मित्रों और शुभचिंतकों से संतुष्ट था और कहा करता कि मेरे मित्रों की कहीं भी कमी नहीं है।

पास्टरनाक की लेखन-कला के तीन महत्वपूर्ण उपकरण हैं। उपन्यास (डाक्टर जिवागो) काव्य (इन अरलीट्रेन्स) और अनुवाद (हेमलेट) जिनके माध्यम से वह सम-सामयिक युग का चित्र प्रस्तुत करता है। उसने स्वयं कहा है कि मैं जन्मजात कलाकार हूं। मैंने साहित्य के माध्यम से समकालीन युग को अभिव्यक्त किया है।

**— पराड़कर संग्रहालय,**
**के ३१/५१, कालभैरव, वाराणसी**

□

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने गुरुदेव से परिचय होने के कुछ समय बाद से ही हिन्दी में उनकी कविताओं के विषय में लिखना शुरु किया। उनके इन लेखों की कटिंग्स को एक बार आचार्य सेन ने गुरुदेव को दिया। उन्होंने उसे रख लिया। अपने अत्यन्त व्यस्त कार्यक्रम के भीतर भी उन्होंने उन बाल-प्रयत्नों को देखने का समय निकाल लिया और जब द्विवेदीजी कई दिनों बाद उनसे मिले तो बहुत ही उत्साहवर्द्धक शब्दों में उन्होंने कहा- 'बहुत अच्छा लिखा है तुमने। मुझे यह प्रसन्नता है कि तुम पढ़कर लिखते हो।' फिर जरा विनोद के साथ बोले- 'मुझे ऐसे समालोचक मिलते हैं जो बिना पढ़े ही लिख मारते हैं।' फिर थोड़ा रुककर किसी पुरानी बात को याद करते हुए बोले- 'बिना पढ़े जो आलोचना लिखी जाती है वह होती खूब है।' और हंस पड़े।

**— डॉ. गोपालप्रसाद 'वंशी'**

□

फ्रेंच कहानी

# चिट्ठी

□ पोल फेवाल

जान की उम्र छह साल की थी। घुटनों पर फटा पतलून। उसके उलझे बाल भी इतने घने कि दो औरतों के लिए विग बनाना नामुमकिन नहीं। बड़ी-बड़ी नीली आंखें हमेशा हंसने की कोशिश में। कमीज फटकर चीथड़ों में बदल चुकी थी। दायें पैर में चप्पल, बायें पैर में जूता – दोनों काफी बड़े। चप्पल का पिछला आधा भाग घिसा हुआ था। जूते में लेस नदारद।

सर्दी की शाम थी। जुकाम से पीड़ित था। पिछले दिन की शाम से, जब से भगवान को चिट्ठी लिखना चाहता था, कुछ नहीं खाने से भूखा था। बुरी तरह।

अनपढ़-गंवार जान ने चिट्ठी कैसे लिखी, यही अब हमें देखना होगा।

ग्रोकैयू कॉलनी में एक गलियारे के छोर पर चिट्ठियां लिखने वाला एक था। फौज में काम करके वह रिटायर हो चुका था। उसको हंसते हुए आज तक किसी ने नहीं देखा था। हमेशा चिड़चिड़ाता रहता था। मध्य वर्ग का आदमी था।

घर के सामने रुककर खिड़की की सलाखों से जान ने उसे देखा। पाइप से धुआं खींचते हुए चिट्ठी लिखाने वालों की बाट जोह रहा था वह।

जान आहिस्ते से भीतर गया।

'गुड मार्निंग सर। मैं चिट्ठी लिखाने लिए आया हूं।'

'एक फ्रांक लूंगा।' बूया ने कहा।

जान के पास फूटी कौड़ी भी नहीं थी। लगा कि चिट्ठी लिखाना मुमकिन होगा। अदब और आदर के साथ उसने कहा, 'एक्सक्यूज मी, सर!' फिर दरवाज़ा खोलक वह जाने को हुआ।

उसका यूं अदब के साथ बोलना बूया अच्छा लगा।

'क्या तू सिपाही का बेटा है?' उसने पूछा।

'नहीं ...मैं अपनी मां का बेटा हूं। छोड़ मेरा कोई भी नहीं है।'

'अच्छा! ...फिर तेरे पास पैसा कुछ नहीं?'

'उहूं, फूटी कौड़ी भी नहीं।'

'अपनी मां के पास भी नहीं है न पैसा? देखने से ही पता चल रहा है न! ...हां, चिट्ठ लिखाना – ब्रेड के वास्ते पैसे की मांग करने के लिए ही न?'

'हां, इसी के लिए।' जान ने कहा।

'जाने दो, छोटे से पर्चे पर दस लाइन लिखने की वजह से मैं गरीब नहीं हो जाऊंगा।' बूया ने सोचा।

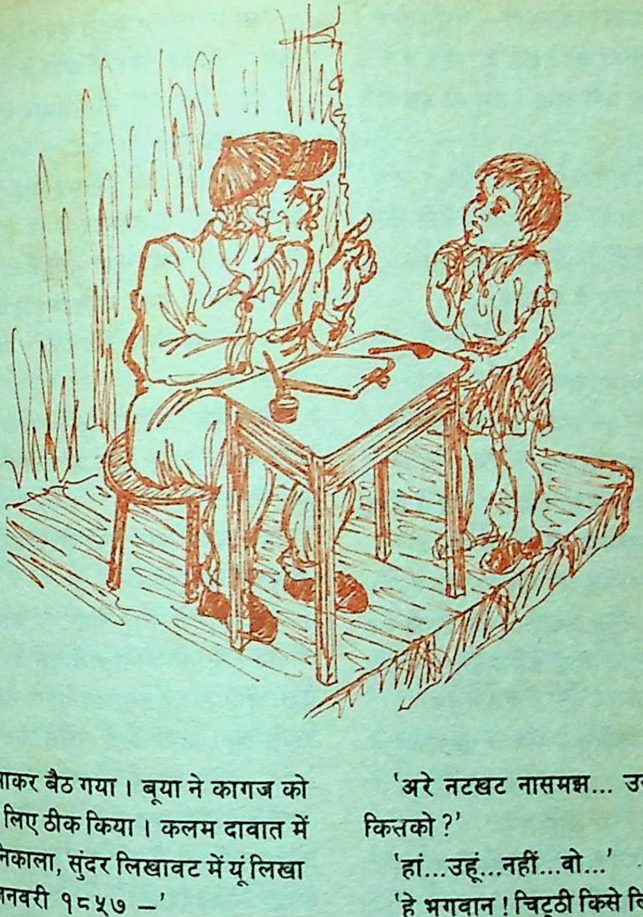

जान आकर बैठ गया। बूया ने कागज को लिखने के लिए ठीक किया। कलम दावात में डुबाकर निकाला, सुंदर लिखावट में यूं लिखा 'पैरिस, जनवरी १८५७ –'

'उसका क्या नाम है रे?' बूया ने पूछा।

'किसका नाम?' जान ने पूछा।

'कैसा सवाल करता है रे मेरे सोने की खान! जिसे तू चिट्ठी लिखा रहा है न, उसका नाम!'

'उसका नाम' अब जान की समझ में आया।

'मेरी चिट्ठी उसको नहीं।'

'अरे नटखट नासमझ... उसको नहीं तो किसको?'

'हां...उहूं...नहीं...वो...'

'हे भगवान! चिट्ठी किसे लिखाना है, यह भी तू नहीं जानता?'

'हां...हां... जानता हूं।' उसने कहा।

'तो जल्दी बता दे ना रे!'

जान का चेहरा सुर्ख हुआ। ऐसी बातें चिट्ठी लिखनेवाले से कहने की नहीं होतीं। फिर भी धैर्य बांधकर जान ने कहा, 'मैं चिट्ठी... भगवान को लिखना चाहता हूं।'

बूया हंस नहीं सका। कलम उसने परे रख

दी। मुंह से पाइप निकाल दी – गंभीरता से।

उसके भोलेपन को देखते हुए उसे यूं भेज देना भी अच्छा नहीं लगा। मन को दुख होने लगा।

'ये कहां की परेशानी है... उफ्! उफ्! उफ्! न जाने पेरिस में कैसी-कैसी परेशानियां होती है।' कुड़बुड़ाने लगा।

'तेरा क्या नाम है रे छोकरे?'

'जान।'

'जान – इतना ही।'

बूया भुजाएं हचकाकर बोला, 'ठीक है। भगवान को क्या लिखना है?'

'मां कल शाम से सो रही है। उसे मैं जगा नहीं सका। आशा है, वो शायद जगा सके।'

बूया का दिल पल भर के लिए रुक गया। जान की बात समझने के लिए वह काफी डर गया। 'पहले तूने कहा, ब्रेड के लिए चिट्ठी लिखाता है?'

'हां। वहीं चाहिए। सोने से पहले मां ने अपने पास का एक टुकड़ा ब्रेड मुझे दे दिया।'

'फिर उसने क्या खाया।'

'उसके दो दिन पहले से वह कहती थी - मुझे भूख नहीं है।'

'उसे तूने जगाया नहीं?'

'रोज जैसे मैंने मां का चुंबन किया।'

'क्या वह सांस लेती है?'

'पता नहीं.... क्यों पूछते हैं ऐसा? सब हमेशा सांस लेते हैं न?'

बूया ने चेहरा घुमा दिया – ताकि अपने गालों पर से झरने वाले आंसू वह नहीं देखे। जान के सवाल का उसने जवाब नहीं दिया।

'मां का चुंबन करते वक्त तुम्हें कुछ न लगा?' कांपते स्वर में बूया ने पूछा।

'हां... वह ठंडी थी। हमारे घर में हं ठंडा रहता है।'

'जब चाहें तब, जितना चाहें उतना ख वाले अमीरों को देखकर मैं मन ही मन जल था – किंतु कभी भूख - मौतों के बारे में नहीं सोचा।' बूया के मन में यूं विचार आया।

बच्चे को पास बुलाया। गोद में बि लिया।

'देख बेटे। तेरी चिट्ठी लिख दी। डिब्बे डाल दी। वह उसे मिल भी गयी। मुझे अ मां के पास ले चल।'

'हां, मगर आप क्यों रो रहे हैं?' जान ने आश्चर्य से पूछा।

उसे चूमते हुए बूया ने कहा, 'नहीं नादान! मैं नहीं रोता। मैं तुझे अपने बेटे स देख लूंगा। बहुत समय पहले मेरी भी मां रहती थी। जाते-जाते मुझसे उसने कहा- 'बूया, अच्छे इंसान की तरह अच्छे दिल से जियो। उसकी कई साल पहले दी हुई आज्ञा का पालन अब मैं कर पा रहा हूं। तू ने मुझे इसका मौका दिया।'

बच्चे को दिल से लगाकर बूया उठा।

जैसे अज्ञात-अदृश्य व्यक्ति से बोल रहा हो, बूया ने कहा, 'मां, अब देखो! खुश हो न? क्योंकि... वह चिट्ठी भगवान के नाम की जो अधूरी अनलिखी रह गयी, दो भले नेक काम कर चुकी है। इसे एक पिता दिया। मुझे एक हृदय दिया।'

**अनुवाद : एस. भास्कर राव**

बनाव-शृंगार के लिए

# कुछ प्रसिद्ध महारानियों की सनकें

□ डॉ. गोपालप्रसाद 'वंशी'

ग्रीक (यूनान) की महारानी मारकेंडा सेलिया को अपने होठ खून से रंगने का शौक था और यह भी किसी कमसिन युवती के होठों के खून से। अपनी पत्नी के इस अद्‌भुत और नृशंस शौक को पूरा करने के लिए ग्रीक (यूनान) के तत्कालीन बादशाह ने अपने राज्य में से कमसिन लड़कियों को खोज-खोजकर बुलवाया और उनके गुलाबी होठों से क्रूरतापूर्वक रक्त निकलवा कर सेलिया के श्रृंगार हेतु होठों का लाल रंग बनवाया था, ताकि उसकी प्रेयसी के सौंदर्य में अधिकाधिक वृद्धि हो।

सुंदरता के लिए बनाव-श्रृंगार करने की रुचि स्त्रियों में सदा से पायी जाती है। कोई भी सुंदर स्त्री अपने चेहरे पर झुर्री पड़ना उतना ही खतरनाक समझती है, जितना कि किसी जहाज के तट में दरार पड़ जाना। फलस्वरूप अपने शरीर की कांति बनाये रखने के लिए रानियों में ऐसे-ऐसे अद्‌भुत शौक पाये गये हैं, जिनके बारे में सुनकर विश्वास सहज में नहीं होता।

आस्ट्रिया की महारानी एलिजाबेथ ने किसी से सुन रखा था कि वक्ष पर गीला वस्त्र रखकर सोने से शरीर सुडौल रहता है। अतः वह जीवन पर्यन्त, यहां तक कि कड़कते जाड़े में भी वक्ष पर गीला वस्त्र रखकर सोती थी।

अंग्रेजी इतिहास में वर्णित सुप्रसिद्ध स्काटिश महारानी मेरी स्टुअर्ट को पानी की जगह शराब से स्नान करने का शौक था। उसने अपने स्नानागार में सात ऐसे कुंड बनवा रखे थे, जिनमें उसके स्नान के लिये उच्च कोटि की मदिरा भरी रहती थी। इन कुंडों में यह प्रतिदिन नियमित रूप से गोते लगाया करती थी। मेरी स्टुअर्ट की त्वचा की पारदर्शिता के संबंध में तो यहां तक कहा जाता है कि जब वह लाल मदिरा पीती थी, तो उसके गालों पर गुलाबीपन चित्रित हो उठता था और उसका शरीर शराब की तरह ही लाल देखा जा सकता था।

मेरी स्टुअर्ट की तरह रोम की महारानी पोपिया को अपने शरीर को अधिक से अधिक कांतिमय बनाने के लिए गदहियों के दूध में स्नान करने का शौक था। उसके इस अद्‌भुत शौक में किसी तरह का व्यवधान न पड़े, इसलिये उसके साथ यात्रा में गदहियों की एक पूरी सेना जाती थी।

— आरोग्य सदन, गंज नं. १,
बेतिया, चंपारन, बिहार

□

# सही आदमी

□ सुधा

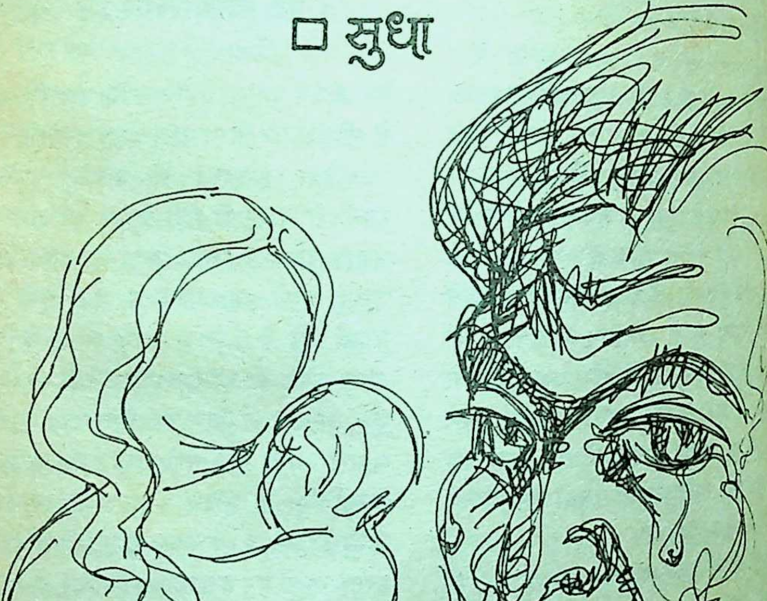

'सही आदमी' का कथासूत्र लेखिका की दो पुस्तकों 'सूरज ढकते काले मेघ' तथा 'कातर धूप' में है।

'सूरज ढकते काले मेघ' की बालिका युवति कुन्ती 'कातर धूप' की असंतुष्ट पौढ़ा नायिका है जो अपने सौतेले बेटे को ड्रग की सर्पिल डगर से विधान सभा के वातानुकूलित कक्ष तक ले आती है। वही कुंती सही आदमी में स्नेह विवश वृद्धा है।

कुंती अपनी चाबियों का गुच्छा रूना को थमाने में असफल हो जाती है। वह सुतपा को भी अपने घर में नहीं रोक पाती; क्योंकि पुरुष के साम्राज्य की केयर-टेकर बनने की स्थिति को जिस तरह कुंती की पीढ़ी ने स्वीकारा था उस तरह रूना या सुतपा रहने-सहने को तैयार न थीं। लेकिन अनेक अर्थों में निष्फल यही कुंती 'सही आदमी' की मां है।

### रूना

''कौन ?''

कोई दरवाजा खटखटा रहा है। बारबार पूछने पर बाहर से दबी सहमी आवाज आयी– 'मैं हूं। मैं..... सुवीर।'

सुवीर ?

छिटकिनी की ओर बढ़ते हाथ रुक गये। इसे पिछले चार सालों में कभी देखा तक नहीं। कैसे आया आंज ?

मैंने खिड़की से झांकने के पहले आइने के सामने साड़ी के प्लीट ठीक किये, केश का बिखराव सहेजा, एक नन्ही-सी बिंदी ललाट पर लगा ली।

क्यों आया होगा सुवीर ?

हां, है तो वही। कुछ बदला-बदला।

दरवाजा खुलते ही सुवीर के हाथ जुड़ गये। वह बुदबुदाता-सा बोला– 'प्रणाम भाभी।' और फिर किसी भावुकता या व्यावहारिकतावश रूना के पांव छू लिये।

'अरे!' मैं एक कदम पीछे हट गयी और पूछा – 'कैसे हो ?'

'किसी तरह।'

एक प्रत्यक्ष शब्दहीनता हम दोनों के बीच आकर बैठ गयी।

सुवीर सुदीप्त का भाई है। उससे छोटा। जब मैंने सुदीप्त से विवाह किया था, यह बी.ए. के इम्तहान की तैयारी कर रहा था। उस समय भी यह सुदीप्त से अधिक सुन्दर था। मुझसे लजाता था। अब भी आंखें नहीं उठा पा रहा है। लजालु है ही। उस पर उस लज्जाजनक प्रसंग को याद कर रहा हो, शायद!

उस दिन को मैं याद नहीं करना चाहती। मैने सुना था, सुदीप्त का बाप बड़ी दुर्गत भोग कर पिछले साल मर गया। उस मरे को अब क्या कहूं। लेकिन, भगवान को जरूर कहूंगी। अगर है भगवान तो जरूर सुनेगा। ओह, क्या सब सोचने लगी।

'बैठो चाय लाती हूं।' —मैंने अपने को उस गर्हित सोच से उबारने के लिए उठते हुए कहा।

'नहीं, नहीं। मैं अभी पी कर आया हूं। बैठिए।'

'बहुत अदब - क़ायदे सीख गये हो। पहले तो कभी मुझे 'आप' नहीं कहा था।'

'तुम कहने का अधिकार तो छिन गया।' सुवीर का मुंह विवर्ण हो गया। उसने दोनों हथेलियों को एक साथ दबा कर अपने पर काबू पाने की कोशिश की। मुझे अचानक कुछ कहते नहीं बना। अंदर जाते-जाते कहती गयी— 'बैठो। तुम्हारे लिए कुछ मीठा लाऊं! तुमको छेने की बरफी पसंद है न!'

'ओह भाभी!'

बरफी की तश्तरी और पानी का ग्लास लेकर मैं आयी तब तक सुवीर प्रकृतिस्थ हो चुका था।

'कोई काम था?' मैंने पूछा।

'माफी मांगनी थी।'

बरफी को कुतरता हुआ सुवीर अचानक बड़ा सयाना हो गया। वह जो कहने आया था भूला नहीं था। लेकिन सीधी बात करने का फूहड़पन वह नहीं करना चाहता था।

'माफी! क्यों?'

'तुम्हारे ऊपर किये गये अन्याय की।'

'तुमने तो कोई अन्याय नहीं किया।'

'क्यों नही! जब बाबा तुम पर झूठे इलज़ाम लगा रहे थे तब मुझे चुप नहीं रहना था।'

'क्या करते तुम! वे तुम्हारा नाम लेकर ही तो मुझे बदनाम करना चाहते थे। तुम अगर विरोध भी करते तो कोई होता? तुमने अच्छा किया कि चुप रहे।'

'और दादा?'

'हां, सुदीप्त को बोलना था, बाबा से लिए लड़ना था। लेकिन हो सकता है बाबा की बात ठीक लगी हो।'

'नहीं, ऐसा नहीं है। दादा को गलतफहमी नहीं हुई। वे तुम्हारे प्रति

'छोड़ो। यह सब......'

'नहीं भाभी। मुझे कहने दो। नहीं रहे यह तो मालूम होगा?'

'हां।'

'छः महीने भारी कष्ट भोगा उसी बीच एक दिन बड़बड़ाने लगे। मां दादा दोनों को अलग-अलग कहा— आह मुझे लग गयी। वह निर्दोष है। उसके लिए जो कहा था सब झूठ है। कहा — आपसे माफी मांग लें।'

'............'

'मां भी आपके लिए बहुत दुखी हैं।'

'लेकिन मैं दुखी नहीं हूं, सुवीर। तुम रहे हो न!'

'कितने आराम से हूं देख रहे हो!'

'............'

'लोग पता नहीं क्यों मेरे लिए दुखी हो हैं। तीन-चार दिन हुए गुड्डू बाबू की मुझसे मिलने आयी थीं। वह भी मेरे लिए दुखी थीं। लगता है मेरे लिए मुझे छोड़ सब दुखी हैं।'

रूना को इस तरह हंसते हुए सुवीर ने

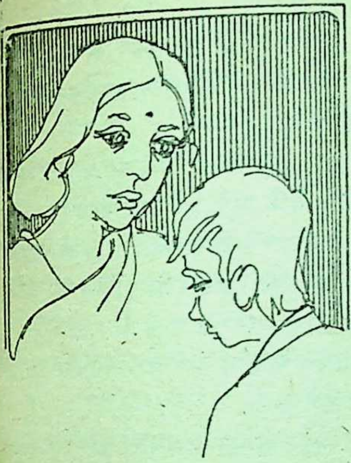

सुना था। वह निर्वाक ताकता रहा। भाभी सचमुच सुन्दर है। रंग तो पहले से भी ज्यादा साफ हो गया है।

'क्या देख रहे हो? मोटी हो गयी हूं।'

'नहीं तो।' सुवीर की आंखों में संकोच भर आया।

'मुटा तो गयी ही हूं। सब कहते हैं।'

'पहले ज्यादा दुबली थीं, अब ठीक हैं।'

'ओ बाबा! तुमको यह सब समझने आता है।'

'यह सब याने! दुबले-मोटे का फर्क कौन नहीं समझता।'

'और बताओ क्या सब कर रहे हो इन दिनों।'

मैंने प्रसंग को अपने मंच से उछाल कर फेंक दिया। लेकिन सुवीर की अन्यमनस्कता बनी रही। वह खोया-खोया सा उठा, भावाविष्ट-सा मेरे पांव छूकर चला गया। मुझे यह कहने का मौका भी न दिया कि पांव छूना मुझे पसंद नहीं। मैं ठगी-सी सोचती रही। सुवीर अभी तक किशोरवत् है।

* * *

## सुवीर

'अरे! तुम आ गये! मुझे बताया नहीं! अंधेरे में बैठे क्या कर रहे हो, बत्ती क्यों नहीं जलायी?'

'जलायी थी। बल्ब, लगता है, फ्यूज कर गया है।'

रूना के घर से लौट कर मैं एक खामोश बेचैनी से भर गया था। चुपचाप बाहर के कमरे में बैठा रहा था। अभी सुदीप्त घर लौटा नहीं है। दूसरे भाई बहन भी घर में नहीं थे। इसलिये अपने इस उद्वेग को भीतर ही भीतर बांधने का अवसर मुझे मिला। शायद उस समय मां की टोकटाक मुझे अच्छी नहीं लगती। लेकिन अभी मां के आने से ऐसा लगा, जैसे गहन अरण्य में अकेली भटकन के बाद कोई अपरिचित शरण मिल गयी हो।

'मिली थी?'

'हां।'

'बातें हुई?'

'हुई।'

'क्या कहा उसने! काम करा देगी?'

'मां!' ....मेरा स्वर इतना डूबा हुआ था कि मां घबड़ा गयी—

'तुम्हारी तबियत तो ठीक है।'

'मैं ठीक हूं।'

'रूना कैसी है?'

'बहुत अच्छी है– पहले से ज्यादा सुन्दर।'

'तुम उसका रूप देखने गये थे कि उससे अपने काम के लिए कहने!'

'मां, तुम भी..... तुमको तो समझना चाहिए।'

'ओ बाबा! यह क्या तुम पागलों जैसी बात कर रहे हो। यह भी कोई बात हुई।'

'न, यह कोई बात नहीं हुई– बहू को झूठा लांछन लगा कर घर से निकाल दिया– यह तो कोई बात नहीं हुई।'

'अरे तू कहां की सड़ी हुई बात ले बैठा।'

'हां, बात सड़ी हुई ही है लेकिन कहीं और की नहीं – यहीं की। इसी घर की। यहीं से उपजी हुई।'

'तेरे बाबा की भूल....'

'भूल नहीं..... अमानुषिक, भयानक अत्याचार।'

'जो कह लो।'

'अब मैं क्या कहूं! बाबा जीवित होते तो कहता।'

'क्या कहता बाबा को। वे तुम्हीं लोगों के लिए सोचते रहे जिन्दगी भर और तुम्हीं लोगों की सोचते आंखें भी मूंद लीं।'

'मां! तुम सच बताओ ऐसा क्यों किया बाबा ने?'

... मां रोने लगी।

'ओह! रोओ मत। मैंने बेकार तुम्हारा जी दुखा दिया। दरअसल भाभी को देख कर मन बड़ा भारी हो गया था।'

'लेकिन वह कोई दुखी तो नहीं है।'

'तुम लोग..... मां! मैं तुम्हें कुछ कह नहीं सकता।'

'क्या बाकी रहा सुनने को!'

'बाकी! मैं जो कहना चाहता हूं सब बातें ही है।'

'तो कह डालो। मरे हुए बाप को गालियां दो। मुझे ताने दे-दे कर मारो।'

'मैं ताने नहीं दे रहा हूं। मेरे ही लिए किया होगा तुमने। हमारे लिए। हम सब के लिए। भाभी तो बाहर से आयी थी। उसके लिए नहीं सोचने से कोई पाप का भागी तो नहीं होना पड़ेगा न!'

'पाप तो मैने पिछले जन्म में न जाने कितने किये थे। पाप न किये होते तो इस जन्म में पिल्लुओं की तरह बच्चे पैदा नहीं करती। मेरी जिन्दगी भी कोई जिन्दगी है।'

'मेरा मतलब यह नहीं था.......'

'किसी का कोई मतलब हो, मैं अपनी सड़ांध के लिए क़िसी दूसरे को दोष नहीं देती। ....खैर जाने दो। तुमने बताया नहीं उसने क्या कहा तुम्हारे काम के लिए!'

'मैं अपने काम के लिए कह ही नहीं सका।'

'क्या! तो तू चार घंटे उसकी सूरत निहारता रहा।'

'हां। निहारता रहा। देखता रहा कि पूजा पर चढ़ने लायक जिस फूल को तुम लोगों ने सड़क की नाली में फेंक दिया था वह किसी के गुलदस्ते में कितना फब रहा था।'

'मैंने नहीं फेंका था।'

'बाबा और तुम दो नहीं थे।'

'तुम लोगों को लगता था। लेकिन हम कभी एक हुए ही नहीं।'

'............'

'हमारा मन कभी नहीं मिला। मैंने अपने भाग्य से समझौता कर लिया। उनको मैं अपना भाग्य मानती थी।'

'दुर्भाग्य या सौभाग्य?'

'दोनों ही। तुम नहीं समझोगे।'

'मैं समझना चाहूं तब भी तुम मुझे समझा नहीं सकोगी।'

'मैं तुम समझदारों को जन्म देने वाली नासमझ हूं, समझा तो नहीं ही सकूंगी। लेकिन, छोड़ो इन बातों को। उसे अपने काम के लिए कहा क्यों नहीं?'

'नहीं कह सका।'

'क्यों?'

'लगा उससे अपने काम की सिफारिश कराने से सबका अपमान होगा— अपने पूरे परिवार का।'

'ओ!'

'तुम्हें ऐसा नहीं लगता क्या?'

'मेरा तो जीवन ही अपमानों और अभावों का पुलिंदा है; अब क्या मान, क्या अपमान। मुझे कुछ नहीं लगता।'

'फिर जाऊंगा— हिम्मत जुटाऊंगा कहने को।'

'नहीं, नहीं जाना है अब!'

'क्यों तुम भी बाबा की तरह.....'

'सुवीर!'

'मां! मैं भाभी से मिलने जाऊंगा। तुम अपनी मनाही वापस ले लो।'

'जो जी में आये करो। लेकिन मैं कहूंगी कि तुम्हारा उसके यहां अधिक जाना-आना ठीक नहीं होगा।'

'वह मुझे फंसा लेगी, क्यों?'

'नहीं, मैं जानती हूं, वह ऐसी नहीं है।'

'फिर भी तुमने बाबा की गलतबयानी में क्यों साथ दिया था? क्यों नहीं विरोध किया था?'

'और तुम क्यों चुप थे— तुम्हारा नाम लेकर ही तो उसे बदनाम किया गया था। तुम तो विरोध कर सकते थे।'

'पांच साल पहले में आइ.ए. पास करने वाला एक अनुभवहीन लड़का था। नहीं समझ सका कि मुझे क्या करना चाहिये। बाबा ने कहा कि मुझ पर डोरे डाल रही थी तब इसका अर्थ भी मैं नहीं समझ सका था। बाद में समझा तो लज्जा से गड़ गया। भाभी तो मुझसे लड़के की तरह बात करती थी— भाई भी नहीं, बेटा। समझी!'

'मुझे कुछ मत कहो।'

'तो किसे कहूं? तुम्हीं ने मुझे उसके पास भेजा था। तुम्हीं मुझे उसके यहां आने-जाने से मना भी कर रही हो।'

'नहीं करूंगी मना। और मेरे मना करने से क्या तुम मानोगे?'

'तुमने भैया को उनकी ब्याहता प्रेमिका से अलग करा दिया और वे सिर झुका कर रह गये। तब मैं क्यों नहीं मानूंगा? मैं तो नाहक उसे भाभी कहता हूं। वह मेरी कौन है? उसे घर से निकालने के लिए मुझे ही झूठा माध्यम बनाया गया था न!'

'अब चुप करो।'

'नहीं! चुप रहने की मेरी गलत आदत के कारण मेरी आंखों के सामने इतना बड़ा अन्याय हुआ। मैं चुप नहीं रहूंगा।'

'खैर, बोलो जो जी में आता है।'

'आज भी बाबा के भद्दे लिजलिजे शब्द गलीज पर डोलने वाली मक्खियों की तरह मुझे सुनायी पड़ते हैं— तुम्हें भी याद होगा। कहते थे वे कि एक बेटे का हाथ पकड़ कर घर में आ गयी है, सबको खराब करेगी।'

'.............'

'क्यों याद हैं न!'

'मैं याद करना नहीं चाहती। भूलना चाहती हूं।'

'तो भूल जाओ। क्यों कहती हो कि मेरा उसके यहां अधिक आना-जाना ठीक नहीं होगा?'

'वह क्यो कह रही हूं— तू नहीं बूझेगा।'

'बता दो तो कोशिश करूं।'

'वह इसलिए कि वह— वह जिसके साथ उसे बुरा लगेगा। तुमको लेकर कहीं उ दोनों के बीच कोई दरार न पड़े। मैं पहले ह उसके सामने गुनहगार हूं। अब दुबारा क ऐसा....'

'उसके लिए ममता है तो तुम्हारे दिल में

'दिल! मेरे पास! नहीं बेटे मेरे पास केवल गर्भाशय है— कम से कम तुम्हारे बा यही समझते थे।'

'.............'

'और तू भी जिस किसी से ब्याह करे उसके लिए यही सोचेगा। बस उतना ह समझेगा। उससे ज्यादा कुछ नहीं।'

'मैं ब्याह नहीं करूंगा।'

'मत करना।'

'और करूं तो!'

'तब भी मुझे क्या लेना-देना।'

'भैया से क्या लेना-देना था?'

'सुवीर! तुमने क्या सोच लिया है आज! मुझे ताने देकर एक ही दिन में मार डाल चाहता है?'

'नहीं मां! अब कुछ नहीं कहूंगा— बस ए बात पूछता हूं— भैया तो तुम्हारे बेटे थे, भा से उनको अलग कराते तुमने यह कभी न अनुभव किया कि उनके दिल पर क्या बीत होगी?'

'मैं छिप कर रोती रही थी।'

'बाबा से कहा होता।'

'कहा था।'

'.............'

'मेरी कोई बात मानते थे! कहते थे एक

'अपने मन से ब्याह कर लिया— अगर इसे सजा नहीं मिली, तब सभी इसी रास्ते पर चलेंगे।'

'ब्याह करने के लिए सजा?'

'ब्याह के लिए नहीं— अपने मन से....'

'मां! अब भी तो झूठ बोलना बन्द करो।'

'मैं झूठ बोल रही हूं.... तू मुझे झूठी कह रहा है?'

'तो और क्या कह रही हो! अब भी सच स्वीकारने में डरती हो!'

'डर? मुझे किसका डर है?'

'अपना। तुम खुद अपने से डर रही हो। अपनी खुदगर्जी से।'

'जो जी चाहे कह ले। नासमझ हूं मैं, झूठी हूं, खुदगर्ज हूं। तू मेरे बारे में जो राय दे ले। तुझे रोकने का दम मुझमें नहीं है।'

'मुझे माफ करो मैं कुछ ज्यादा बोल गया।'

'पता नहीं कब से तेरे मन में ये शिकायतें जमा हो रही थीं।'

'उसी दिन से।'

'कौन-सा मनहूस दिन था वह?'

'वही जब बाबा ने भैया को मजबूर किया था भाभी से डायवोर्स लेने को।'

'उसके मां-बाप भी यही चाहते थे।'

'मां-बाप चाहते थे— वह तो नहीं चाहती थी!'

'मैं नहीं जानती।'

'तुम सब जानती हो।'

'और तुम मुझसे ज्यादा जानते हो— यही न!'

'हां, मैं जानता हूं, मां! कि केवल भैया के वेतन पर अपना पंजा गड़ाये रखने के लिए तुमने भैया की गृहस्थी नहीं बसने दी।'

'तुम बहुत बढ़-चढ़ कर बोल रहे हो।'

'जो बात है, वही कह रहा हूं, कटु सत्य।'

'बेहूदी बात बोल कर सच बोलने की डींग मत हांको।'

'मैं बेहूदा हो सकता हूं, लेकिन पाखंडी नहीं हूं, मां।'

'पाखंड तो मैं करती हूं।'

'यह पाखंड नहीं तो और क्या है!'

'मेरे मुंह में आग लगी थी कि मैंने तुझे उसके पास भेजा। उसे देख कर तू इतना बावला हो जायेगा, मैं यह नहीं जानती थी। हे भगवान! सब मेरे ही कर्मों का दोष है।'

'नहीं मां! मैं अब उसकी बात नहीं करूंगा, कभी नहीं। कान पकड़ता हूं। तुम आंसू पोंछो; पोंछो आंसू। वाह! ऐसे। बस ऐसे ही।'

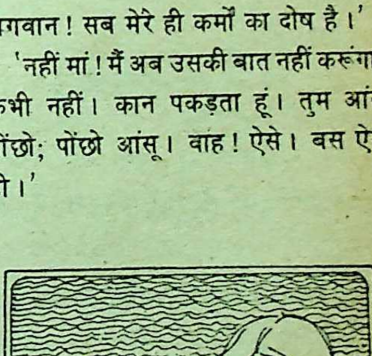

'छोटदा !'

'ऊं।'

'तुम भाभी से मिले थे ?'

'चुप्प !'

'क्यों ?'

'उसकी कोई चर्चा नहीं।'

'क्यों ?'

'मां को बुरा लगता है।'

'नहीं तो। मां ने ही मुझे बताया।'

'क्या कहा ?'

'भाभी के लिए.....'

'गालियां दे रही होगी !'

'नहीं, नहीं। मां तो उसकी तारीफ कर रही थी।'

'अच्छा !'

'हां। कह रही थी—भाग्य खोटा था जो उसके जैसी लक्ष्मी घर आ कर चली गयी।'

'चली गयी? या भगा दी गयी। कुत्ते-बिल्ली को भी उस बेरहमी से नहीं निकालते।'

'मां को उस बात का भारी अफसोस है।'

'अफसोस करने से वह कोई लौट तो नहीं आयेगी।'

'मां कहती थी तुम ब्याह कर लेते।'

'हा, हा, हा, हा ! अच्छा मजाक है। एक भाई की बीबी निकाल दी गयी। दूसरे की बीबी का स्वागत होगा।'

'वह पहले की बात थी। अब....'

'अब क्या बदला है ?'

'बहुत कुछ। अब हम सब खड़े हो गये।'

'कोई नौकरी तो नहीं कर रहे हैं न अभी। सारा घर भैया पर ही तो चल रहा है।'

'तुम गये थे भाभी से कहने.....'

'गया था। .....गया था सुप्पी ! सोचो कैसी लज्जाजनक स्थिति थी। उसे मैं भाभी कह रहा था और मुझे उससे अपने लिए सिफारिश करानी थी। किसके पास - जिसकी वह रक्षिता है – मिस्ट्रेस !'

'ऐं ! उन लोगों का ब्याह तो हुआ है !'

'नहीं रे ! वह साला एम.एल.ए. उससे शादी करेगा ! हरामी !'

'क्यों नहीं की शादी ?'

'शादी कैसे करता ! उसका वोट कट जायेगा जो। इससे उसकी जात वाले इसलिए उसे वोट नहीं देंगे कि उसने दूसरी जाति से शादी क्यों की। और भाभी याने हमारी जाति वाले इसलिए नहीं देंगे कि उनके समाज की लड़की को क्यों घर बैठाया ?'

'ब्याह न करने से क्या ? घर तो बैठा ही लिया। यह तो और बुरा है।'

'राजनीति में इससे भी बुरी बातें होती हैं।'

'भाभी रहती-सहती किस तरह हैं ?'

'बहुत अच्छी तरह। पहले से ज्यादा सुन्दर लगती हैं।'

'सिन्दूर लगाती हैं ?'

'नहीं।'

'मेरा मन होता है मिलने का।'

'शीः। ऐसा बोलना भी मत।'

'क्यों ?'

'मां जाने देंगी तुमको ?'

'जाने देंगी।'

'तो मेरे जाने पर.....'

'तुम तो लड़के हो– लड़कियों से तुम्हारा मिलना-जुलना मां को पसंद नहीं होगा।'

'भाभी लड़की है?'

'तो और क्या है?'

'औरत है।'

'कोई खास फर्क नहीं।'

'सुप्पी! मैं तुझे एक राय देता हूं। भाई होकर भी कहता हूं कि अगर जिन्दा रहना चाहती है तो इस घर से भाग जा।'

'क्यों छोटू दा, क्यों?'

'नहीं तो घुट कर मर जायेगी, या पागल हो जायेगी।'

'नहीं मुझे कुछ नहीं होना।'

'मैं भैया नहीं बन सकता, सुप्पी।'

'भैया बनना आसान भी नहीं है।'

'तुम उनकी प्रशंसा करती हो? मैं तो उन्हें दोषी मानता हूं।'

'दोषी? क्यों?'

'भाभी को लेकर।'

'ओ! वह तो पुरानी बात हो गयी।'

'ये बातें पुरानी नहीं पड़तीं। पुश्त दर पुश्त ये कलंक पुते रह जाते हैं।'

'अगर तुम भैया की जगह होते तो क्या करते?'

'अपनी बीवी के साथ घर छोड़कर चला जाता।'

'यह अच्छी बात होती?'

'तो बाबा ने जो किया वह अच्छा था?'

'अच्छा मैं थोड़े कह रही हूं। लेकिन मां-बाप को त्याग देना भी ठीक है क्या?

'तू मुझे सीख दे रही है?'

'नहीं, पूछ रही हूं।'

'इसमें पूछना क्या है– भैया ने जो किया, मां, बाबा के अन्याय पर चुप रह गये, भाभी का पक्ष नहीं लिया, यह सरासर अनीति थी– अपराध था, अपराध।'

'बाबा ने ऐसा क्यों किया?'

'यह क्या अब तक तू नहीं समझ सकी?'

'मैं तो समझती रही थी कि भाभी के चरित्र को लेकर बाबा नाराज थे– लेकिन अंतिम समय उनका वैसा कहना कि रूना की आह उनको लग गयी, उन्होंने जो कहा था, झूठ था– में, सचमुच, छोटू दा! बाबा के जाने से भी ज्यादा इस बात से दुखी हुई कि बाबा उस तरह पछताते गये।'

'उन्हें तो और पहले पछताना था। बहुत देर कर दी उन्होंने।'

'मां को भी भाभी को खो देने का दुख है।'

'मां भी शामिल थी उस कांड में। बाबा ने भाभी के चरित्र पर दोष लगाया, तब मां ने भी सहमति दे दी– भैया तो नपुंसक की तरह चुप रहे ही। तू नहीं समझ सकी कि यह सब क्यों हुआ?'

'............'

'इसलिए कि हम जो एक कम आध दर्जन भाई बहन बड़े होने को बाकी रह गये थे उनका भात नमक कहीं भैया के बच्चे छीन न लें।'

'ओह छोटू दा! – ऐसा नहीं।'

'नहीं सुप्पी यही सत्य है।'

'यह सत्य भी हो तो इसे मन से निकाल दो।'

'नहीं निकाल पाता। और कल जब से भाभी से मिल कर आया हूं– यह और भी टीस मारने लगा है।'

'भैया कभी भाभी से मिले होंगे?'

'मैं नही जानता। सपूत हैं। बाबा ने धमकी दी थी और मां ने कसम दिला दी थी। इसलिए मैं समझता हूं नहीं ही मिले होंगे।'

'तुम्हीं ठीक हो। कम से कम भैया से तो ठीक हो।'

'शाबाश, तरक्की तो हुई मेरी।'

'छोटू दा, तुम अपना जीवन बनाओ, घर मैं देखूंगी।'

'घर देखने को तो भैया हैं ही।'

'............'

'ब्याह? किससे?'

'किसी से तो करेंगे ही।'

'किसने कहा तुमसे! मां ने तो नहीं बताया!'

'मां को मालूम हो तब न!'

'तुमको कैसे मालूम हुआ?'

'जिससे ब्याह होगा उसी ने बताया।'

'किससे? तू कैसे जानती है?'

'अभी बताना मना है।'

'तो बताना शुरू ही क्यों किया?'

'इसीलिए कि तुम आगे की स्थिति समझ सको।'

'मेरी नौकरी अनिश्चित है सुप्पी! मैं न घर का हूं न घाट का। मेरी बात मत कर। लेकिन भैया के लिए मैं जानना चाहता हूं– बता मुझे!'

'सब जान ही जाओगे।'

'कब?'

'अगले महीने। भैया चले जायेंगे।'

'कहां?'

'अपनी बीवी के साथ रहने।'

'किसने कहा तुमसे?'

'उसी ने। नयी भाभी ने– नयी याने की दूसरी बीवी ने।'

'मजाक मत करो, सुप्पी!'

'तुम्हारी कसम। सोलह आने सच रही हूं, छोट दा। तुम तो घर की बातों इतना अलग-थलग रहते हो कि तुम्हें पता ही नहीं पड़ता। मुझे भी मिठाई खानी तुमसे।'

'तू किससे ब्याह कर रही है, सुप्पी!'

'ब्याह नहीं! आज मैंने नौकरी ज्वायन ली।'

'कहां?'

'टेलीफोन एक्सचेन्ज में। आपरेटर। हं– हल्लो सर, कैसी रही?'

'खूब रही सुप्पी। बधाई है। जरूर मिठाई खिलाऊंगा। लेकिन खुद तभी खाऊंगा जब अपने लिए कामधाम का जोगाड़ कर लूं।'

'इतने दुखी मत होओ। तुम्हारी योग्यता मुझसे ज्यादा है। अच्छी पा जाओगे। देखते रहो।'

'देखने के सिवा करना क्या है?'

'फिर वही निराशा भरी बात!'

'लेकिन ...भैया का ब्याह.... यह दूसरा ब्याह तो भारी सरप्राइज है– तुम्हारी नौकरी

से ज्यादा।'

'और जानते हो— अब जान गये हो तो बता ही दूं। वह विधवा है। दो बच्चों की मां।'

'हैं!'

'हां।'

'उसका पहला पति दरोगा था। खूब कमाई की थी। पैसे ले कर बड़े-बड़े खूनी डकैतों को बचाता था। किसी डाकू से पैसे ले लिए थे लेकिन बचा नहीं सका। ऊपर वाले अफसर नहीं खरीदे जा सके और उसे डाकू को आजन्म कारावास हो गया, तब उसी डाकू के साथियों ने उसकी जान ले ली।'

'ओ।'

'सरकार ने इसे अनुकम्पा पर नियुक्ति दी। टेलीफोन आपरेटर की। अब तो सुपरवाइजर है।'

'तो तुम्हारा एप्वाइन्टमेंट.....'

'हां उसने बड़ी मदद की।'

'भैया को यह कहां मिली?'

'मुझे नहीं मालूम।'

'कैसी है?'

'बहुत मामूली। भैया से बड़ी लगती है। होगी भी।'

'बच्चे कितने बड़े हैं?'

'लड़का दस साल का, लड़की आठ नौ साल की होगी।'

'रहती कहां है?'

'अपना मकान है। तीन तल्ला। नीचे पी. डब्ल्यू. डी. का दफ्तर चलता है। तीसरी मंजिल पर गेस्ट हाउस है और बीच में रहती है।'

'गेस्ट हाउस! किसका! किसी कम्पनी का?'

'नहीं। उसका अपना। खुद चलाती है। मैनेजर रख छोड़ा है।'

'अच्छा!'

'काफी पैसा है उसके पास। सजधज देखोगे तो दंग रह जाओगे।'

'मुझे नहीं होना दंग। तुम्हीं अपना जीवन सफल बनाओ।'

'जीवन तो भैया अपना सफल बना रहे हैं।'

'सुप्पी! अपने परिवार की नाक जो थोड़ी बहुत बाकी थी, अब एकदम कट जायेगी।'

'क्यों? भैया एक विधवा का उद्धार कर रहे हैं— इसमें नाक ऊंची होनी है।'

'खूब! तू तो कहेगी ही। नमकहरामी तो नहीं कर सकती न!'

'छोट दा । तुम बहुत गंदे ढंग से बोलते हो ।'

'मैं जो बोलता हूं गंदा भले ही लगे झूठ नहीं है । तू ही बता सुप्पी ! झूठ बोलता हूं मैं ? बता तू ही, रूना भाभी को घर से निकाला क्यों ?' – पैसे के लिए न ! वह भैया के पैसे की हकदार हो कर आ रही थी इसीलिए न ! मेरी समझ में नहीं आता कि भैया को रूना भाभी ने कैसे अपना प्रेम पात्र बनाया !'

'भैया के साथ रूना भाभी की जोड़ी ही ठीक बैठती थी ।'

'तुम लोग जोड़ियां बैठाते हो कद से, चमड़े के रंग से, पढ़ाई से, नौकरी से । लेकिन दिमाग की बनावट, बड़प्पन और ओछेपन से भी जोड़ियां एक दूसरे से पिछड़ जाती हैं ? यह नहीं जानते तुम लोग । रूना भाभी और भैया के बीच बहुत बड़ा अंतर है– भाभी के सामने भैया बौने थे । भाभी भी ऊपरी समानता से धोका खा गयी होगी ।'

'और भैया की यह नयी पसंद ?'

'यह उनके लायक है । मैंने तो देखा नहीं है इस नये चेहरे को तुम्हीं से सुना है । दो बच्चों की मां वह धनी विधवा भैया के साथ खूब खपेगी ।'

'वह तो तुरत बुढ़िया हो जायगी – भैया–'

'वे भी बुढ़ा जायेंगे । ज़वानी कौन सदा टिकने वाली चीज है । कुछ पहले ही चुक जाये तो क्या फर्क पड़ता है और उसके बदले भैया को क्या कुछ नहीं मिल रहा है ।'

'धत् । तुम तो व्यंग्य करते हो ।'

'नहीं मैं व्यंग्य नहीं कर रहा हूं, बल्कि रो रहा हूं अपने बड़े भाई की नीलामी पर । भै के लिए जो शब्द मेरे मुंह में आ रहा है उसे तु सामने बोलते मुझ बेहया को भी शर्म आ र है ।'

'तो कह ही डालो ।'

'नहीं । थोड़ी-सी हया बचा कर रख चाहता हूं ।'

* * *

## रूना

क्यों आया था सुवीर ! मुझसे मिल जरूर कोई काम होगा । संकोच से कह न सका बेचारा । इतने दिन बाद अकारण नहीं ही आया होगा । घर से छिप कर आ होगा, वहां से कैसे आने देता कोई । लड़का अपने भाई से, थोड़ा फर्क है– अधि मजबूत लगता है विचारों में । इसका व भाई ! बेकार पुरानी बातें याद करना ।

'अरे ! तुम अंधेरे में बैठी हो ।' जी (हां गुड्डू मेरा 'जी' है, उसके नाम के अंग्रे प्रथमाक्षर का सम्बोधन मैंने चुन लिया है उसे भी यही पसंद है) अचानक आ गया । वै भी उसके जूते में आवाज नहीं होती । लेकि उसके पीछे-पीछे आने वाले लोगों की भन तो अंदर तक आ ही जाती है ।'

'हां, झपकी आ रही थी ।'

'अलशाम को ! दिन में आराम नहीं किय था ?'

'दिन में खूब सोयी । यही तो रोना है– दि

में सोओ तो शाम भी नींद में ही बीत जाती है।'

'खुशकिस्मत हो यार। यहां तो नींद को माशूका से भी ज्यादा मनाना पड़ता है।'

'चाय पिओगे?'

'नहीं। बाहर चाय ही पीता रहा हूं। पानी पिलाओ।'

'शरबत!'

'नहीं, सादा पानी।'

फ्रीज पता नहीं बीच में कब डीफ्रौस्ट हो गया था। आधी बर्फ तो गल चुकी है।

बर्फ को जमने के लिए विद्युत चाहिए। गर्मी से वह जमेगी और गर्मी से ही पिघल भी जायेगी। मुझे भी तो प्रेम ने जमा दिया था, और प्रेम ने ही तरलता भी दी।

किसका प्रेम! इस अधपढ़े, उज्जड सुन्दर आदमी का! या उस पढ़े-लिखे लिजलिजे अर्ध-आदमी का! प्रेम का रसायन इन दोनों में कहां है?

'वाह! पानी मैं बाहर पीता ही नहीं। थोड़ा और!'

'दिन भर पानी नहीं पीते— यह तो ठीक नहीं है।'

'चाय पीता हूं, उसी से काम चलता होगा।'

'यह तो और बुरा है— मैंने कितनी बार कहा कि बेकार की चाय मत पिया करो।'

'कम तो कर दी है। फिर भी....'

'गाड़ी में पानी रक्खा करो।'

'तब तो गाड़ी में तुमको भी रखना पड़ेगा।'

'बाड़ी में रख लिया तब गाड़ी में रखने में क्या है।'

'बाड़ी में नहीं— तुझे मैंने यहां रक्खा है रूना, यहां।'

जी को भावुक होना आ गया है। वह अब हृदय की बात करने लगा है। मैं नहीं जानती, छाती पर हाथ रख कर वह जिस स्थान की बात करता है वह हृदय है या कोई खाई-खंदक। इसकी इस देवदास जैसी अदा पर मुझे खुश होना चाहिए— कम से कम मुस्कुराना तो चाहिए ही।

और सचमुच मैं खुश हूं। चार वर्षों में जीवनधारा ने अपनी राह बदल दी। उधर छोड़ा हुआ मरुथल भयावह लगता है और इधर नयी जमीन की सोंधी महक मन को आराम पहुंचाती है।

'अरे हां! गाड़ी के डैश बोर्ड में कुछ

सामान है। निकलवा लो।'

'बाजार गये थे?'

'नहीं। एक परिचित नेपाल गया था वही ले आया है। कुछ विदेशी सेंट हैं और एक बड़ी बोतल भी है। सावधानी से निकलवाना।'

'कपड़े बाथरूम में धरे हैं– नहा लो।'

कहने की जरूरत नहीं थी। वह जानता है कि उसके घर आने के पहले ही उसके रात के कपड़े, पीने के सामान, खाना और बिछावन ठीक रहता है। मेरे आने के बाद से कभी इसमें व्यवधान नहीं हुआ है। वह मुझ पर जान देता है इसकी खुशफहमी में मैं गुनगुनाती हूं– अपनी गुनगुनाहट रोक कर सोचती भी हूं– कभी इसे इन्तजाम में नागा कर देखूं! उसके प्रेम की थाह पा लूं। लेकिन क्यों? अथाह समझते रहने में हर्ज ही क्या है।

यह कलफदार कुरता, यह अलीगढ़ी पाजामा इतनी फबन से भर उठता है कि आंखें हटाये नहीं हटतीं।

'क्या देख रही हो?'

'तुमको।'

'ऐसा लगता है जैसे पहचान नहीं रही हो।'

'तुम नित नये हो।'

'यह कविता मैं नहीं समझता।'

वह दो ग्लासों में बराबर पानी और बर्फ डालता है–

'आज बताना कैसा है।'

'एकदम करुआ।' मैने एक घूंट गले के नीचे उतार कर कहा।

'तुमको इन चीजों की पहचान नहीं है। अभी देखना आधे घंटे में कैसा फील करती हो।'

मैं फील करना नहीं चाहती, इसे यह नहीं बताऊंगी। यह जैसा चाहेगा वैसी ही फीलिंग का अभिनय कर लूंगी। यह मेरा आश्रय है। आश्रय के नुक्स नहीं देखे जाते।

'क्यों? मैंने कहा था न! जाकर आइने में देख आओ कैसी चमक आ गयी है आंखों में।'

'मैं नहीं देखती आइना। मेरे आइने तुम हो।'

यह लगभग रोज का किस्सा है। उसके आग्रह पर मैं उसका साथ देती हूं और मेरे आग्रह पर वह अधिक पीने की जिद छोड़ देता है। एक दूसरे की आंखों में हम अपना प्रतिबिम्ब निहार कर खुश होते हैं। वह सारे दिन के पेंचदार जीवन से थकाहारा होता है और मैं अकर्मण्यता से बोझिल। हमारे पास बात करने का कोई नया, चैलेन्जिंग प्रसंग नहीं होता है, इसलिए हम लोग हर रोज अपने प्रथम परिचय और आकर्षण की घिसी-पिटी बातें दुहरा कर समय काट देते हैं।

* * *

## गुड्डू बाबू उर्फ 'जी'

'तुमने जिन किताबों की सूची दी थी उनमें केवल एक मिली यहां। बताया कि दिल्ली से मंगवा देगा।'

'रहने दो। दिल्ली से मैं खुद मगवा लूंगी।'

'किससे ?'

'मेरी एक सहेली है सिम्मी — सीमा। वही आ रही है।'

'तुम्हें कैसे पता पड़ा ?'

'उसने पत्र लिखा है। हम दोनों साथ पढ़े हैं। स्कूल से इंटर तक। उसके डैडी अपने बिजनेस इधर से उठा कर गुजरात चले गये। उसने अपनी बाकी पढ़ायी दिल्ली में की।'

'कब आ रही है ?'

'अभी दस दिन हैं। मैं उसे आज ही लिख देती हूं।'

'इधर कैसे आ रही है ?'

'वह पत्रकार है।'

'अच्छा !'

'किसी काम से आ रही है।'

'तुम्हारा पता कैसे मिला उसे ?'

'मेरी उससे खत किताबत हमेशा बनी रही है।'

'वह जानती है कि तुम......'

'कि तुम कौन हो ?'

'हां....'

'जानती है। मैंने उसे लिखा था कि मैंने दूसरा विवाह किया है।'

'वह शादीशुदा है ?'

'नहीं।'

'क्यों ?'

'क्यों ? यह मैं कैसे जानूं ?'

'किसी से प्रेम-व्रेम का चक्कर है ?'

'लगता नहीं है। होता तो मुझसे छिपाती नहीं।'

'कहां रहेगी ?'

'मैंने यहीं के लिए लिखा है।'

'............'

'ठीक नहीं किया क्या ?'

'ठीक है। लेकिन पत्रकारों से हमें कुछ दूरी रखनी चाहिए। यहां आकर उसे मालूम पड़ेगा कि हम दोनों का ब्याह नहीं हुआ है।'

'इससे उसको क्या ?'

'वे लोग यही सब तो ढूंढ़ते हैं। पाजामे के छेद से झांकने की उनकी आदत होती है।'

'जिनके पाजामे में छेद हो वे डरें।'

'हां। यहां तो पाजामा ही नदारद है।'

रूना हंसने लगी। मैं भी हंसता रहा, लेकिन मेरे मन में शंका बनी रही। पत्रकार का घर में आकर रहना ! रूना का किन-किन लोगों से पत्र व्यवहार चलता है ? यह अपने सारे परिचितों का परिचय एक बार क्यों नहीं दे देती ? इस महिला पत्रकार के लिए कहीं किसी होटल में ठहराने की व्यवस्था कर दूं ? लेकिन रूना उसे लिख चुकी है। वह कहीं बुरा मान गयी तो !

'तुम अपनी सहेली को यहां ठहराना। मैं दालभात में मूसलचन्द नहीं बनूंगा। कहीं टूर-ऊर पर निकल जाऊंगा। मम्मी से भी नहीं मिला हूं बहुत दिनों से।'

'अच्छा ! तो तुम्हें उसके जाने से घर छोड़ना पड़ेगा ?'

'कितने दिन रुकेंगी ?'

'हे भगवान। तुम तो उसके आने के पहले ही इतने परेशान हो उठे। मैंने बेकार उसे लिख दिया। मना कर देती हूं।'

'नहीं। अब मना करोगी तो समझेगी कि मैंने मना करवा दिया।'

'समझेगी तो समझा करे।'

'अरे! पत्रकार है। कुछ उल्टा-सीधा लिख देगी।'

'लिख देती हूं कि मैं नहीं रहूंगी उस समय।'

'हां, यह हो सकता है कि....'

'क्या हो सकता है?'

'कि ठीक उसके आने के समय हम लोग कहीं चले जायें।'

'तुम उससे इतना डर क्यों गये हो?'

'डर गया हूं? नहीं रूनी। मैं राजनैतिक सावधानी बरत रहा हूं।'

'हूंह। सावधानी। एक पत्रकार का सामना नहीं कर सकते। यह सावधानी है या पलायन। सावधानी तो तब मानूं जब वह पत्रकार तुम्हारी प्रशंसिका बन जाय।'

'इसमें दूसरा खतरा है।'

'होगा। उस खतरे में भी तुम्हारी ही दुर्बलता होगी।'

'उस खतरे से तुमको भय नहीं होता?'

'भय होना चाहिए। प्रेम के साथ ईर्षा का होना जरूरी होता है न! अगर वह नहीं है तो शायद मेरे प्रेम को अधूरा मानोगे।'

'तुम नाराज हो गयीं?'

'नहीं।'

'तो तुमको इस बात से ईर्षा नहीं होगी कि कोई दूसरी स्त्री मेरी प्रशंसिका हो।'

'नहीं होगी।'

'क्यों?'

'अब इस क्यों का क्या उत्तर दूं। तुम्हारी प्रशंसिका से मुझे तब तक कोई शिकायत नहीं होगी, जब तक तुम उसके इस हद तक प्रशंसक न हो जाओ कि मुझे भुला दो।'

'हिअर-हिअर। आ गयी न आमने-सामने।'

'मैं, पीछे नहीं, — जो कहना होता है सामने ही कहती हूं।'

'तो बाबा बोलो क्या चाहती हो?'

'कुछ नहीं।'

'अब हो गया बेड़ा पार! वह तो आने से पहले ही से हमारे बीच झगड़ा करा बैठी।'

'वह क्यों झगड़ा करायेगी। तुम नाहक उसके आने की बात को लेकर हंगामा करते हो।'

'उसे लिखने के पहले मुझे बता देती तो क्या हर्ज हो जाता।'

'और बिना बताये लिख दिया तो क्या नुकसान हो गया?'

'देख ही रही हो, हमारे बीच विवाद होने लगा।'

'तुम नाहक बतंगड़ बना रहे हो।'

'अच्छा भाई अब मैं कुछ नहीं बोलूंगा। कोई आये जाय मेरी बला से। एक बात पूछता हूं— तुम्हारी उस सहेली को मेरे पीने पिलाने पर तो एतराज नहीं होगा?'

'तुम उसके सामने बैठ कर पीओगे और पिअक्कड़ों जैसी हरकत करोगे तो हो सकता है नाराज हो। लेकिन अपने कमरे में बैठकर चुपचाप तुम्हारे पीने से उसे क्या लेना-देना।'

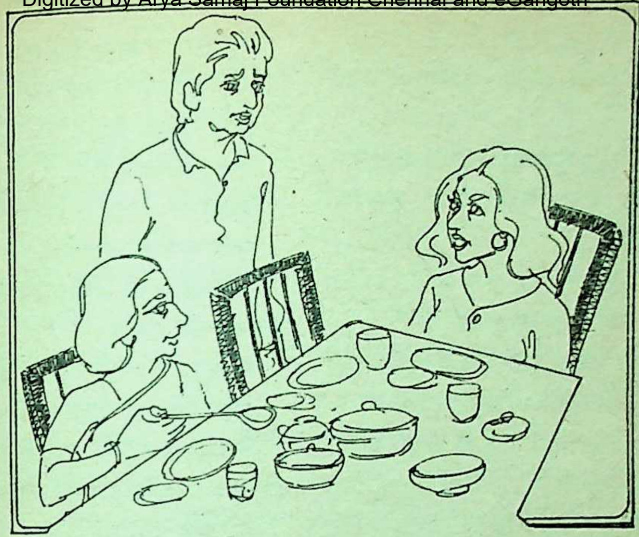

'अच्छा ठीक है, उसके आने पर मुझे किन पाबन्दियों में रहना होगा यह बता देना।'

मैं रूना को नाराज नहीं कर सकता। वह मेरी विवशता है। उससे ब्याह कर पाता तो बात और थी। तब स्वामित्व मेरी मुट्ठी में होता। लेकिन एक छोटी सी रस्म! बस वही तो नहीं निवाही मैंने कि बदले में जर खरीद गुलाम बन कर रह गया।

मेरी ब्याहता होती तो मेरे सब कुछ में इसका समभाग होता। पर, आज इसे जो कुछ भी देता हूं वह एकान्त रूप से उसका होता है, मेरा नहीं। यह मेरी है— ऐसा भी मैं सिर्फ इसी से कह पाता हूं और यह बात इतनी बार कह चुका हूं कि इसका मूल्य शायद चुक गया है। उसके लिए और मेरे लिए भी।

**सीमा** * * *

'वाह! कितनी अच्छी गृहस्थी बसायी है तूने! बधाई है रूना तुमको।'

'किस बात पर?'

'इस नये जीवन पर।'

'ओह! जो पुराना और बासी है उसे नया जीवन कहती हो।'

'लेकिन, यू आर लिविंग इन परफेक्ट कंडीशन्स। इसके बार-बार दुहराये जाने का रोना क्यों? डोन्ट वी औल विश टु लिव लाइक दिस?'

'हो सकता है।'

'तब इसमें यह उदासी यह निराशा क्यों? मैंने तुम्हें अधिक खुश देखने की आशा की थी।'

'मैं खुश हूं।'

'तब जीवन तुम्हें पुराना और बासी नहीं लगना चाहिए।'

'............'

'तुम खुद कहीं पर ठहर गयी हो रूनी।'

'शायद यही हुआ है......'

'तो बढ़ जाओ आगे। रुकने की कोई विवशता है?'

'बढ़ने से बहुत कुछ पीछे छोड़ना होता है। देखो तुम्हारी चाय ठंडी हो रही है। तुम खा भी नहीं रही हो।'

'चाय मैं ठंडी ही पीने लगी हूं।'

'कितनी गर्म चाय तुम पीती थीं!'

'हां, बहुत गर्म। तुम्हें याद है! अब इस भागदौड़ की जिन्दगी में बहुत चाय पीनी पड़ती है। गर्म पीती रहूं तो कोई भारी बीमारी ही पकड़ ले।'

'तुम कुछ दुबली हुई हो।'

'नहीं तो। तुम अलबत्ता मोटी हुई हो।'

'हुई हूं न ! जी नहीं मानते।'

'तुमने नाश्ते की तीन प्लेटें लगायीं– वह तो आये नहीं।'

'पालिटीशियन की कोई रूटीन नहीं होती। आ गये तो शामिल हुए, न तो जब आये तब ले लिया कुछ– नाश्ते के समय पानी और खाने के समय नाश्ता।'

'तुम कब आ रही हो......'

'कहां?'

'पालिटिक्स में?'

'मैं। मैं तो दर्शनशास्त्र पढ़ाने के सिवा कुछ नहीं कर सकती।'

'घर तो चला सकती हो मजे से।'

'मजे से नहीं – बस चला लेती हूं।'

'रूनी..... एक बात पूछूं। जल्दी से जवाब दे डाल – अपने साहब के आने से पहले....'

'.............'

'तू सचमुच खुश है?'

'नहीं दीखती हूं क्या?'

'मुझे लगता है....'

'क्या लगता है?'

'छोड़ो।'

'नहीं बताओ-बताओ।'

'मेरे सवाल का जवाब दे दो तब मुझे कुछ बताना नहीं पड़ेगा।'

'मैं खुश हूं। सतह पर खुश हूं।'

'और सतह के नीचे बेसमेंट में?'

'बेसमेंट में नहीं– सतह से ऊपर उठने पर यह सब बड़ा लिजलिजा लगता है।'

'यह सब! याने?'

'यह जीवन शैली।'

'लेकिन यह तुम्हारा अपना कम्पोजीशन है।'

'अपने किये में दोष नहीं होता क्या?'

'गुण भी होंगे– उन पर......'

'किसके गुण?'

'जिसे साथी चुना है।'

'मैंने उसके दोष की बात नहीं की थी। उसमें नहीं मेरे निर्णय में....।'

'ओ।'

'लगता है, आ गये।'

रूना ऐसी तो न थी। वह खंजन सी युवती कहा खो गयी? यह तो कोई और है, – अपने आपको अपने ही न्यायाधिकरण में दोषी बताने वाली।

'यह लो सीमा हाजिर हैं तुम्हारे कोर्ट में।'

'नमस्ते।'

'नमस्ते-नमस्ते। माफ करेंगी। मुझे देर

हो गयी।'

'कोई बात नहीं। आ तो गये। रूनी निराश हो रही थी।'

'नहीं-नहीं। मैं तो बता रही थी.....।'

'हां, इसे मेरे कारण बहुत परेशानी होती है।'

'प्रतीक्षा करती है— इसमें परेशानी क्या।'

'यह तो यही बतायेगी। क्यों?'

'मुझे आदत हो गयी है।'

'परेशानी उठाने की?'

'नहीं। परेशानी नहीं— इस तरह रेगुलरली इर्रेगुलर रूटीन की।'

'भई वाह रूनी! वाह। बातों में कविता करने की तुम्हारी आदत! बनी हुई है।'

'और मुझे समझ नहीं आती— यह कविता-वविता अपने वश की नहीं है। अरे इतना मत डालो मेरे प्लेट में। अपनी मेहमान को दो।'

'हम लोग तो आपकी राह देखते-देखते कितना खाते रहे हैं।'

'मैं इसे कहता हूं मेरी राह न देखा करे। हम भटके हुओं की राह देखना अपना समय बर्बाद करना है।'

'वाह। कविता तो आप भी करते हैं।'

'अगर इसे कविता कहते हैं तो यह इनकी संगत के असर से हुआ है।'

रूना क्यों परेशान है! इस आदमी में क्या बुरा है! सूरत! इसे तो फिल्मों में जाना था राजकुमार बनता, राजकुमार। मैं अपलक उसे देखने लगी थी। वह बोलता नहीं तो न जाने कितनी देर देखती रह जाती।

'आप आयीं और मुझे बाहर जाना पड़ रहा है। माफ करेंगी।'

'माफ मत करना, सिम्मी।'

'मेरी ओर से तुम तो कर ही दोगी।' — मुझे रूना से ईर्षा हो रही थी।

'कभी नहीं।'

'देखा आपने।'

तभी कोई बाहर से आकर बता गया कि गाड़ी पेट्रोल पंप से आ गयी है।

'तुम इनका सामान-वामान ठीक करोगी न!' मैंने रूना से कहा।

'सब ठीक रहता है— कब चल देना हो, इस बात के लिए इनकी अटैची, मेरा मन अब पहले से तैयार रहता है। पहले बड़ी भागमभाग मचती थी।'

'और रोना-धोना भी।' —, गुड्डू ने रूना की ओर पैतृक ममत्व से भर कर देखते हुए कहा।

'अच्छा तुम रोती थीं?'

'मैं क्यों रोऊंगी!' रूना ने अपनी दुर्बलता को नकारते हुए कहा। यह किशोरवत अस्वीकृति उसकी उम्र से बिल्कुल मेल नहीं खा रही थी।

'आप कब लौटेंगे?' यह उत्सुकता रूना की होनी चाहिए थी, बोलने के बाद मैंने अपराधबोध से भर कर रूना को देखा।

'कह नहीं सकता।'

'सिम्मी तेरे सभी सवालों का यही उत्तर होगा। तू देखती रह।'

मैं सचमुच देखती रही। यह तो वृन्दावन का कृष्ण कन्हैया है। (क्रमशः)

# मानसिकता परिवर्तन

**☐ कमल टावरी**

मानसिकता एक दृष्टिकोण है। वह जिस वस्तु को जिस नज़र से देखता है, वैसा ही उसे दिखायी देता है। अपनी क्षमता, वातावरण, अनुभव तथा समय को ध्यान में रखते हुए, हमारा दृष्टिकोण बनता है। किसी ने ठीक ही कहा है कि आधे ग्लास में भरे पानी को, आधा खाली और आधा भरा भी कहा जा सकता है। यह दृष्टिकोण का ही अंतर है।

मानसिकता परिवर्तन में कई बातें सम्मिलित हैं। आज की विसंगतियों से मानव त्रस्त है। इसके लिए कोई शिक्षा को दोष देता है तो कोई वातावरण को और कोई परिवर्तन को। कोई ऊपर से सुधार की बात करता है, तो कोई नीचे से सुधार की आवश्यकता महसूस करता है। स्पष्ट है कि कोई सरल उपाय समझ पाना मुश्किल है। बहरहाल मानसिकता के सम्बंध में यही कहा जा सकता है कि हमें मूलभूत रूप से एक संकलित दृष्टिकोण अपनाना बहुत ज़रूरी है। इसके लिए जहां समन्वित प्रशिक्षण ज़रूरी है, वहीं अच्छे काम करनेवालों की सफलता का राज जानना तथा उनकी कार्य-प्रणाली का अध्ययन करना भी ज़रूरी है। आज की मानसिकता बड़े पैमाने पर दूषित महसूस हो रही है। तथापि वह अपने आप नहीं हुई है। और यदि उसे ठीक होना है तो वह अपने आप ठीक नहीं होगा। उसके लिए सुधारात्मक प्रयास की आवश्यकता होगी। ऐसी स्थिति में मानसिकता परिवर्तन के लिए कुछ विन्‌ विचारणीय हैं :

(१) मानसिकता को रचनात्मक बनाये रखने के लिए आशावादी होना बहुत ज़रूरी है। अर्थात् निराशावादी स्थिति में, जिनके आशा के डोर टूट जायें, उनके लिए कुछ नहीं रह जाता। पुनर्जन्म में यदि विश्वास न हो तो भी उसके कामों का यदि अध्ययन करें तो आशा तथा डर अंकुश के रूप में प्रेरणा देते हैं। निरंकुश होकर कार्य करना, व्यवस्था के नियमों के प्रतिकूल नहीं है। आशावादी बने रहने में जहां मस्तिष्क में अच्छे विचारों का फैलाव होता है, वहीं निराशावाद से उत्पन्न कई बीमारियां भी हमें बहुत कुछ सिखाती हैं।

(२) धार्मिक विचार, प्रेरणादायक चिन्तन और अच्छा साहित्य अच्छी मानसिकता विकसित करने के लिए बड़ा लाभदायक हो सकता है। तुलसीदास जी ने

कहा है –

**जाकी रही भावना जैसी,**
**प्रभु मूरत देखी तिन तैसी ।**

स्पष्ट है कि मानसिकता को बनाये रखने में इन कार्यक्रमों का बहुत योगदान है ।

(३) मानसिकता को उज्ज्वल बनाते समय आर्थिक स्थिति को भी नज़र अंदाज नहीं किया जा सकता । आज का युग अर्थ प्रधान है और जीवन में रोजमर्रा के तजुर्बों में, एन-केन-प्रकारेण धन तथा संसाधन अधिकाधिक एकत्रित करने पर ही अधिक ज़ोर दिया जाता है । यह दुर्भाग्य की बात है कि व्यक्ति का मूल्यांकन उसके पास उपलब्ध अर्थ से ही होता है । यह स्थिति चाहे जितनी बुरी हो, मगर वास्तविकता यही है और वास्तविकता से मानसिकता को हटाया नहीं जा सकता । ऐसी स्थिति में अर्थ सम्पन्नता को ज़रूरी मानते हुए व्यय कम करना और आय बढ़ाना आवश्यक है । अतः जहां एक ओर अपने खाली समय में अपनी मजबूतियों के आधार पर नये आर्थिक कमाई के जरिये ढूंढ़ने चाहिए, वहीं फुरसत के समय कोई ग्रामोद्योगी कार्यक्रम भी सोचा जा सकता है । ऐसे कई व्यक्ति हैं जो लिखने-पढ़ने, टाईपिंग तथा खेती-बाड़ी आदि के माध्यम से अपने फ़ुरसत के समय में आय बढ़ाने के साधन अपना सकते हैं ।

अनेक समुदायों में दहेज अनिवार्य है । अतः लड़कियों को विशेषरूप से स्वावलम्बी बनाना ही इसका विकल्प है । इसी तरह कपड़ा सिलकर डिज़ाइन करना, प्रतिस्पर्धाओं में भाग लेकर कार्यक्रमों के माध्यम से आय बढ़ायी जा सकती है ।

(४) अनावश्यक स्पर्धा से बचें । ऐसे कई व्यक्तियों के उदाहरण हमें प्रतिदिन दिखायी देते हैं कि अनावश्यक स्पर्धा में फंस कर अपनी मानसिकता बिगाड़ लेते हैं । जहां एक और न्यायोचित आय मिलनी चाहिए, वहीं अनावश्यक स्पर्धा में फंस कर अपनी मानसिकता ख़राब कर लेना किसी भी दृष्टि से उचित नहीं है । कई व्यक्ति अपनी प्रोन्नतियां, नियुक्ति के स्थान, मान-सम्मान प्राप्त करने के लिए ऐसे हथकंडे अपनाते हैं, जिनके परिणाम स्वाभिमान गंवाना एवं मानसिकता को खराब करना होता है । अपनी क्षमता का जहां पूरा इस्तेमाल नहीं हो रहा हो, वहां से हटकर दूसरे स्थान पर प्रयास किया जा सकता है । भीड़ में अनावश्यक रूप से घुसना हर वक्त आवश्यक नहीं । अतः जहां एक ओर अपनी विश्वसनीयता बराबर बनाये रखना चाहिए, वहीं अनावश्यक स्पर्धा से बचना भी रचनात्मक मानसिकता बनाये रखने के लिए अत्यावश्यक है ।

(५) रचनात्मक मानसिकता बनाने और विकसित करने के लिए खुलेपन की नीति तथा आत्म-विश्लेषण अत्यावश्यक है । मांस-पेशियों से बने इस मानव शरीर में असीमित संभावनाएं हैं । आत्म-चिंतन, विश्लेषण आदि के माध्यम से अपनी कमज़ोरियों पर जहां अंकुश लग सकता है, वहीं मजबूतियों और अच्छाइयों को बड़े पैमाने पर फैलाया जा सकता है ।

आवश्यकता है सही दृष्टिकोण की, जो आती है अपने विचारों को खुला करने से। कुंठा की भावना को दूर करने के लिए जहां कई सुझाव हैं, वहीं अपनी मजबूतियों को बढ़ाने के भी कई उपाय हैं।

(६) **सही संगत :** कोई मित्र हो या संबंधी, जीवन-साथी, बच्चे हों या बुजुर्ग, हम जिनके साथ उठते-बैठते हैं, काम करते हैं, वे हमारे जीवन के अनिवार्य अंग बन जाते हैं। हमारी मानसिकता रचनात्मक, विकासात्मक एवं व्यावहारिक बनाये रखने के लिए हमें ऐसे व्यक्तियों और पुस्तकों का साथ लेना चाहिए जो केवल निगेटिव दृष्टिकोण से न देखें। कई अख़बार पीत पत्रकारिता के रूप में प्रसिद्ध हैं, इन्हें अपने से जितना दूर रखा जा सके, उतना ही अच्छा है। मानसिक तनाव के अलावा इसमें बहुत कम देखने लायक रहता है। मानसिकता को सही दृष्टिकोण से देखने के लिए भी प्रशिक्षण जहां ज़रूरी है, वहीं सफलता की कहानियों का अध्ययन ज़रूरी है। कई कार्यक्रम महज कागज पर बहुत अच्छे दिखायी देते हैं। जिस ढंग से वे चिकने और खुबसूरत कागज़ों पर प्रकाशित किये जाते हैं, वे आकर्षक तो बने हैं, किंतु सच्चाई से बहुत दूर निकल जाते हैं। ऐसी स्थिति में ज़रूरी है, सफलता की कहानियों का वर्णन। उसे कटु-बिंदुओं की ओर से परीक्षण कर लें, जो सही दृष्टि से देखा जा सके।

(७) समय बड़ी-बड़ी परीक्षाओं से उत्तम परीक्षा है। हमारे यहां समय से परीक्षित वस्तुएं, कल्पनाएं, विचार, धारणाएं हर समाज तथा परिवार में मौजूद हैं। शाश्वत मानसिकता के लिए निहायत ज़रूरी परीक्षा है। जो वस्तुएं कल्पना, विचार तथा समय के साथ टिकी हैं, वे ही सही हैं। विज्ञान के इस युग में आज कई ऐसे उत्पाद हैं, जो कुछ ही दशकों में अस्वीकृत किये जा चुके हैं। जीवन के सर्किल में बहुत कुछ तेजी से बीसवीं शताब्दी में ही आया और चला भी गया। प्लास्टिक, पैकेजिंग के सामान, टेलरिंग, बड़ी-बड़ी मिलें इसी सदी में आयीं और चली गयीं या जा रही हैं। पेड़ों का बड़े पैमाने पर कटना और फिर बड़े पैमाने पर पुनः लगाया जाना, यह सब हमारे सामने है। ऐसी स्थिति में समय की परीक्षा की महत्ता को हम कम न समझें।

उपरोक्त कुछ मिसालें ऐसी है, जिन पर बहुत कुछ लिखा और पढ़ा जा सकता है। देखना यह है कि हम अपने जीवन के प्रति क्या दृष्टिकोण रखतें हैं – जीवन में हम क्या चाहते हैं।

**– खादी एवं ग्रामोद्योग कमीशन,**
**इर्ला, विलेपार्ले (प.) बंबई - ४०० ०५६**

एक विचारोत्तेजक संगोष्ठी

# क्या लक्ष्मी अंधकार से प्रकाश की ओर ले जा सकती है ?

आयोजक : ☐ **जगदीश किंजल्क**

**मनुष्य को प्रकाश की शाश्वत चाह है। वह क्षण को भी अंधकार बर्दाश्त नहीं कर पाता। प्रकाश की ओर जाने की यह आदिम चाह ही मनुष्य को मनुष्य की श्रेणी प्रदान करती है अन्यथा मनुष्य पशु है और पिशाच भी। विद्या की देवी सरस्वती, मनुष्य को प्रकाश की ओर ले जाती है, यह सर्वमान्य तथ्य है परन्तु आज के भौतिकतावादी युग में सरस्वती का दर्जा घटा है और धन की देवी 'लक्ष्मी' का दर्जा बढ़ गया है। आज लोग प्रकाश की ओर जाने हेतु सरस्वती की नहीं, लक्ष्मी की आराधना करने लगे हैं। उसका आह्वान करने लगे हैं। लक्ष्मी के माध्यम से प्रकाश प्राप्ति की होड़ में आज सारा संसार डूब गया है, और शायद उन्हें सफलताएँ भी मिल रही हैं। परन्तु आज यह एक महत्वपूर्ण और सामयिक प्रश्न उठ खड़ा होता है कि क्या सच में लक्ष्मी अंधकार से प्रकाश की ओर ले जा सकती है ? इस महत्वपूर्ण प्रश्न का उत्तर दे रहे हैं देश के कुछ सुप्रसिद्ध चिंतक विज्ञान और साहित्यकार।**

## डॉ. चन्द्रप्रकाश वर्मा (भोपाल)

धन की देवी लक्ष्मी ज्योति के शुभ्र पांवड़ों पर अपने चरण कमल धरती दीपावली के प्रकाश पर्व में भूतल पर उतरती है। हम अपने अपने घरों में उसका विधिवत् पूजन कर दीप जला उसकी अगवानी करते हैं कि वह हमें धन-धान्य से परिपूर्ण करे। धन जीवन की सुख-सुविधाओं के मूल में है इसलिये मानव को उसकी उपलब्धि की तीव्र चाह है।

विचारणीय बात तो यह है कि धन की सार्थकता उसके उपयोग में ही निहित है। धन यदि अनन्त तृष्णा का ही एक सिलसिला बन कर हमारे जीवन में आता है तो शांति के क्षण हमारे जीवन से चिर विदा ले लेंगे। धन का प्रेत हमें पल भर भी विराम न लेने देगा और धन की लालसा हमें निरन्तर ठौर-ठौर भटकाती रहेगी। उचित अनुचित साधनों का विवेक नष्ट हो जायेगा। धन जो कुछ खरीदता है वह केवल देह के लिए। आत्मा के लिए वह न कभी कुछ खरीद सका और न कभी कुछ खरीद सकेगा। देह-बुद्धि का बढ़ना और आत्म-बुद्धि का लोप, यह अंधकार से प्रकाश की ओर जाने की प्रक्रिया

तो नहीं है?

वास्तव में संचय की सार्थकता तो भोग से अधिक दान में ही है। प्रवृत्ति और निवृत्ति का समुचित संतुलन ही जीवन की मांगलिक स्थिति होगी। यह कवि-कथन धन के संदर्भ में कितना दिशा दर्शक है।

**पानी बाढ़े नाव में, घर में बाढ़े दाम,**
**दोनों हाथ उलीचिये यही सयानो काम।**

यदि ऐसा ही है तो लक्ष्मी का इंगित प्रकाश की दिशा में है और यदि ऐसा नहीं है तो दीपकों का कितना ही बाह्य प्रकाश बिखरा रहे, आत्मा का अंतर-लोक तो तिमिरग्रस्त ही रहेगा और लक्ष्मी अंधकार से घनान्धकार की ओर ही ले जायेगी, प्रकाश की ओर नहीं। प्रकाश की देवी किसी विडम्बना का लक्ष्य न बने यह तो मानव के सद् असद् चिन्तन पर ही निर्भर है।

* * *

## सत्यकाम विद्यालंकार (थाना)

लक्ष्मी धन वैभव का प्रतीक शब्द है। दीपावली पर उसका पूजन धनिक वणिक समुदाय की ओर से मांगलिक दीप जला कर किया जाता है और प्रार्थना की जाती है कि लक्ष्मी अपने भक्तों के जीवन को सुख-सौभाग्य के प्रकाश से प्रकाशित करे। भगवती लक्ष्मी भगवान की ही पालन-पोषणदायिनी शक्ति का नाम है। भगवान दयालु है किन्तु न्यायकारी भी है, यदि लक्ष्मी के उपासकों ने धर्मानुकूल व्यापार-व्यवसाय से लक्ष्मी की कृपा प्राप्त की है तो अवश्य वह उपार्जित धन-वैभव उन्हें अंधकार से प्रकाश की ओर ले जायेगा अन्यथा वही वैभव उन्हें और भी गहरे अंधकार में डुबा देगा।

ईश्वरीय वाणी रूप प्राप्त वैदिक साहित्य में 'लक्ष्मी' शब्द अनेक बार आया है। अथर्ववेद के काण्ड ७ सूक्त ११५ के दूसरे चौथे मंत्रों के अंश हैं –

**'या मा लक्ष्मी : पतयालू-**
**रजुष्टाभिचस्कन्द वन्दनेव वृक्ष**
**रमन्तां पुण्या लक्ष्मीर्या :**
**पापीस्ता अनीनशं**

पुण्य कार्यों से उपार्जित लक्ष्मी आनन्द देने वाली होती है। पापी जन उसका उपभोग करने के अधिकारी नहीं बनते।

दूसरे मंत्र में प्रार्थना है कि भगवन मुझे ऐसी लक्ष्मी का प्रसाद मिले जो मुझे पतन की ओर न ले जाये और मुझे इस प्रकार भोग-विलास में जकड़ न ले जैसे लता वृक्ष को अपनी बेल में बांधकर उसे सुखा देती है। वेद ने लक्ष्मी के सदुपयोग का मार्ग भी दिखलाया है –

**'शतहस्त समाहर सहस्र हस्त संकिर,**
**कृतस्य कार्यस्य चेह स्फाति समावह'**

अर्थात् सौ हाथों से धन कमाओ और हजार हाथों से बांटो। अपने पुरुषार्थ का सहस्रगुण शुभ परिणाम प्राप्त करो।

वेदों में दान की अपार महिमा है। कल्याणकारी कार्यों में दान देने की समर्थता प्राप्त करने के लिए जिस लक्ष्मी का आराधन किया जायेगा वही लक्ष्मी धनाढ्य व्यक्ति को अंधकार से प्रकाश की ओर ले जायेगी। आज

के समाज में नब्बे प्रतिशत समृद्ध व्यक्ति इसी अंधकार में भटक रहे हैं। उनका धन ही उनके एवं समस्त समाज के दुखों का कारण बना हुआ है।

* * *

## शंकरदयाल सिंह (पटना)

जमाना लक्ष्मीपुत्रों का है, भले उन्हें कम दिखलाई दे, लेकिन इस तथ्य से विलग नहीं हुआ जा सकता है कि आज प्रकाश की ठेकेदारी भी उन्हीं की है। सरस्वती और लक्ष्मी का वैर जग जाहिर है। जहां लक्ष्मीजी रहें वहां सरस्वती की कृपा कम और जहां सरस्वती का वास हुआ, वहां लक्ष्मीजी रूठीं। फिर यही बात है प्रकाश और अंधकार के परिवेश में भी, जहां प्रकाश होगा वहां अंधकार नहीं रहेगा और अंधकार घिरा तो प्रकाश गायब।

इतिहास में शूरता, वीरता के साथ ही विद्वता की चर्चा जरूर होती रही है, लेकिन किसी धनाढ्य का जिक्र भले आ गया हो, उसे कहीं स्थान नहीं मिला। अकबर कालीन इतिहास में दो महापुरूष पैदा हुए। महात्मा तुलसीदास और महाराणा प्रताप। दोनों में से किसी ने भी दिल्ली-दरबार के आगे सिर नहीं झुकाया और किसी धन-विलास के आकांक्षी नहीं हुए। आज इतिहास महाराणा प्रताप और गोस्वामी तुलसीदास का ही नाम लेता है, किसी लक्ष्मीपुत्र को याद नही करता।

इसलिये किंजल्क भाई, अंधकार से प्रकाश की ओर पहुंचने के लिए मात्र लक्ष्मी की ही नहीं सरस्वती की भी कृपा चाहिये। जीवन का संतुलन अर्थ ही नहीं, काम और मोक्ष भी है। ज्ञान प्रकाश है और मोह अंधकार। मोह का बंधन तोड़े बिना ज्ञान की प्राप्ति कठिन है।

* * *

## डॉ. कृष्णा अग्निहोत्री (खण्डवा)

वैसे तो दीपावली पर लक्ष्मी पूजन के पश्चात् ही अमावस्या का अंधकार दिये जलाकर दूर किया जाता है। परन्तु आधुनिक युग में लक्ष्मी द्वारा चेतना को खरीदा जा सकता है। मेरा तात्पर्य है कि लक्ष्मीजी अब अधिक मचल उठी हैं। उन्होंने अपना आधिपत्य कुछ इस तरह फैलाया है कि उनके बिना नये युग के किसी भी क्षेत्र का अंधकार दूर नहीं किया जा सकता। मसलन बेटी, बेटे को नौकरी का प्रकाश देना हो तो दुहाई लक्ष्मीजी की, बॉस का फेवर चाहिये तो पुकारिये लक्ष्मीजी को, बहू-बेटे का प्यार चाहिये तो दिखाइये लक्ष्मीजी को, चुनाव लड़कर देश का अंधकार मिटाना हो तो मुंह खाल दीजिये लक्ष्मी का। आज, जीने की प्रत्येक सीढ़ी की सफलता के प्रकाश में आने के लिए प्रार्थना करो लक्ष्मीजी की। कितना नयापन है यह कि भारतीय भौतिकवादिता का दिया अब केवल लक्ष्मीजी ही जलाती हैं... चेतना का अंधकार यदि है तो क्या...। बोलो मां लक्ष्मी की जै जिसके आधार पर हम वह सब कुछ पा सकते हैं जिसके हम वास्तविक अधिकारी नहीं।

* * *

## डॉ. मारुति नंदन तिवारी (काशी)

भारतीय परम्परा में देवी-देवताओं की कल्पना के मूल में एक गहन चिन्तन और तार्किकता देखी जा सकती है। जीवन की पूर्णता के लिए ऐश्वर्य और समृद्धि साधन के रूप में नितान्त आवश्यक है, जिसका महत्व एक पुरुषार्थ (अर्थ) के रूप में भारतीय परम्परा में प्रारम्भ से ही स्वीकृत रहा है और जिसकी महत्ता को शताब्दियों पूर्व कौटिल्य ने अपने 'अर्थशास्त्र' में निरूपित किया था। इस मनःस्थिति और अभिव्यक्ति के फलस्वरूप समृद्धि की देवी लक्ष्मी की कल्पना की गयी और जीवन की पूर्णता के सूचक पद्म को उनके करों में और वाहन के रूप में दिखाया गया, किन्तु लक्ष्मी को समाज में धीरे-धीरे साधन के स्थान पर साध्य के रूप में स्वीकार किया जाने लगा। लक्ष्मी की इस अन्तहीन इच्छा के कारण ही तरह-तरह की सामाजिक विकृतियां आने लगीं। इस स्थिति के फलस्वरूप लक्ष्मी के वाहन के रूप में उलूक को सम्बद्ध किया गया जो मूर्खता और अंधकार का प्रतीक है।

लक्ष्मी यदि बुद्धि के साथ संपृक्त हो तो जीवन के लिए अर्थपूर्ण बन जाती हैं। इसी कारण लक्ष्मी के साथ बुद्धि की देवी सरस्वती और बुद्धि के देवता गणेश का सामंजस्य आवश्यक है। इतिहास साक्षी है कि प्राचीन भारत में विशाल मंदिरों और मूर्तियों के निर्माण तथा अन्य सामाजिक कार्यों में लक्ष्मीपति श्रेष्ठी गणों का अविस्मरणीय योगदान रहा है। ऐसी स्थिति में लक्ष्मी का मर्यादित और नियंत्रित तथा विवेक या बुद्धि से संपृक्त रूप ही अंधकार से प्रकाश की ओर ले जाने में समर्थ हो सकता है।

* * *

## डॉ. शिव शर्मा (उज्जैन)

लक्ष्मीजी मारुति कार में तो चलती नहीं जो कि फट से अंधेरा छोड़ कर प्रकाश में आ जायें। उनके पास स्विस बैंक में खाता भी नहीं है जिसमें वे कमीशन जमा करा सकें। उनके पास तो वही पुराना वाहन है उल्लू। वह उल्लू का पट्ठा दिन भर तो सोता रहेगा और रात को अंधेरे में चलेगा। अंधेरे में चल कर, अंधेरे तक ही चलेगा और प्रकाश आने के पूर्व ही पुनः सो जायेगा। वह इस देश के विपक्ष की तरह है, जो दिन रात चलता है किन्तु फिर वहीं का वहीं नजर आता है। लक्ष्मीजी को अपना वाहन बदलना होगा तभी वे अंधकार से प्रकाश की ओर जा सकती हैं।

लक्ष्मीजी को प्रकाश में जाने की जरूरत भी क्या है? कालाधन, काली कमाई और काली रात जब उन्हें बेहद पसंद है तो फिर प्रकाश की जरूरत भी क्या है? उन्हें कौन-सी फिल्मी पब्लिसिटी करानी है जो प्रकाश में आना पड़े। जब सब तरफ अंधेरा है और देश के नागरिक जानबूझ कर आंखें बन्द कर, अंधकार को स्वीकार कर रहे हों तब प्रकाश की जरूरत भी क्या है और किसे है? लेखकों और पत्रकारों को कौन-सा कष्ट है कि वे बार-बार अंधकार से प्रकाश की ओर जाने में

ोर मारते रहते हैं ? अंधेरा तो सारे संसार में व्याप्त हो रहा है और सदैव रहेगा ।

* * *

## संतोष खरे (सतना)

लक्ष्मी तो प्रकाश की ओर जाने वालों को अंधेरे की ओर चलने के लिए प्रेरित करती है। इसके रूप का जादू ऐसा सिर चढ़कर बोलता है कि बड़े-बड़े संयमी, तपस्वी इसे प्राप्त करने के लिए हर काले अंधेरे मार्ग पर चलने के लिए तैयार हो जाते हैं। इस भौतिकतावादी युग का भौतिकवादी सुख प्राप्त करने के आकांक्षी लोग वे चाहे किसी भी वर्ग या स्तर के हों, लक्ष्मीको प्राप्त करने के लिए जीवन के प्रकाशवान रास्तों को छोड़ बड़ी आसानी से अंधेरे रास्तों पर चलने को तैयार हो जाते हैं। लक्ष्मी की प्रवृत्ति ऐसी होती है कि वह मानव को अपने आकर्षण में कुछ इस तरह बांध लेती है कि वह उसके पीछे पीछे पागलों की तरह भागने लगता है। फिर वह यह नहीं देखता कि वह जिस रास्ते पर चल रहा है वह उसे जीवन के अंधकार की ओर ले जाता है कि प्रकाश की ओर? कभी-कभी तो नौबत यहां तक आ जाती है कि वह आजादी के मुक्त और प्रकाशित वातावरण को छोड़ बंदीगृह की अंधेरी काल कोठरी में जा पहुंचता है। मेरा तो यही मत है कि लक्ष्मी अंधकार से और गहन अंधकार की ओर ले जाती है। प्रकाश की ओर ले जाने का तो प्रश्न ही नहीं उठता।

* * *

## हरि जोशी (भोपाल)

लक्ष्मी क्या नहीं कर सकती ? अंधकार से प्रकाश की ओर तो ले ही जा सकती है। लक्ष्मी बिल्कुल न मिले तो मनुष्य अंधकार में ही पड़ा रहे, किंतु जब अधिक लक्ष्मी मिल जाती है तो कई बुराइयां भी साथ लाती है। आदमी घमंडी हो जाता है। विश्राम और ऐश्वर्य भोगने वाले बच्चे, न गरीबों का दुख दर्द समझते हैं, न कष्ट उठाने की क्षमता सहेज कर रखते हैं। शराबी, हत्यारा और अपराधी बनाना भी लक्ष्मी के ही खेल हैं।

भौतिक रूप से लक्ष्मी अंधकार से प्रकाश की ओर ले जाती है किंतु जब अधिक मात्रा में अनार्जित धन प्राप्त होने लगता है तो वह घर की सुख-शांति छीन लेता है। अधिक लक्ष्मी व्यक्ति को अपना गुलाम या चौकीदार बना देती है। अधिक संपत्ति की ललक द्यूत क्रीड़ा कराती है और द्यूत क्रीड़ा के बाद भी गतिविधियां विराम नहीं लेतीं। अतः लक्ष्मी आज के संदर्भ में तो प्रकाश की ओर ही ले जाती है।

⁂

मन लोभी मन लालची, मन चंचल मन चोर ।
मन के मते ना चालिये, पलक पलक मन और ।।

# दीपक एक दृष्टिकोण अनेक

□

## उमाशंकर चतुर्वेदी

छोटे से दीपक ने दुनिया के हर इन्सान को राह दिखायी है। दीपक वीतराग होता है, उसे न किसी से द्वेष और न ही राग होता है। वह सबको बराबर प्रकाश देता है और अन्धकार में राह दिखाता है चाहे कोई राहगीर हो, राहजन हो या रहबर। स्वयं जलकर दूसरों को प्रकाश दिखाना उसका कर्तव्य है। वह मन्दिर में भी जलता है, मस्जिद में भी, गुरुद्वारे और गिरजाघर में भी जलता है। महफिलों को रोशन करता है तो श्मशान के सुनसान और वीराने में भी जलता है। वस्ल की रात में भी जलता है तो रंज की रात में भी। महलों को रोशनी से भरता है तो गरीबों की झोपड़ियों को भी प्रकाशित करता है। दीपक एक है लेकिन लोगों के नजरिए या दृष्टिकोण उसके प्रति अलग-अलग हैं।

वेद पुराणों में दीपक को हमारी संस्कृति का प्रतीक बताया गया है। दीपक हमें अंधकार से प्रकाश की ओर ले जाता है। महाभारत में कहा गया है कि 'दीपक को यत्नपूर्वक जलाकर अंधकार का बिनाश कीजिये। दीपक सत्य पर आधारित हो, तप का तेल हो, दया की बाती और क्षमा की लौ वाला दीपक अंधकार को समाप्त कर देगा।'

**सत्याधारस्तपस्तैल,**
**दया वर्ति क्षमा शिखा।**
**अन्धकारप्रवेष्टव्ये,**
**दीपो यत्नेन वार्यताम्॥**

महाकवि कालिदास ने लिखा है कि जि प्रकार ज्योति से दीपक, मन्दाकिनी आकाश, संस्कृत वाणी से विद्वान शोभि होता है, वैसे ही पार्वतीजी से हिमालय पवि हुआ है।

**प्रभा महत्या शिखयेव दीपस्त्रि**
**मार्गयेव त्रिदिवस्य मार्गः।**
**संस्कारवत्येव गिरा मनीषी,**
**तया स पूतश्च विभूषितश्च।**

दीपक को सूर्य, चन्द्र, धर्म और सुपु बताया गया है। रात्रि में चन्द्रमा ही दीपक होता है, प्रातः सूर्य, तीनों लोकों में धर्म और कुल में सुपुत्र ही दीपक होता है।

**प्रदोषे दीपकश्चन्द्रः**
**प्रभाते दीपको रविः।**
**त्रैलोक्यदीपको धर्मः**
**सुपुत्र कुलदीपकः।**

उधर दूसरा दृष्टिकोण भी देखिए। रहीम कवि ने दीपक की उपमा कपूत से दी है। जिस प्रकार दीपक जलाने से प्रकाश देता है और

बुझने पर अंधकार, उसी प्रकार कुपूत अपने बचपन में अच्छा लगता है और बड़े होने पर अंधकार जैसे काले कर्म करता है.

**जो रहीम गति दीप की,**
**कुल कपूत गति सोय**
**बारौ उजियारौ करै,**
**बढ़े अंधेरो होय ।**

दार्शनिकों ने दीपक में ईश्वर का अंश, खुदा का नूर बताया है । इस दीपक को कोई नहीं बुझा सकता है ।

**नूरे खुदा है कुफ्र की हरकत पै खंदाजन**
**फूंकों से ये चिराग बुझाया न जायेगा ।**

एक उर्दू शायर ने चिराग से नयी जिन्दगी प्राप्त की, उसे एक नयी रोशनी मिली –

**दिले तबाह ने इक ताजा जिन्दगी पायी**
**तुम्हें चिराग मिला, हमने रोशनी पायी ।**

एक अन्य उर्दू शायर ने दिए की अहसान-फरामोशी महसूस की है । जिसको हमने बचाया उसी ने हम पर वार किया । एक शायर की जुबानी देखिए –

**मैंने जिसको दूर रक्खा था**
**आँधियों के वार से,**
**उस दिये की लौ से दिल के**
**साज का दामन जला ।**

एक अन्य शायर ने मुहब्बत की शमा जलाई । वह शमा जो एक बार बुझी फिर न जली सो नहीं जली –

**ठण्डी हुई जो शमाए मुहब्बत इक बार**
**वो फिर न जली, फिर न जली,**
**फिर न जली ।**

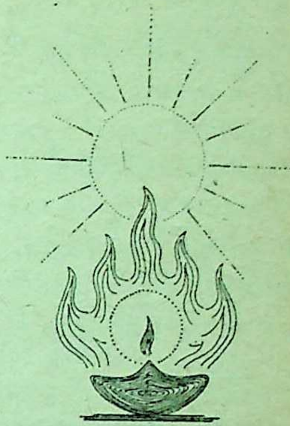

संत तुलसीदासजी को दीपक की शिखा बड़ी पवित्र और सुन्दर दिखी । सीताजी की सुन्दरता के लिए दीपक की लौ को ही चुना ।

**सुन्दरता कहुं सुन्दर करई,**
**छबि गृह दीप शिखा जनु बरई ।**

दूसरी ओर तुलसीदासजी ने ही युवतियों के तन को दीपशिखा के समान बताया है और चेतावनी दी है कि देह रूपी दीप शिखा पर पतिंगे मत बनो –

**दीप सिखा सम युवति तन,**
**मन जनि होसि पतंग ।**

संस्कृत के कवि कालिदास ने इन्दुमती को दीप शिखा-सी सुन्दर बताया है –

**संचारिणी दीप शिखेव रात्रौ**
**यं यं व्यतीय य पतिवरा स्वा ।**

रीतिकालीन कवि केशव ने परनारी को दीपशिखा बताया है, जो पर पुरुष को जला देती है –

**दीपति दीप शिखा सम बारी**
**जारत हैं नर को पर नारी ।**

चिराग तो जलता है और सभी को समान रूप से प्रकाश देता है, लेकिन आदमी उसे अपने नजरिये से देखता है। शवे-विसाल (मिलन की रात) में कोई चिराग को बुझाता है तो कोई उसे जलाये रखता है। एक व्यक्ति अपनी मिलनरात्रि में चिराग के जलने में ईर्ष्या महसूस करता है तो दूसरा व्यक्ति चिराग के जलने में खुशी का इजहार करता है, वकौल शायर तासीर –

**शबे-विसाल है गुल कर दो**
**इन चिरागों को**
**खुशी की बज्म है,**
**क्या काम जलने वालों का ।**

दूसरा नजरिया देखिए

**शबे विसाल है रोशन करो**
**चिरागों को**
**खुशी की बज्म है,**
**जलने दो जलने वालों को ।**

बहादुर शाह जफर का नजरिया देखिए जो शमा और परवाना का परस्पर सम्बन्ध यों बताते हैं–

**जिस तरह से शम् अ पर**
**परवाना होता है फिदा**
**उस तरह से शम् अ उसके**
**रुख पै परवाना रहे ।**

कुछ शायरों ने व्यवस्था की आलोचना के लिए दीपक या चिराग का प्रयोग किया है। जब चिराग नहीं थे तो रोशनी थी और जब चिराग जलने लगे तो रोशनी कम पड़ गयी-

**न थे चिराग तो**
**इक चांदनी सी फैली**
**जले चिराग तो अब**
**घर में रोशनी कम है**

स्वर्गीय दुष्यंत कुमार का नजरिया दे जो यों फरमाते हैं –

**कहां तो तय था चिरागां**
**हरेक घर के लि**
**कहां चिराग मयस्सर नहीं**
**शहर के लिए ।**

फिराक गोरखपुरी का मन जब प्रसन्न है अपनी प्रियतमा की मुस्कराहट में मन्दिर चिराग की झिलमिलाहट दिखती है-

**ये फूट रही है मुस्कराहट की किर**
**मन्दिर में चिराग झिलमिलाये जैसे ।**

तुलसीदासजी ने राम नाम के मणि दीप अन्दर और बाहर प्रकाश की कल्पना की है-

**राम नाम मणिदीप धर,**
**जीह देहरी द्वा**
**तुलसी भीतर बाहिरो**
**जो चाहसि उजियार ।**

इस प्रकार दीपक एक है, उसके सम्बन्ध दृष्टिकोण अनेक हैं। क्या बताया जाय, सबने अपने मन के अनुसार अच्छे-बुरे, सुख-दुख की कल्पना दीपक में की है। अन्त में उसके लिए यही कहा जा सकता है–

**क्या बतायें हम तुम्हें शम्मा की किस्मत**
**जलने के सिवा उसे रखा ही क्या है?**

**– एफ ४९/९ साउथ टी. टी. नगर,**
**भोपाल - ४६२ ००३**

□

आंचलिक संस्कृति

# दीपावली पर बैल पूजा

□ प्रभात कुमार सिंघल

दीपमालाओं के आलोक से आलोकित नगर-डगर, मांडनों के तेज से महकते घर-आंगन, रंग-बिरंगे परिधानों में सजे नर-नारी, परंपराओं को निभाने की अपनी ही मिठास और ललक, साथ ही भाईचारे का अनूठा संगम देखने को मिला राजस्थान के कोटा जिले के घगटाना गांव में। गांव का पूरा जन जीवन दीपावली की उमंग और खुशियों में शबनम के कतरे की तरह सिमट कर रह गया। दीपावली पर बैल पूजन की यह भव्य परंपरा आज भी राजस्थान के अंचलों में (हाड़ौती) में परंपरागत रूप से प्रचलित है।

गांव का भीना-भीना वातावरण सर्वत्र उल्लास एवं आनंद के साथ-साथ ग्रामीण अंचल का कण-कण अपनी आंचलिक प्रथाओं में थिरक रहा था। अंचल की बहुमुखी संस्कृति मुखरित हो रही थी। बैलों को सजाने के लिए दीवाली बनाने का काम पटवा लोग करते हैं। कोटा के घंटाघर चौक में बैलों की श्रृंगार सामग्री बेचने के लिए इन्द्रधनुषी बाजार सजता है। दीपावली पर जितना उत्साह गांव में देखने को मिला उतना शहरों में नहीं। सारे गांव में आपसी भाईचारे की गंगा प्रवाहित होती है।

## दूल्हा-सा सजा बैल

मेरे साथ मेरे परम मित्र और अंचल की संस्कृति के मर्मज्ञ श्री प्रेमजी प्रेम साथ थे उन्होंने गांव के पटेलजी से मेरा परिचय कराया। उन्होंने बताया कि बड़ी दीपावली अर्थात् लक्ष्मीपूजन के दिन तड़के सुबह बैलों को स्नान कराया जाता हैं। बैलों को रगड़-रगड़ कर नहलाते हैं और उसकी देह चमकाई जाती है। महिलाएं बैलों के शरीर पर आकर्षक मेहंदी लगाती हैं। सींग चमकाने के लिए वार्निश लगायी जाती है। बाद में बैलों का रुचिपूर्वक श्रृंगार किया जाता है। गले में बंदोरी, घूघरमाल, कंडा, सींगों पर सराउण्डा एवं मुखारबा आदि बांधे जाते हैं।

गोवर्धन वाले दिन श्रृंगारित बैल दिन भर दूल्हे बने इतराते-इठलाते रहते हैं। रात्रि को शुभ मुहूर्त में बैलों की पूजा की जाती है। सबसे पहले गांव के पटेल के यहां बैलों की पूजा की जाती है। पूजन से पहले गांव का बलई आकर घर के बाहर चबूतरे पर या आंगन में जहां बैलों के पूजन का स्थान नियत

होता है वहां आयताकार में गोबर से लीपता हैं। इसके सूखने पर इसी पर खड़िया से खुर और मोरडी के मांडने बनाये जाते हैं। इसे वहां गोली लगाना कहते हैं। गांव में निम्न व्यक्ति से गोली लगवाना इस बात का प्रतीक है कि खुशी के मौके पर सभी शामिल हों। इसके पश्चात बैलों के कंधे से जूड़ा स्पर्श कराया जाता है। पैरों में पांस स्पर्श कराई जाती है। पांस एक लोहे का कृषि उपकरण होता है। अब बैलों को देशी घी की पूड़ियां खिलाई जाती हैं। बैलों के मुंह से गिरने वाली पूड़ियों को उठा कर रख लिया जाता है। इसके पीछे यह जनविश्वास है कि ऐसा कर इन पूड़ियों को मकर संक्रांति पर खेतों में डालने पर रबी की फसल अच्छी होती है। बैलों की विधिवत पूजा कर आरती उतारी जाती है। मालिक बैलों के सम्मान में अपना सिर झुकाते हैं। हालियों को नये वस्त्र उपहार में दिये जाते हैं।

पूजा के दौरान ही हीड़ गायक बैलों की प्रशंसा में हीड़ गाते हैं। गांव का नाई भी एक ऊंट की खाल से बनी लुंबी में घर-घर जाकर तेल इकट्ठा करता हैं, जिससे वह पूजन के समय मशाल प्रज्ज्वलित रखता है।

**बैलों की पूजा**

शुभ मुहूर्त में विधिवत मंत्रोचार से गोली के सामने बैलों की पूजा की जाती है। पूजन के समय गोली पर गणेश व लक्ष्मी भी रखते हैं। साथ में जूड़ा और पांस भी पूजते हैं।

गेहूं, अक्षत, आचमन के बाद गणेश और कलश का पूजन किया जाता हैं। बैलों को खजूर का मोड़ बांधा जाता है। इसे मुकुट भी कहते हैं। गांव का माली खजूर के पत्तों से बनाता है। मोड़ बांधने के लिए भी हीड़ गाते हैं। महिलायें बधावा गाती हैं। बैलों के श्रृंगार की कितनी सुंदर कल्पना संजोई है इस गीत में –

**'गंगा ई जमना में धोल्यां**
**म्हारा न्हाव ज्यों**
**थाई तल तल चुगो मांड,**
**आगला तो बकता भूला मांड वी,**
**फूटा पे मांड्या सूरज-चांद**
**रंग्यो चंग्यो धोल्यो म्हारो बीबतो**
**भाई-प्रेम का प्रेम।'**

पूजन के पश्चात् बैलों का जुलूस निकाला जाता हैं। यह जुलूस उमंगों का भव्य प्रतीक हैं। गांव के चौराहे पर मंगाल बांधी जाती है। इसके नीचे से होकर बैल गुजरते हैं। मान्यता है कि जो बैल इस के नीचे से गुजरेगा वह वर्ष भर बीमार नहीं पड़ेगा। अब सारे गांव में पटाखों की आवाज से वातावरण गूंज उठता हैं। अनोखा उमंगमय वातावरण बन जाता है। उमंगों के माहौल में ही अर्द्धरात्रि के बाद देर तक यह बैल पूजा का उत्सव समाप्त हो जाता है।

**– सूचना एवं जन सम्पर्क अधिकारी,**
**कोटा, राजस्थान**

□

(पृष्ठ ६४ का शेषांश)

अथक प्रयोग से व्यक्ति रेडियो-धर्मिता का शिकार हो रहा है-चक्षु खराब हो रहे हैं। पाश्चात्य देशों में इसी लिए दूरदर्शन के नियंत्रित उपयोग के लिए कदम उठाये जा रहे हैं। यह वैज्ञानिक संस्कृति का अभिशाप है। यहां यह भी स्पष्ट कर देना चाहिए कि यदि इसका सार्थक उपयोग किया जाय तो यह एक वरदान भी हो सकता है। समाज और संस्कृति के साथ-साथ हमारे राष्ट्रीयता के सम्यक और समुचित विकास में यह सहायक और साधक है। हो सकता है। हुआ है। रामायण और महाभारत का दर्शन इसका प्रमाण है। शिक्षा के क्षेत्र में विशेषकर मुफ्त शिक्षा के लिए यह संचार माध्यम अत्यंत उपयोगी है। – **२ ए, देशप्रिय पार्क ईस्ट,**
**कलकत्ता - ७०० ०२९**

* * *

## □ डॉ. कुंवर चंद्रप्रकाश सिंह

आज दूरदर्शन जनजीवन को बहुत व्यापक रूप में प्रभावित करनेवाला एक सशक्त माध्यम है। अभी तक जिन राजनीतिक दलों के हाथ में सत्ता रही है, वे अपने अतिरंजित प्रचार के लिए ही इसका उपयोग करते रहे हैं। इस धुआंधार प्रचार के कोलाहल में सत्य और असत्य का विवेक प्रायः लुप्त होता गया है। इस प्रचार के कोलाहल में दूरदर्शन की प्रभविष्णुता भले ही कम न हुई हो, पर उसकी विश्वसनीयता अवश्य निरंतर घटती गयी है।

दूरदर्शन को काव्य और साहित्य के नव्योत्कर्ष का साधन बनाया जा सकता था, पर ऐसा हो नहीं रहा है। कारण, दूरदर्शन प्रायः ऐसे 'महान प्रतिभाशाली' कवियों को अपनी प्रतिभा के प्रदर्शन के लिए आमंत्रित करता है, जिनको न तो हिंदी भाषा के व्याकरण का कुछ बोध है और न भाषा के मुहावरे का ज्ञान। मैं यहां लखनऊ दूरदर्शन पर सुनी हुई एक कविता की चार पंक्तियां प्रस्तुत कर रहा हूं। विज्ञजन इसकी भाषा का रसास्वादन करें

**पूछ फटकारा**
**घास खाया**
**फरियाद किया**
**घटना छपवाया।**

यदि दूरदर्शन पर 'रामायण' और 'महाभारत' का प्रसारण न हुआ होता, तो इसके द्वारा प्रस्तुत नाट्यप्रयोग भी दयनीय स्थिति के सर्जक ही माने जाते। कुल मिलाकर दूरदर्शन लोकमंगल के प्रति प्रतिबद्ध नहीं प्रतीत होता। वह सस्ते मनोरंजन का साधन मात्र बनकर रह गया है। – **२/२२, त्रिवेणी नगर, सीतापुर**
**रोड, लखनऊ - २२६ ०२०.**

* * *

## □ रामेश्वर दयाल दुबे

मैं उतना पुरानपंथी नहीं कि हर नयी वस्तु को बुरा समझूं, उसका बहिष्कार

करूं। पर यह तो देखना ही होगा कि वह हमारे लिए किस सीमा तक उपयोगी है और किस सीमा के बाद अनुपयोगी।

दूरदर्शन जादू का बक्सा सिद्ध हो रहा है। घर बैठे समाचार सुनाने के लिए मुस्कराता हुआ मुखड़ा आ जाता है। तरह-तरह के नाटक, वार्ताएं, संगीत, सीरियल, कवि-सम्मेलन, मुशायरा, कव्वाली, नौटंकी, क्रिकेट के टूर्नामेंट और न जाने क्या-क्या बटन घुमाते ही हमारे कमरे में आ उपस्थित होता है। यह है दूरदर्शन का एक दृष्टि से उपयोगी पक्ष। दूसरा पक्ष भी कम ध्यान देने योग्य नहीं है।

दूरदर्शन से सब से बुरा असर हमारे बच्चों पर पड़ रहा है। टी.वी. खुला नहीं कि बच्चे उससे चिपके बैठे रहते हैं। उनके पढ़ने का समय दूरदर्शन ले रहा है।

दूरदर्शन के द्वारा समय की बरबादी की तो कोई सीमा ही नहीं। विज्ञापनों पर प्राप्त होनेवाली आय के लोभ में पड़कर तुके-बेतुके कार्यक्रम पेश कर वह हमारे समय पर डाका डालता रहता है।

घर के आवश्यक काम भले उपेक्षित रह जायें, श्रीमतीजी दूरदर्शन के सामने से कैसे हटें? आधी रात तक चलने वाले कार्यक्रमों के कारण दूरदर्शनवाले घरों में अब सवेरा आठ बजे होने लगा है।

पुस्तकें उदास पड़ी धूल चाट रही हैं, पढ़ने का समय नहीं बचा। सामाजिक संबंध समाप्त हो रहे हैं। दूरदर्शन देखते समय मित्र का, पड़ोसी का, अतिथि का आना मन ही मन बुरा समझा जाने लगा है।

आवश्यकता इस बात की है कि इस बारे पर हम ध्यान रखें कि दूरदर्शन हमारे पूरे समय पर, हमारे बच्चों पर पूरा हावी न हो जाये। अपने समय का अपने कामों का ध्यान रखते हुए ज्ञानवर्धन के लिए, मनोरंजन के लिए हम दूरदर्शन खोलें और उसका उपयोग सीमित रखें।

अनजाने वह हम पर शासन न करने लगे, हम उसके शासक बनें रहें।

— चित्रकूट सी २७४, निराला नगर,
लखनऊ - २२६ ०२०

* * *

□ शम्भुशरण द्विवेदी 'बंधु'

दूरदर्शन पर धारावाहिक 'महाभारत' की समाप्ति पर आपने उचित ही विषय चुना।

वस्तुतः दूरदर्शन से अनेक हित साधन हो रहे हैं। यह संप्रेक्षण का सबसे सशक्त माध्यम बन चुका है। इससे पूरा संसार सिमट सा गया है और इसके द्वारा अनेक प्रतिभाओं को निखरने का अवसर प्राप्त हो रहा है। यद्यपि यह अवश्य है कि कुछ इनी-गिनी हस्तियां दूरदर्शन कार्यक्रमों पर एकाधिकार करती जा रही हैं और विज्ञापनों के बाहुल्य से नयी प्रतिभाओं को प्रोत्साहित करने का अपेक्षित प्रयास नहीं संभव हो रहा है। अध्ययन तथा प्रचार-प्रसार की दृष्टि से इसके महत्व को नकारा नहीं जा सकता है। जहां तक अहित का प्रश्न है, इसे यदि छात्रों के

अभिभावकों से पूछें तो अधिक समीचीन रहेगा। अधिकांश विद्यार्थी पढ़ना-लिखना भूलकर दूरदर्शन के कार्यक्रमों का, विशेषकर फिल्मों का दर्शन करते दृष्टिगोचर होते हैं। दूरदर्शन ने सामाजिक जीवन में भी व्यतिरेक उत्पन्न किये हैं। प्राय: लोग खाली समय में अपने सगे-संबंधियों तथा इष्ट-मित्रों से मिलने में समय व्यतीत करते थे और सांस्कृतिक कार्यक्रमों में भी समय देते थे, किंतु अब अपने घर में कैद होकर रह गये हैं। यह सब होते हुए भी दूरदर्शन से भविष्य मैं बड़ी अपेक्षाएं हैं।

**– ३२०८, राना नगर, रायबरेली, उ.प्र.**

* * *

## □ डॉ. राममूर्ति त्रिपाठी

दूरदर्शन एक सशक्त और प्रभावी संचार-माध्यम है। जनतांत्रिक ढांचे में इसका बहुत बड़ा योगदान हो सकता है– जो मात्र संभावना बनकर स्वायत्तता के अभाव में अवरुद्ध है। जहां तक मेरा संबंध है, कुछ इने-गिने कार्यक्रम सुनता-देखता हूं।

जनतांत्रिक शासन-पद्धति और जीवन-दर्शन 'सत्य' के पास पहुंचने और जनमानस में उसको प्रतिष्ठापित करने का सक्षम तंत्र है– क्योंकि उसमें माना जाता है कि 'सत्य' किसी की बपौती नहीं है। और न ही उस पर सत्तापक्ष का ही एकाधिकार है। अत: ऐसे माध्यमों को स्वायत्त होना चाहिए।

अधिकांश दूरदर्शन के दर्शक उसका महत्व मनोरंजन प्रधान (फिल्म) प्रसारणों में समझते और उपयोग में लेते हैं। लोगों ने ऐसे अवसरों पर परस्पर एक दूसरे के यहां आना-जाना बंद कर दिया है – कोई तन्मय है और जानेवाला भयभीत है कि घर की तन्मयता आतिथेय की पारिवारिक तन्मयता कैसे प्रतिहत की जाय? कभी अतिथि अपमानित अनुभव कर चले भी जाते हैं। विशेषकर पढ़ने वाले बच्चों का समय सर्वाधिक व्यर्थ जाता है? जितनी देर रात तक कार्यक्रम चलते हैं कौन पूरा दूरदर्शन के साथ सहयोग कर सकता है? कुल मिलाकर हित की वस्तुएं तो रहती हैं– अहित की भी स्थिति अनपेक्षित दृश्यों और आत्मप्रचार में निहित है।

**– प्रोफेसर्स बंगलो कोठी रोड,**
**उज्जैन, म.प्र.**

* * *

## □ कन्हैयालाल मिश्र प्रभाकर

दूरदर्शन: कितना हित, कितना अहित? यह प्रश्न सामने आते ही मेरे मन में एक दूसरा प्रश्न उभर आया। वह प्रश्न है– भोजन कितना हित, कितना अहित? मुझे लगा यह प्रश्न, पहले प्रश्न का उत्तर भी है; क्योंकि हित-अहित वस्तु में नहीं, उसके सदुपयोग-दुरुपयोग में है। इसे यों समझें कि विष जीवनघातक है, पर चिकित्सक उससे जीवन की रक्षा करता है।

यह हुई भूमिका, अब मूल प्रश्न पर आयें। भारत एक विशाल देश है और भाषा आदि के कारण अंतरविभक्त भी। उसे ऐसे सांस्कृतिक उपकरणों की आवश्यकता है, जो

खंडों में मानसिक एकता का सीमेंट बन सके। दूरदर्शन इस दृष्टि से बहुत उपयोगी है। वह विविधताओं को मनोरंजन के साथ एक ही मंच पर प्रदर्शित कर सकता है। और इस तरह पूर्व से पश्चिम को, उत्तर से दक्षिण को जोड़ता है। अब उसके संचालक उसे कितना एकता बोध से जोड़कर उसका उपयोग करते हैं, तो वह उतना ही हित है; नहीं तो अहित है। भारत में इस दृष्टि से वह संशोधन चाहता है।

एक और भी प्रश्न है, जो दर्शक-परिवारों द्वारा उसके सदुपयोग-दुरुपयोग से हित-अहित को नापता है। क्या परिवार की नयी पीढ़ियों के पढ़ने का जो समय है उसमें उसका प्रयोग किया जाता है? सोने-जागने का समय उसमें लगता है? जो फिल्म, सिनेमाघरों में भी किशोरों के लिए वर्जित होनी चाहिए, उसे सभी घर में देखते हैं? यदि हां, तो वह अहित है और इसमें समय-सामग्री का ध्यान रखा जाता है, तो हित है।

— **विकास-संस्थान,**
**सहारनपुर - २४७ ००१, उ.प्र.**

* * *

## ☐ डॉ. विष्णुकान्त शास्त्री

दूरदर्शन एक अत्यंत शक्तिशाली जन-संचार माध्यम है। उसके राष्ट्रीय प्रसारण में किसी व्यक्ति या विचार का समाविष्ट होना उसके अखिल भारतीय प्रचार का हेतु बन जाता है। अतः उसके प्रति आकर्षण का प्रबल भाव उन व्यक्तियों और शक्तियों के मन में होना स्वाभाविक ही है, व्यापक जन-समुदाय तक अपनी पहुंचाना चाहते हैं। यदि वे शुभ-बुद्धि हों तो निश्चय ही बहुत-सी लोक हित विचारधाराओं और कलात्मक प्रदर्शनों जन-जन तक पहुंचाने में सहायक हो हैं। किंतु सरकार इस माध्यम का अपने स्वार्थ के लिए भी कर सकती है लोकरंजन के नाम पर औसत व्यक्तियों रिझाने वाली हल्की-फुल्की प्रस्तुतियों दिखाकर नासमझ व्यक्तियों से वाहवाही लूट सकती है। गांवों में पीने का पानी पहुं की तुलना में भी दूरदर्शन का केंद्र खोलने वरीयता देने की पिछली सरकार की नीति आशंका को पुष्ट करती है। अतः मेरा मत है कि दूरदर्शन को स्वायत्तशासी द्वारा संचालित किया जाना चाहिए और परिचालकों में देश के प्रतिष्ठित विद्वानों, साहित्यकारों, कलाकारों एवं समाजसेवि को प्रमुखता मिलनी चाहिए।

— **२८०, चित्तरंजन एवेन्**
**कलकत्ता - ७०० ००**

* * *

## ☐ चंद्रशेखर पांडेय

विज्ञान के आविष्कारों ने, निस्संदेह, मानव-जीवन को अनेक सुख-सुविधाओं से भर दिया है। इनमें प्रमुख हैं - रेल, तार, फोन, मोटर, वायुयान तथा बिजली से चलने वाले विभिन्न घरेलू उपकरण। इनके कारण दुर्घटनाएं भी होती रहती हैं।

किंतु लाभ-हानि पर विचार करने से अनुपात मोटे-तौर पर ९५ और ५ का दिखायी देता है। पर दूरदर्शन के संबंध में यह अनुपात उलट कर ५ और ९५ का हो जाता है।

सूचना और शिक्षण संबंधी कुछ अल्पकालिक कार्यक्रमों को छोड़कर दूरदर्शन के शेष सभी कार्यक्रम समाज और संस्कृति को दूषित करने वाले होते हैं। मनोरंजन के नाम पर जो गीत या फिल्में प्रसारित की जाती हैं, उनमें हिंसा और कामुकता की भावना प्रधान होती है। कभी-कभी अश्लीलता के दृश्य उस सीमा पर पहुंच जाते हैं, जब घर के बड़े बूढ़े अपनी मर्यादा की रक्षा के लिए उठकर दूसरी जगह बैठ जाते हैं।

जिसके दर्शन से सुख प्राप्त हो, उसे सुदर्शन कहते हैं। और जिसका दर्शन दुखदायी हो, वह दुर्दर्शन कहलाता है। अतः सुधार होने के पहले तक यदि दूरदर्शन को दुर्दर्शन कहा जाय, तो अनुचित न होगा।

**— ४८ ए. १ अपार्टमेंट्स,**
**२७० वालकेश्वर रोड, बंबई - ४०० ००६**

* * *

## □ यशपाल जैन

मेरी मान्यता है कि दूरदर्शन के कार्यक्रमों ने दर्शकों का जितना हित किया है, उससे कहीं अधिक अहित किया है। उसके कुछ धारावाहिक यथा 'रामायण', 'महाभारत' आदि दीर्घकाल तक दर्शकों के मन पर छाये रहे। कुछ और भी धारावाहिक थे, जिन्होंने दर्शकों की रुचि को परिष्कृत किया, लेकिन उन्हें छोड़कर शेष कार्यक्रमों ने लोक-रुचि का अपकर्ष किया, ऐसा कहने में मुझे तनिक भी संकोच नहीं है। वे कार्यक्रम न केवल घटिया किस्म के हैं, बल्कि दर्शकों के चरित्र को भी गिराते हैं।

दूरदर्शन ने सबसे बड़ा अहित यह किया है कि उसने पुस्तकें पढ़ने की आदत को बहुत अंशों में समाप्त कर दिया है। नयी पीढ़ी अपनी पढ़ायी के समय को दूरदर्शन के मनोरंजन तथा वासनोत्तेजक कार्यक्रम देखने में लगाती है।

दूरदर्शन का प्रत्येक क्षण मूल्यवान है। इसकी अनुभूति अभी तक उसके अधिकारियों को नहीं हो पायी है। इसलिए वह बहुत-सा समय आमदनी के लिए ऊटपटांग विज्ञापनों के प्रदर्शन पर व्यय करता है। वस्तुतः इन विज्ञापनों से देश के अधिकतर दर्शकों को कोई लाभ नहीं होता।

मेरी निश्चित मान्यता है कि दूरदर्शन के कार्यक्रमों का चुनाव लोकहित की दृष्टि से होना चाहिए, तभी वह देश के लिए सार्थक हो सकेगा।

**— सस्ता साहित्य मंडल, एन. ७७,**
**कनाट सर्कस, नयी दिल्ली - ११० ००१.**

* * *

## □ डॉ. विवेकी राय

नवनीत के माध्यम से आपने बहुत ही आवश्यक चर्चा छेड़ दी है। दूरदर्शन बहुत तेजी से जन-जीवन की धड़कन बनता जा रहा है। ऐसा नहीं है कि उसका

अहितकार पक्ष नहीं है, परंतु मेरी दृष्टि में दूरदर्शन के शिक्षा दर्शन बनने में शत प्रतिशत हित निहित है। संप्रति दूरदर्शन पठन-पाठन, ज्ञानार्जन और शिक्षा का आधुनिकतम वैज्ञानिक माध्यम है। इस सशक्त और अति प्रभावशाली माध्यम से पूरा विश्व हमारे कमरे में, हमारी आंखों के सामने आ जाता है। वैयक्तिक, शारीरिक, सामाजिक और सांस्कृतिक आदि क्षेत्रों की संपूर्ण शिक्षा के माध्यम के रूप में इसे सफलता मिली है। दूरदर्शन अनायास और सहज रूप में हमको शैक्षिक परिवेश से जोड़ देता है।

इस सांस्कृतिक माध्यम को यदि राजनैतिक माध्यम न बनाया जाय तो मूलतः इसका रूप मनोरंजक होने के कारण यह वास्तव में दूरदर्शन न होकर जीवन-दर्शन के अति निकट वाला शिक्षा दर्शन हो जायेगा।

पुस्तकीय ज्ञान को दूरदर्शन हमारे सामने अधिक सुग्राहय, अधिक सुपाच्य और अधिक बोधगम्यता के साथ प्रस्तुत करता है। विशेषकर विज्ञान से संबंधित विषयों को प्रस्तुत करने में उसे भारी सफलता मिलती है। परंतु ऐसा लगता है ये कार्यक्रम दूरदर्शन के हाशिये पर होते हैं। व्यावसायिक सस्ते मनोरंजक और राजनीतिक कार्यक्रमों के बीच में जो आते हैं, वे भी खानापूर्ति जैसे लगते हैं। किंतु इन्हें देखकर इसकी विराट् शैक्षिक संभावनाओं का अनुमान किया जा सकता है।

आज का आधुनिक आदमी अधिक जीवंत होने के लिए दूरदर्शन के सामने बैठता है। किंतु क्या वास्तव में यह उद्देश्य पूरा होता है? क्या उसे तनाव, उदासी और अस्थिरता मुक्ति मिलती है? यदि नहीं तो क्यों का उत्तर सोचना होगा और सोचना होगा कि कैसे इसे शिक्षा दर्शन बनाकर हितकर बनाया जाय।

**— बड़ी बाग, गाजीपुर, उ.प्र.**

* * *

### ☐ उमाशंकर शुक्ल

दूरदर्शन का प्रसार शहरों में तो है ही, वह देहातों तक में पहुंच गया है। देहात के लोग जो सिनेमा देखने को तरसते थे, वे अब घर बैठे फिल्में देख सकते हैं। इसके अतिरिक्त अन्य कार्यक्रम भी देखते हैं और खबरें सुनते हैं। पर अंग्रेजी का बोलबाला दूरदर्शन में बना हुआ है। इस कारण अंग्रेजी न जाननेवालों को दूरदर्शन का लाभ नहीं मिल पाता। अखबारों में यह भी प्रकाशित हुआ है कि दूरदर्शन देखने से आंखें खराब हो जाती हैं। यह कहां तक सत्य है– कहा नहीं जा सकता।

दूरदर्शन द्वारा हम अनेकों नेताओं तथा स्थानों की जानकारी पा लेते हैं। पर दूरदर्शन देखने से विद्यार्थियों की पढ़ायी का नुकसान होता है। कुछ सीरियल बहुत ही साधारण होते हैं। फिर भी वह निरंतर लोकप्रिय हो रहा है।

**— पत्रकार, तैलंगनगर, वर्धा, महाराष्ट्र**

* * *

## □ के. पी. सक्सेना

दूरदर्शन की मौजूदा हालत पर राय मांगकर आपने दुखती रग को और छेड़ दिया है। एक पंक्ति में कहूं तो 'गुल गुलशन, गुलफाम' की तर्ज पर दूरदर्शन 'बद....बदतर....बदनाम' होता चला जा रहा है। हित का तो प्रश्न ही नहीं उठता।

कुछेक अच्छे और दिलचस्प प्रोग्राम शुरू हुए भी तो आधे रास्ते पर बंद हो गये। अच्छे हास्य कवि सम्मेलन जिन्हें लोग अपने-अपने कैसेटों पर रिकार्ड कर लेते हैं, साल में सिर्फ एक बार होली पर। गोया बाकी पूरे वर्ष हंसना मना है। रही-सही कसर पूरी कर देता है, हिंदी भाषा को थप्पड़ मारता हुआ उच्चारण। जैसे, 'आसना', 'कर्नाटका', 'केराला' वगैरा... चुनांचे, किस-किस को याद कीजिए, किस-किस को रोइए.. टी.वी. को बंद कीजिए, मुंह ढक के सोइए।....

**– ७२, नारायण नगर, रामसागर,**
**लखनऊ, उ.प्र.**

* * *

## □ डॉ. विजयेन्द्र स्नातक

'दूरदर्शनः कितना हित और कितना अहित' पर विचार करते समय उस युग का ध्यान हो आता है, जब दूरदर्शन हमारे घरों में नहीं था। सायंकाल के समय वृद्धजन घर से बाहर घूमने निकलते और कहीं बैठकर घर-बाहर की बातें करते थे। अब दूरदर्शन ने उनका घूमना-भ्रमण करना प्रायः समाप्त कर दिया है। बालक और किशोर शाम के समय इधर-उधर सैर-सपाटे को निकल जाते थे। अब दूरदर्शन में बंधकर घर में बने रहते हैं। मोटे तौर पर यह एक अच्छा लक्षण है।

दूरदर्शन से जो अहित हो रहा है, वह सांस्कृतिक प्रहार है। हमारा दूरदर्शन शनैः शनैः पाश्चात्य सभ्यता और संस्कृति की ओर ढलता जा रहा है। संगीत, नृत्य, नाटक आदि पर भी पाश्चात्य प्रभाव बढ़ रहा है। साहित्य के प्रति औपचारिकता तो बनी हुई है, किन्तु उसका सामाजिक परिप्रेक्ष्य में सही उपयोग दूरदर्शन नहीं कर रहा है। कला के नाम पर भी प्रायः अतिसाधारण प्रदर्शन होते हैं। कुछ ऐसे भी कार्यक्रम हैं जो बाल-मन और किशोर-मन पर स्वस्थ प्रभाव नहीं डालते। अतः अहितकर होते हैं।

सामान्य जानकारी की दृष्टि से दूरदर्शन अच्छी जानकारी मुहैया करता है। देश-विदेश के गण्यमान व्यक्तियों की जीवन-झांकी प्रस्तुत कर एक हितकारी कार्य कर रहा है।

संक्षेप में, दूरदर्शन एक हितकारी मीडिया है। इसका उपयोग सांस्कृतिक तथा ज्ञानवर्धक होने के साथ मनोरंजन के लिए किया जाता है। सभी वर्गों के व्यक्तियों की मानसिकता एक जैसी नहीं होती। अतः ध्यान इस बात पर रखना चाहिए कि अधिक से अधिक लोग लाभान्वित हों।

दूरदर्शन से यदि कुछ अहित हो रहा है तो वह यह है कि दर्शकवृंद अपनी संस्कृति के प्रति आकृष्ट नहीं हो रहे हैं। उनके सामने कला के नाम पर जो दृश्य प्रस्तुत किये जाते

हैं, वे पाश्चात्य शैली के दृश्य होते हैं, जिनसे सदैव मनोरंजन भी नहीं होता। उन दृश्यों के फलितार्थ किशोर-मन पर घातक प्रभाव पड़ता है। — ए. ५/३, राणा प्रताप बाग,
दिल्ली - ११० ००७

* * *

### □ जगदीश प्रसाद चतुर्वेदी

दूरदर्शन के तीन उद्देश्य बताये जाते हैं— सूचना देना, शिक्षित करना और मनोरंजन प्रदान करना। जहां तक सूचना का संबंध है, यद्यपि दूरदर्शन की सूचना मात्र पर ही संतोष नहीं किया जा सकता। परंतु देश और विदेश के महत्वपूर्ण समाचारों को शीघ्र से शीघ्र और जहां संभव हो सचित्र देने में दूरदर्शन सफल हुआ है और इससे लोगों का हित होता है। परंतु कभी-कभी दूरदर्शन के माध्यम से जो बुराई एक विशेष क्षेत्र या विशेष देश में ही पायी जाती है, उसका भी प्रचार सारे संसार में हो जाता है, और इस प्रकार जो विचार शायद पहले काफी समय बाद पहुंचते, बहुत शीघ्र फैल जाते हैं।

जहां तक शिक्षा का संबंध है, मेरी दृष्टि से दूरदर्शन इसमें सफल नहीं हुआ है। सफलता ग्रामीण कार्यक्रमों में हो सकती थी, परंतु उन कार्यक्रमों में भी अंग्रेजी से लदी जिस भाषा का प्रयोग होता है, वह निरक्षर किसान के काम नहीं आती। अन्य शिक्षा क्षेत्रों में दूरदर्शन को मैं बहुत उपयोगी नहीं मानता, यद्यपि यह हो सकता था।

जहां तक मनोरंजन का संबंध है, दूरदर्शन का मुख्य उपयोग मनोरंजन के लिए है। जो लोग इसे देखते हैं, अधिकतर इसी कारण। रामायण और महाभारत का दर्शन भी इस कारण एक प्रमुख घटना हो गयी थी, क्योंकि उसमें नाटकीय मनोरंजन उपलब्ध होता था। चित्रहार, फिल्म, मुशायरा, कव्वाली, कवि सम्मेलन, संगीत समारोह और नृत्य समारोह इसी का अंग है। लेकिन इसमें मनोरंजन के साथ-साथ हमारी विशेष तथा उभरनेवाली नयी पीढ़ी में मानसिक विकृतियां पैदा होती हैं, क्योंकि फिल्मों में आज कल हत्या, आतंक और सेक्स की ही प्रधानता होती है। साथ ही विज्ञापन हमारी अतृप्त आकांक्षाओं को उद्दीपित करते हैं, जिसके परिणाम समाज को भुगतने पड़ते हैं।

— डी. २/५५, काका नगर,
नयी दिल्ली - ११० ००३

* * *

### □ क्षेमचंद्र 'सुमन'

दूरदर्शन से हमारे समाज का अहित अधिक हुआ है और हित कम। मैं ऐसा मानता हूं कि उसके द्वारा भाषा, साहित्य और संस्कृति के उत्कर्ष तथा उन्नयन का कोई उल्लेखनीय कार्य अभी तक नहीं हुआ है। हां, अश्लील, भोंड़े और कुत्सित मनोवृत्तियों को जाग्रत करनेवाले कार्यक्रमों का प्रस्तुतीकरण ही इसके द्वारा हुआ है। मुझे यह लिखते हुए भी संकोच हो रहा है कि कभी-कभी ऐसे कार्यक्रम और नाटक आदि इस पर प्रदर्शित किये जाते है, जिसमें अश्लीलता और नग्नता अभिव्यक्ति पराकाष्ठा को पहुंची होती है।

की इस 'उच्छृंखलता' के सामने 'निर्लज्जता' भी पनाह मांगने को विवश होती है ।

जहां तक हिंदी का प्रश्न है, उसकी हत्या भी हम दूरदर्शन के कार्यक्रमों में पग-पग पर होती देख सकते हैं । 'भाषा', 'उच्चारण' और 'वर्तनी' की अशुद्धियों के साथ-साथ जिस प्रकार के संवाद इसके द्वारा प्रस्तुत किये जाते हैं, वे भी चिंतनीय हैं। दूरदर्शन के समाचार-वाचक तक शुद्ध भाषा और वर्तनी का ध्यान नहीं रखते, जो निश्चय ही हमारे विचार-दारिद्रय का द्योतक है । यहां तक कि अपने कार्यक्रमों के परिचायक 'बैनर' भी उसके अधिकारी शुद्ध रूप से प्रस्तुत नहीं करते। इसके विपरीत अंग्रेजी कार्यक्रमों की उद्घोषणा और उनके परिचायक बैनर इस प्रकार की अशुद्धियों से बचे होते हैं। इस प्रकार की प्रवृत्ति से मन इतना उकता जाता है कि दूरदर्शन कभी-कभी 'दुर्दर्शन' लगने लगता है ।

एक दूसरा पक्ष भी दूरदर्शन की उपयोगिता का है । देश में होनेवाले विभिन्न विकास-कार्यों और अनुसंधानों की जानकारी इसके द्वारा सुलभ हो जाती है। हमारे विकासोन्मुख देश के लिए इस प्रकार के कार्यक्रम अत्यंत उपयोगी और ज्ञानवर्धक सिद्ध हो रहे हैं । विश्व के किसी भी कोने में हुई कैसी भी घटना का यथातथ्य प्रदर्शन आज इसके द्वारा संभव है । निश्चय ही इसके द्वारा हमारे देश के नागरिकों को न केवल देश की बल्कि विदेशों की जानकारी भी उपलब्ध हो जाती है । दूरदर्शन की उपयोगिता का यह उज्ज्वल पक्ष है ।

— अजय निवास, दिलशाद कालोनी,
शाहदरा, दिल्ली - ११० ०९५

* * *

### □ कमल टावरी

दुनिया भर की खबरें दूरदर्शन सिर्फ सुनाता ही नहीं, दिखाता भी है । हजारों वर्ष पहले के व्यास महर्षि कितने पावरफुल लेखक थे और वे बीसवीं सदी की भीड़भरी सड़कें भी कैसे सुनसान करा सकते थे, यह भी दिखाया दूरदर्शन ने ही । हर विषय का ज्ञान घर पर पहुंचाने का काम दूरदर्शन ही कर सकता है । अनुसंधान बताते हैं कि दूरदर्शन के कार्यक्रम देखकर किसानों ने अपनी खेती के कार्यों में सुधार किया है ।

लेकिन यह तो सिक्के का एक पहलू मात्र है । कितने लोग शैक्षिक कार्यक्रम देखते हैं ? और शिक्षा के साथ यह और भी बहुत कुछ लाया है, जिसे 'मनोरंजन' कहा जाता है । दुर्भाग्य से भारतीय परिवेश में मनोरंजन तथा फिल्में एक दूसरे का पर्याय मानी जाती हैं । फिल्मों के बारे में अधिक क्या कहना ? दूरदर्शन पर दिखायी जाने वाली फिल्मों का चुनाव करते समय दूरदर्शिता क्वचित ही दिखायी जाती है । आज कल की फिल्मों में - लगता है— हिंसा दिखाने की होड़ लगी हुई है । नियम-कानून तोड़ना, बात-बात पर चाकू-छुरा या पिस्तौल निकालना या फिर लड़कियों को न के बराबर कपड़े पहनाकर पर्दे पर पेश करना, यहीं 'कला' रह गयी है ।

# उत्कृष्ट मसाले बनविणारे फक्त दोनच!

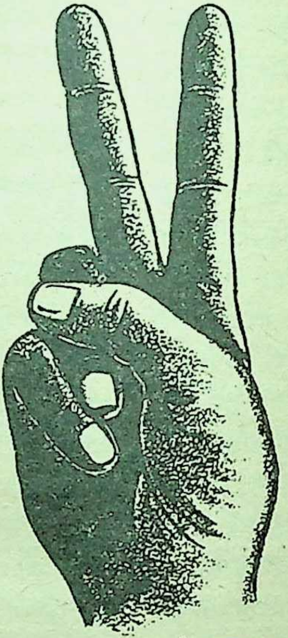

हे दोन कोण बुवा ? असा प्रश्न पडण्याचे कारण नाही. दोना पैकी पहिले तुम्ही स्वतः ! तुम्ही बनवलेला मसाला उत्कृष्ट असतो याबद्दल कुणीच शंका घेणार नाही. पण तुमच्यानंतर मात्र आमचा क्रमांक ! तुम्हाला मसाला बनवण्यास वेळ न झाल्यास बेडेकर मसाला त्याची उणीव भासू देणार नाही.

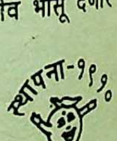

**व्ही.पी.बेडेकर ॲन्ड सन्स प्रा.लि., मुंबई ४**

BEDEKAR'S
SAMBAR POWDER
BEDEKAR
Garam Masala
SPECIAL
बेडेकर
मसाला
बेडेकर
अचार का तैयार मसाला
BEDEKARS
B. Vasant

घर-परिवार के साथ बैठकर इन्हें देखना एक सजा लगती है।

मनोवैज्ञानिकों का मानना है कि दूरदर्शनी हिंसा का बच्चों पर प्रभाव इस बात पर निर्भर करता है कि बड़े उस हिंसा पर क्या प्रतिक्रिया व्यक्त करते हैं। लेकिन क्या हमारे वयस्क भी इतने पक्व हैं कि वे अपनी प्रतिक्रिया सोच-समझ कर ही दें।

महानगरों में घटते सामाजिक संबंधों को और घटाने के लिए भी दूरदर्शन जिम्मेदार है। टी. वी. चलता रहे तो एक दूसरे से बात भी नहीं होती। इतवार का एक दिन मिलता है, मिलने-जुलने के लिए। सो उस दिन भी सीरियल तथा फिल्म देखनी होती है। क्या यह आत्म केंद्रित होना नहीं है? सो जनाब, दूरदर्शन ने हित कितना किया, यह तो अनुसंधान का विषय है, पर अहित बहुत ज्यादा किया है।

**— खादी एवं ग्रामोद्योग कमीशन, इर्ला,**
**विलेपार्ले (प.) बंबई - ४०० ०५६**

* * *

## □ मोहनलाल पुरोहित

बीसवीं सदी को वैज्ञानिक युग के नाम से पुकारा जाता है। उस सदी में विज्ञान के कई प्रकार के चमत्कार रहे हैं। इसकी एक बड़ी उपलब्धि 'दूरदर्शन' का आविष्कार बड़ा ही महत्व का रहा है।

घर बैठे लाखों कोसों की दूरी पर होनेवाली घटनाएं आज हम बड़ी आसानी से देख सकते हैं। सांस्कृतिक, धार्मिक, ऐतिहासिक, भौगोलिक, सामाजिक आदि नाना प्रकार की गतिविधियों का ज्ञान जहां इसके माध्यम से संभव रहा है— मनोरंजन के क्षेत्र में भी इसका इसी अनुपात से योगदान रहा है। दूरदर्शन का हमारे ग्राम और ग्रामवासियों के विकास में भी अभूतपूर्व योगदान रहा है।

शिक्षा के क्षेत्र में और खेल-कूद के क्षेत्र में भी दूरदर्शन के कार्यक्रम बड़े रोचक एवं प्रशंसनीय रहे हैं।

दूरदर्शन से बस एक ही हानि हमारी समझ में आती है— बच्चे लोग हर समय इसे घेरे रहते हैं और फलतः उनकी शिक्षा में जहां बाधा पड़ती है, नजदीक बैठकर लगातार एकटक देखने से आंखों की खराबी का भी भय रहता है। लेकिन यह खराबी 'दूरदर्शन' की न होकर हमारी है। हमारा फर्ज बन जाता है— हम बच्चों को 'दूरदर्शन' के उन्हीं सीमित कार्यक्रमों को देखने की अनुमति दें, जो उनकी शिक्षा में बाधक न होकर, उनके जीवन में उल्लास, आनंद, ज्ञान और मनोरंजन के साथ ही साथ देशभवित, सदाचार, एकता, भाईचारा, संगठन की भावना को उभारने में सहायक सिद्ध हो सकें।

**— भठड़ों का चौक, बीकानेर, राजस्थान**

* * *

## □ जयप्रकाश भारती

पिछले दिनों 'रामायण' और 'महाभारत' का प्रसारण करके दूरदर्शन ने अत्यंत सराहनीय कार्य किया है। भारतीय संस्कृति और चिंतन की दिशा में अब और भी

करागे वसते लक्ष्मी
करमध्ये सरस्वती
करमूले तु गोविंदम
प्रभाते कर दर्शनम

दीपावली के शुभ अवसर पर शुभकामनाएं

भारतीय जीवन बीमा निगम

Pratibha/LIC/146/HIN

सीरियल बन रहे हैं। जिन कथाओं को और ग्रंथों को लोग हास्यास्पद मानते थे– अब उनमें आस्था जाग रही है। किंतु स्वार्थी सरकार का प्रचार और भ्रष्ट अफसरों की मनमानी ही दूरदर्शन का मुख्य स्वर रहा है। पाश्चात्य कार्यक्रमों का भारी दबाव दूरदर्शन पर बराबर बना रहता है। बच्चों और किशोरों के लिए कार्यक्रम नहीं के बराबर हैं जबकि हमारी जनसंख्या में चालीस प्रतिशत बच्चे हैं।

स्वाधीन देश के नागरिकों जैसा आचरण हमारे नागरिकों (ख़ास कर युवकों) का नहीं है। हम सब भारतीय हैं और इस देश के लिए हमें कुछ करना है– ऐसी भावना भी कहीं नजर नहीं आती। भारत और भारतीयता से युवा पीढ़ी का कोई सरोकार नहीं। दूरदर्शन की उपलब्धि पर शोध और सर्वेक्षण होना चाहिए, ताकि देश को पता चले कि पश्चिमी सभ्यता का प्रेत कितनी तेजी से हमारी जड़ों को खा रहा है– और वह प्रेत दूरदर्शन के डिब्बों में घुसा बैठा है।

मैं ज्ञान-विज्ञान का समर्थक हूं, पर समझदार लोग जानते हैं कि नयी पीढ़ी की आंखें फोड़ने और देश को तोड़ने में दूरदर्शन की भूमिका बहुत महत्वपूर्ण है।

**– नंदन, हिंदुस्तान टाइम्स, नयी दिल्ली**

* * *

### □ डॉ. श्रीपाल सिंह 'क्षेम'

आज के विज्ञान-प्रधान इस प्राविधिक युग में 'दूरदर्शन' एक वरदान के रूप में अनुभव किया जा रहा है। पश्चिम तथा विदेश के विज्ञान-विकसित भू-भाग में इसका आविष्कार काफी पहले हुआ, पर भारत जैसे नव-स्वतंत्र देश में यह तंत्र अभी कुछ वर्षों पूर्व ही, इतना लोकप्रिय हुआ है।

पहले तो राजनीतिक प्रचार-संपर्क के लिए अतीव उपयोगी प्रतीत हुआ, पर शीघ्र ही समाज में आधुनिकता के विस्तार और यथेष्ट परिवर्तन की दृष्टि से भी, यह सहजतर और उपादेयतर सिद्ध होने लगा। जन-साधारण अपने देश और राजनीतिक निर्माणकर्ताओं की करणी को सुनने और देखने, दोनों माध्यमों से प्रत्यक्ष देखकर विश्वस्तता प्राप्त कर ले, एक जनतांत्रिक व्यवस्था में, इससे अधिक अभीष्ट और प्रत्यापक और क्या हो सकता है।

राजनीतिक संवादों और क्रिया-कलापों के साथ प्रत्यक्ष जुड़ाव ही क्या कम है, पर 'दूरदर्शन' यदि धीरे-धीरे वैचारिक और सांस्कृतिक परिवर्तन का भी एक प्रत्यक्ष माध्यम बन जाय, यह तो और बड़ी उपलब्धि है। यह सहज और प्रत्यक्ष विश्वसनीयता, आज दूरदर्शन की सबसे बड़ी शक्ति है। जब वह शक्ति है तो उसके सदुपयोग और दुरुपयोग का संदर्भ भी अपरिहार्यतः उसके साथ जुड़ जाता है। दूरदर्शन का वांछित भाव-विचारों और प्रतिक्रियाओं के रचनात्मक रूप में, उसका 'हित-पक्ष' है। 'अहित-पक्ष' तो तब उठ खड़ा होता है, जब उसका दुरुपयोग होने लगे; जब अवांछित संस्कृति, असत्य विचार-चिंतन और छद्म घटितियां उसके द्वारा विश्वसनीयता प्राप्त

Endi
The Great and Graceful Fragrance SEVEN IN ONE
MYSORE SUGANDHI
DHOOP FACTORY PVT. LTD.
13, Commercial Chambers, Yusuf Meharali Rd.,
P.O. Box 3178, Bombay 400 003.

करने लगें।

आज दूरदर्शन की ललक सबको और हर वर्ग को होने लगी है। उच्च मध्यम-वर्ग ही नहीं, निम्न मध्यम-वर्ग और 'गरीबी के रेखा के नीचे' जीने वाला वर्ग भी, अपनी गृहस्थी के लिए उसे शोभा और शिष्टता का प्रमाण मानने लगा है। ऐसी स्थिति में, यदि देश का दूरदर्शन हमारी संस्कृति, सभ्यता, आदर्श और राष्ट्रीय ऊर्जा के रचनात्मक माध्यम का रूप ले सके तो इससे अधिक मंगलमय और क्या हो सकता है। दु:ख है कि अपना दूरदर्शन उस प्रकार का रचनात्मक नहीं बन पाया है। **— क्षेम सदन, १५४ शेखपुर,**

**जौनपुर - २२२ ००२.**

***

### □ अनंतकुमार पाषाण

संसार में अहित उपयोग ठीक न करने से होता है। अहित दुरुपयोग का परिणाम है। दूरदर्शन से हित कितना हुआ, यह तो दूरदर्शी ही बता सकते हैं। मैं तो केवल अपनी विनम्र सम्मति संभावनाओं के संबंध में दे सकता हूं।

१. कोई भी अतिशय बौद्धिक और तकनीकी बहस उबाऊ और कष्ट देनेवाली होगी।

२. निरंतर सरकार के समर्थन में और उसकी जय गाथा गाने से दूरदर्शन सरकार का समर्थक प्रमाणित होगा।

३. भारतीय भाषाओं की महान कृतियां प्रक्षेपित हों।

४. फिल्में जो क्लासिक हैं।

५. भारत के प्रसिद्ध बुजुर्ग कवियों के कविता पाठ।

६. लोकगीतों को उत्सवों के घटनास्थल पर ही पहुंचकर पकड़ा जाये।

७. हिंदी के प्रसिद्ध गीत प्रथम श्रेणी के गायकों द्वारा गवाये जायें।

८. राष्ट्रीय कविताओं की धुन बनवाकर पूरी रचना प्रस्तुत हो न कि एक टुकड़ा जैसे 'खूब लड़ी मर्दानी' का हुआ।

९. कारखानों, खानों, खेतों आदि में श्रम करने की यथार्थ परिस्थितियों को उजागर किया जाये।

१०. बहुत ज्यादा भभकेवाले ग्लैमर वाले विज्ञापन न दिखाये जायें, जिनसे धनी समाज के प्रति मोह प्रकट हो।

११. बलात्कार जैसी घटनाओं के विरुद्ध अनेक महिलाओं द्वारा बहस हो और नर्म काम चलाऊ कानून को बदला जाये, ऐसा प्रयत्न दूरदर्शन करे।

१२. यदि कवि-सम्मेलन हो तो एक सम्मेलन में पांच से अधिक कवि न लिये जायें। और सम्मेलन अर्द्धरात्रि को न हो।

अहित करने वाली वृत्तियां एकदम से बंद की जायें।

**— चंदन निवास, कुर्ला रोड,**

**अंधेरी (पूर्व), बंबई - ४०० ०६९.**

* * *

### □ श्रीमती कमला रत्नम्

दूरदर्शन जनसंपर्क का एक अत्यंत सशक्त, जीवंत और आकर्षक माध्यम

# खादी और ग्रामोद्योग आयोग

## ग्राम-विकास का प्रमुख तथा प्रभावी संगठन

खादी और ग्रामोद्योग आयोग द्वारा निम्नलिखित कार्यकलापों के लि सहायता दी जाती है।

१. कारीगरों, पर्यवेक्षकों और प्रबन्धकों का प्रशिक्षण।
२. औजारों उपकरणों तथा मशीनों के निर्माण तथा आपूर्तिकी व्यवस्था।
३. गोदामों व कार्यशालाओं के निर्माण हेतु ऋण की सहायता।
४. कच्चे माल की व्यवस्था व उसे खरीदने हेतु ऋण की सहायता।
५. खादी एवं ग्रामोद्योगी वस्तुओं के उत्पादन तथा बिक्री हेतु कार्यकारी पूंजी।
६. बिक्री केन्द्र खोलने हेतु सहायता।
७. कार्यान्वयी अभिकरणों को पूंजी निर्माण ऋण।
८. उत्पादन तकनीकों एवं उपकरणों पर अनुसंधान।

खादी और ग्रामोद्योग आयोग ४ प्रतिशत की रियायती दर पर ऋण उपलब्ध करता है।

अधिक जानकारी के लिए सम्पर्क करें :

निदेशक (प्रचार)
खादी और ग्रामोद्योग आयोग, "ग्रामोदय" इरला रोड,
विले पार्ले (पश्चिम) बम्बई - ४०० ०५६.

है। इसके द्वारा हम अपनी बात, या अपना मन, अपने विचार एक ही समय में, संसार के कोने-कोने में तत्काल विद्युत गति से पहुंचा सकते हैं। जाहिर है कि इतने सशक्त संचार-माध्यम के द्वारा हम लोगों को या तो गुमराह कर सकते हैं या उनके सच्चे मार्गदर्शक बन सकते हैं। मानव-हित की जितनी भी बातें हैं, स्वास्थ्य-विज्ञान, शिक्षा, देश की वास्तविक स्थिति, स्त्रियों की उन्नति, बच्चों की सुरक्षा, इन्हें हम दूरदर्शन के माध्यम से लोगों तक पहुंचा सकते हैं। यही नहीं, इसके कल्पनापूर्ण प्रयोग से हम न्यूनतम समय में समूचे देश को साक्षर भी बना सकते हैं। परंतु इसी के साथ-साथ अदूरदर्शी कार्यक्रमों अश्लील और भोड़ी हिंसात्मक फिल्मों से हम दर्शकों को पथभ्रष्ट भी कर सकते हैं।

वर्तमान अर्थप्रधान व्यवस्था में दूरदर्शन का दुरुपयोग विज्ञापनदाताओं द्वारा भी किया जा रहा है। जिस प्रकार के विज्ञापन हमारा दूरदर्शन दिखा रहा है, उनसे समाज में ऐशोआराम, धुम्रपान, मदिरापान जैसी कुटेवों को प्रोत्साहन मिल रहा है। जिसके खिलाफ समय-समय पर आवाज उठती रहती है।

'रामायण' और 'महाभारत' तथा अब 'परमवीर चक्र' जैसे कार्यक्रम दिखाकर जहां दूरदर्शन ने कोटि-कोटि जनता का हित और मनोरंजन किया है, वहीं अन्य कार्यक्रमों में सुरुचि के अभाव और भाषा के प्रति अक्षम्य उपेक्षा तथा किसी एक राजनैतिक दृष्टि से संपादित अधूरे समाचारों द्वारा दर्शकों को तथ्यों से दूर भी रखा है। कुल मिलाकर यह कार्यक्रम-निर्माताओं की सुबुद्धि और विवेक पर निर्भर है कि दूरदर्शन हमारा कितना हित करेगा और कितना अहित। यह उस तीक्ष्ण छुरे के समान है, जो गंभीर शल्यक्रिया करके मनुष्य की जीवन रक्षा कर सकता है और किसी आततायी के हाथ में पड़कर किसी का गला भी कटवा सकता है।

**– ईशान, एफ १/७ हौज खास,**
**नयी दिल्ली - ११० ०१६**

* * *

### □ र. शौरिराजन

दूरदर्शन के राष्ट्रीय कार्यक्रम अधिकांश अच्छे हैं, हितकर भी हैं। दिल्ली के प्रातः दर्शनीय कार्यक्रमों में कुछ अच्छे हैं, बहुत कुछ बेकार हैं। राज्यों के केंद्रों से प्रसारित होने वाले - विशेषकर चैनल - २ के कार्यक्रम प्रायः उबाऊ, पूरक, स्तरहीन पाये जाते हैं।

व्यायाम, योगाभ्यास, कृषि संबंधी कार्यक्रमों से लाभ हैं। चित्रहार, खेल-कूद जगत के प्रसारणों से विद्यार्थी (छात्र-छात्राओं) का समय बर्बाद हो जाता है। घटिया फिल्मों के कारण प्रायः सभी परिवार जनों के समय और नेत्र व्यर्थ हो जाते हैं। राज्यों के केंद्रों में स्थानीय शासक दल का प्रभाव और हस्तक्षेप अधिक पाये जाते हैं। कुछ समाज विरोधी, इतिहास विरुद्ध और अपसंस्कृति के तत्व अक्सर दूरदर्शन पर

हावी हो जाते हैं।

अब देखना है, स्वायत्तता क्या रंग लाती है?

— २९३, ४१ - मार्ग, सेक्टर - ८
के.के. नगर, मद्रास - ६०० ०७८

* * *

**□ ठाकुर प्रसाद सिंह**

अब जब दूरदर्शन आया है तो हर देश के प्रतिष्ठित लेखक उसकी ओर वैसी ही वितृष्णा की दृष्टि से देख रहे हैं, जैसी कि रेडियो के प्रारंभ में आने पर देखते थे। उपभोक्ता संस्कृति का प्रभाव दूरदर्शन से विस्तार पा रहा है। यह सच है, पर यह तो पूरे देश के बदले हुए चिंतन का परिणाम है। इस प्रवृत्ति का विरोध दूरदर्शन की गलियों में घुस कर लड़ने से होगा न कि दूरदर्शन कार्यक्रमों को लड़कों-पत्नियों को छोड़कर स्वयं अलग कमरे में बैठने से। मेरे पंजाब के एक लेखक मित्र ने यही बात कहानीकार सम्मेलन में कही। उनका हमने विरोध किया, पर मैं जानता हूं कि ऐसी बात अकेले वे ही नहीं करते। दूरदर्शन एक बहुत सशक्त माध्यम है। उसे इतनी उपेक्षा से तृतीय श्रेणी के धंधेवालों के हाथों में छोड़ देने से देश का भविष्य बहुत अंधकारमय हो जायेगा।

दूरदर्शन का ठीक से उपयोग हो तो वह साठ प्रतिशत से अधिक निरक्षरों के इस महाद्वीप का वैचारिक कायाकल्प कर कर सकता है। वैसे ही खुले विश्वविद्यालय तथा विद्यालयों की भी वह बहुत दूर तक सहायता कर सकता है। गांवों को स्वस्थ मनोरंजन दे सकता है तथा अंधकार भरी गांव की शामें जीवंत बना सकता है। पर यदि इ धारा में विष मिलाया गया तो यह इस पूरे दे को नष्ट भी कर सकता है; जैसा कि इन दि करने का खतरा है। प्रसार-भारती की स्वायत्तता का मतलब कुछ टेक्नोक्रे ब्यूरोकेट की दिमागी ऐयाशी के अलावा और कुछ होगा, यह विश्वास करने की बात नहीं।

— के ६७/१२०, ईश्वरगंगी
वाराणसी, उ.प्र.

* * *

**□ लक्ष्मीशंकर व्यास**

दूरदर्शन का प्रभाव देश, समाज तथा परिवार पर जिस तेजी से बढ़ता जा रहा है, उसे ध्यान में रख इस माध्यम के स्वरूप को विश्वदर्शन तथा भारतीय जीवन की बहुमुखी प्रवृत्तियों का दर्पण बनाना होगा। सत्तारूढ़ दल अपनी राजनीतिक छवि निखारने में इसका उपयोग करे, यह उचित नहीं। इसलिए 'प्रसार भारती' विधेयक को संसद में व्यापक विचार-विमर्श के बाद स्वीकृत किया गया है। सत्ता परिवर्तन के बाद भी यह कहना कठिन है कि इस महत्वपूर्ण माध्यम को पूर्ण रूप से स्वतंत्र तथा स्वायत्तशाली बनाया जा रहा है। हमारी नयी पीढ़ी तथा बच्चों को 'दूरदर्शन' व्यापक रूप से प्रभावित कर रहा है। अतः इसके माध्यम से राष्ट्रप्रेम, राष्ट्रीय एकता तथा भारतीय गौरव का बोध, मनोवैज्ञानिक और कलात्मक प्रस्तुतियों द्वारा प्रदर्शित किया जाना चाहिये

— पराड़कर संग्रहालय के
३१/५१ काल भैरव, वाराणसी

# कोई गीत सुनाओ

मुझको कोई गीत सुनाओ
मेरा मन फिर भर आया है
सुधि ने सांकल खटकाया है
मेरी थकी पीर सो जाये
ऐसा कोई स्वर दोहराओ
मुझको कोई गीत सुनाओ
जाने क्यों जाने अनजाने
उभर रहें हैं चित्र पुराने
रेखाओं की दीप शिखा के
धूमिल रंग तेज कर जाओ
मुझको कोई गीत सुनाओ
टूट गये वे सारे दर्पण
अर्थहीन हो गये समर्पण
खंडित बिखरी आकृतियों को
फिर से नया रूप दे जाओ
मुझको कोई गीत सुनाओ ।

**— देवनारायण त्रिवेदी 'देव'**

बी १/११ क्रांतिपुरी, जेल गार्डन रोड,
रायबरेली, उ.प्र.

□

सहज सुहावने सुंदर बाल,
हुवे जब जुँओसे बेहाल :
किया तब "उना" का उपचार,
जुँओका हुआ पूर्ण संहार।

उना जुंअे और लिखोंका
पूर्णतः नाश करना है।
उना चिकनाहट रहित,
उपयोगमें सहज और किफायती है।
उना कटूनीम, करंज, भृंगराज,
ब्राम्ही, आमला, शिकेकाई आदि
आयुर्वेदिक औषधी युक्त
प्रभावी तेल है।

उना
जुँअेनाशक
प्रभावी तेल.

Varma's
दि वर्मा फार्मसी प्रा. लि. इंडस्ट्रियल इस्टेट, हडपसर, पुना : १३

# फैलेगा आलोक तभी फिर

जला कर दिये
द्वार पर सबने
सजा कर रख दिये
    कोटि कोटि जन
    बने हुए हैं
    जो अति निर्धन
    और गरीबी के स्तर से
    नीचे जो हैं जीवन जीते
    स्नेह नहीं मिल पाता जिनको
    बुझा-बुझा सा रहता है मन
    दलित प्राण हैं, अर्धनग्न तन
कोटि-कोटि जन
होंगे जब तक
शोषित, पीड़ित और तिरस्कृत
भले दिवाली धूम-धाम से
रोज सनायें
वह दीपावलि लेकिन
सदा अधूरी होगी,
    दूर हटाकर घोर उदासी
    सबके मन की
    स्वार्थ, घृणा, शोषण, हिंसा को
    नष्टप्राय कर
    स्वच्छ बना दें जीवन-पथ को
    फैलेगा आलोक तभी फिर ।

**— दिलीपकुमार तिवारी**
**३३/२, दूसरी पांजरापोल लेन**
**सी.पी. टैंक, बंबई - ४०० ००४.**

□

FROM
SODA ASH
GROW
MIGHTY OAKS

The DCW story started with India's first Soda Ash plant in 1939. Today, this little Soda Ash factory has grown into a mighty oak.

DCW now has three major divisions — the Soda Ash division at Dhrangadhra, Gujarat and the Caustic Soda and PVC Resin divisions, both at Sahupuram, Tamil Nadu.

DCW is one of India's largest producers of Salt, Soda Ash, Caustic Soda and PVC Resins. It is also one of the few in India who produce Trichloroethylene and upgraded Ilmenite — the latter being almost wholly exported.

The product range also includes Calcium Chloride, refined Soda Bicarb, Ammonium Bicarbonate, Magnesium Chloride, Bromine, Liquid Chlorine and Hydrochloric Acid.

It is said that sound management and a conscious policy of developing your people will ensure that you live happily ever after. DCW has been doing it for more than 50 years.

DCW

DCW
3rd FLOOR NIRMAL NARIMAN POINT
BOMBAY 400 021
TEL 287 1914 287 1916 202 0743
TELEX 011-82362 FAX (22) 202 5538

# मृन्मय-चिन्मय

दिव-सा दीपित
ज्योतित ज्योतिष्पथ-सा वैभव जगतीतल का
दीप प्रज्वलित अगणित-अगणित
लघु-लघु प्रचुर प्रभासुत
मानो लोहा लेते अंध-तमस से
फिर यह क्रंदनमय भैरव-रव
चीत्कार चिर
शोषण-शोषण....
फूत्कार विषधर अघ-अहि की
सत्-शिव-सुन्दर से
भीषण रण ध्वंस दनुज का
यह सब क्यों मां !
प्रभव कौन है
इस पाशव का, इस रौरव का ?
ओ कमले ! क्यों आज मौन है ?

□

सुख-समृद्धि औ' सौंदर्य की जगज्जननि हे !
प्रतीकार कर
प्रभा-वार कर तम स्तोम पर, तमसावृत पर
स्नेहिल प्रज्ञा का प्रदीप सित
उद्दीपक हो हर्ष-मर्ष का
शलभ सभी दुख-दैन्य-दुरित के,
दीप-शिखा पर दे दें स्वाहुति
सौख्य-शांति-धन-धान्य-प्रदायिनि !
मृषा-तृषा औ' मृगमरीचिका से विमुक्त कर
प्रत्यवाय-चय कर विनष्ट मां !
वरद हस्त धर दे शुभदायिनि !
ज्योतिर्मय प्रिय पथ प्रशस्त कर ।

□

अंतस्तल-मल-दल-हारिणि हे !
झंकृत कर मन-मंदिर-तंत्री
दीप-राग के प्रोज्ज्वल स्वर से
जन-जन को दे श्रेष्ठ प्रचोदन
स्वात्म-प्रबोधन....
जगमग हो जग प्रमा-प्रभा से
देवलोक-सी दिव्याभा से
दीप प्रज्वलित बाहर 'मृन्मय'
'चिन्मय' हो उर में आलोकित
जड़ ज्योतिर्मय, चित् ज्योतिर्मय
पद्मे ! अतिगति यही अभीप्सित !

**— बालकृष्ण गर्ग**

'शाकुन्तलम', ६४७ गंगाधर गली,
मुरसान द्वार, हाथरस - २०४ १०१, उ.प्र.

□

# सूरज की दीवाली

☐ नरेन्द्र सिंघ

शाम के सात बज चुके थे। सभी के घर में दीये जल चुके थे। चारों-ओर पटाखों की आवाज से सारा वातावरण गूंज रहा था। ऐसे माहौल में सूरज के घर मातमी वीरानी छायी हुई थी।

'क्यों, आपके यहां सूरज आया क्या? मैंने पांच घंटे पहले उसे पटाखे लाने के लिए पैसे दिये थे, किंतु वह अभी तक पटाखे लेकर वापस नहीं लौटा।' सूरज की मम्मी बुखार में तपती हुई आसपास के घरों में जा-जाकर पूछताछ कर रही थीं। उनको सभी जगह एक ही जवाब मिलता, 'हमारे यहां तो सूरज आया ही नहीं।'

लगभग आठ बजे सूरज अपने हाथ में एक थैली लिये हुए घर वापस लौटा। उसको देखते ही उसकी मम्मी बिगड़ पड़ी, 'तुझे तो मैंने पटाखे लाने भेजा था, फिर कहां चला गया था? बोल...बोल तू चुप क्यों है? ला...ला... देखें क्या लाया है तू?' और इसी के साथ उन्होंने उसके हाथ की थैली छीन ली।

'अरे, ये तो दवाइयां हैं। किसकी हैं? क्यों लाया है तू?' मम्मी ने सूरज से पूछा।

'ये आपकी ही दवाइयां हैं, मम्मी! आप बुखार आ रहा था, इसीलिए मैं दवाइयां ले लाया हूं।' सूरज ने उत्तर दिया।

'मैंने तो पटाखे लाने के लिए पैसे दिये थे अपनी दवाइयों के लिए नहीं, तब क्यों लाया ये दवाइयां?' मम्मी ने झिड़कते हुए पूछा।

सूरज बोला, 'मम्मी आज से आठ वर्ष पहले जब मैं मात्र सात वर्ष का था, पापा हम दोनों को इस वीरान दुनिया में अकेला छोड़कर स्वर्ग सिधार गये थे। तब से आज तक आपने ही मेरी सेवा की थी। मेरी हर जरूरतों को पूरा किया था आपने। पापा की कमी का अहसास न होने दिया था। ऐसे वक्त में जबकि आप बीमार पड़ी थीं मैं दवा का इंतजाम न कर पटाखे कैसे ला सकता था मां!

'आपने पटाखे लाने के लिए जो दो रुपये दिये थे। मैं उन पैसों को लेकर सीधे दवा की दुकान पर जा पहुंचा था। मैंने डाक्टर से आपका हाल बताकर दवा मांगी। डाक्टर ने दवाइयों का दाम नौ रुपये बताया। मैं बड़े असमंजस में पड़ा, क्योंकि मेरे पास मात्र दो रुपये ही थे। मैं डाक्टर से पैसे कम पड़ जाने के कारण और पैसे लाने जाने की बात

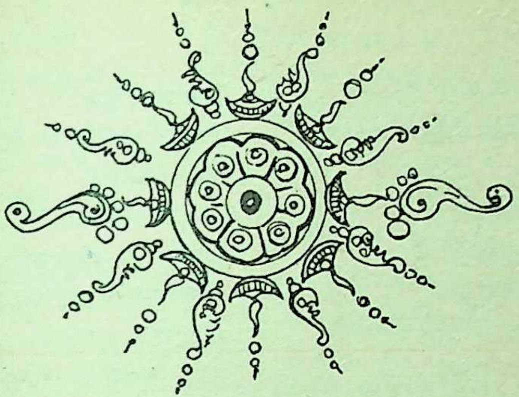

बताकर आगे बढ़ गया ।

'अभी कुछ ही दूर पहुंचा था कि देखा, एक व्यापारी अपने सामान के उठाने के लिए मजदूर की तलाश में भटक रहा था । मैंने तेरह रुपये में उसका सामान उठाने का ठेका ले लिया । उसी में से नौ रुपये की दवाइयां ले आया और यह लो मम्मी छः रुपये । फटाफट दिये जलाओ, मम्मी । आज दीपावली है ।'

इतना सुनना था कि मम्मी की आंखों में से आंसूओं की धारा बह निकली । उन्होंने सूरज को अपने सीने से लगा लिया और बोली, 'तू जुग-जुग जिये मेरे लाल । मेरी भी उम्र तुझे लग जाये । तू मेरा ही सूरज नहीं, मेरे कुल का सूरज है ।'

**— मगनभाई मार्केट,**
**भवानीमंडी - ३२६ ५०२**

□

'भीख नहीं मिलेगी,' गृहिणी ने दरवाजे बंद करते हुए कहा, 'और अगर तुम यहां से नहीं टले तो मैं अपने पति को आवाज दूंगी ।'

'लेकिन आपके पति घर पर मौजूद हों तब न ।'

'तुम्हें कैसे मालूम कि वह मौजूद नहीं हैं ?'

'आप जैसी औरत से शादी करनेवाला सिर्फ खाना खाने के वक्त घर में होता है ।'

□

# गायत्री

ॐ भूर्भुवः स्वः
भू रूप, अन्तरिक्षरूप निखिल द्युलोकरूप,
अवस्थित हैं जो
सबके उत्पादक सविता
प्रसविता अनन्त ब्रह्माण्डों के
अनन्त कोटि प्राणियों के—
जो हैं दीप्ति-क्रीड़ा-मण्डित परमेश्वर
ब्रह्मा, विष्णु, रुद्ररूपधारी
एक अद्वितीय ।
वे हैं नित्य परमप्रकाशरूप, सतत विमर्शपूर्ण
सभी सच्छास्त्रों के
चरम परम प्रतिपाद्य,
उनका वरेण्य भर्ग हो तुम हे जननी !
वह भर्ग जो,
तीनों लोकों और तीनों कालों के
समस्त पाप-ताप का
भर्जन करने में समर्थ है सदा ।
वही तुम प्रातःकाल
प्रकट होती हो मूर्तिमती उषा-सी
उदयोन्मुख सूर्यमण्डल में
द्विभुजा, रक्तवर्णा,
अक्षसूत्र कमण्डलुधरा ज्ञानदायिनी
ब्रह्मचारिणी हंससमारूढ़ा सरस्वती !
फिर मध्याह्न में मां ! तुम्हीं
सर्वभूतरक्षिका शंखचक्रगदापद्मधारिणी
वैष्णवी चतुर्भुजा
रविमण्डल में होती हो अवतरित
अये गरुड़वाहिनी !
अथवा हे मातः
देती हो कभी दर्शन निज
श्वेत गजारूढ़ा
पुण्य पीत वस्त्रधारिणी
अखिल सुरेन्द्रसंघ वन्दिता
हिरण्यवर्णाभरणा महालक्ष्मीरूप !
करतल से झरती है
रजत हिरण्य रत्नराशि
अप्रमेय तब !
अये भक्तवत्सले
स्नेहस्नुत स्तनवती
करुणादयार्णवे !
और फिर सायंकाल
तुम्हीं अये शर्वाणी !
देती हो दिखाई वृषभासना
मुक्ताविद्रुम-हेमनील-धवल छायामयी
पंचमुख,
शीश पर धार इन्दु का किरीट,
स्रवित अमृत-मेघ-सा ।
तारांकित दुकूल श्यामधारिणी
वराभयमुद्रामण्डिते हे परा अम्बिके !
उतरो जन के मन के गगन में
प्रेरणा दो हमको, विश्व को,
करें हम अभेद-बुद्धि
ध्यान परब्रह्मरूप तेज का तुम्हारे दिव्य ।
तुम्हीं हो हे जननी !
सर्वातीत परात्पर प्रभु का
परम प्रकाश वह

मुक्त करता जो जन्म-मृत्यु रूप
तटवाले संसृति के सागर से ।
जाग्रत की, स्वप्न की, सुषुप्ति की
दशाएं करवा के पार
देती हो तुरीय दशा का अपूर्व उपहार ।
प्रेरणा दो, उठें और जागें हम ।
ज्ञानालोक प्राप्त करें ।
बन जाय एक मन, एक प्राण, एक हृदय,
मानव समाज सब !
तम को प्रज्ञान दो
अये वेद जननी !
मानस चैतन्य का करो उच्चतम विकास ।
पहुंचें हम वहां, जहां
'विश्वभवत्येकनीड़म्'
जहां विश्व बन जाय
मानवता का नीड़ एक
परम विश्रामधाम
मातः, शत, शत, प्रणाम ।

**— कुंवर चन्द्रप्रकाश सिंह**

२/२२ त्रिवेणीनगर, सीतापुर रोड, लखनऊ - २२६ ०२०, उ.प्र.

---

## राष्ट्रीय आत्मा पुरस्कार १९९०

विगत ५ वर्षों में प्रकाशित काव्य कृतियों की ५ प्रतियां ३१ अक्तूबर १९९० तक आमंत्रित हैं। पुरस्कार राशि रु. २१११=०० ससम्मान समारोह पूर्वक प्रदान की जायेगी।

## गोमती वृन्दावन पुरस्कार १९९०

५० वर्ष से अधिक आयु के कृतिकारों को उनकी समग्र साहित्यिक सेवाओं के उपलक्ष्य में रु. २१११=०० का गोमती वृन्दावन पुरस्कार प्रदान किया जायेगा। कृतिकार अपनी प्रत्येक प्रति की ५ प्रतियां तथा समीक्षा आदि ३१ अक्तूबर १९९० तक प्रेषित करें।

## गिरिजा सुधा पुरस्कार १९९०

विगत ५ वर्षों में प्रकाशित केवल कवयित्रियों की काव्यकृतियों की ५ प्रतियां ३१ अक्तूबर १९९० तक वांछित हैं। पुरस्कार राशि रु. ११११=०० ससम्मान समारोह पूर्वक प्रदान की जायेगी।

## जगदीश सहाय अग्निहोत्री पुरस्कार १९९०

ऐसे बाल साहित्यकार को उपर्युक्त पुरस्कार रु. ११११=०० तथा भेट सामग्री सहित ससम्मान प्रदान किया जायेगा, समस्त बाल साहित्य एवं प्रौढ़ (गम्भीर) साहित्य सेवा विवरण ३१ अक्तूबर १९९० तक प्रेषित करें।

**महाकवि राष्ट्रीय आत्मा स्मारक समिति, राजाराम सरस्वती विद्यालय,**
**जवाहर नगर, कानपुर - १२, उ.प्र.**

### उपेक्षित धर्मस्थली

# व्यास की प्रतिमा

□ डॉ. परिपूर्णानन्द

मैं ने जीवन में कोई अच्छा काम किया हो या न किया हो, एक काम अवश्य किया है, जिस पर मुझे अभिमान है। जहां तक मेरी जानकारी है मैं भारत में पहला व्यक्ति हूं, जिसने महर्षि वेदव्यास की प्रतिमा बड़े खोज, छानबीन के साथ, काफी व्यय कर, उनके उस स्थान पर स्थापित की जो युगों से उनका जन्म स्थान माना जाता है। जिस स्थान पर पवित्र यमुना नदी की धारा मुड़ती है, जहां युग-युगान्तर से मछवाहों तथा मल्लाहों की बस्ती तट पर है, और जहां शताब्दियों से एक टीला खड़ा है, जिसका नाम ही युग-युगान्तर है, व्यास टीला कहलाता है, उसी पर एक छोटा सादा मन्दिर बनवा कर उसमें व्यास की प्रतिमा स्थापित की गयी। वह स्थान जालौन जिले की कालपी नगरी है— ऐतिहासिक पवित्र भूमि जहां अंग्रेजों से युद्ध करती महारानी लक्ष्मी बाई वहां कई दिन तक ठहरी थीं — जहां आज भी महारानी की इतिहास प्रसिद्ध तलवार तथा वह चौकी रखी है, जिस पर बैठकर नाना राव संध्या वन्दन करते थे, वही कालपी जहां मोतीचन्द्र वर्माजी के मकान के सामने नीम का वह वृक्ष है जिस पर अंग्रेजों ने सैकड़ों निरपराध लोगों फांसी पर लटका दिया था।

और यह मूर्ति स्थापन इसलिये ऐतिहासिक है कि उस समय उत्तर प्रदेश राज्यपाल श्री कन्हैयालाल माणिकलाल ने सपत्नीक बैठकर प्रतिमा स्थापन उसमें प्राण प्रतिष्ठा के लिए श्रीमती लीलाव मुंशी के साथ हवन-पूजन किया था। की प्रतिमा के संस्थापन में मुंशीजी का अद्भुत इतिहास, यह महत्वपूर्ण इतिहास भूल गये हैं।

ब्रह्म सूत्र के रचयिता तो 'अथातो ब्रह जिज्ञासा' के १८ सूत्रों के द्रष्टा जिन सूत्रों आदि शंकराचार्य से लेकर आज तक व्याख पर व्याख्या होती चली जा रही है, वह कौन थे, कैसी सूरत शक्ल थी, यह बड़े शो का विषय है। उनका नाम कृष्ण द्वैपायन इसलिये कि जब मत्स्यगंधा नामक युवती प्रसंग से वे माता के पेट में आये, वह यमुना एक सूखे द्वीप में गर्भ में आये थे और सांवले रंग के थे, अतएव कृष्ण द्वैपायन नाम पड़ा। दूसरा नाम बादरायण था। यमुनोत्री-गंगोत्री के पास बदरी वन में उन्होंने तपस्या की थी

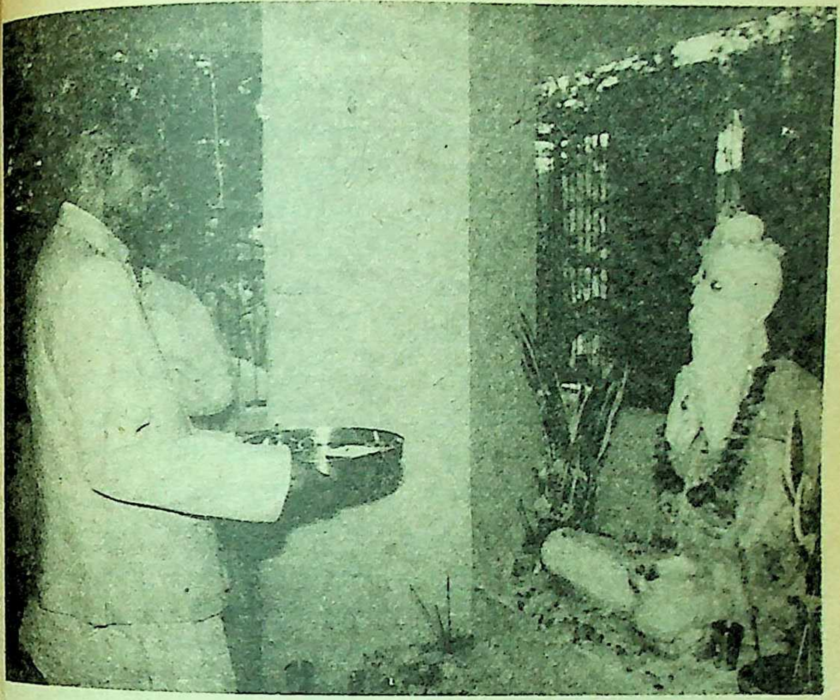

राज्यपाल श्री० सत्यनारायण रेड्डी व्यास प्रतिमा की पूजा करते हुए

अतएव वे बादरायण कहलाये। व्यास का अर्थ होता है संक्षिप्त बात को विस्तार से कहना। ब्रहम विद्या के वैदिक सूत्रों को अठारह ब्रहमसूत्रों में पिरोने वाले यही व्यास थे। पुराणों के रचयिता व्यास तथा एक के बाद दूसरे व्यास द्वारा लिखे पुराणों के रचयिता बादरायण व्यास नहीं थे। वह तो बहुत पहले हो चुके थे।

पर, इनकी प्रतिमा बनाने के लिए यह निर्णय करना था कि उनकी शक्ल-सूरत कैसी थी। श्री कन्हैयालाल माणिकलाल मुंशी यों ही कल्पनामय मूर्ति या प्रतिमा का अनावरण करने को राज़ी नहीं थे। हमें अपने शोध में बड़ा भारी सहारा मिला स्वर्गीय महाराजा काशी नरेश का – वर्तमान काशी नरेश विद्वद्वर डा. विभूति नारायण सिंह के पूर्वज से लेकर उनके निरन्तर शोध का। व्यास के नाम से तो यह स्पष्ट था कि वे कृष्ण यानी सांवले थे। धीरे-धीरे शोध करके यह पता चला कि वे लम्बा मुख, बड़ी आंख अपनी माता जैसा मनोहर रूप वाले थे। फिर और शोध से एक स्थान पर मिला कि वे श्मश्रु-दाढ़ी-मूंछ वाले थे। इन सब आधारों पर काशी नरेश ने व्यास का एक चित्र

बनवाकर प्रकाशित कर दिया। बस वही हमारा सहारा हो गया। राज्यपाल मुंशीजी ने भी इस चित्र को स्वीकार कर लिया। वाराणसी के प्रसिद्ध मूर्ति निर्माता श्री मुखर्जी (अब स्वर्गीय) ने बड़े प्रेम से व्यास की वह प्रतिमा तैयार की तथा राज्यपाल मुंशी ने उसकी प्राण प्रतिष्ठा सपत्नीक की। वह टीला यमुना के बहाव से बराबर कटता जा रहा था। कुछ समय में व्यास टीला नष्ट हो जाता पर उस समय के मुख्य मंत्री डॉ. सम्पूर्णानन्दजी ने इंजिनियरों से कहकर उसके कटाव के रोकने का प्रबंध कर दिया।

आज व्यास की वह प्रतिमा उदास दिखती है। स्थानीय कुछ लोग तो उसका पूजन कर भी लेते हैं पर अन्य लोग इस तीर्थ का न तो दर्शन करने जाते हैं न इस जीर्ण, साधारण मन्दिर को एक भव्य स्थान बनाने के लिये एक पैसा भी दान देते हैं। बड़े-बड़े सेठ महाजन, यहां तक कि कालपी के रहने वाले भी इस स्थान को स्थायी, दिव्य बनाने के लिए कुछ भी खर्च नहीं कर रहे हैं। रोज़ नये मन्दिर बन सकते हैं। पुराने नष्ट होते जा रहे हैं। व्यास के पुजारियों की व्यास मन्दिर के प्रति यह उदासीनता असह्य है।

## मूर्ति या प्रतिमा

हमने ऊपर 'मूर्ति' तथा 'प्रतिमा' दोनों शब्दों का प्रयोग किया है। अंग्रेजी में मूर्ति को 'आइडोल' कहते हैं, पर मूर्ति वह वस्तु है जो किसी को देखकर, उसकी नकल करके बनायी गयी हो। चित्रकार ने तस्वीर बनायी। कुम्हार ने या गढ़ने वाले ने उसकी नकल उतार दी। इसीलिये बुद्ध की जो बौद्धों ने बनायी थी उसे आदि शंकरा अपने वेदान्त दर्शन (अध्याय 'पुत्तली' कहा है। मनु ने मूर्ति की बड़ी व्याख्या की है– वे लिखते हैं कि प्रजापति की मूर्ति है। बहन दया की मूर्ति आत्मा सब प्राणियों की मूर्ति है।

**आचार्यो ब्रह्मणो मूर्तिः**
**पिता मूर्तिः प्रजापतेः।**
**दयाया भगिनी मूर्तिः**
**धर्मस्यात्मेति यः स्वयम्।**
**अग्नेरभ्यागतो मूर्तिः**
**सर्वभूतानिवात्मनः॥**

अभ्यागत अग्नि की मूर्ति है। कितना भाव है। चतुर्भुजी विष्णु, जिह्वा वाली आदि को किसी ने देखा नहीं है। तस्वीर नहीं उतारी है। तब जो हम करते हैं, मन्दिर में स्थापित करते हैं, वह है। हम मूर्ति की नहीं, प्रतिमा की पूजा हैं। मूर्ति स्त्रीलिंग शब्द है तो प्रतिमा स्त्रीलिंग है। प्रतिमा का अर्थ है प्रतिच्छा प्रतिबिम्ब, प्रतिस्थ तथा प्रतिनिधि इसीलिये हमने किसी देवता के जो निर्धारित किये हैं, उसके अनुरूप उस प्रतिबिम्ब या प्रतिनिधि बनाते हैं। शिव लिंग या चतुर्भुज विष्णु इन देवताओं प्रतिनिधि हैं। किसी देवता के रूप को आदि शंकराचार्य ने भी नहीं देखा है। उन्होंने कहीं नहीं लिखा कि उनको साक्षात्कार हुआ। जिन्हें साक्षात्कार हुआ वह उनके भाव, भावना का स्वरूप था। शिव लिं

# चिर दीप !

अब धरा को घेरती है रात काली,
स्नेहयुत आलोक भर -
चिर दीप ! मंगलमय दिवाली ।

तमस छाया घोर -
अन्तर्मन-हृदय में,
पंक लिपटी आस्था -
कंचन वलय में,
मुक्ति का संदेश भर -
मणि-सीप है निःशेष प्याली ।

सृष्टि की तरु-वल्लरी -
अंगार दहके,
पुष्प अधरों पर -
मिलन के गीत झुलसे,
क्रूर शिखरों को दिशा-निर्देश कर -
आकंठ विषमय पात डाली ।

हिम-शिखर से चल -
मलय, जल-सिंधु-तट तक,
रक्त से हिम सिक्त है -
आपाद मस्तक,
चिर प्रतीक्षित ज्योति का उन्मेष कर -
संत्रस्त उपवन चारु माली ।

नील नभ की चांदनी भर -
वर्तिका में आरती की,
प्रीति-पलकों पर सजा -
अभिराम छवि, सुधि भारती की,
चेतना, सत्शांति का परिवेश सज -
आरती कर, आरती कर, तू निराली ।

स्नेहयुत आलोक भर -
चिर दीप ! मंगलमय दिवाली ।।

**— कुमार शैलेन्द्र**

३८/४, शेरे पंजाब, महाकाली रोड
अन्धेरी पूर्व, बम्बई - ९३.

---

शिव के गुणों का प्रतीक है । चतुर्भुज विष्णु लोक पालक की वे चार भुजायें हैं, जिनके द्वारा सृष्टि के एक-एक गुण का पालन होता है। प्रतिमा शब्द महाभारत में बड़े सुन्दर ढंग से आया है :-

**गिरि पृष्ठं तु सा तस्मिन् स्थिता**
**स्वसितलोचना ।**
**विभ्राजमाना शुशुभे प्रतिमेव**
**हिरण्मयी ।**

इस प्रकार व्यास की प्रतिमा तथा मूर्ति दोनों हैं, मूर्ति इसलिये कि उसका कुछ सटीक वर्णन मिला, जिसे देखकर दाढ़ी-मूंछ वाला सांवला, लम्बे चेहरे वाला आदमी कहा है। प्रतिमा इसलिये कि कल्पना ने भी काम किया है । पुराणों में देवताओं का जो रूप दिया गया है वह प्रतीकात्मक, प्रतिमा के रूप में ही है । अतएव व्यास की टीला पर राज्यपाल मुंशी दम्पति वाली मूर्ति प्रतिमा- मूर्ति है ।

**— उत्तर प्रदेश हिंदी संस्थान,**
**गांधी, मार्ग लखनऊ - २२६ ००१**

# सांझ के बादल

छितिज पर बिखरे हुए हैं
सांझ के बादल ।

मृगसिरा की धूप में फिर
तपी दहकी हैं,
पोखरों में कुछ दरारें
और दड़की हैं,
हाथ पुरवा के बदन सहला गये जैसे,
घाव पर मरहम हुए हैं,
सांझ के बादल ।

अस्मिता नभ पर टंगा था
प्रश्न जैसा दिन,
मूल के अभिशाप-बोझिल
लग्न जैसा दिन,
चन्द्र के शुभचरण चिन्हित व्योम में फिर से,
रंग भर निखरे हुए हैं,
सांझ के बादल ।

लाल नीले बैंगनी -
परिधान धारी हैं,
परिब्राजक पवन-पथ के
ब्रम्हचारी हैं,
किरण-वल्गा ये समेटे सूर्य के रथ पर
केतु से फहरे हुए हैं,
सांझ के बादल ।

□ **शम्भुदयाल सिंह 'सुधाकर'**
- २४१, इन्दिरा नगर,
रायबरेली - २२९ ००१, उ. प्र.

# आत्मा का संगीत

प्रेम बरसात की
उस गहरी नदी सा है
जिस पर
बरसता है जब नेह
मन प्राणों तक
भीतर-भीतर
भिगो-भिगो जाता है
और स्मृतियों के
गीले वसन लिपटाये
अनंत आनंद के
महासमुद्र में
डूबकी लगाता है
प्रेम
जिसका पर्याय कुछ भी नहीं
और सब कुछ है
गढ़ लेता है
अपने लिए
नये-नये अर्थ
नयी-नयी परिभाषाएं
जो यदि गिर जाये
स्वाती की बूंद सा
अनवरत प्रतीक्षा में
पुकारते पपीहे के मुंह में
मोती बन जाता है
और अपने सार्थक होने की
खुशी में
आत्मा का संगीत गाता है!

— संतोष 'निर्मल'
पूरे भाई, पो. बेहरा कलां; रायबरेली

# क्षेम का चंदन लगाओ

बांसुरी के स्वर न छेड़ो गीतवाही
अब सम्हालो जागरण का शंख अपने हाथ में-
कौरवी संत्रास में युग जल रहा है
शकुनि का पांसा सभी को छल रहा है
मांगता है भीख उजियारा तिमिर से
रक्त झरता है अहिंसा के शिविर से
रासलीला में न उलझो योगवाही
आज लाओ धनुर्धारी पार्थ अपने साथ में—

* * *

कल्पनाओं की लताएं छांव दे सकती नहीं
रिक्त आश्वासन किसी का पेट भर सकते नहीं
बोझ कुंठा का लिये हमसे चला जाता नहीं
जुल्म सीमा से अधिक अब तो सहा जाता नहीं
आसुरी चालें कुचल दो — क्रान्तिवाही
क्षेम का चंदन लगाओ भारती के माथ में

* * *

झुक रहा ध्वज संस्कृति के सूर्यरथ का
चाहती गति काल थी श्रृंगार पथ का
आज की दुर्योधनी रण नीति में दुर्गंध है
भीषम पितामह विवश हैं, धृतराष्ट्र तो मोहांध है
मोह के अनुबंध काटो ज्योतिवाही
सृजन की गीता रचो मनुजत्व के परमार्थ में —

**— धनंजय अवस्थी**
**कमलानगर, फतेहपुर, उ.प्र.**

# संवेदनशील :

पत्थर !
तुम्हें लोगों ने क्यों बदनाम
कर रखा है ?
कोई इन्सान ! यदि वह कठोर दिल है
तो, लोग उसे नाम दे देते हैं ! कि
वह पत्थरदिल है
पर मैंने देखा है ! कि तुम
रोते हो, हंसते हो, बिलखते हो
मैंने देखा है तुम्हे ताजमहल में
मुमताज की मुहब्बत का
पैगाम सुनाते हुए,
मैंने देखा है तुम्हें लालकिले में
औरंगजेब के अत्याचारों पर
आंसू बहाते हुए
मैंने देखा है तुम्हें हर ऐतिहासिक इमारत में
असहाय, बेबस मजदूरों की
करुण गाथा पर
बिलखते हुए ! फिर भला
लोग तुम्हें क्यों बदनाम करते हैं ?
मेरी समझ में ! तुम बेहद कोमल हो
इन्सान के दिल से भी अधिक !

**— मीना गुप्ता**
**द्वारा श्री आर. के. गुप्ता,**
**सीनियर पर्सनल मैनेजर आई.डी.पी.एल.**
**बालानगर टाउनशिप,**
**हैदराबाद - ५०० ०३७**

# ज्योतिर्मय श्रृंगार तुम्हारा !

मेरा तो कुछ नहीं जगत में दर्द तुम्हारा, प्यार तुम्हारा ।
तन का दीप उमर की बाती, चहुंदिशि में उजियार तुम्हारा ।।

एक किरण में, ज्याति पुंज तुम,
भीतर-बाहर कहीं नहीं तम;
दृष्टिपंथ आलोकित तुमसे, ज्योतिर्मय श्रृंगार तुम्हारा ।

तुम निशि-दिन, तुम सांझ-सकारे,
तुमने आकुल हृदय उबारे;
तुम घट-पनघट-वंशीबट तुम, जीवन भर आभार तुम्हारा ।

धार अजानी निठुर किनारा,
डूब रहे को तुम्हीं सहारा;
तट के बंधन सभी तुम्हारे, सम्बल हर मझधार तुम्हारा ।

तुम घन सावन, तुम मन भावन,
तुम-सा कौन जगत में पावन;
तुम वृन्दावन, तुम्हीं द्वारिका, अगजग को आधार तुम्हारा ।

मंदिर-मस्जिद, हर गुरुद्वारे,
भटका गली गांव घर द्वारे;
इस जीवन में रास न आया भेद भरा संसार तुम्हारा ।

**— तारादत्त 'निर्विरोध'**
१२८२, खेजड़े का रास्ता,
जयपुर, राजस्थान

---

सु. रामकृष्णन् द्वारा भारतीय विद्या भवन, क. मा. मुंशी मार्ग, बम्बई–४००००७ के लिए प्रकाशित तथा एसोसियेटेड एडवरटाइजर्स एंड प्रिन्टर्स, बम्बई ४०००३४ में मुद्रित।

# पत्र-दृष्टि

मैंने **नवनीत** का माह सितंबर-९० अंक पढ़ा। **नवनीत** हिंदी की एक अनूठी पत्रिका है। इसके अलावा इसमें प्रकाशित ऐतिहासिक एवं सांस्कृतिक लेख बहुत अच्छे लगे। इस माह सांस्कृतिक मंच शीर्षक बहुत अच्छा लगा। इसके पढ़ने से हिंदी के साथ-साथ सामान्य ज्ञान में भी वृद्धि होती है। ऐसी सामग्री के प्रकाशन से मेरी ओर से बधाई स्वीकारें।

**– मोहन मालवीय, भोपाल, म.प्र.**

* * *

**नवनीत** सितंबर-९० अंक में प्रकाशित दो कहानियों ने मन को छू लिया। वे कहानियां हैं– 'निबिया अकेल' और 'विश्वासघात'। दोनों ही कहानियों की नायिकाओं को बिना किसी कसूर के मर्मांतक पीड़ा भोगनी पड़ी। 'निबिया अकेल' की भाभी जहां घुट-घुटकर जीती है और अंततः इस असार संसार के समस्त बंधनों से मुक्त हो जाती है, वहां 'विश्वासघात', की डॉ. पल्लवी जोशी सब कुछ लुटा देने के बाद एक धुंधली सी आशा की किरण के सहारे अपनी बाकी जीवन-यात्रा पूर्ण करने का संकल्प संजोती है। काश! दोनों ही नायिकाओं के जीवन में ऐसे खल-चरित्रों का प्रवेश नहीं हुआ होता!... ऐसी प्रभावशाली कहानियों के लिए लेखक द्वय को एवं **नवनीत** को हार्दिक साधुवाद।

**– शंभुनाथ पाड़िया, 'पुष्कर'**

* * *

**नवनीत** का सितंबर-९० अंक पढ़ा। अत्यंत भावप्रद व प्रेरक लगा। 'अध्यक्ष के पत्र' शीर्षक से श्री सी. सुब्रमण्यम का पत्र शिक्षा के पावन मूल्यों पर आधारित लगा। 'भाषा जीवन है' शीर्षक लेख अत्यंत कटु सत्ययुक्त लगा। सचमुच इसे जन भाषा बनाने के साथ व्यवहार में वर्तनी शुद्धि से युक्त व्याकरण सम्मत होना चाहिये। भगिनी निवेदिता का आदर्श जीवन परिचय लेख उत्कृष्ट है।

**– नारायण मंघवानी, उज्जैन, म.प्र.**

* * *

**नवनीत** का सितंबर–९० अंक भी सदाबहार साहित्यिक दस्तावेज सिद्ध

हुआ है। कितना अच्छा हो कि [illegible] आप 'कड़वे-मीठे जीवन-घूंट' स्तंभ पुनः शुरू करें और फिलर-संस्मरणों को बढ़ाएं।

**– शिव रैना, जम्मू, कश्मीर**

* * *

**नवनीत** का सितंबर–९० अंक मिला। पिछले अंकों की गौरवशाली शृंखला की तरह प्रस्तुत अंक भी पूर्णरूपेण साहित्यिक रचनाओं का नवनीत है। परम पूज्य हिंदी के अनन्य भक्त श्री चतुर्वेदी पर लिखा लेख अत्यंत मर्मस्पर्शी लगा। आज के वातावरण में उन जैसा कौन पत्रकार, लेखक एवं मातृभाषा का सतत सेवक है। अब न कोई विद्यार्थी है और न पराड़कर, अब तो सिर्फ पत्रकारिता नाम के लिए है। ऐसे अप्रतिम साहित्यिक प्रयास के लिए साधुवाद।

**– राकेश रवि, उल्हासनगर, महाराष्ट्र**

* * *

सितंबर-९० का **नवनीत** पढ़ा। इस माह के अंक में अनेक सुंदर-सुंदर कहानियां पढ़ीं। विशेषकर शकुंतला वर्मा द्वारा लिखी नयी 'विश्वासघात' कहानी मेरे परिवार के सभी सदस्यों को काफी अच्छी लगी। विवेक भारती द्वारा लिखी गयी बालकथा 'पढायी हो भी तो कैसे' पढ़कर काफी मजा आया। मेरे माता-पिता भी इस बालकथा को पढ़कर [illegible] की खुशी हुए। डॉ. भोलानाथ चतु[illegible] ने रूमानिया के तानाशाह 'चेसेस्क्यू' [illegible] जीवनी संक्षेप में अति सरल रूप में [illegible] की है मेरी ओर से उन्हें बहुत-बहुत धन्यवाद।

पिछले पत्र में मैंने आप से [illegible] शिकायत के तौर पर लिखा था कि **नवनीत** जैसी पत्रिका को महीने में कम [illegible] कम दो बार प्रकाशित किया जा[illegible] चाहिये। शायद आपने मेरी इस बात [illegible] ध्यान नहीं दिया। **– राजीवकु[illegible]**

**सिन्हा, जमशेदपुर, बिहा[illegible]**

* * *

**नवनीत** का बहु प्रतीक्षित अंक मिला। हिंदी साहित्यकाश में **नवनीत** जै[illegible] स्वच्छ, स्वस्थ एवं उच्चस्तरीय पत्रि[illegible] को यदि उज्ज्वलतम नक्षत्र की संज्ञा दें [illegible] कदापि अतिशयोक्ति नहीं। अनेकानेक झंझावातों के बीच दुर्धर्ष संघर्ष के पश्चात् भी इसने अब तक अपनी अनुप[illegible] साहित्यिक परंपरा की अस्मिता को अक्षुण्ण रखा है। यह अंक पठनीय है। 'मद[illegible]' मख्मूर की ग़ज़ल सर्वोत्कृष्ट है। 'मदद' कहानी अत्यंत मर्मस्पर्शी प्रयास है। लेख सभी अच्छे हैं। **– आर. के. सिंह,**

**उल्हासनगर, महाराष्ट्र**

* * *

**नवनीत** का सितंबर-९० अंक मिला। भीष्म पितामह पं. श्रीनाराय[illegible]

चतुर्वेदी को आपकी प्रणामांजलि और प्रो. बाजपेयी की काव्यमय श्रद्धांजलि से मन भावविभोर हो उठा। उस दिन (१८ अगस्त) मैं लखनऊ में था, जहां का सारा हिंदी जगत अपनी इस विभूति को खोकर जार-जार रो रहा था। ऐसी महाविभूति को सच्ची-सच्ची श्रद्धांजलि तभी होगी, जब हिंदी को राष्ट्रभाषा का यथोचित स्थान अविलंब मिले। **नवनीत** इस हेतु निरंतर संघर्षरत रहेगा, ऐसा मेरा विश्वास है।

**-वीरेंद्र शर्मा कौशिक, छतरपुर, म.प्र.**

* * *

मैं **नवनीत** का नियमित पाठक हूं। पिछले कुछ समय से विदेश प्रवास के दौरान यहां इस श्रेष्ठ पत्रिका के प्राप्त न हो पाने के कारण मन काफी खिन्न था। लेकिन बहुत प्रयास के बाद इसकी उपलब्धि संभव हो पायी है। अगस्त-९० का अंक पाकर हार्दिक प्रसन्नता हुई। इस अंक में प्रकाशित रमेशचंद्र मेहरोत्रा द्वारा लिखित निबंधिका 'संतुलन का जीवन में महत्व' जीवनोपयोगी है। इसके अलावा कहानियां 'अम्मा' एवं 'रास्ते अपने-अपने' बहुत ही पसंद आयीं। चिंतन-मनन के अंतर्गत डॉ. मनु कोठारी एवं डॉ. लोपा मेहता का संयुक्त लेख 'मृत्यु:जीवन का स्वर्ण कलश' बहुत ही तथ्यपूर्ण व ज्ञानवर्द्धक था।

**– रमाशंकर गुप्ता, मनामा, बहरीन**

* * *

**नवनीत** से एक लंबे अरसे से संबंध रहा है। यूं कह लें कि जब से साहित्य शब्द का अर्थ जाना, **नवनीत** से परिचय हो गया। हिंदी पत्रिकाओं की एक लंबी भीड़ में **नवनीत** ने हमारे देश के प्राचीन मूल्यों, सांस्कृतिक, धार्मिक तथा आध्यात्मिक विरासत का प्रतिनिधित्व करनेवाली जिस छबि को निरंतर अपना कर जो अपनी एक अलग पहचान बनायी है, उसके विषय में और कुछ कहना सूर्य को दीपक दिखाने के समान होगा। वक्त के बदलाव के साथ व्यावसायिकता की आंधी अनेक शीर्षस्थ तथा स्तरीय हिंदी पत्रिकाओं को अपने रंग में बहा ले गयी तथा उनका रूप ही बदल गया, आत्मा बदल गयी। ऐसे में **नवनीत** ने तमाम व्यावहारिक-व्यावसायिक बाधाओं के बावजूद भी अपनी 'मूल्यों वाली छबि' तथा 'मिट्टी से जुड़े' जिस रूप को बरकरार रखा, वह निस्संदेह ही अपने में एक मिसाल है।

**– संदीप सक्सेना, लखनऊ, उ.प्र.**

* * *

**नवनीत** का अगस्त-९० अंक समय से पढ़ने को मिला। इस अंक की सामग्री

(शेषांश पृष्ठ ७ पर)

# नवनीत

संपादक गिरिजाशंकर त्रिवेदी
उप-संपादक रामलाल शुक्ल
अतिरिक्त सहयोग किशोरीरमण टंडन
प्रकाशक सु. रामकृष्णन्
वर्ष ३९, अंक ११

संस्थापक : कन्हैयालाल मुंशी
भारती : स्थापना १९५६
श्रीगोपाल नेवटिया
नवनीत : स्थापना १९५२

नवंबर १९९०

पत्र-वृष्टि .. १
अध्यक्ष के पत्र — सी. सुब्रमण्यम् ८
समर्पित कला-साधक : डॉ. दुर्गा शर्मा — डॉ. गिरिजाशंकर त्रिवेदी ११
मासिक भविष्यफल : नवंबर १९९० — पं.वी.के. तिवारी १७
ग्रंथलोक : — श्रीवास्तव, गोस्वामी, द्विवेदी, सरल, समीर, रामावतार, शाहीन २१
सांस्कृतिक मंच .......... २८
प्रार्थना ३३
मैंने सिर्फ हिसाब चुकता किया है — शिशिर विक्रांत ३४
अंतर्प्रेरित अभिव्यक्तियां — दर्शन लाड ३७
भारतीय शिक्षा के शाश्वत मूल्य — कमलापति मिश्र ४०
हेमिंग्वे के साथ सौदा — डब्ल्यू.जे. लेडेरेर ४४
कविता — डॉ. गणेशदत्त सारस्वत ४७
संगीत ही जीवन है — कृष्णराव भट्ट 'सरस' ४९
कवि का सम्मान — केशवानंद ममगाई ४९
स्वरोदय विज्ञान — उमेश पाण्डे ५०
दो कविताएं — मदन देवड़ा ५२
शिकार का शौकीन भेड़िया — विनोद तिवारी ५३
विविधा — संकलन : दिगंबर स्वादिया ५६

निराले तलाकों की दिलचस्प दास्तानें कैलाश जैन ५९
जीवों में भविष्य ज्ञान अनिल पोरवाल ६२
सही आदमी (धारावाहिक उपन्यास-२) सुधा ६४
श्रीकृष्ण की दिव्यता का अधिकाधिक प्रचार रामानंद सागर ८४
निर्णय (हिंदी कहानी) प्रो. के.एल. कमल ९२
कालिदास गुप्त 'रिज़ा' अरुणसिंह मख्मूर ९७
हिंदी ग़ज़ल देवेन्द्रकुमार पाठक ९९
आखिर क्या है उस पार श्याम मनोहर व्यास १००
बदल गयीं परिभाषाएं (कविता) किरण नागर १०३
कुर्बान मियां (उर्दू कहानी) युसुफ नाजिम १०४
पड़ोसी (हिंदी कहानी) लक्ष्मीनारायण श्रीवास्तव १०९
पृथ्वी पर जन्मा अंतरिक्ष यात्री राजीव सक्सेना ११४
अपेक्षित ज्योति (हिंदी कहानी) साधना श्रीवास्तव ११६
सोवियत रूस की अग्नियोग साधिका वेलेन्तीना पी.डी. मिश्र १२४
लिखने के पीछे (कविता) रमाकांत शर्मा १२८
इम्तहान (बालकथा) डॉ. श्रीप्रसाद १२९
हूमेर की समाधि पर गुलाब एच.सी. अन्दरसन १३३
शिष्टता का अभाव डॉ. गोपालप्रसाद वंशी १३५
लल्लूजी (कार्टून) सौरभ गोदीका १३६

आवरण-चित्र : (महारास लीला) : **डॉ. दुर्गा शर्मा**
**चित्र-सज्जा** : ओके, शेणै, सतीश चव्हाण, डॉ. दुर्गा शर्मा
**कार्यालय** : भारतीय विद्या भवन, क. मा. मुंशी मार्ग,
बम्बई - ७, फोन : ८११४४६२.

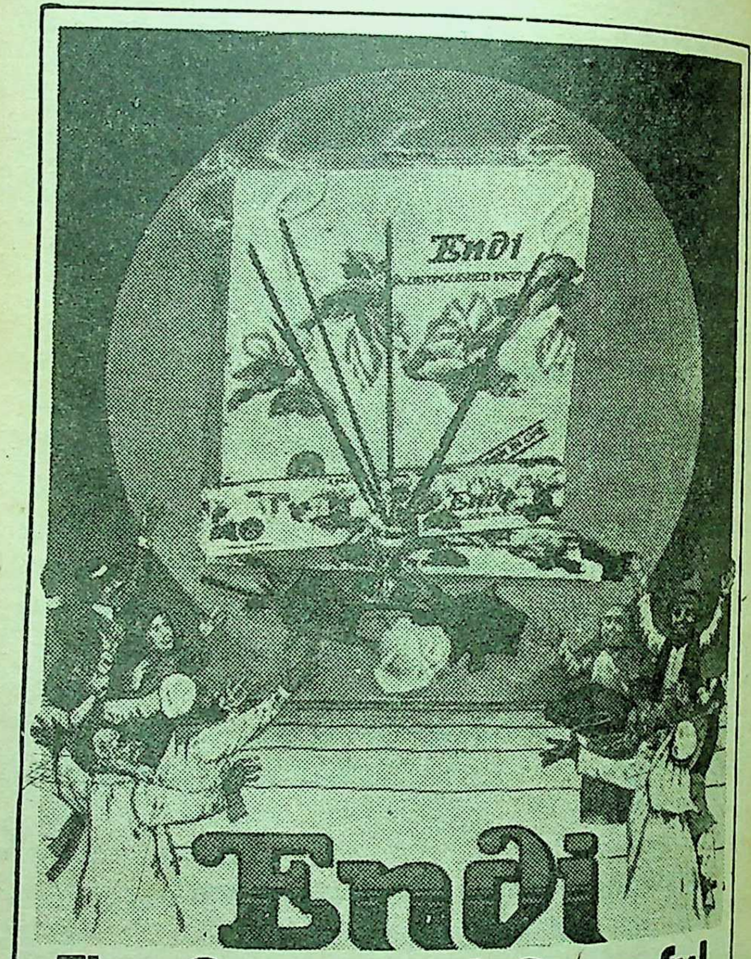

Endi
Endi
The Great and Graceful Fragrance
SEVEN IN ONE
MYSORE SUGANDHI
DHOOP FACTORY PVT. LTD.
13, Commercial Chambers, Yusuf Meharali Rd.,
P.O. Box 3178, Bombay 400 003.

(पृष्ठ ३ का शेषांश)

अत्यंत रोचक व ज्ञानवर्द्धक है। इस अंक में दीपशिखा शर्मा का रेखाचित्र 'अम्मा' अंतर्मन को बहुत गहरे छू गया। ऐसा लगा कि यह 'अम्मा' घर-घर की हो। लेखों में प्रभाकर माचवे, डॉ. मनु कोठारी, डॉ. सुनीला मिश्र, डॉ. के. एन. अवस्थी, लक्ष्मीशंकर व्यास, अंजनीकुमार श्रीवास्तव, मदनगोपाल शर्मा के लेख रोचक एवं ज्ञानवर्द्धक हैं। कविताएं भी स्तरीय हैं। सांस्कृतिक मंच का संयोजन अपने में अनूठा है।

**– आनंद स्वरूप श्रीवास्तव, रायबरेली**

* * *

**नवनीत** का अगस्त-९० अंक काफी रोचक, ज्ञानवर्द्धक एवं शानदार बन पड़ा है। मुखपृष्ठ देखते ही मन पुलकित हो उठा। कहानी 'रास्ते अपने-अपने' एवं 'अम्मा' प्रेरणादायक लगी। 'स्वाधीनता दिवस', 'वर्षा' एवं 'काले मेघा' कविताएं बेहद पसंद आयीं।

**– अमितेश नस्कर, जमालपुर, बिहार**

* * *

अगस्त-९० की **नवनीत** के सभी लेख पढ़कर खुशी हुई। महामहिम श्री सी. सुब्रमण्यमजी ने दार्शनिक एवं कवि संत ज्ञानेश्वर पर संक्षिप्त, किंतु प्रभावशाली ढंग से प्रकाश डाला है। भक्ति-रस से ओतप्रोत श्री दुर्गाप्रसाद मंडेलिया का लेख भागवत धर्म का सजीव चित्रण प्रस्तुत करता है। 'संतुलन का जीवन में महत्व', 'कवि कालिदास का संगीत वैशिष्ट्य', 'राष्ट्रीय पर्व रक्षाबंधन', 'मृत्यु:जीवन का स्वर्ण कलश' तथा 'जब हम अमरकंटक पहुंचे' लेख रोचक होने के साथ-साथ ज्ञानवर्द्धक भी हैं।

**– रामगोपाल शर्मा, भिलाई, म.प्र.**

* * *

**नवनीत** का अगस्त-९० अंक पढ़ने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। इस अंक की सभी रचनाएं आकर्षक एवं रोचक हैं एवं कहानी का चयन सुरुचिपूर्ण है।

लेखक उमेश पांडे द्वारा लिखित 'शयन-विज्ञान' लेख बहुत ही पसंद आया। वैसे हमारे ऋषि-महर्षियों ने बहुत पहले ही इस संबंध में लिख दिया था, किंतु आज वही वैज्ञानिकों द्वारा सही माना जा रहा है। इसके अतिरिक्त 'बनारसी ठाट-बाट पर निकले डाक-टिकट' लेख डाक-टिकट संग्रह करनेवालों के लिए काफी अच्छा है। संपादक महोदय से निवेदन है कि भविष्य में खेल संबंधित लेख बराबर छपवाने की व्यवस्था करें।

**– पवन मेहता, विलासपुर, म.प्र.**

# अध्यक्ष के पत्र

राज भव
मलाबार हि
मुंब

प्रिय सुहृद

दीपावली के शुभ अवसर पर हमारी मंगल–कामनायें। दीप ज्योति से दारिद्रय का अंधकार प्रत्येक घर से हटे। हमारी खुशियों का विस्तार इतना हो कि प्रत्येक मानव खुश हो जाये।

मानवता के इतिहास में सभी धर्मों में समन्वय स्थापित करने वाले सबसे बड़े देवदूत महात्मा गांधी की १२१ वीं जन्मशती अभी हाल में मनायी गयी है। इसकी पूर्वसंध्या पर दिनांक १ अक्तूबर १९९० को गान्धी स्मारक निधि के सहयोग से भवन ने सर्व धर्म मैत्री पर एक व्याख्यान माला का आयोजन किया था। उस अवसर पर भवन के अध्यक्ष होने के नाते मुझे राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय महत्व के नये प्रकल्प **'सर्व धर्म मैत्री प्रतिष्ठान'** का, भवन की एक संस्था के रूप में, उद्घाटन का सौभाग्य प्राप्त हुआ था। यह उन प्रकल्पों में से एक था जिसे भारत सरकार की राष्ट्रीय समिति ने डा. क. मा. मुंशी की जन्म शती तथा १९८८ में भवन के स्वर्ण महोत्सव मनाने के लि बनाया था।

विश्व ख्याति प्राप्त भार इतिहासकार डॉ. अर्नोल्ड टोयनवी, ज अपने इतिहास में व्यक्तिगत जीवन क झांकी कम देते हैं तथा सभ्यताओं क वर्णन अधिक करते हैं, ने इस प्रका लिखा है:

'मानव इतिहास के इस महान संक की घड़ी में मानवता की मुक्ति के लिए केवल एक ही रास्ता है वह भारती रास्ता है और सम्राट अशोक औ महात्मा गांधी के अहिंसा के सिद्धान्त का रास्ता है तथा रामकृष्ण के धर्म समन्वय का रास्ता है। इस प्रकार की भावना सारे मानव जाति को एक परिवार के रूप में बढ़ने और विकसित होने को संभव बना सकती है तथा इस आणविक युग में अपने आप को नष्ट कर देने से बचाने के लिए यही एक मात्र विकल्प है।'

आज का हिन्दू धर्म मानवता द्वारा युगों से अपनाया हुआ धर्म है। इसके कोई प्रवर्तक नहीं हैं। इसके सिद्धान्त प्रकृति के

शाश्वत सिद्धान्तों पर निर्भर हैं। इसी कारण इसे सनातन कहा गया है। यह अनादि और अनन्त है। यह जीवन का सहज स्वरूप है। यह ऋग्वेद का विख्यात मंत्र है '**आ नो भद्राः क्रतवो यन्तु विश्वतः**।' प्रत्येक दिशा से सद्विचार हमारे पास आयें।

इसीलिए बाद में प्रचलित होने वाले धर्मों के तत्त्वों को अपना लिया है कि हमारी विशेषता दूसरे धर्मों के प्रति सहिष्णु होने के कारण नहीं बल्कि उनके मुख्य तत्वों को अपना लेने में है। इस प्रकार भारत सभी धर्मों का घर बनकर विविध धर्मावलम्बी राष्ट्र बन गया है।

राष्ट्रीय शान्ति, प्रगति और सम्पन्नता के लिए धर्मों के बीच समन्वय अत्यन्त आवश्यक हो गया है। समन्वय भी केवल नारेबाजी तक सीमित नहीं रहना चाहिए बल्कि उसे लोगों को मन में गहराई तक उतरकर विश्वास का रूप धारण करना चाहिए।

धर्मान्धता, धार्मिक कट्टरता, अविश्वास और अन्ध विश्वासों के कारण अनेक धार्मिक झगड़े उठ खड़े हुए हैं।

१९ वीं सदी में विभिन्न धर्मों के तुलनात्मक अध्ययन, अनेक साधु-सन्तों जैसे स्वामी विवेकानन्द तथा अनेक विद्वान जैसे डॉ. राधाकृष्णन आदि के द्वारा विभिन्न धर्मों की अच्छाइयां और बुराइयां जो अधिकांश एक दूसरे की पूरक ही हैं, प्रकट हुईं। वे प्रायः विभिन्न ऋतुओं की तरह हैं जो स्वास्थ्य के लिए आवश्यक हैं।

प्रो. विलियम जेम्स ने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक 'धार्मिक अनुभवों की विविधता' (Varieties of Religious Experience) में प्रतिपादित किया है कि मनुष्य में प्रारंभिक रूप से धार्मिक प्रवृत्ति होती है जो अपने उच्चतम स्तर पर पहुंचकर सहज और स्वाभाविक हो जाती है। उसमें किसी भी प्रकार के वर्ग की भावना नहीं होती।

दूर संचार तथा अन्तरिक्ष यात्रा में मानव ने बड़ी प्रगति की है। दुनिया सिकुड़ती जा रही है। इससे हम भारत की पुरानी कहावत '**वसुधैव कुटुम्बकम्**' के निकट होते जा रहे हैं और सारा विश्व एक परिवार बनता जा रहा है।

विभिन्न धर्मों के समन्वित रूप में एक साथ मिलकर रहने के पक्ष में सबसे बड़ा तर्क यह है कि दुनिया के सभी भाग में मानव की पहुंच हो गयी है और मानव जाति का कोई भाग ऐसा नहीं बचा है जहां कोई धर्म न हो। कोई नगर, राष्ट्र आज एक मतावलंबी नही है। इसलिए सभी धर्मों के सहज और स्वाभाविक अंशों की मान्यता बहुत महत्वपूर्ण हो गयी है। इसी बात को बिल और एरियल डरेन्ट ने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक सभ्यता की कहानी में लिखा है। आधुनिक ज्ञान विस्तार ने आज बड़ी स्पष्टता के साथ इस

बात को उजागर कर दिया है कि अब पुराने धार्मिक पूर्वाग्रह, अंधविश्वास टूटते जा रहे हैं।

### सहजता पर विशेष जोर

भारतीय विद्या भवन ने अपने प्रारंभिक काल से विभिन्न प्रकार के ताने-बाने से बुने हुए भारतीय संस्कृति के सौन्दर्य, सहज एवं स्वाभाविक गुणों को उजागर करने का प्रयास किया है। भारतीय विद्या भवन ने विभिन्न धर्मों की एकता प्रदर्शित करते हुए कई पुस्तकें प्रकाशित की हैं, जैसे (All Religion are True) सभी धर्म सच हैं ले. महात्मा गान्धी, सभी धर्मों की आवश्यक एकता (The Essential unity of All Religions) ले. भगवानदास, भारत के सूफी, सन्त और योगी (Sufis, Mystics and Yogis of India) ले. बांके बिहारी, आपका भगवान मेरा भगवान (Your God is my God) ले. ग्लेडम डी म्यूटर, क्राउन एण्ड क्राइस्ट ले. परान ज्योति और ईश्वर के रास्ते (Path way of God) ले. डॉ. आर. डी. रानडे पुस्तक माला।

भवन का नया प्रकल्प 'सर्व धर्म मैत्री प्रतिष्ठान' समान उद्देश्य एवं विचारों वाली संस्थाओं और व्यक्तियों से सहयोग प्राप्त कर धार्मिक एकता के लिए प्रयास करेगी।

### एक कदम पर्याप्त

जब गांधीजी कोई नया प्रकल्प प्रारंभ करते थे तो उनका संकल्प तथा आवाहन होता था 'मेरे लिए एक कदम पर्याप्त है'। भवन सर्व धर्म मैत्री प्रतिष्ठान उसी भाव और विश्वास से प्रारंभ कर रहा है। आज आवश्यकता इस बात की है कि ईश्वर में विश्वास करने वाले सभी धार्मिक व्यक्ति एकत्रित होकर धार्मिक मूल्य का निर्माण करें, जिससे अधार्मिक ताकतों से लड़ सकें।

भवन ने इस प्रकल्प को राष्ट्रीय सहकारी प्रयास के रूप में चलाया है जिसमें समान विचार वाली संस्थाओं तथा व्यक्तियों, जो भारत और साथ ही साथ मानवता का विकास देखना चाहते हैं, से सहयोग की अपेक्षा की जाती है। बम्बई गांधी स्मारक निधि ने पूर्ण सहयोग का वचन दिया है। हमें उम्मीद है कि दूसरे भी आगे आयेंगे।

इस सम्बन्ध में हमारा दूसरा कदम संस्थाओं और व्यक्तियों की बैठक का आयोजन कर जिसमें हमें अपने भविष्य के कार्यक्रमों की रूप रेखा तैयार करना होगा उस आदर्श को हम स्कूल से प्रारंभ करना चाहते हैं।

आधुनिक भारत के महान निर्माता महायोगी श्री अरविन्द ने कहा है कि 'युगों का भारत अभी मरा नहीं है। उसे अपने लिए तथा विश्व के लिए बहुत कुछ करना है।'

भवदीय

सी. सुब्रमण्यम

# समर्पित कला-साधक : डॉ. दुर्गा शर्मा

□ डॉ. गिरिजाशंकर त्रिवेदी

डॉ. दुर्गा शर्मा का जन्म जांगिड़ ब्राह्मण परिवार में ११ नवम्बर सन् १९४० में हुआ। बाल्यकाल में अपने पिता श्री स्व. अमरचन्दजी शर्मा द्वारा आरेखित काष्ठकला के आलेखनों से प्रभावित होने के फलस्वरूप चित्रकला की ओर प्रेरित हुए। प्राथमिक शिक्षण काल में चित्रकला शिक्षक श्रीदिलीपकुमार शर्मा, रतनलालजी कोड़ाबा, श्री जमाल एवं मानी सा. से कला शिक्षा ग्रहण की। शाला में नियमित छात्र के रूप में कक्षा ८ वीं तक अध्ययन किया।

मध्यम परिवार से सम्बन्धित होने के कारण शेष पढ़ाई स्वाध्यायी छात्र के रूप में की। पिताजी को आर्थिक सहयोग देने की दृष्टि से व्यवसायी कला को अपनाया। रात देर तक वालपेन्टिंग करते रहें, साइन बोर्ड बनाते रहे। इतना ही नहीं सिनेमा के बोर्ड एवं बैनर बनाते-बनाते जीवन के १० वर्ष व्यतीत कर दिये।

सन १९५०-५१ में जे.जे. स्कूल ऑफ आर्ट्स, बम्बई द्वारा संचालित एलिमेंट्री एवं इन्टर ग्रेड परीक्षा उत्तीर्ण की। इसी परीक्षा की धुन में कला शिक्षक स्व. श्री राधेलाल पंवार के सम्पर्क में आये। इनके सान्निध्य में सिने कलाकारों के व्यक्ति चित्रण के स्थान पर स्वतंत्र चित्ररचना करने के लिये प्रेरित हुए।

संघ का स्वयंसेवक होने के सौभाग्य से कला आचार्य एवं पुरातत्ववेत्ता विष्णु श्रीधर वाकणकरजी का शिष्य होने का गौरव अर्जित किया। आपके शिष्यत्व में कला के व्यावसायिक पक्ष के स्थान पर

डॉ. दुर्गा शर्मा

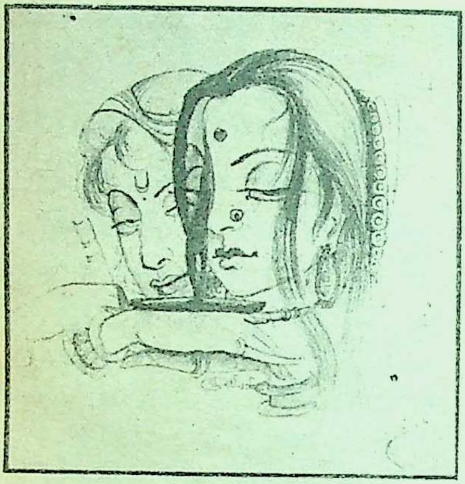

कला के शास्त्रीय पक्ष की ओर उन्मुक्त हुए। गुरुदेव के राष्ट्रीय और भारतीय कला संस्कृति को समर्पित आदर्श जीवन का युक्ति युक्त प्रभाव दुर्गा शर्मा पर पड़ा।

छोटी उम्र में विवाह उपरान्त हाईस्कूल परीक्षा अनेक रुकावटों के आने के बाद भी उत्तीर्ण की। अच्छे अंकों से उत्तीर्ण होने के कारण सन १९६० के आस-पास स्थानीय सं. जोसफ कान्वेट उ.मा. विद्यालय में चित्रकला शिक्षक के रूप में एक शिक्षक का जीवन प्रारम्भ हुआ, कला साधनों के अनुरूप परिस्थितियां निर्मित होने लगीं।

चीन के आक्रमण के उपरान्त श्री भाटीजी की प्रेरणा से राष्ट्र चेतना चित्र प्रदर्शनी का ऐतिहासिक आयोजन हुआ। जन चेतना की दृष्टि से आयोजि इस प्रदर्शनी में आदमकद आकार अनेकों रंगीन चित्रों तथा कागज पर परिस्थितियों में चीन ने भारत आक्रमण किया, उसे रंगित करते अनेक रेखा चित्रों का भी निर्माण कर चित्रकार के रूप में उभर कर सा आये।

इन्हीं दिनों चीनी आक्रान्ताओं सामना कर रहे सैनिकों को राहत पहुंचा के उद्देश्य से 'गीत सुनो और कम्बल जन जागरण का अभियान ओजस्वी गीतकार स्व.श्री प्राण गुप्त एवं नगर के अन्य प्रख्यात कवियों द्वारा चलाया जा रहा था, इससे जुड़ने से कला के सा काव्यकार के रूप में उभरे। आपने काव्य गुरु प्राण गुप्त की अनेक रचनाओं प आकर्षक भाव चित्रों का निर्माण किया।

सन १९६३ बिहार पीड़ितों के सहायतार्थ आयोजित भव्य मेले में मनचाही रेखा खींचो और चित्र बनवा के आकर्षक आयोजन में अधिक ध संग्रहित करने में आगे रहे। सन १९६ में शिक्षक पद त्याग कर कला अध्ययन और उसमें विकास हेतु ग्वालियर जा पहुंचे, जहां अपने मित्र श्याम उपाध्याय के सहयोग से वहां के आर्ट्स महाविद्यालय में प्रवेश पाकर कला आचार्य श्री राजपूत का सान्निध्य पाया। वहां रहकर किले में स्थित मानसिंह संग्रहालय की अधिकांश प्राचीन

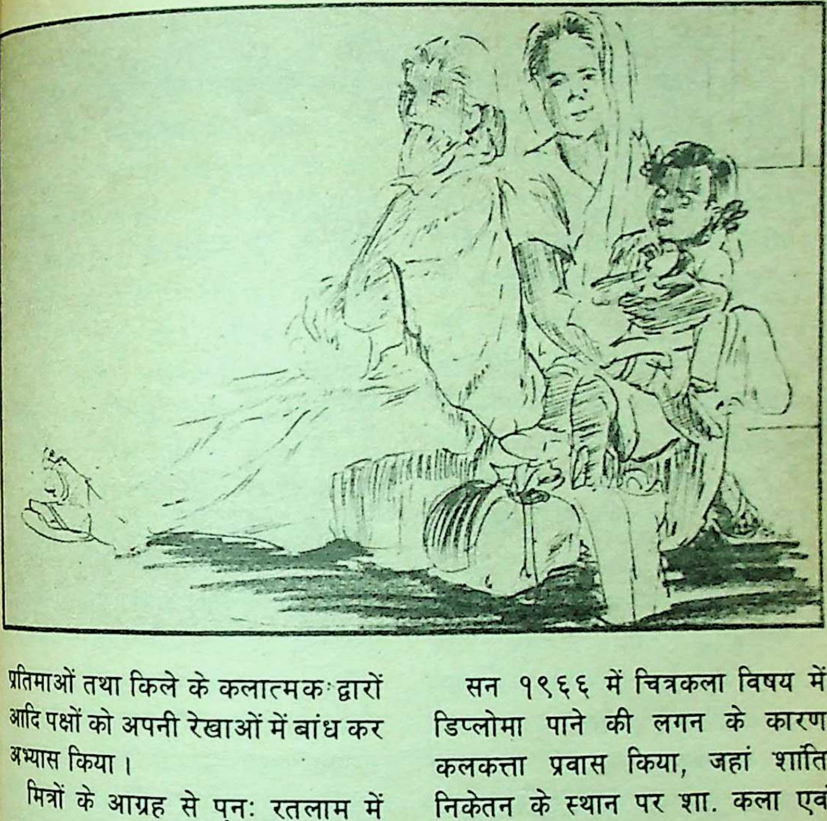

प्रतिमाओं तथा किले के कलात्मक द्वारों आदि पक्षों को अपनी रेखाओं में बांध कर अभ्यास किया।

मित्रों के आग्रह से पुनः रतलाम में आकर अपना शिक्षक जीवन प्रारम्भ किया। हस्तलिखित पत्रिकाओं की साज सज्जा में भी अपना योगदान दिया। प्रारम्भ में डॉ. प्रभाकर माचवे परिवार से निकलने वाली श्रीमण्डल की 'श्री' पत्रिका से जुड़े तथा बाद में कल्पना परिवार की 'कल्पना' पत्रिका की साज-सज्जा के साथ ही प्रकाशन के अन्य महत्वपूर्ण कार्य का भी निर्वाह किया।

सन १९६६ में चित्रकला विषय में डिप्लोमा पाने की लगन के कारण कलकत्ता प्रवास किया, जहां शांति निकेतन के स्थान पर शा. कला एवं क्राफ्ट महाविद्यालय में प्रवेश किया। प्रख्यात शिल्प कला शास्त्री आचार्य चिंतामणिकर का सान्निध्य पाकर कला के विभिन्न आयामों का ज्ञान प्राप्त किया। प्रायः हर संध्या को हावड़ा स्टेशन जाकर यात्रियों, हम्मालों के स्केच बनाते, कलकत्ता की गन्दी बस्तियों में जाकर उनके जनजीवन की झांकी अपनी रेखाओं में संजोते रहे।

कलकत्ता सांस्कृतिक प्रधान महानगर है। यहां की परम्परागत भारतीय लोकपरक कलाशैली के अधिक निकट आये। रविन्द्रनाथ टैगोर, गगेन्द्रनाथ ठाकुर, अवनिन्द्रनाथ ठाकुर, नन्दलाल बसु, यामिनीराय, राजा रविवर्मा के साथ साथ अमृताशेर गिल, बेन्द्रे, रामकुमार आदि भारतीय चित्रकार और अजंता, एलोरा और वाघ़ की कला शैली जीवन का आदर्श बनी। कलकत्ता में रहते हुए वहां की परम्परागत बंगाल शैली, जीवन का यथार्थवादी चित्रण, दृश्य अंकन तथा कला के विभिन्न पक्षों का जल तथा तेल रंगों में समानरूप से अभ्यास किया। वाश तथा टेम्प्रा जल रंगों में वहां कई चित्र रचे।

सन १९६६ में कलकत्ता से बड़ौदा जाना हुआ। यहां के एम. एस. विश्वविद्यालय के आर्ट्स संकाय में प्रवेश लिया। भारतीय परम्परागत चित्रकला शैली में गुजरात कला शैली का अपना अलग ही महत्व है। इस कला शैली का प्रभाव अन्य क्षेत्रों के साथ-साथ ठेठ राजपूत कला शैली में भी देखा गया। यहां रहते हुए इस कला शैली का निकट से अध्ययन करने का अवसर मिला।

कला के व्यावहारिक और सैद्धान्तिक ज्ञान हेतु देश के विभिन्न अंचलों का भ्रमण सार्थक रहा। बंगाल, गुजरात, महाराष्ट्र तथा ग्वालियर आदि स्थलों की कला शैलियों के निकट आने का ही परिणाम है कि मालवा अंचल की क शैली पर अध्ययन करने की उत्सुक जगी।

पिताजी का स्वर्गवास और परिवार प्रति बढ़ते उत्तरदायित्व के कार सन १९६८ में रतलाम में ही रहने निर्णय लिया। श्री शर्मा का यह सौभा रहा कि वे जब-जब प्रवास से लौ शिक्षक सेवाकार्य में किसी भी तरह परेशानी उठानी नहीं पड़ी। इस सम श्री जैन उ.मा. विद्यालय में शिक्षक पर नियुक्त हुए। यहां से भारत का नागदा और नागदा के उपरान्त १९७२ से श्री गुजराती स.उ.मा विद्यालय रतलाम में नियुक्ति पायी।

स्वाध्यायी छात्र के रूप में सन १९६ में इण्टर ७२ में विक्रम विश्व विद्यालय बी.ए., १९७५ में एम.ए. चित्रक प्रथम श्रेणी एवं प्रावीण्यसूची में द्विती स्थान पाकर उपाधि ग्रहण की। सन १९८२ में पी.एच.डी. का सम्मान अर्जित किया। अब डी.लिट करने का इरादा रखते हैं।

पुरातत्ववेत्ता पद्मश्री डॉ. वाकणकर गुरुदेव की प्रेरणा से सन १९७२ से ही मालवा की चित्रकला शैली पर शोधकार्य प्रारम्भ कर दिया था। एम.ए. हेतु पहले लघु शोध किया फिर दशपुर मालवा क्षेत्र की चित्रकला को अपनी पी.एच.डी. का शोध विषय बनाया। शोध केवल डिग्री

पाने के लिये नहीं अपितु ज्ञानार्जन हेतु पूर्ण किया।

पद्मश्री डॉ. वाकणकर, डॉ. शिवमंगल सिंह सुमन, डॉ. श्याम सुन्दर निगम, डॉ. सुरेन्द्र आर्य तथा श्रीमती शिव कुमारी जोशी आदि के प्रोत्साहन, मार्गदर्शन तथा वरदहस्त पाकर शोध को गति एवं दिशा मिली। वर्षों पुराने भित्ति चित्रों पर पुती सफेदी को साफ करना, महीनों तक १२-१२ घण्टे बैठकर अनुकृतियां बनाते रहे। केवल दशपुर से ही असंख्य भित्तिचित्रों की खोज की। इन चित्रों में १८ एवं १९ वीं शताब्दि के ५०० भित्तिचित्र आज भी जीवंत अवस्था में अपनी ताजगी बिखेर रहे हैं। दशपुर के अतिरिक्त रामपुरा, भानपुरा, मनासा, नीमच, प्रतापगढ़ आदि दशपुर जनपद के असंख्य भित्ति, कागज, कांच, पट्टिकाओं तथा पौथी चित्रों की खोज और उस पर अध्ययन किया। इतना ही नहीं पश्चिमी मालवा अंचल के रतलाम, उज्जैन, इन्दौर, नरसिंहगढ़, देवास, धार-माण्डव आदि कई स्थलों की चित्रकला का अध्ययन और शोध भी किया। शैलीगत तुलनात्मक अध्ययन हेतु प्रतापगढ़, चितौड़, जयपुर, उदयपुर, कोटा और बून्दी आदि स्थलों की यात्रा और वहां के कला विद्वानों से चर्चा की।

मालवा कला शैली ने अन्य कई क्षेत्रों की कला के विकास में महत्वपूर्ण योगदान दिया। किन्तु इस पर जितना लिखा जाना चाहिये वह पर्याप्त नहीं था। शैलीगत जितना भी लिखा गया वह मूल मालवा पर न होकर उसके आसपास का था। मालवा कला शैली पश्चिमी मालवा में अधिक पल्लवित हुई किन्तु इस क्षेत्र का बहुत बड़ा क्षेत्र विद्वानों की आंखों से ओझल रहा।

इस क्षेत्र की कला पर पर्याप्त चर्चा हेतु देश-प्रदेश और स्थानीय पत्र-पत्रिकाओं में कई लेख लिखे। अनुकृतियों और छायाचित्रों की रतलाम, मन्दसौर, उज्जैन, देवास, जावरा और बड़नगर में प्रदर्शनियां आयोजित कीं, शोध पत्र पढ़े। इतना ही नहीं देश की सीमा को लांघ कर शर्मा द्वारा दशपुर मालवा के चित्रित ११ चित्र विगत ३-४ वर्षों से न्यूयार्क में प्रतिनिधित्व कर रहे हैं। देश की प्रख्यात पत्रिका हिन्दी डाइजेस्ट नवनीत में कई लेख एवं आवरण चित्र प्रकाशित हुए हैं।

विगत तीन दशकों से डॉ. शर्मा अध्ययन अध्यापन के साथ-साथ रतलाम में कलात्मक वातावरण निर्मित करने की दिशा में प्रयत्नशील हैं। कई बार एकल चित्र प्रदर्शनी का आयोजन कर चुके हैं, उभरते चित्रकारों को प्रोत्साहित करने की दृष्टि से उनके चित्रों की भी प्रदर्शनी आयोजित करते रहे हैं। कई बड़े-बड़े भित्तिचित्र, आदमकद आकार के व्यक्ति चित्र, काव्यचित्र, परम्परागत शैली

अंजता शैली और स्वतंत्र और प्रकृति चित्रण जल और तेल रंगों में करते हुए नहीं थके हैं। कला के प्रायः सभी विषय पर समान रूप से अपनी तूलिका चला रहे हैं। किन्तु चित्र संयोजन और जीवन के यथार्थवादी चित्रण की ओर ज्यादा रुझान है। आधुनिक चित्रकला की दौड़ में भी सम्मिलित होकर कई चित्र रचे किन्तु अंधानुकरण नहीं कर सके।

प्रकाशन की दृष्टि से चित्रकला पर बाल उपयोगी १४ पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं। मालवा कला शैली पर शैलीगत दृष्टि से पुस्तक प्रकाशित होना शेष है। हिन्दी साहित्य सेवा की दृष्टि से रतलाम जिला एवं इससे जुड़े प्रवासी साहित्यकार के काव्यों का मिलाजुला काव्य संकलन "हजार-हजार नंगे जिस्म" का सम्पादन कर चुके हैं।

विगत ८ वर्षों से मालवा अंचल के प्रख्यात गीतकार स्व. श्री प्राण गुप्त की स्मृति में वसंत महोत्सव के आयोजन के अन्तर्गत नगर, प्रदेश और देश स्तर के समर्पित साहित्य, कला और संगीत के प्रौढ़ और युवा समर्पित साधकों के नागरिक अभिनन्दन में अहम भूमिका निभा रहे हैं। 'ललित कला वीथिका' के माध्यम से आयोजित इस महोत्सव के अन्तर्गत जिला स्तरीय चित्रकला प्रतियोगिता का विशाल आयोजन शिशु बाल, तरुण, युवा और प्रौढ़ वर्गों में आयोजित की जाती है जिसमें प्रविष्ट सभी कलाकारों को प्रमाण-पत्र दें व्यवस्था है साथ ही सभी व तीन-तीन श्रेष्ठ चित्रकारों को प डॉ. वाकणकर जिले के श्रेष्ठ चित्रक अलंकृत कर नागरिक सम्मान महो में प्रदान किया जाता है। सन १ प्रतियोगिता में ११,०० (ग्यारह चित्रकारों ने भाग लिया।

कला में स्वयं साधना रत रहते अन्यों को प्रोत्साहित करना डॉ. शर्मा ध्येय है। अभी तक कई छात्र आ सान्निध्य में अध्ययन पा चुके हैं। मिलाकर कलागुरु की संज्ञा के रू स्थापित श्री शर्मा रतलाम के कला सं को वटवृक्ष स्वरूप प्रदान करने की दि में तन, मन और धन से जुटे हुए हैं। के कार्यों से प्रभावित होकर नगर साहित्यिक, सामाजिक संस्थाओं ने क बार नागरिक अभिनन्दन किया इतना नहीं मन्दसौर, जावरा, जावद, उज्जैन देवास में भी आपको सम्मानित कि गया। उज्जैन, देवास, ग्वालियर कानपुर, लखनऊ और दिल्ली आ नगरों में कला और साहित्य की दृष्टि रतलाम का आप प्रतिनिधित्व क चुके हैं।

**डॉ. दुर्गा शर्मा**
**का पताः**
**अमर काटेज,**
**३५ जाटों का वास**
**रतलाम, म.प्र.**

— नवनीत,
भारतीय
विद्याभवन,
क. मा. मुंशी
मार्ग, बम्बई-

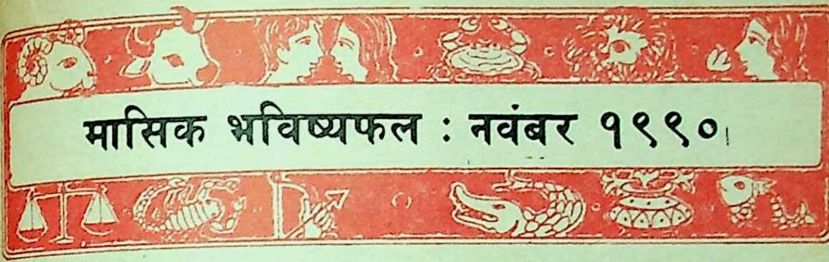

# मासिक भविष्यफल : नवंबर १९९०।

☐ पं. वी.के. तिवारी

**मेष : (१४ अप्रैल-१४ मई)**

१२ तारीख तक स्थिति आपके पक्ष में नहीं होगी । परिवार पक्ष से चिंता बढ़ेगी । यात्रा के उद्देश्य की पूर्त संदिग्ध है । ११ व १८ दिनांक को अपरिहार्य होने की स्थिति में ही आप विशेष कार्य में प्रवृत्त हों अथवा दैनिक कार्यों के अतिरिक्त अन्य कार्य में रुचि नहीं लेना ही हितकर होगा । १३ से २६ तारीख तक विरोध के उपरांत भी आप श्रम, संघर्ष एवं मनोबल से प्रभावशाली व यशस्वी सिद्ध होंगे । पूर्वार्ध तक परिवार पक्ष संतोषप्रद नहीं कहा जा सकता है । राजनीतिज्ञ व व्यवसायी वर्ग को १२ तारीख तक परिस्थिति का सूक्ष्म अवलोकन करना हितकर रहेगा ।

**वृष : (१५ मई-१५ जून)**

प्रथम सप्ताह पूर्ववत् उपयोगी एवं सिद्धदायी रहेगा । इसके उपरांत उत्तरोत्तर विघ्न-बाधाओं की वृष्टि आपकी सुख-शांति के लिए समस्या बन जायेगी । मनमुटाव, मतभेद, कलह, क्लेश, वाद-विवाद की बातें रोगादि आपको त्रस्त रखेंगे । यात्रा, दांपत्य, पत्नी या प्रेमिका आदि प्रकरण भी अपेक्षित परिणाम नहीं दे सकेंगे । २७ के उपरांत मासांत तक शेष दिनों में यश, सुख-शांति एवं विलंबित कार्यों की प्रगति आपको आश्वस्त कर देगी । मनोबल व धैर्य से आप अपने विरोधियों या विपरीत स्थिति पर नियंत्रण रखने में सफल होंगे ।

**मिथुन : (१६ जून-१६ जुलाई)**

आप अपेक्षित सफलता विभिन्न स्तर पर हस्तगत कर सकेंगे । धन की दृष्टि से सर्वथा उत्तम माह है । राजनीतिज्ञ, वकील एवं पत्रकार यशस्वी होंगे । संतान के कार्यों से गौरवान्वित होंगे । आपके स्वाभिमान या सम्मान पर प्रहार करने वाले मलिन एवं अधोमुखी होंगे । निर्णय प्रशंसनीय माने जायेंगे । साझेदारों के व्यवहार से १२ तारीख के उपरांत आपको मानसिक कष्ट हो सकता है । यात्रा भी १२ के उपरांत करना उपयोगी सिद्ध होगा इसमे संदेह है । धन, यश, पद, स्थिति श्रेष्ठ है ।

**कर्क : (१७ जुलाई-१६ अगस्त)**

इस माह प्रथम ३ दिन एवं २२ से २६ तारीख को छोड़कर शेष दिनों में भौतिक

सुखोपभोग के उत्तम अवसर हैं। राजनेताओं को जनसम्पर्क से सुयश, सत्कार व सम्मानादि प्राप्त होगा। शत्रुवर्ग शरारत से शराफ के संचालन में सन्नद्ध हो जायेगा। संतान के जन्म या सफलता से मन आल्हादित रहेगा। सैर-सपाटे में रुचि बढ़ेगी। विद्यार्थी एवं पत्रकार वर्ग विशेष सफलता हस्तगत करेगा। विभागीय परीक्षा या प्रेम संबंध में आपकी अपेक्षा के अनुरूप सुपरिणाम प्राप्त होंगे। दांपत्य संबंध एवं उच्चर्ग के संबंधों के प्रति भ्रम को स्थान न दें। १४ तारीख नये या यात्रादि कार्यों हेतु वर्जित हैं।

## सिंह : (१७ अगस्त-१६ सितंबर)

दैनिक सुख में भोग-विलास एवं वाहन सुख बढ़ेगा। राजनेता यशस्वी रहेंगे। ९ तारीख महत्वपूर्ण चर्चा, यात्रादि की दृष्टि से उपयोगी नहीं कही जा सकती है। दृढ़ता से प्रतिकार या प्रत्यारोप की भावना या आदत को नियंत्रित करना श्रेयस्कर रहेगा। प्रियवर्ग के सहयोग से या परामर्शदाता के सुझाव से समस्याओं की भंवर से मुक्त हो सकेंगे। सम्पर्क एवं परिचय बढ़ेंगे। आर्थिक दृष्टि से सामान्यत: कठिनाई उत्पन्न होगी। शारीरिक पीड़ा मास के अंतिम सप्ताह में रहेगी। इस माह व्यस्तता एवं कार्य की अधिकता रहेगी।

## कन्या : (१७ सितंबर-१६ अक्तूबर)

शत्रु पराजय का सुख मिलेगा। यश बढ़ेगा। परिश्रम से कार्य पूर्ण होंगे। वस्त्राभूषण अथवा सौंदर्य सामग्री पर व्यय बढ़ेगा। आर्थिक स्थिति सुदृढ़ होगी। मन प्रसन्न रहेगा। कनिष्ठ वर्ग से वां सेवा-सहयोग मिलेगा। भाग्य वृद्धि की स्थिति बनेगी। भाई-बहनों से सुख यथे रहेगा। प्रथम सप्ताह में स्थिति आपके पक्ष ग्रह नहीं रहने देंगे। कार्य परिवर्तन व अधिकार की प्रवृत्ति बदलेगी। आपरेश आदि की सफलता संदिग्ध है।

## तुला (१७ अक्तूबर-१५ नवंबर)

विगत माह की तुलना में इस मास ग्र स्थिति उत्तरोत्तर आपकी अव्यवस्थित दिनचर्या को व्यवस्थित करने का प्रय करेगी। प्रथम सप्ताहांत से स्वास्थ्य मानसिक एवं शारीरिक दृष्टि से अच्छा रहेगा। दांपत्य सुख संतोषप्रद मिलेगा। प्रेम संबंधों की प्रगाढ़ता मन तो प्रमुदित रखेगी। विद्यार्थी, संगीतज्ञ, गायक एवं पत्रकार यशस्वी होंगे। उन्नति के अवसर अच्छे हैं। जनसभा को संबोधित करने पर राजनेता मंत्रमुग्ध करने में सफल रहेंगे। परंतु इस राशि की गृहणियों को आकस्मिक क्षति के प्रति सजग रहना चाहिए।

## वृश्चिक (१६ नवंबर–१५ दिसंबर)

२७ तारीख के पूर्व तक इस माह आपके ग्रह बिघ्न-बाधा वाले दृष्टिगोचर हो रहे हैं। जोखिम, निर्णय, विवाद, मंत्रणा, उच्च पदाधिकारियों या जनसभा संबोधन को स्थगित रखने का सुझाव है। विगत की तुलना में शत्रु सक्रियता में कमी आवश्यमेव आयेगी। विवाह या संतान से संबंधित कार्यों में प्रगति मनोनुकूल होगी। व्यवसायी, विद्यार्थी वर्ग के लिए सुखद माह सिद्ध होगा।

२३ तारीख को अपनी गतिविधियों या भाग-दौड़ को स्थगित रखिये।

**धनु : (१६ दिसंबर—१३ जनवरी)**

१५ दिन प्रथम (मास के) आपको आपकी व्यस्तता अथवा विगत प्रयासों के उत्तम परिणाम देने की कोशिश करेंगे। आप सुखद क्षणिकाओं को संजोने में सफल होंगे। दांपत्य जीवन में मधुरिमा के क्षण बढ़ेंगे। व्यवसाय व राजनीति में सम्पर्क एवं उपयोगी आमंत्रण मिलेंगे। आर्थिक दृष्टि से भी उत्तमोत्तम स्थिति बनी रहेगी। दिनांक १६ से मासांत तक विवाद, अपयश के साथ शारीरिक कष्ट की स्थिति बन सकती है।धन अपव्यय या हानि भी हो सकती है।

**मकर (१४ जनवरी-१२ फरवरी)**

आप वर्ष की श्रेष्ठतम अवधि का उपभोग करने जा रहे हैं फिर भी दो तथ्य विचारणीय हैं। प्रथम; आपको जो भी नये कार्य, समझौते, मंत्रणा, यात्रा आदि करने हों वह १६ नवंबर से पूर्व करें। दिनांक ६ एवं ११ को छोड़ दें। द्वितीय : विलंबित प्रकरण को निपटाने का एवं अपने व्यक्तित्व के विकास हेतु किये जाने वाले कार्य हेतु इससे स्वर्णिम अवसर मिलना संदिग्ध है। उच्च मनोबल के शस्त्र से आप किसी भी विवाद, विरोध या असामयिक घटना से बच निकलेंगे। नए संबंधों से लाभ होगा।

**कुंभ : (१३ फरवरी—१४ मार्च)**

यह माह प्रथम सप्ताह तक पूर्ववत कुछ कठिनाइयों की ही सौगात देता रहेगा। परंतु इसके उपरांत मासांत तक व्यवसाय में लाभ बढ़ेगा। मैत्री संबंधों में सुदृढ़ता आयेगी। प्रेम संबंध प्रगाढ़ होंगे। प्रतियोगिता में परिणाम आपके पक्ष में रहेगा। विजय व यश मिलेगा। आत्मीय जन व्यय वृद्धि का कारण बनेंगे। २ तारीख प्रत्येक दृष्टि से वर्जित है। स्वास्थ्य का ध्यान रखें। ८, २२ एवं ३० तारीख त्याज्य हैं। राजनीति मे विरोधी की चालों के सूक्ष्मावलोकन पर ध्यान रखें।

**मीन : (१५ मार्च-१३ अप्रैल)**

प्रथम सप्ताह विशेष प्रतिकूल रहेगा। इसके उपरांत शुभाशुभ प्रभाव मिलेंगे। परिवार के सदस्यों से वांछित सहयोग तो दूर रहेगा अपितु विघ्नकर्ता बनेंगे। एकाएक व्यय में वृद्धि होगी। आर्थिक स्थिति डावांडोल रहेगी। मनोवांछित परिणाम न मिलने से मन व्यथित रहेगा। व्यस्तता एवं हानि की स्थिति रहेगी। राजनेता व पत्रकार विशेष सफल होंगे। सामाजिक एवं राजनीतिक आकांक्षा में वृद्धि होगी। संतान की ओर से सुख-शांति रहेगी।

### मास के व्रत व त्यौहार

कार्तिक पूर्णिमा, कार्तिक स्नान, रास पूर्णिमा, त्रिपुरा पूर्णिमा, मत्स्यावतार-२; अशून्य शयन व्रत-४; उत्पत्तिदा एकादशी तथा मोक्षदा एकादशी-१३ एवं २९; प्रदोष व्रत-१४, एवं ३०; शिवरात्रि व्रत-१५; विनायक गणेश चतुर्थी-२१; श्री रामविवाह उत्सव-२२; स्कंदषष्ठी, चंपाषष्ठी, गुहाषष्ठी-२३; दुर्गाष्टमी-२५ नवंबर।

**— देवलोक कालोनी, (सी.टी.ओ.),**
**बेरागढ़ (भोपाल), म. प्र.**

□

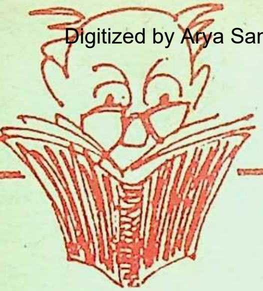

# ग्रंथलोक

***हुतात्मा * बालकृष्ण मिश्र: प्रकाशक : इंद्रकुमार वर्मा, महामंत्री : स्वर्णकार संघ, मालखाना, रायबरेली (उ.प्र.)**

१८५७ से लेकर आज तक लगभग १२३ साल हो गये, किसी भी लेखक या कवि ने हुतात्मा लालचन्द पर कोई लेखनी नहीं उठायी। इस दृष्टि से देखा जाये तो बालकृष्ण मिश्र ने "हुतात्मा" खण्ड-काव्य लिखकर बहुत ही पुनीत कार्य किया है।

मिश्रजी की इस कृति की सबसे बड़ी विशेषता उनकी भावव्यंजना तथा सहज प्रवाह है। ये दोनों मिलकर पाठक का तन-मन रोमांचित कर देते हैं।

लालचन्द के त्याग और बलिदान की रोमांचक गाथा सुनाते हुए वे आज की जनचेतना में देशभक्त और राष्ट्रप्रेम का ऐसा शंखनाद करते हैं, जिसकी अनुगूंज शाश्वत बनी रहेगी। लालचन्द के अंतिम क्षणों के वाक्य अत्यन्त प्रेरणादायक हैं –

**हे मां विनती करता हूं आशीष मुझे**
**मत देना**
**यदि देना फिर जन्म मुझे इस धरती पर**
**ही देना।**
**बार-बार जन्मू स्वतंत्रता हित**
**अभियान करूं!**
**जब तक तू परतंत्र जन्म ले ले बलिदा**
**करूं!**

अपनी पूर्व कृतियों की भांति नारी के च को कवि ने बड़ी ही उदात्त भावनाओं से दिया है। कवि ने नारी के दो रूपों चित्रांकित किया है। एक तो कोमल औ श्रृंगार का रूप और दूसरा शौर्य (दुर्गा) का राना के वार्तालाप में ये प्रसंग भरपूर उ हैं।

**नारी स्नेहमयी सर्वाधिक सुघर सृष्टि**
**की कृति है**
**नारी निखिल भुवन का संयम भी है**
**और प्रगति है।**

नारी का मन अत्यन्त कोमल होता है किन्तु अवसर पड़ने पर वह रणचण्डी का रू भी धारण कर लेती है –

**खप्पर भर-भर रक्त स्वयं पीती**
**अत्याचारी का**
**राजन एक रूप यह भी होता कोमल**
**नारी का।**

भगतसिंह, रामप्रसाद 'बिस्मिल' आदि को

श्री राष्ट्रप्रेम के कारण फांसी दी गयी, लालचन्द भी उसी मानस की एक कड़ी है, जिसका बलिदान किसी भी प्रकार इन सबकी तुलना में कम नहीं है।

**– आनन्द स्वरूप श्रीवास्तव**

* * *

*** विभीषण चरित्र * सुरेश स्नेही: प्रकाशक : ऋचाप्रकाशन, मुरैना, (म.प्र.): मूल्य : १५ रुपये।**

भारतीय साहित्य में रामकथा साहित्य ही ऐसा एकमात्र साहित्य है, जिसे आधुनिकता की इतनी ज्यादा अग्नि परीक्षाएं देनी पड़ी हैं। अनेक झंझावात, आंधी के थपेड़ों को सहने के साथ आज देश-विदेश में रामकथा पर आधारित रामायणों का प्रचलन रामकथा साहित्य के लोकमंगलकारी साहित्य होने का प्रमाण है।

इसी क्रम में कविवर सुरेश स्नेही ने 'विभीषण चरित्र' पाठकों के समक्ष प्रस्तुत किया है। विभीषण वह चंदन है जो राक्षस रूपी सांपों के बीच में रहकर भी अपनी खुशबू बिखेरता रहता है। विष नहीं उगलता है। व्यक्ति को अपने कर्तव्य पर अडिग रहना चाहिये विभीषण भी ऐसे ही थे। स्वयं रचनाकार के शब्दों में –

**भाई के नाते भी यह कर्त्तव्य आज**
**है मेरा।**
**एक बार तो कहूं कि तुमको है कुबुद्धि**
**ने घेरा।।**
**उचित समय पर उचित व्यक्ति से सत्य**
**नहीं कह पाना।**
**नीतिज्ञों ने निंद्य, नपुंसकता, कायरता**
**माना।।**
**(निर्वासन सर्ग)**

देश में हुई ताजा घटनाओं को विभीषण से जोड़कर प्रगतिशील छंद में गुंथा यह काव्य युग-युग से ढहते मानवीय विश्वासों को रोकने में सक्षम होगा।

रूप और वस्तु दोनों दृष्टियों से यह ग्रन्थ आधुनिक काव्य की ऊंचाई को छूता है।

**– राज गोस्वामी**

* * *

*** भरत सरिस को रामसनेही * लेखक : पं. प्रेमनाथ द्विवेदी 'रामायणी': प्रकाशक : मानस साहित्य प्रकाशन, दर्शनपुरवा, कानपुर; मूल्य : २० रुपये।**

पं. प्रेमनाथ द्विवेदी विगत दो दशकों से भी अधिक समय से अपने प्रवचनों के माध्यम से रामकथा को जन–जन तक पहुंचाने का कार्य कर रहे हैं।

इतने वर्षों तक रामकथा के अध्ययन एवं मनन का परिणाम ही है प्रस्तुत कृति – 'भरत सरिस को रामसनेही'। एकादश अध्यायों में विभक्त इस पुस्तक में जीवन चरित्र का विस्तृत विवेचन किया गया है।

प्रवचन शैली में लिखी गयी इस कृति की भाषा सहज एवं बोधगम्य है। श्री द्विवेदी मूलतः कवि हैं। अतः उनकी शैली में काव्यात्मकता के पुट ने भाषा को और अधिक प्रभावशाली बना दिया है। यद्यपि प्रस्तुत कृति का मुख्य आधार श्रीरामचरितमानस है तथापि विवेचना में तथ्यों की पुष्टि के लिए

# उत्कृष्ट मसाले बनविणारे फक्त दोनच!

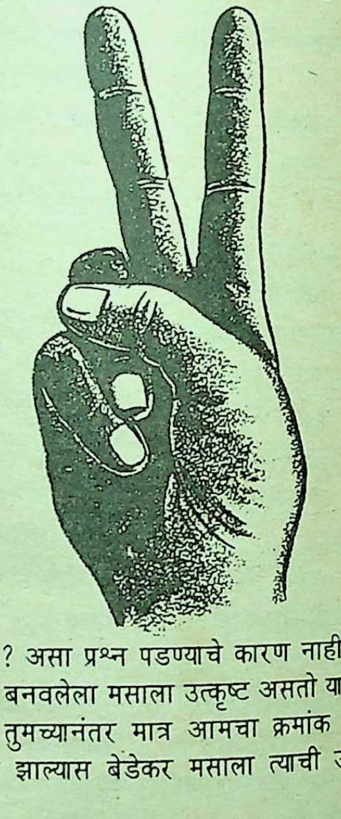

हे दोन कोण बुवा ? असा प्रश्न पडण्याचे कारण नाही. दोना पैकी पहिले तुम्ही स्वतः ! तुम्ही बनवलेला मसाला उत्कृष्ट असतो याबद्दल कुणीच शंका घेणार नाही. पण तुमच्यानंतर मात्र आमचा क्रमांक ! तुम्हाला मसाला बनवण्यास वेळ न झाल्यास बेडेकर मसाला त्याची उणीव भासू देणार नाही.

स्थापना-१९१०

**व्ही.पी. बेडेकर ॲन्ड सन्स प्रा.लि., मुंबई ४**

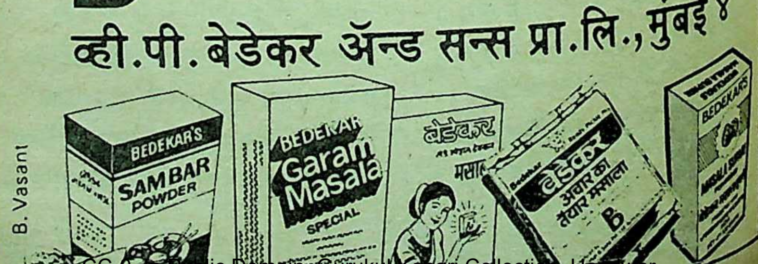
B. Vasant
BEDEKAR'S
SAMBAR POWDER
BEDEKAR
Garam Masala
SPECIAL
बेडेकर
मसाला
बेडेकर
अचार का तैयार मसाला
BEDEKARS

अन्य भाषाओं की रामकथा को भी आधार बनाया गया है, जिससे प्रतिपाद्य विषय पूरी तरह सार्थक हो गया है।

यह पुस्तक न केवल सामान्य पाठकों वरन् रामकथा के शोधार्थियों एवं विद्वानों के लिए भी विशेष उपयोगी है। — **कमलेश द्विवेदी**

* * *

*** परिचयात्मक प्राणि विज्ञान * लेखक : आर. एस. कोटपाल एवं के. एन. त्यागी; प्रकाशक : रस्तोगी एंड कं., सुभाष बाजार, मेरठ; मूल्य : ८५ रुपये ५० पैसे।**

यह पुस्तक विशेषरूप से मेडिकल कालेजों के लिए ली जाने वाली प्रवेश परीक्षाओं के लिए प्रस्तुत की गयी है। जो छात्र हिन्दी माध्यम से हाईस्कूल और इण्टरमिडिएट परीक्षाएं पास करके इन प्रवेश परीक्षाओं में बैठते हैं, उनके लिए ये परीक्षाएं दुर्गम पहाड़ नज़र आती हैं। एकदम से अंगरेज़ी में डाक्टरी टर्मिनोलोजी तथा शब्दावली को ठीक तरह से समझते जाने में कठिनाई आती है। डाक्टरी शिक्षा अंततः अंगरेज़ी में ही प्राप्त करनी होती है, परन्तु उसके स्तर तक पहुंचने के लिए छात्रों को समय के साथ ही विशेष मार्गदर्शन भी चाहिये।

हिन्दी में ऐसी पुस्तकों का अभाव है। उस अभाव को देखते हुए ही लेखक द्वय आर. एल. कोटपाल और के. एन. त्यागी ने इस 'परिचयात्मक प्राणि विज्ञान' की रचना की है। भाषा को सरलतम रखा है और विषय सामग्री पाठ्यक्रमानुसार व्यवस्थित रखी गयी है।

यूं तो रोज़मर्रा ही बहुत से डाक्टरी शब्द कानों में पड़ते रहते हैं। कुछ को लोग समझने भी लगे हैं। ब्लडप्रेशर, ईसीजी, हार्टसाउण्ड्स, हार्ट बीट, पल्स जैसे शब्दों को ठीक तरह से समझाने के साथ-साथ उनसे सम्बधित उपकरणों से भी परिचय कराते हुए लेखक द्वय आगे बढ़ते हैं कि पाठक को हर बात ठीक तरह से समझ में आती चली जाये।

औषधि विज्ञान के क्षेत्र में जिन-जिन वैज्ञानिकों ने खोज की हैं, उनकी तालिकाएं सूचनाओं समेत सुव्यवस्थित ढंग से रखी गयी हैं।

विभिन्न मेडिकल कालेजों की प्रवेश परीक्षाओं में पूछे गये प्रश्नों को और अन्य सूचनाओं को भी तालिका के रूप में समझाकर दिया गया है।

यह पुस्तक सुन्दर एवं आकर्षक कलेवर के साथ बड़े आकार में और कम मूल्य पर उपलब्ध करायी गयी है।

— **महेंद्र सरल**

* * *

*** 'वक्त का पुजारी' (लोक नाट्य) * नाटककार : जगदीशसिंह 'सेवक'; प्रकाशक : संयोग प्रकाशन, देना बैंक भवन, दूसरी पास्ता गली, कुलाबा, मुंबई; मूल्य : दस रुपये।**

'वक्त का पुजारी' अवधी में लिखित लोकनाट्य शैली (नौटंकी) में एक

पारिवारिक और सामाजिक आख्यान है। इसकी पृष्ठभूमि इतिहास की है, जिसके मूल में प्रेम के प्रति समर्पण, विद्रोह, दंड और मुक्ति की कामना है। शेरसिंह का रेशमा के प्रेम-बन्धन में बंधने का परिणाम जेल दण्ड है किंतु यह दण्ड उसके प्रेम को प्रौढ़ करता है और प्रेम के लिए सर्वस्व त्याग के लिए तैयार करता है। पिता की सहायता और बहन की मुक्ति के लिए समरसेन से युद्ध करना पारिवारिक प्रेम और राष्ट्रीय अस्मिता की रक्षा का द्योतक है। समय पर सहायता करना 'वक्त के पुजारी' का संदेश है।

लोक नांट्य शैली की गत्यात्मकता, संवाद और घटनाक्रमों की दृश्यावलियों से भरपूर 'वक्त का पुजारी' ग्रामीण अंचलों के लिए ही नहीं, बल्कि ग्रामीण मानसिकता से पूर्ण अपढ़ शहरी देहातियों के लिए भी उपयोगी और प्रेरणादायक है।

* * *

*** पूछूं किससे, (कविता-संग्रह) * कवि : राजाराम सिंह, प्रकाशक-धनावती प्रकाशन, ३७/४, वृन्दावन सोसायटी, माजीवाड़ा- थाने (महाराष्ट्र); मूल्य : तीस रुपये।**

'पूछूं किससे' राजाराम सिंह का प्रथम काव्य-संग्रह है। इस संग्रह की सारी कविताएं आम-बोल-चाल की भाषा में अपने पाठक से बिना किसी अवरोध के सीधे सम्पर्क स्थापित कर उनसे बतियाती हुई एकाकार हो जाती हैं। ये कविताएं मैं से हम, व्यक्ति से समाज, गांव से शहर, प्र से चुनाव, सांसद से संसद, व्यवस्था से अव्यवस्था, प्रकृतिं से पुरुष, जीवन से मृ और आत्मानुभूति से सह अनुभूति की यात्रा करती हैं। इन यात्राओं में युगीन चेतना के संदर्भों– साम्प्रदायिकता, स्वार्थान्धता आतंकवाद, प्रांतवाद, भाषावाद, बलात्कार जमाखोरी, तस्करी, अवसरवादिता खेमेबाजी, महंगाई, बेकारी, दहशत मिलावट, सभ्यता की आड़ में मानवता की हत्या, भूख, भ्रष्टाचार और कानून के पड़ाव मोड़, स्थितियां और विसंगतियां हैं।

यथार्थ से आत्म साक्षात्कार कराती हुई इन कविताओं का मूल स्वर वर्तमान व्यवस्था की विसंगतियों के कठोर विरोध का है। जहां ये कविताएं वादों के घेरों से बाहर हैं वहां वे अनुभव और अनुभूतियों के व्यापक घेरों में आदमी को घेरती हुई व्यापक सुव्यवस्था की कामना करती हुईं मनुष्य से संवाद करती हैं। वाद विशेष के दायरे और सोच के स्तर पर कविता की परख करनेवालों को ये रचनाएं संतुष्ट न कर सकें तो इन कविताओं की अर्थवत्ता और गुणवत्ता का दोष नहीं, बल्कि वादों के दायरों में रचना की मांग करनेवालों की वैचारिक विवशता और दृष्टि-भेद की एकपक्षीय कुंठा है।

– सच्चिदानंद सिंह 'समीर'

* * *

*** कैंसर : बचाव और उपचार * संपादक : डॉ. सुकमाल जैन; प्रकाशक : सन्मति प्रकाशन, १३८ सी. सन्मति कुटीर, बावड़ी**

बाल, माधवबाग, सी.पी. टैंक, बम्बई - ४०० ००४; मूल्य : १०० रुपये ।

कैंसर : यह शब्द सुनते ही शरीर थरथराने लगता है। रोंगटे खड़े हो जाते हैं और दिल की धड़कन तेज हो जाती है। कारण ? कैंसर : दुनिया में दूसरे नम्बर का खतरनाक हत्यारा । चिकित्सा विज्ञान के सुप्रतिष्ठित, हृदयरोग पुस्तक के लिए भारत सरकार द्वारा पुरस्कृत लेखक-संपादक डॉ. सुकमाल जैन ने इस खतरनाक कैंसर के विषय में पांच वर्षों से भी अधिक समय में खोज कार्य के बाद लगभग ४०० पृष्ठ की इस पुस्तक को संपादित किया है ।

प्रख्यात कैंसर विशेषज्ञ डॉ. डी. जे. जस्सावाला का कहना है कि वे सभी पदार्थ, जिन्हें खाया-पिया या सूंघा जा सकता है, प्राकृतिक और चिकित्सीय विकिरण, यहां तक कि कार्यस्थल का पर्यावरण भी मानव शरीर में कैसर के लिए संभावित पर्यावरण घटक है ।

इस पुस्तक के सात अध्यायों में करीब साठ शीर्षकों से विश्वविख्यात कैंसर विशेषज्ञों ने ऐसी मार्गदर्शक बातें बतायी हैं, जिनसे बच्चों, महिलाओं और पुरुषों में कैंसर के घातक प्रकोप को रोका जा सकता है और कैंसर की चपेट में आ जाने पर दीर्घजीवी उपचार किया जा सकता है। कई बार रोगियों को मौत के पंजे से छुड़ाया भी जा सकता है ।

पुस्तक के पहले अध्याय में स्वयं कैंसर अपनी कहानी सुनाता है और इसी में कैंसर के बारे में अन्य महत्वपूर्ण जानकारी दी है । पुस्तक का दूसरा अध्याय ऐसे विषयों से जुड़ा हुआ है जो प्राचीन भारत में कैंसर से लेकर उसके बाद में कल्पनाएं, भ्रांतियां और सच्चाई बताता है और उसके बचाव तथा रोग निदान की बातें बताता है। तीसरे अध्याय में बच्चों, किशोरों, युवकों और महिलाओं को अक्सर मौत की गोद तक ले जानेवाले कैंसर के विषय में चर्चा की गयी है । चौथा अध्याय पुरुषों पर अधिक हमला करनेवाले कैंसरों के बारे में है। पांचवें अध्याय में है कैंसर के उपचार की विविध पद्धतियां, प्राचीन भारत में कैंसर की चुनौती और उपचार व्यवस्था, शल्य चिकित्सा, रेडियोथैरेपी, केमोथैरेपी, रेडियो आइसोटॉप, कैंसर और आयुर्वेदिक उपचार, कैंसर और होम्योपैथी, प्राकृतिक चिकित्सा से उपचार और कैंसर के उपचार के लिए अब बीमा भी कराया जा सकता है ।

छठे अध्याय में देश के विभिन्न कैंसर चिकित्सा केन्द्रों, जैसे टाटा मेमेरियल अस्पताल और समाजसेवी संस्थाओं का जिक्र किया गया है। बम्बई में बाहरी मरीजों के लिए धर्मशालाएं आदि की विशेष जानकारी दी गयी हैं। सातवें और अन्तिम अध्याय में देश-विदेश में कैंसर पर विजय पाने के लिए किये जा रहे अनुसंधानों पर प्रकाश डाला गया है ।

इस बहुमूल्य जीवनोपयोगी पुस्तक में जिन डाक्टरों के लेख हैं वे हैं – सर्जन कैप्टन डॉ. बी. एन. शर्मा, डॉ. जस्सावाला,

खादी और ग्रामोद्योग आयोग

ग्राम-विकास का प्रमुख तथा प्रभावी संगठन

खादी और ग्रामोद्योग आयोग द्वारा निम्नलिखित कार्यकलापों के लि
सहायता दी जाती है।

१. कारीगरों, पर्यवेक्षकों और प्रबन्धकों का प्रशिक्षण।
२. औजारों उपकरणों तथा मशीनों के निर्माण तथा आपूर्ति की व्यवस्था।
३. गोदामों व कार्यशालाओं के निर्माण हेतु ऋण की सहायता।
४. कच्चे माल की व्यवस्था व उसे खरीदने हेतु ऋण की सहायता।
५. खादी एवं ग्रामोद्योगी वस्तुओं के उत्पादन तथा बिक्री हेतु कार्यकारी पूंजी।
६. बिक्री केन्द्र खोलने हेतु सहायता।
७. कार्यान्वयी अभिकरणों को पूंजी निर्माण ऋण।
८. उत्पादन तकनीकों एवं उपकरणों पर अनुसंधान।

खादी और ग्रामोद्योग आयोग ४ प्रतिशत की रियायती दर पर ऋण
उपलब्ध करता है।

अधिक जानकारी के लिए सम्पर्क करें :

निदेशक (प्रचार)
खादी और ग्रामोद्योग आयोग, "ग्रामोदय" इरला रोड,
विले पार्ले (पश्चिम) बम्बई - ४०० ०५६.

डॉ. प्रफुल्ल दसाई, डॉ. बोस, डॉ. आर. के. कपूर, डॉ. उषा सरैया, डॉ. ललित शर्मा, डॉ. कस्तुरी जयंत, डॉ. देव, डॉ. शाह, डॉ. बी. एस. सिघल, डॉ. दिव्य प्रभात, डॉ. अशोक हिसीकर, डॉ. नितिन मोरे, डॉ. प्रमोद झंवर, डॉ. शरद जैन, डॉ. आर. डी. लेले आदि ।

आम आदमी के जानने योग्य कैंसर के उपचार के बारे में सरल हिन्दी में और एक कहानी के रूप में सहज और रोचक ढंग से प्रस्तुत किया गया है. — **रामावतार**

* * *

*** एक रामायण और *** (कविता-संग्रह), **कवि मोतीलाल मिश्र; सरस्वती प्रकाशन, बनारसी भवन, खार, मुंबई; कीमत : ४० रुपये ।**

कविता के विविधरूपी और विविधधर्मी आंदोलनों से कुछ कवि बिलकुल असम्पृक्त रह कर कविताएं लिखते रहते हैं, उन्हीं में से हैं 'कवि मोतीलाल मिश्र । 'एक रामायण और' उनका ग्यारहवां कविता-संग्रह है जिसमें साठ से ज्यादा कविताएं हैं. मगर इन कविताओं में सुदीर्घ जीवन अनुभव के सत्व निचुड़कर आये हैं, जहां जीवनदर्शी दृष्टिकोण के टीले बनते हैं— मुक्तावली में देखें तो....

**न नारी बेचारी है,**
**न पुरुष बेचारा है,**
**एक दूसरे पर भारी है —**
**एक दूसरे से हारा है**

(२)

**पानी की एक बूंद ने**
**खुद को दरिया समझ लिया**
**बन्दे ने अपने आप को**
**खुदा समझ लिया**

मर्यादा पुरुषोत्तम राम और गीता उपदेशक गिरधर कृष्ण के निमित्त कवि ने मानव की सरलता को रूपायित किया है । दार्शनिक धर्मभाव प्रिय पाठकों को ये कविताएं विशेष पसंद आयेंगी ।

* * *

*** गुंजा और अन्य कहानियां * अनुराज; मगध प्रकाशन, ४६४९/१२३-ए, न्यू मॉडर्न शाहदरा, दिल्ली; मूल्य : चालीस रुपये ।**

गुंजा अनुराज की पन्द्रह कहानियों का पहला संग्रह है। अनुराज पत्र-पत्रिकाओं के माध्यम से एक सुपरिचित नाम है । उनकी कहानियों में विभिन्न कथा-परिदृश्य हैं, मगर सर्वोपरि है कैशोर जीवन की देहरी से प्रेम, कुंठा, असफलता, जिम्मेदारी की ओर बढ़ते कदमों की लड़खड़ाहट, टीस और दर्द के प्रतिबिम्ब, पितापुत्र के संबंधों की टकराहट, नारी के बदलते तेवरों, का आकाश । एक थी मानसी, गुंजा, दस रुपये की जिंदगी, बदले हुए चेहरे, सरेन्डर, आदि कहानियां विशेष आकर्षित करती हैं ।

**— रतीलाल शाहीन**

□

# सांस्कृतिक मंच

## कवि-दरबार समारोह

मारवाड़ी विद्यालय, बंबई की ओर से 'नवनीत' के संपादक डॉ. गिरिजाशंकर त्रिवेदी की अध्यक्षता में हिंदी-दिवस का आयोजन किया गया। विद्यालय के प्रधानाचार्य श्री डी. एस. सिंह ने डॉ. त्रिवेदी का स्वागत किया। श्री त्रिवेदीजी ने हिंदी भाषा की वैज्ञानिकता एवं व्यावहारिकता का उल्लेख करते हुए उसके महत्व का प्रतिपादन किया। इस अवसर पर विद्यालय के छात्र-छात्राओं द्वारा कवि-दरबार का आयोजन किया गया, जिसने श्रोताओं को भाव-विभोर कर दिया। संचालन श्री महिमाशंकर सिंह ने किया। उक्त अवसर पर विद्यालय के, विद्यार्थी जीतेंद्र बाजपेयी को 'महाराष्ट्र हिंदी साहित्य सम्मेलन' की ओर से हिंदी भाषा की उत्तम सेवा करने के लिए ट्राफी प्रदान की गयी। विद्यालय के पर्यवेक्षक श्री राज़किशोर सिंह ने बाल-कवियों को पुष्प प्रदान कर उनका उत्साहवर्धन किया तथा प्रमुख अतिथि महोदय के प्रति आभार प्रकट किया।

**— संपत कुमार पारीक**

* * *

## 'दिनकर' जयन्ती

संस्था 'इंद्रधनुष' (गया, बिहार) ने विगत २३ सितंबर को 'दिनकर' जयंती के उपलक्ष्य में एक साहित्यिक आयोजित की, जिसके सभापति थे, कृष्णदेव मिश्र।

इस अवसर पर सर्वश्री कृष्णकु अरुण हरलीवाला, विश्वनाथ, शांतनु चक्रवर्ती, अजय कु. पाठक, मिश्र 'शैल' तथा अरुण कुमार उपस्थित कवियों ने अपनी-अ कविताएं पढ़कर 'दिनकर' के काव्यांजलि अर्पित की।

श्री सत्येंद्र सिंह ने धन्यवाद किया।

**— अरुण हरलीवा**

* * *

## स्थापना दिवस समारोह

भारतीय प्रसार परिषद, बंबई स्थापना-दिवस के उपलक्ष्य में सभागार (मराठा मंदिर) में एक समारोह के प्रमुख अतिथि महा श्री छगन भुजबल ने कहा कि केंद्र राज्य के सभी मंत्रियों को राष्ट्रभाषा वर्ग में प्रवेश लेना चाहिये। इस अव पर उन्होंने परिषद् के राष्ट्रभा विद्यालय, शांतिनगर के राष्ट्रभाषा परीक्षा में विशेष योग्यता प्राप्त विद्यार्थियों को प्रमाण-पत्र एवं प्रोत्साहन पुरस्कार प्रदान किया। विशेष अतिथि के रूप में श्री कांतिलाल जोशी एवं सम्माननीय अतिथि के रूप में डॉ.

गिरिजाशंकर त्रिवेदी एवं श्री विश्वनाथ मेहर उपस्थित थे। अन्य प्रमुख व्यक्तियों में लायन मांगीलाल शाह, श्री सी. पी. सिंह 'अनिल', श्री दिलीप सिंह (उत्तर भारतीय संघ), श्री अनिरुद्धकुमार पांडेय, श्री शत्रुंजय पाठक एवं डॉ. मोहनलाल गुप्त के नाम उल्लेखनीय है।

**— दिलीप सिंह**

* * *

## शुकदेव प्रसाद अभिनंदित

हिंदी भाषा और साहित्य की महत्वपूर्ण एवं उल्लेखनीय सेवाओं के लिए सुप्रसिद्ध लेखक श्री शुकदेव प्रसाद को हिंदी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग ने 'साहित्य महोपाध्याय' की मानद उपाधि से विभूषित किया है। सम्मेलन भवन में आयोजित एक समारोह में उन्हें उक्त उपाधि प्रदान की गयी और उनका विशेषरूप से सारस्वत सम्मान किया गया। सम्मेलन अध्यक्ष श्री रामेश्वर शुक्ल 'अंचल' ने उन्हें उपाधि प्रदान की और डॉ. प्रभात मिश्र (प्रधानमंत्री) की ओर से प्रशस्ति वाचन किया सहायक मंत्री श्री श्री श्यामकृष्ण पांडेय ने।

श्री शुकदेव प्रसाद की सबसे महत्वाकांक्षी योजना एवं ऐतिहासिक योगदान बारह जिल्दोंवाला उनका ग्रंथ 'साइंस एन्साइक्लो इंडिया' (भारत आधृत वैज्ञानिक विश्वकोष) है, जो विज्ञान के क्षेत्र में किसी भी भारतीय भाषा में प्रथम प्रयास है।

## राधाकृष्ण पुरस्कार समारोह

विगत ९ सितंबर को गोविन्द भवन, रांची में आयोजित एक साहित्यिक समारोह में प्रख्यात साहित्यकार, सांसद डॉ. शंकर दयाल सिंह ने दैनिक 'रांची एक्सप्रेस' द्वारा संचालित नवम राधाकृष्ण पुरस्कार चक्रधरपुर के कवि साहित्यकार आचार्य शशिकर को प्रदान किया। पुरस्कार के अंतर्गत आचार्य शशिकर को सम्मान स्वरूप ५१० रु. नकद एवं एक प्रशस्ति-पत्र प्रदान किया गया। इसी अवसर पर पंचम पत्रकारिता पुरस्कार प्रो. पांडेय प्रभुदयाल को प्रदान किया गया।

राधाकृष्ण पुरस्कार समारोह की अध्यक्षता डॉ. प्रो. केशव प्रसाद ने की।

**— विनोदकुमार लाल**

* * *

## सम्मान-समारोह

कानपुर की साहित्यिक संस्था 'माध्यम' द्वारा सम्मान-समारोह में कानपुर से डॉ. यतींद्र तिवारी (प्राचार्य), दिल्ली से श्री राधेश्याम 'बंधु' तथा मद्रास से श्री उपेंद्र शास्त्री (हिंदी अधिकारी) का सम्मान किया गया।

संयोजन श्री मधुप शर्मा, श्री रामनारायण मिश्र, श्री हरी नारायण तिवारी व श्री राम नरेश त्रिपाठी ने किया।

**— अशोक शर्मा 'मधुप'**

* * *

## डॉ. गोयल अभिनंदित

गत ८ अगस्त को चाइबासा (सिंहभूमि जिले के मुख्यालय) में मांगीलाल रूंगटा हाई स्कूल की स्वर्ण जयंती मनायी गयी। हिंदी और राजस्थानी के यशस्वी कवि डॉ. मनोहरलाल गोयल का इस अवसर पर अभिनंदन किया गया। प्रसिद्ध उद्योगपति श्री सीताराम रूंगटा ने कविवर गोयल को अभिनंदन पत्र समर्पित किया। स्वर्ण-जयंती के अवसर पर प्रकाशित स्मारिका का विमोचन भी किया गया। विद्यालय के प्राचार्य श्री दुलाल मोहन ने स्वागत किया।

**– डॉ. बच्चन पाठक 'सलिल'**

## उमाशंकर शुक्ल का सम्मान

वर्धा-भारतीय स्टेट बैंक वर्धा शाखा व ट्रेजरी शाखा के संयुक्त तत्वावधान में समारोह के अवसर पर सुप्रसिद्ध पत्रकार उमाशंकर शुक्ल का हिंदी के क्षेत्र में उल्लेखनीय कार्य के लिए सम्मान किया गया। इस कार्यक्रम की अध्यक्षता कॉमर्स कालेज के प्राचार्य श्री शिवसागर अग्निहोत्री ने की।

सर्वश्री आशाराम वर्मा, लक्ष्मीनारायण मिश्र, गुरुशरण सक्सेना, द्वारकादास वेद, प्रफुल्लचंद्र चतुर्वेदी आदि ने पं. उमाशंकर शुक्ल की हिंदी की सेवाओं पर प्रकाश डाला और कहा कि शुक्लजी ने गत ५४ वर्ष से हिंदी पत्रकारिता की जो सेवा की है, वह स्तुत्य है।

**– आशाराम वर्मा**

## शिक्षा निकेतन का शुभारंभ

देवरिया मुख्यालय से २१ कि रुद्रपुर में साहु राजाराम शिक्षा निके के प्रथम सत्र का शुभारंभ जिलाधि कुंअर फतेबहादुर द्वारा दीप जलाकर मां सरस्वती की प्रतिमा पर मा करके किया गया।

शिक्षा निकेतन की प्राचार्या डॉ. सिंह ने संस्था की उपयोगिता, उद्दे भावी रूपरेखा एवं क्षेत्रीय इतिहास प्रकाश डाला। कु. मांडवी सिंह द्वा स्वागत गीत प्रस्तुत किया गया।

कार्यक्रम में परगनाधिकारी रु श्री सीताराम यादव, बी.डी.ओ., पत्रका एवं प्रवक्ता श्री सदानंद दुबे, हर्षचं जयप्रकाश राव, कादरी, नंदलाल रूंग सतासी इंटर कालेज के प्राचार्य श्री राम नगीना पांडेय, डॉ. रामभरोसा त्रिपा आदि अनेक लोगों ने अपने विचार व्य किये।

संस्था के अध्यक्ष श्री बैजनाथ सिं प्रवक्ता मानस इंटर कॉलेज, फतेहपुर ने अतिथियों का स्वागत किया। कार्यक्र का संचालन किया प्रवक्ता श्री वीरें सिंह ने। **– मृत्युंजय प्रसाद 'विशार**

* * *

## 'समीर' एवं 'उत्पल' सम्मानित

राष्ट्रभाषा प्रचार समिति थाने की ओर से सच्चिदानंद सिंह 'समीर' और भगवतलाल 'उत्पल' का हिंदी सेवा के

लिए शाल और श्रीफल से स्वागत किया गया। संस्था के अध्यक्ष श्री रघुवीरशरण तिवारी ने सच्चिदानंद सिंह 'समीर' का और न्यासी कृष्णदेव तिवारी ने श्री भगवतलाल उत्पल का सम्मान किया। डॉ. रविनाथ सिंह ने दोनों कवियों के कृतित्व और व्यक्तित्व का परिचय दिया। इस अवसर पर एक कवि-गोष्ठी भी हुई। पूरे कार्यक्रम का संचालन राजाराम सिंह ने किया। डॉ. ओमप्रकाश शुक्ल ने आभार माना।

**– राजाराम सिंह**

* * *

## साहित्यकारों को उपाधियां

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल की स्मृति में संस्थापित कला भारती संस्थान (बस्ती) उत्तर प्रदेश द्वारा एक सारस्वत समारोह अवध पुष्पांजलि (हिन्दी मासिक) के सम्पादक श्री प्रताप नारायण वर्मा की अध्यक्षता में स्थानीय आई.टी.आई. के परिसर में भव्यरूप से सम्पन्न हुआ, जिसका संचालन संस्थान अध्यक्ष साहित्यकार श्री राजेन्द्र परदेसी ने किया।

इस अवसर पर संस्थान द्वारा साहित्यकार कवि तथा भारत सरकार के प्रकाशन विभाग के निदेशक पद्मश्री डॉ. श्याम सिंह 'शशि' को 'साहित्य-शिरोमणि' से सम्मानित किया गया। इसके साथ ही श्री कैलाश कल्पित (इलाहाबाद) डॉ. मुनिलाल उपाध्याय 'सरस', श्री घनश्याम प्रजापति 'दंगल' को उनके साहित्य अवदान एवं सेवा के लिए 'साहित्य-श्री' अलंकरण से सम्मानित किया गया.

इसी अवसर पर पत्रकारिता की सेवा के लिए श्री हरीश पाल (दैनिक जागरण), श्री दिनेशचन्द्र पाण्डेय (भारतीय बस्ती) श्री मुहम्मद शरीफ खां (स्वतंत्र-पत्रकार) को 'पत्रकार-श्री' से अलंकृत किया गया.

संस्थान के संचालक श्री हरिनाथ उपाध्याय अटल ने सभी के प्रति आभार व्यक्त किया। **– सत्येन्द्रनाथ श्रीवास्तव**

* * *

## जय सोमनाथ नृत्य-नाटिका

राजस्थानी महिला मंडल ने इस वर्ष अपने वार्षिक सांस्कृतिक उत्सव में स्व. कन्हैयालाल माणिकलाल मुंशी कृत 'जय सोमनाथ' पर आधारित संगीतमय नृत्य नाटिका २२ अगस्त को नेहरू आडीटोरियम में श्री योगेंद्र देसाई के निर्देशन में प्रस्तुत किया।

मंडल की परंपरा रही है, देश की साहित्यिक विभूतियों को सम्मानित करना और समाज को इनकी रचनाओं और व्यक्ति से परिचय कराते रहना। गत वर्षों में मीरा का जीवन चरित, संत कवियों की भाव गरिमा, शास्त्रीय संगीत, सम्राट तानसेन की स्मृति में 'आराधना', 'प्रेमचंद: व्यक्तित्व एवं कृतित्व',

राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त के शताब्दि वर्ष पर 'यशोधरा', 'मिथ्याभिमान' एवं जयशंकर प्रसाद की 'कामायनी' तथा 'ध्रुवस्वामिनी' आदि का सफल मंचन किया गया है। इस तरह मनोरंजन के उच्चस्तर पर अपनी सदस्या बहनों और उनके परिजनों के कुशल और अनुभवी निर्देशन में अपनी छिपी प्रतिभा व कला को अभिव्यक्त करने का भी सुअवसर मिलता है। ये सभी प्रयास सफल और प्रशंसा के योग्य रहे हैं।

**– माधुरी नेवटिया, बीणा बियाणी**

* * *

## दो दिवसीय साहित्य सम्मेलन

पिछले दिनों हिंदी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग द्वारा आयोजित नयी पीढ़ी के रचनाकारों का दो दिवसीय सम्मेलन कई प्रकार से अपनी प्रभावशाली भूमिका अदा की। यह सम्मेलन हिंदी साहित्य के चार विषयों पर केंद्रित था। इसलिए देशभर से आये हुए विद्वानों द्वारा एक सार्थक और लंबी बहस हुई।

चार सत्रों में आयोजित गोष्ठियों का विषय था– साहित्य, सरकार और राजनीति, समकालीन साहित्य में साहित्यिक संस्थाओं की भूमिका, साहित्य सृजन की केंद्रीय विधा तथा नयी पीढ़ी के रचनाकारों की सर्जनात्मक समस्याएं। जिनकी अध्यक्षता एवं संचालन किया सर्वश्री (डॉ.) महेंद्र, डॉ. युगेश्वर, वशिष्ट, मुनि ओझा, डॉ. जगदीश गुप्त, डॉ. दुर्गा दीक्षित

**– सिद्धे**

* * *

## अ. भा. राजभाषा सम्मेलन

श्री प्रताप र. मर्चंट महाप्रबंधक
अध्यक्ष, राजभाषा कार्यान्वयन समि
अखिल भारतीय देना बैंक राज
अधिकारी सम्मेलन का उद्घा
१८ अगस्त १९९० कों सर सोरा
पोचखानावाला बैंकर प्रशिक्ष
महाविद्यालय, बंबई में किया।

श्री मर्चंट ने राजभाषा अधिकारि
का आवाहन किया कि वे अपने बैंक
हिंदी का प्रयोग बढ़ायें।

उप-महाप्रबंधक (राजभाषा)
सूर्यकांत मो. परीख ने इस अवसर
अपने भाषण में राजभाषा अधिकारि
की महत्वपूर्ण भूमिका का उल्ले
किया।

महाविद्यालय के उप-प्राचार्य श्री
शंकर नारायणन ने अपने विद्यालय
इस महत्वपूर्ण आयोजन का स्वा
किया। इस अवसर पर बोलते हु
सहायक महाप्रबंधक (कार्मिक
श्री विनोद मणियार ने राजभा
अधिकारियों से प्रेमभावपूर्वक हिं
कार्यान्वयन करने का आवाहन किया।
मुख्य प्रबंधक, डॉ. अनूपचंद्र पु. भाया
ने प्रास्ताविक प्रस्तुत किया तथा वरि
प्रबंधक श्री भूपेंद्र वैद्य ने धन्यवाद ज्ञाप
किया

**– डॉ. अनूपचंद्र पु. भाया**

**आ नो भद्राः क्रतवो यन्तु विश्वतः**
भवन की पत्रिका 'भारती' से समन्वित

# नवनीत

मनुष्य के नवोत्थान का सूचक
जीवन, साहित्य और संस्कृति का मासिक

## प्रार्थना

सहस्राहण्यं वियतावस्य पक्षौ, हरे हंसस्य पततः स्वर्गम् ।
स देवान्सर्वानुरस्यु पदद्य, संपश्यन् याति भुवनानि विश्वा ।।

उड़ रहा है हंस मेरा - उड़ रहा है ।
युग-युगों से पंख खोले, खोजता अपना बसेरा ।
हंस मेरा उड़ रहा है - उड़ रहा है हंस मेरा ।
देवताओं का हृदय में धारकर वरदान भी ।
विश्व के सब ज्ञानियों से सीखकर विज्ञान भी ।
उड़ रहा बेचैन होकर तीन लोकों का चितेरा ।
हंस मेरा उड़ रहा है - उड़ रहा है हंस मेरा ।
उड़ रहा है और उड़ता जा रहा अविराम है ।
देखता लीला जगत की भोग से उपराम है ।
जा रहा है पिया-मिलन को नील नभ में वह अकेला ।
हंस मेरा उड़ रहा है - उड़ रहा है हंस मेरा ।

(भावानुवाद : **सत्यकाम विद्यालंकार**)

# 'मैंने सिर्फ हिसाब चुकता किया है'

□ शिशिर वि

लगभग नब्बे वर्ष पूर्व एक मारवाड़ी नवयुवक जीवन निर्वाह हेतु काम की खोज में बंबई आया था। पहनने के कपड़े तथा एक लोटा के सिवा उसके पास कोई और सामान न था। तीन दिन तो यों ही भटकता और फुटपाथ पर सोता रहा, फिर किसी परिचित को उस पर दया आयी और उसने एक सार्वजनिक धर्मशाला के ट्रस्टी के नाम पत्र लिख दिया- 'इस गरीब लड़के को काम पर लगा दें।'

धर्मशाला के ट्रस्टी ने उससे कहा, 'कल पहली तारीख है, अतः तुम कल से काम पर लग जाना। अभी तो जाओ। तुम्हें धर्मशाला के पहरेदार का काम करना पड़ेगा।' लड़का प्रसन्न हो गया और हाथ जोड़कर बोला, 'सेठ साहब। आपने मुझे चले जाने के लिए कहा है, पर मैं कहां जाऊं? आप आज्ञा दें, तो मैं धर्मशाला में ही आज की रात्रि बिताकर कल सबेरे से काम पर लग जाऊंगा।'

सेठजी ने बात मान ली। दूसरे दिन लड़का काम पर लग गया। शाम को सेठजी आये और उस नवयुवक से कहा, 'तुम्हें यहां क्या-क्या काम करना है, इस बात को ठीक से समझ लो। देखो, धर्मशाला में रोज़ कौन आते हैं, और कौन जाते हैं, इसका रजिस्टर में लिखना है। और किसी को वगैरह कुछ दिया जाय तो उसे भी लिख धर्मशाला का ठीक-ठीक ख्याल रखना

लड़के ने कहा, 'सेठजी। मैं धर्मशा ख्याल तो बहुत ठीक-ठीक रखूंगा, पर लिख नहीं सकूंगा।'

सेठजी बोले, 'क्यों?'

'सेठजी, मुझे लिखना-पढ़ना जो आता।'

'ओह। ऐसी बात है। हमें तो ऐसा चाहिये जो पहरा भी दे, और सब कुछ भी सके। तब तुम इस काम के लायक हो। तुम्हें अभी इसी समय छोड़ा जाता तुमने आज जो काम किया है, उसके आने नौकरी के ये ले लो।'

लड़के का मुंह लटक गया। वह बाहर निकलकर गया कि सेठ ने उसे बुलाया। नवयुवक के मन में कुछ जगी। उसने लौटकर पूछा, 'सेठजी। मुझे नौकरी पर रख रहे हैं न? मैं हृद आपका आभार मानता हूं।'

सेठ ने जेब से पैसे निकाले और कहा, 'लो, यह और आठ आना। तुम्हें यह मैं अपनी ओर से दान में दे रहा हूं।'

यों एक रुपया लेकर लड़का चला गया। इस रुपये से उसने दस दिन तक काम चलाया। ग्यारहवें दिन उसे सट्टा बाज़ार में एक सेठ के यहां कागज-पत्र पहुंचाने का काम मिल गया।

कुछ वर्षों बाद वह नौजवान बहुत बड़ा सटोरिया बन गया। बाज़ार में उसका नाम गरजने लगा। वह सट्टे का बहुत बड़ा व्यापारी बन गया था। विदेशों में भी उसका नाम पहुंच गया था।

एक बार किसी सार्वजनिक संस्था के लिए एक नौजवान इनके पास आया और संस्था का नाम बताकर सहायता चाही। इन्होंने तुरन्त उसे एक लाख रुपये दे दिये। वह बहुत प्रसन्न हुआ। जब उसने जाकर अपने पिता को यह बात बतलायी तो वे गदगद कण्ठ से कहने लगे, 'बेटा। ऐसे दानी पुरुष का तो खूब सम्मान कर उन्हें सार्वजनिक रूप से मानपत्र देना चाहिए। कल मैं तुम्हारे साथ चलकर उस दानी सेठ को समझाऊंगा।'

दूसरे दिन दोनों पिता-पुत्र सेठ के पास गये। सेठ कुछ देर तक वृद्ध पुरुष की ओर देखते रहे। वृद्ध ने कहा, 'वृद्धावस्था के कारण इस संस्था की देखरेख का काम मुझसे संभलता नहीं, इसलिए मेरे पुत्र ने इस काम को संभाल लिया है। आपने एक लाख रुपये दिये, इससे मुझे बड़ा आनन्द मिला और मैं आपके दर्शन करने चला आया। हम लोगों ने आपको मानपत्र देने का निश्चय किया है और आपको भी भाषण देना पड़ेगा। आप अपना भाषण लिख दें, तो उसे पहले से छपवा लिया जाय। हम आपके भाषण को रेकार्ड में भी भर लेना चाहते हैं।'

सेठ ने कहा, 'इतनी छोटी-सी रकम के लिए इतना सब कुछ करने की कोई जरूरत नहीं है। मैंने तो कुछ किया ही नहीं है। अब आप स्वयं ही आये हैं तो मैं आपको ये एक लाख रुपये और देता हूं, इस रकम को आप अपनी इच्छानुसार दान में लगाइये।'

सेठ ने तुरंत ही तिजोरी में से एक लाख रुपये के नोट वृद्ध के हाथों पर रखते हुए कहा, 'इसमें कोई उपकार या दान नहीं है। यह तो मैंने अपना हिसाब चुकता किया है।'

वृद्ध ने पूछा, 'मैं आपका मतलब नहीं समझा। आप क्या कहना चाहते हैं?'

'मैं यह कहना चाहता हूं कि वर्षों पहले जब मैं इस शहर में आया था तब, जिस संस्था की आप बात कर रहे हैं, उसमें मैंने एक दिन नौकरी की थी, और उसके मेहनताने में आपने आठआने मुझको दिये थे। मुझको लिखना-पढ़ना नहीं आता था, इसलिए आपने मुझे नहीं रखा। उन आठआने के बदले में इस संस्था को मैंने एक लाख रुपये दिये हैं। नौकरी से अलग करने के बाद आपके हृदय में मेरे प्रति दयाभाव का संचार हुआ और आपने मुझे वापस बुलाकर अपनी जेब से आठ आने दान स्वरूप दिये थे। उसके बदले में एक लाख रुपये मैं आपको दे रहा हूं।'

'सेठ। आपने तो बहुत बड़ा बदला दे

दिया।' वृद्ध की आंखें छलक आयी थीं।

'यहां भी आप थोड़ी भूल में हैं। पैसे की कीमत कितनी है, यह मनुष्य की आर्थिक स्थिति और उसके मन पर निर्भर करती है। किसी एक गरीब के लिए आठ आने पैसे उसकी सर्वस्व पूंजी बन जाते हैं, और एक बड़ा धनी के लिए एक लाख रुपये आठ आने के बराबर ही होते हैं। आपकी और ईश्वर की कृपा से मुझे धन मिला है, इसलिए ये दो लाख रुपये देकर मैंने अभी सिर्फ हिसाब ही चुकता किया है। आज जो भाषण देने की बात कहते हैं, सो मैं भाषण देना नहीं जानता। मैंने सिर्फ काम चलाऊ पढ़ना-लिखना सीख लिया है। बस, और मुझे कुछ नहीं आता।' सेठ ने स्थि
की।

अब वृद्ध महोदय बोले, 'अच्छा, तो
नाम की तख्ती लगा दी जाय?'

'नहीं-नहीं, ऐसा करने की जरूरत
है। इससे तो मैं स्वयं मुश्किल
जाऊंगा।'

'कैसे?' वृद्ध ने प्रश्न किया।

'इनकम टैक्स के अधिकारी मुझे परे
कर डालेंगे। मैं ब्रिटिश सरकार को टै
देकर देश के काम में धन खर्चता रहता

यह व्यापारी सेठ श्री गोविन्द
सेकसरिया थे, जिन्होंने इतनी बड़ी रक
रसीद भी नहीं लिखवायी। बंबई शहर में
नाम उद्योग क्षेत्र में बहुत प्रसिद्ध रहा है

□

प्रेमी और प्रेमिका होटल में भोजन कर रहे थे कि उनमें झगड़ा हो गया। बात संबंध स
कर देने की हद तक पहुंची। तब युवक ने कहा, 'अच्छा तुम संबंध समाप्त करने को कहती
बैरा बिल अलग-अलग लाओ।'

— * —

दो प्रोफेसर बातें कर रहे थे। एक ने कहा, 'भाई, मैं विवाह इस कारण नहीं करना चाहता कि
मुझे स्त्रियों से बहुत डर लगता है।'

दूसरे ने उसे समझाया, 'यह बात है, तब तो तुम्हें विवाह तुरंत कर डालना चाहिये। विव
के बाद तो तुम्हें एक ही स्त्री का भय रह जायेगा।'

— * —

मां: 'बेटे, आज तुमने बड़ा अच्छा काम किया कि संतरे के छिलके बस के अंदर नहीं फेंके।
पर तुमने उनका क्या किया?'

बेटा: 'चुपके से पास बैठे आदमी की जेब में रख दिये थे।'

— * —

# अन्तर्प्रेरित अभिव्यक्तियां

□ दर्शन लाड

## शिक्षा से ज्ञान का टूटता रिश्ता :

शिक्षा, ज्ञान का वह प्रवाह है जो व्यक्ति को प्रबुद्ध करता है। हमारे देश की प्राचीन मान्यताएं शिक्षा को बहुत अधिक घेरों में नहीं बाँधती थीं। अनुभव को शिक्षा का स्रोत समझा जाता था, यही कारण है कि तब पारिवारिक कार्यकुशलता पारिवारिक व्यवसाय का रूप ले लेती थी। वर्ग और वर्ण-व्यवस्था के आधार का रचनात्मक रूप शायद यही था। तब जिस किसी को विशेष ज्ञान का आग्रह होता, वह अपने घर से दूर ऋषिकुलों या विश्वविद्यालयों में जाकर अपनी ज्ञान-पिपासा शांत करता था। ऐसे असंख्य ज्ञानवृद्धि-संपन्न व्यक्ति आज हमारे इतिहास की विभूति हैं।

आधुनिक यांत्रिक सोच से उपजी शिक्षा-पद्धति और फिर परीक्षा-पद्धति ने ज्ञान और शिक्षा का रिश्ता दूर से दूरतर कर दिया है। अक्षरज्ञान से लेकर विषयों की विशेष जानकारी तक उधार ज्ञान की चेरी बन गयी है। और फिर आधुनिक भारत में शिक्षा, ज्ञान के साथ-साथ जब श्रम से भी दूर भागने लगी तो शिक्षा की रही सही सार्थकता भी समाप्त होने लगी। आज के समस्याग्रस्त और चिन्ताग्रस्त शिक्षार्थी को देखकर कोई प्रसन्न नहीं होता - न शिक्षक, न पालक, न दर्शक। ज्यों-ज्यों अधिक साक्षरता को शिक्षा का पर्याय समझनेवाली मान्यता पनप रही है, संख्या में अधिक और गुणों में न्यून एक ऐसी पीढ़ी की भीड़ बढ़ रही है जो बाहर-भीतर हर ओर से असंतुष्ट है और डिग्री का कागज लाख प्रयत्न के बाद भी उसे संतोष की वह ठंडी हवा नहीं दे सकता, जो ज्ञान की तृप्ति से सहज प्राप्य है।

## व्यावहारिकता - कपटजाल के फैलते दायरे

सहजता और सरलता मानव का एक स्वाभाविक गुण है। आज जीवन की कृत्रिमता इस स्वाभाविकता को अधिकाधिक दबाती जा रही है। आज जो जीवन में लक्षित है वही परिवेश में परिलक्षित है। अपना मूल्य और महत्व बनाये रखने के लिए मनुष्य आज सामाजिक और नैतिक मूल्यों को बनावटीपन की तह में छुपाकर आसानी से ताक में रख देता है।

कोई भी नीति या नियम अपने में संयम की अपेक्षा रखते हैं, परन्तु अपनी स्वार्थ-लब्धि के लिए आतुर मनुष्य आज संयम को बंधन

और व्यवधान समझता है। ऐसे में समाज के साथ कदम-ब-कदम आगे बढ़ने के लिए मनुष्य को व्यावहारिकता का सहारा लेना पड़ता है।

व्यक्ति-व्यक्ति के बीच मधुर संबंधों के निर्वाह के लिए, एक से दूसरे के स्वार्थ से संपृक्त होने के लिए व्यावहारिकता का सहारा लेना अनिवार्य है। परन्तु यदि इसकी गहराई में जायें तो पायेंगे कि आज व्यावहारिकता मात्र एक कवच के समान बनकर रह गयी है, अन्तर के भावों से, मन की सीधी-सरल अभिव्यक्ति से इसका कोई संबंध नहीं होता। यह हमारी व्यावहारिकता दैनिक व्यवहार में कपट का ही पर्याय बनती जा रही है। दूसरे शब्दों में आज की व्यावहारिकता कपट जाल के फैलते दायरों का ही दूसरा नांम है।

### पूर्वाग्रह – मनुष्य जाति का अभिशाप

हम किसी को जानते-पहचानते हैं अपनी विवेकबुद्धि के द्वारा कम, सुनी-सुनाई बंधी-बंधाई मान्यताओं के कारण अधिक। फिर कहीं ऐसा भी होता है कि किसी व्यक्ति-विशेष के व्यक्तित्त्व की प्रभावी सूक्ष्म तरंगों के कारण किसी ने किसी के प्रति कोई मान्यता निश्चित की और उसके बाद वह, उस व्यक्ति-विशेष को उसी मान्यता का चेहरा चढ़ाकर देखने लगा।

ऐसी ही मान्यताएं व्यक्ति और व्यक्ति, समाज और समाज तथा तरह-तरह के धर्म, वर्ग, वर्ण और दलों के बीच धारणा बनकर पूर्वाग्रह का रूप धारण कर लेती हैं। पूर्वाग्रह-ग्रस्त कोई भी मनुष्य विवेक के साथ साथ विभिन्न कोणों से व्यक्ति और परिस्थितियों को देखनेवाली दृष्टि का साथ भी छोड़ देता है। वह केवल भावरंजित ऐसी शक्ति का [illegible] होता है जो निर्माण कम और विनाश अधिक कर सकती है।

आज की अधिकांश मानवता पूर्वाग्रह की इसी विनाशक शक्ति से सुसज्ज है। मनुष्य का विवेक उसे कहते हैं जो अपने ज्ञान को बार-बार तरह-तरह से तौलता है, जरूरत हो तो संतुलन बनाये रखने के लिए सत्य को साक्षी रखकर मान्यताओं में हेरफेर करता है। दु:ख का विषय है कि मनुष्य आज इस विवेक से दिनोंदिन दूर होता जा रहा है। पूर्वाग्रह का अभिशाप मनुष्य जाति को अविवेकी शक्ति से सम्पन्न पशुता की ओर ढकेल रहा है।

### जीवन, कार्यमुक्त या कार्ययुक्त ?

कार्यमुक्त जीवन की कल्पना कार्यरत जीवन में कभी-कभी सुहावनी दिखाई देती है परन्तु जब सचमुच व्यक्ति का कार्यमुक्तता से संयोग होता है तो आगे का रास्ता कठिन दिखाई देता है।

यह सच है कि मनुष्य की कार्यशक्ति विराम पाकर चुकने लगती है, उत्साह निरुत्साह में परिणत हो जाता है और जीवन की सार्थकता पर एक बडा प्रश्नचिह्न लग जाता है।

कार्यशक्ति का कम या अधिक होना भी बहुत कुछ मन पर निर्भर करता है। शरीर की प्रकृति ही ऐसी है कि जैसे ही मन से उसका संबंध टूटता है, वह प्रमाद का दास बन जाता

है। शरीर की आहार आदि सामान्य क्रियाओं में उलझकर वह अपनी उपयोगिता अपने लिए ही सार्थक समझता है और ऐसे में पारिवारिक और सामाजिक बन्धन अपने आप ढीले होने लगते है। व्यक्ति शरीर से अत्यधिक जुड़कर आत्मकेन्द्रित हो जाता है। लेकिन जहाँ मन साथ नहीं है, वहाँ शरीर अकर्मण्य है और अकर्मण्यता व्यर्थता का ही दूसरा नाम है।

निष्कर्ष कहता है कि कार्यमुक्त जीवन की कल्पना किसी भी स्थिति में कार्यकारी नहीं। शरीर के अन्त तक कार्यरत रहना मुनष्य के लिए आवश्यक ही नहीं अनिवार्य है। रोग या दुर्बलता इसमें रुकावट नहीं बन सकते क्योंकि कार्यरत कार्यशीलता मनुष्य-जीवन के लिए प्राणों के समान है।

**— बी २७/१०५, सुंदरनगर,**
**कालीना, बंबई - ४०० ०९८**

□

## भगवत स्वरूप अग्रवाल स्मृति हिन्दी निबंध प्रतियोगिता १९९०

हमें घोषित करते हुए प्रसन्नता होती है कि भवन की भगवत स्वरूप अग्रवाल स्मृति हिन्दी निबंध प्रतियोगिता १८ से २५ वर्ष तक के छात्रों के लिए आयोजित की गयी है। निबन्ध का विषय है:—

**"आधुनिक युग में मानव अपने जीवन को ढालने के लिए किस प्रकार श्रीकृष्ण का अनुकरण कर सकता है।"**

**अथवा**

**आधुनिक युग के जीवन मूल्य बनाम प्राचीनकाल के जीवन मूल्य।**

किसी भी शैक्षणिक संस्था के नियमित एवं प्रवेश योग्य छात्र १० पृष्ठों का डबल स्पेस में टाइप निबंध की दो प्रति ३० नवम्बर या उसके पहले डॉ. के. पी. जोग, भारतीय विद्या भवन, चौपाटी, बम्बई - ४०० ००७ को प्रस्तुत करें। तीन नकद पुरस्कार रु. ५००/-, रु. ३००/- और रु. २००/- प्रतियोगिता में चुने हुए प्रथम तीन निबंधों को क्रमशः दिया जायेगा। प्रथम पुरस्कार प्राप्त निबंध को मासिक नवनीत के जनवरी अंक में प्रकाशित किया जायेगा। छात्रों से निवेदन है कि वे अपना निबंध अपने पासपोर्ट साइज फोटो के साथ भेजें।

निबंध के आकलन में निम्नलिखित बातों पर ध्यान दिया जायेगा:

**१. विचारों की स्पष्टता, सोचने की गहराई तथा अभिव्यक्ति**
**२. विचारों का संयोजन तथा तर्कपूर्ण ढंग से प्रस्तुतिकरण**

छात्र अपने प्रधानाचार्य/प्राध्यापक/अथवा भवन संस्था के किसी विभागाध्यक्ष द्वारा प्रमाणित जन्मतिथि तथा पासपोर्ट साइज फोटो के साथ अपना निबंध भेजें।

□

# भारतीय शिक्षा के शाश्वत मूल्य

☐ कमलापति मि

वर्तमान काल में विद्यार्थियों में व्याप्त अनुशासनहीनता तथा निरंतर गिरते हुए नैतिक आचरण को देखकर आधुनिक शिक्षा-पद्धति दोषयुक्त प्रतीत होती हैं। प्राय: सभी लोग ऐसा मानते हैं। लेकिन उन दोषों का प्रख्यापन नहीं करते, जिन्होंने शिक्षा-पद्धति को आक्रांत कर रखा हैं। विचार करने पर ऐसा प्रतीत होता है कि वर्तमान शिक्षा-पद्धति में जो दोष पाये जाते हैं, उनका मूल कारण हैं शिक्षा में उन शाश्वत मूल्यों का अभाव, जो संस्कृत-वाङ्मय में यत्र-तत्र बिखरे पड़े हैं और जिनके कारण भारतीय संस्कृति सदैव महिमान्वित रही हैं। उन मूल्यों की खोज के लिए हमें अपने अतीत में जाना पड़ेगा और यह देखना पड़ेगा कि वह कौन ऐसे मूल्यवान् तत्त्व थे, जो विद्याध्ययन करते हुए विद्यार्थी में संक्रान्त किये जाते थे।

हमारी प्राचीन शिक्षा-पद्धति का सर्वप्रथम दर्शन 'तैत्तरीयोपनिषद्' की शिक्षावल्ली में होता हैं, जहाँ अध्ययन-अध्यापन करते हुए गुरु-शिष्य को कुछ नियमों का पालन करना होता था। वे नियम थे—ऋत, सत्य, तप, दम और शम। स्वाध्याय प्रवचन काल में सदैव ये नियम पालनीय थे। शिक्षावल्ली के नवम अनुवाद में कहा गया हैं:-

**'ऋतं च स्वाध्याय प्रवचने च। सत्यं**
**स्वाध्यायप्रवचने च। तपश्च**
**स्वाध्यायप्रवचने च।**
**दमश्च स्वाध्यायप्रवचने च। शमश्च**
**स्वाध्यायप्रवचने च।**

इसका तात्पर्य यही है कि हमा स्वाध्याय-प्रवचन ऋत अर्थात् शास्त्रादि द्वा बुद्धि में निश्चित किया हुआ अर्थ, सत्य, त इन्द्रिय-दमन तथा मनोनिग्रह से युक्त होन चाहिए। आजकल शिक्षा-पद्धति में इन स शाश्वत मूल्यों का पूर्णत: अभाव हैं, जो विद्यार्थी को नैतिकता के परमोच्च शिखर पर ले जाते हैं। इन मूल्यवान् तत्त्वों के साथ ही कुछ अन्य आचरणीय नियमों पर भी प्रका डाला गया है, जो विद्याध्ययन में नितान्त उपादेय हैं। वहीं उपनिषद् में वेदाध्ययन को समाप्त कर जब विद्यार्थी गृहस्थाश्रम में प्रवेश करना चाहता था, तो उस समय आचार्य कुछ अमूल्य संदेश देता था—जिनको ग्रहणकर व्यक्ति एक आदर्श नागरिक होता था। शाश्वत मूल्य के संदेश इस प्रकार हैं:-

**'सत्यंवद। धर्मं चर। स्वाध्यायान्मा**
**प्रमदः।**

**देवपितृकार्याभ्यां न प्रमदितव्यम्।**

**मातृदेवो भव,**  
**पितृदेवो भव, आचार्यदेवो भव,**  
**अतिथिदेवो भव ।**  
**यान्यनवद्यानि कर्माणि तानि**  
**सेवितव्यानि । नो इतराणि ।**  
**एष आदेशः एष उपदेशः । एषा**  
**वेदोपनिषत् । एतदनुशासनम् ।'**

यहाँ मनुष्य-जीवन को समुन्नत करने वाले सभी आवश्यक तत्त्वों का प्राक्कथन किया गया हैं। सच बोलो। धर्म का पालन करो। स्वाध्याय में प्रमाद मत करो। देवता और पितरों के कार्यों में प्रमाद नहीं करना चाहिये। माता को देवता मानो, पिता को देवता मानो, आचार्य को देवता मानो, अतिथि को देवता मानो। जो अनिन्द्य कर्म हैं उन्हीं का सेवन करना चाहिये, दूसरों का नहीं। यह आदेश है। यह उपदेश है। यह वेद का रहस्य है और ईश्वर की आज्ञा है। आजकल की शिक्षा में इन सभी बातों का नितराम अभाव है। तभी यह दोषयुक्त दिखायी पड़ती है। आज इस बात की आवश्यकता है कि प्रत्येक विद्यार्थी में इस प्रकार के विचार संक्रांत किये जायें, जिससे वह एक आदर्श मनुष्य बन सके। माता, पिता और आचार्य के प्रति देव-बुद्धि रखना कितना उदात्त विचार है। वास्तव में वह व्यक्ति यथार्थ में आदर्श बन सकता हैं, जिसे माता-पिता और गुरु से यथाकाल समुचित शिक्षा प्राप्त हुई हो। ऐसा व्यक्ति पर तत्त्व का भी ज्ञान प्राप्त कर सकता है। श्रुति कहती है:-

**'मातृमान् पितृमान् आचार्यमान्**  
**पुरुषोवेद ।'**

इस प्रकार की भावना से भावित अन्तः-करण वाले विद्यार्थी वर्ग में किसी भी प्रकार की अनुशासनहीनता अथवा दुर्विनीयता आ ही नहीं सकती। अतः वर्तमानकालिक शिक्षा मे इस प्रकार के विचारों को समावेश करना नितान्त आवश्यक है।

'प्रश्नोपनिषद्' में एक आख्यायिका आयी हैं, जिसमें कहा गया है कि सकेशादि मुनि महर्षि विप्पलाद के आश्रम में विद्याध्ययन के लिए गये। महर्षि ने सर्वप्रथम उनसे तप, **ब्रहमचर्य और श्रद्धापूर्वक एक वर्ष** तक आश्रम में रहने को कहा है और फिर इच्छानुसार प्रश्न पूछने की अनुमति दी:

**'तान्ह स ऋषिरुवाच भूय एव तपसा**  
**ब्रहमचर्येण श्रद्धया**  
**संवत्सर संवत्स्यथ, यथाकामं प्रश्नान्,**  
**पृच्छत, यदि**  
**विज्ञास्यायः सर्वदा वो वक्ष्याम इति ।'**

यहाँ इन वचनों से कि यदि मैं जानता हूँगा, तो सब कुछ बताऊँगा, कितनी विनम्रता, निराभिमानता और स्पष्टवादिता प्रकट होती है। एक आदर्श आचार्य में यही गुण होने चाहिए। इसके साथ ही जिज्ञासु विद्यार्थी में भी कुछ गुणों का होना बताया गया हैं, वे हैं—तप, ब्रहमचर्य और श्रद्धा। ज्ञानार्जन के लिए जिज्ञासु व्यक्ति में इन गुणों का होना परमावश्यक है। ज्ञान के धारण के लिए तपश्चर्या आवश्यक है और साथ ही ब्रहमचर्य का पालन भी उपादेय है। इन सबके साथ-ही-साथ श्रद्धा होना तो

परमावश्यक है। क्योंकि कहा गया है—'श्रद्धावान्लभते ज्ञानम्।' 'ऋग्वेद' में तो एक सूक्त ही श्रद्धापरक है, जिसमें श्रद्धा को देवी मानकर ऋषि ने अपने विचारों को इस प्रकार व्यक्त किया है:-

> **'श्रद्धा प्रातर्हवानहे श्रद्धा माध्यन्दिंन परि।**
> **श्रद्धा सूर्यस्य निमुचि श्रद्धे श्रद्धायथेह नः।।**

आजकल शिक्षा-पद्धति में इन सभी गुणों का अभाव है। शिक्षक में न तो निरभिमानता है और न पूर्ववत् स्पष्टवादिता। विद्यार्थी वर्ग में भी तप, ब्रहमचर्य, श्रद्धा आदि उदात्त गुणों का नितांत अभाव हैं। इन महनीय गुणों का ज्ञान हमें संस्कृत-साहित्य के पढ़ने से ही होता है। अतः ऐसे अनुपम गुणों का समावेश यदि आधुनिक शिक्षा में किया जाय, तो विद्यार्थियों के साथ-ही-साथ देश का भी कल्याण हो सकता है। क्योंकि इन गुणों को धारण करने से व्यक्ति का जीवन समुन्नत होगा और उनका चरित्र अनुकरणीय होगा।

इसी प्रकार कुछ शाश्वत मूल्यों का उल्लेख पृथ्वीसूक्त के एक मंत्र में हुआ है, जिसमें यह कहा गया है कि सत्य, बृहत्, उग्र, दीक्षा, तप, ब्रहम और यज्ञ से पृथ्वी का धारण होता है:

> **'सत्यं ब्रहवृतमृग्रं दीक्षा तपोब्रहम यज्ञः पृथ्वीं धारयन्ति।'**

इसका अर्थ है कि सत्य, महत्तापादिक गुण, घृत, मानसिक यथार्थ-संकल्प, शासकत्व गुण (क्षत्र), श्रद्धापूर्वक यम-नियम का पालन, तप, वेद और यज्ञ से आठ पृथ्वी का धारण करते हैं। इसका आशय भी है कि इन गुणों को अपनाने से मनुष्य जीवन का धारण भी समुचित रूप से सकता है। आजकल की शिक्षा में भी उन गुणों को अपनाया जाता है, तो शिक्षा-जगत् में पर्याप्त सुधार हो सकता है।

मनु ने विद्यार्थियों में अनुशासन रखने के लिये यह आवश्यक माना है कि विद्यार्थी को विनम्र होना चाहिए और गुरु का अभिवादन एवं आदर आदि कर चाहिए। यदि वह ऐसा करता है, तो उसकी आयु, विद्या, कीर्ति और शक्ति की वृद्धि है।

ऋषियों ने मानव-जीवन को समुन्नत करने के लिए कुछ आचरणीय धर्मों को बताया है हैं-अहिंसा, सत्य, अस्तेय अर्थात् चोरी न करना, बाहयाभ्यन्तर पवित्रता इन्द्रिय-निग्रह, दान, मनोनिग्रह, दया और क्षमा अर्थात् उपकार किये जाने पर भी चित्त में क्षोभ न लाना। इन सब आदर्श गुणों को अपने में संक्रमण करने के लिए इन्हें धर्म के साधन रूप में स्वीकार किया गया है। 'याज्ञवल्क्य स्मृति' के आचाराध्याय में इसका उल्लेख है। मनु ने भी 'मनुस्मृति' में संक्षेप इन्हीं गुणों का उल्लेख करते हुए इन्हें सभी के द्वारा पालनीय धर्म के रूप में स्वीकार किया हैं। अन्यत्र भी उन्होंने इन गुणों पर प्रकाश डाला है।

पुनः -पुनः इन सब परिपालनीय धर्मों की आवृत्ति करने से यह सिद्ध हो जाता है कि

मानव-जीवन के लिए इन गुणों की नितांत उपादेयता हैं। शिक्षा के क्षेत्र में भी यदि इन सब बातों को अपनाया जाता है, तो मानव-समाज का कल्याण हो सकता है और राष्ट्र का भी मंगल-विधान होना संभव है।

यास्काचार्य ने अपने निरुक्त में वेद की किसी शाखा के चार मंत्रों को उद्धृत किया है, जिसमें अध्यापक, आचार्य और शिष्य के कुछ कर्तव्यों पर प्रकाश डाला गया है। वहाँ कहा गया है कि विद्याभिमानिनी देवता उपदेष्टा आचार्य के पास आकर कहती है कि हे ब्राहमण, मुझे अनधिकारी को न देकर मेरी रक्षा करो। मैं तुम्हारे लिए निधि-रूप हूँगी। जो मेरी निंदा करता है, जो निष्कपट-भाव से विद्याभ्यास नहीं करता तथा जो सदाचार का पालन नहीं करता, ऐसे कृत्रिम शिष्यों के प्रति मेरा उपदेश न करना। यहाँ विद्यार्थी को असूयारहित, सरल और संयत होना बताया गया है। इससे स्पष्ट है कि शिक्षा के क्षेत्र में ऐसे ही विद्यार्थियों को होना चाहिए।

दूसरे मंत्र में यह कहा गया है कि जो आचार्य सत्यरूप वेद वचनों से कणों को आपूरित करता है, उससे द्रोह नहीं करना चाहिए और उसे माता-पिता के समान पूज्य मानना चाहिए। तीसरे मंत्र में गुरु के प्रति आदर बुद्धि रखने की शिक्षा दी गयी है और यह कहा गया है कि गुरु के द्वारा अध्यापित होकर जो शिष्य उसके प्रति मन, वचन और कर्म से आदर नहीं रखते, आचार्य को चाहिए कि ऐसे शिष्यों में विद्या को संक्रान्त न करें। यदि उन्होंने येन केन प्रकारेण विद्या प्राप्त भी कर ली है और गुरु का समुचित सम्मान नहीं किया, तो वह विद्या फलवती भी सिद्ध नहीं होगी। चतुर्थ मंत्र में कहा गया है कि जो शुचि हो, अप्रमत्त हो, मेधावी हो, ब्रहमचर्य से युक्त हो और गुरु से द्रोह न करता हो, ऐसे सुशिष्य में विद्या को संक्रान्त करना चाहिए।

इस प्रकार संक्षेपतः निरूपित शाश्वत मूल्यों के ये संदेश संस्कृत-वाङ्मय में सर्वत्र उपलब्ध होते हैं। इन्हें अपनाने से शिक्षा फलवती सिद्ध होगी और उससे अच्छे नागरिक होंगे तथा अन्ततोगत्वा राष्ट्र का मंगल होगा। हमारा चरित्र भी ऊँचा होगा। हम किसी से राग-द्वेष नहीं करेंगे। सभी हमारे मित्र होंगे।

**— ४ ए. पार्क रोड,**
**लखनऊ - २२६ ००१, उ.प्र.**

□

स्वामी रामतीर्थ लाहौर में एक कालेज में प्रोफेसर थे। एक दिन जब वह कालेज से बाहर निकले तो उन्होंने देखा कि एक आदमी नींबू की टोकरी लेकर बैठा है। नींबू सुन्दर और रसदार थे। रामतीर्थ का मन हुआ कि नींबू लूं या न लूं। कभी ले लूं, कभी न लूं इसी तरह करते उन्होंने दो नींबू ले लिये। घर जाकर उन्होंने पत्नी से कहा कि चाकू ले आओ, और नींबू काटकर सामने रखकर बैठ गये। खाऊं या न खाऊं। खाऊंगा तो मन के बस में हो जाऊंगा, यह सोचकर नींबू बाहर फेंक दिये और नाचने लगे, 'मैं जीत गया - मैं जीत गया।'

# हेमिंग्वे के साथ सौदा

□ डब्ल्यू जे. लेडेरा

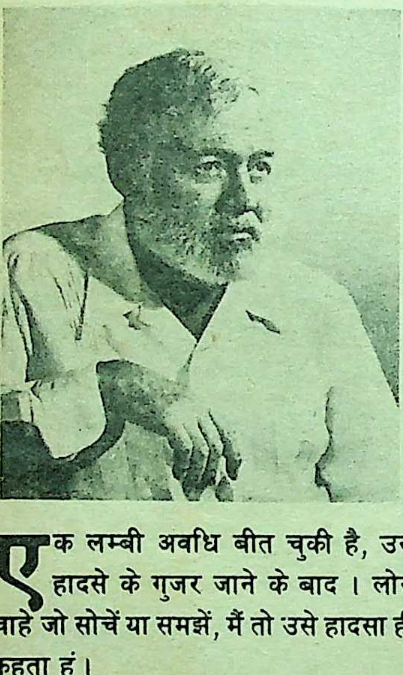

एक लम्बी अवधि बीत चुकी है, उस हादसे के गुजर जाने के बाद । लोग चाहे जो सोचें या समझें, मैं तो उसे हादसा ही कहता हूं ।

उन दिनों में मैं चीन में, चुंकिग नगर में, एक शतघ्नी-नौका (गन बोट) में तैनात था । तब मैं कनिष्ठ सैनिक अधिकारी (जूनियर लेफ्टिनेण्ट) ही था फिर भी नगर के सौम्य वातावरण में अकस्मात ही मेरा नाम काफी जाना-पहचाना हो गया था ।

एक दिन वहां हो रही एक अंध-नीलामी (ब्लाइण्ड ऑक्शन) में एक पूरी तरह से बन्द लकड़ी की बड़ी पेटी पर मैंने भी तीस डालर की बोली लगा दी थी । पेटी बहुत वज़नी थी, उसके भीतर की सामग्री भी अज्ञात थी । वहां उपस्थित समस्त लोगों का लगभग यही अनुमान था कि उसमें पत्थर के टुकड़े भरे हुए थे । नीलामी करने वाला वह चीनी व्यक्ति व्यावहारिक विनोद करने में सिद्धहस्त और प्रख्यात था ।

जैसे ही विक्रेता ने मेरी ओर इशारा करते हुए बोली समाप्त कर मेरे नाम बिक्री की घोषणा की थी, वैसे ही किसी ने धीमे स्वरों में बुदबुदाते हुए कहा था कि– 'चलो, आज एक और छलावा भरा कार्य सम्पन्न हुआ।' वह चीनी विक्रेता ठगी करने के लिए भी कुख्यात था । किन्तु जब मैंने उस पेटी को खोला तब उपस्थित लोगों के बीच डाह और निराशापूर्ण पराजयबोध के साथ मन्द-मन्द आर्तस्वरों में बुदबुदाहट मच गयी थी। मेरी खुशी का ठिकाना न था। पेटी के भीतर बेहतरीन शराब (व्हिस्की) की दो पेटियां थीं ।

चुंकिग में ब्रिटिश दूतावास में पदस्थ एक अंग्रेज कर्मचारी व्हिस्की की उन बोतलों में से

एक-एक बोतल का दाम तीस डालरों तक देने लगा था तथा उसके अलावा और भी महंगे-महंगे कई अन्य प्रस्ताव मुझे मिले थे किन्तु मैंने उन सबको इसलिए अस्वीकार कर दिया था चूंकि यथाशीघ्र ही वहां से कहीं अन्यत्र.मेरा स्थानान्तर तय हो चुका था और चुंकिग छोड़ने के पूर्व एक बढ़िया विदाई भोज देने का निश्चय मैंने कर लिया था अतः उसी के निमित्त वह पूरा का पूरा द्रव बचाये रखना चाहता था।

संयोग से उन्हीं दिनों चुंकिग में मि. अर्नेस्ट हेमिंग्वे पधारे हुए थे। अन्य बहुत लोगों की भांति ही वह भी 'मदिरा की तीव्र प्यास' से व्याकुल थे क्योंकि वहां उन दिनों कतई सूखा चल रहा था और सुरा बिल्कुल ही उपलब्ध नहीं थी।

एक दिन वह मेरी नौका पर अचानक पधारे। मिलते ही उन्होंने मुझसे कहा – 'मैंने सुना है कि तुम्हारे पास व्हिस्की की दो पेटियां हैं?'

'जी हां, महोदय, हैं तो।'

'छः बोतलों के बदले तुम क्या दाम लोगे?' उन्होंने पूछा

'महोदय, मुझे यह बताते हुए बड़ा दुःख हो रहा है कि वे बिक्री के लिए नहीं हैं। मैंने उनको उस भोज के निमित्त बचा रखा है जो मैं यहां से बाहर जाने का आदेश पाते ही देने वाला हूं।' मैंने कहा।

जेब से नोटों की एक गड्डी निकाल कर मेरी ओर बढ़ाते हुए मि. हेमिंग्वे बोले – 'यह लो, और आधा दर्जन बोतलों के बदले जो कुछ भी तुम चाहो वह मैं देने को तैयार हूं, बस तुम मेरी बेचैनी दूर करो।'

मैं कुछ सोचते हुए बोला – 'महोदय, मैं जो कुछ भी चाहूंगा वह आप देंगे, न।'

'हां-हां, बोलो, तुम दाम तो लगाओ।'

मैंने उनकी बात पर गंभीरता से विचार किया और कहा – 'अच्छी बात है, महोदय 'लेखक कैसे बना जा सकता है?' इस विषय पर के छः पाठों के बदले में मैं आपके साथ छः बोतलों का सौदा कर सकता हूं।'

'सौदा बहुत महंगा है।' उन्होंने कहा – 'और बात भी बड़ी मुश्किल और वेदनापूर्ण है। मुझे अपना यह लेखन कार्य सीखने में अनेक वर्ष तीव्र यातना में बिताने पड़े थे। बड़े पापड़ बेलने पड़े थे।'

मैंने बड़ी विनम्रता से कहा – 'और मुझे भी नीलामी में बोलियां लगाते वर्षों बिताने पड़े हैं, श्रीमान्, तब कहीं जाकर अपनी अभीप्सित वस्तु इस बार पा सका हूं।'

मि. हेमिंग्वे की हंसी फूट पड़ी, 'तो यह तुम्हारी सौदेबाज़ी है? अच्छा, तय रही।' उन्होंने स्वीकारा।

मैंने बड़ी प्रसन्नता से व्हिस्की की छः बोतलें उन्हें थमा दीं, जिन्हें वह अपने साथ लेते गये। और अगले दिन से ही उन्होंने मुझे पाठ पढ़ाना प्रारंभ कर दिया। वह परमश्रेष्ठ अध्यापक तो थे ही, उन्हें विनोद करने में भी विलक्षणता प्राप्त थी। उनके मज़ाकों पर बहुधा मैं भी व्हिस्की के बारे में मज़ाक कर बैठता था। एक बार मैंने कह दिया – 'श्रीमान, आप जानते हैं उस नीलामी में बोली

लगा देने के फलस्वरूप मुझे निश्चित ही बड़ा लाभ मिला है। एक तो उस चीनी विक्रेता को मैंने मूर्ख बना दिया और उस समय उस नीलामी में बोली लगाने में भयभीत लोगों का उपहास उड़ाया। अब व्हिस्की की छः बोतलों के एवज में दुनिया के एक महान लेखक के द्वारा अर्जित साहित्यिक गूढ़ रहस्यों एवं गुरों की जानकारी प्राप्त कर रहा हूं।'

उपेक्षापूर्ण ढंग से पलकें मटकाते हुए उन्होंने कहा था – 'तुम बहुत धूर्त व्यापारी हो। फिर भी मैं जानना चाहता हूं कि अपने निजी एकान्तिक क्षणों में कितनी बोतलें लुढ़का दी हैं?'

उनमें से अभी तक एक भी नहीं खोली गयी है, श्रीमान्। उन बोतलों में भरी प्रत्येक बूंद मैंने उस विशाल भोज के निमित्त ही बचा कर रख छोड़ी है।'

'बेटे, मैं तुम्हें अपनी व्यक्तिगत सलाह देना चाहता हूं, अगर तुम मानो तो। वह यह है कि आकर्षक एवं सुन्दर प्रेयसी को अपना लेने और व्हिस्की की बोतल को खोलने में कभी विलम्ब नहीं करना चाहिए। जितनी जल्दी हो सके दोनों का अन्वेषण कर लेना चाहिए।'

और इस प्रकार के विनोदमय वातावरण में, पांच दिनों में पांच पाठ पूरे हो गये थे। फिर अकस्मात ही, आशा के विपरीत, समय के पूर्व ही मि. हेमिंग्वे चुंकिंग से जा रहे थे। पता पाते ही अपने छठवें पाठ की जिज्ञासा लिये मैं हवाई अड्डा पहुंच गया था। मुझे देखते ही वह बोले – 'मैं नहीं भूला हूं, बेटे, शेष छठवां पाठ में अभी-अभी तुम्हें पढ़ा रहा हूं।'

भारवाहक उनका सामान वायुयान रखने लगे थे। हवाई अड्डा में वायुयानों इंजिनों की गड़गड़ाहट भरी आवाजें गूंज थीं। उन्होंने मेरे कान के पास अपना सटाते हुए कहा था – 'बिल, इसके पहले तुम लोगों के बारे में लिख सको तुम्हें सभ्य-शिष्ट बनना होगा। सभ्य-शिष्ट के लिए तुममें दो बातों का होना अनि है – करुणा और चतुराई। इनके होने पर तुम मानवीयता की समझ विकसित सकोगे और तभी तुम मानवीयता व्यवहार कर सकोगे। हां, एक बात और कि कभी किसी के दुर्भाग्य पर हंसना नहीं यदि तुम पर दुर्भाग्य पहाड़ टूट पड़े तो टकराना नहीं बल्कि उससे समझौता कर के साथ लुढ़कते रहना और मौका पाते अचानक उछल कर उलटे पैरों भाग जाना।

मैं उनकी बातों को पूरी तरह समझ नहीं रहा था। अतः मैंने बड़ी ही विनम्रता पूर्वक टोकते हुए पूछा था – 'किन्तु श्रीमान्, लेखक के लिए ये बातें किस लिए जरूरी हैं?'

'जीवन में तुम कुछ भी करना चाहो ये तो अपरिहार्य हैं।' धीरे से कहते हुए अपने यान की ओर बढ़ते गये। जाते-जाते वह मुड़े और जोर से बोले – 'मित्र, अप वह विशाल भोज देने के पूर्व जरा उन बोतलों के द्रव को चख तो लेना – अलविदा!' हाथ हिलाते हुए वह यान में चढ़ते चले गये थे। उनके वायुयान के इंजिनों की गड़गड़ाहट

# सर्वथा अनर्पित है गन्ध

आश्वासनों को लेके क्या करूं,
कब तक मन मारे यूं रहूं,
बोझ बनी जिन्दगी जियूं ।

सांसों का टूटता-सा क्रम ।
साधों का घुट रहा है दम ।
व्यंग्य-चित्र-सी बनी स्वयं
यह ज़िन्दगी है आप में भरम ।

अब तक किया न बोध क्या किया –
इसी की बस विवेचना करूं ।
कब तक मन मारे यूं रहूं,
बोझ बनी जिन्दगी जियूं ।।

अन्तर के दर्पन के दाग ।
रह-रहकर डसते बन नाग ।
बिखरे सम्बन्धों के सूत्र
अर्थहीन लगते हैं राग ।

स्नेह ही न शेष जब रहा–
तो उम्र के दिये का क्या करूं ?
कब तक मन मारे यूं रहूं,
बोझ बनी ज़िन्दगी जियूं ।।

मुखरित हो पा रहे न छन्द ।
खलता है तन का प्रतिबन्ध ।
सार-शून्य जीवन का फूल
सर्वथा अनर्पित है गन्ध ।

निर्वाण जो न पथ ही बन सका –
तो ऐसे चतुष्पथ का क्या करूं ?
कब तक मन मारे यूं रहूं,
बोझ बनी जिन्दगी जियूं ।।

मौन बीच हृदय की पुकार,
लौट-लौट आती छू द्वार ।
आज 'पचसंगी' रहे छूट,
मन्दिर की नींव निराधार ।

जब हो ही गया यवनिका-पतन
तो पात्रता को लेके क्या करूं ?
कब तक मन मारे यूं रहूं,
बोझ बनी जिन्दगी जियूं ।।

**– डॉ. गणेशदत्त सारस्वत**
**सारस्वत सदन, सिविल लाइन्स, सीतापुर, उ.प्र.**

---

गूंजने लगी थी और थोड़ी ही देर में वायुयान आकाशमार्ग में था ।

मैं वापस होते ही वहां पहुंचा जहां बोतलें सुरक्षित थीं । मैंने तुरन्त एक बोतल खोली । फिर जल्दी-जल्दी दूसरी... तीसरी और सभी । मैं अचम्भित रह गया था । काठ-सा मार गया था मुझे । अंततः उस चीनी विक्रेता ने मुझे ठग ही लिया था । सभी बोतलों में चाय भरी हुई थी ।

निश्चित ही मि. हेमिंग्वे को भी यह बात पहले दिन ही ज्ञात हो गयी थी किंतु उन्होंने उस संदर्भ में चर्चा तक नहीं की थी । न ही उस बात को लेकर वह मुझ पर हंसे ही थे । बल्कि वह अपने हिस्से का सौदा चुपचाप संजोये रहे थे । अब मुझे ज्ञान हुआ था कि सभ्य-शिष्ट होने की बात कहने के पीछे उनका तात्पर्य क्या था ?

**[भावानुवाद : तेज सिंह]**

# संगीत ही जीवन है

□ कृष्णराव भट्ट 'सर

**संगीतः सृष्टि-सोपानः नीरवे व्यंजने स्वरे ।**
**कलासु यो तिष्ठति साक्षात् यच्छति परमं सुखम् ।।**

उपरोक्त पंद्यांश के अनुसार संगीत इस दृष्टव्य संसार और अनन्त सृष्टि का प्रथम चरण है। यह नीरव और नादमय दो प्रकार का होता है। इसकी प्रथम उत्पत्ति आदिकाल में हुई। सबसे पहले अक्षरों के रूप में और फिर शब्दों के रूप में यह अभिव्यक्त हुआ, जिसके प्रमाण गेय अगेय धर्मशास्त्र जैसे वेद, रामायण, महाभारत, श्रीमद्भागवत, पुराण, सुख-सागर, गीता आदि ग्रन्थ हैं। इनमें जीव-ईश्वर के साक्षात् दर्शन लोकव्यवहार विविध प्रकार की कलाओं और जीवन के सभी क्षेत्रों के बारे में वर्णन प्राप्त होता है। इसका साकार स्वरूप धीरे-धीरे गीत, वाद्य, नृत्य अभिनय, चित्र, शिल्प में भी प्रकट होता रहा है, जो आज तक जीवित है और आगे भी रहेगा। अर्थात् जीवन संगीतमय है, या संगीत ही जीवन है।

संगीत रत्नाकर के प्रारंभिक उद्घोष में कहा गया है कि यही संगीत सुधा है, रस है और आनन्द है। स्तोम गायन का जन्म भी इसी संगीत की देन है। विविध प्रकार वाद्य-यंत्र आज नये परिवर्तित रूप में दिखाई देते हैं और चित्र, शिल्प, नृ अभिनय आदि प्रकार की क़लाओं में वाद्ययंत्रों का आश्रय लिया जाता है। भारतीय संगीत का उन्नयन होता रहे यह अपने अखण्ड प्रयासों से सिद्ध करना चाहिये

समेकित रूप से यह कहा जाता है विषम परिस्थितियों में जन्म से मृत्यु तक साधना की उच्चतर स्थितियों में संगीत साधन ही नहीं वरन साध्य भी बन जाता है इसीलिये दैहिक, दैविक और भौति आपदाओं, समस्याओं का निदान संगीत द्वा होने लगा है।

आज हम सब धर्मोन्माद, युद्ध की विभी- षिका, जाति, वर्ण, भाषा-विवाद, असंतुलि व्यवहार-व्यापार और काम-क्रोधाग्नि विकारों से दुखी हैं और शारीरिक व मानसि रोगों से त्रस्त हैं। तनाव की अधिकता होना संगीतरहित जीवन का द्योतक है। इसीलिये हमें सुख शांति आनन्द केवल क्षणिक रूप में ही मिलता है। यदि भारतीय संगीत की हम शिक्षा ग्रहण करें, उसके द्वारा अपने जीवन को नियमित और संतुलित

---

बनायें,
त्रितापों
संगी
निवारण
स्फूर्तिव
होने ल
पलुस्क
संगीतज्ञ
भीषण
को कई
तथ्य क
ऐसा स
प्रवाह व
कष्ट वि
बढ़ती
है। सं
है। औ
पर वि

अ
यहां

इ

बनायें, दिनचर्या को रसमय बनायें तो हम त्रितापों से त्राण पा सकते हैं।

संगीत के सुनियोजित प्रयोग आजकल रोग निवारण ही नहीं वरन् भावनात्मक परिष्कार, स्फूर्तिवर्धन और प्रतिभा-उन्नयन के लिए होने लगे है। चिंग्फू, तानसेन, डी.वी. पलुस्कर, त्यागराज आदि, पूर्व और वर्तमान संगीतज्ञ तथा पश्चिम के संगीतज्ञ आज की भीषण त्रासदी का कारण संगीत की उपेक्षा को कई बार व्यक्त कर चुके हैं। इस सत्य तथ्य को हमें याद रखना होगा कि संगीत ही ऐसा साधन है जिसकी ध्वनि तरंगों से स्नायु प्रवाह वांछित ढंग से होता है। इससे शरीर के कष्ट विस्मृत हो जाते हैं। मन की एकाग्रता बढ़ती है। विकृत चिन्ताओं का ह्रास हो जाता है। संगीत से मस्तिष्क का संतुलन बना रहता है। और तो और काम-क्रोध आदि विकारों पर विजय प्राप्त होती है। प्रसिद्ध लेखक, चित्रकार, शिल्पकार, नृत्यांगनाएं, खिलाड़ी, धर्म-प्रचारक आदि सभी संगीत का आश्रय क्यों लेते हैं यह रहस्य नहीं है?

संगीत मधुरता का प्रतीक है। और इसी मधुरता के द्वारा न केवल मानव, हिरण, धेनु या अन्य पशु-पक्षी वरन् पेड़-पौधों की जैविक क्रियाओं में भी संतुलन होने लगता है।

संगीत केवल गायन, वादन नृत्य,अभिनय ही नहीं वरन् भोजन भी है। इसी को सुनते-सुनते, देखते-देखते या करते-करते कलाकर मंत्रमुग्ध हो जाते हैं। नींद की पूर्ति के लिए भी संगीत एक औषधि है।

आइये, हम संगीत को सीखें। इसका प्रचार करें और इससे अपनी आध्यात्मिक उन्नति करने में उद्यत हों। अस्तु।

— श्री हनुमान मंदिर के सामने
ब्राम्हणपुरी, खंडवा - ४५० ००१.

## कवि का सम्मान

अकबर के दरबार में एक हरिनाथ कवि रहते थे। वहां से वे रीवा के महाराजा रामसिंह के यहां आ गये। उन्होंने अपनी निर्धनता को लक्ष्य करके महाराजा को कविता सुनाई :

**आज लौं मोसों औ तोसों विपत्ति,**
**बनी रही प्रीति की रीति सहेली।**
**तो हित झार पहार मझाय कै,**
**आय के देख्यों है भूमि बघेली।।**
**श्री हरिनाथ सौं मानि करे जनि,**
**मेरी कही यह मानि ले हेली।**
**भेंटत हौं राजा राम नरेशहिं,**
**भेंटि लेरी फिर भेंट दुहेली।।**

इस पर महाराजा ने उन्हें एक लक्ष-मुद्रा भेंट की।

**—केशवानंद ममगाईं**

# स्वरोदय विज्ञान

□ उमेश पाण्डे

यह बात सर्वविदित है कि प्राणिमात्र का जीवन श्वास पर ही निर्भर है। अतः यही जीवन है, यही प्राण है और यही दम है। श्वास, प्राणवायु के शरीर में प्रवेश और प्राणघातक वायु के निर्गमन की एक क्रमिक क्रिया है जो प्राणी के जन्म लेने के साथ ही प्रारंभ हो जाती है और उसकी मृत्यु होने तक जारी रहती है। अतः श्वास ही जीवन है, यही प्राण है और दम भी यही है। नासारंध्रों में श्वास का यह आवागमन 'स्वर' कहलाता है तथा नासिका के दोनों स्वरों के यथार्थ ज्ञान को 'स्वरोदय' कहते हैं।

स्वरोदय ज्ञान से न केवल शरीर को ही स्वस्थ रखा जा सकता है, बल्कि इसकी सहायता से मन और आत्मा की उन्नति भी की जा सकती है। क्योंकि हमारे श्वास से ग्रहण की जाने वाली वायु न केवल प्राणरक्षक होती है, बल्कि वह प्राणस्वरूप भी होती है। प्राणरक्षक वायु प्राण को बढ़ाने वाली होती है किंतु जब इसी वायु का एक विशेष नियमन किया जाता है तब यह प्राणरक्षक के साथ-साथ प्राणस्वरूप भी हो जाती है। प्राणरक्षक वायु से आयुवर्द्धन होता है, जबकि प्राणस्वरूप वायु से मन की एकाग्रता बढ़ती है और आत्मा की उन्नति। हमारे पूर्वजों ने कहा है कि स्वरोदय ज्ञान के द्वारा व्यक्ति इच्छा मृत्यु को भी प्राप्त कर सकता है।

अस्तु, स्वरोदय ज्ञान की गहराई में प्रवेश न करते हुए प्रस्तुत लेख में स्वरोदय से संबंधित कुछ अत्यंत ही साधारण तथ्यों का वर्णन किया जा रहा है। जिनके नियमन से हम अपने शरीर, मन और आत्मा की निःसंदेह उन्नति कर सकते हैं। स्वरोदय ज्ञान का मूलाधार श्वास है। किसी भी मनुष्य का स्वाभाविक जीवन १०० से १२५ वर्ष माना गया है जो कि श्वासों की गणना पर आधारित है न कि सप्ताह, महीने या वर्षों पर। एक स्वाभाविक जीवन जीने वाले मनुष्य के लिए कुल श्वासों की गणना ९२ करोड़ है। रात और दिन मिलाकर प्रतिदिन मनुष्य २१,६०० से २३,००० बार श्वास लेता है। अब आप स्वयं विचार कर सकते हैं कि जीवन की अवधि आप इन श्वासों को जल्दी या देर से खत्म करके घटा या बढ़ा सकते हैं अथवा नहीं? योगी प्राणायाम के द्वारा इन श्वासों की गतियों पर पूर्ण नियंत्रण कर लेते हैं।

श्वासों के व्यय को किस प्रकार नियंत्रित किया जावे? इसके लिए मात्र हमें उन क्रियाओं पर गौर करना होगा, जिनके कारण

या जिनसे श्वासों का व्यय अधिक होता है। ये क्रियाएं हैं--दौड़ना, अधिक क्लेश अथवा शोक करना, अधिक सोना, अधिक और जोर से बोलना, अधिक हर्षित होना, मैथुन करना और इनसे भी अधिक विपरीत स्वरों में भोजन तथा ऐसे कार्य करना, जिन्हें उस 'स्वर विशेष' में नहीं करना चाहिये। आगे यह स्पष्ट हो जावेगा। इसी प्रकार प्राणायाम, योग तथा परमात्म चिंतन श्वासों का व्यय कम करने वाले कार्य हैं तथा मित आहार-विहार, कम सोना, मुस्कुराना, कम बोलना, ईर्ष्या न करना और संतुष्ट रहना इत्यादि श्वासों की समानता बनाये रखने वाले कार्य हैं।

श्वास-प्रश्वास के आवागमन का अनुभव हमें नासारंध्रों के द्वारा आसानी से होता है। सामान्य भाषा में इसे ही 'स्वर' या स्वर का चलना हम कह सकते हैं। स्वर तीन हैं-दाहिना बायां और मध्य स्वर। दाहिने स्वर को सूर्य स्वर भी कहते हैं। इसी प्रकार बायां स्वर चंद्र स्वर तथा मध्य स्वर गुप्त स्वर भी कहलाता है। दाहिने, बायें तथा मध्य स्वरों को क्रमशः गंगा-यमुना-व सरस्वती स्वर भी कहते हैं। योग शास्त्रों में दाहिने स्वर को इड़ा, बायें स्वर को पिंगला और मध्य स्वर को सुषुम्ना भी कहा गया है। ये स्वर कुछ-कुछ समय के अंतर से बदलते रहते हैं अर्थात् कभी हमारा दाहिना स्वर चलता रहता है (इसे नाक के दाहिने छिद्र के समक्ष हाथ रखकर पहचाना जा सकता है) तो कभी बायां या फिर मध्य स्वर ही क्रिया में रहता है। मध्य स्वर में दोनों ही रंध्रों से श्वास आता-जाता है।

प्राचीन ग्रंथों में वर्णित है कि सूर्य स्वर के चलने में हमारे शरीर में अधिक ऊर्जा उत्पन्न होती है - चन्द्र स्वर में तुलनात्मक रूप से, सूर्य स्वर से कम ऊर्जा निकलती है जबकि मध्य स्वर में ऊर्जा का स्तर सम रहता है। हाँ, इस स्वर के चलने पर शरीर में गुप्त ऊर्जा की वृद्धि अवश्य होती है। इसी आधार पर इन्हीं ग्रंथों में स्पष्ट वर्णित है कि लिखना, पढ़ना, योग करना, चिकित्सा करना, गृह निर्माण संबंधी कार्य देखना, बड़े व्यक्ति से भेंट करना, उद्यान कर्म अथवा कृषि कर्म करना तथा ईश्वरोपासनादि कार्य हमें चंद्र स्वर में ही आरंभ करना चाहिये। इसके विपरीत युद्ध, शास्त्रार्थ, भोजन, मैथुन, स्नान, मल-त्याग मंत्रसिद्धि, नवीन विद्याध्ययन तथा शत्रुओं से वार्ता-ये सब कार्य सूर्य स्वर में करना चाहिये। शेष कार्य मध्य स्वर में प्रारंभ करें।

अब प्रश्न ये उठता है कि यदि कोई कार्य हमें जिस स्वर विशेष में करना हो और वह स्वर न चल रहा हो तब क्या किया जाय? इसका उत्तर ये है कि हमें संबंधित स्वर को बदल देना चाहिये जो कि एक अत्यंत ही साधारण विधि के द्वारा किया जा सकता है। इस विधि में हमें जो स्वर चल रहा हो उसी करवट पर २-५ मिनट लेट जाना चाहिये। ऐसा करने से विपरीत स्वर चलने लगेगा।

**— ३१९, म.गां. मार्ग, मल्हारगंज,**
**इन्दौर, म.प्र.**

# दृश्य हुए बंद

पलकों में
खुशियों के
दृश्य हुए बंद ।

पेड़ों से
हंस-हंस कर
सोनीली धूप ।

झांक रही
पोखर में
अपना ही रूप ।

अधरों पर
मुखर उठे
अनब्याहे छंद ।

खुल आये
बंधे हुए
पुरवा के हाथ ।

लहराये
खिलते
कचनारों के माथ ।

फूलों के
अधरों से
बिखरा मकरंद ।

पलकों में
खुशियों के
दृश्य हुए बंद ।

# लेटी है सांझ

अलसाये नयनों में
काजरवा आज,
पीपल की टहनी पर
लेटी है सांझ ।

दिशियों के पलने में
गंध रही झूल,
धरती के छप्पर पर
खिले श्वेत फूल ।

पेड़ों पर उग आये
मेहनत के गान,
फसलों के अधरों पर
बिखरी मुस्कान ।

एक सपन बैठ गया
पलकों के द्वार,
मुखर उठे चिर-संचित
अंतर के तार ।

**□ मदन देवड़ा**

— १३, महावीर पथ, तराना,
पिन - ४५६ ६६५,
जिला उज्जैन, म.प्र.

□

---

वन्य जी

अंति
अ
कान, सघ
दूर-दृष्टि
अधिक न
यदि इस
लगाने क
हो सकत
उभरने ल
नहीं। ब
कुत्ते का
हुए साथि
के वक्त
का संके
आवाज
और सा
पसन्द है
भेड़ि
लम्बाई
पूंछ की
है। पूंछ
होती है
किलोग्रा
१९९

# शिकार का शौकीन भेड़िया

**□ विनोद तिवारी**

अंतिम सिरे पर नुकीले और हल्की-सी आहट को भी पकड़ने मे सक्षम खड़े कान, सघन बालों से युक्त पूंछ, छोटी किन्तु दूर-दृष्टि वाली आंखें, लम्बी थूथन, कद कोई अधिक नहीं। वजन भी कोई खास नहीं। अब यदि इसके आधार पर इस बात का अनुमान लगाने को कहा जाये कि यह कौन-सा प्राणी हो सकता है? तो अनायास कुत्ते की आकृति उभरने लगती है। किन्तु वास्तव में यह कुत्ता नहीं। बल्कि कुत्ता परिवार का सदस्य और कुत्ते का हमशकल भेड़िया है। अपने बिखरे हुए साथियों का हाल-चाल जानने या शिकार के वक्त सबको इकट्ठा करने अथवा संकट का संकेत देने का काम विशेष प्रकार की आवाज से करने वाला यह प्राणी मांसाहारी है और सामूहिक जीवन जीना इसे अधिक पसन्द है।

भेड़िये की ऊंचाई ६५ से ७५ सें.मी. और लम्बाई ९० से १०५ सें.मी. तक होती है। पूंछ की लम्बाई इस मापन में शामिल नहीं है। पूंछ की लम्बाई ३५ से ४० सें.मी. तक होती है। इसका वजन औसतन १८ से २७ किलोग्राम के आसपास होता है। हिमालयी क्षेत्र में पाया जाने वाला भेड़िया औसत से बड़ा और तंदुरुस्त होता है।

भेड़िया वैसे कुत्ता परिवार का सदस्य है किन्तु इसका आकार, खोपड़ी की बनावट और दांत इसे अपने परिवार के अन्य सदस्यों से अलग करते हैं। भारत के मैदानी इलाकों में पाये जाने वाले भेड़ियों की बालू रंग की खाल पर काले धब्बे पाये जाते हैं। तिब्बत, लद्दाख और हिमालय के उत्तरी ढलानों पर पाये जाने वाले भेड़िये की खाल का रंग काला अथवा हल्का कालापन लिये होता है। ठंड के मौसम में इनकी खाल काला, सफेद या काला और पांडुर रंग लिए होती है। बाल घने होते हैं और चमकीले पांडुर रंग के होते हैं।

भेड़िये कोई सीमित आवास क्षेत्र के निवासी नहीं हैं। ये यूरोप, उत्तरी अमेरिका, उत्तरी मध्य और दक्षिणी-पश्चिमी एशिया, लद्दाख और कश्मीर के कुछ हिस्सों से लेकर भारत के रेगिस्तानी और सूखे क्षेत्रों में पाये जाते हैं। कुल मिलाकर ये भारतीय प्रायद्वीप में लगभग सभी क्षेत्रों में पाये जाते है। भेड़िये वैसे तो जंगल के निवासी हैं, किन्तु भारत में निर्जन और खुले क्षेत्रों में भी ये अपना आवास

बनाये हुए हैं।

कश्मीर, तिब्बत, लद्दाख और तिब्बत के उच्च निर्जन क्षेत्रों में ये घुमन्तू प्राणी की तरह रहते हैं और ठंड के मौसम में घाटी के निम्न क्षेत्रों में आ जाते हैं। ये स्थानांतरण एक खेल के समान होता है और गरमी की शुरुआत होते ही इनके झुण्ड वापस बर्फीले क्षेत्रों में पहुंच जाते हैं। रेगिस्तानी भेड़िये गरमी से बचाव के लिए बालू रेत में गुफानुमा खुदाई करते हैं और अपने रहने का स्थान तैयार करत हैं। उन अन्य स्थानों पर जहां रहने लायक प्राकृतिक शामियाने होते हैं वहां ये मैदानों में या झाड़ियों में अथवा घने जंगलों में लेटे हुए या विचरण करते हुए देखे जा सकते हैं। ये अपने क्षेत्र का सीमांकन स्वमूत्र का छिटकाव करके करते हैं।

भेड़िये अक्सर रात में शिकार करते हैं किन्तु कभी-कभी ये दिन में भी शिकार कर लेते है। ये किस प्राणी का शिकार करेंगे और शिकार करने का तरीका क्या होगा, यह जिस क्षेत्र में ये रहते हैं उसकी स्थिति के अनुसार तय होता है। जब ये मानव बस्ती के करीब होते हैं तो अपना शिकार भी वहीं तलाश लेते हैं। और जब दूरस्थ जंगल क्षेत्र में होते हैं तो अपना शिकार अक्सर कृष्णसार या चिकारा को बनाते हैं। यहां तक कि ये बड़ी लोमड़ियों का भी शिकार कर लेते हैं। वास्तव में ये ऐसे प्राणी हैं जिनकी पकड़ में चाहे फिर वह पशु हो या पक्षी जो कुछ भी आ जाये उसे अपना शिकार बना लेते हैं। इसके विपरीत हिमालय क्षेत्र में आवास करने वाले भेड़ियों की खुराक में गरमी और ठंड के मौसम के हिसाब से बदलाव आता रहता है। गरमी में इनका मुख्य भोजन कृतंक और छोटे प्राणी होते हैं और ठंड में जंगली भेड़ और चिकारा। यह माना जाता है कि भेड़िये अपने वजन का एक बटा पांच भाग वजन के बराबर भोजन एक बार में खा सकते हैं और फिर एक निश्चित समय तक बगैर भोजन के भी रह सकते है।

इनका शिकार करने का तरीका भी रोचक होता है। ये भी जंगली कुत्तों के समान झुंड में शिकार करते हैं। और ऐसे में ये कभी-कभी अपने से बड़े प्राणी का भी शिकार कर लेते हैं। भेड़ियों की दौड़ने की क्षमता बहुत अधिक होती है और वे शिकार के पीछे एक दिन में ६० कि.मी. तक दौड़ सकते हैं। झुंड का नेता अपनी गतिविधियों के कारण आसानी से पहचानने में आ जाता है। झुंड में लड़ाई आमतौर पर होती रहती है और इस दौरान वे एक दूसरे को गम्भीर रूप से घायल भी कर देते हैं।

सम्प्रेषण की क्रिया झुंड जीवन के मूल घटकों में से एक है। जिसके कारण ये संगठित होते हैं और श्रम का बंटवारा करते हैं। भेड़िये रुदन या गुर्राहट के द्वारा अपनी स्थिति को स्पष्ट करते हैं। लम्बी, खींची गई आवाज हो सकता है मनुष्य को भयोत्पादक लगे, लेकिन ऐसी आवाज का अर्थ हुआ कि अन्य झुंडों को और अपने झुंड के अन्य सदस्यों को कोई महत्वपूर्ण सूचना दी जा रही है। इसके अलावा गुर्राहट भरी ये आवाजें अपने बिछड़े

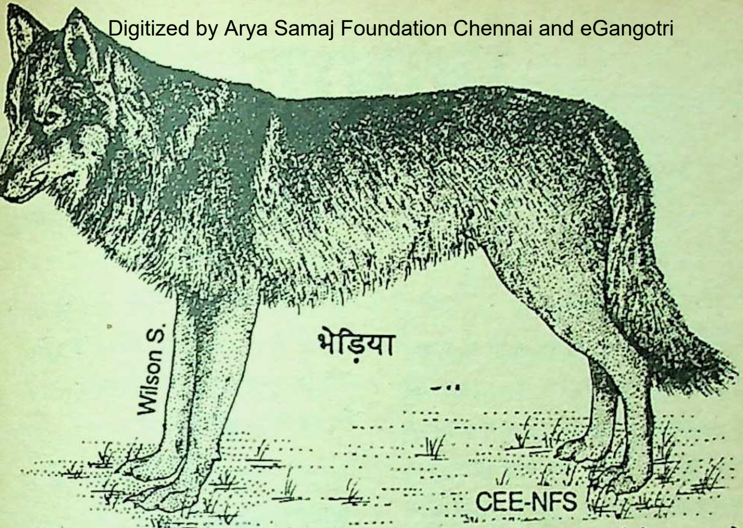

भेड़िया

सदस्यों को हालचाल जताने और जानने के लिए भी की जाती है।

इनका प्रजनन काल वर्षाकाल के बाद होता है और अधिकतर पिल्ले दिसम्बर तक पैदा हो जाते हैं। वैसे इनका प्रजनन काल वर्ष भर चलता है। तीन से नौ तक पिल्लों का जन्म होता है, जिन्हे बचपन में कुछ दिनों तक दिखाई नहीं देता है। झुंड के सभी वयस्क सदस्य इनके पालन-पोषण और संरक्षण में सहयोग प्रदान करते हैं। पिल्ले कुत्ते के पिल्लों के समान दिखाई देते हैं। इनका जीवन काल १२ से १५ वर्ष तक होता है।

भेड़िये को पालतू बनाने के लिए बहुत प्रयास किये गये, किन्तु असफलता ही हाथ लगी। क्योंकि इनके पिल्ले प्रारम्भ में पालतू कुत्तों के समान अवश्य होते हैं, किन्तु जैसे-जैसे उनकी उम्र बढ़ती जाती है वे अपने भोजन का बचाव करते हैं और खूंख्वार ढंग से देखना शुरू कर देते है। साथ ही क्रोधी स्वभाव और रेबीज जर्म्स के वाहक होने के कारण भी ये मानव के लिए हानिकारक हैं। ऐसे में इनका जंगल में मुक्त घूमना ही अच्छा है।

चराई करने वाले पशुओं को बड़ी संख्या में मारकर अधिकतम चराई को नियंत्रित कर भेड़िये पर्यावरण का सन्तुलन बनाये रखने में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह करते हैं। भारत में प्राकृतिक आवासों के विनाश और जंगलों के नष्ट किये जाने से भेड़िये मानवीय आवास के आसपास आकर पालतू पशुओं, भेड़-बकरियों आदि को अपना शिक़ार बना लेते हैं। मनुष्य के द्वारा लगातार निर्दयता-पूर्वक हत्या किये जाने ने इस महत्वपूर्ण प्रजाति के जीवन को संकटपूर्ण बना दिया है। उन स्थानों पर जहां ये सभी आसानी से दिखाई देते थे, अब नजर नहीं आते हैं।

**(सीईई-एनएफएस)**

# विविधा

□ संकलन : दिगंबर स्वादिया

## बेबीलॉन का बाग

इराक में ई. पूर्व ६ ठी शताब्दी में सम्राट नेबूचदनैझर ने बेबीलॉन में ३६५ फुट की ऊंचाई पर सात सीढ़ीवाला एक बाग बनवाया था, जिसे हैंगिग गार्डन का नाम दिया गया था। इराक के वर्तमान राष्ट्रपति सादाम हुसैन वैसा ही एक और उद्यान बनवाना चाहते हैं, पर उनके सामने केवल एक ही समस्या है कि इतनी ऊंचाई पर उस जमाने में बाग को पानी कैसे मिलता रहा होगा? उनका कहना है कि उसी जमाने की पद्धति के अनुसार पानी पहुंचाने का उपाय सुझानेवाले को पंद्रह लाख अमरीकी डालर का पुरस्कार दिया जायेगा। बशर्ते कि प्रतियोगिता में भाग लेनेवाला इराकी नागरिक हो।

* * *

## बिचारा पेन्स

अमरीकी मुद्रा एक सेन्ट (पेनी अर्थात लगभग दो पैसे) आज कल अपनी जिन्दगी और मौत के बीच संग्राम का खेल खेल रहा है। व्यापारी वर्ग ने उसे लेने से इन्कार कर दिया है। फ्लोरिडा के कूड़े-कचरे की सफाई करने वाले एक कारखाने के मालिक के अनुसार उन्हें प्रति सप्ताह करीब एक हजार डालर के मूल्य का सेन्ट कूड़े से प्राप्त होता रहता है। अमरीकी वित्त मंत्रालय ने भी इसकी पुष्टि की है कि प्रतिवर्ष लगभग ६०० करोड़ पेनी खो जाते हैं।

* * *

## छाता का जन्म

वैसे तो छाता का उपयोग हमारे देश में पुराना है, लेकिन पाश्चात्य देशों में उसे लोकप्रिय बनाने का श्रेय जाता है, जोनाथन हेन्वे नाम के एक व्यापारी को। १७५० में वह किसी भी मौसम में अपना रंग-बिरंगी छाता घुमाते हुए टहलने जाता था तो लोग उसे बड़े चाव से देखते थे। फिर तो पचीस-तीस साल बाद अन्य लोग भी छाता का उपयोग करने लगे।

* * *

## क्रॉसवर्ड के जनक

आजकल सभी पत्र-पत्रिकाओं में शब्द-पहेलियां सुलझाने के लिए कुछ रिक्त स्थान भरने के कोष्ठक प्रकाशित किये जाते हैं। उसका उद्भव कैसे हुआ? दिनांक २१ दिसंबर १९१३ के दिन न्यूयार्क से प्रकाशित एक समाचार-पत्र के संपादक

आर्थर विन्ने अपने संस्करण में थोड़ा-सा रिक्त स्थान भरने की कोशिश कर रहे थे। उन्होंने कुछ शब्दों में अदल-बदल किया। फिर तो ऑर्थर ने सोचा कि क्यों न अपने पाठकों को शब्दों के कुछ खाली स्थान भरने को कहा जाय? बस इसी प्रकार शब्द-पहेली का जन्म हुआ, जो आज तक ज्ञान के साथ मनोरंजन भी देती है।

* * *

## सूक्ष्मतम

जलचर जीव-सृष्टि में सबसे सूक्ष्म जीवाणु का कद ०.०००८ इंच का माना जाता है, जो कि नैनोप्लैन्कटन और पाइकोप्लैन्कटन वंश का है। अब वैज्ञानिकों ने ऐसा जलचर वाइरस खोज निकाला है, जिसका कद ०.००००८ इंच से बड़ा नहीं है। प्रदूषण रहित एक घन इंच पानी में ऐसे १६ करोड़ से १६० करोड़-अर्थात् वैक्टेरिया से दस गुना अधिक-वाइरस पाये जाते हैं, ऐसा उनका दावा है।

* * *

## गाड़ी के चोर सावधान

बंबई निवासी श्री वाघजीभाई भानुशाली ने मोटर कारों की चोरी रोकनेवाली एक मशीन का आविष्कार किया है। और आप जानते हैं, उसको कौन-सा नाम दिया गया है? उस मशीन का नाम है, 'नाइट वाचमैन'। दिन हो या रात, खुली सड़क हो या गैरज, अगर कोई चोर गाड़ी का दरवाजा खोलने की कोशिश करता है तो तत्काल भीतर बैठायी गयी सायरन बजने लगती है। उसकी चीख आधे किलोमीटर तक सुनायी पड़ती है।

अब कार-चोरों को अधिक सावधानी बरतनी होगी, है न?

* * *

## भगवान का घर

इतना छोटा-सा गिरिजाघर क्रॉस आयरलैंड के एक द्वीप पर बना हुआ है कि उसकी लंबाई-चौड़ाई क्रमशः साढ़े तीन और छः फुट की है।

क्रिस्टीन बेन्सन और उनके पति रॉबर्ट डेगरूट ने इसी छोटे-से गिरिजाघर में अपनी शादी रचायी।

देखिए दोनों कितने खुशनज़र आते थे? जैसे कि आनेवाले नये जीवन के सुनहरे सपने विशाल गगनमंडप में देख रहे हों?

* * *

## मकड़ी का जाला

मकड़ी को पुरुषार्थ का प्रतीक माना जाता है। अपने देश में उसकी पांच हजार किस्में होती हैं। खेतों में फसल की रक्षा करने में वह बेहद उपयोगी है। चीन में धान और कपास के खेतों में कीट नाशक दवाइयों के स्थान पर अनगिनत मकड़ियां छोड़ दी जाती हैं। इसके फलस्वरूप फसल बीस प्रतिशत अधिक होती है।

मकड़ी की लार में ऐसा रसायन होता है, जो उसके शिकार को बेहोश बना देता है। अमरीका में अब इससे मिरगी का भी इलाज

करने का अनुसंधान चल रहा है। वहां की एक कंपनी ने तो इक्कीस लाख रुपयों की लागत से मकड़ी-पालन फार्म बनवाया है।

अब वैज्ञानिक मकड़ी के जाले की तकनीक के आधार पर बुलेट-प्रूफ वस्त्र बनाये जाने की ताक में हैं।

* * *

## पागल कुत्ते ने काटा हो तो?

राष्ट्रीय संक्रामक रोग संस्थान के दो वैज्ञानिक डॉ. यू. वी. एस. राना और डॉ. यू. वी. सिंह ने अपने पांच साल के अनुसंधान के बाद 'स्कोपोलामइन हाइड्रो ब्रोमाइड' नाम से एक दवा का आविष्कार किया है, जिसकी एक ही खूराक से रोगी को मरने से बचाया जा सकता है। यह दवा बाजार में आसानी से मिल सकती है।

इसका सफल परीक्षण एक हजार चूहों के ऊपर किया गया है। कुत्तों और भैंसों के ऊपर भी उसका परीक्षण सफल रहा है।

* * *

## चुंबकीय बहनें

सोवियत संघ में दो सगी बहनों में चुंबकीय शक्ति पायी गयी है। वे दोनों चीजों को अपनी ओर खींचती हैं। उनकी हथेलियों में सिक्के उछल कर चिपक जाते हैं। उसी प्रकार कैंची, चम्मच, कांटे, कंघी और फाउंटेनपेन भी चिपक जाते हैं। दोनों बहनें लंबी-चौड़ी पुस्तक को भी बिना पकड़े हुए ऊपर उठाये रखती हैं, जिससे लगता है कि पुस्तक उनकी हथेलियों से लटकी हुई है।

* * *

## नमक और रक्तचाप

रक्तचाप से पीड़ित लोगों को चाहिये कि वे अपने दैनिक आहार में नमक केवल पांच ग्राम तक ही उपयोग में लायें। अधिक नमक रक्तचाप को बढ़ावा देता है। पौष्टिक आहार से संबंधित सोवियत संघ ने ऐसा मिश्रण तैयार किया है, जिसमें पोटेशियम और मैग्नेशियम क्लॉराइड का मिश्रण भी है। यह दिल के लिए लाभदायक माना जाता है। इन प्रकार के दो मिश्रणों में से एक तो किसी भी व्यक्ति के लिए उपयोगी है, जबकि दूसरा मिश्रण रक्तचाप के मरीज के लिए है।

अभी तो उसका परीक्षण चल रहा है। किंतु बाद में ब्येलोरशिया के कारखाने में बड़े पैमाने पर उसका उत्पादन किया जायेगा।

□

मतदाता : 'अगर आप चुनाव जीत गये तो फिर क्या करेंगे?'

उम्मीदवार : 'उफ! आपको यह चिंता है। मगर मुझे यह भय खाये जा रहा है कि अगर मैं न जीता तो क्या करूंगा!'

—डॉ. गोपाल प्रसाद 'वंशी'

## रोचक प्रसंग

# निराले तलाकों की दिलचस्प दास्तानें

**□ कैलाश जैन**

मनुष्य-जाति द्वारा विकसित संस्कारों में 'विवाह' सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण संस्कार है। विवाह का बंधन एक भावनात्मक और नाजुक बंधन होता है, किंतु आपसी समझदारी के अभाव में जब दाम्पत्य-संबंध दरकने लगते हैं, तो नौबत तलाक तक जा पहुंचती है। तलाक की पृष्ठभूमि में कई व्यक्तिगत, आर्थिक और सामाजिक कारण हो सकते हैं। किंतु आज आपको हम चंद ऐसे महारथियों से मिलवाने जा रहे हैं, जिन्होंने महज अपनी सनक की वजह से तलाक लिया।

कुछ दिनों पूर्व नीस (फ्रांस) की ९९ वर्षीया वृद्ध महिला ने अखबार में वैवाहिक विज्ञापन-कालम में विज्ञापन छपवाया-'जरूरत है, अधिक से अधिक २२ वर्षीय एक सुंदर, स्वस्थ एवं सलौने नौजवान की। मैं अब तक ६४ तलाक ले चुकी हूं।'

उड़ीसा के ओराली गांव का ६२ वर्षीय उदयनाथ दखीनाराम अब तक ८८ विवाह कर चुका है। उदयनाथ की ५९ पत्नियां उसे विवाह के कुछ ही समय बाद तलाक दे चुकी हैं। चौदह पत्नियों की मृत्यु हो गई तथा दस उसे छोड़ कर भाग गई।

प्राग के तीस वर्षीय कार्ल लुन्माक ने अपनी शादी के सिर्फ ६० मिनट बाद अपनी पत्नी से तलाक लेने की दरखास्त अदालत में दायर कर दी। अपने तलाक के प्रार्थना-पत्र में उसने तलाक लेने का कारण यह बताया कि उसकी पत्नी विवाह के वक्त चर्च में एक खूबसूरत नौजवान को टकटकी बांधे घूरे जा रही थी। अदालत ने कार्ल की अर्जी मंजूर करते हुए उसे पत्नी के बंधन से मुक्त कर दिया।

सिडनी (आस्ट्रेलिया) के चालीस वर्षीय फिन हेरिस ने अदालत के सामने इंसाफ की गुहार करते हुए कहा कि उसकी पत्नी उसके कंधे पर खड़ी होकर लकड़ी से शयन-कक्ष का पंखा घुमाती है। इससे उसे बहुत अधिक तकलीफ होती है। न्यायालय ने हेरिस की पीड़ा को समझते हुए उसका तलाक का प्रार्थना-पत्र स्वीकार कर लिया।

न्यूयार्क की एक महिला ने अपने शौहर को इसलिए तलाक दे दिया कि उसके पति ने अपने पालतू तोते को रटा रखा था कि 'भूतनी जल्दी उठ।'

जूझोनाईता. (नार्वे) की रहने वाली एक चालीस वर्षीया महिला है। उसने अपने पति को उसके गंजेपन के आधार पर तलाक दे दिया। उसने अदालत में कहा कि शादी के

समय उसका पति गंजा नहीं था। पति महोदय ने भी अदालत से दरखास्त की कि मुझे लताक दे दिया जाये, क्योंकि मैं अपनी पत्नी से तंग आ चुका हूं। वह मेरे गंजे सिर से बेहद चिढ़ती है तथा जब-तब मेरी गंजी खोपड़ी पर चपत लगाती रहती है। अदालत ने दोनों की सहमति से तलाक मंजूर कर लिया।

लास एंजिल्स की एक दीवानी अदालत में एलविन आकमेन की तलाक की अर्जी इसलिए स्वीकार कर दी गई, क्योंकि उसके लेखक पति ने अपनी पुस्तक 'आत्महत्या के सैकड़ों तरीके' की भूमिका में लिखा था कि इस पुस्तक को लिखने की प्रेरणा उसे अपनी पत्नी से मिली है।

लास एंजिल्स में ही ३१ अगस्त, १९८५ को एक बहुत ही महंगा तलाक हुआ। अमेरिका का सर्वाधिक मशहूर टी.वी. स्टार जोहिनी केरसन ने अपनी पत्नी को तलाक दिया, उसकी एवज में उसने अपनी पत्नी को २२ लाख डालर नकद, ३० मकान, २ कारें तथा स्टाक के आधे शेयर अदा किये।

अमेरिका में रेड इंडियन कबीलों में विवाह के वक्त लकड़ियों का एक छोटा-सा गट्ठर नव-विवाहित युगल को दिया जाता है। इसे वह अपने सुखद वैवाहिक जीवन के प्रतीक के रूप में हमेशा सहेज कर रखते हैं, लेकिन जब उस गट्ठर की कुछ लकड़ियों कों तोड़ दिया जाता है, तो उसे विवाह-विच्छेद का प्रतीक माना जाता है।

आस्ट्रेलिया के कूछ कबीलों में तलाक प्राप्त करने की शर्त के रूप में पति को निशानेबाजी की परीक्षा देनी होती है। यदि पत्नी पति से तलाक लेना चाहती है तो उसे एक वृक्ष के सहारे खड़ा कर दिया जाता है पति उससे चालीस कदम की दूरी पर खड़ा होकर उसकी ओर भाला फेंकता है। पत्नी को अपने बचाव में इधर-उधर हटने का अधिकार होता है। किंतु वह भाग नहीं सकती। पति को दस मौके दिये जाते हैं। यदि इस दौरान भाला पत्नी को नहीं लगता तो वह युवती अपने पति को छोड़ कर अन्यत्र विवाह करने को स्वतंत्र होती है।

बर्मा के शान कबीले में पत्नी को तलाक के संबंध में पति से कहीं अधिक अधिकार प्राप्त हैं। यहां पत्नी अपनी इच्छा से अपने शराबी पति को घर से निकाल सकती है, उसकी सम्पत्ति हड़प सकती है। इसके साथ ही वह किसी अन्य व्यक्ति से विवाह करने के लिए भी स्वतंत्र रहती है।

मध्य अफ्रीका के कबीलों में तलाक के लिए बड़ा विचित्र तरीका प्रचलित है। यदि किसी पुरुष को अपनी पत्नी से तलाक लेना होता है तो वह उसे अपने घर के दरवाजे के बाहर बिठा देता है। एक निश्चित समयावधि के बाद उनमें तलाक मान लिया जाता है।

साइबेरिया में किसी भी व्यक्ति को अपनी पत्नी से तलाक लेने के लिए एक सार्वजनिक समारोह में अपनी पत्नी के चेहरे का नकाब फाड़नां होता है। मध्य-पूर्व अफ्रीका में यह प्रचलन है कि यदि पति अपनी पत्नी की मांग पर उसे नये वस्त्र सिलवा कर न दे तो वह इस

आधार पर पति से तलाक मांग सकती है।

मलाया के दूरवर्ती जंगली इलाकों में रहने वाले कबीलों में तलाक की एक अत्यन्त अश्लील परम्परा प्रचलित है। यदि किसी व्यक्ति को अपनी पत्नी से तलाक लेना होता है तो उसे पूरे कबीले के लोगों को इकट्ठा कर के दावत देनी होती है। इस दावत के दौरान लोग खाते-पीते, नाचते-गाते हैं। इस समारोह में पति सार्वजनिक रूप से अपनी पत्नी को पूरी तरहं निर्वस्त्र कर देता है। पूरे समारोह के दौरान वह स्त्री नग्नावस्था में रहती है। इस बीच यदि कोई अन्य युवक उससे विवाह करने को इच्छुक हो तो वह उसे वस्त्र दे देता है।

और अंत मे तलाक और विवाह की एक दिलचस्प घटना। डेनमार्क के कैप्टन आगे कार्लसन का विवाह १८११ में हुआ था। तभी उसको सागर पर जाना पड़ा। चूंकि उसकी पत्नी उसके साथ नहीं जाना चाहती थी, इसलिए उसने उसे तलाक दे दिया। वह १९०३ में वापस लौटा और फिर अपनी पत्नी से विवाह कर लिया। दोनों की उम्र इतनी लम्बी थी कि १९११ में उन्होंने अपने विवाह की सौवीं वर्षगांठ मनायी।

**— ३४/बन्दा रोड, भवानीमण्डी,**
**जिला-झालावाड़, राजस्थान**

□

## परख बुद्धिमत्ता की

एक किसान के चार बेटे थे। उनकी बुद्धिमत्ता जांचने के लिए सभी बेटों को बुलाकर किसान ने एक-एक मुट्ठी धान दिया और कहा इनका जो मर्जी हो सो करना।

एक ने छोटी वस्तु समझा और चिड़ियों को फेंक दिया। दूसरा उसे खाने के उपयोग में लाया। तीसरे ने सम्हाल कर डिब्बे में रख दिया ताकि कभी पिता मांगें तो उन्हें दिखा सकूं। चौथे ने उसे खेत में बो दिया और टोकरा भर धान पिता के सामने लाकर रख दिया।

पिता ने बोने वाले को अधिक समझदार पाया, और बड़ी जिम्मेदारियों के काम उसी के सुपुर्द किये।

**— उदय सोले**

* * *

## नरेश की उदारता

तुलसीदास रीवा के महाराजा रामसिंह के समकालीन थे। गोस्वामीजी का जन्म-स्थान राजापुर रीवां के अंतर्गत माना जाता था। अभी भी रीवा के लोग गोस्वामीजी को अपना ही, बताते हैं। तुलसीदास ने महाराजा को एक दिन ये काव्य-पक्तियां लिख भेजीं:

**"चित्रकूट में रमि रहे, रहिमन अवध नरेस।**
**जा पर विपदा परति है, सो आवत यहि देस।।"**

इसे पढ़कर महाराजा ने प्रभावित होकर एक लक्ष मुद्रा रहीम के पास भिजवा दीं, पर स्वाभिमानी कवि ने स्वयं एक पैसा भी न लेकर समस्त राशि ब्राह्मणों को दे डाली।

**— केशवानंद ममगाई**

# जीवों में भविष्य ज्ञान

□ अनिल पोरवाल

भविष्य का सही ज्ञान प्राप्त करने के लिए ज्योतिषियों को एवं प्राकृतिक आपदाओं यथा चक्रवात, भूकंप, बाढ़, वर्षा, ज्वालामुखी और ज्वारभाटा की भविष्य वाणी करने के लिए वैज्ञानिकों को नमालूम कितनी गणनायें करनी पड़ती हैं। परंतु जीव-जंतुओं में प्रकृति प्रदत्त कुछ विरोध सूक्ष्म ज्ञानेन्द्रियां होती हैं, जो उन्हें भविष्य में आने वाले संकटों के प्रति सचेत कराती हैं। वैज्ञानिकों के अनुसार संकटों की एक ध्वनि होती है, जो उस व्यक्ति के चारों और मंडराती है, जिस पर संकट छाया हुआ है। इस प्रकार की ध्वनि को हम सुनने में असमर्थ हैं। अपनी उन सूक्ष्म ज्ञानेन्द्रियों से वे आने वाले संकटों का आभास प्राप्त करते हैं।

कई अनुभवी व्यक्ति भी इन जीव-जन्तुओं की गतिविधियों को देखकर भावी खतरों से सचेत हो जाते हैं। गौरैया नामक छोटी-सी घरेलू चिड़िया घरों में घुसकर चावल आदि चुगती है परंतु जिस घर में किसी बीमारी की संभावना निकट भविष्य में होती है यह उस घर में जाना छोड़ देती है। यदि किसी महामारी के फैलने की आशंका होती है तो यह चिड़िया गांव छोड़कर चली जाती है, ग्रामीण लोग मानते हैं कि निश्चित ही मृत्यु की सम्भावना निकट है।

चींटियां वर्षा आने से पूर्व अपने अंडे लेकर ऊंचे स्थानों पर चली जाती हैं, ऐसे समय निश्चित ही वर्षा की संभावना निकट होती है। घरेलू चिड़ियां एवं मेंढक भी वर्षा के निकट समय एवं वर्षा से पूर्व पानी में नहाने एवं टर्र टर्र करने लगते है। भूकंप आने से पूर्व चूहे बिलों से निकलकर इधर-उधर बेहताशा दौड़ने लगते हैं। यानी इन नन्हें जीवों को आगामी खतरे का आभास हो जाता है।

तोते, बटेर एवं जंगली चिड़ियां भूकंप या भयंकर आंधी आने से पूर्व इधर-उधर उड़ती हैं और उनकी घबराहट स्पष्ट दिखती है। मौसम परिवर्तन का ज्ञान पहाड़ी हिरण को अच्छा होता है। वे तूफान आदि आने से पूर्व ही पहाड़ों पर चले जाते हैं।

यह तो सर्व विदित है कि घरेलू कुत्ते भी भविष्य के आनेवाले खतरों को अच्छी प्रकार से भांप लेते हैं। यदि कुत्ते का मालिक या उसके घर का कोई सदस्य बीमार हो और उसकी बचने की संभावना नहीं हो तो वे जोर-जोर से रोना शुरू कर देते हैं या बड़ी

बेचैनी से उसके चारों ओर चक्कर काटना शुरू कर देते हैं। यह भी देखा गया है कि कुछ समय पश्चात वह रोगी स्वर्गवासी हो जाता है। सियार के रोने से भी गांव वाले मानते हैं कि निश्चित ही कोई आपदा आने वाली है।

मधुमक्खियां जब वर्षा निकट होनेवाली होती है तो गोल चक्कर काटती हुई उड़ती हैं एवं वर्षा की समाप्ति पर अपने छत्ते पर लौट आती हैं।

समुद्री तूफान, ज्वार-भाटा और अन्य विपत्तियों पर समुद्री लोग इनसे बचने के लिए जीव-जंतुओं की आदतों पर ध्यान रखते हैं। जैसे ही उन्हें कुछ असामान्य सा लगता है वे आनेवाले खतरे के प्रति सचेत हो जाते हैं। जहाज में रहने वाली बिल्लियां, चूहे आदि समुद्री तूफान आने पर यानी आने से पूर्व जहाज छोड़ देने को बैचेन हो उठते हैं। वे समुद्र में कूद जाते हैं। इन्हें देखकर जहाज के कर्मचारी अनुमान लगा लेते हैं कि संकटकाल निकट है। यात्रियों एवं माल आदि को वे सुरक्षित स्थानों पर पहुंचाने का प्रयत्न करते हैं।

जीव-जंतुओं की इस प्रकार की आसन्न संकट को पहचानने की क्षमता वैज्ञानिकों के लिए शोध का एक महत्वपूर्ण विषय है। प्रकृति के इन अबूझ रहस्यों को जानकर हम अपनी सुरक्षा के लिए प्रयत्न कर सकते हैं।

**— ७१, स्टेशन रोड,**
**भवानीमंडी - ३२६ ५०२**

# सही आदमी

□ सुधा

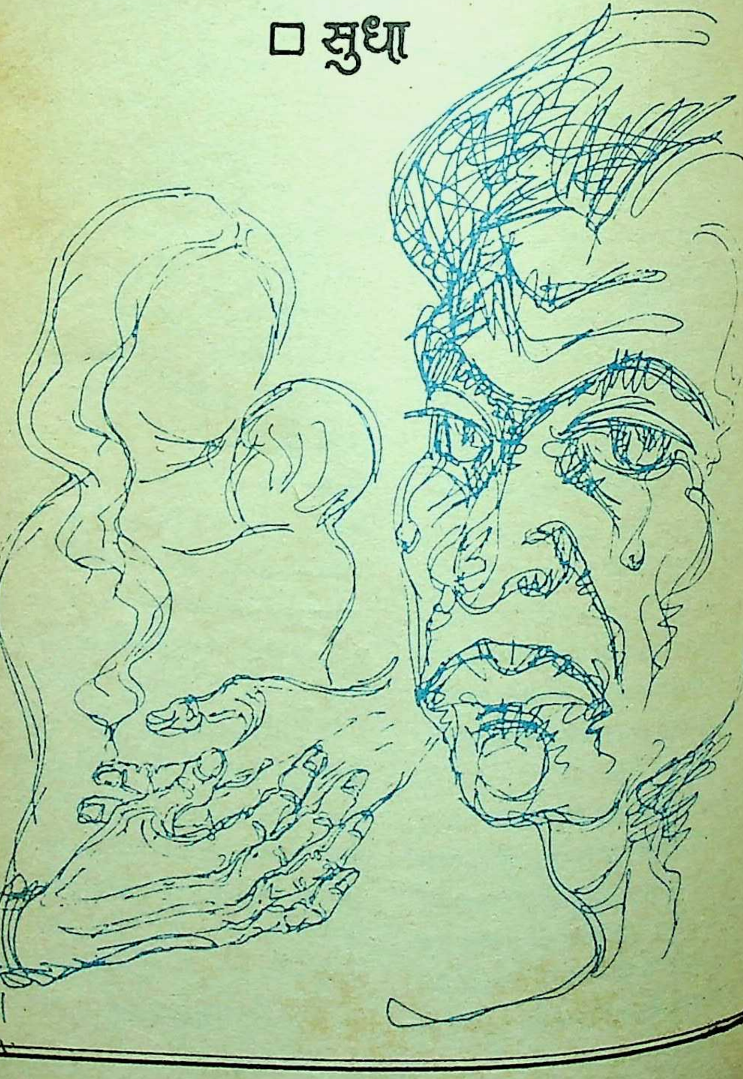

'जाग गई ! चाय लाऊं ?'

'नहीं। एक ग्लास नींबू पानी दिलवा दोगी!'

'जरूर। शक्कर डाल कर ?'

'नहीं सादा।'

'और चाय ?'

'नाश्ते के साथ।'

'तुझे बाहर भी जाना है ?'

'तीन बजे का एप्वाइन्टमेंट है।'

'ठीक है। तू तैयार होकर नाश्ता कर। मैंने मेज पर सब लगा दिया है।'

'और तू ?'

'मैं तुरत आ गई कालेज से... मेरा बस एक ही क्लास है। यह गई वह आई।'

'ठीक है - ठीक है। किधर बन्द-बुन्द करना होगा बता देना।'

'उसके लिए परेशान मत हो। ...यह है न देख लेगा। दानू। कहीं जाना मत।'

'जी, मेम साहब !'

'तो जाऊं मैं ?'

'श्योर। डोन्ट वरी। आइ एम कम्फर्टेबल।'

सीमा कितनी स्वतंत्र है। उसका जीवन उसकी इच्छा के अधीन है। वह जिससे चाहे मिले, जहां चाहे जाय। कोई उस पर उंगली नहीं उठाता। और मैं सड़क पार करूं तो समाचार बनने लगते हैं। सीमा कहती है बुरी बातों से अच्छी खबरें बनती हैं। मेरा जीवन भी खबरों का ऐसा ही केन्द्र बन कर रह गया है।

क्लास में आज उपस्थिति इतनी अधिक क्यों है ? मैं पढ़ाने के लिए तैयार भी नहीं हूं। क्या पढ़ाऊंगी ? बातचीत करूं। समय कट जायेगा। लड़के-लड़कियां बहुत खुश हैं। ऐसे ही पढ़ना चाहते हैं। कुछ मैंने पूछा, कुछ उन्हें पूछने दिया। वे मुखर होना चाहते हैं। मूक श्रोता नहीं। जैसे ही मैंने कहा – 'अब तुम पुछो।' कि उनमें खुशी की लहर आ गई। एक लड़के ने हाथ उठाया।

'हां बोलो।'

'मैडम, पिछले क्लास में आपने कहा था सभी पौधे वनस्पति नहीं हैं। इसी पर थोड़ा स्पष्ट होना चाहूंगा।'

'ठीक है। बैठो। सभी पौधे वनस्पति नहीं होते। जो पौधे दीर्घकाल तक खड़े रहते हैं और मौसम के अनुसार उन पर फल लगता है, लेकिन जो फल जल्दी पकने और सड़ने वाले होते हैं, जैसे आम, अमरूद, केला, सेव आदि – ये वनस्पति हैं। लेकिन जो पौधे हर बार उगाये जाने पर ही फल देते हैं, फल पकते ही जो सूखने और सड़ने लगते हैं और जिनसे उपजे फल को हम लम्बे समय तक सुरक्षित रख सकते हैं – उन्हें औषधि कहा जाता है। औषधियों से प्राप्त फल या अन्न से अधिक बल प्राप्त होता है। वनस्पति से प्राप्त फलों में

बुद्धितत्व अधिक बताया गया है। स्पष्ट हुआ?'

'जी।'

'मेरा प्रश्न है कि स्त्री तथा शूद्रादि के लिए वेदपाठ वर्जित करने के पीछे क्या था?'

'इसे बहुत 'स्ट्रेट वे' में मत लो। यह एक संकेत है। अनधिकारी को ज्ञान की बात सुनाने की विफलता का अनुभव ही ऐसी व्यवस्था का कारण बना होगा। लेकिन ऐसे उदाहरण हैं जहां ऋषियों और गुरुओं ने इस नियम के विपरीत शिष्य अपनाये हैं।'

'वह सब तो अपवाद हैं, मैडम।'

'कभी-कभी अपवाद नियमों पर हावी हो जाते हैं - हो जाते हैं न!' — मैंने पूरे वर्ग पर दृष्टि घुमाई। सब मुझे मंत्रमुग्ध सुन रहे थे। कौन कहता है कि आजकल के लड़के पढ़ना नहीं चाहते?

'आपने वेदों को पढ़ा है?' — क्लास की सबसे चुलबुली और बहुत हद तक विवादास्पद लड़की तपाक से पूछ बैठी।

'पूरा नहीं। कहीं-कहीं से। लेकिन उनके विषय में पढ़ा है।'

'वेद कितने हैं?'

'दो तरह के रेफरेन्स मिलते हैं — 'वेदास्त्रयस्त्रयी' और 'चत्वारोवेदा:'। याने वेद तीन हैं या चार इस पर बहस है। लेकिन इसका समाधान भी है। रचना भेद की दृष्टि से वेद तीन ही होते है — गद्य यजुर्वेद, पद्य ऋग्वेद और गान सामवेद। इनके अतिरिक्त चौथा है अथर्ववेद। इसमें विपत्तियों से अपनी रक्षा के लिए प्रार्थनायें की गयी हैं।'

'स्त्रियों के लिए अब भी वेद पढ़ना मना है?' — एक अति गंभीर लड़की ने पूछा।

'भारत के वर्तमान संविधान ने स्त्रियों के वेदपाठ पर मनाही नहीं की है।' — मैंने हंसने के लिए यह नहीं कहा था लेकिन पूरा क्लास एक साथ हंस पड़ा। वह लड़की तनिक झेंप गई। मैंने उसी को सम्बोधित कर कहा - 'तुम शौक से वेद पढ़ सकती हो। लेकिन उसे पढ़ने के पहले अपने को तैयार करना होगा।'

'दिल मजबूत बनाना होगा।' - एक भारी दुष्ट लड़के ने पीछे से कहा।

'नहीं। इसमें दिल से अधिक दिमाग की क्षमता का सवाल है। और दिमाग से मेरा मतलब केवल इन्टेलिजेंस से नहीं है। वेद पढ़ने के लिए सबसे पहले तो उसकी भाषा से अच्छी परिचिति होनी चाहिए, दूसरे उसके प्रतीकों को समझने का अभ्यास होना जरूरी है।'

मुझे बड़ा अच्छा लगा था - लड़के-लड़कियों का इस तरह पूछना। अगर पीरियड का बंधन न रहा होता तो शायद ये सब मेरे साथ घंटों बैठे रह सकते थे। यही हैं मेरे असली साथी। ये आते-जाते युवा चेहरे। इन्हीं के सान्निध्य में मेरी सार्थकता है। इन्हीं के लिए मैं हूं। इन्हें नहीं पता कि इनसे कौन-सी ऊर्जा, कौन-सा सुख मैं पाती हूं। लेकिन तब भी मेरे जीवन में अभाव बोध कैसा? क्यों? मेरी निजी गाड़ी है। मैंने अपने नाम से लोन लेकर इसे खरीदा है। खुद चलाती हूं। 'जी' ने कई बार मुझे एक ड्रायवर रख लेने की सलाह दी है। लेकिन मैंने

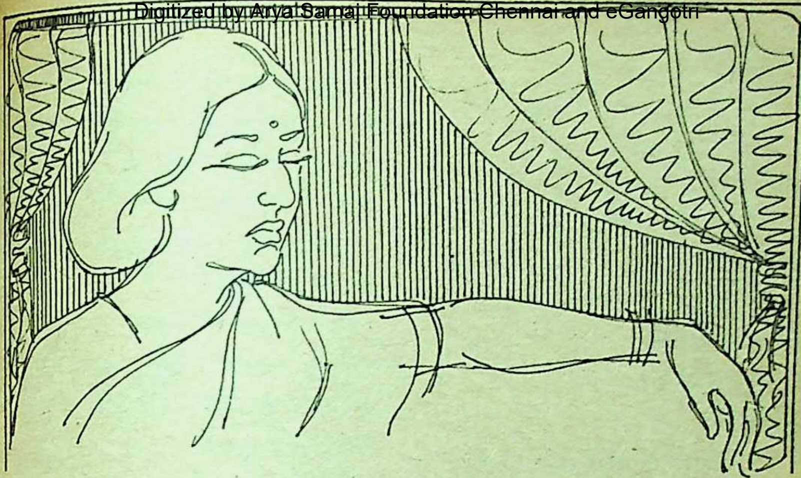

इस गाड़ी की स्टियरिंग किसी को नहीं छूने दी है। ऐसा गाड़ी की हिफाजत के लिए करती हूं यही कहा है मैंने। सब यही समझते हैं।

अपने जीवन की डोर अपने हाथों में नहीं रख पायी हूं। सुदीप्त को अपने से सबल मान कर ही उससे विवाह किया था मैंने। और जी को भी संरक्षक मान कर इसकी छत्रछाया में हूं। सुदीप्त मेरी रक्षा नहीं कर सका था — अपने पिता की ताड़ना से वह मुझे नही बचा सका तो और क्या करता। अच्छा हुआ। अच्छा ही हुआ। जो हुआ सो ठीक हुआ।

और जी मुझसे विवाह नहीं कर सका। यह कम अच्छा थोड़े ही हुआ। आह! मैं डूबने से बच गई हूं। लेकिन इस बात से मन इतना क्षुब्ध क्यों हो उठता है? क्या मैं अपने को भुलावा दे रही हूं? क्या मेरा अंतर्मन हर रोज इस घड़ी की बाट नहीं जोह रहा जब अचानक जी मुझसे विवाह करने को प्रस्तुत हो जायेंगे। तब क्या मैं इन्कार कर दूंगी?

हां। मैं अब जी से विवाह नहीं करूंगी। लेकिन वही कौन विवाह प्रस्ताव लेकर आ रहे हैं! यह मेरे मन को हो क्या गया है? क्यों इस बन्द दरवाजे पर सिर पटक रही हूं? शायद सीमा के कारण। उसी ने आकर मेरा संतुलन बिगाड़ दिया है। उससे एक झूठ बोल कर मैं खुद अपने अंदर पल रहे एक बड़े झूठ की चपेट में आ गयी हूं।

तो उसे बता दूं। कह दूं कि जी ने मुझसे विवाह नहीं किया है। लेकिन तब सीमा की नजर में मेरी इज्जत क्या रह जायगी। फिर! फिर वही पाखंड। वही आत्मवंचना। क्या विवाह ही मेरे जीवन के सम्मान का आधार है? जी के साथ अपने सम्बन्धों की ग्लानि है मुझे। इस लज्जा ने मुझे झूठ बोलने पर विवश किया है। लेकिन ये सम्बन्ध विवाह के बाद क्यों नहीं लज्जाजनक दीखते?

हां, यही सवाल मैं सीमा से करूंगी। उसे आज बता ही दूंगी। कुछ तो मन का बोझ

हल्का होगा।

* * *

## सीमा

'आ गई ?' – रूना के आने के पहले ही मैं लौट आई थी।

'तुम कब लौटीं ?'

'अभी ही।'

'चाय मंगवाती हूं। मुंह हाथ धो लो।'

'सब हो गया – सिर्फ चाय के लिए तुम्हारी राह देख रही थी।'

'मैं समझ रही थी कि तुम देर से आओगी।'

'कोई काम नहीं हुआ। जिससे मिलना था, वह मिला नहीं। लगता है आना बेकार हो जायगा।'

'क्यों ? मुझसे मिलना एक काम नहीं था क्या ?'

'और रूनी ! तुमसे मिलना ! इसके लिए तो मैं सारे काम छोड़ कर भी आ सकती हूं। लेकिन एक बात तू बता तेरी चहक कहां गई ?'

'उमर हुई।'

'उंह। उमर का कोई असर तुम पर नहीं है। और यह बुझन उमर की नहीं है, बल्कि रूनी ! यह उमर की मांग है – शायद तू बच्चे चाहती है।'

'बड़ी लाल बुझक्कड़ बनी है तू। मैं बच्चों के लिए उदास हूं और तू ? बच्चों के बाप के लिए ?'

रूना हंसने लगी तो मैंने भी उसका साथ दिया, लेकिन दरअसल यह हमारी हंसी नहीं थी। यह रोना भी नहीं था। यह था अपने आप को बहलाने का एक उपाय।

'सच रूनी ! तू क्यों नहीं झटपट दो-तीन जूनियर 'जी' गढ़ लेती है।'

चाय आ गई थी। रूना प्यालों में ढालने लगी थी, रुक गई, मुझे सीधे ताका और बेहद डूबे स्वर में कहा – 'सिम्मी ! जी से मेरा विवाह नहीं हुआ है।'

'व्हाट !'

'लगा न बुरा ! मैं जानती थी। प्रोग्रेसिव से प्रोग्रेसिव शख्स के गले भी यह बात नहीं उतरेगी।'

'मुझे बुरा यह लगा कि तूने झूठ क्यों कहा था ?'

'कहा तो नहीं, लिखा था।'

'एक ही बात है। क्यों झूठ लिखा था ?'

'इसलिए कि तुम मुझे गई-बीती नहीं समझो।'

'यह जानकर तुमको गई-बीती समझने लगूंगी यह कैसे मान बैठी ?'

'तुम्हें अच्छी लगी यह बात ?'

'नहीं ! नहीं लगी।'

'क्यों नहीं लगी ?'

'तुम्हारे सोशल-पोजीशन के लिए।'

'ब्याह कर लेने से मेरे पोजीशन में क्या फर्क आता ?'

'आता। तुम अब भी कर सकती हो।'

'अब !'

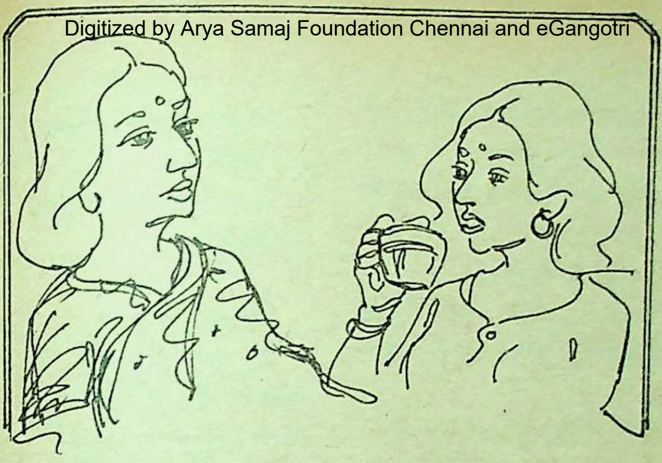

'क्यों ?'

'मैं तुमसे पूछती हूं, सिम्मी ! जी के साथ मेरा विवाह क्यों जरूरी लगता है तुम्हें ?'

'तुम्हारी सिक्यूरीटी के लिए ।'

'आई एम नाट इनसिक्योर ।'

'यू आर; माई डिअर !'

'नानसेन्स !'

'रूनी ! अगर तुम अपने को असुरक्षित अनुभव नहीं करती होतीं तब इस छत के नीचे नहीं होतीं ।'

'सो ऐसा क्या मैं प्रेम के खातिर नहीं कर सकती ?'

'हो सकता है । लेकिन वह प्रेम तुम अलग अपने घर में रह कर भी अनुभव कर सकती थीं ।'

'हां, यह हो सकता था ।'

'लेकिन, रूनी ! मुझे इस बात पर आश्चर्य है कि तुम्हारे जी ने कैसे तुम्हें बिना विवाह के साथ रहने की छूट दे रखी है ।'

'वह मेरी हर बात मानता है ।'

'तुम सच बोल रही हो ?'

'बिल्कुल ।'

'तब वह महान है ।' मुझे रूना से ईर्षा होती है ।

'हो सकता है ।'

'उसके घर के लोग ?'

'मां हैं ।'

'वह कुछ नहीं कहतीं ।'

'कहती हैं । मुझसे भी कहा था ।'

'तुम मिली हो उनसे आई मीन अपनी सास से ?'

'ओह ! सिम्मी तू खामखाह बनावटी रिश्तों तक क्यों खींच रही है ?'

'आई एम सोरी ! तब ! क्या कहा था ?'

'किसने ?'

'जी की मां ने ।'

'जी की अपनी मां नहीं हैं । वह जो मम्मी हैं जी के पापा की दूसरी शादी ...'

'यू मीन स्टेप मदर !'

'यह शब्द उनके लिए मत निकाल वे बहुत

अच्छी हैं।'

'अच्छा !'

'हां सिम्मी ! उनसे सीखने लायक है, बिना मां बने पूरी तरह मां हो जाने का गुण। हालांकि वे बहुत चाहती थीं कि मैं मां बनूं, जी की ब्याहता बनकर रहूं।'

'हां, क्या कहा था उन्होंने ?'

'कहा था कम, उनके मुंह पर उभरने वाले भाव ने उनकी ओर से अधिक अनुरोध किया था।'

'तो उन्हीं की खातिर तुम्हें कर लेना था...'

'कुछ बातें ऐसी होती हैं, सिम्मी ! जो कही नहीं जा सकतीं। तू मान ले कि मैं तुझे सब नहीं बता पाऊंगी।'

'इसके बाद मेरे और रूना के बीच एक चुप्पी आकर बैठ गई। हम घंटों उसे नहीं टार सके। और अब हम मुखर हुए तो बात की गेंद व्यक्तिगत मैदान से निहायत दूरस्थ कोर्ट में लुढ़क रही थी।

* * *

## रूना

'अरे सीस ! क्यों मार रहा है उसे ?'

बाहर हल्ला हो रहा था। मारने, रोने, बोलने, धमकाने और माफी मांगने की आवाज गड्डमगड्ड होकर एक साथ शोर बन गई थी।

'किसे मार रहा है ?' – सीमा ने पूछा।

'एक लड़का है – कुछ रोज से यहां काम करता है।'

'कौन मार रहा है ?'

'सीसअली, हमारा दरबान।'

'क्यों ?'

'पता करना होगा, लड़के ने कोई गड़ब की होगी।'

'..........'

'तो हमे बताना था।'

मैंने बाहर निकल कर देखा। सीस उ लगातार पीटे जा रहा था। वह बचाव अपने सूखे, काले हाथ उठाता था, मुंह फ लेता था, सीस की गिरफ्त से छूटने क कोशिश करता था लेकिन उसे पलट क चोट नहीं पहुंचा रहा था। ओह! नहीं, ऐ कहीं पीटा जाता है इतने छोटे लड़के को!

'सीस !' मेरी तेज आवाज से उसकी पक ढीली हो गई। लड़का औंधे गिर पड़ा थ उठकर बैठ गया।

'क्या हो रहा है ?' मैंने झुंझलाकर कह था। मेरे पीछे सीमा भी खड़ी थी।

सीस ने लड़के की ओर हिकारत से देखते हुए कहा – 'हुजूर, यह तो भारी चोर है।'

'क्या चुराया ? कब ?'

'कई बार। मैंने तो इसे कई मौके दिए समझाया। लेकिन आज तो यह हद कर रहा था।'

'..............'

'हुजूर, यह गेट का ताला ले जा रहा था।'

'ताला !'

'जी हुजूर ! इसने ताला खोल कर जेब में रख भी लिया था।'

'क्यों रे ! तूने ताला......

'अब ऐसा नहीं करूंगा........' लड़के की स्वीकारोक्ति इतनी करुण थी कि मेरा क्रोध कैसे ममत्व में बदल गया मैं जान भी न सकी ।

'इसने मेरी जेब से पैसे चुराए थे, मेम साहब !'

'तो मुझे क्यों नहीं बताया ?'

'इसे सुधारने का मौका दे रहा था ।'

'तूने पैसे लिये थे ?'

लड़का सिर झुकाये रोता रहा ।

देखने में सुन्दर नहीं, लेकिन सीधा सादा । आठ-दस साल का होगा ।

'किसका लड़का है ?' सीमा ने पूछा ।

'हुजूर यतीम है ।' सीस ने जानकारी दी ।

'ड्रायवर के गांव का है । यहां गाड़ी-बाड़ी धोने और पानी लाने के लिए एक आदमी की जरूरत थी । अभी तो पिछले महीने लाया इसे ।' – मैंने सीमा को बताया ।

'आते ही पंख निकल गये ।' सीस अभी भी उस पर फुंफकार रहा था ।

'इसे पीछे की ओर से लेकर आओ ।'

मेरे मन का क्रोध सीस के प्रति रुखाई बन कर निकला । लेकिन मैं इस लड़के को शह देना नहीं चाहती । जी को चोरी की बात मालूम होगी तो तुरत पुलिस के हवाले कर देंगे । सो सीस को हिदायत देती हुई मैं रूना के साथ भीतर चली गई – साहब को मत बताना । मैं देखती हूं, अब यह कैसे चोरी करता है ।'

'रूना !'

'........'

'देखा तूने ! कैसी दुर्दशा है ।'

मुझसे कुछ कहते नहीं बना । मुझे मालूम था एक माह से यह लड़का हमारे यहां काम कर रहा है । जूठन खाता है । पूरे कपड़े इसकी देह पर नहीं हैं । कहां सोता है, कब नहाता धोता है मुझे नहीं पता । इसके आने के बाद से गमलों में, लॉन में, पानी का छिड़काव मुझे दिखाई देने लगा था । लेकिन मैंने सींचने वाले हाथों पर ध्यान देने की कोई जरूरत नहीं समझी थी । आज जब ध्यान देना पड़ा तो वे हाथ ताला चुरा रहे थे ।

सीस उसे लेकर पिछवाड़े में खड़ा था ।

'तेरा नाम नग्गी है न !' मैंने पूछा । इस नाम से मैंने इसे कभी पुकारा नहीं था । सीस को पुकारते सुनती रही हूं ।

उसने सहमति में सिर हिलाया और बुदबुदाया-सा बोला –

'जी । नगीना ।'

'ओ ! नगीना । यह नाम किसने रक्खा ?'

'नहीं मालूम ।'

'कितने साल के हो ?'

'नहीं मालूम ।'

'कुछ पढ़ना-लिखना जानते हो ?'

अबकी बार बोला नहीं । नकार जता कर सिर झुका लिया ।

'सीस ! इसके नये कपड़े ला दूंगी मैं । तुम इसके केश छोटे करा दो, नाखून कटवा दो, नहा ले ठीक से, लो ये रुपये रखो ।'

'जी, अभी ?'

'हां अभी ।'

'गेट पर कोई है नहीं ।'

'ताला बन्द कर चाबी मुझे दे जाओ । और अपनी घरवाली से कह जाओ, कोई आये तो मुझे खबर कर दे ।'

सीस कुछ नहीं बोला । दस का नोट मोड़ कर रखते हुए उसने मुझे ऐसे देखा जैसे मैं पागल तो नहीं हो गई हूं ।

लेकिन सीमा ने उन दोनो के जाते ही कहा – 'शाबास, रूनी ! शाबाश ! तुमसे यही उम्मीद थी ।'

'लेकिन सिम्मी ! एक लड़के की मदद करने में कोई तीर नहीं मार लूंगी । अपने देश में, अपने शहर में, अपने आसपास कितने भरे पड़े हैं । उनका....'

'उनका हल भी यही है । यह एक नमूना होगा – एक एक्सपेरिमेंट, एक ट्रायल और कहो आणविक प्रयास ।'

'आगे का कोई प्रोग्राम कोई उद्देश्य हमारे सामने हो तब तो प्रयोग का लाभ है न तो यह सब एक व्यक्तिगत सनक तक ही सीमित रह जाता है ।'

'इसे हम चाहें तो सामूहिक विस्तार दे सकते हैं ।'

'हमारे सामने कोई फिलोसफी हो....'

'मैं तुम्हारी तरह दर्शनशास्त्री नहीं हूं कि हर बात की फिलोसफी तय करूं ।'

'लेकिन तुम जो कह रही थी वही तो है इसका दर्शन ।'

'हो सकता है । हम काम करें उसका दर्शन खुद तैयार हो जायगा ।'

'काम की योजना होनी चाहिए ।'

'आवश्यकता क्या है यह देख लो, योजना उसीके अनुसार बन जायगी ।'

'दरअसल जरूरत है बेसहारा किशोरों की मदद करने की ।'

'बस यह एक बात हुई । अब करना क्या है इसे तय कर लें ।'

'पहले उन्हें लोकेट करना होगा ।'

'ऐसे लड़के हमें कहां नहीं मिलेंगे – छोटे होटलों में, सिनेमा घरों में इर्दगिर्द, मोटर गैराजों में, ट्रेन में खोमचे लेकर झूलते हुए, बूट पालिश करते हुए और भीख मांगते हुए भी ।'

'सीमा !'

'........'

'नगीना शायद उन्हीं खोई हुई मणियों का प्रतिनिधि बनकर हमारे पास आ गया है ।'

'तुमने उसे नहाने-धोने भेज दिया – उसके नए कपड़े कब खरीदोगी ?'

'अभी ।'

'अभी जाओगी ?'

'नहीं मंगवा देती हूं ।'

मैंने रेडीमेड की एक दूकान में फोन किया । अपना पता बताया और कहा – 'दस साल के लड़के के लिए मामूली दो सेट पैंट कमीज, एक हल्का स्वेटर, एक पाजामा, एक तौलिया दो अंडर-विअर, दो बनियाईन – सब बिल के साथ भेजिए ।.... गेट बन्द मिलेगा । वहां पर सीसअली कह कर पुकारिए, गेट खुलवा कर सामान ले लेंगे पेमेंट ले लीजिएगा । थैंक्यू ।'

'रूनी मजे हैं तुम्हारे । घर बैठे हुकुम चलाने की देर....'

'यह कोई बड़ा लाभ नहीं, यदि इस प्रभाव से मैं नगीनों पर पड़ी धूल पोंछ सकूं तब असली फायदा है इस प्रविलेज्ड पोजीशन का ।'

'कपड़े आ गये । अतिसाधारण । लेकिन नहा धोकर जब नगीने ने उन्हें पहना तो उन कपड़ों में एक विशेष रंग भर गया । उनकी फबन इतनी बढ़ गई कि सीसअली भी मुस्कुराए बिना न रह सका । अभी जाड़ा शुरू नहीं हुआ था । फिर भी शाम में बेआदत नहाने से लड़का हल्के कांप रहा था । और, शायद उत्तेजना से भी उसकी देह हिल रही थी । नए कपड़ों का पहला सुखद स्पर्श उसे विभोर कर रहा था । सीसअली ने घुड़क कर कहा – 'आदाब कर मेम साहब को ।'

वह मेरे पांव छूने आगे बढ़ा तो मैंने रोक दिया । मेरा मन हुआ उसे गले लगा लूं । लेकिन नहीं । मुझे भावुकता में नहीं पड़ना है । काम करना है ।

'कल से तुम पढ़ोगे ।' मैंने अपने पर काबू पाते हुए कहा ।

'आज जाओ खा-पीकर सो जाओ । कल से मैं जो रुटीन बना दूंगी उसी पर चलोगे ।'

वह चला गया तो सीस ने मुझे दबी आवाज में कहा – 'इतने कपड़े दे डाले एक साथ । कहीं भाग गया तो ?'

'नहीं भागेगा ।'

'अभागा है । समझ नहीं है न !'

'उसे गालियां मत दो । बच्चा है । प्यार से बोलो, नहीं भागेगा । और भाग ही गया तो क्या ?'

'इतने कपड़े !'

'तुम जाओ । और हां, साहब को नगीने के विषय में कुछ नहीं कहना है ।'

'जी ।'

सीसअली नगीना से थोड़ा ही कम है। शायद उसका बचपन भी कपड़ों के अभाव में बीता है, न तो इस तरह नगीने के नये कपड़ों को अहमियत न देता। ओह! किस-किस के स्वभाव से अभाव का जहर निकाला जाय!

* * *

## सुदीप्त

आज मैं घर से जा रहा हूं। मां को छोड़ कर जाते मुझे दुःख हो रहा है, लेकिन अब और कितना ढोऊं इस घर को! सुतपा कर लेगी मां और बहनों की देखभाल सुवीर से तो कोई उम्मीद ही नहीं है।

मेरा सामान कुछ अधिक तो नहीं है। एक ट्रंक है, बस। बिछावन तो ले जाना है नहीं। बस अपने कपड़े। उन कपड़ों को मैंने यहीं छोड़ दिया है जिसे रूना ने मेरे लिए खरीदे थे, सुवीर पहनेगा। इन्हें मैं रखता, लेकिन अब घिन आती है, जब से वह उस हरामजादे एम.एल.ए. के साथ रहने लगी। प्रोफेसर है, सुन्दर है तब यह रखेल बनने की क्या जरूरत थी!

'तुम आज ही जा रहे हो?' – मां ने मेरी तैयारी देख कर भरे गले से पूछा।'

'हां, मां।'

'मुझसे न कभी पूछा, न कुछ बताया।'

'........'

'मैं तुम्हें रोकती क्या!'

'मैंने समझा तुम जानती हो।'

'कैसे जानूंगी कोई बताये तो!'

सुप्पी ने....

'सुप्पी को नौकरी दिलाने के लिए तो तू अपने को बंधक नहीं रख रहा है धोखा!' मां फूट-फूट कर रोने लगी।

'मां यह तुम क्या कहती हो?'

मां रोती रही।

'नहीं, मां। मैंने उससे ब्याह किया है। रजिस्ट्री कर के। वह अच्छी है। मैं उसे चाहता हूं।'

'तो मुझे कहा क्यों नहीं? दिखाया क्यों नहीं। सुप्पी बता रही थी उसके बच्चे हैं, तुमसे बड़ी है।'

'मैंने उसकी उम्र नहीं पूछी है। और मां... अब तक क्या मेरे बच्चे नहीं हुए होते!'

'........' मां फिर रोने लगी। उसे अपना बेटा सदा के लिए दूर होता-सा लग रहा था।

'मां! मैं रुपये भेजता रहूंगा।'

'चूल्हे में जायें रुपये! रुपये, रुपये! इनके सिवा भी कोई चीज है। जा तू रुपये अपने बाबा के नाम दान कर। मुझे कहीं काशी-बृन्दावन भेज दे। अब मैं किसी की गृहस्थी नहीं चलाती।'

'तुझे गृहस्थी नहीं चलानी। सुतपा देख लेगी। सुवीर देखेगा।'

'कोई देखे, न देखे। मुझे अब कुछ लेना-देना नहीं है। मैं अब यहां नहीं रहने की। तू नहीं रहेगा तो मुझसे यह पाप नहीं ढोया जायगा।'

'मां! आज मुझे जाने दो। मैं तुम्हारे काशीवास का इन्तजाम कर दूंगा।'

'आह! बेटे! तेरे बाबा ने तेरे जीवन में

आग लगा दी। हे भगवान! मैंने भी क्या किया! क्या किया मैंने! मुझे भी भगवान माफ नहीं करेगा।'

'मां! तुम अपना मन मत छोटा करो। जो हुआ सो हुआ। मैं सुखी हूं। सच कहता हूं मां! तुम्हारे आशीर्वाद से मैं सुखी हूं।'

'........' मां मुझे एकटक देखती रही। मेरे झूठ से सच निकालने की कोशिश में उसकी थकी आंखें निरुद्देश्य ताकती रहीं।

मैं अपनी इस ब्याहता स्त्री के साथ रहने चला आया हूं। यह घर मेरा नहीं है। इसके पूर्वपति की कमाई का है। इस बात के एहसास पर चिप्पी की तरह घर के गेट के दाहिने पाए पर मेरा नाम लाल अक्षरों में उकीर दिया गया है। लेकिन यह मेरी हीन भावना की दवा नहीं है। मेरे मन की कुंठा मेरी इस द्वितीया द्वारा की गई प्रशंसा से भी नहीं कम होने की — यह समय - असमय मेरी तुलना अपने पूर्वपति से कर मेरा मान करना चाहती है। मैं ठीक समय पर घर आ जाता हूं, वह कभी समय पर नहीं आता था। मैं मृदुभाषी हूं, वह गालियों के मुंह से बोलता था। मैं सुन्दर हूं, वह भयानक था। मैं इसे प्यार करता हूं, वह नफरत करता था। मैं इसे अच्छा लगता हूं, वह नहीं लगता था — हर मौके पर यह उसे याद करती है। खाते समय मेरे मुंह चलाने की तारीफ से लेकर मुंह चूमने तक में यह उससे मेरी उन्मुक्त असमानता दिखा कर मुझे ऊंचा उठाना चाहती है। इसकी तुलनाओं का दायरा जितना ही विस्तृत और गहरा होता जाता है उतना ही मैं कुंठित होता जाता हूं। मुझे लगता है उस निर्मम दरोगा का भूत एक दिन मेरी गर्दन मरोड़ कर पूछेगा कि इस घर में मैं क्यों रहता हूं? इसीलिए जब-जब यह उसे याद करती है मेरे सामने एक काली छाया आकर खड़ी हो जाती है। लेकिन मेरी बुजदिली ही है कि मैं इस स्त्री को रोक नहीं पाता केवल पूर्वपति चर्चा से ही नहीं, किसी भी बात से नहीं। वह जो चाहती है, करती है। अपेक्षा भी नहीं करती कि मैं उसे रोकूंगा-टोकूंगा। वह कहती है कि उसके अनेक सुखों में एक यह भी है कि मेरी तरह गउ पुरुष का साथ उसे मिला है।

मां बेकार मेरे लिए दुःखी होती है। अब तक मैं बाबा की गृहस्थी चला कर बहुत थक चुका हूं। मुझे आराम चाहिए। और ऐसा आराम मुझे और कहां मिलता। दूसरी कोई भी स्त्री मुझसे सुरक्षा पाना चाहती, सुरक्षा देने वाली कहां मिलती? बस एक यही कि यह

उस दरोगा की बात करना छोड़ दे। हे भगवान!

'यहां बैठ कर क्या कर रहे हो? कब आये कालेज से?'

— वह आ गयी है। — 'कुछ खाया?'

'नहीं। अभी तो आया हूं।'

'क्या खाओगे? चाय लोगे?'

'कुछ भी।'

'यही फर्क है। वह मुआं ऐसे कहता? दो गालियां दे कर वही मांगता जिसे बनाने में दिक्कत हो।'

हे भगवान! क्या करूं कि उसका नाम न आये! उसी ने प्रसंग बदल कर अचानक पूछा — 'हां, सुप्पी की शादी के लिए कुछ सोचा है?'

'वह खुद सोच लेगी। और अभी तो कुछ साल काम कर ले।'

'एक आदमी है, हमारे डिपार्टमेंट का — तुम्हीं लोगों की उमर होगी। अब तक शादी नहीं बनाया। कामकाजी लड़की चाहता है। सुन्दर। सुप्पी के लिए कहूं?'

'कैसा आदमी है? भला!' —मुझे इसकी पसंद पर शक है। इसके सारे दोस्त इसी की तरह हैं। खाउ-पकाउ और घटिया। सुप्पी के लिए वैसा नहीं चाहिए।

'भला आदमी कैसा होता है? उसकी दुम होती है या सींगें? आदमी है। बस आदमी की तरह। कमाता, खाता।'

'सुप्पी से पूछना होगा।'

'मैंने पूछा था।'

'क्या कहा?'

'कहा — भैया कहेंगे तब। जवान लड़की है। वह क्यों नहीं चाहेगी?'

'तब बात चलाओ।'

'वह सुप्पी को देख ले तब न!'

'कहां? मां के घर।'

'नहीं। वहां नहीं। यहीं ठीक रहेगा। बा बढ़े तब अपनी मां को बताना।'

'ठीक है।'

'वाह। इसीलिए न कहती हूं कि तुम हो।'

वह समय-बे समय मेरे गले में झूल जा है। सेंट की तेज खुशबू झेलने की अब मु आदत हो गयी है। लेकिन कभी-कभी लग है कहीं इसके बढ़े हाथ को थाम कर मैंने भू तो नहीं की!

* * *

## सुतपा

मां को बता दूं! पता नहीं क्यों सुलोच भाभी मना कर रही हैं। मां रोकेंगी थोड़े ही। और कहीं सेक दें तो! छोटी बहनों के कारण! मां सोचेंगी मैं चली गयी तो इ तीनों का क्या होगा! मेरा ब्याह हो जाय तो मैं मुक्त हो जाती। भैया तो कह कर रह गये। मेरे छोटी बहनों के लिए कुछ किया तो नहीं। मेरे भरोसे छोड़ दिया। छोट दा को कह दूं। उन से पूछती हूं।

'सो गये? छोट दा! सो गये क्या?'

'नहीं तो! आज तुम्हारी ड्यूटी....'

'दिन की थी।'

'पिछले हफ्ते भी तो दिन ही की थी।'

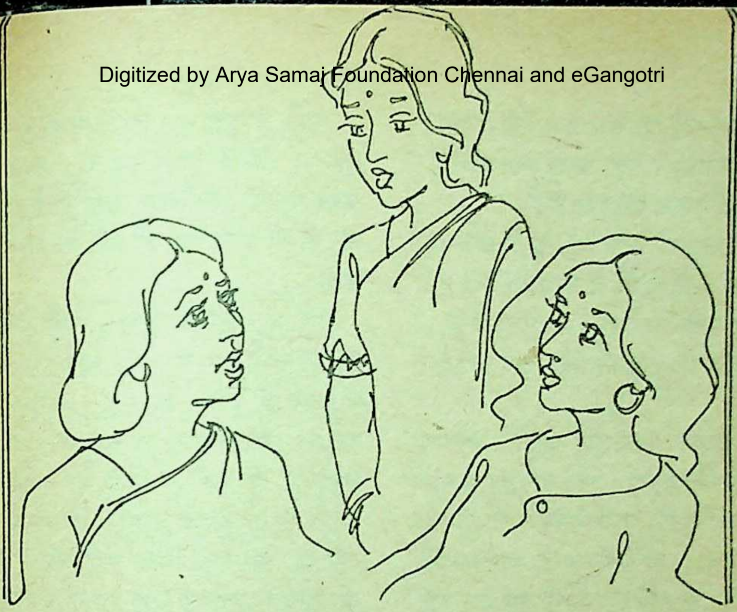

'हां, भाभी ने.....'

'तुम पर कृपा हो देवी की....'

'छोट दा !'

'........'

'तुमसे कुछ कहना था ।'

'मुझसे ?'

'भाभी मुझसे... मुझसे ब्याह के लिए....'

'अच्छा ! क्यों नहीं, क्यों नहीं । आखिर वह हमारे बड़े भाई की बीबी हैं ।'

'उसका कोई बौस है – बड़ दा की उम्र का। उसी के लिए।'

'दादा ने तुमसे कहा है ?'

'नहीं। सुलोचना भाभी ने बताया कि उन्होंने उनसे पूछ लिया है ।'

'लेकिन वह कैसा आदमी है, तुमने देखा है?'

'नहीं नहीं । मैंने कभी नहीं देखा है, छोट दा। फोटो तक नहीं ।'

'दादा की सूर्पनखा जब घटक है तब सावधान रहना, सुप्पी ।'

'भाभी ने मां से कहने को मना किया है ।'

'क्यों ? क्या मां से वह तुम्हारी ज्यादा हितैषी है ।'

'यही तो ।'

'मां को बता दे ।'

'और मां ने मना कर दिया तो ?'

'तो तू मन में तय कर चुकी है !'

'नहीं छोट दा । उसे देख कर नापसंद भी तो किया जा सकता है ।'

'तो यह देखना चोरी-चुपके क्यों ? इसमें मां भी शामिल रहे तो क्या हर्ज है ।'

'लेकिन अगर मां ने शुरू ही में मना कर

दिया तब !'

'मां मना नहीं करेगी। अब नहीं करेगी।

'मेरी समझ में नहीं आता क्या करूं?'

'मां को कहना ही ठीक है।'

'अभी रहने दो, छोट दा। अभी कोई बात ही न चले। भाभी को ही मना कर देती हूं।'

'न, तू मना मत कर। मैं तेरे साथ हूं।'

'छोट दा !' – मुझसे और कुछ बोलते न बना।

छोट दा बड़ दा की तरह नहीं है। यह कह कर पीछे नहीं हटेगा। कोई बात हो तो मुझे बचायेगा। लेकिन भाभी ने भी गलत तो नहीं बताया होगा। वह जरूर कोई भला आदमी होगा। देर हो रही है। भाभी राह देख रही होंगी।

भाभी ने कितना सुन्दर सजाया है अपनी बैठक को। लेकिन दादा! कहां हैं वे? क्यों नहीं आये?

'उनके कालेज में कोई प्रोग्राम है। देर से आयेंगे।'

'उन्हें तो मालूम था....'

'हां, लेकिन जाना जरूरी हो गया।'

'मैं जानती कि वे नहीं रहेंगे तो छोट दा को बुला लाती।'

'तुम भी एकदम गंवारों जैसी बात करती हो। हम लोग पढ़ी-लिखी कामकाजी औरतें हैं। हमें इस तरह मर्दों के अधीन रहना शोभा देता है?'

मुझे कुछ उत्तर देते नहीं बन पड़ा। अब क्या होगा हे भगवान! वह नहीं आये।

'क्या सोच रही हो? चलो कपड़े बदल लो। जाना ही होगा अब।'

भाभी ने मुझे एक चटक साड़ी दी। मेरे मुंह पर अच्छी पुताई कर दी। लाख मना करने पर भी लिपस्टिक लगा ही दिया और सेंट से तो मुझे नहा ही देती कि कॉल बेल बजी।

मेरा जी धड़कने लगा। भाभी दरवाजा खोलने चली गयी थी। मैंने आदमकद आईने में अपने को देखा। यह मैं हूं – श्रृंगार ने मेरे मन पर नशे की एक पर्त डाल दी। मेरी नसें उत्तेजित हो उठीं। थोड़ी देर पहले तक अपनी सुरक्षा की जो आशंका मेरे मन को बेध रही थी, वह कहीं बिला गयी और मैं किसी अपरिचित पुरुष के लिए इतनी उत्कंठित हो गयी कि उसकी अज्ञात कुलशीलता की बात मेरे मन से तिरोहित हो गयी।

भाभी ने मुझे पुकारा, वहीं से, मेरा नाम लेकर। मैंने आईने में अपने को तौला और मेरे मुख पर संतोष, आकांक्षा, उत्तेजना की एक मिली-जुली मुस्कान फैल गयी।

वहां भाभी के पास बैठा आदमी बड़ दा से उम्र में बड़ा होगा। देखने में अच्छा है। कपड़े खूब बढ़िया पहन रक्खे हैं। मुझे देख कर आधा खड़ा हुआ – भाभी ने औपचारिक परिचय कराया। हम सब बैठ गये तो वह मुझे देखने लगा। लगातार। निःसंकोच। फिर भाभी के कंधे पर हाथ धर कर कहा - 'लोचन डियर! कुछ खिलाओगी-पिलाओगी नहीं।'

'जरूर। आप बात कीजिये। मैं लाती हूं।'

भाभी पीने का सामान हमारे और उसके बीच रख गयी। फिर अंदर जाकर रसोईघर में कुछ उठाने-धरने लगी।

'सुलोचना तुमको सौंप गयी है....'

'जी !'

'हां यह ग्लास बोतल और मुझे भी।'

मेरा मुंह तमतमा गया। लेकिन मैं नशे में थी। सजी धजी। सेंट से महमह करती। मैंने उसके लिए शराब ढाल कर पानी मिला दिया। वह बैठा मुस्कुराता रहा। मेरा घरेलूपन उससे छिपा नहीं था। इसलिए उसने मुझसे बड़े सलीके से कहा – 'तुम बहुत अच्छी हो।'

मेरा नशा दुगुना हो गया। उसने जब मेरा हाथ पकड़ कर दबा दियां तो मैंने अपने को उपकृत माना। और जब वह मुझे लेकर बगीचे में चला गया तब भी मैंने अपने को न तो अंधकार में समझा न कोई भय माना। भाभी उसे और मुझे भी खिलाती-पिलाती रही। एकांत के मौके देती रही। रात ग्यारह बजे वह गया तब भैया घर लौटे। मैं वहीं रह गई। सुबह नहा-धोकर घर लौटी तब मां ने मुझे ड्यूटी से आया मान कर तुरत चाय बना कर दिया। मेरा मन हुआ उसे बता दूं। उसे कह दूं कि जैसा दामाद वह चाहती है उससे कई गुना बड़ा आदमी उसकी बेटी का हाथ थाम चुका है। लेकिन नहीं कह सकी। हफ्ते भर चलने वाले इस सिलसिले को मां ने टेलिफोन के दफ्तर की नाइट ड्यूटी मान लिया। छोट दा को भी फिर कुछ नहीं कहा। राह देखती रही। भाभी मुझे बतायेगी ही।

ब्याह का दिन तय कर भाभी मुझे कहेगी, तब इन लोगों को चौंका दूंगी मैं।

* * *

## सीमा

'तुम्हारा 'जी', आयेगा तो इस लंगूर की छटा देख कर तुम्हें क्या कहेगा ?'

'उसका ध्यान इस पर जायेगा ही नहीं, और अगर गया भी तो मैंने क्या किया इस पर नुक्ताचीनी नहीं करेगा।'

'और यह नगीना अगर सचमुच भाग गया तो बड़ा बुरा होगा।'

नगीने के आंख से ओझल होते ही दिन में दस बार उसके भाग जाने का हल्ला उठता था। लेकिन हर बार वह मिल जाता था। कभी गैराज में सोया हुआ, कभी नल पर,

कभी पेड़ के नीचे, तो कभी दीवाल से पीठ टिका कर बैठा ऊंघता।

'अब इसे ढंग से पढ़ाना-लिखाना चाहिए।'

'वही तो ! साफ कपड़े पहनने से क्या वह बदल जायेगा।'

'बदला-सा तो लग रहा है। लेकिन यह तो ऊपरी है। यह भी जरूरी था, पर इससे काम नहीं चलने का।'

'इसके लिए कोई टीचर रख लो।'

'नहीं अभी तो खुद पढ़ाऊंगी। जब पढ़ाई की पकड़ में यह आ जायेगा तब स्कूल भेजने की बात या ट्यूटर की बात की जायेगी।'

'मैं शुरू करा दूं तुम्हारी ओर से ?'

'हां। यह ठीक होगा। मुझसे शायद ज्यादा संकोच करे।'

उसी शाम मैंने नगीने को पढ़ाना शुरू किया था। उसका ध्यान पढ़ाई में नहीं लग रहा है यह समझते मुझे देर नहीं लगी। वह इसे एक तरह की सजा मान कर बैठा था। वह मुझे, मेरे हाथ की अंगूठी, मेरे कपड़े और चप्पलों को बारी-बारी से देख रहा था। इतने पास से ऐसी चीजें देखने का मौका उसे नहीं मिला था। सीधी लकीर खींचना और उसमें अक्षरों के नक्शे बनाने का काम उसे पसंद नहीं आया था। मुझे निराशा हुई।

'इसे पढ़ा सकोगी ?'

'क्यों ? बड़ा मुश्किल है न !'

'हां। यह एकदम कोरा तो है ही, सीखना भी नहीं चाहता।'

'इसे अक्षर नहीं सिखाओ। पढ़ाई शुरू करने के लिए....'

'इसे दूसरे तरीके से सिखाना होगा - इ पहले गिनती सिखा दो, बोलकर सीख ज्यादा अच्छा होगा। पहले यह अंकों क पहचाने।'

'ठीक है कल कोशिश करूंगी।'

'तुम अपने अखबार का काम भी करो कि समाज सेवा ही करती रहोगी!'

'अखबार के लिए तो मैटर मिल गया।

'क्या ?' – रूना ने चौंक कर पूछा।

'यही नगीना।'

'ओ।'

'तो तुमने क्या समझा था - तुम्हा साहब !'

'धत् !'

'वह भी होता तो मेरे सम्वादों का सब्जेक अगर वह तुम्हारा पति न होता।'

'ऊंह, यह पति-उति बेकार के शब्द है दासता और दकियानूसी बातें....'

'लेकिन तुम्हारे लिए तो यह एक हकीक है।'

'है भी और नहीं भी।'

'मतलब ?'

'मतलब साफ है। मैं वह नहीं हूं जो दुनियावी रिश्ते निभा रही हूं। इसके अतिरिक्त भी मैं हूं जिनका इन रिश्तों से को वास्ता नहीं।'

'रूना ! तुम पूरी तरह फिलासफर हो।'

'नहीं। यह मेरी अपनी जीवन शैली है। मैं सतह पर नहीं जी सकती।'

'यू आर ग्रेट, रूनी।'

'नहीं सीमा । आइ एम डूम्ड !'

रूना की आंखे भर आई थीं । वह अपने आप को इतना दुःखी क्यों बना रही है ? क्या कमी है उसके जीवन में ! क्या पहले विवाह का मोह भंग अब तक नहीं हुआ है ?'

'रूना, तुम अपना पिछला जख्म अब तक नहीं भूल पायीं...?'

'नहीं सीमा, वह नहीं । उस बात का अब कोई महत्व नहीं रहा ।'

'तब ? ...'

'यह जीवन मुझे पसंद नहीं है ।'

'क्यों ? क्या कमी है इसमें !'

'तुम्हें कोई कमी नजर नहीं आती ?'

'आती है ।'

'कौन सी ?'

'गोल गुथने किड्स की ।'

'सिल्ली ! तू एकदम इस दुनिया की है ।'

'और तू किस प्लैनेट की है जरा सुनूं तो !'

'तुझे मैंने कहा था न — मैं सब नहीं बता पाऊंगी । शायद कह नहीं पाऊंगी ठीक-ठीक । शायद मेरी बात से यह लगे कि मैं जी से नफरत करती हूं लेकिन ऐसा भी नहीं है ।'

'नफरत ? कल ही तो तुम प्रेम के खातिर अपने को कुर्बान करने के फिल्मी डायलाग बोल रही थीं ।'

'हां सिम्मी ! मैं जीवन जीना चाहती हूं — इस तमाशे से ऊब गई हूं ।'

'तू जो जीवन जी रही है वह भी एक सत्य है इसे नाटक कहना ठीक नहीं ।'

'हां, मिथ्या को सत्य मानने की हमारी आदत-सी हो गयी है । ठीक उसी तरह जैसे अपने बिछाये जाल में हाथ-पैर पटकने को भी लोग संघर्ष कहने लगते हैं ।'

'तुम्हारे जीवन में मिथ्या क्या है ? तुमने दुःख झेले । यह सत्य नहीं है क्या ?'

'वह दुःख वैसा नहीं था जैसा नगीने को मार खाकर हुआ होगा ।'

'स्थितियां दो हैं । इनके बीच तुलना ठीक नहीं ।'

'नहीं, सिम्मी, दुःखों के बीच तुलना नहीं, मैं स्थितियों की बात ही कर रही हूं ।'

'छोड़ यार, यह दुःख तो याद करने से और भी दुःख देता है । इसे भूलने में ही कुशल है ।'

'भूलना इतना आसान नहीं ।'

'मैं तो भूली रहती हूं ।'

'मैं नहीं मानती ।'

'देख, तुझे मैंने कभी कहा कुछ ! तू मेरे कितने करीब रही है, लेकिन मैंने कभी कहा कुछ....'

'किस बारे में ?'

'पापा का व्यवहार ।'

'पापा का ?'

'हां, रूना । पापा का । मम्मी को मैं कुछ नहीं कहती । उनसे मैं एक्सपेक्ट ही नहीं करती । वे जितना करती हैं उसे ही मैं बहुत मान लेती हूं । लेकिन पापा मम्मी से ज्यादा सौतेले बने रहते हैं । मुझे तो कभी-कभी लगता है मम्मी को खुश करने के लिए मुझे नेगलेक्ट करते हैं ।'

'.........'

'मैं पापा के सारे रूखे व्यवहार सह लेती हूं,

लेकिन अपनी मां की आलोचना सुनने पर लगता है पापा का मुंह नोच लूं। जानती हो एक दिन मैं बैठी कुछ पढ़ रही थी। वे बाहर से आकर बैठे और पानी मांगा। वहां मेरी स्टेप-सिस्टर भी थी – वह छोटी-सी है, दौड़ गयी पानी लाने। जानती हो पापा ने उसके हाथ से गिलास लेकर पानी पीते-पीते मेरी मां को याद किया। अपनी नयी बीबी की खुशामद में कहा कि 'चलो, चन्दा, अच्छा हुआ कि तुम्हारे बच्चे तुम्हारी तरह फुर्तीले हुए। सीमा की मां तो अपने आलस का एक नमूना छोड़ गयी।'

'तेरे सामने कहा ?'

'और क्या ?'

'तूने कुछ कहा नहीं ?'

'नहीं। अब बोल कितना याद रक्खूं इन बातों को! जितना सम्भव होता है बाहर रहती हूं। बस कट जाता है समय।'

'यह भूलना नहीं हुआ, सिम्मी। यह तो भागना है। यादों से, कटु बातों से, अपनों से – भागने से भी तो नहीं बनता।'

'यह तुम कहती हो !'

'हां मैं कहती हूं – मैंने अपने मां-बाप से अलग हो कर सुदीप्त का हाथ थामा था – दरअसल एक आश्रय छोड़ कर दूसरे का सहारा चाहा था। और जब सुदीप्त के घर से ताड़ना मिली तब भी मेरे अपने पैर मेरा बोझ उठा सके थे ? उठा पाते तो मां-बाप के आश्रय में नहीं लौटती।'

'तुम्हारा वहां लौटना तुमसे भी ज्यादा उनके हक में था – एक कमाऊ बेटी की [illegible]'

'वह मेरा अपना बहाना है, जैसे अभी-जी के लिए, जी के साथ रहना।'

'यहां तो रिश्ते बराबरी के हैं।'

'हां, दोनों ही पराश्रित।'

'यह इन्टर डिपेन्डेन्स तो मनुष्य के समाज की खूबी है ही।'

'खूबी ? हो सकती है। मुझे तो रास नहीं आती।'

'तो ! क्या कहीं अकेले रहने से कोई सोशल इन्टर एक्शन से बच सकता है?'

'सोशल इन्टर एक्शन से बचने की कोई जरूरत नहीं है। बचने की जरूरत है इनर लेमनेस – अपनी आंतरिक विकलांगता से।'

'रूनी ! मैं तुम्हारी तरह फिलासफर नहीं हूं।'

'मुझे शायद खुश रहना नहीं आता।'

'तुम्हारी तरह खुशनसीबी पर सचमुच, दुःखी होना....'

'खुशनसीबी !'

'और नहीं तो क्या ! सुन्दर हो, बुद्धिमती हो, स्वावलम्बी हो, जी की तरह दासानुदास साथी है, समाज है, इज्जत है....'

'इज्जत ! मैं खुद अपनी इज्जत नहीं कर पाती हूं – बार-बार यह सवाल मेरे मन में उठता है, मैं अपना दुरुपयोग क्यों कर रही हूं !'

'उत्तर भी मिलता होगा ?'

'मिलता तो उबर जाती।'

'जब सवाल अपने दुरुपयोग का है तो तुम्हारे अंदर का वही प्रश्नकर्ता कभी

सदुपयोग का सुयोग यदि बना देगा ।'

'उसी प्रतीक्षा में हूं, सिम्मी ! मैं दिन काट रही हूं, सही समय की बाट जोह रही हूं। लेकिन डरती हूं....'

'किससे ?'

'किसी दूसरे से नहीं, खुद अपने से कि कहीं सही समय सामने आकर चला जाय और मैं मूढ़-सी बैठी रह जाऊं।'

'मेम साब !'

'कौन ?'

'मैं सीसअली ।'

'क्या है ?'

'कोई मिलने आयी हैं।'

'भेज दो ।'

दो पल बाद सुतपा सकुचाती हुई अंदर आयी। होंठों पर पपड़ी जमी थी। उसने मुस्कुराने की कोशिश की।

'तुम सुप्पी ! कहो कैसी हो ?'

.... सुतपा ने मूक नमस्ते किया और आंखों में भरी वेदना के साथ ही सवाल भरी नजर सीमा पर डाली।

'यह मेरी सहेली है, सीमा ।'

सुतपा ने सीमा को भी नमस्कार किया और रूना के समीप बैठ गयी।

'सब ठीक तो है, सुप्पी ।' सुतपा के पीले पड़े मुख को देख कर रूना ने पूछा।

अब तक सुतपा ने एक शब्द भी नहीं कहा था। शायद उसका कंठ अवरुद्ध था। शायद वह शब्द नहीं जुटा पा रही थी। शायद उसमें कहने का साहस न था। वह सिर झुकाये बैठी रही।

उसकी असुविधा भांप कर सीमा न अपने बाहर जाने की बात चलायी। रूना ने सिर्फ इतना पूछा - 'कब तक लौटोगी ?'

'पत्रकारों से यह नहीं पूछते ।'

'अच्छा यह बताओ कब तक निश्चय ही नहीं लौटोगी ?'

दोनो सहेलियां हंसने लगीं। सूतपा के कानों तक यह हंसी पहुंची तो वह और अनमनी हो गयी। उसकी पलकें उठीं, गिरीं और होठ कांप कर रह गये।

**[क्रमशः]**

□

एक बार पंडित नेहरू कहीं कार में जा रहे थे कि रास्ते में कुछ डाकुओं ने उनकी कार रोक ली। वास्तव में उन्होंने उसे एक सेठ की कार समझा था, जिसे लूटने के लिए घात जमाये बैठे थे।

पंडितजी ने कार में से निकल कर कहा- 'मैं जवाहरलाल नेहरू हूं.... कहिये, क्या चाहिये ?' डाकुओं को हैरानी हुई। उन्होंने नेहरूजी को प्रणाम किया और रुपयों से भरी एक थैली पेश की।

पंडित नेहरू ने थैली ले ली और कार में बैठ कर रवाना हो गये। बाद में जब उन्हें पता लगा कि वे डाकू थे, तो बोले- 'तब तो मैं डाकुओं का भी डाकू साबित हुआ।'

**— डॉ. गोपालप्रसाद 'वंशी'**

□

# 'श्रीकृष्ण की दिव्यता का अधिकाधिक प्रचार करना'

– रामानंद सागर

(दीपा गहलौत को 'स्क्रीन' के लिए दिया गया साक्षात्कार)

**टी.वी सीरियल 'रामायण' की विश्वव्यापी तथा अतिशय लोकप्रियता के पश्चात् सागर प्रॉडक्शन्स का सारा निर्माण-संगठन और विपणन-साधन अब अपनी नवीनतम वीडियो कृति 'कृष्ण' को महानतम सफल बनाने के महत् कार्य में जी-जान से जुटा हुआ है। अदम्य शक्ति और उत्साह से भरपूर ७३ वर्षीय रामानंद सागर इस महान सीरियल का निर्देशन करने के अतिरिक्त उसके सारे कार्यकलापों पर पूरी नज़र रखे हुए हैं।**

**प्रश्न :** क्या 'कृष्ण' सीरियल के निर्माण की कल्पना आपके मन में 'रामायण' की लोकप्रियता के बाद आयी, या अन्य कारणों से आयी?

**उत्तर :** 'रामायण' के निर्माण की कल्पना मेरे मन में पंद्रह से अधिक वर्षों से थी। 'रामायण' के स्वाभाविक उपनिगमन के रूप में मेरे मन में 'भागवत' के निर्माण की कल्पना आयी। तत्वज्ञान की दृष्टि से देखा जाये तो यह विकास भी स्वाभाविक था। 'महाभारत' का जन्म 'रामायण' के जन्म के बाद हुआ। 'महाभारत' के सृजन के पश्चात्, वेदव्यास अत्यंत विक्षुब्ध थे। तब, नारद ने उनसे कहा कि 'महाभारत' में उन्होंने अनेक 'अधर्मों' का स्पष्टोच्चारण किया है, जिसका दुरुपयोग अनेक स्वार्थी व्यक्तियों द्वारा 'अधर्म' के विरुद्ध करने की संभावना है। नारद ने उन्हें बताया कि स्वयं की, तथा सारे जगत की शांति के उद्देश्य से उन्हें 'अधर्म' का परित्याग कर, धर्म और भक्ति की ओर प्रवृत्त होना चाहिये। कारण, सनातन सत्य की प्रतीति भगवान और भक्ति की शरण में जाने पर ही हो सकती है।

'महाभारत' की रचना के बाद वेदव्यास के सुपुत्र ने, जो स्वयं उन्नयित महापुरुष थे, अपने पिता से पृथक रहना आरंभ कर दिया था, क्योंकि उन्हें अपने पिता की रचना उपरोक्त कारण से पसंद नहीं आयी थी। किंतु जब वेदव्यास ने 'भागवत महापुराण' की रचना पूरी की, तो वे दुबारा अपने पिता के पास लौट आये। किसी भी मानव ने उनसे पूर्व ऐसी महानतम रचना का सृजन नहीं

किया था। तो, 'रामायण' के पूरा हो जाने के बाद, मेरे आगे अगला कदम 'भागवत' के सृजन की तैयारी करना था।

मैंने इतने वर्षों से 'रामायण' का निर्माण-कार्य आरंभ नहीं किया था, कारण मैं उसे सिर्फ तीन घंटों में पूरा नहीं करना चाहता था। 'वीडियो-प्रौद्योगिकी' के आगमन के पश्चात्, मैंने 'रामायण' के निर्माण का काम हाथ में लिया, क्योंकि अब मेरे लिए उसका रूपान्तर प्रस्तुत करना सुलभ और सुगम था, जिसे आम आदमी एक पुस्तक के समान अपने पास संभाल कर रख सके।

**प्रश्न** : आपका तात्पर्य है कि क्या 'रामायण' का निर्माण मूलतः दूरदर्शन (टी.वी.) के लिए नहीं किया गया था?

**उत्तर** : नहीं, नहीं, वह मेरी अपनी कृति थी। आप इसे 'दिव्य अन्तर्ज्ञान' कह सकती हैं, या कोई और नाम दे सकती हैं। लेकिन जब मुड़कर देखता हूं, तो पाता हूं कि 'रामायण' को एक साहित्यिक कृति के रूप में फिल्मी रूप प्रदान करने की प्रेरणा मुझे किन्हीं अज्ञात दिव्य शक्तियों से प्राप्त हुई थी। अपने विगत जीवन पर दृष्टिपात करने पर मैं यह भी पाता हूं कि फिल्मों में मैंने जो कुछ किया, अच्छा, बुरा या बेकार, वह सब मुझे अपने जीवन के मुख्य उद्देश्य 'मिशन' की पूर्ति का पूर्वाभ्यास मात्र था, जिसे ये दैवी शक्तियां मुझसे मेरे जीवन के अंतिम काल में पूरा कराना चाहती थीं। मुझे पता नहीं कि मुझे इस पृथ्वी पर और कितने काल तक रहना है, लेकिन इतना जरूर पता है कि पिछले पन्द्रह वर्षों से मैं 'रामायण' और 'भागवत' की तैयारियों में लगा रहा। 'भागवत के संपूर्ण निर्माण की मेरी मनोकामना है, लेकिन मेरे जीवन के ७३ वर्ष पूरे हो चुके हैं, और मैं नहीं जानता कि भविष्य में क्या होगा।

आपको विदित ही होगा कि 'भागवत' के प्रथम नौ सर्गों में सब अवतारों की कथा सुनायी गयी है। इस कथा के अंत में, वेदव्यास ने सोलह कलाओं से युक्त, संपूर्ण अवतार भगवान कृष्ण के अवतार की कथा सुनायी है। राम मात्र बारह कलाओं से युक्त थे। कृष्ण ईश्वरत्व की संपूर्ण-समग्र सत्ता के प्रतीक हैं। यदि 'कृष्ण' के निर्माण के पश्चात्, मुझे समय मिला तो मैं शेष नौ अवतारों के सृजन की कथा के निर्माण-कार्य को हाथ में लूंगा। लेकिन, सबसे पहले मुझे 'कृष्णावतार' की प्रस्तुति करनी है।

**प्रश्न** : कृष्णावतार की शुरुआत आप कहां से करेंगे — कृष्ण-जन्म से?

**उत्तर** : कृष्ण के जन्म से भी पहले से तो, कथा का आरंभ उस समय से होगा, जब विधाता द्वारा यह निश्चय होता है कि गोकुलधाम में कृष्ण और राधा अवतरित होंगे। वैसे, कृष्ण सर्वव्यापी हैं, मगर उनके सर्वव्यापी होने के यह अर्थ नहीं हैं कि वे किसी विशेष अवसर पर या विशिष्ट रूप में अवतरित नहीं हो सकते। उनके इस अवतार की सब लीलाओं को चित्रित करने में तो बहुत समय लग जाता, और तब भी वे

सबकी सब प्रस्तुत नहीं हो पाईं, इसलिए अपने विपणन विभाग के परामर्शानुसार, मैं इसे ७८ 'इपिसोड्स' में समाप्त कर रहा हूं, 'रामायण' भी इतने ही 'एपिसोड्स' में पूरी हुई थी।

**प्रश्न** : कृष्ण और उनके जीवन-दर्शन के बारे में अनेक व्याख्याएं और निर्वचन उपलब्ध हैं। उनके बारे में आपके क्या मत हैं?

**उत्तर** : इस बारे में कोई विवाद नहीं है। बात श्रद्धा की है, और श्रद्धा को तर्क के मार्ग से नहीं जाना और समझा जा सकता। यदि कोई ईसाई यह मानता है कि ईसा भगवान के पुत्र थे, तो किसी को इस बारे में प्रश्न उठाना उचित नहीं माना जा सकता। ईश्वर के संबंध में जो किंवदंतियां प्रचलित हैं, वे भगवान के पुत्रों, संदेशवाहकों और दूतों आदि के बारे में ही हैं, और सब की यही सीख है कि उनका जन्म मानव-जाति के उत्थान के लिए ही हुआ था।

एक उदाहरण से यह बात आसानी से आपकी समझ में आ जायेगी। मान लीजिए एक बड़ा परिवार है, और वह विकसित होते-होते सारे विश्व में फैल जाता है, और इस विशाल परिवार के सदस्य दुनिया के कोने-कोने में जाकर अपनी-अपनी कहानियां सुनाते हैं। मगर, ये सब कहानियां समान नहीं होंगी, भिन्न-भिन्न रूपों में वर्णित होंगी। गांधीजी के बारे में भी भिन्न-भिन्न कथाएं और किंवदंतियां प्रचलित हैं, और वे एक दूसरे से मेल नहीं खातीं। किंतु, भिन्नताओं के बावजूद, उनका जीवन-दर्शन समान ही है।

मैं कृष्ण के बारे में सीरियल बना रहा हूं क्योंकि मेरी कृष्ण में गहरी आस्था है। उस बारे में बुद्धिजीवियों की शैली में विवाद करने की कोई आवश्यकता नहीं है। जब तक आप कृष्ण में आस्था रखते हैं, तब तक वे आपके लिए भगवान हैं, नहीं तो नहीं हैं। इन दोनों मान्यताओं के बीच धुंधलापन कहीं भी नहीं है।

श्रीकृष्ण और राम के बीच अनेक अंतर हैं। राम ने कभी यह दावा नहीं किया कि वे भगवान के अवतार हैं। उन्होंने कोई चमत्कार भी नहीं किया। उन्होंने अपने को एक मानव ही माना। लेकिन, कृष्ण ने इस तथ्य को कभी नहीं छिपाया कि वे अवतार ही हैं। अपने जन्म से पहले भी, उन्होंने अपनी मां के सामने पूरे आकार में प्रकट होकर यह घोषणा की थी कि वे मनोनुकूल पुत्र पाने की मनोकामना की पूर्ति के लिए इस रूप में प्रकट हुए हैं। जब वे यशोदा के सामने प्रकट होते हैं, तो वे अपना मुंह खोलकर, समस्त ब्रह्मांड का दर्शन कराते हैं।

अतः, कृष्ण भगवान हैं, और यह सीरियल उन व्यक्तियों के लिए बनाया गया है, जिनकी कृष्ण में भगवान के रूप में आस्था है। इस सीरियल के माध्यम से मैं मानवता को ऋषियों का संदेश प्रेषित करना चाहता हूं। रामायण, महाभारत, भागवत आदि धार्मिक महाकाव्य हमें जीवन का संदेश प्रदान करते हैं। सबसे महत्वपूर्ण

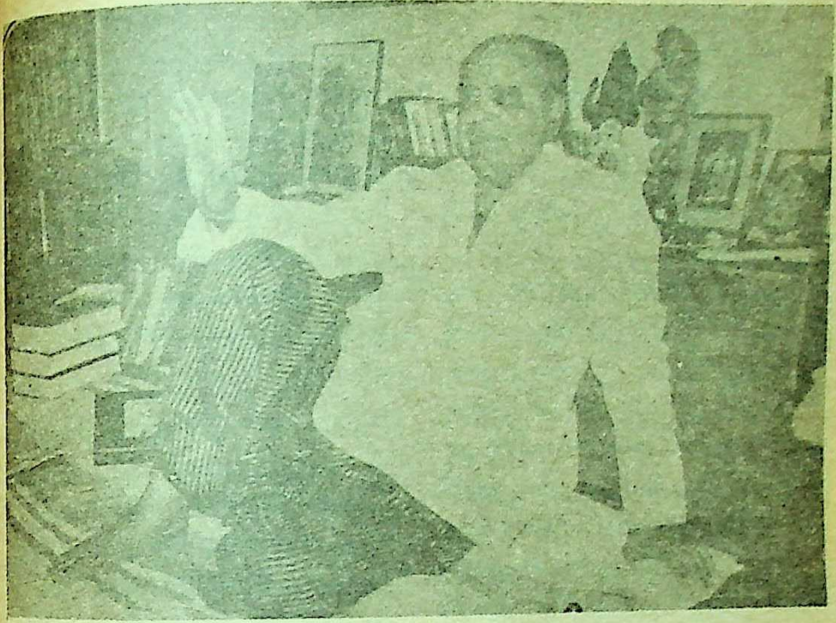

बात यही है, और मैं इसी बात को घर-घर तक पहुंचाना चाहता हूं।

**प्रश्न** : लेकिन अधिकांश दर्शक ऐसे सीरियलों को मनोरंजन-मात्र मानते हैं।

**उत्तर** : नहीं। मेरा मानना है कि दर्शकों के मन में मनोरंजन की भावना कम, और श्रद्धा की भावना अधिक होती है। सिर्फ शहरों में रहने वाले लोग ही इसे मात्र मनोरंजन मानते हैं। जब 'रामायण' दिखायी जाती थी, तो लोग टी.वी. के कमरे में प्रवेश करने से पूर्व जूते उतारकर पांव धोया करते थे। बच्चों तक को 'रामायण' देखने से पूर्व स्नान करने की आदत हो गयी थी।

**प्रश्न** : लेकिन क्या 'रामायण' देखने के बाद उनकी जीवन-शैली या व्यवहार में कोई परिवर्तन आया?

**उत्तर** : ऐसा एकदम नहीं होता, लेकिन सीरियल का संदेश धीरे-धीरे दर्शक के मानस में बैठता जाता है। हर जीवन-दर्शन का यही लक्ष्य होता है। भले ही सब दर्शक 'रामायण' के संदेश को मन में न बैठा पाये हों, मगर इससे यह नतीजा तो नहीं निकाला जा सकता कि राम के आदर्शों को दिखाने की जरूरत ही नहीं है। भारत में जन्म लेने का एक लाभ यह है कि बचपन से ही बच्चों के मन में अच्छे संस्कार जन्म लेकर पनपने लगते हैं। उनका, प्रभाव कभी न कभी

उनके जीवन पर अवश्य पड़ता है।

मैं 'रामायण' को मात्र धार्मिक कृति नहीं मानता। इसमें जिस धर्म की सीख दी गयी है, वह धार्मिक कृत्यों से नहीं, कर्तव्य से संबंधित है।

**प्रश्न** : लेकिन उसे एक धार्मिक मसला बना लिया गया।

**उत्तर** : देखिये, 'रामायण' और 'महाभारत' ने विदेशों में रहने वाले नयी पीढ़ी के भारतीयों के मन में आत्म-गौरव की जो भावना पैदा की, उस पर विचार कीजिए। पहले, ये लोग अपने मित्रों के घर में बाइबिल देखते थे, जिससे उनका मानस सीधा प्रभावित होता था। अब जब वे देखते हैं कि उनके विदेशी मित्र स्वयं उनके घर 'रामायण' और 'महाभारत' देखने आते हैं, तो उनके मन गर्व से भर जाते हैं। विदेशों में रहने वाले अनेक भारतीय अभिभावकों ने हर्षोद्‌गार व्यक्त करते हुए मुझसे कहा, 'इन दोनों सीरियलों के कारण हमारे बच्चों को 'डिस्को संस्कृति' से अपनेआप मुक्ति मिल गयी, और अब वे इन सीरियलों को ध्यान से ही नहीं देखते, उन्हें समझने का भी ईमानदार प्रयास करते हैं।'

इन दोनों सीरियलों ने राष्ट्रीय भावात्मक एकता को सुदृढ़ बनाने में बड़ी सहायता की। कारण, पहली बार राष्ट्र की जनता ने ऐसे सीरियलों को देखा, जिसमें हिंदू, मुस्लिम, ईसाई सबने समान रुचि दिखायी। इतना ही नहीं, उन सबने इन दोनों सीरियलों से बहुत कुछ सीखा भी। ऊपर से देखने पर इस प्रभाव को भले ही महत्वहीन मान लिया जाये, लेकिन इसमें कोई संदेह नहीं कि लोगों पर जो असर हुआ, वह काफी दूरगामी था। उनके मानस में अदृश्य रूप से नये और विधायक विचारों के बीज बोये, जो एक-न-एक दिन अवश्य पल्लवित होंगे। और यदि 'रामायण' और 'महाभारत' सिर्फ धार्मिक ही होते, तो पाकिस्तान और बंगलादेश में इतने अधिक लोकप्रिय न होते।

**प्रश्न** : क्या 'कृष्ण' के निर्माण के समय भी आपका दृष्टिकोण वही रहेगा, जो 'रामायण' के निर्माण के समय था?

**उत्तर** : मेरा दृष्टिकोण आरंभ से ही उन शाश्वत व मूलभूत सनातन सत्य व जीवन-मूल्यों पर अपना ध्यान केंद्रित करने का रहा है, जो समस्त मानव-जाति की बपौती हैं। हम मूलभूत आदर्शों और जीवन-मूल्यों की बात कर रहे हैं। हमारे ऋषियों ने हमारे धार्मिक ग्रंथों की रचना करते समय सदा स्मरण रखा था कि वे महज एक संदेशवाहक की भूमिका ही अदा कर रहे हैं। मैं भी इस बात को बिलकुल नहीं भूला। लेकिन, मैं सिर्फ़ एक संदेशवाहक ही नहीं हूं एक रहस्यमयी दैवी शक्ति मेरे माध्यम से इस सारे कार्य में सक्रिय है।

**प्रश्न** : क्या आपका सीरियल् महाभारत की घटनाओं को भी छुयेगा, कारण कृष्ण महाभारत घटनाओं से बहुत अधिक संबंधित हैं?

**उत्तर** : कृष्ण के जीवन में महाभारत की घटनाओं का स्थान इतना अधिक नहीं है, जितना प्रायः समझा जाता है। एक दो प्रसंग, जैसे द्रौपदी चीरहरण' और 'गीता' आदि ही ऐसे हैं, जिन्हें नहीं छोड़ा जा सकता था। वैसे, महाभारत के अनेक पात्र सीरियल में आते-जाते रहेंगे, क्योंकि पांडवों से कृष्ण के घनिष्ठ संबंध थे। चूंकि 'महाभारत' और 'भागवत' दोनों ही वेदव्यास की ही कृतियां हैं, इसलिए उन्होंने दोनों की घटनाओं को बहुत अधिक मिश्रित नहीं होने दिया है।

**प्रश्न** : तो, आपका मुख्य स्रोत 'भागवत' है?

**उत्तर** : 'भागवत' भी है, और 'ब्रह्मावर्त पुराण' भी। इसके अतिरिक्त 'भागवत' का तीसरा स्रोत है – 'इस्कॉन के संस्थापक भक्तिवेदांत प्रभुपाद द्वारा 'भागवत' का किया गया अंग्रेजी रूपान्तर। 'भागवत' के विषय में अन्य विचारकों ने जो कुछ कहा और लिखा है, उससे भी मुझे बहुत सहायता मिली। दृश्यों के लिए सबसे अधिक प्रेरणा हमें सूरदास, मीराबाई, विद्यापति, चंडीदास, जयदेव और रसखान प्रभृति संतों की रचनाओं से मिली। बालकृष्ण के जीवन की अनेक घटनाओं का सूरदास ने बड़ा ही रसपूर्ण वर्णन किया है, जिससे हमें अनेक दृश्यों का छायांकन करने में बड़ी सहायता मिली। सूरदास के अतिरिक्त अन्य भक्तों ने भी कृष्ण के जीवन की घटनाओं का जैसा सुमधुर वर्णन अपनी रचनाओं में किया है, उन्होंने भी कई दृश्यों में जान फूंकी है। उदाहरणार्थ, जयदेव ने अपनी एक रचना में कृष्ण द्वारा गोपियों को लिखे गये एक पत्र तथा उसके उत्तर का उल्लेख किया है। ऐसी एक धारणा प्रचलित है कि जब कृष्ण बांसरी बजाना आरंभ करते थे, तो गोपियां अपने घरबार छोड़कर उनकी ओर धाव ने लगती थीं। 'भागवत महापुराण' में स्पष्ट लिखा है कि वस्तुतः गोपियों की देह उनके घरों में ही रहती थी, मिलन होता था कृष्ण और गोपियों की आत्माओं का। इस प्रतीक-कथा के माध्यम से आत्मा और परमात्मा के मिलन की सुंदर कल्पना की गयी है।

**प्रश्न** : आपने अपने कृष्ण का चुनाव कैसे किया?

**उत्तर** : कृष्ण का चुनाव कोई कैसे करता है? हम कृष्ण की भूमिका के इच्छुक लोगों से मिले, उनकी विशेषताओं और क्षमताओं की बारीकी से जांच की। और, इस परीक्षण के दौरान यह प्रतीक्षा करते रहे कि हमें जिस आदर्श कृष्ण के आगमन की प्रतीक्षा है, वह एक न एक दिन अवश्य हमारे सामने प्रकट हो जायेंगे। बहुत से परीक्षार्थियों से मिलकर, आरंभ में मैंने १०० उम्मीदवारों को चुना था। अंतिम चुनाव के लिए हमें बहुत देरी हुई। इस बीच, हमने कृष्ण के बिना ही शूटिंग आरंभ कर दी। अंततः हमें अपनी पसंद के कृष्ण से सर्वदमन के रूप में भेंट हुई।

**प्रश्न** : अभी तक कितनी शूटिंग हो चुकी है?

**उत्तर** : हमारे पास पांच-छह 'एपिसोड्स' के लायक सामग्री मौजूद है। हम 'पृथ्वी' से 'गोलोक' तक आ गये हैं। एक प्रसंग में कंस को भी दिखाया जाता है। देवकी के विवाह के दृश्य भी लिये जा चुके हैं। आकाशवाणी का दृश्य अभी तक अधूरा ही फिल्माया गया है। इन सब दृश्यों में हमें 'स्पेशल एफेक्ट्स' का प्रयोग करना पड़ा। 'कृष्ण' के लिए हमारे खास यंत्र आयातित किये हैं, जिसमें नवीनतम 'हाई-बैण्ड-इक्यूपिमैन्ट' का समावेश है। हमारे पास सारे यंत्रादि अन्तरराष्ट्रीय स्तर के हैं।

पात्रों की भूमिकाओं के चयन में भी हमें कई कठिनाइयों का सामना करना पड़ा। मुझे वासुदेव के योग्य कोई अभिनेता नहीं मिल रहा था। किसी भी पात्र को कृष्ण के पिता के लिए नहीं चुना जा सकता था। चूंकि हमें कुछ दृश्यों को फिल्माने की भी जल्दी थी, इसलिए कई दृश्य वासुदेव के बिना ही फिल्माये गये। इसीलिए हमें कंस के दरबार को वासुदेव के विना ही फिल्माना पड़ा। जब हमें वासुदेव की भूमिका के योग्य पात्र मिल गया, तो हमने उसके दृश्यों को अलग से फिल्माया। वासुदेव के रूप में मुझे जब एक नया अभिनेता मिला, तब तक ऐसे अनेक दृश्य जिनमें उसकी आवश्यकता थी, फिल्माये जा चुके थे।

देवकी के रूप में हमें एक नयी अभिनेत्री मिली। 'रामायण' के पात्रों में से हमने सिर्फ एक अभिनेता – अरविंद त्रिवेदी को लिया, जिसने 'रामायण' में रावण की भूमिका की थी, और 'कृष्ण' में कंस की भूमिका कर रहा है।

भूमिकाओं के लिए उपयुक्त कलाकार का चुनाव करते समय विश्वास के अलावा, उसकी पात्र-योग्य नैसर्गिक प्रवृत्ति को भी ध्यान में रखना पड़ता है। यदि इन दोनों बातों का ध्यान रखा जाये, तो अक्सर कलाकार को पहली बार देखते ही पता चल जाता है कि चुनाव सही हुआ है।

**प्रश्न** : ऐसी अफवाहें सुनने में आयी हैं कि आखिरकार दूरदर्शन को 'कृष्ण' को धारावाहिक रूप से दिखाना ही पड़ेगा। और, इस मामले में भारतीय जनता पार्टी शासन पर दबाव डाल रही है। यह बात कहां तक सच है?

**उत्तर** : मुझे इस बारे में कोई जानकारी नहीं है। लेकिन मैंने अपनी आशाओं का परित्याग नहीं किया है। मैंने अपनी अर्जी दाखिल कर दी है, और अभी तक अधिकारियों ने 'ना' नहीं कहा है। लेकिन अपने व्यावसायिक जीवन के इस दौर में वे मुझसे यह आशा नहीं कर सकते हैं कि मैं उनके पीछे-पीछे भागूंगा। उल्टे, उन्हें मेरे पीछे भागना चाहिये। इस सीरियल की तैयारी मैंने अपनी प्रतिबद्धता के कारण की है। कभी-कभी मुझे लगता है कि मेरे पास प्रतीक्षा के लिए समय नहीं है।

यदि 'कृष्ण' को दूरदर्शन ने दिखाया, तो यह जीत आम जनता की होगी। कारण देशभर के लोग इसे छोटे परदे पर देखना चाहते हैं। देखना यह है कि जन की यह

इच्छा पूरी होती है या नहीं। मैं चाहता तो इस बारे में सारे देश का भ्रमण कर, आंदोलन करके अपने पक्ष में प्रबल जनमत तैयार कर सकता था। लेकिन, ऐसे आंदोलनों में मेरा विश्वास नहीं है। मैं यह घोषणा कर चुका हूं कि यदि दूरदर्शन ने मुझे इसे प्रदर्शित करने की अनुमति नहीं दी, तो भी मैं 'कृष्ण' का निर्माण करूंगा। तब लोगों ने मेरी बात पर विश्वास नहीं किया था, लेकिन मैंने अपने वचन का पालन किया। लोगों ने जब कहा था कि मैं पागल हो गया हूं कि दूरदर्शन के सहयोग के बिना आठ करोड़ की योजना को आरंभ कर रहा हूं। लेकिन, 'कृष्ण' का निर्माण मेरा 'मिशन' है मेरे शेष जीवन का मुख्य उद्देश्य है। मुझे इस 'मिशन' को पूरा करना ही है। यह एक दिव्य मिशन है, और यदि मुझे इसमें सफलता प्राप्त होती है, तो वह भगवान की कृपा से अवश्य होगी। यदि भगवान की कृपा हुई तो कोई सरकारी विभाग उसके मार्ग में नहीं आयेगा। यदि उन्हें मेरी अर्जी स्वीकृत करनी है, तो वह अवश्य हो जायेगी। मैंने अपना फर्ज पूरा कर दिया है। मैं संबंधित मंत्री महोदय तथा मेरी अर्जी से जुड़े अधिकारियों से कई बार मिल चुका हूं। मैं बारबार उनसे मिलने नहीं जा सकता। मुझे अपना काम पूरा करना है। यदि इस बारे में देश में जनमत संग्रह कराया जाये, जो मुझे पूरा विश्वास है कि ९५ प्रतिशत लोग दूरदर्शन पर कृष्ण को देखना पसंद करेंगे। यदि किसी को यह अहसास हो जाये, तो मुझे विश्वास है कि दूरदर्शन के लोग भी इस संबंध में कुछ करने को बाध्य हो जायेंगे। □

**'नवनीत हिंदी डाइजेस्ट' की चंदे की दरें**

* **एक प्रति** (भारत में) रु. ६.००

**भारत में (साधारण डाक से)**

* एक वर्ष : ६५ रु.; दो वर्ष : १२० रु.; तीन वर्ष : १७० रु.; पांच वर्ष : २९० रु.; दस वर्ष : ५६० रु.

**विदेशों में समुद्री मार्ग से (एक वर्ष के लिए)**

* पाकिस्तान, श्रीलंका, रु. १२०; अन्य देश रु. १८५

**विदेशों में हवाई डाक से (एक वर्ष के लिए)**

* प्रत्येक देश के लिए रु. ३१०

* बम्बई से बाहर के चेक भेजने वाले रु. ७ अधिक भेजें।

**– व्यवस्थापक, नवनीत हिंदी डाइजेस्ट, भारतीय विद्या भवन, बम्बई - ४०० ००७.**

# निर्णय

□ प्रोफेसर के.एल. कमल

महेशदत्त अब बूढ़े हो गये हैं। आयु तो पैंसठ के आस-पास ही होगी लेकिन झुर्रियों से भरा चेहरा, रुई जैसे सफेद बाल, झुके कन्धे, सूखे होंठ, मलिन वस्त्र इस बात की घोषणा करते हैं कि उनसे मिलने यमराज बिना 'अपाइन्टमेन्ट' किए कभी भी आ सकते हैं।

जिसे जवानी में तिरस्कृत एवं उपेक्षित किया, वह अब उनका एक मात्र सहारा है। उनका पीक-दान उठाती है, शरीर पर मालिश करती है, आवश्यकता पड़ने पर मल-मूत्र उठाती है और फिर भी उनकी झिड़कियां सुनती है, डांट खाती रहती है, रूखा-सूखा खाकर ठंडा पानी पीकर राहत की साँस लेती है, पति की बीमारी में इतनी मशगूल रहती है कि उसे अपने ज़ीर्ण-शीर्ण शरीर और छाया की तरह लगी रुग्णता का ख्याल भी नहीं आता – यह उनकी पत्नी शांति है।

पूरे मकान में इन दोनों के अलावा कोई भी नहीं रहता। सप्ताह के सप्ताह बीत जाते हैं, कोई मिलने तक नहीं आता। बड़ा बेटा रमेशदत्त, नगर पालिका में हेड क्लर्क है, छोटा बेटा गणेशदत्त, पुलिस में हे कांस्टेबिल है, मंझला बेटा रामदत्त, स्कू मास्टर है। दोनों बेटियां ससुराल में हैं।

कुछ दिनों पहले महेशदत्त को 'हार्ट अटैक हो गया था। तब जरूर एक-एक कर क लोग मिलने आ गये थे। बड़ी बेटी सुजाता अलबत्ता ससुराल वालों ने नहीं भेजा था। कभी-कभी पड़ोस का डाक्टर बुलाने पर आ जाता था लेकिन अन्य बीमारियों में न तो कोई डॉक्टर आता है और न कोई बेटे-बहू।

रात के करीब नौ बजे होंगे कि अचानक घंटी बजी। यह घंटी कई महीनों बाद बजी होगी। महेशदत्त की पत्नी शांति ने किवाड़ खोले। सामने बेटी सुजाता हाथ में अटैची लिये खड़ी थी।

'बेटी, इतनी रात गये और अकेली कैसे?' शांति ने कहा। सुजाता की आंखों से अश्रुधारा इसके उत्तर में बह चली।

पिता को सुजाता का इस प्रकार आना तत्काल ही समझ में आ गया, सुजाता के बड़े मुश्किल से उसने पीले हाथ किये थे। मुँह मांगा दहेज न दे सकने के कारण, वह उसके योग्य घर और वर नहीं ढूंढ पाया था। सुजाता

एक सुन्दर, सुशिक्षित एवं महत्वाकांक्षी युवती थी। उसने प्रथम श्रेणी में बी.ए. पास किया था। लेकिन बाप की गरीबी और परेशानी उसके सुनहले भविष्य की बाधा थी। एक मद्यपी ससुर, कर्कश सास और मरियल पति उसकी किस्मत में थे। उसकी ससुराल टूटी-टूटी, उखड़ी-उखड़ी और बुझी-बुझी-सी थी, जिसमें प्रेम, वात्सल्य, मर्यादा, सहयोग, उत्सर्ग, लज्जा, सहिष्णुता, स्नेह जैसे पारिवारिक गुण गायब थे।

सास-ससुर की निरन्तर यातना सुजाता को असह्य हो चली थीं। बात-बात पर तानाकशी, उसके माँ-बाप को दी जाने वाली गालियां, पर्याप्त दहेज न ला सकने पर मारपीट, खाने-पीने की चीजों को छुपाकर ताले में रखा जाना अब सीमा को पार कर चुका था। सुजाता पति के समक्ष अपनी वेदना रखती थी, रात-रात भर रोती थी, लेकिन पति में न तो सामर्थ्य ही था और न समझ ही। वह तो पुरुष के केवल अंग-प्रत्यंग लिये मिट्टी का माधौ था, बिना पुरुषत्व का यह पुरुष था। वह दबा-दबा, बुझा-बुझा-सा, भयत्रस्त, क्षीणकाय मरियल-सा युवक था, जिसकी न घर में चलती थी और न बाहर ही। माँ-बाप के सामने कुछ भी कहने की उसमें हिम्मत न थी। वह जानता था कि वे सुजाता को नफरत करते हैं अतः उसके मामले को उनके सामने रखने की हिम्मत बटोरने में वह असमर्थ था। फिर उसका 'स्टेटस' भी क्या था— एक छोटे से दफ्तर का छोटा-सा बाबू और वह भी टेम्परेरी। वह तो सदा दबा हुआ ही रहा। उसका बाप थानेदार रह चुका था और रिटायरमेन्ट के बाद भी अपने सारे शौक पूरे करते रहना चाहता था। उनकी थानेदारी बदस्तूर थी चाहे घर हो या मोहल्ला। शादी के बाद अलबत्ता उसने बेटे को पीटना बन्द कर दिया था, लेकिन डांट-डपट बदस्तूर थी। सुजाता की सास तो पूरी कर्कशा थी। सुजाता को बात-बात पर ताने कसना, जरा-सी बात पर पीट देना, खाने-पीने की चीजों पर निगरानी रखना, सदा शंका से देखना— लक्ष्मण रेखा को पार कर चुका था। यहाँ तक कि त्यौहार भी शाँति से नहीं गुजरते थे। शादी के साल भर तक सुजाता कैसे न कैसे समय गुजारती रही, लेकिन अब तो हालात बेकाबू हो रहे थे। सुजाता का घर से बाहर निकलना, किसी से बोलना-बतलाना, यहां तक कि मन्दिर जाना तक दुष्कर होता जा रहा था। वह इस घटना को लाख कोशिश करने पर भी नहीं भूल पा रही थी जबकि सास ने उसकी जमकर पिटाई की थी। बात कुछ भी नहीं थी। उसकी मां की चिट्ठी और मिठाई की एक कोथली लेकर उसके पीहर में मोहल्ले का रहने वाला एक लड़का उससे मिलने आ गया था। सास ने न केवल उस मिठाई को ही बाहर फेंक दिया बल्कि उस लड़के को भी लुच्चा-लफंगा तक कह दिया और उसके सामने ही सुजाता की मरम्मत करना चालू कर दिया। लड़के ने जाकर यह दारुण गाथा सुजाता की मां को सुनाई लेकिन वृद्धा दिल मसोस कर रह गयी और अपने पति को इस डर के कारण नहीं

बताया कि कहीं उसको हार्ट-अटैक न हो जाय।

*    *    *

ससुराल से बेटी का आना मां-बाप को अच्छा लगता है लेकिन सुजाता का आना उनको कष्टदायक लगा। सुजाता ने अब तक कुछ कहा नहीं लेकिन उसकी अविरल अश्रुधारा ने सब कुछ कह दिया, जो जबान द्वारा संभव नहीं था।

मां ने सुजाता को समझाना चालू किया। 'बेटी शादी के बाद सास-ससुर ही तुम्हारे मां-बाप हैं। पति ही परमेश्वर है। इनका अच्छा या बुरा होना सब किस्मत का खेल है। नारी कहीं भी स्वतन्त्र नहीं है। शास्त्रों में भी लिखा है कि कुंवारी का संरक्षक बाप होता है, शादी के बाद में पति और बुढ़ापे में बेटा।

सुजाता को दुःख हुआ कि वह आठ घंटे की लम्बी यात्रा करके थकी-मांदी आयी है। मां ने उसे बैठने तक के लिए नहीं कहा — चाय पानी तो दूर रहा। बाप तो मृतप्राय-सा पड़ा रहा शय्या पर। उसने पिता की ओर देखा लेकिन उसने न सुजाता की ओर देखा और न एक शब्द ही बोला।

खड़े-खड़े बेटी मां का प्रवचन सुन ही रही थी कि दरवाजे के आद्ये बन्द किवाड़ के खुलने की आवाज आयी। इतनी रात गये इस घर में किसी का आना कभी-कभी ही होता था। आगन्तुक बड़ा बेटा रमेशदत्त था। कोई किसी से नहीं बोला। बहन को देखते ही भाई को भी बिजली छू गयी। घर के वातावरण को ग़मगीन देखकर उसने भी वहाँ से प्रस्थान करना ही श्रेयस्कर समझा। उसको अपने गम से कब फुर्सत थी कि वह मां-बाप और बहिन की सुध ले।

सुजाता की आंखों से टप्-टप् आंसू गिर रहे थे। वह अब तक एक शब्द भी नहीं बोली थी। वह यह सोचकर आयी थी मां-बाप और भाई के घर राहत की सांस लेगी। कुछ दिन आराम से रहेगी और फिर कोई निर्णय लेगी। उसने अहसास किया कि उसका कोई नहीं है। मां तो उपदेश दे रही है, बाप असहाय-सा पड़ा है, भाई बिना बोले-चाले निकल गया। वह किसके पास आयी है। कोई किसी का नहीं है, सबके अपने-अपने स्वार्थ हैं, सब रिश्ते-नाते व्यर्थ हैं, न उसका स्थान ससुराल में है और न ही पीहर में।

सुजाता की अश्रुधारा वेगवती होने लगी। किस अपराध की सजा उसे मिल रही है। उसका दोष क्या है? जन्म मां-बाप ने दिया, शादी बिना पूछे मां-बाप ने कर दी - उसने शादी के पहले न तो घर देखा और न ही वर। वह पढ़ने में कुशाग्र थी, होनहार थी, क्लास में सदा फर्स्ट रहती थी, मां-बाप आगे पढ़ाते तो वह कुछ भी बन सकती थी, लेकिन मां-बाप की आज्ञानुसार वह सारे काम करती रही। कपिला की तरह जिस खूंटे पर बांध दी गयी, बंध गयी।

उसको लगा कि कहीं वह पागल न हो जाये। अब उसमें यातनाएं सहने की, झिड़कियां सुनंने और पिटने की क्षमता नहीं रह गयी है। उसकी देह सूखने लगी है, कली खिलने के पहले ही मुर्झाने लगी है। उसको

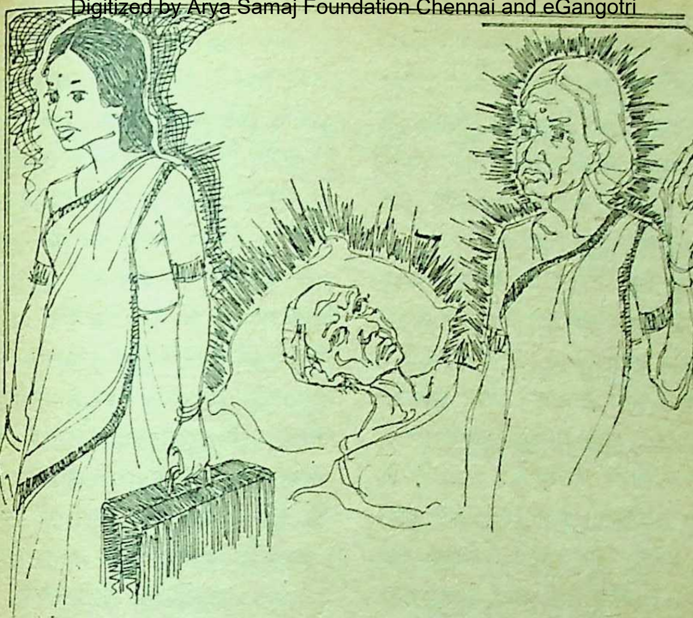

लगा कि मां-बाप के घर आकर उसने गलती की है। इस आत्म-ग्लानि से तो अच्छा होता कि कहीं वह रास्ते में ही ट्रेन से कटकर मर जाती या नदी में डूब कर जीवन-लीला समाप्त कर लेती।

कैसी बिडम्बना है कि जिस घर में उसने जीवन के बाईस बसन्त देखे, वह तुलसी का पौधा जहां वह दीपक जलाती थी, वह नीम का पेड़ जिस पर वह तीज-गणगौर आदि पर झूला झूलती थी, वह हनुमानजी का बड़ा चित्र जहां अगरबत्ती जलाती थी और मंगल, शनि को हनुमान चालीसा का पाठ करती थी - बाहर का चबूतरा जिस पर बैठ कर सहेलियों के साथ हंसी-मजाक करती थी और मोहल्ले की बड़ी-बूढ़ी औरतों से कहानियां सुना करती थी, आज वही घर काटने को दौड़ रहा है — वहां एक क्षण भी खड़ा रहने को उसका जी नहीं कर रहा है।

सुजाता को लगा कि इस पुरुष-प्रधान समाज में नारी की अश्रुधारा उसे दया और उपहास का पात्र बना देती है। आत्म-हत्या कायरता और पलायन है। 'भागो नहीं, बदलो' उसके जेहन में उतर गया। उसमें आत्म-विश्वास का संचार होने लगा। क्या महिला होना कोई अपराध है, पाप है, बन्धन है?

उसने निश्चय किया कि वह उन सब बेड़ियों को सदा के लिए तोड़ देगी, जो समाज ने उसे पहनाई है। वाह रे, पुरुष-प्रधान समाज, नारी पर तुमने कितना कहर ढाया

है । पहले इसने उसे बेड़ियां पहनाई अबला, दुर्बला, मास्तिष्क-हीन कहा और फिर उसका उपहास किया, दया दिखाई । सुजाता में आत्म-विश्वास जगा । अंधकार के बादल छंटने लगे - उसमें चेतना आयी और नयी आशा का संचार होने लगा ।

उसने दृढ़ स्वर में कहा – 'मां, मेरा कसूर क्या है ? मैंने किया क्या है ? मैंने अपने जीवन में कोई काम अपनी इच्छा से किया ही नहीं – कोई निर्णय लिया ही नहीं – फिर मुझे यह दण्ड क्यों ? इस संसार में मां-बाप की इच्छा से आयी, ससुराल भी उनकी इच्छा से ही गयी, मैंने न पति का चयन किया और नाही ससुराल की ही - सदा दूसरों के निर्णय और उनकी दया पर जीती रही । उसी का परिणाम आज भोग रही हूं । ' सुजाता के स्वर की दृढ़ता से मां को आश्चर्य हुआ ।

सुजाता को डांटते हुए मां ने कहा – 'बेटी, धर्म-कर्म, तकदीर, मर्यादा, परम्परा में विश्वास रखो । तुम्हारे भी कभी दिन फिरेंगे । भगवान तुम्हारे सास-ससुर को और पति को सद्बुद्धि देगा । तुम सुबह की बस से ससुराल चली जाओ और उनकी सेवा करो । यह जन्म नहीं तो अगला जन्म तो अच्छा बनेगा । '

'मां, अब मुझमें और अधिक पिटने, लज्जित होने एवं बर्दाश्त करने की शक्ति नहीं रही,' सुजाता ने दृढ़ स्वर में कहा ।

मां के न बोलने पर सुजाता को लगा कि, मां समझ रही है कि कहीं वह उस पर भार न बन जाय । अपनी अटैची उठाते हुए सुजाता ने दृढ़ स्वर में कहा – 'मां, आज से मैं अपने बारे में स्वयं निर्णय लूंगी । यह अधिकार मैं किसी को भी नहीं दे सकती । नारी इसीलिये तो हमेशा से सतायी जाती रही है कि उसने स्वयं का निर्णय दूसरों पर छोड़ दिया । मैं धर्म, भगवान, तकदीर और अगले जन्म में विश्वास नहीं करती । पूर्व जन्म में मैंने पाप किये हैं और इसीलिए मैं कष्ट भोग रही हूं । यह बड़ी घृणित धारणा है जो सामाजिक परिवर्तन की प्रक्रिया को रोकती है । मैं केवल वर्तमान में जीना चाहती हूं और वह भी किसी की दया पर नहीं । मुझे न किसी की सहानुभूति चाहिये और न ही किसी का आश्रय । पुरूष को आश्रयदाता मानकर चलना ही तो नारी का सबसे बड़ा बन्धन है । जो आश्रय देगा वह आपके बारे में निर्णय भी लेगा । जो अपने निर्णय लेने का अधिकार दूसरे को देता है, वह तो गुलाम है, अपाहिज है, मृत है । मां, न तो मैं तुम्हारे पास रहूंगी और न ससुरालवालों के पास । मैं समर्थ हूं, शक्ति हूं, जननी हूं । मैं स्वाधीन हूं । यही मेरा निर्णय है ।'

इसके पहले कि मां कुछ बोलती, सुजाता अटैची लिए दरवाजे के बाहर निकल गयी और मां के दरवाजे पर आने तक रात के गहन अंधियारे में विलीन हो गयी ।

– राजस्थान लोकसेवा आयोग,
अजमेर, राजस्थान

□

# कालिदास गुप्ता 'रिज़ा'

□ अरुणसिंह मख्मूर

विश्व में ऐसे कितने ही महान व्यक्ति, लेखक व कलाकार हैं जिनकी महत्ता का प्रतिबिम्ब दुनिया के दर्पण में नहीं गिरा, और जो महानता के शिखर पर पहुंच कर भी न तो स्वयं को महान कहलाना पसन्द करते हैं न ही अपने कार्यों का प्रचार-प्रसार करते हैं। ऐसे ही एक महान व्यक्ति तथा महान उर्दु शायर का नाम है कालिदास गुप्ता 'रिज़ा'।

अभी चंद रोज़ पहले राष्ट्रीय कार्यक्रम से प्रसारित अखिल भारतीय मुशायरे के शायर रिज़ा साहब ने आख़िर में अपना कलाम सुनाया तो देश के लाखों दर्शक व शायरी के शौकीन श्रोता मंत्रमुग्ध हो गये। उस ग़ज़ल के चंद बेमिसाल शेर आप भी सुन लीजिए —

**तू कहां टूटकर मिला है अभी**
**कई सदियों का फ़ासला है अभी**
**शौक कहता है ढूंढ़ते रहिये**
**कोई अंजाना रास्ता है अभी**

उनकी शायरी का एक और अंदाज़ देखें--

**वक़्त से पेच लड़ा है तो लड़ाये रखना**
**लाख तूफान हो, अश्कों को दबाये रखना**
**सारे सूरज भी जो बुझते हों, तो बुझ जाने दे**
**हां, दिया एक मोहब्बत का जलाये रखना**

गहरी से गहरी बात को शेरों में ढालकर इतने सरल व ख़ूबसूरत अंदाज़ में कहने वाले रिज़ा साहब का जन्म सन १९२५ में गांव मुकन्दपुर, जिला जालन्धर (पंजाब) में

कालिदास गुप्ता 'रिज़ा'

हुआ। शायरी का हुनर उन्होंने प्रसिद्ध शायर जोश मल्सियानी साहब जो जाने-माने शायर दाग देहलवी साहब के शार्गिद थे, से सीखा।

उन्हीं जोश साहब के ये चहेते शार्गिद रिज़ा साहब करीब पच्चीस वर्ष केन्या (अफ्रीका) में रहकर वापस १९७० में भारत आकर बस गये। उनके नौ दीवान (काव्य संग्रह) छप चुके हैं जिनमें से सात उर्दू में हैं तथा दो अंग्रेजी में। आज तक उनकी कुल ३१ किताबें छप चुकी हैं तथा रिज़ा साहब भारत व पाकिस्तान में ग़ालिबियात, (मिर्जा ग़ालिब की शायरी) के विशेषज्ञ माने जाते हैं। दुनिया में उर्दू की शायद सबसे बड़ी लाइब्रेरी भी उनके पास ही है, जिसमें २२,००० से भी ज्यादा पुस्तकें हैं, और जितनी बड़ी उनकी लाइब्रेरी है उतना ही बड़ा उनका अध्ययन। उनके अब तक इतिहास तथा साहित्य शोध व आलोचना के २५० लेख भारत व पाकिस्तान में छप चुके हैं। हालांकि उनको बहुत से इनाम व पुरस्कार मिल चुके हैं और उर्दू दुनिया में उनका नाम गूंजता है मगर वो इन सबसे बेपरवाह रहते हैं।

देश-विदेश के बड़े मुशायरों, कार्यक्रमों व जानी-मानी गोष्ठियों में भी कभी-कभार जाने वाले रिज़ा साहब खुशमिज़ाजी और दरियादिली की मिसाल हैं। उनसे मेरा पहली बार मिलना संयोगवश देश के अच्छे शायर जनाब शीन काफ निज़ाम साहब के जरिये हुआ। निज़ाम साहब उनकी बहुत तारीफ़ करते थे, सो उत्सुकतावश मैं भी उनसे मिलने उनके बम्बई स्थित निवास स्थान पहुंचा तो पहली ही मुलाकात में जो आत्मीयता व स्नेह उन्होंने दिया उससे, उनके तेजस्वी व्यक्तित्त्व से मैं बहुत प्रभावित हुआ। कुछ और मुलाकातों में मुझे उनके अन्दर के महान पुरुष व बहुत ही ऊंचे के शायर के भी दर्शन होने लगे। उनके पारिवारिक सदस्यों से बातचीत के दौरान मालूम हुआ कि उन्होंने सैकड़ों जरूरतमंदों की यथासंभव सभी तरह से मदद की और कभी इसका ज़िक्र नहीं किया। उनकी शायरी में भी उनके मन की गहराई की झलक मिलती है, उदाहरण के तौर पर ये देखें-

**पिछली रात के सवके, क्या तकदीर**
**बुनें**

**सर की भिक्षा देकर, दिल का दान**
**लिया**

**आंख से ढलकी बूंदों की सी बात कहें**
**चीर चुके आकाश समन्दर छान लिया**
**प्यार का गहरा पानी, पर कितना**
**निर्मल**

**हमने डूबके, मर रहना ही ठान लिया**

श्री रिज़ा साहब की शायरी का ये निराला अंदाज़ भी देखें, कहते हैं कि-

**हम थे पाले हुए अज़ानों के**
**अब चहेते हैं आसमानों के**
**हक था अपना जला दिया तो क्या**
**हम पड़ोसी हैं, आशियानों के**
**बज़्म वो है, कि हों कुछ आज के लोग**
**और कुछ लोग उन ज़मानों के।**

जीवन के हर पहलू को समझने और

# हिन्दी ग़ज़ल

अब क्या याद रखें, बिसरायें,
बेहतर है कि चुप रह जायें ।

अपनी छाया से भय लगता,
गैरों को कैसे अपनायें

गर्दन छुपा रेत में कब तक,
शुतुरमुर्ग बन जान बचायें ।

गांव-शहर विद्‌वेष सुलगता,
चल वन-बीहड़ में बस जायें ।

खुशियों से पहचान नहीं, तो,
पीड़ा से ही हाथ मिलायें ।

मौसम रोज बयान बदलते,
हवा बदलती रोज दिशायें ।

अपना मातम आप मना लें,
अपनी मय्यत आप उठायें ।

बाड़ें ही चर जातीं फसलें,
घर के दीपक आग लगायें ।

ज़ख्म दिये जिसने, उससे ही —
जाकर क्यों रोयें रिरियायें ।

**— देवेंद्रकुमार पाठक**

**शिक्षक, शास. उच्च. माध्य. विद्यालय, नई कटनी जंक्शन - ४८३ ५०१, म.प्र.**

---

जाननेवाले स्थितप्रज्ञ से रिज़ा साहब भारतभूमि की एक ऐसी बहुत बड़ी और महत्वपूर्ण सांस्कृतिक धरोहर हैं, जिन्हें इतिहास कभी नहीं भुला सकता। आजकल ये भगवान बुद्ध से लगाकर आज तक की महत्वपूर्ण ऐतिहासिक घटनाओं की क्रम वार प्रामाणिक प्रस्तुति करने में व्यस्त हैं, और यह भारतीय इतिहास के लिए निश्चित रूप से बहुत बड़ा योगदान रहेगा।

श्री रिज़ा साहब से मिलना, उनसे बातें करना और उनके अमूल्य अनुभवों को सुनना अपने आप में एक ऐसा सार्थक और सुखद अनुभव है जिसे शब्दों में व्यक्त करना एक कठिन कार्य है।

आख़िर में मैं यही कहना चाहूंगा कि उनकी एक बेहतरीन ग़ज़ल जो नीचे दी जा रही है, को पढ़ने के बाद उनके बारे में व उनकी शायरी के बारे में कहने को तो बहुत ही कम रहता है, मगर गुनगुनाने और सोचने को बहुत कुछ—

**कोई दरिया भी है 'रिज़ा' का सा**
**ठहरा-ठहरा सा बहता-बहता सा**
**अब तो कहते हैं लोग दीवाना**
**मेरा कुछ नाम भी था अच्छा सा**
**शायद अन्दर का हर्फ़े नागुफ़्ता**
**कुछ तो देखा था लिक्खा-लिक्खा सा**
**शायरी का नुज़ूल क्या कहिये**
**रात ढलती सी दिन निकलता सा**
**हो न हो शेर ये 'रिज़ा' के हैं**
**वही अन्दाज़ मीठा मीठा सा**

— देना बैंक भवन, २रा महला,
पास्ता लेन, कुलाबा, बंबई ४०० ००५.

□

# आखिर क्या है उस पार

☐ श्याममनोहर व्यास

रहस्य के प्रति उत्सुकता मानव को आदिकाल से रही है। अनेक रहस्यमय प्रश्न मानव के मन को जन्म से ही उद्वेलित करते रहते हैं। क्या हमारे भीतर कोई आत्मा या ऐसी चेतना है, जो इस असीम ब्रह्माण्ड की किसी शक्ति या अनदेखे जीवों से सम्पर्क साधे हुए है? क्या भूत, प्रेत या परलोक का अस्तित्व है? सपनों का रहस्यमय संसार कैसा हैं? क्या मृत्यु जीवन का अंत है? यदि नहीं तो मृत्यु के बाद हमारी चेतना व अनुभूतियों का क्या होता है?

जीव या प्राणी का मृत्यु को प्राप्त होना शाश्वत सत्य है। पर आखिर मौत के बाद होता क्या है? विश्व की एक बड़ी जनसंख्या मृत्यु के बाद शव को जला देती है और अनेक लोग मौत के बाद मृतक के शव को गाड़ देते है। दुर्घटनाग्रस्त हुआ शव भी आखिर में पंच भौतिक तत्त्वों में मिल जाता है। भारत व विदेशों के परामनोवैज्ञानिकों ने भी मृत्यु और पुनर्जन्म की गुत्थियों को सुलझाने का प्रयास किया है। इनमें कुछ हैं—रेमंड मूडी, केन्नेडरिंग, सर आलिवर लाज, आर्थर कानन डाइल, प्रो. वी.डी. ऋषि आदि। 'लाइफ आफ्टर लाइफ' के लेखक डॉ. रेमंड मूडी ने मृत्यु के समीप पहुंचे व्यक्तियों के साक्षात्कार लेकर १५० केसों को तीन श्रेणियों में बां था।

(१) इन लोगों के अनुभव जिन्हें डॉक्टरों ने जांच करने के बाद मृत घोषित कर दिया परन्तु जो फिर से जी उठे।

(२) उन लोगों के अनुभव जो कि दुर्घटना, गम्भीर चोट अथवा बीमारी कारण मृत्यु के निकट पहुंचने के बाद ब गये।

(३) उन लोगों के अनुभव जो मर ग परन्तु मरणासन्न अवस्था में उन्होंने जो कु कहा उसे उपस्थित लोगों ने सुना और बाद मे उसे बताया।

इसके अतिरिक्त कई परामनोवैज्ञानिकों ने प्लेनचिट या माध्यम के द्वारा परलोक आत्माओं से सम्पर्क कर 'मरणोपरान्त जीवन' के बारे में जानने का प्रयास किया।

मनोवैज्ञानिक रेमंड मूडी ने अपनी पुस्तक में मौत के समीप के अनुभव अधिक लिखे हैं। पुस्तक के अनुसार साइप्रस की एक महिला के अनुभव कुछ इस प्रकार हैं – 'मेरी आंत का आपरेशन किया गया था, आपरेशन के चौथे दिन मैं कई घण्टे तक बेहोश रही। हालांकि तब मैं अचेत थी, लेकिन इसके दौरान सर्जन और डॉक्टर के बीच हुई बातचीत मुझे कई

वर्षों बाद आज भी पूरी तरह याद है । मैं अपने ही शरीर के कुछ ऊपर लेटी रही, दर्द से पूर्णतः मुक्त, अपने शरीर को देखती हुई, जिस पर दर्द के लक्षण थे । मैं शान्तिपूर्वक हवा में उड़ती रही । एक बार तो किसी अन्धकारमय घाटी में भी गुजरी पर थोड़ी देर बाद फिर बाहर आ गयी और अपने शरीर में फिर प्रवेश कर गयी । पर यह सत्य है कि मैंने एक अंधकारमय सुरंग में उड़ते या अपने शरीर को त्याग कर कुछ दूरी से सारे कार्य कलापों को देखा था ।' प्राचीन ग्रन्थ कठोपनिषद् में लिखा है:

'कोई कहते हैं मनुष्य मरने पर सदा के लिए समाप्त हो जाता है, और कोई कहते हैं मनुष्य मरने के पश्चात् भी बचा रहता है । इन दोनों में से कौन सत्य है, यह प्रश्न हमारे मन में जागृत हुआ है ।' (३-१७)

दर्शन, अध्यात्म तत्त्व, धर्म एवं विज्ञान नाना प्रकार से इस प्रश्न कर उत्तर देने की चेष्टा करते हैं ।

वैदिक युग के ऋषि-मुनि भी प्रेतलोक में विश्वास करते थे । आर्षग्रंथों में पितृलोक का वर्णन आया है ।

ऋग्वेद के एक मंत्र में कहा गया है-

'जीवात्मा का कभी पतन या विनाश नही होता । वह कभी समीप, और कभी दूर नाना मार्गों (योनियों) में भ्रमण करता है । वह कभी कोई वस्त्र पहनता (अनेकगुण धारण करता है) है, तो कभी कोई वस्त्र ।'

पारसी लोग सोचते हैं कि जीवात्मा मृत्यु के तीन दिन पश्चात् अपनी भावना, कामना एवं क्रिया कर्म के अनुसार स्वर्ग अथवा नरक में जाती है ।

जब मृत्यु होती है तो मस्तिष्क व हृदय निष्क्रिय हो जाते हैं । मस्तिष्क के पूर्णरूप से निष्क्रिय होने पर ही व्यक्ति की मृत्यु मानी गयी है । मृत्यु के बाद जीवात्मा सूक्ष्म शरीर में समाविष्ट हो जाता है जो स्थूल शरीर से लिपटा होता है ।

मृत्यु के समय जो वाष्प समान सूक्ष्म पदार्थ बाहर जाता है वह ज्योतिर्मय होता है । इस ज्योतिर्मय पदार्थ अर्थात् सूक्ष्म शरीर का छाया चित्र भी लिया जा सकता है । सूक्ष्म शरीर के प्राकृतिक शरीर को छोड़ कर अन्यत्र विचरण करने का उल्लेख प्राचीन सम्यताओं के इतिहास में काफी मिलता है । प्राचीन मिस्र व यूनान के समाधि भवनों में ऐसे अनेक आलेख अंकित हैं जिनमें सूक्ष्म शरीर को प्राकृतिक शरीर से पृथक, विभिन्न स्थानों में जाते दिखाया गया है ।

ब्रिटेन के डॉ. केन्नेड रिंग ने लगभग सात सौ व्यक्तियों के साक्षात्कारों को अपनी पुस्तक 'लाइफ आफ्टर डेथ' में अंकित किया है, रिंग ने मृत्यु-समीप के अनुभवों को पांच चरणों में बांटा है:

(१) शान्ति का अनुभव (२) चेतना का अंधेरी सुरंग में प्रवेश (३) प्रकाश की अनुभूति (४) अपने अस्तित्व का आभास तथा (५) मृत सगे-सम्बन्धी या मित्रों की आत्माओं से मिलन । इसके अतिरिक्त मृत्यु के बाद लौटे कई व्यक्तियों ने परलोक जगत् की जो झांकी प्रस्तुत की है उसे हम अक्षरशः

सत्य भी [illegible] विचारों, अनुभूतियों व सपनों का मिला-जुला रूप भी हो सकता है।

परा विद्या के अनुसार शरीर चेतना का वाहन है। सुरंग नक्षत्रीय और पारलौकिक विश्व में परिवर्तन है और अन्धकार चेतना के एक जगत से दूसरे जगत् में प्रवेश करने से उत्पन्न होता है।

मृत्यु के बाद अन्धकार का दारुण दु:ख है यां प्रकाशमय आनंद की अनुभूति ? कुछ कहा नहीं जा सकता।

एक घटना के अनुसार लास एंजिल्स में अपने भाई की मृत्यु के समय उसकी छोटी बहन बोल उठी - ' देखो देखो मां, भाई के शरीर के चारों और कैसा नीले रंग का कुहासा है ?' बालिका के अनुसार वह कुहासा, शरीर से निकल रहा था। अपनी प्रसिद्ध कृति 'मेमोरीज ड्रीम्स रिफ्लेक्शंस' में विश्व विख्यात तत्त्वदर्शी, चिंतक और मनोवैज्ञानिक कार्ल जंग ने अपने एक अलौकिक अनुभव का वर्णन इन शब्दों में किया है - 'सन १९४४ में एक साधारण-सी दुर्घटना के बाद, मुझे दिल का दौरा पड़ गया था, और डॉक्टरों के अनुसार मैं मौत के कगार पर था। जब मुझे आक्सीजन एवं केरोमीन के इंजेक्शन दिये जा रहे थे, तब मुझे अनेक विचित्र अनुभव हुए। मैं कह नही सकता कि उस समय मैं अचेतावस्था में था या स्वप्नावस्था में, पर मुझे यह स्पष्ट अनुभूति हो रही थी कि मैं अंतरिक्ष में लटका हूं, और अपने से लगभग एक हजार मील नीचे स्थित [illegible] नगर को देख रहा हूं। फिर मुझे लगा कि मेरा सूक्ष्म शरीर एक पूजा गृह में प्रकाशयुक्त कक्ष में प्रवेश करने वाला है। मुझे लग रहा था, मैं निस्सीम इतिहास का एक खण्ड हूं। मैं अंतरिक्ष में कहीं भी विचरण करने को स्वतंत्र हूं। तभी, मुझे अपने ऊपर मंडराती एक छाया दिखायी दी, जो वास्तव में मेरे डॉक्टर की थी। मुझे लगा, डॉक्टर मुझसे कह रहे हैं कि मुझे फौरन अपने भौतिक शरीर में वापस लौट जाना है। जैसे ही मैने इस आदेश का पालन किया, मेरी देह में पुन: हलचल हो गयी। मैंने इस अनुभव से जान लिया कि जीवन की समाप्ति पर क्या होता है।'

एक मृतात्मा ने माध्यम के जरिये बताया - 'मृत्यु के बाद मैं एक घाटी को पार कर प्रकाश लोक में पहुंचा। एक सुरम्य बगीचे में मेरी चेतना लौटी।'

विदेशी घटनाओं के साथ ही हमारे देश में भी मृत्यु से वापसी के रोचक वृतान्त मिले हैं। 'लगभग १०-१२ वर्ष पुरानी बात है। मैं उन दिनों राजकीय सैकण्डरी स्कूल मानदा (जि. उदयपुर राज.) में प्राचार्य के पद पर कार्यरत था। मेरे विद्यालय के एक कर्मचारी भंवरलाल हरिजन एक बार भयंकर रूप से बीमार पड़ा। डॉक्टरों ने उसे मृत घोषित कर दिया। परिजन ज्यों ही उसे अन्तिम संस्कार के लिए ले जाने लगे तो उसके शरीर में हरकत हुई। वह जीवित हो उठा। मृत्यु से वापसी के प्रसंग में उसने बताया - 'मेरा शरीर संज्ञा शून्य होने लगा। मैं मृत प्राय: हो

गया। अचानक मुझे लगा कि मेरे शरीर से एक ज्योति पुंज निकल रहा है और मैं अपने भौतिक शरीर से बाहर निकल गया हूं। मुझे लगा दो सफेद वस्त्र पहने व्यक्ति मेरा हाथ पकड़ कर ऊपर आकाश में ले जा रहे हैं। तीव्र गति से वे मुझे एक अद्‌भुत लोक में ले गये। कह नही सकता इस थोड़े समय में मैंने कितने लाखों मील की यात्रा तय कर ली। एक जगह विशाल भूमि देखी जिसका कोई ओर-छोर न था। एक जगह सर्पों का समूह घूम रहा था। मैं भयभीत हो गया तो वहां खड़े एक व्यक्ति ने कहा, 'डरो मत। यह तुम्हें खायेगा नहीं।' यह कह कर उसने सांप को मेरे शरीर से छुआ दिया। मुझे कुछ नहीं हुआ। भय जाता रहा। अन्त में दोनों दिव्य पुरुष मुझे एक विशाल भवन में ले गये। वहां एक सिंहासन पर वृद्ध पुरुष बैठा था। उसने मुझे देखते ही एक पोथी खोली और उसमें कुछ पढ़कर बोला - तुम लोगों ने भूल कर दी। इसे वापस ले जाओ। भंवरलाल माली को ले आओ। उसके ऐसा कहते ही मुझे जोर का धक्का अनुभव हुआ और मेरे शरीर में हरकत हो गयी।' इस प्रकार के अनेक उदाहरण सुनने को मिलते हैं। सत्य कितना है, हम निर्विवाद रूप से कुछ नहीं कह सकते। मरणोपरान्त जीवन पर अनुसंधान अपेक्षित है। आखिर क्या रहस्य है मृत्यु का?

**— १५, पंचवटी, उदयपुर,**
**राजस्थान**

□

# बदल गयीं परिभाषाएं

क्या हुआ परिवेश को
बदल गयीं परिभाषाएं
धूप की छांव की
लहू-लहू हो गयी देह
नेह के गांव की
जाने किस मुए की
लग गयी बद्‌दुआ
विश्वास में
विष वास हुआ
कौन करे बात अब
ईमान के
थके हुए पांव की
किसने उड़ा दीं
हमारे सपनों की चिंदियां
आज फिर चर्चा है
समय शकुनि के दांव की
क्या हुआ परिवेश को
बदल गयीं परिभाषाएं
धूप की छांव की

**□ किरण नागर**

**— कालीकुंज,**
**५३, कालीकवि मार्ग,**
**उरई - २८५ ००१, उ. प्र.**

# कुर्बान मियां

**□ यूसुफ़ नाजिम**

कुर्बान मियां को आता-जाता तो कुछ है नहीं, लेकिन शौक प्रत्येक काम करने का है। और जिस काम में कुर्बान मियां का हाथ लग जाये, यूं समझो कि उसकी बस खैरियत-ही-खैरियत है। घर का हर व्यक्ति यही दुआ मांगा करता है कि खुदा करे कुर्बान मियां कोई काम करने को तैयार न हो जायें।

घर की सफाई हो रही हो और कुर्बान मियां इस काम में हाथ बटाने लगें तो घर का साफ-सुथरा होना तो दूर की बात रही, मोहल्ले का कूड़ा-कर्कट भी घर के भीतर आ जाये तो अजब नहीं! पिकनिक का प्रोग्राम बने और कुर्बान मियां कोई छोटा-मोटा काम भी अपने जिम्मे ले लें तो बस हो गयी पिकनिक! इनके हाथों में खुदा जाने क्या खूबी है कि बनता काम बिगड़ जाता है।

अम्मी कई दिन से कह रही थीं कि सारे घर में बोतलें, शीशियां और डिब्बे बिखरे पड़े हैं लेकिन किसी को फिक्र नहीं कि उन्हें बेच आयें। हर कोई सुनता और टाल जाता। चाचा मियां को अपनी फोटोग्राफी से फुरसत नहीं। दिन-भर एक काले परदे के पीछे छिपे हुए खुदा जाने क्या करते रहते हैं। इनकी खिची हुई तस्वीरें न तो किसी अखबार में छपीं न किसी पत्रिका में। लेकिन दावा इनको यह था कि इनके जैसा फोटोग्राफर पूरे शहर में दूसरा कोई नहीं।

रहे बड़े भैया, तो वह ऐसे तुच्छ कार्य को कैसे हाथ लगाते। उनके हाथ न मैले हो जाते। और इस वक्त तो वे कानून की परीक्षा की तैयारी में लगे हुए थे। उनसे कोई कुछ कहता भी तो कानूनी बहस छिड़ जाती। शाहिद भाई क्रिकेट की प्रैक्टिस में व्यस्त थे। और हर छुट्टी के दिन सुबह ही से अपने जूतों पर सफेदी चढ़ाने, पतलून पर इस्तरी करने और क्रिकेट के बैट का सिंगार करने में जुटे रहते और कुछ भी परवाह न करते कि घर में क्या हो रहा है। अख्तर भाई इनसे भी दो हाथ आगे थे। जनाबे आला हफ्ते भर अच्छे-खाते रहते, लेकिन इतवार के दिन इनकी तबीयत हमेशा खराब हो जाती। दस बजे तक खूब जी लगाकर सोते और जब उठते तो ऐसा जाहिर करते कि जैसे बड़ी तकलीफ में हैं। हाथ-मुंह धोते, बड़ी सावधानी के साथ नाश्ता करते, दो-दो कप चाय पीते और फिर तुरंत बीमार हो जाते। अखबार, उपन्यास या कॉमिक लेकर नरम-नरम बिस्तर पर लंबे हो

जाते। हर छुट्टी के दिन उनका यही कार्यक्रम होता। अब ले-देकर रह गये घर में सिर्फ कुर्बान मिया। पर अम्मी इनसे तो काम लेने से रहीं।

जिस दिन का यह किस्सा है वह इतवार था। और सुबह ही से अम्मी का पारा चढ़ा हुआ था। वह गुस्से में थीं कि घर कबाड़खाना भी बन जाये तो भी किसी को नजर न आयेगा। हर किसी को बस अपनी ही फिक्र है। जो है अपनी ही धुन में मस्त है। यही हाल रहा तो सारे घर में डिब्बे, शीशियों और बोतलें रहेंगी और घरवालों को कहीं और जाकर रहना होगा। मैं तो कहती हूं कि अब घर का छोटा-मोटा काम करने के लिए भी शायद मजदूर और हमाल (कुली) बुलवाने होंगे।

चाचा मियां ने अम्मी जान को गुस्से में देखा तो अपने 'डार्क-रूम' में जाने के बजाय उन्होंने अपना कैमरा संभाला और बगैर चाय ही रफूचक्कर हो गये। बड़े भैया को तो मालूम ही था कि इनसे कोई काम नहीं लिया जा सकता। बड़े इत्मीनान से उन्होंने अखबार पढ़ा और फिर अपने कमरे में बंद हो गये। शाहिद भाई ने समझ लिया कि अगर घर में टिके तो खैरियत नहीं। उन्होंने फौरन अपना सामान तैयार किया और क्रिकेट मैच खेलने निकल गये। अख्तर भाई ने अम्मी की आवाज़ सुनी तो कॉमिक तकिये के नीचे छिपा लिया और सो गये।

कुर्बान मियां को लेकिन, बहुत जोश आ गया और उन्होंने ऐलान फरमा दिया, 'अरे अम्मी! आप क्यूं बदमजा होती हैं! और कोई डिब्बे और बोतलें नहीं बेच सकता तो लाओ मैं यह काम किये देता हूं।'

यह सुनकर अम्मी को लगभग गश-सा आ गया। बोलीं, 'नहीं! नहीं! तुम रहने दो। तुमसे यह काम न होगा। पुराना सामान लेने वाला कोई आदमी गली में आयेगा तो मैं खुद ही सब बोतलें निकाल दूंगी।'

लेकिन अब तीर कमान से निकल चुका था, क्योंकि कुर्बान मियां तय कर चुके थे कि यह काम करके ही दम लेंगे और कुर्बान मियां

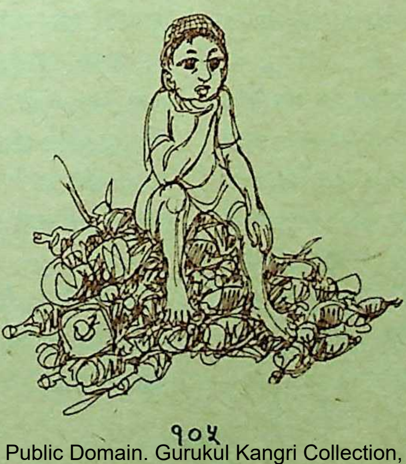

एक बार किसी काम का इरादा कर लें तो फिर उनको रोकना किसी के बस की बात नहीं। अम्मी ने भी सोचा – चलो, यूं ही सही। शीशियां और डिब्बे ही तो हैं। दो-चार आने कम भी आये तो कोई हर्ज नहीं। वे चुप हो गयीं और कुर्बान मियां ने शीशियां, बोतलों और डिब्बों पर हमला बोल दिया। घर के हर कोने से उन्होंने बोतलें और डिब्बे एकत्रित किये, मोहल्ले के एक लड़के को पकड़ा और उसकी मदद से सारी बोतलें और डिब्बे बेच आये।

भोजन के वक्त से पहले ही कुर्बान मियां ने अम्मी के हाथ में तीन रुपये बीस पैसे लाकर रख दिये कि यह लीजिए आप के फालतू सामान की कीमत।

अम्मी भी इतने पैसे देखकर दंग रह गयीं। वह समझी थीं कि मुश्किल से दो सवा दो रुपयों का सामान होगा। अम्मी ने कुर्बान मिया को खूब-खूब शाबाशी दी और कहा – 'वाह, बेटे! तुम तो बड़े होशियार हो गये।' यही नहीं, अम्मी ने तुरंत एक तश्तरी भर गाजर का हलवा कुर्बान मिया पर कुर्बान कर दिया।

दोपहर को खाने की मेज पर सब लोग जमा हुए तो अम्मी ने अब्बा से कहा – 'आज तो कुर्बान मियां ने कमाल कर दिया। दो रुपये की शीशियां और डिब्बे तीन रुपये बीस पैसे में बेचे और वह भी किसी की मदद के बगैर। मैं तो कहती हूं कि इससे आगे चलकर यही काम करवाना। अच्छा बिजनैस मैन बनेगा।'

अब्बा, चचा मियां और बा जी को भी आश्चर्य हुआ कि कुर्बान मियां और इतनी चतुराई!

इतने में अब्बा मियां ने कहा – 'बेटा, ज़रा मेरा गुलकंद का डिब्बा तो ले आओ।'

मज्जू दौड़कर अब्बा के कमरे में तो गयी, लेकिन खाली हाथ आयी – 'अब्बा वह डिब्बा नहीं मिलता, क्या आपने कहीं और रख दिया है?'

कुर्बान मियां बोले – 'वह नीला डिब्बा न, वह तो मैं बीस पैसे में बेच आया।' – इतना सुनना था कि बड़े भैया, चचा मियां, बा जी, अखतर भाई सब अपने-अपने कमरों की तरफ भागे और थोड़ी ही देर में घर-भर में अच्छा-खासा हंगामा मच गया। बड़े भैया की विटामिन-बी की शीशी गायब थी। चचा मियां के फोटोग्राफी के सामान में से दो शीशे कम थे। बा जी की रिबनों का डिब्बा, क्रीम की बड़ी शीशी नहीं मिलती। अख्तर भाई ने अपने कमरे में पेट्रोल का डिब्बा रख छोड़ा था और अपने स्कूटर के लिए वह गंदा पेट्रोल इसी डिब्बे में रखा करते थे। संयोग से उस दिन वह डिब्बा खाली था और अब कहीं नजर न आता था। रसोईघर से मीठे तेल की बोतलें भी उड़ चुकी थीं। कुर्बान मियां घर के सारे डिब्बे और सारी शीशियां तीन रुपये बीस पैसे में बेच आये थे।

* * *

कुर्बान मियां ने जहां बहुत-सी खूबियां हैं एक खूबी यह भी है कि वे कोई भी काम हो सीखना जरूर जाहते हैं। हर काम सीखने की

लगन ने ही इन्हें कुर्बान मियां बनाया है। और फिर इनकी यह भी इच्छा रहती है कि घर का हर आदमी इन्हीं के बारे में सोचता रहे। उनकी तरक्की और भलाई के प्रोग्राम बनाता रहे। एक दिन वह चचा मियां की सेवा में हाजिर हुए और उनके पीछे पड़ गये – 'चचा मियां। मुझे उल्टा लटकना सिखा दीजिए।'

चचा मियां तो हैरान-से हो गये कि लड़का चाहता क्या हैं! और इसे उल्टा लटकने की सूझी क्योंकर! उन्होंने टोह लेनी चाही – 'कुर्बान मियां, तुम घास तो नहीं खा गये हो? यह उल्टा लटकना कोई खेल हैं?'

कुर्बान मियां बोले – 'देखिए, चचा जान, नाराज होने की कोई बात नहीं। मैंने आपको कभी तकलीफ नहीं दी। कभी आपका समय भी बरबाद नहीं किया। मुझे मालूम है कि आपको अपनी फोटोग्राफी के अलावा किसी और बात की फिक्र नहीं।'

'अपनी हद में रहो, कुर्बान मियां। मेरी फोटोग्राफी ने तुम्हारा क्या बिगाड़ा है? जाओ, बाहर जाकर लटको बंदर की तरह।' चचा मियां गुस्से में बोले।

लेकिन कुर्बान मियां कहां मानने वाले थे – 'इसीलिए तो आपके पास आया हूं। अख्तर भाई कह रहे थे कि चचा मियां यह काम बहुत अच्छा कर सकते है।'

'अच्छा! तो यह अख्तर मियां की शरारत है।' कहा चचा मियां ने।

'इसमें अख्तर भाई का क्या कसूर है? वे तो कह रहे थे कि बड़े भैया भी पहले आप ही से उल्टा लटकना सीखते थे। यह बात बड़े भैया ने ही अख्तर को बतायी।'

'दुनिया भर के नालायक जमा हो गये इस घर में। कुर्बान मियां, चलो दफा हो जाओ यहां से, वरना मार बैठूंगा।' चचा मियां को गुस्सा आ गया।

कुर्बान मियां ने परेशान होकर कहा – 'अजब बात है! मैं तो आपसे एक नया काम सीखना चाह रहा हूं और आप हैं कि इन दोनों पर बिगड़ रहे है।'

'लेकिन तुम्हारे दिमाग में यह बात घुसी कैसे?'

दरअसल आज हेडमास्टर साहब ने मुझे खूब डांटा और कहा कि अगर आइंदा स्कूल में मुझसे कुछ हुआ तो वे मुझे उल्टा लटका देंगे। मैंने सोचा स्कूल में उल्टा लटकने से पहले घर में इसका अभ्यास कर लूं तो ठीक रहेगा।' कुर्बान मियां बोले।

'अच्छा तो तुम्हारे हेडमास्टर ने तुम्हें धमकी दी है।'

'जी, चचा जान! लेकिन यह सिर्फ धमकी नहीं, वह सचमुच ऐसा कर बैठेंगे।'

'अरे! मैं तो कहता हूं कि इन्हें रोज ही ऐसा करना चाहिये, उनसे मैं पूछूंगा कि अब तक तुम्हें स्कूल में उल्टा क्यों नहीं लटकाया?' चचा मियां बोले।

कुर्बान मियां ने भोलेपन से कहा – 'आप तो ऐसे कह रहे हैं, जैसे इसमें भी मेरा कसूर है। हेडमास्टर साहब ने अब तक नहीं लटकाया तो आप लटका दीजिए।'

'मैं जरूर यह काम करूंगा। तुम्हें उल्टा लटकाऊंगा और फिर देखूंगा कि कौन तुम्हें

नीचे उतारता है।'

'आप उतारेंगे और कौन उतारेगा? मैं दिन भर थोड़े ही लटकना चाहता हूं। बस, पन्द्रह-बीस मिनट के लिए।'

'लेकिन तुम्हारे हेडमास्टर साहब ने तुम्हे ऐसा कहा क्यों?'

कुर्बान मियां ने मुस्करा कर कहा — 'मैं आपको बताता हूं कि क्या हुआ। यह कल की बात है। हमारे स्कूल में नुमाइश की तैयारी हो रही है। हर लड़का कोई-न-कोई काम कर रहा है। हमारी कक्षा में कागज के फूल लगाये जा रहे हैं। फूल कुछ कम पड़ गये। हेडमास्टर साहब इस काम की निगरानी कर रहे थे। इन्हें और तो कोई काम का लड़का दिखायी न दिया, मुझसे बोले — 'कुर्बान मियां, तुम जरा बाजार चले जाओ और एक रुपये के फूल ले आओ।'

'मैंने कहा, जी सर, मैं अभी जाता हूं और अभी वापस आता हूं।' हेडमास्टर साहब बोले — देर न करना। तीन बजे तक यह काम पूरा हो जाना चाहिये। तुम ऐसा करो कि मेरी साइकिल ले जाओ और मिनटों में वापस आ जाओ। मैं कुछ कहना चाहता था कि उन्होंने कहा — अब ज्यादा गुफ्तगू न करो और फौरन भागो। मैं चुपके से खिसक गया। लेकिन जब चार बजे फूल लेकर मैं स्कूल पहुंचा तो बस हेडमास्टर साहब तिलमिला रहे थे। पूरी कक्षा के सामने उन्होंने मुझे खूब डांटा - 'कुर्बान मियां, दो बजे के गये तुम अब चार बजे लौटे हो। कहीं बैठकर घास तो नहीं खा रहे थे?'

मैंने कहा — 'बाजार तो बहुत दूर है, सर! मैं तो बहुत तेज आया।'

हेडमास्टर साहब बोले — 'बाजार दूर है तो क्या हुआ! मैंने कहा था कि साइकिल लेकर जाना।'

मैंने कहा — 'मैं साइकिल ले गया था। पर मुझे साइकिल चलानी नहीं आती। मैं तो साइकिल हाथ में पकड़ कर ले गया था पैदल ही। सब लोग मुझे देखकर हंस रहे थे।' इस पर वे बोले — बेवकूफ, जब साइकिल चलानी नहीं आती तो ले क्यूं गये? मैंने फिर उन्हें याद दिलाया, आपने ही कहा था न सर! इसलिए ले गया था। बको मत! उन्होंने कहा — आइंदा तुमने कोई बेवकूफी की तो उल्टा लटका दूंगा।'

कुर्बान मियां अपनी कहानी सुना रहे थे, और चचा मियां और गुस्से से भरे उन्हें यूं देख रहे थे, जैसे वे कोई अजूबा हो।

अनुवाद: तरनजीत

□

माता ने अपने बच्चों को इकट्ठा करके कहा- 'सप्ताह भर में जो सबसे अधिक आज्ञा माननेवाला साबित होगा उसे मैं हर सप्ताह के अन्त में बढ़िया इनाम दूंगी।'

बच्चों ने इस सुझाव का विरोध कर कहा- 'तब तो यह इनाम हमेशा पिताजी को ही मिलेगा।'

—डॉ. गोपालप्रसाद 'वंशी'

□

# पड़ोसी

## □ लक्ष्मी नारायण श्रीवास्तव

हमारे मोहल्ले में रामदीन शायद सबसे गरीब आदमी था। वह वास्तव में उतना गरीब था जितना हम समझते थे या फिर यह हमारी आंखों पर चढ़े अमीरी चश्मे का परिणाम था! हमारी कालोनी आजकल की भाषा में 'पाश कालोनी' कहलाती है। यहाँ पर सभी मकान बड़े-बड़े अधिकारियों एवं उद्योगपतियों के ही थे ऐसे में हम उस व्यक्ति को और क्या समझते जिसके पास मात्र २ कमरों का मट्टी का बना हुआ एक मकान था जिसमें न कूलर था, न एअर कंडीशन था, न पोर्टिको में चमचमाती कार खड़ी थी, और न जिसके घर में कोई कुत्ता ही था। हमारी नजर में तो उसका घर एक घरघूला ही था। पर रामदीन की नजर में वही घर उसका मन्दिर था जहाँ उसकी मानवता, उसके सपने, और उसका छोटा-सा परिवार रहता था। रामदीन वहीं अपने घर में एक छोटी-सी परचून की दुकान चलाता था। यूँ देखा जाय तो उसकी दुकान से हमारी कालोनी के लगभग सभी परिवारों में कुछ न कुछ जाया करता था मगर हम उसे 'जनरल मर्चेन्ट' का दर्जा देने के लिये तैयार नहीं थे। उसकी दुकान पर हमारी कालोनी के नौकरों की भीड़ लगी रहती थी। कालोनी के नौंकरों के लिए गपशप का वही अड्डा था। कालोनी के किस परिवार में क्या चल रहा है, कौन नया व्यक्ति आया है, किसका किसके साथ एफेयर चल रहा है आदि सभी बातें वहाँ पर पता चल सकती थीं। पर रामदीन सिर्फ अपने काम में ध्यान रखता था। वह सुनता सबकी था पर किसी प्रकार का कोई हस्तक्षेप नहीं करता था। कालोनी में इस प्रकार की इकलौती दुकान होने के कारण रामदीन की घर चलाने लायक आमदनी आसानी से हो जाती थी।

रामदीन कालोनी के सभी व्यक्तियों को अपना पड़ोसी समझता था। पर हमारी नजर में रामदीन का शायद कोई पड़ोसी न था। किसी भी घर में कोई खुशी हो या फिर कोई गम रामदीन वहाँ जरूर पहुँचा रहता था। उसने कभी किसी बुलावे का इन्तजार नहीं किया। वास्तव में उस 'पाश कालोनी' में रहने वाले लोगों के लिये रामदीन को बुलावा भेजना एक तौहीन जैसा ही था। रामदीन के मन में, लेकिन, किसी प्रकार का कोई दुराव न था। वह तो निर्लिप्त भाव से सभी जगह पहुँचा रहता था। उसकी कोई चाह न थी, वह तो सिर्फ पड़ोसी के कर्तव्यों का निर्वाह

किया करता था। हम, लेकिन, उसके इस पड़ोसी कर्तव्य के पीछे किसी स्वार्थ को ही देखते थे और इसका एकमात्र कारण इतना ही था कि हम अमीरजादे यदि किसी से नमस्कार भी करते हैं तो नजर अपनी किसी न किसी स्वार्थ सिद्धि पर ही होती है। स्वतंत्र दृष्टि से रामदीन का यह आचरण उसके मानवता एवं पड़ोसी कर्तव्यों की ही परिणिति था।

किसी के घर में यदि कोई गम्भीर रूप से बीमार पड़ जाये तो भले ही चाहे उस परिवार के सदस्य सो जायें पर रामदीन के लिये एक पल भी सोना हराम था। उस समय उसको और कुछ ख्याल ही न आता था। वह सिर्फ उस व्यक्ति की सेवा में ही जुटा रहता था। उसने इसके प्रतिकारस्वरूप किसी से कुछ आशा न की थी। शनैःशनैः उस 'पाश कालोनी' के लोग अपने किसी कार्य में रामदीन को सम्बन्धित करने में अपना अधिकार समझने लगे थे। स्थिति तो यहाँ तक पहुँच गयी थी कि वह सार्वजनिक नौकर हो गया था। रामदीन की किसी कार्य करने की इच्छा है भी या नहीं यह किसी ने कभी जानने की कोशिश नहीं की। हम लोग तो उस पर अधिकार ही जताते रहे। हमने कभी रामदीन की व्यक्तिगत जिन्दगी में झाँक कर देखने की कोशिश नहीं की। उसकी आवश्यकताओं एवं अभावों के प्रति हमारी कोई निष्ठा नहीं थी और न ही हमारा उनसे कोई सरोकार था।

रामदीन, किन्तु हमारी इस मानसिकता से अनभिज्ञ था। वह एक यांत्रिक मानव की तरह अपनी दिनचर्या शुरू करता था, ओंठों पर मुस्कान लिये वह सबका स्वागत करता था। वह सबसे परिचित था पर उसका कोई परिचित न था। इन सब बातों से अनभिज्ञ रामदीन जिन्दगी की यात्रा शनैः शनैः तय कर रहा था। पर शायद लगता है कि ईश्वर को रामदीन को बहुत दिनों तक अंधेरे में रखना मंजूर न था। वैसे यदि रामदीन स्वयं अपने बनाये अज्ञानता के अँधेरे में रहता तो श्रेयस्कर होता। कम से कम उसे हमारी कालोनी जिसने रामदीन को कभी कुछ न दिया, को तो न छोड़ना पड़ता।

एक दिन रामदीन जब मुखर्जी साहब के यहाँ से लौटा तो उसने अपनी माँ को बुखार में तपते पाया। बुखार चढ़ना कोई खास बात नहीं है अतः माँ को आराम करने की सलाह देकर स्वयं सोने चला गया। पर रात्रि में लगभग दो बजे उसकी माँ की तबियत बहुत ज्यादा बिगड़ गयी। बुखार में उसकी माँ अनाप शनाप बकने लगी तथा बीच बीच में बेहोश होने लगी। किसी डॉक्टर को दिखाना रामदीन के लिये अब जरूरी हो गया। पर उस कालोनी में कोई डॉक्टर नहीं रहता था। शहर में डॉक्टर तक पहुँचने के लिये कम से कम नौ मील चलना पड़ता। शहर के बाहर बनी कालोनियों में यही तो दिक्कत होती है कि वहाँ पर किराये की सवारी रात्रि में नहीं मिलती। आपके पास यदि अपनी कोई सवारी नहीं है तो आपको रात्रि में बहुत परेशानी हो सकती है और यही रामदीन के साथ हुआ। इधर उधर चक्कर काटने के बाद भी

रामदीन को न तो कोई रिक्शा ही मिली और न ही कोई अन्य सवारी। अतः रामदीन ने सोचा कि उसका तो कालोनी में सभी से मिलना जुलना है वह किसी से भी एक कार माँग लेगा। सभी मकानों में कम से कम एक कार तो खड़ी रहती है। यह सोचकर वह सबसे पहले मिस्टर मुखर्जी से ही मदद माँगने चल दिया। जब वह गेट पर पहुँचा तो देखा कि गेट अन्दर से बन्द था पर वहीं नीचे मुखर्जी का नौकर कन्हई सो रहा था। रामदीन ने दो तीन आवाजें कन्हई को दीं। कन्हई रामदीन की आवाज पहचान गया और उसने गेट खोल दिया। रामदीन ने कन्हई को सारी बात बताई तथा मुखर्जी को जगाने के लिये कहा। कन्हई ने एक दो बार काल-बेल बजाई और मुखर्जी साहब की आवाज बरामदे से आयी 'कौन है?' कन्हई ने कहा कि रामदीन आया है उसकी माँ की तबियत बहुत खराब है आपसे मिलना चाहता है। मुखर्जी साहब ने पहले तो मन में कुछ बुदबुदाया फिर बोले आज बहुत थका हूँ उससे कहो सबेरे आयेगा। यह कहकर उन्होंने बरामदे की लाईट बुझा दी। रामदीन मुखर्जी साहब को आवाज देता रह गया पर मुखर्जी साहब ऐसे सोने चले गये जैसे रामदीन को वो जानते ही न हों। रामदीन तो हत्प्रभ रह गया। वो समझ ही नहीं पा रहा था कि मुखर्जी साहब ने ऐसा अजनबी-सा व्यवहार क्यों किया। उसका सरल मन यह सोच ही न पाया कि यह समाज बहुत स्वार्थी है। यहाँ यदि अपना काम पड़े तो लोग गधे को भी बाप बनाने से नहीं चूकते और दूसरों का काम पड़ जाय तो पहचानने से इन्कार कर देते हैं। और फिर बँगले में रहने वाले तो झोपड़ों में रहने वालों को इन्सान ही नहीं मानते। पर रामदीन ने तो यही समझा कि मुखर्जी साहब वास्तव में थके होंगे और यह सोच कर वह कक्कड़ साहब से मदद माँगने चल दिया।

कक्कड़ साहब के गेट पर हाथ रखते ही उनके डाबरमैन कुत्ते की भौंक सुनाई दी। कुत्ते की आवाज सुनकर कक्कड़ साहब ने अपने बेडरूम की लाईट जलाये बिना ही पूछा 'कौन है?' रामदीन ने अपनी चिर परिचित आवाज में कक्कड़ साहब को नमस्कार किया और अपनी समस्या बताई। कक्कड़ साहब ने रामदीन को बताया कि उनका ड्राईवर छुट्टी पर है तथा अब रात ज्यादा हो गयी है अतः कल सुबह तुम्हारी माँ को अस्पताल पहुँचा दिया जायेगा। रामदीन ने कहा, 'पर साहब मेरी माँ की तबियत बहुत खराब है और फिर आप भी तो कार चलाना जानते हैं।' कक्कड़ साहब ने रामदीन को दो टूक उत्तर दिया 'अब मैं खुद ड्राईव करके तो इतनी रात को नहीं जाऊंगा। सुबह यदि ड्राईवर आया तो वह ले जायेगा।' रामदीन बगैर कुछ कहे वहाँ से चल दिया। उसकी आंखों में पड़ा अज्ञानता का परदा शनैः शनैः हटने लगा था। उसने कालोनी के और दो-तीन मकानों में मदद माँगी पर किसी न किसी बहाने से हर किसी ने उसके साथ चलने को मना कर दिया। आज रामदीन को अपने आधुनिक पड़ोसी कर्तव्य का ज्ञान हुआ। उसे अपने ऊपर बहुत गुस्सा

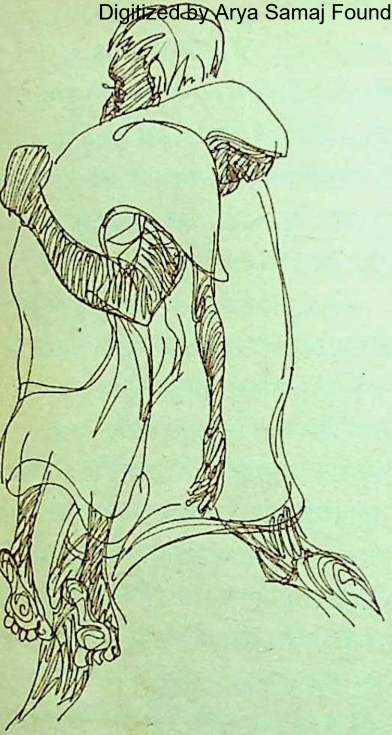

आ रहा था कि वो क्यों सबके दुःख में शामिल रहता था। यहाँ तो कोई उसे पहचानना भी नहीं चाहता है। वह गरीबी एवं अमीरी के बीच पड़ी खाई को लाँघने में असफल रहा था।

यही सब सोचते हुए वो अपने घर लौट आया। उसकी माँ की तबियत अभी भी वैसी ही थी। बल्कि कुछ बिगड़ ही गयी थी। जब रामदीन को और कोई रास्ता नहीं दिखा तो वह स्वयं ही माँ को अपने कंधे पर डाल कर पैदल ही चल दिया। रास्ते में वह जिन्दगी के अपने नये अनुभव के बारे में ही सोच रहा था। 'वसुधैव कुटुम्बकम्' का उसका हुआ पाठ 'बसुधैव शत्रुतम्' के अध्याय जाकर समाप्त हो रहा था। वह बस सोच रहा था कि क्या पैसा इन्सान को नहीं रहने देता? इन्सान का इन्सान के स्वाभाविक़ प्रेम होना चाहिये किन्तु पैसे इन्सान को लोहे की एक मशीन बना दिया जिसमें दिमाग तो होता है पर दिल नहीं है। इन्हीं उधेड़बुन में वह चलता जा रहा लगभग दो कि.मी. चलने के बाद उसे रिक्शा मिल गया जो शायद किसी को से दूर कालोनी में छोड़ कर लौट रहा

लगभग पांच बजे वह अस्पताल पहुँचा तब तक बहुत देर हो चुकी थी। रामदीन मां इस दुनिया को छोड़ जा चुकी रामदीन कुछ देर अपनी माँ को गोद में आंसू बहाता रहा। फिर अपनी माँ को रिक्शे पर लाद कर वह श्मशान घाट गया। आज वह अपने को बहुत महसूस कर रहा था। वास्तव में देखा जाये वह उस जगह पर खड़ा था जहाँ एक न दिन सबको अकेले ही जाना है। वहाँ जिन्दगी भर इकट्ठा की हुई पाप की साथ नहीं जाती वहाँ पर पैसा नहीं आता। वहाँ पर काम आती है इन्सान इन्सानियत जो यादें बनकर लोगों के दिल रहती हैं।

क्रिया-कर्म करने के पश्चात् रामदीन अपने घर नहीं गया बल्कि वो अपने दूर के एक रिश्तेदार के यहाँ चला गया। लगभग दो माह बाद वो अपने पुराने घर गया पर इस

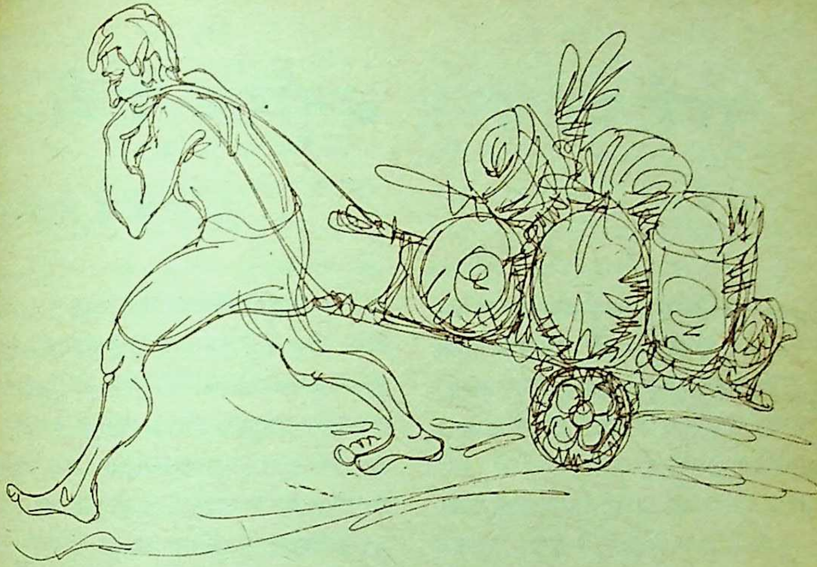

बार रहने नहीं अपितु अपना सामान लेने। जब वह सामान एक ठेला गाड़ी में रख रहा था तो पास के एक दो नौकर भी वहाँ आ गये। पर किसी की उससे बोलने की हिम्मत नहीं पड़ रही थी। वो सब रामदीन से न जाने क्यों शर्मिन्दा थे। थोड़ी देर बाद उनमें से एक ने कहा कि हमें तुम्हारी माँ के मरने का बड़ा दुःख है पर तुम यह मकान छोड़कर क्यों जा रहे हो? रामदीन ने कहा मैं इस जंगल में रह कर क्या करूंगा? अब मैं वहाँ रहूंगा जहाँ आदमी रहते हों। यहां मुझे क्या मिला? जिन्हें मैं अपना समझता था उन्होंने अपना समझने से इन्कार कर दिया। जैसे जंगल में जानवर एक दूसरे को नहीं पहचानते वैसे यहाँ के इन्सान भी एक दूसरे को नहीं पहचानते। बहुत दिन अज्ञानता के अंधेरे में रह चुका। अब अपनों के बीच में रहूंगा। हंस बनने के प्रयास में कौआ कौओं से भी मार खाता है। वास्तव में देखा जाये तो यहां आदमी नहीं रहते बल्कि यहां पोस्टें रहती हैं। यहां अधिकारी रहते हैं, कर्मचारी रहते हैं, व्यापारी रहते हैं, पर यहां इन्सान नहीं रहते। इतना कह कर रामदीन चुपचाप अपनी ठेलागाड़ी को लेकर हमारी कालोनी को छोड़ कर यहां से हमेशा के लिए चला गया। आज रामदीन के आगे हम अपने को बहुत छोटा महसूस कर रहे थे।

**– विशेष अनुसंधान शाखा**
**८०२-बटलर पैलेस,**
**बहुखण्डी भवन, बटलर रोड,**
**लखनऊ, उ.प्र.**

# पृथ्वी पर जन्मा अंतरिक्ष यात्री

☐ राजीव सक्सेना

अब वैज्ञानिकों द्वारा यह बात स्पष्ट-रूप से स्वीकार की जाने लगी है कि इस 'महतोमहीयान' ब्रह्माण्ड में हम अकेले नहीं हैं। ब्रह्माण्ड में हमारे ग्रह के अलावा संभवतया अपनी ही आकाशगंगा में हमसे करोड़ों प्रकाशवर्ष दूर बुद्धिमान प्राणियों का अस्तित्व है। अब ये अटकलें लगायी जा रही हैं कि यदि हमारी ही आकाशगंगा में बुद्धिमान प्राणियों का अस्तित्व है तो कहां है ? क्या वे रूप-रंग और आकृति में हमसे भिन्न हैं ? और यदि वे बुद्धिमान हैं तो उनका विज्ञान कितना विकसित हो चुका हैं ?

लेकिन अब ये अटकलें करीब-करीब समाप्त हो चली हैं। इसी वर्ष जुलाई के अंत में सोवियत वैज्ञानिकों ने साइबेरिया के बंदरगाह शहर नेदा में ध्वस्त हुए एक अज्ञात अंतरिक्ष यान से नौ अजीबोगरीब प्राणियों को जीवित बचा लेने में सफलता प्राप्त की है। अंतरिक्ष में किसी अज्ञात स्थान से आये इन बुद्धिमान प्राणियों को मास्को में किसी गुप्त स्थान पर कड़ी सुरक्षा के बीच रखा गया है। सोवियत वैज्ञानिकों द्वारा इन अज्ञात अंतरिक्ष यात्रियों पर निरंतर प्रयोग किये जा रहे हैं। यद्यपि सोवियत वैज्ञानिकों ने नेदा में ध्वस्त हुए अंतरिक्ष यान से बचाये गये इन अज्ञात प्राणियों के बारे में कोई आधिकारिक जानकारी बाह्य विश्व को नहीं दी है तथापि मास्को से चुराकर यूगोस्लाविया पहुंचाये गये एक दस्तावेज से उक्त तथ्य की पुष्टि हो चुकी है। सोवियत वैज्ञानिक अज्ञात प्राणियों के बारे में किसी भी जानकारी को इसलिए गुप्त रखना चाहते हैं कि अमेरिका या कोई अन्य देश उनसे बाजी न मार ले और अंतर्राष्ट्रीय मानवतावादी संगठन कोई बवाल न खड़ा करे। बहरहाल, सोवियत वैज्ञानिकों द्वारा नेदा में ध्वस्त हुए अंतरिक्ष यान से नौ अज्ञात प्राणियों को बचा लिये जाने की बात से इतना तो स्पष्ट हो गया है कि अंतरिक्ष में हमारे अलावा अन्य ग्रहों पर भी बुद्धिमान प्राणियों का अस्तित्व है और उनका विज्ञान भी हमसे कहीं ज्यादा विकसित है।

सबसे अनोखी बात तो तब हुई जब सोवियत वैज्ञानिकों द्वारा बचाये गये बाह्य अंतरिक्ष के इन नौ अज्ञात प्राणियों में से एक ने विलक्षण बच्चे को जन्म दिया।

बाह्य अंतरिक्ष के किसी बुद्धिमान प्राणी

द्‌वारा पृथ्वी ग्रह पर एक अन्य प्राणी को जन्म देने की घटना इस सदी में सर्वाधिक सनसनीखेज और अविश्वसनीय है ।

यूगोस्लाविया से प्राप्त हुए एक दस्तावेज में, जो कि एक जैव-भौतिक विज्ञानी को संबोधित है, सोवियत संघ के डॉक्टर कूरीलेव ने यह उद्‌घटित किया है कि नेदा में पकड़े गये बाहय अंतरिक्ष के बुद्धिमान प्राणियों में से एक ने अद्‌भुत बच्चे को जन्म दिया है । देखने में यह इतना डरावना है कि बाहय अंतरिक्ष के सभी नौ प्राणी भी इससे भयभीत दिखायी देते है और यह अद्‌भुत बच्चा रूप और आकृति में बिल्कुल भी उनके समान नहीं है । संभवतया यह एक भिन्न किस्म का प्राणी है जो किसी विकिरण से हुए उत्परिवर्तन के कारण विकृत हो गया है । डॉक्टर कूरीलेव ने अपने दस्तावेज में आगे बताया है कि बाहय अंतरिक्ष की अज्ञात माता द्‌वारा जन्मा गया यह बच्चा कुरूप है कि प्रकृति की कोई भूल मालूम पड़ती है । दस्तावेज में यह भी बताया गया है कि इस अद्‌भुत बच्चे में होने वाले परिवर्तन और इसके व्यवहार पर बारीकी से नजर रखी जा रही है और किसी भी असामान्य लक्षण को हर चार घंटे के बाद रिकॉर्ड किया जा रहा है । डॉक्टर कूरीलेव ने यह स्पष्ट नहीं किया है कि बाहय अंतरिक्ष के प्राणी द्‌वारा जन्मा गया यह बच्चा अब जीवित है या मृत । किंतु विश्वास किया जाता है कि स्वयं सोवियत वैज्ञानिक इससे कुछ डर गये थे, अतः उन्होंने इसको मार दिया है ताकि यह विकृति भविष्य में दुनिया के लिए मुसीबत न बन पाये ।

एक जैव-भौतिक विज्ञानी मिलोगद गुसावेक ने बताया है कि जन्म के समय बाहय अंतरिक्ष का यह बच्चा तीन पौंड और सात औंस वजनी था । यह तेरह इंच से कुछ ही लंबा था और आकृति में किसी फुटबाल के समान था । इसके तीन पूंछें, हाथ और पैर थे जिन पर सांप के समान शल्क थे । इसका सिर छिपकली जैसा है, जिसमें छोटी-छोटी काली आंखें हैं, एक नथुना है और नाक बिल्कुल गायब है । इसकी त्वचा का रंग कुछ-कुछ नीला है ।

यान के दुर्घटनाग्रस्त होने पर ये अंतरिक्षीय प्राणी घायल हो गये थे, किंतु उपचार करके इन्हें सुरक्षित रूप से बचा लिया गया है । बाहय अंतरिक्ष से आये इन अज्ञात बुद्धिमान प्राणियों के लिए पृथ्वी पर यान की दुर्घटना और भयावह सरीसर्प बालक का जन्म किसी दुःस्वप्न से कम नहीं है, किंतु वे सब इस सदमे से धीरे-धीरे उबर रहे हैं । बताया जाता है कि शीघ्र ही सोवियत राजनेता अज्ञात अंतरिक्ष यात्रियों को बचाये जाने तथा भयावह अंतरिक्षीय बालक के जन्म की जानकारी समस्त विश्व को सार्वजनिक तौर पर देंगे ।

अनुमान लगाया जा रहा है कि जल्दी ही कुछ रोचक और चौंकाने वाली जानकारियां सामने आयेंगी, जिससे धरती का विज्ञान और भी अधिक उन्नत हो जायेगा ।

**– किसरौल, नागफनी,**
**मुरादाबाद, उ.प्र.**

# अपेक्षित ज्योति

☐ साधना श्रीवास्तव

बैंक की कार्य अवधि के बाद दो घंटे का ओवर टाइम करके घर आने पर नीरजा मानसिक व शारीरिक दोनों स्तर पर काफी थक चुकी थी। अतः घर आते ही हाथ-मुंह धोकर चुप-चाप अपने कमरे में पलंग पर पड़ गयी। मां ने आकर चाय के लिये पूछा तो धीरे से हामी भर दी।

चाय पीकर उसने मां से साफ-साफ कह दिया – 'मां मैं बहुत थकी हूं, सो जाऊं तो खाने के लिए जगाना मत', – 'ठीक है आराम कर लो, पर खाना तो खाना ही है। दस-साढ़े दस तक जगाने आऊंगी।' 'दरवाजा भेड़ देना मां,' जाती हुई मां से नीरजा ने कहा और दूसरी तरफ करवट लेकर पड़ी रही। इच्छा हो रही थी कि सो जाये पर आंखें झपकने का नाम नहीं ले रही थीं। कुल तीन वर्ष दो माह उसकी शादी को हुए। जिसमें से लगभग दो वर्ष से वह मां के पास है। ससुराल में मात्र एक वर्ष दो माह रही। राम-सीता के चौदह वर्ष के बन प्रवास से भी कष्टप्रद उसे ससुराल में व्यतीत कियेअपने चौदह माह लगे, फिर भी उसने धैर्य का दामन नहीं छोड़ा। हार मानने से बात बनने को नहीं थी – अतः उसने हिम्मत बांध कर समस्या का कुछ निदान ढूंढ़ना चाहा और तब वह कूछ दिन के लिए मां के पास आ गयी। नीरजा का थका मन अतीत के झुरमुट में खोता गया।

* * *

पिता के आकस्मिक निधन के समय वह मात्र दस वर्ष की थी और छोटा भाई दीपक पांच वर्ष का – पिताजी की सरकारी नौकरी न होने के कारण मां बित्कुल असहाय सी हो गयी थीं। उसकी एवं नन्हे से भाई की भारी जिम्मेदारी उनके कंधे पर आ पड़ी थी। फर्म के लोगों ने मिल कर सहानुभूतिपूर्ण कुछ आर्थिक सहायता कर दी थी, पर उतना उन सबके तमाम जीवन के लिए पर्याप्त न था। अतः मां ने खाली समय में अड़ोस-पड़ोस के लोगों के वस्त्र सिल कर कुछ धनोपार्जन करना शुरू किया... ताकि खर्च के साथ थोड़ी बचत भी हो सके।

शहनाइयां बजती हों अथवा गम के स्याह बादल छाले हों, समय तो अपनी रफ्तार से सरकता ही रहता है– कभी किसी के कारण रुकना उसे गवारा नहीं। सरकते समय के साथ दोनों बच्चे बड़े हुए– जिस वर्ष उसने एम. काम. उतीर्ण किया, उसी वर्ष दीपक ने भी इन्टर प्रथम श्रेणी से उत्तीर्ण किया। बच्चे

मां की विवशता व पीड़ा को अच्छी तरह देखते व समझते थे, अतः 'उतै पांव पसारिये जितनी चादर फैल' इस कहावत के अनुसार ही अपनी हैसियत समझ कर ही कोई काम करते।

जब वह बी. काम. में अध्ययनरत थी मां तभी से उसके विवाह के लिए प्रयासरत थी, पर कामयाबी नहीं मिल पा रही थी। जहां भी बात चलती– दहेज रूपी दानव हर तरफ मुंह बाये खड़ा मिलता। उसके ताऊजी के एक मित्र सदानन्द थे, जिनका पुत्र विक्रम ए. जी. आफिस में कार्यरत था– मां ने उससे शादी की बात चलायी और इत्तफाक से वहां कामयाबी हासिल हो गयी और उसका विवाह पूर्ण हर्षोल्लास के साथ विक्रम के साथ सम्पन्न हो गया। उसके हाथ पीले कर, उसे विक्रम के हाथों सौंप मां आश्वस्त हो गयी कि वह एक भारी जिम्मेदारी से मुक्त हो गयी।

नीरजा ने करवट बदली – सामने दीवाल पर दृष्टि टिक गयी जहां फ्रेम में जड़ी उसकी व विक्रम की फोटो ससुराल के सभी सदस्यों के साथ की, लगी थी– फिर मन वहीं भटक गया– छम-छम पायल बजाती नयी नवेली दुल्हन बनी, बारात व नौशा बने पति के साथ जब वह ससुराल के लिए चली थी तो मन में जाने कितने सुनहरे सपने सले हुए थे– पर ससुराल की डेहरी पर पांव रखते ही सब छितर-बितर होकर धूल में मिल गये। उसे एक दिन के लिए भी यह आभास नहीं होने दिया गया कि वह नयी दुल्हन है। कम दहेज

मिलने का रोब उस पर भली प्रकार उतारा गया। अतः घर-गृहस्थी के दिन-रात के काम, हर तरह की जिम्मेदारी, डांट-फटकार और व्यंगपूर्ण आलोचनायें सब एक साथ उसके सितारे टंके चुनरी के आंचल में डाल दिये गये। ससुराल में पर्दापण करते ही उसे कैसे-कैसे पापड़ बेलने पड़े– कौन-कौन से दिन देखने पड़े– बन्द जुबान के साथ वह हर जुर्म बर्दाश्त करती रही। मां से उसने कभी कुछ नहीं बताया– अपितु यही तसल्ली देती रही कि उसे ससुराल में बहुत आराम है– लोग इज्जत देते हैं– बहुत चाहते हैं उसे। वह नहीं चाहती थी कि उसकी दुखी मां को एक और सदमे के दौर से गुजरना पड़े– जिसे शायद वह झेल भी न सके।

आर्थिक स्थिति अत्यन्त कमजोर होने के कारण मां उसके विवाह में अधिक धन अथवा सामान नहीं दे सकी थी– जिस कारण ससुराल में उसे नाना प्रकार के व्यंग बाणों से छलनी किया जाता। जब-तब सास-ससुर कह देते– 'तुम्हारी मां के देने से चार-छः गुना अधिक तो नौकर-चपरासियों को उनकी शादी में मिल जाता है। मेरे बेटे को भी कम-से-कम तीस-चालीस हजार नकद और इतने का ही सामान मिल सकता था। अकेली लड़की देख कर न जाने कहां जाकर हम फंसे।'

नीरजा चुप रह कर सोचती– मां के पास इतना ही देने को होता तो क्लर्क से शादी क्यों करती, फिर भी अपनी सामर्थ्य भर नगद व भारी कीमत वाली वस्तुओं को छोड़ कर शेष सभी कुछ दिया।

विक्रम समझदार है, पर उनकी कुछ चलती नहीं। कई बार उसका पक्ष लेना चाहा पर हमेशा पिता सदानन्द ने झिड़क दिया– 'तुम जो कुछ हो हमारी बदौलत हो, फिर उसकी तरफ से बोलने की तुम्हारी हिम्मत कैसे पड़ी! क्या तुमको अपने हाथ-पैरों का बनाने में हमारे पसीने की कमाई नहीं लगी– फिर दहेज में कुछ रकम चाहना बेजा क्यों है?' भविष्य में विक्रम को नीरजा के पक्ष में अथवा दहेज के विपक्ष में कुछ कहने की हिम्मत नहीं पड़ी। माता-पिता को वह यह भी समझाने का साहस न कर सका कि वे परिवार इतनी दयनीय स्थिति में अपना गुजारा कर रहा है, वह दहेज कहां से दे सकता है?

नीरजा हर तरह से प्रताड़ित व अपमानित की जाती। उसे हाड़-मांस का इंसान नहीं अपितु लोहे की मशीन समझ कर पशुवत व्यवहार किया जाता। प्रातः से उठ कर घर की व बर्तनों की सफाई करना, नाश्ता व भोजन बनाना और फिर दोपहर बाद कपड़ों की धुलाई, फिर वही बर्तन चाय और खाना– तमाम दिन काम का सिलसिला लगा रहता। उसे याद आया जब एक दिन उठने में कुछ देर हो गयी थी– जब तक सफाई व स्नानादि से निवृत्त होकर वह रसोई घर में दाखिल होती– सास ने जोर-जोर से आवाज देकर कहना शुरू कर दिया– 'आठ बज गये अभी चाय-नाश्ते का नाम नहीं, नौ बजे तक खाना क्या बन पायेगा खाक? आज लगता है

बाप-बेटे दोनों को भूखे ही ऑफिस जाना पड़ेगा।'

नीरजा ने चाय बना कर मेज पर लगाते हुए अत्यन्त नम्र आवाज में कहा— 'मांजी चाय तैयार है, और हां खाने के लिए आप चिन्ता न किया करें, जब घर में गैस व कुकर की सहूलियत है तो खाना बनाने में कितना समय लगता है।' उसने यथा समय भोजन भी तैयार कर लिया था।

समस्त दिन काम करने के बाद रात में जब वह थकी लस्त-सी अपने कमरे में पहुंचती तो वहां मरम्मत व सिलाई के कपड़े रखे रहते-केवल कमीज, पैंट छोड़कर शेष सभी कपड़े उसे घर पर ही सिलने पड़ते। हिम्मत करके वह फिर मशीन के सामने सिलाई करने बैठ जाती। ऐसे ही एक दिन मशीन चलाने के बीच में उसे झपकी सी आ गयी और बांयें हाथ की अनामिका मशीन की सुई के नीचे आ गयी— वह दर्द से चीख पड़ी— पर उसकी आवाज सुन कर भी जागते हुए सास-ससुर उसके करीब नहीं फटके। विक्रम ने उठ कर मशीन के हैन्डिल को उल्टा चला कर सुई ऊपर की और उसकी ऊंगली बाहर निकाली— डेटॉल व एन्टीसेप्टिक क्रीम लगा कर पट्टी बांधता हुआ बोला— 'अपनी शक्ति से बाहर काम करती हो, नीरजा,कुछ पता है कि तुम कितनी कमजोर हो गयी हो। शीशे में अपनी सूरत देखी है।' 'करूं भी क्या, विक्रम। देखते हो इतना करने पर भी घर में कोई सन्तुष्ट नहीं है— अच्छा बताओ तुम अपने माता-पिता के सामने विवश नहीं हो। अपने लिए, मेरे लिए या किसी के लिए कुछ कर सकने को स्वतंत्र हो?'

'तुम ठीक कहती हो, नीरू,विवशता की मजबूत बेड़ियों से हम बंधे हुए हैं, पर इन बुजुर्ग लोगों के आगे करें भी क्या। अच्छा चलो सो जाओ।' मशीन बन्द करते हुए कहा विक्रम ने।

विक्रम तो जल्दी ही सो गया, किन्तु थकान के बावजूद नीरजा की आंखों में नींद का नाम न था— विक्रम की वही बात— शीशे में अपनी सूरत देखी है— बार-बार कानों में गूंजती रही— सचमुच एक वर्ष के अन्दर वह सूख कर कांटा हो गयी है। शरीर व चेहरे का रंग स्याह पड़ने के साथ आंखों के नीचे कालिमा आ गयी है। सबको खिला लेने के बाद जब वह अपना खाना परसती है तो सास रसोई घर के दरवाजे पर आकर चौकसी नजरों से खड़ी हो जाती है— कभी दाल में एक बूंद घी भी उसे नसीब नही हुआ— चुपड़ी रोटी की तो बात ही दूर रही। चावल बांसमती बनता था, वह प्रकाशवती (सास) इस अन्दाज से निकाल कर देती कि एक चावल का दाना भी उसके लिए बच जाये क्या मजाल। बची-खुची सब्जी व दाल के साथ सूखी रोटी उसके लिए पर्याप्त समझी जाती थी। आज तक फल और दूध की तो उसके लिए जरूरत हीं नहीं समझी गयी।

उसे स्मरण हो आया, जब एक बार सास ने पुलाव बनाने के लिए कहा था। हाथ ही था संयोग से नमक हलका सा ज्यादे हो गया, फिर क्या व्यंग बाणों की बौछार शुरू हो गयी—

जानबूझ कर अधिक नमक डाला होगा— ताकि कोई खा न सके और चौदह रुपये किलो के चावल पर महारानी स्वयं जबान साफ करे।'

नीरजा चुप रह कर झेल गयी पर उसकी समझ में नहीं आया कि अधिक नमक के कारण जिस चावल को कोई नहीं खा सकेगा उसे वह कैसे खा लेगी। गाय-भैंस तो है नहीं। बाद में विक्रम ने उसे समझा कर कहा था— मां की आलतू-फालतू बातों को एक कान से सुन कर दूसरे से निकाल दिया करो— इसके अलावा और कोई चारा नही है।'

* * *

विवाह होकर आने के बाद पति के साथ बाहर जाकर घूमने-घामने का आनन्द उठाने की बात तो दूर रही, स्थानीय बाजार अथवा फिल्म देखने की भी कभी नौबत न आ सकी। विक्रम के वेतन का पूरा पैसा सदानन्द व प्रकाशवती ले लेते। अगर किसी दिन वह कुछ ओवर टाइम कर लेता तो वही पैसा वह अपने जेब खर्च के लिए रखता और उसी में से कभी कुछ खाने-पीने की चीजें चोरी-छिपे लाकर नीरजा को भी खिला देता।

रविवार के दिन सास-ससुर की इच्छा व आज्ञानुसार कुछ न कुछ विशेष चीज अवश्य बनती, फलतः नित्य की तुलना में रविवार को नीरजा कुछ और व्यस्त हो जाती। उस दिन भी रविवार ही था, दिन भर काम करते-करते वह थक गयी थी। शाम को खाना बनाने के लिए रसोईघर में जाने की उसकी हिम्मत नहीं पड़ रही थी, फिर भोजन तो बनना-बनाना ही था। लहसुन [illegible] बगैर सूखे मसालों में उसने सब्जी बना दी। अतः सब्जी का रस कुछ पतला सा हो गया— सामने परसी सब्जी देखकर सदानंद तो उसे घूर कर रह गये पर प्रकाशवती ने गुस्से में कटोरी उसके चेहरे पर दे मारी— 'सब्जी बनायी है या समुद्र घोल कर रख दिया है। किसी काम में मन नहीं लगता जैसे किसी लाट साहब के यहां से आयी हो।'

वह कुछ बोली नहीं थी— खून का घूंट पीकर रह गयी थी। रसेदार गरम सब्जी से भरी स्टील की कटोरी तेजी से लगने के कारण चेहरे पर घाव हो गया था। विक्रम ने मां की तरफ आग्नेय नेत्रों से देखा— जैसे कह रहा हो— अत्याचार की भी कोई सीमा होती है, मां, पर मां का लिहाज कर चुप रह गया और नीरजा से ही बोला — 'चलो कुछ दवा लगा दूं— जिसे भूख होगी खा लेगा।'

* * *

रात्रि में नीरजा लेटी तो शरीर थक कर चकनाचूर हो चुका था। अनमना सा उद्विग्न मन गत चौदह माह से झेल रहे उत्पीड़ित दिनों का लेखा-जोखा लेकर उसी में उलझता गया। कार्याधिक्य के साथ नीरस, उबाऊ और प्रताड़ित जीवन व्यतीत करते-करते वह बिल्कुल लस्त हो गयी थी। शरीर धीरे-धीरे दुर्बल और शक्तिहीन होता जा रहा था। यदि ऐसी ही स्थिति कुछ दिन और रही तो निश्चय ही उसमें झेल सकने की शक्ति जवाब दे जायेगी। विक्रम चाहते हुए भी कुछ कर सकने की स्थिति में नहीं है। अतः उसे ही कुछ

निदान ढूंढ़ना होगा– अन्यथा दहेज दानव अपरोक्ष रूप से उसे निगल जायेगा।

अब तक मां दो बार भाई को भेज चुकी थी उसको बुलाने के लिए, पर सास-ससुर ने यह कह कर मना कर दिया कि पहले दहेज की बात पूरी हो फिर बुलाने की हिम्मत करे। अचानक उसके मन-मस्तिष्क में इसी से जुड़ा एक समाधान कौंधा– जिस पर विभिन्न प्रकार से विचार करती वह निद्रा की गोद में जा पड़ी।

दूसरे दिन उचित समय देख कर उसने प्रकाशवती से कहा– 'मां जी आप आज्ञा दें तो मैं कुछ दिन के लिए मां के पास हो आऊं, मैंने पहले पत्र लिख दिया था, अगर अब तक पैसे का प्रबन्ध हो गया होगा तो वह भी लेती आऊंगी।'

जाने की बात सुन कर पहले तो सास की भृकुटियां तन गयीं, पर तुरंत पैसों की बात सुन कर वह कुछ नरम पड़ कर बोली– 'ठीक है हो आओ, पर रुपये लेकर ही आना। तब तक इन्दु काम-धाम देखेगी।' 'भाभी, जल्दी आना, मुझसे इतना सारा काम नहीं होगा।' नंद इन्दु ने उसके जाने से अपने ऊपर पड़ रहे काम के बोझ से घबड़ा कर आग्रह किया। 'हां-हां– जल्दी आऊंगी–' नीरजा ने उसे धैर्य बंधाया। दूसरे दिन विक्रम नीरजा को उसके मायके छोड़ आये। रास्ते में नीरजा ने कहा– 'तुम परेशान मत होना– हो सकता है हमें कुछ अधिक समय लग जाये, पर अब सास-ससुरजी की इच्छा पूर्ण करने की हालत में ही वापस आऊंगी।'

'नीरू, मैंने स्वयं ऐसा सोचा था कि कुछ ऐसा कर सकूं, जिससे इस भारी समस्या के निदान होने के साथ-साथ हमारी पीड़ा भी कम हो सके। अतः मैंने दो-तीन घंटे का रोज ओवर टाइम शुरू कर दिया है– जिसका पैसा एकत्रित होने पर मैं तुम्हारे सुपुर्द कर देता और तुम उसे...।'

'नहीं, तुम ओवर टाइम का पैसा अपने लिए रखो, कभी कुछ जरूरत पड़ी तो किसके सामने हाथ फैलाओगे। वेतन तो पूरा का पूरा मां-बाप के हाथों में रख देते हो। इस समस्या का समाधान मैंने ढूंढ़ लिया है। अब देखो कहां तक कामयाब होती हूं।' विक्रम के हाथों को अपने हाथों में लेकर नीरजा ने पुनः भारी मन से कहा– 'तुमसे काफी दिनों के लिए अलग रहना पड़ेगा, विक्रम। पर सुखद भविष्य के लिए इस समय कुछ त्याग करना ही पड़ेगा।' 'ठीक है जैसी तुम्हारी इच्छा।' प्रत्युत्तर में विक्रम ने भी धीरे से उसके हाथों को होठों से लगा कर चूम लिया।

* * *

मां के पास आकर नीरजा कुछ दिन तो चुपचाप रह कर मां को सिलाई आदि में हाथ बटाती रही और साथ में ससुराल के लोगों की प्रशंसा भी करती जाती। अपने किसी भी बात व्यवहार से उसने प्रकट नहीं होने दिया कि दहेज के कारण वह ससुराल में उपेक्षित-सी है। अतः मां पूर्ण सन्तुष्ट थी। भाई दीपक भी बी.एस.सी. के अध्ययन में व्यस्त था, पर सबके साथ हंसी-खुशी रहते-रहते नीरजा अपने विशेष उद्देश्य के

लिए बराबर प्रयासरत रही। संयोग से उसके पिता के घनिष्ठ मित्र राकेश मित्तल के प्रयासोपरान्त उसे स्टेट बैंक में नौकरी मिल गयी। उसे लगा अब उसका उद्देश्य पूर्ण हो जायेगा और सास-ससुर की आकांक्षा पूर्ण कर सबके साथ सुख-चैन से रह सकेगी। राकेश अंकल के प्रति उसने हृदय से कृतज्ञता व्यक्त किया।

वेतन के लगभग ढाई हजार रुपये नीरजा के हाथ में प्रत्येक माह आते। मां तो कुछ न लेती पर वह अपने और भाई पर पांच सौ खर्च कर शेष दो हजार बैंक में डाल देती। उसने हिसाब लगाया— दो वर्ष में लगभग पचास हजार रुपये वह सास ससुर के हाथ में रख कर यह कहने योग्य हो जायेगी कि मां ने भेजा है। धीरे-धीरे डेढ़ वर्ष से अधिक व्यतीत हो गये। इस बीच विक्रम दो-तीन बार आकर उससे मिल गया था। गत ग्रीष्म में एक सप्ताह का अवकाश लेकर वह और विक्रम नैनीताल की मनोरम घाटियों में घूम भी आये थे। उसने विक्रम से सविस्तार बता दिया कि वह ससुराल सक्षम होकर पहुंच रही है।

* * *

'नीरजा, दीपक खाने पर तुम्हारी प्रतीक्षा कर रहा है।' मां की आवाज से नीरजा का विश्वस्तपन टूटा-उसने घड़ी की तरफ देखा साढ़े दस बज चुके थे। पांच बजे आराम करने की नीयत से वह लेटी थी और पांच मिनट भी सो न सकी थी— मन विगत दिनों में ही भटक रहा था कि मां ने उसे अतीत से समेट कर वर्तमान के आज में पहुंचा दिया। 'चलो मां,' कह कर वह उठी और मां के साथ हो ली।

थोड़ा समय और सरका था कि एक दि अप्रत्याशित रूप से विक्रम ने आकर बताया कि पिताजी गम्भीर रूप से अस्वस्थ हो गये हैं और अखिल भारतीय आयुर्विज्ञान संस्थान में भरती हैं— एक गुर्दे ने काम करना बन्द कर दिया है। अतः आपरेशन द्वारा गुर्दे का प्रत्यारोपण होना है।

नीरजा ने जमा किये रुपयों का बैंक खुलासा चेक लिया और अविलम्ब विक्रम के साथ दिल्ली रवाना हो गयी। प्रकाशवती ने उसे देखा तो सहसा विश्वास न हुआ- लिपट कर उससे रो पड़ी— नीरजा ने धैर्य बंधाते हुए कहा— 'घबड़ाइये नही, मांजी, भगवान की कृपा से सब ठीक होगा।'

प्रकाशवती ने उसे तथा विक्रम को सम्बोधित करते हुए कहा— 'मैं अपने सब आभूषण लेती आयी हूं। पहले इन्हें बेच कर पैसे का प्रबन्ध कर लो।'

विक्रम कुछ बोलता इससे पूर्व ही नीरजा ने कहा— 'इन गहनों को रखिये, मांजी, अभी इनकी जरूरत नही है। मैं खर्च के लिए पैसे लेकर आयी हूं।'

प्रकाशवती ने साश्चर्य नीरजा की तरफ देखा। पश्चात्ताप के भाव उनके चेहरे पर स्पष्ट झलक रहे थे- 'बेटी तुम अपना पैसा क्यों खर्च करोगी...। इन्हें ही बेच लेने दो।'

'नहीं, मां जी, हमारा और आपका पैसा बंटा नही है, फिर यह समय ऐसी बातें करने का नहीं है, चलिये पिताजी के पास चलते हैं।' नीरजा ने कहा और सब सदानंद की बेड की

तरफ बढ़ गये ।

* * *

आपरेशन सफल रहा । गम्भीर रूप से अस्वस्थ जीवन-मृत्यु के झूले पर झूलते पिता के प्रति विक्रम या नीरजा किसी के मन में कोई मैल नहीं था । दोनों ने तन, मन, धन से निष्ठापूर्वक उनकी सेवा व देखभाल करना अपना कर्तव्य समझा व किया भी । लगभग डेढ़ माह वह संस्थान में भरती रहे और जब अवमुक्त किये गये तब भी पूर्ण विश्राम व परहेज आदि की विशेष सावधानियों के साथ । इस डेढ़ माह में कभी बैंक तो कभी आफिस में उपस्थिति देने अथवा अवकाश बढ़ाने के उद्देश्य से बारी-बारी करके कभी विक्रम चले जाते तो कभी नीरजा ।

प्रकाशवती अच्छी तरह भिज्ञ थी कि नीरजा ने, जिससे उसने कभी मानवोचित व्यवहार नहीं किया, इस विपत्ति में धैर्य, त्याग व निःस्वार्थ भाव से ससुर की सेवा सुश्रुषा किया है । पैसों का पूरा खर्च उसी ने वहन किया । बेचने के लिए ले गये आभूषण भी उसने बेचने नहीं दिया । इस अनूठे सत्य से उसने सदानंद को भी परिचित कराया । पति-पत्नि दोनों पुत्रवधू के प्रति कृतज्ञता से भर उठे । उसे उसके प्रति अपने पूर्व अमानुषिक व घृणित व्यवहार के लिए घोर पश्चाताप प्रकट कर क्षमा चाही । 'आप लोग तो हमारे माता-पिता हैं इस तरह क्षमा मांग कर हमे शर्मिन्दा मत कीजिये' नीरजा ने समझ लिया कि उसने सास-ससुर दोनों का मन जीत लिया है– यद्यपि अभी दहेज के रुपये वह दे भी नहीं सकी ।

प्रकाशवती ने उसके सिर पर हाथ रख कर स्नेह से कहा– 'हमें सब पता चल गया बहू कि तुम्हें किस कारण बैंक की नौकरी करने को विवश होना पड़ा, पर अब तुमको नौकरी करने की जरूरत नही हैं ।' 'आपकी आज्ञा मानना हमारा फर्ज है, मांजी, पर आप तो जानती हैं कि जितनी आसानी से नौकरी छोड़ी जा सकती है, उतनी आसानी से मिल नहीं पाती है । मैं यहीं अपना स्थानान्तरण करा लूंगी । आप लोगों की सेवा के साथ नौकरी भी चलती रहेगी ।'

'ठीक है, पर तुम्हें अपने स्वास्थ्य का ध्यान रख कर ही काम करना होगा ।' सास ने कहा तो नीरजा ने मुस्करा कर विक्रम की तरफ देखा और मां से बोली– 'आपकी आज्ञा शिरोधार्य है, मांजी ।'

करीब आयी दीपावली की तरफ इशारा करके सदानंद ने भी नीरजा के प्रति कृतज्ञता व्यक्त करते हुए कहा– 'बेटी, पावन पर्व दीपावली तो प्रत्येक वर्ष चन्द समय के लिए उजाला लेकर आती है, पर तुमने तो हमारे मन-मस्तिष्क के अंधेरे को दूर कर हमें तमाम उम्र के लिए अपेक्षित ज्योति से परिपूर्ण कर दिया है ।'

प्रत्युत्तर में बिना कुछ बोले नीरजा ने झुक कर सास-ससुर के चरण स्पर्श किया और रसोईघर की तरफ बढ़ी ही थी की सास ने रोकते हुए कहा– 'तुम रहने दो बहू, इस वक्त इन्दु खाना बना लेगी ।'

**– १९ डी. रोड,**
**'निशीथ निकेतन', इलाहाबाद, उ.प्र.**

# सोवियत रूस की अग्नियोग साधिका वेलेन्तीना

☐ पी.डी. मिश्र

वेलेन्तीना की अग्नियोग साधना के प्रसंग में मुझे इस सदी के तीसरे दशक के रहस्यवादी अंग्रेजी कवि डब्ल्यु.बी.ईट्स की 'बाईजेन्शियम' (स्वर्णलोक) की कविता श्रृंखला की ये पंक्तियां बहुत प्रसंगानुकूल लगती हैं-

**दीवाल पर स्वर्णिम मोज़ेक से**
**प्रभु की पवित्र अग्नि में खड़े**
**ओ ऋषियो**
**बाहर आओ**
**एक गोल घेरे में**
**मेरी आत्मा के स्वामी**
**गीत गाओ**
**पशुता से बंधे**
**इच्छओं के दास**
**अपने आप से बेखबर**
**इस हृदय को गलाओ**
**ले लो मुझे भी अपने साथ**
**और इसे चिरन्तन बनाओ ।**

कई घंटों की बातचीत के बाद वेनेन्तीना ने मुझसे पूछा, ''क्या आप 'अग्नियोगं' के विषय में कुछ जानते हैं ? क्या भारत में 'अग्नियोगं' की कोई पद्धति ज्ञात व प्रचलित है ?''

मैंने उसे बताया कि योग पद्धतियों प भारत में बहुत विचार व अभ्यास हुआ है किन्तु 'अग्नि योग' के संबंध में कोई विशे उल्लेख या विवरण मुझे ज्ञात नहीं है।

किन्तु वेलेन्तीना अविचलित है। उस विश्वास अडिग है। वह मानती है कि 'अग्नियोग' भविष्य की महाशक्ति है। उसके अनुसार इस योग के अनुसरण में ही आगे सृष्टि का महाकल्याण होना है। उसके अनुसार यह भी सुनिश्चित है कि कुछ सौ वर्षों में यह शक्ति स्वतः संसार में फैल जायगी। हमारी सृष्टि के 'सतयुग' में संतरण का 'अग्नि योग' मुख्य आधार है और निश्चित ही भारत की सूक्ष्म शक्तियां इसके सुपात्र व्यक्तियों को तैयार कर रही हैं।

मैंने वेलेन्तीना से कहा कि हठयोग में शारीरिक क्रियायें, राजयोग में मानसिक अभ्यास और भक्तियोग में हृदय की परिशुद्धि योग की परिचित शैलियां हैं। स्वभावतः जब हम 'अग्नियोग' की बात करते हैं तो यह मानने का कारण बनता है कि इस प्रद्धति में अग्नि इस योग का प्रदान साधन होना चाहिए। वेलेन्तीना अंग्रेजी या हिन्दी भाषा

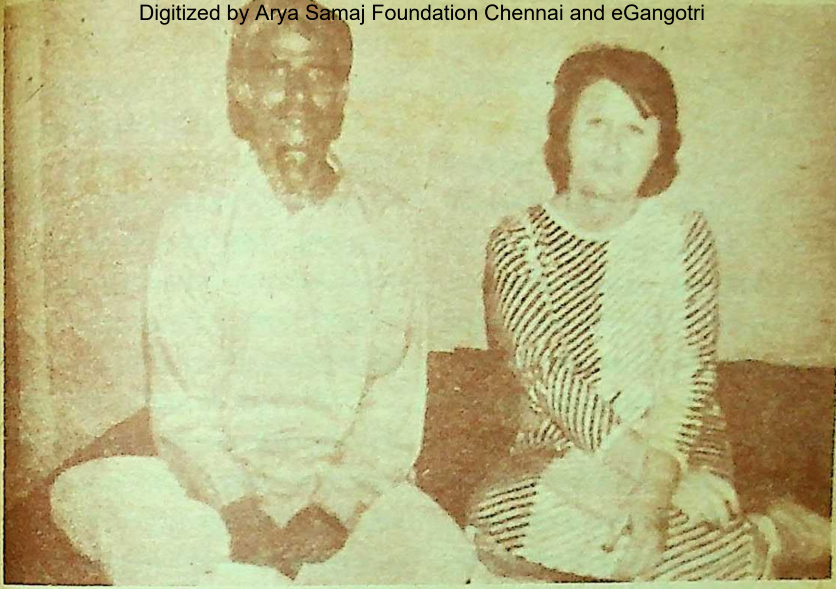

अग्नियोग साधिका वेलेन्तीना के साथ लेखक

नहीं जानती। बार-बार उसकी रूसी में भी 'अग्नियोग' का नाम सुनने पर मैंने अपने दुभाषिया के मार्फत जब यह पूछा कि क्या यह वह 'अग्नि' का मतलब जानती है तो वेलेन्तीना ने पास में ही रखी माचिस की तीली जलाते हुए कहा 'एता अग्नि'।

ऐसा नहीं है कि सोवियत रूस में 'अग्नियोग' की चर्चा करने वाली वेलेन्तीना अकेली है। करीब २५ वर्षों से स्वामी शिवानंद डिवाईन लाइफ सोसायटी ऋषिकेश के मानस अनुयायी निकोलस विलीचेंको ने मुझे बताया कि इस संबंध में रूसी भाषा में कुछ साहित्य उपलब्ध है। इसका श्रेय एक उसी रूसी दम्पति को जाता है जो करीब ५०-६० वर्ष पहले हिमालय में वास करते थे व उनके अभी भी वहां कुछ अनुयायी हैं। किन्तु वेलेन्तीना का दावा है कि वह इस ज्ञान को सीधे ही प्राप्त कर रही है व इस प्रकार की सामग्री उसके प्रत्यक्ष अनुभव को प्रामाणित व पुष्ट ही करती है।

वास्तव में गीता में योग एक व्यापकतर अर्थ में प्रयुक्त हुआ है। कर्म, ज्ञान, सांख्य, भक्ति आदि पारम्परिक योग विधाओं के साथ-साथ इसमें विषाद योग, ज्ञान योग, अक्षर ब्रह्म योग, राजविद्या राजगुह्य योग, विभूति योग, विश्वरूप दर्शन योग, गुणत्रय विभाग योग, पुरुषोत्तम योग, देवासुर संपद विभाग योग, आदि सर्वथा गैर पारंपरिक योग भी समाविष्ट हैं। स्पष्टत: यहां योग का अर्थ विश्लेषणात्मक ज्ञान अर्थात विशेष ज्ञान

(विज्ञान) से ही प्रकट है।

मैंने वेलेन्तीना को बताया कि कठोपनिषद् में नचिकेता ने यमराज से द्वितीय वरदान अग्निविद्या का ही प्राप्त किया। नचिकेता का कहना था 'हे मृत्यो, स्वर्ग में कहीं भी भय नहीं है। वहां न आप (मृत्यु) है न किसी बुढ़ापे का भय है। यहां भूख, प्यास एवं शोक से परे पुरुष बड़ा आनन्द भोगता है। आप उस स्वर्ग के साधनभूत अग्नि को यथार्थ रूप से जानते हैं। कृपया मुझ श्रद्धावान को इसे आप बतलाइये।'

यमराज ने कहा, 'हे नचिकेता, यह अग्नि अनन्त लोक की प्राप्ति का साधन है। विराट रूप से जगत की प्रतिष्ठा का भी यही मूल है। इसे तुम विद्वानों की बुद्धिरूप गुहा में स्थित जानो।' इसके अनन्तर यमराज ने नचिकेता को यज्ञकुंड के निर्माण में लगनेवाली ईंटों का स्वरूप और उनकी संख्या का बोध कराकर, अग्नि चयन की विधि भी समझाई। जब नचिकेता ने यमराज द्वारा कही हुई सारी बातों को दुहरा दिया तो यमराज ने एक अतिरिक्त वरदान अपनी ओर से नचिकता को देते हुए कहा कि 'यह अग्नि अब तुम्हारे ही नाम से लोक में प्रसिद्ध होगी व जो नाचिकेत अग्नि के स्वरूप संख्या और आहुति देने की प्र:णाली को जानकर उसकी उपासना करता है, वह देहपात से पहले ही मृत्यु के पाश को तोड़कर शोक रहित हो स्वर्ग में आनन्द भोगता है।'

पारंपरिक आधार पर इस अग्निविद्या का आशय भारतीय यज्ञ विषयक कर्मकाण्ड ही लिया जाता रहा है। संभवतः गीता में ही पहली बार कृष्ण नें यज्ञ को प्रतीकार्थ देकर भारतीय कर्मकाण्ड और ज्ञान का समन्वय स्थापित किया है। कृष्ण के अनुसार द्रव्ययज्ञ, तपयज्ञ आदि की तुलना में ज्ञानयज्ञ सर्वथा श्रेष्ठतर है। आत्म संयम की अग्नि में इंद्रियों की आहुति, इंद्रियों की अग्नि में विषयों की आहुति तथा प्राण में अपान व अपान में प्राण की आहुति वस्तुतः अग्नि को 'अग्नियोग' की ही सार्थकता प्रदान करता है।

भारतीय दर्शन में आकाश, वायु, अग्नि, जल और पृथ्वी आदि पांच तत्त्वों की सृष्टि रचना में महत्त्वपूर्ण भूमिका मानी गयी है। तंत्र योग के षटचक्र मूलतः इन तत्वों की प्रधानता पर केन्द्रित हैं। मूलाधार में पृथ्वी, स्वाधिष्ठान में जल, मणिपूर में अग्नि, अनाहत में वायु और विशुद्ध में आकाश तत्व की स्थिति मानी गयी है।

ऐसा माना जाता है कि इन तत्व प्रधान चक्रों को वेधकर ही कुण्डलिनी शक्ति जागृत होकर ऊध्र्व गमन करती है। अग्नि प्रधान मणिपूर चक्र भौतिक और पराभौतिक चेतना लोक का संधि स्थल है। इस चक्रवेध के बाद ही साधक को अतीन्द्रिय अनुभूतियां प्राप्त होती हैं।

कुण्डलिनी की ऊध्र्व यात्रा में भी 'अग्नि' का महत्वपूर्ण स्थान है। मानव शरीर के मेरुदण्ड में इड़ा, पिंगला और सुषुम्ना नाड़ियां इसके पथ को प्रशस्त करती हैं। वे क्रमशः चन्द्र, सूर्य और अग्नि की संवाहिका हैं। सुषुम्ना के अन्तर्गत ही ब्रह्मनाड़ी स्थित है। इसी कुण्डलिनी शक्ति का सम्यकउत्थान

मार्ग से होना चाहिए ।

आज्ञा चक्र के नीचे भुवोर्मध्य स्थित तीसरी आंख भी वस्तुत: अपनी सान्ध्यकालिक स्वर्ण अरुण आभा में अग्नि तत्व को ही प्रतिबिंबित करती है । आदि शंकराचार्य ने सौंदर्यलहरी में शक्ति का दक्षिण नेत्र सूर्य का कारण, बायां नेत्र चन्द्रमा का हेतु और स्वर्णिम आभा युक्त तीसरा नेत्र सान्ध्य अरुण माना है । शिव के इसी तीसरे नेत्र द्वारा कामदेव दहन की प्रसिद्धि है ।

**'तब शिव तीसर नयन उघारा,**
**चितवत कामभएउ जरि छारा ।'**

इसका आशय यह कदापि नहीं लेना चाहिए कि तृतीय नेत्र में दाहकता ही है । चूंकि यह प्रधानत: शिव के संदर्भ में ही प्रयुक्त होता है, इसलिए तृतीय नेत्र की दृष्टि कल्याण कारक ही मानी जाती है ।

वेलेन्तीना का दावा है कि वह वैश्व ऊर्जा के रूपान्तरण का एक 'ट्रांसफार्मर' है । सृष्टि के किसी भी कोने में जब कोई दुर्घटना होने को होती है तो उसे इसका पूर्वाभास होने लगता है। उसे लगता है कि वैश्व ऊर्जा उसके शरीर में इकट्ठी होकर उस त्रासदी की ओर बह रही हैं, जिसका तत्काल असर भी होता है। मानवीय संत्रास की मात्रा इससे या तो समाप्त हो जाती है या बहुत ही न्यून हो जाती है। शक्ति के इस निस्सरण द्वारा वह कुछ समय के लिए पूर्ण निश्चेष्ट हो जाती है। धीरे-धीरे कुछ समय बाद उसकी साधारण शक्ति लौट आती है और वह सामान्य हो जाती है ।

वेलेन्तीना ने मुझे बताया कि वह निरन्तर कुछ दृश्यावलियां देखा करती है । यहां तक कि कभी-कभी उसके काम के दौरान भी उसे आगे-पीछे के विचित्र घटनाक्रम दिखाई देने लगते हैं । यह कहते हुए जब मैंने पूछा कि क्या इस समय भी कुछ दिख रहा है ? तो उसने अपनी दृष्टि दृढ़ करते हुए कहा, 'हां ।'

वेलेन्तीना ने जब मेरे पास व्यासदेव की 'आत्म विज्ञान' पुस्तक में कुण्डलिनी जागरण और चक्रवेध संबंधी कुछ चित्रों को देखा तो वह गद्गद् हो उठी । उसने अनाहत चक्र के जागरण से संबंधित अतीन्द्रिय घन्टा स्वर निनाद पर उंगली रखकर बताया कि उसे उसने अक्सर सुना है । आज्ञा चक्र के हं ॐ क्षं बीजमंत्रों का उसने बार-बार दर्शन किया है । एक कागज लेकर उसने एक आकृति बनाई और मुझसे पूछा- 'यह क्या है ? इसे मैं अक्सर देखा करती हूं ।' मैंने उससे कहा, 'यह ॐ है और भारतीय अध्यात्म में इसे ही ईश्वर का निकटतम वाच्य माना गया है ।'

**– ८३/४, तुलसी नगर,**
**भोपाल, म.प्र.**

□

**'प्रिय सखी,**

**तुम्हारा पत्र मिला और मैं तुरन्त जबाब लिख रही हूं। चूंकि पत्र लिखने के लिए समय नहीं है, इसलिए पोस्टकार्ड पर ही लिखे दे रही हूं... कार्ड पर और लिखा ही क्या जा सकता है, अस्तु फ़िर ।**

**तुम्हारी.....'**

# लिखने के पीछे . . .

—रमाकान्त शर्मा—

वैसे तो मेरे गीत बहुत साधारण हैं
लिखने के **पीछे**, किन्तु बहुत से कारण हैं।

ये लिखे नहीं, लिख गये अचानक अपने से,
हो गये स्वयं साकार सुबह के सपने से,
अपने पूरे परिधान संग लेकर आये,
मैंने तो बस अपने हाथों से पहनाये,
मटमैले, माटी के अपने छोटे तन पर
ये किये हुए अनगिनत युगों को धारण हैं।

निःशब्द देश के शब्द, किसी निर्जन के जन
सचमुच विदेह की देह और निर्धन का धन
ये अपने रहकर भी अपने कब रह पाये,
सब कुछ कहकर भी ये पूरा कब कह पाये,
ये किसी बेबसी के अधरों की हंसी-खुशी,
ये महामौन की भाषा के उच्चारण हैं।

यदि इन्हें न लिक्खूं तो कैसे जीवन लिक्खूं
फिर मुक्ति लिखूं कैसे, कैसे बंधन लिक्खूं,
यदि इन्हें न बांधूं तो कैसे मन को बांधूं
यदि इन्हें न साधूं तो कैसे तन को साधूं
ये सदा समाये हुए समय की सांसों में,
अथ से इति तक का करते पथ-निर्धारण हैं।

हिन्दी-भवन,
विश्वभारती, शान्तिनिकेतन-६३१२३५
(बंगाल)

# इम्तहान

□ **डॉ. श्रीप्रसाद**

इम्तहान आ गया है। बस, पच्चीस दिन बाद है। मन में खलबली मची है। विद्यार्थी कानाफूसी कर रहे हैं। कक्षा में हैं। कोई बोल नहीं रहा है। बोलते भी हैं तो काफी धीरे। साल भर पढ़ाई हुई है। अध्यापकजी अभी इम्तहान के बारे में कुछ बतानेवाले हैं।

अध्यापकजी कुरसी पर से उठकर मेज की बगल में खड़े हो गये। कक्षा में सन्नाटा छा गया। यह बारहवीं कक्षा है। जयशंकर प्रसाद राजकीय विद्यालय की बारहवीं कक्षा। अंतिम वर्ष।

जयशंकर प्रसाद राजकीय विद्यालय की पढ़ाई बहुत अच्छी है। यहां जल्दी प्रवेश नहीं मिलता। योग्य होने पर ही प्रवेश हो पाता है। विद्यालय के प्रायः सभी अध्यापक मेहनत से पढ़ाते हैं – दो तीन को छोड़कर। मेहनत से पढ़ानेवालों में हिंदी के अध्यापक शिवरामजी का सबसे अधिक नाम है। वही कक्षा को संबोधित करने जा रहे हैं परीक्षा के विषय में।

शिवरामजी ने कहा – 'प्रिय छात्रो, आज पढ़ाई का वर्ष पूरा हो रहा है। आप का यह अंतिम वर्ष है। अब आप लोग इस विद्यालय से चले जायेंगे। आप लोगों ने परिश्रम से अध्ययन किया है और मैंने तथा मेरे साथी अध्यापकों ने मेहनत से पढ़ाने की कोशिश की है। मुझे आपकी कक्षा से बड़ी प्रसन्नता है और बड़ी आशाएं हैं। आप लोग अपने जीवन में बड़े काम करें और देश की सेवा करें।'

शिवरामजी आगे बोले – 'हो सकता है, कभी मेरे किसी व्यवहार से आपको दुख हुआ हो। यदि ऐसा हो तो ध्यान न देंगे, क्योंकि मैं आपका गुरु हूं तो मनुष्य भी हूं। मनुष्य में कमजोरी भी होती है। पर मैं एक बात और कह दूं,' शिवरामजी ने फिर कहा – 'आपने मेहनत से अध्ययन किया है, आपकी सफलता पर मुझे पूरा विश्वास है। इसलिये आप लोगों में कोई नकल न करे। नकल करने से आपको तो परेशानी हो ही सकती है, मुझे भी पीड़ा पहुंचेगी। मुझे बड़ा दुख होगा कि मेरे छात्र या छात्रों ने नकल की।'

इतना कहकर अंत में शिवरामजी भावुक से होते हुए बोले – 'आप को उच्च कोटि की सफलता मिले, आप जीवन में सफल हों, आपको मेरा आशीर्वाद है।'

अपने गुरु की बातें सुनकर कुछ छात्र गंभीर हो गये और दो एक की आंखें शायद

नम भी हो [illegible] उन्हें पढ़ाने को नहीं मिलेंगे।

पर अतुल, विनय और जगेश शायद गुरुजी की बातों से प्रभावित नहीं हुए। अतुल तो मेरी बगल में ही था। वह कापी पर छिपकर एक लड़के का कार्टून बना रहा था और विनय तथा जगेश मुस्करा रहे थे।

कक्षा खतम हुई। सबने किताब, कापी सम्हाली और घर चल पड़े।

रास्ते में रवि श्याम से बोला 'इम्तहान की तैयारी की छुट्टी हो गयी। अब पच्चीस दिन घर पर रहकर खूब मेहनत करूंगा।'

'हां भाई, मुझे भी मेहनत करनी है', श्याम बोला। 'मुझे इतिहास से बड़ा डर लगता है। और विषय तो ठीक हैं, पर इतिहास कहीं मेरी श्रेणी न खराब करे। मैं ऊंची प्रथम श्रेणी लाना चाहता हूं।'

'आ जायेगी, यार,' रवि ने लापरवाही से कहा। 'तेरे जैसा तेज विद्यार्थी अगर ऊंची श्रेणी नहीं पायेगा तो कौन पायेगा?'

'लेकिन मेरी मदद करना', श्याम ने फिर कहा। 'मेरी श्रेणी में तुम्हारा सहयोग जरूरी है।'

'हां, हां, सहयोग करूंगा,' रवि ने कहा। 'हम लोग साथ-साथ पढ़ेंगे।'

श्याम का घर आ गया था। वह चौखंबा वाली गली की ओर मुड़ गया। रवि अकेला जल्दी-जल्दी चलने लगा। उसका घर अभी नहीं आया था।

रवि दस ही कदम आगे बढ़ा होगा कि अतुल, विनय और जगेश की तिकड़ी मिल गयी।

'क्यों पढ़ाकूजी', अतुल बोला, 'क्यों जल्दी-जल्दी भाग रहा है?'

'मैं भाग कहां रहा हूं। मैं तो आप लोगों के साथ धीरे-धीरे चल रहा हूं,' रवि ने कहा।

'अरे भाई, रवि को परेशान मत करो', विनय ने मजाक-सा करते हुए कहा। 'इन पर तो विद्यालय का नाम टिका है।'

तीनों हंस पड़े।

रवि को बहुत बुरा लगा। यह तो चिढ़ाना हुआ। पर वह कुछ बोला नहीं। साथ-साथ चलता रहा।

जगेश ने कहा – 'मिस्टर रवि, हम लोगों ने कुंजियां ले ली हैं। ताला कुंजी से ही खुलता है। परीक्षा का ताला हम कुंजी से खोल लेंगे। जो कुंजी में मिलेगा, वह कुंजी में देखकर लिखेंगे और बाकी यार दोस्तों से पूछेंगे व उनकी कापी से नकल करेंगे।'

रवि वह सब सुन रहा था, जो उसे पसंद नहीं था। इन लोगों को छोड़कर आगे भी नहीं जा सकता था, नहीं तो ये उसे चिढ़ाते, उस पर और अधिक छींटाकशी करते। फिर भी रवि ने इतना तो कह ही दिया – 'नकल से कोई पास भले ही हो जाय और अच्छी श्रेणी भी मिल जाय, पर ज्ञान नहीं होता।'

जगेश रवि की यह बात सुनते ही बौखला गया – 'भाई साहब, गुरुजी से ही हम लोगों ने बहुत उपदेश सुन लिया है। अब आप उपदेश मत दीजिए। आप हमारे गुरुजी नहीं हैं और ज्ञान से हमें कुछ लेना देना-नहीं है। हम अज्ञानी ही अच्छे।'

रवि की बड़ी अजीब हालत हो रही थी। अब अगर विरोध किया तो तीनों मिलकर हाथ भी उठा सकते हैं और भला-बुरा तो कहेंगे ही। वह चुप रहा।

संयोग से तिकड़ी किसी कारण से रुक गयी। रवि आगे बढ़ गया।

जब किसी का साथ रहता है तो व्यक्ति कुछ और सोचता है और जब अकेला रहता है तो कुछ और। रवि अकेला ही था। उसके दिमाग में तरह-तरह के विचार आ रहे थे – पढ़ाई को लेकर, इम्तहान को लेकर और नकल को लेकर।

उसने सोचा – अतुल, विनय और जगेश परीक्षा में नकल करेंगे। अगर कोई देख न सका तो अपना काम निकाल ले जायेंगे और प्रथम नहीं तो द्वितीय श्रेणी तो ले ही आयेंगे। पर यदि पकड़े गये तो साल बरबाद हो जायेगा। यदि मेहनत से पढ़ते तो कितना अच्छा होता।

उसने फिर सोचा – लेकिन नकल का सबसे बुरा परिणाम तो यह है कि इनके पास प्रमाणपत्र तो होगा पर ज्ञान नहीं। प्रमाणपत्र ज्ञान को प्रमाणित करता है। ज्ञान नहीं तो प्रमाणपत्र का क्या उपयोग।

रवि का दिमाग सोच-विचार की गहराई में चला गया। पढ़ने का उद्देश्य है ज्ञान पाना। प्राचीन काल से अब तक ज्ञान धीरे-धीरे बढ़ा है। उसके परदादा के पिता के जमाने में रेल नहीं थी। ज्यादातर लोग पैदल ही चलते थे। पर उसके परदादाजी रेल से जाते थे। आदमी का ज्ञान बढ़ गया था और रेल चल गयी थी। और उसके पिताजी अति तेज रफ्तार की गाड़ी से ही नहीं, कभी-कभी हवाई जहाज से भी जाते हैं। सौ सवा सौ वर्षों में ज्ञान कितना आगे बढ़ गया।

इस ज्ञान को और बढ़ना है – न जाने कब तक और कहां तक। आगे ज्ञान बढ़कर कहां पहुंचेगा, विज्ञान क्या करेगा, समाज का क्या रूप होगा और दुनिया कैसी हो जायेगी, यह कौन जान सकता है।

रवि चलता जा रहा था और सोच रहा था – ज्ञान को बढ़ाने वाले विद्वान लोग होते हैं, पढ़े-लिखे लोग होते हैं। विचार से विचार पैदा होते हैं, ज्ञान से ज्ञान पैदा होता है। ज्ञान से ही आविष्कार हुए हैं, ज्ञान से ही साहित्य लिखा गया है, ज्ञान से ही शास्त्र रचे गये हैं, ज्ञान से ही कला और संगीत बढ़ा है और ज्ञान के आधार पर ही हमें एक अच्छी तथा सुविधापुर्ण दुनिया मिली है।

यदि आदमी ने पढ़ा लिखा न होता, ज्ञान हासिल न किया होता तो दुनिया बदल कर वहां न पहुंचती, जहां आज पहुंची है।

दिमाग की रफ्तार बहुत तेज होती है। कुछ मिनटों में ही दिमाग विचारों के समुद्र में गोता लगा कर गहराई में चला जाता है। रवि सोच रहा था – भारत में और दुनिया के अन्य देशों में अनेक विद्वान हुए हैं। उन्होंने ज्ञान के लिए अपना जीवन समर्पित कर दिया। अठारह-अठारह घंटे बैठकर अध्ययन किया। न कभी पढ़ने से घबड़ाये, न ऊबे। तभी वे ज्ञान को आगे बढ़ा सके।

रवि का दिमाग चल रहा था – कितना

पढ़ा था तुलसीदास ने । रामचरितमानस के शुरू में कहते हैं – नानापुराणनिगमागम, सम्मतं यद्रामायणे निगदितं क्वचिदन्य-तोऽपि अर्थात् रामचरितमानस की रचना मैंने अनेक पुराण, वेद, तंत्रशास्त्र, वाल्मीकि रामायण तथा और जहां से भी जानकारी मिली, उस सबके आधार पर की है । कितने विस्तार से तुलसीदास ने अध्ययन किया था । रवींद्रनाथ ठाकुर, जयशंकर प्रसाद, मैथिलीशरण गुप्त या प्रसिद्ध वैज्ञानिक आइंस्टीन, भारतीय वैज्ञानिक सी. वी. रमन या अन्य कोई भी क्या बिना अध्ययन किये, बिना पढ़े ज्ञान को आगे बढ़ा पाये, कुछ कर पाये ? ज्ञान पाने के लिए पढ़ना – मेहनत से पढ़ना जरूरी है ।

रवि विचारों की दुनिया में खोया था – यदि सभी लोग पढ़ना लिखना छोड़ दें, अतुल, नवीन और जगेश हो जायें और नकल करके परीक्षा पास करें तो दुनिया का क्या होगा ? क्या दुनिया को नकलटीप लोगों ने बढ़ाया है – क्या संसार पढ़ने में कामचोरी करनेवालों से आगे बढ़ा है, विकसित हुआ है । यदि ज्ञान न हो तो हम सामने रखा रेडियो और टी. वी. भी नहीं चला सकते । ज्ञान का कितना महत्व है । ज्ञान से आदमी के विचार ऊंचे बनते हैं, दुनिया आगे बढ़ती है और आदमी का जीवन सरल हो जाता है, जिससे वह और अधिक मेहनत करे, और अधिक काम करे, और अधिक ज्ञान बढ़ाये ।

और यह तिकड़ी उसी ज्ञान से भाग रही है । कह रही है, नकल करके पास हो जायेंगे । नकल करके परीक्षक को तो धोखा दिया जा सकता है अपने को नहीं । अपना क्या होगा, अपने कहां जायेंगे ? ज्ञान प्रमाणपत्र में नहीं होता उसमें होता है, जिसका प्रमाणपत्र है । विद्वानों ने मेहनत करके हमें ज्ञान दिया है । हमारा कर्तव्य है कि हम उस ज्ञान को प्राप्त करें और उसे आगे बढ़ायें । अध्ययन का यह मुख्य उद्देश्य है ।

रवि के तेज दिमाग ने बहुत कुछ सोच लिया । परीक्षा में उसका परिणाम जो भी रहे, जो भी उसे श्रेणी मिले, पर वह पढ़ने का उद्देश्य जानता है और इसी उद्देश्य को वह मेहनत के साथ पूरा कर रहा है ।

पर यह अलग बात है कि वह जितना सोच गया, वह सब अतुल, नवीन और जगेश को नहीं बता सकता, नहीं तो वे उसे पागल कहेंगे – उसे चिढ़ायेंगे ।

एक इम्तहान वह है, जिसका संबंध पढ़ाई-लिखाई से है और एक इम्तहान वह है कि आदमी कैसे सोचता है, रोज के काम कैसे करता है । रवि सोचने-विचारने में भी अच्छे नंबरों से पास हुआ है और पढ़ाई-लिखाईवाले इम्तहान में भी अच्छा रहेगा ।

तिकड़ी न सोचने-विचारने का इम्तहान ठीक ढंग से पास कर सकी और न उस इम्तहान को जो पच्चीस दिन बाद आने को है, क्योंकि इस इम्तहान का तरीका तो उसने पहले ही बता दिया है ।

– ११, अध्यापक आवास,
संपूर्णानंद संस्कृत विश्वविद्यालय,
वाराणसी - २२१ ००२.

डेनमार्क की लोककथा

# हूमेर की समाधि पर गुलाब

**□ एच. सी. अन्दसन**

बुलबुल अपने सभी प्रेम गीत गुलाब के लिए गाती है। सभी स्तब्ध चांदनी रातें अपने गीतों में सुगन्ध बिखेरती हैं। स्मीरना नामक स्थान से कुछ दूरी पर ऊंचे-ऊंचे वृक्षों के नीचे प्रायः व्यापारी अपनी सामान से लदी ऊंट-गाड़ियों के साथ एकत्र होते थे। ऊंट अपनी ऊंची गर्दन गर्व से उठाये हुए अपने पैरों को पटक-पटककर चल रहे थे। वहां मैंने गुलाब की एक झाड़ी देखी। वहां पर जंगली कबूतर वृक्षों की डालों के मध्य उड़ रहे थे। जब सूरज की किरणें उनके पंखों पर पड़तीं तो वे पंख संगमरमर की तरह चमक उठते थे।

गुलाब की झाड़ियों के बीच एक गुलाब का फूल खिला हुआ था जो अन्य सभी फूलों से अधिक सुन्दर था। उस फूल के लिए बुलबुल अपनी प्रेम-पीड़ा के गीत गाती थी। लेकिन गुलाब चुप था। एक भी आंसू उसकी आंखों में नहीं आता था। ओस की बूंदें भी उसकी पंखुड़ियों पर नहीं दिखाई देती थीं। वह गुलाब पत्थरों की ओर झुका रहता था।

'यहां विश्व के सभी गीत विश्राम करते हैं,' उस फूल ने कहा। उसने आगे कहा, 'उसकी समाधि पर मैं सुगन्ध फैलाऊंगा, और यदि तूफान मेरी पंखुड़ियां तोड़कर अलग करेगा तो मैं उसकी समाधि में बिखर जाऊंगा। 'इलीआदे' (यूनान की सुप्रसिद्ध गीतों की जीवनियों की पुस्तक) के गीत जिस धरती की मिट्टी में मिल गये हैं वहां ही मैं उपजा हूं। मैं हूमेर की समाधि पर एक गुलाब हूं। बेचारी बुलबुल के लिए मैं पवित्रता के लिए खिला हूं। और बेचारी बुलबुल अपनी मृत्यु तक गाती रही।'

ऊंटवाले व्यापारी ऊंटों से लदे सामान और कुछ मजदूरों के साथ आते थे। उनमें से एक बालक ने एक मरा हुआ पक्षी पाया जिसे उसने हूमेर की समाधि में दफना दिया। फूल आंधी से कांप रहा था। सन्ध्या ढल गयी, रात आ गयी। फूल ने अपनी पंखुड़ियां समेटीं और स्वप्न देखने लगा कि दिन का समय है। सूरज चमक रहा है। फ्रांसीसियों का एक जत्था उस हूमेर की समाधि की तीर्थ यात्रा के लिये आया हुआ था। उन लोगों में उत्तरी देशों का एक गायक था जो 'उत्तरी प्रकाश' से आया था। (स्केन्डिनेवियन देशों में यह प्रचलित है कि सूरज का प्रकाश किसी अन्य ग्रह से परावर्तित होकर पृथ्वी पर पड़ता है उसे यहां 'उत्तरी प्रकाश' कहा जाता है।) उसने वह गुलाब तोड़ा और उसे एक पुस्तक में दबा दिया। इस तरह वह अपने साथ उसे विश्व के दूसरे स्थानों तक ले गया। बहुत दूर पर बसी अपनी मातृभूमि (अनजान ग्रह) पर ले गया।

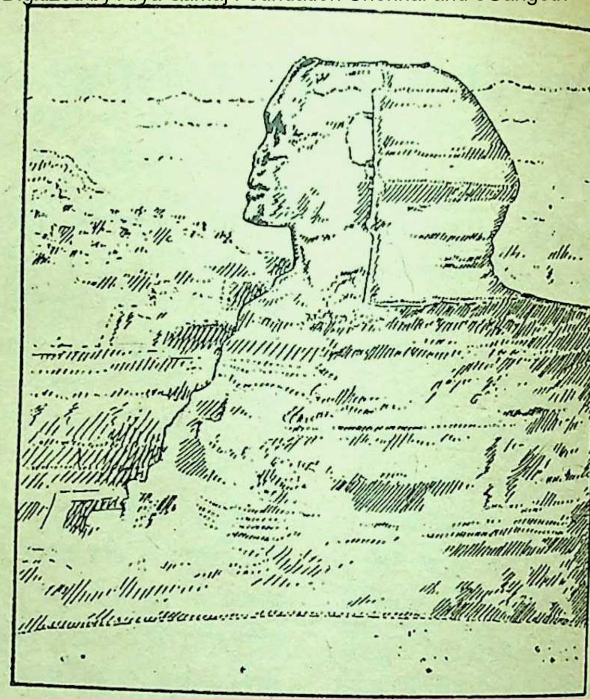

फूल मुरझा गया और वह संकरी पुस्तक में पड़ा हुआ था जिसे उसने घर आकर देखा और कहा 'यह हूमेर की समाधि का फूल है।'

फूल का स्वप्न आंधी से टूट गया। उसकी पंखुड़ियों से ओस की एक बूंद गायिका-बुलबुल की कब्र पर गिरी। सूरज निकल आया था। दिन तप रहा था। गुलाब पहले से अधिक सुन्दर दिखाई दे रहा था। वह अपने गर्म एशिया में वापस आ गया।

तभी कदमों की आवाज़ आयी। और जहां विदेशी फ्रांसीसी लोग आ गये जिन्होंने उस गुलाब को स्वप्न में देखा था। उन विदेशियों में एक उत्तर देशों का कवि भी था। उस कवि ने गुलाब तोड़ा, उसे चूमा और उसे 'उत्तरी प्रकाश' के घर ले गया।

अब वह गुलाब आराम कर रहा है, जैसे उस की पवित्र पुस्तक इलीआदे, और स्वप्न में वह गुलाब को यह कहता हुआ सुनता है 'यहां पर हूमेर की समाधि का एक गुलाब है।'

[रूपांतर : सुरेशचंद्र शुक्ल]

□

ऐसा भी होता है

# शिष्टता का अभाव

□ **डॉ. गोपालप्रसाद 'वंशी'**

कहते हैं, लाहौर-हाईकोर्ट के एक जज महोदय के यहां चोरी हो गयी। वे सवेरे साधारण कपड़ों में ही उसकी रिपोर्ट लिखाने पुलिस चौकी में गये। परन्तु चौकी के मुंशी ने उन्हें डांट कर कहा – 'जा, उधर जा के बैठ जा। अभी सूरज निकला नहीं, यह पहले ही आ गया है, जैसे हमें और कोई काम हीं नहीं।' जज साहब कोई एक घंटा खड़े रहे, परन्तु मुंशी ने उनकी बात तक न पूछी। तब उन्होंने फिर उससे रिपोर्ट लिखने को कहा। परंतु वह फिर उसी अविनीत भाव से कड़क कर उन्हें धमकाने लगा। इतने में मुंशी का अफ़सर आ गया। मुंशी से उसने पूछा – 'क्या बात है?' मुंशी ने कहा – 'जी, क्या बतायें? ये लोग बहुत तंग करते हैं। अभी सबेरा नहीं हुआ, यह पहले ही आ मरा है। इससे कहा है कि ज़रा ठहर, रिपोर्ट लिख लेते हैं, परंतु यह दम ही नहीं लेने देता। जल्दी करो, जल्दी करो, कह रहा है।'

इस पर मुंशी का अफ़सर जज साहब से बोला – 'हम लोग तुम्हारे बाप के नौकर हैं, जो सबेरे-सबेरे ही यहां दौड़े चले आते हो। ज़रा ठहर जाओ, रिपोर्ट लिख लेते हैं।' जज साहब चुप रह गये। कुछ देर बाद उन्होंने फिर मुंशी के अफ़सर से रिपोर्ट लिखने को कहा। इस पर वह बड़ा उपकार जतलाता हुआ बड़े अविनीत भाव से बोला – 'लिखाओ। क्या लिखाते हो? बार-बार कहने पर भी तुम टलनेवाले थोड़े ही हो।'

अब जज साहब रिपोर्ट लिखाने लगे। मुंशी ने पूछा – 'तुम्हारा नाम?' जज साहब ने बता दिया। 'बाप का नाम?' जज साहब ने वह भी बता दिया और मुंशी ने लिख लिया। फिर उसने पूछा – 'क्या काम करते हो?' जज साहब ने कहा – 'हाईकोर्ट में जज हूं।' बस इतना सुनते ही मुंशी और उसके अफ़सर के होश उड़ गये। दोनों ने जज साहब के पांव पकड़ लिये कि हमें क्षमा कीजिये, हमसे भारी भूल हुई। पर अब क्या हो सकता था? सुना है, इस घटना का पता बड़े पुलिस अफ़सरों को लगने पर वे दोनों निलंबित कर दिये गये।

**– आरोग्य सदन, गंज नं. १, बेतिया,**
**पश्चिम चंपारन, बिहार**

□

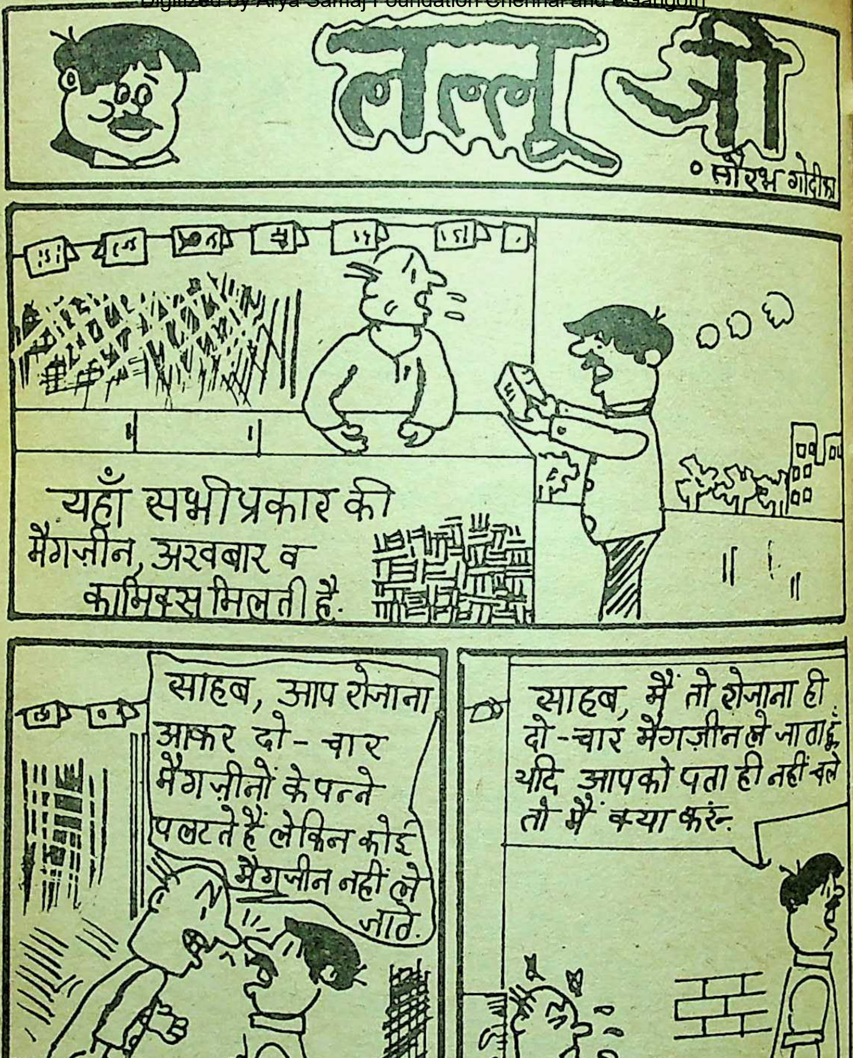
लल्लू जी
सौरभ गोदीका
यहाँ सभी प्रकार की मैगज़ीन, अखबार व कॉमिक्स मिलती है.
साहब, आप रोजाना आकर दो-चार मैगज़ीनों के पन्ने पलटते हैं लेकिन कोई मैगज़ीन नहीं ले जाते.
साहब, मैं तो रोजाना ही दो-चार मैगज़ीन ले जाता हूँ. यदि आपको पता ही नहीं चले तो मैं क्या करूं.

सु. रामकृष्णन् द्वारा भारतीय विद्या भवन, क. मा. मुंशी मार्ग, बम्बई–४००००७ के लिए प्रकाशित तथा एसोसियेटेड एडवरटाइजर्स एंड प्रिन्टर्स, बम्बई ४०००३४ में मुद्रित।

# पत्र-दृष्टि

**नवनीत** का दीपावली विशेषांक आकर्षक और पठनीय है। आपकी प्रेरक और उत्तेजक कविता 'बापू की लंगोटी' सच्चाई को उजागर करने वाली महत्वपूर्ण रचना है। बधाई।

**– मणिशंकर आचार्य, रतलाम, म.प्र.**

* * *

**नवनीत** का अक्तूबर-९० अंक (दीपावली विशेषांक) प्राप्त हुआ। 'बापू की लंगोटी' रचना ने अभिभूत कर दिया। इस अत्यंत भाव-प्रपूर्ण साधना के लिए आप को अनंत अभिनंदन।

**– रामकिशोर सिंह परिहार**
**'जिज्ञासु', फतेहपुर, उ.प्र.**

* * *

**नवनीत** अक्तूबर-९० का दीपावली विशेषांक पढ़ा। प्रारंभ से ही **नवनीत** ने अपनी 'साख' बना रखी है और निष्पक्ष भाव से यह पत्रिका अनेक प्रकार का ज्ञानवर्द्धन और मनोरंजन करती आयी है। दीपावली विशेषांक में विशेषकर कहानियों का संकलन उच्चकोटि का था। 'कुत्ता सड़क का' में जहां एक मूक प्राणी की वफादारी का यथार्थ चित्रण प्रस्तुत करने में कहीं कोई कमी नहीं रही, वहीं 'वे क्षण' में पारिवारिक जीवन में आने वाली समस्याएं और परिजनों की मनोवृत्ति का स्पष्ट उल्लेख है। 'बलिदान' कहानी में मां का वात्सल्य और बाल-सुलभ प्रवृत्ति का श्रेष्ठ प्रस्तुतीकरण है। वहीं प्रेरक प्रसंग में डॉ. नागर की स्मृति एक बार फिर ताजी हो गयी। 'आयुर्वेद और शल्य चिकित्सा' ने ज्ञानवर्द्धन किया तो 'कुछ प्रसिद्ध महारानियों की सनकें' ने खूब मनोरंजन किया। संक्षेप में दीपावली विशेषांक ने विशेषांक के महत्व को सार्थक किया।

**– माधुरी रानडे, देवास, म.प्र.**

* * *

मैं **नवनीत** का पुराना व नियमित पाठक हूं। इसका दीपावली विशेषांक काफी प्रतीक्षा के बाद प्राप्त हुआ। विशेष पठनीय सामग्रियों के लिए बधाई। सभी रचनाएं ज्ञानवर्द्धक व रुचिकर थीं। पढ़कर प्रसन्नता हुई। 'गूंगी तोप' कहानी हृदयस्पर्शी लगी। 'सूरज की दीवाली' कहानी भी अच्छी लगी।

परंतु यह कहानी अक्षरशः 'सूरज'

शीर्षक से आज हिंदी दैनिक पत्र (रांची, वाराणसी, लखनऊ, कानपुर आदि जगहों से प्रकाशित) के १४ अक्तूबर १९९० के साप्ताहिक विशेषांक में नरेंद्र सिंघवी ने छपवाया है। शायद नरेंद्र सिंघवी को अपनी एक ही कहानी को अलग-अलग पत्र-पत्रिकाओं में छपवाने का शौक है। उन्हें इस तरह नहीं करना चाहिये।

**– जीतू भंडारी, पतरातू परमल,**
**हजारीबाग, बिहार**

* * *

अक्तूबर-९० के **नवनीत** में परिचर्चा 'दूरदर्शन : कितना हित और कितना अहित' के अंतर्गत कुछ लेख पढ़े। इसमें श्री विष्णु प्रभाकर के लेख में अमरीका की एक कन्या का विचार जो लिखा है, वह शत-प्रतिशत सही लिखा है। 'दूरदर्शन ने हमारे देश का तो नाश कर ही दिया, अब आपके देश का नाश होने वाला है'। क्या हमारे देश के कर्णधार कभी इस बात का विचार कर सकेंगे? मुझे तो आशा नहीं दीखती।

**– इंद्रदत्त, जयपुर - ३०२ ०१५**

* * *

हम लोग **नवनीत** के बहुत पुराने और नियमित पाठक हैं। साहित्यिक पत्रिकाओं में **नवनीत** का स्थान काफी महत्वपूर्ण है। लेकिन अफसोस है कि आज तक हम लोगों ने आपको अपने सुझावों से अवगत नहीं कराया है। इसे और अधिक लोकप्रिय और उपयोगी पत्रिका बनाने के लिए हम लोग निम्नलिखित सुझाव देना चाहते हैं:-

(१) 'पहचान' स्तंभ (या कोई और) के अंतर्गत नवोदित युवा कवियों की कविताओं को नियमित प्रकाशित किया जाय।

(२) 'बोलती हैं तस्वीरें' (या कोई और) स्तंभ का प्रकाशन कर आप पत्रिका में एक तस्वीर प्रकाशित कर पाठकों से चार-छह पंक्तियों की मौलिक कविताएं आमंत्रित करें।

(३) पृष्ठों की संख्या में भी वृद्धि करें, चाहे इसके लिए आपको पत्रिका का मूल्य ही क्यों न बढ़ाना पड़े।

(४) अन्य पाठक इसमें किस तरह की रचनाएं विशेष रूप से पढ़ना पसंद करते हैं, यह जानने के लिए 'पाठकों की अभिरुचि और सुझाव' नामक फॉर्म पत्रिका में प्रकाशित किये जायें।

**– कुलदीप नारायण दास, छपरा, बिहार**

* * *

**नवनीत** के सितंबर-९० के अंक में प्रकाशित लेख 'चमत्कारी रुद्राक्ष', 'रूमानियां के तानाशाह चेसेस्क्यू' और 'राष्ट्रयोगिनी भगिनी निवेदिता' काफी जानकारीपूर्ण और रोचक हैं। इसके अतिरिक्त 'बच्चों में अतिसार रोग' आदि अनेक सारगर्भित रचनाओं के कारण यह एक संग्रहणीय अंक बन गया है।

**– अनिल कुमार दास 'अनंत', सहरसा**

## अद्भुत-वृत्तांत

# किले में अरबों का सोना

यह कोई किवदन्ती, अफवाह अथवा अन्ध विश्वास नहीं, बल्कि प्रामाणिक ऐतिहासिक सत्य है कि पूना के पास स्थित पुरन्धर के किले में आज लगभग ६ अरब रुपयों का सोना गड़ा हुआ है। साथ ही यह भी सच है कि मराठा साम्राज्य के पतन के बाद अंग्रेजों ने बड़ी कोशिश करके सोना हथियाना चाहा था मगर वह उन्हें कभी नहीं मिला। कारण यह कि तब किसी को यह पता ही नहीं था कि सोना कहां गड़ा है?

हाल ही की नयी खोजों से इस सोने के संबंध में यह जानकारी मिली है कि सन १२९० में जब बीदर रियासत के राजा ने इस किले को बनवाना चालू किया था तो पता चला कि किले के मुख्य द्वार पर इतना भीषण दलदल था कि द्वार की दीवार हर बार धंसक जाती थी। समाचार सुनकर राजा साहब घटनास्थल पर जा पहुंचे। उन्होंने कारीगरों से पूछा कि क्या किया जाये जिससे दीवार सहित मुख्य द्वार बहुत मजबूत बन जाये। इस पर यह निर्णय लिया गया कि दलदली धरती में दो बड़े-बड़े गड्ढे कर उनमें पहले सोने की ईटें भरी जायें तथा बाद में उन पर मुख्य द्वार बनाया जाये। तत्काल सोने की ५० हजार ईटें भर दी गयीं और मुख्य द्वार बनकर तैयार हो गया। इस प्रकार आज तक वह द्वार अपनी नींव में आज के मूल्य के हिसाब से ६ अरब रु. मूल्य का सोना छुपाये शान से ज्यों का त्यों खड़ा है तथा वहां तैनात सशस्त्र गार्ड दिनरात किले की रक्षा करते रहते हैं।

**— मुकुन्ददास माहेश्वरी,**
दीवान बहादूर, वल्लभदास महल,
जबलपुर - ४८२ ००२, म.प्र.

□

महात्मा गांधी की विनोदप्रियता के संबंध में यह घटना बड़ी रोचक है। एक बार गांधीजी शांति निकेतन गये। उनका स्वागत करते हुए गुरुदेव रवींद्रनाथ टैगोर ने कहा: 'हमारी हृदय साम्राज्ञी चिरतरुणी शांतिनिकेतन बाला आपका स्वागत करती है।'

गांधीजी के चेहरे पर मुस्कान दौड़ गयी- 'अच्छा तो मेरे जैसे टूटे दांत और पोपले मुंह वाले व्यक्तियों के लिए भी अभी कुछ आशा बाकी है।'

**— डॉ. गोपालप्रसाद 'वंशी'**

# नवनीत

संपादक गिरिजाशंकर त्रिवेदी
उप-संपादक रामलाल शुक्ल
अतिरिक्त सहयोग } किशोरीरमण टंडन
प्रकाशक सु. रामकृष्णन्

संस्थापक : **कन्हैयालाल मुंशी**
भारती : स्थापना १९५६
**श्रीगोपाल नेवटिया**
नवनीत : स्थापना १९५२

**वर्ष ३९, अंक १२**
**दिसंबर १९९०**

| | | |
|---|---|---|
| **पत्र-वृष्टि** | .. | १ |
| **किले में अरबों का सोना** | मुकुन्ददास माहेश्वरी | ३ |
| **स्वर्गलोक का पक्षी : पीलक** | विनोद तिवारी | ६ |
| **आशा-निराशा** | डॉ. विनय वाईकर | १० |
| **बीती विभावरी (ललित निबंध)** | श्रीकृष्ण कुमार त्रिवेदी | १२ |
| **क्या है हंसने का रहस्य** | विनय कुमार त्रिवेदी | १७ |
| **स्वागत (कविता)** | कुसुम शुक्ला | १९ |
| **अध्यक्ष के पत्र** | सी. सुब्रमण्यम् | २० |
| **बूंदी के भव्य राजमहल** | डॉ. भैरूंलाल गर्ग | २३ |
| **जिन्दगी से पहली मुलाकात (बंगला कहानी)** | प्रेमेन्द्र मित्र | २८ |
| **प्रार्थना** | .. | ३३ |
| **महायोगी की मौन पदचाप** | प्रकाश दुबे | ३४ |
| **कवि की कोमल कल्पना-नारी** | डॉ. यासमीन सुल्तान नकवी | ३६ |
| **सोच रहा परदेसी (कविता)** | यश मालवीय | ३९ |
| **सुहाग और सौंदर्य में मेंहदी** | मधुकर डोरिया | ४० |
| **महर्षि रमण व्यक्तित्व व कृतित्व** | दिनेशचंद्र शर्मा | ४४ |
| **भारतीय परंपराएं-ऐसा क्यों ?** | उमेश पांडे | ४८ |
| **जयहिंद कह देना बस...** | नारायणलाल परमार | ५२ |
| **ग़ज़ल** | डॉ. प्रतीक मिश्र | ५३ |

| | | |
|---|---|---|
| बोलो मेरे छन्द (कविता) | लता अवस्थी अमिता | ५६ |
| समानान्तर धुरियां (हिंदी कहानी) | डॉ. शीतांशु भारद्वाज | ५७ |
| सही आदमी (धारावाहिक उपन्यास-३) | सुधा | ६४ |
| चांदनी तो कर दिया (ग़ज़ल) | कुंअर बेचैन | ७८ |
| ग्रंथलोक | तिवारी, अस्थाना, शुक्ल, कुमार, 'सलिल', शाहीन, श्रीवास्तव | ७९ |
| खिड़की में की लड़की (कहानी) | सुखबीर | ८५ |
| बूंदें (कहानी) | लता शर्मा | ९१ |
| परमोपयोगी फल अनार (आरोग्य) | अशोक 'मनोरम' | ९७ |
| घोंसला (कहानी) | नरेशचन्द्र 'नरेश' | १०० |
| दोहे | डॉ. अब्दुल अज़ीज 'अर्चन' | १०३ |
| तप:पूत ऋषि पंडित जनार्दन भट्ट | प्रो. कृष्णदत्त बाजपेयी | १०४ |
| लोगों के अद्भुत शौक | डॉ. गोपालप्रसाद 'वंशी' | १०६ |
| सौंदर्य प्रसाधन : आरंभ की पृष्ठभूमि | डॉ. हेमेन शाह | १०८ |
| रेत के आखर | शशिभूषण अवस्थी | ११२ |
| संयोजक (बंगला कहानी) | अंजलि बसु | ११३ |
| दो कविताएं | राजेन्द्र परदेसी | ११९ |
| कुटकुट का घमंड (बालकथा) | दुर्गाशंकर त्रिवेदी | १२० |
| प्रतिध्वनि (कविता) | चक्रधर नलिन | १२३ |
| सांस्कृतिक मंच | .. | १२४ |
| कितना करामाती है नीम का पेड़ | पंकज कुमार कर्ण | १२९ |
| मां और बछेड़ी की पहचान (बालकथा) | मदनगोपाल शर्मा | १३२ |
| प्राप्ति स्वीकार | .. | १३४ |
| आओ दो क्षण मुस्करायें | दिनेश दर्पण | १३६ |

**आवरण-चित्र** : महामाया मंदिर (अंकोलां): **हसद अन्नप्पा नायक**
**चित्र-सज्जा** : ओके, शेणै, श्रीश्रीमाल
**कार्यालय** : भारतीय विद्या भवन, क. मा. मुंशी मार्ग, बम्बई - ७
फोन : ८११४४६२.

# स्वर्गलोक का पक्षी : पीलक

## विनोद तिवारी

बाग-बगीचों में खासकर आम के बगीचों में यदि आपको पेड़ों के झुरमुट में से बांसुरी की सुरीली धुन सुनायी दे तो चौंकने की कोई आवश्यकता नहीं। यह काम किसी और प्राणी का नहीं है यह तो है पीलक अर्थात गोल्डन ओरियल का। यह सुरीली धुन पीलक अप्रैल से जुलाई के महीनों में छेड़ता है, क्योंकि यह समय इसका प्रजनन काल होता है।

सुरीली आवाज और अप्रतिम सुन्दरता जब एक साथ हो जाती है तो स्वभाव में शर्मीलापन आ ही जाता है। पीलक भी बहुत अधिक शर्मीला है और अपने आप को छिपाये रखता है। अगर पीलक की उपस्थिति की भनक पड़ती है तो इसकी आवाज से वर्ना इसे देखना आसान नहीं है। तभी तो इसकी आवाज को स्वर्ग से आने वाली आवाज कहा जाता है। और इसी आवाज के कारण इसे स्वर्गलोक का पक्षी भी कहा जाता है।

मनभावन आवाज का धनी पीलक खूबसूरती में भी किसी से कम नहीं है। पीलक जिस पेड़ पर बैठता है, उसके आसपास के परिवेश को अपनी विविध रंगों की छटा से आकर्षक बना देता है। मैना के आकार का यह पक्षी सुनहरे-पीले और काले रंग का चकाचौंध कर देने वाला मिश्रण लिये होता है। चमकदार सुनहरे पीले शरीर पर काले पंख लिये होता है और पूंछ के बीच के पिच्छों में काला रंग पाया जाता है। आंखों को स्पष्टता प्रदान करती हुई होती है चौड़ी काली पट्टी।

रंगों में अन्तर के कारण नर और मादा को अलग-अलग आसानी से पहचाना जा सकता है। नर के मुकाबले मादा का रंग कम भड़कीला होता है। मादा हरा-पीला हल्का रंग लिये होती है और पंखों का रंग काला धूसर होता है। रंग संयोजन इसे पेड़ों के बीच पर्याप्त छद्मावरण प्रदान करता है, जिससे इसे खोज पाना बहुत

अधिक कठिन होता है। आम के समान रंग के कारण पीलक को आम पक्षी भी कहा जाता है।

घने जंगलों, पतझड़ी और अर्धहरित जंगलों, शहरी उद्यान जहां बड़े-बड़े वृक्ष हों अथवा ऐसे स्थान जहां फलों की खेती होती हो या ऐसे गांव जिनके आसपास पेड़ काफी मात्रा में हों, ये अपना आवास स्थल बनाते हैं। जिस प्रकार बया का घोंसला कलात्मकता का एक उदाहरण है उसी प्रकार पीलक का घोंसला भी बहुत अधिक कलात्मक और सुन्दर होता है। इसका घोंसला एक प्याले के समान होता है जो दो शाखाओं के सन्धि स्थल पर बनाया जाता है। घोंसले को बनाने में अच्छी घास, कागज की कतरन, चिन्दियों और धागों का उपयोग किया जाता है। बाहर से देखने पर इस प्याले नुमा घोंसलों के चारों तरफ अच्छी घास की जाली दिखायी देती है। इसमें रखे हुए बच्चों और अंडों को यह जाली तेज हवा के झोंकों से सुरक्षा प्रदान करता है।

पीलक के अंडे चमकदार काले और सफेद धब्बे लिये होते हैं। मादा पीलक तीन से चार तक अंडे देती हैं जिनके सेचन में पन्द्रह दिन का समय लगता है। नीड और चूजों की देखभाल उनके पालक उस समय तक करते हैं, जब तक कि चूजे उड़ने लायक नहीं हो जाते। चूजों को भोजन कराने का काम माता और पिता दोनों के द्वारा किया जाता है। ये बड़े

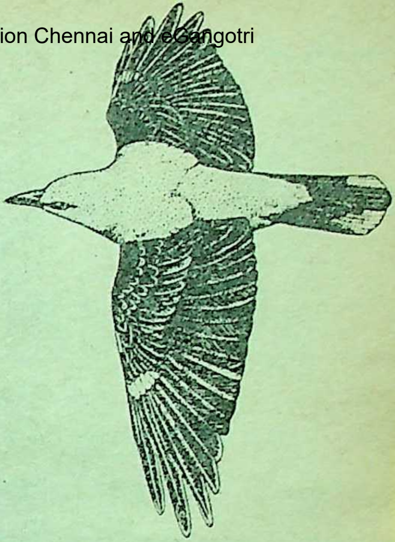

शिकारी पक्षियों से बहुत अधिक सावधान रहते हैं, क्योंकि वे इन पर झपट्टा मारते हैं। कौए और कोयल आदि कुछ पक्षी तो इनके अंडों को घोंसले से बाहर फेंक देते हैं, अतः ये अपने घोंसलों की बड़ी मुस्तैदी से देखभाल करते हैं।

वृक्षवासी प्रकृति के पीलक स्वयं को हमेशा पेड़ों में छिपाये रहते हैं। ये सघन जंगलों में उड़ते हैं तो ऐसा प्रतीत होता है मानो सोने की चमक कहीं से पैदा हुई हो। इस पक्षी का विशेष गुण है छोटी, तेज किन्तु गहरी उड़ान। पीलक की उड़ने की गति ४० कि. मी. प्रतिघंटा तक होती है। ये बहुत कम भूमि पर या घास वाले क्षेत्रों में उतरते हैं।

पीलक यूरोप, अफ्रीका और एशिया में पाये जाते हैं। भारत में ये पहाड़ी क्षेत्रों में

(शेषांश पृष्ठ ११ पर)

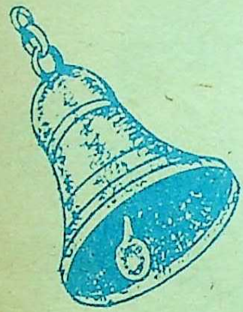

# भवन का धर्म-सेवा प्रतिष्ठान

भारत के मंदिर, विशेष रूप से ग्रामीण अंचल के मंदिर, केवल पूजा के भवन ही नहीं हैं, बल्कि सामाजिक एवं सांस्कृतिक गतिविधियों के केन्द्र-स्थल हैं। लोगों के जीवन में मंदिरों का महत्त्वपूर्ण स्थान है। ये मंदिर लोगों को सद्विचार, चारित्रिक संयम और शुद्ध आकांक्षाओं के निर्माण में सहयोग देते हैं। दुर्भाग्यवश भारत के बहुत से मंदिर, विशेषकर गांवों के मंदिर उपेक्षा और देखरेख के अभाव के शिकार हैं। धन की कमी के कारण उनमें नियमित पूजा-अर्चना भी नहीं हो पाती और वे त्योहार कि जिनमें सारा गांव सम्मिलित हुआ करता था, भी ठीक ढंग से नहीं मनाये जा सकते। इन प्राचीन और पवित्र पूजा-स्थलों के पुनरुद्धार और उनकी पवित्रता को बनाये रखना अति आवश्यक है। इसी उद्देश्य को ध्यान में रखकर भवन ने एक संगठन की स्थापना की है, जिसका नाम है 'धर्म-सेवा प्रतिष्ठान'। उसके चेयरमैन हैं श्री एन. ए. पालखीवाला। गत वर्ष इस प्रतिष्ठान ने अपनी प्रथम योजना के अंतर्गत केरल के कालड़ी स्थित अति प्राचीन श्रीकृष्ण मंदिर को जिसमें आदि शंकर भगवत्पाद के इष्टदेव की प्रतिमा है।

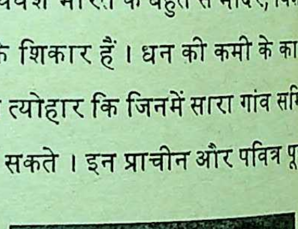

## उद्देश्य

१. पूजा के स्थलों की आवश्यक मरम्मत और पुनरुद्धार में सहायता देना।

२. जनसमुदाय को सभाओं और उनमें किये गये प्रवचनों द्वारा लोगों को प्रशिक्षित करना।

३. सरल संस्कृत और प्रार्थना कक्षाओं का आयोजन, विशेष रूप से बच्चों के लिए, करना।

---

उसकी मरम्मत और पुनर्निर्माण के लिए इस प्रतिष्ठान द्वारा सहायता दी गयी है।

ऐसे ही प्राचीन मंदिरों के व्यवस्थापक और ट्रस्ट, जिन्हें मरम्मत और पुनर्निर्माण की जरूरत हो, हमें संक्षेप में उनकी जानकारी भेजें। साथ ही उस पर कितना खर्च आयेगा, यह भी लिखें। कुल खर्च का कम से कम २५ प्रतिशत खर्च प्रार्थियों को स्वयं जुटाना होगा।

मंदिर पुरातात्विक होना चाहिये और कम से कम पांच सौ वर्ष पुराना, जिसके पुनर्निर्माण की तत्काल आवश्यकता हो। प्रार्थना-पत्र के साथ संक्षेप में मंदिर का इतिहास, उसका महत्व, उससे जुड़ी लोकमान्यता का विवरण भी दिया जाना चाहिये।

**एस. रामकृष्णन्**
**कार्यकारी सचिव, भारतीय विद्या भवन,**
**चौपाटी, बंबई—४००००७.**

# आशा-निराशा

□ डॉ. विनय वाईकर

प्रखर संघर्ष के बाद तानाशाही खत्म हुई, एकाधिकार समाप्त हुआ और जनता का राज्य प्रस्थापित हुआ। जनता ने अपना नेता चुना। नेता सिंहासनारूढ़ हुआ। देश का कारोबार नये ढंग से और नये सिरे से शुरू हुआ। देखते-देखते छह मास बीत गये।

एक दिन भरे दरबार में, देश के नेता ने राष्ट्र के सर्वोत्कृष्ट मूर्तिकार से कहा,

'हे कलामहर्षि, आपसे अनुरोध है, राजधानी के जनता चौक के लिए आप एक सुंदर शिल्प का निर्माण करें।'

मूर्तिकार ने काम शुरू किया। विविध धातुओं के मिश्रण से उसने एक अनोखी धातु तैयार की और उस धातु से एक अनुपम मूर्ति की रचना की। जनता चौक में मूर्ति की स्थापना हुई। शुभ अवसर पर नेता ने मूर्ति का अनावरण किया। जनता झूम उठी, नेता प्रसन्न हुआ। उसने पूछा,

'हे कलाकार, इस सुंदर मूर्ति को हम किस नाम से पुकारें?'

'आशा!' मूर्तिकार हौले से बोला।

'अति सुंदर! लेकिन मेरी एक विनती है।'

'कौन-सी?'

'आशा की इस अद्वितीय मूर्ति के साथ आप एक निराशा की मूर्ति का भी निर्माण करें।'

'जैसी आपकी इच्छा!' इतना कहकर मूर्तिकार उत्साह से अपनी कर्मशाला में आया, किन्तु वहां आते ही निराश हो गया। विविध धातुओं से बना वह मिश्रण कोई चुरा ले गया था। अथक परिश्रमों के बावजूद भी वह उस धातु का निर्माण नहीं कर पाया। वास्तव में रासायनिक प्रक्रिया की एकमेव पांडुलिपि भी चोर चुरा ले गया था और मूर्तिकार उस प्रक्रिया को पूरी तरह भूल चुका था। बेचारा हताश होकर बैठ गया। तभी कहीं से उसका पौत्र आया। आते ही बोला,

'आप उदास क्यों बैठे हैं?'

'मुन्ने, निराशा की मूर्ति का निर्माण करने के लिए अब मेरे पास कुछ भी नहीं बचा है।'

'किन्तु आशा की मूर्ति तो आपके पास

है न?' बच्चे ने सहज भाव से पूछा। 'हां ...वो तो है।'

'तो उसे आप छीलिये और उससे निराशा की मूर्ति का निर्माण कीजिये! हम बच्चे अक्सर ऐसा ही करते हैं।'

मूर्तिकार उत्साह से उठा और हथौड़ा व छेनी से आशा की मूर्ति को छीलने लगा। दृश्य देखकर जनता अवाक् हुई। नेता क्रोधित हुआ। गुस्से से बोला,

'हे कलामहर्षि, मैंने आपसे निराशा की मूर्ति बनाने को कहा था। आशा की मूर्ति को विद्रूप करने को नहीं। यह आप क्या कर रहे हैं?'

हथौड़े से अविरत प्रहार करते हुए मूर्तिकार धीरे से बुदबुदाया, 'निराशा की मूर्ति का निर्माण करने के लिए सामान बटोर रहा हूं, श्रीमान! आशा ही तो निराशा की जननी है!!'

— ९, रामदासपेठ,
नागपुर - ४४० ०१०.

* * *

(पृष्ठ ७ का शेषांश)

१८०० मीटर की ऊंचाई तक पाये जाते हैं। मैदानी क्षेत्रों में ये सभी मौसम में देखने को मिलते हैं। इनके खास आवासीय क्षेत्र राजस्थान से लेकर पश्चिमी बंगाल और दक्षिणी भारत तक में पाये जाते हैं। ये वैसे फलाहारी होते हैं किन्तु कभी-कभी छोटे-छोटे कीटों का भी भक्षण कर लेते हैं।

प्रकृति के अति सुन्दर उपहार सुनहरे रंग वाले और मन को प्रसन्नता प्रदान करने वाली मधुर आवाज के धनी पीलक अधिकतर अकेले या जोड़ों में रहते हैं। जिस प्रकार जंगल के विनाश का अनेक प्राणियों चाहे फिर वह स्तनपायी हो या सरीसृप अथवा नभचर सभी पर जबर्दस्त विपरीत असर हुआ है। इससे पीलक भी नहीं बच पाया है। चूंकि पीलक स्वभाव से ही वृक्षवासी प्रकृति का है, अतः जाहिर है कि इसके जीवन की प्राथमिकता आवश्यकताओं में सघन वृक्षों/का स्थान सबसे पहला है। किन्तु वृक्षों की अन्धाधुन्द कटाई ने पीलक के जीवन को भी संकटग्रस्त बना दिया है।

(सीईई-एनएफएस)

* * *

# बीती विभावरी

## श्रीकृष्ण कुमार त्रिवेदी

दिवस की पूरक, विश्रांतिदायिनी निशा अपनी प्रिय सखी निद्रा के सहयोग से प्राणियों के तन और मन दोनों के, श्रमहरण करके, नितनवीन बनाती है। निद्रा और स्वास्थ्य के बीच सीधा समानुपात है। अच्छे स्वास्थ्य के लिए अच्छी निद्रा अनिवार्य है। गहरी निद्रा अच्छे स्वास्थ्य की प्रतीक है और अकलुष मन की भी। निर्दोष बालक, आत्मज्ञानी परमहंस तथा प्रजावत्सल शासक को ही दुःस्वप्नरहित गहरी नींद आती है— ऐसा उपनिषद का मत है। सोने के पहले यदि दिन का पूरा काम समाप्त हो जाये तो बड़ी निश्चिंतता का अनुभव होता है और यह निश्चिंतता ही निद्रा के समीकरण की उत्प्रेरक है। अधूरे काम की चिंता में नींद कहां आती है? अनिद्रा अशांतिकारक ही नहीं, भीषण अस्वस्थता और भावी अमंगल की भी सूचक है।

रात्रि को सबने अपनी-अपनी दृष्टि से देखा और अपने-अपने उपयोग से आंका है। दार्शनिक, राजनीतिज्ञ, राष्ट्रनायक, प्रेमी, साधक, संत, ...सबके लिए उसके अलग-अलग रूप हैं। आध्यात्मिक दर्शन में रात्रि और निद्रा दोनों प्रायः पर्याय हैं और रूपक बनकर आती हैं। मोहनिशा में सारा का सारा संसार बेसुध सो रहा है। नाना प्रकार के स्वप्नों में मस्त वह स्वप्नजन्य सुख-दुख को सत्य मानकर उनके बीच उद्दोलन कर रहा है। योजनायें, आशायें, अपेक्षायें, प्रयास, परिणाम, सफलता, विफलता, ....सब स्वप्न ही तो हैं, क्योंकि ये असत्य हैं, अस्थायी हैं, अनित्य हैं और स्वप्नवत् क्षणभंगुर हैं। ब्रह्म को ही सत्य मानने वाले ज्ञानी मायाच्छन्न सम्पूर्ण जगत को स्वप्नवत् मिथ्या मानते हैं और इसीलिए इस घोर जगयामिनी को पहचानकर परमार्थी, प्रपंचरहित योगी इससे सावधान रहते हैं, इसके वश नहीं होते, इसमें जागते रहते हैं— 'या निशा सर्वभूतानां तस्यां जागृति संयमी।' ये

गुडाकेश पूरी तरह से सजग रहते हैं कि कहीं कोई विकार चोर उनके मनोराज्य की पवित्रता को दूषित न कर दे, उसे उच्छिष्ट न कर दे। यह रात्रि मोहक ही नहीं अत्यंत बलवान भी है। वह मन को इतना दुर्बल बना देती है कि एक बार तो वह डिग ही जाता है, विवश होकर गिर ही जाता है, चित हो ही जाता है। इसकी मोहकता से पार पाना असंभव प्राय है। अतः मुक्ति कामी तनिक भी विचलित हो रहे मन को सतत सावधान करते रहते हैं- 'जागु जागु जीव जड़ जो है जगजामिनी।'

राग-द्वेष के उलूकों को सुख देनेवाली ममता की अंधकाराविष्ट तरुण तमी तभी तक जीव के मन में वर्चस्व बनाये रखती है, उसे आक्रांत किये रहती है जब तक कि 'प्रभु प्रताप रवि' उसे छिन्न-भिन्न नहीं कर देता। ज्ञान रवि के उदय हो जाने पर अज्ञानांधकार टिक भी कहां सकता है। विवेक के पूर्ण चन्द्र में इंद्रिय गोपिकायें अनुरागवती यमुना के तट पर परात्पर ब्रह्म के साथ शाश्वत रास में मग्न रहती हैं और सम्पूर्ण मायाजाल से ऊपर उठकर प्रभु के परम सान्निध्य में ब्रह्ममय हो जाती हैं।

वाक्य-ज्ञान से इस रात्रि को पार कर पाना असंभव है। श्रद्धा विश्वास के माध्यम से ही इसका संतरण संभव है। जीवन के सौर मण्डल का सूर्य है विश्वास, उसके परमाणु का नाभिक है विश्वास, जिसका प्रमुख पक्ष (न्यूट्रान) तो अनाविष्ट है, क्योंकि उसे किसी से कुछ लेना-देना नहीं है, पर अन्य पक्ष (प्रोटान) जीवन के ऋणात्मक अभावों की पूर्ति-हेतु धनाविष्ट रहता है और उसके धनावेश का केन्द्राभिसारी बल ही जीवन को गतिमय बनाये रखता है। जीवन-नभ का अटल ध्रुव नक्षत्र है विश्वास, जिसको आधार मानकर ही कोई यात्री अन्वेषण-तीर्थ का संधान कर सकता है। स्वप्न से मोह तभी तक होता है जब तक कि सोने वाला जग नहीं जाता। एक बार जग जाने पर दुबारा कौन सोना चाहेगा? ज्ञान, विज्ञान, योग, विराग, भक्ति, दर्शन, .....सभी साधन हैं जीव को जगाने के। आगे का काम तो जग जाने वाला स्वयं कर लेगा।

प्रेम के क्षेत्र में इसका प्रायः पूर्ण विपर्यय है। वहां जितना रात्रि का महत्व है उतना दिन का नहीं। स्वकीया और परकीया दोनों को ही लम्बी रात्रि पूर्ण काम्य है। 'सजन सबेरे जायेंगे नैन मरेंगे रोय। बिधना ऐसी रैन कर कि भोर कदी ना होय।।' कहकर स्वकीया रात्रि की दीर्घायु की कामना करती है। जगनिक की नायिका बदली और बिजली को अपने भाई-बहन बनाकर अनुरोध करती है– 'काली बदरिया बहिनि हमारी कौंधा बीरन लगे हमार। आजु बरसि जा मोरे अंगना मा बालम एक राति रहि जायं।।' आकाश में चंद्रमा की स्थिति के अनुसार

कृष्ण अथवा शुक्लाभिसारिकायें रजनी से वर्णसाम्य स्थापित करके स्वयं को गोपनीय बनाने का उद्योग करती हैं। समस्त प्रकार की नायिकायें रात्रि की और उसमें भी ऐसे एकांत की उपासिकायें हैं जहां किसी भी प्रकार का कोई व्यवधान न हो। अपने महिवाल से मिलने के लिए कोई सोहनी घड़ा लिए रात की प्रतीक्षा में सारे दिन बेचैन रहती है और वारिसशाह की नायिका तो कोसती चलती है 'उस कुत्ते को जो राह चलने वालों पर भूंक-भूंककर आस-पास सोनेवालों को जगाकर उसकी गोपनीयता को उजागर कर देता है, उस दूकानदार को जो आधी रात तक दिया जलाये दूकान में बैठा रहता है और जाने वाले की पहचान करने में दर्शकों की सहायता करता है, .....। कोई विवश शीबा किसी सोलोमन के प्रेमपाश में आबद्ध हो जाती है किसी गहरी काली रात्रि के दुर्दम आकर्षण के कारण।

प्रेम के अधिपति अनंग द्वारा अनुशासित यही रात अनंग का दहन भी करती है। किसी घनघोर अंधेरी रात में किसी रत्ना की फटकार से जग गया कोई रामबोला दूर कहीं जाकर तुलसीदास हो जाता है, किसी नवजात राहुल को छोड़कर कोई सिद्धार्थ बुद्धत्व प्राप्त करने के लिए किसी छंदक का आश्रय ग्रहण करता है। और नवपरिणीता यशोधरा को पछताने के लिए छोड़ जाता है– 'सखि, वे मुझसे कहकर जाते!' आखिर, सिद्धार्थ किससे भयभीत थे– यशोधरा के उत्कट प्रेम से, या स्वयं अपने मन की दुर्बलता से? 'गोरी सोयी सेज पे डाल लिए मुख केश। चल खुसरू घर आपने रैन भई यहि देश।।' कहकर कोई खुसरू इश्क मजाज़ी से इश्क हकीकी की ओर मुड़ जाता है ....।

राजनीति और इतिहास के क्षेत्र में रात्रि अमंगल, पराधीनता, दासता, अन्याय, अनाचार, शोषण, उत्पीड़न आदि अमानवीय बंधनों की द्योतक है जिसका परिहार करने में मातृभूमि के सच्चे सपूत अहर्निशि सचेष्ट रहते हैं, जागते रहते हैं, देशद्रोहियों एवं पंचमांगियों की भांति न तो वे इसे अपना भाग्य स्वीकार करते हैं, न इसके आगे सिर झुकाते हैं। त्रिवेणी की सरस्वती की भांति अलक्षित रहकर भी वे उसे पवित्र बनाने में पूर्ण योग देते हैं। स्वाधीनता के लिए शीश चढ़ानेवाले राष्ट्रभक्त, आततायियों की काराओं में अशेष जवानी भस्मसात् कर देने वाले शूरवीर, फांसी के फंदे को हंस-हंसकर चूमने वाले परमहंस, मुक्ति की खोज में दर-दर ठोकरें खाने वाले, घास की रोटियों पर दिन पार करने वाले प्रताप, दो मुट्ठी चावल चबाकर घोड़े की पीठ पर ही रात पार कर देने वाले शिवा, पीढ़ियों की संचित अपार धनराशि मातृभूमि के श्रीचरणों में सहर्ष अर्पित कर देने वाले भामा शाह, ..... इस धारा को सप्राण

करते हैं। यह धा[illegible] से नहीं, नरमुण्डों से निर्मित होती है।

उपनिवेशवादियों ने दूर-दूर तक अपने खूनी दांत गड़ाये और महाद्वीपों का ऐसा बंदर बांट किया कि भाई-भाई से सदा-सदा के लिए बिछुड़ गया। फ्रांस और पुर्तगाल जैसे 'बहु महाद्वीपीय देशों' ने एक नयी महंती चाल चली। हथियाये हुए क्षेत्रों को उपनिवेश न कहकर वे उन्हें अपना अविभाज्य अंग और 'समुदपार प्रदेश' कहने लगे, पर ये झूठे विशेषण कब तक सत्य लगते रहते? उपनिवेशवाद की यह युगव्यापी रात जघन्यतम अपराधों के दुःस्वप्नों से भरपूर रही। स्थानीय कर्मचारियों से अनेक अधिक गुना वेतन गौरांगों को मिलता रहा और जो गोरे घर में किसी काम के नहीं थे, वे उपनिवेशों में शाही खानदान के बनकर पहुंचे और ऐसा व्यवहार करने लगे जैसे अश्वेत लोग मनुष्य ही न हों। अच्छी से अच्छी धरती गोरों की हो गयी, सारी खनिज सम्पदा मानों उन्हें विरासत में मिल गयी। मूलनिवासियों को अनुर्वर क्षेत्रों में पशुओं की भांति ठूंस दिया गया। मुक्ति-योद्धाओं के महत्व को कम करने का पूरा प्रयास किया गया— युगविभूति गांधी उनके लिए 'नेकेड-फकीर' ही रहे और स्वतंत्रता को अपना जन्मसिद्ध अधिकार मानने वाले इसे अपना भाग्य कैसे मान लेते? १८५७ के प्रथम भारतीय स्वाधीनता-संग्राम तथा केन्या के '[illegible]' [illegible] से प्रयत्न उपनिवेशवादी उलूकों के लिए दुःस्वप्न ही सिद्ध हुए।

आखिर, इस निशा का भी अवसान हुआ। पूर्व से हुआ सूर्योदय दो-तीन दशकों के भीतर ही सभी को मुक्त कर गया। अफ्रीका में यह सूर्योदय पश्चिम (घाना) में हुआ। फ्रांस के 'अविभाज्य अंग' आज भी रक्तरंजित हैं— इंडोचीन, लेबनान, चाड़ आदि आज भी क्षत-विक्षत हैं और होते जा रहे हैं। यही स्थिति पुर्तगाल के 'समुद्रपार प्रदेशों' की है।

सामान्य जन रात में भयभीत रहते हैं, क्योंकि भीषण शांति भी भयावह होती है। दरवाजे ठीक से बंद करके, उन पर ताला डालकर सोते हैं, क्योंकि भरोसा नहीं कि कब किसकी नीयत खराब हो जाये। खलील जिब्रान के 'प्राफेट' के अनुसार अकिंचन भिक्षुक भी दरवाजे ठीक से बंद करके सोते हैं (जब कि उनके पास चोरों के मतलब का कुछ भी नहीं होता) क्योंकि वे स्वयं से ही भयभीत रहते हैं। पता नहीं कब कौन कनपटीमार आ धमके और उन्हें ऐहिक काया से वियुक्त कर दे। शांति हो तभी उसके भंग होने का खतरा भी रहता है, शांति हो ही नहीं तो भंग क्या होगी?'

विशिष्ट जनों को रात्रि समाधि का-सा आनंद देती है। कवि, साहित्यकार, वैज्ञानिक, विद्यार्थी, शिक्षक, अधिवक्ता,

चिकित्सक तो मानो रात में ही कुछ पा सकते हैं। कोई कवि किसी सुंदर वर्ण की खोज में एकाग्र बैठा होगा, कोई कोपरनिकस किसी ग्रह की गति का सूक्ष्मता से अनुकरण कर रहा होगा, कोई न्यूटन किसी शक्तिशाली दूरबीन से नक्षत्रमण्डल के भव्य विश्व का सौंदर्य निरख रहा होगा और किसी अबोध डायमण्ड ने उसकी वर्षों की कमाई को पलक मारते जलाकर राख कर दिया होगा, .....। किसी मिल्टन ने अपनी बेटियों की नींद हराम क़र दी होगी क्योंकि उसके भावों को कोई नये शब्द मिल गये होंगे, किसी बुलबुल के नैसर्गिक संगीत में तल्लीन कोई कीट्स अपनी जान- लेवा बीमारी की भी उपेक्षा करके कहीं काव्य-रचना में रत होगा, तो कोई क्यूरी यूरेनियम की खोज में। कोई चाणक्य अपने गुप्तचरों से गुप्त मंत्रणा कर रहा होगा, कोई सिकन्दर किसी पोरस पर नियमविरुद्ध आक्रमण की तैयारी में होगा, ....। कहीं कोई अश्वत्थामा किसी पाण्डव-शिविर में कहर मचा देने की योजना बना रहा होगा।

अपने इतिहास, सम्मान और जातीय गर्व को भूलकर खर्राटे भर रहे समाज को सचेत करता हुआ किसी निराला का स्वर मुखर हो उठता है –

**प्यारे जगाते हुए हारे सब तारे तुम्हें,**
**अरुण पंख तरुण किरण खड़ी**
**खोलती है द्वार ।**
**जागो फिर एक बार ।।**

प्रमादवश फिर भी न उठनेवालों को झकझोरने के लिए किसी सोहनलाल द्विवेदी को कमर कसनी पड़ती है–

**अब न गहरी नींद में तुम सो सकोगे,**
**गीत गाकर मैं जगाने आ रहा हूं।।**

समस्त प्रकार के परिवर्तनों की मूक साक्षी प्रकृति अपने नियम से सोती-जगती है। उसे न किसी लोरी की प्रतीक्षा रहती है, न किसी प्रभाती की। सूर्य और चंद्र उसके अनिंद्य सौंदर्य की रखवाली करते हैं, ऋतुएं उसका श्रृंगार करती हैं, जरा-मरण से रहित शाश्वत विभावरी की यह शाश्वत नायिका जब प्रभात काल में शय्या का त्याग करके नित नयी सज-धज से उठती है तो पक्षी इसकी वंदना करते हैं, कोमल किसलय हाथ हिला-हिलाकर इसका स्वागत करते हैं, मुकुलकर पुष्प अपने हर्ष का परिचय देते हैं, भ्रमर गीत सुनाते हैं, ओसकण पद प्रक्षालन करते हैं, .....। ऐसी दिव्य बेला में भी बेसुध पड़ी प्रसाद की किसी नायिका को उसकी सखी मीठे उपालंभ के साथ धीरे से जगाती है–

**अधरों में राग अमंद पिये,**
**अलकों में मलयज बंद किये,**
**तू अब तक सोयी है,**
**आली, नयनों में भरे विहाग री।**
**बीती विभावरी जाग री ।।**

– द्वीपान्तर, ला. ब. शास्त्री मार्ग,
फतेहपुर - २१२ ६०१, उ.प्र.

# क्या है हंसने का रहस्य

**विनय कुमार त्रिवेदी**

'तुम्हें हो क्या गया है जो इस तरह हंस रहे हो।' अभिमन्यु की मम्मी ने उसे खिलखिलाकर हंसते देख कर टोका।

'बात यह है कि बच्चे ही नहीं हंसेंगे तो फिर कौन होगा जो हंसेगा? फिर हंसना तो जिन्दादिली की निशानी है? .... और 'जिन्दगी जिन्दादिली का नाम है।' बीच में ही अभिमन्यु की मम्मी को घूरते हुए उसके पिता ने कहा।

तभी अभिमन्यु पूछ उठा – 'पापाजी! हंसना-हंसाना अच्छी बात है या बुरी बात, यह तो अलग से बहस की बात है। लेकिन हम हंसते क्यों हैं? जरा इसके कारणों को समझाइये, न।'

'इस रहस्य को समझने के लिए तुम्हें शरीर में खून के प्रवाह का क्या रहस्य है यह समझना होगा।'

'तो फिर वही बतला दीजिये जरा।'

'हम जो भी खाते हैं उसके पच जाने पर खून बनता है। यह खून हमारे पूरे शरीर में निरन्तर बहता रहता है। चिकित्साशास्त्रियों ने मनुष्य को गरम खून वाला प्राणी ठहराया है। उसके पूरे शरीर में छोटी-बड़ी नलियों का एक बहुत घना जाल फैला रहता है। इन्हीं 'नलियों के जरिये खून मनुष्यों के शरीर की पोर-पोर में पहुंचाया और वापिस लाया जाता है। यह क्रिया जीवन रहते कम या अधिक गति से बराबर बनी रहती है।'

'लेकिन पापाजी, गरम खून का हंसने से क्या रिश्ता है। यह तो आपने बतलाया ही नहीं।' अभिमन्यु ने अपनी जिज्ञासा प्रगट की तभी।

'अरे भाई, जरा धैर्य से सुनो और बात को समझो। हंसने की क्रिया का गरम खून से गहरा रिश्ता है। मानव शरीर में निरन्तर बहता रहने वाला रक्त ही पूरे शरीर में घूम-घूमकर शरीर को एक

खास तापमान तक गरम रखता है। चिकित्साशास्त्रियों का अनुमान है कि यह तापमान लगभग ३७ डिग्री सेण्टीग्रेड पर शरीर को गरम रखता है। मनुष्य के शरीर का यह निश्चित तापमान ही उसके प्रसन्न और जिन्दादिल रहने का कारण है।'

'लेकिन, पापाजी। बुढ़ापे में जब शरीर में खून की कमी हो जाती है तब.....?'अभिमन्यु ने पुछा।

वह बात पूरी भी नहीं कर पाया था कि उसके पिताजी ने कहा 'हां, तुम्हारी शंका ठीक ही है। जब कोई बीमार रहता है या बुढ़ापे का शिकार हो जाता है, उन दिनों शरीर का मशीनी तंत्र कमजोर हो जाता है। इसका नतीजा यह रहता है कि खून के शरीर में बनने और घूमने दोनों की रफ्तार बहुत कम हो जाती है। इस वजह से शरीर का तापमान बहुत ज्यादा घट जाया करता है। शरीर में इधर खून का तापमान गड़बड़ाता है, उधर आदमी चिड़चिड़ा हो जाता है। बीमार आदमी और बूढ़े, कमजोर आदि इसीलिए चिड़चिड़े स्वभाव वाले होते हैं।'

'क्या पिताजी, हंसमुख या जिन्दादिल आदमी के शरीर के तापमान के प्रभाव का कभी चिकित्सकों ने अध्ययन भी किया है?'अभिमन्यु ने अपने मन में उठी बात कह डाली तभी।

'यह चिकित्सा जगत तो सदा ही वैज्ञानिक एवं मनोवैज्ञानिक विश्लेषणों पर ही चल पाता है। हर दौर पर कुछ न कुछ तथ्यों का पता चलता ही रहता है। जिन्दादिली पर मानव शरीर के तापमान के व्यापक प्रभाव को बारीकी से लन्दन के डॉ. ब्लैक ने परखा था।' पिताजी ने बताया।

'तो उन्होंने क्या निष्कर्ष निकाले हैं, पिताजी।'

'बेटा! डॉ. ब्लैक ने पाया था कि मनुष्य को खुश या उदास बनाने के लिए मनुष्य शरीर के तापमान में बस ०.१ या ०.२ डिग्री सेण्टीग्रेड का फर्क ही काफी होता है। यदि यह घटा तो चिड़चिड़ापन और भी अधिक बढ़ जाता है।'

'लेकिन, पिताजी! मैंने देखा है कि आप सुबह अधिक खुश-मिजाज रहते हैं और मम्मी शाम को। क्या यह मेरा सोचना ही है या कुछ कारण हैं इसके भी।' अभिमन्यु ने पूछा।

'बेटे! मैंने इस बात पर गौर नहीं किया, किन्तु हो सकता है कि तुम्हारी बात ही ठीक हो। वैसे डॉ.ब्लैक का यह कहना भी है कि कुछ लोग सुबह के समय अधिक तरोताजा और खुशमिजाज रहते हैं तो कुछ शाम के वक्त। राजमर्रा के तनाव से मुक्ति के साथ ही साथ यह कारण भी है कि जिन लोगों में सुबह ४ बजे से शाम ४ बजे के बीच शरीर का तापमान सामान्य से थोड़ा अधिक रहता है वे सबेरे के वक्त प्रसन्न नजर आते हैं। जिनके शरीर का तापमान सायंकाल ४

बजे से प्रातःकाल ४ बजे के बीच थोड़ा अधिक रहता है, वे शाम के वक्त ज्यादा प्रसन्न रहते हैं। इससे ही हमारी खुशमिजाजी का अन्दाजा तुम खुद ही निकाल ही डालो।' पिताजी ने उसे खुशमिजाजी का प्रभाव समझाया।

'क्या और भी प्रभाव पड़ता है प्रसन्नता और अप्रसन्नता की स्थितियां बनने का।' अभिमन्यु अभी भी पूछ ही रहा था।

'बेटे! हमारे आसपास के वातावरण, मौसम और मन की स्थिति का भी प्रभाव पड़ता है। हर बात मौके पर ही अच्छी लगती है— हंसना, मुस्कराना और ठहाके लगाना भी ऐसा ही है। जब हंसने जैसी बात हो तो खुलकर हंसना चाहिये ताकि मन में जरा भी कुण्ठा नहीं पनप सके। हमारे बुजुर्गों ने मेलों तीज-त्यौहारों तथा रीति-रिवाजों में हंसने-हंसाने के अवसर इसीलिए उत्पन्न किये हैं। अब तो तुम समझ ही गये होगे कि हम हंसते क्यों हैं?' पिताजी ने मुस्कराते हुए पूछा।

'हां पिताजी! आपके खून का तापमान बढ़ गया है न। इसलिए आपके होंठों पर मुस्कराहट तैर आयी है।' अभिमन्यु बोला।

'हां, मेरे हंसमुख बेटे! बात सौ फी सदी यही है।' कहकर पिताजी हंसते हुए चल दिये।

**— बी ११६, विजयपथ,**
**तिलकनगर, जयपुर — ३०२ ००४**

□

## स्वागत

आगत का स्वागत करे,
उड़ती-उड़ती धूल।
बनी दुपहरी बावरी,
ज्यों महुआ के फूल।।

डूबा सूरज देखकर,
आया याद पलाश।
शबनम डूबी याद में,
खोयी कहां तलाश।।

सांसें तपती धूप हैं।
नागफनी की छांव,
सूखा आंचल देखकर,
रोता सारा गांव।।

बंजारन-सी नींद भी,
पलकों के उस पार।
वह भी हर पल कर रही,
सपनों से व्यापार।।

दीप आरती के जलें,
गंध न आयी पास।
पूजा की थाली सजी,
जाये किसके पास?

**— कुसुम शुक्ला —**
**गोकुलपुरी, लखीमपुर-**
**खीरी — २६२ ७०१**

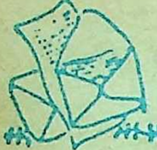

# अध्यक्ष के पत्र

राज भवन,
मलाबार हिल,
बम्बई

प्रिय सुहृद,

डॉ. नेलसन मंडेला की १५ अक्तूबर से १९ अक्तूबर १९९० तक की पांच दिनों की भारत यात्रा एक ऐतिहासिक घटना है। इसकी ऐतिहासिकता इस बात से सिद्ध हो जाती है कि भारत ने अपने सर्वोच्च राजकीय उपाधि 'भारत रत्न' से उन्हें विभूषित किया, जो भूभागों पर शासन करने वाले सम्राट, राजा अथवा राज्याध्यक्ष नहीं थे, वे तो, राष्ट्रपति के शब्दों में, काले-गोरे, युवा-वृद्ध, धनवान और निर्धन, लाखों-करोड़ों लोगों के दिलों पर शासन करने वाले थे।'

डॉ. मंडेला पचास लाख अल्पसंख्यक गोरों के शासन से मुक्ति चाहनेवाले करीब तीन करोड़ जनता की भावनाओं के मूर्तिमान स्वरूप हैं। तीन दशक की जेल-यातना के बाद 72 वर्ष की आयु में भी किसी भी नवयुवक से स्पर्धा करने वाला उत्साह उनमें है। वे अपने तथा अपने देशवासियों के प्रति निर्मम सत्ताधारियों के क्रूर एवं कठोर व्यवहार से तनिक भी विचलित नहीं हुए हैं। उनका तेजस्वी व्यक्तित्व सदैव आशा से भरपूर आगे ही सोचता है तथा स्वतंत्रता के स्वर्ग तक देशवासियों को ले जाना चाहता है। गुरुदेव रवीन्द्रनाथ की कविता 'अफ्रीका' में उनके आदर्श निहित हैं।

**क्षमा, औ क्षमा,**
**बने तुम्हारी अन्तिम साधना**
**ओ अफ्रीका।**

अलेक्जेंडर पोप ने कहा था– 'गलती करना मनुष्य का स्वभाव है और क्षमा ईश्वरीय बड़प्पन है।'

पं. जवाहरलाल नेहरू की तरह डॉ. मंडेला न तो किसी से डरते हैं और न ही कभी निराश होते हैं। अपने बुरे से बुरे दुश्मन के लिए उनके मन में तनिक भी घृणा का भाव नहीं रहता। चर्चिल ने जो नेहरू के प्रति कहा था वह डॉ. मंडेला पर भी घटित होता है। लंदन में एक भोज के अवसर पर अश्रुपूर्ण नेत्रों से चर्चिल ने

कहा था– 'यह एक ऐसा व्यक्ति है जिसने केवल भय को ही नहीं जीत लिया है, बल्कि घृणा पर भी विजय पा ली है। यह बहुत ही कठिन उपलब्धि है।

अनेक भाषणों में मंडेला ने स्पष्ट कर दिया है कि दक्षिण अफ्रीका का जनतंत्र के लिए संघर्ष किसी जातीय भावना से संबंधित नहीं है। जनतंत्र का अर्थ है रंग और जाति भेद मिटाकर सबको एक वोट देने का अधिकार।

इस अवसर पर दक्षिण अफ्रीका के अध्यक्ष एफ. डब्ल्यू. डेक्लार्क की प्रशंसा किये बिना नहीं रहा जाता, क्योंकि उन्होंने अफ्रीकी नेशनल कांग्रेस, 'जिसके मुख्य प्रतिनिधि डॉ. मंडेला हैं, से वार्ता की शुरूआत करके राजनैतिक जिन्दादिली का परिचय दिया है। अपने ही दल के लोगों के विरोध के अनन्तर अध्यक्ष ने भेदभाव विषयक कानून 'द सेपरेट अमेनटीज एक्ट–१५' रद्द कर दिया था। यह कार्य उन्होंने उसी दिन किया जिस दिन डॉ. मंडेला भारत पहुंचे।

भारतीय विद्या भवन ने भी उन्हें भवन की सम्मान्य सदस्यता देने का निर्णय किया था। किन्तु यह संभव नहीं हो सका, क्योंकि उनकी कार्यव्यस्तता में भारत का प्रमुख नगर बम्बई उनकी कार्यसूची में ही नहीं आ पाया। मैं भी बड़ी उत्सुकता से स्वतंत्रता के अवतार, जनमानस के महान नेता, तथा विचारक से मिलना चाहता था, किन्तु, डॉ. मंडेला

को समर्पित 'द अफ्रीकन माइण्ड, ए लिटरेरी पर्सपेक्टिव' नामक पुस्तक प्रकाशित कर ही सन्तोष करना पड़ा। इस पुस्तक से अंग्रेजी में लिखे गये अफ्रीकी साहित्य तथा अफ्रीकी संस्कृति का अच्छा परिचय हो जाता है। इस बात का संकेत मैंने पुस्तक की प्रस्तावना में भी किया।

भारत और सहारा से प्रभावित अफ्रीकी संस्कृति में कई बातों की समानता है। अपनी परंपराओं में निष्ठा, मां से प्यार, बच्चों की देखरेख, अपने पेशे से लगाव, पूर्वजों की पूजा, बड़ों का सम्मान, वात्सल्य भाव, सत्य के प्रति निष्ठा, नैतिक स्तर, संयुक्त परिवार की एकता, नागरी जीवन के भोंडेरूप से अरुचि आदि बातें अफ्रीकी संस्कृति और

हमारी संस्कृति में समान रूप से पायी जाती हैं। अफ्रीकी लेखकों के नाटकों, उपन्यासों एवं कविताओं से उनका चित्र प्राप्त होता है। एक ने लिखा है 'ईश्वर के प्रति उसके भाव से मनुष्य के कार्यों का औचित्य आंका जाता है। यदि मनुष्य ईश्वर में विश्वास करता है और पूजा के बाद कार्य करता है तो उसका कार्य ही सबसें बड़ी पूजा है।'

यहां कार्य के प्रति एक नैतिक मूल्य का विवेचन है, जिसकी गूंज सबके मन में होनी चाहिये। हमें जीविका के लिए ही नहीं, बल्कि निश्चित उद्देश्य के लिए उच्च कार्य करने चाहिये। ऐसे ही उद्देश्य के लिए डॉ. मंडेला का जीवन समर्पित है, जैसे सम्मान के साथ स्वतंत्रता, जातीय एकता के साथ शान्ति अफ्रीकी जीवन में दोनों ही आवश्यक हैं।

विश्व को इस महान उद्देश्य की प्राप्ति में संघर्षरत डॉ. मंडेला को हर संभव सहायता देनी चाहिये। उनका कार्य अभी पूरा नहीं हुआ है।

**भवदीय**

**सी. सुब्रमण्यम**

## लेखकों से निवेदन

* प्रतिदिन नवनीत में प्रकाशनार्थ बहुत सी डाक आती है। कई बार अनुरोध करने पर भी कुछ लेखक वापसी के लिए रचना के साथ पर्याप्त टिकट लगा लिफाफा नहीं भेजते। भविष्य में ऐसी रचनाओं को न लौटाया जायेगा और न उन पर प्रकाशनार्थ विचार ही किया जायेगा।

* जब तक आपकी पूर्व स्वीकृत रचना प्रकाशित न हो जाये दूसरी रचना न भेजें।

* कुछ लेखक अभी भी वापसी के लिए बिना पर्याप्त टिकट लगे लिफाफे के रचनाएं विचारार्थ भेजते रहते हैं। ऐसी अस्वीकृत रचनाओं को आप पत्र लिखकर वापस मंगा सकेंगे, यह अपेक्षा न रखें, क्योंकि उन्हें संभालकर रखना हमारे लिए संभव न होगा।

**— संपादक**

---

दो मित्र डॉक्टरों के बारे में बातचीत कर रहे थे। धीरे-धीरे बातचीत ऑपरेशन तक जा पहुंची।

एक मित्र ने दूसरे से पूछा, 'यार, ऑपरेशन करते समय डॉक्टर लोग मुंह पर पट्टी क्यों बांध लेते हैं।'

'इसलिए कि ऑपरेशन असफल हो जाये, तो रोगी या उसके रिस्तेदारों को पता न चल सके कि ऑपरेशन किसने किया था।' दूसरे मित्र ने उत्तर दिया।

**— डॉ. गोपाल प्रसाद 'वंशी'**

दर्शनीय स्थल

# बूंदी के भव्य राजमहल

**डॉ. भैंरूलाल गर्ग**

हाड़ा राजाओं की राजधानी जहां शौर्य, साहस और पराक्रम की कहानियां सुनाती जान पड़ती है, वहीं वह छोटी काशी के नाम से भी जानी जाती है। सच कहा जाये तो बूंदी शौर्य, कला और साहित्य की अनूठी संगमस्थली है। प्राकृतिक वैभव की गोद में बसी यह नगरी दर्शकों का मनमोह लेती है। यहां के दर्शनीय स्थल बार-बार देखने के बाद भी मन तृप्त नहीं होता। स्थापत्यकला के एक से एक बढ़कर अद्भुत नमूने आज भी यहां देखे जा सकते हैं।

प्राचीनकाल से ही बूंदी साहित्य और शिक्षा का प्रसिद्ध केन्द्र रही है। कहते हैं कि किसी जमाने में यहां संस्कृत की चालीस पाठशालाएं चला करती थीं। कई संस्कृत के कवियों की यह जन्मस्थली रही। 'वंशभास्कर' के रचयिता श्रीसूर्यमल्ल मिश्रण के कारण तो बूंदी विश्वविख्यात हो गयी। चित्रकला के क्षेत्र में बूंदी चित्रकला का अपना विशिष्ट महत्व है ही। जितना इस नगर का वैशिष्ट्य गिनायें कम है। यही कारण है कि आज बूंदी अपनी विविध विशेषताओं के कारण विभिन्न क्षेत्रों में चर्चित है। अब तो पर्यटन के मानचित्र पर आ जाने से यह नगर एक और भी आकर्षक पर्यटन स्थल के रूप में विकसित हो जायेगा।

बूंदी में सर्वाधिक दर्शनीय स्थल हैं यहां के भव्य राजमहल। नगर के दक्षिण में 'बाईपास' से यहां का किला और राजमहल देखकर कोई भी दर्शक कुछ क्षणों के लिए ही सही ठिठक-सा जाता है। पहाड़ी जो नगर के उत्तर की ओर है, इसी पर स्थित है बूंदी का अभेद्य तारागढ़ दुर्ग। चौहानों के मूल स्थान अजमेर के तारागढ़ से नाम साम्य रखने वाला गढ़ कोसों दूर से दर्शकों को अपनी ओर आकृष्ट कर लेता है। समुद्रतल से १६०० फीट की ऊंचाई पर स्थित यह दुर्ग सामरिक दृष्टि से बड़े महत्व का है। इसे रावराजा बरसिंह ने सन १३५४ ई. में बनवाया था। किले की बाहरी दीवार जयपुर के तत्कालीन फौजदार ने

बनवायी थी, जबकि बूंदी पर १८वीं शताब्दी के आरंभ में जयपुर का शासन हो गया था। कर्नल टॉड के अनुसार यह राजस्थान के अभेद्य दुर्गों में से एक है। किले पर तोपखाना, भीम बुर्ज एवं कुछ अन्य इमारतें देखने लायक हैं। किसी जमाने में किले पर बहुत दूर तक मार करने वाली विशाल तोपें ढाली जाती थीं। किले पर चामुण्डा देवी का मंदिर भी दर्शनीय है। वर्षा ऋतु के समय किले का प्राकृतिक सौन्दर्य देखते ही बनता है। यहां के पानी के टांके जब लबालब पानी से भर जाते हैं और झरने कल-कल निनाद करते बहने लगते हैं तो एक अनुपम रमणीयता की सृष्टि यहां हो जाती है। किले पर आज भी कुछ महल जीर्ण अवस्था में विद्यमान हैं, जो सामरिक सुरक्षा की दृष्टि से बनवाये गये थे। इनमें रामसिंहजी और ईश्वरी सिंहजी के महल आज भी ठीक हालत में है।

किले के पश्चिमी भाग में एक विशाल भण्डार महल है जिसे 'जीव रखा' कहते हैं। 'जीव रखा' का तात्पर्य होता है, वह भण्डार-गृह जहां से सैनिकों आदि को जीवन रक्षा के लिए भोजन सामग्री प्रदान की जाती है। किले के दक्षिणी भाग में जो महल जीर्णावस्था में हैं वह अन्तःपुर था। इन्हीं के नीचे विशाल घुड़शालाएं बनी हुई हैं। किले के ऊपर ही दो बाड़े हैं जिनमें हिरण, सांभर, चीतल आदि जानवर पाले जाते थे। किले पर पानी के लिए तीन बड़े और एक छोटे कुंड में वर्ष भर पानी रहता है, इनका जलस्रोत वर्षा ऋतु में आसपास का बहकर आया पानी ही होता है।

विशाल भीमबुर्ज जो किले की सर्वाधिक ऊंची इमारत है, जिस पर आजकल वायरलैस सेट लगा हुआ है। इसी के नीचे तोपखाना है जहां तोपें ढलती भी थीं और रखी भी जाती थीं। दो विशाल और चार-पांच छोटी तोपें आज भी यहां देखी जा सकती हैं। किले पर एक विशाल शिव-छतरी है, जिसके शिलालेख से ज्ञात होता है कि इसे संवत १७४२ में बनाया गया था।

तारागढ़ से नीचे महलों की ओर आते हैं तो मार्ग में बायीं ओर राव दूदाजी के महल हैं जो अब नष्टप्राय से ही हैं। थोड़ा नीचे उतर कर राजमहलों का समूह आ जाता है। स्थापत्यकला की दृष्टि से इन महलों का अपना अलग महत्व है। ये महल किसी एक ही राजा द्वारा न बनवाये जाकर समय-समय पर परिवर्तित और परिवर्द्धित होते रहे हैं। यही कारण है कि इनमें हिन्दू तथा मुस्लिम स्थापत्यकला के स्वतंत्र और मिले-जुले स्वरूप स्पष्टतः देखे जा सकते हैं। विभिन्न राव राजाओं द्वारा अपनी अभिरुचि एवं आवश्यकता के अनुसार बनाये गये ये महले बड़े ही सुरम्य एवं दर्शनीय हैं। राव रतन (१६६५/८८ वि.) द्वारा बनवाये गये महल 'रतन संपद' के नाम से जाने जाते

है। इनमें रतत निवास, रतन महल, रतन मंदिर, रतन गुम्मट, नौथाण और हाथीपोल दर्शनीय हैं। राव राजा भोज (१६४२-६४ वि.) द्वारा निर्मित बादल महल और हाथीशाला महलों के अपने आकर्षण हैं। इन्हीं राजा भोज ने अपनी उपपत्नी फूलकुमारी के लिए फूल महल का निर्माण कराया था। राजा छत्रसाल (१६८८-१७०५ वि.) द्वारा निर्मित महल तथा रावराजा अनिरुद्धसिंह जी द्वारा बनाये अनिरुद्ध महल यहां के अन्य दर्शनीय स्थान हैं।

महलों की दर्शनीय वस्तुओं में चित्रशाला, वेधशाला और सरस्वती भंडार अपना विशिष्ट स्थान रखते हैं। चित्रशाला इतिहास प्रसिद्ध बूंदी चित्रशैली के भित्तिचित्रों का अनुपम स्वरूप है। आज बूंदी कलम के चित्र सारे संसार में ख्याति प्राप्त हैं। उनका आंशिक स्वरूप इस चित्रशाला में देखा जा सकता है। इस चित्रशाला का निर्माण महाराव उम्मेदसिंह ने करवाया था।

वेधशाला में रामसिंह (१८७८-१९४६ वि.) के शासनकाल में निर्मित ज्योतिष के यंत्र हैं जो खगोलशास्त्र एवं ऋतुविज्ञान की दृष्टि से श्री गंगासहाय के द्वारा निर्मित किये गये थे। सरस्वती भंडार में संस्कृत साहित्य, ज्योतिष, आयुर्वेद, राजस्थानी साहित्य सम्बंधी विशाल सामग्री है। यह सरस्वती भंडार अभी भी भूतपूर्व बूंदी नरेश के अधीन है।

इन महलों के बारे में कर्नल टॉड ने लिखा है कि 'समस्त रजवाड़ों में जिन्हें अनेक सुन्दर राजमहलों का गर्व है, बूंदी का महल सर्वोत्कृष्ट माना जाना चाहिये और इसकी इस उत्कृष्टता का श्रेय जितना इस महल में निरन्तर होते रहे परिवर्द्धनों को है इससे कम इसकी स्थिति को नहीं है।'

रूडयार्ड किपलिंग ने लिखा है, 'यह महल मनुष्य की स्वप्न सृष्टि-सा प्रतीत होता है और यह मानव निर्मित नहीं, बल्कि प्रेतात्माओं द्वारा निर्मित-सा मालूम पड़ता है।'

इन महलों के पीछे कुछ भग्नप्राय: महल हैं जिन्हें गेंडागढ़ के नाम से पुकारा जाता है। ऐसा कहा जाता है कि जब राजा किसी रानी से नाराज हो जाता था तो उस रानी को इन महलों में बंद कर दिया जाता था। एक तरह से यह महल उनके लिए काल कोठरी हुआ करते थे। यातना से पीड़ित रानियां कभी-कभी आत्महत्या भी कर लेती थीं।

इन महलों से नीचे मुख्य सड़क के उस पार मोती महल है। इसे रावला या छोटे महल भी कहा जाता है। बूंदी के सुरम्य सरोवर नवल सागर की पाल पर बने इन महलों को बूंदी के परम उदार राजा भाऊसिंह (१७१५-३८ वि.) ने बनवाया था। प्राकृतिक स्थिति

की दृष्टि से यह महल अत्यन्त महत्व का है। वर्तमान में बूंदी राजघराने का परिवार इन्हीं महलों में निवास करता है।

नगर से कुछ दूर उत्तर की ओर जैतसागर नामक सरोवर के किनारे बना सुखमहल तो अपनी प्राकृतिक स्थिति के कारण बड़ा ही रमणीक स्थान है। कहा जाता है कि जैतसागर तालाब का निर्माण जैता नामक मीणा ने करवाया था। बाद में बूंदी राज्य की स्थापना के बाद रावराजा सुरजन की माता गहलोतनी ने सन १५६८ ई. में इस तालाब की पक्की दीवारें बनवायी। तालाब के किनारे सुख-महल भवन का निर्माण महाराव राजविष्णुसिह ने आतिथ्य सत्कार और सुख-आराम के लिए करवाया। दोनों ओर पहाड़ियों से घिरा यह महल अपना विशिष्ट स्थान रखता है। आधुनिक साज सज्जा और सुविधाओं से युक्त यह महल इस समय सिंचाई विभाग के अधीन है। महल के सामने ही काफी पेड़-पौधे और पार्क के कारण इसका सौन्दर्य और बढ़ गया है। बूंदी नगरवासियों के लिए यह स्थान एक अच्छा 'पिकनिक स्पॉट' है। अब इस तालाब में नावें चला देने से अब यह और भी आकर्षण का केन्द्र बन गया है। रूडयार्ड किपलिंग ने इस सुखमहल में १८८६ ई. में दो रात्रि विश्राम किया था। किपलिंग उन दिनों सिविल मिलिट्री गजट में पत्रकार के रूप में कार्य करता था।

यहां से आगे उत्तर में बाण गंगा के निकट शिकार बुर्ज महल भी दर्शनीय हैं। महराव राजा उम्मेदसिंह ने सन १७७० ई. में अपने पुत्र अजीत सिंह के लिए गद्दी छोड़कर पहाड़ियों के बीच अपना यह एकान्तवास बनाया। इस महल में पचासों कमरे हैं एवं तलघर भी। पास ही के तालाब से होकर आने वाला पानी इन महलों के आगे से होकर बहने से यहां शीतलता बनी रहती है। महल की स्थापत्यकला बड़ी अनूठी है। दोमंजिला विशाल बुर्ज दर्शनीय है। पास ही शिवजी की दो विशाल छतरियां एवं हनुमानजी की एक आदमकद प्रतिमा देखने योग्य हैं। यह भी एक अच्छा 'पिकनिक स्पॉट' है। प्राकृतिक वनस्पति के कारण हरीतिमा से युक्त यह स्थान बड़ा सुरम्य है।

बूंदी नगर से लगभग ८ कि.मी. उत्तर-पश्चिम में पहाड़ियों के मध्य बना फूल सागर महल जितना भव्य है उतना ही सुरम्य और रमणीक भी है। दो पहाड़ियों की घाटी में बना यह राजमहल दर्शकों को समीप जाने पर ही दिखायी पड़ता है। इस महल का निर्माण रावराजा भोजसिंह की उपपत्नी पुष्प कुमारी ने सन १६०३ ई. में करवाया था। बाद में इसमें काफी विकास और परिवर्तन हुआ। इस समय इस विशाल महल में लगभग पचास कमरे होंगे जो

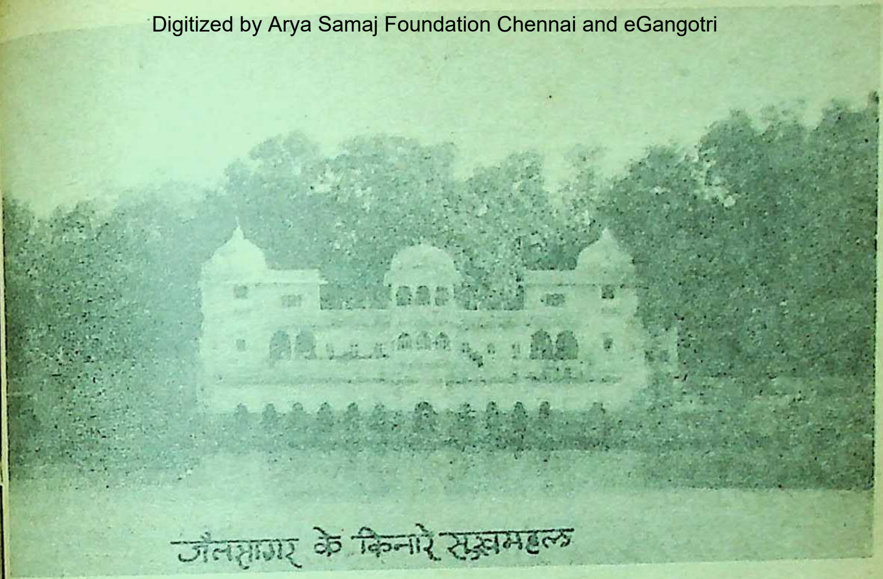

जैलसागर के किनारे सुखमहल

आधुनिक साजसज्जा से युक्त हैं। फूलसागर नामक तालाब के किनारे बना यह महल सर्वसाधारण के लिए वर्जित है। प्राकृतिक स्थिति में अनुपम विभिन्न कलाकृतियों के संग्रह में विशाल और व्यक्तिगत संपदा के कारण यह महल अपना अनोखा स्वरूप रखता है। किसी समय यहां हाथी, भैंसा, सिंह, मगर, बारहसिंगा, हिरण, तेन्दुआ आदि विभिन्न पशुओं व पक्षियों के मृत शरीर जीवन्त रूप में खड़े हर आगन्तुक को आश्चर्य में डाल देते थे। हिरण का तो एक ऐसा सिर था, जिसके सींग भोपाल के नवाब के संग्रहालय को छोड़कर विश्व में सबसे लम्बे थे। महलों के बाहर ही एक विशाल बावड़ी थी, जिसे अब बंद करवा दिया गया है, यहां पर अब एक विशाल पार्क का निर्माण कर दिया गया है। वर्षा ऋतु के समय इस भव्य महल की छटा देखते ही बनती है।

वह वातावरण अब नहीं रहा, लेकिन हमारी ऐतिहासिक और स्थापत्यकला की यह अनुपम धरोहर आज भी किसी न किसी रूप में विद्यमान है। अब आवश्यकता है इनके संरक्षण की, अन्यथा आने वाले कुछ ही समय में ये नष्ट प्रायः हो जायेंगे। कुछ महल तो आज भी अच्छी हालत में हैं, लेकिन किले के महलों और गढ़ भवन की स्थिति चिन्तनीय है। लेकिन आज भी ये राजमहल दर्शकों को अपनी ओर आकृष्ट करने में पूरी तरह सक्षम हैं।

**२-ए/१८, विकास नगर,**  
**बूंदी - ३२३ ००१, राजस्थान**

बंगला कहानी

# जिन्दगी से पहली मुलाकात

प्रेमेन्द्र मित्र

पुल के बीचोबीच कार आकर रुक गयी और ड्रायवर उतरकर इंजन की जांच-पड़ताल करने लगा। प्रशांत बाबू पीछे की सीट पर बैठे, अपने नये चीनी कारखाने की नियमावली पढ़ रहे थे। गाड़ी रुक गयी वो स्तब्ध हो पुकार उठे, 'कंचन!' सुनते ही कंचन उनके पास दौड़ा आया। 'जी, इंजन में कुछ खराबी है। अभी ठीक हो जाती है।'

सुनकर प्रशांत बाबू थोड़े उद्विग्न हो उठे। उन्हें बारह बजे डायरेक्टरों की बैठक में भाग लेना था। फिर उस जर्मन विशेषज्ञ को उन्होंने समय दे रखा था। अब इन सबका क्या होगा? उन्होंने पूछा, कितनी देर लगेगी?

'बस यही दस-पन्द्रह मिनट', ड्रायवर ने उत्तर दिया। खैर जाने भी दो, बल्लाल कंपनी के मैनेजर से मुलाकात न हो सकेगी। वह वापस लौट जायेगा, तो क्या हुआ काम भी तो उसी का है। फिर आयेगा। उन्होंने यह सब सोचा और ड्रायवर से बोले – 'ठीक है, ठीक है, जल्दी करो।'

ड्रायवर लौट गया और प्रशांत बाबू ने पुनः नियमावली पर ध्यान लगाने की चेष्टा की पर न जाने क्या मन में आया कि कार से उतर पड़े। कार के बाहर आते ही उन्हें ऐसा लगा मानो किसी सर्वथा नवीन संसार में आ गये हों। उन्हें आज सब बहुत नया-नया सा लग रहा था। शीतल वायु ने उन्हें और प्रफुल्लित कर दिया। वह फुटपाथ की ओर बढ़े तथा वहां के दृश्यों को स्थिर चित्त से देखने लगे। दूर दीखनेवाली नहर का झिलमिल पानी। नारियल की कतारें तथा दूर बने रेल्वे-स्टेशन का प्लेटफार्म। प्रशांत बाबू बहुत देर तक उन दृश्यों में खोये रहे।

एक लंबे अरसे के बाद से वह इस रास्ते से होकर आकर आ-जा रहे थे। पर इन सब पर दृष्टि दौड़ाने का उन्हें कभी मौका ही नहीं प्राप्त होता था। उनकी शानदार कार की दीवारों ने हमेशा ही उन्हें इन दृश्यों से वंचित रखा था। वह अपने इस छोटे-से संसार में ही व्यस्त रहे। पर अपने व्यस्त जीवन से वह असंतुष्ट हों, ऐसा भी नहीं था।

काम की व्यस्तता उन्हें कुछ सोचने का मौका नहीं देती थी। सबेरे उठने के बाद उन्हें बतलाया जाता था कि अब तक सात व्यक्तियों के फोन आ चुके हैं। फिर दैनिक कार्यों से निवृत्त होने के बाद सेक्रेटरी अनेक फाइलें उनके सामने पेशकर देता। फिर काम निबटाते ही अखबारों में प्रकाशित शेयर बाजार की रिपोर्ट उन्हें देखनी पड़ती। इसी समय नौकर दवा की टिकिया और गिलास भर पानी लेकर आता। यों देखने में वह काफी तगड़े हैं पर वस्तुतः ऐसी बात नहीं है। रक्तचाप की उन्हें शिकायत है।

वह अखबार देखते। इसी समय उनके पास लोग मिलने के लिए आने लगते। वह कुछ लोगों से मिलते तथा कुछ लोगों को आफिस में आने को कहला देते। तब तक नहाने तथा भोजन का समय हो जाता और नहाकर भोजन पर बैठ पाते। भोजन करने के समय उनकी पत्नी उनके पास आकर बैठ जाती। चौबीस घंटे में दो बार तो वह अपने पति से मिल पाती, सुबह और रात्रि के भोजन के समय।

भोजन करने के बाद फौरन ही ऑफिस के लिए रवाना हो जाते। गाड़ी में वह खाली नहीं रहते थें। फाइलें देखते या सोच में डूब जाते। ऑफिस से निकलने के बाद कभी-कभी सांध्य भोजों में या किसी बैठक में उन्हें जाना पड़ता। उद्घाटन कीजिये। दान दीजिये। सभापतित्व कीजिये। भोजों तथा बैठकों का तात्पर्य

नहीं होता था। प्रशांत बाबू को इतना व्यस्त रहने से शारीरिक कष्ट तो होता पर उन्हें मानसिक शांति बहुत मिलती थी। वह समझते थे कि उनका भी समाज में कोई स्थान है।

उसी समय पुल से स्टेशन के प्लेटफार्म की सीढ़ियों की ओर प्रशांत बाबू की दृष्टि गयी और वह खोये-खोये से ऊपर बढ़ गये। जब सीढ़ियों को पार कर वह नीचे पहुंचे तो अकस्मात किसी ने उनके कुरते का एक कोना खींचते हुए कहा, 'बाबू।'

प्रशांत बाबू अवाक् रह गये। आज तक किसी ने उनके कुरते को इस तरह खींचने का साहस नहीं किया था। उन्होंने अपनी दृष्टि घुमायी। लगभग इस बरस की एक लड़की गंदा पैबंद लगा घाघरा पहने, शरारत भरी नजर से उनकी ओर

देख रही थी। वह चुपचाप हंसी, उनकी ओर देखती हुई बोली नहीं। प्रशांत बाबू ने उसकी हंसी को निरुद्देश्य मानकर कदम बढ़ाया तो वह उनके सामने आकर खड़ी हो गयी और हंसती हुई बोली-- 'बाबू, पैसा दो।' यह भी प्रशांत बाबू के जीवन में नया अनुभव था। उनके सामने हठ करने की हिम्मत किसी में नहीं थी। पर आज वह छोटी-सी लड़की उनका रास्ता रोक रही थी। उसकी निर्दोष हंसी ने प्रशांत बाबू की सारी गंभीरता को चूर-चूर कर दिया। अंततः एक अठन्नी उसकी ओर बढ़ाते हुए उन्होंने कहा, 'लो, ठीक है न?'

लड़की ने खुश होकर सिर हिलाया और भाग गयी। प्रशांत बाबू चुपचाप खड़े उसका जाना देखते रहे और फिर आगे बढ़ने लगे। उन्होंने रेल की लाइन पर, प्लेटफार्म पर, और बजरी पर आज पहली बार नजर डाली। उन्हें लगा स्टेशन बड़ा सुंदर है। वह और आगे बढ़े और एक बेंच पर बैठ गये। वहीं से बैठे-बैठे वह गाड़ी पकड़ने के लिए आये हुए मुसाफिरों की चहल-कदमी, उनके रंग-बिरंगे कपड़े, कुलियों का सामान ढोना आदि देखते रहे और जब अचानक उन्हें याद आया कि कार तो ठीक हो गयी होगी। वह उठ खड़े हुए।

लेकिन तभी वह चंचल लड़की मुस्कराकर तान लय में खंजरी बनाने लगी। प्रशांत बाबू फिर बेंच पर बैठ गये। वह लड़की भी बजरी पर बैठ गयी पर उसकी खंजरी बंद न हुई और जब उसने बजाना बंद कर दिया, तब वह उसका नाम पूछने का लोभ संवरण न कर सके। बोले -- 'तेरा नाम क्या है?'

'नाम नहीं बताऊंगी।' और वह खिलखिलाकर हंस पड़ी। यह खिलखिलाहट प्रशांत बाबू को बड़ी भली लगी। वह सोच रहे थे यह कितनी उन्मुक्त हंसी है, यह कितना निश्चिन्त जीवन है। कुछ नहीं पर सब कुछ है इसके पास।

लड़की अब भी हंस रही थी। न जाने कितनी खुशी भरी थी उसके निष्कलुष अंतर में।

'अठन्नी का क्या किया तुमने?' प्रशांतबाबू ने प्रश्न किया। 'अठन्नी का?' लड़की संयत स्वर में बोली, 'चवन्नी की जलेबी, दुअन्नी नानी को दी तथा दुअन्नी ये रही।' कहते हुए उसने अब अपनी जेब से दुअन्नी का सिक्का निकालकर दिखा दियाा।

तभी उन्हें याद आया कि कार तो ठीक हो गयी होगी। डायरेक्टरों की बैठक में जाना है।

पर तुरंत उन्हें एक-दूसरे विचार ने आ दबोचा, हां डायरेक्टरों की बैठक। वही एस. एन. बोस, आर. एस. महाचार्य और वही हुकुमचंद। क्या होगा उस बैठक में वह रोज का रोग। वह पुनः बैठ गये। और वह लड़की भी वैसे बकवास करती

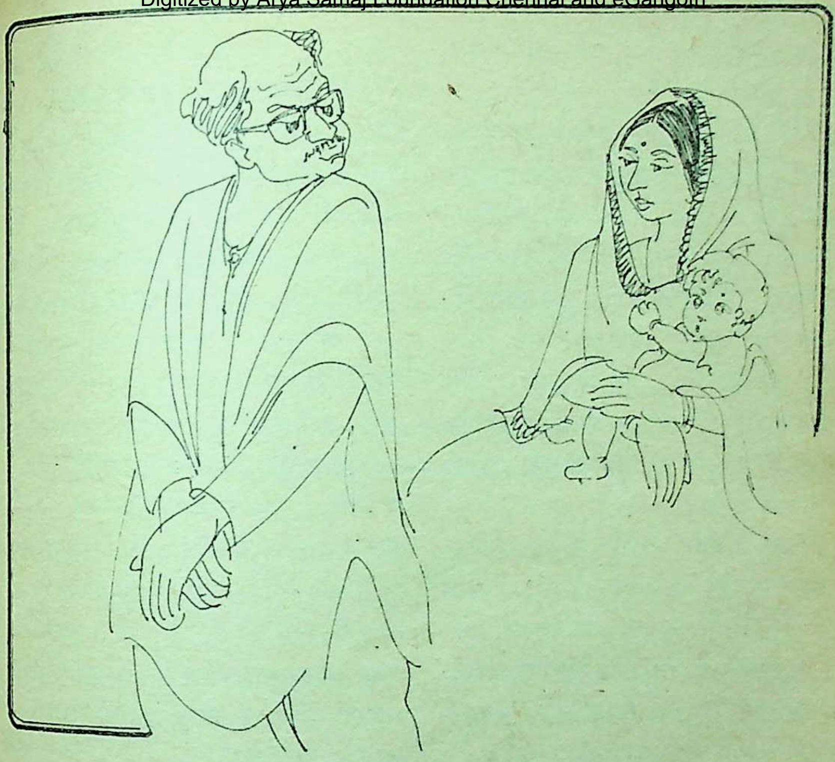

रही।

कुछ ही देर बाद धड़धड़ाती हुई गाड़ी आकर प्लेटफार्म पर रुक गयी। चढ़ने-उतरनेवालों की भागदौड़ मच गयी। वह भी तमाशा देखने लगे। उन्हें लगा, यह तमाशा चलचित्रों से भी कहीं अधिक सुंदर है। मनोरंजक है। एक ग्रामीण युवती हाथ में गठरी और दूसरे हाथ में लालटेन लिये गाड़ी पकड़ने के लिए लपक रही थी। एक बुढ़िया कुली से पूछ रही थी, 'जरा बता दे बेटा, जनाना डिब्बा कौन-सा है?'

कितनी रंगीन विविधताओं का केन्द्र है यह स्टेशन। प्रशांत बाबू मन-ही-मन बुदबुदाये। पर तभी उनकी नजर अपने सामने लगे गाड़ी के एक डिब्बे पर पड़ी। यह तृतीय श्रेणी का डिब्बा था। खिड़की के पास लाल किनारी की साड़ी पहने एक महिला, जिसने किंचित घूंघट भी निकाल रखा था, लगभग एक साल की बच्ची को गोद में लिये बैठी थी . बच्ची ने छींट का फ्राक पहन रखा था और उसके सर पर रेशम की टोपी थी। लड़की के हाथ में एक सुंदर रंग-बिरंगा झुनझुना था।

झुनझुना बजाते-बजाते बच्ची की नजर प्रशांत बाबू पर पड़ी और वह मुस्करा दी।

उसकी गोद में आने को मचल गयी। उसने मां की गोद से, छूट कर खिड़की से बाहर आने के लिए संघर्ष शुरू किया। मां के बलपूर्वक रोकने पर भी वह नहीं मानी तथा हठ करती गयी। इस संघर्ष में उसका झुनझुना प्लेटफार्म पर गिर गया। मां घबरायी, पति से कहा। पति झुंझलाया। कह रहा था कि उसे खिड़की के पास मत रखो। पर तुम न मानी। अब कौन नीचे जाये?

लेकिन प्रशांत बाबू ने झुनझुना उठाकर लड़की को थमा दिया। उनके अति भद्र और संपन्न व्यक्तित्व को देखकर बच्ची के नौजवान पिता ने अपने को लज्जित अनुभव किया और कहा, 'आपने क्यों कष्ट किया? मैं ले आता।' पर प्रशांत बाबू मुस्कराते हुए बच्ची को दुलारने लगे और अब बच्ची को न जाने क्या सूझी कि उसने अपना झुनझुना पुनः पुनः प्लेटफार्म पर गिराना शुरू किया और प्रशांत बाबू उसे उठा-उठाकर उसके हाथ में देने लगे।

बच्ची की किलकारियों में एक ऐसा आकर्षण था कि कई कार्यों और नौकरों के स्वामी प्रशांत बाबू उसकी चाकरी करने में ही परम सुख का अनुभव कर रहे थे।

गाड़ी चल पड़ी पर बच्ची का खेल बंद न हुआ। उसने अपना झुनझुना प्लेटफार्म पर फेंक दिया और प्रशांत बाबू ने जब तक उठाया तब तक खिड़की आगे निकल गयी। अपने खिलौने को खोता देख बच्ची चिल्लाकर रो पड़ी। प्रशांत बाबू भी झुनझुना लिये हतप्रभ से खड़े रहे। तभी उस डिब्बे का दरवाजा उनके सामने आया और वह बिना सोचे-समझे जान जोखिम में डाल चलती गाड़ी में सवार हो गये। इस प्रयत्न में सफलता प्राप्त होने पर उन्हें इतनी प्रसन्नता हुई जितनी लाखों का लाभ प्राप्त होने पर भी न होती। वह लोगों के पैरों से टकराते बच्ची तक पहुंचे और उसे झुनझुना थमा दिया। बच्ची खिलौना पा खुश हो उनकी गोद में जाने को लपक पड़ी। बच्ची का पिता परेशान स्वर में बोला, 'ओह! आपको कितना कष्ट उठाना पड़ा, अब आप उतरेंगे कैसे?'

'नहीं, मुझे भी चलना है।' वह बोले। युवक ने खिसक कर बैठने को जगह दी। प्रशांत बाबू बैठ गये तथा बच्ची उनकी गोद में आ गयी।

गाड़ी चलती जा रही थी। प्रशांत बाबू बिना टिकिट तीसरे दरजे में सफर कर रहे थे और ड्रायवर कार ठीक करने के बाद, उनकी खोज में ही इधर-उधर दौड़ रहा था।

(अनुवाद : प्रभाती)

□

**आ नो भद्राः क्रतवो यन्तु विश्वतः**

**भवन की पत्रिका 'भारती' से समन्वित**

# नवनीत

**मनुष्य के नवोत्थान का सूचक**
**जीवन, साहित्य और संस्कृति का मासिक**

## प्रार्थना

स्वस्ति पन्था मनु चरेम, सूर्या चन्द्रमसाविव ।
पुनर्ददताऽघ्नता जानता, संग मे महि ।।
ऋक ५.४९.१५

हम चलें कल्याण पथ पर
जैसे नभ में चांद तारे, जैसे ग्रह-नक्षत्र सारे ।
चल रहे नभ में निरन्तर; एक प्रभु के ही सहारे ।।
ईश का आदेश पाकर, वेद का सन्देश पाकर ।
हम बढ़ेंगे मुक्तिपथ पर, हम चलेंगे स्वस्ति पथ पर ।।
प्रेम की सरिता बहायें, भेद निज-पर का भुलायें ।
राह जो श्रुति ने दिखाई, हम कदम उस पर बढ़ायें ।।
हम चलें कल्याण पथ पर, हम चलें कर्तव्य पथ पर

(भावानुवाद : **सत्यकाम विद्यालंकार**)

# महायोगी की मौन पद चाप

प्रकाश दुबे

स्टेनफोर्ड विश्वविद्यालय के प्राध्यापक फ्रेडरिक स्पाईगेल बर्ग कहते हैं - 'श्री अरविन्द कृत 'दिव्य जीवन' (life Divine) पढ़ कर मैं अत्यधिक विचलित हो गया और पांडिचेरी आकर यह अनुभव किया कि श्री अरविन्द प्रकाश पुंज के एक विशाल स्तम्भ हैं।'

एशियन अध्ययनशाला के ये प्रभारी आगे कहते हैं-

'जब भी मैं छात्रों को व्याख्यान देते समय श्री अरविन्द का संदर्भ देता हूं तो मैंने पाया कि छात्र तुरन्त ही आश्चर्यजनक रूप से मौन हो जाते हैं। वे कापियों में नोट्स लिखना भूल जाते हैं, आपस में हंसी-मजाक करना भूल जाते हैं, अपने आपको भूल जाते हैं, वे पूर्ण रूप से सुनने में मग्न हो जाते हैं, वे यह अनुभव करने लगते हैं कि श्री अरविन्द जो कुछ कहना चाहते हैं, उसे उन्हें जीवन में उतारना है, इसके लिए वे बहुत समय से प्रतीक्षा में है।'

रॉयल सोसायटी इंग्लैंड के माध्यम से जब श्री एच. लांगले श्री अरविन्द पर विनिबन्ध प्रस्तुत करते हैं तो प्रस्तावना में जेटलैंड के मार्कस उनके सम्मान में लिखते हैं— 'श्री अरविन्द ही समकालीन दार्शनिकों में सर्वश्रेष्ठ व महानतम दार्शनिक हैं और रहस्यवादियों के समूह के प्रणेता हैं। श्री अरविन्द की मनोवैज्ञानिक अन्तर्दृष्टि स्पष्ट व पैनी है। विश्व के अन्वेषण में श्री अरविन्द का योगदान अतुलनीय है। (यदि किसी को श्री अरविन्द के कार्यों की तुलना करनी पड़े तो) पश्चिमी मनोवैज्ञानिक व फ्रायड भी इनकी तुलना में बच्चे लगते हैं जो अन्धकार के सागर में गोते लगा रहे हैं।'

उपर्युक्त वाक्य श्री अरविन्द के दार्शनिक व मनोवैज्ञानिक पक्ष को ही सशक्त रूप से प्रस्तुत करते हैं। मानव के आध्यात्मिक इतिहास में हम सब एक मोड़-बिन्दु पर खड़े हैं। चूंकि श्री अरविन्द विश्व में हैं, यह सम्पूर्ण विश्व व्यक्त कर रहा है कि समस्त विश्व में विभाजन नहीं एकता हो, घृणा नहीं प्रेम हो, असत्य नहीं सत्य चेतना विद्यमान हो, क्रूरता व निर्दयता नहीं करुणा व स्वतन्त्रता हो, मृत्यु नहीं

अनश्वरता हो। श्री अरविन्द चेतना की यात्रा के ध्वज वाहक हैं। उन्होंने अनुभव किया है कि भगवान है जो एक अनन्त, सुन्दर, दिव्य व्यक्तित्व है। श्री अरविन्द आध्यात्मिक चेतना के शीर्ष बिन्दु पर प्रतिष्ठत हैं।

रवीन्द्रनाथ टैगोर कहते हैं – मुझे श्री अरविंद से भेंट से ऐसा लगा मानो कोई प्राचीन काल का ऋषि ऐसी स्थितप्रज्ञा से बोल रहा है। जिसके द्वारा मानव आत्मा सर्वव्यापकता में प्रवेश करने के लिए उन्मुख हो जाती है।

उनके दिव्य जीवन का यह एक अद्भुत चमत्कार ही है कि राजनीतिज्ञ, क्रान्तिकारी, देशभक्त, प्रबुद्ध लेखक, कवि, एक आध्यात्मिक प्रक्रिया द्वारा ऋतंभर ऋषि बन गया। कवीन्द्र रवीन्द्र भावप्रधान कविता प्रस्तुत कर वन्दना करते हुए गाते हैं–

**ओ..... अरविन्द**
**रवीन्द्रनाथ आपको प्रणाम करता है।**
**जब मैं आपके विराट चेहरे को देखता हूं**
**तो मुझे आत्मा का महान.....**
**संगीत सुनाई देता है।**
**यह संगीत और कुछ नहीं**
**बन्धन मुक्त..... असीम.....**
**भारत की आत्मा ही तो है।**

भारत में तिलक, सुभाष जैसे स्वतन्त्रता सेनानी, विवेकानन्द जैसे सन्त दार्शनिक, टैगोर जैसे महाकवि, दयानन्द जैसे समाज सुधारक और गांधीजी जैसे महात्मा हुए, परन्तु श्री अरविन्द ये सब कुछ थे और साथ ही एक महायोगी थे। उनके नेत्रों में एक रहस्यमयी ज्वाला तथा ज्योति चमकती थी। उनको अलौकिक भावदर्शनों की अनुभूति होती थी, जिसका प्रसाद 'सावित्री' महाकाव्य है।

तभी तो सुमित्रानन्दन पंत मानवप्रधान प्रवाह में कहते हैं– 'श्री अरविन्द जैसे को मैं इस युग की अत्यन्त अमूल्य तथा अतुलनीय विभूति मानता हूं। उनसे अधिक व्यापक, ऊर्ध्व अतलस्पर्शी, जिनके जीवनदर्शन में अध्यात्म का सूक्ष्म, बुद्धि अग्राह्य सत्य, नवीन ऐश्वर्य महिमामंडित हो उठा है, मुझे दूसरा कहीं देखने को नहीं मिला। विश्व कल्याण के लिए मैं श्री अरविन्द की देन को इतिहास की सबसे बड़ी देन मानता हूं।'

श्री अरविन्द का उद्भव हमारे लिए एक अद्भुत घटना है। इनमें एक सात्विक दिव्य सौन्दर्य प्रतिष्ठित है। कमल के पत्तों के समान कोमल हैं। निराभिमान व विनम्रता के साक्षात मूर्त रूप हैं और अठारह भाषाओं के ज्ञाता हैं।

प्रसिद्ध साहित्यकार, उपन्यासकार, राजनीतिज्ञ क.मा. मुन्शी ६ जुलाई १९५० को पहली बार श्री अरविन्द आश्रम पांडिचेरी आये और ४० वर्षों

**(शेषांश पृष्ठ ५४ पर)**

२७ दिसंबर : पंतजी की पुण्यतिथि के अवसर पर

# कवि की कोमल कल्पना - 'नारी'

□ डॉ. यासमीन सुल्ताना नकवी

मानव का जन्म प्रकृति के प्रांगण में होता है। इसलिए जन्म से मृत्यु तक मानव प्रकृति के रंगमंच पर विभिन्न प्रकार के अभिनय करता रहता है। सुमित्रानन्दन पंत का जन्म ही प्रकृति की रमणीक स्थली कौशानी जिला अल्मोड़ा, उत्तर प्रदेश में हुआ था। पंत मानव प्रकृति से निर्मित थे। यदि यह कहा जाय तो अतिशयोक्ति नहीं होगी कि पंत का नाम 'प्रकृति' और प्रकृति का नाम 'पंत' है। प्राकृतिक प्रभावों के कारण पंतजी ने स्वयं कहा है– 'कविता करने की प्रेरणा मुझे सबसे पहले प्रकृति निरीक्षण से मिली है जिसका श्रेय मेरी जन्मभूमि कूर्मांचल को है। कवि जीवन से पहले मुझे याद है मैं कई-कई घण्टे एकान्त में बैठा प्रकृति के दृश्यों को बड़ी गहराई से निहारता रहता था। न जाने कौन सा अज्ञात आकर्षण मेरे अंत:करण में घुस जाता था जब रात में मैं आंखें बन्द करके सोता हूं तो मेरे सामने वह सारे चित्रपटल आ जाते थे।'

मानव और प्रकृति का संबंध प्राचीन काल से चला आ रहा है। जैसा कि मैंने उपर्युक्त कहा है कि पंतजी प्रकृति को सजीव एवं साकार मानते थे। प्राय: सभी छायावादी कवियों ने प्रकृति का मानवीकरण किया है। पंतजी तो इस कला में सबसे आगे रहे। 'सन्ध्या' शीर्षक कविता में उन्होंने कितना सुन्दर उदाहरण प्रस्तुत किया है–

**कहो रूपसी तुम कौन व्योम से**
**उतर रही चुपचाप।**
**छिपी निज छाया छवि में आप,**
**सुनहला फैला केश कलाप**
**मधुर मंथन मृदु मौन।**

सौंदर्य के उपासक कहे जाने वाले पंतजी ने कहा है कि - 'जब मैंने प्रकृति से तादात्म्य का अनुभव किया तब मैंने अपने को भी 'नारी' रूप में अंकित किया है। यही कारण है कि शायद उनके काव्य पर सबसे अधिक प्रभाव प्रकृति का पड़ा है। प्रकृति को जब कवि नें नारी रूप में चित्रित किया तब उसके स्वर किस रूप में

स्पष्ट होते हैं–

**नवल मेरे जीवन की डाल**
**बन गई प्रेम विहंग का वास ।**

भारतीय दर्शन का अध्ययन करने से ज्ञात होता है । सांख्य और मीमांसा दर्शन में प्रकृति सत्ता को नारी रूप में ही देखा गया है । हिन्दी कविता में भी वह भी रीति काल में नारी को मात्र भोग्या माना गया था, परन्तु द्विवेदी युग के लेखकों ने इस प्रथा को तोड़ा है । अग्रणी कवि स्व. श्री मैथिलीशरण गुप्त ने तो नारी को पूज्या बना दिया है । पंतजी इस संदर्भ मे चार कदम औरों से आगे हैं । उन्होंने नारी (प्रकृति) को चार रूपों में चित्रित किया है – दैवीय रूप में पंत ने प्रकृति को बहुत गहरे दृष्टिकोण से देखा तो है और तब उन्हें एक अज्ञात सत्ता के दर्शन होते हैं । उसी अज्ञात एवं सशक्त सत्ता को वे सजीव रूप अर्थात् नारी आकार में चित्रित करते हैं –

**उस फैली हरियाली में**
**कौन अकेली खेल रही है मां**
**वह अपनी वय वाली में ।**

प्रकृति को 'मां' के रूप में चित्रित करके पंतजी स्वयं उसकी बेटी बन जाते हैं और प्रश्न करते हैं:–

**मां अल्मोड़े में आये थे**
**जब राजर्षि विवेकानन्द**
**तब मग में मखमल बिछवाया**
**दीपावलि की विपुल अमंद ।**

प्राचीन काल में स्त्री देवी, मां, बहन एवं पुत्री मे रूप में चित्रित की जाती थी । आधुनिक युग में उसका रूप बदला भी है । आज भी नारी नर के साथ बैठकर कार्य करती है । कंधे से कंधा मिलाकर चलती है । समान रूप से हर कार्य में सहभागिता प्राप्त करने में सक्षम है । ग्राम्या कविता की मजूरिन को पंतजी ने सहचरी के रूप में चित्रित किया है –

**नारी की संज्ञा भुला नरों के संग**
**बैठे,**
**चिर जन्य सुहृद सो जन हृदयों में**
**सहज बैठ,**
**सर से आँचल खिसका है, धूल**
**भरा जूड़ा,**
**अधंखुला वक्ष ढोती तुम सिर पर**
**कूड़ा ।**

प्रियतमा के रूप में पंतजी ने जब प्रकृति का चित्रण किया तब उन्हें एक

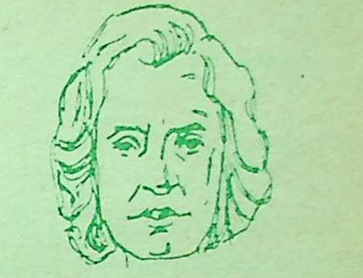

*बाँध दिये क्यों प्राण प्राणों से !*
*तुमने चिर अनजान प्राणों से !*
*– सुमित्रानंदन पंत*

अलौकिक सत्ता का मधुर स्पर्श प्राप्त होता है:–

**तुम्हारे छूने में था प्राण, संग में**
**पावन गंगा स्नान**
**तुम्हारी वाणी में कल्याण,**
**त्रिवेणी की लहरों का गान**

इतना ही नहीं पंत ने नारी को तमाम और रूपों में चित्रित किया है। जैसे आदर रूप में प्रस्तुत करते हुए कहते हैं – 'यदि स्वर्ग कहीं है पृथ्वी तो वह नारी उर के भीतर।' इतना ही नहीं पंतजी ने स्वयं नारीत्व को स्वीकार कर लिया था। उदाहरण है उनका बाल बढ़ाना और यह बाल उनकी पहचान एवं व्यक्तित्व का प्रतीक बन गये थे। स्वयं पर श्री सुमित्रानन्दन पंतजी ने लिखा है–

**घने लहरे रेशम के बाल घरा है**
**मैंने सिर पर देवि।**
**तुम्हारा यह स्वर्णिम श्रृंगार,**
**स्वर्ण का सुरभित भार।।**

हमारे विद्वान पाठकों को यह तो स्पष्ट हो गया है कि पंतजी का नारी के प्रति क्या विचार भाव था। परन्तु उनके प्रति यह नहीं सोचना चाहिए कि वह नितांत कल्पनावादी थे या कल्पना लोक में विचरण करते थे वे यथार्थ की भूमि पर रहना भी जानते थे। यह उनकी प्रगतिवादी विचारधारा का प्रमाण है।

सुकुमार लेखक जब प्रगतिवादी बन जाते हैं तब वह रूप और कुरूप, सुन्दर और असुन्दर दोनों को प्यार करने लगे– उन्होंने अपने विचार को किस रूप में व्यक्त किया है।

**हे कुरूप, हे कुत्सित प्राकृत**
**हे सुन्दर हे संस्कृत सस्मित**
**आओ जगजीवन परिणय में**
**परिचित से मिल बांह भरो।**

पंतजी ने अपने प्रत्येक पक्षीय काव्य को गेय रूप में गाया है। उन पर छायावाद, रहस्यवाद और प्रगतिवाद सभी का प्रभाव था। उनका काव्य जागरूक है। वे युगजयी हैं, कवि हैं। उन्होंने युग के साथ सदैव अपने को मोड़ा है। लोकहित, और लोक कल्याण पंतजी का लक्ष्य रहा है। वे सच्चे अर्थों में 'सत्यम् शिवम् सुन्दरम्' के कवि थे।

**– ८/२० कमला नेहरू रोड,**
**डिविनिटी कम्पाउण्ड,**
**सेण्ट पौल्स चर्च, इलाहाबाद, उ. प्र.**

□

सर विस्टन चर्चिल ने एक बार अपने एक दोस्त को बताया – 'मेरे सुखी जीवन की कुंजी एक औरत का परामर्श है। उसने मुझे शादी कर लेने को कहा था।'

दोस्त ने पूछा – 'कौन थी वह औरत?'

चर्चिल ने जवाब दिया – 'मेरी पत्नी!'

**– डॉ. गोपाल प्रसाद 'वंशी'**

# सोच रहा परदेसी

सोच रहा परदेसी
कैसे होंगे घर के दिन ?

आंगन में तुलसी का बिरवा
झूम रहा होगा
घुटनों पर घर भर में बेटा
घूम रहा होगा

लेकिन नींद न आयी होगी
उसको मेरे बिन ।

कंघे में सिंदूर लगाकर
मांग भरी होगी
दर्पण के आगे जाते ही
आंख भरी होगी

पोंछ लिये होंगे पल्लू से
आंसू के पल-छिन ।

घर आयी बहना भी
बिटिया सुला रही होगी
'आ मामा आ मामा' कहकर
बुला रही होगी

सरक रही हैं बोझिल घड़ियां
छवियों को गिन-गिन ।

भाभी ने दुलार के मेरे
कितने नाम धरे
उसकी मीठी छेड़छाड़
अब यादों में अखरे

अब भी भइया से सौ नखरे
जैसे हों कमसिन ।

भूल-भूलकर मां हमको ही
टेर रही होगी
अनमन सी बैठी बस माला
फेर रही होगी

भूखी रही स्वयं औ' हमको
दिया दूध का ऋण ।

बाबू ने मुश्किल से मुंह में
कौर धरा होगा
भरा-भरा घर होगा मन भी
भरा-भरा होगा

कई घरेलू बातें मन में
चुभो रही हैं पिन ।

**– यश मालवीय –**

**'रामेश्वरम्' ए-१११, मेंहदौरी कॉलोनी, इलाहाबाह, उ.प्र.**

**शृंगार प्रसाधक**

# सुहाग और सौन्दर्य में मेंहदी

□ मधुकर डोरिया

भारतीय संस्कृति में मेंहदी का उपयोग आदिकाल से होता आ रहा है। प्रायः इसका प्रयोग सौन्दर्य प्रसाधनों में होता है। हिन्दू धर्म में और मुस्लिम धर्म में इसका उपयोग पूजा-अर्चना में होता है। एक ओर जहां पुरुषों में इसका उपयोग अपने बालों को रंगने तथा अपनी उम्र को कम दिखाने के लिए होता है वहीं स्त्रियों में इसका उपयोग त्वचा की सुरक्षा के लिए तथा उसकी सुंदरता को बढ़ाने के लिए व उसे सुर्ख रंग प्रदान करने के लिए होता है। भारतीय स्त्रियां मेंहदी को सुहाग चिन्ह मानती हैं। प्रायः स्त्रियां ससुराल जाने से पूर्व अपने हाथों और पैरों में मेंहदी लगाकर अपने प्रियतम को रिझाने के लिए जाती हैं। हिन्दू देवी-देवताओं की पूजा में मेंहदी को चढ़ावे के रूप में रखा जाता है। नवरात्रि में तो दुर्गा पूजा के अवसर पर मेंहदी के हाथों की छाप पूजा स्थलों पर और दरवाजों पर लगायी जाती है। जिसे शुभ माना जाता है।

भारतीय इतिहास में और राजपूती आन-बान और शान में मेंहदी का विशेष महत्व रहा है। अकेले राजस्थान में मेंहदी पर जिसने गीत लिखे गये हैं उतने

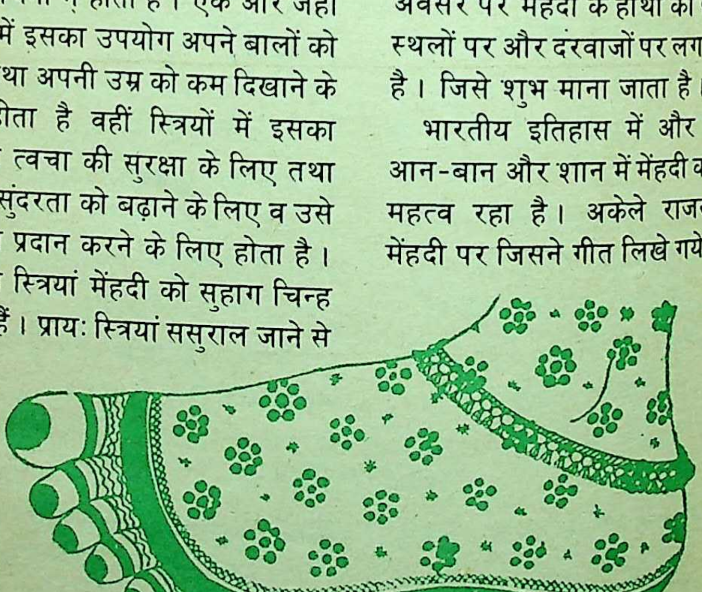

शायद ही कहीं पर लिखे जाते हों।

चिकित्सा के क्षेत्र में विशेषकर आयुर्वेदिक चिकित्सा में मेंहदी का विशेष महत्व है। मेंहदी को त्वचा पर लगाने पर जहां वह सुन्दर लगती है वहीं वह मुलायम और सुरक्षित रहती है। कई स्थानों पर पुरुषों द्वारा गर्मी के दिनों में पैरों पर मेंहदी लगवायी जाती है जिससे तलुवों में ठंडक बनी रहे तथा दिमाग में शान्ति रहे।

हाथों में मेंहदी लगवाने का काम भी आजकल एक व्यवसाय हो गया है। पुराने जमाने में परिवार के नाई की पत्नी अर्थात् नाईन के द्वारा मेंहदी लगायी जाती थी जिसके बदले में उसे कपड़े और अनाज दिया जाता था। परन्तु आजकल इस व्यवसाय को तथा कार्य को कई बड़े-बड़े परिवारों ने अपना लिया है। पहले मेंहदी लगाने का कार्य मात्र कुछ फटे पुराने कपड़े और कुछ अनाज ले-देकर हो जाता था वही अब यह कार्य पांच रुपये से लेकर पांच सौ रुपये तक होता है। कई स्थानों पर तो ऐसी व्यवस्था है कि आप टेलीफोन नम्बर डायल कीजिए और मेंहदी लगाने वाली हाजिर। कई शहरों में ब्यूटी पार्लरों में और होटलों में तथा शादी के अवसरों पर दुल्हन और उसके परिवार की महिलाओं के मेंहदी लगाने के लिए दक्ष स्त्रियों को रखा गया है। ऐसे अवसरों पर मेंहदी लगाने की विशेष फीस होती है जो ५१ रु. से लेकर १००१ रु. तक होती है। यह राशि मेंहदी लगवाने वाले की हैसियत के आधार पर होती है।

राष्ट्रीय स्तर पर मेंहदी को हाथों में लगाने के कार्य को भी बहुत प्रोत्साहन मिल रहा है। समय-समय पर कई क्लबों के द्वारा मेंहदी लगाने की प्रतियोगिताओं का आयोजन किया जाता है। प्रतियोगिता में स्थान प्राप्त करने वाले प्रतियोगियों को पुरस्कार आदि भी दिये जाते हैं। मेंहदी लगाने की प्रतियोगिता का आयोजन करने में कई पांच सितारा होटल भी पीछे नहीं हैं। आजकल विदेशी पर्यटकों में मेंहदी के प्रति विशेष रुचि देखी गयी है। जिसे

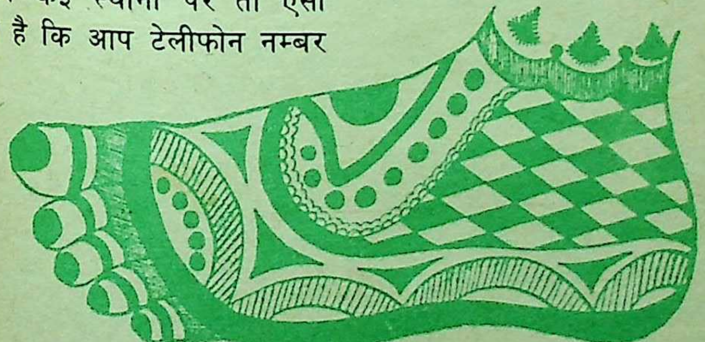

बड़ी-बड़े होटल व कई राज्यों के पर्यटन निदेशालय पूरा कर रहे हैं।

मेंहदी की खपत आजकल विदेशों में बहुत हो रही है। खाड़ी देशों में मेंहदी की विशेष मांग है। कई स्थानों पर मेंहदी और इसके पावडर का विशेष उपयोग होता हैं। तथा सौन्दर्य प्रसाधन बनाये जाते हैं। मक्का-मदीना जाने वाले हज यात्रियों को वहां से प्रसाद के रूप में मेंहदी दी जाती है। कई स्थानों पर मुस्लिम मृतकों की कब्र में मेंहदी पावडर डालने का भी रिवाज है। कहा जाता है कि मेंहदी का हरा रंग मृतक को जन्नत में हराभरा स्थान दिलाता है। इथोपिया में तो कई स्त्रियों द्वारा पूरे शरीर पर मेंहदी लगाने का रिवाज है। वहां की स्त्रियों में यह विश्वास है कि मेंहदी का रंग एक विशेष आकर्षक और मुग्धता लिये होता है। जो उनके प्रियतम को उनसे बांधे रखता है।

मेंहदी के उत्पादन में राजस्थान प्रदेश एक अग्रणी प्रदेश है। वैसे मेंहदी का उत्पादन मध्य प्रदेश, उत्तर प्रदेश, गुजरात, बिहार, उड़ीसा तथा कई अन्य प्रदेशों में भी होता है।

मेंहदी की खेती लवणीय भूमि में भी की जा सकती है। यह खेती पूर्णतया वर्षा पर आधारित है। सामान्य फसलों के लिए अनुपयुक्त भूमि में भी इसकी खेती की जा सकती है। इसकी खेती के लिए बीज नहीं उगाना पड़ता है वरन इसकी कलम रोपी जाती है। मेंहदी की लगभग नौ इच कलम जिसमें दो-तीन आंखें हों वर्षा प्रारम्भ होते ही खेतों में लगायी जाती है। मेंहदी के एक पौधे की अधिकतम आयु पचास से सौ वर्ष मानी गयी है, परन्तु किसान इसे जल्दी ही काट लेते हैं।

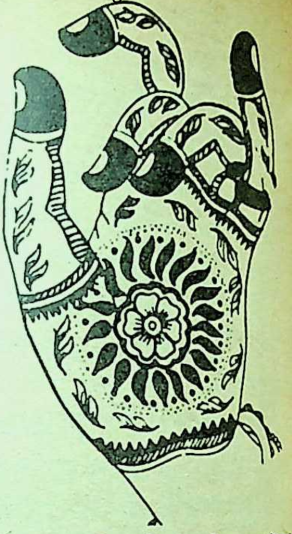

राजस्थान के पाली जिले की सोजत पंचायत समिति में आज जितनी मेंहदी पावडर बनाने की मिले हैं उतनी कहीं भी नहीं हैं। जिनमें दिन रात कार्य चलता रहता है। कई मिलें तो विदेशों में मेंहदी का निर्यात करती हैं। मेंहदी पावडर मिल के एक मालिक ने एक भेंट में बताया कि एक वर्ष में अकेले सोजत क्षेत्र को ३० से ४० करोड़ रुपये की विदेशी मुद्रा प्राप्त हुई है। मिल मालिक ने बताया कि राज्य सरकार और भारत सरकार की मेंहदी पावडर के निर्यात में कोई विशेष रुचि नहीं है। यदि सरकार इस कार्य में रुचि ले

तो अकेली सोजत [illegible] करोड़ रुपये से अधिक विदेशी मुद्रा का व्यवसाय कर सकती है।

मेंहदी के उत्पादन में लगे गरीब मजदूर कभी भी मिलों में मेंहदी पावडर पर काम करते गम्भीर रूप से बीमार हो सकते हैं। जो लोग [illegible] और सुंदरता में मेंहदी का उपयोग करते हैं, क्या उन्होंने कभी भी इन गरीब मजदूरों के बारे में सोचा होगा!

— ९०, रामनगर, सोडाला,
जयपुर, राजस्थान

□

## स्नेह का रूप

महामना मालवीयजी बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय को सदा स्वच्छ एवं सुसंस्कृत रूप में देखना चाहते थे।

इसीलिए मालवीयजी ने विश्वविद्यालय के विशाल प्रांगण में रंग-बिरंगे फूलों के पौधे लगवा रखे थे। वे उनकी निगरानी अपने शिष्यों की भांति किया करते। यदि कभी माली न आता तो प्रत्येक पौधे को अपने हाथों पानी पिलाया करते। उनकी देखरेख में विश्वविद्यालय का पूरा परिसर हंसता-मुस्कराता दिखायी देता था।

एक बार मालवीयजी विश्वविद्यालय के छात्रावास में पहुंचे। उन्होंने छात्रावास के प्रत्येक कमरे का सूक्ष्म अवलोकन किया।

एक विद्यार्थी ने अपनी शैया के समीप दीवार पर पेंसिल से अपने दूध और भोजन का हिसाब लिख रहा था, उसे देखकर मालवीयजी कहने लगे:

'मुझे तुम्हारे प्रति जितना स्नेह है, उतना ही इन दीवारों की प्रत्येक ईट से है। मैं इस विद्यामंदिर में अतिशय स्वच्छता और पवित्रता का दर्शन करना चाहता हूं। भविष्य में तुम इन दीवारों पर कुछ भी लिखने का प्रयत्न मत करना।'

इतना कहकर तत्काल उन्होंने अपना श्वेत रूमाल निकालकर दीवार पर लिखे हुए आंकड़ों को मिटा दिया।

यह देखकर वह विद्यार्थी उनके चरण स्पर्श कर गिड़गिड़ाने लगा—

'गुरुदेव, मुझसे गलती हो गयी क्षमा कर दीजिए। अब मैं दीवारों को कभी गंदा न करूंगा। इन्हें आपके श्वेत रूमाल की भांति साफ रखूंगा।'

फिर वह विद्यार्थी बाजार से चूना खरीदकर लाया। अपने हाथों से समूचे कमरे की दीवारें पोतीं।

जब मालवीयजी को उस विद्यार्थी ने अपने कमरे की सफाई के बारे में बताया तो वे उसे गले लगाकर बोले — 'शिष्य। आज तुमने कमरे में सफेदी पोतकर अपना दिल कंचन बना लिया है, याद रखो, तुम जिंदगी में जितनी सफाई रखोगे लोग उतने ही तुम्हारे प्रशंसक बनेंगे और तुम अपनी वास्तविक जिंदगी के दर्पण में पवित्रता का दर्शन कर सकोगे।'

**—कमल सौगानी**

जीवन सौरभ

# महर्षि रमण - व्यक्तित्व व कृतित्व

□ दिनेशचन्द्र शर्मा

बर्ट्रेन्ड रसल ने वैज्ञानिक होते हुए दर्शन शास्त्र के अध्ययन अनुभव को सर्वाधिक रोमांचक अनुभूति बताया है। बीसवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में महर्षि रमण ने स्वयं को दर्शन की प्रयोगशाला बताकर मानव के समक्ष प्रस्तुत किया। वे वेदान्त की महायात्रा में आदि शंकराचार्य तथा रामकृष्ण परमहंस की श्रृंखला में गिने जाते हैं। वेदान्त को जीवन में उतार कर उसके प्रतिपादित सिद्धांतों की सत्यता सिद्ध करने के निमित्त इन महापुरुषों का अवतरण हुआ। परिणाम है मानव की इन आदि सत्यों में पैदा हुई, आस्था का सुफल।

महर्षि रमण की प्रतिपादन शैली अनेक प्रकार से विशिष्ट है। अनेक वेदांती उपदेशकों से भिन्न उनका उपदेश मितभाषण तथा प्रायः मौन में था। संगीत में निःशब्दता ताल का काम दे जाती है। उक्त 'पॉज' का उपयोग विशिष्ट संगीतकार जानते हैं। उसी अनुसार महर्षि ने अपने प्रवचनों के बीच निःशब्दता को प्रायः स्थान दिया। उनका कथन था– 'मौन ही आत्मा है'। महात्मा गांधी को महर्षि का उक्त कथन बहुत प्रिय था। गांधी के जीवन में मौन को जो स्थान था वह सर्व विदित है। गांधीजी ने बाबू राजेन्द्रप्रसाद व जमनालाल बजाज को आजादी से दस वर्ष पूर्व रमणाश्रम भेजा था। उद्देश्य था, स्वतंत्रता संग्राम के लिए आशीर्वाद लेना। महर्षि का प्रत्युत्तर था, 'निरंतर मेरा मौन संदेश आप तक जाता रहा है। फिर बाह्य संदेश की क्या आवश्यकता है?'

उक्त प्रकरण के पश्चात् अतिथियों के विदा होने पर महर्षि से किन्हीं आश्रम में विद्यमान व्यक्तियों ने जिज्ञासा की– क्या महात्मा गांधी के जीवनकाल में अंग्रेजी शासन से भारत को मुक्ति मिल जायेगी? महर्षि ने 'हां' में उत्तर दिया।

इस शताब्दि के चतुर्थ दशक में तिरुवन्नमलय स्थित रमणाश्रम में सारे संसार के ज्ञान पिपासु वैज्ञानिक, विद्वान, जिज्ञासु बड़ी संख्या में आते देखे गये। इस रु व्यक्ति में क्या था जिसका दर्शन

करने लाखों व्यक्ति संसार के प्रत्येक देश से आ रहे थे ? वस्तुतः यह भारतीय दर्शन की परीक्षा थी। उक्त संत को सामान्य जनों की तरह जीवन यापन करते देखा जाता था। न वे योग, प्राणायाम, ध्यान करते देखे जाते थे, न शास्त्र अध्ययन आदि। कबीर ने कहा है, 'साधो सहज समाधि भली।'

पदार्थ की तीन अवस्थाओं के अलावा भौतिक शास्त्रियों ने चतुर्थ अवस्था—प्लाज़्मा स्टेट खोज निकाली है, इसी प्रकार भारतीय वैज्ञानिकों ने चेतना की तीन अवस्थाओं—जाग्रत, स्वप्न व सुषुप्त से, प्रतीत तुरीयावस्था का निरूपण किया है। महर्षि उस ही सहज समाधि के हामी थे। किसी जिज्ञासु द्वारा प्रश्न किये जाने पर कि ध्यान कैसे करें महर्षि ने, अर्ध निमीलित नेत्र कर समाधि अवस्था ग्रहण कर ली यह कहते हुए कि 'ऐसे करो।' इस प्रकार का अन्य उदाहरण दुर्लभ ही माना जायेगा। किंतु इस बाह्य सामान्य अवस्था के पीछे इतिहास है। पंद्रह वर्ष की अवस्था में महर्षि ने आत्मा व देह के पृथकत्व का साक्षात् अनुभव किया था। वे कहा करते थे- 'मेरी साधना केवल १५ मिनट की थी।' यह उल्लेखनीय है कि तदुपरांत सात वर्ष तक महर्षि मौन रहे। अस्तु।

दार्शनिक दुःरूहता का यदि किसी अधिकारी विद्वान ने इन शताब्दियों में अतीव सरलीकरण किया है तो वह हैं

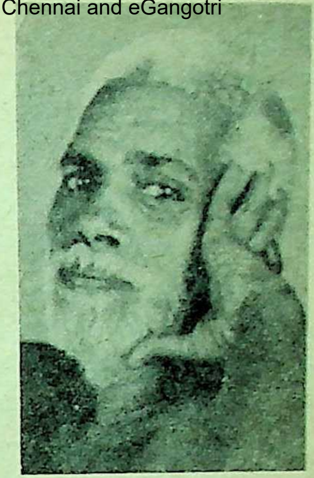

महर्षि रमण। स्वर्ग-नरक की पाश्चात्य कल्पना के प्रसंग में उनका कथन था — धर्म मनुष्य को स्वतंत्र-मुक्त करने हेतु बना, किन्तु धर्मशास्त्र के टीकाकारों ने स्वर्ग-नरक की कल्पनाएं रच कर मानव को श्रृंखलाओं में जकड़ लिया। मानव आत्मा की स्वतः सिद्ध सामर्थ्य एवं अजेयता की यह अभूतपूर्व उद्घोषणा है। मुझे मुक्ति पानी है यह विचार ही सबसे बड़ा बन्धन है। मकड़ी जिस प्रकार स्वरचित जाल में उलझ जाती है उस प्रकार मानव ने स्वयं को अपने वैचारिक पूर्वाग्रहों में लपेट रखा है। परिणाम है बंधन और अधिक बंधन। आनन्द मानव का सहज स्वभाव है, आनन्द मानव का जन्मसिद्ध अधिकार है। निरंतर आनन्दमग्नता मानव का स्वाभाविक लक्षण है। दुःख अप्राकृतिक है। शंकाएं अस्वाभाविक हैं।

महर्षि के वाक्यों में उपनिषदों का सार है। इनका आचरण नारद, वशिष्ठ, वाल्मीकि का पुनरांवतरण है। उनके उपदेश एक नये मुहावरे में हैं जिसमें से क्लिष्टता निकाल दी गई है। जो अलंकारिक भाषा में पूर्व में कहा गया एवं श्रोता या पाठक की समझ के लिए चुनौती बन गया वही महर्षि ने, आडम्बर, अलंकार से मुक्त कर निज वाणी में प्रस्तुत किया है। ईश्वर के लिए शास्त्रों में सर्वाधिक लिखा गया है किंतु कदाचित इतने अनावरित रूप से ईश्वर का वर्णन अन्यत्र कहीं नहीं पाया जाता। महर्षि ने मानव इतिहास में प्रथम बार ईश्वर की परिभाषा की है। 'ज्ञानी का मन ही ईश्वर है।'

महर्षि ने अपने कथन की पुष्टि हेतु और भी कहा है – 'तथापि अनेक बार ज्ञानी भी इस तथ्य से अलग रहता प्रतीत होता है कि वही सृष्टि का संचालन कर रहा है।'

इस प्रकार महर्षि ने स्पष्ट कर दिया है कि ईश्वर की परिभाषा करते हुए अलंकारिक भाषा का प्रयोग नहीं कर रहे हैं अपितु कोरा सत्य प्रस्तुत कर रहे है।

एक अन्य प्रसंग में उनसे ज्ञानी तथा अवतार की तुलना करने को कहा गया तो महर्षि का कथन था - 'अवतार उद्देश्य विशेष से पृथ्वी पर अवतरित होता है पर ज्ञानी तो साक्षात् सृष्टि नियंता ईश्वर ह्री है।' इस प्रकार ज्ञान की उत्कृष्टता एवं अदम्यता का विशेष निरूपण हुआ है, जो शास्त्र के कथन से सिद्ध है।

'ज्ञानिनांमति मे प्रियम्' महर्षि का कथन था कि उन्होंने किसी भी नवीन मत का निरूपण नहीं किया हैं अपितु शास्त्रोक्त मत को सरल रूप में दोहराया हैं। यह महर्षि की विशिष्टता है कि उन्होंने शास्त्र सम्मत वाक्यों को अलौकिक स्वरूप प्रदान किया है जिससे कि सामान्य जन उन्हें सहज ही हृदयंगम कर सके। महर्षि के कथन एवं आचरण में ऐसी ग्राह्यता हैं कि तत्काल ही वह दर्शक-श्रोता-पाठक के मानस पटल पर चित्रित-खचित हो जाता है। यही आकर्षण था जिससे खिच कर लाखों देशी-विदेशी नर-नारी उनके जीवन काल में तिरुवन्नमलय में निरंतर आते रहे जब तक कि उन्होंने चौदह अप्रैल १९५० को देहोत्सर्ग न कर दिया।

आदि शंकराचार्य का प्रसंग है कि उन्होंने श्वान को मानव से तनिक भी न्यून नहीं माना था तथा श्वान को मारे गये डण्डे का निशान उनकी पीठ पर खिच गया था। महर्षि ने मानव एवं पशु का भेद कभी भी स्वीकार नहीं किया। आश्रम में पशुओं का अजस्र प्रवाह बना रहता था। जंगली पशु महर्षि के शरीर पर चढ़ जाते थे तथा आहार मांगते थे। इस प्रकार ईसाई संत फ्रांसिस का ही जैसे पुनः अवतरण हो गया था। अरुणाचल पर्वत में महर्षि को बंदर ले जाते थे तथा वे

उनके यूथों के झगड़े सुलझाकर आते थे। उसी प्रकार व्याघ्र भी उनकी परिक्रमा करने पर्वत में से आ जाया करते थे।

महर्षि रमण के दर्शन में मानव को देह से बहुत ऊपर स्थान दिया गया है। देह में मानव नहीं है अपितु मानव में ही उसकी देह छाया के समान विद्यमान है जो उसे आबद्ध करनें में कतई सक्षम नहीं है। मानव शाश्वत है, अजन्मा है। वह मृत्यु के परे है। उनकी माता ने आश्रम में ही आकर रहना आरम्भ कर दिया था किंतु उन्होंने माता से वार्तालाप तनिक भी नहीं किया। जिज्ञासा करने पर उनका कथन था—जब तक मां को यह दंभ रहेगा कि उन्होंने मुझे जन्म दिया तब तक मैं उनसे वार्ता नहीं करूंगा। तदुपरांत मां को यह भान होने पर कि महर्षि देहबद्ध नहीं है, अपितु अजन्मा है, उन्होंने वार्ता आदि आरम्भ कर दी।

महर्षि के श्रीचरणों में विभिन्न मतावलम्बी यथा हिन्दू, मुस्लिम, ईसाई, पारसी, बौद्ध, जैन आया करते थे तथा अज्ञान तिमिर से मुक्त होते थे। डॉ. राधाकृष्णन्, त्रावणकोर महाराज, डॉ. राधाकमल मुकर्जी, डॉ. सैयद आदि बार-बार उनकी सेवा में उपस्थित होते थे। प्रोफेसर सैयद की तो छुट्टियां आश्रम में ही व्यतीत होती थीं। महर्षि के उपदेश व चरित्र वेदान्त की वैज्ञानिकता का यह प्रबुद्ध प्रमाण है। उनका सम्पूर्ण जीवन वेदान्त का खुला ग्रन्थ है जो शताब्दियों तक मानव को आत्मा की सार्वभौमिकता व एकमात्र अस्तित्व का विश्वास दिलाता रहेगा। यदि शास्त्र ज्ञान का अर्क है तो महर्षि के वाक्य उसका इत्र है। महर्षि प्रायः कहा करते थे - शास्त्र उसके लिए वृथा है जिसने उन्हें नहीं समझा और उसके लिए भी जिसने उन्हें समझ लिया। पुस्तकीय ज्ञान जब किसी महापुरुष के श्रीमुख से उच्चारित होता है तो उसकी शक्ति हजारों गुनी हो जाती है। यह महर्षि रमण के दृष्टान्त से स्पष्ट है।

**– देवस्थान आयुक्त,**
**उदयपुर, राजस्थान**

□

नौकर ने बड़ी नम्रता से मालिक से कहा- सरकार। अब मैं आपके यहां नौकरी नहीं करूंगा। मेरा हिसाब साफ कर दीजिये।'

मालिक ने पूछा- 'ऐसी क्या बात हो गयी?'

नौकर- 'मालिक। मेरे साथ मालकिन का बर्ताव अच्छा नहीं है। मुझे अक्सर उस तरह डांटती हैं जिस तरह आपको।'

**– डॉ. गोपालप्रसाद 'वंशी'**

## आचरणीय निर्देश

# भारतीय परम्पराएं - ऐसा क्यों ?

□ उमेश पाण्डे

हमारे पूर्वजों ने प्राचीन ग्रंथों में आचरणार्थ अनेकानेक बातें निर्देशित की हैं । आज के इस वैज्ञानिक युग में, जिस सीमा तक विज्ञान की पहुंच हो चुकी है, उससे भी काफी आगे हमारे पूर्वजों का ज्ञाम था । उस गूढ़ ज्ञान को ही उन्होंने धर्म से जोड़कर स्थान-स्थान पर विभिन्न क्रिया कलापों का निर्देश हमें दिया है । दु:ख है कि उसकी गहराई को समझने के बजाय हम उन निर्देशों को महज ढकोलसा मानते हुए उनकी उपेक्षा करते आ रहे हैं ।

हमारे पूर्वजों के द्वारा निर्देशित कुछ क्रियाओं को सम्पन्न करने के पीछे क्या रहस्य थे ? इसका विवेचन करने से पूर्व श्रद्धेय गोविंदजी शास्त्री के कुछ वाक्यांशों को लिखना चाहूंगा । वे कहते हैं – 'चेतना और सचेतन ऊर्जा अर्थात् प्राण से भारतीय ऋषि पूर्ण परिचित थे । वे उसकी कार्य विधि ही नहीं, उसको यथेच्छा शासित करने में भी सक्षम थे... वे 'वेवलैंथ' और 'फ्रीक्वैंसी' जैसे तकनीकी टर्म को चेतनायुक्त करके समझा करते थे... किसी मृत व्यक्ति को जीवित करने की शक्ति सिद्धजनों में होती थी अथवा जड़ वस्तु में प्राण प्रतिष्ठा करना हमारे यहां के उपाख्यानों में ही नहीं सामान्य व्यवहार में भी अपनाई जाती रही है... विज्ञान जिसको गतिज और स्थितिज ऊर्जा कहता है हमारे यहां उसको 'जड़' और 'जंगम' कहा जाता था... प्राचीनकाल में मंदिरों की रचना जैव ऊर्जा को सुगम विधि से संग्रहीत एवं सुरक्षित रखने के आधार पर की जाती थी... मूर्ति की मुद्रा, रूप एवं धातु आदि को भी इस तरह से परखा जाता था कि उनमें निक्षिप्त ऊर्जा बहुत समय तक बनी रहे और इसी संचित ऊर्जा के ह्रास को रोकने के लिए मूर्तियों की पूजाविधि का आविष्कार किया गया । साथ ही पूजा के लिए उपयुक्त मंत्रों का भी निर्देश किया गया जिससे वह तेजस् किसी भी स्थिति में मंद न पड़े...'

पुन: विशाल मंदिरों में स्थापित मूर्तियां सुवर्ण जैसी गुणवान और सुसंग्राही धातु से बनायी जाती हैं । उसमें उत्तम कोटि के मूल्यवान रत्न इसी प्रयोजन से लगाये जाते हैं कि दर्शन करने आये व्यक्ति को वे रत्न अपनी अदृश्य शक्तिशाली किरणों से तनाव मुक्ति दे सकें । इसी प्रकार आरती के समय घी अथवा कपूर को जलाकर उसे मूर्ति के

चारों तरफ एक निश्चित शैली में घुमाना, पूजन हेतु स्वर्ण, रजत अथवा ताम्र पात्रों का ही प्रयोग करना, पूजा के समय मंत्रोच्चार करना, घंटे आदि बजाना – इत्यादि क्रियाएं मूर्ति में उसकी प्राण-प्रतिष्ठा के समय संचित की गयी ऊर्जा को न केवल नष्ट होने से बचाते हैं बल्कि उसे प्रवर्धित करने में भी सक्षम हैं।

अस्तु, कुछ क्रियाएं हमारे पूर्वजों द्वारा क्यों निर्देशित हैं – इसका संक्षिप्त विवेचन नीचे किया जा रहा है।

हमारे पूर्वजों ने प्रारंभ से ही हमें शयन करते समय दक्षिण दिशा की ओर सिर रखने का निर्देश दिया है।

इस निर्देश को यदि हम विज्ञान की दृष्टि से तौलें तो निश्चय ही इस बात का, ठोस वैज्ञानिक सिद्धांत पर आधारित होना स्पष्ट हो जाता है।

दरअसल पृथ्वी एक चुम्बक है और उत्तर तथा दक्षिण दिशाएं उसके दो ध्रुव हैं। यह एक वैज्ञानिक तथ्य है कि चुम्बक से निकलने वाली चुम्बकीय तरंगें अर्थात् - चुम्बकीय बल रेखाएं सदैव उत्तर से दक्षिण दिशा की ओर गमन करती हैं। पृथ्वी रूपी चुम्बक पर भी यही बात लागू होती है। पुनः मानव रक्त में उपस्थित हीमोग्लोबिन में लौह तत्व की अधिकता भी एक प्रामाणिक तथ्य है। चुम्बक और लोहे का संबंध सर्वविदित है। ऐसी स्थिति में दक्षिण दिशा की ओर सिर रखकर शयन करने से पृथ्वी से निकलने वाली अदृश्य चुंबकीय तरंगों का अनुकूल प्रभाव शयनकर्ता के शरीर पर पड़ता है। यही कारण है कि दक्षिण दिशा की ओर सिर करके सोने वालों को रात्रि में दुःस्वप्न नहीं आते और उसका मानसिक संतुलन सदैव उत्तम श्रेणी का बना रहता है।

हमारे पूर्वज हमें भोजनोपरांत कुछ समय के लिए बायीं करवट से लेटने की आज्ञा देते हैं। इसके पीछे स्वर विज्ञान है। प्रतिदिन हमारे नासारंध्रों से वायु का आवागमन कभी बायें तो कभी दाहिने नासाद्वार से और कभी-कभी दोनों से होता है। जिस समय प्राणवायु का आवागमन दाहिने नासिकारंध्र से होता है, उस समय इसे 'सूर्य स्वर' का चलना कहते हैं। इसके विपरीत वामनासा रंध्र से यही आवागमन 'चन्द्र स्वर' कहलाता है और जिस समय यह दोनों नासाद्वारों से होता है उस समय इसे 'सुषुम्ना स्वर' का चलना कहा जाता है। जिस समय सूर्य स्वर चल रहा होता है उस समय हमारे शरीर में अधिक ऊर्जा का संचार होता है जो कि भोजन के पचाने में अत्यंत आवश्यक है। बायीं करवट के शयन करने से कुछ ही क्षणों में सूर्य स्वर क्रियाशील हो जाता है और इस प्रकार भोजन पाचन की क्रिया यथारूप प्रारंभ हो जाती है। यही रहस्य इस शास्त्राज्ञा का है।

प्राचीन भारतीय ग्रंथों में तुलसी को आंगन में लगाये जाने संबंधी अनेक दृष्टांत हैं, किन्तु एक स्थान पर तुलसी की महिमा को दर्शाते हुए जो लिखा गया है मात्र उसी से इस पौधे को घरों में लगाये जाने का कारण स्पष्ट हो जाता है। वर्णित है :–

**"तुलसी काननं चैव गृहे**
**यस्यावतिष्ठते ।**
**तद्गृहे तीर्थ भूतं हि नायान्ति यम**
**किंकराः ।।**
**तुलसी विपिनस्यापि समन्तात् पावनं**
**स्थलम् ।**
**क्रोध मात्रं भवत्येव गाडेन्येनेव**
**चाम्भसा ।।"**

तुलसी के आसपास का स्थान पवित्र माना गया है । उसमें मलेरिया की विषाक्त वायु को दूर करने की अद्भुत क्षमता है। मृत्यु के समय भी तुलसी मिश्रित गंगा जल पिलाया जाता है जिससे आत्मा पवित्र हो और शांति से लोकान्तर की प्राप्ति हो। विषाक्त वायु तुलसी से स्वच्छ हो जाती है । मलेरिया के उत्पादन और प्रसार में सहायक मच्छर इससे दूर भागते हैं । यह सब प्रकार के ज्वरों को हटाकर स्वास्थ्य देती है । जिन रोगियों को स्वास्थ्यार्थ गंगातट के पास जाने में सुविधा नहीं होती, उन्हें तुलसी सेनीटोरियम में रखा जाता है । गंगातट का लाभ उन्हें वहीं मिल जाता है ।

हमारे पूर्वज जड़ोपासक नहीं थे। जड़ वस्तुओं के अधिष्ठातृ देवता मानकर उनकी पूजा करते थे। स्वास्थ्य के होने से ही कर्माचरण में प्रवृत्ति हो सकती है। अतः स्वास्थ्यवर्द्धक वस्तु को धर्म से संबंधित कर दिया गया है।

शिवमंदिरों में भभूत प्रसाद के रूप में वितरित की जाती है । पुनः भभूत को मस्तक पर लगाने की भी प्रथा है । इसके पीछे मूल कारण यह है कि कंडे की भस्म (राख) में काम के दमन की अद्भुत क्षमता होती है । कंडे की राख को अतिअल्प भक्षण करने से शरीर में कामोन्माद का शमन होता है । यही नहीं कंडे की भस्म की अल्प मात्रा को शरीर पर लगा लेने मात्र से भी व्यक्ति के मस्तिष्क पर काम का प्रभाव नष्ट हो जाता है । भगवान शिव को कामजयी माना गया हैं। काम को उन्होंने भस्म किया था। इसीलिए शिव मंदिरों में प्रसाद स्वरूप भस्म का वितरण होता है- और उसके मस्तक पर लगाने और भक्षण करने के पीछे मूल कारण 'काम-दमन' है। साधु लोग भी इसी प्रयोजन से शरीर पर भस्म चुपड़े हुए रहते हैं।

प्राचीनकाल से भारत में यज्ञ की प्रथा चली आ रही है, यज्ञ में विभिन्न उच्च श्रेणी के सुगंधित पदार्थों को शुद्ध घी के साथ अग्नि में समर्पित किया जाता है। साथ ही विशिष्ट वेदमंत्रों का उच्चारण भी किया जाता है।

यज्ञ किये जाने के संबंध में अनेकानेक लोगों की मान्यता है कि इस कार्य का प्रयोजन मात्र वायुशुद्धि है। किन्तु यज्ञ का प्रयोजन केवल वायुशुद्धि नहीं होता, बल्कि उसके साथ-साथ इसका मुख्य लक्ष्य देवताओं को तृप्त करना है । यदि यज्ञ का मुख्य लक्ष्य वायु शुद्धिमात्र होता तो उसके लिए क्योंकर तमाम महंगे, सुगंधित पदार्थों और घृत का प्रयोग किया जाता ? क्योंकि इनसे भी सस्ते पदार्थों से भी वायु की शुद्धि हो सकती थी । पुनः यदि यज्ञों का प्रयोजन मात्र वायु शुद्धि ही होता तो फिर यज्ञ कार्य स्वच्छ स्थानों के बजाय

दुर्गन्धित और अस्वच्छ स्थानों पर किये जाते तथा यज्ञ करते समय मंत्रोच्चारों की भी आवश्यकता नहीं रहती। यज्ञों का शुद्ध स्थानों पर किया जाना – अनेक सुगंधित पदार्थों को शुद्ध घृत के साथ मिलाकर अग्नि को मंत्रोच्चार के साथ समर्पित किया जाना सिद्ध करता है कि यज्ञ का मूल प्रयोजन देवताओं को तृप्त करना है और इस कार्य में निकलने वाला धुआं वायुशुद्धि भी कर देता है। यज्ञ से देवताओं को तृप्त करने वाली बात श्रीमद्‌भागवत में वर्णित इस तथ्य से भी स्पष्ट होती है कि जब देवाप्सरा उर्वशी पुरूरवा के पास आकर रही थी और उससे खाने के लिए पूछा गया, तब उसने उत्तर दिया था – 'घृतं मे वीर भक्ष्यं स्यात्' इससे देवताओं का भक्ष्य 'घृत' सिद्ध होता है। पुन: ऋग्वेद में कहा है – 'न ऋते त्वाम मृता मादयन्ते' अर्थात् – हे अग्नि। तेरे बिना देवता तृप्त नहीं होते।

इसीलिए यज्ञों को सम्पन्न करते समय विशेष सुगंधित और देवताओं को प्रिय पदार्थ ही वेद मंत्रों के साथ अग्नि को समर्पित किये जाते हैं, और यज्ञ कार्यों को स्वच्छ व पवित्र स्थानों पर किया जाता है तथा इस कार्य से उत्पन्न धूम्र वायुमण्डल को भी शुद्ध करने में पूर्ण सक्षम है।

आपने कई लोगों को सुबह-सुबह ताम्र के पात्र से जल पीते हुए देखा होगा। हमारे पूर्वजों का कहना है कि रात्रि पर्यन्त तांबे के लोटे में रखा हुआ जल सुबह (कुल्ले करने के पश्चात्) पीना स्वास्थ्य के लिए उत्तम होता है। सुबह, नित्य इस नियम का पालन करने वाले इस बात को भली प्रकार अनुभव भी करते होंगे। इसके पीछे वैज्ञानिक कारण ये है कि ताम्र पात्र में रात्रि भर रखे हुए जल में तांबे के आयान्स (आवेशित परमाणु) आ जाते हैं। तांबा हमारे शरीर के लिए जिस अंश में उपयुक्त होता है वह इस जल से मिल जाता है। यही स्वास्थ्य रक्षक या स्वास्थ्य निर्माता होता है। प्राचीनकाल से नदियों में सिक्के डालने के पीछे भी यही कारण है, क्योंकि पुराने जमाने में सिक्के सिर्फ ताम्र, रजत अथवा स्वर्ण के ही हुआ करते थे और नदियों में इन धातुओं के सिक्के डाले जाने पर उनका जल संबंधित धातुओं के आयान्स से सदैव युक्त रहता था।

अंत में, विवाह के समय स्त्रियों को प्राय: लाल वस्त्र एवं आभूषणादि से सुशोभित किये जाने की प्रथा है। स्त्रियों की मांग में सिंदूर-कंकु आदि भी भरा जाता है। इन सभी के पीछे मूल कारण मंगलग्रह के कुप्रभावों को नष्ट करना होता है। यह एक प्रामाणिक तथ्य है कि मंगलग्रह की किरणें लाल रंग की होती हैं और यह भी एक वैज्ञानिक तथ्य है कि लाल वस्तुएं लाल रंग को परावर्तित करने की क्षमता रखती हैं। उक्त मगल कार्य में लाल रंग के वस्त्रादि के धारण करने से मंगल की लाल किरणें जातक के शरीर पर, परावर्तित हो जाने के कारण, अपना कुप्रभाव नहीं डाल पाती हैं – इसी प्रयोजन से ऐसा किया जाता है।

– ३१९, म. गा. मार्ग,
मल्हारगंज, इन्दौर - ४५२००२.

# जयहिंद कह देना बस....

## नारायण लाल परमार

भारत को आज़ादी दिलाने में अनेक लोगों का अनेक तरह से सहयोग रहा है। सुभाषचंद्र बोस भी उनमें से एक थे। उन्होंने विदेश में रहकर भी आज़ाद हिन्द फौज का निर्माण किया था। वे अंग्रेजों से लड़कर भारत माता को आजाद कराना चाहते थे।

उन दिनों सुभाष बाबू बर्मा में थे। आजाद हिन्द फौज के बहादुर सिपाही अंग्रेजी सेना से जूझ रहे थे। सुभाष बाबू ने फौज में भरती का काम कमांडर ढिल्लों को सौंप रखा था। उन्हें यह हिदायत भी कर रखी थी कि जो युवक अपनी मां का इकलौता बेटा हो उसे फौज में हरगिज भरती न किया जाये।

आजाद हिन्द फौज में भरती होने वाले युवकों की रोज लाइनें लगी रहती थीं। कमांडर ढिल्लों ऐसे हर युवक का शारीरिक माप और वजन लिया करते थे और अंत में यह बात जरूर पूछ लिया करते थे कि क्या वे अपनी मां के इकलौते पुत्र तो नहीं हैं?

'ना' में जवाब देने वाले हर युवक को फौज में भरती कर लिया जाता था। ऐसे ही एक दिन कमांडर ढिल्लों के सामने अर्जुनसिंह नामक एक युवक पहुंचा। शारीरिक नाप एवं वजन ले लेने के बाद कमांडर ढिल्लों ने उससे पूछा- क्या तुम अपनी मां के इकलौते बेटे हो?

अजुनसिंह के 'हां' कहने पर कमांडर ढिल्लों ने उसे फौज में भरती करने से इनकार कर दिया और कहा कि तुम्हारे लिए यही अच्छा होगा कि तुम घर जाकर अपनी मां की सेवा करो।

सुनकर अर्जुनसिंह उदास हो गया। वह कमांडर के सामने हाथ जोड़कर गिड़गिड़ाता रहा, लेकिन कमांडर ने उसकी एक न सुनी और उसे अपने घर वापस जाने के लिए कहा।

घर लौटकर अर्जुनसिंह ने अपनी बूढ़ी मां को सारी कहानी कह सुनायी। मां ने यह सब सुनकर कहा- 'बेटे, इसमें घबराने की कोई बात नहीं है। दो-दिन में ही वह अवसर आयेगा जब वह कमांडर तुम्हें गर्व के साथ फौज में भरती कर लेगा।'

तीसरे दिन अर्जुनसिंह पुनः भरती होने वाले युवकों की लाइन में खड़ा था। उसे देखकर कमांडर ढिल्लों ने उससे पूछा—'तुम

## ग़ज़ल

जिसको पतझर उदास मिलते नहीं ।
उसकी बगिया में फूल खिलते नहीं ।

और कुछ रास्तों में बिछवाएं
कांटों से अपने पैर छिलते नहीं ।

लोग मोची या दर्जी कुछ भी बनें
हम किसी की ज़ुबान सिलते नहीं ।

घूमते हैं तो घूमते ही हैं
बैठ जाते हैं तो, फिर हिलते नहीं ।

राह में मिलते हैं आते-जाते
ढूंढने से 'प्रतीक' मिलते नहीं ।

**– डॉ. प्रतीक मिश्र**
**५५/१७ काहूकोठी, कानपुर**

फिर क्यों आ गये ? तुम्हें याद नहीं, मैंने तुमसे क्या कहा था ?'

अर्जुनसिंह ने छाती फुलाकर कहा- 'याद है, आपने क्या कहा था । लेकिन साहब, मेरी बूढ़ी मां ने तो कुएं में कूदकर अपनी जान दे दी। उस दिन उसने मुझसे कहा था कि यह मेरे लिए शर्म की बात होगी कि मेरे रहते तुझे आजाद हिन्द फौज में भरती न किया जाये ।'

कमांडर ने जब यह कहानी सुनी तो उनकी आंखों में आंसू आ गये । उन्होंने अर्जुनसिंह को गले से लगा लिया और फौज में भरती कर लिया । सुभाष बाबू से भी उनकी भेंट करवा दी। सुभाष बाबू ने भी उसे आशीर्वाद देकर उत्साहित कर दिया ।

आजाद हिन्द फौज और अंग्रेजी सेना में घमासान युद्ध चल रहा था। अर्जुनसिंह भी इस मोर्चे पर शामिल था। अंधेरी रात थी। पानी बरस रहा था। अर्जुनसिंह लड़ते-लड़ते गोलियों से छिद गया था। दूसरे दिन खोज करने पर वह मिला। एक दलदल में पत्तों के बीच वह पड़ा था। उसकी अंतिम सांसें चल रही थीं। कमांडर से उसने सिर्फ इतना ही कहा– 'सुभाष बाबू से मेरा अंतिम बार जयहिंद जरूर कह देना, बस... अलविदा ।'

**– पीटर कालोनी, टिकरापारा,**
**धमतरी, म.प्र.**

बाद श्री अरविन्द से भेंट की। वे कहते हैं– 'मैं एक ऐसी सत्ता से साक्षात्कार कर रहा हूं जिसका पूर्ण रूप से रूपान्तरण हो गया है। इनके चेहरे पर आनन्दपूर्ण आभा है, दिव्य शांति के वातावरण में ध्यानस्थ हैं और इनकी वाणी हृदय की गहराई तक पहुंच जाती है। श्री अरविन्द आर्य संस्कृति के केन्द्रीभूत अमृत हैं जो भौतिक रूप में यहां आये हैं'।

ऐसे भारतीय पुनर्जागरण के प्रखर पुरोधा दार्शनिक, स्वातंत्र्य क्रांति के अग्रदूत, क्रांतिकारी जननायक, वेदों, उपनिषदों और गीता के रहस्यों के विशिष्ट व्याख्याता, आर्ष कवि, अतिमानसिक सूर्यलोक के द्रष्टा, पूर्ण योग एवं सर्वांगीण शिक्षा के प्रवर्तक श्री अरविन्द मानव जाति से उच्चतर अतिमानव वर्ग और अतिमानसिक जगत् की उद्घोषणा करने पृथ्वी पर आये थे। श्री अरविन्द मानव चेतना का आध्यात्मिक तथा अतिमानसिक रूपान्तरण करने, दिव्य चेतना व दिव्य जीवन को मानव की मानसिक, प्राणिक और भौतिक प्रकृति में उतारने आये थे। वे भारत की ही नहीं, विश्व की आत्मा थे। रूपान्तर श्री अरविन्द के योग का एक गुर है। जब प्रकृति पूर्णतः रूपान्तरित हो जाएगी तो प्रकृति में भगवान की उपलब्धि और भागवत तत्व में प्रकृति की परिपूर्णता होगी और एक नवीन सत्ता का उदय होगा।

५ दिसम्बर १९५० को श्री अरविन्द द्वारा भौतिक शरीर त्यागने पर उनके शरीर से स्वर्णिम नीली ज्योति लगातार १०० घंटों तक (९ दिसम्बर १९५० सुबह तक) निकलती रही। तथा वह जीवन रहित शरीर में प्रभु के निवास की अद्भुत घटना नहीं है? यह अत्यन्त चमकीला घनीभूत प्रकाश पुंज उनके भीतर के 'स्वर्ण-पुरुष' का था।

श्री अरविन्द कहते हैं – 'यह ठीक है कि 'हम' शरीर नहीं हैं पर यह भी ठीक है कि 'हममें' शरीर कुछ है। अपने को शरीर मानना 'भ्रम' नहीं है बल्कि त्रुटि है। पूर्ण अनुभूति में शरीर 'हममें' होता है, हम शरीर में नहीं होते।'

सुरेन्द्रनाथ जोहर से माताजी कहती हैं– 'हमारे प्रभु ने हमारे लिए भौतिक शरीर का त्याग किया है। वे इसके लिए बाध्य नहीं थे, उन्होंने स्वयं यह निर्णय लिया है। इसका कारण इतना भव्य व उत्कृष्ट है कि मानव मस्तिष्क इसे नहीं समझ सकता। केवल एक ही हमारा कार्य है हम अपने भीतर उनके लिए आदर युक्त शान्ति प्रस्थापित करें।'

उनके शरीर छोड़ने के ४० वर्ष पश्चात् भी पांडिचेरी में श्री अरविन्द आश्रम की गति, उसकी आध्यात्मिक गति सतत प्रगति पर है। विश्व भारती के प्रख्यात चीनी मनीषी तान-युन-शान

के अनुसार 'आश्रम साधारण संगठन की तरह प्रगति नहीं कर रहा हैं, यह दिव्य जीवन की ओर अग्रसर है। यदि विश्व में कोई 'दिव्य घर' है तो वह यही है.... यही है।'

ऐसे महायोगी के चरण कमल ने बड़ौदा निवास के समय रतलाम की भूमि को अवश्य ही स्पर्श किया होगा और उस समय से ही यह भूमि पवित्र हो गयी होगी। उनकी इन मौन पद चापों का स्नेहिल, कोमल स्पर्श अन्तरध्वनि व अन्तर संगीत द्वारा ही अनुभूत किया जा सकता है। शायद यही कारण हैं कि पांडिचेरी में ९ दिसम्बर १९५० को महासमाधि के ठीक ४० वर्ष पश्चात् रतलाम नगर में श्री अरविन्द के पवित्र देहांशों की प्रतिष्ठा की जा रही है। पूर्ण में से पूर्ण निकालने पर पूर्ण ही शेष रहता है। अमरता व शाश्वतता के यात्री के ये देहांश पूर्णता के प्रतीक हैं। दिव्यता के प्रतीक हैं।

ऐसे महायोगी की साधना से उच्च चेतना व दिव्य प्रकाश प्राप्त करने के लिए भौतिक अवशेषों का प्रमुख महत्व होता है। इससे इनकी उपस्थिति का ठोस रूप देने, देहीभूत दिव्य शक्ति को सतत जीवन्त रखने का उद्देश्य भी होता है।

समाधि आध्यात्मिक चेतना व शक्ति का एक ऐसा पवित्रतम व जीवन्त महापात्र है, जो चारों ओर दूर-दूर तक दिव्य कम्पनों को संप्रेषित करता है।

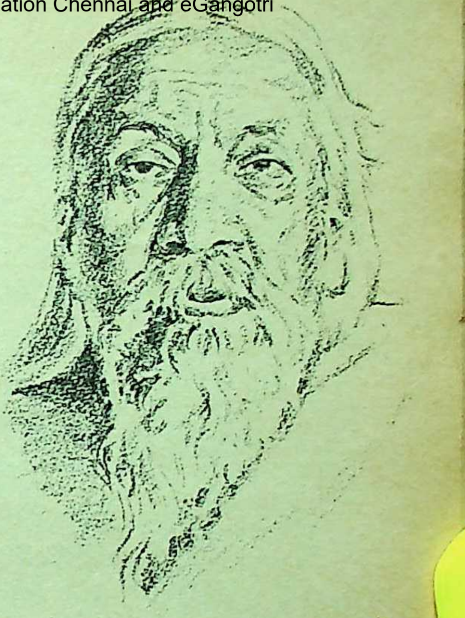

मालवा अंचल देश के केन्द्र पर स्थित है। इस केन्द्र से पूरे देश में दिव्यता का, प्रेम का, सौन्दर्य का आलोक फैले, यही कामना है। ऐसे मध्य प्रदेश के दो अन्य स्थानों नोगांवा व श्री अरविन्द ग्राम में भी श्री अरविन्द के देहावशेषों की स्थापना की गयी है।

आओ हम प्रार्थना करें कि समाधि के पास आकर कोई भी व्यक्ति श्री अरविन्द की उपस्थिति, उनकी मौन पद-चाप, उनकी गंभीर वाणी को अनुभूत करे। यह स्थान चेतना की यात्रा के लिए रूपान्तर की प्रक्रिया के लिए एक सशक्त आलोक केन्द्र हो। **– ८/७, शास्त्रीनगर,**

**रतलाम - ४५७ ००१, म. प्र.**

□

# बोलो मेरे छन्द

केवल एक
क्रौंच के बध पर,
वाल्मीकि को मुखर कर दिया !
किन्तु, आज शत-शत क्रौंचों के,
शव पर सिसक रही है धरती !
बोलो, मेरे छन्द !
आज तुम कहां खो गये ?

केवल एक –
राम की सीता,
छला जिन्हें था लंकापति ने,
कपट वेश में !
किन्तु, आज –
शत-शत सीताएं छली जा रही हैं !
युग.का रावण,
हरण कर रहा प्रकट वेश में !
बोलो मेरे वाल्मीकि !
तुम कहां सो गये ?

राजवंश की एक सभा में –
कुछ ही लज्जित हुई द्रौपदी !
किन्तु आज –
जग भर के सम्मुख
निर्वसना शत-शत द्रौपदियां
लज्जा के पट
खींच रहा युग का दु:शासन
बोलो मेरे व्यास !
आज तुम कहां सो गये ?

**– लता अवस्थी अमिता**

**८, मुन्नू गंज, गोला गोकरन नाथ, खीरी - २६२८०२, उ.प्र.**

हिंदी कहानी

# समानान्तर धुरियां

## डॉ. शीतांशु भारद्वाज

एक-एक कर परिवार के सदस्य अपने-अपने काम पर चल दिये। घर-आंगन की झाड़ू-बुहारी करती हुई गोपा के कानों की घाटियों में परिवार भर के आदेश प्रतिध्वनित होने लगे।

– अरी, सुनती हो! जाते समय ध्यानचंद कह गये थे, मेरे बिस्तर की चादरें बदल डालना।

– मां, मेरे कुर्ते-पायजामे कब से मैले पड़े हैं। ऑफिस जाते हुए विवेक बेटे ने भी तो शिकायत की थी, हो सके तो...।

– मांजी, शाम को अगर अरबी की पकौड़ियां बन जातीं तो...। बेटे के साथ ही ऑफिस जाती हुई बहू ने भी अपनी पसंदगी की बात कही थी।

घर-गृहस्थी की गाड़ी खींचते-खींचते ध्यानचंद आज महारथी बन गये हैं। किंतु वे क्या जानें कि उस लंबी यात्रा में पहिये की धुरी कितनी घिसती रही है! जब धुरी ही नहीं रहेगी तो....। गोपा तो आरंभ से ही पति के साथ साये की भांति उनका साथ देती रही है। उनके सुख-दुख की साझीदार रही है। फिर क्योंकर वे उसे उपेक्षिता रखते रहे हैं? क्यों?

घर की झाड़ू-बुहारी करने के बाद गोपा ने बिस्तरों की मैली चादरें समेट लीं। उन्हें उसने अंदर कमरे में एक ओर रख दिया। उसके बाद वह गेट पर आकर खड़ी हो गयी। किंतु उससे खड़ा नहीं रहा गया। उसकी आंखों के आगे अंधेरा छाने लगा। उसी दिशा में वह नीचे बैठ गयी।

खुट-खुट की आहट से गोपा चौंकी। देखा तो बाहर उसका भाई खड़ा था।

– जीजी, नमस्ते! गोपा अपने स्थान से उठ गयी। उसने गेट के कपाट खोल दिये।उसके होंठों पर फीकी मुसकान उभर आयी, कब आया रे?

– बस जीजी, आ ही रहा हूं। धीरज गेट से अंदर आ गया।

वहां से वे दोनों बैठक में चल दिये।

– ये क्या जीजी? धीरज ने कोने पर पड़े मैले कपड़ों की ढेरी को देखकर पूछा।

—धोबी-घाट लगाऊंगी न! गोपा के होंठों पर बेचारगीभरी मुसकान उभर आयी।

धीरज ने कुछ नहीं कहा। उसने अपने हाथ की पोटली एक ओर रख दी। गोपा भाई के लिए चाय-नाश्ता लाने के लिए किचेन की ओर चल दी। वह फिर से पति की अतिचारिता पर सोचने लगी।

ध्यानचंद ने कभी भी तो उसके सुख-दुख में हाथ नहीं बंटाया। शुरू-शुरू के दिनों में तो वे चाय-चीनी तक उसे अपने ही हाथों से दिया करते थे। जब देखो वे रुपयों की जोड़-तोड़ में ही लगे रहते थे। इतना अधिक कमाने पर भी कभी उन्होंने पत्नी की हथेली पर दस-बीस रुपये नहीं रखे थे। ऑफिस से वे ढेर सारे डाक-टिकट ले आया करते। प्रयोग में लाये गये उन टिकटों को उतार कर वे उन्हें अलबम में लगाने लगते। नये डाक-टिकट निकलने पर तो वे उन्हें थोक के भाव में खरीद लिया करते थे।

— क्यों जी! एक दिन गोपा ने उनसे पूछ ही तो लिया था, आप इन डाक टिकटों को क्यों जंमा किया करते हैं?

— अरे भई, तुम क्या जानो! वे उंसे समझाने लगे थे, पुराने गुड़ की तरह इनकी भी कीमतें बढ़ती रहती हैं। दो-चार बरस में ही पौ (बारह)हो आती है।

— ये भी क्या बात हुई कि मन मार कर, पेट काट कर....। वह उनकी कंजूसी पर व्यंग्य करने लगी थी, आखिर कब तक आप इस तरह से...।

— तुम क्या जानो! ध्यानचंद हंस दिये थे, कहते हैं न कि आज की बचत, कल की सुरक्षा।

सच में ध्यानचंद ने उन डाक टिकटों से बहुत सारा धन कमाया था। ऑफिस के बाद वे एक-दो ट्यूशन भी कर लिया करते थे। उन्हीं दिनों उन्होंने एक प्लॉट सस्ते में खरीद लिया था। उनके भाग्य ने कुछ ऐसा पलटा खाया कि उस प्लॉट को उन्होंने सोने के भाव पर बेच दिया था। बाद में सरकारी क्वार्टर को छोड़ कर उन्होंने अपना यह मकान बनवा लिया था। पिछले दो बरस से वे यहीं रहते आ रहे हैं।

गोपा बेटे के बारे में सोचने लगी। वह भी तो पिता के ही चरण-चिन्हों पर चलता आ रहा है। पिछले बरस उसे बैंक में नौकरी मिल गयी थी।

— क्यों रे विवेक! एक दिन उसने यों ही पुत्र का दिल टटोलना चाहा था, मेरे पीहर में एक सुशील लड़की है। तू कहे तो...।

— नहीं मां। विवेक ने उसकी बात का खंडन कर दिया था, मैं तो कमाऊ पत्नी चाहता हूं। इस महंगाई में....।

बेटे ने उसका दिल तोड़ दिया था। वह प्रसंग उसने वहीं समाप्त कर दिया था, अच्छा, ठीक है। तू भी अपनी मन की कर ले।

* * *

– जीजी ! धीरज किचेन में ही चला आया, तू क्यों कष्ट कर रही है ? मैं तो बस अड्डे से ही चाय-नाश्ता लेकर आ रहा हूं।

– कोई बात नहीं, भैया ! गोपा चाय छानने लगी ।

दोनों किचेन से बैठक के कमरे में चल दिये। धीरज ने चाय की चुस्की लेकर पूछा, जीजाजी तो अब रिटायर होने वाले होंगे। है न ?

– हां रे। गोपा मुसकरा दी, अगले बरस होंगे।

– तू क्यों डूबती जा रही है ? धीरज से बहन का वह उतरा हुआ चेहरा नहीं देखा गया, तुझे ऐसा कौन-सा दुख व्याप रहा है, जो तू...।

गोपा ने अपने आंसू आंखों में ही सुखा लिये। आखिर वह किस-किस को अपने दिल के फफोले दिखलाती रहेगी ?

– तुझे रुपये-पैसों की तो कोई तंगी है नहीं। धीरज उसे कुरेदता ही गया, फिर भी...।

– तंगी है धीरज । गोपा ने अपने मन की बात उंडेल ही दी, तू क्या जाने कि आज भी मैं एक-एक पैसे के लिए तरसती रहती हूं।

- अरे ! धीरज की आंखों में फैलाव आ गया। वह होंठों पर जीभ फेरने लगा, विश्वास ही नहीं होता, जीजी !

– मानो भी, भैया । गोपा सिसक उठी, यहां अपना-पराया है ही कौन जो....।

– ऐसी बात नहीं है, जीजी । धीरज ने उसकी हथेली पर दस-दस के सात-आठ नोट रख दिये, इनसे तू अपना इलाज करवा । तू तो...।

गोपा ने वे रुपये सहेज कर अपनी अंटी में रख लिये । उसने पूछा, गांव में तो सब ठीकठाक है न ?

– हां जीजी । धीरज जाने के लिए उठ खड़ा हुआ, अब मैं चलूंगा । यहां मेरा किसी काम से आना हुआ था।

– अरे ! गोपा भी उसी के साथ उठ खड़ी हुई, तो रुकेगा नहीं ?

– नहीं जीजी। धीरज जाने लगा, फिर किसी और दिन आऊंगा।

भाई के दिये हुए उन रुपयों को लेकर उसी शाम गोपा एक प्राइवेट क्लिनिक में चल दी।

– देखिए जी ! डॉक्टर उसका चेकअप करने के बाद बोले; आप मुझे अपनी घरू जिंदगी के बारे में सब कुछ सच-सच बतला दीजिए। तभी मैं आपका इलाज कर पाऊंगा।

गोपा ने डॉक्टर को आरंभ से अंत तक की अपनी सारी घुटनभरी जिंदगी के बारे में बतला दिया। सुनकर डॉक्टर चमत्कृत हो आये । उन्होंने कहा, अब तो आप सबसे पहले मुझे अपने पति से मिलवाइये।

– लेकिन वे तो...।

– कैसे भी हो। एक बार आप मुझे

उन्हें मिलवा दीजिए। डॉक्टर ने आग्रह किया।

— ठीक है जी। गहरी सांस खींच कर गोपा क्लिनिक से सीधी घर चली आयी।

शाम झुरने लगी थी। घर में सबसे पहले बहू आयी, फिर विवेक आया। आधेक घंटे बाद ध्यानचंद भी आ गये। उन्होंने आते ही बेटे से पूछा, विवेक, शालीमार वाले प्लॉट को बेच दें?

— कित्ते मिल रहे हैं? विवेक ने पूछा।

—डेढ़ेक लाख। ध्यानचंद ने बताया।

— ठीक है। विवेक उनसे सहमत हो आया, उनसे हम गुड़गांव में चार-पांच नये प्लॉट ले लेंगे।

— सुनिए! गोपा ने उनकी बातचीत में दखल दिया, मुझे भी आपसे कुछ कहना है।

— तुम चुप रहो जी। ध्यानचंद ने पत्नी को झिड़क दिया, हम लोग कामकाजी बातें कर रहे हैं।

— आंपको डॉक्टर ने बुलवाया है। गोपा ने उन्हें सूचित किया।

— डॉक्टर? ध्यानचंद चौंके, मुझे क्या हुआ है?

— आपको नहीं, मुझे तो कुछ हुआ है। गोपा ने बात स्पष्ट की. आज मैं अपने को क्लिनिक में दिखलाने गयी थी।

— ठीक है। ध्यानचंद उससे सहमत हो आए, कल सुबह चलेंगे।

* * *

गोपा रात को ठीक तरह से नहीं सो पाई। पति ने उसके ऊपर कितने जुल्म ढाये हैं। विवाह के बाद कभी भी तो उन्होंने उसे उसके मायके नहीं जाने दिया। डॉक्टर उन्हें न जाने क्या कुछ कह दें! बिस्तर पर करवटें बदलती हुई वह इसी ऊहापोह में पड़ी रही।

— अरे भई, उठो न! सुबह-सुबह ही ध्यानचंद गोपा को जगाने लगे, हमें आज डॉक्टर के पास चलना है न!

गोपा उठ गयी। चाय-नाश्ते के बाद वह पति के साथ क्लिनिक में चल दी।

— क्यों महाशय! डॉक्टर ने छूटते ही ध्यानचंद से पूछा, ये आपकी क्या लगा करती हैं?

— ये मेरी पत्नी हैं। ध्यानचंद को डॉक्टर का वह प्रश्न अटपटा-सा लगा।

— जी नहीं। डॉक्टर गुर्राये, ये तो आपकी नौकरानी हैं।

ध्यानचंद पत्नी का मुंह ताकने लगे।

— देखिए साहब! डॉक्टर ने सिगरेट सुलगा ली, ये एक घरेलू महिला हैं। आपके घर में ये धोबी से लेकर चौकीदारी तक का सारा काम किया करती हैं। आप बरसों से पड़े इनके वेतन को चुकता कीजिये।

— वेतन? ध्यानचंद की पेशानी पर बल पड़ गये।

— जी हां। डॉक्टर कुछ गंभीर हो आये, क्या आपने इनकी हथेली पर कभी जेब-खर्च के रूप में दस-पांच रुपये रक्खे? क्या ये आपकी बंधुवा मजदूरिन

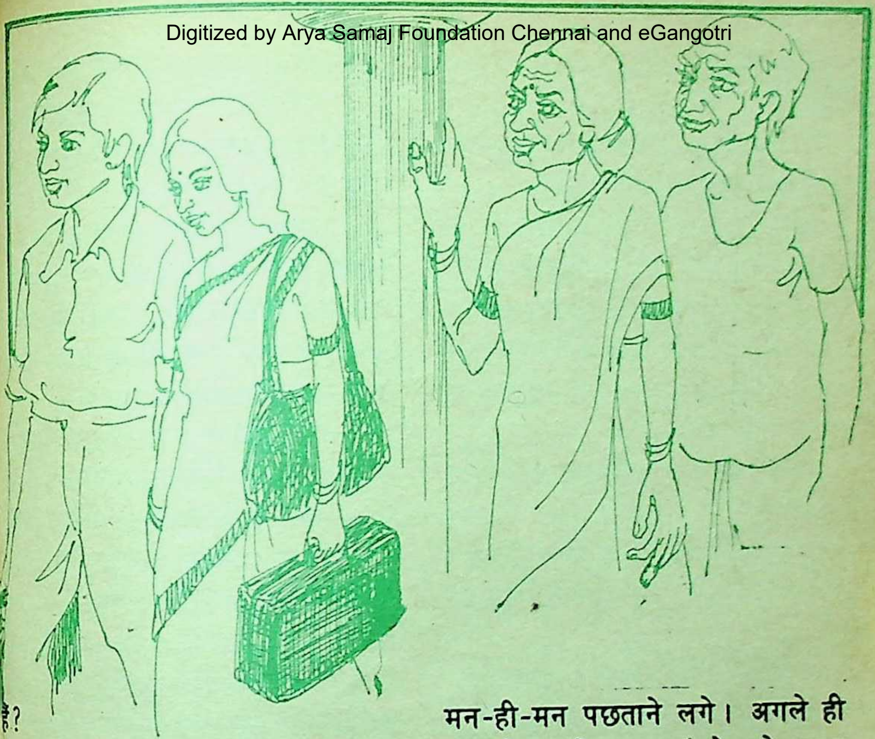

हैं?

ध्यानचंद को माजरा समझते देर नहीं लगी। उनके सिर पर घड़ों पानी पड़ने लगा। फिर भी, उन्होंने अनजानों की भांति पूछा, मैं आपकी बात नहीं समझ पाया।

– आप भी विचित्र जीव हैं, जनाब! डॉक्टर मुसकरा दिये, आपने कभी इनके स्वास्थ्य की ओर ध्यान दिया?

ध्यानचंद जैसे सोते से जाग गये। डॉक्टर के सामने वे निरुत्तर हो आये। निन्यानबे के फेर में पड़कर अब तक वे आकाश में ही उड़ा करते थे। डॉक्टर की झिड़कियों ने उन्हें धरती पर ला पटका। वे पत्नी के साथ किये गये दुर्व्यवहार पर मन-ही-मन पछताने लगे। अगले ही क्षण वे उनसे क्षमा मांगने लगे, माफ कीजिए डॉक्टरसाब! अब तक मैं भुलावे में था। अब आपने मेरी आंखें खोल दी हैं। आज से मैं इनका विशेष ध्यान रक्खा करूंगा।

– चलिए, सुबह के भूले हुए हैं, शाम को घर तो लौट आये। डॉक्टर ने संतोष की सांस ली, इन्हें किसी भी प्रकार की चिंता-फिक्र नहीं होनी चाहिये। नहीं तो...।

– जी ध्यानचंद वहीं बगलें झांकने लगे।

– लीजिये, केमिस्ट की दुकान से ये दवाइयां ले आइये। डॉक्टर ने उन्हें एक

पर्ची थमा दी, इनका लंबा इलाज चलेगा।

— धन्यवाद, डॉक्टरसाब! ध्यानचंद ने उनका आभार प्रकट किया।

क्लिनिक से गोपा पति के साथ घर आ गयी। ध्यानचंद उसका विशेष ख्याल रखने लगे। दूसरे दिन से बिना नागा वे पत्नी के साथ प्रातःकालीन सैर पर जाने लगे। धीरे-धीरे गोपा के स्वास्थ्य में सुधार होने लगा।

गोपा पहले से कुछ ठीक हो आयी थी। उसने अपने काम में हाथ बंटाने के लिए गांव से अपनी भतीजी को बुलवा लिया। ध्यानचंद फिर से अपने कारोबार में डूबने लगे।

वह रविवार का दिन था। गोपा ने नोट किया कि बहू सुबह से मुंह फुलाये हुई है। यों, दो-एक दिन से उसका चेहरा लटका हुआ था। उसका माथा ठनका। कहीं बेटे से तो उसकी अनबन नहीं हो आयी। बहू-बेटे के बीच में पड़ना उसने ठीक नहीं समझा। वह कौन होती है दाल-भात में मूसरचंद?

दिव्या नहान-घर में से धुले हुए कपड़ों की बाल्टी लेकर बाहर निकली वह कपड़ों को तार पर फैलाने लगी।

— बहू! गोपा ने उससे पूछ ही लिया।

तार पर साड़ी फैलाती हुई दिव्या सास को देखने लगी।

— तू उदास कैसी है री? उसने पूछा।

— ऐसी कोई बात नहीं है, मांजी। दिव्या उसी प्रकार साड़ी फैलाती रही।

— मुझे तो दाल में कुछ काला दीखे है। गोपा बहू को कुरेदती ही गयी, जरूर कुछ बात है। पहले तो तू...।

— अब आपसे क्या छिपाऊं, मांजी! दिव्या उसी के पास चली आयी, मर्दों के दिल नहीं हुआ करते। उनसे मैं कब से पीहर जाने को कह रही हूं। पर उनके कान में जूं तक नहीं रेंगती।

— हूं। तो ये बात है! गोपा ने टिप्पणी की, बाप सेर है तो बेटा सवा सेर निकला!

— आप ही बताइये न मांजी। दिव्या उनसे गिला-शिकवा करने लगी, मेरे भी भाई-बहन हैं। मैं उन्हें कब से नहीं देख पायी।

— मैं सब समझती हूं, बहू। गोपा बहू का दुख-दर्द सोखने लगी, तेरे ससुर भी तो कभी मेरे साथ यही व्यवहार किया करते थे।

— तब की बात अलग थी, मांजी।

— बदलाव समय में ही आता है, बहू। गोपा ने कहा, दिलो-दिमाग में नहीं आया करता। आज भी मर्दों के दिल....।

दिव्या चुप्पी लगा गयी।

—तू चिंता न कर। गोपा बहू को धैर्य बंधाने लगी, विवेक को मैं समझा दूंगी। मैं भी तो कभी बहू रही हूं न!

दोपहर का भोजन सभी ने एक साथ ही किया। खाना खा लेने के बाद ध्यानचंद एक कॉलोनाइजर के यहां चल दिये। विवेक भी बाहर जाने की तैयारी करने

लगा। दिव्या को देखकर वह भी मुंह फुलाये हुए था।

– क्यों रे ऊंट ? गोपा बेटे के कमरे में चल दी, किधर जा रहा है ?

– मैं जरा बिल्लू भाई के यहां तक जा रहा हूं, मां। विवेक ब्रीफकेस के कागजात को उलटने-पुलटने लगा।

– जाना जरूरी है क्या ?

– हां। उनसे प्लॉटों के लेआउट बनवाने थे।

– छोड़ भी, बेटे ! गोपा मुसकरा दी, तू तो चौबीसों घंटे रुपयों के ही जोड़-तोड़ में लगा रहता है।

– इसमें बुरा भी क्या है, मांजी ? विवेक सिर खुजलाने लगा, हाथ में चार पैसे आ जाना किसे बुरा लगता है ?

– बुरा है रे। गोपा का हाथ बेटे के कंधे पर जा लगा, जानता नहीं कि लालच बुरी बला है।

– ओह मां ! विवेक हंस दिया, तुम भी किस जमाने की कहावत ले बैठीं !

– तू बहू से कुछ खिंचा-खिंचा रहने लगा है। गोपा मुख्य विषय पर आ गयी, है न ?

– दिव्या बहुत जिद्दी होने लगी है। विवेक ने शिकायत की।

– कुछ मैं भी तो सुनूं।

जब देखो अपने ही मायके का गुण-गान करती रहती है। वह पत्नी की आलोचना करने लगा।

– उसे तू ने खुद ही तो पसंद किया था न ?

– पर वो तो एक हफ्ते से मायके जाने की रट लगाये हुई है।

– ठीक तो है। गोपा उसे समझाने लगी, उसके भी तो भाई-बहन हैं। मां-बाप हैं। ऐसा कर कि आज ही उसे उसके पीहर छोड़ आ।

– अच्छा मां। विवेक ने हाथ का ब्रीफकेस एक ओर रख दिया।

दिव्या दूसरे कमरे में सिलाई का काम कर रही थी। विवेक वहीं चल दिया। गोपा मुसकरा दी।

– मांजी ! दोपहर बाद दिव्या ने गोपा के पास आकर उससे अनुमति चाही, अगर आप कहें तो मैं मायके हो आऊं ?

– हो आ। गोपा मुसकरा दी, नेकी और पूछ-पूछ ? जा, खुशी-खुशी जा। साथ में विवेक भी जा रहा है क्या ?

– जी।

बहू विवेक के साथ मकान की सीढ़ियां उतर गयी। गोपा अजीब सुख में डूबने लगी। गृहस्थी की गाड़ी तभी चल सकती है जब उसकी दोनों धुरियां सही सलामत चलती रहें। उसमें बराबर स्नेहरूपी तेल पड़ता रहे। अगले ही क्षण वह होंठों ही होंठों में किसी गीत-पंक्ति को गुनगुनाती हुई घर की झाड़ू-बुहारी करने लगी। काम करते हुए उसे आत्मिक सुख मिलने लगा।

**– १३८ विद्या विहार,**
**पिलानी - ३३३ ०३१,**
**राजस्थान**

□

# सही आदमी

□ सुधा

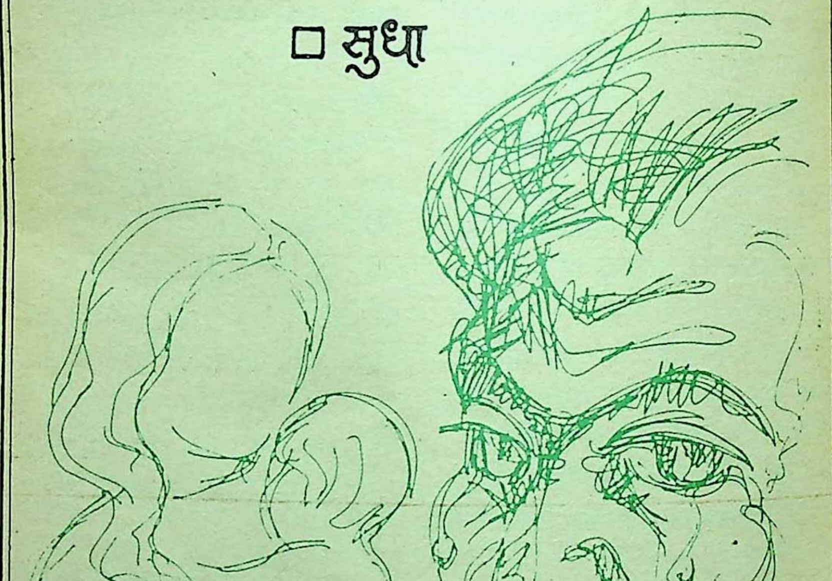

---

धाराव

सुतपा

सी व

तो उसने
'बहुत परे
यह वा
लिए काप
आंसू थाम
मुंह ढांप
रूना भाभ
इस वेग
रही। थो
आंसू पोंछ
की नहीं
'क्या
'वह
एक्सचेंज
'उससे
न!'
'हां भ
'क्या
'उसने
करने को
'बॉस
'एक
में आता
'तो!'

# धारावाहिक उपन्यास — ३

## सुतपा

सीमा के जाने के बाद बाहर का दरवाजा बन्द कर रूना लौटी तो उसने मेरे खूब पास बैठते हुए पूछा— 'बहुत परेशान दिखती हो, क्या हुआ है ?'

यह वाक्य उस बांध को खोल देने के लिए काफी था, जिसके सहारे मैंने अपने आंसू थाम रखे थे। मैं अपनी हथेली से मुंह ढांप फफक-फफककर रो पड़ी। रूना भाभी मेरी पीठ पर हाथ फेरती मेरे इस वेग के कम होने की प्रतीक्षा करती रही। थोड़ा संभल कर मैंने खुद ही अपने आंसू पोंछे और कहा— 'भाभी ! मैं कहीं की नहीं रही।'

'क्या हुआ ?'

'वह सुलोचना है न, वह टेलीफोन एक्सचेंज वाली —'

'उससे तुम्हारे बड़े दा ने ब्याह किया है न!'

'हां भाभी वही। उसी ने.....'

'क्या किया उसने.....'

'उसने अपने एक बॉस से मुझे शादी करने को कहा.....'

'बॉस से ? किस बॉस से ?'

'एक है, बाहर का है, यहां इन्सपेक्शन में आता है.....'

'तो !'

'उसे शादी नहीं करनी थी, भाभी.... सुलोचना को प्रोमोशन लेना था। उसे खुश करने के लिए.....'

'तुझे पसंद नहीं है तो कोई जबरदस्ती है !'

'भाभी ! मैं नहीं जानती थी कि मुझे इतना बड़ा धोखा दिया जायेगा।'

'हुआ क्या ?'

मैंने आद्योपांत पूरी बात सुना दी। उस पहले दिन के परिचय से लेकर आगे सात दिनों के मधु-दिवा-रात्रि मिलनों की सम्पूर्ण कीच - कथा सुनकर रूना हत्वाक् हो गयी— 'हे भगवान !'

'वह शादीशुदा है, बाल-बच्चे वाला। उस मरे दरोगा की बीवी ने उसे मुझे एक कालगर्ल बताया और मुझे ब्याह का लोभ दिया।'

'..........'

'भाभी तुम मुझे बचाओ, भाभी मैं आत्महत्या कर लूंगी।'

'..........'

'वह तो तुम कर चुकीं। सुप्पी तुम्हारे दिन चढ़ गये हैं ?'

'बोलो, यही बात है न !'

मैंने आंसुओं का वेग रोककर स्वीकृति में सिर हिलाया।

तभी तुम आत्महत्या की बात कर रही

हो। अब भला मैं इसमें तुम्हारी क्या मदद करूंगी? जिसने तुम्हें नौकरी दी, उसने तुम्हारा उपयोग किया– मदद उससे मांगो।'

'वह! वह तो मुझे अब और भी ब्लैकमेल करेगी। उसे मैं यह मालूम नहीं होने देना चाहती।'

'और वह आदमी। वह कहां गया?'

'वह तो चला गया। जब जा रहा था तभी उसने मुझे बताया – मैंने खुद शादी की बात चलायी तो उसे आश्चर्य हुआ। वह भी यह नहीं जानता था कि सुलोचना ने मुझे विवाह की शर्त पर उसके पास भेजा था।'

'लेकिन सुप्पी, तुम दोषी नहीं हो क्या? जिससे ब्याह की सम्भावना हो उसके साथ ब्याह के पहले ही ऐसे सम्बन्ध बनाने का प्रचलन तो अपने देश में अभी नहीं हुआ है।'

'भाभी, सारी गलती मेरी है।'

'है, तुम दुर्बल हो। और बुरा मत मानना, तुम्हारा परिवार बहुत लोभी है, लोभ में पड़कर तुम्हारे लिए कुछ भी अकरणीय नहीं होता। अब मुझे क्या कहती है!'

'मुझे छुटकारा दिला दो।'

'किससे?'

'इस पाप से।'

'यह जो पेट में है यह पाप नहीं है– पाप तो तुम्हारा वह लालच है जिसके कारण यह पेट में आया, उस पाप से छुटकारा पा सकोगी?'

'नहीं, भाभी, नहीं, किसी भी तरह मेरी मदद करो।'

'मैं नहीं कर सकती। तुम्हारे परिवार की मदद करना मेरे वश की बात नहीं है। तुम्हारे घर में सबकी एक ही गति है।'

'भाभी, मैंने.... मैंने अभाव में यह सब किया– दादा मेरा ब्याह नहीं करेंगे यह सोच कर ही.....'

'तो हो गया न ब्याह, अब भुगतो।' रूना ने इतनी कठोरता से यह कहा कि मेरे पास चुप रह जाने के सिवा कोई चारा न था। मैं धीरे से उठी और हाथ जोड़े। जाने को मुड़ी कि रूना भाभी ने लपककर रोक लिया– 'सुप्पी! मैं तुम्हारी मदद करूंगी। लेकिन एक शर्त है।'

'..........'

'तुम एबॉर्शन की बात नहीं करोगी।'

'तब क्या करूं! लोगों को मुंह दिखाने लायक हूं मैं!'

'लोगों को मुंह नहीं दिखाने लायक है तुम्हारा भाई जिसकी आंख के सामने उसकी बहन वेश्या बनायी गयी। तुम्हें मेरी बात कड़वी लगेगी। लेकिन सुप्पी! तुम्हारे नपुंसक भाई ने तुम्हारा उपयोग किया है।'

मैं रोती रही।

'तुमको साहस जुटाना होगा। तुम बालिग हो; अपने लायक कमा लेती हो फिर डर किसका!'

'मां ! मां को क्या कहूंगी ?' हिचकियों के बीच मैं इतना ही बोल पायी।

'मां को कुछ नहीं कहना है। तुम किसी के प्रति उत्तरदायी नहीं हो। तुमने जो किया है उसकी सारी जवाबदेही तुम्हारी है। तुम को अगर किसी से कुछ उम्मीद नहीं।

'तब जन्म दो इस बच्चे को।'

'मेरी नौकरी का क्या होगा !'

'तुमको लम्बी छूट्टी लेनी होगी। फिर सब ठीक हो जायेगा।'

'अब क्या ठीक होगा ! सब नष्ट हो गया।'

'कुछ भी नष्ट नहीं हुआ है। अगर तुम्हारे अंदर का लालच मर गया हो तब समझो यह सब अच्छा हुआ। लेकिन अगर अभी भी तुम्हारे मन में किसी को मूर्ख बना कर बीबी बनने का लोभ हो, तब तो सचमुच तुम्हारे दुखों का अंत नहीं है।'

'मैं किसी की बीवी बनना नहीं चाहती।'

'तब इस बच्चे से मुक्त क्यों होना चाहती हो ?'

'बदनामी !......'

'इसे नष्ट कर नेकनामी पा जाओगी ?'

'.........'

'सुनो सुप्पी ! क्या तुम अपने आपको एक मजबूत औरत साबित नहीं कर सकतीं !'

'मैं बहुत कमजोर हूं, भाभी, तुम्हारी

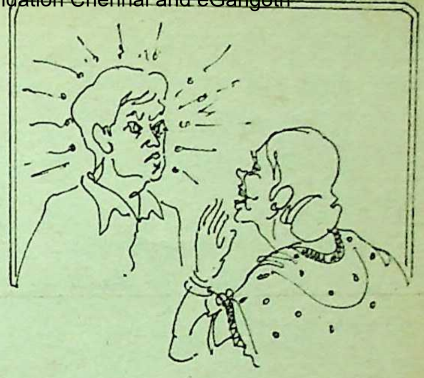

तरह नहीं।'

'मैं भी बहुत भीरु थी। शायद तुमसे भी अधिक। लेकिन उस डर का बंधन तोड़ना पड़ा। तुम्हारे भाई जैसे कायर पुरुष से ब्याह करने का सबसे बड़ा लाभ मुझे यही हुआ कि मैं डरना भूल गयी।'

'..........'

'तुम इस दुर्घटना से लाभ नहीं उठा सकतीं ? नाज़ायज संतान की परिभाषा बदलने पर दुनियां को विवश नहीं कर सकतीं। चाहे जिस किसी कारण से यह बच्चा तुम्हारे गर्भ में आया हो, तुम इसकी मां बनने का मौका मत चूको। इस बच्चे को अपने लिए जायज बनने दो।'

'लेकिन......'

'लेकिन - वेकिन कुछ नहीं। और देखो अगर तुझे मेरी बातें ठीक न लगें तो तुम कुछ भी करने को स्वतंत्र हो, पर फिर मेरे पास न आना।'

मैं फिर बैठ गयी। सांझ घिर आयी थी। मैं घर नहीं जाऊंगी। अब मेरा कोई

घर नहीं है । रूपा भाभी ने मुझे बिठाया, दूध का भरा ग्लास पीने को दिया और कहा, 'अब तुम्हें घर जाना चाहिये ।'

'मेरा कोई घर नहीं ।'

'क्यों नहीं है । अभी तो तुम्हें घर की जरूरत है ।'

'मां सुनेगी तो मर जायेगी ।'

'कोई नहीं मरेगा । तुम कैसे इस बात को लेती हो इसी पर सब निर्भर करता है ।'

'भाभी, मैं..... किसी लायक नहीं हूं ।'

'अगर तुम अपने को ऐसा समझती हो तब मां बनने का हक तुमको नहीं है ।'

'..........'

'सुतपा, मुझे दुर्बल लोग नापसंद हैं । अच्छा अब तुम जाओ । सीमा आती होगी ।'

'..........'

'परसों सीमा जा रही है, तब आना ।'

'किस समय ?'

'शाम में ।'

* * *

## सुदीप्त

'सुप्पी के ब्याह का क्या सोचा ?' — मैंने सुलोचना से पूछा । इधर कई दिनों से न तो सुतपा दीख रही थी और न उसका मंगेतर ।

'वह कहां गया ?'

'कौन ?' — सुलोचना ने अपने आंचल से हवा करते हुए हंसकर पूछा ।

'वह तुम्हारा बॉस ।'

'वह साला धोखेबाज निकला ।'

'क्या ?'

'हां, कहता है, लड़की लजालू है और अंग्रेजी नहीं बोल पाती ।'

'अंग्रेजी..... '

'हां, अंग्रेजी ।' सुलोचना हंसते-हंसते लोटपोट होने लगी ।

'यह तो बहुत बुरा हुआ ।'

'बुरा क्या हुआ, मर्दों की कमी है ! कोई दूसरा मिल जायेगा ।'

'लेकिन वह सात दिन उसके साथ रहा ।'

'रहा तो रहा । क्या हुआ ! घर की लड़की घर में रही । साला गया हरामी ।'

'लेकिन यह तो ठीक नहीं हुआ ।'

'तुम तो बड़े दकियानूसी हो ! भला इसमें ठीक-बेठीक क्या है — विदेशों में तो इसी तरह ठोक – बजाकर रिश्ते तय होते हैं ।'

'यह विदेश नहीं, हिन्दुस्तान है ।'

'हुआ करे । अपना तो देश-विदेश सब यहीं है ।'

सुलोचना पहाड़ की तरह धसक जाती है । मेरा दम घुटने लगता है । लेकिन जितनी सुविधा में इसने मुझे रख छोड़ा है उसके लिए इतनी तकलीफ अधिक नहीं है । पर सुप्पी कहां गयी ! क्यों खामोश हो गयी । मां को पता है न ! सुलोचना से कहूंगा तो जाने से मना कर देगी, कल

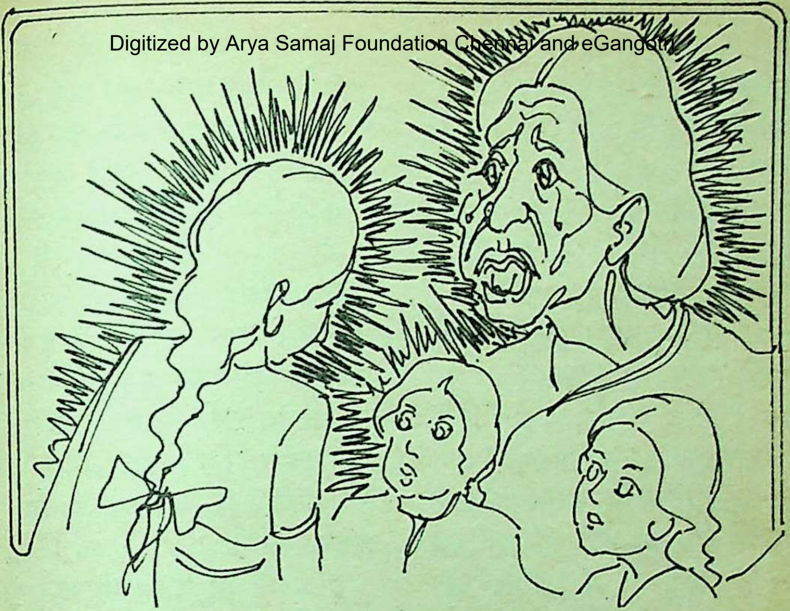

कालेज से उधर ही चला जाऊंगा।

'मां!'

'कौन? खोका! आ। बैठ।'

'सुप्पी नहीं आयी क्या?'

'अभी तो ड्यूटी है उसकी।'

'कब आयेगी?'

'रात में।'

'कुछ बता रही थी?'

'वह तो एक सप्ताह तुम्हीं लोगों के पास थी।'

'दरअसल......'

'क्या बात है?'

'एक आदमी था.......'

'कौन आदमी?'

'सुलोचना का एक बॉस।'

'तो!'

'वही, ....... उसी से शादी .......'

'क्या? शादी कर दी उससे......'

'नहीं मां। शादी करना चाहता था, मिले थे दोनों।'

'कहां?'

'सुलोचना के..... हमारे घर में।'

'कब?'

'वही, जब सुप्पी हमारे घर थी।'

'मुझे नहीं बताया?'

'मैंने सोचा, सुप्पी ने बताया होगा।'

'तो क्या हुआ? कहां है वह लड़का!'

'वह शादी से नकार गया — कहता है सुप्पी अंग्रेजी नहीं बोल पाती।'

'यह तो उसे पहले ही दिन पता पड़ गया होगा, तब क्यों मिलने-जुलने दिया?' —मां सिर पीट रही थी।

'..........'

'यह क्या किया तूने।'

'मैंने क्या किया? सुप्पी खुद समझदार है।'

'उसे तेरी बहू ने कहीं का न रहने दिया।'

'उसने क्या किया?'

'अभी भी तुझे नहीं लगता कि उसने उसे फंसाकर किसी बदचलन आवारा आदमी से अपना काम निकाला होगा।'

'तुम बेकार शक करती हो।'

'मैंने दुनियां देखी है – न जाने मेरे पापों का हिसाब कब चुकेगा? मुझे कहीं भेज दो किसी विधवाश्रम में रख दो, और बहनों को अनाथालय में भर्ती कर दो मैं अब इस घर-गृहस्थी में नहीं रह सकती।' – मां रोने लगी।

'तुम बेकार रो रही हो।'

मां रोती रही। मुझसे मां का रोना नहीं देखा जाता। क्यों बात-बात पर रोने लगती है। किसी ने सुतपा को पसंद न किया तो इसमें इतना रोना-धोना क्यों? लेकिन सुलोचना ने उन दोनों को इतनी छूट देकर ठीक नहीं किया। और सुप्पी भी क्यों उससे इतनी घुलमिल गयी। क्या उसे नहीं लगा कि यह आदमी उससे ब्याह नहीं करेगा!

ब्याह होकर भी क्या होता है मैंने तो रूना से ब्याह किया था – रूना, रूना। आह! उस जैसी स्त्री को मैं नहीं रख सका! सुप्पी, मेरी बहन तूने किसी गैर आदमी का विश्वास क्यों किया? आह! मुझे रोना आ गया। मां की तरह। मैं किसके लिए रो रहा था? अपने लिए, रूना के लिए या सुप्पी के लिए?

जी चाहता है कभी नहीं जाऊं, सुलोचना की उस मांद से सदा के लिए मुंह मोड़ लूं। लेकिन, अदृश्य प्रेरित मेरे पांव उसी घर की ओर बढ़ गये, जहां एक सामिष-स्वभाव स्त्री मेरी राह देख रही थी। उसने देर से आने का कारण पूछा तो मैंने कालेज में चल रहे इम्तहान का बहाना बना दिया।

मैं अपनी मां से मिलने गया था यह कहने का साहस भी मैं नहीं जुटा पाया। खूब गरिष्ट भोजन, बेहद मुलायम बिस्तर और इत्र से सनी स्थूल स्त्री के पार्श्व में देर रात तक सो नहीं सका।

* * *

## सुतपा की मां

घर का दरवाजा खुला हुआ था। मां खाट पर औंधी पड़ी थी। उसे देखकर मुंह फेर लिया। छोटी बहनें स्कूल से आ गयी थीं।

'मां।'

'..........'

'जी अच्छा नहीं है?'

'मेरा जी अब क्या अच्छा होगा! मुझे तो गंगा में डाल दो सब भाई बहन मिलकर।'

तो मां को मालूम हो गया! किसने बताया रूना ने? उससे मां कैसे मिली?

'खोका की उस रंडी का तूने कैसे विश्वास कर लिया! अभागी! खोका से पूछा था? वह तो खुद नहीं जानता उसे।'

'..........'

'बोल! ..... चुप क्यों है?'

'..........'

'खोका कहता है उसे कुछ पता ही नहीं, कहां मिला था तुझे वह आदमी।'

'सुलोचना भाभी के घर में।'

'सुप्पी! तूने मुझे कहीं का न रक्खा।' मैंने दीवार से सिर टकरा लिया होता लेकिन सुतपा ने रोक लिया।

'मैं देख रही हूं तुम्हारी दशा! हतभागी, तुझे अपना भला-बुरा नहीं सूझा?'

'मां।'

'मुझे मां मत कह।'

दोनों मां-बेटी रोने लगीं।

'यह पाप किसी तरह दूर करना है। छूट्टी ले-ले और चल कहीं।'

'मां!'

'ओह! मैं न जाने क्यों ऐसे अभागे बच्चों की मां बनी।'

'मां मैं यह नष्ट नहीं करूंगी।'

'क्या कहा?' मैं सुतपा पर ऐसे झपट पड़ी जैसे उसे नोच कर रख दूंगी। ऐसा अनायास ही हो गया।

'मां......'

'तू भी मर जा, दूर हो जा, अभागी।'

वह रोने लगी।

अपनी संतान को मरने के लिए कहने का दुख झेलना आसान नहीं है। सुतपा का ब्याह हो गया होता तो यह अपने बच्चों की मां बनी होती। लेकिन इसे केवल इसीलिए तो मर जाने को कह रही हूं कि इसकी कमाई पर घर चलता रहा था। छिः मरना इसे नहीं, मुझे चाहिये। बाकी चारों छोटी बहनें टुक-टुक तमाशा देख रही थीं।

'मेरे लिए कहीं से जहर - माहुर ला दे।'

वह रोती रही।

'मैं कहीं चली जाऊंगी, आज ही चली जाऊंगी।'

'मां! मेरी बात सुनो।' भयानक मानसिक यंत्रणा के बीच उसने रूना से हुई बातें बता दीं।

'तू उससे क्यों मिली?'

'उसने तो हमारे खानदान पर थूका होगा।'

'वह बहुत समझदार है।'

'मेरे बच्चों के सिवा सब समझदार हैं।'

'..........'

'सुप्पी! बेटी! तू फिर से सोच ले। यह बच्चा तुम्हारे जीवन का श्राप बन जायेगा।'

'मां। तुम्हारा कौन बच्चा तुम्हारे जीवन का वरदान बना?'

'फिर भी!'

'फिर भी कुछ नहीं मां! मैं अधिक दिन जीना ही नहीं चाहती।'

'और मैं! मैं कब जीना चाहती रही, लेकिन मरना क्या इतना आसान है और फिर ऐसा जीवन! यह जीवन तो मरने से भी कठिन है।'

'मां! मैं इस बच्चे के लिए और तुम मेरे लिए जिन्दा रहो। यही बहाना सही।'

'कोई किसी के लिए नहीं जीता, बेटी। सब अपने लिए जीते हैं।'

'सो जाओ, मां।'

'अब मुझे क्या नींद आयेगी!' मेरे माथे में बवंडर सा उठा था।

सुप्पी! कितना सूख गयी है। ओ मां! यह क्या हो गया। कितना भयंकर पाप फूट पड़ा यह। सुप्पी के पिता का मुख याद आ रहा है – तुझे नरक में शान्ति न मिले। तेरे पापों का फल मेरी बेटी को भोगना पड़ रहा है – तूने उस निर्दोष, पवित्र रूना को पाप पंक में धकेला, अब तेरी अभागी बेटी कहां से पाप उठा लायी। हे भगवान सुप्पी की कोख से यह रोग बिला जाय, हे यदुपति, हे रघुनाथ, हे शिवशंकर दया करो। प्रभु! कृपा करो नाथ!

पता नहीं कब नींद आ गयी।

* * *

## जी

'तुम्हारी उस सहेली ने तो मुझे लम्बा बनवास दिलवा दिया।'

'उसे क्यों दोष देते हो, खुद किसी चक्कर में रहे होगे।'

'नहीं भाई, मम्मी बीमार रह रही हैं। उनकी देखभाल भी ठीक से नहीं हो पाती। एक चौबीस घंटे आसपास रहने वाला आदमी जरूरी है।'

'एक आया तो थी।'

'आती-जाती है, रात में नहीं रहती।'

'उन्हें यहीं बुला लो!'

'मैंने तुमसे बिना पूछे ही उन्हें कहा था – मैं जानता था, तुम मना नहीं करोगी – लेकिन उन्होंने इन्कार कर दिया। वे वहां से नहीं आयेंगी।''

'तब मैं ही चली जाऊं?'

'तुम?'

'हां। इसमें हर्ज क्या है?'

'हर्ज तो नहीं है, लेकिन.......'

'तुम्हें पसंद नहीं?'

'नहीं, ऐसी बात नहीं है। तुम कितने

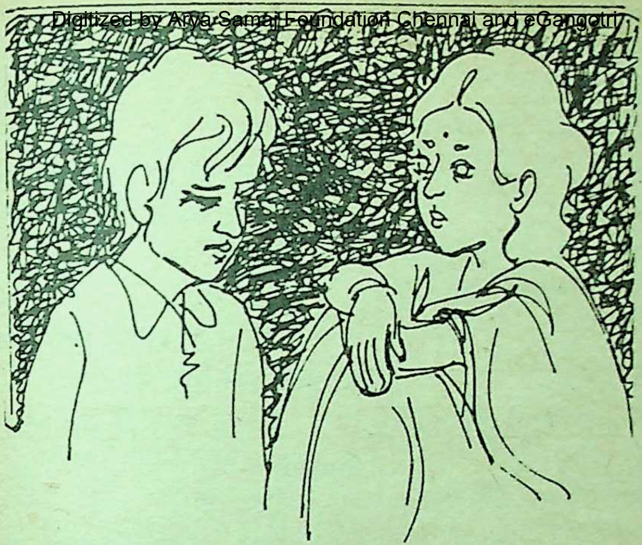

दिन रह पाओगी ! तुम्हारा कालेज !.....'

'मैं उन्हें देखने जाऊंगी, वहां सदा के लिए रहने नहीं।'

'लेकिन, उनके साथ किसी के हमेशा रहने की जरूरत है।'

'वह भी हो जायेगा।'

'भरोसेमंद हो.....'

'हां, वैसा ही। सुनो। एक काम है.....'

'किसका ?'

'नाम जान कर अच्छा नहीं लगेगा.....'

'सो कौन है ?'

'सुतपा। जानते हो ?'

'शायद..... यह शायद सुदीप्त की बहन है।'

'हां।'

'तब !'

'वह टेलीफोन एक्सचेंज में काम करती है।'

'..........'

'उसकी बदली करवानी है, वह मम्मी के साथ रह सकती है।'

'वह मम्मी के साथ नहीं रहेगी।' मेरा स्वर अनजाने तिक्त वह उठा।

'क्यों ? क्यों नहीं रह सकती ?'

'इसलिए कि मैं उन लोगों से सम्पर्क रखना नहीं चाहता।'

'ओ।'

'तुम बुरा मान गयी ?'

'हां, मान गयी बुरा, तब !'

'तब इस पर फिर सोचूंगा।' – मैंने अपनी बात में परिहास भरना चाहा। लेकिन रूना गंभीर बनी रही।

'देखो जी, वह उस परिवार से कट कर ही रहना चाहती है। उसे उन लोगों से अलग मानो।'

'मान भी लूं तब भी मम्मी से पूछना पड़ेगा।'

'वह मैं पूछ लूंगी।'

'वह तैयार हो उसे साथ रखने को और वह लड़की उन्हें पूरी तरह आराम दे सके तभी इस पर......'

'ठीक है, ठीक है।'

'तुम्हारी वह अफलातून सहेली कब गयी?'

'वह तुम पर मर-मिट रही थी।'

'ऐसी मेरी किस्मत कहां?'

'लो अब भी तुम अपनी किस्मत को रो रहे हो?'

'अब भी याने तुम्हारे अवतरण के बाद भी! तुम्हारा यही मतलब है न!' – मैंने रूना को दोनों हाथों से थाम कर उसे जी भर प्यार किया। कौन कहता है कि यह मेरी स्त्री नहीं – यही है मेरी प्रिया पत्नी और सहचरी।

सुदीप्त की बहन की बदली के लिए मैं जरूर कोशिश करूंगा। यह भी एक बदला ही होगा।

* * *

## सुवीर

'सुप्पी!'

'........'

'तुम्हारा ट्रान्सफर हो गया।'

'हां।'

'क्यों?'

'ट्रान्सफर तो होता ही रहता है।'

'तुमने रोकने के लिए नहीं लिखा।'

'क्यों?'

'यहां घर है।'

'घर में ही नौकरी बनी रहेगी ऐसी तो कोई शर्त नहीं थी।'

'लेकिन दादा की वह बॉस कब काम आयेगी?'

'छोट दा!'

'क्यों, उसके विरुद्ध कुछ सुनना तुमको अच्छा नहीं लगता! मैंने उसकी कोई बुराई तो नहीं की......'

'उसका नाम मत लो।'

'अच्छा! क्यों भाई, ऐसी भी क्या बात है!'

'मुझे अच्छा नहीं लगता, बस यही।'

'तो तुम जाओगी नयी जगह।'

'हां।'

'वह छोटा शहर है, दिक्कतें होंगी।'

'रूना भाभी की मां का घर है, वहीं रहूंगी।'

'वाह! इतना सब तय हो गया और मुझे पता तक नहीं चला!'

'तुम घर में टिकते कब हो!'

'अब तो रहना पड़ेगा। मां को लेकर.....'

'हां, मां को......'

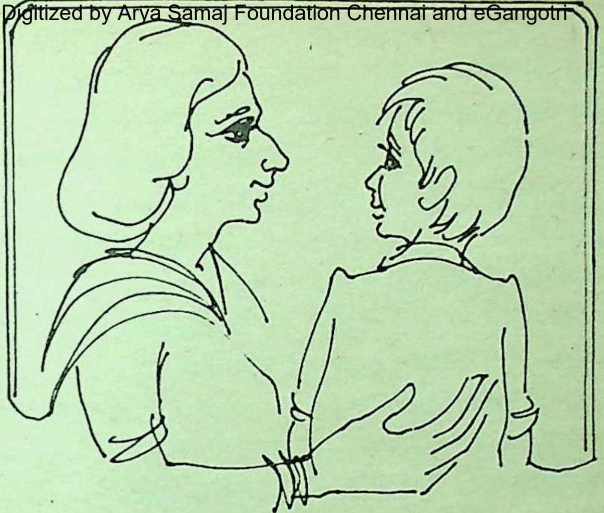

'मां ने तो, देख रहा हूं, तुम्हारे जाने के नाम से ही रोना-धोना शुरू कर दिया है।'

'..........'

'सुप्पी !'

'तुमने किसी से ब्याह की बात.....'

'छोट दा !'

'क्यों क्या मैं तुम्हारी बातें नहीं जान सकता !'

'..........'

'सुप्पी, तुम मुझे बहुत दुखी दीखती हो।'

'नहीं, मैं ट्रान्सफर से परेशान हूं।'

'तो रुकवाने की कोशिश करो।'

'नहीं।'

'जाना चाहती हो तो दुख किस बात का।'

'किसी बात का नहीं।'

'शायद तुम मां और बहनों के लिए सोच रही हो।'

'मां के लिए तुम हो।'

'और अगर मैं भी दादा की तरह....'

'तो मां को भगवान देखेंगे....'

'मेरा मतलब यह नहीं था।'

'तो क्या था ?'

'तुम इतनी नाराज क्यों हो ?'

'तो खुश क्यों रहूं ?'

ठीक है भाई जो जी में आये करो। मैं कुछ नहीं जानता। मेरी नौकरी एकदम टेम्पोररी है, अगर छूट गयी तो मां को दिक्कत हो सकती है।'

'तो बड़ दा से मदद लेना।'

'उनसे ?'

'हां ?'

'देखो सुप्पी, कानून कहता है कि लड़कियों पर भी मां-बाप के भरण-पोषण का उत्तरदायित्व है।'

'हां, है। और कानून यह भी कहता है कि तुम्हारे जैसे स्वार्थी भाइयों को बहन की कमाई में हिस्सा बांटने का कोई हक नहीं है।'

'तुम्हें अपनी नौकरी का घमंड है — जो तुझे दादा की उस दुश्चरित्र स्त्री से मिली है! ऐसी नौकरी पर मैं थू करता हूं।' — मुझे शायद ऐसा नहीं कहना चाहिये था। सुतपा रोने लगी। बहुत रोने लगी। बहुत देर तक रोती रही। मैंने माफी मांगी पर उसका दुख नहीं थमा।

'देखो सुप्पी! मेरा मतलब गलत नहीं था। मैं दरअसल दादा के बर्ताव से दुखी हूं।'

'..........'

'मैं दादा की तरह समझौता नहीं कर पाता। शायद मैं गलत हूं। सुप्पी मैं गलत हूं। मुझे भी कहीं न कहीं अपने लिए किसी से कोई विनिमय करना ही पड़ेगा।'

सुप्पी पर किसी बात का कोई असर नहीं हुआ। वह रोती रही और इस घर से जाने की तैयारी करती रही।

* * *

## रूना

'मैंने मम्मी को कहा यहां आने को......'

'..........'

'वे राजी नहीं हुई।'

'क्या कहती थीं?'

'पापा की बातें....... कैसे उनके साथ उन्होंने सुख के दिन बिताये यही सब, बार-बार।'

'उस बात से यहां आने में क्या बाधा थी?'

'यादों की। वे उन यादों में जीना चाहती हैं।'

'तुम मेरे बाद मुझे इस तरह याद करोगी?'

'कतई नहीं।'

'..........'

'क्यों? बुरा लगा?'

'नहीं, निश्चिन्त हुआ।'

'लेकिन मैंने तुमको निश्चिन्त करने के लिए नहीं कहा था।'

'तो दुखी करने को?'

'नहीं यह भी नहीं। दरअसल जी! मुझे दुनियाकी रिश्तों की यह हाय-हाय पसंद नहीं।'

'लेकिन रिश्तों से तुम्हें इन्कार भी तो नहीं!'

'देखो, यह सुप्पी मेरी कौन है? कोई नहीं। लेकिन मुझे लगता है कि उसकी समस्या मेरी समस्या है, जैसे वह मैं ही हूं।'

'उसकी क्या समस्या है? बदली चाही, हो गयी। रहने को मम्मी जैसी ग्रेट लेडी का साथ हो गया और क्या चाहिये।

तुमने तो पुराने रिश्ते के सारे कर्ज उतार दिये।

जी मुझे जान-बूझकर मर्माहत करना चाहता था या ऐसा उसने अनजाने किया यह कह नहीं सकती। लेकिन मेरे मन की द्विविधा मिटाने में यह बात बहुत कारगर हुई। जी के साथ मेरे सम्बन्धों का माधुर्य जब खतम होगा तो वह सुदीप्त का नाम लेकर ही अपनी कटुता प्रकट करेगा—यह मैं जानती हूं। इस विषवेल को मैं पनपने नहीं दूंगी। इसकी पहली ही फसल को काट कर खेत सपाट कर दूंगी। इसीलिए मैंने जी पर प्रतिप्रहार नहीं किया। बल्कि प्रसंग बदल कर कहा—

'नगीना अब स्कूल जाने लगा है।'

'कब से?'

'एक महीना हो गया, पहले शर्माता था अब उसका मन लग गया है।'

'कुछ दिन बाद वह गुरू बन जायेगा।'

जी की भविष्यवाणी सच निकली। नगीना अपने स्कूल के खेलकूद में सबसे आगे आ गया। लगभग सभी आइटम्स में अव्वल। चैम्पियन बन गया। मुझे खूब सकुचा कर बताया कि उसे दिल्ली जाने के लिए चुना गया है।

'वाह! कब जाना है? कपड़े बनवाने होंगे। पहले क्यों नहीं कहा?'

'जाना जरूरी नहीं है।'

'क्यों? तुम नहीं जांना चाहते क्या?'

' '

..........

'तुम चैम्पियन हुए हो, स्कूल का नाम तुम्हारे ऊपर है और तुम पीछे हटना चाहते हो! एकदम गलत है।' वह चुपचाप सुनता रहा।

मैंने उसकी दिल्ली यात्रा की पूरी तैयारी कर दी। वह खामोश लेकिन उत्सुक आंखों से सब निहारता, स्वीकारता रहा। उसे स्टेशन तक पहुंचाने भी गयी थी। ट्रेन में बैठने के पहले उसने मेरे पांव छुये, प्रेम या कृतज्ञता कौन सी प्रेरक चीज थी जिसने उसे मेरे पैरों पर झुका दिया। पैर छूकर प्रणाम करने का मैं विरोध करती रही हूं। लेकिन आज यह बड़ा अच्छा लगा। सहज स्नेह और श्रद्धा की इस अभिव्यक्ति को नापसंद करूं ऐसा संवेदन शून्य हृदय मेरा नहीं है। मैं देर तक उसी को सोचती रही।

जी के साथ जब शाम बिताने का मौका मिलता है, तब उसका साथ देना जरूरी होता है। ऐसा पहले उसका मन रखने को करती थी, अब ऐसे दिनों की प्रतीक्षा होती है। आज काफी समय बाद जी शाम को घर पर थे। सुबह भी शायद कहीं नहीं जाना था। इसलिए सोने की जल्दी नहीं थी। इतमीनान से खाया-पीया जा सकता था। दुनिया के हंगामे से समेट कर अपने को नशे में डुबो लेने की इस स्थिति में भी मुझे नगीना याद रहा। मैंने उसकी चर्चा करने की भूल कर दी।

'आज वह दिल्ली गया।'

'कौन?'

# चांदनी तो कर दिया

उसको केवल डर मिला जिसने किसी को डर दिया
प्यार पाया उसने जिसने प्यार का मंज़र दिया

मंदिरों में बज उठीं खुद ही हजारों घंटियां
एक भटकन को किसी ने जब भी उसका घर दिया

रंग निखरे और खुशबू का बदन भी खिल उठा
फूल के हाथों में जब तितली ने अपना पर दिया

ऐ सुबह की धूप तूने बर्फ को पिघला के फिर
पत्थरों के होठ को प्रिय बांसुरी का स्वर दिया

देखना यह है कि क्या होता है अब आगे 'कुंअर'
धूप की तेजी को तुमने चांदनी तो कर दिया

**— कुंअर बेचैन**

२ एफ-५१, नेहरूनगर, गाजियाबाद, उ.प्र.

---

'नगीना।'

'धत्तेरे की। मैने समझा कोई आदमी।'

'वह आदमी नहीं है क्या ?'

'आदमी बनने के रास्ते पर है।'

'मेरी समझ से वह तुम सब से अच्छा है।'

'तुम्हें तो मुझसे हर कोई अच्छा लगता है।'

'..........'

'पता नहीं उस लड़के में क्या है !'

'तुम उससे इर्ष्या करते हो ?'

'नफरत करता हूं।'

'क्यों ?'

'मुझे अच्छा नहीं लगता है।'

'तुम्हें क्या अच्छा लगता है ?'

'तुम..... मुझे तुम अच्छी लगती हो।'

जी ने बड़े प्यार से मेरी बाहों पर हाथ फेरा। उसे मैं जरूर अच्छी लगती हूं। लेकिन पता नहीं क्यों उसके इस अच्छे लगने से मुझे वैसा संतोष नहीं हुआ जैसा नगीना के पांव छूने से हुआ था।

(क्रमशः)

एस/ २३०२, उदयगिरि,
बुद्धमार्ग, पटना-८००००१

□

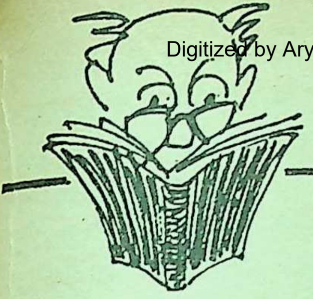

# ग्रंथलोक

*** आधी रात का सूरज (यात्रा-वृत्तांत) * लेखक : डॉ. कुमुद; प्रकाशक: शील प्रकाशन, ए-३५ सोनारी पश्चिम, जमशेदपुर; मूल्य : ५५ रुपये।**

यात्रा-वृत्तांत ने गद्य की नयी विधाओं के बीच अपनी जगह सुनिश्चित की है, तो इसका कारण यात्रा-साहित्य की रोचकता, दृश्यात्मकता और रमणीयता का आकर्षण ही है। अपने कमरे में बैठा हुआ पाठक लेखक के सहारे अनेकानेक दृश्यपटलों, परिवेशों और व्यक्तियों को समझने में सक्षम होता है। यात्रा-वृत्तांतों के लेखन में अपनी प्रतिभा का परिचय डॉ. कुमुद ने पहले 'बदरी केदार के पथ पर' में दिया था। अब उनकी दूसरी यात्रा-पुस्तक 'आधी रात का सूरज' आयी है जिसमें स्वीडन-यात्रा के उनके अनुभवों का अत्यन्त रोचक और सजीव एकत्रीकरण है।

विभिन्न छायाचित्रों, मानचित्रों और जानकारियों से सुसज्जित यह पुस्तक हमें स्वीडन की यात्रा कराती है। सोलह उपशीर्षकों/अध्यायों में विभक्त यह कृति वर्णन और विवरण का समन्वित आयोजन है।

डॉ. कुमुद जागरूक और संवेदनशील यात्राकार हैं। इसी कारण 'आधीरात का सुरज' अन्तर्मन का अपूर्व विश्लेषण है और स्वीडन सम्बन्धी जानकारियों का कोश भी। कभी-कभी डॉ. कुमुद ने तथ्यों का नितांत सूचनात्मक ब्योरा भी दिया है। 'हिम्मत बांध बढ़े जो आगे' पूरा का पूरा ऐसा ही निपट सूचनात्मक अध्याय है। अन्य कतिपय अध्यायों में भी यह तथ्यात्मक नीरसता कहीं-कहीं आयी है, जिससे यात्रा का प्रवाह बाधित हुआ है। अन्यथा लोगों और स्थानों की आकर्षक छवियों का यह समवाय यात्रा-वृत्तांत के साफल्य का परिचायक है। **— डॉ. बालेन्दु शेखर तिवारी**

* * *

*** संकलन - कारवां * संपादक : याद राम शर्मा; प्रकाशक : अभिनव**

**प्रकाशन; पैठ बाजार, नयी कालोनी, कासिमपुर (पा.हा.) अलीगढ़; मूल्य: पंद्रह रुपये ।**

अन्य विधाओं की अपेक्षा हिन्दी कविता में सर्वाधिक सम्भावनाएं दृष्टिगोचर हो रही हैं। वस्तुतः आज भी हमारे बीच कबीर, सूर, तुलसी या निराला विद्यमान हैं, परन्तु इसके लिए हमें खोजी दृष्टि की आवश्यकता है। हिन्दी कविता को आगे और आगे ले जाने वाला कारवां निरंतर गतिशील है। ऐसा ही एक कारवां हमारे समक्ष समीक्ष्य कृति के रूप में विद्यमान है।

संकलन में गीत, गज़ल, कविता, नई कविता, तेवरी, मुक्तक आदि विविध विधाओं में उन्नीस कवियों की पचास रचनाएं संकलित हैं। संकलन में जहां एक ओर इस शताब्दी के समर्थ कवि नीरजजी की उपस्थिति है, वहीं दूसरी ओर डॉ. वेद प्रकाश अमिताभ, डॉ. हर्ष मधुर, लाखन सिंह भदौरिया सुमित्र, अशोक अंजुम एवं कु. राजेश रस्तोगी की सहभागिता भी सराहनीय है। भाई रामप्रकाश राकेश, ओमस्वरूप अंकुश, चन्द्रपाल शर्मा भैया, श्यामसुन्दर शर्मा, लटूरी सिंह यादव, विष्णु स्वरूप मिश्र, शिवेन्द्र सक्सेना, सुभाष सिंह तोमर, योगेन्द्र सिंह चौहान, विजय दीप, मदनमोहन गुप्त, ज्ञानेन्द्र साज, मु. कासिम तथा स्वयं यादराम शर्मा की गंगा-यमुनी काव्य धारा पाठक के अन्तर्मन को अभिसिंचित करती है।

संकलन में यदि कुछ और कवियों को सम्मिलित करके उसे कम से कम सौ पृष्ठों में सजिल्द और कलात्मक ढंग से प्रकाशित किया जाता तो यह सचमुच एक स्मरणीय उपलब्धि बन जाता। फिर भी एक साथ इतने कवियों को प्रकाशन मंच उपलब्ध कराने के उद्देश्य से संकलन की सफलता सुनिश्चित है।

**— डॉ. रोहिताश्व अस्थाना**

* * *

*** राम-कथा : भक्ति और दर्शन***
**डॉ. विश्वम्भरदयाल अवस्थी; प्रकाशक: सरस्वती प्रकाशन मन्दिर, ६९, नया बैरहना, इलाहाबाद; मूल्य: १२५ रुपये।**

राम-कथा संस्कृत साहित्य से शुरू होकर किस प्रकार विकास पाती चली आ रही है और जन-मानस की तृप्ति की अक्षय निर्झरिणी बनी हुई है इसका पांडित्यपूर्ण दार्शनिक विवेचन प्रस्तुत पुस्तक: 'राम-कथा भक्ति और दर्शन' में उपलब्ध होता है। भाषा, जाति और देश-काल की सीमाओं से ऊपर उठकर मानवता के संपूर्ण गुणों को अपने में आत्मसात करती राम-कथा का प्रभाव और प्रेरणा न केवल भारत की अक्षय निधि बनी हुई है, बल्कि विदेशों में भी इसका समुचित सम्मान हो रहा है।

समीक्ष्य पुस्तक ६ खंडों में विभाजित है। प्रथम खंड के छह अध्यायों में संस्कृत

साहित्य में राम-कथा के अंतर्गत वैदिक साहित्य में राम-कथा, पुराणों, संस्कृत रामायणों, महाभारत संस्कृत प्रबंध काव्यों एवं संस्कृत नाटकों में राम-कथा पर संक्षिप्त में किन्तु सारगर्भित प्रकाश डाला गया है। द्वितीय खंड में पालि, प्राकृत और अपभ्रंश साहित्य में राम-कथा का विवेचन मिलता है। तृतीय खंड के चार अध्यायों में हिन्दी-काव्य में राम-कथा के सम्बन्ध में वीरगाथा काल से लेकर भक्तिकाल, रीतिकाल और आधुनिक काल में साकेत, राम की शक्ति पूजा, जानकी जीवन तथा अरुण रामायण तक की चर्चा की गयी है। चतुर्थ खंड में हिन्दीतर भारतीय भाषाओं में राम कथा पर तमिल भाषा की कम्ब रामायण, तेलुगु की रंगनाथ रामायण तथा बंगला की कृतिवास रामायण आदि पर पांडित्यपूर्ण विवेचन उपलब्ध है। पंचम खंड में राम कथा के प्रमुख प्रसंगों पर सूक्ष्म अध्ययन प्रस्तुत किया गया है। जिसमें श्रीराम के जन्म से लेकर विश्वामित्र से दिव्यास्त्रों की प्राप्ति, अहल्या उद्धार, पुष्पवाटिका में राम-सीता मिलन, भगवान शंकर का धनुष, परशुराम से राम की भेंट, कैकेयी के वरदान, जयन्त का दुर्व्यवहार, सीता की अग्नि परीक्षा, पार्वती द्वारा श्रीराम के ईश्वरत्व की परीक्षा, बालिवध, श्रीराम द्वारा शिव की पूजा, मेघनाद वध, सती सुलोचना, रावणवध, विभीषण को एक कल्प की आयु, श्रीराम का सुशासन, सौ अश्वमेध यज्ञ, सीता निर्वासन और लवकुश का जन्म, श्रीराम की सेना से उनका युद्ध, श्रीराम का शासन काल, उनका परधाम गमन एवं उनके लोकोत्तर गुणों का सांगोपांग विवेचन किया गया है। उसी प्रकार षष्ठ खंड में दो अध्याय हैं। इसमें राम-साहित्य में भक्ति और दर्शन का समुचित विश्लेषण प्रस्तुत किया गया है।

प्रस्तुत पुस्तक 'राम-कथा में भक्ति और दर्शन' न केवल उनके लिए विशेष उपयोगी है जो उसके जिज्ञासु हैं, वरन् उनके लिए भी दिशा-निर्देश कर सकता है जो किसी-न-किसी कारणवश जीवन पथ से भटक गये हैं अथवा किंकर्तव्य-विमूढ़ हो गये हैं। दूसरी प्रमुख विशेषता है इतनी खोजपूर्ण दुर्लभ सामग्री सोदाहरण प्रस्तुत की गयी है। तीसरी, इतने ढेर सारे तथ्यों को मात्र ३१० पृष्ठों में ही समेट लिया गया है।

**— रामलाल शुक्ल**

* * *

*** पुरुषोत्तम * लेखक : डॉ. भगवती शरण मिश्र; प्रकाशक : राजपाल एण्ड सन्स, कश्मीरी गेट, दिल्ली; मूल्य : एक सौ पचास रुपये।**

विख्यात कथा शिल्पी डॉ. भगवती शरण मिश्र के ये दोनों उपन्यास अपने शिल्पगत वैशिष्ट्य के साथ-साथ

कथ्य, कथानक, चरित्रचित्रण और लेखकीय वैदुष्य के असंदिग्ध प्रभाव के फलस्वरूप सही अर्थों में कालजयी हैं।

ये दोनों उपन्यास श्रीकृष्ण चरित्र पर आधृत हैं। यद्यपि पुस्तक दो भागों में है, पर दोनों खंड अपने में स्वतंत्र ग्रंथ हैं। 'प्रथम पुरुष' में श्रीकृष्ण चरित का पूर्वार्द्ध और 'पुरुषोत्तम' में उत्तरार्द्ध एक अतिविशिष्ट कौशल से एक विशाल कैनवास पर रूपायित हुए हैं।

दो खण्डों में विभक्त महाग्रंथ में यद्यपि परम्परागत आख्यान को आधुनिक दृष्टि-बोध देने का सफल प्रयास हुआ है, पर लेखक ने कथा-परम्परा का कहीं कोई उपेक्षण भी नहीं किया है। हां, इसी का परिणाम है कि उन कथा-प्रसंगों को जो आधुनिक लोकमानस को बहुत विश्वसनीय नहीं लगते, लेखक ने अपनी आधुनिक दृष्टिसम्पन्नता से विश्वसनीयता एवं स्पष्ट प्रासंगिकता प्रदान की है।

कोई हजार पृष्ठों की इस सुदीर्घ कृति में पौराणिक कृष्ण-कथा लेखकीय वैदग्ध्य के फलस्वरूप वैज्ञानिक संवेदनाओं से सहज सम्पृक्त है। डॉ. मिश्र के कृष्ण पारम्परिक स्थापनाओं के अनुसार देवत्व से नरत्व की ओर नहीं अपितु नरता से देवत्व और अन्ततः ईश्वरत्व की ओर अग्रसर होते हैं। नर में ही नारायणत्व का दर्शन सदा से डॉ. मिश्र की आक्षरिक साधना का उदात्त अभिप्रेत रहा है।

कहना पड़ेगा कि प्रस्तुत ग्रंथ में डॉ. मिश्र ने जिस आधुनिक या समसामयिक वचन-भंगिमा का प्रयोग किया है, वह अद्वितीय ही नहीं, अतिशय आह्लादक एवं रसप्लावित होने के कारण 'रसे सारश्चमत्कारः' इस काव्यशास्त्रीय उक्ति को पग-पग पर सिद्ध करती है। **— डॉ. कुणाल कुमार**

* * *

*** पराग (कविता-संग्रह) * कवि : नंदकिशोर सिंह; प्रकाशक : तूलिका प्रकाशन नयी दिल्ली; मूल्य : पैंतीस रुपये।**

**नंद किशोर सिंह उर्फ नानूजी छेटा** नागपुर के एक लोकप्रिय कवि हैं। प्रस्तुत संग्रह में गत दो दशकों में लिखी हुई इनकी कुछ कविताएं संकलित हैं। कुछ प्रमुख कविताएं ये हैं– 'भारत गणराज्य है', 'विरासत के वैभव' 'राजस्थान का सौन्दर्य आभूषण', 'प्रेमचन्द के प्रति', 'नवधा' भक्ति, 'अंतराल' इत्यादि।

स्पष्ट है ये कविताएं भिन्न भाव-भूमियों पर आधारित हैं और किसी वाद विशेष से बंधी नहीं हैं, किन्तु यह कहा जा सकता है कि 'पराग का' कवि ईमानदारी और सौन्दर्य-बोध के लिए स्मरणीय रहेगा।

कुल मिलाकर यह एक पठनीय कविता पुस्तक है। इसमें विचारों और छंदों के वैविध्य हैं और एक ताजगी मिलती है। कहीं-कहीं मुद्रण की अशुद्धियां हैं। छपाई सुन्दर है और आवरण पृष्ठ आकर्षक है।

**— डॉ. बच्चन पाठक 'सलिल'**

*** उधर मत जाना * कथाकार : चमेली जुगरान; मगध प्रकाशन, न्यू मॉडर्न शाहदरा, दिल्ली; मूल्य : ४५ रुपये।**

ख्यात रंगचित्रकर्मी चमेली जुगरान कहानियों के माध्यम से भी जीवन के विविध भावों को रंग देती रही हैं। विभिन्न पत्रिकाओं में छपीं उनकी कहानियों का पहला संग्रह है 'उधर मत जाना'। इन कहानियों में नारी भावनाओं का सीधा सरल लबरेज भावप्रवाह है। अनदेखे सत्य कैसे छोटी-छोटी बातों में दबे रहते हैं, उन सभी का अंकन इन बाईस कहानियों में मिलता है। 'रिश्ता शहर से', 'मौत स्वयंसेविका की' 'नई मां' 'डिनर पार्टी' आदि कहानियां विशेष प्रभावित करती हैं। रचनात्मक शिल्प की ऊबड़-खाबड़ खड़खड़ाहट से दूर ये कहानियां अपनी आहट की सुरीली तान कानों में उकेरती हैं।

* * *

*** काला सागर * कथाकार : तेजेन्द्र शर्मा; वाणीप्रकाशन, दरियागंज दिल्ली; मूल्य : ३० रुपये।**

कहानी विधा में कथ्य और वास्तविक जीवन-अंकन से अपना स्थान बना लेने वाले तेज कथाकारों में हैं तेजेन्द्र शर्मा। उनकी दस कहानियों का प्रथम संग्रह 'काला सागर' अभी-अभी आया है। विमान जीवन से जुड़े रहने के कारण तेजेन्द्र शर्मा के पास एक अनजाना जीवन अनुभव है। वे चाहते तो इसमें विमान, दुर्घटनाएं, हाइजैक, विमान जीवन [illegible] आदि से संबंधित और अधिक कहानियों का समावेश कर सकते थे। 'ग्रीन कार्ड', 'काला सागर', 'उड़ान' आदि कहानियां इसी जीवन की हैं। शेष कहानियां 'रिश्ते', 'दंश', 'ईंटों का जंगल', 'प्रतिबिंब', 'रेत के शिखर' आदि में पितापुत्र, शोध जीवन, दो भिन्न पीढ़ी के चिंतन- टकराव, मकान के होने न होने के छलावे और युवा जीवन की रोमानी देहरी के कांटों का गहन भावांकन है।

– रतीलाल शाहीन

* * *

*** 'छांव में जलते हुए' (कहानी-संग्रह) * लेखिका : निर्मला ठाकुर; प्रकाशक : सन्फलावर एसोसियेट्स १००, बी ब्लॉक, घातकीडीह, जमशेदपुर, बिहार; मूल्य : ३० रुपये।**

आठवें दशक में जिन लेखिकाओं ने राष्ट्रीय स्तर पर अपना नाम कहानी के क्षेत्र में स्थापित किया, उनमें जमशेदपुर की निर्मला ठाकुर उल्लेखनीय हैं।

'छांव में जलते हुए' इनकी कहानियों का प्रथम पुस्तकाकार संकलन है, यों विगत दो दशकों में इनकी कई कहानियां, रूपक और नाटक प्रकाशित हो चुके हैं।

इस संग्रह में कुल ग्यारह कहानियां हैं। निर्मला ठाकुर मध्य वर्ग का चित्रण अत्यंत कुशलता से करती हैं। भाव, भाषा और परिवेश का उनका वर्णन इतना सहज और स्वाभाविक होता है कि लगता है 'भोगे हुए यथार्थ की अभिव्यक्ति' यहां चरितार्थ होती

है। 'छांव में जलते हुए' की कहानियां जहां स्वस्थ मानसिकता का परिचय देती हैं, वहीं मानसिक विश्लेषण का अभाव भी नहीं खटकता।

एक उदाहरण देखिये— 'वह एक स्थिति में रोप दी गयी है, पौंधे की तरह। ऊपर रंग बदलता हुआ आसमान और पैरों के नीचे मौसम में बंटी हुई धरती'। पुस्तक का मुद्रण आकर्षक और निर्दोष है।

* * *

*** पं. गंगाप्रसाद अग्निहोत्री रचनावाली ***
**प्रकाशक : भारतीय भाषापीठ, नयी दिल्ली; प्राप्ति स्थान : अभिज्ञान प्रकाशन, ७८२, दीक्षितपुरा, जबलपुर, म.प्र.; मूल्य:दो सौ रुपये।**

पं. गंगाप्रसाद अग्निहोत्री ने भाषा और भावशिल्प में द्विवेदीयुगीन विचार प्रवाह से अनुप्राणित होकर रचनाधर्म के प्रति स्वयं को समर्पित कर दिया था। उनका युग आदर्शवाद, आचरण प्रवणता और चरित्र को जीवन में सर्वोच मानकर चलने वालों का युग था। उन्होंने जो कुछ भी लिखा है युग की आवश्यकता के अनुशीलन में ही। अग्निहोत्रीजी के चिंतन और भावभूमि का केनवास बहुत विस्तृत है, जो उनके लेखों-निबंधों से स्पष्ट होता है।

कहने की आवश्यकता नहीं कि पं. गंगाप्रसाद अग्निहोत्री ने 'सरस्वती' के प्रकाशन के पूर्व ही बाबू कार्तिकप्रसाद खत्री और बाबू श्यामसुंदर दास आदि मित्रों के परामर्शानुसार मराठी आदि से कुछ अनुवाद कर लोकार्पण हेतु प्रस्तुत किये थे। आगे अपने ३६-३७ वर्षीय लेखनक्रम में उन्होंने भाषा, साहित्य और समाज की युगीन आवश्यकताओं के अनुकूल बहुत सृजन किया।

प्रसन्नता का विषय है कि उनकी विशद सृजित-सामग्री में से कुछ चुनी हुई रचनाएं 'पं. गंगाप्रसाद अग्निहोत्री रचनावली' के रूप में हिन्दी जगत के सम्मुख प्रस्तुत हो रही हैं। इस श्रमसाध्य कार्य का निष्पादन जबलपुर के श्री हरिकृष्ण त्रिपाठी ने किया है जो शिक्षाविद् और साहित्यकार तो हैं ही अन्वेषी प्रकृति के रचनाधर्मी व्यक्ति भी हैं। ३५४ पृष्ठीय इस ग्रंथ में अग्निहोत्रीजी के अब अप्राप्य ४३ लेख-निबंध और १२ कविताएं संकलित हैं। अनेक दुर्लभ चित्रों, हस्तलेखों की प्रतिकृति आदि के साथ सुसज्जित पुस्तक में अग्निहोत्रीजी के जीवन और कृतित्व पर प्रकाश डालने वाले सम्पादकीय आलेख से संपादकीय पटुता स्पष्ट झलकती है।

**— डॉ. पूरनचंद श्रीवास्तव**

* * *

**चंदे की दरें** : एक वर्ष ६५ रु.; दो वर्ष : १२० रु.; तीन वर्ष : १७० रु.; पांच वर्ष : २९० रु.; दस वर्ष : ५६० रु. □ **विदेशों में समुद्री मार्ग से (एक वर्ष के लिए)** पाकिस्तान, श्रीलंका : १२० रु.; अन्य देश १८५ रु. □ **हवाई डाक से (एक वर्ष के लिए) प्रत्येक देश के लिए** : ३१० रु.; □ बम्बई से बाहर के चेक भेजने वाले ७ रु. अधिक भेजें □ चेक ड्राफ्ट 'भारतीय विद्या भवन' के नाम से भेजें।

हिंदी कहानी

# खिड़की में की लड़की

## सुखबीर

सीढ़ियां उतरते समय मेरे कदम अचानक रुक गये और मैं एकटक सामने देखने लगा, जहां सुहासिनी खिड़की में बैठी हुई बाहर सड़क की ओर देख रही थी। उसके चेहरे का आधा भाग ही दिखायी दे रहा था। सामने से देखने पर तो उसकी नाक कभी इस तरह तराशी हुई नहीं लगी थी। और उसके कपोल की गोलाई भी कैसे उभर आयी थी। मैली साड़ी थी उसकी, और रूखे बाल। खिड़की में बैठी वह फ्रेम में जड़ी हुई किसी फोटो की तरह लग रही थी।

मैं सीढ़ियों पर खड़ा उसे एकटक देखता रहा। वह मेरी ओर से ही नहीं, अपनी ओर से भी बेध्यान थी और घुटनों के गिर्द बाहें लपेटे बाहर की ओर ऐसे देख रही थी, जैसे किसी भी खास चीज को न देख रही हो। मेरे मन में आया कि धीरे-धीरे कदम रखता हुआ उसके पास जाऊं और उससे कहुं, 'सुहासिनी, तुम इतनी उदास क्यों हो? रोज यहां बैठी क्या देखती रहती हो? क्या सोचती रहती हो?...'

ऐसा करने के बारे में मैंने कई बार सोचा है।

तभी मुझे लगा, दो आंखें मुझे देख रही हैं। दूसरे ही क्षण दो और आंखें मुझे देख रही प्रतीत हुईं। मैं चौंका। हां, दो घरों में से दो-दो आंखें मुझे देख रही थीं। मैं वहां खड़ा न रह सका और जल्दी से सीढ़ियां उतरने लगा। जैसे कोई चोरी करता हुआ पहली बार पकड़ा गया हो, मेरे मन में अजीब-सी बेचैनी थी। मैं एक रेस्तोरां में जाकर बैठ गया।

कुछ देर के बाद मुझे लगा कि कुछ भी तो नहीं हुआ था। किसी ने देख लिया था, तो क्या हुआ! कोई क्या कह सकता है...?

मेरे सामने सुहासिनी आयी: एक सूखी हुई टहनी। क्या वह पानी की प्यासी थी?

पानी की प्यास!

मैं मेज पर पड़े कांच के गिलास को देख रहा था, जो ठंडे पानी से भरा हुआ था। और मैं सोच रहा था कि काश, सुहासिनी पानी को होंठ लगा ले। हां, मेरे दिल में भी हरियाली है, और पानी का गीत है। क्या सुहासिनी को कभी इसका ख्याल नहीं आया? कितनी बार तो मैं सीढ़ियों में खड़ा हुआ हूं। कितनी बार तो उसे एकटक देखता रहा हूं। पर सुहासिनी तो जैसे फ्रेम नें जड़ी हुई फोटो है — अटल और अडोल। एक सूखी हुई टहनी, जो अब और अधिक क्या सूख सकती है।

दूसरी मंजिल पर, सीढ़ियों के पास, सुहासिनी का घर था — उस पांच मंजिली इमारत के आम घरों जैसा घर। सुहासिनी अपने माता-पिता के साथ रहती थी। बहुत चिड़चिड़े स्वभाव के थे वे, जो हमेशा लड़ते-झगड़ते रहते। पड़ोसियों में से किसी से भी उनकी बनती नहीं थी। वे न किसी के घर जाते, न ही कोई उनके घर आता। एक एकाकीपन था उनके चारों ओर, जो शायद उनके अन्दर भी था। और वही एकाकीपन सुहासिनी के जीवन में भी था। उस एकाकीपन में वह खिड़की में से बाहर देखती रहती।

वैसे, जिस किस्म की वह इमारत थी, उसमें से बाहर देखने पर ही आदमी को सुख की सांस आती थी। बहुत पुरानी इमारत थी वह, जिसकी हर मंजिल पर छोटे-छोटे, दो-दो कमरों के, अट्ठाईस-अट्ठाईस घर थे। अधिकांश घरों की खिड़कियां बन्द रहतीं, और उनमें मद्धिम-सा अंधेरा और उमस भरा रहता। वही अन्धेरा और उमस सुहासिनी के जीवन में भी भरा हुआ था।

मुझे लगता था, सुहासिनी जैसे उस इमारत में कैद थी और उसके लिए निकलने का कोई रास्ता नहीं था। बाईस-तेईस वर्ष की उम्र थी उसकी, पर देखने में वह सत्ताईस- अट्ठाईस की लगती थी। आखिर उसे कोई रास्ता क्यों नहीं मिल रहा? मैं सोचता। एक रास्ता तो मेरी तरफ भी आता है, और बहुत सीधा रास्ता है वह। या क्या सुहासिनी वहीं रहना चाहती है, और वहीं सन्तुष्ट है? अपने घर में, और अपने घर से बाहर उस खिड़की में? आखिर उसका रहस्य क्या है?

सारी हमारत में सुहासिनी बड़ी रहस्यमयी लड़की समझी जाती थी। उसके परिवार के बारे में भी कुछ ऐसी बातें थीं, जिसका रहस्य कोई नहीं जानता था। सुहासिनी के बारे में अजीब-अजीब अफवाहें फैली हुई थीं, जिनमें से बहुत-सी गलत थीं। मैं सोचता कि बाकी की भी गलत ही होंगी। लोगों का कहना था कि बचपन में सुहासिनी एक बार घर से तीन दिन गायब रही थी और चौथे दिन अपने आप ही लौट आयी थी और फिर कई दिन तक घर से बाहर नहीं निकली थी। बहुतों का कहना था कि वह किसी

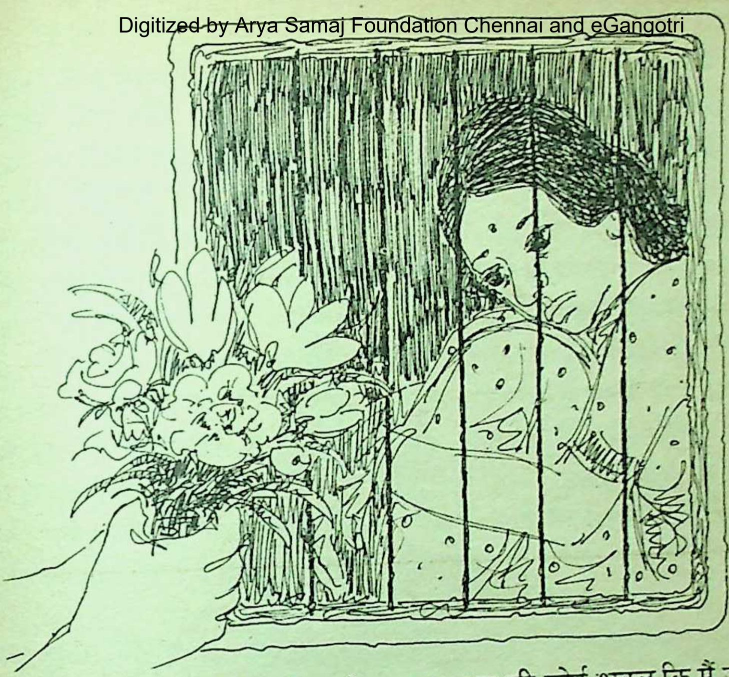

लम्बी बीमारी की रोगी  है। कई कहते कि वह नीम पागल है। कई कहते हैं कि उसके माता-पिता उसकी शादी इसलिए नहीं कर रहे हैं, क्योंकि दहेज देने की सामर्थ्य नहीं हैं।... मैं सोचता कि सुहासिनी कोई काम क्यों नहीं करती। बिना काम के समय कैसे बिताती है? लड़कियां फुर्सत के समय यूं ही सुई-धागा लेकर बैंठ जाती हैं। या कहीं नौकरी ही क्यों नहीं कर लेती? कहीं भी नौकरी मिल सकती है। मैं दिला सकता हूं नौकरी। बाहर निकलने पर जीवन नया रूप ले सकता है। बस, पानी की प्यास है।

सुहासिनी के लिए यह सहानुभूति थी या प्यार की कोई शक्ल कि मैं उसे भुला नहीं सकता था। उसकी वे आंखें! उसका वह चेहरा! उसका वह बैठने का अन्दाज! सब कुछ में ही आकर्षण था। और मैं सोचता कि सुहासिनी की जगह उस खिड़की में नहीं, बल्कि चारदीवारी में है – उस घर की चारदीवारी में, जिसमें मेरा जीवन बिखरा हुआ है। सुहासिनी उस बिखरे हुए जीवन को सम्भाल सकती है। उसे संभालने पर वह स्वयं भी संभल सकती है।

आखिर मेरा विवाह हो गया, तो कुछ ही समय के बाद मुझे लगा कि सुहासिनी के लिए मेरे दिल में सहानुभूति ही थी कि मैं उसे भूल नहीं सकता था। विवाह की

बदौलत मेरे जीवन के सूखे स्थल बन्जर बनने से बच गये। मेरा बिखरा हुआ जीवन सम्भल गया। घर के दोनों कमरे जैसे नये बन गये।

और फिर, एक दिन जब पत्नी ने बाजार से एक बढ़िया फूलदान लाकर दीवार पर टांगा और उसमें पानी डालकर मनीप्लांट की एक लम्बी-सी टहनी लगायी तो मुझे सुहासिनी पर बहुत तरस आया। वह मुझे बहुत ही अकेली लगी, जैसे अब सारी उम्र उस खिड़की की चौखट में ही जड़ी रहेगी।

एक बार फिर मेरे दिल में आया कि किसी दिन धीरे-धीरे कदम रखता हुआ सुहासिनी के पास जाऊं और उसे कहूं, 'सुहासिनी, तुम इतनी उदास क्यों हो? रोज यहां बैठी क्या देखती रहती हो? क्या सोचती रहती हो? देखो मेरी ओर, मैं कितना बदल गया हूं। कभी आकर मेरा घर देखो, तो तुम्हें खिड़की की यह चौखट तंग लगने लगेगी...।'

मैंने सोचा, पत्नी को कहूंगा कि सुहासिनी से बात करे। कभी उसे घर बुलाये। पत्नी के द्वारा ही मैं सुहासिनी के रहस्य को समझ सकता था, उसके एकाकीपन में झांक सकता था।

एक दिन मैंने पत्नी से सुहासिनी का जिक्र किया, तो उसे भी उसमें दिलचस्पी हुई। फिर, उसने एक-दो मौकों पर किसी बहाने उससे बात भी की। पर सुहासिनी अधिक खुल न सकी। जो इतने वर्ष अपने आप में बन्द रही थी, वह इतनी जल्दी कैसे खुल सकती थी?

दिन चढ़ते और बीत जाते। रातें सोतीं, तो पता नहीं कब सुबह हो जाती। मैं सोचता, मनुष्य के बदलने के साथ-साथ समय भी कैसे बदल जाता है। क्या कभी सुहासिनी के लिए भी समय बदलेगा? ऐसे दिन और ऐसी रातें क्या कभी सुहासिनी भी देखेगी?

सुहासिनी के साथ बिन बोले का यह सम्बन्ध ही तो था कि मैं अपनी खुशी में उसकी उदासी को और भी ज्यादा अनुभव करता था। मैं सोचता, क्या उसे मेरी खुशी का पता है? क्या वह जानती है कि मैं...

हां, वह जानती थी। मेरी पत्नी को देखकर और उसके साथ कुछ एक बातें करके उससे क्या कुछ छिपा रहा होगा? एक बार तो वह पत्नी के साथ, मेरी अनुपस्थिति में, कुछ समय के लिए घर भी आई थी।

मैं सुबह दफ्तर जाता, तो सीढ़ियां उतरते समय सुहासिनी को उसी प्रकार खिड़की में बैठे हुए देखता। शाम को लौटने पर भी उसे उसी प्रकार खिड़की में बैठे हुए देखता।

पर एक दिन जब मैं दफ्तर से आया, तो सुहासिनी खिड़की में नहीं थी। मुझे आश्चर्य हुआ। अगले दिन सुबह मैं दफ्तर जाने लगा, तो भी सुहासिनी खिड़की में नहीं थी। मुझे और भी

उत्कृष्ट मसाले बनविणारे
फक्त दोनच!

हे दोन कोण बुवा ? असा प्रश्न पडण्याचे कारण नाही. दोना पैकी पहिले तुम्ही स्वतः ! तुम्ही बनवलेला मसाला उत्कृष्ट असतो याबद्दल कुणीच शंका घेणार नाही. पण तुमच्यानंतर मात्र आमचा क्रमांक ! तुम्हाला मसाला बनवण्यास वेळ न झाल्यास बेडेकर मसाला त्याची उणीव भासू देणार नाही.

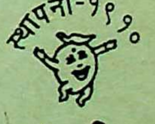

व्ही.पी. बेडेकर ॲन्ड सन्स प्रा.लि., मुंबई ४

B. Vasant
BEDEKAR'S
SAMBAR
POWDER
BEDEKAR
Garam
Masala
बेडेकर
मसाले
बेडेकर
अचार का
मसाला
BEDEKAR'S
MASALA SUPARI

आश्चर्य हुआ। आखिर दफ्तर से आने पर पत्नी से सुना कि सुहासिनी कल से ही घर से गायब थी। उसके गायब हो जाने के बारे में और भी कई बातों का पता लगा। सारी इमारत में ही सुहासिनी की चर्चा थी। लोग उसे बुरा-भला कह रहे थे। उनका कहना था कि वह किसी के साथ भाग गयी थी।

सुहासिनी पर मुझे तरस आ रहा था। पर मैं खुश भी था कि वह उस खिड़की की चौखट में से निकल गयी थी।

दो दिन बाद, एक लड़के के साथ सुहासिनी के भाग जाने की खबर पक्की हो गयी। कुछ स्त्रियों ने उस लड़के को देखा भी था। वह रोज सड़क पर खड़ा होकर खिड़की की ओर देखा करता था, जिसमें कि सुहासिनी बैठती थी। मेरे मन में उस लड़के को देखने की इच्छा हुई। भला कैसा होगा वह ? सुहासिनी उसे क्यों कर पसन्द आयी ? कहीं कोई गुण्डा ही न हो। क्या वह उससे विवाह कर लेगा...?

फिर, पता लगा कि उस लड़के ने सुहासिनी के साथ अदालत में जाकर विवाह कर लिया था। विवाह के बाद सुहासिनी अपने माता-पिता से मिलने आयी थी, तो उन्होंने उसे घर में पांव नहीं रखने दिया था।

सुनकर मुझे बहुत दुःख हुआ और सुहासिनी के बूढ़े बाप पर तरस भी आया, और गुस्सा भी। फिर, मुझे उन लोगों पर गुस्सा आया, जो रोज सुहासिनी के बारे में अजीब-अजीब बातें करते थे। कोई भी तो सुहासिनी के हक में नहीं था। कोई भी तो उसके विवाह की खुशी में शरीक नहीं था। और सुहासिनी कितनी अकेली थी!

मेरे अन्दर अजीब-सी बेचैनी थी। और मैं बार-बार सोच रहा था कि सुहासिनी कितनी अकेली थी।

एक दिन मैंने दफ्तर से लौटने पर कपड़े बदलने के बजाय पत्नी से कहा, 'जल्दी से तैयार हो जाओ, बाहर चलना है।'

पत्नी खुशी-खुशी तैयार होने लगी।

रास्ते में मैंने ताजा फूलों का एक बढ़िया गुलदस्ता खरीदा और टैक्सी पकड़ी। हम एक घर के सामने जाकर रुके। जब हम अन्दर गये, तो पत्नी सुहासिनी को देखकर हैरान रह गयी। सुहासिनी मुस्कराती हुई हमारी तरफ आ रही थी। पीछे-पीछे उसका पति भी आया।

मैंने गुलदस्ता सुहासिनी को देते हुए कहा, 'शादी चुपचाप ही करा ली। कम से कम हमें तो बताया होता।'

सुहासिनी मुस्करायी। 'मुझे क्या पता था कि आप -' उसने बात पूरी नहीं की।

वह गुलदस्ता पकड़े हुए बहुत सुन्दर लगी, और बहुत खुश। और मुझे लगा कि वह अकेली नहीं थी। उसके विवाह की खुशी में कोई शामिल हुआ था।

**— बी १९ सन एंड सी, वरसोवा रोड,**
**बम्बई - ६१**

# बूंदें

☐ लता शर्मा

आंखों में बाढ़ आयी हुई थी। लेकिन इस बाढ़ को देखने वाला कोई नहीं था। इस बाढ़ में किसी का कोई नुकसान नहीं हो रहा था। कहीं न चीखें थीं और न हाहाकार। हमदर्दी दिखाने भी कोई क्यों आता। मानव स्वभाव ही ऐसा है कि सहानुभूति मिलने पर टूटे बांध में सीमेंट लगने लगती है। हमदर्दी की चादर में बड़ा - सा बड़ा दर्द समेटा जा सकता है। लेकिन आज कोई नहीं है। आदमियों की भीड़ में भी कोई नहीं आ रहा है, पूछने के लिए कि आंसू क्यों? किसलिए? बाढ़ में बहुत - कुछ बह जाता है। गंदगी बह जाती है। मनुष्य के आंसुओं में भी बहुत - कुछ बह जाता है। विशेषकर औरत के आसुंओं में तो दर्द का दरिया बहता है। दर्द की इस नदी में आज सात बांध टूटे हैं। हर वर्ष का एक बांध।

सात साल पहले राधा की नौकरी लगी थी। नौकरी पाना और बांध बनाना दोनों एक समान लग रहे थे राधा को। बांध बंधते ही आसपास के इलाके में जिस तरह खुशियां भर जाती हैं, आशाएं जाग उठती हैं, वैसे ही घर-परिवार में राधा खुशियों का दीपक और आशाओं की बाती बन गयी थी। उसकी इज्जत को नयी ऊंचाई मिल गयी थी। मां जैसे बेटे के जन्म पर प्रसन्न होती है, वैसी ही प्रसन्न थी। कहती थी, मेरी राधा को अब किसी के सामने याचक नहीं बनना पड़ेगा। वो किसी के सामने हाथ नहीं फैलायेगी। यह तो सिर्फ राधा की मां ही जानती है कि उसने कितने कष्ट उठाकर उसे पढ़ाया।

सात साल पहले जब नयी-नयी नौकरी लगी थी तो राधा का इन्तजार रहता था। कब लौटकर आये वो दफ्तर से। आते ही उसे मिलती थी गरम-गरम चाय। भाई बहन कहते थे – थक गयी होगी। और इस एक वाक्य में पूरे दिन की थकान भाप बनकर उड़ जाती थी। सुबह दफ्तर जाते समय लंच का डिब्बा तैयार मिलता था। सिर में दर्द होने पर मां – बाप की चिंता, परेशानी और भागदौड़ देखी नहीं जाती

थी। इसलिए राधा बुखार आने पर भी नहीं कहती थी। हिदायतों की सूची स्टोर में रखे सामान से भी ज्यादा लम्बी होती थी। ठंडा खाना मत खाना, दवाई समय पर ले लेना...।

फिर दूसरा बांध। लड़की सयानी हो गयी है। विवाह के लिए वर तलाशे जाने लगे। ऐसा लगता था कि दुनिया में इनकी बेटी से अच्छी कोई लड़की है ही नहीं। लड़के देखने में हर तरह की सावधानी। कई लड़के देखे गये। जांचे गये। परखे गये। एक जगह लड़का देखा गया। घर-परिवार पसन्द आया। लड़के की मां ने अपने परिवार के बारे में कहा था — हमारे घर में तो काम करने वाले लगे हैं। कोई कमी नहीं है। बस, कभी-कभी थोड़ा-बहुत काम करना पड़ता है। वो भी इसलिए कि हाथ-पैर चलते रहें। स्वास्थ्य ठीक रहे। हम लोग तो इस बात में विश्वास करते हैं कि खाली बैठे रहने से बीमारियां आती हैं। बस और कोई कमी नहीं है। मां-बाप को और क्या चाहिये। सास का आश्वासन हमारे देश की महिला के लिए सबसे बड़ी धरोहर, उपहार या आशीर्वाद है। विवाह सम्पन्न हो गया।

तीसरा बांध। शादी के बाद प्रेम की नदी बह निकली। घूमने के लिए पहाड़ों पर चले गये। बहते हुए झरनों, ठंडी हवा के झोंको और गर्म-गर्म सांसो में पिघलते हुए बर्फ के गोल। लगा स्वर्ग सचमुच कश्मीर में ही है। वायदे, कभी इतंजार न करने देने की कसमें। जीवन-भर साथ निभाने से भी आगे के सपने —अगले जन्म में भी साथ रहेंगे। न जाने और क्या-क्या?

पहाड़ों से उतरकर आये और दफ्तर की जिन्दगी में फिर मिल गये। राधा दफ्तर से घर पहुंची तो सोच रही थी— गर्म चाय का प्याला मिलेगा। सास ननद पूछेंगी— दफ्तर के हालचाल। लेकिन ऐसा कुछ नहीं था। ननद के स्वर ने स्वागत किया— 'भाभी, हम तो आपके हाथ की चाय पीने के इंतजार में कब से बैठे हुए हैं।' राधा रसोई में पहुंच गयी और चाय की तैयारी करने लगी। उबलते हुए पानी को देख रही थी राधा। खोई हुई थी कि सास की आवाज ने चौंकाया— 'राधा, सब्जी तो तौरी की बनेगी। खड़ी-खड़ी तौरी भी काट लो और फिर आटा भी...।' राधा का दिमाग बिगड़ा हुआ टेबिल फैन बन गया। लगा उसे करंट के झटके लग रहे हैं। सड़ाक्-सड़ाक्-तड़ाक्-तड़ाक्।

रात को बिस्तर पर जाने के पहले तक राधा यह तय नहीं कर पा रही थी कि वो अपनी बात पति से कहे या न कहे। पतिदेव के पास राधा से बात करने के अलावा सभी से मिलने-जुलने और बातें करने के लिए समय था। दोस्तों के बीच गप्पें लगाना और स्वास्थ्य के लिए घूमने

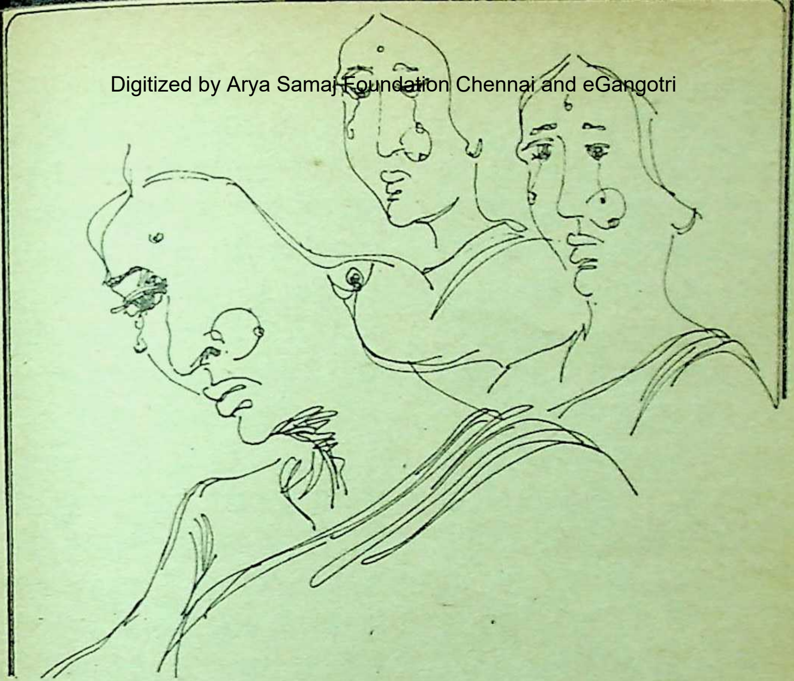

जाना उनकी दिनचर्या का महत्वपूर्ण अंग।

वेतन लेकर जब राधा घर पहुंची तो जैसे पूरा परिवार इतंजार कर रहा था। तरह-तरह के सवालों की बौछार सुनकर लगा कि कचहरी के कटघरे में खड़ी है और उसे शक की निगाह से देखा जा रहा है। 'बस, इतने ही रुपये? कोई उसकी बात समझने को तैयार ही नहीं था कि जी. पी. एफ. सी. जी. एच एस, बीमा, कैंटीन का बिल भी देना होता है।

सास का सवेरा रामायण की चौपाइयों और 'पति परमेश्वर, सास-ससुर की सेवा से स्वर्ग मिलता है' के उपदेशों से शुरू होता है। पांच बजे ही मंदिर की आरती की तरह सास के एक से प्रवचन सुनने को मिलते। घड़ी ठीक समय बताने में गलती कर सकती थी, लेकिन सास नहीं। नियम यह था कि सवेरे की पहली चाय बहू बनायेगी। चाय बनाकर सास-ससुर को उनके पलंग पर देने जायेगी। फिर ननद के नखरे सहेगी और तब तक उसके कमरे में खड़ी रहेगी जब तक वो उठ नहीं जायेगी। इतने में अगर चाय ठंडी हो गयी तो फिर से बनाकर लायेगी....। 'रसोई में तो राधा का कोई मुकाबला नहीं। क्या स्वाद है इसके हाथ में। जब से राधा आयी है हमारे घर में तब से किसी को किसी और के हाथ का भोजन अच्छा नहीं लगता।' तारीफ की चार बातें तोता-रटन की तरह की जाती थीं।

एक और बांध । नेहा का जन्म हुआ । राधा अपने बच्चे की देखभाल में व्यस्त रहने लगी । उसकी जिम्मेदारी बढ़ गयी । रात-रात भर जागना पड़ता था उसे घर और दफ्तर के काम में कोई कमी नहीं आयी । ऊपर से यह कि किसी से यह नहीं कहा जा सकता कि– थक गये हैं । थकान का कड़ुवा घूंट भी पी लेना पड़ता था । अब बातें कोड़ा बनती जा रही थीं । 'तुम अकेली तो नहीं हो जो नौकरी करती हो । दुनिया में हजारों औरतें हैं जो घर-परिवार भी चलाती हैं और बच्चे भी पालती हैं । फिर तुम कोई हम पर अहसान तो कर नहीं रहीं । तुम तो नौकरी करती हुई आयी हो । तुम्हारे मां-बाप ने तुम्हें नौकरी करायी । अपने लालच के लिए । शादी के लिए पैसा जोड़ने, अच्छा पति और अच्छा घर ढूंढने के लिए ।' पीठ के साथ शरीर का हर अंग इन वाक्यों की मार से सूज गया था । मन की तो बात कही भी नहीं जा सकती । भीतरी मन की तकलीफ को जानने वाला अगर कोई यंत्र बना होता तो उसका आखिरी बिंदु भी कभी का टूट चुका होता । 'हमने तो कभी अपनी बेटियों को नौकरी कराई नहीं । मेरे मां-बाप ने नौकरी कराकर गलती की थी ।'

अब तो मैं भी आपकी बेटी हूं । आप नौकरी छुड़वा कर उस गलती को ठीक कर दीजिये ? मेरी बात और आवाज पता नहीं कहां खो गयी । उस दिन मुझे लगा किसी को सुनायी नहीं देता ।

– 'बहू, जब से तुम आयी हो, मेरे बेटे का स्वास्थ्य गिरता जा रहा है । अरी देख तो, तेरे आने के पहले कितना सुन्दर लगता था मेरा बेटा । तू ख्याल नहीं रखती इसका ।' और बेटे पर सात साल के बच्चे की तरह प्यार की हांडी उलटा दी जाती । 'मैं तो आज से कसम खा रही हूं । कभी नौकरी करने वाली बहू नहीं लाऊंगी । न घर की न घाट की । न घर की देखभाल ठीक से करे, न घर का काम करे और न पति की देखभाल ही करे ।' सवेरे पांच बजे से रात ११ बजे तक बिना विश्राम के काम करने के बाद भी यही सुनने को मिलता था राधा को कि काम नहीं करती । उसके मन में आता था कि वो पूछे– आखिर काम की परिभाषा क्या है ?

राधा को डाक्टर ने देखा और सलाह दी कि आराम करो । काम मत करो । सास ने कहा– 'डाक्टर साहब, हमारे घर में तो नौकर लगे हैं, यह तो काम करती ही नहीं । इसके पास तो सिर्फ दो काम हैं । बच्चे की खुशामद और दफ्तर की नौकरी । हमारे जमाने में औरतें घर में आटा पीसती थीं । पानी भरकर लाती थीं, जानवरों को चारा डालती थीं । ये भी कहां कोई काम हुआ । आप तो इसे सलाह दो कि काम किया करे । जितना काम करेगी । उतना ही ठीक रहेगी ।'

पतिदेव भी वही दोहराते थे जो सास

बोलती थी। चार नयी बातें अपनी तरफ से जोड़कर बोलने में वे अपनी शान समझते थे।

नेहा बड़ी हो गयी। प्यारी-सी बच्ची। हमेशा हंसती रहती। स्कूल जाने लगी तो राधा ने एक दिन पतिदेव से कहा– 'आप नेहा को पढ़ा दिया करो।' वे सहमत हो गये। पतिदेव नेहा को पढ़ा रहे थे कि सास आ गयी। 'अरे तू क्या कर रहा है? हारा-थका आया है आराम कर। आते ही बच्ची को पढ़ाने में लग गया। चल उठ।' नेहा अपने पिता की ओर टुकुर-टुकुर आंखों से देखती रह गयी। नेहा जाकर अपनी मां से लिपट गयी। राधा उस समय बर्तन साफ कर रही थी। सास रसोई में आयी और बोली– 'तूने अपनी लड़की को भी बिगाड़ दिया है। चल बैठ जा तू भी और कप-प्याली साफ कर।'

राधा रात भर रोती रही। आसमान, चांद, तारे, पेड़, देखते रहे। पति खर्राटे भर रहे थे। राधा आत्मग्लानि से भर उठी। मानसिक उत्पीड़न के दर्द से वो कराह रही थी, लेकिन उसके दर्द की आवाज जंगल में खो रही थी।

आंसुओं से भरा बांध कब अपने तटबंध तोड़ेगा? बाहर की बारिश में तो कई पक्के बांध टूट जाते हैं। और बह जाते हैं कितने ही लोग। मैं नही चाहती बांध टूटे। बस इतना ही चाहती हूं कि रेगिस्तान में फुहार का सुख मुझे मिले। भले ही यह बरसात ख्याली हो, सपने में हो, लेकिन बरसात हो जरूर। मेरे भीतर जो कुछ भरा है वो आसूं बनकर निकल तो रहा है। लेकिन उसमें शीतलता नहीं है। आग है। शायद आंसू इसीलिए गर्म होते हैं कि वे भीतर की आग से छूकर बाहर आते हैं। मैं डरती हूं कि कभी भीतर की आग, बाहर न आ जाये। लेकिन कब तक भीतर की बात से आग पर पानी उबाल कर चाय बनाती रहूंगी। भाप भी तो ठंडी होती है। जम जाती है। बर्फ बन जाती है। क्या बिना विद्रोह के मुझे सहानुभूति भी नहीं मिलेगी? क्या मेरे पति को कभी याद नहीं आयेंगे वे क्षण, वे वायदे, वे कसमें जो प्रकृति के सानिध्य में, पहाड़ों, झरनों और देवदारु के वृक्षों को साक्षी मानकर गुजारे थे। क्यों ईश्वर ने सिर्फ औरत को बनाया है अन्याय सहने के लिए?

– मैं अन्याय नहीं सहूंगी। यह कायरता है। महात्मा गांधी का यह वाक्य मेरे मस्तिष्क में कौंधता है। – अन्याय करने वाले से अन्याय सहने वाला अधिक दोषी है– मुझे अंधेरे में एक रोशनी दिखती है।

राधा ने सात सालों की यादों की गठरी बांधी और सो गयी। उसे इतनी गहरी नींद कभी नहीं आयी थी। पानी की बूंदों ने नहीं, बाल्टी के पानी की बौछार ने उसे जगाया।

**– 'अभिषेक' ६/२२२, सुन्दर विहार,**
**दिल्ली - ११० ०४१**

□

# खादी और ग्रामोद्योग आयोग

## ग्राम-विकास का प्रमुख तथा प्रभावी संगठन

खादी और ग्रामोद्योग आयोग द्वारा निम्नलिखित कार्यकलापों के लिए सहायता दी जाती है।

१. कारीगरों, पर्यवेक्षकों और प्रबन्धकों का प्रशिक्षण ।
२. औजारों उपकरणों तथा मशीनों के निर्माण तथा आपूर्तिकी व्यवस्था ।
३. गोदामों व कार्यशालाओं के निर्माण हेतु ऋण की सहायता ।
४. कच्चे माल की व्यवस्था व उसे खरीदने हेतु ऋण की सहायता ।
५. खादी एवं ग्रामोद्योगी वस्तुओं के उत्पादन तथा बिक्री हेतु कार्यकारी पूंजी ।
६. बिक्री केन्द्र खोलने हेतु सहायता ।
७. कार्यान्वयी अभिकरणों को पूंजी निर्माण ऋण ।
८. उत्पादन तकनीकों एवं उपकरणों पर अनुसंधान ।

खादी और ग्रामोद्योग आयोग ४ प्रतिशत की रियायती दर पर ऋण उपलब्ध करता है ।

अधिक जानकारी के लिए सम्पर्क करें :

**निदेशक (प्रचार)**
खादी और ग्रामोद्योग आयोग, "ग्रामोदय" इरला रोड,
विले पार्ले (पश्चिम) बम्बई - ४०० ०५६.

आरोग्य

# परमोपयोगी फल अनार

□ अशोक 'मनोरम'

हमारे स्वास्थ्य के लिए सबसे निर्दोष पौष्टिक भोजन फलाहार है। फल स्वादिष्ट भोजन तो है ही, साथ ही स्वास्थ्यप्रद तत्वों से परिपूर्ण भी है। फलों में शरीर के पोषण के लिए अनेक ऐसे पौष्टिक द्रव्य उपस्थित रहते हैं, जिनसे समस्त शारीरिक अंग-प्रत्यंग के कार्य सुगमता से पूर्ण होते रहते हैं। फलों का रस शरीर में शीघ्र ही पच कर रक्त में परिवर्तित हो जाता है। इसके अतिरिक्त फल-सेवन से त्वचान्तर्गत मल स्वच्छ होकर शरीर को कान्तिमय बनाता है। उन्हीं स्वास्थ्य प्रदायक फलों में से एक अनार भी है, जो हमारे लिए परमोपयोगी प्राकृतिक श्रेष्ठतम खाद्य है।

हमारे देश में अनार कई स्थानों में उत्पन्न होता है। प्रायः उद्यानों में इसके वृक्ष लगाये जाते हैं। उत्तर प्रदेश के एटा, मैनपुरी, शाहजहांपुर, बरेली, मुरादाबाद, कानपुर और इलाहाबाद आदि जिलों में अनार खूब होता है। काबुल और कंधार का अनार अत्यधिक लोकप्रिय है। बाजार में इन्हीं की बिक्री अधिक होती है।

अनार का वृक्ष दस-बारह हाथ ऊंचा होता है। यह वृक्ष अपने जीवनकाल में बढ़ते-बढ़ते आम, पीपल और वट वृक्षों की भांति अधिक ऊंचाई तक नहीं पहुंच पाता। इसके तने और टहनियां भी अधिक मोटी नहीं होतीं। इस वृक्ष के पत्ते लम्बे-लम्बे और हरे रंग के होते हैं। अनार के पुष्प देखने में बड़े ही सुन्दर और मनोहर लगते हैं, रंग में सिन्दूरी और बनाव में तुरहीबाजे जैसे दिखते है: जब पुष्प पूर्ण रूप से विकसित होने को होता है, उस समय उसकी कमनीयता और भी अधिक मनमोहक एवं आकर्षक हो जाती है।

अनार के वृक्ष दो प्रकार के होते हैं: नर जाति और मादा जाति। दोनों एक-दूसरे से भिन्नता रखते हैं। मादा जाति वाले वृक्ष में फूल छोटे-छोटे होते हैं और फल बड़े-बड़े आते हैं। इसके विपरीत नर जाति वाले वृक्ष में फूल तो बड़े-बड़े लगते हैं परन्तु फल बिल्कुल लगते ही नहीं। नर जाति वाला वृक्ष फलदार नहीं होता परन्तु मादा जाति का वृक्ष फल उत्पन्न करता है। इसका फल गोल होता है। इस फल का छिलका लाल एवं श्वेत रंग का होता है, जो कड़ा एवं मजबूत होता है। परिणामत: फल का आन्तरिक भाग बाहरी छोटे-मोटे आक्रमणों से सुरक्षित रहता है।

अनार के फल के भीतर बीज होते हैं, जिन्हें

खाया जाता है। ये बीज लाल और गुलाबी रंग के होते हैं। बीजों की शक्ल ठीक दांतों जैसी होती है। इन बीजों को रस से पृथक करने पर अंदर बहुत से चावल जैसे छोटे-छोटे बीज मिलते हैं।

अनार के फल स्वाद में तीन प्रकार के होते हैं। मधुर व खट्टा-मीठा और केवल खट्टा। भारतीय चिकित्सा-विज्ञान आयुर्वेद के मतानुसार मीठा अनार वात, पित्त और कफ तीनों दोषों का विनाश करता है। पचने में हल्का है और शरीर में वीर्य-वर्धन करता है। बल और बुद्धि तथा स्मरणशक्ति को बढ़ाता है। साथ ही प्यास, दाह, ज्वर, हृदयरोग और गले के रोगों में लाभकारी है। मुख से निकलने वाली दुर्गन्ध को भी नष्ट करता है। खट्टा-मीठा अनार जठराग्नि को प्रदीप्त करता है और भोजन में रुचि उत्पन्न करता है, किंचित पित्तकारक एवं हल्का भी है। केवल खट्टा अनार पित्त को उत्पन्न करनेवाला तथा बात-कफ नाशक है।

पाश्चात्य वैज्ञानिकों ने भी अपने विश्लेषण और अनुसंधान के आधार पर अनार की भूरि-भूरि प्रशंसा की है। अनार का रस संग्रहणी में बहुत फायदेमन्द है। अपने विद्यार्थी-काल की समाप्ति के पश्चात् जब मैं अस्पताल में हाउस सर्जन एवं हाउस फिजीशियन के पद पर नियुक्त हुआ, तो मैंने अस्पताल के अंतरंग विभाग एवं बहिरंग विभाग में अनेक संग्रहणी रोग से पीड़ित रोगियों को अनुपान एवं पथ्य के रूप में अनार लेने की सलाह दी। नतीजा यह हुआ कि कई रोगियों ने स्वास्थ्य-लाभ किया। यह मेरे कई आचार्यों का भी अपना अनुभव है कि अनार का रस आंतों की क्रिया को बढ़ा कर ग्रहणी को अपना कार्य सुचारु रूप से करने में समर्थ बनाता है। खूनी दस्तों (रक्तातिसार) से पीड़ित बच्चों को मैं सर्वदा अनार का रस ही पीने का आदेश देता हूं। शत-प्रतिशत बच्चे इस पथ्य से आरोग्य हुए हैं।

अनार का रस ज्वर-हर भी है। यह ज्वर के वेग को बढ़ाता नहीं, अपितु कम करता है। उदर-कृमि-नाश के लिए अनार की छाल का काढ़ा अत्यन्तोपयोगी है। इसे बनाने की विधि इस प्रकार है कि दो तोला अनार की छाल कूट-पीस कर जौकुट कर लें और उसे सोलह गुने पानी में डाल कर किसी बरतन में आग पर औटायें। धीरे-धीरे मन्द अग्नि से पकाते रहें और जब चतुर्थांश द्रव शेष रह जाये तभी चूल्हे से नीचे उतार कर छान लें और फिर उसमें छह मासा सैंधा नमक मिलाकर कृमि रोग से पीड़ित मनुष्य को पिलायें। एक सप्ताह में रोगी को आरोग्य-लाभ करते देखा है।

अनार का प्रयोग करने से मल - बिबन्ध रोग से त्राण मिल जाता है। अनार खाने से एक विशेष प्रकार का अम्ल मिश्रित हो जाता है, जिससे मूत्र खुल कर आता है और शरीर के विषैले पदार्थ बाहर निकल जाते हैं।

अनार उन रोगियों को जिन्हें मन्दाग्नि रहती है बहुत फायदा करता है। बच्चों के अतिसार में अनार की कोपलें पीस कर पेस्ट बना लें और उसे उचित मात्रा में शहद के

साथ खिलायें तो दस्त बन्द हो जाते हैं। यह योग दिन भर में चार बार देना पड़ता है और तीन-तीन घंटे बाद खुराक देना उचित है।

ग्रीष्म ऋतु में अनार का रस निकाल कर उसमें चौगुना पानी और यथा मात्रा में चीनी मिला कर पीने से शरीर की गर्मी हट जाती है। यह शरबत शरीर के लिए पौष्टिक भी है।

अनार के फल छाया में सुखाकर बारीक करके मंजन की तरह मलने से खून बन्द और दांत मजबूत होते हैं।

मीठे अनार के दानों का रस एक छटांक रात को लोहे के बर्तन में छत पर रख दें सुबह थोड़ी कुंजा मिश्री मिलाकर १५-२० दिन खायें बरकान, बमलबाय ठीक होगा। परहेज गर्म चीज का करें।

मीठे अनार का छिलका दो तोला, नमक लाहौरी ३ माशा बारीक करके पानी में एक-एक माशे की गोलियां बनायें। दिन में तीन बार चूसें। खटाई का परहेज करें। २-२ गोली चूसें। छः माशा अनार का छिलका थोड़ा दूध में उबालकर पीने से काली खांसी में आराम मिलता है।

अनार का छिलका बारीक करके चार माशे ताजे पानी के साथ दिन में दो बार खाने से मसाने की गर्मी और पेशाब का बार-बार आना ठीक होता है। दस दिन खायें। परहेज : चावल न खायें।

कंधारी अनार का छिलका बारीक कर लें। तीन माशे सुबह-शाम पानी के साथ खाने से स्वप्न रोग ठीक होता है। दस दिन खटाई से परहेज करें। रात को दूध न पियें।

मीठे अनार का छिलका पानी में उबाल कर गरारे करने से मुंह की बदबू दूर हो जाती है।

**— नवरतनपुर, पोस्टल पार्क,**
**चिरैयाटांड़, पटना - ८०० ००१**

□

# ऐसे थे राजर्षि

उन दिनों राशन का बड़ा कन्ट्रोल था। राशन कार्ड पर सीमित गेहूं मिलता था। श्री पुरुषोत्तम दास टंडन के घर में अनेक आने-जाने वालों का तांता लगा रहता। उतने राशन से काम न चलता। अतएव वे ज्वार-बाजरा जैसे खुले बाजार में मिलने वाले सस्ते अनाज लेकर काम चलाते।

एक बार कई बड़े नेता और अफसर उनके मेहमान थे। सभी को ज्वार-बाजरे की रोटी परोसी गयी। उन्हें चकित देखकर टंडनजी ने स्वयं कहा, 'ब्लैक का अनैतिक तरीका अपना कर आप लोगों को गेहूं खिलाने की अपेक्षा ईमानदारी ने यही उपाय सुझाया जो अभ्यस्त भोजन के रूप में आपके सामने है।'

**— उदय सोले**

* * *

हिंदी कहानी

# घोंसला

□ नरेशचन्द्र 'नरेश'

मेरे घर के सामने खिड़कियों पर फैला लम्बी-लम्बी बेलवाला पत्तियों वाला हरा-भरा मनीप्लांट मुझे बड़ा सुख पहुंचाता है। मनीप्लांट घर की खूबसूरती बढ़ाता है... साथ ही उसकी हरियाली आंखों को सकून देती है। कहते हैं– मनीप्लांट जितना अधिक फैलता है उतना धन देता है। पर अभी तक मेरे साथ ऐसा कुछ नहीं हुआ। मनीप्लांट का फैलाव देखते हुए मेरे पास बहुत धन होना चाहिये। पर नहीं है। हां, एक बात जरूर मैंने महसूस की, कि यदि प्लांट की पत्तियां सूखती हैं तो रुपये-पैसों की तंगी आती है या अधिक रुपये खर्च करने होते हैं। पर इसे भी मैं संयोग ही मानता हूं।

इधर एक गौरैया चिड़िया के जोड़े ने मनीप्लांट के बीच बेलाओं के सहारे तिनकों से घोंसला बनाना शुरू किया। न जाने क्यों, मुझे चिड़िया के द्वारा घोंसला बनाना अच्छा न लगा। कहीं और खिड़की पर, आले में या फोटो-फ्रेम के पीछे चिड़िया घोंसला बनाती तो मुझे कोई एतराज न होता। पर मैं मनीप्लांट के ऊपर घोंसला बनाना पसंद नहीं कर पा रहा हूं...।

मैंने मनीप्लांट पर बने घोंसले को निकाल कर दूर फेंक दिया, यह सोचकर कि अभी अंडे नहीं दिये हैं और आगे चिड़िया घोंसला नहीं बनायेगी। पर घोंसला निकाल कर फेंकने के बाद चिड़िया ने फिर तिनके ला-लाकर घोंसला बनाने का प्रयास शुरू किया।

शाम को ड्यूटी से लौटा तो छोटा-सा घोंसला फिर तैयार मिला। मैंने फिर घोंसला निकाल कर फेंक दिया।

चिड़िया पुनः अपना घर उजड़ने से मनीप्लांट के आसपास चीं-चीं कर मंडराती रही। मैंने सोचा, चिड़िया हार मान गयी। अब घोंसला नहीं बनायेगी। लेकिन शाम होने तक पुनः घोंसला तैयार मिला। इस बार मैंने निर्णय लिया कि चिड़िया को सम्पूर्ण घोंसला बनाने दूंगा। और जैसे ही उन दोनों ने अपना घोंसला पूर्ण किया, मैंने घोंसले को बिना तोड़े, उठाकर, एक सुरक्षित स्थान पर जमा दिया। सोचा कि अब चिड़िया को दूसरा

घोंसला नहीं बनाना पड़ेगा और वह उसमें अंडे देगी।

अब अंडे देना तो दूर.... उस जोड़े को मेरा दिया स्थान पसंद ही नहीं आया। दोनों ने घोंसले की देखा तक ही नहीं। छुआ तक ही नहीं। तो उपयोग करना दूर की बात है। अब वे दोनों पुनः दूसरे घास-फूस के तिनके लाकर नया घोंसला बनाने लगे। फिर मनीप्लांट को बरबाद करने में जुट गये। इस बार मैं यह सह न सका, और मुझे बहुत गुस्सा आया। मैंने गुस्से में दोनों घोंसलों को निकाल कर बहुत दूर फेंक दिया ताकि वे उन घोंसलों के तिनके भी न ला सकें।

सुबह सोकर उठा। अखबार पढ़ने लगा। एक जगह खबर थी— शहर को खूबसूरत बनाने को अतिक्रमण हटाये गये। झुग्गी-झोपड़ियां उजड़ीं। बरसात में भीगते गरीबों को सिर छुपाने की जगह नहीं। खबर पढ़ कर मुझे अपना खूबसूरत मनीप्लांट याद आ गया। मनीप्लांट की वजह से मेरा घर बहुत ही सुंदर लगता है। मैंने बाहर झांका तो देखा— गौरैया जोड़ा फिर अपना घोंसला बनाने में सक्रिय मिला। इच्छा हुई घोंसला पुनः उठा कर फेंक दूं। मेरे मनीप्लांट की, मेरे घर की खूबसूरती बरबाद कर रहा है। लेकिन मेरे मन में अखबार की खबर अपना घर बना चुकी है। और उस घर को मैं अपने मन का घोंसला पा रहा हूं। जिसे मैं उजाड़ कर दुःखी नहीं होना चाहता हूं। मेरे मन के

घोंसले में अब जो चेहरे हैं... वे उन गरीबों के हैं जो बरसात में उनका घोंसला उजड़ जाने से भटक रहे हैं।

और मैं अपने घर के सामने मनीप्लांट पर लगा चिड़िया का घोंसला निकाल कर फेंक नहीं पा रहा हूं। मुझे अपने घर की और मनीप्लांट की खूबसूरती बरबाद होती नजर आ रही है... साथ ही यह भी देख रहा हूं कि तिनके इधर-उधर फर्श पर बिखर रहे हैं... बिखरे पड़े हैं। बार-बार सफाई के बाद भी आगे ऐसी ही स्थिति रहनी है– यह भी मैं जानता हूं। और यह भी जानता हूं कि यदि मैं घोंसला उठाकर बाहर फेंकता हूं तो गौरैया फिर घोंसला बनायेगी ही। आखिर उसे भी तो अपना घर चाहिये। जहां वह रह सके। बच्चे दे सके। उसका अपना परिवार भी बढ़े। उसका अपना अस्तित्व बना रहे इस दुनिया में। उसे बदलते मौसम में इधर-उधर भटकना न पड़े। और फिर यदि यह तोड़ने-बनाने का सिलसिला चलता रहा तो चिड़िया के अंडे देने का समय भी आ जायेगा तो...

... कितनी तकलीफ हुई मेरी पत्नी को। प्रसवपीड़ा घर पर शुरू हुई थी और समय पर गाड़ी का इंतजाम न हो पाने पर अस्पताल पहुंचने में देरी हुई और बच्चा गाड़ी में ही हो गया था। यह सोच, मैं कांप उठता हूं। क्या मेरे इस घोंसला उजाड़ने के प्रयास से कहीं गौरैया को अंडे देने का ठिकाना न मिला तो?

'न मिले, न भी मिले तो फर्क क्या पड़ेगा? गौरैया का जीवन कोई मायने रखता है? लोग तो बकरे, गायें और न जाने क्या-क्या काट-मार डालते हैं और खा जाते हैं। पर फर्क क्या पड़ता है। सब अविरल चलता रहता है। साम्प्रदायिक दंगे होते हैं... देश से देश आपस में लड़ते हैं... हजारों-लाखों लोग मौत के घाट उतार दिये जाते हैं... पर क्या होता है? तो मैं गौरैया के लिए दुःखी क्यों होऊं। उसका घोंसला नहीं बना और वह अंडे नहीं दे पायी तो क्या होगा? कोई पहाड़ तो नहीं टूटेगा। पत्नी की बात और थी। झोपड़ियां जलाने-उजाड़ने वालों की बात और है। सब चलता है दुनिया में।'

...मेरे भीतर छुपा शैतान मुझसे कहता है और मैं सब भूल जाता हूं। मैं स्वयं को तैयार करने लगता हूं यह सोचकर कि अपना घर देखो। स्वयं को देखो। गौरैया का घोंसला उजाड़ डालो।

मैं पुनः स्टूल पर खड़ा होता हूं। और जैसे ही हाथ बढ़ाता हूं... तो देखता हूं– घोंसले में चिड़िया के अंडे... छोटे-छोटे अंडे चांद से चमक रहे हैं...। मेरे विचारों को लकवा लग जाता है।

और इसके पहले कि मैं घोंसला न तोड़ने वाला अपना हाथ खींचूं, मैं संतुलन खो देता हूं और नीचे धड़ाम से आ गिरता हूं। शायद यह मेरे किये की सजा थी...।

**– सी १८७, म.प्र. वि.मं.**
**कोरबा - ४९४ ४५१**

# दोहे

चलते के सौ पंथ है, ठांव रुकत की एक ।
ज्ञान, लक्ष्य इंगित करे, भटकावे अविवेक ।।

क्यों छोड़ै सत पंथ को, देखि जगत-व्यवधान ।
अपनी किरणों से अलग, सूर्य होय निष्प्रान ।।

कैसी बस्ती आपकी ? रहैं सबहि जन पास ।
किन्तु मनहि मन में करैं, दूरी का आभास ।।

लाई है किस मोड़ पर, युग-मानव की चाल ।
ताकै लक्ष्य निराश ह्वे, पत्थर करैं सवाल ।।

कोई दर्पन-दृष्टि से, देखै अपनी ओर ।
पावै दोष, विकार सब, पकड़ै मन के चोर ।।

समय न राखै जगत में, काहू का अभिमान ।
वाण सदृश व्यक्तित्व भी, होवै धनुष समान ।।

फूल खिलन की कौन ऋतु? सबसे पूछै कोय ।
वही प्रश्न वासन्त में, जो पतझड़ में होय ।।

रूप-किरन की, ध्यान में, कुछ ऐसी छवि होय ।
अग्नि-बेल ज्यों देह से, आकर लिपटै कोय ।।

जीवन ज्यों घर कांच का, कब तक कोइ संजोय ।
पड़ै काल-पत्थर जबहि, चूर-चूर तब होय ।।

प्रेम-धर्म, सत धर्म की, छवि अति धूमिल होय ।
मन्दिर-मस्जिद के दिये, जब घर फूंकै कोय ।।

**— डॉ. अब्दुल अज़ीज 'अर्चन'**
**एस/एस, डी.टी.ओ, रायबरेली, उ.प्र.**

□

# तपःपूत ऋषि पंडित जनार्दन भट्ट

□ प्रोफेसर कृष्णदत्त वाजपेयी

एक सौ एक वर्ष का दीर्घ आयुष्य पाकर जनार्दन भट्टजी दिवंगत हो गये। केंद्रीय पुरातत्व विभाग में जान मार्शल के समय भट्टजी ने कार्य किया था और अपनी प्रतिभा से उन्होंने अनेक कीर्तिमान स्थापित किये थे। भारतीयता, संस्कृत और हिंदी के प्रति वे आरंभ से ही समर्पित थे। हिंदी के आरंभिक उन्नायकों में पंडित बालकृष्ण भट्ट का नाम स्मरणीय है। उन्हीं के पुत्र जनार्दनजी ने अपने विद्वान् पिता से इतिहास और साहित्य का ज्ञान प्राप्त किया। फिर उसे वे जीवन भर बढ़ाते गये। वर्तमान शताब्दी के आरंभिक वर्षों में हिंदी के प्रति शासन की घोर उपेक्षा थी। उसकी परवाह न कर जनार्दनजी ने हिंदी में 'अशोक के धर्मलेख' पुस्तक तैयार की और उसे १९२३ में प्रकाशित कराया। यह पुस्तक बहुत समय तक विश्वविद्यालयों की उच्च कक्षाओं में पाठ्यक्रम में रही। १९४० में जब मैं काशी विश्वविद्यालय में एम.ए. का छात्र हुआ तब यही पुस्तक मौर्य सम्राट अशोक के अभिलेखों के लिए मेरा और मेरे साथियों का संबल बनी। उनका दूसरा ग्रंथ 'बुद्धकालीन भारत' भी छात्रों के लिए बहुत उपयोगी सिद्ध हुआ।

मेरा यह सौभाग्य था कि पिछले वर्षों में भट्टजी से मिलने के कई अवसर मुझे मिले। उनके संबंधी श्री चंद्रधर त्रिपाठी तथा डॉ. अरुणा त्रिपाठी के कारण ही यह संभव हो सका। भट्टजी की असीम सहृदयता से मैं बहुत प्रभावित हुआ। अपने विविध रोचक संस्मरणों से वे हमारा ज्ञानवर्धन करते थे। अध्यापक के रूप में भट्टजी ने अनेक स्थानों पर कार्य किया। उनकी लोकप्रियता का प्रमाण उनके अनेक विद्यार्थी हैं, जो भट्टजी की विद्वता और सदाशयता का गुणगान आज भी करते हैं।

कुछ वर्ष पूर्व भट्टजी की एक अन्य पुस्तक प्रकाश में आयी —'भारतीय संस्कृति' उसमें उन्होंने इस देश की संस्कृति के विविध रूपों का सरल ढंग से

आकलन किया । संस्कृति के बारे में गांधीजी, गुरुदेव टैगोर, डॉ. कुमारस्वामी, योगिराज अरविन्द तथा डॉ. राधाकृष्णन् के विचारों से भट्टजी बहुत प्रभावित थे ।

हिंदू धर्म तथा उसके कल्याणकारी तत्वों के प्रति भट्टजी बड़े गौरव का भाव रखते थे । मुझे उन्होंने एक बार कहा कि हिंदू धर्म ने संसार को एक महान जीवन-दर्शन दिया । एशिया के एक बड़े भाग को उसने सत्य, मैत्री और करुणा के भावों से आप्लावित किया । उसी हिंदुत्व के प्रति अनेक वर्तमान राजनेताओं की घोर उपेक्षा उन्हें बर्दाश्त न थी ।

भट्टजी का राष्ट्रप्रेम उत्कट था । वे देश के उत्तम भविष्य के प्रति आशान्वित थे । वे कहते थे कि जिस देश के पास वेद, उपनिषद् और गीता का ज्ञान है तथा जिसके पास उदात्त संस्कृति का अटूट भंडार है उस देश को सांस्कृतिक क्षेत्र में परमुखापेक्षी नहीं होना चाहिए ।

भट्टजी आधुनिक युग के तपःपूत ऋषि थे । उनका व्यक्तित्व सरल होते हुए भी प्रभावशाली था । कालिदास ने कैलास पर्वत का वर्णन करते हुए लिखा हैं :

**शृंगोच्छ्रायैः कुमुदविशदै –**
**र्यो वितत्य स्थितः खं।**
**राशीभूतः प्रतिदिनमिव**
**त्र्यम्बकस्याट्टहासः ।।**
**(पूर्वमेघ, ५९)**

अर्थात्, कैलास पर्वत अपनी ऊंची निर्मल चोटियों से आकाशमंडल को घेरे हुए है । उस पर बरफ़ के ढेर ऐसे लगते हैं मानो शिवजी का अट्टहास वहां पुंजीभूत हो गया हो ।

श्वेत परिधान वाले भट्टजी का अट्टहास ऐसा ही था। वे अपने शत-शत प्रेमियों और प्रशंसकों को न केवल मानव-जीवन का आध्यात्मिक रहस्य बता गये है, अपितु भौतिक जीवन-यापन का सही मार्ग प्रशस्त कर गये हैं । उनके लिए यही कहना पर्याप्त होगा :

**जयन्ति ते सुकृतिनः रससिद्धाः**
**कवीश्वराः ।**
**नास्ति येषां यशःकाये जरा-**
**मरणजं भयम् ।।'**

**– १५, पद्माकरनगर, मकरोनिया,**
**सागर, म.प्र.**

अपनी-अपनी पसंद

# लोगों के अद्भुत शौक

**डॉ. गोपालप्रसाद 'वंशी'**

इतिहास प्रसिद्ध रोमन सम्राट नीरो को गुलाबों का अद्भुत शौक था। उसके महल के प्रत्येक कमरे में गुलाब के फूल रखे जाते थे। उसके भोज्य पदार्थों में तथा शराब में गुलाब की सुंगध डाली जाती थी। उसके बिछावन और तकिये में भी गुलाबों की पंखुड़ियां रखी जाती थीं। एक बार एक प्रीतिभोज के अवसर पर नीरो ने गुलाब के फूलों के लिए बहुत व्यय किया था। एक कमरे में इतने अधिक गुलाब के फूल रखे गये थे कि लोग कमरे में प्रविष्ट होते ही गले तक गुलाबों के अंबार में डब जाते थे।

मिस्र के एक बादशाह को तरह-तरह के कोड़े जमा करने का शौक था। मिस्र के ही अंतिम बादशाह शाह फारुख का शौक था नग्न-स्त्रियों के चित्र एकत्र करना। यह ऐयाश शासक जब काहिरा से निकाला गया और उसके विशाल महल की तलाशी ली गयी, तो उसके कला संग्रह में बहुत बड़ी संख्या में अश्लील चित्र मिले। लेकिन शौक की यह तालिका यहीं समाप्त नहीं हो जाती।

श्याम देश के राजा जब एक बार लंदन में घूम रहे थे तो अचानक फुटपाथ पर पड़े हुए माचिस की एक डिब्बी की ओर लपके और उसे उठाकर जेब में रख लिया। लंदन वासियों के लिए यह बड़े कौतूहल का विषय हो गया। बाद में पता चला कि उन्हें दियासलाई की खाली डिब्बी के संग्रह का शौक है। उन्होंने देश-देशांतरों के विभिन्न भाषाओं के लेबिलों की सैंकड़ों डिब्बियां इकट्ठी कर रखी थीं।

अमेरिका के भूतपूर्व राष्ट्रपति स्वर्गीय फ्रेंकलिन डी. रूजवेल्ट को जहां हस्ताक्षर एकत्र करने का शौक था, वहां भूतपूर्व ब्रिटिश प्रधानमंत्री सर विंस्टन चर्चिल को हैट जमा करने का शौक था। उनके इस शौक में कोई कमी नहीं हुई और उनके पास विभिन्न प्रकार के हैटों का एक अच्छा खासा संग्रह हो गया था।

सर एडवर्ड एल्जार को पुराने पाजामे जमा करने का शौक था। वे जहां कहीं भी जाते थे, पुराने सामान बेचनेवाली दुकानों से पुराने पाजामे खरीदा करते थे। भिखारियों और गरीब आदमियों को भी वे नये पाजामे देकर पुराने पाजामे ले लिया करते थे। इस काम के लिए उन्होंने अपने यहां एक दफ्तर भी खोल

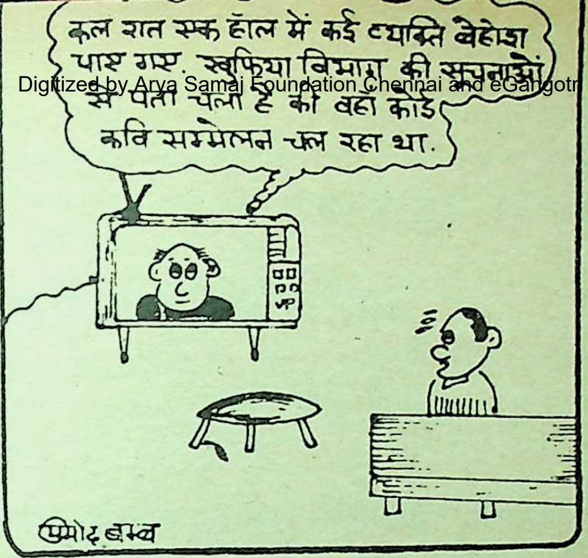
कल रात एक हॉल में कई व्यक्ति बेहोश पाए गए. खुफिया विभाग की सूचनाओं से पता चला है की वहा कोई कवि सम्मेलन चल रहा था.
प्रमोद शर्मा

रखा था।

अर्ल आफ बाल्डविन का शौक और भी विचित्र है। जानते हैं क्या जमा करते हैं? उल्लू। उन्होंने तरह-तरह के उल्लू भूसी भरवाकर एकत्र कर लिये हैं। अपने इस संग्रह को वह बड़े जतन से रखे हुए हैं।

लंदन के प्रसिद्ध धनियों में शुगर किंग का नाम भी आता है। इन्हें अद्‌भुत चीजे खरीदने का शौक है। उनका कथन है कि चाहे खाने की चीजों पर कम खर्च करो, लेकिन कोई अद्‌भुत चीज देखो, तो उसे तुरंत खरीद लो। यही कारण है कि, एक ओर अद्‌भुत चीजें खरीदने में उनका 'बैंक बैलेंस' दिन प्रतिदिन कम होता जा रहा है तो दूसरी ओर उनका घर अद्‌भुत चीजों से भरता जा रहा है।

और, अब अंत में एक महिला के विचित्र शौक के विषय में सुनिये। उसे मिठाई खाने का बहुत शौक है। और वह भी मिठाइयों से बातें करते हुए। आप आश्चर्य न करें, वास्तव में वह मिठाइयों से बातें करती है। कैसे? सुनिये--एक दिन मैंने उसे अकेले में मिठाई खाते और प्रत्येक कौर को लक्ष्य करके कहते सुना। वह बड़ी सावधानी से मिठाई का टुकड़ा उठाती थी और उसे मुंह के पास लाते समय उसके प्रति बड़ी सहानुभूति दिखाते हुए कहती— 'आह! बस थोड़ी देर बाद तुम समाप्त हो जाओगे।' तब उस पर रोब दिखाती हुई कहती- 'मैं तुम्हें खा जाऊंगी।' और, उसे मुंह में रख लेती थी। फिर अपनी जीत के उल्लास में कहती- 'क्यों, मैंने तुम्हें खाया या नहीं?'

**— आरोग्य सदन, गंज नं. १,**
**बेतिया, चंपारन, बिहार**

□

# सौंदर्य प्रसाधन: आरंभ की पृष्ठभूमि

□ डॉ. हेमेन शाह

गीता की सहेली का विवाह था। वह आनंद से फूली न समाती थी। विवाहोत्सव के लिए इसे 'फेशियल' करवाने का विचार आया। विवाह के दिन तो दुलहिन की तरह सुंदर दिखती थी। पर विवाह के सात दिन बाद मुंहासे निकलने लगे, जो लगभग आठ महीने टिके रहे।

सरला बेन तो बहुत सीधी-सादी महिला ठहरीं। खास कोई शौक उन्हें नहीं। बस, माथे पर एक बिंदी चाहिये। किसी ने कहा कि बिंदी स्टिकिंग यानी चिपकनेवाली बहुत अच्छी होती है। कोई खटपट नहीं। न वह खिसककर उधर होती है, न पसीने से फिसलती है। चाहिये वैसे आकार और रंग की बिंदी चिपका लीजिए, बस काम हो गया। सरलाजी को बात पसंद आयी। वह अलग-अलग रंग की बिंदियों का उपयोग करने लगीं। छह महीने के आसपास उस भाग पर खुजलाहट शुरू हुई और वह भाग लाल दिखायी देने लगा। अचानक एक दिन देखा गया कि वहां सफेद रंग का दाग दिख रहा है। सरला बेन तुरंत डाक्टर के पास हाजिर हुईं। मन में जो डर था, वही साबित हुआ। यह ल्यूकोडर्मा (कोढ़) की शुरुआत थी। डाक्टर ने आश्वासन दिया कि वह मिट जायेगा। पर पहले उन्हें स्टिकिंग बिंदी बंद करनी होगी।

ऐसे मामले यदा-कदा हम जैसे त्वचा रोग विशेषज्ञों को अपनी प्रैक्टिस के सिलसिले में दृष्टिगोचर होते हैं। इसलिए मन में विचार आया कि इस विषय पर लिखूं। तब कहां से शुरू करें? चलिये, सिर के बाल से श्रीगणेश करें। बाल चेहरे को सुंदरता प्रदान करते हैं। अतएव बाल बहुत आकर्षक दिखें, इसलिए केश-विन्यास के विविध साधन उपलब्ध हैं। तो, इस बाबत अल्पा के केश को

देखें।

अल्पा को अपने केश के सौंदर्य पर खूब गर्व था। पर, एक दिन अचानक देखा कि उसके बाल शनैः शनैः झरने लगे। बाद में उसको खयाल आया वह सब कुछ बाल 'पर्मिंग' कराने के बाद शुरू हुआ है। इसी प्रकार 'हेयरस्ट्रेटनर्स' कर्लर्स और सेटिंग लोशन के उपयोग भी बहुधा हानिकारक सिद्ध होते हैं। हेयर डायर का सतत व्यवहार बाल को सूखे और झरनेवाले बना देता है।

सफेद बाल के लिए बहुत से लोग हेयर डाय (खिजाब) उपयोग में लाते हैं। इसके लिए भी तीन प्रकार के 'डाय' या खिजाब उपयोग में आते हैं। बेजिटेबल यानी वनस्पतिजन्य, मेटालिक अथवा धातुजन्य एवं आर्टिफिशियल (कृत्रिम)। बेजिटेबल डाय अर्थात् मेंहदी एकदम हानिरहित है और जो कृत्रिम या आर्टिफिशियल खिजाव उसमें पेटाफिनिलिन-डाय-अमीन नामक पदार्थ होता है। जिस व्यक्ति को इससे एलर्जी हो, जहां डाय या खिजाब जम जाय, वहां की चमड़ी में खराबी हो सकती है। इसे 'कोंटेक्ट डर्मेटाइटिस' कहा जाता है। आर्टिफिशियल डाय से चमड़े का कैंसर हो सकता है, ऐसी भी आम लोगों की मान्यता है, जो बिलकुल निराधार है। मेटालिक डाय या धातुजन्य खिजाव यों तो व्यवहार में नहीं है, कारण कि यह लीवर और किडनी को नुकसान पहुंचा सकता है। परंतु कुछ दिन पहले नदी कछार के फेन को चूने के साथ मिश्रित कर लोग माथे पर लगाते थे। यह खतरनाक था, कारण कि यह मेटालिक डाय था और उसका दीर्घ उपयोग लीवर और किडनी के लिए हानिकारक साबित होता था। बहुतेरे लोगों को कुदरती या प्राकृतिक शब्द से अनुराग होता है। कुदरती चीजों का कुप्रभाव नहीं होता, ऐसी बात तो है नहीं। यों तो सांप का ज़हर भी कुदरती है। इसलिए देखे और विचारे बिना किसी चीज का उपयोग नहीं किया जाना चाहिये।

चिपकने वाली बिंदी से होते कोढ़ का किस्सा हमने पहली ही बार देखा। प्लास्टिक की बनी बिंदी के समान सस्ते प्लास्टिक रबर के चप्पल या बूट भी पैर की चमड़ी पर कोढ़ पैदा कर सकते हैं। बरसात में प्लास्टिक के बूट के नीचे हमेशा मोजा पहनना चाहिये।

टी.वी. पर कोल्ड क्रीम, विंटर केयर क्रीम आदि के संबंध में विज्ञापन की भरमार की जाती है। तरुण वय के लड़के-लड़कियों को मोहित करने के लिए विज्ञापन चित्र में दर्शायी जाने वाली सुंदर लड़की के मुंह पर प्रतिदिन कोल्ड क्रीम लगाने से चिकनी चमड़ी वाले व्यक्ति को सदैव मुंहासे निकल आते हैं। मेरा बस चले तो जिस प्रकार सिगरेट के पैकेट पर चेतावनी छपी रहती है, उसी प्रकार कोल्ड क्रीम पर यह छपवा दिया

जाय कि 'चिकनी चमड़ीवाले व्यक्तियों के मुंह पर यह क्रीम नहीं लगाया जाना चाहिये।' क्रीम हाथ-पैर पर लगाइए, मुंह पर क्यों लगाते हैं? आपकी उम्र तीस से कम है न? तो आपके मुखड़े पर निखरती प्राकृतिक मृदुता है। इस मृदुता को और संवर्द्धित कीजियेगा तो वह संश्लिष्ट होकर मुंहासे का रूप धारण कर लेगा। इसी प्रकार 'फेशियल' करते समय ब्यूटिशियन मुखड़े पर 'वाफ' और फेस-पेक तो देते हैं, पर तदुपरांत मुखड़े पर क्रीम घिस देते हैं, जिसे वे नेरीशिग क्रीम कहते हैं। यह भी चिकना या मृदु होने से कुछ दिन बाद मुंहासे पैदा करता है। इसके पश्चात् हेवी मेक-अप, बाम, तेल या मलाई भी मुंहासे और चिकनी चमड़ीवाले मुखड़े पर कतई नहीं लगाना चाहिये।

पूजा एक पच्चीस वर्षीया लड़की है। आफिस में काम करती है और घर में अपनी मम्मी की भी मदद करती है। एक बार ऐसा हुआ कि उसका घरेलू नौकर अपने गांव चला गया। पूजा ने उसकी अनुपस्थिति में सात दिन कपड़े धोये तो उसकी उंगलियों में सूजन आ गयी। पूछताछ करने पर खबर मिली कि उसे 'पार्लर' में 'मेनीक्योर' कटाने की आदत थी। मेनीक्योर करते वक्त उंगली और नख को जोड़कर पतली चमड़ी का पर्दा-क्युटिकल उखाड़कर पीछे कर दिया जाता है। सौंदर्यशास्त्रियों को यह संदरताकी दृष्टि से ऐसा करना क्यों जरूरी होता है, यह हमें नहीं पता। 'क्युटिकल' टूट जाय तो नख के ऊपर का अंश खुल जाता है और उस पर पानी या साबुन लगने से सूजन आ सकती है, पक सकता हैं।

रचना और कल्पना दो बहनें हैं। एक नौ साल की है, दूसरी ग्यारह। आज के जमाने की तो आपको खबर है ही। लड़कियों को महंगे गहने पहनने को दिये नहीं जाते पर उन्हें कुछ पहनना चाहिये ही। इसलिए उनकी ममी ने दोनों को इमीटेशन ज्वेलरी पहनने को दिया। इससे कल्पना को तो कोई तकलीफ नहीं हुई, पर रचना जो गहना पहने वहां की चमड़ी लाल हो जाय, तकलीफ महसूस हो, खुजलाहट होने लगे और कई बार उससे पानी जैसा भी कुछ बहने लगा। यह भी एक रोग है 'कोन्टेक्ट थर्मेटाइरिस'। कुछ लोगों को निकल अथवा क्रोमियम धातु से एलर्जी होती है। अतः चमड़ी पर जहां इस धातु का संपर्क होता है,वहां यह तकलीफ शुरू हो जाती है।

इसी प्रकार व्यक्तिगत एलर्जी दूसरी चीजों से भी होती है, जैसे सेंट, परफ्यूम, आफ्टर शेव लोशन वगैरह से।

कमलेश एक तीस वर्ष का युवक है। दिन में उसे घूमना अच्छा लगता है। इसके गले की चमड़ी पर काला धब्बा पड़ गया था। डॉक्टरी जांच-पड़ताल से

मालूम हुआ कि यह कालापन आफ्टर शेव लोशन में विद्यमान 'वायल आफ वरगेमोट' के जरिये हुआ था।

बहुतेरे सज्जनों को कभी-कभी नाई से दाढ़ी बनवाने की आदत होती है। कुछ समय इन लोगों को दाढ़ी के भाग में मसा अथवा फुंसी जैसी मिलती है। एक व्यक्ति को दाढ़ी बना लेने के बाद नाई को अपने उस साधन को दूसरे ग्राहक के व्यवहार में नहीं लाना चाहिये, क्योंकि उस्तरे या ब्रश द्वारा छूत लग सकती है। इसी प्रकार ब्यूटी पार्लर में बेकसींग हेतु जो एक का कपड़ा दूसरे के व्यवहार में लाया जाता है, उसके भी मसे और घाव-फुंसी की छूत फैल सकती है।

कई बार मुझसे पूछा जाता है कि साबुन का उपयोग करना चाहिये कि नहीं। मैं कहता हूं, साबुन का व्यवहार करना चाहिये, कारण कि चमड़ी का लगा हुआ मैल धोने का यह सरल उपाय है और चिकनी चमड़ी हेतु तो मुंह पर से चिकनाहट दूर करने का उपयोगी साधन है। परंतु कुछ लोगों को अथवा जिनकी चमड़ी सूखी हो उन्हें साबुन हर दूसरे दिन लगाना चाहिये। वृद्धों को चने का आटा और केलेमाइन लोशन भी चमड़ी पर नहीं लगाना चाहिये। कारण कि इससे उनकी सूखी चमड़ी और सूख जायेगी।

सौंदर्य साधन जो खरीदिये, उसे अच्छी कंपनी का लेना जरूरी है। मामूली कंपनियों के प्रसाधनों में जाने-अनजाने मिलावट होने की संभावना अधिक है। उदाहरणस्वरूप अमुक लिपिस्टिक में इलोसिन अथवा सिन्नामिक आल्डिहाइड होने के फलस्वरूप ओंठ फट सकते हैं और कई बार सफेद दाग भी हो सकता है।

ब्लीचिंग करते समय मिश्रित होते हुए दो द्रावणों में जो एमोनियम हाइड्रोक्साइड अधिक प्रमाण में लिया जाता है तो चमड़ी झुलस सकती है।

चमड़ी तो शरीर और मन का प्रत्यक्ष दर्पण है। संतुलित आहार से ही चमड़ी को पोषण प्राप्त होता है। बाहर से लगाये गये प्रसाधनों से नहीं। आहार में दूध, हरी भाजी, अंकुरित धान आदि खाद्यान्न और फल अधिक लेना चाहिये। तदुपरांत सुंदर दिखने के लिए प्रसाधन का व्यवहार अवश्य कीजिए, पर जरा संभल कर।

* * *

अपनी सुंदरता के कारण मुझे घमंड हो गया है.
इसे घमंड नहीं, गलत फहमी कहते हैं.

# रेत के आखर

किसी सफर के मीत सरीखे, कभी याद आते हैं,
आखर-आखर लिखे गीत भी और निखर जाते हैं ।।

अभिलाषी अधरों को जैसे,
अधर तृषित करते हैं,
परस-परस वीणा से अविरल,
स्वर बन कर झरते हैं,

रेत सरकती मुट्ठी से, सच सपने बन जाते हैं,
आखर-आखर लिखे गीत भी और निखर जाते हैं ।।

चंचल पछुवा में कोयल स्वर,
टीसें जब भरता है,
रंग में रंगा बसंती-मौसम,
मकरंदी होता है,

मौसम से संदर्भित हर दिन उम्र बढ़ा जाते हैं,
आखर-आखर लिखे गीत भी और निखर जाते हैं ।।

सर्पित पगडंडी पर चलते
मंजिल अलख बनी है,
कांटों फिसलन से बचने में,
जिजीविषा उलझी है,

गांव, गली, घर, पाहुन नभ के तारे बन जाते हैं,
आखर-आखर लिखे गीत भी और निखर जाते हैं ।।

**— शशि भूषण अवस्थी**
**बिन्दकी – २१२ ६३५, फतेहपुर, उ.प्र.**

# संयोजक

□ अंजलि बसु

तत्क्षण तो किंकर्त्तव्यविमूढ़ हो गयी ललिता। किस प्रकार क्या करना होगा, वह सोच नहीं पायी। कुलीन वंश की कन्या ठहरी वह। अभी उसी युग की छाया उसके घर पर है। व्रत, स्नान, उपवास नित्य नैमित्तिक बात है। किस तिथि को क्या खाया जाता है क्या नहीं, किस वार को क्या किया जाता है, क्या नहीं, यह नामावली मुखस्थ करने में उस परिवार की बालक-बालिकाएं भी प्रवीण हैं। बड़े-छोटे सब मिलाकर मात्र आठ जन हैं, उस परिवार में पचास से पचीस की आयु के बीच। किंतु स्त्री-पक्ष की मर्यादा में बहूरानियां या बंगाली मर्यादा में 'बौ मां' हैं। बड़ी दादी जो 'ठाकूमा' कही जाती हैं– घर की सर्वसत्तामयी कर्त्री हैं।

स्वल्पभाषिणी ठाकूमां का आदेश भी होता है संक्षिप्त। और, उसी आदेश के बल पर इस घर की लड़की होकर ललिता बी.ए. पास हुई और इसी ठाकूमां के चुनाव से मनोरम इस घर में जामाता बनकर आया। नहीं तो ललिता के माता-पिता, चाचा-चाची या किसी भी गृह-सदस्य के मत का यदि प्रश्न उठता तो मनोरम की बात ही नहीं आती। पर यहां तो वह बात ही नहीं। सर्वसत्तामयी कर्त्री का वचन सर्वोपरि। ललिता भी स्वभाव के अनुसार जिस प्रकार के स्वामी-विषयक स्वप्न देखती, मनोरम के समान स्वामी की कल्पना करने में भी बदस्तूर भय ही होता। ....पर कल्पना करने या भय पाने का किसी को ठाकूमां ने अवसर नहीं दिया।

'दत्त परिवार की मालकिन को मैं वचन दे आयी हूं, अच्युत, ललिता उन्हीं के घर जायेगी।'

ललिता के पिताजी ने एक-दो बार अपना माथा खुजलाया और कहा- 'ठीक है! तो उनके घर ललिता जैसी लड़की....।'

'अच्छा ही होगा, अच्युत। बाद में समझोगे।'

ठीक इसी सुर में बात करती ठाकूमां जैसे कि उनके अच्युत की उम्र छह वर्ष की हो। यों तो साठ वर्ष का होने पर भी मां का

निर्देश वह उसी भाव से ग्रहण करता है।

ललिता ने यह बात सुनी दूसरे दिन और वह भी ठाकूमां के पास ही सुनी एवम् उसके साथ ही विवाह-विषयक कितने आदेश उपदेश, ससुराल संबंधी परिजन-परिचर्या, स्वामी-सेवा तथा तद्विषयक और बहुत कुछ। सब कुछ ललिता ने अपना माथा झुकाये सुन

लिया। केवल यह नहीं सुना कि उसके होनेवाले स्वामी किस प्रकृति के हैं? यदि सुनती तो कदाचित मित्तर परिवार की कन्याओं के संबंध में जानकारी पा वह बी.ए. पास स्वाधीन लड़की की तरह प्रतिवाद भी करती।

वह नहीं हुआ। अतः निर्विवाद मनोरम की पत्नी और दत्त वंश की बहू होकर ललिता इस घर में आ गयी।

पितृगृह में जो-जो कानाफूसी उसने सुनी थी, उसी के भीतर उसे प्रत्यक्ष शामिल होना पड़ा। संप्रति, विलायत से लौटे हुए ससुरजी सास महोदया को पूरे महाद्वीप का भ्रमण कराकर आये थे। उस घर के दो जामाता भी विलायत हो आये हैं। मनोरम चार साल जर्मनी में,दो साल फ्रांस में और बाकी आखरी साल इंग्लैंड में काट छोटी बहन को लंदन से परिचित करा गत आश्विन माह में लौटा है। उसका छोटा भाई अभी ग्लासगो में है।

विवाहोपरांत की रात ही ललिता समझ गयी थी कि यहां की आबोहवा उसके लिए अपरिचित है। रात्रिकालीन वस्त्र-परिवर्तन के पूर्व ही चाय की मेज पर हाजिर होने की पुकार आयी। मेज पर पहुंचते ही उसने देखा कि उसकी विधवा फुफुआ सास, बूढ़ी जेठ सास और उसकी सास साथ ही साथ बैठी हैं, अपने-अपने हाथ में चाय का प्याला लेकर। न जाने क्यों किसी अज्ञात पाप के भय से ललिता के तालू तक सूख गये। पल भर में उसकी स्मृति में उसकी दादी ठाकुमां, फूआ, मां और चाचियों का दल दिखायी देने लगा।

ललिता ने जरूर यह सुना था कि इस घर के लोग दीर्घकाल तक विलायत-प्रवासी होकर आये हैं। मगर चूंकि उसकी दादी यानी ठाकुमां ने यह विवाह संबंध ठीक किया है, इसीलिए यह सोच तक नहीं पायी कि ये लोग एकदम विलायती हो गये होंगे।

हनीमून की रात ललिता शुष्क हो गयी। आजन्म संस्कार के बीच अंतर्द्वन्द्व होने लगा।

प्रिय-संभाषण का स्वप्न भंग हो गया। माघ महीने में माथे पर पसीना आने लगा। किस प्रकार मनोरम को अपने मन के साथ मिला सकूंगी? अथवा किस प्रकार उसको अपने से दूर रख सकूंगी? अखाद्य-कुखाद्य आहार करने वाले को आज तक संस्कारवश अस्पृश्य मानती रही, उसे आज मन ही मन अपनाना पड़ेगा। आंखें न खोलते हुए भी उसके सान्निध्य का काल्पनिक अनुभव वह कर रही थी। बी.ए. डिग्री प्राप्त करने पर भी उसके अंतराल में अभी स्वामी शब्द की महत्ता, उसके अंतर्मन में स्फूर्त हो रही थी कि स्वामी जैसा भी हो, संसार में उसके अतिरिक्त दूसरा बड़ा आसरा कोई भी नहीं है। जिस उम्र में इस बात को समझने का होश भी नहीं था, वह सुनते आ रही है। ससुराल ही अपना घर है। वहां वाले ही अपने मां-बाप, भाई-बहन हैं। उसने

देखा भी है अपनी दीदियों को, जिनका विवाह बारह-चौदह वर्ष की उम्र में ही हो गया था और वे सब की सब अपनी ससुराल में ही हैं। जब-जब अपने मैंके में आती हैं तो मेहमान की तरह।

किंतु बी.ए. पास के आधार पर जिस ठाकूमां ने ललिता को यहा भेज दिया वहां वह अपने को पूरे मन से नहीं खपा पायी है। यहां ठाकुरवाड़ी, गंगास्नान, उपवास, चरणामृत आदि का नाम तक नहीं है। पर इसी अच्छेद्य भित्ति में ललिता की समस्त सत्ता आबध्य होने को बाध्य है। उसे उन सब पूर्वाभ्यासों का विसर्जन करना आत्महत्या-सा बोध कराता है। उसके बाप-चाचा अभी भी भीगे वस्त्र में राधा गोविंद के मंदिर में प्रणाम करने जाते हैं। ठाकुरवाड़ी के चौखट की धूल जीभ से छुलाकर जलग्रहण करते हैं और यहां.....?

वह करे भी क्या? किस दिशा में अपने पांव रखे वह, समझ नहीं पाती। एक-दो दिन नहीं, पूरे तीन वर्ष इस तरह कट गये। पर आज भी वह सहज नहीं हो पायी। हनीमून की रात मनोरम को आत्मसात करने में जो बाधा मन के दरवाजे पर खिंची, वह आज भी पूरी तरह से मिटी नहीं है। सम्प्रति वह बाधा ससुराल पक्ष के स्नेह-स्पर्श से और कठिन हो गयी है।

ससुराल के प्रत्येक जन को ललिता के प्रति सुगंभीर स्नेह का आभास दृष्टिगोचर होता था, उसके आचारविचार युक्त व्यवहार को वे लोग दुर्बलता का अंश मानकर संतुष्ट थे। उसको घर के लोग होटल में डिनर खाने के लिए नहीं ले जाते, घर में यदा-कदा पार्टी होती तो कोई आशा नहीं रखता कि वह मिस्टर समरसेट के हाथ से लिये सैंडव्हिच अपने मुंह में डालेगी। सास को अंग्रेजी बोलते सुनकर वह आश्चर्य भले ही न करे, पर कांटे-चम्मच से खाने पर वह हाथ-मुंह धोये बिना इधर-उधर की चीजों को छूती तो उसके मन में घिन जरूर महसूस होती।

किंतु उसे सबसे अधिक आश्चर्य और कष्ट मन में होता था कि कोई उसके स्वभाव का मजाक नहीं बनाता या तिरस्कार भी नहीं करता, सवाल-जवाब भी नहीं करता। परिवार के सभी उसके संस्कार और संकोच को प्रकृति की मान्यता दे अपने-अपने कार्य को खुद ही निभा लेते थे ताकि उसे कोई तरद्दुद न महसूस हो और वह अपने ढंग से स्वेच्छया अपनी संपत्ति का उपयोग-उपभोग निर्वाध किया करे।

यहां तक कि मनोरम भी कभी कोई बात उसके विपरीत नहीं बोलते। एक दिन लंच-डिनर में वह मद-मिश्रित आहार लेकर आ गये थे तो पलंग के बिस्तर के एक भाग में सो गये थे। ललिता तो कोई कारण नहीं समझ पायी कि क्या बात है कि वह हमसे दूर हटकर

सोये हैं। इसलिए प्रेम-मिश्रित कलह के स्वर में पूछा– 'मुझसे रूठे हुए हो क्या?'

'ना-ना! भला रूठूंगा क्यों? मैं ऐसा-तैसा कुछ खाकर आया हूं इसलिए.... तुम इस सबसे घृणा करती हो न, इसलिए...'

वह जानती थी कि इसमें मनोरम का कोई दोष नहीं है। तब वह क्यों अपने ही घर में अपनी ही शय्या पर अछूत होकर सोयेगा? उसने हाथ से उठाते हुए कहा– 'खाये हो, तो ठीक ही किया है। ...मैं भोर होते ही नहाकर पवित्र हो जाऊंगी। अभी अच्छी तरह से सो जाओ।' आश्वस्त हो ललिता को हाथ में जकड़ कर गहरी निद्रा में सो गया मनोरम।

इधर ललिता किस दिन क्या खाती है, क्या नहीं खाती है, इन सब बातों की पूरी जानकारी कर सास उसके लिए अलहदा इंतजाम कर देती। ललिता तो लाज से मर जाती, किंतु यहां किसी नियम के उल्टे काम करना नामुमकिन था।

ललिता के पांव में आलता लगाने के लिए नाइन ठीक कर दी गयी है। तिथि-नक्षत्र देखने के लिए पंजिका खरीद दी गयी है। ललिता के शयन-गृह के पास घेरे हुए बरामदे में लक्ष्मीजी की प्रतिमा स्थापित कर दी गयी है। कोई विशेष तीज-त्यौहार होने पर सास उसे पिता के घर भेज देतीं, ताकि उसके मन में कोई तकलीफ न हो। प्रतिवाद करने का कोई उपाय नहीं– ऐसा होता तो इस घर के लोगों को और परेशानियां झेलनी पड़तीं। किंतु मान लेने पर मन-ही-मन परेशानी होती है। उसकी यह कुंठा सभी महसूस करते, इसलिए सहज होने के सुयोग देने हेतु उसकी इच्छा और अभ्यास को परिवार के सभी लोग स्वाधीन रखना चाहते थे। यह ललिता खूब समझ रही थी। इसलिए उसका सारा दिन अप्रस्तुत भाव से नहीं कटता।

किसी प्रकार अपने अनाचार के हाथ से दूसरे पक्ष के सम्मान की रक्षा के लिए अपने दुहरे प्रयास की चेष्टा में ललिता का सारा समय बीत जाता। किंतु उस दिन सास ने उसके माथे पर हाथ सहलाते हुए जिज्ञासा की– 'बताओ, बहूरानी दादीजी ठाकूमां को बताना तो होगा न कि आगे के कई माह उन लोगों के पास रहोगी कि यहां रहोगी?'

ललिता उस बार कुछ बोल नहीं पायी कि क्या जवाब दे, आंखों से आंसू बह रहे थे। वह कोई उत्तर नहीं दे पायी।

रात में मनोरम ने घर में जाकर ललिता के दोनों हाथ अपने आवेग में पकड़ लिये और बोला – 'क्या तुम चली जाओगी?... हमारे यहां रहने में क्या बहुत असुविधा होती हैं? क्या करना होगा, वह मां तुम्हारी ठाकूमां से सब जानकारी कर लेंगी। वह जैसा कहेंगी, मां सब कुछ वैसा ही कर देंगी। ...क्या इससे काम नहीं चलेगा?'

जैसे ललिता उसके कथन का मर्म नहीं समझ पायी हो वैसे चुप-चुप उसके कान में मनोरम ने कहा था— 'मेरी बड़ी इच्छा है कि मेरा 'खोका'— बेटा... ना-ना, हंसो मत...हां, सचमुच हमारा ही बेटा है न, मेरे सामने धीरे-धीरे बड़ा होगा— मैं देखूंगा— सच कहता हूं, मेरी बड़ी इच्छा है। ...तुम हंसती क्यों हो, लता?...'

हंसेगी क्यों ललिता, वह तो रो रही है! तीन विलायती डिग्रियों वाले कांटिनेंट भ्रमण कर लौटे साहब का किशोर के जैसा गंभीर प्रेम और ममता से भरा हुआ है हृदय।

ऐसे मनुष्य को छोड़कर इस घर का स्नेहसिक्त आश्रय छोड़कर पितृ-गृह के आचार-नियम ये निबद्ध उसके शिशु के लिए क्या वह अधिक सुधारस संचय कर पायेगी? हो सकता है मादुली कवच और लोहे-धागे के अभाव से शिशु के अमंगल की आशंका से कभी-कभी उसके हृदय में संशय का भाव हो। हो तो चिर आचरित नियम का व्यतिक्रम देखकर अपने संबंध में मन में भय का जागरण हो सकता है।

किंतु उसका द्वंद्व समाप्त हो गया है। उसकी संतान, मनोरम की संतान-क्यों संकुचित होगी, संत्रस्त होकर संघर्ष के भीतर आकर क्यों दिखायी देगी? किंतु उसे इन दोनों घरों के बीच संयोग सेतु होकर शिशु का लालन-पालन करना होगा, अपनी गोद में लेकर।

एक दिन जो भय उसके मन के कोने में था कि वह कब मां बनेगी और उसकी संतान के सामने निज का क्या रूप होगा— दत्तों के घर की बहू न कि मित्तिरों के घर की बेटी— वह भय अब नहीं है उसे आज वह अपने को मां मानकर समझ गयी।

वही आज लाज और संकोच की जड़ता काटकर उठ गयी और स्पष्ट शब्दों में सास को कह पायी— मां, ठाकूमां को कह दीजियेगा कि मैं यहीं रहूंगी। जिन सब नियमों को नहीं मानने से ठाकूमां मन में दुःखी होती हैं, वह सब मैं यहां पालूंगी, लेकिन रहूंगी आप ही के पास।

सास ने ललिता बहूरानी को गोद में भरकर आशीर्वाद दिया— 'चिरायुष्मती होओ, पुत्र जननी होकर हम सब को आलोकित करो।'

**(रूपांतर : वीरेन्द्र मोहन)**

□

पिता : 'संजय, तुम पहले झगड़ते हो, फिर माफी मांग लेते हो। तुम्हें अपनी यह आदत बदल लेनी चाहिये।'

संजय : 'ठीक है, पिताजी, अब से मैं पहले माफी मांगकर बाद में झगड़ा किया करूंगा।'

**— डॉ. गोपाल प्रसाद 'वंशी'**

* * *

## किसको यहाँ

चाह की मंजिल
कब मिली
किसको यहां
फिर क्यों सोचती हो ?
मिल जायेगी तुमको यहां ।

स्वप्न की
दीवार घेरे
यथार्थ को
बाहर किये
किस लोक में
भरमा रही हो
मन को अपने
दोराहे पर खड़े ?
रास्ते हो गये हैं
अलग अलग ।

दूरियां
बढ़ती रहेंगी
इसलिए
आओ
कुछ पल बात करें
फिर न जाने
मिलें कि न मिलें ।

## आज टूटे हुए

हम जिन्हें अपना थे समझे हुए
आज हमसे वही देखो रूठे हुए ।

रात ढल भी गयी
भोर की राह में
प्यास बुझ न सकी
स्वाति की चाह में

प्यास बुझने की आशा थे जिनसे किये
वे ही मंजिल में मुझसे हैं छूटे हुए ।

गीत गाये नहीं
राग की चाह में
बात भी कब हुई
शर्म की राह में

प्रीत की चाह जिनसे लगी थी हुई
आज वे ही हमें लगते लूटे हुए ।

संग कुछ पग चले
फिर कदम रुक गये
दूर मंजिल रही
राह में झुक गये

जिनको आधार थे आश की मानते
वे ही पाषाण-से आज टूटे हुए ।

**– राजेन्द्र परदेसी –**
गांधीनगर, बस्ती - २७२ ००१ उ.प्र.

□

# कुटकुट का घमंड

□ दुर्गाशंकर त्रिवेदी

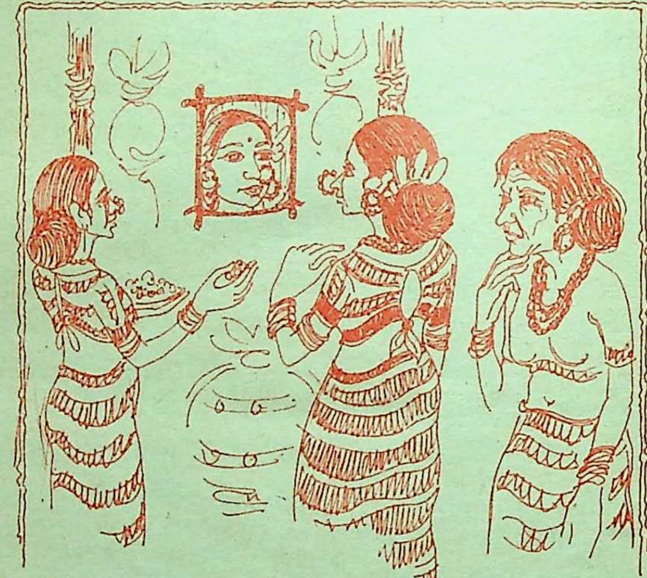

किसी नदी के तट पर पांगलिया नाम का आदिवासी रहता था। उसकी लड़की कुटकुट बहुत सुंदर थी। कुटकुट अपने रूप की तारीफ सुनती तो बहुत खुश होती। अपनी सहेलियों को वह काली कलूटी, कुरूप आदि कहकर चिढ़ाती। उसकी मां उसे समझाती कि सहेलियों से लड़ना अच्छा नहीं।

'पर मेरी जैसी रूपवान लड़की की सहेली गंदी कुरूप लड़की यह मुझे अच्छा नहीं लगता। छि:छि: कैसी गंदी हैं वो' - कुटकुट दर्पण में अपना रूप निहार-निहार कर कह उठती। तब घमंड से वह लाल हो उठती थी।

उसकी मां उसे समझाती - 'पर बेटी, रूप का घमंड करना भी नहीं है। मौका आने पर घमंडी का सिर नीचा हो जाता है।'

'तुम भी मां मेरे रूप से ईर्ष्या करती हो। मेरा सिर कौन माई का लाल नीचा कर सकता है?' कहकर वह नदी के तट तर जाकर पानी में अपना रूप निहारने लगी। वह कभी दर्पण के सामने, कभी चमकदार तांबे के बर्तन में,

कभी पानी में अपना रूप निहारती रहती।

एक दिन बाबा देव की पूजा का दिन था। उसकी मां ने कहा- 'कुटकुट बेटी, जरा नदी से पानी तो ले आ।'

'पर अम्मा, मैं पानी में फिसलकर गिर पड़ी तो ऐसी रूपवान कुटकुट कहां से आयेगी? मैं नहीं लाती पानी।'

'अरी बेटी, आज बाबा देव की पूजा करनी है। झाड़ी को पकड़कर घड़ा भर कर चली आना, बेटी।'

'झाड़ी की डाली का क्या भरोसा, कहीं वह भी मेरे रूप से जल कर टूट कर मुझे गिरा दे तो?'

'अरी मजबूत डाली पकड़ कर पानी ले आ मेरी बेटी। पूजा में देर हो जायेगी।'

'पर झाड़ी पकड़ कर पानी भरने से मेरे खरोंच आ गयी तो?'

'अरी तो हाथों में दस्ताने पहनकर चली जा, मेरी बेटी।'

'पर दस्ताने फट गये तो?'

'दस्ताने सुई से सी लेना, री।'

'पर सुई कमबख्त मेरी उंगली में चुभ गयी या टूट गयी तो?'

'तो मोटी सुई दे दूंगी।'

लेकिन कुटकुट अपनी जगह से जरा भी नहीं हिली। वह दर्पण में अपना रूप देख-देखकर बुदबुदाती रही - 'कुटकुट तेरा रूप सलोना सारे जग के रूप से निराला है।'

तभी पड़ोस की झोपड़ी से एक कुरूप सी लड़की धन्नो आई। बोली— 'फूफी, मैं लाऊं नदी से पूजा के लिए पानी का मटका भर के।'

'अरे मेरी लाडली धन्नो। ले आ मेरी रानी। कुटकुट तो रूप को ही शहद लगाकर चाटती रहेगी। बाबा देव की पूजा में देर हो रही है। मैं भोग के लिए लापसी बना रही हूं, बेटी।'

'अभी लाई फूफी। आप लापसी बनाओ।' कहकर धन्नो मटका लेकर नदी की तरफ तेजी से चल दी।'

कुटकुट की मां ने धन्नो के लाये पानी से कई तरह के व्यंजन बनाये। बाबा देव की पूजा की। तभी कुटकुट चीखकर बोली— 'मां, मां। तेरी रूपमती कुटकुट को गरमागरम लापसी परोस दे जरा।'

'पर मेरी रूपमती कुटकुट, लापसी तो बहुत गरम है। तेरी उंगलियां जल जायेंगी तो क्या होगा?'

'पर मैं अपने दस्ताने पहन लूंगी।'

'पर वे लापसी में लिपटकर खराब हो जायेंगे तब?'

'मैं उन्हें धोकर धूप में सुखा लूंगी।'

'धूप खाकर वे कड़े हो गये तो?'

'मैं उन्हे मोगरी से कूट-कूट कर नरम कर लूंगी। मां, जरा फटाफट लापसी परोस, दूध भी डाल दे उसमें।'

'पर तुमने बाबा देव की प्रार्थना करके उनका आशीष तो लिया ही नहीं।'

'बाबा देव तो काला है।'

'अरे, देवता को ऐसा कहकर अपमान नहीं करते, कुटकुट। जाओ हाथ जोड़कर उन्हें प्रणाम करो तब लापसी मिलेगी।'

पर कुटकुट हिली नहीं।

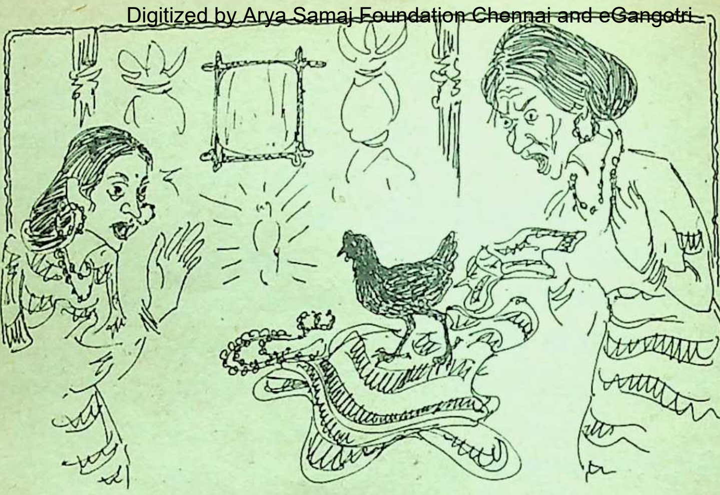

तभी धन्नों अपने घर पर बाबा देव की पूजा के लिए बना बाफला लेकर आई और बोली- 'कुटकुट दीदी । लो यह बाबा देव का प्रसाद बाफला खा लो ।'

कुटकुट धन्नो को देखते ही गरजी– 'धन्नो । तेरी यह हिम्मत जो मुझ जैसी रूपवान को कहे कि मैं बाबा देव का बाफला खा लूं ।' कहकर वह हाथ हिलाकर चीखी ।

तभी बाबा देव कहकहा लगाकर बोले- 'बिटिया धन्नो । परेशान मत हो मेरी लाडली । कुटकुट जैसे रूप की घमंडी लड़की को अपने रूप पर इस तरह इतराने का मैं मजा चखाता हूं ।' और वह कुछ कहती तब तक कुटकुट एक मुर्गी की शक्ल में बदल गयी ।

कुटकुट की मां बाबा देव की प्रार्थना करती रही । पर बाबा देव बोले- 'रूप का घमंड करने वाली, मां का कहना नहीं मानने वाली, देवी-देवता और सहेलियों को जो मन में आये कहने वाली कुटकुट का यही इलाज है ।'

'पर बाबा देव, उस लड़की की गुस्ताखी माफ करें । मेरी लड़की आप मुझे लौटा दें । अब वह घमंड नहीं करेगी ।'

'नहीं, शाप दे दिया है मैंने उसको घमंड करने का ।' वह अब वापिस नहीं होगा । इस रूप में कुटकुट को जो भी देखेगा वह मानेगा कि घमंड करने वाले की क्या दशा होती है ।'

'पर मेरी कुटकुट.... ।'

'रो मत, तेरी कुटकुट मुर्गी बनकर तेरे घर में घूमती-फिरती कीड़े-मकोड़े और सड़ा-गला अन्न खाकर 'कुट' 'कुट' करती रहेगी ।' कहकर बाबा देव चल दिये । मां छटपटाती रही बेटी के लिए ।

तभी से मुर्गी अपनी सुंदरता खोकर 'कुट' 'कुट' 'कुट' करती घर में घूमती फिरती है । वह शायद कहना चाहती है कि रूप सौंदर्य का घमंड कभी किसी को नहीं करना चाहिए ।

**— बी-११६, विजय पथ**
**तिलकनगर, जयपुर - ३०२ ००४**

11/279

# प्रतिध्वनि

सुन रहा हूं नदी के तट फूल की घाटी
ज्योत्स्नामयी रजनी-निरन्तर
नि:स्तब्ध वन से
लौटती चिर-प्रतीक्षित प्रतिध्वनि तुम्हारी।
पांव जल-धर वेग मारुत नापता उत्ताल लहरों में
खड़ा जल-कुंड भीतर छपछपाकर नील जल धारा
तोड़ती जो युग युगों की मौन-लाचारी।
गूंजता क्षिति, अग्नि-स्वर संघात युग का
टूटता अवरोध-कारा-लक्ष्य-मग का
हृदय-आकांक्षा जगी प्रणयावनत मन
स्वप्न-सार्थक, समय के आबद्ध-श्लथ-तन,
सुन रहा हूं पहाड़ों पर, घाटियों, मैदान
अविरल महासागर, सप्तरंगी, बादलों में
दिव्य-स्वर लहरी तुम्हारी।
शब्द जागा, नाद फूटा अंतरांतर
अलौकिक नव शब्द गूंजे, चेतना का
अर्घ्य देता सुबह निकला अरुण हंसकर,
खिलखिलाये फूल के परिवार, अगणित गन्ध-रंगी भावना का
रसार्णव पी चल पड़ी है भ्रमर टोली गीत गाती
कल गया जो बीत उसको दे रही अंतिम बिदायी
दु:ख-सुख से दिशाएं भर उठीं सारी
मोह, ममता, स्नेह और वात्सल्य के हैं खिंच गये
नव चित्र सपने।
जन्म, जन्मांतर बंधी है समर्पण, संकल्प रेखा
गंध, अक्षय सुवासित पृथ्वी, गगन
ब्रह्मांड, मधुरिम, ताल-स्वर गति, लय तुम्हारी।

**– चक्रधर नलिन**

२४६ प्रभुराजन, रायबरेली-२२९००१, उ.प.

# सांस्कृतिक मंच

## भारती गौरव पुरस्कार

बंबई महानगर की शैक्षणिक, साहित्यिक, सांस्कृतिक एवं सामाजिक संस्था भारती प्रसार-परिषद्, बंबई ने अपने १६वें स्थापना दिवस के उपलक्ष्य में आयोजित एक समारोह में वर्ष १९९०ई. का 'भारती गौरव पुरस्कार' राष्ट्रभाषा हिंदी की, पिछले कई वर्षों से सेवा करने के उपलक्ष्य में राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा के अध्यक्ष श्री मधुकरराव चौधरी (महाराष्ट्र के विधान सभाध्यक्ष) को प्रदान करने की घोषणा की है।

उपर्युक्त पुरस्कार आगामी २२ दिसंबर १९९० को दीनानाथ मंगेशकर नाट्यगृह में आयोजित १६ वें वार्षिकोत्सव के अवसर पर प्रदान किया जायेगा। **— दिलीप पी. सिंह**

* * *

## युवा लेखक पुरस्कृत

हिंदी अकादमी दिल्ली द्वारा आयोजित नवोदित लेखक पुरस्कार प्रतियोगिता-१९८८ के पुरस्कार वितरण समारोह में सांसद प्रो. विजयकुमार मल्होत्रा ने मुख्य अतिथि के रूप में संबोधित किया। प्रथम पुरस्कार २१००/-, द्वितीय पुरस्कार १५००/- तथा तृतीय पुरस्कार ११००/- रुपये और ५००-५०० रुपये के प्रोत्साहन पुरस्कार दिये गये। प्रत्येक पुरस्कार प्राप्तकर्ता को प्रतीक चिह्न एवं प्रमाण-पत्र भी भेंट किया गया। हिंदी अकादमी के सचिव डॉ. नारायणदत्त पालीवाल ने बताया कि अब तक अकादमी द्वारा १५४ लेखकों, कवियों को पुरस्कृत किया जा चुका है।

प्रतियोगिता के पहले भाग में कुल १९ युवा लेखक और कवि पुरस्कृत किये गये। यह भाग २० वर्ष तक की आयु के लेखकों के लिए था। इसमें कहानी के लिए सुमन लता (प्रथम), जैनेंद्रकुमार (द्वितीय) व कांता तिवारी (तृतीय) को पुरस्कार दिये गये।

प्रतियोगिता के दूसरे भाग में १६ युवा लेखक और कवि पुरस्कृत हैं। यह भाग २१ से ३० वर्ष तक की आयु के लेखकों के लिए निर्धारित है। इसमें कहानी के लिए संज्ञा बाछोतिया (प्रथम), शशि रंजनकुमार (द्वितीय) और नीमा पांडेय (तृतीय) के नाम शामिल हैं।

* * *

## तुलसी जयंती

उत्तर प्रदेश गांधी स्मारक निधि तथा रामायण संस्थान लखनऊ के संयुक्त तत्वावधान में संत कवि गोस्वामी तुलसीदास की जयंती समारोह का आयोजन ५ अगस्त १९९० को प्रवासी भारतीय प्रो. त्र्यंबकेश्वरधर द्विवेदी की अध्यक्षता में किया गया। समारोह का शुभारंभ आकाशवाणी लखनऊ केंद्र के निदेशक डॉ. मदन मोहन सिन्हा 'मनोज' ने किया। उ.प्र. हिंदी संस्थान लखनऊ के उपाध्यक्ष श्री परिपूर्णानंद वर्मा ने आज के युग में रामचरित मानस की प्रासंगिकता, सार्वभौमिकता तथा उपादेयता पर बल देते हुए महाकवि संत तुलसीदास के प्रति श्रद्धासुमन अर्पित किये।

**— संकठा प्रसाद सिंह**

* * *

## यादवचंद जैन स्मृति संगोष्ठी

कानपुर की 'प्रतिमा' साहित्यिक सामाजिक संस्था के तत्वावधान में प्रख्यात मनीषी एवं शब्द शिल्पी यादवचंद जैन की ७०वीं स्मृति संगोष्ठी समालोचक डॉ. रामस्वरूप त्रिपाठी की अध्यक्षता में संपन्न हुई। जिसका संचालन डॉ. गुरुप्रसाद रस्तोगी ने किया। मुख्य अतिथि सरदार कुलदीप सिंह एम.एल.सी. ने यादवचंदजी की साहित्यिक सेवाओं को स्मरण कराते हुए उनके अप्रकाशित उपन्यासों को प्रकाशित किये जाने पर बल दिया। अन्य वक्ताओं में सर्वश्री डॉ. ब्रह्ममूर्ति शास्त्री, डॉ. बालकृष्ण गुप्त, डॉ. महेंद्र जैन, डॉ. राजेंद्र जैन, पं. कुमुदेश बाजपेयी, 'मधुरिमा' की संपादक गीता चौहान, शिवसहाय मिश्र तथा डॉ. रघुनाथ प्रसाद गुप्त थे। **— जयराम सिंह यादव 'जय'**

* * *

## शिक्षक दिवस सम्मान समारोह

जयपुर के रवींद्र मंच पर डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन के जन्मदिन के उपलक्ष्य में मनाये गये शिक्षक दिवस के सुअवसर पर राजस्थान के शिक्षा विभाग की ओर से एक समारोह का आयोजन किया गया।

राज्य के मुख्यमंत्री श्री भैरों सिंह शेखावत ने विशिष्ट सेवाओं के लिए प्रदेश ४८ शिक्षकों को एक-एक शाल, प्रशस्ति-पत्र, स्मृति चिह्न व तीन हजार एक रुपये नकद पुरस्कार देकर सम्मान किया।

मुख्य अतिथि के रूप में बोलते हुए श्री भैरोंसिंह शेखावत ने शिक्षकों का आह्वान किया कि वे राज्य में निरक्षरता उन्मूलन के लिए अपना सहयोग दें और लोगों को साक्षर बनायें। मुख्यमंत्री महोदय ने शिक्षक कल्याण कोष के लिए एक लाख रुपये का अनुदान देने की भी घोषणा की।

समारोह में शिक्षामंत्री श्री हरिकुमार औदीच्य, ग्रामीण विकास एवं पंचायती राज मंत्री श्री हरदयाल सिंह खर्रा, शासन

सचिव ए. के. आहूजा, विशिष्ट शासन सचिव (शिक्षा) बी. डी. जोशी, प्राथमिक एवं माध्यमिक शिक्षा राजस्थान के निदेशक ललित के. पवार ने भी इस अवसर पर अपने विचार व्यक्त किये।

**— रत्नकुमार सांभरिया**

* * *

## नवलेखक कार्यशाला

पुणे विश्वविद्यालय (महाराष्ट्र) में ७ से १४ अगस्त-९० को एक नवलेखक कार्यशाला का आयोजन मानव संसाधन व विकास मंत्रालय भारत सरकार की ओर से केंद्रीय हिंदी निदेशालय, नयी दिल्ली द्वारा किया गया, जिसमें धर्मेन्द्र गुप्त, फूलचंद मानव, चित्रा मुद्गल और शीलम् वेंकटेश्वर राव शिविर में सलाहकार लेखक के तौर पर उपस्थित रहे।

आंध्र प्रदेश, कर्नाटक, उड़ीसा, तामिलनाडु, पंजाब, गुजरात, आसाम और महाराष्ट्र आदि अहिंदी भाषी प्रांतों के २२ हिंदी नवलेखकों ने इस कार्यशाला में आठ दिन के लिए हिस्सा लेकर कविता, कहानी, एकांकी, नाटक, लेखादि लेखन का अभ्यास किया, प्रशिक्षण लिया।

कार्यशाला निदेशक डॉ. केशव प्रथमवीर के मार्गदर्शन में प्रसिद्ध मराठी लेखक आपसे ने शिविर का उद्घाटन किया तो श्री यदुनाथ थत्ते ने समापन भाषण देकर शिविरार्थियों व सलाहकार लेखकों के कार्यों की सराहना की। निदेशालय के डॉ. नदारिया ने सहयोगार्थ हिंदी विभाग और सभी हाजिर लेखकों के प्रति आभार व्यक्त किया।

**— फूलचंद मानव**

* * *

## शिक्षक दिवस

'अंग्रेजी के व्यामोह से देश की नयी पीढ़ी को बचाने व हिंदी को प्रतिष्ठापित करने के लिए राष्ट्र के शिक्षक अपने गुरुत्व का निर्वाह करें' उक्त आह्वान मध्य प्रदेश के पूर्व मुख्य मंत्री तथा प्रदेश विधान सभा के प्रतिपक्ष के नेता पं. श्यामाचरण शुक्ल ने शैक्षणिक एवं सांस्कृतिक संस्थान नर्मदा वेलफेयर सोसायटी द्वारा संचालित नर्मदा नर्सरी विद्या निकेतन व वल्लभ उ.मा. शाला द्वारा आयोजित शिक्षक दिवस पर किया। 'धर्मयुग' (बंबई) के संपादक एवं समाजवादी विचारक श्री गणेश मंत्री की अध्यक्षता में आयोजित इस समारोह में नर्मदा वेलफेयर सोसायटी के अध्यक्ष श्री मुकुंददास माहेश्वरी तथा सचिव चित्रादेवी माहेश्वरी ने श्री मंत्रीजी तथा पं. शुक्ल को पुष्पहारों, पुष्पगुच्छों एवं प्रतीक चिह्नों से सम्मानित करते हुए उपस्थित अतिथियों का स्वागत किया। अतिथि द्वय ने संस्था के २० श्रेष्ठ अधिकारियों तथा शिक्षक- शिक्षिकाओं को पुरस्कृत किया।

समारोह के अपने अध्यक्षीय उद्बोधन में श्री मंत्रीजी ने अपनी मर्मवाणी से राष्ट्र से मांग की कि शिक्षक दिवस को शिक्षकों को महज दुपट्टा ओढ़ानेवाली नागपंचमी न बनाया जाये, बल्कि शिक्षकों की दशा सुधारने का संकल्प-दिवस माना जाये।

—मुकुंददास माहेश्वरी

* * *

## आतंकवाद पर गोष्ठी

'आतंकवाद सुनते हुए कानों को बहरा बनाने का एक सुनियोजित षड्यंत्र है जिसे राष्ट्रीय भावनापूर्ण लड़ाई जारी रखकर समाप्त करना होगा। केवल कानूनी दहशत से न आतंक समाप्त होगा और न राष्ट्र एक होगा।' उक्त आशय के विचार परक उद्गार देश के सुप्रसिद्ध समाजवादी विचारक एवं 'धर्मयुग' पाक्षिक पत्रिका के सम्पादक श्री गणेश मंत्री ने शिक्षक दिवस की पूर्व संध्या पर आयोजित 'आतंकवाद एवं समाचार माध्यम' विषयक विचार गोष्ठी में मुख्य अतिथि के रूप में व्यक्त किये। साहित्यकार पं. हरिकृष्ण त्रिपाठी की अध्यक्षता में संपन्न इस गोष्ठी में, विषय पर चर्चा करते हुए साहित्यकार डॉ. कैलाश नारद ने कहा कि आतंकवाद के खिलाफ पत्रकारों को खुलकर सामने आना होगा। अजित वर्मा ने कहा किया कि आतंकवाद आज विश्व व्यापी केवल इसलिए हो रहा है कि नेताओं के पास उसके कारणों की सही पकड़ नहीं रह गयी है। कवि प्रो. राजेन्द्र तिवारी ने अनादि काल से समाज के हर वर्ग में व्याप्त आतंकवाद दुखद प्रवृत्ति का उल्लेख करते हुए घोषित किया।

एडव्होकेट द्वय श्री शरद चन्द्र चतुर्वेदी व श्री उस्मानी ने जहां कानूनों को कड़ाई से पालन करने की बात कही वहीं अपने अध्यक्षीय उद्बोधन में पं. हरिकृष्ण त्रिपाठी ने आतंकवाद को उजागर करने में पत्रकारों की भूमिका की सराहना करते हुए देश के सम्पूर्ण जनमानस को आंतक के उन्मूलन में सहयोग देने की आवश्यकता पर बल दिया।

गोष्ठी के प्रारंभ में संयोजक श्री मुकुन्ददास माहेश्वरी ने मुख्य अतिथि सहित सभी वक्ताओं का पुष्पहारों से स्वागत करते हुए समस्त आमंत्रितों के प्रति आभार प्रदर्शित किया। गोष्ठी का संचालन कवि श्री रामकृष्ण दीक्षित 'विश्व' ने किया।

* * *

## जन्म-शताब्दी समारोह

भागलपुर में प्रमंडल राजभाषा विभाग, बिहार सरकार के तत्वावधान में सुप्रसिद्ध कथा-शिल्पी राजा राधिकारमण प्रसाद सिंह जन्म-शताब्दी समारोह २७ अगस्त ९० को आयोजित

किया गया। श्री सुरेंद्रप्रसाद जमुआर, उपनिदेशक, राजभाषा विभाग ने राजाजी के व्यक्तितत्व व कृतित्व पर अपने विचार रखे।

कार्यक्रम का शुभारंभ श्री ब्रह्मवादी के स्वागत-गान से हुआ। इस अवसर पर भागलपुर प्रमंडल के २३ साहित्यकारों को उनकी विशिष्ट साहित्य-सेवा के लिए प्रशस्ति-पत्र से सम्मानित किया गया। दूसरे दौर में कवि-गोष्ठी का आयोजन हुआ। समारोह का उद्घाटन किया श्री उमाशंकर निषेश ने और सारे कार्यक्रम की अध्यक्षता की श्री शारदाचरण ने। **—विनोद कुमार**

* * *

## साक्षरता शिविर

जमशेदपुर : राष्ट्रीय सेवा योजना के तत्वावधान में ग्रेज्युएट स्कूल कॉलेज फॉर वीमेन के तीसरे साक्षरता शिविर का उद्घाटन हिंदुस्तान मित्र मंडल उच्च विद्यालय सिदगोड़ा में हुआ। शिविर उद्घाटन विद्यालय के प्रधानाध्यापक श्री आर. पी. सिंह ने किया।

साक्षरता शिविर की सुलोचना कुजूर के नेतृत्व में कलावती, चंद्रावती, प्रेमा, रेणु, रीता तथा मुन्नी हरिजन बस्ती, सिदगोड़ा के निरक्षर लोगों को साक्षर करेंगी। कार्यक्रम का आयोजन योजना के जमशेदपुर पदाधिकारी सरिता प्रसाद ने किया। श्री सिंह ने साक्षरता शिविर में पढ़नेवाले छात्र-छात्राओं को साक्षरता बैग का वितरण किया।

**— पंडित किशोर चटर्जी**

* * *

## 'दत्त' की कृति का लोकार्पण

सीतापुर : 'हिन्दी सभा' के तत्त्वावधान में आयोजित डॉ. नवल बिहारी मिश्र व्याख्यानमाला के अन्तर्गत मगध विश्वविद्यालय के पूर्व कुलपति डॉ. कुंवर चन्द्रप्रकाश सिंह ने जनपद के वयोवृद्ध साहित्यकार कविवर पं. उमादत्त सारस्वत 'दत्त' की हास्य व्यंग्य पूर्ण काव्य कृति 'लट्ठराम की जय' का लोकार्पण करते हुए कहा कि 'दत्त' जी ने साहित्य की प्रायः सभी विधाओं को अपनी प्रखर प्रतिभा से परिपुष्ट किया है। वे जितने रस सिद्ध सुकवि हैं, उतने ही सफल नाटककार हैं, जितने समर्थ निबन्धकार हैं, उतने ही सशक्त कहानीकार हैं। उनकी व्यंग्य समालोचनाएं हिन्दी जगत की स्थायी निधि हैं।

यह कार्यक्रम उ.प्र. हिन्दी संस्थान के कार्यकारी उपाध्यक्ष श्री परिपूर्णानन्द वर्मा की उपस्थिति में सम्पन्न हुआ।

डॉ. कृपा शंकर शुक्ल (जिला विद्यालय निरीक्षक) ने भी इस अवसर पर 'दत्त' जी की साहित्य-साधना की सराहना की। कार्यक्रम का संचालन श्री सोम दीक्षित ने किया।

**— डॉ. नागेशदत्त सारस्वत**

□

# कितना करामाती है नीम का पेड़

**पंकज कुमार कर्ण**

हमारे आसपास पाये जाने वाले कुछ पेड़-पौधे, जिनमें कीट भगाने या मारने की क्षमता होती है, उसमें नीम को विशेष स्थान प्राप्त है। सर्वत्र उपलब्ध यह वृक्ष जितना सुलभ है, उतना ही उपयोगी भी। एक शक्तिशाली कृमि व कीटाणु नाशक के रूप में नीम अति प्राचीनकाल से ही विख्यात है। साहित्य और आम बोलचाल की भाषा में यह नाम तो अनेक मुहावरों-कहावतों में आता है।

इसके विभिन्न भागों का उपयोग प्राचीनकाल से ही घरेलू औषधि के रूप में तथा अनाज की फसलों को हानिकारक कीटों से बचाने के लिए किया जाता रहा है। आयुर्वेद साहित्य तो नीम की पत्तियों, छाल, बीज इत्यादि के औषधीय उपयोगों से भरा पड़ा है। वनस्पति जगत में यह अजेडिरेक्टा इंडिका के नाम से मंशहूर है। भारतीय किसान सैकड़ों वर्षों से नीम की पत्तियों, फलों अथवा उससे बने अर्क का प्रयोग फसलों की सुरक्षा के लिए करते आ रहे हैं। इसकी पत्तियां भी प्राचीन काल से ही भंडारण में प्रयुक्त होती आयी हैं।

## हानिरहित कीटनाशक

आजकल खेतों में कृत्रिम (रासायनिक) कीटनाशक दवाओं के व्यापक प्रयोग होने से अनेक दुष्परिणाम सामने आने लगे हैं। दरअसल इनसे वांछित कीड़ों के नाश के साथ-साथ लाभदायक कीट, जो पौधों के परागण में सहायक होते हैं, उनका भी सफाया होने लगा है। इसकेअतिरिक्त इनसे पर्यावरण भी प्रदूषित हो गया है। इससे चिंतित होकर वैज्ञानिकों ने दोषमुक्त प्राकृतिक (वानस्पतिक) कीटनाशक पदार्थों की खोज शुरू की और लगभग २००० प्रकार के पौधों में उन्होंने कीटनाशक गुण पाये, जिसमें रेड़ी, तम्बाकू, धनियां, मेंथी, पायरेथ्रम, नींबू, देवदार, एकोरस कैलेमस, एरिस्टोलोकिया ब्रेकिटयेटा और नीम विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। लेकिन नीम इस कसौटी पर सबसे अधिक खरा उतरा है। यह एक ऐसा कीटनाशक है, जिससे कोई दुष्प्रभाव उत्पन्न नहीं

होता।

नीम की कीटनाशक प्रक्रिया उसमें पाये जाने वाले 'अजेडिरैक्टिन' नामक रासायनिक समूह पर निर्भर करती है। यह एक उच्च ऑक्सीकृत टरपीनॉयड है। अजेडिरैक्टिन कीड़ों को मारने की बजाय उन्हें, फसल खाने ही नहीं देता है। इस पदार्थ की अपकर्षक गंध के कारण कीड़े-मकोड़े उपचारित फसल से दूर ही रहते हैं। अंतर्व्यापी प्रभाव के कारण नीम का असर पूरे पौधे में फैल जाता है, जिससे रस चूसने वाले, कीड़ों से भी सुरक्षा मिलती है। अजेडिरैक्टिन मच्छरों के हारमोनों पर भी असरदार प्रभाव डालता है। इसके प्रयोग से कीड़ों की प्रतिरोधक जातियों के पनपने की कोई संभावना नहीं रहती है, जबकि किसी रासायनिक कीटनाशक (डी.डी.टी.) के निरंतर प्रयोग से कीट उस रासायनिक पदार्थ के प्रति शीघ्र ही सहनशील हो जाते है और उन पर किसी प्रकार की आंच नहीं आती, लेकिन हमारा शुद्ध वातावरण अवश्य प्रदूषित हो जाता है।

भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान के वैज्ञानिकों ने नीम के बीजों का चूर्ण भण्डारण के दौरान, गेहूं, चना, मटर, आदि को हानिकारक कीड़े-मकोड़ों से बचाने में प्रभावकारी पाया है। सचमुच इसमें एक आदर्श प्राकृतिक कीटनाशक की सभी विशेषताएं विद्यमान हैं।

### उत्कृष्ट खाद

नीम का तेल निकालने के बाद प्राप्त खली को टमाटर, आलू, मूली आदि की फसलों में देने से सभी सूक्ष्म हानिकारक कृमियों का सफाया तो होता ही है, साथ ही, फसल (उपज) भी अच्छी होती है। यदि इसी खली को यूरिया खाद के साथ मिलाकर प्रयोग किया जाय, तब फसलों की उपज काफी बढ़ जाती है। इसकी फलों की गुठली को पीसकर, निलंबन घोल तैयार करके फसलों पर बराबर छिड़कते रहना चाहिये। ऐसा करने से पौधे नीरोग रहते हैं। वैसे नीम का तेल भी एक शक्तिशाली फसल संरक्षण के रूप में प्रयुक्त किया जाता है। शायद बहुत कम ही लोगों को पता है कि नीम की खली, भूमि से नेत्रजन (नाइट्रोजन) के ह्रास को रोकती है। वास्तव में इसका प्रभाव इतना व्यापक और प्रभावशाली होता है कि वैसे, बैक्टीरिया, जो अमोनिया को नाइट्रेट में बदल देते हैं, एकदम निष्क्रिय हो जाते हैं। इस प्रकार खाद के रूप में नीम की खली न सिर्फ उपज बढ़ाता है वरन् पौधों को स्वस्थ और नीरोग भी रखता है।

खेती में नीम का उपयोग एकदम सरल है। इसका (नीम) तेल व खली प्राप्त करने के लिए किसी कारखाने पर निर्भर नहीं रहना पड़ता है। क्योंकि सीधे निम्बोली (नीम का फल) का भी उपयोग किया जा सकता है। इसके लिए सभी पके

फलों को एकत्रित कर, ऊपर का छिलका हटाकर, गुठलियों को सुखाकर पीस लिया जाता है। अब इसे कपड़े में बांधकर (मलमल हो तो अच्छा होगा) बालटी या ड्रम में भरे पानी में करीब पन्द्रह मिनट तक भिगोकर निचोड़ा जाता है, जिससे हलके भूरे रंग का द्रव पानी में मिलकर निलंबन घोल बनाता है। इसका सीधा छिड़काव फसल पर किया जा सकता है, जो एकदम हानिरहित होते हैं। यहां यह बता देना उपयुक्त होगा कि १० लिटर पानी के लिए २००-२५० ग्राम पिसा नीम उपयुक्त होता है।

आमतौर से १० वर्ष की अवस्था में नीम का वृक्ष फल देना आरंभ कर देता है। एक वृक्ष से प्रतिवर्ष लगभग ५० किलोग्राम तक निम्बोली प्राप्त की जा सकती है। इस फल से ६-७ किलो नीम का तेल और २४ किलो खली प्राप्त की जा सकती है।

### औषधीय गुण

नीम अपने कई औषधीय गुणों के कारण विख्यात है। फरवरी-मार्च के आसपास इसमें 'बौर' आना शुरू हो जाता है और साथ ही, कोमल-कोमल पत्तियां भी प्रस्फुटित होने लगती हैं, जिसे खाने पर पेट के कीड़े मर जाते हैं। घाव पर इसकी पत्तियों को पीसकर लगाने से वह एकदम ठीक हो जाता है। नियमित रूप से नीम का दातुन करने पर मुंह का कोई भी रोग पास नहीं फटकता है। दांत और मसूड़े स्वस्थ रहते हैं तथा पायरिया रोग भी दूर हो जाता है।

नीम की लकड़ी में कीड़े नहीं लगते हैं। अतः इससे निर्मित सामान सुरक्षित रहते हैं। इसके आसपास की वायु बिलकुल शुद्ध रहती है, जिसमें सांस लेने से फेफड़ा संबंधी रोग होने की संभावना एकदम नहीं रहती है। इसके तेल से निर्मित साबुन अच्छे कीटाणुनाशक का काम करते हैं। इससे दाद, खाज, खुजली में भी लाभ मिलता है। वैसे यदि नीम साबुन का नियमित व्यवहार किया जाय तो चर्म रोग पास ही नहीं फटकता है।

इसकी छाल में निम्बिन, निम्बिनिन, निम्बिडिन तथा निम्बोस्टरॉल के अतिरिक्त सुगंध तेल तथा टैनिन भी मौजूद रहता है। नीम के तेल में विभिन्न प्रकार के अम्ल तथा सल्फर होते हैं, जिनका उपयोग मुख्यतः दवाइयों में ही किया जाता है।

इस प्रकार महत्वपूर्ण और प्रचलित वानस्पतिक कीटनाशकों में नीम का स्थान सर्वोपरि है। अब तो जर्मनी, जापान, न्यूगिनी, रूस और संयुक्त राज्य अमेरिका भी नीम से प्राप्त किये जाने वाले प्राकृतिक कीटनाशक को मान्यता देने की सोच रहा है। सचमुच, इसमें संदेह नहीं कि नीम का वृक्ष एक बहुत ही उपयोगी वृक्ष है।

**छतापुर, पो. : सुरपतगंज,**
**जिला सहरसा – ८५२१३७, बिहार**

बालकथा

# मां और बछेड़ी की पहचान

□ मदनगोपाल शर्मा

बहुत पुरानी बात है, कनकपुर के महाराजा रणबीर सिंह को घोड़े पालने का बहुत शौक था। उनके घुड़साल में सैकड़ों नाल के घोड़े थे, वे रोज स्वयं घुड़साल में जाकर घोड़ों के पालन-पोषण के प्रबंध को देखते थे। घुड़साल की देखभाल के लिए उन्हीं लोगों को रखा जाता था जो पशुओं के बारे में अच्छी जानकारी रखते हों, राजा स्वयं ऐसे लोगों का चयन तरह-तरह से परीक्षा लेकर करता था।

एक दिन की बात है कि एक आदमी, जिसका नाम रतनलाल था, राजदरबार में आया। उसने दरबार के लोगों से कहा – 'मुझे घोड़े पालने का बहुत अच्छा अनुभव है तथा मैं उनकी देखभाल के बारे में अच्छी सलाह दे सकता हूं। आप लोग मेरे बारे में महाराज को सूचित कर दें। दरबार के लोगों को उसकी बातों पर विश्वास तो नहीं हुआ, फिर भी उन लोगों ने महाराज को सूचित कर दिया।

कुछ देर बाद उसे राजा के पास पहुंचाया गया। रतनलाल ने झुककर प्रणाम किया और कहा – 'महाराज, मैंने सुना है कि आप घोड़े पालने के शौकीन हैं तथा आपके पास एक से एक अच्छी नाल के घोड़े हैं। आपको घोड़ा पालने के लिए सलाह देने हेतु किसी जानकार आदमी की आवश्यकता होगी, मैं अपनी सेवाएं इस कार्य हेतु प्रस्तुत करना चाहता हूं।'

राजा रतनलाल से पहली बार में ही बहुत प्रभावित हुआ पर अपनी आदत के अनुसार उसने कहा – 'ठीक है, हम तुम्हें रख तो लेंगे पर कल सुबह घुड़साल में तुम्हें परीक्षा देनी होगी, उसमें सफल होने पर ही तुम्हें रखा जायेगा।'

रतनलाल ने विनम्रतापूर्वक कहा – 'आपकी आज्ञा शिरोधार्य है, मैं कल घुड़साल में आ जाऊंगा।'

अगले दिन घुड़साल में रतनलाल पहुंच गया। वहां राजा साहब व दरबार के अन्य लोग पहले से ही उपस्थित थे। रतनलाल के समक्ष दो एक जैसी घोड़ियां लायी गयीं। दोनों की कद-काठी, रूप-रंग एक जैसा ही था। राजा ने कहा – 'इन घोड़ियों में एक मां है और दूसरी बछेड़ी है, तुम मां और बछेड़ी की पहचान करके बताओ। प्रश्न बहुत टेढ़ा था,

क्योंकि देखने में दोनों में कोई अंतर ही न था। कुछ देर सोचने के बाद रतनलाल ने कहा – 'महाराज, मुझे थोड़ा समय चाहिए साथ ही यह भी निवेदन है कि तब तक इन दोनों घोड़ियों को चारा-पानी कुछ न दिया जाय।' राजा रतनलाल की दोनों बातें मान लीं और चार घंटे का समय दे दिया।

चार घटे बाद फिर से सब लोग एकत्रित हुए। रतनलाल ने कुछ दूरी पर हरी घास का चारा तथा एक कुंड में पानी रखवा दिया था। दोनों घोड़ियां खोल दी गयीं। एक घोड़ी तेजी से चलकर आगे थी और दूसरी जानबूझकर थोड़ा धीरे चलकर उसके पीछे थी। पहली घोड़ी ने जाते ही मुंह पानी में दिया और दूसरी चुपचाप खड़ी देखती रही, उसने पानी बाद में पिया। फिर दोनों ने चारा खाना शुरू कर दिया।

रतनलाल ने पता लगा लिया कि इनमें मां कौन है और बछेड़ी कौन है? उसने महाराजा से कहा - 'पहले जिसने पानी पिया वह बछेड़ी है और जिसने बाद में पिया वह मां है।'

राजा रतनलाल के उत्तर से पूरी तरह संतुष्ट था। उसने रतनलाल को अपने घोड़ों की देखभाल के लिए सलाहकार के पद पर नियुक्त कर दिया।

**– ६०, अनुपम नगर, नौलखा परेड,**
**ग्वालियर म.प्र.**

**'नवनीत हिंदी डाइजेस्ट' की चंदे की दरें**

*** एक प्रति (भारत में)** रु. ६.००

**भारत में (साधारण डाक से)**

* एक वर्ष : ६५ रु.; दो वर्ष : १२० रु.; तीन वर्ष : १७० रु.; पांच वर्ष : २९० रु.; दस वर्ष : ५६० रु.

**विदेशों में समुद्री मार्ग से (एक वर्ष के लिए)**

* पाकिस्तान, श्रीलंका, रु. १२०; अन्य देश रु. १८५

**विदेशों में हवाई डाक से (एक वर्ष के लिए)**

* प्रत्येक देश के लिए रु. ३१०

* बम्बई से बाहर के चेक भेजने वाले रु. ७ अधिक भेजें।

**– व्यवस्थापक, नवनीत हिंदी डाइजेस्ट, भारतीय विद्या भवन, बम्बई - ४०० ००७.**

# प्राप्ति-स्वीकार

* सुप्रभा विशेषांक १९८८-८९ * प्रधान संपादक : राधेरमण त्रिपाठी; राजा चंद्रचूड़ सिंह इंटरमीडिएट कालेज, महराजगंज, रायबरेली, उ.प्र. ।

* * *

* महा वाणी १ तथा २ * संपादक : चक्रधर नलिन; प्रकाशक : रायबरेली रचनात्मक संघ, २४६, प्रभुटाउन, रायबरेली, उ.प्र. ।

* * *

* साप्ताहिक कर्मेव जयते (समकालीन लघुकथा विशेषांक) * संपादक : रामेश्वर दुबे; संपर्क : पोस्ट बाक्स नं. १०, रविशंकर नगर, भोपाल - १६, म.प्र. ।

* * *

* जैमिनी पॉकेट बुक्स, पोस्ट बाक्स नं. ९७, पानीपत - १३२१०३ के दो प्रकाशन: * मुस्करान (काव्य संकलन)* लेखक : बीजेन्द्र कुमार 'जैमिनी' *चांद की चांदनी (लघुकथा संग्रह) * संपादक : बीजेन्द्रकुमार 'जैमिनी'।

* * *

* अंकुर (वार्षिक पत्रिका) * प्रधान संपादक: वृंदावन वर्मा, संपादक : जवाहर इंदु; संपर्क सूत्र : ग्राम व पोस्ट : जलालपुर घई, जिला - रायबरेली, उ.प्र. ।

* * *

* अग्निहोत्र यज्ञ विज्ञान की दृष्टि में* स्वामी विवेकानंद सरस्वती; प्रकाशक: स्वामी समर्पणानंद वैदिक शोध संस्थान, गुरुकुल प्रभात आश्रम, (टीकरी), भोला, मेरठ - २५०५०१, उ.प्र.; मूल्य : २.५० रुपये।

* * *

* भिनसार (छत्तीसगढ़ी काव्य संग्रह)* मुकुंद कौशल; प्रकाशक : दिशांत प्रकाशन, एम.आई.जी.सी. - ५१६, पद्मनाभपुर, दुर्ग - ४९१००१ म.प्र.; पृष्ठ:२०; मूल्य : ७ रुपये ।

* * *

* बकवास (राजस्थानी, हिंदी, भोजपुरी) * डॉ. मनोहरलाल 'गोयलश्री'; प्रकाशक : काव्यलोक प्रकाशन, पत्र मंजूषा सं. २१२, जमशेदपूर - ८३१००१, बिहार; पृष्ठ : ४२; मूल्य : ५ रुपये ।

* * *

* कविता ने बार-बार कहा * उमाशंकर मिश्र 'उमेश'; प्रकाशक : स्वयं, पी.टी. ९/१, मालवीय नगर, लखनऊ - २२६००४; पृष्ठ : ५८; मूल्य : २० रुपये ।

* * *

* भाई-बहन (कहानी-संग्रह) * डॉ. उमादत्त सारस्वत; प्रकाशन : हिंदी साहित्य भंडार, ५५, चौपटियां रोड,

लखनऊ - २२६००३; पृष्ठ : ९२; मूल्य: १० रुपये ।

* * *

* आप ही तो मेरे गुरु हैं (कविता-संग्रह) * अक्षय गोजा; प्रकाशक : जयदीप प्रकाशन, चांदपोल गेट के पास, जोधपुर-३४२००१; पृष्ठ : ८०; मूल्य : २५ रुपये ।

* * *

* कृष्ण का विद्रोह (नाटिका)* डॉ. गोपाल शर्मा; प्रकाशक : पुस्तकायन, २/४२४ ए अंसारी रोड़, नयी दिल्ली - ११०००२; पृष्ठ : ६८; मूल्य : २० रुपये ।

* * *

* तिनके-तिनके (लघुकथा-संग्रह)* डॉ. रामकुमार घोटड़; प्रकाशक : तारिका प्रकाशन, अंबाला छावनी - १३३००१; पृष्ठ : १०४; मूल्य : २० रुपये ।

* * *

* अगले जनमों की बात करें (गजल संकलन) * अक्षय गोजा; प्रकाशक : जयदीप प्रकाशन, गोजा भवन, चांदपोल गेट के पास, जोधपुर - ३४२००१; पृष्ठ : ८०; मूल्य : पेपर बैक १५ रुपये तथा सजिल्द ३० रुपये।

* * *

* नजरिया (कार्टून्स काक)* चयन-विनोद भारद्वाज; प्रकाशक : रूपा एंड कंपनी १०२ प्रसाद चेम्बर्स, आपेरा हाउस, बंबई - ४००००४; मूल्य : १५ रुपये ।

* * *

* प्रेम कहानियां * संपादक : महेश दर्पण; प्रकाशक : रूपा एंड कंपनी, १०२ प्रसाद चैम्बर्स, आपेरा हाउस, बंबई - ४००००४; पृष्ठ : १०४; मूल्य : १५ रुपये ।

* * *

* ग़ज़ल निर्देशिका * आर.पी. शर्मा 'महर्षि'; तारिका प्रकाशन, ए ४७/२, शास्त्री कॉलोनी, अंबाला छावनी - १३३००१, हरियाणा; पृष्ठ : ८८; मूल्य : २० रुपये ।

* * *

* स्वास्थ्य के २०० सवाल * डॉ. यतीश अग्रवाल; प्रकाशक : रूपा एंड कंपनी, १०२ प्रसाद चेम्बर्स, आपेरा हाउस, बंबई - ४००००४; पृष्ठ : ८६; मूल्य : १५ रुपये ।

* * *

* कुश्ती * अभयकुमार दुबे; प्रकाशक : रूपा एंड कंपनी, १०२, प्रसाद चेम्बर्स, आपेरा हाउस, बंबई - ४००००४; पृष्ठ:११९; मूल्य : १५ रुपये ।

* * *

* उच्चतर काम विज्ञान के सूत्र * रावी; प्रकाशक : त्रिलोचन आणि टीम प्रकाशन, नयानगर, पो. कैलास, आगरा - २८२००७; पृष्ठ : २६; मूल्य : ४० रुपये ।

* * *

* नहीं रुकती है नदी (यात्रा-वृत्तांत)* डॉ. हीरालाल बाछोतिया; प्रकाशक : सूचना और प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार, पटियाला हाउस, नयी दिल्ली - ११०००१; पृष्ठ : ६६; मूल्य : ८ रुपये ।

111२७९

## आओ, दो क्षण मुस्करायें

खाना खत्म होने के बाद होटल के बैरे ने उन दोनों के हाथ धुलाये और खूंटी पर से एक कोट उतारकर एक को पहना दिया। इस पर खुश होकर उसने बैरे को पांच रुपये टिप में दिये।

बाहर निकलकर पहले मित्र ने दूसरे से पूछा – 'तुमने टिप में बैरे को इतने रुपये क्यों दिये ?'

'क्यों ? पांच रुपये में ये कोट क्या महंगा है ?' उसने जवाब दिया।

* * *

सामने से बस आ रही थी। एक साहब गोद में एक बच्चे को लिये सड़क के किनारे खड़े थे। उन्होंने हाथ का इशारा करके बस रुकवायी। ड्रायवर ने बस रोकी और पूछा – 'जल्दी चलिये साहब आपको जाना कहां है ?'

'जाना तो कहीं नहीं, बस जरा-सा हॉर्न बजा दो भैया, बच्चा बहुत जिद कर रहा है।' उन साहब ने उत्तर दिया।

* * *

एक मालगोदाम में चौकीदारों की भर्ती के लिए इंटरव्यू चल रहा था। मैनेजर ने एक उम्मीदवार पर ऊपर से नीचे तक नजर डालते हुए कहा – 'हमें चौकीदारों के लिए तगड़े और बहुत ही होशियार जवानों की जरूरत है।'

'जी हां, सरकार, यह दोनों बात आप मुझमें पायेंगे। देखिये न, बाहर लाइन में खड़े बीस उम्मीदवारों को एक तरफ धकेलकर और दरबान से अपने स्वयं को आपका भतीजा बताकर ही अंदर आ पाया हूं।' उम्मीदवार ने जवाब दिया।

* * *

एक ट्रैफिक इंस्पेक्टर ने कार रुकवाकर कार चलाने वाली महिला से लाइसेंस मांगा। महिला ने अपना पर्स खोला और झट से एक कार्ड निकाला और इंस्पेक्टर को थमा दिया। इंस्पेक्टर कुछ देर तक उसे उलट-पलटकर देखता रहा और फिर तेज आवाज में बोला – 'मैडम, मैंने आपकी गाड़ी का लाइसेंस मांगा है, आपका लाइब्रेरी का कार्ड नहीं।'

'जी! मुझे पता है, उसे ही ढूंढ़ रही हूं। मैंने सोचा तब तक शायद आप कुछ पढ़ना पसंद करें।' महिला हंसकर बोली।

**– दिनेश दर्पण**

सु. रामकृष्णन् द्वारा भारतीय विद्या भवन, क. मा. मुंशी मार्ग, बम्बई–४००००७ के लिए प्रकाशित तथा एसोसियेटेड एडवरटाइजर्स एंड प्रिन्टर्स, बम्बई ४०००३४ में मुद्रित।

Compiled
1999-2000